110423

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

110473

वैशाख १९७७
मई १९२०

वर्ष १ संख्या १

ज्योति

110473

पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी

मासिक पत्रिका

ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः

पुस्तक सं०.....
आगत सं०.....
तिथि०.....

गुरुकुल ग्रन्थालय काँगडी.

सम्पादिका

विद्यावती सेठ बी. ए.

वार्षिक मूल्य ४॥) स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४) प्रति संख्या ॥)

बाम्बे मैशीन प्रेस लाहौर में मैनेजर पंडित हरभगवान के प्रबन्ध से
मुद्रित हुआ और बाबू मदनलाल ने प्रकाशित किया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची।

नं०		पृष्ठ
१	—महात्मा गान्धी का सन्देश	१
२	—ज्योतिपञ्चक (कविता)–[ले० "श्रीहरि"	३
३	—शिक्षा का वैदिकध्येय–[ले० श्रीपाद दामोदर सातवलेकर।	४
४	—हमारी आर्थिक स्थिति–[ले० श्रीयुत छेदीलाल एम. ए. (आक्सन)।	६
५	—निराशावाद (Pessimism)–[ले० श्रीयुत सुधाकर एम. ए.।	११
६	—निघण्टु–[श्रीयुत भगवद्दत्त बी. ए.]	१५
७	—युगान्तर (कविता)–[ले० श्रीयुत वंशीधर।	१८
८	—महाभारत कालीन शिल्प वैभव (१) [ले० श्रीयुत रामदेव बी. ए., यम. आर. ए. यस.]।	१९
९	—बलिदान (गल्प)–[ले० मंजरी]।	२२
कुसुमोद्यान—		
१	—भारतवर्ष में शिक्षा	३५
२	—राजनीति में स्त्री अंश	३६
३	—ऊड्रोविल्सन की धर्मपत्नी ...	४०
४	—ब्रश या दातन	४२
५	—आर्यमहिला कविता	४४
विचार प्रवाह—		
१	—हम और हमारी आवश्यक्ता ...	५९
२	—मादक वस्तुओं का निषेध ...	६१
३	—खिलाफ़त का प्रश्न	६४
४	—जलन्धर प्रान्तीय सम्मेलन ...	६५
५	—कान्ग्रेस उपसभा की रिपोर्ट ...	६६
६	—शासन सुधार में मंत्रीगण के कर्त्तव्य	६७
७	—प्रजा के कर्त्तव्य	६९
८	—रेलवे हड़ताल	७०

आवश्यक सूचना।

हमें अत्यन्त खेद से सूचना देनी पड़ती है कि हमारे अत्यन्त पुरुषार्थ करने पर भी ज्योति का प्रथमाङ्क समय पर पाठकों के पास पहुंच नहीं सका इसका कारण एक तो आजकल की प्रेस की कठिनाइयों पर निर्भर और कुछ टाइटिल पेज के कलकत्ते से समय पर न आ सकने पर है।

शोक कि टाइटिल पेज अब भी न आया और हम पाठकों के सन्मुख ज्योति को सुन्दर रंगीन चित्र से विहीन ही प्रस्तुत करने के लिये बाध्य हैं। आगे से ज्योति प्रति सौर्य मास के तीसरे सप्ताह में प्रकाशित हुआ करेगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

॥ ओ३म् ॥

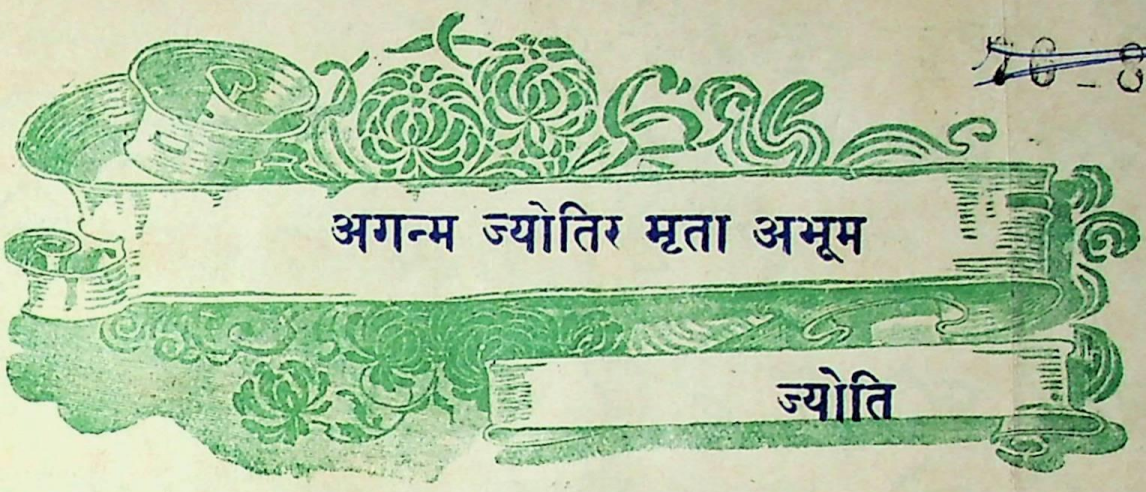

वर्ष १ | वैशाष १९७७—मई १९२० | संख्या १

महात्मा गान्धी का सन्देश ।

प्रिय संपादिका

आपको अखबार निकालने
साहस के लिये धन्यवाद देता हूं
मुझे उम्मेद है आपके अखबार
लोकों की व स्वदेशी धर्म का
हमारा प्राचीन सनातन धर्म का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

च्छी तरह से भी लेंगा.
अखबार नीकालने में थोड़ी
मेवारी नहीं है. अखबार शिक्षा
नाका बड़ा भारी साधन है
सलीये प्रत्येक संपादक व
पादिका की फर्ज है की अखबार
सच्चिही और हितकर खबर इ
दी जाय अखबार नवीश
र्भमता आवश्यक है क्यों की
हुत वखत लोकों को अप्रिय है
सी वस्तु भी कहनी पड़ती है -

भूरीजाते आपका
मोहनदास गांधी

र
ा.भ्रान ३५.३

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ज्योति पञ्चक

लेखक—श्रीयुत पण्डित गया प्रसाद "श्री हरि"

वेद-सविता की विभा, विद्युत-सदृश जो रह गई,
घोर-घन-पाखण्ड, मण्डल में चमकती बच गई।
वेद व्याख्या मुख, वही फिर पूर्ण आभा को गहे,
'ज्योति' उज्वल ज्योति, तेरी जगमगाती जग रहे ॥१॥

नाना कला कलिका, भरा संसार में जो सार था,
मञ्जु हृदयावाल, जिसका धर्म धाराधार था।
भव्य भारत द्रुम पुनः, वह इष्ट सम्पति को लहे.
'ज्योति' उज्वल ज्योति, तेरी जगमगाती जग रहे ॥२॥

जो ललन की थीं बनीं, ललना अहो केवल यहां,
भूल प्राकृत स्वत्व अपना हो रहीं दासी जहां।
वे सुशिक्षा-ज्योति से, अवला प्रतिष्ठा अब लहें,
'ज्योति' उज्वल ज्योति, तेरी जगमगाती जग रहे ॥३॥

राज नैतिक क्षेत्र में, हो देश हित की शंसनी,
सत्य-प्रियता से बने, त्यों धीर मानस-हंसिनी।
स्वच्छ साहस की तरङ्गे, भारतीयों में बहें,
'ज्योति' उज्वल ज्योति, तेरी जगमगाती जग रहे ॥४॥

मानवोचित-वीरता, गम्भीरता का राज्य हो,
धीरता निर्भीकता, त्यों एकता का साज हो।
देश-प्रियता से समुन्नत मान फिर भारत लहे,
'ज्योति' उज्वल ज्योति तेरी जगमगाती जग रहे ॥५॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शिक्षा का वैदिक ध्येय ।

लेखक-श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, स्वाध्यायमंडल औंध (जि० सातारा)

मनुष्य मात्र की उन्नति के लिये शिक्षा की आवश्यकता है इसमें कोई संदेह नहीं। जिस मनुष्य को जितनी शिक्षा प्राप्त हुई होगी, उतनी उस मनुष्य की उन्नति होना संभव होसकता है। जो अवस्था मनुष्य की है, वह ही राष्ट्र की है। अर्थात् जिस राष्ट्र में जिस प्रकार की जितनी शिक्षा प्रचलित होगी उस राष्ट्र को उस प्रकार उतनी ही उन्नति हो सकती है। इस समय सब सुशिक्षित लोग इस सिद्धांत को एक मत से मानते हैं। और इसीलिये प्रत्येक स्वतंत्र देश में शिक्षा के प्रचार के लिये बड़ा यत्न होरहा है। परतंत्र और निराश्रित देशों की अवस्था शिक्षा के अभाव के कारण बड़ी बुरी है यह कहने की आवश्यकता नहीं।

स्वतंत्र देशों में शिक्षा का प्रचार बहुत है और अधिक होरहा है, इसलिये किसी अंश में वहां के लोगों की स्थिति निःसंदेह उच्च है, परंतु वहां की स्थिति भी वैदिक आदर्श तक पहुंची नहीं। बीसवीं सदी के स्वतंत्र और सुशिक्षित देशों की यदि यह अवस्था है तो परतंत्र और अशिक्षित देशों का हाल क्या पूंछना है?

यद्यपि स्वतंत्र देशों में शिक्षा का प्रचार बहुत हुआ है तथापि वैदिक आदर्श से ये स्वतंत्र देश भी बहुत दूर हैं। इसलिये इस समय के सब लोगों को शिक्षा का वैदिक आदर्श सोचना चाहिए। और इस वैदिक आदर्श के अनुसार अपना शिक्षा का क्रम रखना उचित है। इस कारण इस लेख में शिक्षा का वैदिक ध्येय सोचने का विचार किया है।

वैदिक काल में शिक्षा मुफ्त थी इसमें किसी को भी संदेह नहीं। आज कल शिक्षा बहुमूल्य होरही है। और इसीलिये आजकल की शिक्षा से सब लोग लाभ नहीं उठा सकते। शिक्षा बिना मूल्य ही होनी चाहिए ताकि जिसकी योग्यता हो वह उसको प्राप्त कर सके।

वेद में राजा का विशेषण "नृचक्षस" आया है। इसका अर्थ "सब मनुष्यों को सुशिक्षा देने वाला" ऐसा है। अर्थात् वेद की दृष्टि से सब को सुशिक्षा देना राजा का कर्तव्य प्रतीत होता है। जो इस प्रकार अपने लोगों को सुशिक्षा देता है, वह ही निम्न प्रकार कह सकता है:—

न मे स्तेनो जनपदे न कदर्यो
न मद्यपो नानाहिताग्निर्ना विद्वान्
न स्वैरी स्वैरिणी कुतः ॥

छांदोग्य । ५ । ११ । ५

"मेरे राज्य में चोर, कृपण, मद्यपी (शराबी) हवन न करने वाला, (अ-विद्वान्) अशिक्षित, व्यभिचारी और व्यभिचारिणी नहीं हैं" इस उपनिषद् के वाक्य में—

"मे जनपदे अविद्वान् न।"

अर्थात् "मेरे राज्य में अशिक्षित मनुष्य नहीं हैं" यह वाक्य विशेष प्रकार से देखने योग्य है। राज्य में सार्वत्रिक, आवश्यक और मुफ्त शिक्षा न होगी, तो राज्य के सब मनुष्यों को सुशिक्षा प्राप्त होना असंभव है। इस से सिद्ध है कि इस उपनिषद्काल के वैदिक राष्ट्र

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में सार्वत्रिक और आवश्यक शिक्षा थी। और इसी कारण उक्त राजा ने कहा है कि, मेरे राष्ट्र में कोई अशिक्षित नहीं है। अस्तु।

इसी उपनिषद् के वाक्य में शिक्षा का आदर्श भी बतलाया है। उसका आशय निम्न प्रकार है:—

(१) शिक्षा ऐसी देनी चाहिए कि जिससे चोरी आदि पाप करने का भाव लोगों के अंतःकरणों से हट जाय,

(२) विद्या का दान इस प्रकार होना चाहिए कि जिससे लोगों के मन उदारता के भाव से विकासित हों,

(३) सुशिक्षा से मद्यपान धूम्रपान आदि दुर्व्यसन जनता से दूर होने चाहिए,

(४) सुशिक्षा से होम हवन यज्ञयाग आदि धार्मिक विधि करने की ओर लोगों की रुचि बढ़नी चाहिए,

(५) व्यभिचार आदि दोष लोगों से दूर होने चाहिए।

राष्ट्र में एक भी जन निरक्षर नहीं रहना चाहिए और साथ साथ उक्त पांच बातें भी होनी चाहिए। युरोप में, अमेरिका में तथा जापान में फी सदी नब्बे आदमी साक्षर हैं, परंतु, चोरी, डकैती, कृपणता, मद्यपान, धूम्रपान, व्यभिचार आदि अनंत दोष वहां हैं। एक दूसरे का घात पात करने की भी प्रवृत्ति उनमें है। इसलिये युरोप अमेरिका तथा जपान की शिक्षा वैदिक शिक्षा से बहुत हीन है। यदि उक्त पांच बातें सिद्ध न हुई तो केवल साक्षरता को सुशिक्षा कहना असंभव है। पढ़े लिखे लोगों की संख्या अधिक होना अच्छा है, बुरा नहीं है परन्तु साथ साथ ऐसा प्रबंध होना चाहिए। कि उक्त पांच बातें भी शिक्षा के साथ ही सिद्ध होवें। अन्यथा सच्ची राष्ट्रीय शांति स्थिर नहीं हो सकती और अंतर्राष्ट्रीय शांति भी स्थापन होना असंभव है। अब और वैदिक शिक्षा का आदर्श देखिये :—

सह नाववतु सह नौ भुनक्तु
सह वीर्यं करवावहै। तेजस्विनावधीत-
मस्तु मा विद्विषावहै॥

तै० आ० ८।१।१

"सुशिक्षा हमारी रक्षा करे, हमें अन्न दे, हम पराक्रम करेंगे, हमारा ज्ञान तेजस्वी रहे और हम आपस में द्वेष न करें"। सुशिक्षा का वैदिक आदर्श इस मंत्र में कहा है इसलिये पूर्वोक्त मंत्र के साथ इस मंत्र का भी विचार करना चाहिए। इस मंत्र में निम्न बातें कही हैं:—

(६) शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि जिससे मनुष्यों में स्वसंरक्षण करने की शक्ति स्थिर रहे,

(७) शिक्षा से भोजन के प्रश्न का हल होना चाहिए,

(८) शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात् पराक्रम युक्त पुरुषार्थ करने की शक्ति स्थिर होनी चाहिए,

(९) शिक्षा से तेजस्विता बढ़नी चाहिए,

(१०) शिक्षा से आपस के द्वेष मिट जाने चाहिए।

पूर्वोक्त पांच उद्देशों के साथ ये पांच उद्देश देखिए जिससे वैदिक शिक्षा का आदर्श आपके मन में प्रकाशित हो सकता है। वैदिक शिक्षा के ये उद्देश हैं। आजकल के शिक्षा प्रचारक इन बातों का विचार करें और अपनी परिस्थिति के अनुकूल उचित प्रबंध करके इस समय योग्य शिक्षा का प्रचार करें तभी सच्ची शांति स्थापित हो सकती है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारी आर्थिक स्थिति।

लेखक—श्रीयुत छेदीलाल एम० ए० (आक्सन) बारिस्टर-एट-ला—

वर्तमान समय में आर्थिक उन्नति को ही प्रायः सब उन्नति का मुख्य साधन समझते हैं। यूरोप में तो सभ्यता का यह मूल मंत्र ही समझा जाता है। इसी विश्वास के कारण यूरोप निवासी चाहे उचित रीति से हो या अनुचित, चाहे छल से हो या बल से, चाहे न्याय से हो या अन्याय से अपनी आर्थिक उन्नति करना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं। यह व्यापार द्वारा ही किया जा सक्ता है अतएव यूरोप में प्रत्येक कार्य में व्यापार ही की प्रधानता देखी जाती है। आरंभ में प्रत्येक देश अपने ही उपयोग के लिये माल तैय्यार करते थे किन्तु धीरे २ इस से संतोष न हो सकने क कारण व्यापारिक क्षेत्र अन्य देशों में बढ़ने लगा। चोर चोर में ही चोरी नहीं हो सकती इसलिये व्यापारिक क्षेत्र को विस्तीर्ण करने के लिये यूरोप नहीं चुना जा सका, पूर्वीय देशों के निवासी जो अर्ध सभ्य समझे जाते हैं इस नये खेल के शिकार समझे जाने लगे। यूरोप निवासी इन देशों पर प्रत्यक्ष रीति से या अप्रत्यक्ष रीति से अधिकार करने लगे, जिस स्थान में अकारण ही ऐसा करना अन्याय पूर्ण जंचता था वहां सब लोगों को बहकाने के लिये इस का नाम Sphere of influence रख दिया गया। ऐसा करने का अभिप्राय यही है कि यहां से जितने कच्चे माल की आवश्यकता हो वह लेजाया जावे और अपने देश का बना बनाया माल इन स्थानों में बेचा जावे अथवा अपने स्वदेशीय पूंजीपति द्वारा यहां के सब उत्पत्ति के साधनों को अपने वश में रक्खा जावे। इन देशों के हित अनहित का कुछ भी ध्यान नहीं रक्खा जाता। चाहे इन को लाभ हो या हानि इन से जितना अधिक हो सके उतना लाभ उठाना ही मुख्य ध्येय रहता है। इस प्रकार सारा संसार इन अर्थ-लोलुप पश्चिमीय राष्ट्रों के हाथ बँटा हुवा है। अर्थ संचय ही मुख्य ध्येय होने के कारण ये आपस में एक दूसरे को हानि पहुंचाने से नहीं चूकते। ये अपने यहां के तैय्यार माल के लिये बाज़ार ढूंढने में धर्म अधर्म सब कुछ भूल जाते हैं, बाज़ार के लिये झगड़ना Scramble for market यूरोपीय राजनैतिक चालों का मुख्य केन्द्र है। इसी कारण से एक देश दूसरे से ईर्षा रखता है और वर्तमान यूरोपीय महायुद्ध का यही एक मुख्य कारण है। यह कहना कि वर्तमान युद्ध किसी सिद्धांत की रक्षा के लिये हुवा निश्चय भ्रमात्मक है। अभी यूरोप में इतना आत्मिक बल नहीं है कि किसी सिद्धांत के लिये कुछ स्वार्थ त्याग कर सके। पारस्परिक द्वेष भाव सम्बन्धी बदला लेने की प्रकृति, ऊँचे सिद्धान्तों की बार २ दुहाई देने के कारण निःसंदेह कुछ समय के लिये छिप जाती है। अतएव घोर अन्याय से किये जाने वाले युद्धों में भी येही ऊंचे सिद्धान्त मुख्य कारण बताये जाते हैं और घृणित से घृणित कार्य भी इसी के नाम से किये जाते हैं। सन्धि की शर्तों से प्रत्यक्ष है कि जिन सिद्धान्तों के नाम से यह महायुद्ध चार साल तक चलाया गया और असंख्य मनुष्य स्वतंत्रता देवी के नाम पर बलि कर दिये गये वह केवल धोखा मात्र था। तात्पर्य यह कि यूरोप में आपस में जो कुछ मारकाट होती है उसका मुख्य कारण केवल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पूर्वीय लोगों को तथा और पिछड़े हुये राष्ट्रों को अपने वश में कर व्यापार बढ़ाना ही है। यदि ये पिछड़े हुये राष्ट्र अपनी दशा सुधार लें तथा अपनी आर्थिक स्वतंत्रता कायम रक्खें तो यूरोप निवासी मन माने इन्हें आपस में नहीं बांट सकेंगे। यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जावे तो कई राष्ट्रों का निर्बल होकर आत्मावलंबी न होना ही युद्ध का एक मुख्य कारण है। यदि संसार की सब जातियां अपनी पर्याप्त उन्नति करलेवें, अपनी रक्षा वाह्य शत्रु से कर सकें और यूरोपियन माल खरीदने में विवश न किये जा सकें तो निसंदेह संसार से युद्ध का एक मुख्य कारण लोप होजावेगा। लीग आफ़ नेशन्स संसार में शांति तब तक नहीं स्थापित कर सक्ती जब तक सब राष्ट्र उन्नति कर समानावस्था में न पहुंच जावें। आर्थिक अवस्था ही युद्ध का मुख्य कारण होने से प्रत्येक पूर्वोक्त राष्ट्र का कर्त्तव्य है कि यदि इस संसार से युद्ध को दूर करना है तब वह अपनी आर्थिक दशा कम से कम इतनी तो अवश्य सुधार ले कि कोई दूसरा राष्ट्र वहां पर व्यापार में अनुचित लाभ उठाने के लोभ से कहीं लड़ न मरे।

यद्यपि ब्रिटिश साम्राज्य में होने के कारण भारत को कोई विदेशीय शत्रु का भय नहीं है तथापि साम्राज्य में ही बराबरी का व्यवहार पाने के लिये भारत को अपनी आर्थिक स्थिति दूसरे उपनिवेशों के समान तो अवश्य ही कर लेनी चाहिये। मित्रता का सच्चा भाव समान बल वालों में ही होता है। अपने लिये मित्रता का बर्ताव पाने के लिये हमें समानता तो अवश्य प्राप्त करनी चाहिए अर्थात् यह अत्यंत आवश्यक है कि हम अपनी आर्थिक दशा सुधारें।

हमारी आर्थिक दशा सुधारने के कारण केवल अन्तर्राष्ट्रीय ही नहीं हैं। हमारी आन्तरिक दशा भी इतनी शोचनीय होगई है कि अब इनकी अवहेलना करना प्रायः असंभव है। भारत का संसार में सब से निर्धन होना अब सब लोग स्वीकार करने लग गये हैं, प्लेग, हैज़ा तथा इनफ्लुवेंज़ा से लाखों आदमियों के मरने के अतिरिक्त केवल पेट की ज्वाला के कारण ही दो करोड़ से अधिक भारतवासी गत तीस वर्षों में कराल काल के गाल में पड़ गये। बड़े२ डाक्टरों का मत है कि अधिकतर भारत वासियों के बीमारी के शिकार होने का कारण अन्न वस्त्र के अभाव से उनके शरीर की पोषण शक्ति का ह्रास है। कमज़ोर को सबही मारते हैं क्षुधा से क्षीण भारत वासियों पर इसीलिये संक्रामक रोगों का अत्यन्त भयंकर आक्रमण होता है। कहां तक कहा जाय हमारे राष्ट्रीय स्वास्थ का इतना पतन होगया है कि भारत वासियों की अपेक्षत आयु अब केवल २३ ही वर्ष है जहां यूरोप प्रभृति देशों के निवासियों की औसत आयु इससे करीब २ दुगनी है। भारतीय अर्थ शास्त्रज्ञों के सन्मुख यह बड़ी समस्या है। केवल असंख्य भारतवासी अकाल मृत्यु के ही शिकार नहीं होते किन्तु हम लोगों की शारीरिक अवस्था भी बिगड़ रही है तिस पर भी जन संख्या की वृद्धि बराबर होती जा रही है। सन् १९०१ के गणना में हमारी जन संख्या की ७०, ४६००० वृद्धि हुई अर्थात् अनुपात से केवल २·५ प्रति शतक था किन्तु सन् १९११ की गणना में आश्चर्य कारक उन्नति हमारी संख्या में हुई याने जन संख्या २०७९५००० द्वारा बढ़ गई। अनुपात इसका प्रतिशतक ७·१ है। तात्पर्य इसका यह कि हमारी जन संख्या बराबर बढ़ रही है। दुःख की बात यही है कि हमारी आर्थिक हीनता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के कारण जन संख्या की इस तरह वृद्धि हमारे हर्ष का कारण नहीं होसक्ती। यही वृद्धि हमारी दशा को और शोचनीय बनाने का मुख्य कारण होगई है। कई लोगों का कहना है कि भारत बहुत भारी देश है और जनसंख्या चाहे कितनी ही बढ़े यह इनका भरण पोषण कर सकेगा। किन्तु स्टेटिसटिक्स (अंक शास्त्र) के जांचने से यह प्रत्यक्ष होजाता है कि ऐसा सोचना भ्रमात्मक है। सेन्सेस रिपोर्ट से पता चलता है कि ब्रिटिश भारत की आबादी प्रत्येक वर्ग मील पर औसत २२३ मनुष्यों के हिसाब से है भारत में जन संख्या की घनता कितनी है यह यूरोप के उदाहरण से प्रत्यक्ष होजावेगा। विलायत में हम सब मानते हैं कि बढ़ती जनता को सम्हालने के लिये अब नई भूमि कोई नहीं है किन्तु यहां भी घनी से घनी जन संख्या प्रत्येक वर्ग मील पर २०० मनुष्य से अधिक नहीं है। निम्न लिखित अंकों से हमारे विचार की पुष्टता पूर्ण रूप से सिद्ध होजावेगी। हमारे पास कुल इतनी ही भूमि शेष रह गई है।

सरवे किया गया रकबा ६१९,५२१००० एकड़
जंगल ... ... ८५, ०७९००० एकड़
जमीन जिसमें कृषी नहीं होसक्ती
१४३, ९३०,००० एकड़
कृषी करने योग्य भूमि ११३,८२०,००० एकड़
कुल जमीन जिससे कृषी कीगई
२२१,७७८,००० एकड़

यह तो कुल भारतवर्ष का हुवा। अब यह देखना है कि प्रत्येक प्रान्त में कुल जमीन में से कितने एकड़ प्रति शतक कृषी के काम में आता है:—

बंबई ५२ एकड़ प्रति शतक
बिहार ४९ ,, ,,
यू०पी० ४९ ,, ,,
बंगाल ४८ एकड़ प्रति शतक
पंजाब ४० ,, ,,
मद्रास ३८ ,, ,,
सी०पी० ३८ ,, ,,

उपरोक्त टेबिल के अध्ययन से हमारा भविष्य अत्यन्त निराशा जनक प्रतीत होता है विशेष कर जब हम सोचते हैं कि हमारी जन संख्या इस समय ३१५,०००,००० है और बराबर बढ़ती जा रही है। पहिली बात तो यह है कि अब कृषी करने योग्य भूमि ही कम रह गई है और जो है वह पशुओं के चरागाह के लिये अत्यन्त आवश्यक है कारण कि इनकी भी अवनति होरही है जो हमारे लिये कभी कल्याणकारी नहीं होसक्ती। हम अपना भोजन तो बाहर से भी मंगा सक्ते हैं किन्तु पशुओं के लिये ऐसा करना सर्वथा असंभव होगा। इसमें संदेह नहीं कि अभी भी आसानी से बहुत कृषी करने योग्य भूमि हमारे उपयोग में आ सक्ती है किन्तु हमारी बढ़ती हुई जन संख्या के लिये जिसमें ८२ प्रति शतक केवल कृषी द्वारा अपना निर्वाह करते हैं, भूमि अब परिमित ही कही जासक्ती है। पुनः भारत में भूमि से जितना काम लिया जाता है उतना किसी देश में नहीं लिया जाता, यूरोप में प्रत्येक कृषी किये हुवे वर्ग मील भूमि में केवल २५० मनुष्य ही अपना पोषण करते हैं ये केवल भूमि ही पर निर्भर नहीं रहते साथ २ इनका उद्योग धंधा तथा व्यापार भी शामिल है जो भारतीयों से कम से कम १० गुना अधिक है। किन्तु यहां पर केवल कृषी द्वारा ही अपना पालन करने वाले प्रति वर्ग मील पर ५०० से ७५० मनुष्य तक हैं। फिर इसमें यह विशेषता कि जन संख्या तो बराबर बढ़ रही है किन्तु कई कारणों से हमारी भूमि की उपजाऊ शक्ति बराबर कम होती जा रही है। मिस्टर दत्त, जिन्हें सर-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कार ने वस्तुओं के भारत में बढ़ते हुये मूल्य का कारण जानने के लिये नियत किया था, कहते हैं कि यहां जन संख्या बराबर बढ़ती जारही है। विदेश को खाद्य पदार्थ भी बहुत भेज दिया जाता है किन्तु इनकी उत्पत्ति उपयुक्त मात्रा में नहीं कीजाती। इन सब बातों से कम से कम यह बात तो अवश्य सिद्ध होजाती है कि केवल कृषी ही हमारे भरण पोषण के लिये पर्याप्त नहीं है और केवल इसी के सहारे हम अपनी स्थिति पूर्ण रीति से नहीं सुधार सक्ते। हमारे पास इतना धन भी नहीं है कि यूरोपियन देशों के समान बाहर से अन्न मंगा कर हम अपना गुज़र कर सकें, इस साल पहिली बार भारत को आस्ट्रेलिया से गेहूं खरीदना पड़ा। यदि हमारी यही स्थिति रही तो हमारी रक्षा ईश्वर ही कर सकेगा। यदि हम अपने को अन्न कष्ट से बचाना चाहते हैं, यदि बार २ दुर्भिक्ष के चंगुल में फंस कर अपने भाइयों का अमूल्य जीवन हमें नष्ट नहीं करना है तो हम को व्यापार की ओर भी ध्यान देना चाहिये, यदि कृषी के साथ २ हम इस ओर भी ध्यान दें तो हम कई आपत्तियों से निश्चय मुक्त हो सक्ते हैं।

व्यापार की ओर विशेष ध्यान देने की क्या आवश्यकता है यह हमारी अठारहवीं सदी की आर्थिक स्थिति के अध्ययन करने से अच्छी तरह ज्ञात हो जावेगा। अठारहवीं सदी के अन्त तक हम कृषी के साथ २ व्यापार भी खूब करते थे, हमारे कारीगर कई कलाओं में सिद्धहस्त थे, लाखों का माल विदेश जाता था और हम आनंद से जीवन यापन करते थे। ढाके की मल मल, बनारस तथा कोयम्बतूर का ज़र, लखनऊ के कलाबत्तू तथा बूंदी के लोहे के सामान यूरोप भर में आदर की दृष्टि से देखे जाते थे। कृषी की ओर भी लोगों का विशेष ध्यान रहता था इसलिये सब खाद्य पदार्थ भी सस्ते थे। कारीगर यही प्रयत्न करते थे कि उन का माल अच्छा बने। संख्या की ओर उन का ध्यान नहीं रहता था, अपने काम में उन को लाभ के साथ २ आनंद तथा आत्माभिमान भी होता था। देश में चारों तरफ अशान्ति होने पर भी पेट की ज्वाला से बहुत कम कष्ट पाते थे। हमारी यह अवस्था चिरस्थायी न हो सकी। ईस्ट इंडिया कंपनी ने कई प्रकार के अनुचित उपायों से, जिन का यहां वर्णन करना अनावश्यक है, हमारे व्यापार को नष्ट कर दिया। थोड़े बहुत कारीगर जो बच रहे थे वे भी मुक्तकार वाणिज्य के कारण विदेशीय मेशीन के बने सस्ते मालसे स्पर्धा न कर सके और अपना वंशपरंपरा से चला आता हुवा पेशा त्याग कर कृषी पर ही अवलंबित हो अपना जीवन काटने लगे। यह बात प्रत्येक गांव में आज कल भी देखने में आती है कि कारीगर अपना काम त्याग या तो कृषी करने लग जाता है या सब कुछ त्याग मजदूरी करने लगता है। व्यापार के नाश हो जाने पर केवल कृषी पर ही हम अब निर्भर हो गये और यही कारण है कि हम सदैव इस सदी के बाद दुर्भिक्ष के शिकार बने रहते हैं। हम चाहे कृषी की कितनी भी उन्नति क्यों न करें हमारी बढ़ती हुई जन संख्या की सब आवश्यकताओं को हम उस से पूरा नहीं कर सक्ते। अपनी जीवन रक्षा के लिये हमें इस ओर तो ध्यान देना ही चाहिये। आजकल भारत में जितना माल आता है उसमें से ८० सैंकड़ा तैय्यार माल होता है। हमारे यहां से बाहर जाने वाले माल में आधा कच्चा माल होता है। इसको हम यहीं पर अपने कारखानों में उपयोग कर सक्ते हैं। ऐसा न करना यह सूचित करता है कि हम अयोग्य हैं और हम अपने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri CC-BY-NC-SA

लिये वस्तुयें नहीं तैय्यार कर सक्ते। हमारे यहां से चमड़ा, चमड़ा तैय्यार करने का मसाला, रुई, मैंगनीस बहुमात्रा में विदेश जाता है और वहां से बनकर हमारे ही हाथ अठगुनी और दसगुनी कीमत पर बेचा जाता है। यदि हम चाहें तो यह धन हम आसानी से अपने ही देश में रख सक्ते हैं और इस तरह अपने भूखे भाइयों की प्राण रक्षा भी कर सक्ते हैं।

युद्ध छिड़ जाने पर ऐसी आशा होगई थी कि भारत सरकार अब इस ओर ध्यान देगी और जर्मनी के माल न आने से विदेशीय व्यापार में जो जगह खाली होगी कम से कम उसे तो भारतवर्ष अवश्य पूरा कर लेगा। किन्तु यह आशा भी दुराशा मात्र निकली क्योंकि हमारे देखते ही देखते जापान घुस पड़ा और भारत में उसने अपना माल भरवाना शुरू कर दिया। युद्ध के समय जापान ने भारत में अपना व्यापार कितना अधिक बढ़ा लिया यह निम्न लिखित अँकों से स्पष्ट होजावेगा? युद्ध के पहिले जितना विदेशीय माल भारत में आता था जापान का उसमें केवल २·५ प्रति शतक होता था। यह सन् १९१५-१६ में ५·७ होगया और सन् १९१६-१७ में ८·९ प्रति शतक तक पहुंच गया। आश्चर्य होगा कि जहां युद्ध के पहिले जापान का केवल ६ लाख का माल आता था सन् १९१६-१७ में २४३ लाख का सामान हम ने खरीदा। कांच का सामान, घड़ियां, मोज़े, बनैन, लोहे का सामान, सूत व खिलौने सब सामान जापान मनमाना भरने लगा है। घटिया होने पर भी विवश हो हम जापानी माल ही खरीदते हैं। तात्पर्य यह कि युद्ध के पहिले हमारी जैसी स्थिति थी अब भी वैसी ही है केवल इतना फ़र्क है कि अच्छे जर्मन माल के बदले हम रद्दी जापानी माल पा रहे हैं। युद्ध के अंत होने पर इंग्लैंड वाले भी भारत में ही अपना माल खपत करना चाहते हैं इंग्लैंड हो या जापान सब की यही इच्छा है कि भारत स्वयं कुछ न करके हमारा माल खरीदे। इस संबंध में सर-आकलैंड गेडीज़ ने पार्लियामेंट में कहा था "युद्ध के समय भारतीय बाज़ार में जहां अंग्रेजी माल के अभाव से जापानी माल ने अधिकार कर लिया था अब अंग्रेज़ी माल की मांग होने लगी है और जापान बाज़ार न छोड़ने का जी तोड़ प्रयत्न करेगा। भारतवर्ष में आने वाले विदेशीय माल में जापान का २० प्रति शतक माल आज कल होता है। जहां सन् १९१७, १८ में जापान को भारतीय कच्चा माल के मूल्य में अपने तैय्यार माल के अतिरिक्त १६ करोड़ रुपया और देना पड़ता था वहां आज स्वयं भारत जापान को अपने इतने अधिक कच्चा माल के अलावे ४ करोड़ रुपया उसके तैय्यार माल के मूल्य में और देता है।" उपरोक्त कथन से यह स्पष्ट होजावेगा कि हमारा कितना व्यापार जापान के हाथ लग गया है। ध्यान रहे कि जापान के व्यापार में यह आश्चर्य कारक उन्नति जापानी माल की विशेषता के कारण नहीं हुई है। इसका मुख्य कारण यही है कि युद्ध के कारण यूरोप से उतना माल नहीं आसका और अपनी दीर्घ-सूत्रता के कारण हम लोगों ने भी कुछ नहीं किया। बस जापान को पूरा अवसर मिल गया। बड़े कष्ट की बात है कि जापान और इंग्लैंड भारतीय बाज़ार के लिये इस तरह स्पर्धा करें और हम चुपचाप तमाशा देखें विशेष कर उस दशा में जब कि हमारे करोड़ों भाई दुःख से तड़प रहे हों। जो हुआ सो हुआ हमें अब नहीं सोना चाहिये। कमर बांधकर तुरंत हमें व्यापारिक क्षेत्र में उतर कर अपने देश को विदेशीय व्यापारियों के पंजे से शीघ्र बचाना चाहिये।

—o—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निराशावाद (Pessimism)

लेखक-श्रीयुत् सुधाकर एम. ए.

निराशा एक साधारण मनोवृत्ति है प्रत्येक हृदय में इसका आवेश तथा समावेश रहता है। यही स्थिति एक दूसरी मनोवृत्ति की है जिसको हम आशा के नाम से पुकारते हैं। कौन मनुष्य है जो इन दोनों भावों से वञ्चित हो? सच तो यह है कि हमारा जीवन इन्हीं के अनुक्रम की एक गाथा है। तुम निराश क्यों हो? तुम्हें किस बात की आशा लग रही है? यह साधारण प्रश्न हमारी ज़बान से सदा उच्चारण होते रहते हैं। निराशा दुःख की सूचना देती है किसी न्यूनता अथवा अप्राप्ति का निर्देश करती है। आशा सुख प्राप्ति की बोधक है, मनोरञ्जन का साधन है, आल्हाद जनक है, हृदयोल्लास का कारण है, यह दोनों भाव मानुषिक चरित्र की मनोहरता को बढ़ाते हैं, दोनों की स्थिति से ही जीवन की मिठास का सच्चा आनन्द उपलब्ध होता है। जैसे एक चित्र के सौन्दर्य के लिये कृष्ण वर्ण की रेखाएं भी अपने उचित स्थान पर उसकी शोभा को बढ़ाती हैं वैसे ही मनुष्य जीवन के चित्र के सौन्दर्य्य के लिये निराशा रूपी रेखाएं अपने स्थान पर बड़े काम की चीज़ें हैं।

निराशा और आशा जब एक मनुष्य की प्रकृति में स्थिर भावों का स्थान लेकर उसके जीवन को निज प्रभाव से सञ्चारित कर देती हैं तो वह निराशावादी अथवा आशावादी बन जाता है। साधारणतः हमें निराशावाद से भय आता है लोक व्यवहार में इस वाद को अच्छी दृष्टि से नहीं देखा जाता। निराशावादी सर्वदा उपहास घृणा तथा निन्दा का पात्र समझा गया है। यश कीर्ति और विजय का अधिकारी आशावादी को ही माना गया है। यह क्यों?

यह बात सर्व स्वीकृत है कि मनुष्य अपनी भ्रान्तियों में ही निमग्न रह कर सुखी रहना चाहता है। जब कोई उसकी भ्रान्ति को तोड़ता है और उसे संसार की वास्तविकता का दर्शन कराता है तो उसे अपनी सुख की निद्रा को छोड़ना पड़ता है यह उसे अभीष्ट नहीं होता, इसीलिये उसे निराशावादी से प्रीति नहीं। निराशावादी का इस के अतिरिक्त एक और अपराध यह भी है कि वह लोकरञ्जन की सर्वथा परवाह नहीं करता। जहां देखो जिस समय देखो उसे मनुष्य की प्रत्येक प्रसन्नता में दुःख और भय की गन्ध आती रहती है। जब दो मित्र मिल प्रेमरसास्वादन करने लगते हैं वहीं वह मित्र विद्रोह और अविश्वास की सूचना देकर उनके आनन्द में विघ्न डाल देता है। जहां कोई परोपकार का कार्य होना आरम्भ हुआ वहीं वह उस के अन्तर्गत स्वार्थ तथा नीच प्रकृति की झलक की ओर निर्देश करके कार्यकर्ताओं को हतोत्साह कर देता है। वास्तव में बात यह है कि उस की दृष्टि में चित्र का कृष्ण पार्श्व प्रधान रहता है। परन्तु साधारण जनता उज्वल पार्श्व को देख कर ही प्रसन्नता प्राप्त करना चाहती है। इन्हीं कारणों से निराशा वादी विचारे को लोग मुंह नहीं लगाते। वह उन की सहानुभूति का पात्र नहीं बनता। तू बड़ा निराशावादी है इतना कह देने मात्र से वे समझ लेते हैं कि उनके विपक्षी के पक्ष का खण्डन हो जाता है। निराशा-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वादी बेचारा क्या अनुभव करता है, वह किस प्रवृत्ति का प्रतिनिधि बन कर जीवन व्यतीत करता है इस का परिज्ञान प्राप्त करने के लिये आवश्यक है कि हम निराशावाद की तात्विक आलोचना करें। उस के गुण दोष विवेचन द्वारा उस में सत्य और असत्य के अंश को ढूंढ़ निकालें।

निराशावाद क्या है? इस प्रश्न की दार्शनिक विवेचना हमें इस लेख में अभीष्ट है। निराशा साधारण मनोवृत्ति है यह हम ऊपर कह चुके हैं परन्तु दर्शन साधारण बातों को असाधारण दृष्टि से देखता है, यही उस की विवेचना की विशेषता है।

निराशावाद का इतिहास बहुत पुराना इतिहास है यह इतना पुराना है जितना स्वयं दर्शन शास्त्र। मनुष्य की मननशीलता ही इस की उत्पत्ति का कारण है। जब मनुष्य चिन्तन करता है, जब वह संसार की घटनाओं पर गहरी दृष्टि पात करता है और उन को अपने यथार्थ रूप में देखता है तो उस को पता चलता है कि प्रकृति पग पग पर उसका विरोध कर रही है, उसकी परिस्थिति अधिकांश में उस के प्रतिकूल रहती है, दोनों का संघर्षण रहता है मनुष्य की आशाओं का भङ्ग होता है उसे निराशा देवी अपना दर्शन देती है। पुनः जब विचार दृष्टि को दूसरी ओर फेरता है तो उसे अपना जीवन एक निरन्तर दुःख का प्रवाह नज़र आता है। बाल्यावस्था से लेकर मृत्युकाल तक आयास, श्रम, रोग, भय, दुःख शोक, उदासीनता, तथा इच्छाओं की अपूर्ति का ही उसे सामना करना पड़ता है, यह सब उस को निराशा के द्वार तक पहुंचा देते हैं। साहित्य में कवियों ने भी जो आलाप आलापें हैं वे भी प्रकृति की निर्दयता और उस की संकीर्णता को ही दर्शाते हैं। यूनानी कवि होमर लिखता है "मनुष्य से बड़ा अभागा प्राणी कोई नहीं दीखता" सोफ़ाक्लिस ने कहा है "संसार में उत्पन्न न होना ही अत्यन्त अभीष्ट है परन्तु यदि उत्पन्न हो जावें तो दूसरे दर्जे की अभीष्ट बात यह है कि जितना शीघ्र हो सके जन्म से पूर्व जहां थे वहीं चल दें" भारत के प्रसिद्ध कवि भर्तृहरि ने भी इसी प्रकार का कथन किया है:—

श्रियो दोलालोला विषयजरसा प्रान्तविरसाः,
विपद्गेहं देहं महदपि धनं भूरिनिधनम्।
बृहच्छोको लोकः सततमबला दुःखबहला-
स्तथाप्यस्मिन् घोरे पथि वत रता हन्त कुधियः॥

कई पूर्वीय और पश्चमीय दार्शनिक सम्प्रदायों ने भी निराशावाद का प्रचार किया है भारतवर्ष में बौधदर्शन निराशावाद का समर्थक था। उस ने जीवन को दुःखमय स्वीकार कर के उस से छूटना ही निर्वाण पद की प्राप्ति का साधन मान लिया है। नवीन वेदान्त भी जगत् को मिथ्या मान कर संसार के ऐश्वर्य को माया कह कर मनुष्य की ऐहिक अभिलाषाओं पर पानी फेर देता है, क्रियात्मक जगत् से नवीन वेदान्त ने इतनी घृणा प्रकट की है कि उस के अनुयायी को निराशावाद के अतिरिक्त और कुछ सूझ ही नहीं पड़ता। पश्चिमीय दार्शनिकों में शोपनहार एक उच्च कोटि का निराशावादी था, उस के मतानुसार मनुष्य जीवन इच्छाओं के एक निरन्तर प्रवाह का नाम है। एक इच्छा की तृप्ति अन्य इच्छाओं की उत्पादक होती है और मनुष्य तृप्ति की तृष्णा में ही भटकता फिरता है सुख का अनुभव एक क्षण के लिये होता है। तत्पश्चात् पुनः इच्छाओं की अतृप्ति सताने लगती है। मनुष्य के सुखों की वही कथा है जो एक भिखारी की भिक्षा कथा है भिक्षा से उस को जो सहायता मिलती है वह केवल उस का दूसरे दिन की भिक्षा मांगने का भार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उठाने के योग्य बनाती है। भिक्षा मांगने का दुःख उस को सदा लगा ही रहता है।

उपरोक्त विचार से यह स्पष्ट विदित है कि निराशावाद किसी एक देश या काल की उपज नहीं। परन्तु सर्वत्र ही उस की स्थिति सम्भव है। जहां भी मनुष्य दुःख-दृष्टि से पदार्थों को देखने का अभ्यास डाल लेगा वहीं उसे निराशा आन दबावेगी। और संसार चक्र उस के लिये नरक का रूप धारण कर लेगा। अब पुनः यहां पर हम अपने पहिले प्रश्न को दुहराते हैं निराशावाद से हमारा क्या तात्पर्य है? उस की मुख्य कल्पना क्या है? यतः दुःख-दृष्टि की प्रधानता से निराशा का मुख अवलोकन सम्भव है अतः निराशावाद अपनी मुख्य कल्पना की इस प्रकार स्थापना करता है। मनुष्य जीवन दुःखमय है अतः वह निरर्थक है। इस में दुःख की राशि सुख से बहुत अधिक है। मनुष्य का उद्योग दुःख की राशि को कम करने में किसी प्रकार की सफलता नहीं प्राप्त कर सकता। प्रायः सुख दुःख की राशि की तुलना से ही निराशावाद की स्थापना की जाती है। शोपनहार तथा हार्टमान का निराशावाद इसी तुलना पर ही निर्धारित था। परन्तु दार्शनिक आलोचना यह सिद्ध करती है कि केवल दुःख की अधिकता की स्वीकृति ही निराशावाद की उत्पादक नहीं अपितु अन्य स्वतःसिद्ध इष्टों की कमी भी इस का कारण बन सकती है। सुख के साथ साथ जो लोग अन्य इष्टों की भी स्वतन्त्र सत्ता स्वीकार करते हैं उन के मत में सुख की न्यूनता न होने पर भी अन्य इष्टों की न्यूनता जीवन का मूल्य घटा देती है और निराशावाद की उत्पत्ति का साधन बनती है। धर्म, ज्ञान, प्रेम, सौन्दर्य, आयु, इत्यादि इष्ट सुख से स्वतन्त्र अपनी सत्ता रखते हैं, हमारे इष्ट ही हमारे लक्ष्य के रूप में प्रकट होते हैं और लक्ष्य की दृष्टिसे हम अपने जीवन का मूल्य निर्णय करते हैं जब जीवन को हम निरर्थक कहते हैं तो इस के दो कारण हो सकते हैं, या तो लक्ष्य क्षुद्र है या उच्च लक्ष्य होने पर वह अप्राप्यहै इसलिये जीवन-मूल्य-निर्णय लक्ष्य की दृष्टि से ही होता है। एक व्यक्ति जीवन से इसलिये हाथ धो बैठता है कि उस में सुख की राशि बहुत कम है दूसरा इस लिये उस से उपरत हो जाता है कि उसमें धर्म की कमी है तीसरे को इस लिये जीवन नीरस प्रतीत होता है कि उस में पूर्ण ज्ञान की प्राप्ति सम्भव नहीं अन्यों को इसी प्रकार जीवन इस लिये निकृष्ट दीखता है कि इसमें प्रेम तथा आयु की सम्पत्ति की पर्याप्त राशि उपलब्ध नहीं होती। सुतरां जीवन के लक्ष्य को जिस २ इष्ट की दृष्टिसे अवलोकन किया जावे उस २ इष्ट की अत्यन्त न्यूनता अथवा अभाव का अनुभव निराशावाद को उत्पन्न करता है।

आशावाद की स्थापना इस से बिलकुल विपरीत है आशावादी की दृष्टि में मनुष्य जीवन नितान्त सुखमय है उस को चारों ओर सुख और आनन्द के चिन्ह दीखते हैं उसे दुःख दीखता ही नहीं या वह देखना चाहता ही नहीं। वह सर्वदा विमल आनन्द की गङ्गा में स्नान करता रहता है, आशावादी के सन्मुख यदि दुःख आते भी हैं तो वह उन को गुप्त सुख स्वीकार करके हंसते हंसते हंस देता है। यदि निराशा वादी सुखान्ध है तो आशावादी दुःखान्ध है यह दोनों वाद परस्पर विरोधी एक दूसरे के ठीक उलटे मार्ग के अनुगामी हैं।

निराशावाद दुःख की अधिकता की स्वीकृति पर अवलम्बित है यदि हम इस स्वीकृति में सन्देह करें तो इस वाद की स्थापना नहीं हो सकती। कौन व्यक्ति है जो विश्वासपूर्वक कह सकता है कि संसार का सारा दुःख सुख

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उसने तुला द्वारा तोल कर दुःख की राशि की अधिकता को अनुभव किया है? दुःख अधिक है अधिक होने का निर्णायक क्या है ? यदि बाह्य परिमाण नहीं तो केवल निराशावादी की वैयक्तिक सम्मति को हम इस वाद की सत्यता का निश्चायक कैसे मान लें । इसी प्रकार जो लोग संसार में सुखकी अधिकता स्वीकार करते हैं उन से भी यदि पूंछा जावे कि उन के पास कौन सा वाह्य परिमाण ऐसा है जिस के द्वारा वह सुख का दुःख से अधिक होना स्वीकार करते हैं तो वे भी अपनी वैयक्तिक सम्मति को पेश कर सकते हैं जो पहिले के समान इस वाद की सत्यता की निश्चायक कभी नहीं हो सकती।

सत्य बात तो यह है कि इस जगत् में सुख है और पर्याप्त राशि में पाया जाता है। दुःख भी है और उस की पर्याप्त राशि मिलती है परन्तु इन दोनों के न्यूनाधिक होने का निर्णय किसी प्रकार से भी सम्भव नहीं यदि इस निर्णय पर ही एक व्यक्ति का आशावादी या निराशावादी होना अवलम्बित हो तो वह दोनों वादों से पृथक् रहेगा। हम पहिले लिख चुके हैं कि अभ्यास द्वारा मनुष्यों में सुख-दृष्टि या दुःख-दृष्टि प्रधान बनजाती है, उसी दृष्टि से प्रेरित होकर एक मनुष्य संसार में या सुख देखने का अभ्यासी बन जाता है या दुःख देखने का। इसीलिये हमारी सम्मति में यह दोनों वाद स्वभावसिद्ध हैं न कि बुद्धि-सिद्ध।

प्रायः यह प्रश्न उठाया जाता है कि इन दोनों वादों में से उत्कृष्ट कौन सा वाद है? यद्यपि दोनों एकाङ्गी हैं तथापि सत्य का अंश दोनों में पाया जाता है। वह अपने २ अंश को इतना बढ़ा कर प्रकट करते हैं कि अत्युक्ति की सीमा तक पहुंच जाते हैं। न संसार में सुख ही सुख है और न दुःख ही दुःख। न एक का अधिक होना सिद्ध है न दूसरे का। संसार में यह दोनों पाये जाते हैं मनुष्य के जीवन में इन दोनों का सहवास मिलता है इस से इन्कार नहीं हो सकता। परन्तु जीवन एक संग्राम है उस में योधा वही कहलाता है जो दुःख पर सुख की विजय प्रकट करता है। दुःख के सामने निराश हो बैठना कायरता है इस लिये जीवन संग्राम में आशावाद ही काम आता है। निराशावादी द्वारा प्रतिपादित दुःख की सत्ता को स्वीकार करके आशावादी को आगे बढ़ना चाहिये। आशावाद कर्म मार्ग का प्रतिपादक है। निष्क्रिय जीवन उस को मृत्यु के तुल्य दीखता है। यह वास्तव में जीवन का वाद है। महात्माओं के जीवन इसी से शोभा पाते हैं।

यद्यपि विचार दृष्टि से जब २ भी मनुष्य संसार के भयङ्कर दुःख चक्र का चिन्तन करेंगे तब २ ही निराशावाद किसी न किसी हृदय को अपना शिकार बना ही लेगा। क्योंकि पाप, अन्धकार, रोग, दुष्कर्म, अन्याय, विषमता, आदि महती दुःख सामग्री इस जगत् में उपस्थित है। परन्तु बुद्धिमत्ता यही है कि इस सब सामग्री को देखते हुए भी मनुष्य हृदय की तारों को ढीला न होने दें। शरीर में भय से कंपकपी न आने दें। प्रत्युत यह विश्वास रक्खे कि दुःख मनुष्य के पुरुषार्थ उद्योग और प्रयत्न से क्रमशः दूर हो सकता है। आशावादी को चाहिये कि वह निराशावादी को अपना सहायक समझे। उसके दुःख सम्बन्धी तीव्र अनुभव को लेकर सुख के फैलाने में लगावे। परन्तु इस बात का स्मरण रहना चाहिये कि निराशावादी का निरन्तर सहवास अच्छा नहीं। उस के प्रभाव से अपने आप को बचाना ही उत्तम है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारे भारतवर्ष में निराशावाद की कमी नहीं थी इसीलिये अकर्मण्यता का राज्य था। बौध धर्म और नवीन वेदान्त की शिक्षा ने इस वाद को पुष्ट किया था। परन्तु सौभाग्य की बात है कि वर्तमान-युग-प्रवर्तक ऋषि दयानन्द ने आशावाद के अङ्कुरों को आर्य-जाति में सञ्चारित किया। उनके आशावाद का ही यह फल है कि भारतवर्ष में चारों ओर कर्मण्यता की पुकार मच रही है। जहां पहिले यह विचार सर्व साधारण में फैले हुए थे कि जगत् मिथ्या है हमारा कुछ भी नहीं। जितना शीघ्र निस्तारा हो उतना ही अच्छा अब इस के विपरीत भारतवासी यह मानने लगे हैं कि जगत् सत्य है हम उसे असत्य मानते रहे हैं। हमारा सब कुछ है परन्तु अज्ञान वश लुटा बैठे हैं हमारा धर्म, हमारा देश, हमारी भाषा, सब कुछ हमें ग्रहण करना चाहिये। सन्तोष की बात है कि अभी ऋषि को मरे थोड़े ही वर्ष हुए हैं कि इस आशावाद ने अपने चमत्कार से सब को मुग्ध कर लिया है। देश में जो अवस्थायें इस समय उपस्थित होती जारही हैं वे सब हमें यह आशा दिलाती हैं कि भारतवासी अब निराशा के अन्धकार-मय संसार से निकल आशावाद के उज्वल देदीप्यमान जगत् में आरहे हैं और भावी हम सब के लिये सुखकर तथा हितकर होगी।

निघण्टु।

लेखक—श्रीयुत् भगवद्दत्त बी० ए०

निरुक्त का मूल—निरुक्त का मूल निघण्टु सुप्रसिद्ध है। निरुक्तकार यास्क इस का स्वीकार स्वयं अपने ग्रन्थ के आरम्भ में करते हैं। "समाम्नायः समाम्नातः स व्याख्यातव्यः" नि० १।१। अर्थात् समाम्नाय=पदसंग्रह=निघण्टु भले प्रकार अभ्यास किया गया या संगृहीत हुआ है, वह व्याख्या करने योग्य है। इसी निघण्टु की व्याख्या में सारा निरुक्त लिखा गया है।

निघण्टु शब्द की प्रवृत्ति—पहले पहल निघण्टु शब्द का प्रयोग केवल वैदिक कोष के लिये हुआ है। इस की साक्षी नि० १।१। में मिलती है। वहां कहा गया है कि उपमन्यु का पुत्र निघण्टु का निर्वचन करते हुए इस का सम्बन्ध निगम= वेदमन्त्र से करता है। अतः औपमन्यव के काल तक वैदिककोष ही होंगे। यह है भी उचित, क्योंकि जब लोकभाषा अभी बहुत विस्तृत भी न हुई थी तो उस के कोष कैसे बनते? हां यास्क के काल में साधारण कोष हो सकते हैं और उन का नाम भी निघण्टु हो सकता है। "अपिवाऽऽहननादेव स्युः" नि० १।१। यह यास्क का अपना निर्वचन है। अर्थात् (पद वा शब्द) आहनन=एकत्र पढ़े जाने से ही (निघण्टु) हों। यह निर्वचन अति विस्तृत है। औपमन्यव के निर्वचन के समान इस में निगम का सम्बन्ध नहीं जोड़ा गया, अतः हम ने पूर्वोक्त बात कही है।

शनैः २ निघण्टु शब्द का प्रयोग उन साधारण कोषों के लिये भी होता हुआ दिखाई देता है कि जिन में पर्याय शब्द पढ़े गये हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कात्यायन प्रणीत ऋग्वेदसर्वानुक्रमणिका के वृत्तिकार वड्गुरुशिष्य के दो स्थलों में यह वचन है। "यातयामो जीर्णे भुक्तोच्छिष्टेऽपिचेति निघण्टौ" १।४। तथा 'शंका वितर्क भययोरिति निघण्टुः' मं० १।१९१। यह दोनों पाठ यादवप्रकाश विरचित वैजयन्ती कोष में पृ०२७५ पं०१। तथा पृ०२२३ पं० ७६ में क्रमशः मिलते हैं*। ऐसे ही पदमञ्जरी के कर्त्ता हरदत्त का भी लेख है। यथा "तन्त्रं प्रधाने सिद्धान्ते तन्तुवाये परिच्छद इति निघण्टुः।१।१।" तथा "अथाङ्गलक्षणयोः को विशेष इति। निघण्टुकपर्यायतया पाठान्नास्त्येव विशेष इत्यर्थः।४। ३।१२७।" ये दोनों वचन भी अमरकोश ३।१८५ तथा वैजयन्ती पृ० १९। पं० ५७ में क्रमशः मिलते हैं। इन प्रमाणों से स्पष्ट ज्ञात होता है कि मध्यम कालीन लेखक पूर्व प्रदर्शित अर्थ में भी निघण्टु शब्द का प्रयोग करते थे। और भी देखो। स्वऋग्वेदभाष्यभूमिका में सायण ने कहा है– "एकार्थवाचिनां पर्यायशब्दानां संघो यत्र प्रायेणोपदिश्यते, तत्र निघंटु शब्दः प्रसिद्धः। ाादशेष्वमरसिंह, वैजयन्ती, हलायुधादिषु दश निघण्टव इति व्यवहारात्।"

निघण्टु अनेक थे–निघण्टु नाम के अनेक वैदिक कोष वैदिक काल में रहे होंगे। यास्क ने स्वनिरुक्त में इस बात का स्पष्ट उल्लेख किया है। यथा "तान्यप्येके समामनन्ति नि० ७।१३।" यह वचन दो वार इसी खण्ड में आया है। अभिप्राय इस का यही है कि शब्दविशेषों का अन्य ऋषि भी समाम्नाय करते हैं, अर्थात् निघण्टु बनाते हैं। वे सब निघण्टु यास्क के काल में तो थे, पर अब लुप्तप्राय हो चुके हैं। सम्प्रति तो वही एक वैदिक निघण्टु विद्यमान् है जिस पर कि यास्क ने निरुक्त रचा।

इस निघण्टु का निर्माता कौन है ?

सत्यव्रत सामाश्रमी ने निरुक्तालोचन में इस विषय की कुछ मीमांसा की है। उस में उस ने निम्नलिखित दो पक्ष बता कर प्रथम पक्ष को सिद्धान्तरूपेण स्वीकार किया है।

(१) देवराज, दुर्ग और सायण† के अनुसार निघण्टु समाम्नाय होने से अतिप्राचीन अतः यास्क से पूर्वकालीन है।

(२) मधुसूदन सरस्वती ने प्रस्थान भेद में यास्क को ही निघण्टु का कर्त्ता माना है। "तत्रापि निघण्टुसंज्ञकः पञ्चाध्याय्यात्मको ग्रन्थो भगवता यास्केनैव कृतः। पृ० ८ वाणीविलास संस्करण सन् १९१२।" अर्थात् निघण्टुनामक पञ्चाध्याययुक्त ग्रन्थ भगवान् यास्क द्वारा ही बनाया गया है।

प्रथमपक्षान्तर्गत सायण की सम्मति तो विवादास्पद है, अतः हम उसे किसी अन्य समय के लिये छोड़ते हैं। दुर्ग की सम्मति वस्तुतः यही है कि निघण्टु ग्रन्थ किन्ही प्राचीन

* इन वचनों पर सर्वानुक्रमणिका और उस की टीका वेदार्थदीपिका के सम्पादक मैकडानल महाशय ने यह नोट दिया है। "Not in Yaskas Nighantu," प्रतीत होता है वह इन्हें यास्कीय वैदिककोष में ढूंढता रहा है। वहां न पाने पर उस ने विचारा होगा कि कदाचित् ये वचन यास्कप्रणीत निघण्टु सदृश किसी अन्य प्राचीन निघण्टु में होंगे। यह भूल निघण्टु शब्द की प्रवृत्ति को न जानकर साधारणतया हो सकती है।

† यहां यह स्मरण रखना चाहिये कि सायण निघण्टु को भी निरुक्तसंज्ञान्तर्गत मानता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ऋषियों की कृति है। उस का प्रमाणभूत वाक्य यह है–"साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुः। तेऽवरेभ्योऽसाक्षात्कृत धर्मभ्य उपदेशेन मन्त्रान् सम्प्रादुः। उपदेशाय ग्लायन्तो ऽवरे बिल्मग्रहणायेमं ग्रन्थं समाम्नासिषुः। वेदं च वेदाङ्गानि च। बिल्मं भिल्मं भासनमिति वा *नि० १। २०। अर्थात् साक्षात्कृतधर्मा ऋषियों ने इस ग्रन्थ का समाम्नाय किया। सत्यव्रत के मतानुसार पूर्वोक्त वचन यास्क से बहुत पूर्वकालीन है, यास्क कथित नहीं। इस का एक कारण भी उस ने आगे लिखा है। "न हि स्वयमेव दुरूहं शब्दं प्रयुज्य तद्व्याख्यानाय च यतितुं प्रवर्त्तते कश्चिद्"(कस्य वेदाङ्गत्वं विषय) यह युक्ति ऊपर से यद्यपि बड़ी प्रिय लगती है तथापि हेय है। कारण कि निरुक्त का अगला वाक्य "एतावन्तः समानकर्माणो धात्वः। धातुर्दधातेः नि० १। २१।" निश्चय ही यास्क का अपना है। यहां यास्क अपने अतीव साधारण पद का आप ही व्याख्यान कर रहा है। वस्तुतः यास्क की मनोवृत्ति ही ऐसी है कि वह व्याख्यान को कोई अवसर नहीं छोड़ता आप लिखता २ भी उस का स्पष्टीकरण करता जाता है।

साक्षात्कृतधर्माणः–वाक्य का अर्थ।

इस वाक्य पर दुर्ग, दयानन्द सत्यव्रत, राजाराम और हरिप्रसाद ने अपने २ स्वतन्त्र लेख किये हैं। उन सब का तुलनात्मक विचार हम पुनः कभी करेंगे। यहां केवल इतना कहना है कि यास्क कथित "इमं ग्रन्थं समाम्नासिषुः" का यही अभिप्राय है कि प्राचीन ऋषियों ने इस ग्रन्थ को बनाया। इमं=इस शब्द से यहां निघण्टु नहीं लिया जा सकता, अन्यथा यह वचन आगे आने वाले एक प्रबल प्रमाण से विरुद्ध पड़ेगा। अतः इस का यही तात्पर्य है। कि इस प्रकृति का ग्रन्थ बनाया। यह हम पूर्व कह चुके हैं कि निघण्टु अनेक थे। यहां उन्हीं में से सब से पहले का संकेत है।

सत्यव्रत का एक और प्रमाण।

सत्यव्रत ने महाभारत का एक और प्रमाण उद्धृत किया है।

वृषो हि भगवान् धर्म्मः ख्यातो लोकेषु भारत। निघण्टुकपदाख्याने विद्धि मां वृषमुत्तमम्॥ कपिर्वराहः श्रेष्ठश्च धर्मश्च वृष उच्यते। तस्माद् वृषाकपिं प्राह कश्यपो मां प्रजापतिः†।

शान्तिपर्वान्तर्गत मोक्षधर्मपर्व
अ० ३४२। ८६।८७॥

यही श्लोक राजाराम ने अपने निरुक्त की भूमिका मे उद्धृत किये हैं। उनका अर्थ और और परिणाम जो सत्यव्रत से मिलता है, नीचे दिया जाता हैं। "हे भारत! ऐश्वर्य का दाता धर्म, जगत् में वृष प्रासिद्ध है। निघण्टु के पदकथन में मुझे उत्तम वृष जान। कपि; वराह और श्रेष्ठ का नाम है और धर्म वृष कहलाता है। इस लिये कश्यपप्रजापति ने मुझे वृषाकपि =(श्रेष्ठ धर्म) कहा है। यहां निघण्टु पदों के कथन में 'कश्यप प्रजापति ने मुझे वृषाकपि कहा है, इस लेख से यह सिद्ध है, कि निघण्टु का कर्त्ता प्रजापति कश्यप है। निघण्टु ५।६ में १६ वां पद वृषाकपि है"।

* इस वाक्य के उद्धृत करने में हमने कई सन्धियां तोड़ दी हैं। प्रयोजन यही है कि सर्व साधारण पाठक भी इसे सरलता से समझे लें।

† कुम्भघोण संस्करण में ये श्लोक अध्याय ३५२ के २३,२४ हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस पर हमारा वक्तव्य।

(१) हमारा विचार है कि जब तक महाभारतादि ग्रन्थों के उत्तम संस्करण सैकड़ों पुराने ग्रन्थों की सहायता से उच्चकोटि के विद्वानों द्वारा न निकाले जायें तब तक उन के ऐसे २ वाक्यों से कोई परिणाम नहीं निकालना चाहिये।

(२) महाभारत में ऐसे निर्वचन बहुत पिछले काल के हैं। यथा "एकतश्चतुरो वेदान् भारतश्चैतदेकतः। पुरा किल सुरैः सर्वैः समेत्य तुलयाधृतम्॥ चतुर्भ्यः सरहस्यभ्यो वेदेभ्यो ह्यधिकंयदा। तदा प्रभृति लोके ऽस्मिन् महाभारतमुच्यते॥

(महा० १। २६८, २६९)

(३) निघण्टु ५।६ मे कोई अर्थ नहीं दिखाया गया प्रत्युत वहां तो अनेक पद पढ़े गये हैं।

(४) और भी निघण्टु हो सकते हैं जिन में वृषाकपि शब्द विद्यमान् हो।

(५) सब से बढ़कर युक्ति जो पूर्वोक्त सब पक्षों का खण्डन करती है यास्क की अपनी है। "यत्तु संविज्ञानभूतं स्यात्, प्राधान्यस्तुति तत्समामने।" यहां समामने पद के प्रयोग से यास्क स्पष्ट कह रहा है कि मैंने भी कोई समाम्नाय बनाया है। वह यही निघण्टु है। इस में किसी को अणुमात्र भी सन्देह न होना चाहिये।

युगान्तर।

लेखक—श्रीयुत् वंशीधर

ये काला ओढ़ कर दामन, न आंसू अब बहा देवी!
तेरा गुण गान करने एक वीणा बजने वाली है॥१॥
दबा आवाज़ अन्दर की पुजारी! अब न वहकाना।
सचाई की लहर दुनियां में फिर से चलने वाली है॥२॥
न लड़ना भाइयो! आपस में नाहक अब कमर कस कर।
दुखी आहों से बत्ती प्रेम की अब जलने वाली है॥३॥
न डर है चाहे आजावें हज़ारों आंधियां मिल कर।
ये इक आवाज़ भीतर की न इन से दबने वाली है॥४॥
भटकना तुझ को गुमराहों में ऐ! दिल! अब नहीं होगा।
तुझे रस्ता दिखाने एक 'ज्योती' आने वाली है॥५॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

महाभारत कालीन शिल्पवैभव

(१)

लेखक–श्रीयुत् रामदेव बी. ए. यम. आर. ए. यस. सम्पादक वैदिक मैगज़ीन

प्राचीन भारतवर्ष की चतुर्मुखी उन्नति ने वास्तव में अपने काल में भूमण्डल पर एक अद्भुत चमत्कार कर दिखाया था। भारतवर्ष में शिल्प की उन्नति, वैभव की अनन्तता, देश का आन्तरिक तथा वाह्य देशीय व्यापार तथा विदेशों से सम्बन्ध खूब ही बढ़ा हुवा था। व्यापार शिल्प कृषि गोरक्षा येही साधन हैं जो देश के वैभव को उत्पन्न करते तथा बढ़ाते हैं। इस लिये व्यापार कृषि तथा शिल्प और पशुरक्षा ये वार्त्ता शब्द से कहे जाते थे। संस्कृत के प्राचीन साहित्य का वार्त्ता विधायक कोई भी ग्रन्थ लिखा नहीं मिलता है कृषि तथा समुद्र यात्रा पर कतिपय तन्त्र ग्रन्थ हैं। पशुरक्षा निखषपद पालकाप्य हस्त्यायुर्वेद नकुल कृतशालिहोत्र आदि अति न्यून इने गिने ग्रन्थ आजकल भी उपलब्ध होते हैं परन्तु वाणिज्य और कुसीद (महाजनी) के लिए ब्राह्मणकाल में मायावेद प्रसिद्ध है जो कि खास कर कुसीदिजन (महाजनों) के लिए उपदेश किया जाता था। महाभारत काल में भी वार्त्ता के किसी शाखा का भी पूरा ज्ञान ऐसा प्रतिपादित नहीं जिस प्रकार राजधर्म। परन्तु फिर भी वार्त्ता की चर्चा क्रियात्मक रूप में बहुत थी जिस प्रकार कि सभापर्व के "कच्चिद्" अध्याय में नारद-युधिष्ठिर संवाद में नारद के प्रश्नों से प्रतीत होता है :—

हस्तिसूत्र
अश्वसूत्र
रथसूत्र
धनुर्वेद
यन्त्रसूत्र

"क्या इन सूत्र शास्त्रों का तू अध्ययन करता है हस्तिसूत्र अश्वसूत्र और रथसूत्र। और क्या धनुर्वेद यन्त्रसूत्र का भी अभ्यास किया जाता है।"[1] इससे प्रतीत होता है कि शिल्प को उन्नति देनेवाले यन्त्रसूत्र का भी ज्ञान था। वार्त्ता के हस्तिसूत्र और अश्वसूत्र यह दोनों पशुओं के पालन तथा आवश्यक उपयोग के प्रमाण हैं। रथसूत्र और धनुर्वेद भी यौद्ध शिल्प के प्रमाण भूत है।

राजा की और राष्ट्र की ओर से व्यापार को और शिल्प को सहायता

महाभारत काल में राजा का यह कर्त्तव्य था कि वह अपने देश के शिल्प और व्यापार की स्वयं सहायता करे। महाभारत के समय भी भिन्न २ प्रकार के शिल्पों और व्यापारों को द्रव्य से सहायता करता तथा पारितोषिकादि देकर उत्साहित करता था और उनको अपने राष्ट्र में उचित आश्रय देकर बसाता था।

---

१ कच्चित्सूत्राणि सर्वाणि गृह्णासि भरतर्षभ। हस्तिसूत्राश्वसूत्राणि रथसूत्राणि वाविभो ॥ १२० ॥
कच्चिदभ्यस्यते सम्यक् गृहे ते भरतर्षभ। धनुर्वेदस्य सूत्रं वै यन्त्रसूत्रञ्चनागरम् ॥१२१॥ (सभा०अ०५)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नारद पूछते हैं कि i "धन और धान्य से दरिद्र अपने सम्बन्धी गुरु और वृद्ध और व्यापारी वणिकों और आश्रित शिल्पियों को धन आदि से सहायता करके उन पर अनुग्रह करता है ?"

ii "दूरदेश से लाभ के हेतु आये व्यापारियों से कर लेने वाले ठीक ठीक कर लेते हैं ? क्या तुम्हारे पुर और राष्ट्र में व्यापारी विना किसी प्रकार के छल और धोखे के अपने माल असवाब लाते हैं ?"

iii "क्या अपने सब शिल्पियों को चार मास के बाद नियत किया हुआ धन और साधन सामान ठीक २ देदेता है?"

iv "क्या तुम्हारा कृषि विभाग ओर मौ और फूल और फलों का विभाग ठीक है ?"

v "क्या सज्जन पुरुषों द्वारा देश की वार्त्ता (व्यापार) ठीकतरह किया जाता है। यह लोक वार्त्ता के आधारपर चलता है और सुख की वृद्धि होती है ?"

इन उपरोक्त उदाहरणों से प्रतीत हो जाता है कि राजा ने विदेशीय व्यापारियों तथा स्टेट की सहायता पर शिल्पियों का भी बहुत अच्छा प्रवन्ध किया था।

वार्त्ता का मुख्य भाग पालन है। प्राचीन भारत में पशुओं का बड़ा भारी व्यापार होता था। पशु धन समझा जाता था। इनकी रक्षा तथा शिक्षा के लिए बड़े विद्वानों को नियत किया जाता था जो इस कार्य में खूब चतुर होते थे। महाभारत काल में अश्वपाल और हस्तिपालन तो युद्ध में सहस्रों हस्तियों और घोड़े के होने से ही स्वतः सिद्ध है। शेष गो-पालन का भी पृथक् शास्त्रानुकूल प्रवन्ध किया जाता था। विराटपर्व में सहदेव तन्त्र-पाल नाम रखकर विराट के पास आकर कहता है कि:—

पशुपालन

"पांचो पाण्डु के पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र युधिष्ठिर है। उसके १८ हजार सौ सौ गौवों के बने झुण्ड खड़े थे। और दूसरे विभाग में १० हजार और तीसरे विभाग में २० हजार में उनका गोसंख्य (गौओं का गणक) था। बीती होनहार और वर्त्तमान जो भी गौओं की संख्या होवे सो सब मैं जानता हूं। मुझे ऐसे २ उपाय और शिल्प आते हैं कि जिनसे बहुत शीघ्र बहुत बढ़ जांय और उनमें रोग सर्वथा ही न हो। अच्छे बैलों की पहचान और लक्षण भी मैं जानता हूं जिनके मूत्र को सूंघकर बन्ध्या के भी पुत्र पैदा हो जाता है"[1]

---

i कच्चिच् ज्ञातीन्गुरून्वृद्धान् वणिजः शिल्पिनः श्रितान्। अभीक्ष्णमनुगृह्णासि धनधान्येन दुर्गतान्॥७१॥

ii कश्चिदभ्या गता दूराद्वाणिजोलाभ कारणात्। यथोक्तमवहार्यन्ते शुल्कं शुल्कोपजीविभिः॥ ११४॥
कच्चित्ते पुरुषाः राजन् पुरेराष्ट्रेचमानिताः। उपानयन्ति पण्यानि उपधाभिरवञ्चिताः॥ ११५॥

iii द्रव्योपकरणं कच्चित् सर्वदा सर्वशिल्पिनाम्। चातुर्मास्यावरं सम्यड्-नियतं सम्प्रयच्छसि॥११८॥

iv कच्चित्ते कृषितन्त्रेषु गोषु पुष्प फलेषु च॥ ११७॥

v कच्चित्स्वनुष्ठिता तात वार्त्ता ते साधुभिर्जनैः। वार्त्तायां सश्रितस्तात लोकोयं सुखमेधते॥ ७९॥

१ पञ्चानां पाण्डु पुत्राणां ज्येष्ठोभ्राता युधिष्ठिरः। तस्याष्टाशतसाहस्रा गवांवर्गाः शतं शतम्॥९॥
तेषां गोसख्य एवासं तन्त्रपालेतिमांविदुः। अपरेदशसाहस्राः द्विस्ताबन्तस्तथापरे॥१०॥
भूतंभव्यंभविष्यच्च यच्चसंख्यागतं गवाम्। नमेऽस्त्यविदितं किञ्चित्समन्ताद्दशयोजनम्॥११॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गुरुकुल कांगड़ी

अश्वविद्या के विषय हम पहिले लिख आये हैं कि नकुल अश्वविद्या में बड़ा विद्वान् था[1]।

इसने विराट से कहा—"मैं अश्वों के स्वभावों तथा शिक्षा और सधाने के तरीके खूब जानता हूं। दुष्ट घोड़ों का उपाय तथा उनकी वैद्यक चिकित्सा भी जानता हूं। मेरा सिखाया पशु कभी बिगड़ता नहीं मेरे पास घोड़ियें ही बिगड़ी हुई दुष्ट नहीं घोड़े दुष्ट फिर कैसे हो सकते हैं"[2]

बस्त्र तथा कम्बलआदि

महाभारत काल में नाना प्रकार के वस्त्रों का शिल्प था तथा दूर देशों से विशेष वस्तुएं बनकर आती थीं। हिरोडोटस ऐतिहासिक कहता है कि यूनान के वासी भारतवर्ष से आती हुई कपास के विषय में कहते थे यह ऊन वृक्षों पर लगती है। इस समय से भी पहिले भारत में कपास के कपड़े बना करते थे इसके अतिरिक्त भी भेड़ की ऊंने बकरी की लूम के और केले के पत्तों के नाना प्रकार के रेशमादि भी उस समय प्रचलित थे। सभापर्व में महाराजा युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में देश देशान्तर तथा द्वीप द्वीपान्तर के निवासी अपने देश के शिल्प तथा उद्योगिक धन्धे से बनी वस्तु को उपहार में लाये हैं जिनका क्रम से यहां उल्लेख किया जाता है।

110423

कपास के कपड़े

कार्पासिक देश के रहने वाले सैकड़ों दासे दासियां भी प्रवेश न कर सकीं।[3]

सूक्ष्म वस्त्र

"चोल और पाराड्य देश के लोग हीरे माणिक्य और सूक्ष्म वस्त्र भी लाये"।[4]

गद्दे

"सिंहल देश के सैकड़ों गद्दे (कुथ) लाये थे"।[5]

पेटी और पगड़ी

"दक्षिण देश का राजा पेटियें [सन्नहन] मालायें और पगड़ियें लाया"।

दिव्य वस्त्र क्षौम=दुकूल

"उत्तर दिशा के निवासियों ने अपनी भेंट में दिव्य वस्त्र दिव्य आभरण और दुशाले और मृगचर्म दिये"।[6]

---

१ क्षिप्रज्ञ गावो बहुला भवन्ति न तासु रोगो भवतीहकश्चन ॥
तस्तैरूपायै र्विदितंममतद् एतानि शिल्पतानिमयि स्थितानि ॥ १३ ॥
ऋषभांश्चापि जानामि राजन् पूजित लक्षणान्। येषां मूत्रमुपाघ्राय अपिवन्ध्य प्रसूयते ॥ ॥१४॥
(विराट० अ० १०)

२ अश्वानां प्रकृतिं वेद्मि विनयं चापिसर्वशः। दुष्टानां प्रतिपत्तिंच कृत्स्नंचैव चिकित्सितम् ॥७॥
नकातरंस्यान्मम जातु वाहनं नमेऽस्तिदुष्टा बड़वाः कुतोहयाः ॥ ८ ॥ (विराट० अ० १२)

३ एवं वालिं समादाय प्रवेशं लेभिरेन च। शतंदासी सहस्राणां कार्पासिकनिवासिनाम् ॥७॥ (सभा०५१)

४ मणि रत्नानि भास्वन्ति काञ्चनं सूक्ष्म वस्त्रकम् ॥ ३५ ॥ (सभा० ५२)

५ शतशश्चकुथां स्तत्र सिंहलाः समुपाहरन् ॥ ३७ ॥ (सभा० ५२)

६ ततोदिव्यानिवस्त्राणि दिव्यान्याभरणानि च। क्षौमाजिनानि दिव्यानि तस्थते प्रददुःकरम् ॥१९॥
दक्षिणात्यः संहननं स्रगुष्णीषे च मागधः ॥७॥ (महा० सभा० अ० ५३)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ऊन के मूसे के बने कपड़े तथा पर्दे और अजिन चर्म।

कम्बोज देश के राजा ने ऊन के, मूसे और बिल्ली के बालों के बने हुये सोने के तारों से सजे परदे और चर्म दिये। [1]

ऊन के रङ्कु के रेशम के कीट के सूत के शुद्ध कपास के और भेड़ के चर्म।

"उत्तर के निवासियों में ऊन के कपड़े, रङ्कु के पहाड़ी बकरे की चर्म पशम के कपड़े सूत और रेशम के कपड़े शुद्ध कपास के और शुद्ध रेशम के कपड़े आदि भेंट किये"। [2]

"पूर्व देश के राजा बड़े मूल्य आसन सेजें वाले आसन यान और सेजें लाये थे। नाना प्रकार के कवच विविध शस्त्र भी लाये"। [3]

इसके अतिरिक्त महाभारत में स्थान २ पर सूक्ष्म कम्बल वासिनी तथा पीतकौशेय वासिनी आदि नाना प्रकार के मुहावरे ही उस समय के अत्युत्तम वस्त्र शिल्प का पद २ पर प्रमाण दे रहे हैं।

बलिदान।

लेखक—"मञ्जरी"

(१)

विषम चिंता।

चिंता करते २ कई वर्ष व्यतीत हो गये दिन की भूख और रात की नींद हर गई शरीर शिथिल हो गया सारी शक्ति व्यय हो गई फिर भी कोई सफलता न हुई क्या कमला के लिये विधाता ने कोई वर पैदा नहीं किया है? कितने अच्छे २ नवयुवक जिनको देखते ही मानों पुत्रवत् प्रेम अन्दर से उमड़ा आता हो कमला के हस्तग्रहण के लिये प्रार्थी हुवे किन्तु हाय रे जाति बन्धन! तेरा नाश हो, कुटुम्ब बन्धन! तूने मुझे ग़ारत कर दिया। ऐसा सोचते हुवे कुछ गुन गुनाते राय सुन्दरलाल इंजीनियर अपने उद्यान में आराम कुर्सी पर जाकर बैठ गये। हाथ में यद्यपि कोई दैनिक समाचार पत्र पकड़ा हुवा है तथापि दृष्टि किसी और ही तरफ लगी हुई है नेत्र लाल तथा क्रोध से भरे हुवे हैं।

आज कई दिनों से यह बड़े विक्षिप्त से हो रहे हैं इनके जैसे गम्भीर और धैर्य्यवान् पुरुष के लिये भी स्त्री का नित्य प्रति अनुनय विनय

---

१ और्णान् वैलान् वार्षदंशान् जातरूपपरिष्कृतान्। प्रावाराजिन मुख्यांश्च कम्बोजः प्रददौबहून् ॥३॥ (सभा० ५१)

२ ऊर्णाङ्कराङ्कवञ्चैव कीटजं पट्टजं तथा। कुटीकृतं तथैवात्त कमलाभं सहस्रशः ॥२६॥
इलक्ष्णं वस्त्रं मकार्पास माविकंमृदु चाजिनम् ॥ २७ ॥ सभा० अ० ५१ ॥

३ अस्त्रानि विविधानि यानानि शयनानि च ॥ ३१ ॥ (सभा० ५१)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और कलह भी तथा बड़े भाई की प्रति समय अवहेलना सहना दुष्कर हो गया।

वायु और जल के द्वन्द युद्ध की भांति कमला के सुख सौभाग्य और बन्धुजन के प्रति निर्बलता का घोर संग्राम उनके हृदय में आरम्भ था। उनका हृदय धड़क रहा था मुख पर कभी विषाद कभी उत्सुकता कभी विकलता तथा बेचैनी के चिन्ह प्रति क्षण परिवर्तित होते थे। अपने इस आवेग में कभी वे उठते कभी बैठते कभी टहलने लगते थे किसी क्षण स्थिर दृष्टि से टकटकी लगाये हुवे पृथ्वी को देखते थे। कि इतने में घोड़े की टाप सुनाई दी, चौंक कर पीछे देखा तोः—एक पकी हुई दाढ़ी उस पर खिजाब मले शरीर से हृष्ट पुष्ट काला चेहरा आंखें घुसी हुई थानेदारों के लिवास में सुसज्जित लाला देवीप्रसाद अपने बड़े भाई को पाया।

मुंह से अचानक आह निकल गई किन्तु तत्क्षण अपने को रोककर दुआ सलाम के पश्चात् दोनों बैठ गये।

कुछ देर सन्नाटा रहा। सुन्दरलाल ने यद्यपि भाव को गोपन किया किन्तु पुलिस वालों में छटे हुवे देवीप्रसाद झट ताड़ गये और बोले।

देवी०—सुन्दर! अगर तुम्हें मेरी सलाह मशवरा इतना बुरा लगता है तो मैं आज से कसम खाता हूं कभी तुम्हारे बीच में न बोलूंगा। दुनियां में नेकी का बदला बदी मिलता है यह मैंने देख लिया तुम्हें अच्छी बात बताओ और तुम उसे बुरी समझते हो। इसमें मेरा क्या फ़ायदा है तुम्हारी लड़की आराम से रहेगी। क्यों! मेरी जो श्यामो, भग्गो, ललतो हैं सो क्या सुख से नहीं या वे कोई ऐरे गैरे घर की थीं तुम्हारी कमला में क्या सुर्खाब का पर लग गया है। यही न उल्टे लाड़ लड़ा कर दो चार किताबें पढ़ाकर दिमाग़ खराब कर दिया है।

सुनते २ सुन्दरलाल क्रोध को न थाम सके बोल उठे।

"भाई साहब आप बात करिये मैं सब समझता हूं सुनता हूं किन्तु कमला पर आक्षेप ताने न मारिये नहीं तो ठीक न होगा।

देवी० अपनी कुटिल नीति से कब चूकने वाले थे बोले:—

"लेओ कमला से क्या मुझे कोई दुश्मनी है? मैं तो उसे बेटी की तरह समझता हूं। मेरी तदवीर पर अमल करो तो कमला को राज की रानी बना दूं और क्या चाहिये तुम्हें उस दिन सब बता चुका हूं उसकी माता बिलकुल राज़ी है। और हो भी क्यों न ऐसा घर वर मिलना मुश्किल है। यह धरम वरम की बातें सब ऐसे ही चलती जाती हैं। लड़की का व्याह वाह कर दे झगड़ा मिटे। दुनियां हमें थूंकती है कि मालूम नहीं क्यों इतनी सयानी लड़की बैठी है। कुछ नुक्स होगा। जहां बैठो वहां शर्मिन्दगी उठानी पड़ती है। मैंने तो दोस्तों में जाना छोड़ दिया।

सुन्दर०—यदि एक नुक्स होता तो मैं हर तरह आपकी तसल्ली करता पर एक तो दुहाजू फिर बड़े २ लड़के लड़कियां, इतनी उमर, न पढ़ा न लिखा वह तो शायद मुझ से भी बड़ा होगा भाई साहब! किस तरह मैं अपनी सुकुमारी कन्या को उस बुड्ढे को सौंपूं। कभी २ मैं तो सोचता हूं कि जाति पांत का बन्धन ही उड़ा दूं।

देवी०—(उत्तेजित होकर) तुम अन्धे हो तुम्हारा तो दिमाग़ सातवें आसमान पर है। जाओ जात बाहर करो कुए में डूबो हम लोग

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कोई साथ न देंगे । कुल में मुख में कालिस लगाओ। तुमने क्या लड़के को देखा नहीं है।

सुन्दर (स्वगत) लड़का कहते ज़बान क्यों नहीं जल जाती ?

उसके मुंहपर पर उमर मालूम ही नहीं होती । बहू देख आयी थी उसे बहुत पसन्द आया। पहला लड़का हाथ पैर का है लड़की अपने घर गई । सच पूछो तो लाड़ चाव सुख तो ऐसे ही घर व्याह में है। और अभी तो राय साहब मदनलाल के माबाप भी जिन्दा हैं। उन्हें किसी बात की फ़िक्र नहीं। सैकड़ों सगाईयां जा रही हैं वो तो मेरा दोस्ताना है इससे थंभे हैं । मेरी ललतो जो न व्याही गई होती तो फ़ौरन व्याह देता।

सुन्दर०—(मन ही मन) आगे भी तो एक खूसट के गले मढ़ा है (प्रकाश में) खैर देखा जायगा।

देवी०—(अपने दख़ल का रुख़ देखकर) आज ही फ़ैसला होजाना चाहिये। वे तो हमारे यहां ठहरे हुवे हैं। अब किसी दोस्त..... अठवारागुजर गया (और धीरेसे) कमला की मां तो शगुन भी देआई है।

सुन्दर०—(एक दम आपे से बाहर हो लाल नेत्र कर) हैं इतनी हिम्मत ? तुम दोनों ने मिल कर मेरे विपरीत षडयन्त्र रचा है स्त्री की इतनी मजाल अच्छा देखलूंगा । हां साथ में रमेशचन्द्र पर भी आक्षेप उसने तुम्हारा क्या विगाड़ा है।

देवी०—विगाड़े या न विगाड़े देखूं कौन कामयाब होता है। यह सब कांटे उसी के बोये हैं। (मुझे सदा बनाता रहता है देखूं बच्चा अब कहां जाते हैं) (स्वगत)

---

(२)

आत्मिक विकास ।

लज्जाशीला कमला रूप-यौवन-सम्पन्न-पुष्प की भांति मधुर है। पढ़ते २ जब कभी अध्ययन से उसका मन ऊबता है तो उद्यान में जा पुष्पों से भांति २ की बातें कर उनके सुगंध रूपी अमृत रस पान किया करती है । पिता के शहर बाहर रहने और उसके कहीं न जाने आने के कारण से इसकी कोई आधुनिक नवीना सखियां नहीं हैं न इसको उस रसका स्वादन करने की ही रुचि है । नवमल्लिका की भांति सदा प्रफुल्लित कमला अब कुछ कुम्हलाती जाती है। उसके नेत्र चकोर अब हरिणी की भांति उद्यान में केलि कौतूहल नहीं करते प्रायः माता पिता से भी वह अधिक नहीं बोलती। पिता के अधिक पूछने पर सिर दर्द कह देती है।

सन्तान-वत्सल पिता ने विवाह की जटिल समस्या के कारण कन्या को चिन्तित समझा। माता ने अन्य लड़कियों की भांति उसका विवाह न हो जाने के कारण उदास समझा पति पत्नी का आपस में वाद विवाद भी हुआ किन्तु सरला बालिका के मन की बात किसीने न जानी।

पिता की विषम चिन्ता देख २ कर कमला अन्दर ही अन्दर कुढ़ती थी। वह सहस्रों साधनों से उन्हें इस घोर समस्या के सुलझाने में समर्थ करने को सोचती थी पर किसी निश्चित परिणाम पर न पहुंचती। कभी २ आत्महत्या ही को साधन समझ वह उसी पर आरूढ़ हो जाती । परन्तु संसार से अनभिज्ञ, सुख में पली हुई अबोध बालिका को इतना साहस कहां !

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कमला की मा ने आज रुद्र रूप धारण किया है। साक्षात् चन्डी बन कर पति के साथ कलह विग्रह की और सुन्दरलाल के प्रत्येक विचार पर पानी फेर महीने के अन्दर ही अन्दर उक्त राय साहब से कमला के विवाह की दृढ़प्रतिज्ञा की। सुन्दर लाल कई दिनों से अस्वस्थ थे किन्तु उसने इनबातों की कोई पर्वाह न की कमला को भी कुवाच्य कहे।

कमला को ऐसे झगड़ों का ज्ञान न था उसने तो इतनी अवस्था में सदा लालन पालन और सुख ही देखा था। माता पिता दोनों ही अपनी २ रीति अनुसार प्यार करते थे और मत भेद होते हुए भी दोनों का इस भांति झगड़ा न होता था। कमला के नन्हें से हृदय को बड़ी चोट लगी। उसकी आंखें भर आईं, चित्त अधीर होगया, वह उद्यान में जा अपनी चिर संगिनी सहचरी चमेली लता के निकट बैठ कर झर झर आंसू बहाने लगी। यह चमेली-लता उसकी अपनी लगाई हुई अत्यन्त स्नेह-प्रद लता थी। वह सदा विचारा करती थी कि यह कितनी दुःखिनी है कि मेरे सदृश इसको मानसिक विकास नहीं है। विचारी सदा दूसरों के लिये फूल लगाती, सुगन्ध देती और उपहार में कृतज्ञता में मनुष्य फूल तोड़लेते हैं वह सह कर चुप रहती है किन्तु आज उसकी अवस्था में परिवर्तन है उसका विचार प्रवाह उलट गया है उसे चमेली लता की उपकारिता और गुणों का ध्यान कर अपने को कलह की जड़ समझ स्वजीवन पर घृणा हुई बोली "बहिन चमेली मुझे अपनी भांति बलदो। तुम्हारा जीवन कैसा सुखमय है। मानसिक कष्टों से तुम छूटी हुई हो तुम आपस में कलह नहीं करातीं दूसरों के कष्ट का साधन नहीं बनतीं तुम ईर्षा द्वेष को भूलकर भी स्थान नहीं देतीं। मैं तो केवल इन बातों की जड़ बन रही हूं। मुझे भी अपने सदृश बना लो जीती हुई वा नष्ट होकर किसी भी प्रकार से मुझे भी बल दो कि पिता माता का दुःख दूर करूं। हे जगन्नियन्ता! परमेश्वर आप ही मुझे आश्रय दो मैं कहां जाऊं क्या करूं" इस भांति रोते २ वह संज्ञाशून्य सी होकर वहीं गिर गयी।

उस चमेली लता पर सिर रक्खे हुवे माधुरी मनोहरी कमला को देख मानो माता पृथ्वी की गोद में स्वयं सीता ही का प्रादुर्भाव सा भास होने लगा। उसके मुख पर से विषाद की रेखा हटने लगी। धीरे २ उसी निद्रा की उत्संग का आश्रय लिये हुवे उसको कितना समय होगया।

भगवान् अंशुमाली अस्ताचल चूड़ावलम्बी हो गये और अनन्त तारागण सिंह के चले जाने पर इतर पशुओं की तरह इधर उधर झांकने लगे। वृक्ष के पीछे से पत्तों की खड़ खड़ाहट सुनकर सहसा कमला की आंख खुल गई दूर पर रमेशचन्द्र जाते हुवे दिखाई दिये। वह अकचका कर उठ बैठी। "अरे यह तो रात होगई" यह कहती २ उसने एक वार चमेली-लता को मिलकर गाढ़ आलिंगन किया फिर "बहिन आज तुम्हारे आदर्श से मुझे मेरा पथ ज्ञात होगया तुम धन्य हो। तुम्हारी सी सखी और मैं कहां पाऊंगी" कहते २ गृहाभिगामी हुई। उसके मुख से चन्द्रमा के तुल्य शान्ति और दृढ़ संकल्प का विकास हो रहा था। द्वार पर लौटते हुवे बन्धु रमेशचन्द्र फिर मिले और ज्योंही कमला दूसरे मार्ग से जाना ही चाहती थी उन्होंने राह रोककर कहा "कमले! वहां क्या कर रही थी आज कल तुम्हें क्या होगया है" किन्तु कमला चली गई क्या निरुत्तर? नहीं, केवल एक दृष्टि उनके हृदय को भेद कर निकल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

गई, उत्तर मिल गया। कमला के हृदय पर एक स्मृति लिख गई।

---

(३)

कृतकार्य्यता।

छुटपन से ही रमेश कमला को खिलाता था पढ़ाता था शिक्षा देता था मारता भी था प्यार भी करता था। कभी दोनों में संकोच या कोई अन्य भाव पैदा ही नहीं हुवा। किन्तु चमेली लता की प्रिय सखी रूपी कमला ने अब रमेश के मन में जागृति पैदा कर दी। वह व्यस्त और चिंतित रहने लगा कार्य्यवश कई २ वार घर आने पर भी कमला की छाया भी उसे न दिखाई देती। रमेशचन्द्र ने कमला के बचाने का बड़ा ही उद्योग किया किन्तु जाति बन्धन की जटिल जंजीर से जकड़े हुवे कुटुम्ब के बीच में से सुन्दरलाल को ऊपर नहीं खींच सके। सुन्दरलाल उनको पुत्रवत् मानते थे सही और कभी कन्या के प्रति गाढ़ प्रेम देखकर सम्बन्ध भी एक क्षण के लिये मस्तिष्क में विचर कर चला जाता था परन्तु जाति हीन निर्धन युवक रमेश! धन के आगे तुम्हारी विद्वत्ता सरलता सच्चरित्रता और धार्मिकता सब नीचा देखती है। लक्ष्मी के आगे सरस्वती को हाथ जोड़ना पड़ता है। हाय इसी को ज़माने का हेर फेर कहते हैं। पत्नी के आगे सुन्दरलाल की एक न चली। कवि ने कहा है—

लिखित मपि ललाटे प्रोञ्झितुं कस्समर्थः।

विधि की बिडम्बना। कमला उस दिन से विचलित नहीं हुई उसने अपने मन के मानों प्रत्येक विचार पर विजय पाली। दुःख से उद्धार करने के लिये माता की आज्ञा का सर्वथा पालन किया। बड़े समारोह से विवाह हो गया। वेदी पर अधवयस् वसन्तपुर के ज़मींदार राय मदन-मोहनजी के चरणों पर देव कन्या कमला का बलिदान होगया।.....

कमला को उत्तम २ रत्न जटित बहुमूल्य वस्त्र आभूषणों से सुसज्जित देख कर माता का हृदय गद्गद् होगया। समवयस्का कन्यायें ईर्षा से जलीं और तरह २ की बोलियां मारीं, झुंड के झुंड स्त्री पुरुष आये गये, बड़ी २ दावतें हुईं, बाजे बजे आतशबाजी छूटीं, घर में चारों तरफ बधाइयों की भरमार हो गई। सुतरां हर प्रकार से आनन्द मङ्गल किया गया किन्तु रमेशचन्द्र हताश होकर चले गये। और सुन्दरलाल फिर कहीं दिखाई ही नहीं दिये। थानेदार साहेब ने सब बड़ा अच्छा प्रबन्ध कर दिया और जिसने पिता को न देखकर पूंछा सब को आश्वासन दे दिया कि "दो चार दिन में गुस्सा शान्त हो जायगा। तो सब ठीक हो जायगा हवाई किले बांधने वाले ऐसे ही करते हैं"।

अच्छा "बीती ताहि विसारदे" जो हो गया सो अच्छा होगया यही संसार की गति है।

आज नव वर्ष का समय बीत गया है कमला खाती पीती सोती जागती पहिनती ओढ़ती जाती आती सब कार्य्य करती रहती है। उसके पति उसको सब प्रकार से सुखी रखते हैं उसके सुन्दर स्वरूपवान् दो सन्तान एक पुत्र और एक कन्या भी है। संसारिक वस्तुओं के देखते उसको कोई कमी अन्यों की दृष्टि में नहीं ज्ञात होती। वह अपना समय पढ़ने लिखने तथा अन्य कार्य्यों में अच्छी प्रकार बिताती है व्यर्थ नहीं खोती और कभी २ तो वह मानों मन को धोखा देने के लिये कार्य्य करती है। कभी २ वह घंटों सोचा करती है जन धन स्थान होते हुवे भी उसे अकेलेपन का भास होता है। उसके हृदय में मानों कोई स्मृति सी हो आती है किन्तु वह स्वयं ही उसे नहीं समझ सकी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सबै दिन नाहिं बराबर जात। मदनमोहन के लकवा मार चुका था और अवस्था दिन प्रति दिन ढलती जाती है कमला निरन्तर उन की सेवा शुश्रूशा में रत रहती है बड़े २ डाक्टर वैद्य उनकी देख भाल करते हैं परन्तु रोग ने पैर फैला लिये हैं और वह अत्यन्त हीन हो गये हैं। निःसहाय कमला को कुछ नहीं सूझता रोते २ उसकी आंखें बैठ गईं कपोल सूख गये रंग पीला पड़ गया। सब सम्बन्धी मित्र इत्यादि उन्हें देखने आये किन्तु आश्वासन किसी से न हुवा वरन् दुःख की मात्रा और बढ़ी। माता स्वयं दूसरे के ऊपर, भाई छोटे २ उसको चारों ओर अंधकार ही अंधकार दिखाई देने लगा केवल उसके हृदय में एक बिजली के सदृश स्मृति कभी चमक चमक कर रह जाती है और यह उसको दुःख का कारण समझती है सुतरां अपने को जीतने के लिये यह उसको तत्क्षण हटा देती है। पितृकुल के समान इसको यहां कभी वन विहारिणी मृगी की भांति पुष्पोद्यान में भ्रमण करने का भी सौभाग्य प्राप्त न था वरन् घर के बाहर भी जाना दुष्कर था। पुराने ज़माने की तरह बनी अट्टालिका की छत पर चाहे चली जाय।

किसानों के हरे भरे खेतों में विचरने, उनकी रम्य झोपड़ियों में जाने से उसके पति-गृह की शान में फ़र्क़ आता था।

ग्रीष्म ऋतु का सायंकाल है किसान लोग अपने २ खेतों से लौटे आ रहे हैं झोपड़ों से थोड़ा २ धुआं निकल रहा है किंचित् किसानों की स्त्रियां अपने थके हुवे पतियों के लिये रोटी बनाती होंगी कोई हुक्का चिलम हाथ में लिये ताजा कर रही है। कोई गाय भैंस दुह रही है। ज़मींदार मदनमोहन को डाक्टरों ने वायु सेवन के लिये बाहर जाना बताया है इससे वे पीनस में बैठकर भ्रमण करने के हेतु गये हैं। कमला विचारी ऊंची अट्टालिका पर टहलती हुई निर्निमेष लोचनों से यह दृश्य देख रही थी उसके भाग्य में यह सब कहां! इन्हीं विचारों में मग्न वह कितनी देर तक एक टक ग्रामीण दृश्य देखती रही थी कि उसे कुछ नीचे से आवाज़ आती हुई प्रतीत हुई। ध्यान से सुना तो बाहर कोई कुण्डी खटखटा रहा था। गृह में उस समय कोई अन्य भृत्य भी न था वह स्वयं ही दौड़कर नीचे गई। द्वार खोला तो चिरकाल के बिछुड़े हुवे प्रिय बन्धु रमेशचन्द्र दिखाई दिये। चार आंखें होते ही कमला की वह पूर्व स्मृति बिजली समान सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त हो गई और वह कठपुतली सदृश वहीं की वहीं रह गई।

(४)

भ्रमनिवारण।

मदनमोहन हवा खोरी करके लौट आये नौकरों ने उन्हें चारपाई पर लिटा दिया। धीरे २ रमेशचन्द्र नीचा मुख किये उनके पलंग के पास बैठ गये। मदनमोहन दुर्बल प्रकृति के आदमी थे आज पिछली बातों को याद कर उन्हें ईर्षा नहीं हुई वरन् आंखों से झर झर आंसू गिर रहे थे अन्त में रमेशचन्द्र दृढ़ता से बोले। "राय साहब अब आपकी तबियत कैसी है"।

मदन—क्या कहूं परमात्मा किये हुवे कर्मों का फल दे रहे हैं भाई एक प्रार्थना करता हूं (इतना कहते २ उनका गला रुंध गया)।

रमेश ने कहा—आप ज़रा शान्त होइये फिर कुछ बात करेंगे।

आज से तीन वर्ष पूर्व जिस रमेश के प्रति अपनी सच्चरित्रा प्रियतमा भार्य्या कमला का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गाढ़ स्नेह देखकर मदनमोहन ईर्षा से जल गये थे। उसका निरन्तर आना बैठना बोलना तक बुरा लगता था यहां तक कि पहिले पुत्र तथा अन्य सम्बन्धिगण और इतर मनुष्यों के कहने से साध्वी कमला के आचरणों पर कलङ्क भी सत्र मान लिया था किसीने कहा आंख से देखा है किसी ने कहा कान से सुना है अतः प्रत्येक की बात को स्वयं बुज़दिल होने के कारण उस किंवदन्ती की सत्यता का निर्णय किये विना ही रमेशचन्द्र का तिरस्कार कर सुमुखी कमला को भी बहुत कुछ भला बुरा कहा था वही आज पश्चात्ताप कर रहे हैं। आज रमेश के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकाश करना चाहते हैं।

इतने दिनों की रुग्णावस्था ने उन्हें कमला के सच्चरित्र और सेवा का सच्चा रूप दिखा दिया। उसके निर्मल चारेत्र पर उन्हे किसी तरह की शंका न रही। वे समझ गये थे कि वह अटल स्वर्गीय प्रेम जो कमला और रमेशचन्द्र का है उनके योग्य नहीं। वह एक वार उन्हें बुलाना भी चाहते थे किन्तु उनके कई वार बात चलाने पर भी कमला बीच में उड़ा देती थी।

आज बूढ़ेने रमेशचन्द्र से अपनी सब पिछली बातों की क्षमा चाही और उनका बड़ा हार्दिक स्वागत किया। वे कमला से तो कई वार क्षमा मांग चुके हैं।

रमेश ने कहा–"आप व्यर्थ मुझे लज्जित न करें। कमला मेरी छोटी वहिन के सदृश है इतने दिनों तक भी मैं किसी न किसी रूप से आप लोगों का समाचार लेता रहा हूं। कमला के अनुरोध के कारण अब तक मैं नहीं आया किन्तु आप के कोमल स्वभाव को जान कर अब नहीं रहा गया सोचा कि जो होगा देखा जायगा जाना अवश्य चाहिये। यदि आप दूसरों के कहने पर न जाते और स्वयं अनुसन्धान करते तो बात की सत्यता सिद्ध हो जाती। अस्तु जो होगया सो होगया। इससे हमें एक प्रकार से शिक्षा ही मिली।"

मदन०—(आंखों में आंसू भर कर) अब मेरी ज़िन्दगी के दिन थोड़े रह गये हैं। इस से यदि आप मेरे कार्य्य में थोड़ी सी सहायता दें तो मेरी आत्मा को बहुत सुख होगा। आपसे अधिक उपयुक्त इस लड़के की शिक्षा का भार लेने में और कौन हो सक्ता है और पुत्री के विवाह की भी बड़ी चिन्ता है यदि आप इतना कार्य्य कर सकेंगे तो बड़ा अनुगृहीत होऊंगा।

रमेश०—आप इस तरह से निराश न हों अभी डाक्टरों से सलाह करके नियमितरूप से आपकी दवा होने से रोग नष्ट हो जायगा। आप जो आज्ञा दें मैं करने को तैय्यार हूं। विमला अभी तो कुल ७ वर्ष की है अभी इसकी शिक्षा का उचित प्रबन्ध होना चाहिये। अभी से व्याह करने के योग्य नहीं।

मदन०—हमारे शास्त्र के हिसाब से लड़की बहुत बड़ी होनेसे पाप लगता है।

रमेश ने उन्हें युक्तियों द्वारा समझाया और बहुत वाद विवाद के पश्चात् वे पुत्री को सोलह वर्ष तक पढ़ाने और सुयोग्य वर चाहे अन्य जाति में ही हो चुनने पर राज़ी हो गये।

कमला अब उतनी उदास नहीं रहती। डाक्टरों ने मदन को निरन्तर पहाड़ पर रहना बताया हैं। इस लिये नियमित समय पर रमेशचन्द्र उन्हें पहाड़ पर लेगये जहां पर मदन मोहन धीरे २ कुछ आरोग्य लाभ करते हुवे प्रतीत होने लगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

76 83

(५)

स्मृति दमन।

विहारप्रिय रजनीपति अपनी सम्पूर्ण कलाओं सहित मानों सृष्टिसुन्दरी से क्रीड़ा करने के लिये अभी उदय हुवे हैं। सृष्टि सुन्दरी भी उस समय विनयशीलता लज्जा को त्याग कर स्वाभाविक चंचलता से अटखेलियां करती हुई विमल ज्योत्स्ना में स्नान कर रही है। सम्पूर्ण शैल शिखर क्या बूढ़े क्या बाल अमृतरस का पान कर तृप्त हो रहे हैं। प्रकृति देवी ने अपने स्नान के लिये ऐसा समय ढूंढ निकाला था जिस समय क्या मनुष्य क्या पशु पक्षी सभी विश्राम सुखका अनुभव कर रहे थे। वायु शांतिपूर्वक वृक्षों के पत्तों पर सुख से सो रही थी किन्तु निरन्तर गति में रहनेवाले जल प्रवाह को किसी अतृप्त प्रेमी की भांति अब भी चैन न थी। उसका झर झर शब्द निस्तब्ध निश्चल रात्रि में प्रतिध्वनित हो रहा था।

गंगा का गहन प्रवाह देख कर जिस प्रकार विहार प्रिय मत्त गजराज को आनन्द होता है उसी प्रकार निशापति इन्दु के प्रकाश का विमल प्रसार देख कर सौन्दर्य्य प्रेमी रमेशचन्द्र भी ललित ज्योत्स्ना में स्नान कर एक टक दृष्टि से प्रकृति देवी की आराधना करने लगे संसार उनको ज्योत्स्ना मय दीखने लगा और वे विचार तरंगों में गोते लगाने लगे।

कमला को आज प्रातः से लेके तनिक भी अवकाश न मिला। कई सम्बन्धीगण आये हुए थे कई रमेशचन्द्र के मित्र भी थे सबके सन्मान में, विदायगी में, भोजन बनाने में उसको रात के दस बज गये। जब किञ्चित भोजन करके पाकशाला से आई तो देखा कि रायसाहब बिलकुल सोरहे हैं। बच्चे अपनी २ चार पाई पर सोगये हैं, किन्तु नित्य की भांति लैम्प के सन्मुख रमेशचन्द्र नहीं हैं, वह बिचारा स्वयं ही अकेला जल जल कर ख़ाक हुआ जारहा है। उधर उधर देखा फिर उस को ध्यान हुआ कि पूर्णिमा की निर्मल छटा को वे अवश्यमेव अतृप्त नेत्रों से निहार रहे होंगे इसके वे प्रिय उपासक हैं सुतरां चांदनी से दीप्त प्रकोष्ठ में जाकर देखा कि रमेश खंभे का सहारा लिये प्राकृतिक सौंदर्य्य के अगाध सागर में डुबकियां ले रहे हैं। उन्हों ने उसका आना नहीं जाना वह भी वहीं दुबक कर खड़ी होगई। उनके विचार प्रवाह को रोकना उचित न जाना किन्तु कमरे में टंगी हुई बड़ी भारी निठुर घड़ी ने किसी की भी परवाह न की जोर शोर से दस बजा दिये और रमेशचन्द्र ने चौंक कर पीछे देखा तो चौखट का सहारा लिये कमला खड़ी थी।

रमेश०—कमले तुम्हें आये कितनी देर हुई, कुछ देर हुई देखा था तब तो तुम यहां नहीं थीं। तुम कुछ बोलीं भी न।

कमला०—क्या सोच विचार हो रहा था? मैंने सोचा आपके आनन्द में बाधा क्यों डालूं।

रमेश०—तुम्हें कितनी बार कहा है कि तुम मेरे आह्लाद में बाधा कौन कहे उस के पास से भी नहीं निकलतीं हां आनन्द बढ़ाती अवश्य हो। क्या तुम्हें मेरी बात का विश्वास नहीं?

कमला०—जाने दीजिये। आज मुझे पढ़ाना नहीं?

नित्यप्रति खा पी चुकने के पश्चात् कमला को रमेश कुछ पढ़ाते थे और कई प्रकार के उत्तम २ राजनैतिक धार्मिक विषयों पर विमर्श किया करते थे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

रमेश—आज तो तुमने तनिक भी विश्राम नहीं किया है बहुत थक गई होगीं तुम्हारी स्वास्थ की दिन प्रति दिन की क्षीणता देरकर मुझे बडा दुःख होता है। तुम्हें आज से मैं नोटिस देता हूं कि इसका उचित उपाय करो नहीं तो मैं ..... तुम इतना थोड़ा सा तो खाती हो।

कमला०–इन बातों को जाने दीजिये जितने खाने पीने की मुझे आवश्यक्ता है मैं सब करती हूं। बहुत मुझे नहीं करना चाहिये।

चलिये पढ़ाइये।

रमेश०—आज बहुत देर होगई है न पढ़ो चलो जरा सी दूर घूम आओ। कैसी सुन्दर चांदनी है।

कमला०—मेरा जाने को जी नहीं है।

रमेश०—चलो २ बहुत दूर नहीं झरने पर चल कर उसका अलौकिक दृश्य देख आओ। झट पट कुछ कपड़ा पहिनलो।

कमला०—ऐसे ही चलती हूं सर्दी तो नहीं लगती।

रमेश०—नहीं कुछ ओढ़ लो।

कमला०—ने एक दुशाला ओढ़ लिया और स्लीपर पहिन लिया। रमेश एक मोटा सा डण्डा लेकर वैसे ही चल पड़े। पास की एक पगडण्डी से उतर कर वे छोटे मार्ग से झरने की ओर चले। रमेश अब भी विचार-मग्न है। सदैव से विपरीत चुप चाप जा रहे हैं कभी २ एकाध छोटीसी टीका टिप्पणी किसी फूल किसी पर्वत पर हो जाती है जो कि प्रत्यक्ष दोनों के मानसिक विचारों से भिन्न प्रतीत होती है।

झरना निरन्तर झर २ शब्द करता हुवा मोती के से करण उगलता पत्थरों को लांगता फांदता एकाग्रता से निरन्तर गिर रहा था स्वच्छ निर्मल जल गिर गिर कर एक छोटे से सरोवर के रूप में बन गया था। तीन ओर ऊंचे २ सघन वृक्षों से लदे हुए पर्वतों से घिरा हुआ था। कुमुदनी अपने पति को समीप आया जान मुस्करा २ कर उसका मन ही मन स्वागत कर रही थी। नाना प्रकार के पक्षी जो दिन में उस में क्रीड़ा करते हैं इस समय निद्रा के बशी भूत हैं। कमलाक्षी कमला उन फूले हुए कमलों के उस मनोहर दृश्य को देखकर स्तम्भित होगई। गम्भीर दृष्टि से झरने को विशाल नेत्रों से निहारने लगी। उस दृश्य ने उसके हृदय को हरण कर लिया उस झरने के समीप वह एक अपूर्व देवमूर्त्ति के सामान प्रतीत हुई।

सुन्दरी कमला का मुख मण्डल एकाएक गम्भीरता हीन हो गया उस पर बालिका सुलभ कोमलता, मधुरता और लज्जा के कारण एक अपूर्व लावण्य की छटा छिटक गई। यद्यपि कमला पहिले से आज कल मुर्झाई हुई थी उसकी वह चकोर सदृश नयन अब चंचल न होके धैर्य्यवान् हो गए हैं फिर भी चन्द्र की चांदनी में उसके दिव्य रूप की छटा बड़ी अनुपम थी। उसे अब हम गम्भीर्य्यशालिनी पूर्णांगी युवती नहीं कहसक्ते वह एक नवयौवना बालिका के सदृश दीखने लगी। उसके सुडौल अंग प्रत्यंग उज्जल कपोल, विशाल और चमकीले नेत्र नुकीली नाक अरुण प्रभ अधरोष्ठ कमर तक लटकते हुए काले २ रेशम के लच्छे से केश और मधुर हास्यमय मुख मण्डल को देखकर ऐसा मालूम होता था कि एक सत्रहवर्ष की बालिका जीवन के सुन्दर प्रभात काल में खड़ी हुई है। एका एक उसने अपने विशाल नेत्रों को फेरा चक्षु संचालन करते ही उसका मुख मण्डल सुन्दर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मधुरिमामय हंसी से प्रफुल्लित हो उठा। रमेश से अग्रहपूर्वक पूंछा क्या अपने मुझे पुकारा था मैंने नहीं सुना, आप भी तो किसी विचार में मग्न हैं ?

रमेश—"बहुत देरतक तुम्हें इस भांति देखता रहा फिर तुम्हारी विचार परम्परा में विघ्न डालना ही पड़ा। कमला आज इस झरने के पास तुम्हारे मन में बताओं तो सही किस भाव का उदय हुआ है तुम क्या सोच रही थी कि कर्ण कुहरों में मेरे शब्द का भी प्रवेश न होसका। आओ इस शिला खण्ड पर बैठ जाओ।

कमला–"यह देखकर मुझे बड़ा बिस्मय होता है कि यह झरना बिना विश्राम निरन्तर अपना कार्य्य करता रहता है न सोता है, न जागता न खाता है, न पीता सदा अपना कार्य्य करता रहता है। उसे किसी की श्लाघा की अपेक्षा नहीं तिरस्कार की नहीं, प्रेम की नहीं। उपेक्षा की भी नहीं चिन्ता। इसे न मालूम कब विराम मिलेगा"। वह एक लम्बी सांस ले चुप हो रही फिर अश्रु पूर्ण गद्गद स्वर से बोली:—

"एक साधारण झरने में तो ऐसी एकाग्रता और एक प्राणता है और हाय हाय हम जो परमात्मा के अमृत-पुत्र तथा पृथ्वी के सर्व श्रेष्ठ जीव कहलाते हैं क्या कर रहे हैं। हम तो इसके गुण की ओर देखते भी नहीं" इस से अधिक वह न बोलसकी उसके अश्रु-पूर्ण बिशाल नेत्रों की उपमा कमलदलों पर छाई हुई ओस की बून्दों की तरह कही जाय तो अत्युक्ति न होगी।

रमेश में जो कि छुटपन से कमला को देखता है जिस के साथ वह खेला कूदा है आज इस प्रकार का भावान्तर क्यों है ? झरने के पास खडी हुई उस अश्रुपूर्ण लोचना और विषादमयी कमला के पवित्र मुखमण्डल पर उसकी दृष्टि क्यों स्थिर है ? कमला के सौन्दर्य्य में क्या उसे भी आज कुछ अपूर्वता दीख रही है ? पवित्र सौन्दर्य्य को संसार में कौन नहीं अर्चता।

भावमयी कमला का चित्त आन्दोलित करने के हेतु उसने उसका करकमल खींच शिला खण्ड पर बैठा लिया। उसके मस्तक पर हाथ फेरते हुए उसके अश्रुबिन्दुओं को पोंछ कर गोद में सिर रख लिया। कमला ने भी बालिका की भांति मानों बालपन स्मरण कर कोई आपत्ति न की।

कमला–"भाई आप क्या सोच रहे हैं यह आपने न बताया। क्या बताने की इच्छा नहीं या आज मैं कुछ बदल गई हूं"।

रमेश–"कमला सचमुच संसार में इस प्रकार का मणि कांचन संयोग अथवा सोने में सुगन्धि का योग दुर्लभ है। आज तुम साक्षात् सरस्वती की भांति इस शिला खन्ड पर कमलों से प्रफुल्लित सरोवर के निकट बैठी हुई प्रतीत होती हो। तुम मानवी नहीं देवी हो"।

क०–"आप मुझे लज्जित करते हैं क्या तब से आप यही चिन्तन कर रहे थे"।

रमेश–"माधुरी कमले! आज मेरे सन्मुख तुम्हारा बाल्यकाल नाच रहा है। मृगी की भांति तुम्हारी कौतूहलजनक किलोलें, उद्यान भ्रमण सब एक एक करके रंग भूमि पर नाट्य करते हुवे स्मृति में विचर रहे हैं। यदि तुम स्वतन्त्र होतीं, यदि हमारी समाज इस जटिल जाति पाति के बन्धन में जकड़ी न होती तो कमल ! बताओ सचमुच क्या हमारा जीवन किसी और भांति परिवर्तित न होता ? क्या वह समय

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारे जीवन में फिर आसक्ता है?"। इतना कह कर इनके आंखों से एक दो अश्रुविन्दु गिर पड़े।

इन वचनों से कमला की हृदयतन्त्री पर भी चोट लगी वह अपने आंसुओं के वेग को न रोक सकी। थोड़ी देर पीछे उठ कर कमला बोली "भाई इन स्मृति की चंचल क्रीड़ाओं का हमें दमन करना चाहिये। अब से इन बातों का उल्लेख फिर न करना जो हमारे कर्मों में था परमात्मा ने दिया। आपही ने मुझे कई बार समझाया था यह सब आपही की पुण्य प्रेम महिमा का फल है जो कुछ आप मुझे समझते हैं किन्तु आज आप स्वयं इतने विचलित क्यों होते हैं। आपही कहते थे कि हम अमृतों की सन्तान हैं और क्षुद्र होने पर भी हम उस अमृत्व की प्राप्ति के अधिकारी हैं, संसार केवल चार दिन की चांदनी है फिर न जाने कहां जाना पड़ेगा क्या होगा तब इस चार दिन के जीवन को धर्म मार्ग पर चलाने की चेष्टा करना ही क्या हमारा कर्तव्य नहीं ? हम अपने थोड़े से बन्धुओं को ही जगत् समझ उन्हीं से प्रेम करते हैं, किन्तु जो महात्मा हैं, तपस्वी हैं, वे प्राणीमात्र से प्रेम करते हैं आर्य्य जाति में इस समय भी जो कुछ श्रेष्ठता और पवित्रता अवशिष्ट है यह उन्हीं के तपस्वी जीवन का फल है। आज वह तपस्या, वह कर्म वीरता कहां वह आत्मत्याग नहीं रहा इसी लिए हमारी दुर्गति है। हमारा आत्मा अमर है यदि हम सदैव इसको स्मरण रक्खें तो हमें इस नश्वर देह से जो प्रेम है वह नष्ट होजाय, अनन्त वार हम जन्म लेते हैं बालक युवा वृद्ध बनते हैं, रमणी पुरुष वृक्ष पक्षी आदि बनते हैं क्या यह सब देह से ही सम्बन्ध नहीं रखते आत्मा तो वही बना रहता है। इस झरने के गुणों को देखो और कर्मवीर बनो"।

कमला की यह आक्षेपोक्ति रमेश के रोम रोम को एकाएक झंकृत करके मानों वायुमण्डल में विलीन होगई। वृक्षों के पत्ते मानों कम्पित होकर बोल उठे, शैलों ने मानों प्रतिध्वनित किया, झरने ने मानों हास्य किया वायु ने मानों थपेड़ लगाई "हाय हाय तुम क्या कर रहे हो"। रमेशचन्द्र ने झरने को एकाएक देखते हुवे कहा—"ठीक है कमला यह झरना अपने उन्मत्त संगीत के द्वारा आज हमें उसी भ्रष्ट लक्ष्य की याद दिला रहा है। यह शिक्षा गुरु झरना भी जननी प्रकृति देवी का एक अंग है मैं उनका उपासक हूं।"

कमला—"झरने के इस अविश्रान्त धारापात में कर्म जीवन का कैसा सुन्दर दृष्टान्त है, किन्तु इस का मूल क्या है"।

रमेश—"बहिन इस विशाल पर्वत शिखर पर तालाब ने अपना विशाल वक्ष फैलाकर वर्षा के जल को यत्नपूर्वक संचित कर रक्खा है और पर्वत के एक नीचे के मुख से वह उस संचित जल को अविश्रान्त धारा से निरन्तर बहा रहा है। इस जल को पीकर कितने जीवों की प्यास बुझती है कितने सन्तप्त हृदय स्नान कर शीतल होते हैं, और इसके सिंचन से कितने खेत हरे भरे नन्दनवन और कितने वृक्ष फल फूल सहित होजाते हैं। हमें भी तप से अपने जीवन को उन्नत बना पुण्यसंचय कर झरने के सदृश कर्म क्षेत्र में अवतीर्ण होकर संसार का कल्याण करने में तत्पर होना योग्य है। किन्तु संसार त्याज्य नहीं है यही हमारा कर्म क्षेत्र है कमला इसे याद रक्खो"।

"चलो कमले घर चलें रात बहुत ठंढी होगई है"।

कमला—"हे शिक्षा गुरु झरने आज हम तुम्हारे ऋणी हैं तुम्हारे हम हृदय से अनुगृहीत हैं"।

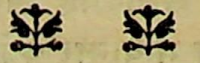

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(६)

अन्त।

ऊधो कर्मन की गतिन्यारी। आरोग्य लाभ होते२ सहसा मदनमोहन को पुनः रोग का आक्रमण हो गया। उनकी उठने बैठने की शक्ति जाती रही। उनके मुख से साफ़ बोली भी नहीं निकलती थी। दवादारु सेवा शुश्रूषा सब ने शीश नवा दिया किसके सन्मुख? इसका उत्तर कौन नहीं जानता? उसी अजेय, पापियों को त्रास देने वाली, नन्हे से नन्हे कीट के भी हृदय को कंपायमान करने वाली, समाधिस्थ, साधु महात्माओं को सौम्य शान्ति रूप दिखाने वाली सदा सर्वकाल में शोकजनक, भीषण देवी मृत्यु के सन्मुख।

राय साहब ने घर चलने की इच्छा प्रगट की अत्यन्त डरते २ उनकी इच्छापूर्ति की गई।

वे अपने उसी बाल्यकाल के क्रीड़ा स्थल वसन्तपुर में पहुंच गये। उनकी आंखों से मोह के आंसू बहने लगे। रमेशचन्द्र ने उन्हें बहुत उपदेश देकर समझाया बुझाया फिर उन्होंने अपनी बहुत सी सम्पत्ति अपने पुत्र सुशील-कुमार के नाम माता तथा रमेश के निरीक्षण में लिख दी। अन्य लड़के लड़कियों को भी दे चुकने के पश्चात् दान की बारी आई कई कुएँ बगीचे, तालाब, बनाने के हेतु दिया किन्तु रमेश के आग्रह से शिवाला न बनवाकर लक्ष मुद्रा और कुछ ज़मीन कन्याओं की शिक्षा के लिये और कई अन्य उपयोगी कार्य्यों के लिये दिया। रमेश ने व्यर्थ न देने दिया। समग्र कुटुम्बीजनों के तथा उन थानेदार साहब के प्रस्तुत होते हुवे (वे कमला का निरीक्षण करने तथा सहायता करने आये थे) अपने पहिले सन्तानों के सन्मुख वसीयत की और लड़-खड़ाती हुई आवाज़ में स्त्री पुत्रों को रमेश के अधीन छोड़ा और अन्त को रमेश की अत्यन्त बड़ाई करते हुवे उनसे मिलकर रहने का आदेश दिया साध्वी स्त्री को बहुत कातर और रोती देखकर वे अधीर हो उठे बड़ी कठिनाई से कहा, "रमेशचन्द्र साक्षात् महात्मा हैं तुम्हें धर्म-मार्ग पर लगावेंगे।" उनकी दशा प्रतिक्षण खराब होती जाती थी बोल बिलकुल बन्द हो गया था।

सूर्य्य भगवान अपनी तीक्ष्ण किरणों को समेट चुके थे धूप पीली पड़ गई थी मदन मोहन की आत्मा भी ऐसे ही समय विलीन हो गई अस्थि पिंजर देह भूमि पर जहां की तहां पड़ी रह गई।

चारों ओर से हाहाकार मच गया घर भर में रुदन होने लगा। कमला निस्तब्ध पत्थर की मूर्ति की न्याईं सिर पकड़े बैठी रह गई आंखों में अश्रु का श्रोत तो कब से जारी था किन्तु अब यह पति के शरीर पर पछाड़ खाकर बिलख २ रोने लगी। संसार उसे शून्य लगने लगा, घर उसे काटने लगा दुःख के उस एक दम आवेग में वह अत्यन्त अधीर हो उठी रमेश से यह न देखा गया वे चले गये।

कई महीने गुज़र गये हैं। सम्बन्धियों का झुंड विदा हो गया है। रुलाने वाली स्त्रियों का जोश शिथिल हो गया है। रमेशचन्द्र अपने कार्य्य से थोड़ासा समय निकाल कर फिर आये हैं निरन्तर समझाने बुझाने उपदेश देने से कमला को कुछ शान्ति हुई वह झरने के आदर्श को याद दिलाकर उसे कर्म क्षेत्र में पदार्पण करने के लिये बहुत अनुरोध करने लगे। स्वयं उनका जीवन रात दिन सार्व-जनिक कार्य्यों में सदा व्यतीत होता था धनो-पार्जन की कभी इच्छा ही न की दीन दुखियों की सहायता करना असहाय विद्यार्थियों की पुकार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुनना राजनैतिक तथा धार्मिक कामों में ही सदा तत्पर रहना उनका जीवन उद्देश्य था।

वसन्तपुर में छोटीसी तारनी नदी के तट पर एक कुञ्जनामक अनुपमेय ग्राम है। ग्रामीण बड़े सरल और सच्चे हैं आस पास इनके स्वच्छ झोंपड़े हैं बीच में एक नदी से प्राप्त सुन्दर सरोवर है। इसके निकट एक बहुत बड़ा घेरा खिंचा हुवा है पता नहीं लगता उसका दूसरा सिरा कितनी दूर है एक लोहे का फाटक सामने लगा हुवा है। हमने आंख मूंदकर अन्दर पैर रख ही दिया अपने को स्वर्गीय उद्यान कहें आदम के बाग में कहें ऐसे रमणीक स्थान में पाया। कितने ही बड़े २ किन्तु सीधे सादे स्वच्छ गृह बने हुवे हैं, केवल एक बीच में बड़ा भव्य भवन है चारों ओर बड़े २ वृक्ष फल फूल से स्रवित उपवन हैं कुएं हैं यज्ञशाला हैं क्रीड़ा-गृह हैं, वृक्षों पर झूले डले हुवे हैं यूथ की यूथ बालिकायें झूल रही हैं। बड़े २ छायादार तरु पल्लवों के नीचे हरी २ दूब पर कई षोडशी कन्याएं बातें कर रही हैं। कई पढ़ रही हैं कई सीं रही हैं कोई राग अलाप रही हैं। हम सो रहे हैं वा जाग, स्वप्न है या कोई दृश्य क्षण भर में खिंच गया है।

किन्तु हमें गृह पति की आज्ञा बिना नहीं प्रवेश करना करना चाहिये चलो द्वार पर दो परिचारिकाएं खड़ी हैं उनसे पूंछे वे ही इसका मर्म कदाचित् बता सकेंगी। वे हमें बड़े आदर से नम्रता से उस रमणी मण्डल के एक निस्तब्ध कोने में ले गईं, हम चुपचाप उस नवीन संसार की छटा निहारते हुवे पीछे २ चले गये। एक कदली नारिकेल परिवेष्टित वोकुल की भीनी २ मधुर सुगन्ध से गुंजित उपवन में एक छोटी सी पर्ण कुटी बनी थी उसके आगे के वान्डे में हम आसनों पर बैठाये गये। एक क्षण पश्चात् देवीतुल्या एक रमणी ने प्रवेश किया। चाहे अलंकारहीन हो चाहे श्वेत वस्त्र धारध किये हो चाहे मुख गंभीर आयु वाला हो किन्तु यह क्या यह तो हमारी चिरपरिचिता सौम्यमूर्ति कमला। है कमला हमें बड़े प्रेम से मिली तब हम ने एक दम पूंछा कमला यह सब क्या है? कमला ने कहा—"यह वनिता आश्रम, रमणी मण्डल, कन्या शिक्षणालय सब कुछ है। आओ मेरी कुटिया में पहिले विश्राम लो जो कुछ थोड़ीसी अर्घ्य पूजा है वह भेंट ले लो फिर आगे देखना॥"

१—जो अहिंसा धर्म का पूरा पूरा पालन करता है, उसके चरणों पर सारा संसार आ गिरता है।

२—जहाँ सत्य है और जहाँ धर्म है केवल वहीं विजय भी है।

३—मेरा विश्वास है कि बिना धर्म का जीवन बिना सिद्धान्त का जीवन होता है; और बिना सिद्धान्त का जीवन वैसा ही है जैसा कि बिना पतवार का जहाज़। जिस तरह बिना पतवार का जहाज़ इधर से उधर मारा मारा फिरेगा और कभी उद्दिष्ट स्थान तक नहीं पहुँचेगा उसी तरह धर्म-हीन मनुष्य भी संसार-सागर में इधर से उधर मारा मारा फिरेगा और कभी अपने उद्दिष्ट स्थान तक नहीं पहुँचेगा।

(महात्मा गांधी)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुसुमोद्यान

भारतवर्ष में शिक्षा

भारतीय शासन के शिक्षा विभाग के कमिश्नर मिस्टर यच शार्प कृत भारतवर्षीय शिक्षा की उन्नति की सप्तम पंचम-वर्षीय समालोचना पर समाचार पत्र नेचर लिखता है :—

"यह भारतीय शासन के शिक्षा विभाग के कमिश्नर मिस्टर शार्प द्वारा लिखित द्वितीय पंचम-वर्षीय समालोचना है। कागज़ की न्यूनता और युद्ध के प्रभाव से उपस्थित दशाओं ने उन्हें अपनी समालोचना को घटाने तथा प्रमाणों को कम करने में बड़ी सहायता दी है परन्तु जो कुछ है वह बड़ा ही मनोरंजक और महत्वपूर्ण है विशेषतया उन के लिये जिन्हें भारतीय शिक्षा का साक्षात् ज्ञान है। इस में स्पष्टतया और कुछ हितकारी तुलना विविध पाश्चात्य देशों तथा जापान के प्रमाणों के साथ की है और इस सम्बन्ध में यह कह देना आवश्यक है कि जापान के साथ भी यह तुलना सर्वथा अनुचित है।

ब्रिटिश भारत एक प्रदेश की अपेक्षा एक महाद्वीप है यहां यूरोप या जापान की अपेक्षा सभ्यता और शिक्षा में बड़ा भारी भेद है केवल कलकत्ता बम्बई की भांति भारत के बड़े नगरों की ही यूरोप के देशों के साथ तुलना हो सक्ती है क्योंकि केवल वहां पर ही यथार्थ में पाश्चात्य जातियों की दशा के समान दशायें उपस्थित हैं।

प्रादेशिक भाषाओं द्वारा शिक्षा प्रचार के प्रयत्न के सविस्तार वर्णन का भी हमने स्वागत किया होता। जबतक ब्रिटिश शासन वर्त्तमान है तबतक भारतीयों का अंग्रेज़ी सीखना इतना ही आवश्यक होगा जितना कि शिक्षित अंग्रेज़ों के लिए फरांसीसी और जर्मन भाषा सीखना है किन्तु अंग्रेज़ी के शिक्षा के माध्यम होने में स्पष्टतया आपत्तियां हैं। हम सर्वदा शिकायतें सुनते रहते हैं कि भारतीयों के विचार नकली हो रहे हैं उनकी परीक्षा के लिए नियत पुस्तकें सुग्गा रटावन है नूतन विचार का अभाव है इत्यादि २। निस्सन्देह इस का कारण यह है कि लड़कों को—जिन में बहुत से ऐसे होते हैं जिन्हें भाषाओं के ज्ञान की दैवी शक्ति नहीं होती—पदार्थ विज्ञान और गणित इत्यादि कठिन विषय उस भाषा में सिखाये जाते हैं जिन में वह विचार नहीं सकते यदि बहुत से भारतीय अंग्रेज़ी में आश्चर्यजनक योग्यता प्राप्त न किये होते तो यह प्रणाली बहुत देर की निराहत हो गई होती। प्राच्य-भाषा-ज्ञान Oriental learning के अध्याय में मिस्टर शार्प अपनी आलोचना केवल भारतीय मुख्य भाषाओं Indian classics तक ही परिमित रखते हैं और जो प्रयत्न अब वर्त्तमान भारतीय भाषाओं को वही सुगमता देने के लिए हो रहा है जो कि अंग्रेज़ी विश्वविद्यालय यूरुप की प्रचिलित भाषाओं,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उनकी व्युत्पत्ति, उन के उच्चारण और उन के साहित्य को दे रहे हैं उस के विषय में कुछ नहीं कहना चाहते .....
भारत को राजपुरुषों की प्रेरणा तथा सरकार की स्थानापन्न उदारता की मुख्यतया उतनी आवश्यकता नहीं जितनी कि इस बात की है कि भारतीय प्रजा इस बात को समझले कि उत्तम और उपयुक्त शिक्षा क्या है और किस प्रकार वह जन साधारण तक फैलाई जा सकी है? इस दिशा में एक अत्यन्त आवश्यकीय नीति (सरकारी रिपोर्ट जितना बतलाती है उसकी अपेक्षा कम उपेक्षित neglected) यह है कि भारतीय भाषाओं को भोले अपरिपक्व मस्तिकों को शिक्षा पहुंचाने का उचित साधन बना दिया जावे।

.....

यह बात कुछ आश्चर्यजनक मालूम होती है कि सरकारी रिपोर्ट जो शिक्षा के विषय में निकलती है वह पाठशालाओं और विश्वविद्यालयों की शिक्षा के आवश्यकीय परिणाम जो कि भाषा के साहित्य और समाचार-पत्रों द्वारा दृष्टिगोचर होते हैं उन के विषय में कुछ नहीं बतलाती। योरुप में रहने वाले हम में से बहुतेरों ने रवीन्द्रनाथ ठाकुर का तथा अन्य एक दो एतत्कालीन भारतीय पुस्तकप्रणेताओं का नाम सुना होगा इनके अतिरिक्त और भी कई अन्य प्रान्तों में होंगे जिन्हें वहां की जनता उसी भांति या उसी के सदृश आदर की दृष्टि से देखती होगी। वह शिक्षा प्रणाली जिस से इतने उत्तम साहित्य की—जिस में विशुद्ध ऐतिहासिक गवेषणा और विचार, दार्शनिक आविष्कार और बाहुल्यतया पदार्थविज्ञान भरा हो—उत्पत्ति हो वह अवश्यमेव आशा और भविष्य उन्नति से परिपूर्ण होगी किन्तु २ करोड़ मनुष्य जिन की सामाजिक, धार्मिक, और वैज्ञानिक, उन्नति विविध प्रकार की ऊंच और नीच है उन की शिक्षा की उन्नति की सरकारी संक्षिप्त समालोचना में वर्णन करना सम्भव नहीं है।"

हम अपने भारतीय शिक्षित बहिनों और भाइयों का ध्यान एक विदेशी की निष्पक्षपात किन्तु सारगर्भित शिक्षा-समालोचना की ओर खींचना चाहते हैं। जहां इस में प्रान्तिक भाषाओं को माध्यम बना कर ही उच्च शिक्षा का देना लाभकारी बतलाया गया है वहां पर साहित्य वृद्धि और साहित्य सेवियों की उन्नति का भी चित्र दर्शाया गया है और इस बात की कमी दिखाई गई है कि सरकारी रिपोर्ट इनके बाबत कुछ नहीं बताती। हमें इस लेखक के साथ पूर्ण सहानुभूति है कि सरकार पर इस का भार न छोड़ कर हम स्वयं साधारण जनता में यह विचार फैलायें कि शिक्षा विदेशी भाषा द्वारा ठीक नहीं किन्तु प्रान्तीय भाषा द्वारा हो और अन्य भाषाओं की भांति अंग्रेज़ी गौण रूप से पढ़ाई जावे। और "भारतीय भाषाओं को ही भोले अपरिपक्व मस्तिष्कों को शिक्षा पहुंचाने का उचित साधन बना दिया जावे" क्या हमारे शिक्षानुरक्त नेता तथा जन साधारण इस उत्तम विदेशी की सम्मति को ध्यान से पढ़ कर अपने कल्याण के लिये उचित उद्योग करेंगे?

राजनीति में स्त्री अंश।

महाशय वी० यन गाडवोले अप्रेल ७ और १५ के "सर्वेन्ट आफ इण्डिया" के अंकों में अपना एक लेख उपरोक्त विषय पर प्रकाशित करते हैं। इसको उन्होंने तीन भागों में बांटा है।

उन्होंने प्रथम दर्शाया है कि सिद्धान्तानुकूल स्त्रियों को वोट का अधिकार मिल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जाना चाहिये चाहें वह उसे बर्त्तें या न बर्त्तें किन्तु वोट की वास्तविक उपयोगिता पर एक बार विचार दृष्टि डालना चाहिये। पुरुष लोग वोट अधिकार मिलने पर अपने तईं राज्य कर्म में मुखिया समझने लगते हैं इसी प्रकार स्त्रियां भी समझने लगेंगीं किन्तु यदि वह हमेशः बाहरी कामों में भाग लेती रहें तो उनके मुख्य काम में बाधा पड़ती है। प्रथम तो स्त्रियां अपने मुख्य कर्तव्य गृहस्थ जीवन को बन्धन समझने लगीं थी और सन्तानों का पालन पोषण नीच कर्म समझा जाने लगा था किन्तु वर्त्तमान समाज-शास्त्र को वैज्ञानिक रीति से मनन करने से यह अशुद्ध ज्ञान दूर होकर मातृत्व की पवित्रता और सन्तान पालन की उत्तमता का ज्ञान होने लग पड़ा है। अभाग्य से भारत में अभी स्त्री धर्म का वही पुराना भाव ही प्रचलित है और अधिक आधुनिक वैज्ञानिक-भाव सुधारकों और नीतिज्ञों को भी अविदित है। यही अवैज्ञानिक पुराना स्त्री धर्म का भाव हमारी पुत्री पाठशालाओं की पाठप्रणाली में भी अंकित है। लड़कियों को लड़कों के समान शिक्षा दी जाती है प्रकृति देवी की शिक्षा की ओर ध्यान ही नहीं दिया जाता और हम हमेशः इन चतुर शब्दों को सुनते रहते हैं कि सब कार्य्यों में स्त्रियों को पुरुषों के साथ प्रतिस्पर्धा में आना चाहिये उनको वही कार्य्य करने चाहिये जो पुरुष करते हैं और उन्हीं के उदाहरणों के अनुकूल। ऐसों के लिये स्त्रियों के कर्तव्य पुरुषों के प्रति सहयोगिता के न होकर वही होजाते हैं।

इस विषय में अशुद्ध ज्ञान हटाने के लिये इतना कह देना ही पर्य्याप्त है कि आधुनिक वैज्ञानिक समाज-शास्त्र जो कि शरीर-रचना शास्त्र तथा विकास पर नितान्त निर्धारित है उसे अध्ययन करना चाहिये। यलन की (Ellen Key) अपनी सारगर्भित पुस्तक दि सेन्चुरी आफ़ दि चाइल्ड (The Century of the child) में माताओं को उन कार्य्यों में भाग लेने की-जिनमें बच्चों से अलग रहना पड़ता है-क्षति का वर्णन किया है।.....यदि मातायें समय का अधिक भाग राजनीति में व्यय करेंगी तो बच्चे को अवश्य उपेक्षा की दृष्टि से देखना होगा।.....यदि राजनीति में अधिकांश स्त्रियां झुक जावेंगी तो उन के कार्य्य में साधारणतया बाधायें होंगीं और भावी सन्तान में आत्मिक शक्ति का ह्रास होगा और बच्चा जो कि पवित्र धरोहर है वह दाइयों और नौकरों के ऊपर ही छोड़ा जायगा.....

यदि स्त्रियों का सूक्ष्म अंश ही नीति क्षेत्र में जायगा तो और यदि वह नीति को ही अपना मुख्य उद्देश्य बनावेंगी तो परिणाम में भेद ही न होगा साधारणतया स्त्रियां अपने मुख्य कर्तव्य में ही रत होकर अन्य ओर लगेंगी ही नहीं। किन्तु इन थोड़ी स्त्रियों के कारण आर्थिक स्वातन्त्र्य का आन्दोलन अधिकतर होकर हानिकर ही होगा। इसलिये सब बातों पर विचार कर के यह शंका ही है कि लुभावनी राज नीति में भाग लेने से स्त्रियों को कोई लाभ भी होगा!

.....

पाश्चात्य देशों में भी विचारशील पुरुष इस परिवर्त्तन की उपयोगिता पर शंका ही करते हैं। जे. ए. हाबसन आधुनिक समय का महान् विचारशील अर्थ-शास्त्र वेत्ता स्त्रियों के फैक्टरी में काम करने के विरुद्ध है। किन्तु वहां पर जो भी दशा हो भारत में स्त्रियों को उस व्यवसाय में नहीं लगना चाहिये जिससे उनकी आन्तरिक कोमलता तथा सौम्य भावों में विघ्न होवे।....."

स्त्रियों को वोट अधिकार और गृहस्थ संगठन।

इसमें इन्होंने बड़ी बुद्धिमत्ता से दर्शाया है कि स्त्रियों को स्वयं ही अपने अधिकारों को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुरक्षित करने की आवश्यक्ता नहीं है क्योंकि विलायत में फैक्टरी-ऐक्ट जोकि स्त्रियों को अन्याय और दुर्व्यवहार से बचाने के हेतु पास किये गये थे वह पुरुषों की पार्लियामेन्ट से ही पास हुये थे। स्त्रियों को केवल लेखों तथा व्याख्यानों द्वारा अपने आवश्यक्तायें जनता के सन्मुख प्रस्तुत रखनी चाहिये। स्त्रियों की भलाई जनसाधारण की ही भलाई है और स्त्री पुरुष दो भिन्न हैं यह विचार नितान्त ही (unscientific) विज्ञानिक शिक्षा के विरुद्ध है। योरूप में अवस्थायें भिन्न हैं उनके आदर्श भिन्न हैं अतः यहां पर वही तरीके ठीक नहीं कोई राज-नियम निर्मात्री सभा जो कि सचमुच की सभा होगी वह स्त्रियों के पक्ष को भुला नहीं सक्ती। दूसरे यदि स्त्रियों को वोट देने का अधिकार होगा तो कई स्त्रियां अपने पिता पति तथा भाई इत्यादि के पक्ष के प्रतिकूल विचार रखती हुई उनके विरुद्ध वोट देंगी जिस से घर में अशान्ति रहेगी। इस में सन्देह नहीं कि वर्त्तमान समय में विचार स्वातन्त्र्य की लहर है और इस रंग से सारा पाश्चात्य जीवन ही रंगा हुआ पड़ा है, जहां पर पिता का मत एक और माता का दूसरा होने से बच्चों की शिक्षा की जड़ मारी जाती है। लेखक के मतानुसार इस स्वातंत्र्य से गृहस्थ जीवन का सुख नष्ट होने की सम्भावना है। पाश्चात्य देशों में साम्यवादी इस विचार-स्वातंत्र्य के बुरे परिणामों को देखकर रो पीट रहे हैं इसलिये भारतीयों को सावधान होकर चलना चाहिये इसलिये किसी स्त्री को जो गृह की अद्वितीय अधिष्ठात्री न हो वोट का अधिकार पृथक् मिलना ठीक नहीं।

स्त्रियों की आर्थिक स्वाधीनता।

"राजनीति क्षेत्र में स्त्रियों के प्रवेश के साथ २ इनकी आर्थिक-स्वाधीनता का प्रश्न इतना मिला हुआ है कि स्त्रियों को वोट अधिकार के सम्बन्ध में इस पर विचार करना अनुचित नहीं। जो लोग स्त्री पुरुषों की समानता के पक्षपाती हैं वह अवश्य ही इनकी आर्थिक स्वाधीनता के रक्षक होंगे क्योंकि दूसरी बात पहली बात का ही परिणाम है। स्त्री पुरुष की समानता नहीं हो सक्ती जब तक एक दूसरे के आधीन है और आधीनता दूर नहीं हो सक्ती जब तक स्त्री स्वयं धनोपार्जन न करे इसलिये स्त्रियों को धनोपार्जन के लिये व्यवसाय होना चाहिये।

ऐसी अवस्था में स्त्रियों के प्रस्तावों के धार्मिक मूल्य निर्णय करने के लिये रस्किन जैसे विद्वान् एलन की जैसी तत्ववेत्ता स्त्री की सम्मति को उद्धत करना अभीष्ट है। जैसाकि पूर्व दिखलाया गया है दोनों लेखक गृहस्थ को ही सुख का मूल स्तम्भ मानते हैं यदि स्त्रियां धनोपार्जन-रत हो जायें तो उन्हें दिन का अधिकांश भाग गृह के बाहर व्यतीत करना पड़ेगा तो रस्किन महाशय जिन "मधुर आज्ञाओं" का वर्णन करते हैं उसे कौन करेगा? खानसामा या आया के अतिरिक्त और कौन?

....

दूसरा परिणाम स्त्रियों की स्वतंत्र्य आजीविका का यह होगा कि स्त्रियां प्रत्येक व्यवसाय में पुरुषों की स्पर्धा में आकर जीवन-संग्राम को अधिक कठिन और मज़दूरी के प्रश्न को अधिक तीक्ष्ण कर देंगी। यहां पर इस प्रश्न को आर्थिक दृष्टि से न देखकर राजनीति पर जो प्रभाव पड़ेगा उस पर विचार करना है। जब स्त्रियां धनोपार्जन में लगेंगी तो वह अधिक मज़दूरी के नीच संग्राम में अपने स्वभाव की emotional zeal मनावेशों की प्रधानता के कारण हड़तालों तथा व्यापार संघों के झगड़ों में जिन्हें पुरुष स्वयं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सह नहीं सक्ते बड़ी उत्तेजना से पड़ेगी और इससे वह सर्वत्र ही राजनीति क्षेत्र में दुखदायी ही बन रही हैं। वह चाहती हैं कि उन्हें अधिक विश्राम मिले, पुरुषों के बराबर मज़दूरी मिले, फैक्टरियों में सभ्यता के सब सुख सामान हों और स्त्रीत्व की सब रियायतें उन्हें मिले यहां तक कि वह सर्वथा वही सन्मान की आशा करती हैं जो कि पूर्व समय में उन्हें अबला समझ कर किया जाता था.....
.....

अतः आर्थिक स्वाधीनता के साथ २ स्त्रियां वोट के लिये तथा नैतिक और अर्ध-नैतिक संस्थाओं में भाग प्राप्त करने के लिये बल लगाती हैं जिस से वह व्यापारिक तथा आर्थिक क्षेत्र में अपने कल्पित तथा वास्तविक अधिकारों की रक्षा कर सकें।.....
.....

आर्थिक स्वाधीनता से वोट के लिये मांग उत्पन्न होती है और वोट की प्राप्ति आर्थिक स्वातंत्र्य की वृद्धि करती है इस प्रकार इस में पारस्परिक सम्बन्ध है।

अन्तिम उत्तर इस बात पर है कि इस प्रश्न का—जिसको बहुतेरे भुला देते हैं और जिससे कुछ लोग कतराते हैं—कि स्त्रियों का मुख्य धर्म राजनीति संगठन में क्या है इसका निश्चय हो? वर्त्तमान समाज-शास्त्र की गवेषणा का संक्षिप्त सार यह है कि स्त्रियां कला कौशल में दक्ष हों, साहित्य सेवा करें, युद्ध के समय रक्षा करने में सहायता दें और फैकट्री में भी कार्य्य करें यह सब उनके लिये वर्जित नहीं और अभी महायुद्ध में स्त्रियों ने यह भी दिखला दिया है कि वह उन अन्य कार्य्यों को कर सक्ती हैं जिन के लिये उन्हें योग्य भी नहीं समझा गया था। किन्तु प्रथम कर्तव्य स्त्रियों का बच्चे को शिक्षित करना है, उस भावी-नागरिक के जीवन को उसी प्रकार ध्यान से निरीक्षण करना है जैसे एक माली अपने पौदों को करता है, उसकी मानसिक शक्तियों के विकास को देखना, उस के चरित्र को संगठित करना और उसको देवता बनाना है। यदि इस के स्थान में वह अन्य बातों के पीछे दौड़ती हैं तो जाति के भावी मानव-जीवन को हानि है। बहुत लोगों के विचार हैं कि वर्त्तमान प्रथा से यह सब ठीक हो जायगा किन्तु यह दुराशा मात्र है। नवीन कालिका समान नव शिशु के जीवन पर माता के उत्तम प्रभाव की स्थानापन्न कोई प्रथा नहीं हो सक्ती।

भारत में शिक्षित माताओं की ख़ास कर आवश्यक्ता है जो कि भावी सन्तान को उन्नत कर सकें क्योंकि वर्त्तमान सन्तान की शारीरिक, मानसिक और (æthetic) सौन्दर्य्य प्रियता में गिरावट इतनी हो चुकी है कि आशंका होने लगी है। केवल स्त्रियां ही हैं जो कि पुनरुद्धार कर सक्ती हैं। इस लिये यह आवश्यक है कि अन्य कार्यों में व्यर्थ समय नष्ट न करके स्त्रियां अपनी सब शक्तियों को इस ओर लगा देवें। वह नैतिक क्षेत्र में भारी कार्य्यों का त्याग करें और जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में और प्रत्येक कार्य्य में पुरुषों के साथ स्पर्धारूप अप्रशंसनीय ऐषणा से उपरत हो जावें....."॥

हम आशा करते हैं कि हमारी वोट-अधिकार की इच्छुक देवियां तथा इस मत के पोषक पुरुष लोग ऊपरोक्त युक्तियुक्त बातों पर विचार करके नई कौंसलों के निर्माण पर पाश्चात्य की नकल न करके भारतीय शास्त्रों के अनुकूल ही शासन का कार्य करने कराने का यथाशक्ति प्रयत्न करेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उड्रो विलसन की धर्मपत्नी ॥

मिस्टर यफ़, डब्लू, वाईल वाशिंगटन से अमेरिका के समाचार पत्रों में लिखते हैं:—

वाशिंगटन में अविश्रान्त अद्भुत घटनाओं के सप्ताह में और कोई बात इतनी आश्चर्य्य-जनक नहीं हुई जितनी कि इस रहस्य की विज्ञप्ति है कि गत कई महीनों से संयुक्त-प्रदेश अमेरिका की स्थानापन्न शासिका प्रेसिडेन्ट विलसन की धर्मपत्नी जी हैं।

गत अक्तूबर मास से वह अपने रोगी पति तथा राज्य के महान् कार्य्यों के मध्य में पड़कर कार्य्य बड़ी उत्तमता से करती रहीं। इनकी रोकी हुई कोई बात प्रेसीडेन्ट तक नहीं पहुंचाई जाती थी। इन की आज्ञा के विरुद्ध कोई भी बड़ा आदमी चाहे कितना ही प्रतिष्ठित क्यों न हो और कितना ही आवश्यक कार्य्य हो ह्वाइट हाउस की देहली नहीं लांघ सक्ता था। इन्हों ने बड़ा कड़ा नियम यह बना रक्खा था कि जिस कार्य्य को वह स्वयं उत्तमता से कर सक्ती थीं उस के लिये प्रेसीडेन्ट साहब को तंग करने से हर प्रकार से रोका जाय। किन्तु सब से बढ़ कर विस्मयकारक बात यह है कि ज्ञात हुआ है कि इन्हों ने प्रेसीडेन्ट की केबिनट को अभी पुनः स्थापित करने का कार्य्य स्वयं अपने आप ही किया है।

जान बार्टन पेन प्रधान संयुक्त प्रदेश नौ-सभा को प्रेसीडेन्ट की ओर से होम आफिस (स्वदेश-शासन) की भेंट प्रेसीडेन्ट के शायनागार के पास की बैठक में दी गई चाय पार्टी में इनकी धर्मपत्नी द्वारा ही हुई। इन्होंने ही मिस्टर पेन के साथ इस पदवी की उपयोगिता अनुपयोगिता पर विचार किया और फिर उनके इस पद को स्वीकार कर लेने के निश्चय को अपने पति के पास जा सुनाया। दूसरे दिन एडमिरल बेन्सन जहाज़ी बेड़ों का प्रधान "देश की प्रथम महिला" की चाय पार्टी में बुलाया गया और उसे मिस्टर पेन के उत्तराधिकारी बनने को कहा गया। प्रेसीडेन्ट की धर्मपत्नी ने समझाया कि एक एडमिरल के लिये अमेरिका के व्यापारिक नये विशाल जहाजों को बनाने का भार जिस विभाग के आधीन है उस के प्रबन्ध का अधिकारी बनना कितना आवश्यक है इस पर उस ने मान् लिया। ह्वाइट हाऊस की प्रबन्धकर्त्री सभाओं ने यह स्वीकार कर लिया है कि मिस्टर पेन अथवा एडमिरल बेन्सन दोनों ने प्रेसीडेन्ट के दर्शन ही नहीं किये।

....

मिसेज़ विलसन के बलपूर्वक निषेध करने पर राज के एक बड़े प्रतिष्ठित अधिकारी की प्रेसीडेन्ट से मिलने की लगातार प्रार्थना का स्वीकार न होना आधुनिक घटना है।

एक योग्य शासिका।

यद्यपि वाशिंगटन का जनवाद बड़ा बलवान है तथापि यह नहीं सुनाई पड़ा कि मिसेज़ विलसन प्रेसीडेन्ट का कार्य्य योग्यता से नहीं निभा रही हैं। जितने घंटे वह प्रेसीडेन्ट के कमरे में उनके पास स्नेहपूर्ण संलाप में व्यतीत करती थीं वह इन्हें राज्यशासन के कार्य्य में प्रवीण करता रहा है। वह उन्हें राज्य के सब आवश्यक लेखों को पढ़कर सुनातीं और उन सब समाचार पत्रों और लेखों को जो कि उन्हें वाशिंगटन के, जाति के, तथा संसार के कार्य्यों में (up-to-date) पूर्णतया परिचित रखने के लिये आवश्यक हैं सुनाती रहती हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राजनैतिक जनवाद मिसेज़ विल्सन का सम्बन्ध "प्रेसीडेन्ट को प्रभावित करने वाली उन परोक्ष शक्तियों" के साथ जोड़ता है जो कि प्रेसीडेन्ट को प्रेरित कर रहीं हैं कि वह येन केन प्रकारेण अपने स्वास्थ्य को संभालें और तृतीयवार प्रेसीडेन्ट बनने के लिये जनता के सामने उपस्थित हो कर अपने भाग्य की परीक्षा करें। यदि प्रेसीडेन्ट इस दबाव में आयगा तो वह "लीग आफ़ नेशन्स की मूर्त्ति" बन कर संसार के सन्मुख आयेगा और उस के अपने शब्दों में "यदि भाग्य में ऐसा ही बदा होगा तो उस विचार के हेतु लड़ता हुआ प्राण देगा"

इस प्रकार की घटनायें यह सूचित करती है कि विदुषी सुयोग्या स्त्री अपने पति की कितनी सहायता कर सकती है अथवा देश और जाति की समय पड़ने पर कितनी सेवा कर सक्ती है। हमारी बहिनों को इस से विशेष शिक्षा लेनी चाहिये और यदि राजनैतिक कार्य में भाग लेना हो तो इस प्रकार समय पड़ने पर ही लेना चाहिये। भारतीय प्राचीन इतिहासों में स्त्रियों के ऐसे बहुतेरे वर्णन आते हैं जब कि पति पिता और भाई की अनुपास्थिति में उन्हों ने राज्य कार्य सम्भाले हैं किन्तु आधुनिक वोट लोलुपता तथा आर्थिक स्वतन्त्रता के पीछे चल कर गृहस्थ धर्म त्याग कर पुरुषों के साथ स्पर्धा करके राजनीति के झगड़ों में पड़ना युक्तियुक्त तथा प्राचीन सभ्यता और अर्वाचीन गौरव के विरुद्ध है। हमारे भारत के भाग्य उसी दिन खुलेंग जब भारतीय महिलाओं के भाव इस प्रकार की जागृति से पूर्ण होंगे परमात्मा वह दिन भारत को शीघ्र दिखावे।

रिफार्म एक्ट नियम-नियन्त्रणी कमेटी

"कैपिटल" कलकत्ते का प्रसिद्ध वाणिज्य-सम्बन्धी सप्ताहिक समाचार पत्र है जिसको चलाने वाले अंग्रेज़ हैं। उसमें प्रति सप्ताह वर्त्तमान राजनीति पर "डिचर की डायरी" (Ditcher's Diary) के शीर्षक से टिप्पणियां होती हैं जिन में निष्पक्षता और निर्भयता के गुण प्रधान होते हैं वह टिप्पणियां लिखी भी बड़ी योग्यता से होती हैं। आज हम अपने पाठकों के सन्मुख नये सुधारों के विषय में डिचर महाशय की ओजस्विनी लेखनी से निकली हुई सम्मति प्रस्तुत करते हैं यह कहने की आवश्यक्ता कोई नहीं कि यदि सारे अंग्रेज़ लेखक ऐसे ही न्याय प्रिय और निष्पक्ष हों तो भारत में अंग्रेजों और भारतीयों के सम्बन्ध भ्रातृभाव पूर्ण होजावें, वह लिखते हैं:—

"भारतवर्ष के अधिकांश राजनैतिक नेताओं के मन में एक उद्वेगजनक भाव यह है कि उच्च पदस्थ राज कर्मचारी रिफार्म एक्ट को—जो कि इस देश को मिस्टर मान्टेग्यू की प्रतिभा और सहृदता के कारण प्राप्त हुआ है—उसी कपट रीति द्वारा निर्जीव बनाने पर तुले हुये हैं जिस के द्वारा पूर्व समय में लार्ड मार्ले के रिफार्म एक्ट को कुण्ठित कर दिया था। भारतीय व्यवस्थापक सभा (Legislative Council) के गत दिल्ली वाले अधिवेशन में इस महान भय का प्रकाश कांग्रेस पार्टी से सम्बन्ध रखने वाले देशी सभासदों द्वारा किये गये अनेक प्रश्नों में हुआ विशेष कर मि० पटेल और मि० चान्दा द्वारा जो यह जानने को बड़े उत्सुक थे कि मैरिस कमेटी क्या गुल खिलाना चाहती है। किन्तु प्राचीन पार्लियामेन्ट की पद्धति से आपत्तिजनक विषय को टालने में दक्ष और निपुण सर विलियम मैरिस जैसे पुरुष से उन्हें कोई सन्तोषजनक उत्तर प्राप्त न हो सका। मैरिस कमेटी में कांग्रेस पार्टी का कोई भी प्रतिनिधि नहीं हैं इस लिये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह स्वाभाविक बात है कि इनको प्रतिनिधि न बनाना रोष और सन्देह को उत्पन्न करें। चेम्सफोर्ड की केबिनट (मंत्रिसभा) जिस में विलियम मैरिस का जो-कि बहुधा उन्नति की विरोध में क्रेड़क (Craduck) को भी परास्त करते हैं—आधिपत्य है अपनी मूर्खता से इस सत्यता से आंखें मूंद लेती है कि भारत में गरमदल की वही शक्ति है जो आयर्लैन्ड में सिनफेन्स की है।

जान बूजकर इनका तिरस्कार करके भारत सर्कार नई आपत्ति का बीज बोरही है। मुझे बड़े विश्वसनीय स्थान से समाचार मिला है कि कांग्रेस की ओर से नियुक्त नेता लोग-जिन में मिस्टर पटेल एक हैं और लाला लाजपतराय दूसरे-एक डेपुटेशन लेकर शीघ्र ही इंग्लैन्ड जाने वाले हैं जहां संयुक्त-सभा (Joint Committee) के सन्मुख वह विलियम मैरिस के वाक् छल के विरुद्ध आवाज़ उठायेंगे। भारत सर्कार क्यों इतनी मूर्खता करती है कि-हाउस आफ़ कामन्स के सन्मुख यह दर्शाने पर तुले हुये कि शिमला का वाघ अपने धब्बे कदापि नहीं बदल सक्ता-भारत नीतिज्ञों को लण्डन पर पुनः धावा करने का अवसर दे? भारत में सबसे बड़ी राजनैतिक सभा के प्रतिनिधियों के विचारों को सुनने से इन्कार करके न जाने यह क्यों इतना गधापन कर रही है? चेम्सफोर्ड सचिव सभा के उन्नति के विरोधी Home Member अन्तरीय प्रबन्ध सदस्य के वशीकरण मन्त्र से संज्ञाशून्य होकर न केवल अपनी सच्ची नीतिज्ञता की अयोग्यता ही प्रगट कर रही है वरन् यह भी दिखला रही है कि इस में राजनीति की सूक्ष्म बुद्धि का बिल्कुल अभाव है। भारत के अन्य स्थानों को छोड़ कर मैरिस कमेटी का आगामि अधिवेशन १५ अप्रेल को शिमले में होगा।"

ब्रुश या दातन।

वैज्ञानिक विचारों तथा कार्य्यों का त्रैमासिक समालोचक साइन्स प्रोग्रेस नामक पत्र अपने जनवरी १९२० के अंक में दांत साफ करने वाले ब्रुशों के विषय में इस प्रकार लिखता है:—

"दांतों के गल जाने का रोग अंग्रेज जाति में बहुतायत से तथा अन्य गोरी जातियों में न्यूनतया प्रसिद्ध है और इसके बहुत से कारण बताये जाते हैं किन्तु मेरे विचार में वह कारण ठीक नहीं। साधारणतया चिकित्सा शास्त्र में सफेद गेहूं का आटा खाना ही कारण समझा जाता है क्योंकि यह आटा दान्तों के छिद्र में कीट आदि उत्पन्न करने में विशेषतया सहायक होता है। यदि यह बात सच मानी जावे तो हम पूंछते हैं कि उन जातियों के जो सफेद आटे पर ही रहती हैं जैसे कि उत्तरीय भारत की जातियां—दान्त इतने उत्तम कैसे रहते हैं? नर्म, पका हुआ खाना दूसरा कारण बताया जाता है यदि यह हो तो दक्षिण भारत के लोगों को जो केवल नर्म उबले हुए चावल ही खाते हैं यह कष्ट क्यों नहीं होता जो हमें होता है? जाति की गिरावट एक तीसरा कारण माना जाता है लेकिन यह भी इस तर्क द्वारा कट जाता है कि शारीरिक और मानसिक अवस्थाओं में हम उन बहुतसी जातियों से बलवत्तर हैं जिनके दान्त बुढ़ापे तक दृढ़ रहते हैं और इसी प्रकार खांड, मदिरा, और दांत करोदने के विषय में भी कहा जा सक्ता है जिन्हें बुरे दान्त वाले लोग ही केवल नहीं वर्तते। इस के अतिरिक्त बृटिश जाति के दांत आज कल की भांति सर्वदा से ही बुरे नहीं थे इसकी साक्षी पुराने अस्थि पञ्जर देते हैं। कई वर्ष हुये लंडन में सोलहवीं शताब्दी के समय की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अस्थियों का एक बड़ा ढेर मिला था और एक शरीर-रचना शास्त्रवेत्ता जिसने कि हड्डियों की परीक्षा की थी मुझे बतलाया कि उसके दांत बिल्कुल जैसे के तैसे थे अतः इससे स्पष्ट पता लगता है कि दान्त के गलने का कारण अथवा मुख्य कारण वह वस्तु है जो कि आधुनिक समय में ही बर्ती जाने लगी हो और अनुमान के लिये दान्त के ब्रश को क्यों न मान लिया जावे जिसको एंग्लो सेक्सन अर्थात् अंग्रेज लोग बहुत काम में लाते हैं और गोरी जातियें कम बर्तती हैं और बहुतेरे अफ्रीका निवासी तथा भारतीय बिल्कुल नहीं बर्तते क्योंकि यह अपने दांतों को मंजन या मिट्टी को उंगली से रगड़ कर अथवा नर्म हरी दांतन से साफ करते हैं। लेखक को निम्न लिखित बात का पता लगा है कि क्ष नामक मनुष्य जीवन पर्य्यन्त दांत का ब्रुश बर्तता रहा है अतः बचपन से ही उसके दांत गिरने प्रारम्भ हुये, किन्तु सामने के सब दांत बिल्कुल ठीक थे जब कि ६० वर्ष की अवस्था में उसने कड़ा दान्त का ब्रुश बर्तना प्रारम्भ किया—इस अवस्था में मसूढ़े सिकुड़ जाया करते हैं और मसूढ़ों तथा दान्तों के इनेमल के मध्य में एक छोटीसी नर्म हड्डी रह जाया करती है। और कुछ महीनों में ही उसके तीन आगे के सुये अर्थात् बाईं ओर के तीन दांत जिन पर ब्रुश की रगड़ अधिक पड़ती थी उसी समय झड़ गये क्योंकि नर्म हड्डी में उसी स्थान पर गलना प्रारम्भ हो गया था जहां पर ब्रुश की रगड़ लगती थी।

दांत के गलने के विषय में बहुत कुछ लिखा जाता है किन्तु लेखक ने अब तक यह नहीं पढ़ा कि दांत के ब्रश भी कारण हैं। ब्रश दान्तों के लिये अस्वाभाविक साधन हैं जिससे दांतों को हानि तो पहुंचना सम्भव है किन्तु सफाई अच्छी प्रकार नहीं हो सक्ती। इसका प्रवेश कब हुआ था? हम एग्नस स्ट्रिक्लैण्ड की बनाई हुई महारानी यलीज़ावेथ की जीवनी (द्वितीय संस्करण जे. यम. देन्ट और सन्स से मुद्रित पृष्ट ३८०) में पढ़ते हैं कि "मैडम ट्विस्ट जो कि रानी की धोबिन थी उसने महारानी को चार दांत के ब्रश मोटे हालेण्ड के बने और काले रेशम से कढ़े हुये, जिनके सिरों पर लेस टकी थी दांत साफ करने के लिये भेंट किये!" इस से अनुमान है कि उस समय ब्रुशों को व्यवहार में नहीं लाते थे।

दांत साफ करने के लिये निम्न प्रकार यथेष्ट हैं:—

मसूढ़े और दांतों को उंगली में मंजन लगा कर रगड़ो और शुद्ध पानी से खूब धो डालो .....।" पाश्चात्य वैज्ञानिक गवेषणाओं से जो नवीन बातें निकल रही हैं वह प्रायः हमारी प्राचीन भारतीय प्रचलित रीतियों की ओर ही ले जा रही हैं। नवीन शिक्षित भारतीय फैशनेबुल नर और नारियों को अंग्रेज़ गुरू द्वारा दर्शित उपरोक्त बात पर विचार करना चाहिये और टूथ ब्रुश के बर्तने से विमुख होना चाहिये नहीं तो भारतीयों के दांत भी गल जाया करेंगे दांतों का रोग तो यहां प्रचलित हो ही रहा है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आर्य्य-महिला।

भारत गीत ६२।

[लेखक—श्रीयुत् कविवर श्रीधर पाठक]

अहो पूज्य भारत महिला गण, अहो आर्य्य-कुल-प्यारी।
अहो आर्य्य-गृह-लक्ष्मि-सरस्वति, आर्य्य लोक उजियारी॥
अहो आर्य्य-मर्य्याद स्रोतिनी, आर्य्य हृदय की स्वामिनी।
आर्य्य ज्योति, आर्य्यत्व-द्योतिनी, आर्य्यवीर्य्य घन दामिनी॥
आर्य्य-धर्म-जीवन-महिमा-मयि, आर्य्य-जन्म-संजीवनि।
आर्य्य-शील-सुषमा-मयि, सुन्दरि, अयि मा आर्य्य सतीमणि॥
आर्य त्रिभुवन-अभिवन्द्य-यशस्विनि, आर्य त्रि-शक्ति संशोभिनि!
त्रिगुण-नयिनि, मगनयनि, मनस्विनि, मधु मयि त्रिजग-प्रलोभिनि॥
तुम हो शक्ति अजेय, विश्व की, आर्य अमेय बल-धारिणी।
आर्य स्वदेश-सुख दुख संगिनी, अखिल श्रेय संचारिणी॥
आर्य्यजगत मे, जननि पुनः निज जीवन ज्योति जगाओ।
आर्य्य हृदय में पुनः आर्य्यता का शुचि स्रोत बहाओ॥
अक्षय सुकृत मयी स्वकुक्षि से कृती आर्य्य सुत ज्याओ।
त्रितय-शक्ति-पूरित स्व-वक्ष से पुनः पुंस्त्व-पय प्याओ॥
करो सार्थ कमनीय नाम निज, अहो आर्य्य कुल-कामिनि।
आर्य्यप्रेम की पुण्य पताका, आर्य्य गेह की स्वामिनी॥

यह कविता यद्यपि इससे पूर्व कई एक पत्रिकाओं में निकल चुकी है तथापि हम इसे सहर्ष 'ज्योति' के पाठक पाठिकाओं की भेंट करते हैं क्योंकि यह इतनी भावपूर्ण, सारगर्भित और ओजस्विनी है कि जितना भी इसका प्रचार किया जावे अच्छा है। श्रीयुत् पण्डित श्रीधर पाठक जी ने समय २ पर अपनी प्रतिभाशालिनी लेखिनी द्वारा ज्योति में कविता भेजने का वचन दिया है यह पंजाब निवासियों के बड़े सौभाग्य की बात है। वह लिखते हैं:—

"इस पद्य से इतर बातों के अतिरिक्त, "अबलाओं" को अपने वास्तविक बल और स्वरूप का ज्ञान प्राप्त हो सक्ता है यदि वह इसे ध्यानपूर्वक मनन करें। श्रीमती, श्रीमती, और ह्रीमती स्त्रियां उक्त पद्योक्त गुणों का समावेश केवल ध्यान और धारणा द्वारा अपने में कर सक्ती हैं ऐसा मेरा निश्चय है अतः इस प्रकार के पद्यों का प्रचार उन के बीच में हितकर होगा। कभी२ मैं ऐसे पद्य 'ज्योति' को भेजने का यत्न करूंगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ॐ

वनिता विनोद

स्त्री उपयोगी स्त्रियों द्वारा लिखित लेखों का संग्रह।

विषय सूची

१—सम्पादकीय वक्तव्य ...

२—कला कौशल्य—[लेखिका श्रीमती ओ३म्वतीजी ... ...

३—वर्त्तमान-शिक्षा-प्रणाली और गृहस्थ जीवन—[लेखिका श्री० कौशल्यादेवीजी विशारदा

४—स्त्री शिक्षा—[लेखिका श्री० सुशीलादेवी ... ...

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सम्पादकीय वक्तव्य ।

ज्योति के अन्य उद्देश्यों के साथ २ इसका एक मुख्य उद्देश्य नारी जगत् में सुशिक्षा का प्रचार करना भी है। किसी भी देश व जाति का उत्कर्ष होना असम्भव है जब तक कि उस की नारियें उन्नति सम्बन्धी कार्य्यों में पुरुषों का हाथ न बटावें। इसलिये हम यत्न करेंगे कि ज्योति में नारीधर्म, नारीकर्तव्य, नारी अधिकार और अन्य २ स्त्रि-उपयोगी विषयों पर लेख रहा करेंगे। किस प्रकार हमारी बहिनों की शारीरक और सामाजिक, मानसिक और आत्मिक उन्नति हो सक्ती है, किन उपायों को अवलम्बन से वह अपने स्त्रीत्व को सफल बना सक्ती हैं इत्यादि गूढ़ विषयों पर हम ज्योति में लेख देने के लिये सदा प्रयत्न करेंगे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये हमने ज्योति के कुछ पृष्ठ "वनिता-विनोद" के शीर्षक से अलग कर दिये हैं। हमारी इच्छा है कि इन में केवल स्त्रियों और कन्याओं द्वारा लिखे हुये स्त्रि-उपयोगी लेख रहा करें। जहां इस से एक क्रियात्मक लाभ यह होगा कि हमारी बहिनों को लेख लिखने का अभ्यास होगा और लिखने की विधि आयेगी वहां दूसरा लाभ यह होगा कि वह अपनी आवश्यकताओं को स्वयं ही प्रगट कर सकेंगी। यह निर्विवाद है कि स्त्रियों की आवश्यक्ताओं को जितनी भली प्रकार वह स्वयं समझ सक्ती हैं पुरुष नहीं। उनकी उन्नति के मार्ग में जो जो बाधायें पड़ती है उनका पूरा ज्ञान पूर्ण सहानुभूति रखते हु भी पुरुषों को नहीं होसक्ता। इसलिये ह अपनी बहिनों से प्रार्थना करते हैं कि वह इ लेखमाला द्वारा स्त्रि जाति हित अहित सम्बन्ध अपने विचार प्रगट कर अपनी अन्य बहिन के लिये हितकर सिद्ध हों।

हमने एक और यत्न किया है कि 'वनित विनोद' में कलाकौशल सम्बन्धी लेख प्रति मास रहा करे। कई प्रकार की दस्तकारी क काम स्त्रियें प्रायः अपने नित्य कर्म्म, भोजन बनाने इत्यादि से निपट कर सदा से करती आई हैं, जैसे कि पंजाब में चरखा कातना, खजूर के पट्टों के मूढ़े, सीकों की टोकरियां इत्यादि बनाना और संयुक्त प्रान्त में क़सीदा काढ़ना और सलमे का काम बनाना इत्यादि की परिपाटी अब तक चली आरही है। समय के हेर फेर से इन चीज़ों के अतिरिक्त और भी कई वस्तुओं के बनाने का व्यवहार पड़त जाता है। नारीकृत दस्तकारी को भली प्रका सुदृढ़ रखने और इसको नियन्त्रित करने के लिये 'कला-कौशल्य' के शीर्षक से वनिता विनोद में लेख रहा करेंगे। इस अंक में श्रीमती ओ३म्वती जी द्वारा लिखित लेख प्रकाशि किया जाता है। क्या हम आशा रक्खें कि हमारी अन्य आर्य्य बहिनें भी इस प्रकार के शिल्प सम्बन्धी लेख भेजने की समय २ पर कृप करेंगी।

———

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

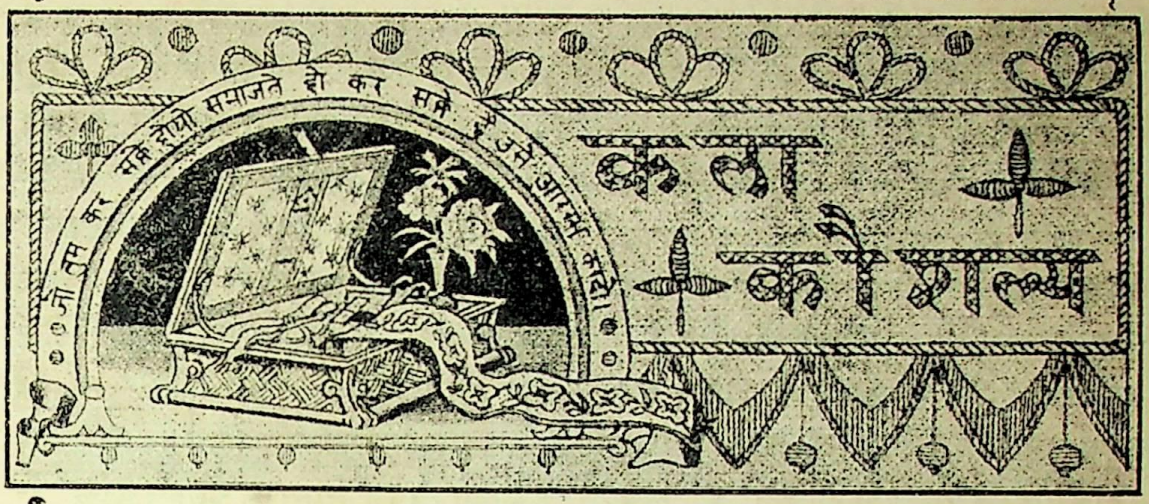

विषय परिचय।

आज हम अपने पाठक और देवियों को एक ऐसे विषय से परिचित कराते हैं जिस का अब तक हमारे भाषा संसार में अभाव ही है। हमारे मध्य में यह कार्य्य पाश्चात्य फ़ैशन का समझा जाता है। यह ज्ञात नहीं कि यह इसी रूप में यहां विद्यमान था वा नहीं किन्तु यहां की हस्तनिर्मित शिल्पकारी की महिमा को कौन नहीं जानता? कुछ दिनों से इसका प्रायः अभाव सा था अब फिर शिक्षा की लहर के साथ २ इसकी भी जागृति हुई है। कई लोग तो इसका (adopt) अनुकरण करना कदाचित् कन्याओं वा स्त्रियों को फ़ैशन सिखाना समझेंगे किन्तु हम स्वयं ही इसका प्रथम ही निरूपण कर देते हैं। यह शिल्प सीखने की उत्कण्ठा हमारे नारी समूह में दिन प्रति दिन बढ़ रही है। ईसाई स्त्रियों को रखकर वा उनके स्कूलों में जाकर ही हम इसकी शिक्षा पाते वा दिलाते हैं। वा उनसे सीखकर जो आवे वह सिखलावे। वे इसका ज्ञान कहां से पाती हैं? पुस्तक रूपी अनन्त भण्डार से। प्रायः प्रत्येक तरह की शिल्पकला के पत्र तथा पुस्तकें अंग्रेज़ी में विलायत तथा अमेरिका से आती हैं। उनमें नवीन से नवीन नित्य नये चित्रित नमूने दिये होते हैं और बनाने की विधि भी बड़ी सुगम रीति से दी होती है। यहां तक कि सिलाई, बुनाई इत्यादि की कौन कहे मूंज की और सींकों की टोकरियां बीनना, चटाई बीनना, कागज के खिलौने बनाना, मोतियों के तरह २ के हार पिरोना, गुड़ियां बनाना प्रभृति शिल्प की विधियों की पुस्तकें मिलती हैं। किन्तु अंग्रेज़ी में होने के कारण हम इनसे लाभ नहीं उठा सक्ते। अब प्रश्न यह उठता है कि हमारे चुप रहने से यह शिल्प सीखने की उत्कण्ठा की लहर बन्द हो जायगी वा किसी अन्य तह में जा गिरेगी? हमारी तुच्छ बुद्धि में बन्द होना टेढ़ी खीर है। और जिस प्रकार युवतियों का शृंगार कभी किसी काल में बन्द नहीं हुआ उसी भांति यह भी नहीं होने का। सुतरां क्यों न हम कार्य्यक्षेत्र में अवतीर्ण होकर रूठी हुई शिल्प कला को फिर अपनायें और मनालायें। हां यथा सम्भव स्वदेशी वस्तुएं वर्तकर कार्य्य करना योग्य है और उद्योगी बन्धुओं से प्रार्थना करनी चाहिये कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जो वस्तुएं हमें आवश्यक होती हैं जैसे कपड़ा सीने की सुई, क्रोशिया, सलाइयां फ़ीते इत्यादि उन्हें व शीघ्र अपने देश में बनाकर हमारे मार्ग को निष्कण्टक करदें। बहिनों! साथ में हमें भी प्रण करना चाहिये कि हमारे कार्य्य में यथा सम्भव स्वदेशी वस्तु का ही प्रयोग हो। ढूंढ़ कर हम स्वदेशी वस्तु का व्यवहार करें।

यहां पर क्रोशिये और सलाई के कार्य्य का प्रथम विवरण करते हैं। यद्यपि क्रोशिये का काम अनन्त-शाखा-रूपी शिल्प-वृक्ष के सब कार्य्यों से सुगम समझा जाता है तथापि शब्दों द्वारा समझाना या लेखों द्वारा लिखना बड़ा कठिन प्रतीत होता है। यद्यपि बहुतों ने इस ओर प्रयत्न किया तथापि आर्य्यभाषा में अभी कोई भी भली भांति फलीभूत नहीं हुआ है। हम आज बड़े परिश्रम और यत्न से दो चार चीज़ें क्रमशः समझाने का प्रयत्न करते हैं। यदि कोई देवियां व कन्याएं धैर्य्य रख परिश्रम कर बहुत ध्यान पूर्वक एक बार इनको उतारने का कष्ट उठावेंगी तो आगे चलकर उनको यह कार्य्य सुगम हो जायगा और हम भी अपने को कृत-कार्य समझेंगे। जहां वे न समझें उस पंक्ति, फूल व स्थान की कठिनता को यदि लिख भेजने का कष्ट उठावेंगी तो हम प्रति समय उन्हें बताने के लिये उद्यत हैं। यह जिन्होंने कुछ सीखा बनाया है अभी उन्हीं के लिये है, बहुत प्रारम्भिक बातों का समझाना बड़ा कठिन है, यह उद्योग फलीभूत होने से अन्य भी किया जा सक्ता है। यद्यपि प्रथम स्वयं बनाकर अनुभव करने के पश्चात् ही इसमें सब चीज़ें रहेंगी, प्रूफ़ इत्यादि भी यथाशक्ति शुद्ध किये जायंगे और चित्र भी दिये रहेंगे। फिर भी सम्भव है कि कई अशुद्धियां रह जायं। यदि आप चित्र के साथ अपने मस्तिष्क और बुद्धि से कार्य्य लेंगी तो झट सुलभ हो जायगा।

एक निवेदन और है। बनाने वालों को यह ध्यान रखना उचित है कि काम मैला न होने पावे। हमारी लड़कियें व बहिनें आज कल बनाती तो हैं परन्तु बड़ा गंदा मैला कर डालती हैं सोचती हैं कि धुलकर साफ़ हो जायगा किन्तु सूती और रंगीन वस्तुओं के साथ वह स्वभाव बड़ा हानिकारक होता है। उसकी सुन्दरता धुलकर वह नहीं रहती जो कि प्रथम ही स्वच्छ बनने से होती है। अतः यह प्रार्थना है कि स्वच्छता का प्रत्येक वस्तु में ध्यान धर सदा हाथ धोकर कार्य्य बनावें। और स्वेत पुराने कपड़े में लपेट कर वा उसकी थैली सींकर उसके भीतर रक्खा करें।

ऊनी बनियाइन।

इस बनियाइन की लम्बाई २९ इन्च और बांह १८ इन्च लम्बी। अपनी इच्छा से यदि कोई छोटी बड़ी करे तो यह ध्यान रखना चाहिये कि प्रत्येक लम्बाई चौड़ाई बांह सब क्रमानुसार घटना बढ़ना चाहिये।

आवश्यक वस्तुएं—२ हड्डी की ८ नं० की सलाइयां जिनके एक ओर घुंडी घानी बटनसा लगा होता है। ४ लोहे की १३ नं० की सलाइयां १ हड्डी का क्रोशिया। घुंडी से यह लाभ होता है कि बहुत से फन्दे होने से एक तरफ बुनों तो दूसरी तरफ से गिरते नहीं हैं रुके रहते हैं।

संकेत—१. सलाइयों पर चढ़े हुवे बहुत से घरों को हम "फन्दे" कहेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२. बायें हाथ की सलाई में आवश्यक फन्दे रखकर दाहिने हाथ की सलाई से बुनना प्रारम्भ किया जाता है (जिन्होंने बुना है वे जान सकेंगी) अतः जो फन्दे सीधी तरफ से सलाई डालकर बुने जांय उन्हें हम "सीधे फन्दे" कहेंगे।

३. जो उल्टी ओर से अथवा सिरे की तरफ़ से अन्दर की तरफ़ सलाई मोड़कर बुने जांय उन्हें हम "उल्टे फन्दे" के नाम से कहेंगे।

४. जहां घटाना होगा वहां सलाई एक बारगी दो फन्दों में डाल कर सीधा फन्दा बुना जायगा इसको "घटाना" कहेंगे।

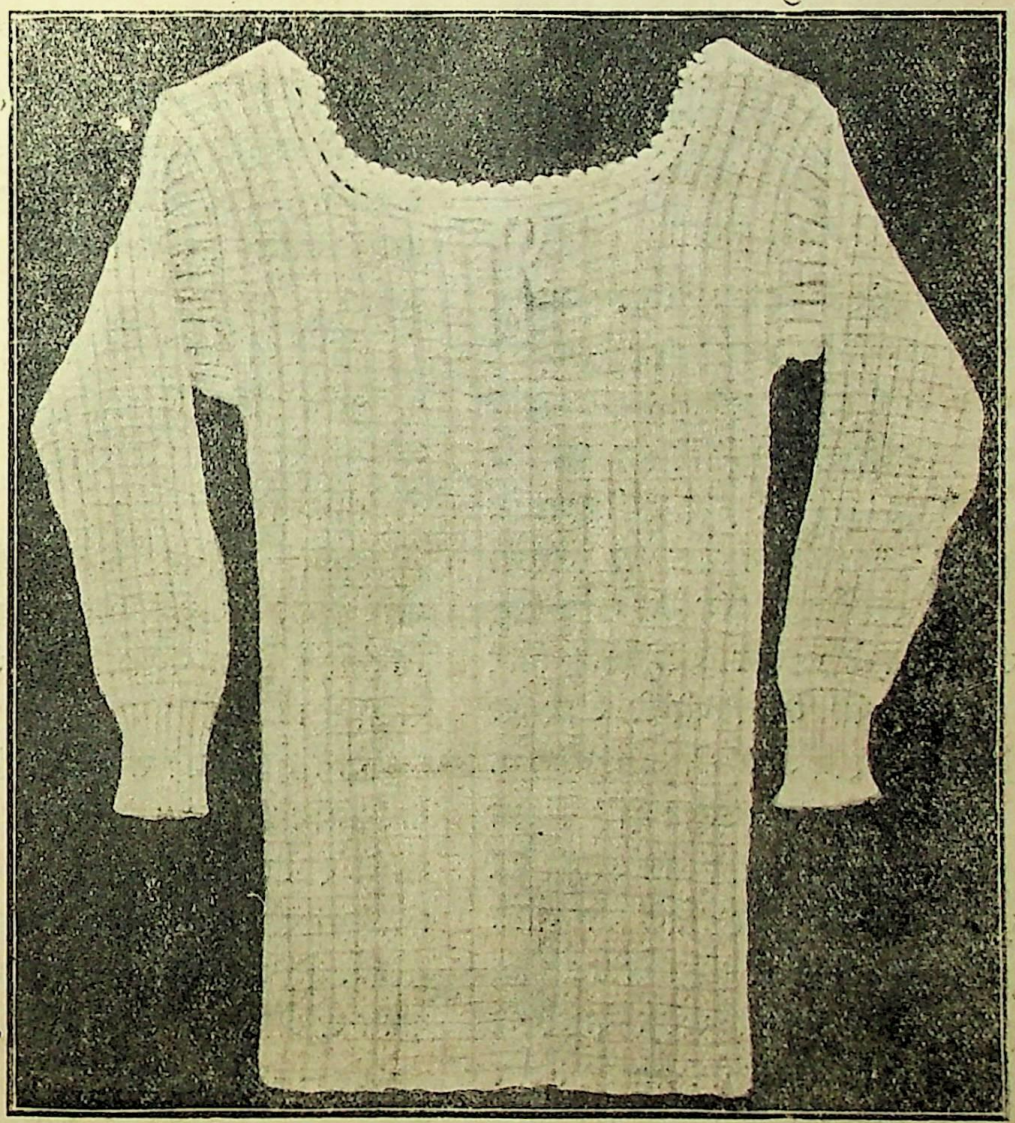

५. जब कार्य्य समाप्त करना हो या कुछ फन्दों को बराबर पंक्ति में उतारना हो तो दो सीधे फन्दे बुनकर पिछले फन्दे को अगले फन्दे पर से लंघाकर गिरा दो। फिर एक फंदा और बुनो, दो हो जायंगे पिछले को पहिले पर लंघा दो और इसी प्रकार जितने आवश्यक हों करो। इसको हम "उतारना" कहेंगे।

६. जहां कहीं आरम्भ में वा कार्य्य के बीच में सलाई पर फन्दे डालने हों तो दायीं सलाई से बायीं सलाई में घर बुन २ कर एक २ बायीं पर चढ़ाते जाने को हम "चढ़ाना" कहेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संक्षेपन "सीधा फन्दा" "सी" "उल्टा फन्दा" "उ", फन्दा, "फ़ं"।

आगा पीछा।

आरम्भ में ९२ फ़न्दे चढ़ाओ।

१ली पं०—२ सी., २ उ., इसी भांति २सरी पं०, ३री पं०।

४थी पं०—सारे फन्दे सीधे २ बुनो।

५वीं पं०—२ सी.,-२ उ., इसी भांति ६ठी, ७वीं पं०।

८वीं पं०—सारी सीधे फन्दे।

यही नमूना सारे में रहेगा। २५ इन्च अथवा जितनी लम्बी रखनी हो उतना यह बुन कर फिर २२ फ़न्दे एक कन्धे वास्ते अलग बुनो बाक़ी के फन्दे किसी अन्य सलाई वा धागे में डाल कर रहने दो। यह २२ फ़न्दे उसी बुनावट में होने चाहिये ६ वा ७ इन्च तक वा जितनी गले की गहराई रखनी हो। जब बुन जांय ऊन तोड़ दो और उनको अलग रख दो। फिर पिछले ७०. फं०., को लेओ सीधी ओर से जहां से छोड़ा था। ऊन जोड़ लो और बीच के ४८ फ़न्दे गले के वास्ते "उतार दो"। इस प्रकार जब ४८ फ़ं०., उतर जांय तब बाक़ी २२ फ़ं०, को दूसरे कन्धे के लिये पहिले की भांति बराबर बुनलो इसके बाद बीच के ४८ फ़ं०, फिर "चढ़ाओ" और दूसरी तरफ़ के रक्खे हुवे २२ फ़न्दे भी फिर सलाई पर चढ़ालो। अब फिर ९२ फ़न्दे होगये इन्हें पहिले की भांति बुनो। जब आगे की तरह २५ इन्च होजाय तब ढ़ीले हाथ से सब फ़न्दे "उतार दो" जैसा गर्दन में किया था ऊन तोड़ दो और सलाई से निकाल दो यह बनयाइन का आगा पीछा तैय्यार होगया।

बांह।

९२—फ़न्दे चढ़ाओ और १२ पंक्ति पहिले नमूने की डालो।

१२वीं पं०—आरम्भ में १ फ़, घटाओ और सब बुन कर अन्त में इकट्ठे लेकर घटादो—इसके बाद पहिले की तरह बुनते हुवे प्रत्येक ८वीं पं० में एक आगे एक पीछे घटाओ जब तक बांह १२ इन्च लम्बी न होजाय।

इसके बाद लोहे की सलाइयां लेओ और हड्डी की सलाई के फन्दे उन पर उतार लो और २ सीधे, २ उल्टे ३ इन्च तक बुनो और "उतार कर" समाप्त करदो। दूसरी बांह इसी तरह बुनो।

दोनों बांहों को बराबर जगह छोड़कर नाप कर आगे पीछे में क्रोशिये से वा सुई से मज़बूती से सफ़ाई से सींदो। फिर बांह और दोनों किनारे सीं दो।

गला—तसवीर के नमूने में गला नीचा और खुला है अगर जो "स्वेटर" बाज़ार में बिकती हैं वैसा बनाना हो तो वह भी बन सक्ता है।

अब नमूने की तरह बनाने के लिये गले के किनारे झालर बनाओ। ऊन को गले में जोड़ो १ तेहरा क्रोशिया, ४ चेन, १ सादा क्रोशिया सब से पहिली चेन में १ ते, क्रो० गले में दो फन्दे छोड़कर। इसी तरह बार २ करते जाओ.

दोहरा ऊन करके एक लम्बी सी गले के चारों ओर घूमकर बंधने वाली चेन बुनो, उसे झालर के बीच में पिरो दो और सिरों पर फुंदने बांध दो।

नोट—चित्र देखकर समझ लो। यदि किसी ने इच्छा प्रगट की तो गला फिर बताऊंगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"रत्न" लेस।

यह लेस क्रोशिया जो कि एक टेढ़ी हुकदार चोंच वाला औज़ार होता है उससे किसी रेशम वा सूत से बनाई जाती है, महीन मोटे सूत के अनुसार ही महीन मोटा क्रोशिया भी वर्तना चाहिये तब लेस अच्छी बनती है।

१. क्रोशिया तो प्रायः सभी स्त्रियों और कन्याओं को पता है।

२. क्रोशिये और सूत से एक फन्दा डाल कर और एक २ बार सूत चढ़ा कर निकालते जाने से जो जंजीरा बनता है उसे हम "चेन" कहेंगे।

क्रोशिये पर एक फन्दा सदा रहता ही है। हम अपने कार्य्य में क्रोशिये को चेन के अन्दर डाल कर और उस पर सूत चढ़ा कर निकाल लेते हैं तो दो फन्दे क्रो० पर बन जाते हैं। अब हम एक बार सूत चढ़ाते हैं तो तीन बन जाते हैं इस तीसरे को दोनों में से लंघा लेते हैं तो क्रो० पर जो अन्तिम बार सूत चढ़ाया था वही फन्दे के रूप में रह जाता है अन्य दो बुन जाते हैं। इस बुनावट को हम "दोहरा क्रोशिया" कहेंगे।

४. क्रोशिये पर एक फन्दा है हम इस पर एक बार सूत चढ़ा लेते हैं तो दो बन जाते हैं फिर क्रोशिये को एक चेन के अन्दर से डाल कर सूत चढ़ाकर लंघा लेते हैं तो तीन फ़न्दे बन जाते हैं। फिर क्रोशिये पर सूत चढ़ाकर अगले दो फन्दों में से निकाल लें तो दो फन्दे रह जांयगे। फिर सूत चढ़ाकर बाकी दो फ़न्दों में से निकाल लें तब केवल एक ही रह जायगा और एक लम्बा घर बुन जायगा। इसको हम "तेहरा क्रोशिया" कहेंगे।

५. क्रोशिये को चेन के अन्दर डाल कर और सूत चढ़ाकर चेन से और क्रोशिये पर रहने वाले फन्दे दोनों में से एकदम निकाल लें तो चेन से वा घरों से चिपटा हुवा फन्दा बुनें जायगा इसको हम "सादा फन्दा" कहेंगे।

६. जहां कहीं एक तेहरा क्रोशिया बनाने के बाद दो चेन करें और नीचे दो चेन छोड़ कर तीसरी चेन में एक तेहरा क्रोशिया बुनें तो एक चौखुन्टा छेद पड़ जायगा इसको हम "ख़ाना" कहेंगे।

७. जहां कहीं बीच में वा कोने में बहुत सी चेनें बनी हुई हों उसमें कुछ और बनाना हो वा उसका उदाहरण देना हो तो उसको "छल्ला" कह कर लिखेंगे।

संक्षेपन।

क्रोशिये के लिये "क्रो.,", दोहरे क्रोशिये के लिये, दो., तेहरे के लिये, ते., सादा के लिये सा., ख़ाना के लिये ख़ा., चेनके लिये चे., आरम्भ में ७६ चे., करो।

१ली पं—९ चे छोड़ो., ४ ते., ७ चे., ७ छोड़ो, ४ ते., ३ खा., ४ ते.,-"१ खा., ४ ते., तीन वार",—३ चे., ३ छोड़ो., १ दो., ३ चे., ३ छोड़ो, ४ ते दोवार, १ खा., ५ चे, लौटो.

२री पं—१ ख़ा, ४ ते-७चे., ४ ते., (४ ते पर) दो वार, २ ख़ा, ४ ते., १ खा., ४ ते., ३ खा., ४ ते., ५ चे., ४ ते (पहली ७ चे के बीच में), ५ चे., ३ ते छोड़कर ४ ते., (१ ते., पर बाकी ३ ते चेनों के छल्ले में) १२ चे., लौटो,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

३री पं.,—९ चे छोड़ो, ४ ते., (३ चे., पर १ ते. पर) ५ चे., १० ते., (३ चे. पर ४ ते, पर ३ चे के दूसरे छल्ले में) ५ चे., ३ ते, छोड़ों ४ ते.,—३ ख़ा., ४ ते., दो वार,—३ चे., १ दो., ३ चे., ४ ते., दो वार, १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

४थी पं.,—१ खा., ४ ते.,–७ चे., ४ ते., दो वार, ६ ख़ा., ४ ते., ५ चे., १६ ते., (३ चे के छल्ले में १० ते., के ऊपर ३ चे के दूसरे छल्ले में) ५ चे., ४ ते., (३ ते छोड़ कर १ ते., पर बाक़ी चे., में) १२ चे., लौटो।

५वीं पं०—९ चे छोड़कर ४ ते., (३ चे., में १ ते., पर) ५ चे., २२ ते., (३ चे., में १३ ते., पर ३ चे., के दूसरे छल्ले में) ५ चे., ३ ते., छोड़ कर ४ ते., ५ ख़ा., ४ ते.,—३ चे., १ दो., ३ चे., ४ ते., दोवार, १ ख़ा., ५ चे., लौटो.।

६ठीं पं०—१ ख़ा., ४ ते.,—७ चे., ४ ते., दो वार, ४ ख़ा., ४ ते., ५ चे., १३ ते., (३ छल्ले में १० ते., पर) १ ख़ा., १३ ते., (पिछले ३ छल्ले में) ५ चे., ३ ते., छोड़ा ४ ते., (१ ते पर ३ छल्ले) १२ चे., लौटो.।

७वीं पं०—९ चे छोड़कर ४ ते., (३ चे., में १ ते., पर) ५ चे १३ ते., (३ छल्ले में १० ते पर) ३ खा., १३ ते (पिछले ३ चे के छल्ले में) ५ चे., ३ ते., छोड़कर ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते.,—"३ चे., १ दो., ३ चे., ४ ते.," दोवार १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

८वीं पं—१ खा., ४ ते.,–७ चे, ४ ते., दो वार, २ ख़ा., ४ ते., ५ चे., १३ ते., ५ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ३ ते छोड़कर ४ ते., ६ चे., लौटो.,।

यहां से उतार आरम्भ होता है चित्र देखो।

९वीं पं०—३ ते छोड़ कर ४ ते., (१ ते पर ३ अन्दर के छल्ले में) ५ चे., ३ ते छोड़ कर १३ ते., ५ चे., ४ ते., (पहिले ३ चे के छल्ले में) ३ खा., ४ ते.,—३ चे,. १ दो., ३ चे., ४ ते., दोवार, १ खा., ५ चे., लौटो।

१०वीं पं०—१ ख़ा. ४ ते.,–७ चे., ४ ते., दोवार, ४ खा., ४ ते, ५ चे., ३ ते., छोड़ कर १३ ते., १ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ४ ते., (पहिले ३ चे में १ ते पर) ६ चे., लौटो।

११वीं पं०—३ ते., छोड़कर ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़कर २२ ते., ५ चे., ४ ते., (३ चे., में १ ते., पर) ५ खा., ४ ते.,—३ चे., १ दो., ३ चे., ४ ते., दोवार, १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१२वीं पं०—१ ख़ा., ४ ते.,–७चे., ४ ते., दोवार, ६ खा., ४ ते., ५ चे., ३ ते छोड़कर १६ ते., ५ चे., ४ ते., (३ चे., में १ ते., पर) ६ चे., लौटो।

१३वीं पं०—३ ते छोड़कर ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़कर १० ते., ५ चे., ४ ते., (पहिले ३ छल्ले में)–३ ख़ा., ४ ते., दोवार—३ चे., १ दो., ३ चे., ४ ते., दोवार, १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१४वीं पं०—१ ख़ा., ४ ते.,—७ चे., ४ ते., दो वार, ५ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़कर ४ ते., ५ चे., ४ ते., (पहिले ३ छल्ले में) ६ चे., लौटो।

१५वीं पं०—३ ते., छोड़कर ४ ते., ७ चे., ४ ते., (पहिले ३ दूसरे छल्ले में १ ते पर) ३ ख़ा., ४ ते.,—१ ख़ा., ४ ते., तीन वार—३ चे., १ दो., ३ चे., ४ ते., दो वार, १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१६वीं पं०—२सरी जैसी।

१७वीं पं०—३सरी जैसी। ऐसे ही आगे भी बनेगी जितनी चाहिये बनावें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कोना बनाने की रीति।

१ली पं०—कोना लेस में बताई हुई पांचवीं पंक्ति से शुरू होता है। सारा उसी ५वीं पं., की तरह बनाते हुवे केवल अन्त के ३ ते., और १ ख़ा., छोड़ दो। अथवा ५ वीं पं., के अन्त में ३ चे., १ ते., के बाद ८ चे., कर के लौटो।

२री पं०—४ ते., (४ ते पर) फिर ७ चे., ४ ते., ४ ख़ा., ४ ते., ५ चे., १३ ते., (पहिले ३ छल्ले में) १ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., १२ चे., लौटो।

३री पं०—९ चे., छोड़ो ४ ते., ५ चे., १३ ते., ३ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ३ चे., १ दो., ३ चे., ४ ते., ३ चे., लौटो।

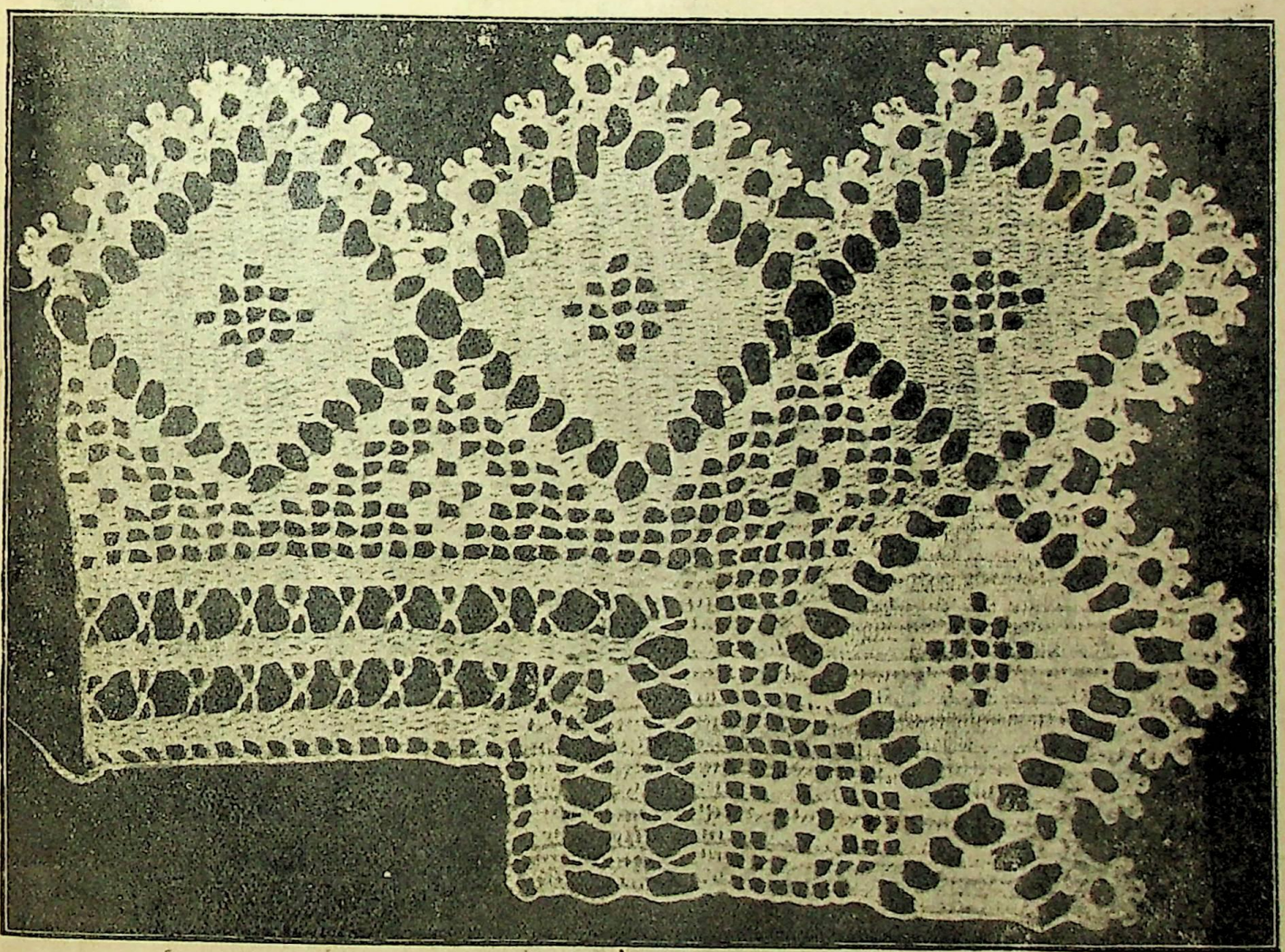

४थी पं०—३ ते., ते., पर ७ चे., ४ ते., ४ ख़ा., ४ ते., ५ चे., १३ ते., ५ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़कर ४ ते., ६ चे., लौटो।

५वीं पं०—३ ते छोड़कर ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़कर १३ ते., ३ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., (पहिले ३ छल्ले में) ३ ख़ा., ४ ते., ३ चे., १ दो., (७ चे के बीच में) ५ चे लौटो।

६ठी पं०—३ ते., ते., पर ४ ख़ा., ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो १३ ते., १ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ३ ते., (पहिले ३ छल्ले में) ६ चे., लौटो।

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

७वीं पं०—३ ते., छोड़ो, ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो २२ ते., ५ चे., ४ ते., (पहिले ३ छल्ले में) ५ खा, ५ चे., लौटो।

८वीं पं०—६ खा., ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो १६ ते., ५ चे., ४ ते., (पहिले ३ छल्ले में) ६ चे., लौटो।

९वीं पं०—३ ते., छोड़ो ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़कर १० ते., ५ चे., ४ ते., (पहिले ३ छल्ले में) ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१०वीं पं०—३ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., ५ चे., ४ ते., (पाहिले ३ छल्ले में) ६ चे., लौटो।

११वीं पं०—३ ते., छोड़ो ४ ते., ७ चे., ४ ते., (पहिले ३ ते दूसरे चे के छल्ले में) ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ३ चे., लौटो।

१२वीं पं०—३ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ५ चे., ४ ते., (७ चे के छल्ले के बीच में) ५ चे., ३ ते., छोड़कर ४ ते., १२ चे., लौटो।

१३वीं पं०—९ चे., छोड़कर ४ ते., ५ चे., १० ते., (पहिले ३ छल्ले में ४ ते पर अगले ३ अगले छल्ले में) ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१४वीं पं०—३ ख़ा., ४ ते., ५ चे., १६ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़कर ४ ते., १२ चे., लौटो।

१५वीं पं०—९ चे., छोड़कर ४ ते., ५ चे., २२ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., २ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१६वीं पं०—१ख़ा., ४ ते., ५ चे., १३ ते., १ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., १२ चे., लौटो।

१७वीं पं०—९ चे., छोड़कर ४ ते., ५ चे., १३ ते., ३ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़कर ४ ते., ८ चे., लौटो।

१८वीं पं०—१३ ते., (पहिले ३ छल्ले में) ५ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., ६ चे., लौटो।

१९वीं पं०—३ ते., छोड़ो ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो, १३ ते., ३ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ४ ते छल्ले में, ५ चे., लौटो।

२०वीं पं०—३ ते., छोड़ो ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो १३ ते., १ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ४ ते., (३ छल्ले में) ६ चे., लौटो।

२१वीं पं०—३ ते., छोड़ो ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो २२ ते., ५ चे., ४ ते., (३ छल्ले में) ६ चे., लौटो।

२२वीं पं०—३ ते., छोड़ो ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो १६ ते., ५ चे., ४ ते., (३ छल्ले में) ६ चे., लौटो।

२३वीं पं०—३ ते., छोड़ो ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो १० ते., ५ चे., ४ ते., ६ चे., लौटो।

२४वीं पं०—३ ते., छोड़ो ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., ५ चे., ४ ते., ६ चे., लौटो।

२५वीं पं०—३ ते., छोड़ो ४ ते., ५ चे., ४ ते., (३अगले छल्ले में) ६ चे., लौटो।

२६वीं पं०—३ ते., छोड़ो ४ ते., ६ चे., १ ते., उसी खाने में, १ सादा घर ४ ते., के किनारे पर और इसके बाद सूत तोड़कर फन्दा निकाल दो।

अब सूत को कोना शुरू करने के बाद की १४वीं पं. के अन्त में जोड़ दो (जहां से कोना मुड़ा हुवा लगता है एक चेन का छल्ला १४वीं पं. का है वहां ३री, चे., में एक सादा घर बना कर जोड़ो फिर एक २ पं., में तिरछा कटा हुवा कोना है वह भरता जायगा। यहां पर कार्य्य बड़े ध्यान का और समझकर तसवीर के सहारे से बनाने का है जिनसे न हो सके वे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सादी लेस बनावें यह छोड़ सक्ती हैं) यहां से लेस का रुख़ दूसरी ओर हो जायगा और बेंड़े बल में बनेगी।

१ली पं०—सूत को एक सादे कोशिये से बेड़े बल में १४वीं पंक्ति में जो ऊपर चेन का कोना छुड़ा हुआ है उसकी दूसरी चेन में जोड़ कर २च., ४ते., ५च., ४ते., (उभरे हुवे ५ चेनों के छल्ले में) बेड़े तेहरे छोड़ दो ४ ते., (चे में) १२ चे., लौटो।

२री पं०—९ चे., छोड़ो, ४ ते., ५ च., १० ते., (३ छल्ले में ४ ते., पर ३ दूसरे छल्ले में) ५ चे., ३ ते., छोड़कर ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १ ते., (१ सीधे ते., पर) २ चे., १ ते., (लौटने वाली ५ चेन के छल्ले में से तीसरी चेन में)।

३री पं०—४ ख़ा., ४ ते., ५ चे., १६ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., १२ चे., लौटो।

४थी पं०—९ चे., छोड़ो ४ ते., ५ चे., २२ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ते., ५ख़ा., ३ते., ४ सादे (तीसरे सीधे ते., से लेकर तीन चेन के साथ साथ), लौटो।

५वीं पं०—३ ते., ४ ख़ा., ४ ते., ५ चे., १३ ते., १ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., १२ चे., लौटो।

६ठी पं०—९ चे., छोड़ो ४ ते., ५ चे., १३ ते., ३ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ३ चे., १ दो., (दो, पर) ३ चे., ४ सादे (४ सीधे ते., पर) लौटो।

७वीं पं०—७ चे., ४ ते., ते., पर, २ ख़ा., ४ ते., ५ चे., १३ ते., ५ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो ४ ते., ६ चे., लौटो।

८वीं पं०—३ ते., छोड़ो ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो १३ ते., ३ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ४ ते., (३ छल्ले में) ३ ख़ा., ४ ते., ३ चे., १ दो., ३ चे., ४ ते., ३ चे., १ दो., (७ सीधी चेनों के बीच में) ३ छोड़ो, १ सादा, लौटो।

९वीं पं०—७ चे., ४ ते., ते पर दो वार, ४ ख़ा, ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो १३ ते., १ ख़ा., १३ ते., ५ चे., ४ ते., (३ छल्ले में) ६ चे., लौटो।

१०वीं पं०—३ ते., छोड़कर ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़कर २२ ते., ५ चे., ४ ते., ५ ख़ा., ४ ते., ३ चे., १ दो., ३ चे., ४ ते., ३ चे., १ दो, ३ चे., ४ ते., (सीधे ते., की पास वाली जगह में) ४ सा., (३सरे सीधे ते., से लेकर चेनों में)।

११वीं पं०—३ ते—७ चे., ४ ते., दो वार, ६ ख़ा., ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो १६ ते., ५ चे., ४ ते., (३ छल्ले में) ६ चे., लौटो।

१२वीं पं०—३ ते., छोड़ो ४ ते., ५ चे., ३ ते., छोड़ो १० ते., ५ चे., ४ ते.,—३ ख़ा., ४ ते., दो वार—३ चे., १ दो., ३ चे., ४ ते., दो वार, १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

इसके बाद ख़ाली लेस की गिनती वाली १४वीं पंक्ती बनाओ फिर १५वीं पंक्ति। इसके बाद फिर दूसरी पंक्ति से आरम्भ करके जितनी आवश्यकता हो निरन्तर बनाते जाओ।

कंगूरे के लिये।

पीछे से प्रत्येक चेन के छल्ले लेस के किनारे २ ऐसे बनाओ ३ दो., ५ चे., २ दो., ५ चे., ५ दो., ५ चे., ३ दो., फिर २ चे., १ दो., जो ४ ते., २ चे., के नोक हैं उनके बीच की जगह में बनाओ और इसी प्रकार बनाते जाओ, परन्तु एक २ फूल के बीच की जगह में ३ दोहरे बनाना।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्तमान शिक्षा-प्रणाली और गृहस्थ-जीवन

लेखिका—श्रीमती कौशल्या देवी विशारदा

वर्तमान भारत में अनेक प्रश्न भारत-वासियों की उन्नति अवनति के सम्बन्ध में उठ रहे हैं शिक्षा की समस्या का प्रश्न इन सब में बड़े महत्व का है इस पर जितने चिन्तन और विचार का व्यय किया जावेगा उतना ही भारतवर्ष को धार्मिक सामाजिक और राजनैतिक सुधारों में सुभीता प्राप्त हो सकेगा, प्रत्येक जाति की सभ्यता का मूलाधार उस जाति की शिक्षा प्रणाली है अतः यदि हम इस छोटे से लेख में अपने देश में प्रचलित शिक्षा प्रणाली की आलोचना कर के उस की त्रुटियों तथा दुष्परिणामों का उल्लेख करें तो हमारे शिक्षित समुदाय को इस के लाभालाभ का परिज्ञान तथा उस में अभीष्ट परिवर्तनों को लाने के साधनों की प्राप्ति सम्भव हो सकती है।

भारत में वर्तमान शिक्षा प्रणाली का प्रारम्भ बृटिश राज्य के प्रारम्भ से ही हुआ है बृटिश राज्य ने जब इस देश को सम्भाला और यहां की राजकीय समस्याओं को अपनी रीति नीति अनुसार हल किया तो अपने शासन की स्थिति के लिये सब से बड़ा उपाय जो उन को सूझ पड़ा वह यहां की शिक्षा प्रणाली को मन्तव्यानुसार करना था। बृटिश राज्य के पूर्व यहां पर जो शिक्षा की स्थिति थी वह कई अंशों में सन्तोष जनक न थी, पाठशालाओं में पढ़ाई का कोई विशेष क्रम नहीं था, अपने २ मतानुसार छोटी २ पाठशालाएं बनवा कर अथवा किसी के घर स्थान नियत करके अक्षर ज्ञान और निज मत का परिज्ञान कराया जाता था सांसारिक व्यवहारिक राजनैतिक इत्यादि जीवनोपयोगी बातों का उन्हें ज्ञान नहीं प्राप्त होता था क्योंकि वे मनुष्य जीवन का लक्ष्य केवल अपने मत में दृढ़ता समझते थे अर्थात् अपने मतानुसार धार्मिक ग्रन्थों का पाठ तथा उन के सम्बन्ध में मौखिक चर्चा कर लेना जीवन की इति श्री समझते थे न कि संसार की वास्तविक घटनाएं। उन के जीवन का चार दिवारी की रचना पुस्तकों के द्वारा ही होती थी घट पट चक्र और दण्ड के चक्र में पड़ कर चिर काल तक अपने दिमाग़ को इस प्रकार की परिभाषाओं में फिराते रहते थे और प्राकृतिक वस्तुओं के परिज्ञान से उन का सम्बन्ध न होता था॥

इस कारण वे साधारण स्थिति रखते हुए जीवन व्यतीत करते थे। इतनी साधारणता होने पर भी उन के हृदय प्रेम भाव से परिपूर्ण होते थे वे किसी के साथ ईर्ष्या द्वेष नहीं करते थे। द्रव्योपार्जन में भी साधारणता के कारण यद्यपि विशेष दक्ष नहीं थे, तथापि जीवन का निर्वाह भली प्रकार करते हुए आवश्यकताओं के पूर्ण करने में सामर्थ थे। परन्तु ऐसा होने पर भी संसारिक विशेष ज्ञान न रखने के कारण विशेषज्ञों से दब जाना सम्भव था। अतः जिस समय बृटिशराज्य ने भारत में पदार्पण किया तो नये प्रकार की पाठशालाओं आदि के सुप्रबन्ध में लोगों का ध्यान दिलाया और तत्परायण हो जाने से कृतार्थता प्राप्त की,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अब पाठशालाएं तो बन गईं पर उस में शिक्षा का जो प्रबन्ध किया गया उस का वर्णन करना आवश्यक है।

नई शिक्षा प्रणाली का प्रचार इस प्रकार किया गया कि नई पाठशालाएं स्थापित की गईं, नवीन पाठक्रम नियत किया गया, नूतन विचारों का पाठपुस्तकों में समावेश किया गया। विद्यार्थियों को उन के निज धार्मिक विषयों से वञ्चित करके अक्षरज्ञान गणित भूगोल इतिहास विज्ञान इत्यादिक विषयों का उदार रीति अनुसार प्रारम्भ कराया गया। परन्तु वृटिश राज्य के पूर्व की शिक्षा प्रणाली में जो व्यवहारिक जीवन की न्यूनता की सब से बड़ी त्रुटि थी, वही त्रटि एक अन्य रूप में वर्तमान शिक्षा प्रणाली ने भी हमारे देश निवासियों में उत्पन्न कर दीं।

वह कैसे? शिक्षा के माध्यम का स्थान मातृभाषा को हटा कर विदेशी भाषा को दिया गया। नन्हें २ बच्चों के दिमागों को अस्वभाविक शिक्षा के पाश से जकड़ा गया। मातृभाषा में विचार करने तथा ज्ञान संग्रह करने में जो सुभीता होता है उस से बच्चों को वञ्चित करके विदेशी भाषा के सीखने के व्यर्थ परिश्रम में लगाया गया। जिस भाषा में बच्चे तुतलाते हैं जिस भाषा के द्वारा बच्चे अपने स्नेह परिपूर्ण वाक्यों से अपने माता पिता को बुलाते हैं वही उन की शिक्षा का स्वाभाविक माध्यम होना चाहिये। इस सिद्धान्त की सत्यता की साक्षी संसार का वर्तमान विस्तृत इतिहास दे रहा है परन्तु अभागे भारत को इस सिद्धान्त की सत्यता को प्रकट करने का अवसर ही नहीं दिया गया।

विदेशी भाषा को शिक्षा के माध्यम बनाने का फल क्या हुआ? विदेशी भाषा की कठिनाइयों को हल करते २ जो न्यूनाधिक ज्ञान की राशि विद्यार्थी लोग करते हैं वह अधिकांश में उन के व्यवहारिक जीवन में काम नहीं आती। अपने ज्ञान से दूसरों को लाभ पहुंचाना तो दूर रहा, उन के साथ साधारण भाषा का लेन देन जो बात चीत द्वारा होता है यह भी आज कल के शिक्षणालयों में पढ़े लिखों के लिये असम्भव सा हो रहा है पढ़े लिखे और अनपढ़ों के बीच में एक ऐसी खाई खुद गई है जिस को पार करना असम्भव सा प्रतीत होता है।

यद्यपि साधारण अपठित जनों की दृष्टि में वर्तमान पाठ प्रणाली में से गुजरे हुए सदस्यों को मान प्रतिष्ठा बढ़ गई है परन्तु उनके कृत्रिम जीवन ने देश के निज साहित्य की ओर उपरामता का स्थान ले लिया है यदि यहीं तक ये दुष्परिणाम समाप्त हो जाते तो भी कुछ हानि न थी परन्तु जिस घोर भयङ्कर परिणाम की ओर मैं पाठकों तथा पाठिकाओं का ध्यान आकर्षित करना चाहती हूं वह परिणाम हमारी पठित समाज के गृहस्थ जीवन में प्रकट हो रहे हैं जिनकी ओर निर्देश मात्र से ही रोमाञ्च खड़े हो जाते हैं। वह यह है कि शिक्षा प्रणाली में ऐसे विषय परीक्षा को उद्देश्य रखकर के नियत किये गए कि जिनसे स्मरण शक्ति को कल की भान्ति चला २ कर उससे अनियमित अत्यधिक कार्य ग्रहण कर भावी के लिये शरीर सहित उसे शिथिलता के गढ़े में फेंक दिया गया जिसके कारण स्वस्थ जीवन से हाथ धोने पड़े और शारीरिक मानसिक और आत्मिक शक्तियां शिक्षा से सुशिक्षित हो सुदृढ़ होने, के बजाय ह्रासता के गृह में विराजमान होने लगीं। जिनके उदाहरण प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो रहे हैं लीडर नामक समाचार पत्र से कुछ दिन हुये समाचार आया था कि २४ जनवरी के दिन एक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नवशिक्षिता लड़की ने आत्म हत्या कर डाली। उसका संक्षिप्त ब्यौरा यूं है कि यह देवी हिन्दु युनीवर्सिटी की परीक्षा में बनारस में बी. ए. की परीक्षा में उत्तीर्णता उपलब्ध कर चुकी थी अब एम. ए. की परीक्षा के लिये तय्यारी कर रही थी। विद्योपार्जन करते २ इसका शरीर नितान्त निर्बल हो गया था। एक दिन अपने अध्ययन के कमरे में बैठी हुई मस्तिष्क में खलल हो जाने के कारण शरीर पर धारण किये हुए वस्त्रों को मट्टी के तैल से तर कर के दियासलाई लगा दी। बस फिर क्या था अग्नि शीघ्रता से प्रज्वलित हो उठी और शारीरिक अतीव दुर्बलता के कारण शीघ्रमेव भस्मसात हो गई।

नव शिक्षित भारतीयों की शारीरिक दुर्बलता का अधिक परिचय करना अभीष्ट हो तो उनके मासिक व्यय के उस भाग का अन्दाज़ा लगाईये जो वह वैद्यों तथा डाक्टरों की भेंट करते हैं। हमारे नवयुवक चलते फिरते हस्पताल हैं उनके गृह में पुस्तकों की अलमारियों के साथ २ औषधियों की अलमारियें भरी रखना आवश्यक होगया है। स्वास्थ्य की कमी के कारण उनके अन्दर साहस और धैर्य का दिन प्रतिदिन ह्रास होता चला जाता है परन्तु अत्यन्त शोचनीय विषय यह है कि हमारे अदूर दर्शी शिक्षित समुदाय ने इन दुष्परिणाओं से कोई चेतावनी नहीं ली। वे अपनी सरल कोमल मृदु प्रकृति कन्याओं को भी इसी पाठ प्रणाली से गुज़ार कर उनके रक्त और चर्म की आहुति देना निश्चय कर चुके हैं। याद रखिये युवक और युवतियां ही देश की वास्तविक सम्पत्ति है उन्हीं के स्वास्थ्य और बल पर जाति का गौरव और अभिमान आश्रित रहता है इस सम्पत्ति से विहीन देश रसातल को पहुंच जाता है स्वास्थ्य हीन बालक और बालिकाएं गृहस्थाश्रम में प्रवेश करके देश की शक्तियों का नाश नहीं करेंगे तो और क्या करेंगे ?

इस देश की कन्याओं में सन्तानोत्पत्ति तथा सन्तान संरक्षण की शक्ति दिन प्रतिदिन कम होती जा रही है इस देश की बाल मृत्यु की परिगणना के साथ यदि अन्य देशों की तुलना की जावे तो हम चकित रह जाते हैं इन्डियन रिव्यू (Indian Review) से निम्न उद्धरण उपस्थित करती हूं।

नाम देश		सन्		एक वर्ष से कम की आयु वाले बच्चों की मृत्यु प्रति सहस्र
नारवे	...	१९१२	...	६८
स्वीडन	...	१९११	...	७२
फ्रांस	...	१९१२	...	७८
डेनमार्क	...	१९१३	...	९४
इङ्गलैन्ड वेल्ज़		१९१६	...	९८
मदरास	...	१९०२से११तक		१९९
बङ्गाल	...	,,		२७०
बिहार	...	,,		३०४
पञ्जाब	...	,,		३०६
बम्बई	...	,,		३२०
संयुक्त प्रान्त		,,		३५२

उपरोक्त गणना में बच्चों की मृत्यु के साथ उनकी माताओं की मृत्यु नहीं दिखलाई गई। भारत वर्ष में बाल मृत्यु के मुख्य कारण यद्यपि इस समय और ही हैं तथापि हमें यहां आशा हो सकती थी कि युरोप तथा अमेरिका की न्याई स्त्री शिक्षा के प्रचार से यह भयानक अवस्था दूर होजावेगी। परन्तु भारतवर्ष में स्त्री शिक्षा की प्रणाली अस्वाभाविक होने से यह आशा भी दुराशा सिद्ध हुई है भारत में दरिद्रता की व्यापकता स्वास्थ्य के नियमों से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अनभिज्ञता बाल विवाहादि अनेक कुरीतियां बाल मृत्यु का कारण तो बन ही रही थीं, किन्तु प्रचलित स्त्री शिक्षा ने भी भावी माताओं में शारीरिक दुर्बलता उत्पन्न करके इस रोग को बढ़ाने ही में सहायता दी है। हम अगले लेख में यह दिखलाने का प्रयत्न करेंगे कि स्त्री और पुरुषों में शारीरिक और मानसिक भेदों को सन्मुख रखते हुए किस प्रकार की शिक्षा प्रणाली का अवलम्बन किया जावे जिस से स्त्रियों का स्त्रीत्व और पुरुषों का पुरुषत्व उन्नत हो। विशेषतया हम स्त्री शिक्षा के प्रेमियों का ध्यान इस ओर आकर्षित करना चाहते हैं कि जिस शिक्षा प्रणाली का प्रचार उन्होंने सुकुमारों में किया है उसी शिक्षा के चक्र में अपनी सुकुमारियों को लाने से पूर्व वह इस बात का पूरा निश्चय करलें कि यह शिक्षा उन के परिवारिक जीवन में कहां तक सहायता करेगी। शिक्षा का क्रियात्मक फल तभी सम्भव हो सकता है जब कि शिक्षा इस रीति नीति अनुसार दी जावे कि जिस भावी जीवन को उन्हों ने व्यतीत करना है उस जीवन में परम सहायक हो सके।

विचार प्रवाह

हम और हमारी आवश्यक्ता।

प्रायः यह देखा जाता है कि समय २ पर जब २ धर्म की ग्लानि होने पर दैव योग से कोई सुधारक उत्पन्न होकर तत्कालीन अधर्म, कुरीतियां और अवनति के हटाने के हेतु जो उपाय बतला जाता है उसके अनुयायी लोग पीछे से अवश्यमेव उसे उलट पुलट कर अपनी इच्छानुकूल परिवतन करके उसे या तो बिल्कुल नवीन बना लेते हैं या उसे ऐसा स्वरूप दे देते हैं कि निष्पक्ष आलोचना करने वाले यह नहीं निश्चय कर सक्ते कि यह वही बात है जो कि अमुक सुधारक ने बताई थी और इसी से नये २ मत मतान्तर बनते जाते हैं और सुधारक के लक्ष्य को जनता एक दम भूल जाती है। सुधारक बुधजी, सुधारक ईसामसीह और सुधारक मुहम्मद इन सब के साथ यही व्यवहार हुआ है। धर्म के आडम्बर की आड़ में स्वार्थियों ने इन महात्माओं के उन कथनों को जो उन्होंने वेदों और शास्त्रों से लेकर उस समय की जनता के सन्मुख अपनी बुद्धि अनुसार प्रगट करने की चेष्टा की थी ऐसा स्वरूप दे दिया है कि सामान्यतया जनसाधारण की दृष्टि में इन धर्मों की वैदिक सिद्धान्त के साथ कुछ अनुकूलता प्रगट ही नहीं होती। आज हमें खेद से कहना पड़ता है कि यही बात आर्य्य समाज के भाग्य में होगी यदि आर्य्यसमाजियों की चाल ढाल यही रही जो कुछ अब वर्त्तमान समय में है। ऋषी दयानन्दजी ने जो उच्च आदर्श जनता के सन्मुख रक्खा था वह आदर्श आडम्बरों की उज्वल, गगनभेदी समाधियों के नीचे दबाया जा रहा

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

है। वर्तमान समय में आर्य्य समाज में धार्मिक जीवन का ह्रास हो रहा है। शारीरिक शुद्धता, मानसिक पवित्रता और आत्मिक निर्मलता या तो अनावश्यक समझी जाती है या वकवृत्तियों द्वारा अभ्यासित है, वैदिक सिद्धान्तों को या तो समझने की शक्ति ही नहीं है या उनमें विचार स्वातन्त्र्य की लहर के कारण विश्वास ही नहीं रहता। लोग वैदिक शिक्षा की ओर से उदासीन हो बैठे हैं और आर्य्य सभ्यता के प्राणसम जो नैत्तिक कर्म हैं उन्हें वह आवश्यकीय नहीं समझते। अथवा वर्तमान देश की अवस्थानुकूल उन पर चलना असम्भव समझते हैं। ब्रह्मचर्य्य का आदर्श उनके लिये बहुत ऊंचा है गृहस्थ के कर्तव्य अत्यधिक हैं, वानप्रस्थियों की रीति पर चलना आत्महत्या है और सन्यासियों का धर्म निवाहना देश को हानिकारक है। यह जागृत विश्वास हमारे प्रत्येक आर्य्य धर्मावलम्बी पुरुष या स्त्री के हृदय में किसी न किसी रूप में अवश्य विराजमान रहता है इसी कारण वह अन्ध विश्वास से वैदिक आदर्श की ओर दृढ़ रहने की अपेक्षा हमेशा कुतर्क और विचार स्वातंत्र्य की जागरूक बुद्धि द्वारा कार्य्य करते [illegible] हते हैं। इनसे इनकी तो धर्म प्रेम, श्रद्धा भक्ति [illegible] ड़ ही जाती है पर विजातीयों और वैधर्मादियों को वैदिक धर्म के विषय में अनेकानेक भ्रमजनक कथाओं के गढ़ने को छुट्टी हो जाती है। अतः वैदिक धर्म का प्रचार एक प्रकार से प्राणिमात्र के उपकार का हेतु नहीं हो रहा है। इस त्रुटि को दूर करने के हेतु और भारतीय नव्यशिक्षित स्त्री पुरुषों के पाश्चात्यता से युक्त मस्तिष्कों को ऋषिदत्त वैदिक शिक्षा द्वारा सुपथ पर लाने के हेतु यह 'ज्योति' संसार क्षेत्र में पदार्पण कर रही है।

एक कारण और भी है जो इस [illegible] नवीन सुकुमारे भारतवासी [illegible] के कटाक्षेपों के बीच में पड़ने के लिये प्रबल उत्तेजना दे रहा है। वह यह है कि भारत में राजनीति और चालबाज़ी दोनों ऐसे अभिन्न हृदय मित्र हो गये हैं कि वह 'एक जान दो क़ालिब' समझे जाते हैं। मनुष्य का आचार चाहे कितना ही भ्रष्ट हो, असत्य, अन्याय, हिंसा, स्वार्थ प्रियता, मत्सरता और चापलूसी इत्यादि कितने ही दुर्गुण विद्यमान हों पर एक बार राजनैतिक गंगा में डुब्बी लगा लेने से और किसी राजनैतिक नेता रूपी पंडे के हाथ बनावटी ही भक्तिरूपी गाय का दान देने से लोककृत पापों से मुक्त हो जाता है और उसे इसी संसार में परलोक मिल जाता है। यह बात असत्य नहीं है इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यदि लोग चाहें तो मार्शल ला के समय से अब तक राजनीति क्षेत्र में अवतीर्ण कितने ही छोटे बड़े पुरुषों के निज के जीवन की ओर दृष्टिपात करने से लगा सक्ते हैं और साधारणतया जातीय महासभा के कतिपय भक्तों के हृदय को खोजने से सिद्ध कर सक्ते हैं। इन नीतिज्ञों के कौशल्य के कारण नीति धर्म से पृथक हो गई है और पृथक रहने के कारण दोनों दुख उठा रहे हैं। वर्त्तमान में केवल एक ही राजनैतिक नेता दृष्टिगोचर हो रहा है जिस ने नीति और धर्म की युगल जोड़ी रचकर आनन्द का विस्तार किया है। नीति धुरन्धर, धर्ममूर्ति महात्मा मोहनदास कर्मचन्द गान्धीजी महाराज। आर्य्य सभ्यता के जीवित जागृत भक्त और नीति क्षेत्र में महर्षि दयानन्द के धर्मानुकूल उत्तराधिकारी—अपने दृढ़ प्रयत्न से नीति को धर्मयुक्त करने की चेष्टा कर रहे हैं और उसे द्वेष, पारस्परिक अविश्वास, कुटिलता और कटाक्षेपों के बन्धन से मुक्त करके शुद्ध पवित्र और निर्मल बहा देने के उद्योग में रत हैं। अतः

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

'ज्योति' सत्याग्रह की न्याययुक्त व्याख्या द्वारा अहिंसा, सत्य, अभय, ब्रह्मचर्य्य और स्वदेशी के प्रचार में रत होगी।

तृतीय उद्देश्य 'ज्योति' के कार्य क्षेत्र में उतरने का एक और भी है और वह प्रबलतर कारण है। वह यह है कि शताब्दियों से सुषुप्ति में पड़ी हुई भारतीय स्त्री जाति को अब अवश्यमेव जगाना चाहिये और जगाकर भावी वृटिश-राज्यन्तर्गत-स्वराज्य के भारतीय संचालकों की आत्मा को प्रेरणा और उचित उत्तेजना देने के लिये उन्हें तैय्यार करना चाहिये। इस उद्देश्य की पूर्त्ति के हेतु कई वर्षों से कतिपय धर्मशीला देश प्रेमी स्त्रियों ने आर्य्य नारी सेवक-सभा (नियम इत्यादि ज्योति कार्य्यालय लायलपुर से प्राप्त हो सके हैं) स्थापित की है और उसके द्वारा स्त्रियों की मानसिक, सामाजिक, आत्मिक उन्नति की चेष्टा की जारही है। अतः 'ज्योति' उस सभा का मुख्य साधन बन कर उसके कार्य्य को विस्तृत करेगी और स्त्रियों द्वारा जो कुछ भी उत्तम कार्य्य हो रहे हैं वा होंगे उन्हें प्रगट करके उत्तेजना देती रहेगी। इसी लिये इसमें एक विभाग 'वनिता विनोद' नामक पृथक रक्खा गया है अतः वैदिक धर्म का प्रचार, धर्म युक्त राज नीति सार्वभौमिक प्रीति अन्तर्जातीय प्रेम का विस्तार तथा स्त्री जाति की उन्नति और पंजाब में आर्य्य-भाषा साहित्य की वृद्धि करना ही 'ज्योति' का मूल मन्त्र है और इसी लक्ष्य को रखकर यह संसार क्षेत्र में पदार्पण कर रही है. यदि जनता उसका यथोचित मान करके उनकी सेवा स्वीकार करेगी तो यह अपने को धन्य समझेगी।

'ज्योति' का प्रथमांक जेल में निकलना था किन्तु प्रेस की कठिनाइयां और मजदूरों के हड़तालों आदि कई कारणों से ब्लाक इत्यादि बनने में भी देर हुई अतः यह अब वैशाख से निकाली जारही है। पंजाब से पत्रिका निकालने में जो कठिनाइयां झेलनी पड़ी हैं उनका सहना तभी सफली भूत होसकेगा यदि पंजाब निवासी तथा अन्य प्रान्तीय नर और नारियां 'ज्योति' के ग्राहक शीघ्र बन कर न केवल 'ज्योति' को स्थायी बनाने में आर्थिक सहायता ही देंगे बल्कि उससे लाभ उठाकर इनने परिश्रम और धन को भी उपयोग में लावेंगे जिससे उत्साहित होकर भविष्य में ज्योति अधिक उन्नत और प्रभाव शालिनी बनकर देश के कल्याण में कुशल हो सकेगी।

मादक वस्तुओं का निषेध।

भारत में मादक वस्तुओं की मांग अधिक होने से सर्कार की आमदनी बहुत बढ़ गई है और दिन प्रति दिन बढ़ती जारही है। कहा जाता है कि आज से तीस वर्ष पूर्व मादक द्रव्यों का सेवन ५५ गुना कम था सन् १८९८ में मादक वस्तुओं से ५ करोड़ ७४ लाख रुपये की आमदनी थी किन्तु दश वर्ष के बाद वही १९०८ में ९ करोड़ ५८ लाख बन गई अर्थात् दूनी हुई और १९ वर्षों के बाद अर्थात् १९१७ में १४ करोड़ के लगभग हो गई अर्थात ८ करोड़ के ऊपर आमदनी बढ़ गई और अब इन दो वर्षों में और भी बढ़ी है। सर्कारी रिपोर्ट कहती है कि इससे ज्ञात होता है कि भारतीय कृषकों की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अवस्था दिन प्रति दिन अच्छी हो रही है यद्यपि मादक द्रव्य का उपयोग अच्छा नहीं है। प्रथमः तो यह बात ही अशुद्ध है कि मादक द्रव्य की विक्री भारतीय कृषकों की दशा सुधरने का सूचक है क्योंकि शराब की अधिक विक्री अधिक धन की सूचक नहीं वरन् धन के दुरुपयोग तथा जीवन की आवश्यक्ताओं की ओर से विमुख होकर दुराचार में व्यय का होना बतलाती है जो आलस्य प्रमाद और दरिद्रता का सूचक है, अतः इसके रोकने का उपाय शीघ्र होना चाहिये। नये शासन सुधार के अनुकूल यह विभाग भी भारतीय मंत्रिमण्डल के आधीन होगा। अतः यद्यपे यह विभाग एक प्रकार से आय का स्रोत है तथापि हम आशा करते हैं कि हमारे नेता लोग इस प्रकार प्रजा का सर्वनाशक मादक द्रव्य की विक्री से आय का लोभ न कर के इसको शीघ्र रोकने के लिये उपाय सोचेंगे। यहीं तक नहीं किन्तु हम समझते हैं कि प्रजा का यह अधिकार है कि परिमित स्वराज्य के आरम्भ होते ही अपने चुने हुये प्रतिनिधियों को बाधित करे कि वह मादक द्रव्यों के बनाने और उनके प्रयोग के विरुद्ध राजनियम पास करें। क्या यह शोक और लज्जा की बात न होगी कि अमेरिका में जहां १,९३,५०,००० गैलन शराब की प्रति वर्ष खपत थी वहां ऐसा राजनियम पास हो गया है किन्तु भारतवर्ष में जहां कि इससे बहुत कम मद्यादि का सेवन होता है और जहां कि लोकमत और धर्माचार्य्यों की सम्मति इस राक्षसी कुकर्म को घृणित समझती है अभी तक ऐसा न हो सका? स्मृतियों से पता लगता है कि प्राचीन काल में मादक द्रव्यों और विशेषकर मद्य का सेवन एक दण्डनीय दोष था। मनु भगवान् का कथन है कि शराबी को श्राद्ध, तर्पण में युक्त न करे (मनु अध्याय ३ श्लोक १५९) शराब बेचने वाले तथा पीने वाले का अन्न न खावे (मनु अध्याय ४ श्लोक २१६ तथा २०७) शराब पीने वाला महापातकी है (मनु अध्याय ९ श्लोक २३५) पुनः (श्लोक ९० अध्याय ११) में लिखते हैं कि शराबी को आग के समान गर्म शराब पिलाकर जला डालना चाहिये यह दण्ड है और अन्य प्रायश्चित भी कहे हुये हैं। अर्थात् शास्त्रकारों ने मद्य सेवन के विरुद्ध राजनियम जातिनियम तथा धार्मिक नियम बनाये थे जिससे इसका व्यवहार में लाना एक प्रकार से बिल्कुल असम्भव हो गया था। न केवल आर्य्य-शास्त्र ही इसका विरोध करते हैं किन्तु मुसलमान भाइयों का कुरान मजीद भी मद्य के सर्वथा विरुद्ध है बाब ५ में एक आयत है जिसका अर्थ है कि "हे सच्चे विश्वासी! निश्चय जानो कि शराब, जुआ..... .....ये शैतान के घृणायुक्त कार्य्य हैं अतः यदि समृद्धि चाहते हो तो इनसे दूर रहो" पुनः दूसरे आयत में हम पढ़ते हैं—हजरत मुहम्मद कहते हैं कि शराब से परस्पर में द्वेष और घृणा उत्पन्न होते हैं इस हेतु इनसे दूर ही रहना चाहिये॥

इसी प्रकार भारतीय अन्यान्य मतों की पुस्तकों में भी मद्य सेवन का प्रबल निषेध है। अतः ऐसा राज नियम तो भारतवर्ष में कभी का पास हो जाना चाहिये था, किन्तु पहले यह शंका की जाती थी कि एक विदेशी प्रभुमण्डल के लिये समाज संशोधन सम्बन्धी राज नियम चलाना संकट से खाली नहीं। अब जब कि मादक द्रव्यों का विभाग स्वराज्य के क्षेत्र में आ गया है इस आशंका का न कोई मूल्य रहता है न महत्व। आर्य्य समाजों, सनातनधर्म सभाओं इस्लाम की अंजमनों और ईसाई पादरियों को सम्मिलित प्रयत्न करना चाहिये कि नई कौंसलों में कोई भी प्रतिनिधि प्रजा की ओर से न भेजा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जाय जिससे यह प्रतिज्ञा न ले ली जाय कि वह ऐसे राज नियमों के पास होने में सहायक होगा। भारतवर्ष धर्म-प्रधान देश है, धार्मिक नेताओं का यहां बड़ा मान्य है, और उनके परामर्शों के लिये भारतीयों के हृदय में बड़ी श्रद्धा है इसलिये लोकमत को जितना धर्म-सभायें प्रभावित कर सक्ती हैं उतना राजनैतिक संस्थायें नहीं। एक और बात भी है, हमारी वर्तमान राजनैतिक संस्थाओं से यह हो भी नहीं सक्ता क्योंकि जिस कांग्रेस के कई प्रधान तक मद्य सेवी हुये हैं उसके लिये दिल से इस स्वर्गीय प्रयत्न में योग देना असम्भव है। ईसाइयों की एक कान्फ्रेंस ने यह प्रस्ताव स्वीकार किया है कि Total Prohibition Act (मद्य का सेवन नितान्त वर्जित) को राज नियम पद्धति का भाग बनाने के लिये बलयुक्त आन्दोलन करना चाहिये। निस्सन्देह उनका यह कार्य्य सराहनीय है किन्तु हमें क्षमा किया जावे यदि हम यह कहें कि ईसाई पादरियों का विदेशी सभ्यता, विदेशी रहन सहन, विदेशी जीवन-पद्धति से इतना घनिष्ठ सम्बन्ध है कि उनके नेतृत्व में साधारण भारतीय प्रजा को कोई कार्य्य प्रारम्भ करने की आशा दुराशा मात्र है। यह कार्य्य सफलता से यदि किसी धार्मिक संस्था के द्वारा हो सक्ता है तो वह आर्य्यसमाज और केवल आर्य्य समाज है। आर्य्य समाज इस कार्य्य को अपने हाथ में ले और शेष धार्मिक सभाओं को सहयोग के लिये निमंत्रित करे तो इसमें सफलता अवश्य होगी। किन्तु यह कार्य्य शीघ्र करने का है क्योंकि सितम्बर में नई कौन्सलों का चुनाव होने वाला है।

पश्चिमी देशों में सामाजिक संशोधन सम्बन्धी राज नियम पास कराने में नारियों ने सदा बहुत भाग लिया है। भारतवर्ष के नारी-मण्डल म भी जागृति की झलक दिखाई देती है, इस जागृति को कोई उत्पादकरूप पकड़ना चाहिये। भारत की मातायें बहिनें वा भार्य्यायें यदि हिम्मत करें तो क्या कुछ नहीं कर सक्तीं? स्त्री शक्ति का अवतार है यदि देवियों का बल लगेगा और माताओं का आशीर्वाद साथ होगा तो भारत के इस नये युग का आरम्भ बड़े सुन्दर शुभ लक्षणों से युक्त होगा।

अन्त में हम फिर बलपूर्वक अपनी सम्मति को दुहराते हैं कि धार्मिक संस्थायें तथा स्त्री-सभायें सम्मिलित प्रयत्न अभी से करना आरम्भ कर दें और यदि किसी व्यक्ति की आवश्यक्ता हो जो कि एक मात्र नेता का काम दे सके जो कि इस आन्दोलन का (brain and heart) मस्तिष्क और हृदय हो, तो सारे देश की दृष्टि महात्मा गान्धी की ओर जाती है जिन का अपना कथन यह है कि वह राजनीति को धर्मयुक्त करने के लिये ही राजनैतिक क्षेत्र में कूदे हैं॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

खिलाफ़त का प्रश्न।

मुसलमान जगत् में बड़ा हलचल है क्योंकि मित्र दल का यह विचार प्रतीत होता है कि टर्की की राजनैतिक शक्ति को कम किया जावे और कान्स्टैन्टीनोपल में सुल्तान का राज्य नाममात्र का रहे। साथ ही यह भी निश्चित प्रतीत होता है कि मैसोपोटोमिया और अरब स्थान जहां हमारे मुसलमान भाइयों के तीर्थ स्थान हैं टर्की के सुलतान के पास न रहेंगे। टर्की का सुल्तान मुसलमानों का खलीफ़ा है। मुसलमान जगत् में उसकी वही स्थिति है जो किसी समय पोप की क्रश्चियन जगत् में थी। मुसलमानी मत के अनुसार तीर्थ स्थानों की रक्षा करना खलीफ़ा का उच्च कर्त्तव्य और बहुमूल्य अधिकार है, इसलिए सुल्तान को इन स्थानों से वञ्चित रखना मुसलमानों के धार्मिक भावों को चोट लगाना है। जिस समय यह विश्व-व्यापी युद्ध आरम्भ हुआ था उस समय स्पष्ट रूप से मुसलमानों को विश्वास दिलाया गया था कि युद्ध की समाप्ति पर उनके खलीफ़ा के अधिकारों में किसी प्रकार की न्यूनता न की जावेगी बृटिश सचिवों की प्रतिज्ञाओं को अकाट्य समझ कर भारतीय मुसलमानों ने अपने खलीफा की सेना के साथ युद्ध किया और मित्र दल की अन्तिम विजय में उनका भाग ब्रिटिश प्रजा के और किसी समूह से कम नहीं है उनकी राजभक्ति बड़े बड़े समय में तराजू में तौली गई और पूरी निकली। शोक है कि अब विजय के समय में उन प्रतिज्ञाओं के अर्थ बदलने का प्रयत्न किया जा रहा है। प्रधान मन्त्री महोदय ने खिलाफ़त डेपूटेशन को लण्डन में कहा कि सर्व जातिओं को आत्म निर्णय (Self determination) का अधिकार है फिर क्यों न अरब स्थान के लोग अपना राजा चुनें? इसके उत्तर में दो बातें कही जा सक्ती हैं पहली तो यह है कि क्या प्रधान सचिव लायड जार्ज अपनी छाती पर हाथ रखकर कह सक्ते हैं कि अरब का राजा स्वतन्त्र है? क्या उसकी स्थिति मिश्र के सुलतान से किसी अंश में ऊंची है? दूसरी बात यह है कि यदि कैनेडा और न्यूजीलैंड ब्रिटिश साम्राज्य में रहते हुए स्वतन्त्र देशों के अधिकार रख सक्ते हैं तो फिर अरब स्थान और मैसोपोटोमिया भी तुरकी साम्राज्य में रहते हुए आत्म-निर्णय की बरकतों से क्यों लाभ नहीं उठा सक्ते? यदि हमारी सरकार ऐसा कर ले तो मुसलमान भी सन्तुष्ट हो जावें और इन देशों की प्रजा की स्वाभाविक लालसा भी पूरी हो जावे। फिर कहा जाता है कि तुर्कों के साथ इसलिये कुव्यवहार करना चाहिये कि उन्होंने आरमीनिया के ईसाइयों का वध किया है। भारतीय प्रजा के खूनियों के साथ कोई सहानुभूति नहीं हो सक्ती किन्तु जैसाकि मिस्टर मुहम्मदअली ने लण्डन में कहा था इस विषय में अनुसन्धान होना चाहिये और पता लगाना चाहिये कि तुर्कों का कहां तक दोष है। क्या आरमीनिया के लोग ऐसे ही निर्दोषी हैं जैसे कि वह प्रतीत होते हैं। सर चार्ल्स इलियट अपनी पुस्तक "टर्की इन यूरोप" में १८९४ के वध के विषय में लिखते हैं:—

"लेकिन यदि हम यह मान लें जैसाकि बहुधा लोग करते हैं कि आरमिनियन लोगों का वध करने के लिये जान बूझकर आज्ञा दी गई थी और संघ बनाकर यह कार्य्य किया गया

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

था तो हम कदाचित् अन्याय ही करेंगे। तुर्कों को भय उत्पन्न हुआ था क्योंके उन्हें विश्वास बैठ गया था कि आरमिनियन लोग जो उनके मध्य में रहते थे, जिन्हें सरकार ने कर्मचारी नियत किया था और जिन्हें जनसाधारण ने अपने घरों में नौकर रक्खा वे ही तुर्की साम्राज्य के विरुद्ध षडयन्त्र रच रहे थे और प्रत्येक तुर्क की हत्या करने पर उद्यत थे। ये नीच षडयन्त्र कम से कम योरप की कुछ शक्तियों की रक्षा में वृद्धि पा रहे थे जिन्होंने (पोर्ट) तुर्की सरकार को आरमीनियन लोगों को एक विशेष अधिकारी जाति मानने के लिये प्रेरणा की और तुर्की लोगों के विचार में उन्होंने आरमिनियन लोगों के विद्रोही भाव को दृढ़ और उत्तेजित किया। कदाचित् यह बात तब अच्छी तरह समझ में आ सक्ती है यदि हम यह कल्पना करने का यत्न करें कि यदि भारतीय-अंग्रेज यह समझ बैठें कि भारतीय लोग रूस के षडयन्त्र के फन्दे में पड़कर ग़दर के घोर अत्याचारों को पुनः उद्धरण करने का यत्न कर रहे हैं तो उनके भाव क्या होंगे ?"

ईलियट महाशय को कोई भी तुर्कों का पक्ष पाती नहीं कह सक्ता। यदि उस समय आरमिनियन लोगों के विषय में ऐसा सन्देह हो सक्ता था तो आज तो इनके मस्तिष्क की ईश्वर ही जानता है क्या अवस्था होगी ? विजय के मद से उन्मत्त हुए ईसाई आज किस प्रकार उनकी पीठ न ठोकते होंगे ? इसलिए अनुसन्धान के बिना तुर्कों पर दोषारोपण युक्ति-युक्त नहीं। हम सरकार को मन्त्रणा देते हैं कि अपनी मुसल्मान प्रजा के गहरे असन्तोष को उपेक्षा की दृष्टि से न देखें विशेषतया जब कि आठ करोड़ मुसल्मानों के साथ २२ करोड़ हिन्दू भी हैं और सारे आन्दोलन का नेतृत्व एक तपस्वी सत्याग्रही गान्धी कर रहा हो।

पंजाब प्रान्तीय सम्मेलन जलन्धर।

ईस्टर की छुट्टियों में जलन्धर नगर में प्रान्तीय राजनैतिक सम्मेलन बड़े समारोह और बड़ी सफलता से हुआ। प्रतिनिधियों की संख्या पर्य्याप्त थी और सारी कार्य्यवाही में उत्साह के चिन्ह दृष्टिगोचर होते थे। सम्मेलन के प्रधान पंजाब के सुप्रसिद्ध वीरनेता लाला हरकिशनलाल थे। अपनी वक्तृता में प्रधान महाशय ने सर माइकल ओड्वायर और उनके साथियों की ओर से जो अत्याचार मार्शल ला के दिनों में और उस से पूर्व उन पर हुये उनका हृदय विदारक कच्चा चिट्ठा कह सुनाया। बहुत से प्रस्ताव स्वीकार हुये जो प्रायः उसी शैली पर थे जिस शैली पर अमृतसर कांग्रेस के प्रस्ताव थे। गवर्नमेन्ट और विशेषकर हमारे वाइसराय महोदय प्रजा का विश्वास जिस सीमा तक खो बैठे हैं उसका अन्दाज़ा इस बात से लग सक्ता है कि जिस समय मार्शल ला के दुखियों के छोड़ने का प्रस्ताव उपस्थित किया गया और उसमें पंजाब के सर्वप्रिय और दयाशील लाट सर एडवर्ड मैक्लगन का धन्यवाद किया गया तो माननीय लाला लाजपतरायजी ने यह विचार प्रगट किया कि लार्ड हेम्सफोर्ड का भी धन्य-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वाद करना चाहिये क्योंकि उदारनीति का अन्तिम उत्तर दातृत्व उन्हीं पर है, किन्तु पंडित रामभजदत्तजी के प्रतिरोध करने पर लालाजी का संशोधन गिर गया। लाला लाजपतरायजी की पंजाब में जो स्थिति है और देश भर में उनके लिये जो श्रद्धा और प्रेम का भाव है वह किसी से छिपा नहीं है। लार्ड चेम्सफोर्ड इतने बदनाम हो चुके हैं कि जब ऐसा सर्वप्रिय और सत्कृत नेता भी उनके पक्ष में शब्द उठाता है तो केवल सर्वसाधारण ही नहीं किन्तु शिक्षित-वर्ग भी उनकी उपेक्षा करते हैं। इससे अधिक शोकजनक अवस्था क्या हो सक्ती है कि देश के मुख्य शासक और राजराजेश्वर के प्रतिनिधि प्रजा के हृदयों को अपने आप से पृथक् कर लें। हम तो वाइसराय महोदय को यही मंत्रणा देंगे कि वह बृटिश साम्राज्य के हित से प्रेरित होकर अपने व्यक्तिगत मान अपमान का ध्यान न करके स्वदेश को शीघ्र ही प्रस्थान कर जांय। यही सब से बड़ा आत्म त्याग है जो वह बृटिश साम्राज्य और भारत के लिये कर सक्ते हैं। लार्ड चेम्सफोर्ड के भक्त कहते हैं और हमारा अपना भी यही विचार है कि वह दिल के अच्छे आदमी हैं; जो उनसे भूलें हुई हैं वह अविचार और प्रमाद का परिणाम हैं नकि हृदय की कलुषिता का। यदि हमारा विचार ठीक हो तो ऐसे आत्मत्याग की उनसे आशा रखना उचित ही है। इस आत्मत्याग का एक यह भी आवश्यक परिणाम होगा कि लोगों की दृष्टि में उन का खोया हुआ मान्य फिर किसी अंश में स्थापित हो जायगा।

कांग्रेस उपसभा की रिपोर्ट।

हमारे पाठकों को ज्ञात ही है कि पंजाब में जो मार्शल ला के दिनों में अत्याचार हुये थे उन अत्याचारों के विषय में अनुसन्धान करने के लिये सर्कार ने एक कमेटी बिठलाई थी जिस कमेटी के प्रधान लार्ड हन्टर थे इसलिये उस का नाम हन्टर कमेटी पड़ गया था। हन्टर कमेटी जिन दिनों में लाहौर में थी उन दिनों में सर्कार ने नेताओं को थोड़ी देर के लिये स्वतन्त्र करके हन्टर कमेटी के सन्मुख साक्षी देने में सुगमतायें उपस्थित करने से इनकार कर दिया था। उस अवस्था में कांग्रेस कमेटी ने यह निश्चय किया कि जब सर्कार साधारण सुगमतायें भी उपस्थित नहीं करती तो फिर हन्टर कमेटी के सन्मुख साक्षी देना निरर्थक है। कांग्रेस कमेटी ने अपनी उपसभा नियत की जिसके सभासद महात्मा गांधी, जस्टिस तैयबजी पंडित मदनमोहन मालवीय, मिस्टर सी. आर. दास थे और मन्त्री मिस्टर सन्तानम बैरिस्टर थे।

इस उपसभा ने बड़े श्रम और बड़े परिश्रम से अनुसन्धान किया। जिस उपसभा के मुख्य सभासद महात्मा गांधी हों उसके अनुसन्धान के विषय में यह कहना तो अनावश्यक ही होगा कि वह निष्पक्षता से किया गया। उपसभा की रिपोर्ट छप गई है। रिपोर्ट की लेखशैली से निष्पक्षपात गम्भीरता और शान्तता टपकती है। उपसभा की सम्मति में मार्शल ला की कोई आवश्यक्ता न थी; अत्याचार प्रजा पर बहुत हुये और उनका आरम्भ सर्कारी कर्मचारियों की ओर से हुआ। उपसभा ने सिफ़ारिश की है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कि जनरल डायर को जिन्होंने जलयांवाला बाग़ में निरपराधियों का वध किया था पद च्युत किया जावे; सर माइकल ओड्वायर को जो पंजाब के अत्याचारी लाट थे और जिन्होंने जनरल डायर को पीठ ठोंकी थी कोई उत्तर दातृत्व का काम न दिया जावे; महाशय श्रीराम और म० सुल्तान अहमद को जिनके विरुद्ध अत्याचारों की घोर शिकायतें हैं पद च्युत किया जावे; यही सिफ़ारिश महाशय ओब्रायन, और कौसवर्थ स्मिथ के विषय में है जिसके अत्याचारों की चर्चा पंजाब भर में फैली हुई है। लार्ड चेम्सफोर्ड वाइसराय—जिन्होंने विना किसी अन्वेषणा के सर माइकल ओड्वायर को पूरे अधिकार दिये थे और प्रजा की फ़र्याद को बिल्कुल न सुना था—को लौटाने की सिफ़ारिश भी की है। इस रिपोर्ट में जातीय द्वेष का चिन्हमात्र नहीं है।

कइयों की सम्मति है कि अत्याचारियों को किसी कड़े दण्ड देने की सिफ़ारिश न करने में उपसभा ने अनुचित कोमलता से कार्य्य किया है। ऐसे समालाचक कहत हैं कि अत्याचारियों पर अभियोग चलाना चाहिये और उनको कठोर दण्ड दिलवाना चाहिये ताकि आगे को किसी को ऐसे अनहोने कार्य्य करने का दुस्साहस ही न हो। हम समझते हैं कि उदारता और क्षमा किसी भी व्यक्ति या जाति के उत्थान के ही कारण होते हैं और बदले का भाव जातियों को अनुदार ही बनाता है उदार नहीं। उदारता की ओर भूल इतनी बुरी नहीं जितनी अनुदारता की ओर भूल है। हमारा यह दृढ़ विश्वास है कि इस उदारता का मूल्य सच्चे अंग्रज़ अवश्य हो परखेंगे।

कर्मचारी दल ने तो मार्शल ला के दिनों में यह सिद्ध कर दिया कि वह सर्वथा विश्वास के अयोग्य हैं और भारत के शासन का भार उन के कन्धों पर डालना भारतीयों पर अन्याय है अतः आन्दोलन करना चाहिये कि पार्लियामेन्ट से आधिकार-पत्र मिले जिसके अनुसार मार्शल ला विना भारतीय व्यवस्थापक सभा की स्वीकृति के चलाया न जा सके। डायर, ओड्वायर इत्यादि तो साधारणतया पतित साधन हैं वास्तविक दोश तो प्रणाली का है। शासन-प्रणाली ऐसी होनी चाहिये कि ऐसे महाशय या तो सुधर जावें या भाग जावें॥

शासन सुधार में मंत्रिगण के कर्त्तव्य।

अब मान्टेग्यू चेम्सफोर्ड रिफार्म ऐक्ट बन गया है इस नियम के अनुकूल भारतवष को स्वराज्य की राह पर चलन का अवसर प्राप्त हुआ है और यदि जनता शुद्धभाव से वतोव करे तो थोड़े ही काल में वास्तविक स्वराज्य का प्रचार होकर मुख्य शासन प्रणाली में भी स्वराज्य का प्रादुर्भाव दिखलाई देने लगगा। किन्तु दूरदर्शिता और बुद्धिमत्ता द्वारा थोड़ी देर के लिये अन्य अधिकारों के लिये आन्दोलन त्याग करके हमें चाहिये कि अब शान्ति से अपने घर को ठीक करें और जो कुछ आधिकार हमें मिल हैं उन्हें कार्य्य में परिणात करने के लिये ऐसे उपाय और विधियें सोचें जिनसे हमारी यह आधिकार प्राप्ति सफल हो और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारे भविष्य अधिकारों की भी प्राप्ति हो सके। स्वराज्य संस्थाओं को चलाने के लिये यह परम आवश्यक है कि जो नीति धुरन्धर नेतागण हों उनकी नीति निर्माणकर्त्री, उनकी बुद्धि उत्पादक, उनका ध्यान करुणायुक्त हो, और वह आत्मवत् सर्व जीवों में व्यवहार करें जिससे जनता को अनुरक्त करके प्रजा के विचारों को ठीक मार्ग पर लाया जा सके। यह कार्य्य बड़े महत्व का है और हमारे नवीन मंत्रिगणों के सन्मुख बड़ी कठिन समस्या उपस्थित हैं। उन्हें शिक्षा, स्वास्थ रक्षा इत्यादि जातीय जीवन सम्बन्धी विभाग दिये गये हैं जिन में सफलता और उन्नति प्राप्त करने के लिये करोड़ों रुपयों की तथा उन की प्राप्ति के उपाय निकालने की आवश्यक्ता होगी। यदि शिक्षा का प्रचार सर्वत्र करना है तो पाठशालायें और महाविद्यालय बनाने के लिये द्रव्य होना चाहिये। सेना, सामुद्रिक सेना, पुलीस सिविल सर्विस इत्यादि विभागों में व्यय की काट छांट मंत्रिगण के अधिकार से बाहर है इसलिये यदि देश को भारी नूतन करों से बचाना है तो उन्हें हाथ दबाकर व्यय करना पड़ेगा ही। इसलिये क्षमता के नाम पर जो लाखों का व्यय आज कल हो रहा है उसे वहिष्कृत करना होगा स्कूलों तथा इनके बहुमूल्य विदेशी साज सामान पर जो द्रव्य लगता है उसे रोकना पड़ेगा। दूसरे अक्षर-ज्ञान के प्रचार की हानि लाभ पर भी विचार करना होगा, क्योंकि वर्मा इत्यादि देशों में जहां अक्षर ज्ञान अधिक है पाप भी बहुत है, अतः अक्षर-ज्ञान सुखदायी होने की अपेक्षा पाप की ओर लेजा रहा है और भारतीय जाति जीवन को नीचे गिराने का मार्ग बन रहा है। इसको रोकने के लिये शिल्प व्यापार सम्बन्धी तथा वैज्ञानिक शिक्षा के साथ २ धार्मिक शिक्षा और चरित्र-गठन का प्रचार आवश्यक है जिसके द्वारा जनता के आचार शुद्ध, स्वभाव सरल और जीवन धार्मिक बनें। इसके लिये द्रव्य निकालना पड़ेगा।

दूसरे शुद्धता के विभाग की ओर चलिये यह भी इन्फ्लुयेन्ज़ा प्लेग महामारी से पीड़ित वर्तमान भारत की एक बड़ी भारी आवश्यक्ता है। यहां पर मृत्यु संख्या बड़ी भयंकर है और वह केवल शुद्धता की उन्नति से ही रोकी जा सक्ती है। पर यह भी व्यय की ही अपेक्षा करता है। अब तक हमारे नेतागण करों के घटाने के लिये मुक्त कण्ठ से पुकार मचाते रहे हैं किन्तु शासन सुधार को कृत कार्य्यता नहीं होगी यदि नये मंत्रिगण करों को न बढ़ावेंगे। परन्तु भारत सब देशों से निर्धन है, एक ओर यहां की जनता नये भारी करों का भार नहीं उठा सक्ती दूसरी ओर यदि उनकी दशा सुधारनी ही है तो धन अवश्य होना चाहिये और अब इसके लिये धन लाना प्रजा के प्रतिनिधियों का ही कार्य्य होगा। नवीन कर के लगाने से प्रतिनिधि प्रजा के अप्रिय बनेंगे और प्रजा रंजन ही अब तक हमारे अधिकांश नेताओं का जीवनाधार रहा है। कार्य्य भार पड़ने पर वह अप्रियता के झोंके को सह सकेंगे यह असम्भव है। इसलिये अब समय आया है कि नेतागण और प्रजा दोनों सम्भल कर बैठें और अपने २ कर्तव्य पर विचार दृष्टि से अनुसन्धान करें।

हमारे शास्त्रकार बतलाते हैं कि सचिव लोग स्वदेश में उत्पन्न हुये वेदादि शास्त्रों के ज्ञाता शूरवीर, जिनका लक्ष्य अर्थात् विचार निष्फल न हो वह कुलीन और सुपरीक्षित हों। उनकी आत्मा पवित्र, बुद्धि निर्मल और निश्चित हो और वह पदार्थों के संग्रह करने में अति चतुर हों वह सनातन दण्ड नीति, न्याय विद्या में चतुर होकर लोक मत को प्रस्तुत कर सकें, वह जितेन्द्रिय हों। क्योंकि जो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपनी इन्द्रियों मन, प्राण, और शरीर प्रजा हैं इसको न जीत सके तो बाहर की प्रजा को वश में स्थापन करने को समर्थ कभी नहीं होसक्ता। दृढ़ उत्साही होकर दश कामज और क्रोधज दुर्गुणों को स्वयं छोड़े हुये हों और अन्यों को उन से छुड़ा सकें। दश कामज दुर्गुणों में मृगया, अक्ष खेलना, दिन में सोना, दूसरे की निन्दा करना, स्त्रियों का अति संग, मादक द्रव्य का सेवन, गाना बजाना नाच इत्यादि तथा इधर उधर व्यर्थ घूमते रहना है और क्रोधज व्यसनों में चुगली करना, वलात्कार दुराचार करना, द्रोह रखना इर्षा, दूसरे की बड़ाई वा उन्नति देखकर जला करना, दोषों में गुण गुणों में दोषारोपण करना, अधर्म युक्त बुरे कामों में धनादि व्यय करना, कठोर वचन बोलना, बिना अपराध कड़ा वचन व विशेष दण्ड देना है और इन सब दुर्व्यसनों का मूल लोभ है। शास्त्रकार कहते हैं कि मनुष्य का इन दुष्ट व्यसनों में फंसने से मर जाना अच्छा है।

आज हम देखते हैं कि हमारे राष्ट्रीय जीवन में यह सब दुर्गुण प्रायः वर्त्तमान हैं और इनके हटाने की आवश्यक्ता ही नहीं सोची गई तो प्रयत्न कहां से होता ? किन्तु अब अवस्थायें भिन्न हैं और नई कौसलों में जाने वाले प्रतिनिधियों को इन शास्त्रोक्त कर्तव्यों पर ध्यान देना चाहिये और यतः लोभ से ही इनका प्रादुर्भाव है अतः इनको तप से, निर्धनता से, इन्द्रिय संयम से ब्राह्मणत्व का जीवन व्यतीत करने की चेष्टा करनी चाहिये। ऐसा करने से जहां राष्ट्रीय जीवन में पवित्रता, उदारता और सहनशीलता आवेगी वहां लोभ को जीतने से आर्थिक प्रश्न भी हट जावेगा क्योंकि वर्त्तमान समय में उच्च अधिकारियों के वेतन में तथा उनके आडम्बर में जो व्यय होता है वह अन्यत्र उपयोगी कार्यों के लिये बच जायगा और प्रजा पर नये कर लगाने की आवश्यक्ता में कुछ कमी हो जावेगी। इसके अतिरिक्त प्रजा का रंजन तथा उनकी श्रद्धा भक्ति भी इन अधिकारियों के लिये दिन प्रति दिन बढ़ेगी यही एक साधन है जो हमारे नये मंत्रियों की कठिनाइयों को दूर कर शासन सुधार को सुफल कर सक्ता है अन्यथा यह अधिकार व्यर्थ होंगे।

प्रजा के कर्तव्य।

यह तो हुई अधिकारियों की आलोचना अब प्रजा पर भी एक संक्षेप दृष्टिपात कीजिये। यद्यपि हमें निर्वाचन का अधिकार मिल गया है किन्तु यह भय है कि ग्रामों में प्रजा स्वार्थ तत्पर जिमीदारों से—जो स्वयं ही अधिकारियों के अगूंठे के नीचे दबे हुये हैं—पीड़ित ही रहती हैं उन्हें अपने कर्तव्यों का कुछ ज्ञान नहीं अतः उन्हें देश के प्रश्नों तथा उसकी आवश्यक्ता का कुछ परिज्ञान नहीं होता। जो कोई स्वार्थी धूर्त्त उन्हें छल बल, लोभ लालच से अपनी ओर खींच ले वह अंधाधुंध उन्हीं के पीछे चल पड़ती हैं। शिक्षा न होने से अपना हित अनहित नहीं समझती इस लिये कौन नेता यथार्थ वक्ता है कौन नहीं, किस की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA.

बात का अनुमोदन करना चाहिये किसकी नहीं, यह अधिकांश लोग नहीं समझते अतः समय २ पर जब २ कोई आन्दोलन हो जावे तो मनोवेग से आवृत होकर बिना लक्ष्य के चल पड़ते हैं और स्वयं दुख उठाते ही हैं अन्यों को भी साथ डुबाते हैं। इसलिये परम आवश्यक्ता है कि यदि निर्वाचन का कार्य्य विडम्बना न बनकर यथार्थ रूप से उपकारी बनाना है तो धार्मिक समाज-सुधारकों तथा राजनैतिक मिश्नरियों के झुण्ड के झुण्ड तैय्यार किय जावें जो ग्राम २ में भ्रमण करके परोपकारार्थ त्याग भाव से जनता की भलाई के लिये इस क्षेत्र में कार्य्य करते रहें। इस प्रकार ही जनसाधारण किसी कार्य्य में सहाय देने योग्य बनकर देश की अवस्था के बदलने में भाग ले सक्ता है और रिफार्म स्कीम द्वारा प्राप्त अधिकारों को पूर्णतया फलदायक बनाने में नेता और जनता दोनों ही संयुक्त हो सक्ते हैं। अन्यथा जनता के सहाय के बिना नेतागण कुछ अधिक लाभ की आशा न करें और नेताओं के सुधार के बिना जनता अपने लाभ की आशा न लगावे। क्या हम आशा कर सक्ते हैं कि नेता और जनता दोनों इस पर ध्यान देंगे और समयानुकूल वर्त्तमान स्थिति से ऊपर उठने का सर्वथा प्रयत्न करेंगे ?

रेलवे हड़ताल।

आज कल हड़तालों का युग है। श्रमी लोग अब व्यवसाइयों से पदाक्रान्त होना सहन नहीं कर सक्ते इग्लैन्ड में ठीक युद्ध के समय में जब कि जातीय जीवन संकट में था रेल वालों ने हड़ताल कर दी थी। वहां पर प्रधान मंत्री महाशय लायड जार्ज अपनी दक्षता और बुद्धिमत्ता से ऐसे आर्थिक उपद्रवों को शान्त करते रहते हैं इसका कारण यह है कि वहां रेलवे त्यादि निज-सम्पत्ति हैं राष्ट्र-सम्पत्ति नहीं। भारतवर्ष में रेलवे न तो भारतवासियों की निज सम्पत्ति हैं न राष्ट्र-सम्पत्ति। उन पर प्रभुत्व या तो विदेशी कम्पनियों का है या एक शासक-मण्डल का है जिसको सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय नहीं कह सक्ते। इसीलिये यहां पर रेलवे हड़ताल भी दुर्भाग्य से एक प्रकार का राजनैतिक प्रश्न बन जाता है और शासक-मण्डल की निष्पक्षता पर श्रमियों को सन्देह रहता है। यह अवस्था तो सम्पूर्ण स्वराज्य मिलने पर ही बदलेगी। परन्तु इस समय सौभाग्य वश [illegible] लाट सर एडवर्ड मैक्लेगन हैं जिनको परमात्मा ने उदार और करूणपूर्ण हृदय प्रदान किया है। इन्डियन एसोसियेशन के प्रतिनिधि लाला लाजपतराय की प्रार्थना पर उन्होंने इस झगड़े को निपटाने की प्रतिज्ञा की है।

१६००० हड़तालिये हैं जिनमें वर्कशाप के कुली, क्लर्क, गार्ड टिकट बाबू आदि सभी सम्मिलित हैं इनके नेता एक बड़े ही विचार पूर्ण युरोपियन महाशय मिलर हैं जिन्होंने शान्ति भंग नहीं होने दी। हम आशा करते हैं कि हड़ताल शीघ्र बन्द होगी, रेलों के रुक जाने से प्रजा को जो कष्ट हैं वह दूर होंगे और लाट साहब नार्थ वेस्टर्न रेलवे के एजेंट को यह समझा देंगे कि आर्थिक क्षेत्र में एक सत्ता-राज्य का स्थान सह-उद्योग ने ले लिया है जो कर्म चारी इसको नहीं समझता वह आपत्ति का आह्वान करता है। यह काल बड़ा संकट पूर्ण है अतः सावधानता से पग उठाना चाहिये।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ष १ ज्येष्ठ १९७७ संख्या २
जून १९२०

ज्योति

मासिक पत्रिका

सम्पादिका—
विद्यावती सेठ बी. ए.

वार्षिक मूल्य ४॥) स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४) प्रति संख्या ॥)
विदेश का मूल्य ६)

बाम्बे मैशीन प्रेस लाहौर में मैनेजर पंडित हरभगवान के प्रबन्ध से
मुद्रित हुआ और बाबू मदनलाल ने प्रकाशित किया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची ।

विषय	पृष्ठ
१-कविता—[लेखक-श्रीयुत् पं. गयाप्रसाद	७१
२-पञ्जाब और खांडका व्यवसाय—[लेखक श्रीयुत् डा. रामजी नरायण डी. यस. सी.	७२
३-पृथ्वी नाटक—[लेखक-श्रीयुत् प्रिंसिपल कुंवरसेन एम. ए.	७८
४-पर्वत परिचय—[लेखक-श्रीयुत् माणिक चन्द एम. एस. सी.	८१
५-वेदों में राजा का चुनाव—[लेखक श्रीयुत् विश्वनाथ विद्यालंकार	८६
६-सत्यका सौदा—[लेखक-श्रीयुत् सुदर्शन	८८
७-विनीतविनय—[लेखक-श्रीयुत् मणिराम गुप्त ।	१००
८-जनरल डायर का सरमाइकेल ओडवायर के नामपत्र—[लेखक-के. पी. चैटर बाक्स	१०१
९-महाभारत कालीन शिल्प वैभव-[लेखक श्रीयुत् रामदेव बी. ए. एम. आर. एस. सम्पादक वैदिक मैगज़ीन	१०५
१०-हमारी मंजूषा—	१०७
११-कुसुमोद्यान—	१०९
१-क्या यन्त्र द्वारा चोर पकड़े जा सके हैं	१०९
२-पंजाब में डायर ओडवायर की करतूत पर कई प्रतिष्ठित लोगों की सम्मति	११०
३-सच्चेब्राह्मण और नवीन कौंसलें	१११
४-वैदिक स्वराज्य	११२
१२-विचार प्रवाह	११४
१-बोल्शविज्म	११४
२-हन्टर कमेटी की रिपोर्ट	११६
३-सहयोग त्याग	१२१
१३-वनिता विनोद	१२३
१-समाचार	१२४
२-कला कौशल्य-(लेखिका श्रीमती ओ३मवती देवी)	१२५
३-स्त्री शिक्षा की आवश्यक्ता—[लेखक कुमारी सुशीला देवी	१२७
४-स्वदेश सेवा—[लेखक-श्रीमती चन्दावरि जन	१३१
५-वैदिक पत्नी आदर्श	१३३

ज्योति के नियम

ग्राहकों के लिये ।

१. ज्योति प्रति अंग्रेजी मास की १५ को ग्राहक के पास पहुंचा करेगी ।

२. डाक व्यय सहित भारत के लिये इस का मूल्य ४॥) और छे मास के लिये २॥) वी. पी. का व्यय ≡) अलग है प्रति अंक का मूल्य ॥) है । भारत से बाहर विदेश के इसका वार्षिक मूल्य ६) है । मूल्य मैनेजर ज्योति लाहौर के नाम आने चाहिये ।

३. पुरानी प्रतियां जो मिलसकेंगी उनका मूल्य संख्या ॥) से कम नहीं होगा ।

४. पते के परिवर्त्तन की सूचना पत्र के निकलने से १५ दिन पूर्व मैनेजर को मिलनी चाहिये ।

५. यदि कोई संख्या किसी ग्राहक को न पहुंचे तो पहिले अपने डाक घर से पूछना चाहिये यदि पता न चले तो डाक घर से जो उत्तर आवे उसे प्रबन्ध कर्त्ता के पास भेजदेना चाहिये । परन्तु यह सूचना अगले अंक के निकलने से १५ दिन पूर्व तक मिलनी चाहिये अन्यथा दूसरी प्रति विना मूल्य नहीं दी जायगी ।

लेखकों के लिये

६. लेख पढ़ने योग्य अक्षरों में हाशिया छोड़कर एक ओर ही लिखे जाने चाहिये । लेखों के घटाने बढाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादिका को है । जो लेख प्रकाशित नहीं किये जासकेंगे वह टिकट और पता साथ होने पर लौटा दिये जावेंगे ।

८. लेख कविता समालोचना के लिये पुस्तकें और परिवर्त्तन के पत्र सम्पादिका ज्योति लायलपुर के पते पर आने चाहियें ।

मूल्य तथा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र प्रबन्धकर्त्ता ज्योति लाहौर के पते पर आने चाहिये ।

विज्ञापन की दर यह होगी ।

प्रतिमास ।

पूर्ण पृष्ठ या दो कालम १०) आधा पृष्ठ या एक कालम ६) चौथाई पृष्ठ या आधा कालम ३) चौथाई कालम २) टैटिल पेज का तीसरा पृष्ठ १२) टैटिल का अन्तिम पृष्ठ १५)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

॥ ओ३म् ॥

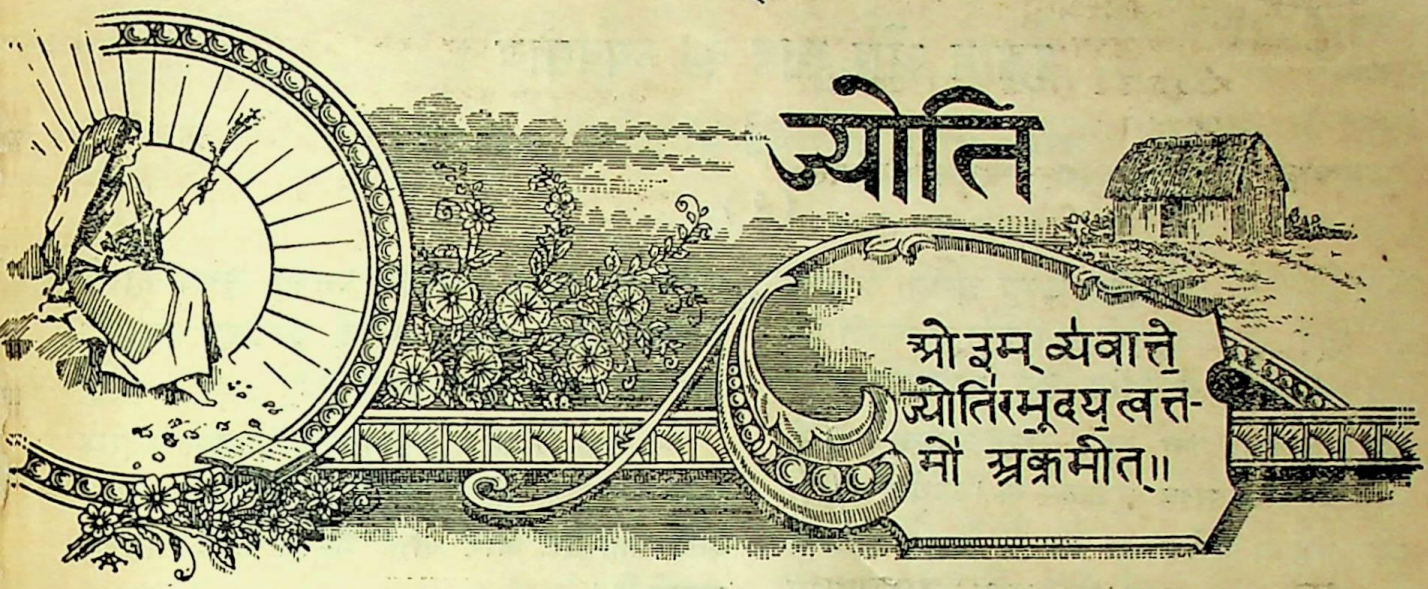

वर्ष १ | ज्येष्ठ १९७७—जून १९२० | संख्या २

ज्योति ।

लेखक—श्रीयुत् पं० गयाप्रसाद (श्रीहरि) ।

ज्योति जग होय तुम्हारा राज
स्वागत स्वागत देवि! पधारीं भारतभू पर आज ।
चान्द्रमसी तव शीतल छाया, पाकर हो शुभ काज ।
दूर अविद्या-तम हो जावे, सजें सकल सुख साज ॥१॥
वेद, धर्म, नृप नीति रीति से, सब के हृदय विराज ।
एक स्वर से बाज उठे यह, भारत तन्त्री आज ॥२॥
सत्य सुशिक्षा ज्योति जगाकर, साधन कर पर काज ।
प्रेम सूत्र में शीघ्र गूंथ दो, भारत सुजन समाज ॥३॥
खो सर्वस्व भाग्य-हत भारत, सोता है वेकाज ।
अपनी मधुर सान्द्र ध्वनि से हा, इसे जगा दो आज ॥४॥
अपने प्रेम नीर से धोओ, भारत दृग वेलाज ।
श्री हरि जिमि पुनि परदेशिन का, रहे न यह मोहताज॥५॥

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पञ्जाब और खाड का व्यवसाय।

लेखक-श्रीयुत् डा०रामजी नारायण डी. यस. सी

(१)

प्रायः प्रत्येक सभ्य अथवा असभ्य जातियों में किसी न किसी रूप में खांड का व्यवहार पाया जाता है, चाहे यह खांड ऊख अथवा गन्ने से बनी हो और चाहे चुकन्दर से। प्रत्येक देश में और विशेष कर भारत समान निर्धन देशों में जनता का एक बड़ा भारी भाग ऐसा मिलेगा जो निज खाद्य पदार्थों में खांड का समावेश करने में असमर्थ है। उनकी आय इतनी नहीं कि वह इसके भोग का आनन्द उठा सकें। उनके लिये खांड का प्रयोग एक शाही भोजन है। परन्तु विज्ञान ने यह सिद्ध किया है कि खांड केवल स्वादवर्धक ही आहार नहीं वरन मनुष्य के भोजन का एक आवश्यक अंग है। शरीर को स्वस्थ और पुष्ट रखने के लिये इस का प्रयोग प्रत्येक मनुष्य के लिये अनिवार्य है। छोटे बच्चों की मीठे पदार्थों की ओर विशेष रुचि होना किञ्चित इसी बात का सूचक है कि उनके कोमल देह की शरीरवर्धनी क्रिया (Metabolism खांड को अधिक चाहती हैं। वैज्ञानिकों के मतानुसार मनुष्य के भोज्य पदार्थों को तीन भागों में बांट सकते हैं। इन में से प्रत्येक का प्रयोग शरीर के पालन पोषण के लिये आवश्यक है।

१. प्रोटीन्ज़ (Proteins) यह शरीर में स्नायु और पट्ठे बनाने का काम करते हैं। शरीर का सुदृढ़ बनाना इनका मुख्य कार्य्य है। यह मटर, चने, मलाई इत्यादि वस्तुओं द्वारा विशेषतया मिल सकते हैं।

२. तैल (Fats) इस में सब चिकने पदार्थ जैसे मक्खन घी और तेल शामिल हैं। शरीर को बल और शक्ति प्रदान करना इनका कार्य्य है।

३. खांड और निशास्ता इत्यादि (Sugar & Starches) इनका कार्य्य भी तैल्य पदार्थों जैसा ही है। काम करते २ मनुष्य देह की शक्ति का ह्रास होता है और इसके साथ ही शरीर का ताप भी कम पड़ जाता है। शक्ति और ताप की यह कमी इन पदार्थों के प्रयोग द्वारा पूरी की जाती है।

इसी लिये, जैसा कि हम ऊपर कह आये हैं * खांड का प्रयोग न केवल जिह्वा के स्वाद के लिये ही है वरन शरीर के भरण और पालन पोषण की आवश्यक्ताओं पर निर्भर है। ज्यों २ इस बात का ज्ञान मनुष्य समाज को होता जाएगा त्यों २ संसार में खांड की खपत बढ़ती जाएगी। यह हो भी इसी प्रकार रहा है। आज कल जो खांड इतनी महंगी हो रही है इसके दो कारण हैं:— (१) महा युद्ध में लगे हुये देशों में खांड की उपज का न होना अथवा बहुत कम होना और (२) संसार में प्रत्येक

* इसमें गुड़, शक्कर, राब इत्यादि जो कि भारत में या इसी प्रकार की विशुद्ध खांड अन्य देशों में बना होती है शामिल नहीं है। इस लेख में खांड शब्द का प्रयोग सुफैद खांड के रूप में ही किया गया है।

CC-0 Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मनुष्य भाग का इसको अधिक मात्र में प्रयोग में लाना। युद्ध के कारण जो महंगी हुई है वह तो दो चार वर्ष में, वाणिज्य व्यापार के पुनः शान्ति से स्थापित हो जाने पर, दूर हो जायगी परन्तु दूसरे कारण से जो महंगी हो रही है वह तब तक दूर नहीं हो सकती जब तक कि समस्त संसार में इसकी उपज न बढ़ाई जाय। भूमंडल में युद्ध से पहिले ५०००००००० मन के लग भग सुफेद खांड का खर्च था। इस में से आधी अथवा २५ क्रोड़ मन गन्ने की खांड होती थी और शेष २५ क्रोड़ मन चुकन्दर की। भारत में १०६४००००० मन खांड खाने के काम आती है उसमें से प्रायः ७६०००००० अथवा ७१.५ प्रति सैंकड़ा हमारे अपने देश में बनती है और शेष अन्य देशों से आती है। इस बाहर से आई हुई खांड की बड़ा भाग पहिले आस्ट्रिया से आता था, फिर मारीशस द्वीप से और अब प्रायः सब का सब जावा द्वीप से से आती है। इस समय हमारे सामने बड़ा भारी प्रश्न यह है कि हम यह जो ३ क्रोड़ ४ लाख मन खांड बाहर से लेते हैं क्या हमारे अपने ही देश में पैदा नहीं की जा सक्ती? क्या दूसरों से मोल लेने के स्थान में हमारा देश उनको अपनी आवश्यक्ता पूरी करने पीछे बचा हुआ भाग बेचने योग्य नहीं बन सक्ता? यह प्रश्न इस समय जब कि खांड का भाव इतना बढ़ रहा है और भी महत्व का है। जहां युद्ध से पहिले ८) या १०) मन खांड का भाव था वहां यह आज कल ३०) मन से भी अधिक चढ़ा हुआ है।

भारतवर्षीय खांड की उपज और व्यापार की उन्नति के उपायों पर विचार करते समय खेत, क्रियाभवन Laboratory और कारखाना इन तीनों की अवस्था का ज्ञान होना परमावश्यक है। इन तीनों स्थानों से प्राप्त अनुभव को संगठित कर उस पर विचार करने से ही हम किसी फलदायक परिणाम पर पहुंच सक्ते हैं। आजतक के प्राप्त अनुभव को एकत्र करने और खांड के व्यापार की उन्नति के उपाय सोचने के लिये भारत सरकार ने Indian Sugar Committee भारतीय खाण्ड-विचारणी-सभा के नाम की एक सभा बनाई है। उसके सदस्य भारत के सब प्रान्तों में भ्रमण कर रहे हैं और सामग्री एकत्र कर रहे हैं। वह जावा द्वीप में जाकर—जहां पर कि गन्ने की उपज और उससे खांड बनाने के तरीकों में आधुनिक विज्ञान द्वारा बड़ी उन्नति हुई है—वहां की अवस्था का अवलोकन कर रहे हैं। संयुक्त प्रान्त में बरेली ज़िले में चिरकाल से देसी तरीकों द्वारा खांड बनाई जाती है। यहां की उपज की जावा की उपज से तुलना करने से वह उन्नति भली प्रकार स्पष्ट हो जायगी:—

गन्ने की उपज प्रति एकड़।

जावा	...	...	१,१०० मन
बरेली	...	...	२५० ,,

खांड की उपज प्रति एकड़।

जावा	...	...	११० मन
बरेली (आधुनिक तरीके से)			६४ ,,
बरेली (पुराने देसी तरीके से)			७½ ,,

इस आश्चर्य जनक भिन्नता के कारणों को स्थान पर जाकर देखना कमेटी के लिये अत्यन्त हितकर सिद्ध होगा। आशा की जाती है कि यह कमेटी आगामी वर्ष के आरम्भ में अपनी रिपोर्ट सरकार के सन्मुख पेश कर सकेगी। उन उपायों पर कुछ लिखना जिनकी कि यह कमेटी संभवतया सिफारिश करेगी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस लेख का आशय नहीं। हम केवल यह बतलाने का यत्न करेगें कि खांड के सम्बन्ध में पञ्जाब की क्या अवस्था है, यहां कितनी खांड पैदा होती है और किस प्रकार उसकी उपज बढ़ाई जा सक्ती है।

पंजाब में १९१८–१९ में ४४७११४ एकड़ भूमि पर गन्ना बोया गया था और इस से कुल २९२८६५ टन अथवा ८१९५२१४ मन गुड़ प्राप्त हुआ। ऊँख प्रधान बड़े २ ज़िलों का हिसाब निम्न लिखित है:—

पंजाब में गन्ने की खेती और गुड़ की उपज।

नाम ज़िला।	एकड़ भूमि जिस पर गन्ने की खेती की गई		गुड़ प्रति एकड़ पाऊंड = $\frac{1}{2}$ सेर।		समस्त गुड़ जो ज़िले में हुआ टन=लग भग २७$\frac{1}{2}$ मन
	नहर से सींची हुई।	कुयें इत्यादि से सींची हुई	नहर	कुयें	
रोहतक।	२८७१९	५७३८	२६५०	१७४०	१७८२७
करनाल।	२१४७८	६३०१	२१४०	१२५०	२२३२
अम्बाला।	४९४५	२३१५१	२१४०	१८४०	८०६७
होशयारपुर।	८४१९	२७७५४	२०००	१५००	१६७८९
जालन्धर।	२६६६६	३३६९	२५००	१६००	२९९५७
अमृतसर।	३५५९८	२१९१	२२००	११५०	३५९७४
गुरदासपुर।	३५३६३	२२९१३	२४००	१६४०	४५८४३
सियालकोट।	२५४०८	८७३७	२०००	१४००	२४५९६
गुजरांवाला।	३३७२९	३१६	१२८०	१०७०	१९४०२
लायलपुर।	४१८५८	—	१७६०	—	२६३११
शेष सब ज़िले।	११२५६७	१८९०४			६५८६७
समस्त पंजाब।	३५४७५०	११९३६४			२९२८६५

समस्त गुड़ जो पंजाब में खर्च हुआ वह ९३८५७३३ मन है। इसमें वह गुड़ भी सम्मिलित है जो कि अन्य प्रान्तों से विशेष कर संयुक्त प्रान्त से आया। सं० १९१८—१९ की खांड की कुल खपत ५९३४५३६ मन है जिसका मूल्य ६८४६००४६ रुपये है।

वैज्ञानिकों का मत है कि ऊँख की उपज के विचार से भारत को दो भागों में बाँटा जा सक्ता है, (१) वह प्रदेश जहां पर कि गन्ने जावा की भांति भली प्रकार एक सक्के और बीज दे सक्के हैं, इस प्रदेश में मद्रास, मैसूर, बम्बई प्रान्त का निचला भाग, मध्यप्रदेश और असाम और बरमा सम्मिलित हैं। यहां की जल वायु इस फ़सल के सर्वथा अनुकूल है। (२) यह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रान्त जहां कि खांड इतनी सफलता से पैदा नहीं की जासक्ती, इन में संयुक्तप्रान्त, पञ्जाब (N. W. Frontier Province) पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त, राजपूताना, मध्यप्रदेश और बम्बई का उत्तरीय भाग हैं। परन्तु पाठकों को यह जानकर आश्चर्य्य होगा कि ८० प्रति सैंकड़ा गन्ने की खेती की भूमि दूसरे अथवा शीत प्रधान प्रदेश में है।

अब हमारे सामने प्रश्न यह है कि पञ्जाब में खांड की उपज किस प्रकार बढ़ाई जा सक्ती है? जल वायु की प्रतिकूलता के होते हुये भी क्या यह सम्भव है कि यहां खांड की उत्पत्ति अधिक हो सके? इस के लिये तीन उपाय वर्त्ते जा सक्ते हैं:—

(१) प्रति एकड़ गन्ने की उपज बढ़ाई जाय।

(२) ऐसे गन्ने बोये जायें जिन से खाँड अधिक निकले और जो पञ्जाब प्रान्त की जल वायु के कठोर आघात को भली प्रकार सहार सकें।

(३) गन्ने से खांड निकालने के उपायों में उन्नति की जाय।

(१) उपज में उन्नति—

नीचे लिखी तालिका से पता लगेगा कि पंजाब के भिन्न भिन्न ज़िलों में गन्ने की कितनी उपज होती है॥

ज़िला	उपज प्रति एकड़ [टन]		
	गन्ना	रस	गुड़
करनाल	१०.७	४.५	०.७५
अमृतसर	१३.२	६.६९	०.९२
गुरदासपुर	७.१	३.२	०.८५
सियालकोट	६.५	३.२५	०.८
मुलतान	१६.०	५.०	१.४६
जालन्धर	१२.२	७.५	१.४५

लायलपुर में गन्ने की उपज प्रायः ९ टन प्रति एकड़ है। इस हिसाब से करनाल, अमृतसर, गुरदासपुर, सियालकोट, होशयारपुर, मुलतान, जालन्धर और लायलपुर के ज़िलों की जहां पर कि गन्ने की खेती अधिक होती है औसत निकाली जाय तो समस्त पञ्जाब के लिये १०.६ टन प्रति एकड़ बैठती है। संयुक्त प्रान्त में यह २० टन प्रति एकड़ और जावा द्वीप में ४० टन प्रति एकड़ पड़ती है। हमारे सामने प्रश्न यह है कि वह कौन से उपाय हैं जिन से कि यह उपज बढ़ाई जा सके। पञ्जाब कृषि विभाग की ओर से गुरदासपुर में कुछ तजुरुबे किये जा रहे हैं, वहां पर सरकारी फ़ार्म पर १९१३ से लेकर चार साल की औसत १४.५ टन है। अभी तक यह फल संतोषजनक नहीं हुआ। डाक्टर लैदर ने कानपुर में इस प्रकार के तजुरुबे किये थे और वह निम्नलिखित परिणाम पर पहुंचे हैं:—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"परिमित परिमाण में खाद-विशेष कर नेत्रजन प्रधान खाद-डाले बिना गन्ने की खेती को सफलता से पैदा करना असम्भव है, परन्तु बहुत अधिक खाद डालकर बहुत अधिक उपज की आशा रखना भी युक्तियुक्त नहीं क्योंकि इस क्रिया से उपज तो बढ़ जाती है परन्तु गन्ने में मिठास कम होजाती है"। डाक्टर लैदर के इस अनुभव का क्लार्क, ऐलट और हुल्मे प्रभृति विद्वानों ने भी अनुमोदन किया है।

(२) ऊँख अथवा गन्ने के प्रकार अथवा जाति को उन्नत बनाना। इस विषय में कुछ लिखने से पहिले यह अधिक लाभदायक होगा यदि हम भिन्न प्रकार के उन गन्नों पर जो कि पञ्जाब में बोये जाते हैं कुछ विचार करें। पंजाब के ऊँख प्रधान ज़िलों में निम्नलिखित प्रकार के गन्ने बोये जाते हैं:—

१. काठा।
२. काहू।
३. धौलू।
४. कान्सर।
५. लालड़ी।
६. सुरेठा।

इस सूची में हमने पौण्डे को सम्मिलित नहीं किया क्योंकि यह केवल चूसने के काम आता है। इस से खाँड नहीं बनाई जाती, क्योंकि इसकी खाँड अच्छी नहीं होती और उसके बनाने में खर्च भी अधिक आता है। पहिले चार प्रकार के गन्ने उत्तरीय पञ्जाब में मुख्यतया होते हैं और लालड़ी और सुरेठा दो दक्षिणी पंजाब में अधिक मिलते हैं।

उत्तरीय पञ्जाब के गन्नों में काठा सब से अच्छा समझा जाता है, क्योंकि इस में जहां मिठास अधिक होती है वहां यह जल वायु की कठोरता को भी भली प्रकार सहन कर लेता है। परन्तु इस में जो विशेष कमी है वह यह है कि यह बहुत पतला होता है और इसी लिये इसकी उपज प्रति एकड़ बहुत कम होती है। उत्तरीय पंजाब में और विशेषकर पर्वत समीपवर्ती समभूमि में कोहरा अधिक पड़ता है। यह गन्ने की फ़सल को बड़ी हानि पहुँचाता है। उसकी मिठास कम पड़ जाती है और इस से मारे हुये गन्ने के रस की खाँड अच्छी नहीं बनती।

गन्ने में दो प्रकार का मीठा होता है। एक को रसायनिक परिभाषा में सुक्रोज़ (Sucrose) कहते हैं और दूसरे को ग्लूकोज़ (Glucose or reducing sugars)। जिन गन्नों में सुक्रोज़ अधिक होती है वह उत्तम माने जाते हैं क्योंकि विशुद्ध खाँड सुक्रोज़ ही होती है। ग्लूकोज़ स्वाद और रसायनिक गुणों में अंगूर के मीठे से मिलती है, गन्ने में इसका अधिक होना इस लिये भी बुरा समझा जाता है कि इस की उपस्थिति में खांड अच्छी नहीं बन पाती। कोहरे के प्रभाव से सुक्रोज़ की रसायनिक विश्लेषणद्वारा ग्लूकोज़ बन जाती है। अतः वह गन्ने जो पहिले खांड के लिये उत्तम होते थे पाला पड़ने पीछे ख़राब होजाते हैं। भिन्न २ प्रकार के गन्नों में यह ख़राबी न्यूनाधिक परिमाण में होती है अथवा यों कहना चाहिये कि भिन्न २ प्रकार के गन्नों में पाले के आघात को रोकने की शक्ति भिन्न होती है। जैसा कि नीचे लिखी तालिका से पता लगेगा। उत्तरीय पञ्जाब का काठा और दक्षणीय पंजाब के लालड़ी और सुरेठा प्रकार के गन्ने इस अंश में बड़े सुदृढ़ हैं:—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गन्नों पर कोहरे अथवा पाले का प्रभाव।

गन्ने का प्रकार	पाले से पहिले		पाले से पीछे	
	ग्लूकोज़ प्रति सैंकड़ा	सुक्रोज़ प्रति सैंकड़ा	ग्लूकोज़ प्रति सैंकड़ा	सुक्रोज़ प्रति सैंकड़ा
लालड़ी करनाल	०.६२	१६.७७	०.४२	१७.४१
,, (,,)	०.६५	१३.७०	०.८१	१६.३३
सुरेठा (,,)	०.४७	१६.८७	०.६८	१६.८३
लालड़ी (रोहतक)	०.७६	१४.९७	०.६८	१६.०८
सुरेठा (,,)	०.६३	१५.९२	०.९२	१६.१४
धौल्ड	१.६४	१५.५०	२.८६	१२.७२
काह्ड	१.३९	१५.३०	२.२०	१२.८५
तरेड्ड	०.२८	१५.४५	१.२५	१४.८१
कटारा	१.०८	१५.०६	१.३८	१६.५४
काठा	०.९०	१५.८०	१.१९	१६.७०

इस से पाठकों को भली प्रकार पता लग गया होगा कि हमें पंजाब में किस प्रकार का गन्ना चाहिये। काठा पाले के प्रहार को रोक लेता है परन्तु पतला होने के कारण इस से खांड कम निकलती है। लालड़ी और सुरेठा इतने पतले नहीं परन्तु तो भी उन से इतनी खांड नहीं निकलती जितनी कि मिसर मारीशस और जावा के गन्नों से। हमारे गन्नों का रस पतला होता है अतः उन से खांड बनाने में खर्च अधिक पड़ता है। यदि एक प्रकार के गन्ने के रस में १०.४८ % खांड हो और दूसरी प्रकार के में १७.३१ तो पहली प्रकार के गन्ने के ४७ ६३३ सेर रस से ५००० सेर खांड बनेगी और दूसरी प्रकार के गन्ने का केवल २८ २३४ सेर रस उतनी ही खांड बनाने के लिये पर्याप्त होगा अथवा पहले गन्ने के रस से प्रायः २०,००० सेर अधिक पानी को जलाकर उड़ाना होगा और इसी से इस की खांड अधिक महंगी पड़ेगी।

दूसरी बात जो उत्तम गन्नों में होनी चाहिये वह यह है कि रस गाढ़ा होने के साथ२ उसमें सुक्रोज़ प्रति सैकड़ा अधिक हो। यह हो सक्ता है कि दो प्रकार के गन्नों का रस बराबर गाढ़ा हो परन्तु दूसरे की अपेक्षा एक में सुक्रोज़ अधिक हो। जैसा कि हम ऊपर कह आये हैं खांड शुद्ध सुक्रोज़ ही होती है। इसको साफ़ करते समय उस में से ग्लूक्रोज़, प्रोटीन्ज़ इत्यादि अपद्रव्य (impurities) निकाल दी जाती हैं।

तीसरा गुण यह होना चाहिये कि रस निकालने पीछे जो फोक रह जाता है वह कम हो। जिस गन्ने में यह कम होगा उससे स्वभाव्यतया खांड अधिक निकलेगी। परन्तु इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रकार के गन्नों में एक न्यूनता होती है। जिस गन्ने में फोक कम होता है उस पर कई प्रकार के रोग और कीड़े इत्यादि बहुत शीघ्र आक्रमण करते हैं अतः इस अंश में उन्नति एक सीमा तक ही हो सक्ती है।

सारांश यह कि पंजाब के लिये ऐसे गन्नों की आवश्यक्ता है जो कि (१) यहां की कठोर सरदी और पाले के आघात को रोक सकें (२) जिनका रस गाढ़ा हो और जिनमें सुक्रोज़ अधिक हो और (३) जिनमें फोक कम हो। ऐसे गन्नों की प्राप्ति के लिये मद्रास प्रान्त के कोयम्बटोर (Coimbtore) नगर में भारत सरकार की ओर से परीक्षण हो रहे हैं। वहां के पैदा किये हुए गन्ने गुरदास पुर में बोये गये हैं। डाक्टर बारबर का विश्वास था कि पंजाब के योग्य गन्ने वह पैदा कर सकेंगे। परन्तु हमारा विचार है कि इस प्रकार के गन्ने तभी पैदा हो सकेंगे यदि कोयम्बटोर के स्थान में करनाल जैसे स्थान में इन के सम्बन्धी परीक्षण किये जायें, क्योंकि करनाल और गुरदासपुर की जल वायु और भूमि में इतनी भिन्नता नहीं जितनी कि गुरदासपुर और कोयम्बटोर की। करनाल या रोहतक में पैदा हुआ गन्ना मदास-उत्पन्न गन्ने की अपेक्षा शीघ्रता से गुरदासपुर जैसे शीत प्रधान ज़िले की जल वायु को अपनालेगा॥

—:○:—

पृथ्वी नाटक।

लेखक—श्रीयुत् प्रिंसपल कुँवरसेन यम. ए.

अंक १–दृश्य १

[अन्धेरी रात। प्रातःकाल प्रभात। पूर्व्व की ओर दूर पर कुछ बादल नज़र आते हैं।]

(पृथ्वी हाथ जोड़, आंख मूंदे सन्ध्या कर रही है। हल्के हल्के बाजे की आवाज़ दूर से सुनाई दे रही है।)

राग एमन कल्याण। चौताला

तेरो ही ध्यान धरत ब्रह्मा शिव व्यास वाल्मीक नारद मुनि सनकादिक। शेष सुरेश रटत रहत निस बासर।

तेरो ही ध्यान धरत०

चन्द्र सूरज और तारागण धरा मेरु पवन अग्नि पशु पञ्छी जल स्थल नभ घन दामिनी आ आ आ आ आ और नारी नर।

तेरो ही ध्यान धरत०

पृथ्वी—हे जगदम्बा! [1]जो कुछ तुम ने ब्रह्माण्ड के विकास और विनाश की झलक दिखाई, वह मैंने देखली। जो जगत् उत्पत्ति की भनक मेरे कान में पड़ी, वह सुन ली। संसार के प्रवाह का सार समझ लिया। मेरा चञ्चल

१ देखो "ब्रह्माण्ड नाटक" परदा १०।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मन इस [1]समय शान्त सा प्रतीत होता है। तुम धन्य हो! तुम धन्य हो!.....पर हे माता! तुम मेरे हृदय के पर्दों की नसों को देख रही हो, कि उनमें [2]पूरी शान्ति अभी नहीं समाई। थोड़ी बहुत तलमलाहट रह गई है। वह क्या है, और क्यों है, इसको मैं नहीं जानती, यह तुम ही पहचानती हो, और तुम ही इसका उपाय कर सकती हो। मैं तो अब तुम्हारी शरणागत हूं, [3]मुझे अपनी प्रेममयी गोद में ले लो, और पूर्ण शान्ति दो।

रागनी टोड़ी, ताल तीन

देवयानी—[4]सूरज हैं भगवान जगत के सूरज हैं भगवान।

पृथ्वी—हैं यह क्या राग छेड़ा है, सुनूं तो सही।

देवयानी—सूरज हैं भगवान जगत के, सूरज हैं भगवान।

कृपा दृष्टि जिन पर होवे, हो [5]उनका कल्याण,
रे देवे सूरज हैं भगवान।

कर सेवा दिन रैन उन्हीं की, [6]जो हैं तुमरे प्राण,
रे देवे सूरज हैं भगवान।

[7]पृथ्वी माता बनने लागी, [8]मानुष जन्म प्रमाण,
रे देवे सूरज हैं भगवान।

गाओ [9]बिहाई मिलकर भाई, हो सबका कल्याण,
रे देवे सूरज हैं भगवान।

पृथ्वी—ओ हो मैं भूली। सच है,

बिन मांगे मोती मिले, मांगे मिले न भीख।

सूरज महाराज की उपासना मेरा धर्म्म है [10]और नित्य कर्म्म अब मांगना क्या, पर यह मानुष जन्म की भनक कैसी कान में पड़ी।

(इतने में सूर्य्य महाराज धीरे धीरे अपने [11]गेरुए रंग के चोले में आते नज़र आते हैं।)

पृथ्वी झुककर प्रणाम करती है।

सूर्य्य—(गाते हैं) "हर रोम रोम मेरा जपता है नाम तेरा। हर नाम तू है तौ भी है राम नाम तेरा।

---

१ पृथ्वी की गति अपनी कीली के आधार पर अतीत काल की अपेक्षा से अब थोड़ी है और होती जा रही है, और नांही उतना अग्निस्फोट होता है जितना कि अतीत काल में होता था, जैसे कि पैलोज़ाइक (Patllozoic) के समय में अतिशय आग्नेय स्फोट होता था। २ तथापि अभी आग्नेय स्फोट की घटनाएं बाकी हैं। ३ सांसारिक प्रेम में असफलता रहने से, शुद्ध ईश्वरीय प्रेम का मार्ग खुलता है। ४ हमारे ग्रहों के उपक्रम का केन्द्र और गति तथा बरकतों का कारण प्रत्यक्ष में सूर्य्य ही है। ५ गर्मी, बिजली आदि प्रत्येक प्रकार की शक्तियां जो संसार में विद्यमान हैं उनका स्रोत सूर्य्य ही है। यदि सूर्य्य की गर्मी और प्रकाश रोक लिया जाय तो वनस्पतियां और जीव जन्तु मर जाते हैं। ८ प्राणिमात्र की उत्पत्ति का समय। सृष्टि रचना के नियम के अनुसार मनुष्य की उत्पत्ति सब से पीछे होती है। ९ विहाई बधाई व कुदृष्टि निवारण के लिये जन्म के समय जो गाना गाया जाता है। १० पृथ्वी का आराध्यदेव तो सूर्य्य ही है। ११ प्रभात के समय बादलों में से सूर्य्य लाल दिखाई देता है, इसमें चमक कम होती है॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करते हैं ध्यान तेरा यह चांद और तारे,
रातों को जागते हैं रटते हैं नाम तेरा।
सूरज ज़मीन तारे चक्कर लगा रहे हैं,
यह घूम घूम सारे करते हैं काम तेरा॥

पृथ्वी—हे भगवन्! [1]जितना मैं आपका ध्यान करती हूं उतना ही मुझको आपकी महानता और अपना छोटापन दिखाई पड़ता है। आपके सामने मैं ऐसी हूं जैसे [2]घड़े के आगे राई का दाना, शेर के आगे चुहिया। मैं जानती हूं आपने मुझ पर बड़े उपकार किये हैं। आपने मुझे [3]अन्न जल धन वस्त्र भूषण सब कुछ दिया। मुझे अग्नि [4]चपला जैसी सहेलियां देदीं। [5]समुद्र बल, पवन सैन नौकर लगा दिये हैं। मैं आप के जितने गुण गाऊं थोड़े हैं। सोच यह है कि आपकी पूजा करूं तो किस तरह। आप से प्रार्थना करूं तो क्या। आप [6]मेरे जीवन के आधार हैं। मैं क्या करूं सिवाय इसके कि बावली के [7]समान आपकी परिक्रमा किये जाऊं। दुनियां मुझे बावली कहे, मैं तो जीते जी आपकी परिक्रमा किये जाऊंगी।

(गाती है।)

[8]अजब हैरान हूं भगवन तुम्हें क्योंकर रिझाऊं मैं।
कोई वस्तु नहीं ऐसी जिसे सेवा में लाऊं मैं।
तुम्हारी जोत से जगमग हैं चांद और सात सय्यारे।
निपट अंधेर है तुमको अगर जोति दिखाऊं मैं।
नहीं कुछ और हो सकता, तुम्हारे गिर्द फिर फिर कर
[9]करूं मैं परिक्रमा हर दम तुम्हारे वारी जाऊं मैं।

(सूर्य्य के गिर्द घूमने लगती है।)

सूर्य्य—(प्रसन्न होकर) मांग क्या मांगती है!

पृथ्वी—[10]मैं अब कुछ नहीं मांगती। केवल आपकी कृपा दृष्टि की अभिलाषिणी हूं।

---

१ विज्ञान के विना तत्व को नहीं जान सकते। मूर्ख अपने आपको सब से बड़ा समझता है। २ सूर्य्य का आकार और पृथ्वी के आकार का अनुमान निम्नलिखित अंकों से किया जाता है। सूर्य्य मण्डल ::।:, भूमण्डलः, पृथ्वी का आकारः, सूर्य्य का आकार ::।: ३ अन्न= Meteors..... वा रेडियम आदि पदार्थ जो पृथ्वी के लिये खुराक का काम देते हैं। जल=समुद्र, नदीयां, वर्षा, जो मानो पृथ्वी की प्यास बुझाते हैं। धन=सोना, चांदी आदि। बहुमूल्य पत्थर, यथा हीरा, लाल, माणिक आदि। तथा कोयला आदि धातुएं। वस्त्र=वनस्पतियां, व चित्र विचित्र बादल। भूषण=इन्द्र धनुष। ४ अग्नि=गर्मी (Heat) व प्रकाश (Light) चपला=बिजली (Electricity), वनस्पति=शाक पात (Vegitables)। ६ सूर्य्य के विना पृथ्वी कहां? ७ Earths orbital motion round the sun पृथ्वी का सूर्य्य के चारों तरफ़ घूमना। ८ चंद्रमा और सय्यारे यथा बुध=(Mercury) शुक्र=(Venus) मंगल (Mass) बृहस्पति (Jupiter) शनिश्चर (Saturn) वरुण=(Uranus) वारती=(Neptune) यह सब सूर्य्य से प्रकाश प्राप्त करते हैं। शुक्र तो चन्द्रमा के समान घटता बढ़ता भी दिखाई देता है। ९ Earths orbital motion round the sun. १० विदित हो कि पहली प्रार्थना जो दुमदार तारे और चन्द्र मुखी के द्वारा की गई थी वह अस्वीकार की जा चुकी थी, देखो ब्रह्माण्ड नाटक परदा ९, अब सांसारिक प्रेम की चोट से मग्न अवस्था और फिर तत्वज्ञान की अवस्था को पार करके वैराग्यावस्था को प्राप्त हो गया है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सूर्य्य—अच्छा, जा, तू माता बनेगी। दूधों नहाएगी, पूतों फलेगी । [१]काम धेनु गाय के समान सब का पालन पोषण करेगी। तेरा सब से छोटा पुत्र बड़ा विद्वान होगा, जो तेरा कल्याण करेगा।.....

(पर्दा गिरता है।)

देवयानी—पृथ्वी माता बनने लागी, मानुष जन्म प्रमाण रे देवे सूरज हैं भगवान।

गाओ विहाई मिलकर भाई हो सब का कल्याण रे देवे सूरज हैं भगवान।

जाको वेद रटत ब्रह्मा रटत शेष और महेश रटत गज गंगादिक रटत कुन्ती के कुंवर रटत नारद मुनि व्यास रटत पावत ना पार॥

जाको वेद रटत ब्रह्मा रटत शेष और महेश रटत.....कुन्ती के कुंवर रटत नारद मुनि व्यास रटत पावत न पार। .....

पर्वत परिचय।

लेखक—श्रीयुत् माणिक चन्द यम. एस. सी.

सब देशों और सब समयों में पर्वतों के प्रति मनुष्यों के हृदयों में आदर के भाव रहे हैं बहुत से तो इन्हीं को देवी देवताओं का निवास स्थान मानते है, इसी लिये हिन्दुओं के बहुत से तीर्थ स्थान पहाड़ों पर ही मिलते हैं, ऋषि मुनि और योगी जन पर्वतों की कन्दराओं में समाधि लगा अपनी आत्मा को तृप्त करते थे, इन ही की गोद में बैठे २ कवि अपनी उत्तम उत्तम कविता लिखते और चित्रकार सुन्दर सुन्दर चित्र खीचते हैं। यदि पृथिवी पर कोई पहाड़ न होता तो इसका सौन्दर्य और गौरव कहीं कम होता।

सब से पहिले यह प्रश्न होता है कि पहाड़ किसे कहते हैं? कितना ऊंचा टीला होतो उसे पहाड कहा जा सकता है, इसका ठीक ठीक उत्तर देना तो कठिन है, चारों ओर एक मैदान में केवल पांच छै सौ फुट ऊंची चट्टान को भी पास के रहने वाले लोग पहाड़ी कहते हैं जैसा कि सांगलाहिल, तथापि यह कहा जा सकता है कि पहाड कुछ हज़ार फुट ऊंचे तो अवश्य होने चाहिये।

सर्व साधारण की दृष्टि में पहाड़ बड़े विशाल और महान होते हैं जो कभी बढ़ते घटते नहीं, सदा एक जैसे रहते हैं। परन्तु वैज्ञानिक दृष्टि से देखा जाय तो पता मिलता है कि यह ना हीं तो बहुत बड़े हैं और ना हीं नित्य ऐसे ही रहते हैं, जैसे मट्टी का ढेला पानी में घुल जाता है यह भी वर्षा के कारण इसी गति को प्राप्त होते हैं, और सदा स्थाई

---

१ भूमण्डल पर जीव जन्तुओं का आगमन होगा। १३ कामधेनु गाय=वह गौ जिस के दूध में न्यूनता न आवे, जितना चाहो उससे दूध ले लो। १४ मनुष्य जिसने विज्ञान और कर्म्म के द्वारा उच्च पद प्राप्त किया॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नहीं रहते। यदि भूगोल के नकशे पर देखें तो ऊंचे से ऊंचा पहाड़ भी एक इंच से अधिक ऊंचा नहीं है अर्थात् यदि पर्वतों को भूगोल की अपेक्षा वास्तविक माप से मापा जावे तो सारी पृथिवी पर इन का नाम मात्र छोटासा स्थान रह जाता है। लोग इन्हें नित्य और विशाल समझने में ही भूल नहीं करते इनकी ढलवान के विषय में भी साधारणतया भूल करते हैं। पर्वतों की चढ़ाई को प्रायः हम बिलकुल सीधी अर्थात ९० डिग्री की ढाल वाली कहते हैं परन्तु वास्तव में तीस डिग्री से अधिक ढाल वाली चढ़ाई बहुत कम पाई जाती है। जिन पर्वतों की ढाल चालीस डिग्री से अधिक हो वह बिलकुल नंगी चट्टानें होती हैं।

यद्यपि विज्ञान ने इन सब भूलों को मिटा दिया है तथापि एक वैज्ञानिक के हृदय में भी इन के लिये बड़े आदर के भाव हैं, क्योंकि यह उन शक्तियों को जानते हैं जिन से पृथिवी बनी और अब भी बन रही है, और यह इनकी उत्पत्ति और नाश से संसारिक परिवर्तनों को भली प्रकार समझ सक्ते हैं।

यह जानने के लिये कि यह कैसे बने और पृथिवी पर यह ऊंच नीच कैसे हो गई यदि यदि हम पर्वतों की बनावट पर ध्यान देवें तो हमें मालूम होता है कि कुछ पहाड़ तो अकेले ही मैदान में सिर निकाले हुए खड़े होते हैं जैसा कि हिन्दुस्तान में नीलगिरी और सैहादरी। यह हज़ारों शताब्दियों की वर्षा से अपने चारों ओर की ज़मीन के घुल जाने से बने हुए प्रतीत होते हैं। दूसरे नारकुण्डम् और वैसूवियस जैसे पहाड़ हैं जो कि ज्वालामुखी से पदार्थों के निकलने पर बन गये हैं। तीसरी श्रेणी के वह पहाड़ हैं जो कि इकट्ठे एक दूसरे के ऊपर कतारों में मिलते हैं जैसा कि हिमालय, एरावली आदि—यही बहुत प्रसिद्ध हैं।

यह जान कर बड़ी हैरानी होती है कि इस प्रकार के बड़े बड़े पर्वत समूह पुराने ज़माने की समुद्र में जमी हुई मट्टी से ही बने हैं किन्तु निस्सन्देह इस के लिये बड़े भारी प्रमाण हैं। यह तो हम सब जानते ही हैं कि जो मल मट्टी तथा अन्यान्य पदार्थ बहते हुए नदी नालों में पाये जाते हैं उन सब की आहुति अन्त में समुद्र में ही पड़ती है, और समुद्र से इनका कहीं निकास नहीं, अतः यह दिनों दिन बढ़ते जाते हैं, और समुद्र में इनकी तह के ऊपर तह जमती जाती है। जिस प्रकार समुद्र के तले अनेक पदार्थों की तह है उसी प्रकार पर्वतों में भी बहुत सी तहें देखने में आती हैं। इसके अतिरिक्त यह भी देखा गया है कि जीव जन्तु तथा बनस्पति जब चिर काल तक मट्टी में दबे रहें तो हज़ारों शताब्दियों के पश्चात वही पत्थर हो जाते हैं, परन्तु उन की बनावट वैसी ही रहती है, इन्हें फ़ासिल कहते हैं, बड़े बड़े पर्वतों में न केवल समुद्र के तले इकट्ठे हुए पदार्थों की तहें ही मिलती हैं परन्तु इन में समुद्र में रहने वाले जानवरों के फ़ासिल भी पाये जाते हैं। इन के फ़ासिल एल्प पर्वत में दस हज़ार फुट और हिमालय में अठारह या बीस हजार फुट की ऊंचाई पर पाये गये हैं। इस से यही सिद्ध होता है कि यह पर्वत पूर्वकाल में समुद्र के तले जमा हुए पदार्थों से ही बने हैं। अब प्रश्न यह है कि समुद्र में इतनी मट्टी कैसे इकट्ठी होगई कि जिस से ऊंचे ऊंचे पहाड़ निकल पड़े? इसके उत्तर में यह वक्तव्य है कि सब नदियें अपने साथ बहुत सी मट्टी बहा कर समुद्र को ले जाती हैं। केवल गङ्गा और ब्रह्मपुत्र दो नदियां

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ही प्रतिदिन अपने साथ छै लाख मन मट्टी समुद्र में ले जाती हैं और मिसिसिपी नदी इस से भी छः गुणा अधिक। इसी प्रकार सब नदियां समुद्र में नये पर्वतों के बनने का सामान ले जाने में दिन रात लगी हुई हैं। यह जानकर हम आसानी से विश्वास कर सकते हैं कि समय पाकर यह मट्टी समुद्र में इतनी अधिक इकट्ठी होजाती है कि इस से हिमालय के हज़ारों मील बन जाने में सन्देह नहीं, परन्तु यह समझना तो कठिन प्रतीत होता है कि यह सारा भार कैसे आकाश में खड़ा होगया? क्यों और कैसे यह मट्टी का ढेर जो पहिले समुद्र में मछलियों के साथ था अब आकाश से बातें कर रहा है?

जब हम इस श्रेणी के पर्वतों को ध्यान पूर्वक देखते हैं तो हमें मलूम होता है कि भिन्न भिन्न तहें प्रायः मुड़ी तुड़ी होती हैं न कि सीधी सम एक दूसरे के ऊपर जैसा कि समुद्र के तले यह चौरस और हमवार जमी होती हैं। कहीं कहीं यह भी देखा गया है कि जो तहें कभी सब से नीची थीं अब वह सब से ऊंची है। कुछ तहें टूटी फूटी हैं और उन के सिरे उड़ गये गये हैं। यह तो इस लिये स्पष्ट ही कि समुद्र के नीचे इकट्ठे हुए पदार्थों की तहें बहुत प्रबल शक्तियों से ऊंचे उठाई गई होंगी इन्हीं के सामर्थ्य से चट्टानों की कुछ तहें मुड़ तुड़ और टूट फूट गई होंगी। जिस प्रकार मेज़ पोश पर उसे फैलाने के समय दोनों हाथों को पास पास लाने से बल पड़ जाते हैं कुछ स्थान ऊंचे और कुछ नीचे होजाते हैं, इसी प्रकार चट्टाने आस पास की महान शक्तियों से मुड़ तुड़ गई हैं और इन में बल आ गये हैं। यदि हम रबड़ के चौड़े फीते को खूब फैलालें और जितना लम्बा हो सके कर लें और दोनों सिरों को पकड़ कर उस के ऊपर मट्टी रेत तथा अन्य पदार्थों की तहें जमा दें, तो रबड़ के सिरों को छोड़ देने पर उस पर जमी हुई मट्टी रेत में वैसे ही बल पड़ जावेंगे जैसा कि पृथिवी पर पर्वत में कुछ स्थान ऊंचे और कुछ नीचे हो जावेंगे यदि केवल एक सिरे को ही छोड़ा जावे तो कुछ भिन्न प्रकार के बल पड़ेंगे। वास्तव में वह कौन सी ऐसी शक्ति है कि जिस से इतने ऊंचे ऊंचे पहाड़ विशेष स्थानों पर निकल पड़े, इस के सिद्ध करने के लिये वैज्ञानिकों के भिन्न भिन्न मत हैं और इस विषय पर निश्चय रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता। इन में से एक मत जो सर्वसाधारण आसानी से समझ सकते हैं, यह है कि पृथिवी के अन्दर का सार बहुत गरम है और अन्य पदार्थों की न्याईं पृथिवी अन्दर से दिन प्रति दिन ठंडी होती जाती है, और ठंडो होने के कारण सिकुड़ती जाती है। परन्तु ऊपर का भाग वैसा नहीं सिकुड़ता, अतः यह अन्दर ढीला होजाता है और अब थोड़ी जगह पर समाने के लिये ऐसे ही बल पड़ जाते हैं जिस प्रकार रोगी के दुबले होजाने पर उसके सब कपड़े ढीले होजाते हैं और उनको पहिरने पर बहुत से बल पड़ जाते हैं। जब सेब सूख जाता है तो पानी के उड़ जाने पर अन्दर का सार सिकुड़ जाता है परन्तु ऊपर का छिलका उतना नहीं सुकड़ता जितना कि अन्दर का हिस्सा। अतः जैसे इस पर बल पड़ जाते हैं वैसे ही पृथिवी पर भी सब स्थान समतल नहीं रहते और पहाड़ बन जाते हैं। सूखे सेब पर बल सब ओर प्रायः एक जैसे होते हैं, परन्तु पृथिवी पर पहाड़ों की यह समता नहीं, यह कहीं तो अधिकता से हैं और कहीं इनका निशान भी नहीं। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि सेब का सार एक जैसा ही होता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है परन्तु पृथिवी में ऐसा नहीं है, यदि सेब एक जगह से दाग़ी हुआ हो तो बल इस दाग़ के चहुं ओर से मुड़ जाते हैं, पृथिवी पर भी ऐसे कई दाग़ हैं जहां पहाड़ नहीं हैं।

अतः समय सयम पर महान शक्तियों द्वारा पर्वतों का प्रादुर्भाव होता है। और दूसरी ओर सब पहाड़ धीरे धीरे घिसे जारहे हैं और समुद्र के तले जमा होरहे हैं। वैसे तो संसार में जन्म और मृत्यु दिन और रात के चक्र प्रति दिन देखने में आते ही हैं, परन्तु पर्वतों की उत्पत्ति और नाश का चक्र अत्यन्त अद्भुत है। ज़रा विचारिये कि समुद्र के तले पहिले एक एक इंच मट्टी जमा होती है, यहां तक कि ऊंचे से ऊंचे पहाड़ों के समूह जो सदा बर्फ़ से ढके रहते हैं बन पड़ते हैं। और ऊंचे से ऊंचे पर्वत घिस घिस कर पृथिवी के साथ मिल रहे हैं।

पर्वतों से हमें क्या क्या लाभ प्राप्त होते हैं? धनी पुरुषों के लिये यह गर्मी के दिन काटने के लिये अच्छे स्थान हैं, इन पर योगी योगाभ्यास के लिये जाते हैं, साहसी पुरुष वैसे ही इन पर चक्कर लगाते फिरते हैं, इन के अतिरिक्त सर्व साधारण को भी इन से अनेक प्रकार के लाभ प्राप्त होते हैं। इन्हीं के होने से वर्षा होती है, यदि हिमालय न होता तो सारा हिन्दुस्तान एक रेगिस्तान होता, और वर्षा सब स्थानों पर प्रायः एक जैसी होती। चिरापूंजी पर पांच सौ इञ्च और लेह में तीन इंच वर्षा न होती, प्रत्युत दोनों स्थानों पर एक जैसी ही होती। जहां अब पहाड़ और समुद्र हैं वहां वर्षा कम होती, और जहां मैदान हैं वहां वर्षा अधिक होती। इस के अतिरिक्त पृथिवी का बहुत सा हिस्सा दलदल सा होता क्योंकि समतल होने से वर्षा का पानी इतनी तेज़ी और जल्दी से न बहता। पहाड़ों से न केवल वर्षा ही होती है, वरन यह वर्षा के केन्द्र हैं, पर्वतों पर ही वर्षा अधिक होती है।

वर्षा के केन्द्र होने से पहाड़ों पर बहुत भारी शक्ति जमा रहती है। एक चौड़े मैदान पर मेघ मंडल से बरसती हुई वर्षा चक्कियों को नहीं चला सकती, परन्तु यही वर्षा पहाड़ों पर पड़ने से बहते हुए नदी नालों में इतनी शक्ति जमा कर लेती है कि इस से नगरों को बिजली से रोशन कर सकते हैं, अनाज पीस सकते हैं, और बड़े बड़े कारखाने चला कर अपनी अवश्यक्ताओं और अनेक प्रकार के सुख साधनों को सम्पादन कर सकते हैं। इस महान शक्ति कि अन्दज़ा इस प्रकर लगाया जा सकता है कि सूर्य्य की गरमी से पानी भाप बन कर ऊपर को उड़ जाता है और यह ठंडा होने से पानी बन वर्षा के रूप में नीचे बरसता है। सूर्य्य की जितनी तापन शक्ति इस प्रकार खर्च होती है वह सब वर्षा में जमा रहती है क्योंकि शक्ति का सर्वथा नाश नहीं होता। यदि एक वर्ग मील पर केवल एक इंच पानी बरसे तो उस के लिये सूर्य्य की इतनी तापन शक्ति की आवश्यक्ता होती है जितनी कि डेढ लाख मन कोइले के जलाने से प्राप्त हो। यही शक्ति सताईस करोड़ मन का बोझ एक मील ऊंचा उठा सकती है। इस से केवल एक मील पर एक इंच वर्षा होती है। सारी पृथिवी पर जितनी वर्षा होती है उस के लिये उस महान शक्ति की अनुमान किया जा सकता है। यह सूर्य्य की तापन शक्ति पर्वत अपनी ओर खैंच लेते हैं और अपने अन्दर जमा रखते हैं। यदि पहाड़ न होते तो यह ऐसे ही व्यर्थ सारी पृथिवी पर बिख कर नष्ट भ्रष्ट हो जाती और किसी काम न आती।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पहाड़ों में यह अनेक नदी नालों और झरनों में ही जमा नहीं है वरन् हिमालय आदि पहाड़ पर जितनी बर्फ़ है उस में भी बड़ी भारी शक्ति जमा है। सर्दियों मे यह बढ़ जाती है और गर्मियों में घट जाती है। इस से भी मैदानी स्थलों को बहुत लाभ पहुंचता है क्योंकि यदि ऊंचे ऊंचे पर्वतों पर यह बर्फ़ के अनुपजाऊ खेत न होते जो कि देखने में यमराज के निवास स्थान मालूम होते हैं, तो वास्तव में वह जीवन प्रदायनी बड़ी बड़ी नदियां जो सब मैदानों में फैली हुई हैं गर्मियों में सूख कर बहुत साधारण नाले के समान ही दीख पड़तीं। किसी पर्वत के नीचे मैदान पर दृष्टि डालने पर गेहूं ज्वार और धान के हरे भरे खेत जो नज़र आते हैं उन सब की जीवन आधार वही पर्वतों की चोटियों पर ढकी हुई बर्फ है जिस के पिघलने से नदी नाले इन खेतों को जल देते हैं॥

पहाड़ों पर वर्फ़ ही के रूप में पानी जमा नहीं रहता, यह एक बड़े स्पंज की तरह वर्षा का पानी चूस लेते हैं, अपने अन्दर जमा रखते हैं, और धीरे धीरे चश्मों में से बाहर निकालते हैं, और इस प्रकार नदियों को जन्म देते हैं, पर इन्हें जन्म देते ही अपने प्राण धीरे धीरे खो बैठते हैं। पहाड़ में से निकला हुआ एक छोटा सा नाला भी निकलते ही उसी पहाड़ को खाना आरम्भ कर देता है, इसी लिये पहाड़ दिन प्रति नाश को प्राप्त होते जाते है और चट्टानें टुकड़े टुकड़े होती जा रही हैं। इस में कोई खेद वाली बात नहीं, वरन इस में भी उसी परिपूर्ण परमात्मा की महिमा ही पाई जाती है। पर्वतों का नाश भी संसार के सुख के वास्ते ही है, क्योंकि पहाड़ों और चट्टानों के नाश से वह मट्टी प्राप्त होती है जिस पर जंगलों और सुहावने बागों का गुज़रान है। नदियें और हिमनद और झरने डरावने पहाड़ों को घिसा घिसा कर गुलाब और चम्बेली के फूल और मटर गोभी के लिये भूमि तय्यार करते हैं। संसार की सब से उपजाऊ ज़मीनें वही हैं जिन में पहाड़ों के नाश से प्राप्त हुई मट्टी पड़ी है। इनके अतिरिक्त पहाड़ वायु शुद्ध करने में भी बड़ी सहायता देते हैं, दिन को जब खूब धूप होती है तो चोटी पर गरमी अधिक होती है, इस से नीचे की ठंडी हवा ऊपर को जाती है, रात को पहाड़ की शिखर नीचे मैदान से जल्दी ठढी हो जाती है, इस लिये वहां से रात को ठंडी हवा मैदान की ओर चलती है। इस प्रकार वायु में परिवर्तन होता रहता है और यह शुद्ध होती रहती है।

भिन्न प्रकार के खनिज पदार्थ और अनेक धातु भी पर्वतों में जमा हैं इनका भण्डार मनुष्यों के अन्धाधुन्ध खर्च करने पर भी भरा पड़ा है, इन में से यदि केवल लोहा ही न होती तो सोचिये हमारी क्या दशा होती और हम कितने ग़रीब होते!

पहाड़ों से कुछ लाभ जो हम सब को पहुंच रहे हैं ऊपर लिखे गये हैं, इन के अतिरिक्त यह भिन्न भिन्न देशों के बीच में सुदृढ़ दीवारें हैं जो कि हमें दूसरों के आक्रमणों से बचाने और अपने माल की रक्षा करने में सहायता देतीं हैं। सच तो यह है कि ज्यों ज्यों हम सृष्टि नियमों पर विचार करते हैं त्यों त्यों उस महान शक्ति के लिये अगाध श्रद्धा उत्पन्न होती है कि जिस की सत्ता पर यह सारा ब्रह्माण्ड टिक रहा है।

—:o:—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

वेदों में राजा का चुनाव।

लेखक-श्रीयुत् विश्वनाथ विद्यालंकार।

कई पाश्चात्य विद्वानों का कथन है कि प्राचीन समय में राजा की शक्ति अनियन्त्रित थी। वह जो कुछ चाहता कर लेता था उसे रोकने अथवा उसके कार्य पर खुलमखुल्ला समालोचना करने का किसी को भी अधिकार न था। प्रजा द्वारा राजा के चुने जाने के भाव को तो वे बिल्कुल अर्वाचीन समझते हैं। बौद्ध काल से पूर्व भी भारत में कभी राजा प्रजा द्वारा चुना जाता था अथवा उसकी शक्तियां परिमित और नियन्त्रित थीं इस बात को वे स्वप्न में भी मानने को तय्यार नहीं। किन्तु यदि हम निष्पक्षपात दृष्टि से इस विषय पर विचार करें तो यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि उनकी इस विषयक कल्पनाएं निर्मूल हैं। प्राचीन आर्य साहित्य का पक्षपात द्वारा अनुशीलन ही उनके भ्रम का मूल कारण हुआ इस में किसी प्रकार की शङ्का नहीं हो सकती।

इस लेख में हमारा विचार सभी प्राचीन ग्रन्थों के प्रमाणों से यह दिखाने का नहीं कि प्राचीन भारत में राजा की शक्ति सर्वथा अनियन्त्रित होती थी। किन्तु केवल वेद के अन्तरीय प्रमाणों से हम दिखाने का प्रयत्न करेंगे कि आर्यों के विश्वासानुसार जिस प्रकार वैयक्तिक तथा सामाजिक सत्य सिद्धान्तों का आधार वेद में पाया जाता है उसी प्रकार प्रजा द्वारा राजा के चुने जाने की कल्पना भी वैदिक ही है॥

(१) ऋग्वेद मण्डल १० सू० १६६ मं० १ में एक शक्तिशाली पुरुष एकत्रित सभ्यजनों को सम्बोधन करके कहता है कि:—

ऋषभं मा समानानां सपत्नानां विषासहिम्।
हन्तारं शत्रूणां कृधि, विराजं गोपतिं गवाम्॥

अर्थात् मैं अपनी समान आयु और स्थिति के लोगों में से सब से श्रेष्ठ हूं तथा मुझ में शत्रुओं को दबाने और उन्हें अपने अधीन करने की शक्ति है इसलिये तुम मुझे इस कार्य के लिये चुनो।

[२] मं० ४ में वही पुरुष यह प्रतिज्ञा करता है कि यदि आप लोग मेरे हाथ में राज कार्य देंगे तो मुझे विश्वास है कि मैं आप लोगों के चित्त के अनुकूल कार्य कर सकूंगा। किन्तु [आवश्चित्तमावो व्रतमा वोऽहं समितिं ददे] इन वाक्यों से कोई यह न समझ ले कि उसके इस प्रकार कथन मात्र से सारी शक्ति उसके हाथ में दे दी जाती थी।

[३] मं० १० सू० १७३ में प्रजा का प्रतिनिधि हो कर पुरोहित राजा को कहता है:—

आत्वा हार्षमन्तरेधि, ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः।
विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मात्वद्राष्ट्रमधिभ्रशत्॥

अर्थात् मैं ने सारी प्रजा के प्रतिनिधि रूप से तुझे चुन लिया है। अब तू पर्वत के समान निश्चल होकर इस कठिन राजकार्य को कर। तू इस प्रकार कार्य करना जिससे प्रजा सदा तेरे पक्ष में रहे ताकि तुझे राज्य सिंहासन से च्युत न होना पड़े। इस मन्त्र के "विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु" इन पदों से स्पष्ट है कि अपनी प्रतिज्ञा के अनुकूल आचरण न करने पर राजा को हटाया भी जा सकता है।

[४] यजुर्वेद २०। ९ का "विशि राजा प्रतिष्ठितः" यह वाक्य उपर्युक्त भाव को बिल्कुल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

स्पष्ट कर देता है जिसका भावार्थ यह है कि राजा की स्थिति प्रजा पर निर्भर है। यदि राजा अधिकार के मद से मत्त होकर अपने कर्तव्य से विमुख हो जाए तो प्रजा अपने नेताओं द्वारा उसे सिंहासन से हटा सकती है।

(५) यजु० अ० १७ का २४ वां मन्त्र इस सम्बन्ध में द्रष्टव्य है जो इस प्रकार है:—

विश्वकर्मन् हविषा वर्धनेन त्रातारमिन्द्रमकृणोदवध्यम्। तस्मै विशः समनमन्त पूर्वीरयमुग्रो विसव्यो यथासत्॥

इस मन्त्र में परमेश्वर से कहा गया है कि हे जगत्कर्तः! आपने प्रजा की रक्षा करने वाले (त्रातारम्) इन्द्र अर्थात् राजा को अवध्य=अहन्तव्य बना दिया है इसीलिये सारी प्रजाएं उस का सत्कार करती हैं। भावार्थ स्पष्ट है कि प्रजा की रक्षा के कारण राजा अहन्तव्य (जिसको मारना उचित नहीं) है यदि वह अपने इस कर्तव्य का पालन नहीं करता तो न केवल उसे राज सिंहासन से उतारा ही जा सकता है किन्तु यदि प्रजा के नेताओं की राय हो तो उसे प्राण दण्ड भी दिया जा सकता है।

(६) यजु० २७। ३ में राजा को अग्नि पद से सम्बोधन कर के वेद कहता है "त्वामग्ने वृणते ब्राह्मणा इमे, शिवो अग्ने संवरणे भवा नः॥"

अर्थात् हे राजन्? ज्ञानी ब्राह्मण लोग मिल कर तुम्हारा ही चुनाव करते हैं और तुम से आशा करते हैं कि तुम प्रजामात्र के लिये कल्याणकारी होगे।

इससे पता लगता है कि राजा के चुनाव में मुख्य भाग ब्राह्मणों का होना चाहिये क्योंकि वे साधारण लोगों की अपेक्षा अधिक बुद्धिमान्, विचारशील तथा निष्पक्षपात होते हैं। राजा के चुनाव हो चुकने पर भी ब्राह्मणों की प्रधान उत्तरदायिता बनी ही रहती है। इसी लिये यजु० ९।२३ में ब्राह्मण लोगों के मुख से कहलाया गया है कि "वयं राष्ट्र जागृयाम पुरोहिताः।" अर्थात् हम पुरोहित लोग राष्ट्र में सदा सावधान होकर रहें।

(७) यजु० २०। ५० में राजा के लिये विशेषण रूप से पुरूहूत शब्द का प्रयोग किया गया है जिसका अर्थ यह है कि जिसे प्रजा की बहु सम्मति से चुना गया हो (पुरुभिः=बहुभिः प्रजा जनैर्हूतः=स्वीकृतः)।

राजा के चुने जाने का क्या प्रयोजन है और किन गुणों को दृष्टि में रखते हुए उसका चुनाव होना चाहिये यह यजु० ९।४० में भली भांति बताया गया है। मन्त्र निम्न प्रकार से है:—
"इमं देवा असपत्नं सुवध्वं, महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रिस्येन्द्रियाय।"

इस मन्त्र का भावार्थ यह है कि देश को सब प्रकार से उन्नत करना राजा का कर्तव्य है इस कार्य को संभालने के लिये वही मनुष्य सब से अधिक योग्य है जिसका कोई शत्रु न हो (असपत्न) इसलिये हे देव लोगो! तुम अमुक सर्व प्रिय पुरुष को चुनो।

इस प्रकार ऋग्वेद तथा यजुर्वेद के इन प्रमाणों से इस बात में ज़रा भी सन्देह नहीं रह जाता कि राजा के प्रजा द्वारा चुने जाने की रीति का वेद में आधार पाया जाता है। अथर्ववेद के अनेक सूक्त इसी स्थापना का समर्थन करते हैं किन्तु विस्तार के भय से हम उनका उल्लेख करना यहां उचित नहीं समझते।

इस सम्बन्ध में यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिये कि वेद न केवल पुरुष का ही किन्तु योग्य स्त्रियों का भी राजकार्य में समान अधिकार बताते हैं। उदाहरण के तौर पर

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar. Digitized by eGangotri

यजु० अ० १४ के निम्न लिखित दो मन्त्र इस विषय में पेश किये जा सकते हैं।

"मूर्द्धासिराड् ध्रुवासि धरुणा धर्त्र्यसि धरणी।
आयुषे त्वा वर्चसे त्वा कृष्यै त्वा क्षेमाय त्वा ॥२१॥
यन्त्रीराड् यन्त्र्यसि यमनी ध्रुवासि धरित्री।
इषे त्वोर्जे त्वा रय्यै त्वा पोषाय त्वा ॥२२॥"

इन मन्त्रों में एक राजगुण सम्पन्न देवी को सम्बोधन कर के कहा है कि तू स्थिर मति, प्रजाओं की नायिका तथा उनका धारण करने में समर्थ है इसलिये देश की पुष्टि शक्ति और खेती आदि की उन्नति के लिये हम तेरा चुनाव करते हैं।

यजु० १४। १३ में राज्ञी तथा अधिपत्नी शब्द के प्रयोग से भी यह स्पष्ट है कि वेद की सम्मति में राज्य के लिये पुरुषों और स्त्रियों का समान अधिकार है॥

सत्य का सौदा।

[लेखक—श्रीयुत् सुदर्शन]

(१)

विद्यार्थी परीक्षा में फ़ेल होकर रोते हैं, पण्डित सर्वदयाल पास होकर रोए। जबतक पढ़ते थे, तबतक कोई चिन्ता न थी, घी खाते थे, दूध पीते थे, अच्छे अच्छे कपड़े पहनते थे, चड़क भड़क में रहते थे। यद्यपि उनके माता पिता इस योग्य न थे कि कालेज के ख़र्च सह सके, परन्तु उन के मामा एक ऊंचे दर्ज़े के सरकारी नौकर थे। उन्होंने चार वर्ष का ख़र्च देना स्वीकार किया, परन्तु यह भी साथ ही कह दिया कि "देखो रुपया रक्त चुसा कर मिलता है। मैं वृद्ध हूं और जान हत कर चार पैसे कमाता हूं। लाहौर जा रहे हो, वहां स्थान स्थान पर उपाधियां हैं, कोई चिमट न जाए। व्यसनों से बचकर डिगरी लेने का यत्न करो। यदि मुझे कोई ऐसा वैसा समाचार मिला, तो ख़र्च भेजना बंद करदूंगा।" सर्वदयाल ने वृद्ध मामा की बात का पूरा पूरा ध्यान रक्खा, और अपने आचार विचार से न केवल उनको शिकायत का ही अवसर नहीं दिया बल्कि उनकी आंख की पुतली बन गए। परिणाम यह हुआ कि मामा ने सुशील भजीते को आवश्यकता से अधिक रुपये भेजने शुरु कर दिये, और लिख दिया, कि "तुम्हारे खान पान में मुझे कोई आपत्ति नहीं, हां इतना ध्यान रखना कि कोई बात मर्य्यादा के विरुद्ध न होने पाए। मैं अकेला मनुष्य, रुपया क्या साथ ले जाऊंगा, तुम मेरे प्रिय हो, यदि किसी योग्य बन जाओ, तो इस से अधिक प्रसन्नता की बात क्या होगी?" इससे सर्वदयाल का उत्साह बढ़ा। पहले सात पैसे की जुराबें पहिनते थे, अब पांच आने की पहिनने लगे। पहले मलमल के रुमाल रखते थे अब एटोनिया के रखने लगे दिन को पढ़ने और रात को जागने से सिर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में कभी कभी पीड़ा होने लगती थी, कारण यह कि दूध के लिये पैसे न थे। परन्तु अब जब मामा ने ख़र्च की डोरी ढीली छोड़ दी, तो घी दूध दोनों की तंगी न रही। परन्तु इन सब के होते हुए भी सर्वदयाल उन व्यसनों से बचे रहे, जो लाहौर के विद्यार्थियों में प्रायः पाए जाते हैं।

इसी प्रकार चार वर्ष व्यतीत होगए, और इस बीच में उनके मामा की मृत्यु होगई। इधर सर्वदयाल बी० ए० की डिगरी लेकर घर को चले। जबतक पढ़ते थे सैकड़ों नौकरियां दिखाई देती थीं, परन्तु पास हुए तो कोई ठिकाना न देख पड़ा। पण्डित जी घबरा गये। जिस प्रकार यात्री दिन रात चल चला कर स्टेशन पर पहुंचे, परन्तु गाड़ी में स्थान न हो तो उसकी जो अवस्था होती है ठीक वही दशा पण्डित जी की थी। उनके पिता पण्डित शंकरदत्त पुराने समयों के मनुष्य थे। उनका विचार था कि बेटा अंगरेज़ी बोलता है, पतलून पहिनता है, नेकटाई लगाता है, तार तक पढ़ लेता है, इसे नौकरी न मिलेगी तो और किसे मिलेगी। परन्तु जब दिनों पर दिन और मास पर मास बीत गए, और सर्वदयाल के लिये कोई आजीविका न बनी, तो उनका धीरज टूट गया, जैसे जल का वेग बंद को तोड़ देता है। बेटे से बोले—"अब तू कुछ नौकरी भी करेगा या नहीं। मिडिल पास लौंडे रुपयों से घर भर देते हैं। एक तू है कि पढ़ते २ बाल सफ़ेद होगए, परन्तु कोई नौकरी ही नहीं मिलती।"

सर्वदयाल के कलेजे में मानों किसी ने घूंसा मार दिया, सिर झुका कर बोले। "नौकरियां तो बहुत मिलती हैं, परन्तु वेतन थोड़ा देते हैं, इस लिये देख रहा हूं कि कोई अच्छा अवसर हाथ आ जाय तो कर लूं।"

शंकरदत्त ने उत्तर दिया, "यह तो ठीक है, परन्तु जबतक अच्छी न मिले, बुरी ही कर लो जब फिर अवसर मिलेगा छोड़ देना। तुम आप पढ़े लिखे हो, सोचो बैठे रहने से कोई कुछ दे थोड़ा देता है।"

सर्वदयाल चुप होगये, उत्तर न दे सके। शंकरदत्त पूजा पाठ करने वाले मनुष्य इस बात को क्या समझें, कि ग्रैजुएट साधारण नौकरी नहीं कर सकता।

—o—

(२)

दोपहर का समय था, सर्वदयाल ट्रिब्यून की "आवश्यक्ता" देख रहे थे। एकाएक एक विज्ञापन देख कर उनका हृदय धड़कने लगा। अम्बाले के प्रसिद्ध रईस रायबहादुर हनुमन्त रायसिंह एक मासिक पत्र "रफ़ीकहिन्द" के नाम से निकालने वाले थे। उनको उसके लिये एक सम्पादक की आवश्यकता थी, जो उच्च श्रेणी का शिक्षित और नवयुवक हो, तथा लिखने में अच्छा अभ्यास रखता हो, और जातीय सेवा का प्रेमी हो, वेतन पांच सौ रुपया मासिक। पण्डित सर्वदयाल बैठे थे, खड़े होगये और सोचने लगे, "यदि यह स्थान मिल जाय तो दरिद्र कट जाय। मैं इसके सब प्रकार योग्य हूं।" शिक्षा काल में साहित्य परिषद (लिटरेरी क्लब) में उनकी प्रभावशाली वक्तृताओं और लेखनी की धूम थी। बोलते समय उनके मुख से फूल बिखिरते थे, और श्रोताओं के मस्तिष्क को अपनी वासना से सुवासित कर देते थे। मित्र मण्डल उनको गोद में उठा लेते और कहते—"तेरी रसना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मोहिनी है।" इसके अतिरिक्त उनके लेख बड़े २ प्रसिद्ध पत्रों में निकलते रहे। पण्डित सर्वदयाल ने कई बार इस काम को कोसा था, आज पता लगा कि संसार में दुर्लभ पदार्थ का भी कोई ग्राहक है। कंपित कर से प्रार्थना पत्र लिखा। रजिस्टरी करा दिया परन्तु पीछे सोचा–"व्यर्थ का खर्च किया। मैं साधारण ग्रैजुएट हूं, मुझे कोई पूंछेगा भी नहीं। पांच सौ रुपया मासिक है, सैकड़ों उम्मेदवार होंगे और एक से एक बढ़कर। कई वकील और बैरिस्टर जाने को तैय्यार होंगे, मैंने बड़ी मूर्खता की, जो पांच सौ रुपया देख कर रीझ गया, जिस प्रकार अबोध बालक चन्द्रमा को देखकर हाथ पसार देता है।" परन्तु फिर विचार हुआ—"जो इस नौकरी को पाएगा वह भी तो मनुष्य ही होगा। योग्यता सब में प्रायः एकसी ही होती है। हां जब तक कार्य्य में हाथ न डाला जाय, तब तक मनुष्य झिझकता है, परन्तु काम का उत्तर दायित्व सब कुछ सिखा देता है।" इन्हीं विचारों में कुछ दिन बीत गये, कभी आशा कल्पनाओं की झड़ी बांध देती थी, कभी निराशा हृदय में अन्धकार भर देती थी। सर्व दयाल चाहते थे कि इस विचार को मस्तिष्क से बाहर निकाल दें, और किसी दूसरी ओर ध्यान दें, किन्तु वे ऐसा न कर सके। स्वप्न में भी यही विचार सताने लगे। पन्द्रह दिन बीत गये परन्तु कोई उत्तर न आया।

निराशा ने कहा—अब चैन से बैठो, कोई आशा नहीं। परन्तु आशा बोली अभी से निराशा का क्या कारण? पांच सौ रुपये की नौकरी है, सैकड़ों प्रार्थनाएं गई होंगी, उनको देखने के लिये कुछ समय चाहिये। सर्वदयाल ने निश्चय किया कि अभी एक अठवाड़ा और देखना चाहिये। उनको न खाने की चिन्ता थी न पीने की, दरवाज़े पर खड़े डाकिये की बाट देखते रहते, उसे आने में देर हो जाती तो टहलते टहलते बाज़ार तक चले जाते, परन्तु अपनी इस अवस्था को डाकिये पर प्रकट न करते, और पास पहुंच कर कानी आंख से देखते २ गुज़र जाते तथा फिर मुड़कर देखने लगते, कि डाकिया बुला तो नहीं रहा। फिर सोचते—कौन जाने उसने देखा भी है या नहीं। इस विचार से ढाड़स बंध जाती तो तुरन्त चक्कर काटकर डाकिये से पहिले दरवाज़े पर पहुंच जाते, और लापर्वाह से होकर पूंछते—"कहो भाई हमारा भी पत्र है वा नहीं?" डाकिया सिर हिलाता और आगे चला जाता। सर्वदयाल हताश होकर अन्दर चले जाते। यह उनका नित का काम था।

जब तीसरा अठवाड़ा भी बीत गया, और कोई उत्तर न आया तो सर्वदयाल निराश हो गए, और समझ गये कि यह मेरी भूल थी। ऐसे स्थान सिफारिश से मिलते हैं, खाली डिगरियों को कौन पूछता है? इतने में ही तार के चपरासी ने पुकारा, सर्वदयाल का मन उछलने लगा। जीवन के भविष्य में आशा की चीयमान लता लहलहाती दिखाई दी। लपके लपके दरवाजे पर गये, और तार देखकर उछल पड़े। लिखा था—"स्वीकार है आ जाओ।"

---

(३)

सायंकाल गाड़ी में बैठे तो हृदय प्रसन्नता से गद्गद हो रहा था और मस्तिष्क में सैकड़ों विचार दौड़ रहे थे। सम्पादकत्व (एडिटरी) उनक लिये जातियसेवा का उपयुक्त साधन था। सोचने लगे कि—"यह मेरा सौभाग्य है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जो ऐसा अवसर मिला। जो कहीं क्लार्क भर्ती हो जाता, तो जीवन काटना दूभर हो जाता।" वेग से काग़ज और पेन्सल निकाल कर पत्र की व्यवस्था ठीक करने लगे। पहिले पृष्ठ पर क्या हो, दूसरे पर क्या हो, सम्पादकीय वक्तव्य कहां दिये जाएं। सार और सूचना के लिये कौनसा स्थान उपयुक्त होगा, 'टाईटल' का स्वरूप कैसा हो, सम्पादक का नाम कहां रहे? इन सब बातों को सोच सोचकर अंकित करते गये। एकाएक विचार उठा,—पद्य के लिये कोई स्थान न रक्खा, और पद्य एक ऐसी वस्तु है जिससे पत्र की छवि बढ़ जाती है। जिस प्रकार भोजन के साथ चटनी एक विशेष स्वाद देती है उसी प्रकार विद्वत्ता पूर्ण लेख और गम्भीर विचारों के साथ पद्य एक आवश्यक वस्तु है। लोग रुचि से पढ़ते हैं। उस समय उन्हें अपने कई सुहृद मित्र स्मरण हो आए जो उस पत्र को विना पढ़े फेंक देते थे जिसमें कविता व पद्य न हो। सर्वदयाल का निश्चय हो गया कि इसके विना पत्र को सफलता न होगी। सहसा एक मनोरंजक विचार से वे चिहुंक उठे। रात्रि का समय था, गाड़ी पूरे वेग से जा रही थी। सर्वदयाल जिस कमरे में यात्रा कर रहे थे, उस में उनके अतिरिक्त केवल एक यात्री और था जो अपनी जगह पड़ा सो रहा था। सर्वदयाल बैठे थे खड़े हो गये, और पत्र के तैय्यार किये हुए नोट गद्दे पर रखकर इधर उधर टहलने लगे। फिर बैठकर काग़ज पर सुन्दर अक्षरों से लिखा:—

पण्डित सर्वदयाल बी. ए. एडिटर "रफ़ीक हिन्द" अम्बाला।

परन्तु लिखते समय हाथ कांप रहे थे, मानों कोई अपराध कर रहे हों। यद्यपि कोई देखने वाला पास न था, तथापि उस काग़ज के टुकड़े को जिससे ओछापन और बालकपन झलकता था, बार बार छिपाने का यत्न करते थे, जिस प्रकार अनजान बालक अपनी छाया से डर जाता हो। परन्तु शनैः शनैः यह भय का भाव दूर हो गया, और वे स्वाद ले लेकर उस पंक्ति को बारम्बार पढ़ने लगे।

पण्डित सर्वदयाल बी. ए. एडिटर रफ़ीक हिन्द अम्बाला।

वे सम्पादकत्व के स्वप्न देखा करते थे, अब राम राम करके आशा की हरी भरी भूमि सामने आई, तो उनके कर्ण कुहर में वही शब्द गूंजने लगे जो उस काग़ज के टुकड़े पर लिखे थे:—

पण्डित सर्वदयाल बी० ए० एडिटर रफ़ीक हिन्द अम्बाला।

देर तक इसी धुन और आनन्द में मग्न रहने के पश्चात् पता नहीं कितने बजे उन्हें नींद आई, परन्तु आंखे खुलीं तो दिन चढ़ चुका था, और गाड़ी अम्बाला स्टेशन पर पहुंच चुकी थी। जाग कर पहिली वस्तु जो उनके ध्यान में आई वह वही काग़ज का टुकड़ा था, पर अब उस का कहीं पता न था। सर्वदयाल का रंग उड़ गया, आंख उठाकर देखा तो सामने का यात्री जा चुका था। सर्वदयाल की छाती में किसी ने घूसा मारा, मानों उनकी कोई आवश्यक वस्तु खोगई है। विचार हुआ "यह यात्री कहीं ठाकुर हनुमंतसिंह न हो। यदि वही हुआ और उसने मेरा ओछापन देख लिया तो क्या कहेगा?"

इतने में गाड़ी ठहर गई। सर्वदयाल बेग लिये हुए नीचे उतरे, और स्टेशन से बाहर निकले। एक नवयुवक ने पास आकर पूछा "क्या आप रावलपिण्डी से आरहे हैं?"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"ठाकुर साहब ने बग्घी भेजी है।" सर्वदयाल का हृदय कमल की न्याईं खिल गया। आज तक कभी बग्घी में न बैठे थे, चड़क भड़क के साथ सवार होगये और आस पास देखने लगे। बग्घी चली और एक आलीशान कोठी के आहाते में जाकर रुक गई। सर्वदयाल का हृदय धड़कने लगा। कोचवान ने दरवाज़ा खोला और आदर से एक ओर खड़ा होगया। सर्वदयाल रुमाल से मुंह पोंछते हुए नीचे उतरे और बोले "ठाकुर साहब किधर होंगे?"

कोचवान ने उत्तर में एक मुंशी को पुकार कर बुलाया और कहा, "बाबू साहब रावलपिण्डी से आते हैं। ठाकुर साहब के पास ले जाओ।"

समाचार पत्र के ख़र्च का ब्योरा इसी मुंशी ने तैय्यार किया था, इस लिये तुरन्त समझ गया कि यह पंडित सर्वदयाल हैं जो रफ़ीकहिन्द के सम्पादकत्व के लिये चुने गये हैं, आदर से बोला, "आईये महाशय!"

पण्डित सर्बदयाल मुंशी के पीछे २ चले। मुंशी एक कमरे के आगे रुक गया और रेशमी पर्दा उठाकर बोला, "चलिये, ठाकुर साहब अकेले ही हैं।

---

(४)

सर्वदयाल का सिर घूमने लगा। जो अवस्था निर्बल विद्यार्थी की परीक्षा के अवसर पर होती है, सर्बदयाल की वही अवस्था हुई। शंका हुई, कि ठाकुर साहब मेरे विषय में जो सम्मति रखते हैं, वह मेरी बात चीत से बदल न जाय। तथापि साहस करके अन्दर प्रविष्ट हुए। ठाकुर हनुमन्तरायसिंह तीस बत्तीस वर्ष के सुन्दर नवयुवक थे, मुस्कराते हुए आगे बढ़े और बड़े चाव से सर्वदयाल से हाथ मिला कर बोले "आप आगए। कहिये राह में कोई कष्ट तो नहीं हुआ।"

सर्वदयाल ने धड़कते हुए हृदय से उत्तर दिया "जी नहीं।"

"मैं आपके लेख बहुत समय से देख रहा हूं। ईश्वर की बड़ी कृपा है जो आज दर्शन भी हुए। निस्सन्देह आपकी लेखनी में एक आश्चर्य्यमयी शक्ति है।"

सर्वदयाल पानी होगए। अपनी प्रशंसा सुन कर हर्ष का वारपार न रहा, तो भी संभल कर बोले–"यह आपकी बड़ाई है।"

ठाकुर साहब ने भावेकता से कहा "यह आपकी योग्यता के अनुकूल ही है। परन्तु मेरी सम्मति में आप सरीखा लेखक पंजाब भर में नहीं। आप मानें या न मानें समाज को आप पर सच्चा मान है। "रफ़ीकहिन्द" का सौभाग्य है, कि उसे आप सा सम्पादक प्राप्त हुआ।

सर्वदयाल के हृदय में जो आशंका होरही थी वह दूर होगई समझे कि मैदान मार लिया बात का रुख़ बदलने को बोले "पत्र कब से निकलेगा!"

ठाकुर साहब ने हंस कर उत्तर दिया "यह प्रश्न मुझे आप से करना चाहिये था"।

उस दिन १५ फ़रबरी थी। सर्बदयाल कुछ देर सोच कर बोले "पहला अङ्क पहली ऐप्रलको निकल जाय?"

"अच्छी बात है, परन्तु इतने थोड़े समय में लेख मिल जायेंगे या नहीं, इस बात का विचार कर लीजियेगा।"

"इसकी चिन्ता न कीजिये, मैं आज से ही तैय्यारी में लगता हूं। परमात्माने चाहा तो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आप पहले अंक को ही देख कर प्रसन्न हो जायेंगे।"

एका एक ठाकुर साहब चिहुंक कर बोले "कदाचित् यह सुन कर आपको आश्चर्य्य होगा कि इस विज्ञापनके उत्तरमें लगभग दो हज़ार अर्जियां आई थीं। उनमेंसे बहुत सी ऐसी हैं, जो साहित्य और लालित्य के मोतीयों से भरी हुई थीं, परन्तु आपका पत्र सच्चाई से भरपूर है किसीने लिखा था-मैं इस समय दुकान करता हूं और चार पांच सौ रुपये मासिक पैदा कर लेता हूं, परन्तु जातिय सेवा के लिये यह सब कुछ छोड़ने को तैय्यार हूं। किसीने लिखा था—मेरे पास खाने पीनेकी कमी नहीं, परन्तु स्वदेश प्रेम हृदयमें उत्साह उत्पन्न कर रहा है। किसीने लिखा था-मैं बैरिस्टरी के लिये विलायत जानेकी तैय्यारियां कररहा हूं परन्तु यदि आप यह काम मुझे देसकें, तो इस विचार को छोड़ा जासकता है। अर्थात् प्रत्येक प्रार्थना पत्र से यही प्रगट होता है, कि प्रार्थी को वेतनकी तो आवश्यकता नहीं, और कदाचित् वह नौकरी करना अपमान भी समझता है परन्तु यह सब कुछ देश प्रेम के हेतु सहने को उद्यत है। अर्थात् यह नौकरी करके मुझ पर कोई उपकार कर रहा है। केवल आपका पत्र है, जिसमें सत्य से काम लिया गया है, और यह वह गुण है, जिसके सामने मैं सब कुछ तुच्छ समझता हूं।"

———

(५)

ऐप्रिलकी पहिली तारीख़ को रफ़ीक हिन्द का प्रथम अंक निकला तो पञ्जाब के पढ़े लिखे लोगों में कोलाहल मच गया, और पण्डित सर्वदयाल के नाम की जहां तहां चर्चा होने लगी। उनके लेखों को लोग पहिले भी मानते थे, परन्तु रफ़ीक हिन्द के प्रथम अंकने तो उनको देशके प्रथम श्रेणी के सम्पादकों की पांक्तिमें ला बिठाया। पत्र क्या था, सुन्दर और सुगन्धित फूलोंका गुच्छा था, जिस की एक एक कुसुम कलि का चटक चटक कर अँपना मोहिनी वासना से पाठकोंके मनों को मुग्ध कर रही थी। एक समाचार पत्रने समालोचना करते हुए लिखाः—

"रफ़ीक हिन्दका प्रथम अंक निकल गया है, और ऐसी सौन्दर्यतासे कि देख कर चित्त प्रसन्न हो जाता है। पण्डित सर्वदयाल को इस समय तक हम केवल एक लेखक ही जानते थे परन्तु अब जान पड़ा कि पत्र सम्पादक के काम में भी उनकी योग्यता पराकाष्ठा तक पहुंची हुई है। अच्छे लेख लिख लेना और बात है और अच्छे लेख प्राप्त करके उन्हें ऐसे क्रम और विधिसे रखना कि किसी की दृष्टिमें खटकने न पाए, और बात है। पण्डित सर्वदयाल की प्रभाव शाली लेखनी में किसी को सन्देह न था, परन्तु रफ़ीक हिन्द ने इस बातको स्पष्ट कर दिया है कि सम्पादक के काम में भी पूर्णतया योग्य हैं। हमारी सम्मति में रफ़ीक हिन्दसे वञ्चित रहना जातीय भाव से अथवा साहित्य व सदाचार के भाव से दुर्भाग्य ही नहीं वरं महान् अपराध है।"

एक और पत्र की सम्मति थी—"यदि उर्दू भाषा में कोई ऐसा मासिक पत्र है, जिसे युरोप और अमेरिकाके पत्रों की तुलना में रक्खा जा सकता है तो वह रफ़ीक हिन्द है। जो सब प्रकार के गुणों से सुसज्जित है। उसके गुणोंको परखने के लिये उसे एक बार देख लेना पर्याप्त है। निस्सन्देह पण्डित सर्व-

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar Collection. Digitized by eGangotri

दयालने उर्दू साहित्य का सिर ऊंचा कर दिया है।"

ठाकुर हनुवन्तराय ने यह समालोचनायें देखी तो आनन्द से उछल पड़े। मोटर में बैठ कर रफ़ीक हिन्द के कार्य्यालय में गए, और पण्डित सर्वदयाल को बधाई दे कर बोले "मुझे यह आशा न थी कि इसमें इतनी सफलता हो सकेगी।"

पं० सर्बदयाल ने उत्तर दिया— मेरे विचार में यह कोई सफलता नहीं।

ठाकुर साहब ने कहा "आप कहें परन्तु स्मरण रखिये वह दिन दूर नहीं जब अख़बारी दुनियां आपको पंजाबका शिरोमणि स्वीकार करेगी।"

———

(६)

इसी प्रकार एक वर्ष व्यतीत होगया, रफ़ीक हिन्दकी कीर्त्ति देश भर में फैल गई, और पण्डित सर्वदयाल की गिनती बड़े आदमियों में होने लगी। कंगाली के दिन बीत चुके थे, अब ऐश्वर्य्य और प्रख्यातका समय था। उन्हें जीवन एक मनोरंजक यात्रा प्रतीत होती थी, जो फूलोंकी छाया में तय हो रही हो, और जिसे आम्र पल्लवों में बैठ कर गाने वाली श्यामा और कली कली का रस चूसने वाला भौंरा भी तृषित नेत्रों से देखता हो, कि इतने में भाग्य ने पासा पलट दिया।

अम्बालाका (म्यूनिस्पल्टी के मेम्बर चुनने का समय) समीप आया, तो ठाकुर हनुवंतसिंह भी एक पक्ष की ओर से मैम्बरी के लिये प्रयत्न करने लगे। धनाढ्य पुरुष थे, रुपया पैसा पानी की न्याईं बहानेको उद्यत हो गए। उनके मुकाबले में लाला हशमतराय खड़े हुए, हाई स्कूल के हेडमास्टर, वेतन थोड़ा लेतेथे, कपड़े साधारण पहनते थे, कोठी में नहीं वरं नगरकी एक गली में उनका आवास था, परन्तु जाति की सेवा के लिये हर समय उद्यत रहते थे। उनसे पण्डित सर्वदयाल की बड़ी मित्रता थी। उनका विचार न था कि इस झंझट में पड़ें, परन्तु सुहृद् मित्रों ने जोर देकर उन्हें खड़ा कर दिया, पण्डित सर्वदयाल ने सहायता का वचन दिया।

ठाकुर हनुवन्त राओसिंह जातीय सेवा के अभिलाषी तो थे, परन्तु उनके वचन और कर्म्म में बड़ा अन्तर था। उनकी जातीय सेवा व्याख्यान झाड़ने, लेख लिखने, और प्रस्ताव पास कर देने तक ही थी; इससे परे जाना वे अनावश्यक ही न समझते, बल्कि स्वार्थ सिद्ध होते, अपने बचन के विरुद्ध भी कार्य्य करने से न झिझकते थे। इस बात से पण्डित सर्बदयाल भली भान्ति परिचित थे इसलिये उन्होंने अपने मन में निश्चय कर लिया—कि परिणाम चाहे कैसा ही बुरा क्यों न हो, परन्तु ठाकुर साहब को मेम्बर न बनने दूंगा। इस कुर्सी के लिये वे, लाला हशमतराय को अधिक उपयुक्त समझते थे।

रविवार का दिन था, पण्डित सर्बदयाल की वक्तृता सुनने के किये सहस्रों लोग एकत्र होरहे थे। विज्ञापन में व्याख्यान का विषय "म्यूनिसिपल इलैक्शन" था पण्डित सर्बदयाल क्या कहते हैं, यह जानने के लिये लोग अधीर होरहे थे। लोगों की आंखें इस ताक में थीं, कि देखें पंडित जी सत्य को अपनाते हैं व झूठ की ओर झुकते हैं? न्याय का पक्ष लेते हैं या रुपये पैसे का। इतने में पण्डित सर्बदयाल प्लेटफार्म पर आए। हाथों ने तालियों से स्वा-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मत किया। कान प्लेटफ़ार्म की ओर लग कर सुनने लगे। पण्डित जी ने कहाः—

"मैं यह नहीं कहता कि आप अमुक मनुष्य को अपना वोट दें, किन्तु इतना अवश्य कहता हूं, कि जो कुछ करें समझ सोच कर करें। यह कोई साधारण बात नहीं जिस में आप उपेक्षा करें। और चाय की प्यालियों, बिस्कुट की तश्तारियों व टांगों की सैर पर वोट दे दें अथवा जाति बिरादरी व साहुकारा ठाठ बाट पर लट्टू होजायें प्रत्युत इस वोट का अधिकारी वह मनुष्य है, जिसके हृदय में करुणा तथा देश और जाति की सहानुभूति हो। जो जाति के साधारण और छोटे लोगों में घूमता हो, और जाति को ऊंचा उठाने में दिन रात मग्न रहता हो। जो प्लेग और विशूचिका के दिनों में रोगियों की सेवा सुश्रूषा करता हो और अकाल के समय पर कंगालों को सांत्वना देता हो। जो सच्चे अर्थों में देश का हितैषी हो और लोगों के हार्दिक विचारों को स्पष्टतया प्रगट करने और उनके समर्थन करने में निर्भय और पक्ष-पात रहित हो। ऐसा मनुष्य निर्धन होने पर भी चुनाव का अधिकारी है क्योंकि यही भाव ही उसके भविष्य में उपयोगी सिद्ध होने में प्रमाण हैं।"

ठाकुर हनुमन्तराओ सिंह को पूरा पूरा विश्वास था कि पण्डितजी उनके पक्ष में बोलेंगे, परन्तु व्याख्यान सुनकर उनके तन में आग लग गई। कुछ मनुष्य ऐसे भी थे जो पण्डित जी की लोक प्रियता देखकर उनसे जलते थे, उनके तो मानों ब्रह्मा दाहिने हुआ, ठाकुर साहब के पास जाकर बोले–"यह बात क्या है? जो वह आपका अन्न खाकर आपके ही विरुद्ध बोलने लग गया।"

ठाकुर साहब ने उत्तर दिया "मैंने उसके साथ कोई बुरा व्यवहार नहीं किया न जाने उसके मन में क्या समाई है।"

एक मनुष्य ने कहा—"कुछ घमन्डीसा है।"

ठाकुर साहब ने जोश में आकर कहा–"मैं उसका घमण्ड तोड़ दूंगा।" कुछ देर पीछे पण्डित सर्वदयाल बुलाए गए। वे इसके लिये पहले ही से उद्यत थे। उनके आने पर ठाकुर साहब ने कहा—"क्यों पण्डित साहब! मैंने क्या अपराध किया है?

पण्डित सर्वदयाल का हृदय धड़कने लगा, परन्तु साहस करके बोले "मैंने कब कहा है कि आपने कोई अपराध किया।"

ठा०—"तो इस वक्तृता का क्या तात्पर्य्य था?"

पं०—"यह प्रश्न सिद्धान्त का है।"

ठा०—"तो मेरे विरुद्ध व्याख्यान दोगे?"

पण्डित सर्वदयाल ने भूमि की ओर देखते हुए उत्तर दिया–"मैं आपकी अपेक्षा लाला हशमतराय को मैम्बरी के लिये अधिक उपयुक्त समझता हूं।"

ठा०—"यह सौदा आपको बहुत मंहगा पड़ेगा।"

पण्डित सर्वदयाल ने उन्नत शिर होकर उत्तर दिया "मैं इसके लिये सब कुछ देने को तैय्यार हूं।"

ठाकुर साहब इस साहस को देखकर अवाक् रह गए और बोले—"नौकरी और नाम दोनों?"

पं०—"हां नौकरी और नाम दोनों।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

ठा०—"इस तुच्छ, उद्धत कल के छोकरे लाला हशमतराय के लिये ?"

पं०—नहीं, सच्चाई के लिये।"

ठाकुर साहब को ख़याल न था कि बात इतनी बढ़ जायेगी, न उनका यह विचार था कि इस विषय को इतनी दूर ले जाएं। परन्तु जब बात बढ़ गई, तो पीछे न हट सके, गर्ज कर बोले "यह सच धर्म्मी यहां न निभेगी।"

पण्डित सर्वदयाल को कदाचित कोमल शब्दों में कहा जाता तो सम्भव है हठ को छोड़ देते। परन्तु इस अनुचित दबाव को सहन न कर सके। धमकी के उत्तर में उन्होंने ऐंठकर कहा– "यह असम्भव है।"

ठा०—"क्या कर लोगे ? क्या तुम समझते हो, कि तुम्हारी कुछ एक वक्तृताओं से मैं मैम्बर न बन सकूंगा ?"

पं०—"नहीं। यह बात तो नहीं समझता।"

ठा०—"तो फिर तुम अड़ते किस बात पर हो ?"

पं०—"यह मेरा कर्त्तव्य है। उसे पूरा करना मेरा काम है, फल परमेश्वर के हाथ में है।"

ठाकुर साहब ने मुंह मोड़ लिया। पंडित सर्वदयाल टांग में जा बैठे और कोचवान से बोले "चलो।"

इसके दूसरे दिन पण्डित सर्वदयाल ने त्यागपत्र भेज दिया।

संसार की गति विचित्र है। जिस सच्चाई ने उन्हें एक दिन सुख संपत्ति के दिन दिखाये थे, उसी के कारण नौकरी से जवाब मिला। नौकरी के करते समय पण्डित सर्वदयाल प्रसन्न हुए थे, छोड़ते समय उससे भी अधिक प्रसन्न हुए।

परन्तु लाला हशमतराय ने यह समाचार सुना तो अवाक् रह गए, और भागे भागे पण्डित सर्वदयाल के पास जाकर बोले—"भाई मैंने मैम्बरी छोड़ी, तुम अपना त्यागपत्र लौटा लो।"

पण्डित सर्वदयाल के मुख मण्डल पर एक अपूर्व तेज की आभा दमकने लगी, जो इस मायावी संसार में कदाचित कहीं ही देख पड़ती है। उन्होंने धैर्य्य और दृढ़ता से उत्तर दिया "यह असम्भव है।"

ला०—"क्या मेरी मैम्बरी का इतना ही ख़याल है ?"

पं०—"नहीं यह कर्त्तव्य का प्रश्न है।"

लाला हशमतराय निरुत्तर होकर चुप हो गए। सहसा उन्हें विचार हुआ कि 'रफ़ीक हिन्द' पण्डितजी को अत्यन्त प्रिय है मानों वह उनका प्यारा बेटा है। फिर धीर भाव से बोले "रफ़ीक हिन्द को छोड़ दोगे ?"

पं०—"हां छोड़ दूंगा।"

ला०—"फिर क्या करोगे ?"

पं०—कोई काम करूंगा परन्तु सच्चाई का बध न करूंगा।"

ला०—पण्डित जी तुम भूल रहे हो, अपना सब कुछ गंवा बैठोगे।"

पं०—"परन्तु सत्य तो बचा रहेगा, मैं इसी को चाहता हूं,"

लाला हशमतराय ने देखा कि अब कुछ और कहना निष्फल है; चुपके हो कर बैठ गए इतने में ठाकुर हनुमन्तराओ के एक नौकर ने आकर पण्डित सर्वदयाल के हाथ में एक लिफ़ाफ़ा रख दिया। उन्होंने खोल कर पढ़ा और कहा "मुझे पहिले ही आशा थी।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लाला हशमतराय ने पूछा "क्या है ? देखूं।"

पं—त्याग पत्र स्वीकार होगया है"

---

(७)

ठाकुर हनुमंतराओ सिंह ने सोचा, यदि अब भी सफलता न हुई तो नाक कट जायगी धनवान पुरुष थे, थैली का मुंह खोल दिया। सुहृद मित्र और लोलुप खुशामदियों की सम्मति से कारीगर हलवाई बुलवाए गये और भट्टियां गर्म होने लगीं। टांगे दौड़ने लगे और वोटों पर पौण्ड निछावर होने लगे। अब तक ठाकुर साहब का उद्धत सिर कभी भलों भलों के आगे न झुका था। परन्तु इलैक्शन क्या आया उनकी प्रकृति ही बदल गई। अब कंगाल से कंगाल मनुष्य भी मिलता तो मोटर रोक लेते और हाथ जोड़ कर नम्रता से कहते–"कोई सेवा हो तो आज्ञा दीजिए, मैं दास हूं।" कदाचित् ठाकुर साहब का विचार था कि लोग इस प्रकार वश में हो जायेंगे। परन्तु यह उन की भूल थी। हां जो लालची थे वे दिन रात रात ठाकुर साहब के घर मिठाईयां उड़ाते थे, और मन ही मन प्रार्थना करते कि गवर्नमेन्ट नियम बदल दे और इलैक्शन हर तीसरे महीने हुआ करे।

परन्तु लाला हशमतराय की ओर से न कोई टांगा दौड़ता था और न लड्डू बटते थे। हां दो चार सभायें अवश्य हुईं जिन में पण्डित सर्वदयाल ने धाराप्रवाह व्याख्यान दिये। और प्रत्येक रूप से यह सिद्ध करने का यत्न किया कि लाला हशमतराय से बढ़कर मेम्बरी के लिये और कोई मनुष्य योग्य नहीं।

इलैक्शन का समय आ पहुंचा। ठाकुर हनुमन्तराओ सिंह और लाला हशमतराय दोनों के हृदय धड़कने लगे, जिस प्रकार परीक्षा का परिणाम निकलते समय विद्यार्थी अधीर हो जाते हैं। दोपहर का समय था, पर्चिओं की गिनती होरही थी। ठाकुर हनुमंतराओं के आदमी फूलों की मालाएं, विक्टोरिया बैण्ड, और आतिशबाज़ी के गोले लेकर आए थे। उनको पूरा पूरा विश्वास था कि ठाकुर साहब मेम्बर बन जाएंगे। और विश्वास का कारण भी था, क्योंकि ठाकुर साहब का पचीस हज़ार उठ चुका था। परन्तु परिणाम निकला तो उनकी तैय्यारियां धरी धराई रह गईं। लाला हशमतराय के वोट अधिक थे।

इसके पंद्रहवें दिन पण्डित सर्वदयाल रावलपिन्डी को रवाना हुए; रात्रि का समय था, आकाश तारों से जगमगा रहा था। इसी प्रकार की रात्रि थी जब वे रावलपिण्डी से अम्बाले को आरहे थे। किन्तु इस रात्रि और उस रात्रि में बड़ा अन्तर था, तब हर्ष से उनके मुख पर उल्लास वर्ष रहा था, आज नेत्रों से उदासी टपक रही थी। भाग्य की बात, आज सूट भी वही पहिना हुआ था, जो उस दिन था। उसी प्रकार कमरा ख़ाली था, और एक यात्री एक कौने में पड़ा सो रहा था।

पण्डित सर्वदयाल ने शीत से बचने के लिये हाथ जेब में डाला तो काग़ज़ का एक टुकड़ा निकला, देखा तो वही काग़ज़ था जिस पर एक वर्ष पहले उन्होंने चाव से लिखा था:–

पण्डित सर्वदयाल बी० ए० एडीटर रफ़ीकहिन्द अम्बाला।

उस समय इसे देख कर आनन्द की तरंगें उठी थीं आज शोक छा गया। उन्होंने इसके

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

टुकड़े टुकड़े कर दिये और कंबल ओढ़ कर लेट गए, परन्तु निद्रा न आई।

८

कैसी शोक जनक और हृदय द्रावी घटना है कि जिसकी योग्यता पर समाचार पत्रों में लेख निकलते हों, जिस की वक्तृताओं पर वाग्मिता निछावर होती हो, जिसका सत्य स्वभाव अटल हो, उसको आजीविका चलाने के लिये केवल पांच सौ रुपये की पूंजी से दुकान करनी पड़े। निस्सन्देह यह सभ्य समाज का दुर्भाग्य है।

पण्डित सर्वदयाल को दफतर की नौकरी से घृणा थी। और अबतो वे एक वर्ष एडीटर की कुर्सी पर बैठ चुके थे–"हम और हमारी सम्मति" का स्वाद चखचुके थे, इस लिये किसी और नौकरी को मन न मानता था। कई समाचार पत्रों में प्रार्थनापत्र भेजे परन्तु नौकरी न मिली। विवश होकर उन्होंने एक दुकान खोली। परन्तु दुकान चलाने के लिये जो चालें चली जाती हैं जो झूठ बोले जातेहैं,जो अधिक से अधिक मूल्य बतला कर उस को कम से कम कहा जाता है उनसे पण्डित सर्वदयाल को घृणा थी। उनको मान इस बात का था कि मेरे यहां सत्यका सौदा हैं परन्तु संसार में इस सौदे के ग्राहक कितने हैं? उनके पिता उनसे लड़ते थे, झगड़ते थे, गालियां देते थे। पण्डित सर्वदयाल यह सब कुछ सहन करते थे, और चुपचाप जीवन के दिन काटते थे। उनकी आय इतनी न थी कि पहले की तरह चड़क भड़क से रहसकें। इस लिये न कालर नेकटाई लगाते थे न पतलून पहनते थे। बालों में तेल डाले महीनों बीत जाते थे, परन्तु उन्हें कोई चिन्ता न थी। घर में गाय रखी हुई थी उसके लिये कुट्टी करते थे, सानी बनाते थे कहार रखने की शक्ति न थी अतः कूएं से पानी भी आप लाते थे। उनकी स्त्री चर्खा कातती थी, कपड़े सींती थी, और घर के अन्य काम काज करती थी, और कभी कभी लड़ने भी लगती थी। परन्तु सर्वदयाल चुप रहते थे।

प्रातःकाल का समय था, पण्डित सर्वदयाल अपनी दुकान पर बैठे रफ़ीक हिन्द का नवीन अंक देख रहे थे, और रह रह कर पश्चाताप कर रहे थे, जैसे बागवान सिर तोड़ परिश्रम से फूलों की क्यारियां तैय्यार करे, और उनको कोई उद्धत माली नष्ट करदे

इतने में उनकी दुकान के सामने एक मोटरकार आकर रुकी, और उसमें से ठाकुर हनुवन्तराओ सिंह उतरे। पण्डित सर्वदयाल चिहुंक पड़े। ख्याल आया–"आंखें कैसे मिलाऊंगा। एक दिन वह था कि इनमें प्रेम का वास था, परन्तु आज उसी स्थान पर लज्जाका निवास है।

ठाकुर हनुमन्तराओ ने पास आकर कहा "आहह। पण्डित जी बैठे हैं, बहुत चिर के पश्चात् दर्शन हुए। कहिये क्या हाल है"?

पण्डित सर्वदयाल ने धीरज से उत्तर दिया "अच्छा है। परमात्मा की कृपा है"।

हां"यह दुकान अपनी है क्या"।

पं० "जीहां"।

ठा० "कब खोली"?

पं० "आठ मास के लगभग हुए हैं"?

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ठाकुर साहबने उनको चुभती हुई दृष्टि से देखा और कहा "यह काम आपकी योग्यता के अनुकूल नहीं है'।

पण्डित सर्वदयाल ने उपेक्षा भाव से उत्तर दिया 'संसार में बहुत से मनुष्य ऐसे हैं जिनको वह करना पडता है जो उनके योग्य नहीं होता। मैं भी उनमें से एक हूं'।

ठा—"आमदनी अच्छी हो जाती है?

पण्डित सर्वदयाल उत्तर न देसके। सोचने लगे क्या कहूं। वास्तव में बात यह थी कि आमदनी बहुत ही थोड़ी थी। परन्तु इस सचाई को ठाकुर साहबके सन्मुख प्रकट करना उचित न समझा। जिसके सामने एक दिन गर्व से सिर ऊंचा किया था और प्रतिष्ठित नौकरी को पांव से ठुकरा दिया था मानों मट्टीका तुच्छ ढेला हो, उसके सन्मुख पश्चाताप न कर सके और यह कहना उचित न जानपड़ा, कि हालत खराब है। सहसा उन्होंने सिर ऊंचा किया और धीर भाव से उत्तर दिया "निर्वाह हो रहा है"।

ठाकुर साहब दूसरे के हृदय को भांप लेने में बड़े चतुर थे, इन शब्दों से सब कुछ समझगए। कैसी प्रकृति है, जो जीवन के अन्धकार मय क्षणों में भी सुमार्ग से इधर उधर नहीं हटती। चोट पर चोट पड़ती है, परन्तु हृदय सत्य के सौदेको नहीं छोड़ता। ऐसे ही पुरुष हैं जो विपत्ति की वेगवती नदी में सिंह की न्याईं सीधे तैरते हैं, और अपनी आन पर धन और प्राण दोनों को निछावर कर देते हैं। ठाकुर साहबने जोश से कहा "आप धन्य हैं"।

पण्डित सर्वदयाल अभी तक यही समझे हुए थे कि ठाकुर साहब मुझे जलाने और परखने आए हैं, परन्तु इन शब्दों से उनकी शंका दूर हो गई। अन्धकार आवृत आकाश में किरण चमक उठी। उन्होंने ठाकुर साहब के मुख की ओर देखा, वहां धीरता, प्रेम, और लज्जा तथा पश्चाताप का रंग झलकता था। आशा ने निश्चय का स्थान लिया। सकुचाए हुए बोले—"यह आप का अनुग्रह है मैं तो ऐसा नहीं समझता"।

ठाकुर साहब अब न रह सके। उन्हों ने पण्डित सर्वदयाल को गले से लगा लिया और कहा "मैंने तुम पर बहुत अन्याय किया है। उसे क्षमा कर दो। 'रफ़ीक़हिन्द' को संभालो, आज से मैं तुम्हें छोटा भाई समझता हूं। परमात्मा करे तुम पहले की तरह, सच्चे, विश्वासी, न्यायप्रिय और दृढ़ मनुष्य बने रहो, मेरी यही इच्छा है।"

पण्डित सर्वदयाल चकित रह गए। वे समझ न सके कि यह स्वप्न है अथवा सचमुच ही भाग्य ने फिर पल्टा खाया है। आश्चर्य्य से ठाकुर साहब की ओर देखने लगे।

ठाकुर साहब ने अपने कथन को जारी रखते हुए कहा—"मैंने हज़ारों मनुष्य देखे हैं जो कर्त्तव्य और धर्म्म पर दिन रात लैक्चर देते नहीं थकते, परन्तु जब परीक्षा की बारी आती है तो सब कुछ भूल जाते हैं। एक तुम हो जिस ने इस जादू पर विजय प्राप्त की है। उस दिन तुम ने मेरी बात रद्द कर दी, लेकिन् आज यह न होगा। तुम्हारी दुकान पर बैठा हूं जब तक हां न कहोगे तब तक यहां से न हिलूंगा।"

पण्डित सर्वदयाल की आंखों में आंसू झलकने लगे। गर्व ने ग्रीवा झुका दी। तब ठाकुर साहब ने सौ सौ रुपये के दस नोट

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बटुए में से निकाल कर उनके हाथ में दिये, और कहा-"यह तुम्हारे कष्टों के लिये छोटी सी भेंट है। तुम्हें स्वीकार करनी होगी।

पण्डित सर्वदयाल अस्वीकार न कर सके।

ठाकुर हनुमन्तराओ जब मोटर में बैठे तो पुलकित नेत्रों में आनन्द का नीर झलकता था, मानों कोई निधि हाथ लग गई हो। उनके साथ एक अंगरेज़ मित्र बैठा था, उसने पूंछा "बैल ठाकुर साहब इस डुकान में क्या था जो तुम लम्बा देर खड़ा मांगटा।"

ठा—"वह चीज़ जो और किसी दुकान पर भी नहीं।"

स—"कौनसा ?"

ठा—सत्य का सौदा।"

परन्तु अंगरेज़ इससे कुछ न समझ सका।

विनीत विनय।

लेखक-श्रीयुत् मणिराम गुप्त।

फिर अपना गौरव पाने को,
दुर्बलता दूर हटाने को।
सब विगड़ी बात बनाने को,
निज यश सौरभ फैलाने को।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥१॥

फिर जगद्गुरु कहलाने को,
निज दूना मान बढ़ाने को।
अपना कौशल दिखलाने को,
सब सद्विद्या सिखलाने को।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥२॥

तुम पीछे पड़ते जाते हो,
अज्ञानी भी कहलाते हो।
इस पर भी नहीं लजाते हो,
वीरत्व नहीं दिखलाते हो।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥३॥

बिछुड़ों को नहिं अपनाते हो,
उलटे उनको धमकाते हो।
निज अरुण नयन दिखलाते हो,
गिरते ही नीचे जाते हो।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥४॥

तुम बाल विवाह रचाते हो,
फल भी वैसा ही पाते हो।
अपनी ही नाक कटाते हो,
बल में भी घटते जाते हो।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥५॥

बच्ची को रांड बनाते हो,
सुख सम्पति को तरसाते हो।
कुलटों का कान कटाते हो,
क्यों गौरव सफल गंवाते हो?
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥६॥

लेक्चर में गाल बजाते हो,
तुम वाक्य शूर बन जाते हो।
आवेश क्षणिक दिखलाते हो,
चट ठंढे भी पड़ जाते हो।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥७॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नहिं करके काम दिखाते हो,
कह कह के चुप रह जाते हो।
मन के मोदक तुम खाते हो,
पर स्वाद नहीं कुछ पाते हो।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥८॥

अब भी यदि होश संभालोगे,
जो चाहोगे कर डालोगे।
यदि अपने प्राण को पालोगे,
तो सब विघ्नों को टालोगे।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥९॥

उन्नति का पथ न पकड़ते हो,
आपस में ही लड़ पड़ते हो।
नित पड़े पड़े ही सड़ते हो,
इस पर भी वृथा अकड़ते हो।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥१०॥

देखो सब उन्नति करते हैं,
हम श्वान तुल्य लड़ मरते हैं।
आगे बढ़ने से डरते हैं,
औरों का पानी भरते हैं।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥११॥

क्या औरों को सिखलाओगे,
जब तुम ही सीख न पाओगे।
तुम बिना मौत मर जाओगे।
यदि खिचड़ी अलग पकाओगे।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥१२॥

अब भी यदि होश संभालोगे,
जो चाहोगे कर डालोगे।
यदि अपने प्रण को पालोगे,
तो सब विघ्नों को टालोगे।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥१३॥

आपस में मिलकर काम करो,
दुनियां में पैदा नाम करो।
प्रतिदिन तुम काम ललाम करो,
अपने सुंदर गुण ग्राम करो।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥१४॥

जाती का बेड़ा पार करो,
जैसे होवे उद्धार करो।
अब तो इसका निस्तार करो,
मत्सर को छोड़ो प्यार करो।
ऐ वीर हिन्दुओ! यत्न करो ॥१५॥

जनरल डायर का सरमाइकेल ओड्वायर के नाम पत्र

प्रेषक—" के० पी० चैटर बाक्स।

एक पत्र जो जनरल डायर का प्रतीत होता है लण्डन से आया है इसके साथ एक सन्देश हमारे नाम भी है जिस में प्रेषक अपना परिचय देता है। वह निम्न लिखित है:—

के० पी० चैटर वाक्स का पत्र
लण्डन
१५-५-२०

श्रीमती सम्पादिका जी नमस्ते

मैं आपको पहिले अपना परिचय देना चाहता हूं। मैं अमृत्सर का रहने वाला मन-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA.

मौजी पुरुष हूं, मेरा नाम किर्किरीप्रसाद है। किन्तु यहां की मेरी कई सखियों ने मेरा उपनाम चैटर वाक्स डाला हुआ है। यह उपनाम मुझे इतना पसन्द आया है कि मैंने अपना नाम ही के० पी० चैटर वाक्स रख लिया है। मैंने "प्रकाश" में पढ़ा था कि आपने "ज्योति" नाम की मासिक पत्रिका निकाली है। मेरे मन में भी तरङ्ग उठी कि इस पत्रिका के लिए लेख लिखूं, किन्तु, कोई विषय सूझता न था। आज मैंने सड़क पर गिरा हुआ एक लिफ़ाफा पाया, उस लिफ़ाफे में जनरल डायर का पत्र आपके सुप्रसिद्ध भूत-पूर्व लाट सर माइकेल ओड्वाय के नाम था। मैं उस पत्र का अनुवाद भेजता हूं। आप कहेंगी कि यह पत्र ओड्वायर साहब ने तो अभी पढ़ा ही नहीं फिर प्राइवेट पत्र पत्रिका में छपने को काहे को भेजते हो? इसका उत्तर यह है कि हन्टर कमेटी ने इन दोनों महाशयों की सारी करतूतें पबलिक कर ही देनी हैं। इससे बढ़कर पबलिकमैन भी ब्रिटिश साम्राज्य में न मिलेंगे। जब इनकी सभी प्राइवेट बातें पबलिक होरही हैं तो एक और ऐसी बात की बढ़ती होने में क्या हानि है। यह ठीक है कि सर माइकेल ने यह पत्र अभी नहीं पढ़ा किन्तु मैं यह देखता हूं कि इसका विषय पंजाबियों के लिए बहुत आवश्यक है, सर माइकेल के लिए इतना नहीं क्योंकि ओड्वायर महाशय अब अपनी करनी कर चुके वह पंजाब का अब कुछ नहीं बिगाड़ सक्ते। इसलिए इस पत्र को पढ़कर उनको जो क्रोध आना था वह ज़रा पीछे भी आजावेगा तो इसमें उनकी कोई ख़राबी नहीं। किन्तु पंजाब वालों के लिए आवश्यक है कि वह शीघ्र जान लें कि मार्शल-ला के इन वीरों के मनों में क्या भाव उठ रहे हैं? ताकि वह अपना आगा संभाल सकें और सोच सकें कि गुण कर्म स्वभाव से इनके और जो भाई हमारे देश में हैं उनसे कैसे बचा जावे। मैं "ज्योति" में यह पत्र इसलिए भी छपवाना चाहता हूं कि इसका सम्पादन एक देवी द्वारा होता है। जलयां वाले बाग़ के वध ने सैंकड़ों देवियों को विधवा और नपूती बना दिया, इस लिए देवियों के लिए जनरल डायर की स्मृति सदा ही ताज़ी रहेगी। मैं आशा करता हूं कि आप इस पत्र को छाप देंगी।

बड़े आदमियों के पत्रों का यह स्वभाव पड़ गया है कि वह किसी न किसी प्रकार मेरे हाथ में पड़ जाते हैं। आगे को भी कोई गिरा पड़ा पत्र मिल गया तो आपकी सेवा में भेज दिया करूंगा। पसन्द आया करे तो छाप दिया कीजिये अथवा रद्दी के टोकरे में फेंकने में तो आपको कोई कष्ट विशेष न होगा॥

आपका हितचिन्तक
के० पी० चैटर वाक्स

जनरल डायर का पत्र।
सोलजर्स क्लब
होलब्रुक रोड–लण्डन।
१४—५—२०

मेरे प्यारे सर माइकेल!

आज एक दुखी दिल से निकले हुये कुछ भाव सुन लो। मैं तुमको पत्र कभी न लिखता क्योंकि मैंने सोचा हुआ था कि तुम्हारे जैसे महाशय से पत्रव्यवहार करना कोई बुद्धिमत्ता नहीं। जब मैं अमृतसर था तो मुझे मेरे आधीन एक लैफ्टिनैन्ट ने कहा था, कि तुम एक निकम्मे दोस्त और भयानक शत्रु हो। उस समय मैंने लैफ्टिनैन्ट को डांट दिया था, क्योंकि मेरी तुम में असीम श्रद्धा और भक्ति

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

थी किन्तु जिस दिन मैंने 'टाइम्स' समाचार पत्र में तुम्हारा पत्र पढ़ा कि तुमने जलयांवाले बाग में मेरी धीरता और वीरता को समर्थन करने की तार न दी उसी दिन मेरा दिल टूट गया। मेरा बुत मिट्टी के पग वाला सिद्ध हो गया मेरा इष्ट देव राक्षस का रूप धारण करने लगा, मेरी अगाध श्रद्धा घृणा और दया में परिवर्तित होने लगी, मेरी आंखों की धूल धुल गई, और मैं तुम्हें तुम्हारे वास्तविक स्वरूप में देखने लगा। इस समय मैंने संकल्प कर लिया था कि तुम से कोई सम्बन्ध न रक्खूंगा, तुम्हारे जैसे मित्रों की अपेक्षा तो गांधी जैसे शत्रु ही अच्छे हैं जिन के भावों की पवित्रता में कभी सिडनहम को भी सन्देह नहीं हुआ और कर्टिस ने जिनके पांव चूमे थे। ऐसे सुहाग से तो रंडेपा ही भला है, तुम्हारे जैसे मित्र रख कर मैं मित्रों वाला कहलवाना नहीं चाहता। आज यह मेरा सङ्कल्प ढीला पड़ गया जब मैंने पार्लियामैन्ट में मांटेग्यू महाशय के मेरे विषय में प्रश्नों के उत्तर पढ़े और साथ वेल्स Wells जैसे सुप्रसिद्ध लेखक की भी अपनी विषय में सम्मति पढ़ी। मैंने सोचा कि दिल के गुब्बार एक बार निकाल ही लूं क्योंकि ऐसा किये बिना मेरी छाती पर सांप लोटता ही रहेगा, और मेरे व्यथित चित्त में असन्तोष की लहरें उठती रहेंगी। सो भाई ! एक दुःखी दिल की दुःखमय कथा सुन लो। मेरी लेखनी से कोई ऐसा वैसा शब्द निकल जावे तो बुरा न मानना। अगर बुरा भी मानोगे तो मेरा क्या बिगाड़ लोगे। मेरे माथे पर तुम्हारी कृपा से जो कलंक[1] का टीका लग चुका है वह टेम्ज़ नदी के सारे जल से भी धुल न सकेगा। जब मेरी अपनी यह दुर्गति है तो तुम्हारी कोह की खुशामद।

मेरे किसी समय के साथी, सहयोगी ओडायर ! तुम भी कितने कारीगर हो। तुम जानते हो, और भली प्रकार जानते हो कि जलयांवाले बाग़ में मैशीनगन चलाने का साहस मुझे कभी न होता यदि तुमने मेरी पीठ न ठोकी होती। और तुम्हारी अपनी कारवाइयों से मुझे विश्वास न हो गया होता कि तुम चाहते हो कि कोई ऐसा ज़बरदस्त कार्य्य किया जावे जिस से कि पंजाबियों का हृदय दहल जावे और यह लोग राजनैतिक आन्दोलन का कभी नाम भी न लें। मैंने तुम्हारी आन्तरिक इच्छा पूर्ण की, तुमने मुझे शाबाश भी दी, तुम्हारे ही कहने से पंजाब की ऐंग्लोइंडियन सोसाइटी ने मुझे हीरो (नायक) भी बनाया। किन्तु जब हिसाब किताब का समय आया तो तुम मुझे धक्का देकर अपनी चमड़ी बचाने लगे। मुझे तो जरनैली से पदच्युत किया गया और तुम को आर्मी-कमीशन का सभासद ही नहीं, किन्तु सामयिक-सभापति बनाया गया। जब मेरा अपमान हो रहा था तो तुमने यह कैसे सहन किया कि तुम नये नये मान प्राप्त करते जाओ? हाय ! तुम्हारे कहने पर और तुम्हारी नीति को अन्त तक पहुंचाने के लिए तो मैंने यह सब कुछ किया, तुम्हारी ही ओर से यह मित्र द्रोह! भूल भाई ! तुम किस नींद में सोय पड़े हो? अब तुम्हारा ओर मेरा चोला दामन का साथ

१. यह कलंक का टीका इतिहास में तो अमर रहेगा ही यद्यपि हन्टर कमेटी तथा एंग्लो-इण्डियन लोगों ने धन देकर साफ करने की चेष्टा बहुत की है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है यदि मैं फंसा तो[२] तुम छूट नहीं सके। भाई मेरे! कांग्रेस कमेटी की रिपोर्ट लण्डन में पहुंच गई है उसमें रायज़ादा भक्तराम को जो कुछ तुमने कहा वह भी छप गया है। भला जिसकी नीति ऐसी थी वह मुझ से अपने आपको पृथक् कैसे कर सक्ता है? भाई! तुम और मैं एक ही नाव में हैं। भेद इतना ही है कि नाव अब हमारी भंवर में है, तुम कूद के बचना चाहते हो, और मुझ अकेले को डुबोना चाहते हो। किन्तु तुम नहीं सोचते कि जो डूबता हो उसका जफ्फा कितना सख्त होता है। मैं तुम्हें सच कहता हूं कि मेरा जी अकेले डूबने को नहीं चाहता। जो तुमने कहा सो मैंने किया और जो मैंने किया सो तुमने कहा। मैं और तुम एक ही थैली के चट्टे बट्टे हैं। हम दोनों में केवक एक भेद है, मेरा मन वचन और कर्म एक जैसे हैं, तुम्हारे मन और कर्म एक प्रकार और वचन दूसरे प्रकार हैं। मैं काले हिन्दुस्तानियों की जानों को गोरों की जानों के मुक़ाबिले में कुछ नहीं समझता। मेरे सम्मुख और मेरी सम्मति से अमृतसर के डिप्टी कमिश्नर ने वहां के लोगों को कहा था कि योरोपियनों के मारने का बदला हम तुम से और तुम्हारी सन्तान से लेंगे। यह एक प्रकार से मेरा ही वचन था। और मैंने जो कर्म्म किया उसको अमृतसर की माताएं कभी न भूलेंगीं। और उनके पोते परपोते तक मेरे नाम पर किसी भाव विशेष की भेंट चढ़ाया करेंगे। किन्तु तुम ज़रा अपने गिरेबान में मुंह डाल कर देखो तुमने पंजाब और इग्लैंड का मुक़ाबिला किया और पंजाब को सारे प्रान्तों में उत्तम ठहराया। तुमने कहा कि तुम्हें पंजाबियों से प्रेम है और उनके प्रति तुम्हारा कृतज्ञता का भाव है। यह तुम्हारी कहने की बातें थीं। पंजाबियों के प्रति जो प्रेम तुमने मार्शलला के दिनों में दिखलाया वह सबको मालूम है। जलयां वाले बाग़ और रेंगने की आज्ञा तो तुम मेरे सिर पर मढ़ते हो पर डाक्टर सत्यपाल डाक्टर किचलू का निर्वासन जिससे सारी आग भड़की, तुम्हारा अपना काम था, जिसका उत्तरदातृत्व अमृतसर का डिप्टी कमिश्नर नहीं लेता। लाहौर के लीडरों के निर्वास का विचार भी तुम्हारे ही मस्तिष्क से निकला। मैंने तो हन्टर कमेटी के सम्मुख बड़े अभिमान से तुम्हारे और अपने कार्य्य को सराहा था किन्तु तुम अब बगलें झांकते हो। तुम्हारी कायरता को देखकर मैं भी हिचकचा गया और लण्डन में मैंने एक पत्र के सम्बाद-दाता के सम्मुख कह दिया कि मैशीनगन चलाना एक गन्दा काम था। मेरी इस कायरता के लिए तुम ही उत्तरदाता हो। भाई! जो कर चुके सो कर चुके। इतिहास में अत्याचारियों में तो हमारी गणना होगी ही किन्तु अब भी सम्भल जाओ ताकि कायरों में भी हमारा दर्जा प्रथम न हो। मैंने तो यह सोचा था कि जो किया है वह छिप तो सक्ता ही नहीं इस लिए निर्भयता का ही अंश कमालो, किन्तु तुम्हारा मलिन मुखड़ा देखकर मेरा भी दिल

२. डायर को अपने करतूती के कारण पूर्ण विश्वास था कि उसको कड़ी सज़ा मिलेगी और हन्टर कमेटी ओड्वायर को अवश्य दण्ड भागी सिद्ध करेगी। उस यह स्वप्न में भी ख्याल न था कि हन्टर कमेटी इस प्रकार माइकल की प्रशंसा करेगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

घट रहा है। हाय! वह दिल जो बच्चों को तड़फता देखकर नहीं दहला, जिसके अन्दर मरतों के मुख में जल की बिन्दु डालने का विचार भी उत्पन्न नहीं हुआ, वह आज प्रजा की पुकार और धिक्कार को सुनकर नीचे २ जारहा है। प्यारे ओड्वायर! मेरे सिर की कसम कल मुझे यहीं आकर मिलना मेरे और तुम्हारे अश्रु मिलेंगे, हम एक दूसरे की पीठ ठोकेंगे और अपने[3] बचाव की सूरत सोचेंगे।

तुम्हारा पुराना मित्र और भक्त

डायर।

महाभारत कालीन शिल्प वैभव।

(२)

लेखक-श्रीयुत् रामदेव बी ए. एम. आर. ए. एस. सम्पादक वैदिक मैगज़ीन।

पिछले अंक में हमने महाभारत काल का वैभव वर्णन करते हुए विशेषतया कपड़ों के विषय में लिखा था इस वार हम अन्यान्य शिल्प सम्बन्धी ऐश्वर्य का वर्णन करेंगे।

चर्मावृत पशु

महाभारत के समय कृत्रिम पशु को बना कर उसे चर्म से ढांप कर नकली पशु बनाने का शिल्प भी प्रचलित था। मनु जी भी यही कहते हैं कि "यथा काष्ठनिभो हस्ती, यथा चर्ममयो मृगः" इस प्रकार महाभारत सभापर्व में भी चर्ममय मृग का उल्लेख आता है यथा-"जिस प्रकार (१) बिना फल के बांझ तिल और जिस प्रकार चर्ममय मृग हो। वैसे ही सभा में पाण्डव थे।"

गुप्त मार्ग

प्राचीनकाल में युद्धों के समय लगाये हुए शिविरों में आने जाने के मार्ग गुप्त रक्खे जाते थे। वनपर्व में शालराज के सेना शिविर में मार्ग सब (२) गुप्त थे।

हाथीदांत की दण्डी वाला श्वेत छत्र

छत्र का आविष्कार भारत में बहुत प्राचीन है। इस के दो उपयोग किये जाते थे, एक तो धूप से बचना दूसरा वर्षा से बचना। इसी से इस के छत्र, और आतपत्र दोनों ही नाम हैं। यही छत्र राजा का मुख्य चिन्ह है। भीष्म पर्व में युधिष्ठिर के छत्र का इस प्रकार वर्णन है:-"इस का हाथी दांत की शलाका वाला श्वेत छत्र बहुत ही शोभा देता है।" (३)

---

३. हन्टर कमेटी की रिपोर्ट तबतक छपी नहीं थी अतः इसे पता नहीं था कि बचाव तो हो ही गया है फ़िकर की आवश्यक्ता नहीं।

१ यथा फला षण्ढ तिला, यथाचर्ममया मृगः।
तथैव पाण्डवा सर्वे यथा काकयवा इते। (सभा ७६-१२)

२ अनीकानां विभागेन पन्थानः संवृता अभवन्। (वन० १६-४)

३ समुच्छ्रितं दन्त शलाकमस्य, सुपाण्डुरं छत्रमतीव भाति। (भीष्म० २२-६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नाना प्रकार की पगडियें और डाढी मूंछ का फैशन

भीष्म पर्व में रणभूमि में पगड़ियों का वर्णन है और वीरों के गिरे हुए मुख ऐसे थे जिन की डाढ़ी मूंछें बहुत फैशन से (१) कटी हुई थीं।

सुवर्ण प्रदीपों में सुगंधित तेल

महाभारत काल में विलास की क्या कमी थी। राजा युधिष्ठिर के समक्ष सोने के दीपों में सुगंधित तेल जल रहा था और आस पास बेंत हाथ में लिये सुनहरी (२) पगड़ियें पहिने चपरासी लोगों को हटा रहे थे।

कपड़ों का रंगना

कपड़ों का रंगना भी इस काल में प्रचलित था। द्रोण पर्व में लिखा है कि "भीम का कवच लोहे (कार्ष्णयस) का बना हुआ था उस पर सोने की चित्रकारी थी और पीला, लाल, श्वेत और श्याम (३) वस्त्रों से ढंका हुआ था।

सुवर्ण स्तम्भों पर बहुत से लैम्पों की बहार

इस प्रकार राजाओं ने प्राकृतिक विलास का बहुत निश्चित रूप से उपभोग किया था। बलराम ने रैवतक पर्वत को अपने लिये बसाया था और सब प्रकार की भोग सामग्री से सुशोभित किया था। नाना रूप रत्नमय गृहों से सुशोभित था, आगे सोने के फूलों की वन्दनवारें और मालायें लटकती थीं। नाना प्रकार के (४) कल्प वृक्ष थे। इसी प्रकार सुवर्ण के बनाये गये दीप वृक्ष (एक स्तम्भ पर बहुत से लैम्प) सुशोभित थे। गुहाओं में और झरने की तराइयों में २४ घंटे दिन रहा करता था॥

---

१ उष्णीषैश्च तथा चित्रैः ॥ ७३ ॥
छत्रैस्तथापि विद्धैश्च ॥ ७५ ॥
पाण्डुतुद्युतिभिश्चैव वदनैश्चारू कुण्डलैः।
क्लृप्तश्मश्रुभिरत्यर्थं वीराणां समलं कृतैः॥ (भीष्म० ९६–७६)

२ प्रदीपैः कांचनैस्तत्र गन्धतैलावसेचितैः।
परिवव्रः महात्मानः प्रज्वलद्भिः समन्ततः॥ ३१ ॥
काश्चनोष्णीषिणस्तत्र वेत्र झर्झर पाणयः।
प्रोत्सारयन्तः शनकैः तं जनं सर्वतो दिशम्॥ ३३ ॥ (भीष्म० ९८)

३. तस्य कार्ष्णायसं वर्म हेमचित्रं महर्द्धिमत्।
पीत रक्तासित सितै वासोभिश्च सुवेष्टितः॥ (द्रोण० १२७–१२)

४ दीप वृक्षैश्चसौवर्णै रभीक्ष्णमुपशोभितः।
गुहा निर्झरदेशेषु दिवाभूतो वभूवह॥ ७॥ (अश्वमेध० ५८)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारी मंजूषा

हर्ष का विषय है कि हमें जी. पी. श्रीवास्तव जी की पुस्तकों की समालोचना करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। निम्नलिखित छे पुस्तकें प्राप्त हैं:—

लम्बी दाढ़ी	मूल्य १)
नाक में दम	,, ॥)
दुमदार आदमी	,, ।=)
नोंक झोंक	,, ॥=)
उलट फेर पतला कागज़	,, ।॥=)
,, मोटा कागज़	,, १)
मार मार कर हकीम	,, ।॥=)

इनमें एक २ के बीच में कई २ कहानियां हैं। मिलने का पता:—बी. पी. सिनहा, गोंडा. यू. पी.

सम्भवतः पंजाब की जनता श्रीवास्तव जी की सौजन्य सुलभ, सुमधुर हास्यरस पूर्ण, सरल सामाजिक गल्पों तथा नाटकों से अनभिज्ञ होंगे। उन्होंने प्रत्येक प्रकार की कुरीतियों व कुव्यवहारों को लेकर उनको उलट पुलट कर भली प्रकार दिखा दिया है कि किस भांति युवक, युवतियों, बुड्ढों, नौकर चाकर अथवा सम्पूर्ण मानव जीवन, गृहस्थ जीवन, समाज, और व्यवसायी जनों पर इनका उलटा प्रभाव पड़ता है।

अभी जब यह माणिक्य "इन्दु" की निर्मल छटा में इधर उधर छिटके हुवे चमका करते थे तभी हम इनकी आभा की चमक से चकाचौंध होजाते थे और बड़े उत्साह से निरन्तर उनकी ओर लालयित नेत्रों से प्रतीक्षा किया करते थे। किन्तु कुछ समय से यह नियमित रूप में हार की लड़ियों में जड़ कर पृथक २ नाम से संसार में प्रवेश कर गये हैं। यह बड़ी सरल और मधुर हास्यमयी भाषा में हैं। चित्त को एक दम आकर्षण कर लेते हैं केवल कहीं २ पर संयुक्तप्रान्त की पूरबी भाषा का प्रयोग है जो कदाचित् पंजाबियों को न समझ आवे। यह पुस्तकें प्रायः युवकों तथा प्रौढ़ों के लिये हैं छोटे लड़के लड़कियों के योग्य नहीं जैसा कि ग्रन्थकार स्वयं भी मानते हैं। क्योंकि वे इनसे लाभ न उठा कर केवल कहानी की तरंग में ही लहराने लगेंगे और बहाव के साथ २ आप भी बह जांयगे। श्रीवास्तव जी जो कुछ लिखते हैं चाहे नारियों के सम्बन्ध में हो वा पुरुषों के स्पष्ट कह देते हैं। पाठकों के अनुमान पर काम छोड़ते हैं। तथापि पहिले से पिछली पुस्तकों के संगठन में परिवर्तन है। आशा है कि नये रत्नों की प्रभा में और भी गम्भीरता होगी। इन्होंने मानों भाषा की हास्य रससयी और शृङ्गार रस पूर्ण पुस्तकों की दरिद्रता दूर करने ही के लिये साहित्य संसार में पदार्पण किया है। आपने अन्य कालिज के नवयुवकों की भांति मातृभाषा का अनादर नहीं किया वरन् अभिनव कर्म क्षेत्र में अवतीर्ण होकर भी निरन्तर उसको विनोदमय, भावपूर्ण रुचिकर रसों का आस्वादन कराते जाते हैं। इनकी पुस्तकों में स्वभाविकता बहुत है, अनुवाद बिलकुल नहीं प्रतीत होता। ऐसी बोलचाल लिखते हैं कि मानों लेखनी बोलने वाले की जिह्वा पर लगी है। मानव जीवन के हृदयंगम भावों का चित्र खींचना इनको अच्छा आता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है किन्तु हास्यरस की प्रधानता बहुत होने के कारण कहीं २ लुप्त सा प्रतीत होता है। अनुभव वृद्धि के साथ २ आप की रचनायें भी गम्भीर और अधिक पटु हो जांयगी। आइये अब कुछ पुस्तकों से परिचय कर लीजियेः—

१ लम्बी दाढ़ी—में ६ कहानियों का समावेश है इनको पढ़ते २ क्या बच्चे क्या बूढ़े हंसी के मारे लोट पोट होजाते हैं। पेट में बल पड़ जाते हैं बचपन के शैतान बच्चों और मोलवी पंडित, मास्टर की पढ़ाई के तरीक़े, उनकी मार और धमकी देना बड़ी मनोरंजकता से बताये हैं। कालिज के सहपाठियों, का एक दूसरे के साथ मख़ौल, कई पुराने ढर्रे के ब्राह्मणों व हिन्दुओं की छूत छात पर तानें, अन्त में "एक अन्डर ग्रैजुएट की शादी" ने तो सबके कान कतर दिये हैं। इसके चित्र भी दिये हैं परन्तु उन चित्रों की कौन कहे लेखनी के चित्रों ने सबको मात कर दिया है। कालिज के नवयुवकों की पुराने ढर्रे की गंवार लड़की से शादी, उस को सुधारने वा फैशनेबिल बनाने में कठिनाइयां दिलों का फटना, घर वालों का पुरानी रीति रिवाज़ों पर बिना सोचे समझे गड़े रहना बड़ी उत्तमता से दर्शाया है।

२ उलट फेर—में बहुत उत्तमता से पुलिस वालों तथा वकीलों इत्यादि कर्मचारियों की धूर्तता, जाल फ़रेब, ऐय्याशी, लूटना, प्रजा को तंग करना दिखा है तथा कुकर्मों की खूब कलई खोली है। अधिक क्या कहें पढ़ने वाला ही जानेगा। यह नाटक यदि मंडलियों में खूब खेले जांय और प्रचार किये जायं तो बड़ा लाभ हो। यह आप की नितान्त स्वतन्त्र रचना है आप जिस विषय का अनुभव प्राप्त कर लेते हैं उसी विषय को लिखने के लिये फिर लेखनी उठाते हैं। छात्रावस्था में आपने छात्र जीवन सम्बन्धी बहुतसी गल्पें उत्पन्न कीं थीं। अब वकील होने पर अदालती संसार का बड़ा ही ज्वलन्त चित्र अङ्कित कर हिन्दी जगत् के सन्मुख उपस्थित किया है।

३ दुमदार आदमी और गड़बड़ झाला—यह दो भी छोटे २ नाटक प्रहसन जैसे हैं। लेखक महाशय ने पहिले में यह दिखलाने का यत्न किया है कि कितने ही मनुष्य दूसरों के छिद्रान्वेषण करने से नहीं चूकते परन्तु समय आने पर स्वयं आप ऐसे गिरते हैं और उनकी ऐसी बुरी गत बनती है कि जिसका कुछ कहना ही नहीं। दूसरे प्रहसन में आज कल के बूढ़े और जवान धनी लम्पट लोगों के कमीने छल और कपट से भरे हुवे उन तरीक़ों का वर्णन है जो कि वे अपना विवाह करने के लिये करते हैं।

४ नाक में दम और जवानी बनाम बुढ़ापा—यह पुस्तक फ्रांस के प्रसिद्ध हास्यरस लेखक मैलियर के आधार पर लिखी गयी है। इसमें आज कल के बूढ़ों का जो कि कम उमर की युवतियों से विवाह करने के लिये उतारू रहते हैं खूब ख़ाका खींचा गया है।

५ मार मार कर हकीम—यह भी मौलियर के आधार पर लिखा गया है इसमें तीन नाटक हैं जिनमें दर्शाया है कि माता पिता के विरोध होने पर भी प्रेमी युवक युवतियां किन २ ढंगों से अपने मिलने मिलाने के उपाय निकाल लेते हैं। और वियोग के दुःख की बीमारी को मा बाप न समझ कर कितने २ वैद्य डाक्टरों का इलाज कर २ के टक्करें मारते फिरते हैं और वास्तविक बात को जानकर भी नहीं देखते। प्रसंगवश आज कल के डाक्टर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हकीम और वैद्य अपनी फ़ीस उमेठने के लिये क्या २ तरीके वर्तते हैं और उनकी कितनी योग्यता होती है इसका ऐसी दिलचस्पी से मज़ाक ही मज़ाक में फोटो खींचा है कि हमारी लेखनी बताने में असमर्थ है कोई मरे चाहे जिये डाक्टरों को अपनी पाकेट भरने से काम यह बात इन्होंने बड़ी उत्तमता से बताई है।

६ नोक झोंक—यह प्रेमाकुल युवक और युवतियों के आन्तरीय मनोविज्ञान से सम्बन्ध रखने वाले छः लेखों का संग्रह है। इसमें से पहिले चार में यौवन गर्वा स्त्री के मन में जिन भावों की उत्पत्ति होती है और जिस प्रकार वह क्षण २ में बदलते रहते हैं यह बड़ी ही मार्मिक और तीक्ष्ण भाषा में अंकित किये गये हैं। अन्त के दो में पुरुष के हृदय का दर्शन कराया गया है। इनमें 'झूठ मूट' नाम की काल्पनिक गल्प बहुत ही बढ़िया हुई है। नावल, उपन्यास नाटक इत्यादि पढ़कर किस प्रकार पुरुष उनकी नायिका को ही अपनी घरेलू पत्नी में देखना चाहते हैं, परन्तु किस प्रकार यह सच्ची सती साध्वी स्त्री ही उनको सच्ची शान्ति दे सकती है यह दर्शाया गया है। इसमें 'अच्छा' नाम का एक नाटक भी है। इस प्रहसन में आज कल के युनिवर्सिटी से डिग्री पाये हुये और अपने को ही सब कुछ समझे हुये नवयुवकों को किस प्रकार संसारिक कर्मक्षेत्र में बुद्धू बनना पड़ता है यहां दिखलाया गया है।

हम श्री वास्तवजी की उत्तम दर्जे की रचनाओं में से "नोक झोंक" एक समझते हैं। मनुष्य के मानसिक विचारों को लेखबद्ध करने में आपने बड़ा ही कमाल दिखलाया है। स्त्री और पुरुष के हृदय को इस उत्तम रीति से समझना आपका ही काम है। परन्तु हम इतना कहे बिना नहीं रह सक्ते कि यदि सारा पर्दा न उठाकर हृदय के एक कोने का दृश्य छिपा ही रहने दिया जाता तो कोई हानि न थी। बहुतसी बातें बिना कहे ही अधिक उपयोगी होती हैं। नारी के हृदय के पवित्र मन्दिर को अपवित्र आंखों से कुलुषित होने से बचाने के लिये कुछ जालीदार पर्दे का होना आवश्यक है॥

कुसुमोद्यान

क्या यन्त्रद्वारा चोर पकड़े जासक्ते हैं

लण्डन के "Tit bits" में निम्नलिखित चमत्कार का वर्णन है :—

सूक्ष्म यन्त्र के चमत्कारों में लण्डन विश्वविद्यालय के डाक्टर अगस्टस. डी. वेलर एफ. आर. यस का निर्माण किया हुआ एक यन्त्र है जिससे चोरों को पकड़ना सम्भव है। इसके द्वारा अपराधी स प्रश्नोत्तर करके उस की नस और नाड़ियों पर जो प्रभाव पड़ता है उसे बिजली द्वारा अंकित करने से पता लगालेते हैं कि वह सच बोलता है या नहीं। डाक्टर वेलर ने आविष्कार किया है कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मनोवेग के साथ २ त्वचा की बिजली के आघात को रोकने की शक्ति भी कम वढ़ होती है और इसकी इतनी उन्नति की है कि भय भी स्पष्ट रूप से मापक यन्त्र पर रोशनी के धब्बे की चढ़ाव उतार से अंकित हो सक्ता है। वह कहते हैं कि—"इसी प्रकार हम अपराधियों को पकड़लेंगे। जब वह अपनी सत्यता प्रमाणित करने की चेष्टा करेगा और जज के साथ आंखें मिलाकर कहेगा कि वह चिलसिया में जन्म भर नहीं गया। तब मैं अपनी रीति चलाकर बिजली के तारों को उसके हाथों में बांधकर उसे कुछ स्थानों के चित्र दिखलाऊंगा जिनमें वह स्थान भी होगा जहां कि अपराधी के गये होने की आशंका थी तो सब का परिणाम न कार में होगा, किन्तु जब वह ख़ास चित्र दिखलाया जायगा तब यह फल होगा कि रोशनी उछल पड़ेगी और कोई मानुषिक शक्ति उसे रोक न सकेगी"।

विज्ञान चाहे कितनी हो उन्नति करे किन्तु मारा विश्वास है कि मानुषीय मनोवेगों ा यथार्थ रूप से अंकित करना सर्वथा असम्भव है। यदि चोर अपने मनो वेगों को दमन करके अपने भावों का गोपन करले तो यन्त्र की शक्ति नहीं कि सच्ची बात को अंकित करसके। इस प्रकार के यंत्र निर्माण करना ही हमारी समझ में समय का व्यर्थ नष्ट करना है वास्तविक सुधार मनुष्यों की आत्माओं को प्रभावित करने से होगा। विज्ञान की सहायता तो चोर भी लेसके हैं।

पंजाब में डायर ओड्वायर की करतूत पर कई प्रतिष्ठित अंग्रेज़ लोगों की सम्मति।

राइट आनरेबुल आर्थर हेण्डरसन यम. पी. लिखते हैं :—

"अंग्रेज लोगों को इसका अभिमान है और मेरी सम्मति में ठीक अभिमान है कि सारे संसार के लोगों में सब से अधिक स्वतन्त्रता इन में है और इस में आश्चर्य की बात नहीं कि जब अमृतसर का हत्याकाण्ड जैसा पाप होजावे तो केवल उनके कोमल मना वेशों पर अकथनीय आघात ही नहीं होता वरन उनके राजनैतिक न्याय के विषय में विकसित भावों को भी धक्का पहुंचता है। दुर्भाग्यवश अमृतसर विलायत से सहस्रों मीलदूर है और साधारणतया जनता की सहानुभूति की मात्रा दूरी की मात्रा से उल्टी रहती है।

यदि ऐसी घटना हमारे देश में हुई होती तो वर्त्तमान शासक मण्डल चौवीस घण्टे के भीतर २ ही पदच्युत होजाता। हम में से उन लोगों को—जिन्हें कि स्वाधीन जातियों की स्वतन्त्रता प्रिय बृटिश संघ के उच्चलक्ष्य में परम विश्वास है और जो समझते हैं कि वह लक्ष्य यह है कि स्वतन्त्रता की सीमा को बढ़ा कर न्याय तथा राजनैतिक समता का राज्य सर्वत्र स्थापित किया जाय—अमृतसर की घटना को उसी श्रेणी में रखना चाहिये जिस में "ल्यूसीटेनिया' का डुबोना था, क्योंकि ये दोनों पाप युक्त कर्म मनुष्यत्व के विरुद्ध थे।

सुप्रसिद्ध उपन्यास लेखक और विचारक महाशय मिस्टर यच. जी. वेल्स लिखते हैं :—

"हमारी समझ में नहीं आता कि भारत में बृटिश साम्राज्य कैसे स्थायी रहेगा यदि ओड्वायर और डायर सरीखे अपराधी दण्डनीय न होंगे। हमारी "न्याय समता" इत्यादि की बातें करना इन कर्मचारियों के अत्याचारों के विद्यमान रहते पागलपन है। वह सरकार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जो इन मनुष्यों की की हुई बुराइयों का प्रतीकार नहीं करती और अपराधियों को दण्ड नहीं देती वह एक बिल्ली के ऊपर शासन करने के भी योग्य नहीं है। बहुत से अंग्रेज़ जिन से मैंने बात की है मेरी ही भांति समग्र संसार के आगे अपनी जाति के इस कलंक को—जो कि इन दुराभिमानी, आज्ञाभंगकर्ता और नितान्त मूर्ख कर्मचारियों के कारण हमारे ऊपर आया है—अनुभव करते हैं। लेकिन अधिकांश अंग्रेज़ अब अधिकतया अन्य बातों में व्यग्र हैं और भारत बहुत दूर है अतः वे समझते ही नहीं कि इन भयंकर कुत्तों ने जिनको उन्होंने पाला हुआ है उन के प्रति क्या अनर्थ किया है।

जगद्विख्यात शिक्षक और ग्रन्थकर्ता प्रोफेसर यल. टी हाबहाऊस लिखते हैं:—

अमृतसर की हत्या जिसकी भारतबासी इस सप्ताह वर्षी मना रहे हैं पूर्व में कभी भुलाई नहीं जासक्ती। यह सितम्बर हत्या के सेण्ट बार्थालोम्पो के दिन की तरह उन दारुण घटनाओं में से है जो कभी मरती नहीं वरन किसी जाति, पक्ष, या रीति जिसके द्वारा हुई हों उनको कलंकित करने के लिये अमर बन जाती हैं। ग्लैन्को की हत्या के पश्चात् इसकी बराबरी की हत्या अंग्रेज़ी इतिहास में कठिनता से मिलेगी। इसहेतु यह न्याय युक्त है कि यह धब्बा जाति पर न लगा रहकर उस युद्ध-प्रियता पर रहे जो शाशकवर्ग के एक पक्ष को वशीभूत कर रही है यह बात किस प्रकार होसक्ती है इसका जाति को स्वयं निश्चय करना चाहिये। उसे यह सिद्ध करने का अब भी मौक़ा है कि अमृतसर में बर्ते गए तरीक़े वर्त्तमान इंग्लैण्ड को उतने ही घृणा उत्पादक हैं जितने कि पुराने समय को इंग्लैण्ड को थे और यदि यह न किया जायगा तो दूसरा उपाय यही है कि इस कलंक को जो कितने ही समय बीतने पर मिट नहीं सक्ता स्वकिार किया जावे।

इन उपरोक्त अंग्रेजों की सम्मति के आगे हमें यह कहना पड़ता है कि सब अंग्रेज एक जैसे नहीं हैं। यद्यपि भारत में शासन के अधिकार पर नियुक्त कई अंग्रेजों के बर्ताव से हमें यह भ्रम होजाता है कि अंग्रेज जाति में हृदय तथा करुणा नहीं, किन्तु उपरोक्त सज्जनों ने अपनी सम्मति देकर न केवल अपनी सहृदता ही प्रगट की है वरन अपनी अंग्रेज़जाति पर लगे हुए कलंक के टीके को धोडाला है। यदि ऐसे सहृदय न्यायपूर्ण सज्जन हन्टर कमेटी में नियुक्त किये जाते तो आज पंजाब के अत्याचारों के सम्बन्ध की अन्वेषणा सचमुच ही फल दायक होकर पीड़ित प्रजा का दुःख निवारण करने योग्य होती और राजा का भी कल्याण होता। परमात्मा हमारे शासकों को सुबुद्धि दें कि वे पक्षपात त्याग कर न्याय युक्त निश्पत्ति दिया करें।

सच्चे ब्राह्मण और नवीन कौंसलें।

महात्मा गांधी ने "नवजीवन" में नवीन कौंसलों में निर्वाचन के इच्छुक पुरुषों के विषय में अपना मत प्रकाश करते हुये लिखा है कि:—मैं देखता हूं कि नई कौंसल में बहुत से लोग निर्वाचित होने के लिये उद्यत हो गये हैं। यद्यपि इस प्रकार राष्ट्र की कुछ न कुछ सेवा अवश्य हो सक्ती है लेकिन मेरा विश्वास है कि बहुत से लोग बाहर रहकर देश की सेवा बहुत अच्छी तरह कर सक्ते हैं। स्वर्गवासी मिस्टर कीर हार्डी कहा करते थे कि एक सच्चे ईसाई के लिये वृहित पार्लियामेण्ट में रहना नितान्त असम्भव

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation, USA

है और कार्लाइल इसे गपशप हांकने की दूकान कहा करता था। जब बहुत से उम्मेदवार हों तो जिन्होंने देश सेवा का व्रत लिया हो उन्हें अलग रहकर जनता को राजकीय कार्य्यों की शिक्षा देनी चाहिये तथा निर्वाचित पुरुषों को निर्वाचन के समय की प्रतिज्ञाओं पर स्थिर रहने के लिये बाधित करना चाहिये। इंग्लैण्ड में भी हम देखते हैं कि जो लोग हाउस आफ़ कामन्स के बाहर हैं वही अति उत्तम रीति से सेवा कर रहे हैं। अंग्रेज़ जाति के यथार्थ कार्य्यों को ७०० पार्लियामेण्ट के सभासद नहीं कर रहे हैं वरन् बाहर के लोगों का बड़ा भाग जो उन पर अधिकार रखता है। इसलिये मैं मंत्रणा देता हूं कि जिन्हें केवल देश सेवा की ही लगन है उन में से अधिकांश लोग कौंसलों में जाने का कष्ट न उठावें और जो लोग कौंसलों के सभासद बनने के इच्छुक हैं उनके प्रति मेरी सादर अभ्यर्थना है कि "यदि तुम कौंसलों में इसलिये जाना चाहते हो कि वहां जाकर अपनी स्वार्थ सिद्धि करो तो वहां से दूर ही रहो क्योंकि यह काम और जगह भी हो सक्ता है। जिस सभा में केवल जाति के लाभ पर ही विचार होना चाहिये और जहां पर संघटित स्वार्थ के साथ घोर युद्ध करना हो वहां पर तुम अपने तुच्छ स्वार्थ को सिद्ध करने का ध्यान कैसे कर सक्ते हो? निस्सन्देह तुम अपने स्वार्थ को उसके साथ मिलाकर देश के लाभ को हानि नहीं पहुँचाओगे।"

हम वर्त्तमान धार्मिक नेताओं का विशेषतया आर्य्य समाजियों का ध्यान महात्माजी के इन उपरोक्त उपदेशों की ओर आकर्षित करते हैं कि वह कौंसल की मेम्बरी के लिये मुग्ध न होकर कार्य्य की उपयोगिता अनुपयोगिता की ओर भी ध्यान देवें। सच्चे ब्राह्मणत्व का जीवन ढालकर उत्तम देश सेवक पैदा कर के कौंसलों में सच्चे कर्मचारी भेजना तभी हो सक्ता है जब कि सच्चे देश सेवक बाहर रहते हुये जनता के विचारों को उन्नत करें। दूसरे जब कीरहार्डी जैसे लोगों की सम्मति में कोई सच्चा ईसाई बृटिश पार्लियामेण्ट में रह नहीं सक्ता तो एक सच्चे धर्मात्मा शास्त्रज्ञ वर्त्तमान नवीन कौंसलों के सदस्य बनकर उपयोगी हो सक्ते हैं इस बात को अभी संदिग्ध ही समझना चाहिये। छल, कपट, ईर्ष्या द्वेष, स्वार्थ परता के अपवित्र वायुमण्डल में धार्मिक वृत्ति वाले सच्चे ब्राह्मणों के लिये स्थान कठिन प्रतीत होता है? हां यह हो सक्ता है कि यदि कौंसल में अच्छे आदमियों की प्रधानता हो जाय तो राजनैतिक क्षेत्र का वायुमण्डल ही बदल जाय परन्तु कौंसल के अन्दर के वायुमण्डल में भेद आने से पूर्व बाहर के विस्तृत क्षेत्र में भेद आना परम आवश्यक है॥

वैदिक स्वराज्य।

(Mythic Society) मिथिक सुसाइटी के त्रैमासिक पत्रकी जनवरीकी संख्या में महाशय आर, शाम शास्त्री का लेख है उसके आधार पर वेद में स्वराज्य का वर्णन जो आता है उसका संक्षिप्त सार यहां हम अपने पाठकों के लिये निकाल कर रखते हैं। अथर्व वेद के तीसरे काण्ड में यह मंत्र आया है:—

ये राजानो राजकृतः सूता ग्रामण्यश्च ये।
उपस्तीन् पर्ण मह्यं त्वं सर्वान्कृण्वभितो जनान्॥

इस मंत्र में 'राजकृतः' राजा बनाने वाले लोग यह शब्द ध्यान से विचारने योग्य है। इससे स्पष्ट है कि भगवान वेद आज्ञा देते हैं कि जनता के एक विशेष भाग को अधिकार है कि जनता में से एक योग्य पुरुष को राजा चुन ले और वह राजा सब प्रजा पर शासन करे। राजा के चुनाव के सम्बन्ध में वेदों में बहुत प्रमाण हैं और ज्योति की वर्त्तमान संख्या में इस विषय पर एक लेख भी है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस प्रकार चुने हुये राजा को निर्वाह के लिये प्रजा की ओर से ज़मीन, गाय और घोड़े में कर मिलता था। केवल इतना ही नहीं जन सभा जिसमें ब्राह्मण लोग सर्वोपरि रहते हों उसमें राजा के चुने जाने, निर्वासित करने, और पुनः स्थापित करने के प्रश्न निश्चित करने का विधान भी वेदों में है। अथर्ववेद में इस सभा के विषय में यह मंत्र है:—

ध्रुवाऽच्युतः प्रमृणीहि शत्रूयतोऽधरान्या दयस्व। सर्वादिशः संमनसः सध्रीचिर्ध्रुवायते समितिः कल्पतामिह॥

तेरे शत्रु तेरे पैरों के नीचे हैं, तू पदच्युत न हो कर उनका दमन कर, तू एक चित्त हो, सब दिशायें तेरी भक्त रहें, और यह सभा तेरी भक्त, तथा तेरी ओर दृढ़ रहे। पुनः अथर्ववेद काण्ड ७। १२ में ये मंत्र आते हैं:—

सभा च मा समितिश्चावतां प्रजापतेर्दुहितरौ संविदाने। येना संगच्छा उपमा स शिक्षाच्चारू वदानि पितरः संगतेषु॥

विज्ञानं सभे नाम नरिष्टा नाम वा असि।
ये ते के च सभा सदस्तेमे सन्तु सवाचसः॥२॥
एषा हं समासीनानां वर्चो विज्ञान माददे।
अस्याः सर्वस्याः संसदो मामिन्द्र भगिनं कृणु॥३॥

अर्थात् दो प्रकार की सभायें सभा और समिति मिलकर मेरी रक्षा करें। प्रत्येक जन जिससे मैं मिलूं मेरा आदर करे और मेरी सहायता करे और मेरी वाणी सभा में मधुर हो। सभायें सब परस्पर बात चीत करके निष्पत्ति पर पहुंचने के लिये होती हैं अतः सब सभासद लोगों की सम्मति मेरे अनुकूल हो। यहां पर एकत्र हुये लोगों का विज्ञान और प्रतिभा मेरी हो।

इसमें सन्देह नहीं कि वैदिक सभ्यता के समय जब इतने आवश्यक प्रश्न जैसे कि राजा को चुनना, निर्वासित करना और पुनः स्थापित करना भी जनता की सभा में निश्चित किये जाते थे तो समिति की शक्ति सर्वोपरि थी और ब्राह्मणों का पद उसमें उच्चतम रहता था। यह भी स्पष्ट है कि राजनीति में राजा का भाग गौण था उसे समिति की आज्ञा माननी पड़ती थी। यह भी सम्भव है कि युद्ध और सन्धि के प्रश्न तथा करों और महसूल का निश्चय भी इसी सभा द्वारा होता था।

एक और भी ध्यान करने योग्य बात है कि सर्वत्र ऋग्वेद, यजुर्वेद और अथर्ववेद के अन्दर राजा के लिये एक विशेषण 'विशपतिः' या 'विशांपति' आया है जिसके अर्थ हैं कृषकों और व्यापारियों के अधिपति। "विश" सर्वत्र वेद में व्यापारियों और कृषकों के अर्थ में आया है और इसी से वैश्य शब्द बना है अतः राजा अपने राजत्व द्वारा वैश्यों पर राज कर सक्ता है किन्तु ब्राह्मणों पर नहीं। ब्राह्मशक्ति क्षात्र शक्ति के ऊपर होने से ब्राह्मणों के ऊपर वह शासन कर ही नहीं सक्ता यही भाव यजुर्वेद के अ० १ मं० ८ में दर्शाया गया है—

एषवो भरत राजसोमो ऽस्माकं राजा।

अर्थात् हे भरत! प्रजाजनों यह तुम्हारा राजा है और हमारा राजा तो एक सोम अर्थात् परमात्मा है

इन प्रमाणों से स्पष्ट है कि वैदिक स्वराज्य में ब्राह्मण सर्वोच्च रहने चाहिये, क्षत्रिय उसके आधीन रह कर ही कार्य्य कर सक्ते हैं, और राजा प्रजा द्वारा चुने जाने के कारण प्रजा का भक्षक या प्रजा राज विद्रोही नहीं हो सक्ता था। क्योंकि यदि इन दोनों में से किसी ने अपने २ कर्तव्य से विमुखता दिखाई तो दण्ड के भागी होते थे। और दण्ड के निर्णय करने वाले ब्राह्मण होते थे जिनकी निष्पक्षता पर किसी को भी सन्देह नहीं हो सक्ता था। आज कल सच्चे ब्राह्मणों का अभाव है वैश्यत्व ही सब पर प्रधान है अतः राजा प्रजा दोनों में अशान्ति रहती है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार प्रवाह।

बोल्शविज़्म।

'डूबते को तिनके का सहारा' यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है। मेघावृत अंधकारपूर्ण रात्रि में कड़कती हुई बिजली की चमक ही ढ़ारस बंधाने के लिये पर्य्याप्त होती है। उस समय मनुष्य नहीं सोचता कि यह दामिनि का प्रकाश इतना क्षण भंगुर और अचिर स्थायी है कि इससे किसी भी स्थायी लाभ की आशा रखना दुराशामात्र है अथवा इससे कई प्रकार की हानि होसक्ती है। यही अवस्था इस समय बोल्शविज़्म की है। भूख, प्यास, और दरिद्रता से पीड़ित मनुष्यजाति इस मत के चमकीले और लुभावने साम्यवाद से प्रेरित होरही है हम बोल्शविज़्म को मनुष्य समाज के आर्थिक कष्टों की कोई सिद्धि नहीं समझते। जिनको परमात्मा ने ही भिन्न शक्तियें और भिन्न योग्यतायें दी हैं उनको एक ही फल और पुरस्कार की कड़ी ज़ंजीरों में बान्धना मनुष्य की शक्ति से बाहर है। इस विषय पर अपने विस्तृत विचार हम फिर कभी प्रगट करेंगे, इस समय हमारा विचार केवल भारत सरकार से एक प्रार्थना करना है। सर्व संसार में अधिकांश मनुष्य-समाज आर्थिक कष्टों से पीड़ित है। उनको न भरपेट खाने को मिलता है और न तन ढकने को कपड़ा। उनकी मस्तिष्क की शक्तियों को उन्नत करने के कोई साधन नहीं और नाही मानसिक और आत्मिक शक्तियों को विकसित करने का कोई सामान है। भूखे आदमी के मन में उच्च विचार आ भी नहीं सक्ते। प्रत्युत वह और भी नीचे को ही गिरता जाता है। "बुभुक्षितः किं न करोति पापम्" ऐसी अवस्था में निःस्वार्थपरता, सादा जीवन, और उच्च विचार का उपदेश कोई भी सुनने को तय्यार न होगा। पेट की तृष्णा खाली बातों से मिटाई नहीं जा सक्ती, भूखे को अन्न और प्यासे को पानी अवश्य चाहिये।

महायुद्ध से पहिले भी संसार में दरिद्रता का काफ़ी राज्य था, अमीर लोग अधिक अमीर होते जारहे थे और ग़रीब की दशा दिन प्रति दिन अधिक बिगड़ती जाती थी। समाज संगठन के जिन नियमों का यह परिणाम था उन्हीं के संशोधन करने के लिये साम्यवाद (socialism) का जन्म हुआ। जैसा हम ऊपर कह आये हैं हम साम्यवाद प्रचारकों के मत से सहमत नहीं, परन्तु उनके बतलाये हुये साधन या कम से कम उनका फल–जोकि उनके मत में दरिद्रता को एक दम दूर कर आजकल के असंख्य अधपेट भूखे मनुष्यों को सबके बराबर सुख पहुंचाने का आनन्दमय स्वप्न है–साधारण बुद्धिवाले श्रमजीवियों के मन को मोहे बिना नहीं रह सक्ता। यह ठीक है कि केवल आर्थिक सुख ही की अभिलाषा इस साम्यवाद की बढ़ती का कारण नहीं। आजकल के थोड़े से अमीरों और समृद्धशाली व्यक्तियों के विलास और आनन्द के दृश्य ज़ख़्मों पर निमक छिड़कते और उनके मन में ईर्ष्या के भाव उत्पन्न करते हैं, और यह ईर्ष्या का भाव साम्यवाद के प्रचार में बड़ा सहायक है।

यह अधिकांश मनुष्य समाज की दरिद्रता अब महायुद्ध की समाप्ति पर और भी बढ़ गई

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हैं। रुपये की खरीदने की शक्ति (Purchasing Power) कम होगई है और लाखों और करोड़ों मनुष्य अपनी वाह्य सजधज और मान मर्य्यादा के आवरण से भीतर की क्षुधा, ज्वाला, दुःख और कष्ट को छिपाये फिरते हैं। ऐसे समय में बोल्शविज्म का इन दुःखी और पीड़ित मनुष्यों के मन पर विजय पा लेना स्वाभाविक सा है। उनकी प्रतिदिन की शारीरिक आवश्यक्तायें पूरी नहीं होती और सभ्य जातियों के राज कर्मचारी इनको पूरी करने की ओर ध्यान नहीं देते। बोल्शविज्म के आचार्य्य कहते हैं कि हमारे मत पर चलने से मनुष्य समाज के आर्थिक कष्टों का अन्त होसक्ता है। संसार में यदि अमीर न होंगे तो ग़रीब भी कोई न होगा। थोड़े से अमीरों का या उनके प्रतिनिधि राज्यों का कोई अधिकार नहीं कि लाखों और करोड़ों श्रम-जीवियों पर अन्याय कर उनकी मेहनत से कमाये हुये धन से भोग विलास में रत रहें हैं, और इन विचारों को पेट भर भोजन भी न दें।

यही कारण है कि विना किसी विशेष उद्योग और प्रेरणा के बोल्शविज्म के सिद्धान्तों का प्रचार दिन प्रतिदिन बढ़ता जाता है। प्रत्येक देश में इस के लिये क्षेत्र तय्यार है। आजकल योरोप के बड़े २ देशों के सचिव विचार कर रहे हैं कि किस प्रकार इस प्रचण्ड ज्वालामुखी की अग्नि से मनुष्य समाज की रक्षा की जाय? क्षात्रबल के प्रयोग से यह ज्वाला दबा दी जाय यह असम्भव है। केवल एक ही मार्ग है वह यह कि मनुष्य समाज की क्षुधा और दरिद्रता को दूर किया जाय, और उनको शक्तिशाली अमीरों के स्वार्थ से बचाया जाय। तोप और बन्दूक इस का इलाज नहीं। केवल प्रेम और सहानुभूति का शीतल जल ही इस भयंकर, प्रचण्ड, वेगवती अग्नि को शान्त कर सक्ता है।

समय २ पर सुनने में आता है कि भारत पर भी बोल्शविज्म के दांत हैं। इंग्लैन्ड के समाचार पत्र चेतावनी देते हैं कि भारत सरकार को इस ओर से निश्शंक न होकर पहिले से ही इस उपद्रव को दमन करने का उद्योग करना चाहिये। हमारी भी हार्दिक यही अभिलाषा है कि हमारे देश में बोल्शविज्म का पैर न जम। परन्तु जैसा हम ऊपर कह आये ह दरिद्रता इस बीज को अंकुरित करने के लिये एक मात्र क्षेत्र है। भारत सभ्य देशों में सब में अधिक निर्धन देश है। महायुद्ध ने भारत सन्तान को बुरी तरह से कुचल डाला है और अब युद्ध समाप्ति से प्राप्त शान्ति इसका और भी कचूमर निकाल रही है। अतः यदि सर्कार चाहती है कि बोल्शविज्म से देश रक्षित रहे तो उसे इसकी आर्थिक दशा को उन्नत करने की ओर ध्यान देना चाहिये।

न केवल इतना ही वरन शीघ्र ही उन उपायों पर अमल भी करना चाहिये। जनता में आर्थिक कष्टों को सहते २ दुःख, क्लेश, और यातना के सहन की शक्ति बहुत कम होगई है, अब उन से भूखे बच्चों और वस्त्रहीना स्त्रियों के कष्ट नहीं सहे जाते। आवश्यक्ता है कि इस का शीघ्र उपाय किया जाय। किसी Commission of enquiry जांच पड़ताल की सभा के स्थापन करने से—जो कि दो तीन वर्ष के पश्चात् अपनी रिपोर्ट लिखे फिर दो या तीन साल उस रिपोर्ट पर अमल करने में लेंगे—काम न चलेगा। अब तो ऐसा उपाय चाहिये कि जो यथार्थ हो और शीघ्र दुःख निवारण करने वाला हो। क्या भारत सरकार इस ओर ध्यान देगी?॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हन्टर कमेटी की रिपोर्ट।

जिस रिपोर्ट की देर से प्रतीक्षा हो रही थी वह अन्त में निकल आई। शोक है कि जिस उद्देश्य से यह कमेटी नियत की गई थी न केवल यह कि वह उद्देश्य पूरा न हुआ किन्तु उसकी पूर्त्ति आगे से भी अधिक कठिन हो गई। इस कमेटी को नियत करने का उद्देश्य यह था कि भारतवर्ष में जो असन्तोष फैला हुआ है उसकी मात्रा कम हो जावे किन्तु इस के प्रकाशित होने से असन्तोष इतना बढ़ गया है कि इसके परिणामों के विषय में कोई भविष्य वाणी करना कठिन हो रहा है। योरोपियन मैम्बरों का बहुपक्ष था, उनकी रिपोर्ट एक प्रकार की है और भारतीय मैम्बरों की रिपोर्ट उसके विरुद्ध है। लार्ड हन्टर के हस्ताक्षर बहुपक्ष की रिपोर्ट पर हैं। एक और विचित्र बात हुई है और वह यह कि वाइसराय की एग्ज़ैक्टिव कौंसल के एक ही भारतीय सभासद मियां मुहम्मद शफ़ी ने अल्पपक्ष की सम्मति के साथ अपनी सहमति प्रगट की है और वाइसराय और यूरोपियन मैम्बरों ने बहुपक्ष रिपोर्ट का समर्थन किया है। यों समझना चाहिये कि इस मामले में भारतवासी एक ओर हैं और योरोपियन लोग दूसरी ओर। यह अवस्था तो कमेटी के नियत होने से पूर्व भी थी किन्तु आशा यह की जाती थी कि एक स्वतंत्र कमेटी जिसके प्रधान लार्ड हन्टर जैसे सुप्रसिद्ध राज नियम विशारद पण्डित नियत हुये हैं इस मामले को सुलझा देगी और ब्रिटिश न्याय में जो लोगों का विश्वास हट चुका था उसको पुनः स्थापित करेगी किन्तु यह आशा दुराशा मात्र ही निकली।

कमेटी के सदस्यों की नियुक्ति सर्कार ने की थी। सब के सब देशी मैम्बर माडरेट और सर्कार के विश्वासपात्र थे उनमें से एक ग्वालियर राज्य में उच्च पदाधिकारी हैं। दूसरे बम्बई यूनीवर्सिटी के वाइस चेन्सलर हैं। और अभी हाईकोर्ट का जज बना दिये गये हैं और तीसरे महाशय भी सदा सर्कार के विश्वास पात्र थे। मियां मुहम्मद शफ़ी भी कभी प्रजा में सर्वप्रिय नहीं रहे, उनकी नियुक्ति पर राष्ट्रीय समाचार पत्रों ने विरुद्ध ही शब्द उठाया था।

कांग्रेस कमेटी ने अपनी साक्षी हन्टर कमेटी के सन्मुख प्रस्तुत ही नहीं की थी। यह कहानी हम पिछले अंक में बता चुके हैं। केवल सर्कारी बयान ही उनके सन्मुख थे। सर माइकेल ओड्वायर और मिस्टर टाम्सन की साक्षी भी गुप्त थी। पब्लिक समालोचना के भय से मुक्त होकर जो उनका जी चाहा कहा। यदि इन अनुकूल अवस्थाओं के रहते हुये भी इन चारों भारतवासियों को सर्कार और हन्टर कमेटी के योरोपियन सभासद यह विश्वास नहीं दिला सके कि पंजाब में घोर अत्याचार नहीं हुये तो शेष प्रजा के असन्तोष के दूर होने की सम्भावना किस प्रकार हो सक्ती है?

बहुपक्ष की रिपोर्ट का अन्तरीय भाव।

बहुपक्ष की रिपोर्ट पढ़ने से पाठक के हृदय पर एक अत्यन्त दुखदायक प्रभाव यह पड़ता है कि योरोपियन सभासद जातीय पक्षपात से अपने आपको मुक्त नहीं कर सके। योरोपियन लोगों के जीवन पर जो शोकजनक आक्रमण भड़की हुई भारतीय साधारण जनता की ओर से हुये उनके विषय में स्थान २ पर (brutal) पाशविक, (dastardly) कायरतायुक्त इत्यादि शब्दों का प्रयोग किया गया है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ऐसे शब्दों का प्रयोग उचित ही है किन्तु शोक यह है कि रोष और क्रोध के वशीभूत हुई साधारण प्रजा के इन दुष्कर्मों का बदला निकालने के लिये जो घृणित कार्य्य उत्तरदातृत्व रखने वाले ब्रिटिश कर्मचारियों ने—जिनकी दृष्टि में योरोपियन और भारतीय एक समान होने चाहिये थे—किये उन के विषय में किसी प्रकार के मन्यु का प्रकाश नहीं किया गया। यहां तक ही नहीं किन्तु उन पर पोचा फेरने का यत्न किया गया है। जनरल डायर ने जो हत्याकाण्ड अमृतसर में किया जिस के विषय में सारे सभ्य संसार में सनसनी फैली हुई है उसको केवल (grave error) बड़ी भूल (unfortunate conception of duty) कर्तव्य का दुर्भाग्ययुक्त विचार कह कर टरखा दिया है। यहीं तक नहीं किन्तु जनरल डायर के कसाईपन की मात्रा कम प्रतीत हो इस उद्देश्य से लार्ड हन्टर और उनके सहयोगियों ने विशेष वकालत की है। जनरल डायर ने तो अपनी साक्षी में बड़ी हेकड़ी से कहा था कि जलयांवाला बाग़ में एकत्रित समूह बिना गोली चलाने के विसर्जित किया जासक्ता था किन्तु उसने गोली इसलिये चलाई कि सारे पंजाब के विद्रोहियों के हृदय कम्पायमान हो जावें। हन्टर कमेटी के योरोपियन मैम्बर लिखते हैं कि जनरल डायर का यह विचार अशुद्ध था, विना गोली चलाये काम नहीं निकल सक्ता था। जहां पर स्थानीय कर्मचारियों ने ऐसे अत्याचार किये जिन की उपयोगिता व आवश्यक्ता सिद्ध नहीं की जा सक्ती उनके विषय में प्रायः इन महाशयों ने लिख दिया है कि वह लोग अवस्थाओं से हम से अधिक भिज्ञ थे इसलिये उनके काय्यों पर प्रतिकूल समालोचना करना हम उचित नहीं समझते, जिस बात को वह आवश्यक समझते थे उनको हम अनआवश्यक कैसे कह दें? एक ही ऐसा मामला था जिस के विषय में स्थानीय कर्मचारी स्वयं अपने अत्याचार की आवश्यक्ता पर बल नहीं देता, वहां उसके दोष को घटाने के लिये अपने साधारण व्यवहार के विरुद्ध उस के इस वयान को ही अशुद्ध बतलाया गया है। यह न्यायाधीशों का काम है या वकीलों का इसका निर्णय हमारे पाठक स्वयं ही करलें।

जनरल डायर ने अमृतसर की प्रजा को अपमानित करने और उनकी शक्तिहीनता और राजनैतिक दासत्व को उनके हृदय में गाड़ने के उद्देश्य से यह आज्ञा प्रकाशित की थी कि जहां मिस शेरवुड को पीटा गया था वहां पर से जो भी हिन्दुस्तानी गुज़रे पेट के बल गुज़रे। इस क्रूरता और नीचता के विचार से ही भारतवासियों का खून उबलने लगता है और उनके क्रोध की कोई सीमा नहीं रहती। हर एक सच्चे अंग्रेज़ का सिर नीचे हो जाता है और वह समझने लग जाता है कि डायर ने अंग्रेज़ी नाम पर जो कलंक लगाया है उसको धोना कठिन है। डायर के इतने बड़े अपराध के विषय में लार्ड हन्टर और उनके साथी केवल इतना लिखते हैं कि वह (Open to objection) एतराज़ के योग्य था और उससे निरपराधियों को अपराधियों के साथ अनावश्यक दण्ड दिया गया। मार्शल ला के दिनों में एक नादिरशाही आज्ञा यह प्रकाशित कीगई थी कि प्रत्येक हिन्दुस्तानी—चाहे उसकी स्थिति कितनी ही बड़ी क्यों न हो—प्रत्येक गोरे चमड़े वाले को—चाहे वह साधारण सिपाही ही क्यों न हो—झुक कर सलामें करें। इस धूर्तता युक्त और घृणित आज्ञा के विषय में भी ऐसे ही शब्दों का प्रयोग

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

किया है। लाहौर और अन्य स्थानों पर विद्यार्थियों पर अकथनीय सख्तियां की गईं, धूप में विचारों को सोलह २ मील चलाया गया, लाहौर में प्रत्येक कालिज के विद्यार्थियों की दण्ड के लिये प्रतिशतक संख्या नियत कर दी गई। एक कालिज के प्रिंसपल ने दो लड़कों की सिफ़ारिश की, कर्नल फ्रेंक जान्सन ने कहा कि या तो इन दो को दण्ड दो या इनके स्थान में किन्हीं और दो को दण्ड देदो। कसूर में छै लड़कों को दण्ड देने के लिये कहा गया जो छै लड़के फौजी अफ़सर के सामने आये वह छोटे क़द के थे नादिरशाही हुक्म निकला कि स्कूल में जो भी छै लड़के सब से बड़े हों उनको कोड़े लगा दिये जांय। जब वह महाशय हन्टर कमेटी के सामने आये तो बड़ी निर्लज्जता से कहा कि मैंने जो कुछ किया ठीक किया यह उन लड़कों का दुर्भाग्य था कि वह बड़े थे। सात २ आठ वर्ष के बच्चों को धूप में खड़ा किया गया, और एक आध बच्चा बेहोश हो गया और कहते हैं कि एक की मृत्यु भी हो गई। इन ऐसे अत्याचारों ने सदा के लिये सुकुमारों के कोमल हृदयों में विरोध के भाव उत्पन्न कर दिये और कोई नहीं कह सक्ता कि इन कारवाइयों ने कितने युवकों की प्रवृत्ति anarchism की ओर करदी होगी। राजभक्ति भारतीय हृदय में इतनी गड़ी हुई है कि बड़े २ राजनैतिक आन्दोलक उसको हिला तक नहीं सके, किन्तु ऐसे अत्याचार उसका समूल नाश कर सक्ते हैं। इन कर्मचारियों की इन करतूतों के विषय में बहुपक्ष की रिपोर्ट में केवल इतना लिखा है कि यह आज्ञायें open to criticism अर्थात् इनकी विरुद्ध समालोचना की जा सक्ती है। साथ ही लिखा है कि विद्यार्थियों को दण्ड देने से पहिले प्रिंसपलों की सलाह ले लेना more prudent होता अर्थात् अधिक दूरदर्शिता का कार्य होता। कहां तक दृष्टान्त देते जांय बहुपक्ष की रिपोर्ट पक्षपात के इन दृष्टान्तों से भरी पड़ी है।

अल्पपक्ष की रिपोर्ट।

अल्पपक्ष की रिपोर्ट के विषय में इतना कहना पर्य्याप्त होगा कि उसमें मार्शल ला का चलाना और उसका जारी रखना अनुचित बतलाया गया है, मार्शल ला के दिनों के अत्याचारों पर घृणा प्रगट की गई है, जनरल डायर के कुव्यवहारों को विशेष रूप से निन्दित बतलाया गया है, जनरल डायर के कामों के लिये सरकाइकेल ओड्वायर को भी उत्तरदाता बतलाया गया है, हवाई जहाजों और फौजी रेलगाड़ियों से निरपराधियों पर बम का गोला चलाने की कार्रवाइयों को अन्याययुक्त बतलाया है। अल्पपक्ष के परिणाम प्रायः वही हैं जो कांग्रेस कमेटी की रिपोर्ट के परिणाम हैं।

भारतीय सर्कार और बृटिश सर्कार की सम्मति।

अधिक शोक की बात यह है कि भारतीय सर्कार ने भी बहुपक्ष की रिपोर्ट का ही समर्थन किया है। इससे शोक तो होता है किन्तु आश्चर्य्य नहीं होता, क्योंकि जो गवर्नमेण्ट सर माइकेल के हाथों में कठपुतली की भांति नाचती थी वह किस मुख से उनके अत्याचारों से अपने आपको प्रथक् कर सक्ती है। एक विचित्र बात यह है कि भारतीय सर्कार ने जहां जनरल डायर के जलयांवाले बाग़ के हत्याकाण्ड और पेट के बल चलने की आज्ञा को निन्दित बतलाया है और जनरल डायर को पदच्युत किया है वहां सर माइकेल ओड्वायर की प्रशंसा की है। सर माइकेल ओड्वायर और जनरल डायर का सम्बन्ध ऐसा ही अटूट है जैसा कि दूध और पानी का। जब यह सिद्ध हो चुका है कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सरमाइकेल ओड्वायर ने जलयाँवाला बाग़ की हत्या का समर्थन किया, विद्यार्थियों को दण्ड उनकी सम्मति से दिया गया, गुजरांवाले में हवाई जहाज़ भेजने का विचार उनके मस्तिष्क से निकला, बाहर के वकीलों को रोकने की आज्ञा उनकी अनुमति से दी गई, तो भारतीय सर्कार किस न्याय से इन सारी बातों को निन्दनीय बतलाकर ओड्वायर साहब की मुक्त कण्ठ से प्रशंसा कर सक्ती है? किसी ने सच कहा है कि "गुलगुले खायें और गुड़ से परहेज़"। मिस्टर मान्टेग्यू भारतीय सचिव से भारतवासियों ने बड़ी आशायें रक्खी हुई थीं, और हैं भी वह भारत के सच्चे हितैषी किन्तु शोक है कि इस अवसर पर उन्होंने मंत्रिमण्डल के अन्य सभासदों से झूठा राज़ीनामा करने के लिये और इस असत्य विचार से प्रेरित होकर कि वाइसराय का समर्थन करने से ही उनके प्रभाव की रक्षा हो सक्ती है, अपने उदार विचारों को पददलित करके वाइसराय की सम्मतियों को केवल दुहरा दिया है। शोक कि भारत वासियों को यह विश्वास भी जाता रहेगा कि यदि नौकरशाही की ओर से भारत वासियों पर अत्याचार हो तो बृटिश साम्राज्य के मन्त्रियों द्वारा रक्षा होसक्ती है।

पंजाब के अत्याचारों पर एक मनोविज्ञानिक दृष्टि

बहुपक्ष की रिपोर्ट के तीसरे अध्याय में अमृत्सर के फ़सादों का जो वृत्तान्त दिया गया है उस को ध्यान से पढ़ने से स्पष्ट पता लग जाता है कि इस सारे उत्पात के मनोविज्ञानिक कारण क्या थे। अमृत्सर में सारे फ़सादों का कारण डाक्टर सत्यपाल और डाक्टर किचलू की सर्वप्रियता प्रतीत होती है। दोनों महाशय अमृत्सर के राजनैतिक नेता थे। उन के व्याख्यानों के विषय में यारोपियन कमिश्नर केवल यह कहते हैं कि उनमें गवर्न्मेन्ट के विरुद्ध बलयुक्त शिकायत होती थी "..... their attitude was one of very vigorous complaint against Government" दूसरी बात यह बतलाई गई है उन्हों ने सत्याग्रह का प्रण किया था और इस बात को स्वीकार किया गया है कि इस राजनैतिक आन्दोलन में वे शारीरिक बल के प्रयोग के विरुद्ध थे। अमृत्सर में रौलट एक्ट के प्रतिरोध के रूप में दो हड़तालें हुईं। पहिली हड़ताल के विषय में लिखा है there was no collision with the police and no resort to violence अर्थात् पुलीस के साथ कोई झगड़ा नहीं हुआ और ना ही कोई फ़साद हुआ। यह स्मर्ण रखना चाहिये कि इस हड़ताल के एक दिन पूर्व डाक्टर सत्यपाल और डाक्टर किचलू के मूं बन्द कर दिये जाचुके थे तिस पर भी इन भद्र पुरुषों ने अपने गुरु गान्धी के पद चिन्हों पर चलते हुये प्रजा को भड़कने नहीं दिया और उनको शान्ति दी। दूसरी हड़ताल के विषय में कमिश्नर महाशय कहते हैं second time also the Hartal passed off peacefully and Europeans could and did walk unmelested among the crowd अर्थात् दूसरी हड़ताल भी शान्तिपूर्वक समाप्त हुई और योरोपियन लोग प्रजा की भीड़ में से खुले तौर पर गुज़रते रहे उनको किसी ने कुछ नहीं कहा। चाहिये तो यह था कि डिप्टी कमिश्नर इत्यादि नेताओं की इस सहिष्णुता और शान्तिप्रियता से प्रसन्न होते और उनके विरुद्ध जो अन्याय युक्त आज्ञा प्रकाशित की थी उस को लौटा लेते किन्तु जिन लोगों को एकसत्ता शक्ति के प्रयोग का बुरा स्वभाव पड़ जाता है, वह अपने अतिरिक्त और किसी की शक्ति और प्रभाव का बढ़ता का सहन नहीं कर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सक्ते। दूसरी बात यह है कि नौकर शाही का अपना व्यवहार प्रजा के साथ ऐसा दुरभिमन-युक्त होता है और उनकी अपनी करतूतें उनको इतना भयभीत कर देती हैं कि उनके मस्तिष्क में यह विचार घुस ही नहीं सक्ता कि भारतीय नेताओं की शक्ति यदि बढ़जावे तो वह इस का प्रयोग उनके विरुद्ध नहीं करेंगे। हड़ताल की सफलता से डिप्टी कमिश्नर पर पाला पड़ गया रिपोर्ट में लिखा है—

The Deputy Commissioner (Mr. Miles Irving) was much perterbed by the proof, afforded by the second hartal, of the power and influence of Drs. Kitchlew and Satyapal

अर्थात् डिप्टी कमिश्नर महाशय माइल्स अर्विंग दूसरे हड़ताल की सफलता से डाक्टर किचलू और डाक्टर सत्यपाल की शक्ति और प्रभाव का जो प्रमाण मिला उससे बहुत घबड़ा गये। झट आप के मानसिक नेत्रों के सामने फ़साद और बलवे के चित्र घूमने लगे। आपने गवर्नमैण्ट को एक चिट्ठी लिखमारी जिस में सेना बढ़ाने की याचना की गई और कहा गया कि बहुत शीघ्र विप्लव होने वाला है। किचलू विप्लव के नेताओं का उपकरण मात्र प्रतीत होता है। खां बहादुर और राय बहादुरों को कोई नहीं पूंछता। एक बात जिससे हंसी और रोना दोनों आते हैं वह यह है कि डिप्टी कमिश्नर के पास किचलू के कल्पित नेताओं के अराजकता प्रिय होने का केवल मात्र प्रमाण यह था कि वह रौलट एक्ट के बिरुद्ध आन्दोलन कर रहे हैं। शोक तो इसलिये कि इन महाशय की ऐसी कल्पनाओं के परिणाम ऐसे दुखान्त हुये। और हंसी इस बात पर कि भारतवासी तो एकजैक्टिव पदों के इस लिये योग्य नहीं समझे जाते कि उन के अन्दर आत्मविश्वास की कमी बतलाई जाती है, किन्तु ऐसे भीरु लोग को जो अपनी छाया से डरते हैं, और जिनका भयभीत हृदय हर क्षण विद्रोह के दृश्य देखता रहता है, इस परिवर्त्तनमय काल में सुशिक्षित और सत्य-ग्रही भारतीयों पर शासन करने के योग्य समझे जाते हैं। अस्तु, हमारे ऋषियों ने सत्य कहा है कि मनुष्य बाहर के संसार को हृदय पटल पर चित्रित भाव रूपी नाटक के अनुकूल बना के ही रहता है। किचलू और सत्यपाल ने किसी आज्ञा का भंग नहीं किया, अमृतसर में कोई फ़साद नहीं हुआ, न किसी फ़साद की सम्भावना का कोई प्रमाण मिला। एक सी. आई. डी. इन्सपैक्टर भेष बदलकर डाक्टर किचलू के पास गया और उनको फ़साद की सलाह दी, किन्तु उन्होंने यही उप-देश किया कि महात्मा गान्धी के आदेश अनु-सार केवल प्रेम से ही काम लेना चाहिये। राज कर्मचारी अपने हृदय के दर्पण में सारे मनुष्यों को और उनको भावों को देखने लगे। पंजाब गवर्नमैण्ट ने बैठे बैठाये फ़साद सहेड़ने की ठान ही ली। डाक्टर सत्यपाल और डाक्टर किचलू को मोटर पर भगा कर धर्म-शाला ले जाने और उनको वहां नज़र बन्द करने की आज्ञा पर ९ अप्रेल १९१९ को हस्ता-क्षर कर दिया, उधर से सेना बढ़ाने की आज्ञा भी निकाल दी। ९ अप्रेल को रामनौमी का दिन था उस दिन रिपोर्ट हम को बतलाती है कि हिन्दुमुसलमानों के प्रेम तथा भ्रातृभाव के कई चिन्ह दृष्टि गोचर होते थे, किन्तु बृटिश सर्कार के विरुद्ध कोई भाव न था। इसके विपरीत जो भजन मण्डली डिप्टी कमिश्नर के पास से गुज़रती थी बाजे से "गाड सेव दि किंग" की तान निकलती थी। लार्ड हन्टर और उनके साथी ठीक कहते हैं कि:—We do not feel

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

entitled to regard it as significant of special evil or to interpret the events which ensued after other causes had supervened by reading them in the light of a sinister construction of the facts of the 9th April

अर्थात् हमारी सम्मति में जो दुर्घटना पीछे हुई उसका कोई सम्बन्ध ९ अप्रैल के हिन्दू मुसलमान-ऐक्य के साथ नहीं और नाहीं उस ऐक्य के कोई अनिष्ट अर्थ नहीं किये जासक्ते हैं। किन्तु मिस्टर अर्विंग की ईर्षा और बढ़ी और उसी शाम को दोनों नेताओं का निर्वास होगया। दूसरी प्रातःकाल फ़साद की आशा तो कर्मचारी लगाये बैठे ही थे इसलिये सेना के विभागों को भी काम बांट दिया गया। यह आज्ञा गुप्त रीति से दे दी गई कि रेल के पुल पर से प्रजा को गुज़रने न दिया जाय। लोगों की तो इच्छा उस समय किसी फ़साद की न थी यह बात तो बहुपक्ष की रिपोर्ट में स्वीकार की गई है किन्तु कर्मचारियों ने सारे प्रबन्ध यह निश्चय करके किये थे कि अमृत्सर की प्रजा विद्रोही है। जिस समय प्रजा पुल के पास आई और डिप्टी कामिश्नर के बंगले में इस उद्देश्य से जाना चाहती थी कि अपना दुखड़ा अपने हाकिम के सामने रोवें उन पर दो वार गोलियां चलाई गईं, उस के बाद जो घृणित, नीच और पागलपन और भीरुता के कार्य्य अमृत्सर के भड़के हुये कुछ मूर्खों और धूर्तों ने किये उनका विचार करके हमें लज्जा आती है और जलयांवाला के बाग़ में प्रतिहिंसा के नीच भाव से प्रेरित होकर जनरल डायर ने जिन निरपराधियों को शहीद बनादिया उन्होंने अमृत्सर निवासियों के पापों के प्रायश्चित में अपनी जानें दे दीं, किन्तु वृटिश नाम पर डायर ने जो धब्बा लगाया है उस का धोना वृटिश प्रजा के आधीन है। हम तो केवल इतना ही कहना चाहते हैं कि हमारी सर्कार को प्रजा के मनों के अन्दर घुसने का प्रयत्न करना चाहिये तभी ऐसे हत्याकाण्डों की सम्भावना हट सकती है। लंडन के एक प्रसिद्ध समाचार पत्र ने सत्य लिखा है कि ये हत्याकाण्ड तभी रुकेंगे जब भारतवर्ष को पूरा स्वराज्य मिलेगा। क्योंकि जब तक कर्मचारी प्रजा के सामने उत्तरदाता न होंगे तबतक उनमें उच्छृखलता का भाव होना स्वाभाविक ही है। हमारा तो दृढ़ विश्वास है कि भारतवर्ष की शिक्षित प्रजा को छोटे मोटे सुधारों और रियायतों का ख़याल छोड़कर सारा बल स्वराज्य की प्राप्ति में लगा देना चाहिये। ताकि वृद्ध भारत का खोया हुआ आत्म सन्मान पुनः स्थापित हो और स्वतन्त्रता प्रिय वृटिश जाति की घटती हुई मान प्रतिष्ठा ह्रास से बच जाय॥

सहयोग-त्याग॥

टर्की के प्रति न्यायपूर्ण व्यवहार न करके भारत सचिव तथा वृटिश साम्राज्य ने हमारे मुसलमान भाइयों की आशा को जो आघात पहुँचाया है वह अनिर्वचीय है। युद्ध के दिनों में मुसलमान भाइयों ने जो सहायता सरकार को दी है उस के बदले में उनके साथ यह व्यवहार होना बड़ी कृतघ्नता है। इस कृतघ्नता से न केवल मुसलमान भाई ही प्रत्युत समस्त भारतीय प्रजा के हृदय क्लेशित होगये हैं और वैयक्तिक रुचि के अनुकूल उनके यह हृदय के उद्वेग प्रकाशित होरहे हैं। महात्मा गांधी जी मानवी हृदय के परखने में पटु राजनीतिज्ञ ने अदम्य प्रत्यपकार की वृत्ति के दुष्परिणामों को रोकने के हेतु इन दुःखी हृदयों के उद्वेग को धर्मानुकूल दूसरे प्रवाह में बदल देने का यत्न किया है। उनका कथन है कि यदि राजा प्रजा

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

को न्याय युक्त निष्पत्ति न दे तो प्रजा को उस का सहयोग त्याग करने का अधिकार है।

कई लोगों का मत है कि भारत सरकार के साथ सहयोग त्याग करना अनुचित है क्योंकि टर्की के प्रश्न की सिद्धि उस की शक्ति से बाहर कार्य्य था। किन्तु हमारा विचार है कि भारत-सर्कार तथा वृटिश साम्राज्य दो शक्ति प्रथक् नहीं हैं। भारत सर्कार वृटिश राज्य के प्रतिनिधि रूप हैं, अतः भारत सर्कार के साथ सहयोग त्याग वृटिश राज्य के सामने धन्ना धरना है। जैसे पूर्वकाल में ब्राह्मण लोग अत्याचार देख कर धन्ना धरकर बैठ जाया करते थे और जब तक बुराई को हटा नहीं देते थे अपने व्रत पर डटे रहते थे। इसी प्रकार भारतीय प्रजा को चाहिये कि ब्राह्म शक्ति से अपने ऊपर हुये अत्याचार को रोकें, अन्तर्जातीय द्वेष भाव से नहीं वरन् अन्याय के प्रतिरोध में अन्यायी का साथ छोड़ना सर्वथा न्यायानुकूल है, अतः उपाधियों का छोड़ना, सर्कारी नौक-रियों का परित्याग, सर्कार को दान के रूप में धन देना इत्यादि कार्य्य सर्कार को अपनी रूष्टता दिखला कर वृटिश साम्राज्य से टर्की को न्याय युक्त निष्पत्ति दिलाने के साधन हैं। परन्तु हमें भय है कि बहुत थोड़े जन हैं जो धर्म के हेतु संसारिक सुख को त्याग कर सकें। सर रवीन्द्रनाथ ठाकुर, हकीम अजमल खां तथा डाक्टर सुब्रह्मण्यं आयर इत्यादि सारे नहीं है जो देश के हेतु उपाधियां तो क्या प्राण भी न्यच्छावर करने को उद्यत हैं। अधिकांश लोग तो लाखों हजारों के व्यय से और कई प्रकार से सिफ़ारिशें करवाकर नाक रगड़ कर उपाधियां लेने तथा पदों पर स्थित होते हैं, उन में इतना आत्मिक बल कहां होसक्ता है कि वह इनका परित्याग करें। और उनके परित्याग से सर्कार का विगड़ता भी क्या है? उपाधियां तथा पद चुन २ कर ऐसे लोगों को मिलते हैं जो हां हजूर हों, सर रवीन्द्रनाथ तथा हकीम अज़मल खां जैसे योग्यों को तो परवश होकर अनिच्छा से मान्य देना ही पड़जाता है। इस अवस्था में हमें यह आशा रखनी कि हमारे तालुक़ेदार तथा अन्य रईस और उच्च पदाधिकारी सहयोग त्याग में सम्मिलित होंगे दुराशा मात्र प्रतीत होती है। तथापि हमारी समझ में इसके प्रचार में कोई हानि नहीं है क्योंकि यदि दो चार दस वीस सज्जन भी उपाधियों और अधिकारों का लोभ त्यागकर सके तो और कुछ कार्य्य सिद्ध हो या न हो उन की अपनी आत्मा तो पवित्र वन सकेगी और उन्हें आत्मसंयम तो आजावेगा। इस प्रकार वैयक्तिक जीवन के सुधार से जनता में भी आत्मसंयम का भाव पूर्वापेक्षा अधिक ही होगा। और हानि तो कुछ होगी ही नहीं क्योंकि सत्याग्रह का प्रथम नियम हिंसा निवृत्ति है द्वेष भाव से, प्रतिहिंसा से, तो कार्य्य करना ही नहीं है फिर डर काहे का? जो लोग इतना बल नहीं रखते उन्हे सहयोग त्याग की ओर लगना ही नहीं चाहिये। "सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्म वशं सुखं" यह हमारे शास्त्रों का आदेश है जबतक हम उपाधियों तथा उच्च पदों के लोभ से कर्मचारियों से डरते रहते हैं तबतक हम पराधीन हैं तबतक हम दुःखी रहते हैं किन्तु जब आत्म संयम द्वारा निर्भयता से हम इनकी पराधीनता छोड़ कर सच्चा स्वराज्य प्राप्त करलें तो कोई शक्ति नहीं जो हमें पददलित कर सके।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ॐ

वनिता विनोद

स्त्री उपयोगी स्त्रियों द्वारालिखित लेखों का संग्रह।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१—समाचार।		४—स्वदेश सेवा-(लेखिका श्रीमती चन्दावाई जैन)	१३१
२—कला कौशल्य-(ले० श्रीमती ओ३म्वती देवी)	१२३	५—वैदिक पत्नी-आदर्श।	१३३
३—स्त्रीशिक्षाकी आवश्यक्ता-(ले. कुमारी सुशीलादेवी)	१२७		

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वनिता विनोद—समाचार ।

महात्मा गांधी और विधवा विवाह ।

अपने गुजराती के पत्र "नवजीवन" में महात्मा गांधी जी ने भारत की विधवाओं की सूची देते हुए लिखा है कि जो बाल विधवा हैं उनको मैं विधवा समझता ही नहीं, किन्तु जो गृहस्थ में प्रविष्ट हो चुकी हैं उन विधवाओं का विवाह मैं पाप युक्त समझता हूं ।

अलवर में एक अत्युत्तम राज नियम ।

बड़ौदा राज्य में एक ४० वर्ष के पुरुष के साथ ५ वर्ष की बालिका का विवाह होने लगा था लेकिन डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट के हुक्म से बन्द हो गया । अलवर रियासत में यह कानून बना हुआ है कि कोई पुरुष अपने से आधी आयु से कमवाली कन्या से विवाह नहीं कर सक्ता और पुरुष की आयु विवाह समय कम से कम १६ वर्ष की और कन्या की ११ वर्ष की अवश्य होनी चाहिये । इस प्रकार वहां पर पति पत्नी की आयु में बहुत बड़ा अन्तर नहीं रहता । यदि समस्त भारत में यह कानून होजावे तो बुड्ढे का ब्याह बच्ची के साथ कभी हो ही न सके ।

एक सर्वियन स्त्री का आर्य्य समाज में प्रवेश ।

३० मई को गणेशगंज लखनऊ आर्य्यसमाज मंदिर में एक २२ वर्ष की सर्वियन स्त्री की शुद्धि की गई । यह स्त्री सर्विया के अच्छे घराने की कही जाती है और ईसाई धर्म से इसे अविश्वास होजाने के कारण वैदिक धर्म का अवलम्बन किया है । इसका नाम स्नेहलता रक्खा गया है और यह अब लखनऊ समाज की सभासद भी हो गई है । ईश्वर करे कि कम से कम यह शुद्धि तो आर्य्यसमाज के लिये शुभ हो ॥

स्त्रियों की यूनीवर्सिटी के लिये १५ लाख दान ।

गुजरात काठियवाड़ की स्त्रियों के लिये एक यूनीवर्सिटी का प्रस्ताव इस समय हो रहा है जिसके लिये हमे ज्ञात हुआ है कि सर विठलदास थेकरसे ने १५ लाख रुपये का दान दिया है ॥

Plumage Bill परों के विरुद्ध कानून ।

कहा जाता है कि स्त्रियों का हृदय बड़ा कोमल होता है और वह हत्याकांड देख नहीं सक्तीं । किन्तु वर्तमान सभ्यताभिमानी देशों में विलासप्रिय स्त्रियों की उपभोग सामग्री जिस हत्या से पूरी होती है उस का अनुमान करने से हृदय कम्पायमान होता है । विलायत में प्लूमेज़ बिल अर्थात् चिड़ियों के पर तथा खाल के वर्तने के विरोध में नियम बनने लगा है । कहते हैं कि युद्ध से पहिले इंग्लैंड में ३५ करोड़ जंगली चिड़ियां प्रतिवर्ष बाहर से भेजी जाती थीं जिन के परों से अंग्रेज स्त्रियों की भोग प्रियता पूर्ण होती थी । वर्त्तमान वर्ष भी बताता है कि यह हत्या घटने की अपेक्षा बढ़ ही रही है, और अनुमान किया गया है कि एक खाल की प्राप्ति के लिये दश चिड़ियों को घायल करके और फ़ांका कराके मारना पड़ता है । यदि यह फ़ैशन रोका न गया तो शीघ्र ही पक्षियों की नसल ही नष्ट होजायेगी ।

सभ्य देशों में स्त्रियों का मान ।

कहते तो हैं कि पाश्चात्य देशों में स्त्रियों का मान सब से अधिक है, परन्तु वर्त्ताव में ऐसा नहीं है । विलायत का आक्सफोर्ड विश्व विद्यालय अपनी डिग्री स्त्रियों को नहीं देता था । हर्ष का विषय है कि अब वह स्त्रियों को इस योग्य समझने लगा है कि वह भी उस की डिग्री की अधिकारी बन सक्ती हैं ।

फीसी में स्त्रियों की दशा ।

फीजी में मजदूर स्त्रियें अपनी सभा कर रही थी कि पुलेस ने जान बूझकर उनके तिरस्कार करने के लिये उन पर आक्रमण किया । योरोपियन पुलिस ने मशीनगन लगा कर उन्हें भगाने की चेष्टा की । कुछ स्त्रियें पकड़ी भी गईं और घरों की तलाशी ली गई । इस प्रकार यह अत्याचार नये बलवे का कारण बना ।

ईजिप्ट में स्त्रियों की दशा ।

मिस्टर जी. यन वार्न्स यम पी ईजिप्ट की स्त्रियों के विषय में कहते हैं कि उनकी दशा बहुत बुरी है वह भारे की टट्टू बनी हैं खेतों में काम करती, पानी भरती हैं गंदे घरों में रहती हैं और पुरुषों की पराधीन तथा दासी रहती हैं जो लोग स्त्रियों से इस प्रकार का व्यवहार करते हैं वह सभ्य के योग्य नहीं ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

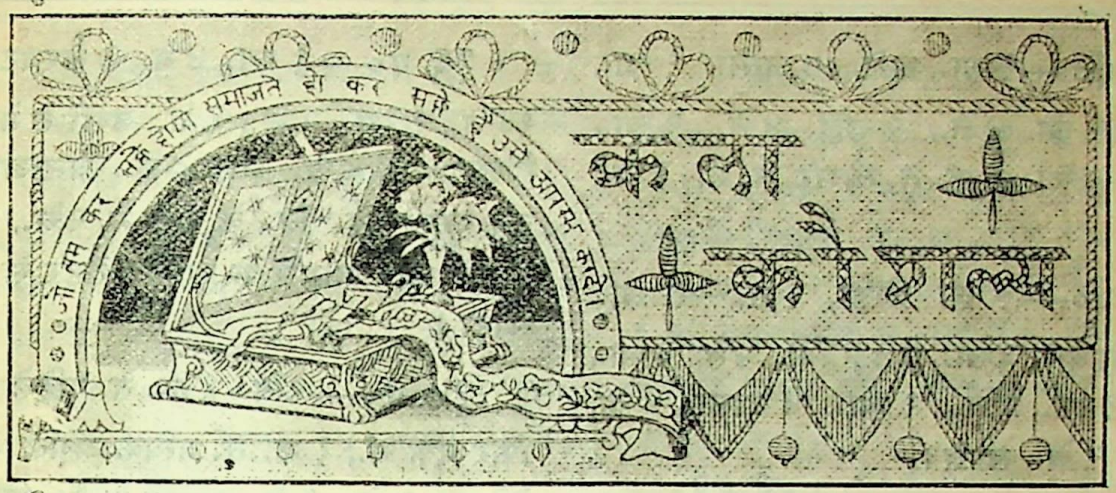

जाला लेस।

संकेत:—

१ लैस्यट व जाला—लेस में ऊपर जो जालसा बना हुवा है उसको कहते हैं। यह पहिले १ तेहरा फिर ३ चे., फिर १ दोहरा फिर ३ चे., फिर १ ते., के बीच में बनता है इस तरह को बन्द लैस्यट और दो ते., के बीच में ७ चे., बना जाने को खुला लैस्यट कहेंगे। इसी के ऊपर दूसरी पंक्ति में लौटते हुवे बन्द लैस्यट व जाल बनता है। यह एक वार खुले एक वार बन्द बनते हैं।

२. लम्बा तेहरा व (ल. ते.) उसको कहेंगे जो क्रोशिये पर दो वार धागा चढ़ाकर फिर घर में बीनकर ४ फ़न्दे कर फिर १ वार धागा चढ़ा और दो फ़न्दों में से निकाल, इसी भांति तीन वार फ़न्दे चढ़ाकर और दो दो घरों में से निकालने से तेहरे से एक वार अधिक लम्बा जो फ़न्दा बनता है उसे लम्बा तेहरा कहते हैं॥

३. इसमें जहां २ छल्लों का प्रयोग है सब ६ चेनों के हैं केवल आरम्भ के और अन्त के ५ चेनों के हैं।

आरम्भ में ९५ चे करो—

१ पं०—३ चे. छोड़ो, ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ५ चे., ३ छोड़ो, १ दो., * ६ चे., ३ छोड़ो, १ दो., इस * चिन्ह से पांच वार दोहराओ ५ चे., ३ छोड़ो, ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ? खुला लैस्यट व जाला, ४ ते, १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

२ पं०—१ ख़ा., ४ ते., १ लैस्यट, १ ख़ा., १० ते., ४ ख़ा., ४ ते., (पिछले ३ छल्ले में), ५ चे., १ दो., दूसरे छल्ले में,—६ चे., १ दो हर अगले छल्लों में चार वार, ५ चे., ४ ते., (३ छल्ले में १ ते., पर), ४ ख़ा., १० ते., ३ चे., लौटो।

३ पं०—३ ते., छोड़ो १ ते., २ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ४ ते., ५ चे., १ दो छल्ले में,—६ चे., और १ दो., तीनों छल्लों में, ५ चे., ४ ते., (३ छल्ले में १ ते पर) २ ख़ा., १० ते., ३ खुले और बन्द लैस्यट, ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

४ पं०—१ ख़ा., ४ ते., ३ लैस्यट., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ४ छल्ले ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १ ख़ा., १ ल. ते. अगले ते पर, ३ ते लौटो।

५ पं०—१ ख़ा छोड़ो, १० ते., ४ ख़ा., ४ ते., ३ छल्ले, ४ ते., ४ ख़ा., १० ते., ३ जाला, ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

६ पं०—१ ख़ा., ४ ते., ४ जाला, १ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ४ ते., २ छल्ले, ४ ते., २ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., १ ल. ते, तीसरे ते. में, ३ चे., लौटो।

७ पं०—१ ख़ा छोड़ो, १ ते.,—१ ख़ा., ४ ते., दो वार, ३ ख़ा., ४ ते., २ चे., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ जाला., ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

८ पं०—१ ख़ा., ४ ते., ४ जाला., १ ख़ा., १० ते., ४ ख़ा., ४ ते., ४ ख़ा., १० ते., १ ल. ते अगले ख़ा के पीछे, ३ चे., लौटो।

९ पं०—३ ते., छोड़ो १ ते., २ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., १० ते., ६ लैस्यट ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१० पं०—१ ख़ा., ४ ते., ६ जाला, ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १ ल. ते अगले ख़ा के पीछे, ३ चे., लौटो।

११ पं०—ख़ा छोड़ो, १० ते., ३ ख़ा., १० ते., ६ लैस्यट, ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१२ पं०—१ ख़ा., ४ ते., ७ लैस्यट, १ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., १ ल. ते., तीसरे ते. में, ३ चे., लौटो।

१३ पं०—१ ख़ा छोड़ो, १ ते.,—१ ख़ा., ४ ते., दो वार, १ ख़ा., ७ लैस्यट, ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१४ पं०—१ ख़ा., ४ ते., ७ लैस्यट, १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१५ पं०—१ ते., पहिले ते. पर, ५ ख़ा., ७ लैस्यट, ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१६ पं०—१ ख़ा., ४ ते., ७ लैस्यट, १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., २ चे., १ ते., उसी ते मे जिसमें पिछला था, २ चे., और ८ ते., बनाओ लौटते हुवे बनाई गई ५ चे., के छल्ले में, २ चे., ४ सादे., (दूसरे ओर सामने के पहिले तेहरे से लेकर) लौटो।

१७ पं०—२ चे., १ ल. ते. पहिले ते. पर-फिर एक चे., १ ल. ते. प्रत्येक अगले ७ ते. के घेरे पर, २ चे., १ ते., अगले ते. मे, फिर २ चे., १ ते., उसी घर में, २ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ जाला, ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१८ पं०—१ ख़ा., ४ ते., ७ जाला, १ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., २ चे., १ ते., फिर पिछले ते. में, इसके बाद २ चे., १ ल. ते., हर एक ल. ते. में जो पहिले घेरे में बने थे, २ चे., सामने की एक लकीर छोड़कर ४ सादे अगलों पर लौटो।

१९ पं०—३ चे., १ ल. ते. ल. ते. पर आठ वार इसी तरह, ३ चे., १ ते. ते. पर, २ चे., १ ते., फिर, १ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., १० ते., ६ जाला, ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

२० पं०—१ ख़ा., ४ ते., ६ जाला., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., २ चे., १ ते., फिर पिछले ते. मे—४ चे., १ ल. ते, प्रत्येक ल. ते पर ४ चे., ४ सादे पहिली पंक्ति के ख़ातमें से जो सामने की ओर बनाये थे; लौटो।

२१ पं०—५ चे., १ ले. ते. घेर के प्रत्येक ल. ते. पर आठ वार ५ चे., १ ते, ते पर, २ चे., १ ते., फिर उसी घर में,—३ ख़ा., १० ते., दो वार, ६ लैस्यट ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

२२ पं०—१ ख़ा., ४ ते., ४ जाला, १ ख़ा., १० ते., ४ ख़ा., ४ ते., ४ ख़ा., १० ते., १ ख़ा.,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२ चे., १ ते., फिर उसी घर में,—६ चे., १ ल. ते., ल. ते., पर आठ वार, ४ सादे सामने वाली पिछली पंक्ति के ख़तम से लेकर लौटो।

२३ पं०—७ चे., १ ल. ते., ल. ते. पर आठ वार ७ चे., १ ते. ते. पर, २ चे., १ते फिर उसी घर में, २ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ५ चे,. २ छोड़ो., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा, ४ ते., १ ख़ा., ४ जाला, ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

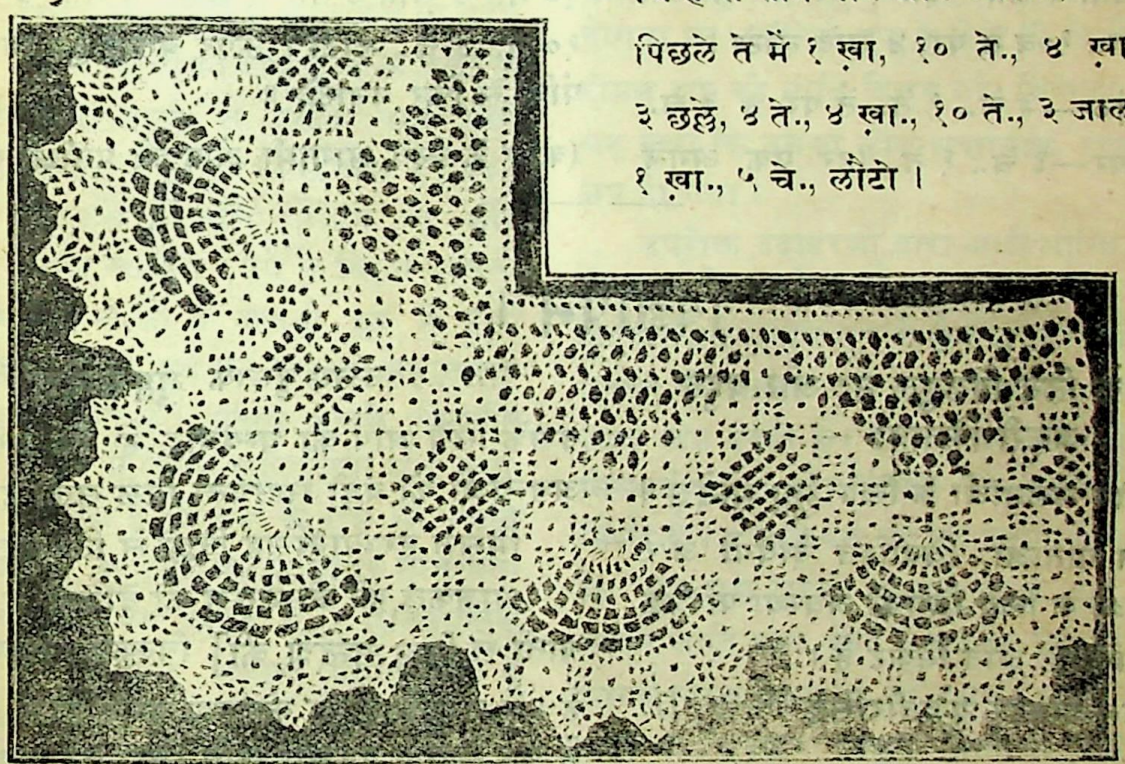

२४ पं०—१ ख़ा., ४ ते., ४ जाला, १ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ४ ते., २ छल्ले, ४ ते., २ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., २ चे., १ ते., फिर उसी में जिस में पिछला ते. था, * २ चे., २ छोड़ो, १ ते,. २ चे., १ छोड़ो., १ ते., २ चे., २ छोड़ो १ ते., इस*चिन्ह से आठ वार और बनाओ, ४ सादे सामने दूसरे ख़ाने के साथ लौटो।

२५ पं०—१० ते,*३ ख़ा., १० ते., इस चिन्ह से तीन वार और बनाओ; २ चे, १ ते., पिछले ते में १ ख़ा, १० ते., ४ ख़ा., ४ ते., ३ छल्ले, ४ ते., ४ ख़ा., १० ते., ३ जाला, ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

२६ पं०—१ ख़ा., ४ ते., ३ जाला, ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ४ छल्ले, ४ ते,. ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., २ चे., १ ते., फिर उसी में, ४ ते., १ ख़ा., ४ ते.,* ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., इस*चिन्ह से तीन वार और बनाओ, ४ सादे, सामने वाले दूसरे ख़ाने के साथ लौटो।

२७ पं०—१० ते.,*३ चे., १ ते. बीच के ख़ाने में, ५ चे., १ ते,. फिर उसी ख़ाने में, ३ चे,. १० ते., (४ ते के पहिले ते. से लेकर) इस*चिन्ह से लेकर तीन वार फिर बनाओ, और २ चे., १ ते., फिर पिछले फन्दे में, ३ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ४ ते., ५ छल्ले., ४ ते., २ ख़ा., १० ते., ३ जाला, ४ ते., १ ख़ा., ५ चे. लौटो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२८ पं०—१ ख़ा., ४ ते., १ जाला, १ ख़ा., १० ते., ४ ख़ा., ४ ते., ६ छल्ले, ४ ते., ४ ख़ा., १० ते., २ चे., १ ते., फिर पिछले घर में, * ३ चे., १ दो. (१० ते., के बीच में) ३ चे., १ ते., १०वें ते. पर, ३ चे., १ ते., अगले ते. पर, ३ चे., १ ते., (पांच चे. के छल्ले की तीसरी चे. मे.) ५ चे., १ ते., फिर उसी घर में, ३ चे., १ ते., अगले ते. पर ३ चे., १ ते. (१० ते. मे. के पहिले ते. पर), इस * चिन्ह स लेकर तीन बार और बनाओ, ३ चे., १ दो. १० ते. के बीच में, ३ चे., १ ते., १०वें ते पर, ४ सादे लौटो।

२९ पं०—३ चे., १ ते., ते पर * ३ चे., १ दो दो. पर—३ चे., १ ते., (हर एक अगले ३ तेहरों पर), ३ चे., और ५ चे. के छल्लों की तीसरी चे. में ३ चे., १ ते., ५ चे., १ ते., ३ चे., १ ते.—३ चे., १ ते., ते. पर तीन बार, फिर इस * चिन्ह से लेकर तीन बार और बनाओ, ३ चे., १ ते. ते. पर, २ चे., १ ते., फिर उसी घर में—१ ख़ा., ४ ते., दो बार, ३ ख़ा., ४ ते., ७ छल्ले, ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १ जाला., ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

३० पं०—१ ख़ा., ४ ते., १ जाला, १ ख़ा., १० ते., ४ ख़ा., ४ ते., ६ छल्ले, ४ ते., ४ ख़ा., १० ते., ३ चे., लौटो। ऊपर बताई हुई तीसरी पंक्ति से फिर बनाओ॥

(कोने के लिये आगामी अंक की प्रतीक्षा करो)

विज्ञापन।

देवियों के लिये बिलकुल नई और बहुत ज़रूरी किताबः—

भारतीय ललनाओं के लिये गुप्त सन्देश।

समस्त माताओं, विवाहित देवियों और उन कन्याओं के लिये जिनकी अवस्था परिपक्व है अथवा विवाह अति निकट है।

लेखक—डाक्टर युद्धवीरसिंह P. E. H. M. S. M. A.

इस पुस्तक में नारी सम्बन्धी रोगों तथा उन के कारणों का वर्णन बिलकुल नये ढंग से और मनोरंजक भाषा में किया गया है और शरीर रचना शास्त्र की स्त्रियों के लिये बहुत ज़रूरी बातें लिखी गई हैं जिन का यथोचित ज्ञान होने से समस्त देवियां बहुत सी तकलीफ़ें और रोगों से बच सक्ती हैं।

कुछ सम्मतियां।

श्रीमती श्यामकिशोरी कुंजरू आगरे से लिखती हैं:—

".....उत्तम पुस्तक 'गुप्त सन्देश' मिला उसके लिये आप को धन्यवाद है कि उस से अबलाओं को बड़ी सहायता मिल सक्ती है—"

मिसेज़ हरध्यानसिंह दिल्ली से लिखती हैं:—

आजकल की जो भारत की देवियां हैं इन बातों से [गुप्त सन्देश की] बिल्कुल अनजान हैं। मैं चाहती हूं कि कोशिश करके हरेक घरों में यह किताब पहुँचाई जावे जिस को पढ़ कर हमारी बहिनें लाभ उठावें"।

इस पुस्तक में ६० पृष्ट हैं और मूल्य केवल ॥) है

शीघ्रता कीजिये क्योंकि किताब जल्दी निकल रही है।

६ किताबें एक साथ मंगाने से २॥)
१२ ,, ,, ,, ४॥)

मिलने का पताः—

मैनेजर अपरइन्डिया होमियो पैथिक बर्क्स कंवारे के पास चांदनी चौक, दिल्ली।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री शिक्षा की आवश्यक्ता।

लेखिका—कुमारी सुशीला देवी

किसी राष्ट्र की सामाजिक, तथा राजकीय स्थिति का सम्यक्तया अवलोकन करना हो तो यह देखना परमावश्यक है कि उस देश की स्त्रियों की स्थिति कैसी है। उस राष्ट्र के पुरुषों का स्त्रियों के साथ बराबर का व्यवहार है या नहीं और वह उन्हें शिक्षित बनाकर अपने सदृश समझते हैं या नहीं। बहुत से मनुष्य स्त्रियों को बोझ ढोने के बैलों के समान देखते हैं, इसमें से प्रत्येक बात कार्य कारण के साधारण नियम से सम्बद्ध है। उदाहरण के लिए हमें पूर्व और पश्चिम की ओर दृष्टिपात करना चाहिये। पूर्व में स्त्रियां दासता की कठोर शृंखलाओं में जकड़ी हुई हैं इसी कारण देखते हैं कि पूर्व का राष्ट्र भी अज्ञानान्धकार में डूबा हुआ है। परन्तु इसके विपरीत पाश्चात्य प्रदेशों में स्त्रियां सुशिक्षिता और उच्चासन पर आसीन हैं तो वहां के राष्ट्र भी उन्नति के उच्च शिखर पर विराजमान होकर स्वतन्त्रता के सुख का अनुभव करते हैं। ऐतिहासिक प्रमाणों से भी उक्त सत्यता प्रतीत होती है अर्थात् यह ज्ञात हो जाता है कि स्त्रियों की उन्नति से ही राष्ट्र की उन्नति और स्त्रियों की अवनति से ही राष्ट्र की अवनति होती है। इस के विषय में एक रोमन ग्रन्थकार लिखता है कि "रोमन जाति अपनी स्त्रियों के साथ यूनानियों की अपेक्षा अधिक अच्छा बर्ताव करते हैं। इसीलिए यूनानी राष्ट्र से रोमन राष्ट्र अधिक बलवान है"। यह बात इतिहास प्रसिद्ध है कि रोम ने एक छोटे से नगर से बढ़ते २ लगभग संसार पर अपना अधिकार जमा लिया था। जिस प्रकार रोमन राष्ट्र की उन्नति विस्मयकारक है इसी प्रकार उसकी अवनति भी हृदय विदारक है। रोमन जाति के उत्कर्ष के समय रोमन स्त्रियों में पातिव्रत, स्वावलम्बन, स्वार्थत्याग, धैर्य्य आदि जो गुण देख पड़ते थे वे सब उनकी अवनति के समय नष्ट हो गये थे उन अच्छे गुणों के स्थान में दुराचार, अज्ञानता, कलह आदि दुर्गुणों का साम्राज्य स्थापित होगया था। प्यूनिक युद्ध के थोड़े ही दिनों बाद रोमन राष्ट्र की नीति बिगड़ गई जिसका फल यह हुआ कि उनका लोक-सत्तात्मक राज्य भी नष्ट हो गया।

उपरोक्त उदाहरणों द्वारा भली भान्ति सिद्ध हो गया कि जो देश या राष्ट्र बिना स्त्री जाति को शिक्षित बनाये हुए राष्ट्रीय तथा राजनैतिक उन्नति की आशा करते हैं वह एक सर्वथा असम्भव स्वप्न देखते हैं। देश या जाति का सुधार निस्सन्देह देश और जाति की माताओं पर निर्भर है। नैपोलियन का यह वचन प्रसिद्ध है कि "तुम मुझे अच्छी मातायें दो मैं तुम्हें एक महान जाति बना दूंगा"। प्राचीन समय में जब भारत गौरवान्वित था तो उसका मुख्य कारण यही था कि स्त्रियां विदुषी होती थीं और स्त्री पुरुषों में समान भाव का नियम उपस्थित था। भगवान् मनु का वाक्य है कि :—

यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता।
यत्रैतास्तु न पूज्यन्ते, सर्वातत्रा फला क्रिया॥१॥

उस समय की शिक्षा के प्रभाव से भारतीय स्त्रियां धार्मिक उत्साह से उतनी ही तथा विद्या के प्रकाश से उतनी ही देदीप्यमान होती थीं जितनी कि वे संतान की सेवा के लिए उद्यत

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तथा तत्पर रहती थीं। धार्मिक, सामाजिक, और राजनैतिक मामलों में उन्हें पूरी स्वतन्त्रता थी वे अपनी इच्छानुसार जिस प्रकार चाहतीं जीवन व्यतीत करती थीं। उपनिषदों में हम गार्गी नाम की शास्त्र प्रवीणा विदुषी को विद्वान् तथा ऋषियों की सभा में याज्ञवल्क्य नामक एक महर्षि के साथ आध्यात्मिक-विद्या सम्बन्धी भ्रान्ति डालने वाले प्रश्नों पर तर्क करते हुये पाती हैं, गार्गी ब्रह्मवादिनी कहलाती है। गार्गी के तुल्य और भी स्त्रियां थीं जिन्होंने भारत के ज्ञान विषयक दिग्मंडल को अपनी अलौकिक प्रतिभा तथा विद्वत्ता से उज्वल नक्षत्रों के तुल्य उद्भासित किया था। मैत्रेयी दूसरी ब्रह्मवादिनी हैं जब उनके पति ने ईश्वर चिन्तन के निमित्त सन्यास लेने के विचार से अपनी समस्त सम्पत्ति को अपनी दो स्त्रियों के बीच में उनके पालनार्थ बांटना चाहा तब मैत्रेयी सहसा बोल उठी "मुझे उस पदार्थ से क्या सम्बन्ध जो मुझे अमृतत्व नहीं प्रदान कर सक्ता" भारत के पुरुषों और स्त्रियों के जीवन का यही आन्तरिक अभिप्राय था। प्राचीन भारत की स्त्रियां जीवन के प्रत्येक विभाग में पूर्णतया से स्वछन्द थीं। वे ज्योतिष, गणित, दर्शनशास्त्र, न्याय तथा साहित्य में चतुर होती थीं।

इन विषयों पर वह ग्रन्थ भी रचती थीं। लीलावती जिसने बीजगणित पर ग्रन्थ लिखे, रबन जो ज्योतिष में प्रवीण थीं इन विदुषियों के नाम घर घर प्रसिद्ध हैं। रबन के विषय में ऐसा कहा जाता है कि वह अपने पति तथा श्वसुर की अपेक्षा ज्योतिष तथा अन्य शास्त्रों में अधिक निपुण थी इस कारण उसकी जिह्वा ईर्षा से काट ली गई। परन्तु यह चित्र भारत के पतन के आरम्भ होने के समय का है जब भारत स्वतन्त्र था तब भारतवासियों के हृदय भी स्वतंत्र निष्कपट तथा असंदिग्ध थे इसीलिए भारतीय पुत्रियां भी उन जैसी ही थीं। वे राज्य के कार्य्य संपादन करती थीं और अवसर पड़ने पर वह स्वदेश के लिए युद्ध भी करती थीं उन की वीरता के उदाहरण इतिहास प्रसिद्ध हैं, अस्तु, सुवर्णमय भारत के सुदिनों में भारतीय स्त्रियां धार्मिक उत्साह, वीरता, विद्या आत्मोत्सर्ग तथा सच्चरित्रता के लिए प्रसिद्ध थीं। उस समय का पुरुष और स्त्री की बराबरी का भाव हिन्दुओं के धर्म और सदाचार के उस बृहत् भवन की आधार स्तम्भ है जो इतने युगों तक संसार के समालोचकों के आक्रमण की परवाह न करता हुआ समय के हेर फेर और नाश करने वाली शक्तियों के आगे अब तक अटल खड़ा है। इसीलिए भारत में जो कुछ पुरुषों के लिए मांगा जाता था वह स्त्रियों के लिए भी था। बराबरी का यह भाव आर्य साहित्य में बड़े ही बलपूर्वक प्रकाश किया गया है, ऋग्वेद में एक मन्त्र आया है जिसमें स्पष्ट शब्दों में बतलाया गया है कि "एक ही वस्तु के समभाग होने के कारण स्त्री पुरुष सब प्रकार बराबर हैं इसलिए दोनों को सांसारिक अथवा धार्मिक सब कार्य्यों में बराबर का हिस्सा मिलना चाहिये"। आर्य धर्म में जो उच्च स्थान देवियों को प्राप्त है वह किसी और मत में नहीं है। यह एक भारतवर्ष ही ऐसा देश है जहां वैदिक ऋषियों के हृदय में कभी भी इसके विपरीत भाव नहीं उठे न ऐसे असत्य विचार वेद के अर्थों के रचिताओं के लेख से प्रकाशित किये गये हैं। शास्त्रकारों ने यह भली भान्ति जान लिया था कि स्त्री पुरुष दोनों बराबर हैं और सकल संसार के समक्ष यही कहते थे कि स्त्रियों को धर्म में, स्वत्व में, स्वतन्त्रता में, विद्योपार्जन में, शिक्षा में पुरुषों के सदृश अधिकार हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

किन्तु वर्तमान समय के परतंत्रता रूपी शृंखलों से युक्त भारतीयों के विचार इस विषय में नितान्त बदल गये हैं उनका विचार है कि स्त्री जाति को शिक्षा देना विष के समान है क्योंकि शिक्षा पाकर वह अपने धर्म को छोड़ कर दूषित हो जाती हैं, इनके चरित्र भ्रष्ट हो जाते हैं। किन्तु वे नहीं जानते कि स्त्री जाति को जब २ समय मिला है। उन्होंने अपनी शक्ति का चमत्कार दिखाया है। वेदों की बहुतसी ऋचाओं को स्त्रियां ही प्रकाशिका हैं। दुर्गादेवी ने महिषासुर आदि दैत्यों का मारकर देवताओं को संकट से बचाया था, रानी कैकयी ने रणक्षेत्र में महाराजा दशरथ के प्राण बचाये थे; मन्दालसा के दर्शनविज्ञान ने तत्कालीन बड़े २ मुनियों को चकित कर दिया था। सीता महाराणी के चरित्र की तुलना करने के लिए ही स्त्रियां अन्वेषणा से मिलेंगी। यह तो प्राचीन समय के उदाहरण हैं। वर्त्तमान समय में भी भारतीय स्त्रियों के स्वभाव से वीरता, आत्मत्याग और लोग सेवा आदि जिन गुणों ने भूतकाल में भारतीय स्त्रियों को प्रसिद्ध किया वे लोप नहीं हो गये हैं इसका प्रमाण हमें दक्षिणी अफ्रीका में मिल रहा है जहां भारतीय ललनायें अपने प्रिय पतियों और प्यारे पुत्रों के साथ जेलों की कठोर कठिनाइयों को आनन्द पूर्वक सहन कर रही हैं। भारतीय स्त्रियों के हृदय में प्राचीन भाव अब भी छिपा पड़ा है यदि और अधिक प्रमाणों की आवश्यक्ता है तो उन वक्तृताओं को पढ़ लो जो दक्षिणी अफ्रीका में स्त्रियों ने उत्पीड़ितों के सम्बन्ध में दी है। इनकी एक२पंक्तिसे उत्साह और सहानुभूति की धारा बह रही है इसलिए यह कथन नितान्त असत्य है कि स्त्री शिक्षा पाकर दुश्चरित्रा बन जाती हैं। वरन इसके विपरीत वह गृह के काम काज मन लगाकर सावधानता से करती हैं, पति के प्रति अगाध प्रेम होजाता है और सर्व प्रकार के दुर्गुणों को त्याग कर गृहस्थ को स्वर्ग बनाती हुई जीवन आनन्द पूर्वक व्यतीत करती हैं। बहुत से मनुष्य रमणियों की शारीरिक और मानसिक कोमलता को उनकी शिक्षा के बाधक बतलाते हैं अर्थात् स्त्रियां कोमल और दुर्बल हैं इस कारण उनको शिक्षा न देना चाहिए। परन्तु मेरे विचार में स्त्रियों की शारीरिक और मानसिक कोमलता शिक्षा के लिए किसी प्रकार बाधक नहीं हैं प्रत्युत कोमल अन्तःकरण शिक्षा के लिए अधिक उपयोगी है, क्योंकि बालकों के हृदय में विद्या का बीज बड़ी शीघ्रता से अंकुरित होता है अतएव स्त्री जाति का कोमल अन्तःकरण विद्या सीखने के लिए समीचीन है।

विद्या से स्त्रियों के दुर्बल हृदय में बल आजाना युक्ति संगत है, विद्या के तेज से बलवती होने पर स्त्रियां बड़ी सरलता से आत्मरक्षा कर सक्ती हैं। वही सुरक्षिता है जो स्त्री विदुषी होने पर शोकादि को सहज ही वश में ला सक्ती है, अविदुषियों के लिए यह कठिन है इसमें सन्देह नहीं। मनुष्य का अर्द्ध स्थान स्त्री जाति से अधिकृत है। स्त्री शिक्षा अनुचित होने पर या बिलकुल ही न होने पर समाज के साथ विद्यालोक का किसी प्रकार का संबन्ध नहीं रहता। सोम और चन्द्रमंडल की भान्ति मनुष्य समाज का एकार्द्ध उज्वल आलोक से आलोकित और अपरार्द्ध सदा अन्ध तमसाच्छन्न रहेगा।

माता अपने सद्गुणों को सुगमता से बालक को प्रदान कर सक्ती है क्योंकि एक वाक्य है जिसके अर्थों से यह सिद्ध होता है कि एक उत्तम माता स्कूल के १०० सुयोग्य शिक्षकों से उत्तम है। वह सद्गुण जिनमें माता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रवीण हो बालकों पर विशाल प्रभाव डालते हैं और इतनी शीघ्रता से बालक उन्हें ग्रहण कर लेते हैं कि जिसका कुछ ठीक नहीं। पढ़ने लिखने की भी यही दशा है हंसते बोलते खेलते कूदते वह इतना सीख लेते हैं कि पाठशाला की वर्षों की शिक्षा भी नहीं सिखा सक्ती। शोक की बात है कि मानवीय संकुचित विचारों ने इन सब से बड़ उपयोगी और अल्प व्यय पाठशाला की स्थिति को ही मिटा दिया है और इसकी हानि विदित ही है। प्रत्येक मनुष्य जानता है कि पुरुष की मूर्खता का प्रभाव बालक पर स्त्री की मूर्खता के प्रभाव की अपेक्षा कुछ भी नहीं पड़ता और बाल्यावस्था के संस्कार बहुधा ऐसे प्रबल और चिरस्थायी होते हैं कि वे मनुष्य का साथ जीवन पर्यन्त नहीं छोड़ते। इससे यही सिद्ध होता है कि यदि स्त्रियां विदुषी और शिक्षा रूपी अमृत का फल लिए हुये होंगी तो फिर शिशुकाल में ही बच्चों के हृदयों में सद्भाव और धर्म के प्रति श्रद्धा उत्पन्न करके उनके आदर्श जीवन बना देंगी। दूसरा प्रभाव जो स्त्रियों की मूर्खता से पड़ा है उसने सामाजिक उन्नति हर प्रकार रोकी हुई है। इसी का प्रभाव है कि मूर्खता आजतक हमारे समाज में विद्या और बुद्धि पर अधिकार किये हुए है। साम्प्रदायिक झगड़ों का तूफ़ान इसी के कारण आजतक शान्त होने नहीं पाता। पुरुष अपनी विद्या के कारण कहां से कहीं पहुंच जांय परन्तु स्त्रियों की अविद्या उनको लकीर का फकीर बनाये रहती है और उनका प्रभाव पुरुषों को अपने आधीन करके परम्परागामी बनाये रहता है।

आज कल भारत की मूर्खा स्त्रियों को अविद्यारूपी मेघाच्छन्न होने के कारण जो २ अत्याचार और कष्ट सहने पड़ते हैं उनके लिखने से हृदय भरा आता है, घरों में दासिओं की भांति काम करना पड़ता है उनके चरित्र को निष्कलंक रखने का प्रयत्न नहीं किया जाता क्योंकि भोली भाली युवतियां झट धूर्त्तों के फंदे में फंसकर अपने जीवन को भ्रष्ट कर देती हैं कोई पत्थर पूजती फिरती हैं कोई सन्तानोत्पत्ति हो इस कारण स्थानों आदि की पूजा करती हैं। कहां तक कहूं उनकी दुर्दशा का चित्र वर्त्तमान समय में देखने से हृदय विदीर्ण होता है आंखों से आंसू निकलते हैं यह दशा तो भारत ललनाओं की अविद्या वश अपने देश में होती हैं परन्तु यदि इतना ही होता तो भी सन्तोष था किन्तु उनकी जो दशा दूसरे उपनिवेशों में होती है उन हृदय विदारक घटनाओं से किस भारतवासी का हृदय विदीर्ण न होगा!

अतः केवल अन्त में यही कहूंगी कि यह असम्भव है कि स्त्री जाति को शिक्षित किये बिना कोई पुरुष चिरस्थायी उन्नति कर सके। गन्दे स्रोत से निर्मल और स्वच्छ जल की आशा रखनी दुराशा मात्र है। दुर्बल और मुर्दा जड़ों से मोटे और विशाल वृक्षों की आशा रखनी भूल है ऐसी आशायें संसार में पूर्ण नहीं हो सक्ती।

यदि वृक्ष को सुफलित और हरा भरा रखना हो तो उनकी जड़ों की दृढ़ता की ओर ध्यान दो। यदि विशाल और चिरस्थायी अट्टालिका बनानी हो तो चिरस्थायी नींव डालो। यदि इसकी विशेषता के समझने में भूल की, यदि इन्हें साधारण बातें समझकर अधूरा छोड़ दिया तो अपनी आशाओं के ढेर अपने पैरों के नीचे देखोगे।

———

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वदेश सेवा।

लेखिका—श्रीमती चन्दाबाई जैन।

भारतीय सुज्ञ बहिनों को सेवा शब्द का वास्तविक अर्थ क्या है इसको समझाने की कोई आवश्यक्ता नहीं है क्योंकि उनका यह सहज धर्म है शास्त्रों में स्त्री में इस गुण का होना परमावश्यक बताया गया है। वास्तव में बात भी यही है जैसी सेवा सुश्रूषा स्त्रियां कर सक्ती हैं वैसी पुरुष समाज से नहीं होसकती।

सेवा करना हमारा मुख्य धर्म है। भारत की महिलाएं नित्य देवताओं का पूजन करतीहैं जितने पर्व, उत्सव आतेहैं उनके लिये महीनों पहले तय्यारियां करती हैं और समय आने पर अपने बच्चों को साथ लेकर पूजन करती हैं।इसी प्रकार इनी गिनी थोड़ी सी धनाढ्य बहिनों को छोड़कर समस्त महिलाएं प्रातःकाल शय्या पर से उठकर ही गृह कार्य्य में लग जाती हैं और उनकी इस सेवा के बल से ही पति देवता भोजनादि से निवृत्त होकर आजीविका साधन के लिये जा सकते हैं तथा माता के ही परिश्रम के फल से पुत्र तथा पुत्री विद्यालय में जाकर विद्या लाभ कर सकते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि स्त्रियों में सेवा करने का अभ्यास स्वयमेव होजाता है। जिस प्रकार फल फूल पत्ते सब का वास्तविक सार वृक्ष का मूल भाग है उसी प्रकार सेवा की जड़ स्त्रियां हैं।

जैसी सेवा परायणा भारत की देवियां होती हैं वैसी योरोपादि देशवासिनी नहीं होती। हमारे यहां की गृहिणी अपने आप को दासी मानती हैं, और इसी भाव से समस्त कुटुम्ब की सेवा करती रहती हैं।

केवल कुटुम्ब की ही नहीं वरन् किसी समय समस्त भारत भूमि के प्रत्येक कार्य में स्त्रियां भाग ले लेती थीं। परन्तु अब वह समय नहीं है अब हमारी सेवा ने बहुत ही संक्षिप्त स्वरूप धारण कर लिया है। तथापि आज भी भारत उन अंगों से जिनकी कि सेवा स्त्रियां करती हैं किसी देश से कम नहीं है परन्तु जिन २ आभागे भागों की स्त्रियों ने उपेक्षा कर रक्खी हैं उन्हीं २ अंगों से अत्यन्त दुखी है। समय के फेर से और अज्ञान के विस्तार से वर्तमान में हमारा सेवा-क्षेत्र बहुत ही संकुचित होगया है।

हम लोगों ने धर्म की सेवा, देश की सेवा बिलकुल ही छोड़ रक्खी हैं, इसी कारण से भारत प्रायः मरणावस्था में है और पुरुषों के अनेकों यत्न करने पर भी उन्नति शील होना असाध्य होरहा है।

प्रिय सुज्ञ बहिनों! उठो मातृ भूमि को माता से कम मत समझो, इसकी सेवा करना भी हमारा अपना आवश्यकीय कर्म है।

हमने अपनी सेवा को पर्य्याप्त समझ लिया है परन्तु वास्तव में वह पूरी नहीं है। सेवा धर्म बड़ा कठिन कार्य्य है और बड़े त्याग की अपेक्षा करता है।

तुलसीदास जी ने कहा है कि—

"आगम निगम प्रसिद्ध पुराना,
सेवक धर्म कठिन जग जाना॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जब तक देश की सेवा में हम लोग अपने त्याग से सहायिका न होंगी यह कठिन कर्तव्य पूरा नहीं हो सकता।

परन्तु इस बात का विचार अवश्य रखना चाहिये कि जिन २ साधनों और उपायों से पुरुष स्वदेश सेवा करते हैं उसी मार्ग से सर्व साधारण स्त्रीगण कृतकार्य नहीं हो सकतीं। देश सेवा के अनेक अंग हैं परन्तु वर्तमान में हम साधारण स्त्रियां दो मार्गों से ही समुचित सेवा कर सकती हैं। पहला मार्ग इतना सरल है कि पढ़ी वे पढ़ी, छोटी बड़ी, गरीब अमीर सभी बहिनें उसपर सुख से चल सकती हैं—

वह क्या है? स्वदेशी वस्तुओं का व्यवहार।

विदेशी वस्तुओं ने हम लोगों का कैसा सर्व नाश किया है इसका उल्लेख एक दो नहीं वरन दश बीस ग्रन्थों में वर्णन किया जाय तब भी इसका पूरा २ ज्ञान होना कठिन है। इसका दिग्दर्शन मात्र आपको देशदर्शन आदि पुस्तकों के पढ़ने से हो सकता है। इस छोटे से लेख में इतना ही कहना अलम् है कि विदेशी वस्तुओं ने हरे भरे भारत को उजाड़ बना दिया। इसका सब से प्राचीन कला कौशल नाश कर दिया और मनुष्यों को आजीविका से निठल्ला कर दिया, तथा घर २ में अन्न वस्त्र का रोना डाल कर जनता को दीन, हीन, दरिद्री बना दिया। महासमर के प्रारंभ से आज तक इस देश में कितनी महंगी बढ़ गई है, उसका लिखना निरर्थक है। सभी बहिनें जानती हैं कि गरीबों को किस यम यातना का सामना करना पड़ता है। यदि मुद्दतों से हम लोग विलायती कपड़ों के भक्त न होते तो आज यह दशा क्यों होती? हमने सैकड़ों वर्षों से अपने खेतों में रात्रि दिन परिश्रम से उपार्जित रूई को ४ सेर ६ सेर की बेचकर योरोप भेजा और वहां से मलमल जाली, खासा आदि बनकर आये उनको २०) सेर २५) रु० सेर (एक थान) तक खरीदा इसी से यह परिणाम हुआ कि धन, व्यवसाय सब नष्ट होगया। हमारे यहां नवयुवक आधा जीवन केवल नौकरी ही की खोज में बिता देते हैं, क्योंकि देश में काम ही नहीं रहा सब चीजें बाहर के देश से आने लगीं।

प्रिय बहिनों! हम लोगों को उचित है कि फिर भारत को धन धान्य से चमका देवें और इसके लिये आवश्यक है कि अपने लालच का निर्मूल त्याग करें। हमारी बहिनों को विदेशी कपड़ा मलमल, चिकन, रेशम आदि कपड़े कभी नहीं पहनने चाहिये, न विवाह आदि के समय खरीदने चाहिये। अपने देश का बना मोटा महीन जैसा कपड़ा मिले काम में लाना चाहिये, इसी प्रकार विदेशी साबुन, तेल, कंघी चूड़ी आदि वस्तुओं को छोड़ कर देशी चीजें काम में लानी चाहिये।

बहुत सी बहिनें कहती हैं कि जब तक बढ़िया विदेशी कपड़े न पहन लें तब तक कहीं आकर सम्मान पात्र नहीं हो सकतीं। परन्तु यह उनका विचार बड़ा भ्रमात्मक है। देखिये महात्मा गांधी तथा उनका सारा कुटुम्ब मोटे देशी कपड़े हाथ के बने पहनता है। क्या उनका सम्मान कम है। कभी नहीं! बहुतसी बहिनें कहतीं कि यह कार्य पुरुषों के आधीन है परन्तु यह बात भी मिथ्या है। विदेशी वस्तुओं का सम्पूर्ण पाप स्त्रियों के ही ऊपर है। हम लोग ही सब चीज़ों की चमक दमक पर रीझ कर पुरुषों को विदेशी वस्तुओं के खरीदने के लिये विवश करती हैं। यदि हमारी बहिने प्रतिज्ञा करलें तो कोई बाधा उपस्थित नहीं हो सकतीं।

हम स्त्रियों के लिये प्राथमिक एवं छोटी सी यही एक देश सेवा है इसको स्वयं स्वीकार करके अन्यान्य मिलने वाली बहिनों को भी बतलाना चाहिये। जिस समय हम और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारी सन्तान स्वदेशी वस्तु प्रिय हो जायगी, सारा देश आजीविका पूर्ण एवं समृद्धशाली दृष्टि गोचर होने लगेगा।

दूसरा मार्ग स्त्रियों के लिये देश सेवा का क्या है? शिक्षा प्रचार। स्वशक्ति के अनुसार देश बहिनों में शिक्षा का प्रचार करना यह भी परम व्रत है।

हमारी भोली बहिनें यह समझती हैं कि हम स्वयं ही अयोग्य हैं किस प्रकार किसी को शिक्षिता बनावें। परन्तु ऐसा विचार किसी बहिन को न करना चाहिये। भारतवर्ष में केवल पाण्डित्य की ही आवश्यकता नहीं है वरन विशेष आवश्यक्ता है जीवन निर्वाह की। हमारी देश बहिनें, "मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्ति" इस कहावत को बिल-कुल सार्थक कर रही हैं।

जिस समय एक गांव के खेत पर या एक बगीचे के कूए पर तनिक विश्राम लेकर देखिये दस बीस बच्चे नंगे भूत सी मूर्ति आकर खड़े ही जाते है इन बच्चों के केश आखों में गिरते हैं, नासिका बह कर मुख में जाती है, हाथ पैर कीचड़ से सने रहते हैं यह दृश्य देख कर हृदय वेदना से मानो शत खण्ड हो जाता है। यदि इन बच्चों की माता कुछ भी सभ्या हों तो ऐसी दुर्गति नहीं हो सकती। यदि धना भाव से वस्त्र भोजनादि में त्रुटि हो तो हो परन्तु बालकों को स्नान कराकर स्वच्छ रखने में केश साफ करने में किसी प्रकार की विशेष वस्तु की आवश्यक्ता नहीं है।

इन्हीं बातों का उपदेश हमारी बहिनों को ग्राम में जाकर या पाड़ पड़ोस में जाकर करना चाहिये। चाहे कोई अपना नौकर हो, या गरीब रंक-फकीर क्यों नहीं हितोपदेश सब को करना चाहिये।

भोली बहिनों को समझाना चाहिये कि वे अपने बच्चों को स्वच्छ रक्खें, उनके केश आखों को खराब कर देते हैं इसलिये उनको सदैव साफ रक्खें।

गांव भर में एक भी ब्राह्मण पढ़ा लिखा हो तो उसके पास पढ़ने को भेजें।

स्वहस्त से कपड़े सीना सीखें, अपने बच्चों को परमात्मा का भक्त बनावें जिससे वे पापों से बचते रहें।

इत्यादि २ शिक्षाओं से ग्रामीण का मनुष्य बनाना यही हमारी परम देश सेवा है।

जो बहिन अपने आश्रित हो उसको सब प्रकार शिक्षिता करना भी सुज्ञ बहिनों का कर्तव्य है।

इस प्रकार स्वदेशी वस्तु प्रचार तथा शिक्षा प्रचार से देश और जाति की सेवा कर के देशोद्धार करना ही हमारी स्त्रीजाति का परम कर्तव्य है। इसी सेवा के बल से भारत का पुन रूत्थाण हो सक्ता है अन्यथा नहीं।

वैदिक पत्नी-आदर्श।

ओ३म् विदद्यदी सरमा रुग्ण-
मद्रेर्महि पाथः पूर्व्यं सध्र्यक्कः।
अग्रन्नयत्सुपद्यक्षराणामच्छारवं प्रथमा
जानती गात् [ऋ० अ० ३३। मं० ५९॥

पदार्थः—[यदि] जो [सरमा] पति के अनुकूल रमण करने हारी [प्रथमा] प्रख्यात [सुपदी] सुन्दर पगों वाली [अक्षराणम्] अकारादि वर्णों के [रवम्] बोलने को [जानती] जानती हुई [रूग्णम्] रोगी प्राणी को [विदत्] जाने [अग्रम्] आगे [नयत्] पहुचाने वाला [सध्र्यक्] साथ प्राप्त होता [पूर्व्यम्] प्रथम के लोगों ने प्राप्त किये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

[पाथः] अन्न को [कः] करे अर्थात् भोजनार्थ सिद्ध करे और पति को [अच्छ] अच्छे प्रकार [गात्] प्राप्त होवे तो वह सुख को पावे ॥

इस मंत्र में परमात्मा उपदेश करते हैं कि स्त्रियों के विशेष कर्तव्य हैं रोगी की सेवा करना, उत्तम बल बुद्धि वर्द्धक पुष्टिकारक आरोग्यता दायक अन्न बनाना, और सुमधुर उत्तम शास्त्र विज्ञान युक्त भाषण करना। वर्त्तमान समय में हम देखते हैं कि अविद्या के प्रभाव से और स्त्री शिक्षा के उपयुक्त न होने के कारण हमारी नवशिक्षिता युवतियों में इन गुणों का सर्वथा अभाव होरहा है। शिक्षा प्रणाली के अपूर्ण होने के कारण साधारण चिकित्सा शास्त्र की बातें जो कि हमारी स्त्री जाति में एक पीढ़ी पूर्व बड़ी अधिकता से फैली हुई थी वह लोप हो रही हैं। ज्यों २ डिस्पेन्सरी और औषधालय बढ़ रहे हैं त्यों २ रोग वृद्धि होरही है पर स्त्रियों का सेवा भाव तथा चिकित्सा ज्ञान ह्रास ही होरहा है। कारण यह है कि हमारी शिक्षा प्रणाली में चिकित्सा को उचित स्थान नहीं दिया जाता शिक्षा प्रणाली के इस दोष को दूर करने का यत्न शीघ्र ही होना चाहिये जिस से स्त्रियां अपने सर्वोत्तम मुख्य कर्तव्य का पालन करके जन समाज से दुःख और क्लेशों के हटाने में कृतकार्य्य होवें।

दूसरी बात जो आवश्यक बतलाई गई है वह भोजन बनाने की है। हम देखते हैं कि भोजन बनाने की विद्या का इतना ह्रास होरहा है कि साधारणतया लोगों ने भोजन के लाभ को भुला ही दिया है। सात्विक तामसिक गुणों की तो क्या कथा है पुष्टिकारक और आरोग्यवर्धक भोजन पर ही ध्यान नहीं दिया जाता, हां जिह्वा के स्वाद के वशीभूत हो कर जनता घर की पाकशाला में उत्तम रुचिकर भोजन पकवा कर खाना आवश्यक ही नहीं समझती और शिक्षित स्त्रियां पाक विद्या को घृणा की दृष्टि से ही देखने लग पड़ी हैं। अतः कई धनाढ्य घरों को छोड कर जो नौकरों द्वारा यह कार्य्य करा सक्ते हैं बहुत से लोग तंदूरों और हलवाइयों के पकाये हुये भोजन पर निर्भर रहते हैं, जिनसे उनकी स्वास्थ्य भी बिगड़ती जा रही है और स्वभाव भी दुर्व्यसनी हो रहे हैं। यदि प्रत्येक गृहणी इस पाक विद्या को उचित रीति से सीखें और घर में व्यवहार में लावें तो उनके पति और पुत्रों को बाहर के भोजन का स्वाद आकर्षित ही नहीं कर सके और वह आपत्काल के धर्म की भांति कभी बहुत आवश्यक्ता पर ही बाज़ार का पका अन्न उपयोग में लावेंगे। ऐसा करने से रोगों की बहुत कुछ निवृत्ति हो जावेगी।

तीसरा गुण स्त्रियों में उत्तम भाषण कहा गया है। यद्यपि वर्त्तमान समय में कुछ पढ़ी लिखी स्त्रियां सभा समाज या मित्र मण्डली में चतुर भाषण करने लग पड़ी हैं तथापि साधारणतया उनमें धर्म, विज्ञान, साहित्य, दर्शन तथा नीति का ज्ञान न होने के कारण तथा वर्त्तमान देश की अवस्था का परिज्ञान न होने के कारण वह अपने पतियों के साथ इन विषयों पर ठीक तरह बातचीत नहीं कर सक्ती अतः उनकी बातें केवल फैशन की चीज़ों के विषय में ही अधिकतया होती हैं जिससे वे लोग तंग आकर क्लब घर तथा अन्य मनोरंजक सभाओं में जाकर मनोरंजन करते हैं। अतः स्त्रियों के इन वैदिक गुणों के पुनरुद्धार के लिये स्त्री शिक्षा की प्रणाली में शीघ्र ही परिवर्त्तन होना चाहिये ताकि हमारे गृहस्थ आदर्श वैदिक गृहस्थ बन सकें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

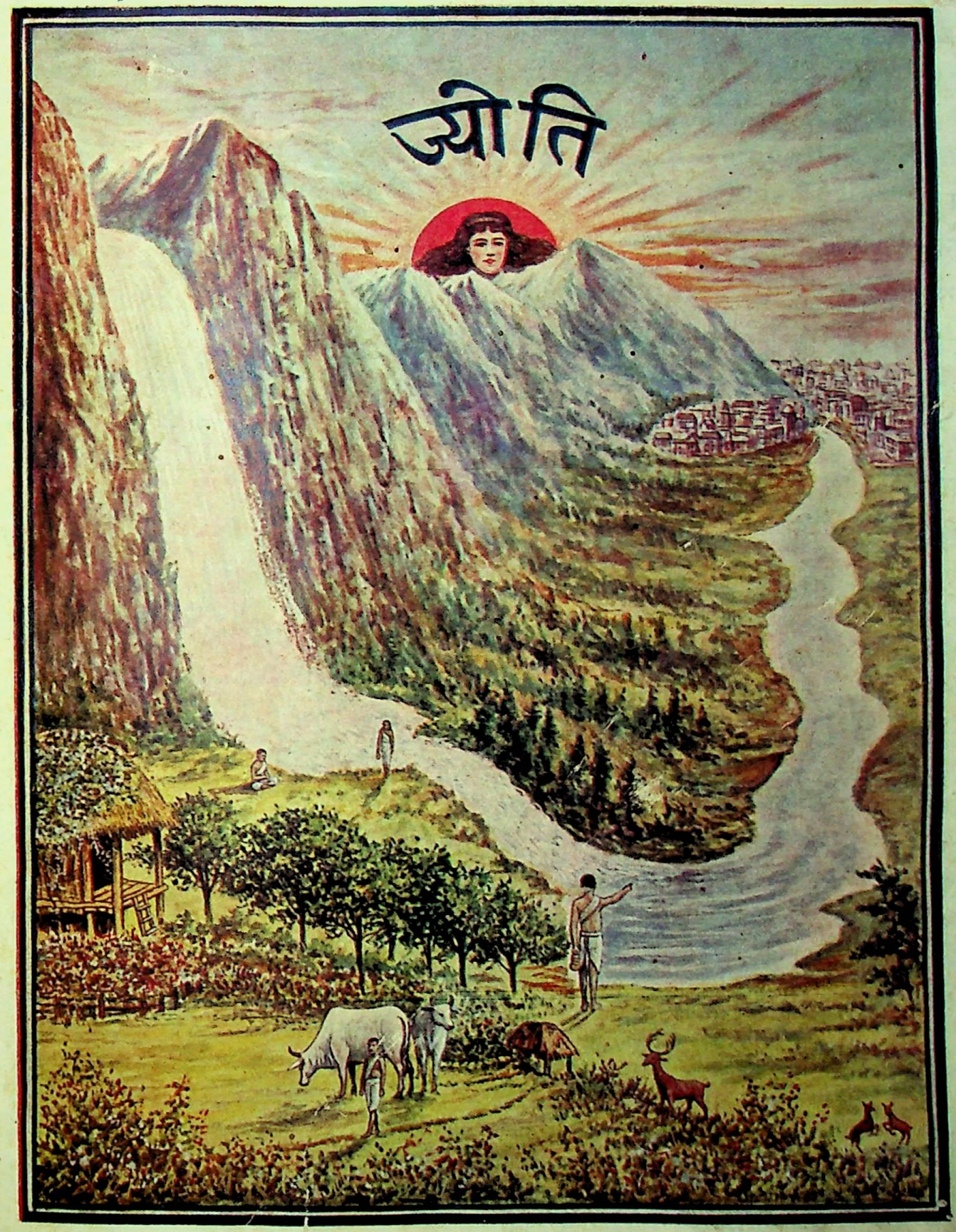

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका विद्यावती सेठ, बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची ।

विषय	पृष्ठ
१—उद्बोधन (कविता) ले०—"काश्चित्"	१३५
२—अग्निहोत्र पर वैज्ञानिक प्रकाश—लेखक श्रीयुत् रामशरणदास सक्सेना एम. एस. सी.	१३६
३—मित्र राष्ट्र और जर्मन सन्धि की आर्थिक दृष्टिसे आलोचना—लेखक श्रीयुत् प्रो० ठाकुर छेदीलाल एम. ए. (आक्सन) बैरिस्टर-एट-ला	१४५
४—अंग्रेज़-अबला का आमन्त्रण—लेखक दक्षिण अफ्रीका प्रवासी पंडित भवानीदयाल	१४९
५—सफलता (कविता)—लेखक—श्रीयुत् मणिराम गुप्त	१५२
६—स्वराज्य का तात्पर्य—लेखक—श्रीयुत् प्राणनाथजी विद्यालङ्कार	१५४
७—उजेला (कविता) लेखक—श्रीयुत् बुद्धदेव विद्यालङ्कार	१५६
८—बौद्ध धर्म में वैदिक संस्कार—लेखक प्रो० चन्द्रमणि विद्यालङ्कार गुरुकुल काङ्गड़ी	१५७
९—अन्योक्ति (कविता)—लेखक "श्रीहरि"	१५९
१०—प्राचीन भारत में युद्ध कौशल—लेखक "इतिहासज्ञ"	१६०
११—कामना(कविता)—लेखक श्रीयुत् रामनरेश त्रिपाठी	१६२
१२—पंजाब और खांड का व्यवसाय—लेखक—श्रीयुत् प्रो० रामजी नरायन डी. यस. सी.	१६३
१३—भ्रम-निवारण—लेखक "चित्र गुप्त"	१६६
१४—हमारी मंजूषा	१७०
१५—कुसुमोद्यान	१७२
१—आर्य्य सभ्यता	१७२
२—जापान में अंग्रेज़ी की पहिली मासिक पत्रिका	१७३
३—वर्त्तमान भारतवर्ष में मौलिकता का अभाव	१७४
४—संसार की एक सब से बड़ी घड़ी	१७५
५—विद्यार्थियों के लिये युद्ध विद्या की आवश्यकता	१७६
१६—विचार प्रवाह	१७७
१—राजनीति में स्त्रियों का भाग	१७७
२—नये मंत्रियों के लिये एक अत्युत्तम सलाह	१७७
३—फैक्टरी में काम करने वाली स्त्रियों की रक्षा	१७८
४—भारतीय व्यापार में स्पर्धा	१७९
५—आर्य्यसमाज और आर्य्यभाषा	१८०
६—सर आलिवर लाज और परमाणु सम्बन्धी शक्तियां	१८१
७—तुर्कों के साथ सन्धि	१८२
८—पंजाब में स्पेशल कांग्रेस का अधिवेशन	१८३
९—लाला लाजपतराय और पंजाब कौंसल का बहिष्कार	१८४
१७—वनिता विनोद	१८७
१—समाचार	१८८
२—कला कौशल्य—लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी	१८९
३—परिश्रम—लेखिका श्रीमती चन्द्रावती त्रिपाठी	१९२

ज्योति के नियम

ग्राहकों के लिये ।

१. ज्योति प्रति अंग्रेजी मास की १५ को ग्राहकों के पास पहुंचा करेगी ।

२. डाक व्यय सहित भारत के लिये इस का मूल्य ४॥) और छे मास के लिये २॥) वी. पी. का व्यय ≡) अलग है प्रति अंक का मूल्य ॥) है । भारत से बाहर विदेश के इसका वार्षिक मूल्य ६) है । मूल्य मैनेजर ज्योति लाहौर के नाम आने चाहिये ।

३. पुरानी प्रतियां जो मिलसकेंगी उनका मूल्य प्रति संख्या ॥) से कम नहीं होगा ।

४. पते के परिवर्त्तन की सूचना पत्र के निकलने से १५ दिन पूर्व मैनेजर को मिलनी चाहिये ।

५. यदि कोई संख्या किसी ग्राहक को न पहुंचे तो पहिले अपने डाक घर से पूछना चाहिये। यदि पता न चले तो डाक घर से जो उत्तर आवे उसे प्रबन्ध कर्त्ता के पास भेजदेना चाहिये । परन्तु यह सूचना अगले अंक के निकलने से १५ दिन पूर्व तक मिलनी चाहिये अन्यथा [illegible] प्रति विना मूल्य नहीं दी जायगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

॥ ओ३म् ॥

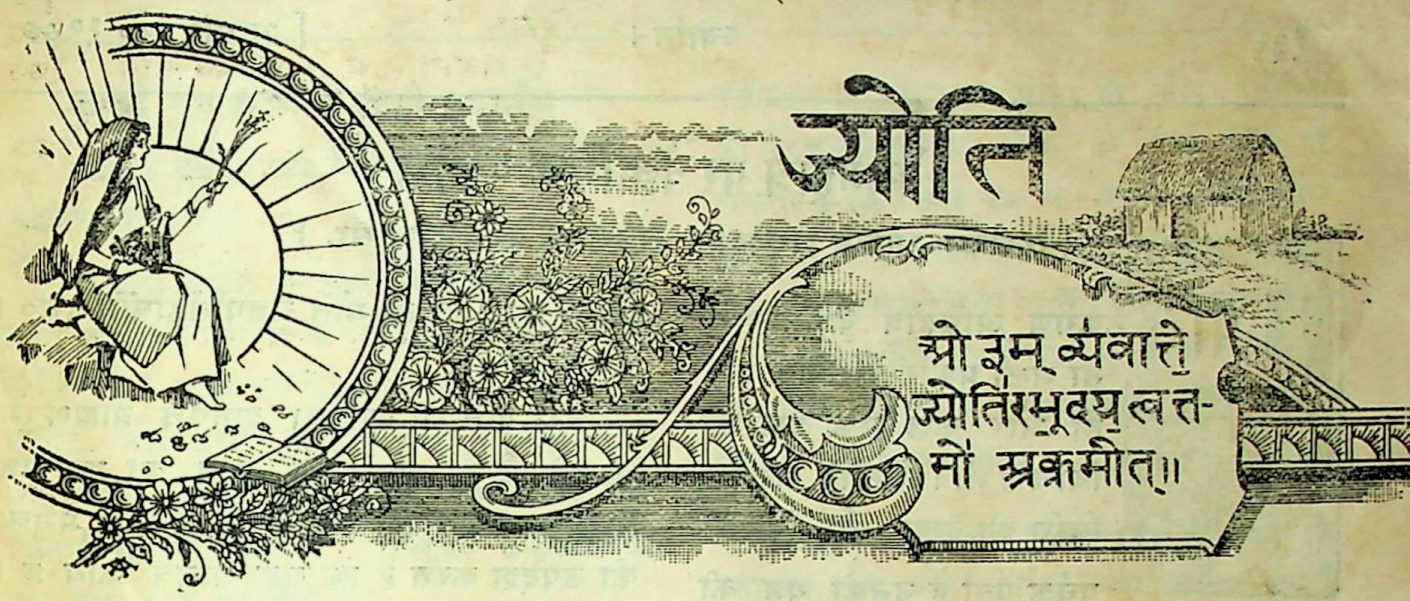

वर्ष १ | आषाढ़ १९७७—जौलाई १९२० | संख्या ३

उद्बोधन ।

भारत निवासियों क्यों ! तुम अब भी सोरहे हो ।
क्यों इस तरह वृथा तुम जीवन को खोरहे हो ॥ १ ॥

जिन की जगत यह सारा, आज्ञा था शीश धरता ।
अब तुम गुलाम बनकर, लुटिया डुबो रहे हो ॥ २ ॥

तुम थे जहां हवन से, वायू पवित्र करते ।
अब धूम्र पान द्वारा विष बीज बो रहे हो ॥ ३ ॥

जिन से दया की भिक्षा, पाकर जगत् था जीता ।
औलाद तुम उन्हीं की, टुकड़े को मर रहे हो ॥४॥

अब भी न समझे क्या हो, है क्या दशा तुम्हारी !
राजा से रंक होकर, टुकड़ों से जी रहे ॥ ५ ॥

सब अन्न पैदा करके, भूखे हो हाय मरते ।
ले जाते हैं विदेशी, ले जाने दे रहे हो ॥ ६ ॥

होता कपास कितना, ले जाते हैं विदेशी ।
तुम वस्त्र हीन हो कर, दुख द्वन्द्व सह रहे हो ॥ ७ ॥

देखी विदेशी चीज़ें, थोड़ी चमक दमक की ।
होकर के उस पै मोहित, दौलत लुटा रहे हो ॥ ८ ॥

तुम ही डिटेक्टिव्व होकर, तुम ही वकील बन कर ।
हा ! देश भाइ-यों का, धन प्राण ले रहे हो ॥ ९ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निज भेष और भाषा, भोजन स्वभाव बदले ।

अग्निहोत्र पर वैज्ञानिक प्रकाश

(लेखक—श्रीराम शरणदास सक्सेना, एम. एस. सी.)

पाठकगण अग्निहोत्र के नाम से तो भली प्रकार परिचित होंगे ही और कुछ एक इस की विधिसे भी। जिन्होंने संस्कार विधि को देखा और विचार-पूर्वक पढ़ा है उनको यज्ञ की सम्पूर्ण विधि ज्ञात होगी। उन्हें यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि यज्ञ कितनी पुरानी प्रथा है। वेदभगवान् मनुष्य जाति के लिये इस यज्ञ को प्रातः और सायं करने के लिये किस प्रकार उपदेश करते हैं। कितने प्रकार के हवन यज्ञों का वर्णन वेदों ब्राह्मणों तथा सूत्र ग्रंथों में आता है। परन्तु उनके लिये यह बात कुछ कम मनोरंजक न होगी कि हवन यज्ञ वायु को शुद्ध करने, भिन्न २ प्रकार के रोगों को नाश करने इत्यादि में बहुत बड़ा भाग लेते हैं और वैज्ञानिक परीक्षण भी इस बात के पोषक हैं; किन्तु सर्वसाधारण के लिये इस यज्ञ की ऐतिहासिक उत्पत्ति, संक्षिप्त विधि और उपयोगिता बता देना कुछ अनुचित न होगा।

हवन यज्ञ की आज्ञा मनुष्य जाति के लिये चारों वेदों में पाई जाती है। वेद के तीन मुख्य विषयों (ज्ञान, कर्म, उपासना) में से कर्म से हवन यज्ञ का तात्पर्य्य है। उदाहरणार्थ चारों वेदों में से एक २ यज्ञ सम्बन्धी मन्त्र लेकर हम यह बतलावेंगे कि वेद भगवान ने किस प्रकार इसका उपदेश दिया है।

यजुर्वेद (जिस में यज्ञ का विधान भरपूर है) में निम्न मन्त्र आता है।

वसोःपवित्र मसि द्यौरसि पृथिव्यसि मातरिश्वनो धर्मोसि विश्वधा असि परमेण धाम्ना द्यौ ष्ठ हस्व मा ह्वा र्मीते यज्ञपतिर्ह्वार्षीत्॥य०। अ० १। मंत्र २।

इस मन्त्र की व्याख्या शतपथ ब्राह्मण में भी की गई है, वहां वसु शब्द का अर्थ यज्ञ लिया गया है। इस मन्त्र में वेद भगवान मनुष्य को उपदेश करते हैं कि यज्ञ पवित्र कार्य है। वायु को शुद्ध करने वाला, संसार का धारण करने वाला, उत्तम स्थान से सुख बढ़ाने वाला है इसका तुझे अर्थात् तुझ यजमान को त्याग न करना चाहिये।

अथर्ववेद काण्ड १९ अनु० ७ मन्त्र ३।४ इस प्रकार है:—

सायं सायं गृहपतिर्नो अग्निः प्रातः प्रातः सौमनसस्य दाता। वसोर्वसोर्वसुदान एधि वयं त्वेन्धानास्तन्वं पुषेम॥ ३॥ प्रातः प्रातः गृहपतिर्नो अग्निः सायं सायं सौमनसस्य दाता। वसोर्वसोर्वसुदान एधीन्धानास्त्वा शतंहिमा ऋधेम॥ ४॥

इस का अर्थ इस प्रकार किया है:—

(अयं) यह (अग्निः) आग या ईश्वर (सायं सायं प्रातः प्रातः) साझ सवेरे उपस्थित (सौमनसस्य) आरोग्यता, आनन्द और (वसोः) धनादि उत्तम पदार्थों का (दाता) देने वाला है। इसी कारण ईश्वर तथा अग्नि को वसुदान कहते हैं। हम लोग अग्नि होत्र से पुष्ट होते और १०० वर्ष तक जीने की इच्छा करते हैं। इस मन्त्र में श्लेषालंकार होने से ईश्वर व भौतिक अग्नि दोनों ही ग्रहण किये गये हैं।

सामवेद में आता है—

आना आयाहि वीतये गृणानो हव्य दातये। निहोता सत्सि बर्हिषि॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ऋग्वेद में यज्ञ के विषय में कहा है :—

अग्ने यं यज्ञ मध्वरं विश्वतः परिभूरसि। स इद्देवेषु गच्छति।

ये मन्त्र नमूने के तौर पर देकर यह बतलाया कि वेदों में यज्ञ का उपदेश मनुष्य जाति के लिये है। इनके अतिरिक्त ब्राह्मण, उपनिषद् स्मृति, और पुराण सब के सब इसका प्रतिपादन करते हैं। इससे पता लगा कि यह कितनी पुरानी प्रथा है। इसकी उपयोगिता हम आगे चल कर देखेंगे।

जिस समय से भारत की अवनति आरम्भ हुई, ऋषि, महर्षियों तथा अन्य विद्वान् सन्यासियों का लोप होने लगा, लोग धार्मिक ग्रन्थों का अध्ययन छोड़ने लगे तो जितनी पुरानी अच्छी बातें थी उनको लोग भूल गये या उनमें बुरी बातें मिलाकर उनका ढांचा ही बदल दिया। हवन यज्ञ को यद्यपि लोग भूले तो नहीं परन्तु उसमें मदिरा और मांस का प्रयोग और बलिदान चलाकर इसका ढांचा बिलकुल बिगाड़ दिया। न तो शास्त्रों की आज्ञा है कि मांस हवन यज्ञ में प्रयुक्त हो और नाहीं पूर्व काल में मांस का होम होता था। पशु वध की आज्ञा किसी भी धर्म ग्रन्थ में नहीं है। मनु भगवान अहिंसा के प्रचार में कहते हैं—

अनुमन्ता, विशसिता, निहन्ता, क्रय विक्रयी।
संस्कर्त्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः॥

जिसका अभिप्राय यह है कि सलाह देने वाला, मारने व काटने वाला, बेचने और खरीदने वाला, पकाने, परोसने और खाने वाला ये आठों हिंसक हैं। ऐसे स्पष्ट शब्द होते हुये भी समझ में नहीं आता कि लोग किस आधार पर कहते हैं कि "वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति" अर्थात् वेद की हिंसा, हिंसा नहीं। जहां पशुओं की रक्षा की सामान्य आज्ञा हो और अहिंसा को परमधर्म समझा जाता हो वहां कैसे हो सकता है कि जिस यज्ञ के प्रातः और सायं करने के लिये आज्ञा हो उसमें मांस का प्रयोग हो या बलिदान किया जावे। ऐसा प्रतीत होता है कि इस पवित्र हवन यज्ञ में वाममार्गियों ने ही पहिले पहिल ऐसे अपवित्र और घृणित पदार्थों का प्रयोग किया।

यह अन्धकार कई शताब्दियों से चला आ रहा था और लोग आंख बंद करके इसके शिकार होते थे। इसकी निवृत्ति के लिये गत शताब्दी में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने जन्म लिया। इन्होंने इस अन्धकार को दूर करने और प्राचीन वैदिक सभ्यता को पुनर्जीवित करने का प्रयत्न किया। स्वामीजी ने अत्यन्त परिश्रम से खोज करके बतलाया कि हवन यज्ञ पूर्वकाल में वैज्ञानिक दृष्टि से किया जाता था। जिस विस्तार से कि स्वामीजी ने आज कल की कुछ एक वैज्ञानिक कल्पनाओं को धार्मिक ग्रन्थों से निकाला और हवन यज्ञ पर विशेष प्रकाश डाला उससे विदित होता है कि प्राचीन ऋषि मुनि इसके गुणों से भली प्रकार परिचित थे। इस पर हम आगे चलकर और प्रकाश डालेंगे।

हवन के लिये जो सामग्री के पदार्थ हैं उन्हें चार समूहों में इस प्रकार विभक्त किया गया है।

(अ) होम के सुगन्धित द्रव्य जैसे—कस्तूरी, केशर, अगर, तगर, श्वेत चन्दन, इलायची, जायफल, जावित्री, काफूर, धूप इत्यादि।

(ब) पुष्टिदायक पदार्थ—घी, दूध, फल, कन्द, अन्न, चावल, गेहूं, उड़द आदि।

(स) मिष्ट पदार्थ—शक्कर, शहद, छुहारे, दाख, पिश्ता, गोला, बादाम, किशमिश आदि।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(ड) रोगनाशक पदार्थ जैसे–गिलोय, नेत्र-वेल, बालछड़ आदि।

इनके साथ ढाक, आम, पीपल, गूलर, वड़, विल्व आदि की लकड़ी जलाने के लिये बताई गई है।

उपरोक्त चारों समूहों के पदार्थ मिलाने से हवन सामग्री तय्यार हो जाती है परन्तु इन के मिलाने का अनुपात किसी ने निश्चित नहीं किया। दूसरे चार समूह पदार्थों के भौतिक और आयुर्वैदिक गुणों के अनुसार हो सकते हैं। ऐसा कहना कि जो पदार्थ स्वयं सुगन्धित हैं उनके जलने पर भी सुगन्ध ही निकलेगी ठीक नहीं। बादाम, गोला, पिस्ता, चिरौंजी आदि पुष्टिदायक पदार्थ हैं जब कि वे खाने के कार्य में लाये जावें काफूर, कस्तूरी, जायफल, जावित्री, इत्यादि अच्छी औषधिया हैं परन्तु केवल इनके इन्हीं गुणों से यह परिणाम निकाल लेना कि हवन में इन पदार्थों को जलाने से जो गैसें प्राप्त होती हैं उन के भी वही गुण होंगे बड़ी भूल है। हवन यज्ञ की महिमा और उपयोगिता का वर्णन करते हुवे किन्हीं किन्हीं महाशयों ने इन पदार्थों के गुण देकर यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि हवन सामग्री के पदार्थों के इतना लाभकारी होने के कारण हवन यज्ञ बड़ा उपयोगी है। हवन यज्ञ की उपयोगिता सिद्ध करने के लिये यह बताना आवश्यक है कि हवन सामग्री के जलाने से जो गैसें उत्पन्न होती हैं उन का वायु पर क्या प्रभाव पड़ता है और उनका मनुष्य की आरोग्यता पर क्या असर होता है। यदि सामग्री के जलाने से उत्पन्न गैस (जिसे आगे जाकर हवन की गैस के नाम से कहेंगे) में ऐसे समास अर्थात् पदार्थ उपस्थित हों जो हानिकारक जीवाणुओं के नाशक हों और उनकी उपस्थिति में पदार्थ देर तक सुरक्षित रह सकते हों तो फिर यह निःसन्देह स्थापित हो जावेगा कि हवन यज्ञ केवल धार्मिक दृष्टि से ही नहीं किन्तु वैज्ञानिक दृष्टि से भी उपयोगी और आवश्यक है।

हवन की उपयोगिता को बहुत से विद्वानों ने समझा है और केवल भारतवासी ही नहीं किन्तु अन्य और पाश्चात्य विद्वानों ने भी इसे उपयोगी बताया है। मदरास के सेनेटरी कमिश्नर कर्नल किंग आई–एम–एस ने २५ मार्च सन १८९८ ई० को ग्रेजुएट विद्यार्थियों को घी केशर और चावल मिला कर जलाने का आदेश किया। इन महाशय के विचार में घी केशर और चावल के मिश्रण को जलाने से जो गैस उत्पन्न होती है वह वायु को शुद्ध करने वाली और हानिकारक जीवाणुओं का विनाश करने वाली है। प्लेग इत्यादि के जीवाणु इन गैसों की उपस्थिति में नष्ट होजाते हैं। हैनकिन महाशय ने अपनी ब्यूबोनिक प्लेग नामी पुस्तक में उपर्युक्त महाशय के व्याख्यान का वर्णन किया है। फ्रांस देश के डाक्टर हैंफ-किन की भी सम्मति है कि घी के जलाने से जो वाष्प उत्पन्न होते हैं वह हानिकारक जीवाणुओं का नाश करते हैं। डाक्टर ट्रिलवर्ट ने जलती हुई शक्कर पर परीक्षण करके बताया कि शक्कर के जलने से जो वाष्प उत्पन्न होते हैं उन में फार्मेल्डि हाइड (Formaldehyde) की अधिक राशि होती है, जिस से क्षयी रोग, चेचक, हैज़ा, इत्यादि के हानिकारक जीवाणु नष्ट होजाते हैं। इसके अतिरिक्त अनुभव भी यही बताता है, कि प्लेग और हैज़े के दिनों में वे स्थान सुरक्षित रहते हैं जहां के वासी प्रातः सायं हवन करते हैं। जहां हवन नित्य होता है वहां की वायु हानिकारक जीवाणुओं से अशुद्ध

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नहीं होने पाती यही कारण है कि वहां के लोग नीरोग रहते हैं।

इस प्रकार हवन की उपयोगिता बताने के के लिये एक अनुभव और दूसरे कुछ एक वैज्ञानिक परीक्षण हैं जिन के आधार पर हवन को इतना उपयोगी बताते हैं। अभी तक हवन यज्ञ की उपयोगिता किसी दृढ़ वैज्ञानिक आधार पर नहीं रक्खी गई।

क्रियात्मक रूप से इस बात को सिद्ध करने और हवन गैस की उपयोगिता स्थापित करने के लिये ३ प्रकार के परीक्षण आवश्यक हैं।

(१) हवन की गैसों का रासायनिक विश्लेषण (Purely Chemical Analysis) यह विश्लेषण २ तरह का हो सकता है–एक तो गुणात्मक और दूसरा राश्यात्मक (Qualitative & Quantitative)–गुणात्मक विश्लेषण से तो यह पता लगेगा कि हवन की गैस में कौन २ से अवयव (constituents) हैं। इन अवयवों के रासायनिक तथा अयुर्वैदिक (medicinal) गुणों से यह पता लग सकेगा कि हवन गैस कहां तक उपयोगी है। राश्यात्मक विश्लेषण (Quantitative analysis) से प्रत्येक अवयव की प्रतिशतक राशि का ज्ञान होगा।

(२) Biochemical Experiments अर्थात् रसायन के वे परीक्षण जिन की क्रिया में जीवाणु भाग लेते हैं।

(३) Purely Bacteriological अर्थात् जीवाणु सम्बन्धी। गुणात्मक तथा राश्यात्मक विश्लेषण द्वारा हवन गैस के अवयवों की संख्या तथा राशि निश्चित करना कोई साधारण बात नहीं। इसके परीक्षण दो भागों में विभक्त किये जा सकते हैं–प्रथम तो सामग्री के एक २ पदार्थ को अलग २ लेकर उन्हीं अवस्थाओं में जलाया जावे जिन में कि हवन किया जाता है और फिर इस प्रकार प्रत्येक पदार्थ के जलने से जो गैसें उत्पन्न हों उनके रासायनिक तथा अयुर्वैदिक गुण पृथक् २ देखे जावें तो जो सामूहिक गुण इन सब गैसों के मिलने से होंगे वे ही उन गैसों में होने चाहियें जो हवन गैस में होती हैं, जहां कि सामग्री के सब पदार्थ इकट्ठे हवनकुण्ड में जलाये जाते हैं। यदि कुछ अन्तर भी हो जो कि सामग्री के पदार्थों के एक साथ जलने से उनकी पारस्परिक क्रिया के कारण हो सकता है तो वह हवन गैस के गुणों पर बहुत बड़ा प्रभाव न डालेगा। उदाहरणार्थ कस्तूरी को चाहे अलग जलावे चाहे सामग्री के अन्य पदार्थों के साथ जलावे तो दोनों अवस्थाओं में वह छोटे २ भागों में विभक्त होकर फैल जाती है। जायफल भी यदि अलग गरम किया जावे तो इस से एक उड्डनशील तैल प्राप्त होता है जो बड़ा तीव्र जीवाणु नाशक (strong antiseptic) है। इलायची, लौंग इत्यादि से भी जो तैल प्राप्त होते हैं उन में हानिकारक जीवाणुओं के मारने की शक्ति होती है। ये पदार्थ जब हवन सामग्री में जलाये जाते हैं तो भी इन उड्डनशील तेलों के वाष्प हवन की गैस में उपस्थित होकर उसे जीवाणु नाशक बना देते हैं। इसी प्रकार और अन्यान्य वस्तुओं को पृथक् २ उसी ताप परिमाण पर जलाकर जिस में कि हवन होता है उन से उत्पन्न हुई गैसों के गुण देखे जावें। इन परीक्षणों के अलग २ करने और प्रत्येक पदार्थ के जलने पर उत्पन्न पदार्थों के रासायनिक तथा आयुर्वैदिक गुण निश्चित करने में बड़े परिश्रम और समय की आवश्यकता है।

इसके साथ २ यह भी देखना है कि हवन के लिये पलाश मूलर, अश्म आदि की लक-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation

ड़ियों के जलाने का विधान क्यों किया गया है।

द्वितीय प्रकार यह हो सकता है कि हवन की गैसों को एकत्रित करके गैस विश्लेषण द्वारा उनके घटकों को पहिचान लिया जावे। इसके पश्चात् फिर राशि का निकालना कुछ कठिन न रहेगा। पहिले प्रकार के परीक्षण कर लेने पर दूसरे प्रकार के परीक्षणों में कुछ कठिनता न होगी। जबतक कि बहुत से परीक्षणों का परिणाम बिलकुल एकसा न आजावे तबतक निश्चित रूप से हवन की गैसों का समसन नहीं बताया जा सकता।

लेखक की सम्मति है कि हवन की गैसों में Aldehydes, phenols, creosotes, turpenes और कुछ cyclic compounds भी उपस्थित हैं। इन पदार्थों की उपस्थिति के कारण हवन की गैस वायु के हानि कारक कृमियों को मारकर उसे शुद्ध करदेती है। हवन की गैस पर जो परीक्षण किये गये वे यद्यपि ऐसे नहीं जिनके आधार पर हवन की गैसका समसन निश्चित रूप से बताया जासके और नाही वे परीक्षण पर्याप्त संख्या में दोहराये गये हैं जिससे कि उनके परिणाम पर निश्चय से विश्वास किया जासके, तो भी इस विषय में खोज करने वालों के परीक्षणों में सहायता देने के विचार से जो कार्य अभी तक किया गया है उसका परिणाम लिख देना कोई अनुचित न होगा।

हवन की गैस में aldehydes और cylic compounds देखे गये थे। यह गैस जब उसनली में गुज़ारी गई जिस में कि पत्थर के टुकड़े phenyl hydrozene में डूबे रक्खे थे तो इस नली के भार में वृद्धि भी देखी गई और phenyl hydrozene के पीले २ स्फटिक भी पत्थर के टुकड़ों पर जमे हुए देखे गये। इस से ज्ञात हुवा कि इस गैस में aldehyde अवश्य उपस्थित है परन्तु यह अभी निश्चय करना है कि यह कौनसा aldehyyde है।

खाण्ड को अब अलग लेकर जलाया तो उस से उत्पन्न गैस में aldehyde की अधिक राशि देखी गई। इस aldehyde से fehling solution और रजत नलित का Ammoniacal घोल अपचित हो गये। पहिले में लाल रंगका ताम्रस औषिद नीचे बैठ गया और दूसरे में चांदी का दर्पण परीक्षण नली की दीवारों पर बन गया। इस से उपर्युक्त परीक्षण की और भी पुष्टि हो गई क्योंकि हवन सामग्री में खाण्ड तो उपस्थित होती है। इसके अतिरिक्त अन्य पदार्थों में glucosids भी होते हैं जिनके उचित अवस्थाओं में जलने से aldehyde उत्पन्न होते हैं। खाण्ड के जलाने से जो aldehyde बनता है वह formaldehyde है, जो हानि कर क्रिमियों को मारने वाला है। इसी लिये Pormaldehyde का घोल antiseptic और Preservative के तौर पर काम में आता है॥

जायफल, दालचीनी और लौंग में सुगन्धित श्रेणी के उड़ुनशील तैल उपस्थित हैं जो Phenol और Creosote की तरह से तीव्र antiseptic अर्थात् कीटाणु नाशक है इसलिये इन पदार्थों को जब हवन सामग्री में मिला कर जलाया जाता है तो इन से उत्पन्न गैसों में उस उड़ुनशील कृमि नाशक तैल के वाष्पों का होना आश्चर्य जनक नहीं। सम्भव है कि हवन गैस में कीटाणुओं के मारने के गुण इन वाष्पों की उपस्थिति के कारण भी हों। यद्यपि हवन की गैस में अभी तक स्पष्ट रूप से phenol, creosotes और terpenes की उपस्थिति का निश्चय नहीं हुआ तो भी इनकी उपस्थिति की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अधिक सम्भावना है जैसे कि Biochemical experiments (कीटाणु रसायन के परीक्षणों) से विदित होगा ॥

कीटाणु रसायन के परीक्षणों का परिणाम बहुत सन्तोष जनक सिद्ध हुवा है। इन परीक्षणों की विधि इस प्रकार थी ॥

कांच की १२ कुप्पियें (750 C. C. आयतन की) लीं। इन में से प्रत्येक में १ कार्क ऐसे लगा था कि जिस में एक मुड़ी हुई कांच की नली लगी थी। इस नली के बाहर के सिरे पर १ रबर की नली लगा कर उस में क्लिप लगा हुवा था। पहिले इन सब को जल वाष्प (steam oven) में तीन घण्टे के लगभग रख कर उन्हें क्रिमि रहित अर्थात् (sterilise) कर लिया, फिर कुप्पियों का एक २ जोड़ा लेकर प्रत्येक जोड़े में निम्न पदार्थ ले लिये। (१) दूध (२) दही (३) मक्खन (४) खांड का घोल, (५) अण्डे की सफेदी, (६) मांस की बोटियां। इस प्रकार इन बारह कुप्पियों में अलग अलग २ उपर्युक्त पदार्थ लेकर शीशी पर तिथि डाल कर उन सब को फिर कृमियों से रहित करने के लिये जल वाष्प में ३ घण्टे तक गरम किया। sterilise हो जाने के बाद सब में sterilised डाट लगा कर सब को बन्द कर दिया। इस क्रिया से विदित है कि अभी तक कुप्पियों तथा कुप्पियों वाले पदार्थों में कृमियों के उपस्थित रहने की कोई सम्भावना नहीं रही। इसके पश्चात् दुग्ध, दही, मक्खन, खांड के घोल अण्डा तथा मांस वाली एक १ कुप्पी में हवन की वायु १५ मिनट तक गुज़ार कर वही डाट लगा बन्द करदी। फिर इन्हीं के साथ वाली दूसरी कुप्पियों में बाग की वायु १५ मिनट तक गुज़ार कर उसी प्रकार डाट लगा कर बन्द कर दिया। पहली कुप्पियों पर "हवन गैस" और दूसरी पर "वायु" लिख कर तिथि डाल कर रख दिया और ३ सप्ताह तक नित्य २४ घण्टे के बाद इन का निरीक्षण बड़ी सावधानी से करके नोट करते रहे।

परिणाम यह हुआ कि जो पदार्थ हवन की गैस में रक्खे गये थे उनमें सड़ाव देर में शुरू हुवा और आरम्भ होने पर रासायनिक क्रिया की गति धीरे २ बढ़ी। जो पदार्थ कि वायु में रक्खे थे उनमें सड़ाव पहिले आरम्भ हुवा और रासायनिक क्रिया की गति दूसरी कुप्पियों की अपेक्षा ज़ोर से बढ़ने लगी। इस सड़ाव को देखने तथा सड़ाव की गति जानने के लिये उदगन्धिद गैस (sulphuretted hydrogen) का परीक्षण सीसक सिरकित (Lead acetate) में भीगे पत्र से किया गया। हवन गैस वाली कुप्पियों में इस की उपस्थिति कम थी और इसका दबाव भी कम था। वायु वाली कुप्पियों में इस गैस का दबाव बहुत अधिक था। जिस से ज्ञात हुवा कि जिन कुप्पियों मै हवन गैस गुजारी गई थी उन में सड़ाव से गैस कम उत्पन्न हुई थीं अर्थात् सड़ाव कम हुआ था। जिन कुप्पियों में वायु गुज़ारी गई थी उनमें सड़ाव से गैस अधिक उत्पन्न हुई थी अर्थात् सड़ाव अधिक हुवा था। यह अवस्था सभी कुप्पियों में थी जिस को इस प्रकार स्पष्ट रूप से दिखा सकते हैं :—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संख्या	हवन गैस वाली कुप्पियां	संख्या	वायु वाली कुप्पियां
(१)	सड़ाव देर में आरम्भ हुवा।	(१)	सड़ाव पहिले आरम्भ हुवा।
(२)	सड़ाव आरम्भ होने पर रासायनिक क्रिया धीरे २ बढ़ी।	(२)	सड़ाव आरम्भ होने पर रासायनिक क्रिया एक दम बढ़ गई।
(३)	सड़ाव से उत्पन्न गैसों का दबाव कम था।	(३)	सड़ाव से उत्पन्न गैसों का दबाव बहुत अधिक था।
(४)	निश्चित समय में इसमें सड़ाव कम हुवा।	(४)	निश्चित समय में इसमें सड़ाव बहुत अधिक हुवा।

यह पहिले बताया जा चुका है कि सब कुप्पियां सामान्यावस्था में जीवाणुओं से रहित (sterelise) करली गई थीं। और अन्य वस्तुएं भी उनके भीतर सामान्य अवस्था में ली गई थीं केवल इतना भेद था कि एक श्रेणी में हवन गैसों से शुद्ध की हुई वायु गुजारी गई थी और दूसरी श्रेणी में साधारण वायु। इससे स्पष्ट हुवा कि जीवाणु जो वर्तमान काल की सड़ाव की कल्पना के अनुसार सड़ाव के कारण होते हैं वायु में से ही कुप्पियों के भीतर पहुंचे और सड़ाव के कारण हुवे। जो वायु कि हवन की गैस से शुद्ध हो चुकी थी उस गैस वाली कुप्पियों में सड़ाव कम होने का कारण यही है कि हवन की गैस ने वायु के हानिकारक जीवाणुओं को नष्ट कर दिया था अर्थात् उनकी बहुत कुछ संख्या कम करदी थी। जिन कुप्पियों में बाग़ की वायु गुज़ारी थी उनमें सड़ाव शीघ्र और अधिक होने का कारण केवल जीवाणुओं की अधिक राशि ही थी। इससे ज्ञात हुवा कि हवन गैस हानिकारक जीवाणुओं का विनाशक है।

इस परिणाम की पुष्टि दूसरे परीक्षण से और भी बढ़कर हो गई, जो निम्न प्रकार था।

कूप का ताजा जल १ वर्तन में लेकर उस में हवन से उत्पन्न हुई गैसों को धीरे २ तीन घण्टे तक गुज़ारा जिस से हवन की गैस के घुलन शील अवयव जल में घुल जावें। फिर यह जल सरकारी अस्पताल के एक योग्य डाक्टर के पास परीक्षणार्थ भेजा गया जिन्होंने इस जल को अपने लोशनों के स्थान पर ज़ख्मों को धोने के काम में प्रयुक्त किया। उनका कथन है कि पहिले दिन ज़ख्मों में मवाद अधिक आया फिर इस जल में नल का साफ पानी मिलाकर हलका करके उसको प्रयोग किया तो इस देशी लोशन को विदेशी लोशनों के समान ही उपयोगी पाया। इन डाक्टर महोदय का विचार था कि यदि वह देशी लोशन उन्हें और मिलता तो भिन्न २ प्रकार के अधिक परीक्षण करके medical board के सामने इस नये antiseptic lotion पर एक निबन्ध पढ़ते। परन्तु दौर्भाग्य से समय और अवस्थाओं ने इस ओर अधिक परीक्षण न होने दिये॥

इन परीक्षणों का जो परिणाम है वह स्पष्ट है उस पर अधिक टीका टिप्पणी करने की आवश्यकता नहीं। सभी परीक्षण इस बात को सिद्ध करते हैं कि हवन गैस में ऐसे पदार्थ उप-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्थित होते हैं जो हानि कारक जीवाणुओं के विनाशक हैं। हवन की गैस वायु में मिल कर वायु के जीवाणुओं को मार उसे शुद्ध कर देती है और जल में घुल कर उसे antiseptic बना देती है॥

तीसरी प्रकार की परीक्षा जिसकी किन्ही विशेष कारणों से अभी तक पूर्ति नहीं हो सकी है Purely Becteriological हैं। इनकी विधि यह है कि कुछ (culture media) जीवाणुओं की उत्पत्ति के लिये दो माध्यम तय्यार करके दोनों को जीवाणुओं से रहित (sterilize) कर लिया जावे। फिर एक माध्यम को कमरे की वायु एक सैकण्ड तक दिखा कर बन्द करके रख दिया जावे। इसके पीछे कमरे में हवन किया जावे और फिर दूसरे माध्यम को उसी कमरे की वायु में जो हवन की गैस से शुद्ध हो गई हो एक सेकण्ड खुला रख कर डाट बन्द करके रख दिया जावे। कुछ दिनों के पश्चात् इन दोनों माध्यमों में जीवाणुओं की colonies गिन कर यह पता लगाया जासकता है कि कौन से माध्यम में जीवाणुओं की संख्या अधिक है। यदि उस माध्यम में जो कि हवन से शुद्ध वायु से inoculated किया गया था जीवाणुओं की संख्या कम हो तो यह बात निश्चय से सिद्ध हो जावे कि हवन की गैस वायु के हानि कारक जीवाणुओं के मारने में कितनी उपयोगी है। यद्यपि हम इन परीक्षणों का परिणाम अभी यहां देने में असमर्थ हैं तथापि उनका यहां उल्लेख करना इस लिये उचित समझते हैं कि उनके आधार पर और अन्य महाशय भी कार्य करके हवन यज्ञ की वैज्ञानिक उपयोगिता सिद्ध करने में भाग लें॥

उपर्युक्त परीक्षणों के सम्बन्ध में कुछ Suggestion देना भी अनुचित न होगा।

१ Biochemical परीक्षणों में इस प्रकार के परीक्षण और भी किये जा सकते हैं कि जहां Sulphuretted hydrogen के दबाव से सड़ाव तथा रासायनिक क्रिया की गति का निश्चय किया था वहां पर यदि कुप्पियों में manometer लगा हो तो बिना डाट के खोले ही गैस के दबाव का पता लग सकता है।

२ दूसरे कुप्पी के भीतर के पदार्थों के विश्लेषण से उसमें कर्बन तथा नत्रजन की राशि निकालने से यह निकाला जा सकता है कि विघटन (Decomposition) किस में अधिक हुवा है। इन परीक्षणों का परिणाम भी हवन गैस के हानिकारक जीवाणुओं के नाशक होने पर प्रकाश डालेगा।

३ जिस प्रकार के परीक्षण कि डाक्टर महोदय ने किये थे वह भी भिन्न २ प्रकार से किये जा सकते हैं। जो रोगी चेचक, हैजा, प्लेग या क्षय रोग के हों उन्हें हवन से शुद्ध की हुई वायु में सदा रखकर यह देखा जावे कि उनके स्वास्थ्य पर उसका क्या प्रभाव पड़ता है। इन परीक्षणों के पश्चात् ऋतुवार सामग्री से उत्पन्न गैसों का विश्लेषण भी किया जावे।

४ जहां हवन की गैस से कमरे शुद्ध किये जाते हैं वहां कपड़े इत्यादि भी इस गैस से सुगमता से जीवाणु रहित (disinfect) किये जा सकते हैं। जिन कपड़ों को disinfect करना हो उन्हें ऊपर बांस या रस्सी पर फैलाकर नीचे से हवन सामग्री जला दो। वह १५ मिनट में भली प्रकार disinfect हो जावेंगे।

यद्यपि हवन गैस के पूर्ण विश्लेषण का कार्य जैसा कि ऊपर कहा गया है इतना अधिक है कि तुलना में जितने भी परीक्षण किये गये हैं कुछ भी मान नहीं रखते और नाहीं इस योग्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri

प्रतीत होते हैं कि वे शिक्षित जनता के सामने प्रस्तुत किये जावें और नाहीं उनके आधार पर हम बलपूर्वक यह कह सक्ते हैं कि हवन गैस की उपयोगिता निश्चित रूप से निर्णीत हो गई। उसके लिये बड़े भारी परिश्रम और विश्लेषण कार्य्य की आवश्यकता है। तथापि यह कहा जा सकता है कि जो भी परीक्षण किये गये हैं उनका परिणाम बड़ी आशा दिलाता है और हवन यज्ञ की उपयोगिता ही बतलाता है।

जहां तक ये परीक्षण प्रामाणिक समझे जा सकते हैं वहां तक इस यज्ञ के विरुद्ध कोई बात नहीं मिलती किन्तु इस विचार की पुष्टि ही मिलती है कि वैज्ञानिक दृष्टि से भी हवन यज्ञ स्वास्थ्य रक्षा का एक उच्च कोटि का साधन (Sanatary measure) है। जहां हवन यज्ञ के धार्मिक लाभ हैं (जिनका यहां बताना इस निबन्ध का आशय नहीं) वहां मनुष्य जाति के स्वास्थ्य की रक्षा के लिये यह एक बड़ा अच्छा साधन है। यह तो सब मानते ही हैं कि आरोग्यता के लिये शुद्ध जल वायु का होना अत्यावश्यक है। रोगों के फैलाने में प्रायः अशुद्ध जल वायु ही बड़ा भाग लेते हैं। जहां वायु मण्डल हवन गैसों द्वारा हानिकारक जीवाणुओं से रहित हो तो निस्सन्देह वहां के रहने वाले पुरुष भी रोग से सुरक्षित रहने के कारण भले चंगे होंगे। इस स्थान पर ध्यान इस ओर दिलाने का अभिप्राय है कि आज कल के स्वास्थ्य रक्षा विज्ञान (Science of senitation) ने इस क्षेत्र में इतनी उन्नति नहीं की जितनी कि हमारे पूर्वजों और ऋषि मुनि कर गये थे।

यह तो प्रायः सभी जानते हैं कि वर्तमानकाल में जो पाश्चात्य विद्वानों को विधियां जल वायु शुद्ध करने की हैं वह एक तो बड़ी महंगी हैं दूसरे उनमें अत्यन्त सावधानी की आवश्यकता होती है। हरित (chlorine), ओज़ोन (ozone) इत्यादि ऐसी गैसें हैं जिनकी राशि यदि वायु में तनिक भी अधिक हुई तो जान ख़तरे में पड़ी। यही हाल उसके जीवाणु विनाशक पदार्थों (disinfectants and antiseptics) का है, जिन्हें केवल एक विद्वान डाक्टर ही प्रयुक्त कर सकता है, सर्वसाधारण की पहुंच से वह बाहर हैं। जहां इनके प्रयोग में कुछ भी असावधानी हुई और काम बिगड़ा। साथ ही यह भी त्रुटि है कि वह केवल उसी स्थान की शुद्धि करते हैं जहां पर कि वह लगाये जाते हैं अन्यत्र नहीं। परन्तु (disinfectant) जीवाणु विनाशक अर्थात् वायु शोधक ऐसी उच्च कोटि का है कि जिस में किसी विशेष सावधानी की आवश्यकता नहीं। कोई भी मनुष्य किसी भी आयु और किसी भी योग्यता का बिना अपनी या किसी अन्य प्राणी की जान भय में डाले हुये सुगमता से वायु मंडल को शुद्ध कर सकता है। यही एक विशेषता है जिस के आधार पर हम अपनी इस पुरानी और वैज्ञानिक प्रथा का अभिमान कर सकते हैं।

अब प्रश्न यह होता है कि वास्तव में हमारे ऋषि मुनि वैदिक सभ्यता की पराकाष्ठा पर होते हुवे भी हवन यज्ञ को इसी वैज्ञानिक दृष्टि से देखते थे जैसा कि इस निबन्ध में दिखाने का यत्न किया गया है। इस का उत्तर "हां" ही होगा। इसको हम केवल अन्ध विश्वास ही मानने को तय्यार नहीं। ब्राह्मणों में जहां पर हवन यज्ञ का विधान है वहां इन यज्ञों का वर्णन इस विस्तार से मिलता है कि उस में किंचित् मात्र भी सन्देह नहीं होता कि वे लोग हवन की वैज्ञानिक क्रियाओं को जानते थे। जहां उनके ब्रह्मज्ञानादि दार्शनिक विचार उच्च कोटि के थे वहां इस विषय में भी वे कुछ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कम न थे। आज यह कौन मानने के लिये तय्यार है कि कुइनाइन का प्रयोग मलेरिया ज्वर के रोगी के वास्ते अवैज्ञानिक है। यद्यपि किसी ने अभी तक स्पष्ट रूप से यह नहीं देखा कि कुइनाइन शरीर में पहुंच क्या क्रिया करती है, तथापि उसे पूर्ण रूप से वैज्ञानिक मानते हैं क्योंकि अनुभव ने उसे बड़ा ही उपयोगी बतलाया है। यही युक्ति यदि हम अपने विषय में लगावें तो अवश्य मानना पड़ेगा कि हमारे ऋषि मुनि हवन यज्ञ की उपयोगिता वैज्ञानिक दृष्टि से जानते थे। इसलिये हवन यज्ञ भारतवर्ष की प्राचीन काल में उच्च कोटि की सभ्यता का प्रमाण है।

अन्त में इस निबन्ध को समाप्त करने से पूर्व यदि शिक्षित जनता से यह प्रार्थना की जावे तो अनुचित न होगा कि इस विषय की पूर्ति के लिये जिन २ जातीय शिक्षणालयों में कार्य्य करने के साधन उपस्थित हों वहां पर अवश्य ही इस विश्लेषण के कार्य्य की पूर्ति के लिये कुछ न कुछ प्रयत्न होना चाहिये॥

मित्र राष्ट्र और जर्मन सन्धि की आर्थिक दृष्टि से आलोचना।

लेखक—श्रीयुत् ठाकुर छेदीलाल एम० ए० (आक्सन) बैरिस्टर-एट-ला

संसार में स्वतन्त्रता समानता-स्थापना प्रभृति जिन सिद्धान्तों के नाम से वर्तमान समराग्नि प्रज्वलित की गई वे अब भी सबके कानों में गूंज रहे होंगे। युद्ध में सम्मिलित राष्ट्रों ने यह विश्वास दिलाया था कि संसार में युद्ध का अन्त करने ही के लिये यह युद्ध छेड़ा गया है। यह बताया गया था कि अब निर्बल राष्ट्रों को उनके सबल पड़ोसियों के कोड़ों का मज़ा चखना नहीं पड़ेगा, और संसार में ऐसी व्यवस्था की जावेगी कि छोटे बड़े सब राष्ट्र बिना किसी के भय के अपनी उन्नति आप करते जावेंगे। यह कहा गया था कि 'जिसकी लाठी उसकी भैंस' वाला न्याय जो पूर्ण रूप से प्रचलित था संसार से सदैव के लिये उठ जावेगा। यद्यपि इस युद्ध के कारण मनुष्य मात्र को किसी न किसी रूप में कष्ट उठाना ही पड़ा तथापि यह विचार कर कि अब स्वार्थ के राज्य का अन्त होकर न्याय का डंका सर्वथा बजेगा सब लोगों ने धैर्य्य से इसको सहन किया। यद्यपि संसार का पूर्व अनुभव यही बताता था कि यूरोप वाले कहते तो कुछ और हैं करते हैं कुछ और, तथापि इनके वक्तव्यों को पढ़कर तथा जब स्वाधीनता प्रेमी अमेरिका ने भी स्वतन्त्रता का आह्वान करते हुए मित्रों का साथ दिया तब सबको पूर्ण आशा हो गई कि वर्तमान युद्ध चाहे अन्याय ही से आरम्भ क्यों न किया गया हो मनुष्य जाति को इससे लाभ अवश्य होगा। जब ८ जनवरी सन् १९१८ ई० को अमेरिका के प्रसीडेण्ट ने उन चौदह सिद्धान्तों की घोषणा की, जिसके अनुसार उन्होंने राष्ट्रों का भविष्य संगठन निश्चय किया था तब तो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सब को पूर्ण रूप से विश्वास होगया था कि अब निश्चय ही अन्याय का अन्त हो जावेगा। यद्यपि यूरोप की स्वार्थप्रियता सब को विदित ही थी, तथापि मित्र राष्ट्रों में अमेरिका का प्रभाव देखकर और जर्मन की हार का मुख्य कारण अमेरिकन लोगों ही को मानकर यह प्रतीत होता था कि मित्रदल इन चौदह सिद्धान्तों को अवश्य कार्य में परिणत करेंगे। इन चौदह सिद्धान्तों की व्याख्या राष्ट्र पति विलियम ने २७ सितम्बर १९१८ के एड्रेस में पूर्ण रूप से किया। इनके ये सिद्धान्त इतने न्याय पूर्ण थे कि जर्मनी जो कि हारा नहीं था और जो यदि चाहता तो कुछ समय तक अच्छी तरह से युद्ध कर सक्ता था स्वयं सुलह करने पर तैय्यार हो गया। ५ अक्टूबर सन् १९१८ में जर्मनी की ओर से राष्ट्र पति विलसन को लिखागया कि यदि इन चौदह सिद्धान्तों के आधार पर सुलह हो सकती है तो जर्मनी अपना शस्त्र रखदेने के लिये प्रस्तुत है। इसके उपरान्त विलसन ने फ्रान्स तथा इङ्गलैण्ड को भी इस विषय में लिखा और समुद्री स्वतन्त्रता के समानाधिकार वाले सिद्धान्त में थोड़ा सा हेर-फेर-कर सबने इसे स्वीकार कर लिया और इसी के पश्चात् क्षणिक सन्धि की शर्तें जर्मनों को दी गईं और तय होकर क्षणिक सन्धि स्थापित हुई। इन्हीं शर्तों पर विश्वास कर जर्मनों ने युद्ध का अंत किया।

प्रश्न यह उठता है कि राष्ट्र पति विलसन के सिद्धान्त कौन से थे जिनके प्रति सब की श्रद्धा इतनी बढ़गई थी। उन सिद्धान्तों में कौन सी ऐसी बातें थीं जिन पर जर्मनों ने मित्रदल का इतना विश्वास कर लिया और जिनके कारण जर्मनी के युद्ध करने की शक्ति एक दम लोप हो गई। प्रेसिडेण्ट विलसन ने ८ जनवरी को जिन जिन चौदह सिद्धान्तों की घोषणा की थी उन्हीं सिद्धान्तों की पूर्ण रूप से व्याख्या उन्होंने अपने कई वक्तव्यों में की है। इस लेख में केवल उन्हीं सिद्धान्तों का वर्णन किया जावेगा जिनका जर्मन सन्धि से किसी न किसी रूप में आर्थिक दृष्टि से सम्बन्ध है। उन चौदह सिद्धान्तों का पूर्ण विवरण हम इसलिये नहीं देते। उस में की मुख्य बातें ये हैं:-(१) जितने राष्ट्र आपस में सन्धि कर रहे हैं और सन्धि रक्षा का भार स्वीकार कर रहे हैं उन सब के बीच आर्थिक रुकावटों को, जहां तक संभव हो, दूर कर व्यापार में समानता स्थापित करना। (२) प्रत्येक राष्ट्र को प्रतिज्ञा करनी होगी और दूसरे राष्ट्रों से प्रतिज्ञा करानी होगी कि देश में केवल उतनी ही युद्ध सामग्री रखी जावेगी जिस की आवश्यकता आभ्यान्तरिक शांति स्थापना के लिये है। इससे अधिक युद्ध सामग्री कोई नहीं रखेगा। (३) सब राष्ट्रों का जो उनके उपनिवेशों पर अधिकार है उस का स्वतन्त्र पक्षपात रहित विचार तथा निपटारा किया जावेगा और उसी के अनुसार सब को कब्ज़ा करना या छोड़ना होगा (४) उन हिस्सों का जिन पर युद्ध के समय कब्ज़ा किया गया है, विशेष कर बेलजियम में, उनका ख़ाली करना तथा जो कुछ वहां नुकसान किया गया हो उस की पूर्ति करना। इस पर मित्र मंडली की मांगों को भी शामिल कर देना चाहिये। मित्र दल का कथन था कि केवल इसी की हानि पूर्ति नहीं होनी चाहिये किन्तु जो लोग युद्ध नहीं करते थे उनको हवाई या जहाज़ी या खुश्की हमलों से किसी भी तरह की हानि हुई उन की भी पूर्ति करनी चाहिये। (५) सन् १८७१ की सन्धि के पश्चात् फ्रांस पर, अलसेस लोरेन लेकर जर्मनी ने, जो अन्याय किया उस अन्याय को अलसेस लारेन वापस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर दूर करना। (६) पोल निवासियों का एक स्वतन्त्र देश बनाना और उनके व्यापार की रक्षा के लिये समुद्र तट पर उन को कुछ अधिकार देना। (७) सब छोटे २ राष्ट्रों के ऊपर स्वभाग्य निर्णयात्मक सिद्धान्त का लागू होना जिस के अनुसार एक बड़े राष्ट्र के ही आधीन सब छोटे राष्ट्रों को उन की इच्छा के प्रतिकूल रहने पर विवश नहीं करना। इस सिद्धान्त पर उन्हों ने सब से अधिक ज़ोर दिया था। ११ फरवरी को कांग्रेस में उन्हों ने कहा था :—

"There shall be no annexations, no contributions no punitive damages, self, determination is not a mere phrase. It is an imperative principle of action which statesman will hence-forth ignore at their peril. Every territorial settlement involved in the war must be made in the interest and for the benifit of the populations concerned and not as a part of any more adjustment or compromise of claims amongst rival states.

इस का तात्पर्य यह है 'नोच घसोट' के सिद्धान्त का यहां अब उपयोग नहीं होगा। स्वभाग्य निर्णय केवल शाब्दिक खेल नहीं है। यह कार्य का आदेशात्मक सिद्धान्त है जिस को अब कोई राजनीतिज्ञ बच्चों का खेल कह कर निस्संकभाव से टाल नहीं सक्ता। दैशिक संगठन केवल वहां की जनता की भलाई और लाभ का विचार कर किया जावेगा। विरोधी राष्ट्रों की क्षति पूर्ति के लिये किसी देश का अंग भंग अब नहीं किया जावेगा (८) संसार के कल्याण के लिये लीग आफनेशन की स्थापना करना। इस के सम्बन्ध में उन्हों ने कहा कि मित्र तथा शत्रु दोनों के साथ एक सा न्याय किया जावेगा। ऐसा कोई काम लीग द्वारा नहीं किया जावेगा जिस से केवल थोड़े से लोगों को लाभ हो और सम्मिलित सब राष्ट्रों को हितकारक न हो। यही नहीं बल्कि लीग में जितने देश शामिल रहेंगे उन के बीच केवल थोड़े से राष्ट्रों में किसी किस्म की गुप्त सन्धि तथा इकरारनामा न होगा। जो कुछ कार्रवाई होगी सब खुली होगी। किसी राष्ट्र का आर्थिक या नैतिक वहिष्कार कोई दूसरा राष्ट्र नहीं करेगा और सब राष्ट्रों को सामुद्रिक स्वतन्त्रता समान रहेगी। लीग आफनेशन के निर्माण के सिद्धान्त में ही बाकी ६ सिद्धान्त और आ गये हैं इसलिये इन के विशेष उल्लेख की आवश्यकता नहीं।

जिन सिद्धान्तों के सहारे जर्मनों ने सन्धि करना स्वीकार किया था उन का विवरण दे दिया गया है। इस स्थान में यह भी कह देना अनुचित न होगा कि राष्ट्रपति विल्सन के इन्हीं सिद्धान्तों के कारण क्षणिक सन्धि की स्थापना हुई थी, इसलिये विल्सन का कर्तव्य था कि इन शर्तों का पालन करते। कहां तक इन सिद्धान्तों के अनुसार सन्धि हुई है यह तब ही स्पष्ट हो सक्ता है जब सन्धि की आवश्यक शर्तों का कुछ संक्षेप में वर्णन कर देवें। इसलेख में विस्तार पूर्वक सन्धि का विवरण देना शक्य नहीं है। हमें सन्धि के केवल आर्थिक प्रश्नों पर विचार करना है इस लिये उन्हीं का उल्लेख किया जावेगा।

सन्धि की आर्थिक शर्तें इस प्रकार हैं :-

[१] जर्मनी के पास जितने व्यापारी जहाज़ हैं उन में से १६०० टन से ऊपर वाले सब जहाज़, १००० और १६०० टन वाले जहाज़ों में से आधा जहाज़, तथा इनसे और छोटे जहाज़ों में से एक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चौथाई जहाज मित्र राष्ट्र के हवाले किये जावें। इस शर्त में केवल जर्मनों के तैयार जहाज़ ही नहीं शामिल हैं किन्तु जिन जहाज़ों का बनना आरम्भ हो गया है उन के लिये भी यह सन्धि लागू होती है। इतना ही नहीं यदि मित्र दल चाहे तो जर्मनी को दो लाख टन वज़न का जहाज प्रत्येक वर्ष तैयार करके देना होगा। [सन्धि भाग ८ विभाग ३ नम्बर १-२-५] (२) जर्मनी के पास जितनी स्वदेश से बाहर भूमि है तथा उपनिवेश हैं सब सम्पूर्ण अधिकार सहित मित्र दल को दिया गया। इसमें जर्मनी ने यदि कहीं रेलकी लाइन वगैरह बनाई हो तो भी मित्रदल को बिना किसी मावजा के दे दिया गया। लेकिन इन के बनाने में यदि जर्मनों ने कहीं से कर्ज लिया हो तो वह जर्मनों के ही सिर पर रखा गया। पुनश्च जर्मन कम्पनियों की या जर्मन प्रजा की जो कुछ भी सम्पत्ति इन स्थानों में है उन सब पर बिना मावजा दिये मित्र राष्ट्रों को क़ब्ज़ा दिया गया। तात्पर्य यह है कि जर्मनी से बाहर केवल जर्मन सरकार की ही सारी सम्पत्ति जब्त नहीं कर ली गई बल्कि जर्मन प्रजा की जो वैयक्तिक सम्पत्ति थी वह भी मित्रदल ने छीन ली [आर्टिकिल ११९, १२०, १२१, १२३, २५७]

(३) अलसेस लोरेन में भी जर्मनों की जो वैयक्तिक सम्पत्ति है वह सब बिना किसी भी मावजा के फ्रान्स को दी गई और फ्रान्स इसमें से जिसका चाहे अपनी इच्छानुसार धन छीनलेवे, या रहने देवे। यह अत्यन्त महत्व पूर्ण शर्त है, कारणकि अलसेस लोरेन जर्मनी से मिले रहने के कारण वहां जर्मनों ने बड़ी उन्नति की थी, और अलसेस लोरेन की खानों में बहुतसा धन लगाया था। संधि के अनुसार जर्मनों की सब सम्पत्ति उनसे लेकर फ्रान्स के हवाले की गई [आर्टिकिल ५३,७४]

(४) जर्मन निवासियों की जर्मन उपनिवेश तथा अलसेस लोरेन में ही स्थित सम्पति छीन नहीं ली गई बल्कि जर्मनी को छोड़ और संसारके किसी भी भाग में किसी भी जर्मन का कुछ भी धन हो या अधिकार हो या कम्पनीहो सब पर मित्र राष्ट्रों को अधिकार दिया गया [आर्टिकिल नं० २९७,२६०]

(५) उपरोक्त फिकरों में कुछ कमी न हो जाय इसलिये जो जर्मनों की सम्पत्ति जर्मन सीमा के बाहर हो, जो कुछ अधिकार या स्वत्व जर्मनी को चीन, स्याम लाइबेरिया, मरोको इजिप्ट, आदिदेश में हो सब जर्मनी से छीन कर मित्र राष्ट्रों के सुपुर्द किये गये [आर्टिकिल ११८,१२५,१२७,१२९,१३२,१४०]

(६) जर्मनी की ओर से माहदा कराया कि जर्मनी किसी भी प्रकार से अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक कामों में मित्र राष्ट्र के राज्य में या आस्ट्रिया में या हंगरी बलगेरिया या टर्की में या रूस में कभीभाग नहीं लेगा [आर्टि. २८९]

[७] फ्रान्स के जो कोयले की खानों में जर्मनी के कारण जो कुछ हानि हुई उसकी पूर्तिके लिये सारबेसन [तटस्थ] की सब कोयलेकी खानें बिना किसी शर्त या आर्थिक अड़चनके हमेशा के लिये फ्रान्स को देदी गई। १५ साल तक सारबेसन में रहने वाले लोगों का शासन लीग आफ नेशन द्वारा होगा इस के बाद यदि वहां वाले जर्मनों के आधीन ही रहना चाहें तो जर्मनी नगद मूल्य देकर फ्रान्स से इसे ख़रीद सकेगा [आर्टि. ४५]

(८ अपरासिलेसिया जहां जर्मनों की दूसरी अच्छी खानें हैं पौलैंस को देदी गई।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यद्यपि यहां जनसंख्या में जर्मनी की ही प्रधानता है।

(९) नार्ड और पाडिकेले की कोयले की खानें जर्मन युद्ध के कारण बेकाम हो गईं इसलिये फ्रान्स को ५ साल तक दोकरोड़ टन कोयला देगा। और इसकेबाद ८० लाख टन ५ वर्ष तक और देगा। (Para 2. Annex V. to the reparation Chapter)

(१०) इसके अतिरिक्त जर्मनी बेलजियम को अस्सी लाख टन इटली को ४५ लाख टन तथा फ्रान्स को ७० लाख टन कोयला बतौर हर्जाना के और देवे।

(११) जर्मनी वादा करता है कि पांच वर्ष तक मित्र दलके माल जर्मनी में जाने में किसी क़िस्म की रुकावट न डालेगा और उन पर किसी तरह का नयाकर नहीं लगावेगा जो युद्ध से पहिले न रहा हो [२६४ से २६७]

[१२] राइन के इस तरफ वाले स्थान में जो कुछ समय के लिये मित्र मण्डल के हाथ रहेगा जर्मनी किसी तरह का आयात् या निर्यात करन लगासकेगा।

[१३] मित्र दलका माल जर्मनी के रेल से किसी दूसेर स्थान में यदि आवे या जावे तो जर्मनी को इस के लिये भी सुभीता करनी होगी [३७६]

[१४] मित्र राष्ट्रों की हानि पूर्ति के लिये जो जर्मनी ने किये तथा सिपाहियों के पेंशन आदि के लिये, मित्र राष्ट्रों को जर्मनी लगभग ८ अरब पौण्ड बतौर हर्जाने के देवे। इस में से १ अरब पौण्ड मई १९२१ तक जर्मनी अदाकर देवे।

यही नहीं किन्तु मित्र राष्ट्रोंको अधिकार होगा कि हर्जाने की रकम रुपये में न लेकर जर्मनी के किसी भी व्यापारिक चीजों में ले सक्ते हैं। और जो चीज़ ये मांगे जर्मनी को वही देना ही होगा।

अंग्रेज-अबला का आमन्त्रण।

(लेखक—दक्षिण अफ्रिका प्रवासी पं० भवानीदयाल)

ट्रांसवाल में जोहांसवर्ग अपने ढंगका एक ही नगर है। नगर के आसपास सोना खोदने की बड़ी २ खानें हैं, इस से नगर का महत्व और भी अधिक बढ़ गया है। शहर का सौन्दर्य, भव्य भवनों का भावपूर्ण दृश्य, सड़कों की सफाई और बाज़ार की सजावटका क्या कहना? ऊंची २ अट्टालिकाएँ आकाश से अटखेलियां कर रही हैं और मन्द २ पवन के सुगन्ध से नगर-निवासियों का हृदय प्रफुल्लित हो रहा है। जोहांसवर्ग के यौवन और लावण्यता पर मुग्ध होकर ही अंग्रेजों ने रणचण्डी की पुनीत वेदी पर लाखों नर मुण्डों का बलिदान चढ़ा दिया था और जोहांसवर्ग पर बृटिश पताका लहराते हुए देखकर अपने भाग्य को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सरा रहा था। यह वही एतिहासिक नगर है जहां से महात्मा गान्धीजीने अपने सात्विक-शस्त्र सत्याग्रह का सूत्रपात किया था और इसी नगर में लेखक को भी जन्म-ग्रहण करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। अतएव इस नगर के एक अंग्रेज अबला के आमन्त्रण की कथा "ज्योति" के सहृदय पाठक और पाठिकाओं के लिये अवश्य ही मनोरञ्जक और शिक्षाप्रद होगा।

जूनका महीना था और सर्दी का ज़ोर! जोहांसवर्ग का जाड़ा अपने शान का निराला होता है। इस ऋतु में कोट-पतलून के सिवाय ओवरकोट का भी बोल-बाला होता है और अबलाओं के अङ्गो पर भी असाधारण वस्त्रोंके अतिरिक्त शाला-दुशाला होता है। मैं सूट-बूट डटाये और ओवरकोट चढ़ाये मि० पोलक के आफिस में पहुंचा, वहां मुझे चिर-परिचित मिस बुश मिली। उन की बात-बात में सहृदयता और सरलता का सजीव-भाव झलकता था, और उनके मुखड़ा पर माधुर्यता का मनोमुग्ध-कारी छटा। कुछ इधर उधर की बातचीत हो चुकने पर कुमारी बुश ने सायंकालिक भोजन करने के लिये मुझे निमन्त्रण दिया जिसको अस्वीकार करना अशिष्टता का मानो अलिङ्गन करना था अतएव उनका निमन्त्रण स्वभाविक रीति से स्वीकार करना ही पड़ा॥

शाम को छः बजे मैं अपने एक मित्र के साथ ट्राम पर बैठ कर मिस बुश के घर पर गया। मिस बुश अपने आफिस से घर पर आगई थीं और मेरे आने की राह देख रही थीं। दरवाज़े पर पहुंचते ही मैंने संकेत करने वाला बटन दबाया जिस से घर के भीतर आवाज गूंजने लगी—टन नन नन नन। मिस बुश चौंक पड़ीं और अपने माता, पिता तथा जेठ बहिन के साथ मेरी अभ्यर्थना के लिये आगे बढ़ीं। पहिले "हाथ-मिलौअल" की रस्म अदा किया गया और फिर घर के अन्दर कुर्सियों पर जा जमें। घर में एक लम्बा मेज़ धरा हुआ था जिस के चारों तरफ कुर्सियां सजी हुई थीं। दिवारों पर बड़े २ अंग्रेज़-नर वीरों की तस्वीरें लटक रहीं थीं और बिजली की रोशनी से सारा मकान जगमगा रहा था। अतर के सुवास से दिमाग़ तर हो जाता था और फरनिचरों की सुन्दर-सजावट से शरीर में सुख का सञ्चार हो आता था॥

मिस बुश के माता-पिता मुझ से प्रेमालाप कर रहे थे और मिस बुश बड़ी मुस्तैदी से मेरे भोजन की व्यवस्था में लगी हुई थी। उनकी चञ्चलता और चपलता का क्या कहना? उन का एक पांव पाकशाला में और दूसरा पांव आराम-शाला में पड़ता था, उन्होंने झटपट चाय का प्याला मेरे सामने ला रक्खा और डब्बल रोटी के मक्खन चुपड़े हुए कुछ कतरें? साथ ही छूरी, कांटे और चम्मच? मैंने रोटी खाकर चाय पीना शुरू किया और मिस बुश मेरे ओर संकेत करके अपने माता, पिता और बहिन से कहने लगी—"मि० भवानीदयाल को आप लोग नहीं जानते हैं; यह एक हिन्दुस्थानी ग्रन्थकार, सम्पादक और वक्ता है। आपने भारतीय हड़ताल का नेतृत्व ग्रहण किया था और अपने पत्नी-पुत्र समेत कैद भी भोगा था। आपने दक्षिण अफ्रिका में कई सभाओं समितियों और संस्थाओं का स्थापना किया है। ऐसे हिन्दुस्थानी की आतिथ्य-सत्कार करने का अवसर मिलना कम सौभाग्य की बात नहीं है"। मेरे ओर इशारा करके—"क्यों मि० भवानीदयाल! यह रूखा-सूखा भोजन तो आपको पसन्द नहीं होगा, क्योंकि आप शाकाहारी हैं इसलिये, आपके खातिर मुझे घास-पात

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation and eGangotri

का प्रबन्ध करना पड़ा है (हास्य) यह चायकी प्याली नहीं है बल्कि प्रेम की प्याली है (फिर हास्य) अच्छा, और कुछ लाऊं" ॥

"नहीं, धन्यवाद ! अब कुछ नहीं चाहिये" मैंने कहा ॥

मिस वुश—यह तो मैं जान गई । आप प्रेम-प्याली का नाम सुनते ही डर गये । अच्छा यह तो बतलाइये कि मैं आप से कुछ पूछने की धृष्टता कर सकता हूं ?

"बेशक, बड़ी खुशी के साथ" मैंने उत्तर दिया ॥

मिस वुश—क्या यह सत्य है कि हिन्दुस्थानी लोग औरतों की आज़ादी के कट्टर दुश्मन होते हैं और उन्हें पर्दे के अन्दर बन्द रखते हैं ?

मैं—किसी समय आर्य्यावर्त में स्त्रियों को पूर्ण स्वतंत्रता थी । वे तलवार और बन्दूक चलाना जानती थीं; हाथी और घोड़ों की पीठों पर सवार होकर शिकार खेलती थीं, समय पड़ने पर लड़ाई के मैदान में जा डटती थीं और अपनी रण-कुशलता दिखा कर दुश्मनों के दांत खट्टे कर देती थीं । किन्तु जब से हिन्दुस्थान में मुसलमानों का क़दम जमा तब से हिन्दुस्थानी स्त्रियों को पर्दे में रहने का रिवाज चल पड़ा और अब कुछ लोग उसे सनातन-प्रथा समझने लगे हैं ॥

मिस वुश—क्या पढ़े-लिखे हिन्दुस्थानी भी ?

मैं—नहीं २, पढ़े-लिखे हिन्दुस्थानी तो पर्दा-प्रथा का पूर्ण प्रतिरोध कर रहे हैं और इस प्रथा का देश के भावी उत्थान के लिये अमङ्गल और राष्ट्र के भावी-सन्तानों के लिये घातक समझते हैं ॥

मिस वुश—क्या यह सत्य है कि हिन्दुओं में बाल विवाह की प्रथा प्रचलित है और विधवा-विवाह का निषेध ?

मैं—यह बाल-विवाह भी मुसलमानों के समय से चला क्योंकि उनका अत्याचार इतना चढ़ा बढ़ा हुआ था कि हिन्दू युवतियों की इज्जत और हुर्मत बचना कठिन था इस लिये थोड़े दिनों से बाल-विवाह का रिवाज चल पड़ा लेकिन अब सब दलके हिन्दू इस रिवाज को नफरत की निगाह से देखने लगे हैं । कुछ दिनों में इस प्रथा का पांव उखड़ जायगा । हां, कुछ पुराने ढर्रे के ब्राह्मण और क्षत्रिय विधवा-विवाह का विरोध करते हैं किन्तु वैश्य और शूद्रों में, तथा समझदार ब्राह्मण और क्षत्रियों में विधवा विवाह का विधान है ॥

मिस वुश—क्या मैं आप से एक अपील कर सकती हूँ ?

"प्रसन्नता पूर्वक" मैंने कहा ॥

मिस वुश—आप परमात्मा के नाम पर, मनुष्यता के नाम पर और स्वतंत्रता के नाम पर भारतीय-महिलाओं को अपने मानवी स्वत्व का, नैसर्गिक अधिकार का बोध कराने का अहर्निश प्रयास करें । यदि माताएँ उत्तम होंगी तो तदनुकूल सन्तान भी होंगी । क्या आप इस आवश्यक सुधार की ओर ध्यान देंगे ?

मैं—हिन्दुस्थानियों में स्त्री-सुधार के लिये जितने सहृदय सज्जन प्रयास कर रहे हैं उन में से मैं भी एक हूं । हम चाहते हैं कि परमात्मा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वह दिन शीघ्र लाये जब कि भारतीय-रमणियों के हृदय-मन्दिर में माता-सरस्वती के वीणा की मधुर झन्कार हो, उनके अदम्य उत्साह और उमङ्ग पर माता-लक्ष्मी का आवास और उनके फड़कती हुई भुजाओं पर माता-दुर्गा का निवास! उस दिन का हम लोग अत्यन्त उत्सुकता से आवाहन कर रहे हैं॥

इतना कह कर मैं उठ खड़ा हुआ। उधर से "गुडनाइट गुडनाइट" की ध्वनि और इधर से "नमस्ते २" की प्रतिध्वनि। फिर "हाथ मिलौअल" का रस्म और अन्त में "गुड़बाइ" के गुंजार से अंग्रेज-अबला के आमन्त्रण से अवकाश मिला॥

———

सफलता।

[लेखक—श्रीयुत् मणिराम गुप्त]

(१)

वे मनुज हैं जन्म भर दुख सिन्धु को तिरते नहीं।
अंत तक ऐ सज्जनों! उनके दिवस फिरते नहीं॥
आलसी नर के कभी मानस कमल खिलते नहीं।
धन विभव यश और आदर मान भी मिलते नहीं॥

(२)

धीरता खो जो बहे नैराश्य सरिता धार में।
क्या कभी वे कर सके कुछ काम इस संसार में॥
मित्र! उनकी डूब जाती नाव है मंझधार में।
जो फंसे हैं वे तरह आहार और विहार में॥

(३)

कर नहीं सकते समुन्नति शीघ्र ही या देर में।
जो पड़े रहते हैं केवल भाग्य ही के फेर में॥
क्या करेंगे वे भला धीरज न जिनके पास है।
वे करेंगे जो न तजते धैर्य जबतक सांस है॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(४)

अवनती के गर्त में भ्रम वश गिरे रहते नहीं ।
दुःख बादल पास में जिनके घिरे रहते नहीं ॥
आत्म गौरव नाश कर अपमान हैं सहते नहीं ।
वे कभी नैराश्य नद में भूल कर बहते नहीं ॥

(५)

देख कर जो उलझनों को नेक घबराते नहीं ।
काल तक से सामना करने में भय खाते नहीं ॥
है सफलता पास में उनके सदा रहती खड़ी ।
बात उनके वास्ते जग में न है कोई बड़ी ॥

(६)

कर्मवीरों को कठिन जग में न कोई काम है ।
काम करने में उन्हें मिलता अधिक आराम है ॥
काम पूरा बिन किये मिलता नहीं विश्राम है ।
काम ही की धुन उन्हें रहती बस आठो याम है ॥

(७)

हे सफलते ! तू उन्हें बरती है जो अति वीर हैं ।
संयमी, मतिमान हैं गंभीर हैं औ धीर हैं ॥
काहिलों का साथ देना तू समझती पाप है ।
आलसी सर्वस्व करता नाश अपने आप है ॥

(८)

इसलिये तुमको सफलता की अगर कुछ चाह है ।
मित्र बतलाता तुम्हें हूं एक ही बस राह है ॥
लग पड़ो जिस काम में उसको कभी छोड़ो नहीं ।
बिन किये पूरा उसे तुम मुंह कभी मोड़ो नहीं ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वराज्य का तात्पर्य।

लेखक—श्रीयुत् प्राणनाथ जी विद्यालङ्कार।

राज्य का क्या तात्पर्य है ? कदाचित् स्व-राज्य का तात्पर्य 'अपना राज्य' कहा जावे परन्तु यह ठीक नहीं है। क्योंकि 'अपना' अपने ऊपर कैसे राज्य कर सकता है। यदि प्रतिनिधियों को 'अपना' कहा जावे तो पराया कौन है ? प्रतिनिधि बन्दूक में भरी गोली या धनुष चढ़े बाण हैं, जब तक चढ़े तभी तक अपने हैं, छूटने पर अपने हाथ से बाहर होजाते हैं। यदि निर्वाचन से कोई 'अपना' बन सकता है तो कौनसा ऐसा सम्बन्ध है जिससे प्रत्येक व्यक्ति 'अपना' न बन सके। मनुष्य निर्वाचित क्यों होना चाहते हैं ? इसलिये कि निर्वाचकों के या अपने स्वार्थ को सुरक्षित रख सकें। दोनों ही दशाओं में अपना राज्य नहीं रहता। व्यक्तियों का स्वार्थ भिन्न है इससे निर्वाचित प्रतिनिधियों का भी स्वार्थ भिन्न २ होजाता है। बहु सम्मति से यदि तय किया जावे तो अल्प सम्मति वालों की क्या दशा हुई ? बहु सम्मति की प्रबलता में अल्प सम्मति का राज्य कहां रहा ? फिर स्व-राज्य क्या वस्तु है ? क्या स्व-राज्य का तात्पर्य अल्प सम्मति पर बहु सम्मति का राज्य या प्रबल दल का दुर्बल दल पर अत्याचार है? इससे तो स्व-राज्य तथा स्व-तन्त्रता भिन्न अर्थ तथा विपरीत भाव के द्योतक हो जाते हैं। स्व-राज्य का अर्थ पर-राज्य तथा स्व-तन्त्र का अर्थ अात्म-राज्य होजाता है। परन्तु कहीं राज्य के सदृश स्व-तन्त्रता शब्द का व्यवहार भी पर-तन्त्रता अर्थ में न होता हो। स्व-तन्त्रता है क्या? ईश्वर प्रकृति से लेकर के पक्षि मनुष्य पर्य्यन्त जितने भी पदार्थ हैं वह सबके सब हम पर राज्य कर रहे हैं। हम निरपेक्ष होकर के नहीं चल सकते हैं। बिना निरपेक्षता के स्वतन्त्रता तथा स्वराज्य कहां ?

पूर्ण-स्वराज्य तथा पूर्ण स्व-तन्त्रता का तात्पर्य पूर्ण प्रलय है। प्रकृति से जबतक मनुष्य जुड़ा हुआ है, भूख प्यास क्रोध द्वेष मोह का छाप उस पर बना रहेगा। प्रकृति गत सम्पूर्ण बन्धन पर-तन्त्रता के विकट जाल हैं। यह अनश्वर तथा अनिर्वचनीय हैं। जितने ज़ोर से हम एक बन्धन को काटते हैं-उतनी ही ज़ोर से दूसरे बन्धन हम पर आ टूटते हैं। कल प्रयोग से प्रकृति की बाधक शक्ति नष्ट हुई, परन्तु वही बेकारी साम्यवाद पूंजी के विरोध में दुगुने ज़ोर से प्रकट हुई। निर्वाचन से किसी एक का स्वेच्छचारी राज्य नष्ट किया, परन्तु वही बहुराज्य या प्रतिनिधि-राज्य के रूप में दुगुने ज़ोर से प्रकट हुआ। रस्सा वैसा का वैसा ही खिंचा रहा। बेचैनी, असन्तोष, चिन्ता तथा क्रान्ति पूर्वापेक्षा बहुत अधिक बढ़ गई।

कदाचित् स्व-तन्त्रता या स्व-राज्य का तात्पर्य परतन्त्रता का विनिमय या अदला बदली हो। व्यापार एक प्रकार का आर्थिक बन्धन है। वह भी स्वतन्त्र (Free trade) हो जाता है जब कि वे रोक टोक वह चलने लगे। अर्थात् मनुष्यों के स्वार्थ-तन्त्रता से प्रकृति-तन्त्रता में आना ही व्यापार की स्वतन्त्रता है। आत्म-तन्त्रता (Self-determination) शब्द

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का व्यवहार आजकल ज़ोर पर है । इसका वास्तविक अर्थ बड़े के साथ न जुड़ कर 'छोटा' रहना है । अथवा सजातीय एक बृहद्राष्ट्र की पर-तन्त्रता न मान करके बहुत से बृहत् तथा अल्पराष्ट्रों की बहु संख्या की पर-तन्त्रता का नाम आत्म तन्त्रता है । सारांश यह कि बोझा बदलने का नाम स्व-तन्त्रता है ।

यदि फल या परिणाम को सामने रक्खे तो चिन्ता तथा कलह बढ़ाने का नाम स्व-तन्त्रता है । दल-तन्त्रता में और है ही क्या है ? दलों का रस्सा खिंचता है चिन्ता भ्रान्ति तथा कलह अपना राज्य जमाते हैं । निर्वाचक बोली बोलते हैं । फल हुआ क्या ? असन्तोष । स्व-तन्त्रता का अर्थ अपनी तन्त्रता, स्वराज्यका अर्थ अपना-राज्य है । अपना क्या है ? यह हमारा 'अपना' मकान है तो स्वराज्य का अर्थ 'मकान' का राज्य परन्तु उस पर 'अपना' यह मोहर हो । भंगी चमार जुलाहा ज़मीदार मैजिस्ट्रेट इन में से अपना कौन नहीं है ? और अपना कौन है ?

कदाचित् स्व-राज्य में 'स्व' व्येष्टि अर्थ में न गूंजकर समष्टि अर्थ में गूंजता हो । 'स्व' का संकेत व्यक्ति न होकर समाज हो । इस प्रकार स्व-राज्य का तात्पर्य समाज वा राष्ट्र का राज्य हुआ । समाज या राष्ट्र क्या वस्तु है ? और उसका राज्य क्या चीज़ है, और किस प्रकार संभव है ? ब्लन्ट्श्ली राष्ट्र को चेतन नर गुण प्रधान शासक शासित के रूप में किसी एक भूमि पर संगठित पुरुष समझता है, जिस के हम सब लोग अंग हैं । अंगों का अंग पर शासन या राज्य इस प्रकार स्व-राज्य हुआ । परन्तु सम्पूर्ण अंगों का अंग पर शासन कैसे संभव है ? एक हाथ का दूसरे हाथ पर या सम्पूर्ण शरीर का पैर पर शासन या राज्य कभी नहीं सुना गया । इस हालत में शरीर के संचालक हृदय के सदृश-राष्ट्र शरीर के संचालक, प्रभुत्व शक्ति के स्रोत, किसी एक वस्तु को स्व शब्द का व्यवहार क्षेत्र क्यों न माना जावे ? परन्तु वह वस्तु क्या है ? कदाचित् राज्य हो ? परन्तु इसमें एक दोष है । राज्य की संचालक शक्ति प्रतिनिधियों पर निर्भर रहती है । प्रतिनिधि भी स्व नहीं कहे जा सकते क्योंकि उनका आधार निर्वाचकों के निर्वाचन पर है । इस प्रकार स्व का अर्थ समष्टि से हट कर के पुनः व्यष्टि की ओर झुकता है । स्व-राज्य का तात्पर्य निर्वाचकों का राज्य । किस पर ? निर्वाचकों पर । इस प्रकार अपने का अपने ऊपर राज्य स्व-राज्य हुआ । परन्तु किसी हद तक यह ठीक नहीं है । क्योंकि निर्वाचकों तथा प्रतिनिधियों में बड़ा भेद है । निर्वाचक चुनता है और प्रतिनिधि राज्य करता है । चुनाव के बाद दोनों का सम्बन्ध टूट जाता है । स्व का तात्पर्य प्रतिनिधि तथा निर्वाचक दोनों ही रक्खा जावे तो स्व-राज्य का तात्पर्य प्रतिनिधि तथा निर्वाचकों का राज्य हुआ परन्तु दोनों में चुनाव के सिवाय और कोई सम्बन्ध न होने से स्वराज्य का स्वरूप नष्ट होजाता है और उसका व्यवहारिक अर्थ दलों का स्वेच्छाचारी राज्य हो जाता है ।

परन्तु जन सम्मति विधि या रैफरैन्डम का उपयोग करे तो अप्रत्यक्ष तौर पर निर्वाचकों तथा प्रतिनिधियों का सम्बन्ध स्थिर तथा दृढ़ हो सकता है । इस से स्वराज्य का अर्थ अप्रत्यक्ष लोक-तन्त्र राज्य हुआ । अप्रत्यक्ष इस लिये कहा कि एथन्स के सदृश सीधा लोक तन्त्र राज्य आजकल कहीं पर भी नहीं है । अप्रत्यक्ष लोक तन्त्रराज में स्व-राज्य का अर्थ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लगाते हुए भी इसका अर्थ पूरे तौर पर स्पष्ट नहीं होता है। क्योंकि डेमागाज तथा पैरिक्लीज़ जैसे सारी जनता को अपने कूट उद्देश्यों का साधन बना सकते हैं। प्रतिनिधि लोग भी ऐसा कर सकते हैं और ऐसा करते भी हैं। यदि ऐसा न होता तो पूंजी तथा श्रम का झगड़ा तथा पूंजी पतियों तथा साम्यवादियों का भयंकर मत भेद ऐसे रूप को क्यों ग्रहण करता? सारांश यह कि स्व-राज्य-स्वतन्त्रता तथा स्वछन्दता से ऐसा ही भिन्न है जैसा कि अन्धकार प्रकाश से। जब तक राज्य है तब तक स्व-राज्य कहाँ। स्व-राज्य एक ऐसा खूब-सूरत पदार्थ है जो कि ऊपर से मधुर है परन्तु अन्दर से नीरस तथा निरर्थक है। यह वह थैला है जिस में मनुष्य समाज के कलह असन्तोष तथा कष्ट का बीज भरा है। या यह वह माया जाल है जिस पर पागलों की तरह सभ्य जातियां टूट पड़ती हैं, और दिन पर दिन अपने आप को जकड़ती जाती हैं। मनुष्य समाज का सुख इस मार्ग में नहीं है। राज्य एक दूषित पदार्थ है। काम क्रोध लोभ मोह में पड़ करके ही लोगों ने इस भयंकर विपत्ति को अपने माथे मोल लिया। अपने आप को न संभाल करके 'राज्य' के स्वरूप का कितना ही क्यों न सिंगार किया जावे सुख, स्व-तन्त्रता तथा सन्तोष कभी भी नहीं मिल सकते। राज्य को चकनाचूर करना और अपने आपको न संभालना भयंकर मूर्खता है। जो चीज़ अपने ही दोष से उत्पन्न हुई, अपने आपको सुधारने से ही वह नष्ट हो सकती है। काम क्रोध लोभ मोह ही राज्य का आधार तथा दुःख का मूल है। आत्म संयम तथा आत्म वशता ही राज्य का नाशक तथा सुख का स्रोत है। ऋषियों ने ठीक कहा है कि:—

सर्वं पर-वशं दुःखम्—सर्वमात्म वशं सुखम्।

उजेला।

[लेखक—श्रीयुत् बुद्धदेव विद्यालंकार]

बहुत दिनों बदली ने घेरा।
लगी काटने खटिया अब तो, हर लो नाथ अंधेरा।
हुआ कौन अपराध नाथ, जो विपति उदधि में गेरा॥
उमड़ि घुमड़ि घन गरजै पानी रिमझिम झरै घनेरा।
नाथ चलेंगी नहि यह चालें फागुन सावन डेरा॥
अब तो फिर वह वायु वसन्ती हरियावल चहुँफेरा।
'ज्योति' सुनहली तर सब न्हावैं क्या रसाल क्या केरा॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बौद्ध धर्म में वैदिक संस्कार।

(लेखक—प्रो. चन्द्रमणि विद्यालंकार गुरुकुल कांगड़ी)

स प्रकार वैदिक धर्म में संतान को उच्च, श्रेष्ठ तथा पवित्र बनाने के लिये संस्कारों का विधान किया गया है उसी तरह बौद्ध धर्म में भी उनका आशय लिया गया है। इस की सिद्धि के लिये यद्यपि साक्षात् धार्मिक विधान नहीं पाया जाता तथापि हमें एक ऐतिहासिक साक्षी ऐसी मिलती है जिससे हमारा विचार पुष्ट होता है। धम्मपद के ५ वर्ग १६ श्लोक की व्याख्या करते हुए धम्मपद कथा में [सिंहल लिपि में मुद्रित के २६२ २६३; २६९ पृष्ट] उल्लेख आता है कि श्रावस्ती नगरी में गौतम बुद्ध के मुख्य शिष्य सारिपुत्र के उपट्ठाक [सेवक—भक्तजन] के घर पुत्र उत्पन्न हुआ, जिस पर उसने संस्कार कराये जिन को मङ्गल के नाम से कहा गया है। उन संस्कारों या मङ्गलों में अनेक भिक्षुओं सहित सारिपुत्र को निमंत्रित किया गया और भोजनादिक से सत्कार किया गया। पुत्र का नाम उपतिस्य रक्खा गया। प्रारम्भिक संस्कारों के बारे में वहां इस तरह उल्लेख आता है—कुच्छियं में गब्भो पतिट्ठितो तिञत्वा सामिकस्स आरोचेसि, सो तस्सा गब्भ परिहारं अदासि, तस्सा अच्चुण्ह अतिसीत अतिअम्बिलादि परिभोगं वज्जेत्वा सुखेन गब्भं परिहरियमानाय एवरूपो दोहको उप्पज्जि अर्थात् धर्मपत्नी ने, मेरी कुक्षि में गर्भ प्रतिष्ठित हो गया है ऐसा जानकर, अपने पति को बताया। उसने स्त्री को गर्भ परिहार दिया अनुष्ण, अतिशीत, अतिअम्ल पदार्थों के सेवन को छोड़कर सुख पूर्वक गर्भधारण या गर्भरक्षा करती हुई उसको इस प्रकार का दौर्हृद उत्पन्न हुआ.....यहां पर गब्भ परिहार शब्द के आशय को जानना आवश्यक है, और इसी शब्द में हमारा अभिप्राय छिपाहुआ है। रावर्ट सीज़र शिलर ने अपनी पाली डिक्शनरी में परिहार शब्द का अर्थ करते हुए लिखा है कि मैंने विजयसेन से [सीलोन में यह एक बड़ा प्रसिद्ध बौद्ध पालि विद्वान् था] गब्भ परिहार का अर्थ पत्रद्वारा लिखकर पूछा था जिस पर उसने यह उत्तर भेजा-"गब्भ परिहार is explained in our commentaries as वेदेसु वुत्तनयेन गब्भस्स दातब्ब परिहारो" अर्थात् गब्भ परिहार की व्याख्या हमारी टीकाओं में इस प्रकार की गई है कि वेदों में कथित नियमानुसार गर्भ के लिये देने योग्य संरक्षण या सत्कार। इससे साफ़ है कि गर्भ परिहार [गर्भ संरक्षण या गर्भ सत्कार] मङ्गल उस वैदिक संस्कार के लिये प्रयुक्त है जिसको पुंसवन के नाम से कहा जाता है। पुंसवन संस्कार भी गर्भधारण का ज्ञान हुए पश्चात किया जाता है। और तब से गर्भिणी को अत्युष्ण, अत्यम्ल आदि पदार्थ खाने का निषेध है। प्रसंग वश हमें वेदेसुवुत्तनयेन इस पद से इस बात का भी इशारा मिलता है कि बौद्धों को भी वैदिक आदेश माननीय होते थे, वह वेद निन्दक न थे।

आगे पुनः धम्मपदट्ठकथा में आता है:—तस्सा याव गब्भुट्ठाना अन्तरन्तरा कते मङ्गले-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुपि, दसमासच्चयेन पुत्तं विजाताय कतमङ्गल-सुपि.....अर्थात् सन्तानोत्पत्ति से पूर्व बीच २ में किये गये मङ्गलों में, और दशमास के बाद पुत्र उत्पन्न होजाने पर किये गये मंगलों में भी सारिपुत्र प्रमुख भिक्षुओं को निमंत्रण दिया। इस बचन से पता चलता है कि पुंसवन के अतिरिक्त अन्य भी कोई मंगल था जो पुत्रोत्पत्ति के पूर्व किय गया, वह सीमन्तोन्नयन ही होगा। और इन दोनों संस्कारों को गर्भ परिहार मङ्गल से ही पुकारा गया है।

आगे अन्य संस्कारों का वर्णन इस तरह है—जात मङ्गल दिवसे पन तंदारकं पातोव नहापेत्वा मण्डेत्वा सिरिसयने सतसहस्सग्घनकस्स कम्बलस्स उपरि निपज्जापेसुं..... एवं दारकस्स नाम करण मङ्गलं करित्वा पुत्तस्स आहार परिभोग मङ्गलेसुपि, युत्तस्स कण्ण विज्झन मङ्गलेसुपि, दुस्सग्गहण मङ्गलेसुपि, चूकाकप्पन मङ्गलेसुपि.....जात मङ्गल (जात कर्म संस्कार) के दिन उस बालक को प्रातःकाल ही स्नान कराके और अलङ्कृत करके सुन्दर बिछौने पर बहु मूल्य कम्बल के ऊपर लेटा दिया।..... इस प्रकार बालक का नाम करण मङ्गल करके पुत्र का आहार परिभोग (अन्न प्राशन) मङ्गल में भी, पुत्रके कण्ण विज्झन (कर्ण वेधन) मंगल में भी पुत्रके दुस्सग्गहण (दुशाला आदि उत्तम चादर का ग्रहण) मंगल में भी, और चूड़ा कल्पन (केशकाटना-चूड़ाकर्म) मंगल में भी पूर्ववत् सारिपुत्र प्रमुख भिक्षुओं को निमंत्रित किया। इस प्रकार उपरोक्त बचन में जातकर्म, नाम करण, अन्नप्राशन, कर्णवेध, चूड़ाकर्म इन पांच मंगलों या संस्कारों का वर्णन आगया। छठ का नाम दुस्सग्गहण है। यह संभवतः निष्क्रमण मङ्गल ही है, क्योंकि उसदिन बच्चे को घर के बाहर शीतादि से रक्षा के लिये दुशाला आदि उत्तम वस्त्र ओढ़ाया जाता है। आगे चलकर पुनः लिखा है "यदि सन्धिग्गहणतो पट्ठायस्स जातका सत्तसु मङ्गलेसु....."गर्भ धारण से लेकर इस (उपतिस्य बालक) के संबन्धियों ने सात मङ्गलों में.....। गर्भ परिहार, जातकर्म, नाम करण, अन्नप्राशन, कर्णवेध, दुस्सग्गहण (निष्क्रमण) चूड़ाकर्ण यह सात संस्कार कराये गये। गर्भ परिहार में पुंसवन सीमन्तोन्नयन यह दोनों शामिल हैं जैसा कि पहले बताया जा चुका है। इस प्रकार यह आठ मङ्गल निस्सन्देह वैदिक संस्कार ही हैं। संस्कारों को मनु महाराज ने वैदिकैः कर्मभिः पुण्ये र्निषेकादि र्द्विजन्मनाम् २० २६ इस श्लोक में पुण्य के नाम से पुकारा है। बंगदेश में अभी तक इन को शुभ के नाम से कहते हैं। उपर्युक्त पाली में इसे मंगल के नाम से कहा है। पुण्य शुभ, मङ्गल तीनों एकार्थक शब्द हैं। मनुने २. २७ में प्रथम संस्कारों को गार्भ (गर्भ संबन्धि) इस एक ही नाम से लिखा है। जिस पर टीकाकार कुल्लूकभट्ट लिखता है "ये गर्भ विशुद्धये क्रियन्ते ते गार्भाः" जो गर्भ की विशुद्धि के लिये पुण्य किये जावें वह गार्भ। इसी को पाली में गब्भ परिहार के नाम कहा गया है। दोनों का भावार्थ और शब्दार्थ बिलकुल एकसा है। उपर्युक्त बौद्ध धर्मावलम्बी द्वारा किये गये मङ्गलों में दुस्सग्गहण (निष्क्रमण) का क्रम बदला हुआ है। गृह्यसूत्रों तथा स्मृतिग्रन्थों में नाम करण के बाद निष्क्रमण और पुनः अन्नप्राशन, कर्णवेध और चूड़ाकर्म है। पर यहां कर्णवेध के बाद निष्क्रमण है। मनु ने २. ३४ में चौथे मास में निष्क्रमण और छटे मास में अन्नप्राशन लिखते हुए कहा है "यद्वेष्ट

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मङ्गलंकुले" जिस पर कुल्लूकभट्ट लिखता है "अथवा कुलधर्मत्वेन यन्मङ्गलमिष्टं तत्कर्तव्यं तेनोक्त कालादन्यकाले ऽपि निष्क्रमणम्" इस से पाली में निष्क्रमण का बदला हुआ काल मनु को अनिष्ट नहीं।

स्वामी दयानन्द ने कर्णवेध संस्कार चूड़ाकर्म के पश्चात् संस्कारविधि में लिखा है। परन्तु आश्वलायनादि गृह्यसूत्र तथा हेमाद्रि में चूड़ाकर्म के पूर्व रक्खा है। यह दोनों संस्कार प्रायः तीसरे वर्ष में होते हैं अतः संभवतः स्वामीजी ने यह विपर्यय किया हो। इस प्रकार संस्कारों का क्रम भी बौद्ध मङ्गलों से मिलता है।

अन्योक्तिः।

फूल।

लेखक—[श्री हरि]

१. किमि झूले भूले ! लहो, पाइ पवन अनुकूल।
आल वाल लौं वृन्त सों, फूले फूले फूल॥
फूले फूले फूल

अहो यह आश नवेली—
ललित ललित लहलही लही अलवेली वेली।
ललन ! न हो अति लोल-लखो "श्री हरि" लीला इमि—
रहत न कोउ दिन चारि इतै मद मोह करत किमि॥

२. फूल ! न फूलो फल नहीं, इन फूलन के लाल।
इक दिन हा हा परहुगे, कोइ माली के जाल॥
कोइ माली के जाल

तुम्हें इस तरु से तोड़े—
यह तव सुन्दर अंग सूत बन्धन विच जोड़े।
भूलोगे वही काल-भावती डालन झूल
रहि रहि उठि है शूल सुमिरि इन सब को फूल॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्राचीन महावीर भारत में युद्ध कौशल

(लेखक 'इतिहासज्ञ')

महा भारत काल में सेना सलाह।

(१) महा भारत के महा युद्ध में १८ अक्षौहिणी सेना का संहार हुवा था इतनी बड़ी भारी सेना का किस प्रकार प्रवन्ध होता था यह भी एक आश्चर्य है। युद्ध का नाम सुन कर ही आकाश से सेनाएं नहीं टपक पड़ी थीं प्रत्युत सदा सज्ज सेनाओं को रक्खा तथा उनको नियत समय पर नियत वेतन वितरण किया जाता था। सभापर्व में नारद युधिष्ठिर से पूछते हैं :— "कि तुम अपने सैनिकों को उनका पूरा वेतन और भोजन का हिस्सा ठीक २ देते हो। उन का यह वेतनादि ठीक समय पर ही चुका देना चाहिये तू अवश्य ऐसा ही करता है और अपने सैनिकों पर अत्याचार नहीं करता" (१)

(२) सदा सज्ज (standing army) के अतिरिक्त ऐसे स्वयं स्वार्थ त्याग से सेना की सहायता करने वाले भी स्वयं सेवक होते थे जो बिना कुछ लिये हुवे सेनाका कार्य करते थे। और युद्ध के समयों में देश की सेनाओं को सहयोग देते थे। (२)

उद्योग पर्व में भीष्म पितामह कहते हैं "मैं सेना के सब कार्यों से परिचित हूँ, नाना प्रकार के व्यूहों को जानता हूं, भृत अर्थात् वेतन भोगी और अभृत अर्थात अवैतनिक स्वयं सेवकों (volunteers) से भी कार्य करा सकता हूं।"

युद्ध सामग्री

(३) उस समय राज्य के नियम पूर्वक शस्त्रादि उचित सामग्री को उचित रूप में रखा जाता था। सभा पर्व में नारद-युधिष्ठिर से पूछते हैं, "हे नृप! तुम्हारे दुर्ग में सब धन धान्य और आयुधादिक उचितरीति से संग्रहीत होंगे ही! तुम्हारा कोष कोष्ट वाहन (सवारियें) द्वार आयुध तथा तुम्हारे कल्याण चाहने वालों से दिया हुवा आय आदि सभी ठीक है"। (३)

(४) सेनाएं दुर्गों में रहा करती थीं और उन में एक युद्ध विभाग का डाक्टर रहता था। उद्योग पर्व में हम पढ़ते हैं—

"राजा युधिष्ठिर अपनी सेना से कोष यन्त्र शस्त्र और वैद्यों को लेकर चला" (४)

---

(१) कच्चिद्बलस्य भक्तञ्च वेतनञ्च यथोचितम्।
सम्प्राप्तकालेदातव्यम् ददासिन विकर्षसि ॥ ७८ ॥ (सभा० अ० ५)

(२) सेना कर्मण्यभिज्ञोऽस्मि व्यूहेसु विविधेषु च।
कर्मकारयितुंश्चैव भृतानप्यभृतांस्तथा ॥ ८ ॥ (उद्योग० अ० १६४)

(३) कच्चित् कोष्ठश्च कोषश्चवाहनं द्वारमायुधम्।
आयश्चहृतकल्याणैस्तव भक्तैरनुष्ठितः ॥ ६७ ॥
कच्चिद् दुर्गाणि सर्वाणि धन धान्यायुधादिकैः।
यन्त्रैश्च परिपूर्णानि तथा शिल्पि धनुर्धरैः ॥ ३५ ॥ (सभा० अ० ५)

(४) कोष यन्त्रा युधैश्चैव येच वैद्याश्चिकित्सकाः ॥ (उद्योग०, अ० १५०, ५८)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

युद्ध विभाग के डाक्टर।

(५) इसी प्रकार भीष्म पर्व में "भीष्म के शरशय्या पर पड़े हुवे की चिकित्सा करने के लिये शल्य और लोहकीलकों के निकालनेमें चतुर अपनी सब सामग्री औज़ार आदि लेकर अच्छे शिक्षित वैद्य उपस्थित हुये। इस पर भीष्म पितामह बोले कि सब वैद्यों को इनका उचित धन देकर सुन्तुष्ट करो मैंने क्षात्र धर्म में रहकर यह प्रशस्त्र परम गति प्राप्त की है अब मुझे वैद्यों से क्या प्रयोजन है।" (१)

(६) उद्योग पर्व में रणभूमि में लगे हुवे राजाओं के कैम्पों का वर्णन करते हुवे लिखा है कि:—

"वहां बुद्धिमान शिल्पी जिन में सैंकड़ों को वेतन मिलता था, और इसी प्रकार सैंकड़ों अपने सब प्रकार के उपकरणों सहित शास्त्र में कुशल वैद्य थे।" (२)

शिक्षित सेना और अशिक्षित सेना

जो सेना व्यूह [कवायद] में कुशल हो वह शिक्षित और इससे विपरीत अशिक्षित होती है। जिस का अधिकारी दूसरा हो वह गुल्मीभूत और जिसका स्वामी अन्य न हो वह अगुल्मी भूत होती है। [३] शुक्रनीती अध्याय ४ पृष्ठ ७।

दोनों के वेतन में भेद

जो सैनिक शिक्षक हैं उन २ की भृति (नौकरी पूर्ण देनी कही है) और जो सैनिक व्यूह के अभ्यास में नियुक्त हैं उनको उनसे आधी भृति को दे। (४) शुक्रनीति अध्याय ४ पृष्ठ ७।

आधीन सेनाएं और स्वतन्त्र सेनाएं

स्वामी ने जिसको अस्त्र आदि दिये हों वह दत्तास्त्र और इससे विपरीत स्वशस्त्र होती है। कृत गुल्भ, स्वयं गुल्म और उदत्तवाहन। (५) शुक्रनीति अध्याय ४ पृष्ठ ७।

छावनियां

राजा के सत् असत् कर्म का पुरोहित बोधन करे और ग्राम के बाहर समीप में ही सैनिकों को सदैव टिकावे (६) शुक्रनीति अध्याय ४ मंत्र ७।

---

(१) उपातिष्ठत्रथो वैद्याः शल्योद्धरण कोविदाः।
सर्वोपकरणैर्युक्ताः कुशलैः साधु शिक्षिताः ॥ १७ ॥
तान्दृष्ट्वा जान्हवीपुत्रः प्रोवाचतनयं तव।
धनांदत्वा विस्तज्यन्तां पूजयित्वा चिकित्सकाः ॥ १८ ॥ (भीष्म पर्व० अ० १२२)

(२) तत्रासन् शिल्पिनः प्राज्ञाः शतशोदत्त वेतनाः।
सर्वोपकरणै युक्ता वैद्याः शास्त्र विशारदाः ॥ १२ ॥ (उद्योग० अ० १५१)

[३] शिक्षितं व्यूहकुशलं विपरीत मशिक्षितं।
गुल्मीभूतं साधिकारिं स्वस्वामिकमगुल्मकं ॥

[४] सैनिकाः शिक्षितायेये तेषुपूर्णाभृतिः स्मृताः।
व्यूहाभ्यासेनिनियुक्ता येतेष्वर्धाभृतिमावहेत् ॥

[५] दत्तास्त्रादि स्वामिना यत्स्वशस्त्रास्त्रमतोन्यथा।
कृतगुल्मंस्वयं गुल्मं तद्वच्च दत्त व्याहनं ॥

[६] सदसत्कर्म राजानं बोधयेद्धि पुरोहितः।
ग्रामादहिः समीपेत सैनिकान् धारयेत्सदा ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ग्राम के निवासी और सैनिकों का उत्तम वर्ण, अधम वर्ण व्यवहार (लेन देन) न होने दे सैनिकों के लिए सेना में ही पृथक बाज़ार बनवावे (१)।

एक स्थान पर सेना को कदाचित् न बसावे जिस प्रकार हजारों सेना एक क्षण में ही तय्यार हो जाय ऐसी शिक्षा दे (२)।

राजा की आज्ञा के बिना कदाचित् ग्राम में न जाय और अपने अधिकारीगण का जो अपराध हो उसे हमको कहे (३)। शुक्रनीति अध्याय ४ पृष्ठ ७।

पैरेड और गिनती

इसी प्रकार अपने २ (मौके २) पर अस्त्रों को फेंककर लक्ष को वेधे और सायंकाल और प्रातःकाल के समय राजा सैनिकों की गिनती करे।

भेदन किये हुए शत्रु के धन को हमें दिखाओ। राजा भी सैनिकों के संग सेना के व्यूहों का प्रतिदिन अभ्यास करे। शुक्रनीति अध्याय ४ पृष्ठ ७।

कामना।

[लेखक—श्रीयुत् रामनरेश त्रिपाठी]

कामना और नहीं कुछ मेरी !
बहने दो प्रभु ! इन आँखों से जल की अविरल धार।
जिस से रहे सर्वदा सिंचित जीवन का प्रतिद्वार ॥
कामना और नहीं कुछ मेरी

दीर्घ श्वास यह, कठिन यातना का उच्छ्वास तरङ्ग।
आने दो नित हृदय चीर कर होने दो मत भङ्ग ॥
कामना और नहीं कुछ मेरी

ध्वनित करे प्रति पल भूतल को मेरा हाहाकार।
जिस से रहे दया के उर में जीवन का संचार ॥
कामना और नहीं कुछ मेरी

---

[१] ग्राम्य सैनिकयोंतस्यादुत्तमर्णाधमर्णता।
सैनिकार्थं तुपण्यानिसैन्ये संधारयेत्पृथक ॥

[२] नैकत्र वासयेत्सैन्यं वत्सरं तु कदाचन।
सेना सहस्रं सज्जं स्यात्क्षणात्संशासयेत्तथा ॥

[३] नृपाज्ञया विनाग्रामं नविशेयुः कदाचन।
स्वाधिकारि गणस्यापिहयपराधं दिशं पुनः ॥
भेदायितारियुधनगृहीत्वा दर्शयं तुमा।
सैनिकैरभ्यसेन्नित्यं व्यूहाधनुकृर्तिनृपः ॥
तथाऽयनेयमेलक्ष्यमस्त्रपातैर्विभेदयेत्।
सायप्रातः सैनिकाना कुर्यात्संगणनंनृपः॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पँजाब और खांड का व्यसाय

लेखक-श्रीयुत् रामजी नरायन डी. यस. सी.

[२]

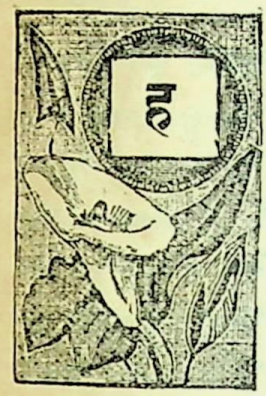

म अपने पिछले लेख में बतला आये हैं कि किन दो उपायों से हमारे प्रान्त में गन्ने की उपज और उन के प्रकार में उन्नति हो सक्ती है। आज हम तीसरे उपाय के विषय में कुछ कहेंगे जिस से कि खांड के व्यवसाय में फलदायक वृद्धि हो सके।

(३) खाँड बनाने की विधि में उन्नति--

जिन पुराने तरीकों से हमारे प्रान्त में अथवा सारे देश में ऊँख से खांड बनाई जाती है वह कदापि इस व्यवसाय की उन्नति के कारण नहीं होसक्ते। इन पुराने तरीकों के अवलम्बन से खांड का जो ह्रास होता है वह आश्चर्य्य जनक है और इस को विचार में लाते ही हमें पता लग जाता है कि क्यों ज़िमीन्दार लोग ऊँख की खेती को छोड़ते जाते हैं। जिस कार्य्य से लाभ न हो उसे कौन करेगा? यही कारण है कि गन्ने बोई हुई भूमि का क्षेत्र फल प्रतिवर्ष कम होता जा रहा है। अधिक परिश्रम और अधिक समय देने पर भी प्रतिएकड़ गुड़ की उपज इतनी थोड़ी है कि ज़िमीन्दार लोग स्वभाविकतया ही कपास और अन्य ऐसी ही लाभदायक फसलों को गन्ने की अपेक्षा अधिक चाहते हैं। परन्तु यदि उन्हें क्रियात्मक रूप से यह समझा दिया जा सके कि केवल खाँड बनाने के तरीकों में ही उन्नति करने से उन की बचत (net) आमदनी ३५ से ५० प्रति शतक बढ़ सक्ती है तो अन्य फ़सलों से स्पर्धा का भय आप से आप बहुत कुछ कम पड़ जावेगा।

पुराने तरीक़े से खाँड बनाने में जो खाँड का नुकसान होता है वह दो प्रकार से होता है; (१) रस निकालने में और(२)रस से गुड़ अथवा खाँड बनाने में।

(१) जहां कहीं भी पुराने दो बेलने वाले लकड़ी के यंत्र से काम लिया जाता है गन्ने का सारा रस नहीं निकल सक्ता और इस का एक बड़ा भारी भाग पीछे फोक में रहजाने के कारण घाटा होता है। तीन बेलने वाले यंत्र से जो कि नाहन यंत्र के नाम से प्रसिद्ध है कोई २० प्रति सैकड़ा नुकसान होता है। नीचे दी ही हुई तालिका से पता लगेगा कि भिन्न २ ज़िलों में इन यंत्रों से कितना रस निकलता है -

(क) पुराने लकड़ी के यंत्र से

ज़िला	रस प्रति सैकड़ा जो निकाला जा सक्ता है
करनाल	४२
गुरुदासपुर	५०
सियालकोट	५०
होशियारपुर	५०
जालन्धर	५१

लैहमैन के कथनानुसार इन यंत्रों से २० से ३३ प्रति सैकड़ा रस फोक में ही रह जाता है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस का अभिप्राय यह है कि हमे खाँड की प्राप्ति में पांचवें हिस्से का टोटा पड़ता है।

(ख) नाहन के यन्त्र से

क्लार्क और ऐनट के मतानुसार इस यंत्र की कार्य्य क्षमता (efficiency) इस प्रकार है।

नाम गन्ना	प्रति सैकड़ा रसकी प्राप्ति
धौलू	५६·६
काठा	५६·७
कान्सर	६१·५
तरेड़	५८·०
काहू	६५·४
पौंडा	६५·३

इस प्रकार रस की प्राप्ति ५६ से ६७ प्रति शतक तक है और सुक्रोज़ (Sucrose) निकालने में यंत्र की क्षमता ७१ से ८७ % तक है अथवा यों कहिये कि औसत क्षमता ८० % से कम है।

इस प्रकार जो आज कल हमारे प्रान्त में रस निकालने के सब से बढ़िया तरीके हैं उन से भी २० प्रति शतक शुद्ध खांड का नुकसान होता है। इससे यह स्पष्ट है कि हम को भारी यंत्रों का प्रयोग करना चाहिये जो कि गन्ने को भली प्रकार निचोड़ सकें। परन्तु यहां पर एक और रुकावट का मुक़ाबला करना पड़ता है। हमारे ज़िमीदारों के पास केवल बैलों की ही शक्ति है जिसे वह यंत्र चलाने के काम में ला सक्ते हैं, और यह एक ऐसी शक्ति है जिससे कि नाहनी यंत्र भी सुगमता से नहीं चलता। कई वार इस के पेंच ढ़ीले करने पड़ते हैं और उससे इसकी क्षमता कम पड़ जाती है। फिर इससे भारी यंत्रों की कौन कहे? गीयरलिग (Geerlig) के कथनानुसार जावाद्वीप में इन गन्नों से जिन में कि ११—१२ % फोक होता है ९१ प्रति शतक खांड निकाली जाती है और कोई १२% खांड पेरे हुये रस १९०८–०९ १९०९–१० १९१०–११ की औसत ५९·७ % ६२·५ % ६३·१ %

गुरुदासपुर के गन्नों के साथ इस यंत्र की क्षमता निम्न लिखित है:—

फोक	यंत्र की क्षमता
२०·६	८१·२
२३·५७	७९·८
१८·३३	८४·१
१९·३२	७८·३
१३·५४	८०·५
१०·६०	७४·०

पीछे फोक में रह जाती है। एक साधारण ३ वेलने वाले यंत्र से जो कि बैलों से चलाये जाते हैं ८ प्रति सैकड़ा फोक वाले गन्नो में से (और जिनमें ८९·३ प्रति सैकड़ा रस हो) हमारे किसान अधिक से अधिक सुविधा वाली अवस्था में केवल ७४·९ प्रति सैकड़ा रस निकाल सक्ते हैं। परन्तु ३ वेलने वाले यंत्र से बैलों के स्थान में भाप वाली मैशीनरी द्वारा (Krejewski crusher) निचोड़ने से और पीछे फोक को पानी में धो लेने से ८६·९ प्रति सैकड़ा रस निकल सक्ता है। परन्तु जब गन्नों में फोक की मात्रा १५ प्रति शतक हो जाय तो बैलों से ५३% रस निकलेगा और भाप द्वारा चलने वाले यन्त्र से ७५·५ प्रति सैकड़ा। इससे यह स्पष्ट हो गया कि उन गन्नों से जिनमें कि फोक की मात्रा अधिक है (जैसा कि आज कल प्रायः हमारे प्रान्त के गन्नों में है) कम फोक वालों की अपेक्षा बैलों से रस निकालने पर हमें बहुत हानि होती है। हल्के यंत्र से रस कम निकलता है अतः भारी यंत्र चाहिये परन्तु भारी यंत्र बैलों द्वारा चलाऐ नहीं जा सक्ते, अतः भाप यंत्र का प्रयोग करना पड़ेगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Sarayan Foundation USA

आज कल संयुक्त प्रान्त की सरकार ने पीलीभीत में रस निकालने की ऐसी मेशीन लगाई हुई है। वहां पर १९१६ में पेरे हुये रस की औसत ६४. ८ % थी और यंत्र की क्षमता ८५. ३४ ॥

(२) रस से गुड़ अथवा खांड का बनाना।

हमारे पुराने तरीके के अनुसार रसको खुले चपटे पेन्दे वाले कड़ाहों में उबाल कर गाढ़ा किया जाता है और फिर गुड़ बनाया जाता है परन्तु इस में दो प्रकार से खांड का ह्रास होता है। एक तो अधिक आंच लगने से खांड के जलने से और दूसरे तेजाब के खाँड पर असर से (जो कि सदा गन्ने के रस में रहता है) सुक्रोज (Sucrose) के ग्लूकोज (Glucose) और फ्रक्टोज (Fructose) में बदल जाने से। हम अपने पहिले लेख में कह आये हैं कि खाँड शुद्ध सुक्रोज ही होती है । रस का जितना अधिक ताप होगा उतना ही तेजाब का अधिक असर होगा और अधिक खांड का ह्रास होगा। हमारे जिमीन्दार खाँड के तेजाब को मारने के लिये किसी वस्तु का प्रयोग नहीं करते। वार्न्स (Barnes) साहब ने अनुमान लगाया है कि रस निकालने से लेकर गुड़ बनाने तक गुरुदासपुर ज़िले में आधी के लगभग (३४ प्रति सैंकड़ा से ५७ प्रति सैंकड़ा तक) खांड हमारे हाथों में आकर निकल जाती है। पीलीभीत के कारख़ाने में रस को खुले कड़ाहों में गाढ़ा न करके भाप द्वारा गर्म किये Film evaporator (जिस में कि बहुत थोड़ासा रस बड़ी पतली झिल्ली के रूप में बड़े स्थान में फैल जाता है) में गाढ़ा किया जाता है। इससे न केवल यही कि आंच रस के साथ सीधा नहीं मेल खाती और इस प्रकार उसको जला नहीं सक्ती वरन् बहुत थोड़े रस की बहुत बड़ी झिल्ली बनने से वह बहुत शीघ्र गाढ़ा पड़ जाता है । मिस्टर हुल्मे जो कि इस कारखाने के अध्यक्ष हैं वह कहते हैं कि इस उन्नत तरीकों से खांड की उपज ७½ मन प्रति एकड़ के स्थान में ६४ मन प्रति एकड़ करी जा सक्ती है ॥

पाठकों के मन में यह भाव अवश्य आवेगा कि इन उपायों का प्रयोग तो केवल बड़े २ कारखानों द्वारा ही हो सक्ता है । यह साधारण जिमीन्दार की शक्ति से सर्वथा बाहर है। इस प्रकार खांड का बनाना एक घरेलू व्यवसाय Cottage industry नहीं रह सक्ता जैसे कि आज तक रहा है। यह बहुत हद तक ठीक है। परन्तु यदि कुछ ज़िमीन्दार लोग मिल कर बहुत छोटे कारखाने बना लें जिन में कि गन्नों को निचोड़ने और खांड के बनाने का काम आधुनिक वैज्ञानिक तरीकों द्वारा किया जावे तब भी बहुत लाभ हो सक्ता है। इस सहकारि-रीति पर काम करने से उन की अपनी आमदनी भी बढ़ सक्ती है और देश को भी लाभ पहुंच सक्ता है। एक और बड़ी रुकावट है जो कि हमारे प्रान्त की कृषी सम्बन्धी स्थिति के कारण है। इस प्रान्त में छोटे २ ज़िमीन्दार हैं जिनकी धरती की पूंजी भी बहुत थोड़ी २ है और वह भी भिन्न स्थानों में दूर २ फैली है, अतः उनके लिये किसी भी बड़े Scale पर काम करना दुष्कर है। पंजाब में कोई खांड का बड़ा कारखाना इस लिये भी नहीं खुल सक्ता कि गन्नों के खेत छोटे होने के अतिरिक्त दूर होने से उस में प्रति दिन की आवश्यक्तानुसार निचोड़ने और खांड बनाने के लिये पर्य्याप्त राशि में गन्ने नहीं पहुंच सक्ते। और मशीनों से यदि पूरा काम न लिया जाय तो वह सदा ही हानि जनक सिद्ध होती हैं। तो फिर क्या हमारे प्रान्त में खांड के व्यवसाय का भविष्य अन्धकार मय है ? यदि अवस्था

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri

यही रही जैसी कि अब है तब तो इस प्रश्न का उत्तर हां में ही होगा परन्तु यदि सरकार और प्रजा दोनों मिल कर वास्तव में यत्न करें तो उन्नति की आशा है। आर्थिक स्थिति सुलभ बना कर, कृषी की अवस्था को उन्नत करके, धन से कारखानों, जिमीन्दारों की सहायता करके और उन्हें आधुनिक experts की सुसम्मति प्रदान करे तो इस ओर सरकार बहुत कुछ कर सक्ती है। यदि सरकार बिना कर के अधिक मात्रा में पानी देकर और अन्य तरीकों से जिमीन्दारों को उत्साहित करे तो वह गन्ने की खेती में बड़ा भाग ले सक्ती है। पँजाबी जिमीन्दार स्वभाव से बड़े परिश्रमी और मेहनती होते हैं। यदि मेहनत करने पर उन्हें पर्य्याप्त फल मिले तो वह इस से कभी नहीं घबराते। अतः इस व्यवसाय की उन्नति बहुत कुछ सरकार के हाथ में है॥

इस के अतिरिक्त एक और भी उपाय खांड के व्यवसाय को बढ़ाने का है और वह चुकन्दरों से खांड बनाना है। हमारे पहाड़ी स्थलों में इसकी खेती बड़ी सुगमता से की जा सक्ती है। काश्मीर और लायलपुर में किये हुये तजरुबों से यह पता लगा है कि हमारे प्रान्त में ऐसे चुकन्दर पैदा हो सक्ते हैं जो कि मीठेपन में जर्मनी और आस्ट्रिया के चुकन्दरों से किसी अंश में कम नहीं। उन से रस निकाल कर हम न केवल अपना ही पेट भर सक्ते हैं वरन औरों को भी दे सक्ते हैं। इस ओर अभी और अधिक तजुरुबे करने की आवश्यक्ता है। हमें पूर्ण आशा है कि पंजाब सरकार और भारतीय सरकार इधर अवश्य ध्यान देगी॥

भ्रम-निवारण।

लेखक—"चित्र गुप्त"

(१)

अहह! सत्य के समान सरल और सुगम और सत्य के समान जटिल और दुर्गम वस्तु और कोई नहीं है। किसी ने सच कहा है कि सब से बड़े विचार सब से अधिक साधारण होते हैं, जब वह विचार समझ में आजाते हैं तब अचरज इसी बात का होता है कि ये हम को पहिले क्यों न सूझे। इनको तो हम पहिले ही से जान सकते थे। यह आश्चर्य वैसा ही है जैसा कि एक सज्जन को अपने एक मित्र से यह सुनने पर हुआ कि लोग बात चीत गद्य में ही किया करते हैं। सच तो यह है कि चाहे लोगों को अच्छा लगे या बुरा लगे सत्य को तो हमी लोगों ने झूठ बना दिया है। यदि हमें साफ़ २ कह देने से (स्पष्ट वादित्व) लोगों के बुरा मानने का गुमान भी न हो तो हम बात चीत में शक्कर लगी हुई गुलेन्दा की गोली क्यों दें? हमीं लोगों ने प्रिय

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वादित्व का लक्षण झूठा और खेंचतान कर बढ़ा दिया है। यदि हमने न किया तो हमारे भाइयों ने कर दिया और इसका फल राजनैतिक क्षेत्र में प्रेस एक्ट (Press Act) सिडीशस मीटिंग्स एक्ट (Seditious Meetings Act) इत्यादि इत्यादि के सिवा और क्या होना था? कहने का यह मतलब नहीं कि सब हमारा ही कसूर है और हम हाथ पर हाथ धर "मार्शल ला के तौबा घर"*में अपने किए पर पछतायें। किन्तु सत्य की कसौटी पर सब तरह के खोट की परख होनी चाहिए। बाहर से चमकते हुए रंग से ही अच्छे बुरे का ज्ञान नहीं होसकता। आजकल के सांसारिक प्रश्नों को इसी बाहर की चमक ने, शब्दों की दिखावटी मिठास ने, और एक दूसरे की नकली तारीफ़ के मुहाविरों ने, उन लोगों को और उन राष्ट्रों को छोड़कर जिन का इनसे मतलब बनता हो अन्य सब लोगों के लिए कठिन कर दिया है। पर यह बात सदा याद रखनी चाहिए कि अभी संसार में स्वार्थ की मात्रा कम होने पर नहीं आई है और न जल्दी होने की अभी आशा ही दिखाई देती है।

(२)

न जाने मुझे क्यों कभी २ पूर्वजन्म की स्मृति सी होजाती है। मुझे ऐसा मालूम होता है कि मैंने कभी अनेक शास्त्रों का अनुशीलन किया हो। न्याय, तर्क, मीमांसा, नीति, धर्मशास्त्र सब का मन्थन किया हो पर किसी विषय पर निश्चय नहीं होता था। छुटपन में जब मैं पढ़ता था तब मेरे गुरुदेव मुझे 'संशयात्मा' कहा करते थे। कभी २ मेरी स्वच्छन्द दुराग्रह और पक्षपात रहित सत्य की जांच के लिए वैज्ञानिक दृष्टि को सराहा भी करते थे, पर मुझे सत्य किसी एक स्थान में नहीं मालूम होता था। जो कोई शास्त्र कर्त्ता एक सिद्धान्त लिखता, मुझे उसमें भी सत्य प्रतीत होता था और उसके खण्डन कर्त्ता में भी और तो क्या मुझे सत्य और असत्य का जो भेद लोग बतलाते थे उसमें भी संशय होता था। गुरुदेव पढ़ाते समय जो ज्ञान विज्ञान के तत्व समझाते उस समय तो वह खरा सोना दिखाई देता था पर कुछ ही काल के लिए। अनन्तर उन तत्वों में संशय का कीड़ा लग जाया करता था और दूसरे पक्ष के सत्य की गंध आने लगती थी। गुरु जी ने कई वार "संशयात्मा विनश्यति" की धमकी दी थी पर मुझे तो "आस्ति नास्ति" का चसका पड़ गया था चाहे इसमें मन को शान्ति न मिलती हो। शान्ति दूर रही—मुझे याद आता है कि जब किसी प्रश्न को सोचते २ आकाश के तारों की ओर टकटकी लगाए सच्चे निर्णय के लिए पड़ा २ छटपटाता था तो मालूम होता था कि अन्दर से कोई वस्तु फटना ही चाहती है—पर इसका अनुभव तो उन्हें ही होगा जिन्हें स्वयं सोचने का कष्ट उठाना पड़ा हो। लकीर के फ़कीर, औरों की कही हुई बातों को वेदवाक्य मानने वालों को, औरों की सम्मति के आगे अपनी बुद्धि का बलिदान करने वालों को, औरों के मतों को निमन्त्रित ब्राह्मण की तरह खीर को चुप चाप कण्ठ के नीचे उतारने वालों को, भूखे मजदूर के सूखे टुकड़े चबाने का अनुभव कहां! उनकी दृष्टि में तो यह केवल गल्प कवि की कपोल कल्पना मात्र होगी, अस्तु। फिर जब दूसरे दिन गुरुदेव के आगे

* आशय उस बात से जो कि मार्शल ला के बाद चूहड़खाने में वोसबर्थ स्मिथ ने एक तोबाघर बनवाने की तजवीज़ की थी जहां पर सब हिन्दोस्तानी जाकर प्रायश्चित किया करें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

अपना दुखड़ा रोता तो हँसकर उत्तर देते "घबड़ाओ नहीं, सत्य सरल तो है पर हम लोगों ने वाग्जाल फैलाकर, सांसारिक प्रपञ्च रचकर विषय समूह को बढ़ाकर अपनी दृष्टि को बहुत ही अधिक विस्तीर्ण कर दिया है। सत्य के लिए आवश्यक है कि असंगत व्यर्थ बातों को निकाल दें और अपनी बुद्धि को एक ही स्थल पर एकत्र करें। इसके लिए आत्म संयम, अनुभव और सब नियमों का परिचय होना ज़रूरी है। तिस पर भी सत्य का निर्णय बैठे २ नहीं हो सकता। सच तो यह है जैसा कि एक ज्ञानी ने कहा है कि संशय का उपाय कर्म है, बिना विचार को कार्य में लाए, उस विषय के सन्देह दूर नहीं हो सकते। पर निराश मत हो, यह सब समय पाकर होता है, जो अवस्था तुम्हारी है यह प्रत्येक जिज्ञासु की किसी समय रहती है, इस अवस्था का अल्प वा अधिक काल के लिए रहना ईश्वराधीन है"।

गुरुदेव की वह बातें अब मुझे सत्य जान पड़ती हैं। जिन साधारण बातों को उस समय निश्चय ही नहीं कर सकता था अब अनुभव से झट वह समझ में आने लग पड़ीं किन्तु जितना २ अनुभव बढ़ता जाता है साथही साथ प्रश्न भी जटिल होते जाते हैं। अब मेरे सन्मुख आजकल के संसार को डांवांडोल करने वाले सभी प्रश्न एक २ करके उपस्थित होते हैं और यथावकाश मैं घंटों उन के सिद्ध करने में मग्न रहता हूं। कभी २ मैं उनके सुलझाने की और कोई तरकीब न देख कर अपने पुराने स्वर्गवासी गुरुदेव का स्मरण किया करता हूं कि यदि इस समय वह उपस्थित होते तो इन प्रश्नों को कैसे सिद्ध करते।

(३)

रात्रि का समय है। अभी भी दुनयवी झंझटों से फुर्सत नहीं मिला है और फुर्सत भी मिली तो और चिन्ताओं ने आ नींद को दूर भगाया। प्रातःकाल मवक्किलों ने आ घेरा, फिर कचहरी में ऊंघते हुए जजों को चिल्लाकर सत्य की दुहाई दी, सच्चों को सज़ा और झूठों को रिहाई दी, फिर स्वदेशी कोपरेटिव सेन्ट्रलस्टोर्स (Swadeshi Coperative Central Stores) की प्रबन्धकारिणी कमेटी में इन्तिज़ाम की गड़बड़ी और सालाना नुकसान पूरा करने के लिए प्रस्ताव पेश किए, हंटर रिपोर्ट के प्रतिवाद के लिए स्पेशल कान्फरेंस के प्रबन्ध का दोस्तों से सलाह मशविरा किया: नेता कहलाने के लिए रेल की हड़ताल हटाने को बीचबिचाव के लिए व्यर्थ दौड़धूप की: फिर समाचार पत्रों में लार्ड कर्ज़न की ईरान को गला घोटने की नीति को, इंगलेण्ड के मिश्र देश को हडप कर वहां के देश में मियो को अराजक विद्रोही पदों से विभूषित कर दमन करने को आयरलेण्ड में दिन दहाड़े खून डाक होने पर भी मार्शल-ला से काम न लिए जाने को, और कलकत्ते के बृटिश एसोसियेशन के हण्टर कमिटी के तिरस्कार को (इसलिए कि उन्होंने (दो तीन) अंगरेज़ों की नीच जघन्य घृणित हत्या को केवल अपने कर्त्तव्य पालन के कारण अनिवार्य घटना से देशियों की मृत्यु को एकसा ही समझ कर एक ही स्थान पर बुरा कहा है) पढ़ कर मृत प्राय मेरे भारतीय शरीरमें भी हरारत की तेज़ी होगई और सोचने लगा कि इन घटनाओं का तत्व क्या तर्क से नहीं निकल सकता। मैं दोनों पक्ष के मतों को न्याय दृष्टि से तौलूंगा। इस बात को भी भूल जाऊंगा कि मेरा किसी पृथ्वी के टुकड़े से संबन्ध है, उससे प्रेम है। अचानक वही पूर्वजन्म की स्मृति जागृत होगई और उसके बाद ही झट मुझे गुरुदेव का और उनके उपदेश का स्मरण हो आया और मैं विचार सागर में मग्न हो गया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(४)

सोचते २ कुछ आंख सी लग गई तो देखता क्या हूं गुरुदेव उसी शान्त प्रसन्न निश्चल भाव से मेरे सन्मुख आ खड़े हुए और हंसकर पूछने लगे क्यों संशयात्मन्! का अब भी सत्य का निर्णय होरहा है। मैंने मानों हाथों चांद पाया। उठकर भक्तिभाव से प्रणाम कर निवेदन किया गुरुदेव आपके दर्शन बड़े भाग्य से हुए हैं, कुछ ईश्वर की प्रेरणा ही है। संसार में आजकल जिधर देखिए उधर ही अशान्ति फैल रही है और प्रश्न ऐसे कठिन होगए हैं कि उन का कूल किनारा नहीं लगता। जितना निष्पक्ष-भाव से देखते हैं उतना ही बुद्धि के बाहर जान पड़ता है। आयरलेण्ड में विप्लव मचरहा है। मिश्र देश के निवासियों में खलबली सी पड़ी है। अरब देश में भी मित्र राज्यों के सन्धि निर्णय से असन्तोष बढ़रहा है, ईराक में [Mesopotamia] भी अशान्ति है, ईरान अपनी स्वतन्त्रता खो रूस से आत्म रक्षा के लिए दर २ भीख मांगरहा है। रूस चीन जापान कोरिया ऐसा कोई भी देश न मिलेगा जहां अमन चैन हो और लोग शान्ति से देश की उन्नति कर सकें। एक ईरान को ही ले लीजिए, शाह यूरोप की सैर कर आते हैं, बड़ी स्पीचें दावतें होती हैं और सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर भी हो जाते हैं तिस पर भी लार्ड कर्जन का कहना यही है कि हमें छोटे राज्यों की स्वतन्त्रता की रक्षा करने का भार उठाना ही पड़ेगा। इस संग्राम में सिद्धान्तों का विजय हुआ है और हमें उनका पालन करना है चाहे हमें हानि ही हो। गुरुदेव! समाचार पत्रों से किसी एक बात का निर्णय नहीं हो सकता कोई बुरा कहता है, दूसरा उस का प्रतिवाद करता है॥

गुरुदेव—तुम्हारे इन प्रश्नों से सन्तोष असन्तोष दोनों ही होते हैं—यह तो ठीक है कि अब शिक्षित भारतवासी और देशों के वृत्तान्त से परिचित होने लगे। इससे उन्हें अपने देश के प्रश्नों के लिए सहायता और शिक्षा मिलेगी पर उन्हें इन बाहर की घटनाओं को इतने महत्वका न समझना चाहिये। संसार भर के लिए प्रेम का होना और मनुष्य मात्र के लिए चिन्तित होना बड़ा ऊंचा आदर्श है; किन्तु इस देश में इतने ऊंचे आदर्श कुछ आवश्यकता से अधिक हैं। मैं इन्हें बुरा नहीं समझता। चाहे इन से तत्काल फल प्राप्ति न हो पर इनसे अदृश्य रूप से सभ्यता की पुष्टि होती है; किन्तु आजकल की दशा देखते हुए जरूरत इस बात की है कि जिससे जो कुछ जहां जिस प्रकार बन पड़े कुछ अपने पड़ोसियों के लिए करे और अपने कार्य के क्षेत्र को अपनी योग्यता के अनुसार धीरे २ बढ़ाए। ऊंचे विचार रखना बहुत अच्छा है पर केवल ऊंचे विचारों से ही स्वर्ग नहीं मिल जाता है इस लिए उचित तो यह है कि जो कर्त्तव्य आंख के सामने हो और जिसे कर्त्तव्य समझो इसे झटपट पूरा करने को यत्न करो और केवल विचारों ही में न पड़े रहो। रही संसार की अशान्ति—यह तो स्वाभाविक ही है अपने स्वार्थ के लिए एक दूसरे के गले काटने के लिए तैयार हो जाना और ऊंचे सिद्धान्तों की दुहाई देते हुए निर्बल जातियों की रक्षा का बहाना कर 'मान न मान मैं तेरा मिहमान' बन कर उन पर अधिकार जमा लेना शान्ति स्थापन का मार्ग नहीं है। व्यर्थ—मीठे २ शब्दों के प्रलोभन में मत पड़ो। यूरोप की जातियों का मूल-मंत्र है स्वार्थ और उसके साधक हैं व्यापार और कूटनीति जिसको शब्दों का लुटेरापन कहना चाहिए, और अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए उन्हें न्याय अन्याय कुछ नहीं सूझता। उनकी दृष्टि में आना मतलब बिगाड़ना ही अन्याय है। यदि वे जो कुछ करें साफ २ करें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तो किसी को कुछ आपत्ति नहीं पर यही सिद्धांतों का आडम्बर, उदार भावों की घोषण, परोपकार का बहाना कटे पर नमक लगाना है। ईरान भारत का दरवाजा है, इसकी स्थिति ही ऐसी है कि इस पर अधिकार रखना भारत की रक्षा का अंग है और इस बात को समझाने की आवश्यकता नहीं कि भारत की रक्षा करना 'श्वेत जातियों के भार' के सिद्धान्त के अनुसार एक पुरानी सभ्यता की धरोहट को बचा रखना और वहां के निवासियों को शिक्षित उन्नत कर चैतन्य बना देना है। दूसरा कारण यह है कि टर्की के तहसनहस करने से इस्लाम में खल-बली मची है उसको रोकने के लिए स्वतंत्र मुसलमान राज्य पर आर्थिक और सैनिक अधिकार आवश्यक है और हाथियाए हुए ईराक देश की उन्नति तभी हो सकती है जब सरहद से कोई खटका न हो। और उसकी उन्नति करने के भार उठाने का मुख्य कारण यही है कि वहां है तेल। धीरे २ कोयला कम हो रहा है और कोयला अब इंजिन इत्यादि चलाने के लिए शक्ति पैदा करने में उतना अच्छा भी नहीं समझा जाता और यह भी एक कारण हो सकता है कि वहां से भारतवर्ष की रक्षा का सुभीता हो जाय और यह देश शीघ्रही स्वतन्त्रता की सीढ़ियां चढ़ एक स्वयं शासक उपनिवेश की पदवी को पहुंच जाय। और देशों की दशा भी इसी नीति के कारण हुई है। मैं त्रिकाल-दर्शी भविष्य-वक्ता तो हूं नहीं पर हां घटना समूह, और विचार शक्तियों के प्रवाह को देखते हुए कहा जा सकता है कि कोरिया का कुछ वर्षों के लिए तो भविष्य वही है जो इसदेश का है। चीन विलक्षण देश है। अभी अंगड़ाई ही लेरहा है। उसे अपने घर के झगड़ों से ही फुर्सत नहीं पर अब वह विदेशियों के हथकण्डे न चढ़ेगा। यही हाल रूस का है, किन्तु वह अपने विस्तृत देश को एक शासन के अधीन नहीं रखसकता। संभव है कि उसदेश के आजकल के नेताओं में से कोई एक वहां अमेरिका के संयुक्त राज्यों की भांति शासन की नीव रखे। अभी संग्राम समाप्त नहीं हुआ है, जर्मन देश में अभी बदले की नियत है। सांपकी दुम ही कटी है और मुंह कुचला गया है पर ज़हर नहीं गया। समय पर इसका प्रभाव फैलेगा किन्तु यह प्रभाव संहारशक्ति में ही नहीं किन्तु वैज्ञानिक और व्यापारिक उन्नति में प्रगट होगा। इस विषय का अमेरिका के राजनैतिक प्रवाह से बड़ा सम्बन्ध है और इस को अच्छी तरह समझने के लिए—

हैं यह क्या? कोई पुकारता है!। (बाहर से) बाबू जी! बाबू जी! तार लेलेना—मैंने झट बाहर जाकर तार ले लिया खोला तो मालूम हुआ परसों मुलतान की जजी में पेशी की सूचना एक मुवक्किल ने दी है। मुझे तार वाले पर बड़ा रोष हुआ कि उसने मेरा स्वप्न भंग करके मुझे गुरुदेव की सुनिश्चित सम्मति जानने से वञ्चित कर दिया। पर अब पश्चात्ताप से क्या अस्तु, मैं अपने दिल को अन्य कार्य्यों में लगाने लगा॥

———

हमारी मंजूषा।

(१) उपदेश रत्नमाला—द्वितीय संस्करण, लेखिका एक जैन महिला, प्रकाशक कुमार देवेन्द्र प्रसाद जैन प्रेम मन्दिर आरा, पृष्ठ संख्या १३६, मूल्य ॥), छपाई कागज इत्यादि बहुत सुन्दर हैं। इस पुस्तक में कन्या उपयोगी अनेक विषयों पर बड़ी मनोहरी, सरल, सुलभ भाषा में विस्तार पूर्वक शिक्षा दी है। कहीं २ पर उदाहरण रूप छोटी २ घटनायें भी दी हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कहीं २ पर सम्भव है लेखिका के विचार से सर्व जनता सहमत न हो, परन्तु इस से पुस्तक की उपयोगिता कम नहीं होती। जैन महिला ने यह पुस्तक लिखकर हिन्दी संसार पर बड़ा उपकार किया है। छोटी २ कन्याओं के लिए ऐसी बहु मूल्य पुस्तकों की बड़ी आवश्यक्ता है।

(२) सौभाग्य रत्नमाला—लेखिका श्रीमती चन्दा बाई जैन। यह पुस्तक भी कुमार देवेन्द्र प्रसाद द्वारा ही प्रकाशित हुई है और उन्हीं से मिलती है। लिखाई छपाई बढ़िया भाषा ललित और सुन्दर। यह पुस्तक युवतियों के उपकारार्थ प्रकाशित की है। इसमें उत्तम २ नौ निबन्ध हैं जो कि स्वच्छ मोतियों की लड़ियों के सदृश लेखका माला रूपी सूत्र में गून्थे है। पुस्तक में जो उपदेश दिये गये हैं वह सर्वथा सराहनीय है। और हम आशा करते हैं कि हमारी बहिनों के लिये यह उपयोगी सिद्ध होगी। मूल्य ॥)

(३) बालिका विनय—यह एक छोटी सी सुन्दर चिकने कागज पर छपी हुई कन्याओं के उपयोगी भजनों और प्रार्थनाओं की पुस्तक है। मूल्य =), यह भी प्रेम मन्दिर आरा से ही मिल सक्ती है।

(४) गुप्त सन्देश—लेखक डाक्टर युदुवीर-सिंह। यह एक छोटीसी ६४ पृष्ट की स्त्री उपयोगी या यों कहिये कि समस्त माताओं, विवाहिता देवियों तथा उन कन्याओं के लिये जिनकी अवस्था परिपक्व है या विवाह अति निकट है बड़ी ही उपयोगी पुस्तक है। गृहस्थ पुरुष भी इसे पढ़कर बड़ा लाभ उठा सक्ते हैं। आज कल प्रायः समस्त भारत ललनायें किसी न किसी प्रकार के आन्तरिक रोगों से पीड़ित रहतीं, युवती कन्याएं स्व-शरीर सम्बन्धी अज्ञानता से कई रोग लगा लेती हैं किन्तु लज्जावश कुछ नहीं कहतीं और न माता पिता ही कुछ शिक्षा दे सक्ते हैं, यदि इस प्रकार की पुस्तकों को पढ़ें तो अज्ञानता दूर होकर कई रोगों से बच सक्ती हैं। यदि लेखक महाशय इसमें चित्र भी दे देते और ज़रा लिखाई छपाई अच्छी कर देते तो सोने में सुगन्ध का काम देती। आज कल संसार अभ्यन्तरीय गुणों के साथ २ बाह्य रूप रंग को भी चाहता है। मूल्य ॥), दी अपर इन्डिया होमियोपैथिक, फार्मेटिकल वकर्स चांदनी चौक, दिल्ली से मिल सक्ती है।

(५) इन्डियन नेशनल कांग्रैस द्वारा स्थापित कमीशन की अंग्रेज़ी रिपोर्ट का उर्दू अनुवाद।

पंजाब में गत वर्ष जो दंगा फसाद हुआ था और जिसको खुलमखुला राज विद्रोह का नाम देकर सरकार ने मार्शल ला जारी किया उन्हीं घटनाओं के निर्णय करने के लिये सरकार की ओर से हन्टर कमेटी की नियुक्ति हुई थी। हन्टर कमेटी के प्रजा के प्रतिनिधियों को अपना बयान देने में पूरी सुविधा देने से इन्कार करने पर कांग्रैस ने अपनी एक सब-कमेटी द्वारा गत वर्ष हुई २ सब घटनाओं की जांच कराई थी। कमेटी की अंग्रेज़ी रिपोर्ट का उर्दू अनुवाद प्रकाश कर म० लाजपतराय और पृथवीराज साहनी पुस्तक विक्रेता लाहौर ने उर्दू जानने वाली जनता पर बड़ा उपकार किया है। पुस्तक में मार्शल ला सम्बन्धी १५ चित्र भी हैं। और ३०० पृष्ट पर समाप्त हुई है, मूल्य ३) रु० है पर यह अधिक मालूम होता है। प्रकाशक से प्राप्त हो सक्ती है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुसुमोद्यान

आर्य्यसभ्यता।

जून मास के वैदिक मैगेज़ीन में प्रिंसपल वास्वानी यम. ए. का लेख है जिसमें वह वर्णन करते हैं कि बड़े खेद की बात है कि सामाजिक शक्तियों पर जिन २ पाश्चात्य तत्व-वेत्ताओं ने विचार करके परिणाम निकाले हैं उनमें केवल पाश्चात्य देशों की दशा के अवलोकन से ही निकाले जाने के कारण कई अशुद्धियां रह गई हैं। वह परिणाम सर्व कालीन और सार्वदेशीय नहीं कहे जा सके। हीगल, कौन्टे, बकिल, डारविन, किड, स्पेन्सर, शेफ़ल और पियरसन जैसे योग्य तत्व-वेत्ताओं के परिणाम में अशुद्धियां निकालना कठिन नहीं है। वास्वानी महाशय अपने इस महत्व पूर्ण लेख में दो चार उदाहरण योरुप के तत्व-वेत्ताओं के ज्ञान के विषय में देकर यह सिद्ध करते हैं कि उन्हें दीर्घदर्शिता द्वारा परिणाम निकालने की शक्ति न थी वरन् सामने की रक्खी हुई वस्तुओं से ही मनमाना परिणाम निकालते थे। जब शेलिंग ने कहा था कि "ईसाई मत ही सर्व इतिहास का केन्द्र तथा कुंजी है" उसे संसार के अन्य बड़े २ मतों का कुछ भी परिज्ञान न था। जब हीगल ने कहा था कि "संसार के इतिहास में योरुप अन्तिम सीमा का प्रतिनिधि है" तब उसे अमेरिका की वृद्धि का ज्ञान न था। पुनः हीगल ने कहा कि "एशिया के राज्यों का योरुपियन के आधीन रहना अनिवार्य्य है" परन्तु शोक कि हीगल महाशय वह दिन देखने तक जीवित न रहे जब कि जापान ने योरुपियन शक्ति को बड़ी बुरी तरह पछाड़ा। इसी प्रकार कितने ही उदाहरण दिये जा सके हैं। कहा जाता है कि एक अंग्रेज़ महाशय कैले में एक सराय में ठहरे जहां की नौकरानी के कूबड़ निकला हुआ था और लाल बाल थे आपने झट जाते समय अपनी डायरी में नोट लिख मारा कि "फरांसीसी स्त्रियों के लाल बाल होते हैं और वह कुबड़ी होती हैं" क्या यह कहानी एक मखौल है? नहीं, भारत तथा पूर्वीय देशों के विषय में पाश्चात्यों द्वारा जो विना सोचे विचारे परिणाम पुस्तक बद्ध कर लिये जाते हैं उन्हीं के मनोभावों को दर्शाने की कुंजी है। पूर्वी तथा पश्चिमी सभ्यता में ज़मीन आस्मान का फ़र्क है। पश्चिम में मनुष्य प्रकृति के विरुद्ध चलने पर बाध्य हैं वहां पर मनुष्य प्रकृति देवी की हतक करके जीवन धारण करते हैं, और एक बड़े वैज्ञानिक प्रोफेसर रे. लैंकेस्टर मनुष्य की बाबत कहते हैं कि वह प्रकृति का विद्रोही है। योरुप की सभ्यता मनुष्यों को शहरों में इकट्ठा करके और परस्पर विग्रह करके उत्पन्न हुई किन्तु आर्य्य सभ्यता प्रकृति देवी की गोद में उत्पन्न हुई। हमारे शास्त्रकर्त्ता मनु महाराज तथा अन्य लोग प्रकृति के साथ एकीभाव से रहते थे। हिन्दू सभ्यता का बल विद्रोह से नहीं उत्पन्न था वरन् वह अन्तःकरण का बल था, हिन्दू सभ्यता के नेता युद्ध करने की भावना वाले न थे वरन् वह बनवासी थे अर्थात् वह जानते थे कि शान्ति के बल में क्या शक्ति है। ईसाई आंगल देश को समुद्र से उत्तेजना मिलती थी, मुसलमान अरब को उजाड़ मरुस्थल से, किन्तु आर्य्य भारतवर्ष को जंगल से। जिन ऋषियों ने भारत को भारत

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बनाया वह वनवासी थे। भारतीय जन कथाओं में भी महल छोड़कर जंगल का ही महत्व वर्णन है।

हिन्दू कवियों के लिये भी प्रकृति-प्रेम भोग नहीं है वरन् एकीभाव है, हर्ष नहीं, बल्कि साधन है, आत्मिक उन्नति और पवित्रता की क्रिया है।

इसी प्रकार आर्य्यों ने सामाजिक स्थिति को जांच के लिये धर्म का आधार रक्खा था वह समाज संगठन के नियम को जानते हुये सामाजिक उत्पत्ति, विभाजन और उपभोग की तुलना शरीर के बलवर्धन, रक्त-संचार और समीकरण से करते हैं किन्तु यह कार्य्य योग्यता पूर्वक नहीं हो सक्ते यदि धर्म के आदर्श से नियन्त्रित न हों।

आर्य्य समाज-शास्त्रवेत्ता मनु, याज्ञवल्क्य प्रभृति ने इस सत्यता का पता लगा लिया था कि जिन झगड़ों से आर्थिक प्रश्न, और चक्कर उत्पन्न हों वह तभी सिद्ध हो सक्ते हैं जब कि इच्छायें धर्म से अथवा सामाजिक-विवेक के नियमों द्वारा नियन्त्रित हों।

धर्म का आदर्श इस सत्यता की पहिचान में है कि त्याग की श्रृंखला ही उन्नति है। डारविन का सिद्धान्त जीवन संग्राम और सर्वोत्तम की जीवन रक्षा ही जीवन का अन्तिम सन्देश नहीं। सामाजिक वृद्धि आत्म-त्याग द्वारा होती है क्योंकि जीवन के अन्तिम परिणाम भौतिक नहीं हैं। धन केवल एक साधन मात्र है और दरिद्रता न तो जुर्म है न पाप। भारत के महा पुरुष महाधनी की अपेक्षा महाबुद्धिमान थे। कालिदास महाराज विक्रम के बाईं ओर बैठा करते थे। बाह्य जीवन का (Standard) परिमाण नीचा था परन्तु आन्तरिक जीवन का परिमाण बड़ा उच्च था और जो लोग आत्म-ज्ञान में रत थे उनका बड़ा मान्य था। सन्यासी लोग व्यवस्थापक सभा के सदस्य होते थे। ऐसे सच्चे सन्यासी जिनकी ज्ञान चक्षु जातीय जीवन के तत्वों को भली भांति जानले और जो इस बात को समझते हों कि धन नहीं वरन् ज्ञान ही से मनुष्य की जांच करनी चाहिये—ऐसे मनुष्यों की आज हमारी जाति को आवश्यकता है।

जापान में अंग्रेज़ी की पहिली मासिक पत्रिका

कलकत्ते के मासिक पत्र कलीजियन (the collegian) के मई १९२० के अंक में जापानियों की अंग्रेज़ी की योग्यता के विषय में लिखते हुये वर्णन किया है कि टोकियो से एक नया मासिक पत्र 'एशिन रिव्यू' के नाम से जापानियों ने अंग्रेज़ी में निकालना प्रारम्भ किया है। जापानियों द्वारा अंग्रेज़ी का यह प्रथम पत्र है। उस की सम्पादकीय आलोचना में यह लिखा हुआ है कि—"यहां पर अंग्रेजी का पत्र निकालना सरल काम नहीं है। सब से मुख्य कठिनाई जो उपस्थित होती है वह यह है कि यहां अंग्रेज़ी जानने वाले सम्पादक ही नहीं मिलते जो कि सम्पादकत्व का भार लेसकें..... सचमुच अपनी अंग्रेज़ी भाषा की कमी के कारण हमारे हाथ कटे हुये से हैं" इस पर कलीजियन टिप्पणी करता है कि यद्यपि अमेरिका के कैमोडोर पैरी को जापान पर धावा किये हुये ७६ वर्ष बीत चुके हैं और यद्यपि जापान साम्राज्य में वर्षों से बड़े परिश्रम से अंग्रेज़ी फरांसीसी, और जर्मन भाषा का स्कूलों में प्रचार किया जारहा है तथापि यूरोप की प्रचलित भाषाओं के ज्ञान के विषय में जापान की यह दशा है। अतः वह नैशनलिस्ट लोग जो

CC-0. Gurukul Kangri University,Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कि भारतीय भाषाओं में शिक्षा प्रचार के इस लिये विरोधी हैं कि उस से भारतीय लोगों के आधुनिक ज्ञान (modernism) की वृद्धि का ह्रास हो जायगा उन्हें ध्यान पूर्वक विचार करना चाहिये कि यद्यपि जापानी ग्रैजुएट लोग अंग्रेज़ी के "मुहाविरों, व्याकरण के नियमों तथा वाक्य रचना" में अशुद्धियां करते रहते हैं तथापि इन एशिया वासी लोगों ने "संसार को प्रजा-तंत्र राज्य, सभ्यता प्रचार तथा मनुष्यत्व स्थापन के लिये कुशल बनाना" अंग्रेज़ी बोलने वाली तथा रोमन्स भाषा बोलने वाली शक्तियों से बड़ी सफलता से मेल मिलाप करके सीख लिया है। हम अपने सहयोगी के साथ पूर्णतया सहमत हैं कि विदेशी भाषा का पूर्ण ज्ञान होना सभ्यता तथा शिक्षा प्रचार का साधन नहीं है किन्तु स्वदेशी भाषा द्वारा जनता के ज्ञान की वृद्धि करना ही एक उपाय है। जापान ने अपनी ही भाषा, अपनी ही रीति रिवाज़ अपनी ही सभ्यता रखते हुये जो इतनी उन्नति करली है वह क्या कभी विदेशियों की नकल करने से सम्भव हो सक्ती थी? हम भारतीयों को भी इस की शिक्षा जापान से लेनी चाहिये और विदेशी भाषा के प्रति जो अनुराग है उसे स्वदेशी भाषाओं की ओर बदल देना चाहिये॥

वर्त्तमान भारतवर्ष में मौलिकता का अभाव

ज्येष्ठ की 'श्री शारदा' में इस शीर्षक का श्रीयुत गुलाब राय, एम. ए. एल. एल. बी का एक बड़ा महत्व-पूर्ण और शिक्षा-प्रद लेख है उस में आपने संसार के सभी क्षेत्र में आदान प्रदान (give & take) का नियम बतलाते हुये यह दर्शाने की चेष्टा की है कि हम भारतीय ज्ञान-क्षेत्र में इस नियम का पालन करते हुये प्रतिदान कर रहे हैं या नहीं, और यदि नहीं कर रहे हैं तो उसका क्या कारण है। आजकल हमारे देश का ज्ञान-भण्डार पश्चिमीय विचारों से भरा जारहा है, हम अपने योग्य पुरुषों की गवेषणाओं और आविष्कारों का मूल्य ही नहीं समझते जब तक उन पर पाश्चात्य की मोहर न लग जावे। कई लोग कहते हैं कि जो कुछ लिखा जाना था वह पहिले ही लिखा जाचुका अब मौलिकता के लिये स्थान ही नहीं है॥

इस विश्वास के अतिरिक्त योग्य लेखक ने मौलिकता के अभाव के सात कारण बताये हैं उन में से (४) प्राचीन और नवीन ज्ञान में सम्बन्ध न होना और (५) मातृभाषा में शिक्षा का न होना इन दो पर ही हम पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहते हैं। (४ और ५) के विषय में आप के यह शब्द हैं:—

"हमारा ज्ञान विदेश से आता है। वह यहां पर दूसरी जगह से उखाड़े हुये वृक्ष की भांति जड़ नहीं पकड़ता है। हमारे प्राचीन ज्ञान का पौदा जिसकी जड़ें सारे भारतवर्ष में फैली हैं कुछ काल से सूखसा गया है। उस पर बाहर से लाकर फूलपत्तियां चढ़ा दी जाती हैं जिससे वह थोड़ी देर के लिये शोभा तो अवश्य बढ़ाता है, परन्तु बिना फल उत्पन्न किये नष्ट हो जाता है। प्राचीन ज्ञान का वृक्ष निर्जीव नहीं हो गया है यदि उसका सिंचन किया जावे, तो वह फिर हरा भरा होकर अपनी छाया और फलों से देशी और विदेशी सभी की तृप्ति किया करे। न तो हम यह करते हैं कि प्राचीन वृक्ष को सींच कर हरा भरा करें और न यही करते हैं कि अपनी भूमि को सुधार कर उस में नये बीज बोयें। हम नये जमाये वृक्ष विदेश से उखाड़ लाते हैं और यहां पर लगा देते हैं इसी से हमारा ज्ञान फलवान नहीं होता। हमारे पूर्व और वर्त्तमान ज्ञान में कोई सम्बन्ध नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation, USA

हम लोगों ने इतना भी कष्ट नहीं किया कि पुराने ही में नये की क़लम लगा देते जिस से नया भी बढ़ने लगता। इस प्राचीन और नवीन ज्ञान में सम्बन्ध न होने के कारण प्राचीन भी नष्ट सा हो रहा है और नवीन भी हाथ नहीं आता, हमारे मानसिक संस्थान में जड़ पकड़ने के लिये दोनों बातों की आवश्यक्ता है। पहिली तो यह कि हमारा ज्ञान उस भाषा में रक्खा जावे जिस में हमारे और सब विचार हों और हमारे नवीन ज्ञान का प्राचीन ज्ञान के साथ सम्बन्ध होवे, क्योंकि जिस रीति से हम विचार करते आये हैं यदि उसी रीति और पद्धति से नया ज्ञान मिले तो वह अवश्य ग्राह्य बन जावेगा। विचार परम्परा में नये ज्ञान के मिला देने से वह हमारी समझ में शीघ्र ही आजावेगा यद्यपि लकीर के फकीर होना अच्छा नहीं तथापि हमको यह बात माननी पड़ेगी कि अपने पूर्वजों के ज्ञान से हमारा सम्बन्ध टूट नहीं सक्ता वह हमारे शारीरिक और सामाजिक व्यवहारों में गूंथा हुआ है। जिस प्रकार हम प्राचीन ज्ञान से सम्बन्ध नहीं तोड़ सक्ते उसी प्रकार हम अपनी मातृभाषा से अपने विचार को अलग नहीं कर सक्ते। यह नहीं हो सक्ता कि पुस्तकें पढ़े किसी भाषा में और उन पर विचार किसी अन्य भाषा में करें। इसके अतिरिक्त जब तक ज्ञान सार्वजनिक न हो जावे, तब तक उस से हमको पूर्ण लाभ नहीं हो सक्ता। ज्ञान को सार्वजनिक बनाने के लिये हमको उसे मातृभाषा में रखना परम आवश्यक है। ज्ञान के सार्वजनिक न होने के कारण ही हमारे ज्ञान और व्यवहार में अन्तर पड़ जाता है॥

संसार की एक सबसे बड़ी घड़ी।

इंग्लैन्ड के पार्लियामेन्ट के भवन की घड़ी सदा से मन को अपनी ओर आकर्षित करती आई है। १८४४ ई० में सर चार्ल्स बैरी ने इस घड़ी के बनाने के लिये ठेका दिया था और इस के १५ वर्ष पश्चात् अर्थात् १८५८ ई० में यह बड़े परिश्रम से बन कर तैय्यार हुई। बिग बेन (Big Ben) जैसा कि इस घड़ी का नाम है दुनियां में सब से बड़ी और ठीक २ समय बतलाने वाली घड़ी है, इसकी कमानी चाबी देने के पीछे सिरे पर लटके हुय बोझ से शनैः२ खुलती रहती है और इस प्रकार यह घड़ी चलती है। इस बोझ को १६० फीट नीचे उतरना पड़ता है। चाबी सप्ताह में एक बार देनी होती है। इस घड़ी का पेन्डुलम १५ फुट लम्बा और तौल में ८ मन से ऊपर है। यह इतना ठीक समय देता है कि यदि इसके किसी भाग पर आधी छटांक का भी बोझ रख दिया जाय तो इससे सप्ताह भर में केवल एक सेकेन्ड का फ़र्क पड़ता है। घंटाघर के चारों ओर चार कमरे हैं और प्रत्येक के सामने की ओर एक डायल लगा हुआ है जिस पर घंटे और मिन्ट की सुइयां चलती हैं। यह प्रत्येक डायल लोहे का बना हुआ है और इसका व्यास २२॥ फुट और बोझ ११२ मन से कम नहीं है। डायल पर घंटों के चिन्ह २ फुट ऊँचे बने हुये हैं और एक चिन्ह दूसरे से छै फुट की दूरी पर है, मिन्टों के चिन्ह १४ इञ्च की दूरी पर हैं प्रत्येक आधे मिन्ट पर मिन्ट वाली सुई ७ इञ्च की एक दम छलांग मारती है। इन दोनों सुइयों का बोझ ढ़ाई मन है। मिन्ट वाली सुई १६ फुट और घंटे वाली ९ फुट लम्बी ह। रात को समय देखने के लिये बिजली का प्रबन्ध है जिस से डायल और सुइयां घड़ी दूर २ तक दिखलाई देती हैं। इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation

बड़ी घड़ी की अभी थोड़ा ही समय हुआ सफाई हुई है और कहा जाता है कि इस काम के लिये कितने ही वर्ष लगे हैं। अनुमान है कि अब ५० वर्ष तक पुनः सफाई की आवश्यक्ता न होगी। इस में चार छोटे घंटे लगे हैं जिन के बजने से प्रति १५ मिन्ट पीछे शब्द होता है पांचवां बड़ा घंटा जो कि घंटे पीछे शब्द करता है १८५६ इ० में तय्यार हुआ था इसका बोझ ४२ मन था और इस पर एक २८ मनकी मुंगरी से चोट लगती थी। जब यह तैय्यार हो चुका तो बड़ी सावधानी से घंटा घर में लगा दिया गया परन्तु थोड़े ही समय पीछे इस में एक दरार हो गया, और यह निकम्मा हो गया, फिर दूसरा घंटा बनवाया गया परन्तु उसने भी काम न दिया अब घंटे बजाने का काम भी छोटी घंटियों से लिया जाता है॥ यह वर्णन Scientific American पत्र से लिया गया है।

———

विद्यार्थियों के लिये युद्ध विद्या की आवश्यक्ता।

जून मास के माडर्न रिव्यू में श्रीयुत् सुधीन्द्रनाथ बोस महाशय का शिक्षा सम्बन्धी एक विद्वत्तापूर्ण लेख प्रकाशित हुआ है इसमें इन्होंने कलकत्ता-यूनीवर्सिटी-कमीशन की रिपोर्ट की निर्भीक समालोचना की है। इस लेख में छात्रों की शारीरिक अवस्था पर विचार करत हुय आप लिखते हैं कि–"कलकत्ता यूनीवर्सिटी कमीशन ने हमारे देश के विद्यार्थियों की दुर्बल शारीरिक अवस्था पर ध्यान आकर्षित कर बड़े उपकार का काम किया है। मुझे कमीशन के सदस्यों से पूरी सहमति है कि अपने विद्यार्थियों की स्वास्थ्य को उन्नत करनेके लिये हमें शीघ्र यत्न करना चाहियें। वह सिफ़ारिश करते हैं कि अंग्रेज़ी और देशी खेलों द्वारा यह काम लिया जाय यह ठीक है परन्तु इतना ही पर्य्याप्त नहीं है। यदि भारत के विश्व-विद्यालय वास्तव में शारीरिक-उन्नति सम्बन्धी शिक्षा की प्रणाली स्थापित करना चाहते हैं तो उन्हें अनिवार्य्य युद्ध-विद्या को अपनी पाठ विधि में स्थान देना चाहिये। इस प्रकार की शिक्षा का होना निम्नलिखित तीन कारणों से अत्यन्त आवश्यक है (१) यह भारतीयों के स्वास्थ्य को उन्नत करेगी (२) बाहरी शत्रु के मुक़ाबिले के लिये जो हमारी आजकल स्थायी फौज है उसे कम करके उसके स्थान में देश को अधिक बलवान, योग्य, और कम खर्च वाले रक्षक मिल सकेंगे (३) इस से राजभक्त नागरिक उत्पन्न होंगे जिन के हृदय में देश भक्ति, राज आज्ञा पालन, व्यवस्था Law) शान्तिप्रियता (order) के लिये मान होगा ....यह ठीक है कि भारत जैसे देश में जहां कि प्रजा को हथियार रखने से कानून द्वारा रोका जाता है युद्ध विद्या सीखने के लिये बहुत सुविधा नहीं है। यह तो स्पष्ट है ही। तो भी विद्यार्थियों को (marching) पदक्रम और युद्ध-व्यपदेश (field manoeuvrs) आज्ञा पालना, क़वायद करना और हथियार चलाने के साधारण नियम तो अवश्य सिखलाये जा सक्ते है। इस प्रकार की शिक्षा चाहे वह कितनी ही प्रारम्भिक हो भारतीय विद्यार्थियों के शरीर और मस्तिष्क को उन्नतशील बनाने में बड़ी लाभदायक होगी।

अमेरिका के अधिकांश विश्वविद्यालयों में समर-विभाग द्वारा प्रत्येक विद्यार्थी को युद्ध विद्या की शिक्षा पहिले दो वर्षों में अनिवार्य्य रूप से दी जाती है।

———

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार प्रवाह

राजनीति में स्त्रियों का भाग।

मदिरापान तथा व्यभिचार के विरोध में स्त्रियों की अन्तर्जातीय सभा।

ईसाई स्त्रियों की मदिरा-निषेध-समिति के वार्षिक उत्सव पर जो कि वेस्ट मिन्स्टर चपेल में हुआ अमेरिका की बहुत स्त्रियां प्रतिनिधि होकर आई थीं उस में मदिरापान रोकने पर ही खूब वाद विवाद हुआ। यह सभा सामाजिक कुरीतियों की ओर भी तथा जुआ खेलना, अफ़ीम का व्यापार, व्यभिचार और बच्चों की रक्षा आदि पर भी ध्यान रखती है। इस सभा की सभासदाओं की कृपा से ही जापान में वेश्याओं को खरीद कर रजिस्टर्ड जगहों में रखना कानून के विरुद्ध है। यदि भारत में भी स्त्रियां अपने बल और पुरुषार्थ को इन बुराइयों के हटाने की ओर लगा कर ऐसे कानून बनाने पर आन्दोलन करें और जनता को इन बुराइयों का दुष्परिणाम बता कर उनकी शक्ति को साथ लेकर कार्य्य करें तो यह दुर्गुण बहुत शीघ्र नष्ट होसक्ते हैं। भारतीय शिक्षित महिलाओं को इन विदेशीय बहिनों से शिक्षा लेनी चाहिये॥

नये मंत्रियोंके लिये एक अत्युत्तम सलाह

कर लगाने की विधि।

मैन्चेस्टर गार्डियन अप्रल २३, १९२० में मिस्टर चेम्बरलेन द्वारा प्रस्तावित बृटिश बजेट दिया है जिससे पता लगता है कि इंग्लैन्ड में सर्कार की आय निम्नलिखित उपायों से बढ़ाई गई है।

जिन व्यापारियों को नियत मात्रा से अधिक लाभ हो उस अधिक लाभ पर आगे ४० प्रतिशतक कर था अब ६० प्रतिशतक कर दिया गया है। जिन की आय दस हज़ार पौण्ड से अधिक होगी उनके ऊपर १ शिलिंग फी पौण्ड तक कर लग जायगा। मिस्टर चेम्बरलेन अर्थ-सचिव ने पार्लियामेन्ट में बतलाया कि जिन की आमदनी साल में २६ हज़ार पौण्ड होगी उन को पौण्ड में १३ शि० कर देना पड़ेगा, जिन की ५० हजार पौण्ड होगी उनको पौण्ड में १४ शि० और जिन की एक लाख होगी उनको पौण्ड १५ शि० ३ पें० देना होगा। स्टाम्प, रजिष्ट्रेशन और बीमा कम्पनी पर अधिक कर लगाया जावे। शराब, अल्कोहाल तथा चुरुट पर पचास प्रतिशतक कर लगाया जाय अर्थात् जीवन की आवश्यकीय वस्तुओं को छोड़ कर विलास की वस्तुओं पर कर लगाया है जिस से जन साधारण को जीवन निर्वाह में कठिनाई न हो।

भारत तो अत्यन्त निर्धन देश है वर्त्तमान में जीवन निर्वाह की वस्तुयें इतनी महंगी होरही हैं कि लोगों का जीवन संकट में है अतः यदि शिक्षा तथा सफ़ाई, स्वास्थ्य रक्षा के हेतु मंत्रिमण्डल को कर बढ़ाने की आवश्यक्ता पड़े तो मोटरकार, बाइसिकल, सिग्रेट, ग्रामोफ़ोन कालर, नेकटाई लेस इत्यादि विदेशी वाद्य, चाय, विदेशी मिठाई बिस्कुट पर अधिक कर लगाना चाहिये। शराब पर अधिक कर क्या उस को तो सर्वथा बन्द करना चाहिये। इसके अतिरिक्त परमानेन्ट सेटिलमेन्ट का ऐसी रीति से संशोधन करना चाहिये कि ज़मींदारों की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नित्य बढ़ती हुई आमदनी का नियत अनुपात राष्ट्र की निधि में आवे और कृषकों के अधिकारों को भी अधिक सुरक्षित किया जावे और राष्ट्र कोष गरीब लोगों का खून चूस कर न भरा जावे बल्कि अमीरों की विलासता के ऊपर कर लगा कर द्रव्य लिया जावे। हम आशा करते हैं कि नये मंत्रिगण इस बात पर ध्यान देकर प्रजा को समृद्धिशाली बनाने की चेष्टा करेंगे॥

फैक्टरी में काम करने वाली स्त्रियों की रक्षा।

मदुरा में एक नये प्रकार की हड़ताल हुई है वहां की मिल में काम करने वाली सब स्त्रियों ने काम छोड़ दिया और जब पूंछ पांछ हुई तो पता लगा कि जिन पुरुषों की निगरानी में उन्हें काम करना पड़ता है उनके दुर्व्यवहार के कारण उन्होंने ऐसा किया है। उनका आग्रह है कि उनके ऊपर कोई स्त्री देखभाल करने वाली रक्खी जावे। बम्बई इत्यादि अन्य व्यापारिक केन्द्रों में जहां फैक्टरी की रीति है यही बुराइयां हैं, और भारत में ही नहीं सभ्य कहलाने वाले पाश्चात्य देशों में भी इन बुराइयों के रोकने के लिये कानून पास करायें जारहे हैं। किन्तु जो कुछ भी हो यह बुराइयां नियम बना देने से कुछ दब चाहे जावें पर दूर नहीं होसक्ती। हमारे शास्त्रकार इन्हीं बुराइयों को असम्भव बनाने के हेतु ही फैक्टरी तथा बड़ी मशीनों के बनाने के विरुद्ध थे। प्रथम तो स्त्री को जीवका उपार्जन करना ही आर्य्य-सभ्यता के विरुद्ध है, क्योंकि साधारणतया गृहस्थ जीवन ही सब स्त्री पुरुषों के लिये निश्चित है और गृहस्थ में प्रवेश करते समय विवाह के मंत्रों में वर्णन आता है कि पति प्रतिज्ञा करता है कि यह देवी मेरी 'पोष्या' है अर्थात् स्त्री और सन्तान का पालन पोषण करने योग्य बन कर ही विवाह करना नीति धर्म के अनुसार था। इस अवस्था में स्त्रियों के लिये आर्थिक प्रश्न ही नहीं रहता, यदि दुर्भाग्यवश किसी संकट के समय उन्हें काम करना हो भी तो ऐसे काम उन के लिये थे जिन्हें वह घर पर रहती हुई कर सक्ती थीं। वर्त्तमान समय में भी उनके चिन्ह बहुत स्थान पर पाये जाते हैं यथा पंजाब में चर्खा कातना, सूत अटेरना, फुलकारी तथा तथा रेशम या पशम का काढ़ना। संयुक्त प्रान्त में क़सीदा ज़री गोटा मोड़ना, बीज छीलना टोकरियां बनाना इत्यादि २ बहुत से कार्य्य हैं जिन से परदेनशीन स्त्रियां अब भी जीविका उपार्जन करती हैं।

हम महात्मा गांधीजी के इन वचनों से सर्वथा सहमत हैं कि यदि स्वदेश में मिलें तथा फैक्टरी बना कर स्वदेशी वस्तु वर्त्तना हो तो विदेशी चीज़ें खरीद लेना ही अच्छा है क्योंकि उस से तो विदेश में धन ही जायगा, परन्तु दूसरी तरह से तो स्त्रियों की मर्य्यादा, सतीत्व की हानि, सन्तान का नाश तथा जाति के मुख पर कलंक का टीका लगता है जो कि चाहे कितना ही धोया जावे मिट नहीं सक्ता है। भारत में यह बुराई अभी बहुत विस्तृत रूप से नहीं आई है अभी से इसका प्रतिरोध करना चाहिये नहीं तो आग लगने पर कुवां खोदना व्यर्थ होगा। जो लोग स्वदेशी के भक्त हैं उन्हे मिलें फैक्टरी न चला कर करघोंका प्रचार करना चाहिये। किन्तु जो महात्मा गांधी जी के करघे और चर्खे के प्रचार में सहमत नहीं हैं और मिलों तथा फैक्टरियों का होना आवश्यक समझते हैं उन्हे यह तो अवश्य करना चाहिये कि स्त्रियों और बच्चों को इन मिलों और फैक्टरियों में न

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रक्खे। जैसा कि हम पहले अंक में दिखला चुके हैं भारत में स्त्रियां आजीविका उपार्जन करने के लिये पाश्चात्य की भांति बाध्य नहीं हैं क्योंकि उनकी संख्या पुरुषों से अधिक नहीं अपितु कम है। अतः स्त्री पुरुषों के एकत्र कार्य्य करने से जो दुराचार अन्य देशों में फैले हुए हैं और दिन प्रति दिन फैलते जाते हैं वह भारत में रोके जासक्ते हैं। कौन भारत माता का पुत्र ऐसा होगा जो स्त्रियों के प्रति दुर्व्यवहार और दुराचार को देखकर दुःखी न होता हो? अतः हमें पूर्ण विश्वास है कि भारतीय लोग अन्य देशों से शिक्षा लेते हुए इस बुराई को दूर रखने के उपायों पर अवश्य ध्यान देंगे।

भारतीय व्यापार में स्पर्धा।

भारतीय व्यापार का अत्यधिक भाग जापान और अमेरिका के हाथों में आगया है इस लिये यह स्वाभाविक ही है कि संयुक्तराज्य स्वार्थ के हेतु भारतीय व्यापार की रक्षा के उपायों का प्रयोग करके इस देश के व्यापार क्षेत्र से अपने आन्तरायों को हटा देने का प्रयत्न करे। युद्ध के समय जापान और अमेरिका के हाथ बहुत बंधे नहीं थे इस कारण उन्हें युद्ध में लगी हुई युरोप की प्रधान शक्तियों से सम्बन्धित व्यापार क्षेत्र में शान्ति पूर्वक आर्थिक-प्रवेश करने का सुअवसर मिल गया। अमेरिका और जापान की भारतीय व्यापार में आश्चर्य्य-जनक वृद्धि सन् १९१९ में मार्च में समाप्त वर्ष की रिपोर्ट में दिये हुये प्रमाणों से स्पष्ट है। जापान में जो भारत में युद्ध से पूर्व ३० लाख गज सूती कपड़ा भेजता था अब २३ करोड़ गज भेजा और और संयुक्तराज्य तथा अन्य ब्रिटिश साम्राज्य के प्रदेशों को युद्ध से पूर्व कुल व्यापार का ५३ सैकड़ा दर था इन दिनों ५४ सैकड़ा रहा इस प्रकार केवल १ प्रति सैकड़ा ही अधिक रहा। जापान का भाग केवल खाकी माल में ही ·२ से ३१·४ सैकड़ा और रंगीन माल में ·१ से ९·१ सैकड़ा और श्वेत माल में कुछ नहीं से ३·७ सैकड़ा बढ़ा तो भी भारत की सफेद और रंगीन माल की आयत ४३ सैकड़ा गिर गई और यदि जापान न होता तो बहुत ही घटी हुई होती। जापान का भाग भोज्य वस्तु के व्यापार में १४ सैकड़ा बढ़ा और आस्ट्रेलिया का १५ सैकड़ा घट गया॥

जमे हुये और सुरक्षित दूध की २१०० टन की आयत हुई जिस में अमेरिका के संयुक्त प्रदेश ने ४१० टन और संयुक्त राज्य ने केवल १० टन भेजे मोटरकार और वाइसिकल के ९२ सैकड़ा अमेरिका से आयत हुई और दियासलाई की १ करोड़ १० लाख ग्रोस आयत हुई जिस में से जापान ने ९७ सैकड़ा भेजीं। इसी प्रकार जापान का भाग शीशे और शीशे की बनी हुई वस्तुओं में ६६ सैकड़ा था जब कि संयुक्त राज्य का २५ सैकड़ा। संयुक्त-राज्य के हाथ के व्यापार का मुख्य भाग और जर्मनी, आस्ट्रिया, रूस, और विशेषतया स्वीडन के हाथों का सब व्यापार जापान और अमेरिका के हाथों में बदल गया है और यह ध्यान देने की बात है कि भारत से बाहर जाने वाला व्यापार आयत की अपेक्षा अधिक बढ़ा हुआ रहा है। हम भारतीय नर नारियों का ध्यान इस उपरोक्त सर्कारी रिपोर्ट की ओर एक क्षण के लिये आकर्षित करते हैं। जबसे स्वदेशी का प्रचार सन् १९०५ से हुआ था लोगों के मुख से हम यह सुनते आये हैं कि विलायती माल छोड़ कर जापानी माल लेलेने में कोई हानि नहीं है और इसी विचार से प्रेरित होकर हमारी स्वदेशी कम्प-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नियों के संचालकों ने स्वदेशी के साथ ही जापानी माल को स्थान दिया था। कारण यह था कि सुन्दर मनोहर वस्त्रों और वस्तुओं के त्याग के कष्ट को न सहने वाले भारतीय भोले भाले नर नारी गण ने इसी भ्रम से अपना सन्तोष कर लेना चाहा कि जापानी माल विलायती नहीं होता और प्रयत्न करके अपने देश प्रेम और सौख्य-प्रियता का जोड़ बनाया। पर कहीं त्याग के बिना उद्धार कभी हो सक्ता है? अब चौदह पन्द्रह वर्षों के अनुभव से पता लगता है कि जिस कारण विलायती माल का त्याग करना आवश्यक था वही, उस से भी अधिक कारण अब जापानी और अन्य देशों से आई हुई वस्तुओं को त्याग देने के लिये उपस्थित है। वस्तुतः यह बात है कि हम अपने स्वदेश में बने स्वदेशी वस्तुओं को उपयोग में लाने का यत्न छोड़ कर यदि विलास और भोग प्रियता से विदेश के वस्तुओं से अपने शरीर को सुशोभित, अपने घरों को अलंकृत, और अपनी पाठशालाओं, कार्य्यालयों तथा अन्य सभा भवनों को सुसज्जित करते रहेंगे। यदि हम परदेशी खाद्य पदार्थों पर दृष्टि रक्खेंगे और हम अपने पैर पर आप खड़े होना नहीं सीखेंगे तो भारतीय व्यापार की स्पर्धा में चाहे कोई देश प्रधान हो हम तो वैसे ही बने रहेंगे। कहावत है कि "कोई नृप होय हमें का हानी चेरि छोड़ न कहाउब रानी" अतः भारतीय नर नारियों को उचित है कि वायकाट का हृदय से भाव हटा कर स्वदेश प्रेम के भाव से स्वदेश में स्वदेशी प्रकार से बनी हुई वस्तुओं के ही उपभोग का व्रत लेवें और विदेशी जापान इत्यादि की वस्तुओं को विलायती वस्तुओं से भी अधिक घृणा दृष्टि से देखें। नहीं तो जापानी प्रयत्न के आगे भारतीय व्यापार का कुछ भी जोर न रह जायगा और भारत की बड़ी ही हानि होगी जिस से भारतीयों का जीवन दुखमय कष्टप्रद हो जायगा और प्रजा दरिद्र, दुर्भिक्ष-पीडित-रोग ग्रसित हो कर नष्ट हो जावेगी॥

— —

आर्य्य समाज और आर्य्य भाषा।

आर्य्यसमाज ने प्रत्येक क्षेत्र में सब से अधिक काम किया है चाहे वह समाज-सुधार सम्बन्धी हो अथवा धार्मिक, किन्तु एक बड़ा नुक्स जो अब तक समाज ने सुधारने का यत्न नहीं किया वह आर्य्य-भाषा-साहित्य का अधूरापन है। आर्य्यसमाज के प्रवर्तक ऋषि दयानन्दजी ने अपने मुख्य ग्रन्थ भाषा में लिखे, यहां तक कि वेदों का भाष्य भी भाषा में किया कि सर्वसाधारण में भाषा द्वारा ज्ञान का प्रचार हो। किन्तु, उनके बाद समाज की ओर से इधर कुछ ध्यान नहीं दिया गया। पंजाब में आर्य्यसमाज का सब से अधिक कार्य्य हुआ है तथापि इस अंश में यहां पर भी न्यूनता रह गई है। आर्य्यसमाज की ओर से खुली हुई पाठशालाओं अथवा अन्य संस्थाओं में भी इधर कुछ ध्यान नहीं दिया गया है। लाहौर के डी. ए. वी. स्कूल के खुलने के समय भाषा द्वारा छोटी श्रेणियों में शिक्षा देना ध्यान में था भी, किन्तु अन्यान्य शहरों में जो डी. ए. वी. स्कूल हैं और बड़ी अच्छी दशा में हैं वहां उर्दू का ही प्रचार है। गुरुकुलों में भाषा को कोई प्रधानता नहीं है, प्रायः यह सोचा जाता है कि संस्कृत के साथ यह भी उन्नत हो जावेगी। पर यह बड़ी भूल है। संस्कृत और भाषा दो पृथक् भाषायें हैं और एक के आने से दूसरी का आ जाना सर्वथा असम्भव है, तभी तो हम देखते हैं कि पण्डित [illegible] परीक्षोत्तीर्ण होते हैं किन्तु भाषा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

की दो पंक्तियें शुद्ध नहीं लिख सक्ते। यह कमी हिन्दू यूनीवर्सिटी में भी रही है। वहां पर भी हिन्दी को विशेष स्थान नहीं दिया गया है। फिर आर्य्य भाषा उन्नत हो तो कैसे हो?

बम्बई प्रान्त में गुजराती मराठी आदि भाषाओं को यूनीवर्सिटी की उच्चतम कक्षा की शिक्षा में भी स्थान दिया गया है, पर पंजाब और यू. पी. में नहीं। हमें गुरुमुखी, उर्दू से विरोध नहीं है यदि हमारे सिक्ख भाई तथा मुसल्मान भाई चाहें तो उन्हें भी उन्नत करें, किन्तु हम इतना अवश्य चाहते हैं कि कम से कम डी. ए. वी. स्कूलों में हिन्दी को प्रधानता दी जावे और चूंकि अब डी० ए० वी० कालिज कई स्थान पर खुलने लगे हैं अतः सब कालेज कमेटी मिलकर यूनीवर्सिटी में हिन्दी के लिये एक चेयर बनाने के लिये अवश्य आन्दोलन करें। और जो जातीय संस्था हैं जैसे कि गुरुकुल उन में आर्य्य-भाषा की शिक्षा कालेज श्रेणियों में भी अवश्य दी जावे और अन्य कई विषयों की भांति आर्य्य-भाषा भी एक पर्य्याय विषय अवश्य रक्खा जावे। ऐसा करने से भाषा को उसका उचित स्थान मिलेगा ही किन्तु आर्य्य-समाज के प्रचार के कार्य्य में भी बड़ी सहायता होगी। क्योंकि जब भाषा में उच्च शिक्षा दी जावेगी तो उत्तमोत्तम ग्रन्थ भी रचे जा सकेंगे जिनमें वैदिक धर्म का महत्व हो। और वह ग्रन्थ अपनी उत्तमता के कारण तुलसी रामायण की भांति भाषा की दृष्टि से सब जगह प्रचलित होवेंगे। परन्तु यह कार्य्य बड़े परिश्रम की अपेक्षा करता है वर्त्तमान समय में हम देखते हैं कि पद्य रचना की इतनी कमी है कि जो कोई तुकबन्दी कर ले वह कवि बन बैठता है और आर्य्य समाज के भजनों और गीतों में काव्य रस के गुण न होने से केवल तुकबन्दी ही है जो अन्य कविताओं के सन्मुख बहुत भद्दी प्रतीत होती है। आर्य्य समाज की पुत्री पाठ-शालायें तथा प्राइमरी स्कूल्स स्थान २ पर हैं किन्तु पाठ्य पुस्तकों में कोई विशेषता नहीं। पचास वर्ष से कार्य्य करते हुये भी समाज ने अब तक भाषा साहित्य की वृद्धि की ओर ध्यान दिया ही नहीं। हम समाज की प्रतिनिधि सभाओं का ध्यान इस ओर खेंचना चाहते हैं कि वह विद्या-सभा बनाकर उत्तमोत्तम भाषा का ज्ञान रखने वाले विद्वानों द्वारा आर्य्य सामाजिक साहित्य की वृद्धि के हेतु ग्रन्थ रचना करवायें और गुरुकुलों की उच्च कक्षाओं में और कालिजों में हिन्दी की शिक्षा का प्रबन्ध शीघ्र करने का यत्न करें। कालिजों में कुछ आपत्ति हो तो सम्भव है किन्तु गुरुकुलों में तो हिन्दी की चेयर खुलने में कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिये क्योंकि इन संस्थाओं में जातीय भाषा का मान्य न हो तो और कहां होगा? क्या हम आशा कर सक्ते हैं कि हमारे आर्य्य समाजी नेता लोग इस ओर ध्यान देंगे?

सर आलिवर लाज और परमाणु सम्बन्धी शक्तियां।

एक्सरेज़ और रेडियम के आविष्कार के पीछे थामसन, रथरफोर्ड, साडी, आलिवर लाज प्रभृति प्रसिद्ध वैज्ञानिकों ने प्रकृति के एक न सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। अब तक रसायनज्ञ और भौतिकी वैज्ञानिक इस बात को मानते थे कि संसार में कोई नव्वे के लगभग तत्व हैं जिनका एक दूसरे से कोई सम्बन्ध नहीं। इन नये आविष्कारों के पीछे इस पुराने तत्व-वाद के स्थान में एक नये सिद्धान्त

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ने जन्म लिया जिसके मतानुसार आदि सृष्टि में एक ही प्रकार का प्राकृतिक-द्रव्य था और उसमें भिन्नता पड़ने से भिन्न भिन्न प्रकार के तत्व बनते गये। आज कल भी कहीं कहीं यह कार्य्य होरहा है। तत्व एक दूसरे में बदल रहे हैं। रेडियम सम्बन्धी खोज करते समय यह बात निश्चय कीगई थी कि इस धातु के अणु और परमाणु महान् वेग और शक्ति द्वारा घूम रहे हैं और एक दूसरे से टकरा रहे हैं। इस टकराने का फल यह होता है कि कुछ अणु तत्व से अलग होकर दूर जा पड़ते हैं और स्वयं एकत्र होकर एक भिन्न तत्व बन जाते हैं, और जिस तत्व से अलग हुए हैं उन में भी भिन्नता उत्पन्न कर आते हैं। इस अणु-विसर्जन का फल यह होता है कि उस तत्व शक्ति की—जिसने इन सब परमाणु को इकट्ठा किये तत्व रूप में अब तक जोड़े रक्खा था—अब कोई आवश्यक्ता नहीं रहती और वह इधर उधर आकाश में बिखर जाती है। इस महाशक्ति को वश में लाकर मनुष्य के आधीन कर देना इस हेतु से कि वह इस से जो चाहे करे आज कल के विज्ञान और वैज्ञानिकों का मुख्य उद्देश्य बन गया है॥

परन्तु क्या इस महाशक्ति को जीतने से संसार का भला होगा? क्या अन्य वैज्ञानिक आविष्कारों की न्याईं इसका भी दुष्प्रयोग कर इसे मनुष्य-हिंसा बढ़ाने के कार्य्य में न लाया जायगा? इस महा युद्ध ने इस विषय में सब की आंखें खोल दी हैं। प्रसिद्ध विज्ञान-वेत्ता सर आलिवर लाज को यह चेतावनी देने की आवश्यक्ता हुई है कि "मनुष्य के लिये इस परमाणु जनक शक्ति पर विजय पाना कदापि सुख दायक न होगा यदि वह अपनी आभ्यन्तरीय दुष्ट वासनाओं पर विजय प्राप्त न करले। अब तक हमारे संसारिक उन्नति, जीव प्रेम: और सभ्यता की विचार दृष्टि में प्राकृतिक के स्थान में आध्यात्मिक प्रेरणा का मिश्रण न होगा हमें इन प्राकृतिक शक्तियों के अमानुषिक और राक्षसी व्यवहार की ही अधिक आशा रखनी चाहिये।"

क्या आजकल का शक्ति-मदान्ध योरप तथा उसकी सभ्यता के अन्धविश्वासी भारतीय अनुचर इस धुरन्धर वैज्ञानिक की चेतावनी की ओर ध्यान देंगे? हमें आशा है कि हमारे अभिप्राय को ठीक २ समझने में भूल न होगी। हम विज्ञान की उन्नति के विरुद्ध नहीं तथा भारत की उन्नत शाली और ऐश्वर्य्यारूढ़ देखने की उत्कण्ठा भी हमारे हृदय में किसी से कम नहीं। परन्तु हम अपना कर्तव्य समझते हैं कि भारत सन्तान को सावधान करदें कि वह आत्मा और शरीर को पृथक् करके भारत को उन्नत करने में अनिष्ट कर साधनों का प्रयोग न करें। प्रथम आत्मा को उन्नत बनावें। यदि आत्मा स्वस्थ और उन्नत हो तो ऐश्वर्य्य के होते हुये भी ऐश्वर्य्य की सारी शक्तियों को वह प्रजा के हित और आनन्द साधन में ही उपर्युक्त करेगा अन्यथा शक्ति पाकर रावण रूप धारण कर लेना ही बड़ा सुगम है॥

———

तुर्कों के साथ सन्धि।

बहुत दिनों से जिसकी प्रतीक्षा हो रही थी वह तुर्कों के साथ सन्धि हो गई किन्तु मुसलमानों की कुम्हलाई हुई आशालता जो मांटेग्यू साहब की प्रतिज्ञा रूपी जल से कुछ २ प्रफुल्लित होरही थी उस पर अकस्मात् पाला पड़ गया। इस सन्धि से खलीफ़ा की शक्ति तो बढ़ा दी गई है। किन्तु एशिया में जो एक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

पुराना साम्राज्य चला आरहा था उस का भी अन्त होगया। तुर्कों से उन के धर्मस्थान छीन लिये गये, उनकी सम्पत्ति विदेशियों के आधीन करदी गई, उनके बन्दरगाह और उनके साम्राज्य का बड़ा भाग ले लिया गया है, और पांच प्रतिनिधियों ने जिन्होंने तुर्की सन्धि पत्र पर हस्ताक्षर किये हैं वह न तो तुर्की गवर्मेन्ट के और ना ही तुर्की पार्लियामेन्ट के प्रतिनिधि समझे जासक्ते हैं। यह तुर्कों की सन्धि न्याययुक्त नहीं होसक्ती जबतक तुर्की पार्लियामेन्ट की सम्मति न हो और तुर्कों की पार्लियामेन्ट रही ही नहीं क्योंकि उसके बहुत से सभासद या तो क़ैद में थे या भागे हुये थे। तुर्कों के प्रति इस दुर्व्यवहार से केवल टर्की में ही नहीं वरन् समस्त मुसल्मान संसार में रोष होरहा है। ईजिप्ट तो बृटिश का विरोधी था ही खुद लोगों ने भी इस का प्रतिरोध करके तुर्कों का साथ दिया है। अमीर फीसल और उसका भाई ईराक का राजा जो कि अंग्रेज़ों के हाथ ही पले हैं तुर्कों के साथ मिलने को तय्यार हैं। ऐसा सुना जाता है तुर्किस्तान में अनवर पाशा युद्ध की तैय्यारी कररहा है और एक हाथ से मुस्तफ़ा केमल को सहायता देरहा है दूसरे से अफ़गानिस्तान को उत्तेजित कर रहा है। इस के अतिरिक्त हिन्दुस्तान के ९ करोड़ मुसल्मान हैं जिन के साथ हिन्दू भी हैं और यह भी भय है कि कहीं अत्यन्त निराशता की लहर में बहकर तुर्क लोग बोल्शविस्ट के साथ जो कि नवीन जार्जियन रिपब्लिक को आक्रमण करके गिराना चाहते हैं मित्रदल को परास्त करने के लिये मेल न करलें अतः तुर्की सन्धि एक धर्म युद्ध के लिये तैय्यारी कर रही है, जिस में ईसाइयों का मुसल्मानों के साथ द्वन्द होगा, एशिया यूरोप के विरुद्ध खड़ी होगी, पूर्वी सभ्यता पाश्चात्य सभ्यता के विरुद्ध होगी। और यह सब कारस्वाही लायडजार्ज की है। वह चाहते हैं कि ग्रीस जो कि अभी ही उनकी सहायता की अपेक्षा कर रहा है। यदि तुर्कों के राज्य के अधिक विभागों का अधिकारी बन जायगा तो और अधिक हमारी उपेक्षा रक्खेगा और इस प्रकार वास्तव में अंग्रेज़ ही मालिक रहेंगे।

लंडन की मन्चेस्टर गार्डियन में तुर्की सन्धि के विषय में इटैलियन राजनीतिज्ञों की सम्मतियों में से जो उद्धरण दिये हैं ऊपरोक्त उसका सार है। हम नहीं कह सक्ते कि जो चित्र उस में दिया गया है वह कहां तक ठीक है सम्भव है कि इस में अत्युक्ति हो व यूरोपियन जाति के पारस्परिक ईर्षा और द्वेष की झलक भी इस में हो, किन्तु इतना हम अवश्य कहेंगे कि बृटिश साम्राज्य के मंत्रिमण्डल को इस सन्धिपत्र पर विचार इस दृष्टि से करना चाहिये कि संसार के मुसल्मान इसको एक मज़हबी प्रश्न न बना सकें और इस्लाम और ईसाई मत में विरोध का रूप यह प्रश्न न धारण कर सके। भारत के मुसल्मानों के विषय में हम यह कह सक्ते हैं कि वह महात्मा गांधी के नेतृत्व में असहयोग ही करेंगे, सर्कार के साथ क्रियात्मिक विरोध वह कभी न करेंगे।

———

पंजाब में स्पेशल कांग्रेस का अधिवेशन।

पंजाब प्रान्तीय-कांग्रेस कमेटीने निश्चय कर लिया है कि आगामी स्पेशल कांग्रेस का अधिवेशन जिसमें बाहुल्यतया पंजाब की घटनाओं पर ही आलोचना होगी पंजाबकी राजधानी लाहौर में आमन्त्रित किया जावे। पंजाब निवासियों को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार करके उक्त स्पेशल अधिवेशन के स्वागत की दत्तचित्त से तैयारी करने में लग जाना चाहिये। यद्यपि उनके पास तैयारी के लिये समय बहुत थोड़ा है तथापि हमें पूर्ण आशा है कोई भी पंजाबी तन, मन, धन जिस प्रकार से भी इस कार्य्य की सफलता में सहयोग दे सक्ता होगा कदापि पीछे न रहेगा और हमारे अन्य प्रान्तीय भाई भी इस सुअवसर पर बहुत संख्या में पधार कर अपनी २ सम्मति झकट करके देश हित के कार्य्य में उचित भाग लेंगे। हां एक बात बहुत विचारणीय है वार्षिक अधिवेशन की भांति जनता के विचार उन्नत करने के लिये शानदार मेला नहीं है जहां पर अनपढ़ किसान, अशिक्षित अथवा अर्ध-शिक्षित धनवान स्त्रियाँ वा बच्चों के साथ मातायें शान से डेलीगेटों के टिकट ले २ कर खूब धूमधाम से तमाशा देखने आवें और सावधानी से बैठकर सुनने सुनाने पर ध्यान न देवें। हम कांग्रेस में उपरोक्त प्रकार की जनता के शुभागमन के विरुद्ध नहीं हैं, वार्षिक अधिवेशन प्रायः इन्हीं लोगों के लिये होने लग पड़े हैं और यह परिवर्त्तन अशुभ नहीं है अतः उसमें इन्हें आना ही चाहिये। किन्तु यह स्पेशल अधिवेशन एक विशेष रूप से देश की वर्त्तमान अवस्था–खास कर खिलाफ़त का प्रश्न तथा पँजाब के अत्याचारों–के सम्बन्ध में हो रहा है इस में बड़े २ विज्ञ दार्शनिक लोग अपने भविष्य जीवन के राजनैतिक कार्य्य की निष्पत्ति पर विचार करेंगे। अतः इस अधिवेशन में देश के बड़े २ नीतिज्ञ पण्डितों तथा सेवकों को ही बहु संख्या में आना चाहिये। और नरम तथा गरम दल के मत भेदों को क्षण मात्र के लिये दूर करके माडरेटों को भी बहु संख्या में सम्मिलित हो कर अपनी स्वच्छन्द सम्मति प्रकाशित करने की आवश्यक्ता है॥

क्योंकि आल इन्डिया कांग्रेस कमेटी ने महात्मा गान्धी के प्रस्तावित असहयोग के विषय में भी इसी अवसर पर फैसला करना सोचा है। यह प्रश्न इतना महत्व पूर्ण है, इसमें इतना मत भेद है और कष्टों का सामना करना है कि चाहे इस के पक्ष में राय देनी हो चाहे विपक्ष में दोनों प्रकार से बड़े सोच विचार की आवश्यक्ता है। यह कोई सुनिश्चित प्रस्ताव नहीं है जिस में बहु सम्मति से फैसला करना है। इस विषय में माडरेट तो सब के सब असहयोग के विपक्ष में हैं ही। तिलक महाराज कुछ कहते हैं, विपिनचन्द्र पाल अपना अलग ही राग आलापते हैं और बेसेन्ट कुछ कहती हैं उधर महात्मा गान्धी जी का असहयोग में दृढ़ विश्वास है। कांग्रेस कुछ भी निष्पत्ति दे किन्तु वह इसे चलावेंगे ही और इस का जो परिणाम सिन्ध में हो रहा है वह कम विचारणीय नहीं है। बकरी शेर का मुकाबिला कहां तक कर सकेगी यह सोचने वाली बात है परन्तु महात्मा गान्धी जी भी बड़े विचारशील दूरदर्शी महा पुरुष हैं जो कुछ करते हैं दूर की सोच कर और परिणाम देखकर करते हैं। तप के बल से क्या साध्य नहीं हो सक्ता? इस अवस्था में माडरेटों को भी तथा अन्य विचार शील नेताओं को इन महत्व पूर्ण प्रश्नों को प्रजा के हित को सामने रखकर बड़ी सावधानी से सिद्ध करना चाहिये। जिस समय हम अन्तिम प्रूफ़ देख रहे थे तब पता लगा कि स्पेशल अधिवेशन सम्भवतः बम्बई में होगा। कहीं भी हो जो विचार हमने उपस्थित किये हैं वह ध्यान देने योग्य हैं॥

लाला लाजपत राय और पंजाब कौंसल का बहिष्कार।

गवर्नमेन्ट आफ़ इन्डिया ऐक्ट स्वीकार हो जाने पर भारतीय नेताओं में चाहे कितना ही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मत भेद क्यों न रहा हो किन्तु गत अमृत्सर कांग्रेस में यही बल दिया गया कि हम भारतीयों को जो कुछ मिला है उसे ही इस समय ग्रहण करके राज प्रतिनिधियों के साथ सहयोग करके उन्हें प्रजा के लिये हितकर सिद्ध करने की चेष्टा करनी चाहिये। भारत सचिव मिस्टर मान्टेग्यू की सहानुभूति तथा सम्राट जार्ज की आश्वासन पूर्ण घोषणा के सन्मुख हमारे भारतीय हृदय सहयोग देने के लिये द्रवीभूत हो रहे थे। हमे विश्वास था कि बृटिश साम्राज्य से स्वत्व की रक्षा, तथा अन्याय और अत्याचार का प्रतीकार अवश्य होगा किन्तु खिलाफ़त के प्रश्न की जिस प्रकार अवहेलना की गई है, और अमृत्सर के अत्याचारों को हन्टर कमेटी के पक्षपात से पूर्ण फैसले होने पर भी न्याय युक्त न सिद्ध कर सकने पर भी जिस प्रकार अत्याचारियों को दण्ड से मुक्त कर दिया गया है, उस से प्रजा का हृदय दहल उठा है। कौन मनुष्य होगा जो देवियों के ऊपर अत्याचार कर्त्ता, बच्चों के घातक, निरपराध हजारों का वध कर डालने वाले डायर, वासवर्थ स्मिथ, ओब्रायन के कार्य्यों का समर्थन कर सकेगा? जब केवल ७ गोरे रंग वाले मनुष्यों का वध हिंसा हो सक्ती है तो काले सैंकड़ों का वध क्या हिंसा नहीं है? तथापि बृटिश न्याय ने डायर को आर्मी कौंसल की रिपोर्ट पर केवल बृटिश साम्राज्य में नौकर न रखने पर ही निश्चय किया और वोसवर्थ स्मिथ तथा ओब्रायन इत्यादि को न केवल पदच्युत ही नहीं किया किन्तु उन में से किसी एक की तो पद वृद्धि भी हुई। जब इस तरह के अंधेर राज्य की ओर से हो रहे हैं तो प्रजा राज कर्मचारियों के साथ कैसे सहयोग करेगी? बकरे की मां कब तक चुप चाप सिन्नी चढ़ावेगी? उचित तो यह था कि पंजाब के अत्याचारियों के राज कर्मचारी रहते पंजाबी लोग पंजाब कौंसल में प्रतिनिधि होकर जाते ही नहीं॥

हमारे माननीय नेता लाला लाजपतरायजी का यही प्रस्ताव था, किन्तु पता नहीं क्यों उन्होंने इस पर पूर्णतया दृढ़ रहकर जनता में अपने विचार फैलाकर महात्मा गांधी जी की भांति उन्हें अपने पीछे चलाने का यत्न न किया बल्कि उनके विचार शिथिल पड़ गये और उन्होंने कांग्रेस के स्पेशल अधिवेशन पर इसका निर्णय छोड़ना चाहा। किन्तु यह सर्वथा असम्भव है, क्योंकि उस समय तक नई कौंसलों के स्थापन का समय बहुत पास आ जावेगा। अतः यह प्रस्ताव क्रियात्मक रूप धारण नहीं कर सकेगा और लक्षण ऐसे ही हैं कि प्रतिनिधि कौंसलमें जावेंगे ही। हम लालाजीके असल प्रस्ताव की बड़ी सराहना करते हैं, और उनके कार्य्यों की आलोचना नहीं करना चाहते, किन्तु बड़े नम्रभाव से यह सम्मति देते हैं कि जब कि उनका पूर्व प्रस्ताव फलीभूत नहीं हुआ तो दूसरी जो कुछ उत्तमता हो सक्ती है वह इसमें है कि सारे नेता सर्वत्र और लालाजी विशेषतया सारे पंजाब में घूम २ कर जनता को इस बात की शिक्षा दें कि कोई प्रतिनिधि जब तक वह इस बात की प्रतिज्ञा न करले—कि कौंसल का सदस्य बनकर वह किसी कार्य्य में भाग न लेगा जब तक पंजाब के अत्याचारियों को शासन कार्य्य से पदच्युत करके पृथक् न कर दिया जावे—तब तक उसे चुने ही नहीं और प्रतिनिधियों में कोई भी ऐसा न हो जो लोभ से, व पदवी की लालसा से, अथवा भय से, प्रजा की आवाज़ के विरुद्ध कार्य्य करे। जब ऐसे सदस्य सभा में जाकर प्रस्ताव करेंगे कि अन्यायी पक्षपातियों को साधारणतया और ओब्रायन तथा स्मिथ को विशेषतया हटा कर दूर करो तब हम अन्य प्रश्नों पर विचार करेंगे तो या तो इनका एक दम बहिष्कार हो ही जायगा अथवा गवर्नर क्रुद्ध होकर कौंसल को तोड़ देंगे। इस दूसरी अवस्था में जब २ कौंसल में प्रतिनिधि जावें ऐसी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri

प्रकार अपनी प्रतिज्ञा पर दृढ़ रहें तो अवश्य सफलता होगी। जातीय द्वेष से नहीं अथवा घृणा से नहीं किन्तु शान्तिपूर्वक प्राणी मात्र से प्रेम प्रगट करते हुये अपनी प्रतिज्ञा को अटल बनावें, तो कौन शक्ति है जो उनका प्रतिरोध कर सकेगी? इसके प्रतिकूल इसका परिणाम यह होगा कि न्याय प्रिय बृटिश प्रेस और प्लैटफार्म से भी भारतीयों के साथ सहानुभूति की आवाज़ उठ कर गूंजेगी और जो काम अब तक इतनी कमेटी और आन्दोलन द्वारा भी पूरा न होसका वह इस एक बातसे शीघ्र पूरा हो जावेगा।

हमें गत अमृत्सर कांग्रेस तथा दिल्ली कांग्रेस के अधिवेशनों में डिक्लेरेशन आफ़ राइट्स अर्थात् अधिकार पत्र की प्राप्ति पर जो बल दिया गया था उस की दूर दर्शिता अब दिखलाई देती है। नई कौंसलों में भाग मिलने पर भी जबतक कई राज पुरुष हम भारतीयों को पशु समझ कर अमानुषिक व्यवहार कर सकेंगे और प्रजा की उनको उचित दण्ड दे सकने में ऐसी ही अशक्ति रहेगी तबतक हमारा राज्य के साथ सहयोग हो ही कैसे सक्ता है और उस से लाभ भी क्या होगा? अतः हम लाला जी से नम्र प्रार्थना करते हैं कि पँजाब के परम हितैषी और पंजाबियों की प्रीति और सन्मान के भाजन होते हुये वह प्रतिनिधियों से यह उपरोक्त प्रतिज्ञा अवश्य करावें। हमें विश्वास है कि वह इस पर आन्दोलन करेंगे और स्थान २ पर जाकर इसका प्रचार करेंगे। ताकि देश के इतिहास में पँजाबियों का कार्य्य स्वर्ण अक्षरों में सदैव अंकित रहे॥

क्षमा प्रार्थना।

हमें शोक है कि ज्योति की वर्त्तमान संख्या में संशोधन का प्रबन्ध ठीक न होने के कारण कई छोटी २ अशुद्धियों के अतिरिक्त श्रीयुत प्रोफ़ेसर रामशरणदास जी के लेख "अग्निहोत्र पर वैज्ञानिक प्रकाश" में दिये हुये मंत्रों में तथा अंग्रेजी के शब्दों में बड़ी भूलें रह गई हैं विज्ञ पाठकों से हमारा नम्र निवेदन है कि वह पृष्ठ १३६ के प्रथम कालम की अन्तिम पंक्ति में 'धर्मोसि' के स्थान में 'घर्मोसि' पढ़ें। तथा दूसरे कालम में 'सौमनसस्य' के स्थान में 'सौमनस्य'; 'आन' के स्थान में 'अग्न'; वर्हिषि' के स्थान में 'वर्हिषि' पढ़ें तथा पृष्ठ १४४ में Sanatary के स्थान में Sanitary, Seince के स्थान में Science; Sanatation के स्थान में Sanitation पढ़ें।

पृष्ठ १६२ में 'कामना' की ५वीं पंक्ति में उच्छ्वास के स्थान में उच्छ्वास पढ़ें तथा पृष्ठ १६३ में श्रीयुत् प्रोफ़ेसर रामजीनरायण डी. यस. सी के लेख "पँजाब और खाँड का व्यवसाय" में व्यसाय के स्थान में व्यवसाय पढ़ना चाहिये और इसी लेख में पृष्ठ १६४ में (ख) को इस प्रकार पढ़ना चाहियेः—

(ख) नाहन के यन्त्र से

क्लार्क और ऐलट के मतानुसार इस यन्त्र की कार्य्य क्षमता (efficiency) इस प्रकार है:-

	वर्ष–१९०८–९	१९०९–१०	१९१०–११
पेरे हुये रस की औसत	५९·७%	६२·५%	६३·१%

गुरुदासपुर के गन्नों के साथ इस यन्त्र की क्षमता निम्न लिखित है:—

नाम गन्ना	प्रति सैकड़ा रस की प्राप्ति	फोक	यंत्र की क्षमता
धौलू	५६·६	२०·६	८१·२
काठा	५६·७	२३·५७	७९·८
कान्सर	६१·५	१८·३३	८४·१
तरेड़ू	५८·०	१९·३२	७८·३
काहू	६१·४	१३·५४	८०·५
पौंडा	६५·३	१०·६०	७४·०

हम अपने इन लेखों में बड़े लज्जित हैं और उन की वर्त्तमान अशुद्धियों के लिये क्षमा प्रार्थी हैं तथा लेखकों तथा पाठकों को विश्वास दिलाते हैं कि भविष्य में इस प्रकार की अशु[illegible] किया जायगा।

CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri

ॐ

वनिता विनोद

स्त्री उपयोगी स्त्रियों द्वारालिखित लेखों का संग्रह।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१—समाचार।	१८८	३—परिश्रम—(लेखिका श्रीमती चन्द्रावती त्रिपाठी	१९२
२—कला कौशल्य—(ले० श्रीमती ओ३म्वती देवी)	१८९		

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समाचार ।

बालकों की रक्षा ।

राय बहादुर डाक्टर चुन्नीलाल वोस कहते हैं कि "गन्दे घर और स्वास्थ-नाशक गन्दी बस्तियां जहां पर घर होते हैं, ग़रीबी के कारण पर्य्याप्त भोजन तथा वस्त्र का न होना, बाल विवाह के कारण पिता माता की युवा अवस्था का न होना, स्त्रियों को बन्द रखना, अज्ञानता, भ्रम मूलक विश्वास, चतुरदायी गीरी का न होना प्रसव के पहिले माता की पूरी खबरदारी न रखना, छोटी उमर की माताओं को अपनी तथा अपने बच्चों की अच्छी तरह खबरदारी करने का ज्ञान न होना, स्वच्छ तथा उचित विभाग में दूध का न प्राप्त होना इत्यादि कारण हैं जिनके सबब से न केवल छोटे बच्चों की मृत्यु अधिकता से होती है वरन् प्रायः बहुत सी मातायें भी इसीलिये अकाल मृत्यु की ग्रास बनती हैं । बहुत से भारतीय गृहों में प्रसूतागृह का स्वास्थ्यकर न होना ही नन्हे पैदा हुए बच्चों की अधिक संख्या में मृत्यु का कारण है"

हमारी स्त्रियों को इन बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिये ॥

एक देवी का दान ।

सहयोगी पत्र 'श्रद्धा' में प्रकाशित हुआ है कि मेरठ के मुन्शी शम्भुदास पेशकार की विधवा पत्नी श्रीमती विशनदेवी ने हाल ही में १३ लाख रुपये का दान दिया है जिस में से २५ हजार रुपया एक "देव नागरी हाई स्कूल" को और २५ हजार रुपया स्थानीय समाज की कन्या पाठशाला को २००) मासिक व्यय के लिये अलग दान दिया है ॥

हमें पता नहीं कि दान का अन्य हिस्सा किस प्रकार व्यय होगा किन्तु कन्या पाठशाला और स्कूल में शिक्षणार्थ दान देना जो इस देवी को सूझा है यह बड़ा प्रशंसनीय है । हमारी सब दानशीला बहिनों को दान देते समय इस देवी का अनुकरण करना चाहिये ॥

स्त्री शिक्षा ।

स्त्री शिक्षा सम्बन्ध में सर्कारी रिपोर्ट १९१७–१८ की है कि उस वर्ष १२,६४००० लड़कियां स्कूलों में थीं अर्थात् १० में से एक कन्या स्कूल में पढ़ती थी। परन्तु भारतीयों के हिसाब से १५ में से केवल एक लड़की स्कूल में पढ़ती है । अतः संख्या के लिहाज से भी स्त्री-शिक्षा बहुत पीछे है । शिक्षा के लिहाज़ से तो पीछे थी ही । डाक्टर सैड्लर की कमीशन रिपोर्ट तथा माननीय रवीन्द्रनाथ ठाकुर दोनों इस बात को मानते हैं कि सब की शिक्षा में विशेषतया कन्याओं की शिक्षा में भाषा का माध्यम तथा धार्मिक शिक्षा का होना परम आवश्यक है । मुसलमान शिक्षा-सम्मेलन के प्रधान मा० नवाब सरसैयद शमशुलहुदा ने कहा था कि "प्रत्येक मुसलमान लड़की को उर्दू द्वारा साहित्य और विज्ञान की शिक्षा मिले तो वह पुरुषों से आधे समय में उतना ही ज्ञान प्राप्त कर सकी है । इस से बहुत से मुसलमान प्रसन्नतापूर्वक अपनी कन्यायों को शिक्षा देंगे और यदि हम साथ ही धार्मिक शिक्षा पर जोर दें जो कि हमें अवश्य देना चाहिये तो शिक्षा और अधिक सर्व प्रिय बन सकी है" प्रत्येक व्यक्ति को ज्ञात है कि सन्तान के बनाने में माता का बड़ा भाग होता है अतः कन्याओं को धार्मिक शिक्षा देने की आवश्यक्ता कितनी अधिक है यह बतलाने की ज़रूरत नहीं ।

हमें यह जान कर हर्ष हुआ है कि आगरा मेडिकल स्कूल से इस वर्ष ६ कन्यायों ने सब असिस्टेंन्ट सर्जन की परीक्षा पास की है ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

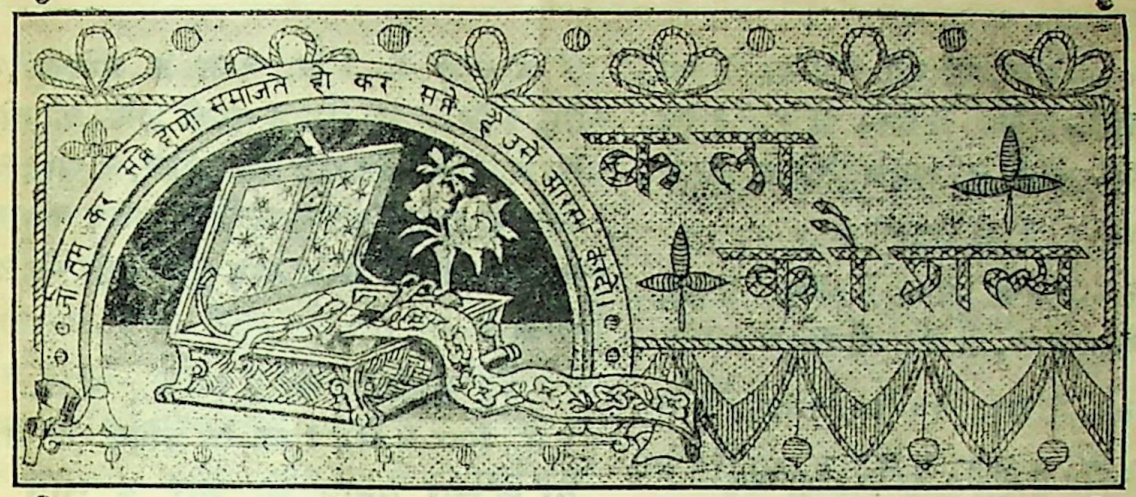

जाला लेस।

कोना बनाने की रीति।

(गतांक से आगे)

कोने को लेस में बताई हुई २४वीं पँक्ति से आरम्भ करो।

पंक्ति के आरम्भ में लौटने वाली ५ चे. की जगह ३ चे. करके लौटो और पहिले ख़ा पर २ ते. बनाओ, इसके बाद लकीर ख़तम करदो जैसी आगे लिखी जा चुकी है।

फिर २२वीं पंक्ति के अनुसार बनाओ जब अन्त के पास आ जाओ तब अन्त के तेहरों को छोड़ दो यानी ३ लैस्यट ही बनाकर ५ चे. कर के लौट पड़ो।

१ पं०—३ लैस्यट ४ ते. १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ४ छल्ले., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., २ चे., १ ते फिर उसी घर में, ४ ते., १ खा., ४ ते., * ३ खा ४ ते., १ खा., ४ ते इस चिन्ह से तीन वार ४ सादे फन्दे लौटो।

२ पं०—१० ते., * ३ चे., १ ते., ख़ा के बीच में, ५ चे. फिर १ ते., ३ चे., १० ते. ते. पर, इस * चिन्ह से फिर तीन वार, २ चे., १ ते., फिर पिछले घर में, २ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ४ ते., ५ छल्ले, ४ ते., २ ख़ा., १० ते., २ लैस्यट, ५ चे., लौटो।

३ पं०—१० ते., दोहरे से लेकर, ४ ख़ा., ४ ते., ६ छल्ले, ४ ते., ४ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., २ चे., १ ते., फिर पहिले बताई हुई लेस की २८वीं पंक्ति के अनुसार नीचे के घेरे के ऊपर चौखुन्टे घरों के ऊपर बीनो। तसवीर में ख्याल करो।

४ पं०—फिर २९वीं लकीर की तरह नीचे के लेस के घेरे की ख़तम वाली लकीर बीनो फिर घेरे के बाद ४ ते. (१० ते. पर) १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ७ छल्ले., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ३ चे., लौटो।

५ पं०—६ ते., ४ ख़ा., ४ ते., ६ छल्ले., ४ ते., ४ ख़ा., १० ते., ३ चे., लौटो।

६ पं०—३ ते., छोड़कर १ ते., २ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ४ ते., ५ छल्ले., ४ ते., २ ख़ा., १० ते., ३ चे., लौटो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

७ पं०—३ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ४ छल्ले., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १ ल. ते. अगले ते. में. ३ चे., लौटो।

८ पं०—१० ते., ४ ख़ा., ४ ते., ३ छल्ले., ४ ते., ४ ख़ा., ४ ते., ५ चे., लौटो।

९ पं०—१ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ४ ते., २ छल्ले., ४ ते., २ छल्ले., ४ ते., २ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., १ ल. ते. लौटो।

१० पं०—१ ख़ा., छोड़ो, १ ते. ते. पर—१ ख़ा., ४ ते. दो वार, ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ३ चे., लौटो।

११ पं०—६ ते., ४ ख़ा., ४ ते., ४ ख़ा., १० ते., १ ल. ते. ३ चे., लौटो।

१२ पं०—३ ते., छोड़ो., १ ते., २ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., १० ते., ३ चे., लौटो।

१३ पं०—३ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १ ल. ते., ३ चे. लौटो।

१४ पं०—१० ते., ३ ख़ा., ४., ते., ५ चे., लौटो।

१५ पं०—१ ख़ा., १० ते., २ ख़ा,, १ ल. ते. ३ चे. लौटो।

१६ पं—१ ख़ा छोड़ो., १ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ३ चे. लौटो।

१७ पं०—७ ते., १ ल. ते., ५ चे., लौटो।

१८ पं०—२ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१९ पं०—१४ ते. ५ लौटने वाली चैनों के बीच में., ४ सादे फन्दे सामने वाली दूसरी पंक्ति के साथ। लौटो।

२० पं०—१ चे., १ ल. ते. प्रत्येक १४ ते. पर, १ चे., १ ते. लौटने वाली ५ चे. की तीसरी चे. में, २ चे., फिर १ ते.,। फिर २ ख़ा., ६ ते., कोने के घुमाव की लकीरों के मोड़ की तरफ ४ सादे, तीसरे सीधे खड़े हुवे तेहरे से लेकर, लौटो।

२१ पं०—२ ख़ा., १० ते., २ चे.. फिर १ ते., फिर २ चे., १ ल. ते. प्रत्येक ल. ते. पर घेरे के सारे घुमाव में, और ४ सीधे फन्दे पहिले की तरह।

२२ पं०—३ चे., १ ल. ते. प्रत्येक ल. ते. पर घेरे के सारे घुमाव में, ३ चे., १ ते. ते. पर, २ चे., फिर १ ते.,—१ ख़ा., ४ ते., दो वार, ३ ख़ा., ३ ते., ४ सादे, पहिले सीधे खड़े हुवे तेहरे से लेकर, लौटो।

२३ पं०—३ ते., ३ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., २ चे., १ ते., फिर ४ चे., १ ल. ते., प्रत्येक ल. ते. पर घेरे के सारे घुमाव में., और ४ सादे पहिले की तरह लौटो।

२४ पं०—५ चे., १ ल. ते. प्रत्येक ल. ते. पर घेरे के सारे घुमाव में ५ चे., १ ते. ते. पर, २ चे., फिर १ ते., १० ते., ४ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., १ ते., तीसरे सीधे खड़े हुवे ते. में, २ चे., २ छोड़ो, १ ते., लौटो।

२५ पं०—२ ख़ा., ४ ते., ५ चे., २ छोड़ो, ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., २ चे., फिर १ ख़ा., फिर ६ चे., १ ल. ते. प्रत्येक ल. ते. पर घेरे के सारे घुमाव में, ४ सादे., लौटो।

२६ पं०—७ चे., १ ल. ते. घेरे में, ७ चे., १ ते. ते. पर, २ चे., फिर १ ते., २ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ४ ते., २ छल्ले, ४ ते., २ ख़ा., ६ ते., ४ सादे तीसरे खड़े ते. से लेकर, लौटो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२७ पं०—३ ख़ा., ४ ते., ३ छल्ले, ४ ते., ४ ख़ा., १० ते., २ चे., फ़िर १ ते., फिर ३ ख़ा प्रत्येक ७ चे. मे घेरे के घुमाव में, और ४ सादे लौटो।

२८ पं०—१० ते., फ़िर ३ ख़ा, १० ते. घेरे में दो वार, २ चे., फिर १ ते.,–१ ख़ा., ४ ते., दो वार, ३ ख़ा., ४ ते., ४ छल्ले, ४ ते., ३ ख़ा., ३ ते., ४ सादे सीधे फन्दों पर, लौटो।

२९ पं०—३ ते., २ख़ा., ४ ते., ५ छल्ले ४ ते., २ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., २ चे., फिर १ ते., ४ ते., १ ख़ा. ४ ते.,–फिर ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., घेरे में, ४ सादे लौटो।

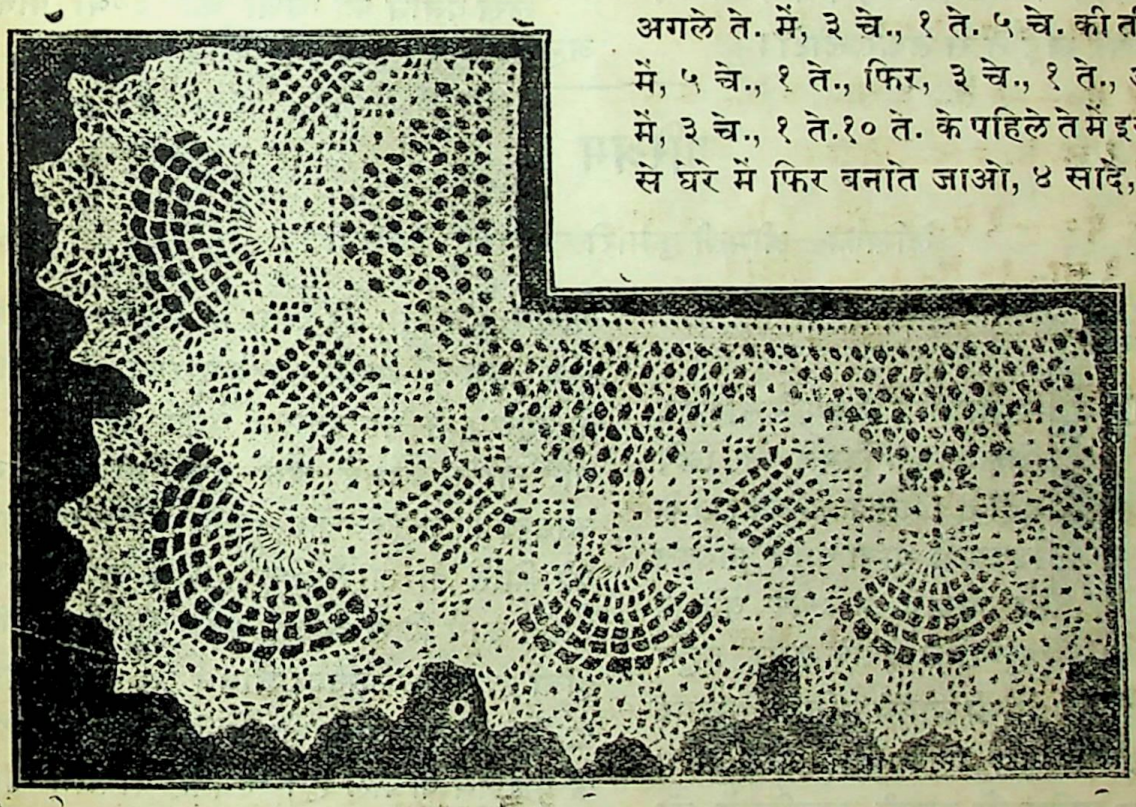

३० पं०—१० ते.,–फिर ३ चे., १ ते., ख़ा के बीच में, ५ चे., १ ते., फिर उसी खा में, ३ चे., १० ते., सारे घेरे में बार बार, २ चे., १ ते., फिर १० ते. के पिछले ते. में, १ ख़ा., १० ते., ४ ख़ा., ४ ते., ६ छल्ले., ४ ते., ३ ख़ा., १ ते., तीसरे सीधे ते. में, २ चे., २ छोड़ो, १ ते., लौटो।

३१ पं०—२ ख़ा., ४ ते., ७ छल्ले, ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ३ चे., १ ते., ते. पर, *३ चे., १ दो. १० ते के बीच में, ३ चे., १ ते., (१० ते. के पिछले ते. में) ३ चे., १ ते., अगले ते. में, ३ चे., १ ते. ५ चे. की तीसरी चे. में, ५ चे., १ ते., फिर, ३ चे., १ ते., अगले ते. में, ३ चे., १ ते. १० ते. के पहिले ते में इस *चिन्ह से घेरे में फिर बनाते जाओ, ४ सादे, लौटो।

३२ पं०—३ चे., १ ते. ते. में, *३ चे., १ दो. दो में,–३ चे., १ ते. ते. मे., तीन वार, ३ चे., और ५ चे. की तीसरी चे. में, १ ते., ५ चे., १ ते., ३ चे., १ ते. बनाओ,—३ चे., १ ते. ते में तीन वार, इस *चिन्ह से दोहराओ घेरे में, ३ चे., १ दो, दो. में., ३ चे., १ ते. ते. में, ३ चे., १ ते. फिर २ ख़ा., १० ते., ४ ख़ा., ४ ते., ६ छल्ले., ४ ते., ४ ख़ा., ६ ते., ४ सादे तीसरे खड़े ते. से लेकर, लौटो।

३३ पं०—१ खुली लैस्यट, १० ते., २ ख़ा., ४ ते., ५ छल्ले., ४ ते., २ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., १ ल. ते., ३ चे., लौटो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

३४ पं०—१ ख़ा छोड़ो, १ ते.,—१ ख़ा., ४ ते., दो वार, ३ ख़ा., ४ ते., ४ छल्ले, ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ लैस्यट ५ चे., ४ सादे सीधे खड़े दोहरे से लेकर लौटो।

३५ पं०—२ जाला, १० ते., ४ ख़ा., ४ ते. ३ छल्ले, ४ ते., ४ ख़ा., १० ते., १ ल. ते., ३ चे., लौटो।

३६ पं०—३ ते. छोड़ो, १ ते., २ ख़ा., १० ते., २ खा, ४ ते., २ छल्ले., ४ ते., २ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ३ जाला, ३ चे, १ दो., ३ चे., ४ सादे तीसरे खड़े ते से लेकर लौटो।

३७ पं०—४ जाला,—१ ख़ा., ४ ते दो वार, ३ ख़ा., ४ ते., ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ते. १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १ ल. ते., ३ चे., लौटो।

३८ पं०—१० चे., ४ ख़ा., ४ ते., ४ ख़ा., १० ते., ख़ा., ४ जाला ४ ते., १ ख़ा.। यहांसे धागा तोड़ कर दूसरे सिरे पर जोड़ लो जिस से लैस जैसी आगे बताई गई है उस विधि से तरतीब वार बनाई जासके।

३९ पं०—धागे को दूसरी ओर १० ते. के पहिले ते. में जोड़ लो, फिर ३ चे., ३ छोड़ो, १ ते., २ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., १० ते., ६ जाला., ४ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

लैस बनाने की विधी की १०वीं पंक्ति के अनुसार आगे बनाते जाओ।

परिश्रम।

लेखिका—श्रीमती कुमारी चन्द्रावती त्रिपाठी।

"परिश्रम" यह विषय ऐसा है कि जिसके गुण किसी से छिपे नहीं है। प्रत्येक मनुष्य इस के विषय में थोड़ा बहुत अवश्य ही जानता है और बड़े २ मनुष्यों ने इसके ऊपर बहुत कुछ कहा भी है। मैं भी अपनी मति के अनुसार इस के विषय में कुछ लिखती हूं और आशा करती हूं कि पाठिकायें इसकी अशुद्धियों को क्षमा करेंगी॥

संसार में प्रायः ऐसे लोगों की संख्या बहुत ही कम है जिन्हें आजन्म किसी प्रकार का परिश्रम करने की आवश्यकता न पड़ती हो, प्रत्येक मनुष्य को कुछ न कुछ परिश्रम, शारीरिक व मानसिक करना ही होता है, मनुष्य जीवन के सुख मार्ग की प्रथम सीढ़ी परिश्रम ही है, इसी के आश्रय से वह आनन्द पूर्वक यह मार्ग व्यतीत कर सकता है, और अपने जीवन के सच्चे आनन्द का अनुभव कर सकता है। बड़े २ विद्वानों की कीर्ति जो आज दिन कर्णगोचर होती है, उनके कार्य जिस के अनुकरण करने का आदेश होता है, उनके आदर्श जीवन जो हमारे जीवन के लिये उत्तम उदाहरण हैं, ये सब उन लोगों के परिश्रम के फल हैं। उनके परिश्रम ही के कारण देश का हित हुआ था और उसी से वह अब भी जीवित हैं॥

परिश्रम एक वह गुण है जिस से छोटे से छोटा मनुष्य भी उच्च पद पर पहुंच जाता है, कठिन से कठिन कार्य भी सुगमता से समाप्त हो जाता है, दरिद्र से दरिद्र मनुष्य भी अपने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जीवन को दुःख से नहीं काटता और छोटे से छोटा गिरा हुआ देश भी उन्नति के शिखर पर पहुंच कर देदीप्यमान होने लगता है। सर्व प्रकार का उन्नति के लिये परिश्रम सबसे प्रधान और अवनति के लिये आलस्य सब में मुख्य है। परिश्रम से हीन मनुष्य अपने सुख, वैभव और जीवन को अपने हाथों से स्वयं ही नाश कर देता है। अपने जीवन को बोझ समझ कर दिन रात मृत्यु की राह देखा करता है। देश, जाति तथा समाज का उस से कुछ भी भला नहीं होता। रोग, दुःख और मृत्यु उस के बन्धु बन जाते हैं, और संसार का हास्यस्थान हो जाता है। परन्तु परिश्रमी पुरुष सर्वदा उन्नति ही करता है। उसका सब जगह आदर होता है उस से देश जाति व समाज का बहुत भला होता है, वह अपना नाम पैदा करके अपनी उज्ज्वल कीर्ति को फैला देता है और अपने साथियों के लिये बहुत कुछ कार्य कर लेता है। अपना कर्तव्य भली भांति पालन करता है और किसी के सन्मुख नहीं हिचकता, वह कान्तिवान, धनवान और तेजस्वी दिखाई देता है, उसके लिये यह संसार सुखमय प्रतीति होता है और वही मनुष्य बिना एक आँसू गिराये मृत्यु शय्या पर सुखसे सोता है। उसको ईश्वर के सन्मुख जाते भी भय नहीं क्योंकि जिस के लिये वह यहां आया था अपने श्रम से उसको पूरा कर लिया और इसी से उसकी आत्मा को भी शान्ति रहती है।

परिश्रम एक वह पौदा है कि जिस के सींचने से शीघ्र ही मधुर फल प्राप्त होता है-जिस के फल से बहुतों का भला होता है। संसार के सभी सुख इसी के आधीन हैं-देश, जाति व समाज की उन्नति और अवनति इसी पर निर्भर है, और जीवन के सब और असल कार्य भी इसी के ऊपर निर्भर हैं। सफलता प्राप्त करने और प्रसन्न होने का यदि कोई उपाय है तो वह सच्चे हृदय से उत्तम कार्यों का करना ही है। जगत् के कल्याण के लिये, मानव जाति की उन्नति के लिये, अपनी आत्मा की शान्ति के लिये, अपने आचरण के सुधार के लिये, और अपने स्वास्थ्य को उत्तम बनाये रखने के लिये, केवल उपाय एक परिश्रम ही है-उत्तम २ कार्यों का करना ही सच्चा और सुखमय मार्ग है। संसार में जितने सुख के साधन हैं उन सब की प्राप्ति कार्य ही करने से होती है, अन्यथा नहीं।

बहुधा देखने में आया है कि बड़े २ तीक्ष्ण बुद्धि वाले विद्यार्थी जिन पर उनके अध्यापकों को पूरी २ आशा उत्तीर्ण होने की होती है रह जाते हैं और साधारण बुद्धि वाले विद्यार्थी परीक्षा के समय उत्तीर्ण होते दिखाई देते हैं। सो ऐसा क्यों होता है? वही उत्तर परिश्रम-तीक्ष्ण बुद्धि वाले अपनी बुद्धि के कारण परिश्रम की उपेक्षा करते हैं, जब कि साधारण बुद्धि वाले अपने को मन्द समझ उनसे चौगुना परिश्रम करने में रात्रि दिवस दत्तचित्त रहते हैं। और उसी के कारण उनको मधुर फल मिलता है जिससे वह और सब कुटुम्बी प्रसन्न होते हैं। परिश्रम के सन्मुख कोई वस्तु असाध्य नहीं है इसी कारण बहुतों ने इसको बुद्धि से भी श्रेष्ठ माना है।

इतिहास इस बात को प्रत्यक्ष विदित कर रहा है। अनेकों उदाहरण हैं जिनसे मालूम होता है कि परिश्रमी मनुष्य दूसरे देशों में जाकर राज्य करते हैं और आलसी घर में पड़ २ अनेकों कष्ट भोगते हैं। परिश्रमी जाति सदा स्वतन्त्र सुखी और सर्वोच्च रहती है तथा निरन्तर उन्नति करती रहती है। परन्तु

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar. Collection. Digitized by eGangotri Foundation 2021

जाति में अकर्मण्यता आजाती है उसके अधः पतन में देर नहीं लगती। उदाहरणार्थ भारतवर्ष को ही लीजिये-जिस समय यहां के निवासी प्राचीन आर्य्य परिश्रमी थे उस समय यह देश विद्या, कला, धर्म और नीति आदि में सर्व से बढ़ा चढ़ा था, प्रत्येक वस्तु सिद्ध हस्त थी। सूर्य की नाईं चहुंदिशि इसका प्रकाश फैल रहा था। देश धनधान्य से भररहा था-भारत माताको अपने पुत्रों की दुःखभरी वाणी कहीं सुनाई नहीं देती थी, वह भी पुत्रों के सुखसे सुखी थी। किन्तु आज हम इस भारत को उस दशा में नहीं पातीं-कहीं भी कला विद्या का केन्द्र दिखाई नहीं देता, शान्ति और सुख का नाम ही रह गया, भारत वासी पराधीन बने दुःख झेल रहे हैं, दुःख भरी आवाजें भारत माता की छाती विदीर्ण कर रही हैं, कराल पीड़ितों की दुःख भरी आवाजें गूंज रही हैं। यद्यपि वही देश है, वही भूमि है, वही नदियें तथा विशाल पर्वत उपस्थित हैं, वही हम पूर्वजों की संतान हैं परन्तु वह सुख लोप होगये क्यों? भारतवासियों में आलस्य आगया, वह अपनी कला तथा विद्या को भूल गये अपने कर्तव्य छोड़ दिये, प्रत्येक वस्तु के लिये विदेश की राह देखने को उद्यत हो गये और इसकी अधोगति के मुख्य कारण बने गये। अब भी यदि परिश्रम की ओर ध्यान दें तो भी कुछ न कुछ हो सकता है। चीन भी भारत की न्याईं पूर्व समय में उन्नति का केन्द्र था किन्तु शोक! कि वह भी आधोगति को प्राप्त होगया। सबसे उत्तम और प्रशंसनीय जापान को देखिये कि थोड़े ही समय में कितनी उन्नति की है और दिनोदिन चमकता आरहा है। इसका कारण वही है कि परिश्रम करके जापानियों ने हर देश की जाति से विद्या व कला सीखी और उसे अपने देश में सिखाया और प्रयोग किया-इसी से योरोप और अमेरिका की वस्तुओं की बराबरी जापानी माल कर रहा है। अपने उद्योग, साहस और बल से छोटे से राज्य को वहां के निवासियों ने इतना बढ़ा दिया। इस से प्रत्यक्ष विदित होता है कि मनुष्य को सर्वदा कार्य करने में दत्तचित्त रहना चाहिये और परिश्रम को कभी न छोड़ना चाहिये। हम लोगों को भी पुनः अपने देश की दशा देखते हुए परिश्रम से कार्य करने को तैयार होजाना चाहिये॥

माताओं को सन्देश।

डाक्टर मिस काशीवाई नारंग का कथन है कि बच्चे जाति की सच्ची सम्पति हैं और प्रत्येक समय में बच्चों से ही जाति की रक्षा होती है। प्रत्येक जीव जो उत्पन्न होता है उसका संसार में आने का कुछ न कुछ उद्देश्य है, चाहे छोटा हो या बड़ा। आज जो बच्चा है, वह भविष्य में कोई महा पुरुष बन जाता है, अतः प्रत्येक जीवन का मूल्य है, इसी लिये बच्चों की मृत्यु को रोकना चाहिये। इन्होंने भी बच्चों की मृत्यु के कारण वही बतलाये हैं जो डाक्टर बोस महाशय कहते हैं। अतः हम आशा करते हैं कि हमारी गृहस्थ बहिनें तथा मातायें इन डाक्टरों की सम्मति से लाभ उठावेंगी और अपनी प्रिय सन्तान को तथा अपनी रक्षा के हेतु घर की स्वच्छता, कपड़ों की स्वच्छता उचित खान पान इत्यादि बातों पर ध्यान रक्खेंगी॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

Regd. No. L. 1240.

वर्ष १] श्रावण १९७७—अगस्त १९२० [खण्ड १, संख्या ४

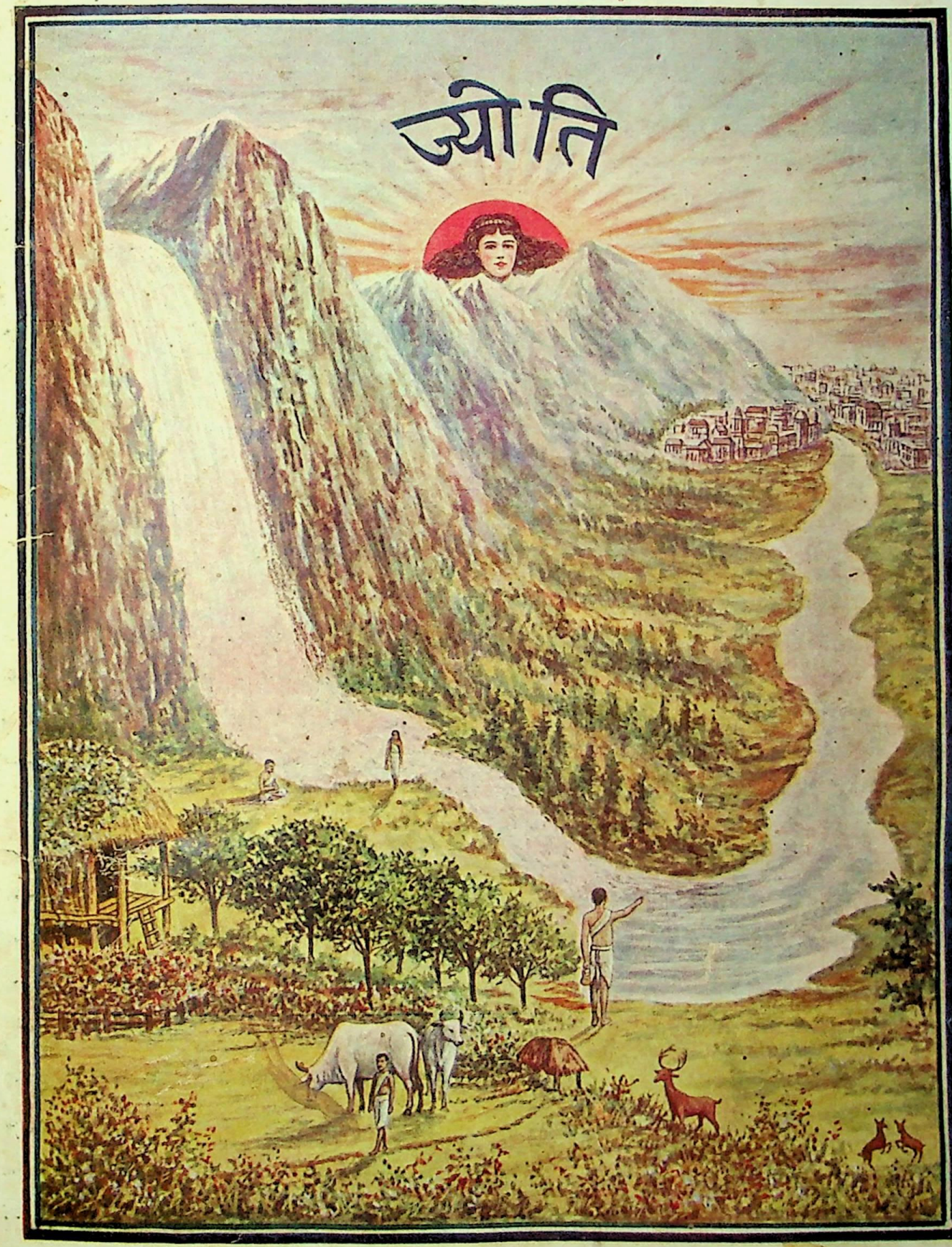

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ५)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय सूची ।

विषय	पृष्ठ
१—जन्मभूमि जननी [कविता]–ले० पं० रूप-नारायण पाण्डेय ।	१९५
२—संस्कार विधि के सोलह संस्कार–लेखक पं० रामगोपाल शास्त्री ।	१९६
३—भारत की वर्त्तमान अशान्ति पर एक मनोवैज्ञानिक दृष्टि–लेखक "तत्ववेत्ता"	१९९
४—मित्रराष्ट्र और जर्मन सन्धि की आर्थिक दृष्टि से आलोचना–लेखक प्रो० छेदी-लाल एम. ए. (आक्सन) बैरिस्टर-एट-ला ।	२०५
५—आह्वान [कविता]–ले० श्रीयुत पण्डित गयाप्रसाद 'श्रीहरि' ।	२१२
६—इंगलैण्ड की महिलाएं–लेखक श्रीयुत प्रो० बालकृष्ण एम. ए. (लंडन) ।	२१३
७—उजेला [कविता]–ले० श्रीयुत बंशीधर	२१६
८—मारिशसद्वीप–लेखक श्रीयुत स्वामी स्वतन्त्रानन्दजी ।	२१६
९—वेदने [कविता]–लेखक "ध्रुव" ।	२२०
१०–भारतवर्ष के राजनैतिक आकाश पर एक घटा–लेखक श्रीयुत कृष्ण बी. ए. सम्पादक प्रकाश व प्रताप ।	२२०
११–प्राचीन भारत में युद्ध कौशल–लेखक 'इतिहासज्ञ' ।	२२८
१२–हमारी मंजूषा	२३४
१३–विलाप पंचक [कविता]–ले० श्रीयुत पण्डित गयाप्रसाद 'श्रीहरि' ।	२३५
१४–कुसुमोद्यान	२३६
१–जेनेवा में वोट–अधिकारिणी-स्त्रियों की अन्तर्जातीय समिति ।	२३६
२–इंगलैंड वासी भारतीय युवक क्या कहते हैं ?	२३७
३–यूरोप में मदिरा पान निषेद करने का परिणाम ।	२४०
४–नया वैज्ञानिक आविष्कार फोटोफोन	२४०
५–गुजरात का कर्त्तव्य	२४१
६–मैं स्वर्गीय जीव या साधू नहीं किन्तु (Practical) क्रियात्मक मनुष्य हूं ।	२४२
१५–विचार प्रवाह ।	२४३
१–एक शोक जनक मृत्यु	२४३
२–गोवध में सरकार की सहायता	२४४
३–जातीय शिक्षा क्या है ?	२४६
४–आंगल पार्लियामेंट और डायर	२४७
५–कांग्रेस के विशेष अधिवेशन के प्रधान	२४७
६–वेद प्रचार ।	२४८
७–केवल वचनों पर न जावो किन्तु पिछले जीवन पर भी दृष्टि डालो ।	२४९
८–पंजाब में आर्य्य समाजियों में शिथिलता ।	२५०
१६–वनिता विनोद ।	२५१
१–समाचार ।	२५२
२–कला कौशल्य–लेखिका श्रीमती ओ३म्वती देवी ।	२५३
३–सुस्थिर प्रतिष्ठा–लेखिका श्रीमती लक्ष्मीदेवी जौहरी ।	२५५

ज्योति के नियम

ग्राहकों के लिये ।

१. ज्योति प्रति अंग्रेजी मास की १५ को ग्राहकों के पास पहुंचा करेगी ।

२. डाक व्यय सहित भारत के लिये इस का मूल्य ४॥) और छे मास के लिये २॥) बी. पी. का व्यय ≡) अलग है प्रति अंक का मूल्य ॥) है । भारत से बाहर विदेश के इसका वार्षिक मूल्य ६) है। मूल्य मैनेजर ज्योति लाहौर के नाम आने चाहिये ।

३. पुरानी प्रतियां जो मिलसकेंगी उनका मूल्य प्रति संख्या ॥) से कम नहीं होगा ।

४. पते के फिर वर्त्तन की सूचना पत्र के निकल से १५ दिन पूर्व मैनेजर को मिलनी चाहिये ।

५. यदि कोई संख्या किसी ग्राहक को न पहुंचे तो पहिले अपने डाक घर से पूछना चाहिये। यदि पता न चले तो डाक घर से जो उत्तर आवे उसे प्रबन्ध कर्त्ता के पास भेजदेना चाहिये । परन्तु यह सूचना अगले अंक के निकलने से १५ दिन पूर्व तक मिलनी चाहिये अन्यथा दूसरी प्रति विना मूल्य नहीं दी जायगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

॥ ओ३म् ॥

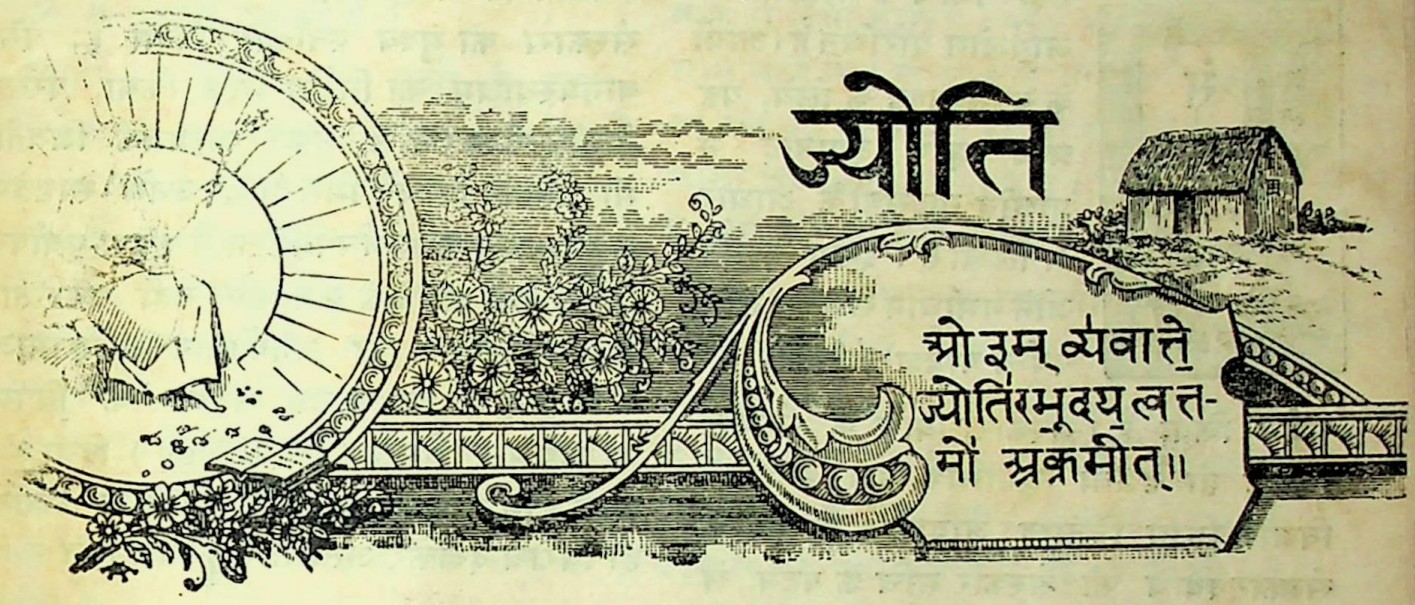

वर्ष १ | श्रावण १९७७—अगस्त १९२० | संख्या ४

जन्मभूमि जननी।

लेखक—श्रीयुत पं० रूपनारायण पाण्डेय

जय जय जन्मभूमि जननी।
ज्योतिर्मयी जगत की शोभा, देश-विदेश-मनुज-मन लोभा,
गुणगरिमा-महिमामणिधारिणि, अर्थ–काम–युत–धर्म्म–धनी॥
व्यास कणाद कपिल से ज्ञाता, राम-कृष्ण से त्रिभुवन-त्राता,
तिलक–गोखले–गाँधी–ताता, मालवीय से पुत्र जनी॥
तुझमें कमला का निवास है, वाणी का भी वर विलास है,
सुख-सुषमा-सौभाग्य-समुन्नति–संयुत सुंदर सदा बनी॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संस्कार विधि के सोलह संस्कार।

लेखक—श्रीयुत् पं० रामगोपाल शास्त्री

संस्कार विधि के नाम से सब आर्यलोग परिचित हैं। आर्यों के कर्म्मकाण्ड के लिये, यह ग्रन्थ ऋषि दयानन्द ने प्राचीन गृह्यसूत्रों के आधार से लिखा है। इसमें स्वामी जीने गर्भाधान से लेकर मृत्यु पर्यन्त षोड़श संस्कारों का वर्णन किया है। संस्कार विधि के संस्कार सोलह ही हैं वा न्यूनाधिक इस बात का विचार करना नितान्त आवश्यक है, क्योंकि संस्कार विधि की संस्कार सूचि के पढ़ने से संस्कार सत्रह सिद्ध होते हैं सोलह नहीं।

(२) इसी प्रकार यदि हम उपदेशमञ्जरी में आये हुए स्वामी जी के पूना वाले व्याख्यानों को पढ़ें तो उस में भी संस्कारों की गणना में गड़बड़ी दिखाई देती है। उस उपदेशमञ्जरी के सातवें व्याख्यान में, स्वामी जी ने जो संस्कार गिनायें हैं, उनमें और सब संस्कारों की गणना करते हुए भी स्वामी जी ने कर्णवेध संस्कार का उल्लेख नहीं किया। यदि वहां कर्णवेध को भी संस्कार गणना में पढ़ते तो संस्कार-संख्या षोड़श के स्थान में सप्तदश हो जाती। और सामयिक संस्कार विधि में हम कर्णवेध को भी संस्कार माला में देखते हैं, इससे एक आर्य के मन में संशयोत्पन्न होना साधारण है।

(३) वि० १९३३ सं० में जब स्वामी जी ने संस्कार विधि का प्रथम संस्करण निकाला तो उस में उन्होंने कर्णवेध संस्कार को भी संस्कारों में गिना है। वहां पर वानप्रस्थाश्रम संस्कार का वर्णन नहीं मिलता। जैसे अन्य संस्कारों को मुख्य स्वीकार किया है, वैसे बानप्रस्थाश्रम का निर्देश नहीं किया, परन्तु द्वितीय संस्करण से लेकर आजतक जितनी भी संस्कार विधियें मिलती हैं उनमें स्पष्टरूप से बानप्रस्थ का वर्णन मिलता है? इस पूर्वापर विरुद्ध लेख को देख कर कौन नहीं घबराता, अनार्य लोगों ने तो अनेकोंबार आर्यसमाज को 'स्वामीजी के सोलह संस्कार' के विषय पर कई बार चैलेञ्ज (challange) दिया है। आर्य लोग भी स्पष्टरूप से स्वामीजी के लेखोंमें ही विरोध देखकर अत्यन्त सङ्कुचित होते हैं।

(४) पं० राजारामजी ने एक ट्रेक्ट "संस्कार क्या है"? लिखा है, उसमें उन्होंने यह सिद्ध किया है कि स्वामी जी अन्त्येष्टि संस्कार को अन्त्येष्टि कर्म मानते थे, अन्त्येष्टि संस्कार नहीं। इसकी पुष्टि में उनका यह हेतु है, कि यदि स्वामी जी को यह संस्कार भी अन्य संस्कारों की न्यांई अभीष्ट होता तो इस के आदि में भी "अन्त्येष्टि कर्म्म विधिं वक्ष्यामः" न लिखकर "अन्त्येष्टि संस्कार विधिं वक्ष्यामः" यह लिखते, चूंकि उन्होंने संस्कार शब्द का प्रयोग साथ नहीं किया अतः उन्हें यह संस्कार स्वतन्त्र रूपेण अभिमत न था।

इस प्रकार के पूर्वोक्त चार प्रश्न अत्यन्त ही आपत्ति जनक हैं। अब इस में स्वामी जी का स्थिर सिद्धान्त क्या है? उन्हें कितने और कौन २ से संस्कार अभिमत थे? इसका निर्णय हम पाठकों के अभिमुख रखना चाहते हैं। इस में एक बात स्मरण रखनी चाहिये कि सत्या-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

न्वेष्टा को स्पष्ट २ सब कुछ कह और लिख देना अच्छा है ॥

इसी नियम का अनुसरण करके, हम ने इन गहन विषयों की पूर्ण रूपेण विवेचना करने के लिये ही लेखनी उठायी है ॥

क्रमशः इन पूर्वोक्त चार प्रश्नों के उत्तर लिखने से पूर्व, यह अत्यन्त ही आवश्यक है कि पाठक, स्वामी कितने संस्कारों को मानते थे यह जानलें। संस्कार विधि के आरम्भ का यह श्लोक है कि, "गर्भाद्याः मृत्यु पर्यन्ताः संस्काराः षोडशैवहि" गर्भ से लेकर मृत्यु पर्यन्त सोलह ही संस्कार हैं। स्वामी के इस लेख से यह तो निश्चय अवश्य बैठता है कि उन्हें संस्कार षोड़श ही अभिमत थे न्यूनाधिक नहीं। वे कौन २ से सोलह संस्कार थे उनकी सूची भी साथ ही दी जाती है—

१ गर्भाधान २ पुंसवन ३ सीमन्तोन्नयन ४ जातकर्म ५ नामकरण ६ निष्क्रमण ७ अन्न-प्राशन ८ चूड़ाकर्म ९ कर्णवेध १० उपनयन ११ वेदारम्भ १२ समावर्त्तन १३ विवाह १४ वान-प्रस्थ १५ संन्यास १६ अन्त्येष्टि ॥

इस संस्कार सूचि को पढ़कर पाठक निश्चय कर सकते हैं कि स्वामी जी को गृहाश्रम संस्कार स्वतन्त्र-रूप से भिन्न स्वीकार नहीं था और यही एक पद संशय उत्पन्न कर रहा था, क्योंकि इसके आगे संस्कार शब्द का प्रयोग हुआ २ है। पाठकों को यह निश्चय रखना चाहिये कि द्वितीय संस्करण में जो स्वामी जी ने गृहाश्रम संस्कार लिखा है वह विवाह संस्कार के अन्तर्गत माना है, भिन्न मुख्य नहीं। यह संस्कार उन्हें पीछे मुख्य स्वीकरणीय नहीं था। इस में मुख्य हेतु यही है, कि इस गृहाश्रम संस्कार के आरम्भ में अन्य संस्कारों की तरह कोई करणीय विधि नहीं जतायी गयी ॥

यदि उन्हें यह मुख्यरूप से अभिमत होता, तो अन्य संस्कारों की तरह इस में भी कोई न कोई विधि अवश्य बताते। इस में तो केवल गृहस्थ दम्पती को गार्हस्थ्य कर्म्म का उपदेश मात्र ही दिया हुआ है। यदि संस्कार शब्द के साथ आने मात्र से ही कोई आपत्ति उठायेगा, तो उसे यह भी स्मरण रखना चाहिये कि जहां शाला संस्कार की समाप्ति पृ० २१२ पर लिखी है, वहां इति शालादि संस्कार विधिः समाप्तः।

यहां शाला शब्द के साथ संस्कार शब्दका प्रयोग कोई भिन्न मुख्य संस्कार का द्योतन नहीं कर रहा, परन्तु जैसे शाला संस्कार विवाह के अन्तर्गत है, वैसे ही गृहाश्रम भी विवाह के ही अन्तर्गत है, भिन्न नहीं। संस्कार विधि के पढ़ने से यह पता लगता है कि स्वामी जी कई एक उपसंस्कारों को मुख्य संस्कारों के अन्तर्गत मानते हैं। विशेष कर यह उपसंस्कार विवाह के अन्तर्गत ही माने हैं ॥

पहले स्वामी जी गृहाश्रम को एक भिन्न संस्कार इस लिये मानते थे, कि इस में पञ्च-महायज्ञ, शाला कर्म, इष्टि, यज्ञ आदि कई एक क्रियाएं पाई जाती हैं परन्तु द्वितीय संस्करण के प्रकाशन काल में उन्होंने यही स्थिर किया कि गृहाश्रम को भी विवाह के ही अन्तर्गत मान लिया जावे, इस लिये द्वितीय संस्करण की भूमिका में भी उन्होंने लिख दिया है कि— "जो विषय प्रथम अधिक लिखा था उस में से अत्यन्त उपयोगी न जान कर छोड़ भी दिया है और अब की बार जो २ अत्यन्त उपयोगी विषय हैं वह २ अधिक भी लिखा है"। स्वामी जी के यह वाक्य स्वयं बता रहे हैं, कि उन्होंने द्वितीय संस्करण में परिवर्तन अवश्य किया है, परन्तु यह स्मरण रहे कि न्यूनाधिक लिखने पर भी स्वामीजी ने कहीं सिद्धान्त

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भेद नहीं किया। अन्य परिवर्तनों के साथ २ संस्कारोंकी मुख्यता और गौणता में भी परिवर्तन किया है। यह परिवर्तन कोई दूषणदायक नहीं, प्रत्युत इस से तो यही सिद्ध होता है कि शास्त्रों की समग्र बातें मानते हुए भी दयानन्द ने मुख्यता और गौणता में भेद किया है॥

इस परिवर्तन के समझने से दूसरे और तीसरे अङ्क का पूर्वपक्षी का विरोध भी स्वयं उठ जाता है। उस में भी हमें इतना अधिक वक्तव्य है कि पहले जुलाई मास सन् १८७५ ई० में जब पूना व्याख्यान दिये, तो उस समय स्वामी जी कर्णवेध संस्कार को जानते हुए भी बहुत उपयोगी नहीं समझते थे, और गृहाश्रम को इस की अपेक्षा विशेषानुभव करते थे, क्योंकि उस में पञ्चमहायज्ञादि अनेकान्तर्गत संस्कार आते हैं॥

यह भी सम्भव है कि कर्णवेध को उन्होंने चूड़ाकर्म के अन्तर्गत कहा हो और व्याख्यान सार लेखक ने इस बात का नोट न लिया हो। दूसरे कर्णवेध को मुख्यता न देने का उनका यह भी कारण हो कि, क्योंकि पारस्कर परिशिष्ट सहित पारस्कर गृह्यसूत्र के बिना अन्य किसी भी गृह्यसूत्र ने इस संस्कार का वर्णन नहीं किया। कुछ भी हो अन्त में यह कहने में हमें झिझक नहीं, कि उन दिनों स्वामी जी को कर्ण वेध मुख्य संस्कार स्वीकृत न था॥

इसके तीन मास पीछे १८७५ ई० के अक्तूबर मास में जब संस्कार विधि का प्रथम संस्करण निकाला, तो देश में कर्णवेध का अधिक प्रचार देख, उन्होंने पारस्कर के आधार पर इस कर्णवेध को भी संस्कार माला में गिना। उसमें वानप्रस्थ को मुख्य न गिना, क्योंकि संन्यास नियत वानप्रस्थ का बहुत भेद तो है नहीं, अतः उन्होंने गृहाश्रम और कर्णवेध को भिन्न लिखा और वानप्रस्थ को संन्यासान्तर्गत किया॥

आठ वर्ष पीछे निरन्तराध्ययन और अनुभव से स्वामी जी ने यही अनुभव किया कि कर्णवेध और वानप्रस्थ दोनों ही अत्यन्त उपयोगी हैं। वि० १९४० सं० में उन्होंने गृहाश्रम को विवाह के अन्तर्गत करने में कोई हानि न समझी और कर्णवेध और वानप्रस्थ को विशेष समझ, संस्कारों की गणना षोड़श की। इस परिवर्तन से मूल में कोई आपत्ति नहीं आती, किन्तु वही मुख्यता और गौणता का विचार बना रहता है। द्वितीय संस्करण में जो स्वामी जी ने सम्मति लिखी है वह अपरिवर्तनीय और अटल है॥

चतुर्थ प्रश्न जो पं० राजाराम ने किया है वह निराधार और निर्मूल है। स्वामी जी का पहला श्लोक कि गर्भ से लेकर मृत्यु पर्यन्त सोलह संस्कारों का वर्णन इस में होगा, सिद्ध कर रहा है कि उन्हें अन्त्येष्टि संस्कार भिन्न मुख्य स्वीकरणीय था। जो उन्होंने कर्म्म शब्द से आपत्ति उठायी है वह भी ठीक नहीं क्योंकि अन्त्येष्टि के आरम्भ में ही स्वामी जी लिखते हैं, कि अन्त्येष्टि कर्म उसको कहते है कि जो शरीर का अन्त का संस्कार है॥

यह वाक्य स्पष्ट कर रहा है कि उन्हें यह संस्कार ही स्वीकरणीय था। स्वामीजी की यह शैली ही है कि कर्म्म और संस्कार को वह एक ही अर्थों में प्रयुक्त करते हैं, जैसे सं० वि० पृ० २०२ पर "अथ शालादि कर्म विधिं वक्ष्यामः" अन्तमें पृ० २१२ पर इति शालादि संस्कारविधिः इनसे स्पष्ट है कि जिसे आदि में कर्म्म शब्द से लिखते हैं उसे ही अन्त में संस्कार शब्द से लिखते हैं, तो सिद्ध हुआ कि अन्त्येष्टि कर्म

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan

लिखने से भी अन्त्येष्टि संस्कार का ही ग्रहण करना चाहिये।

इस लेख में यथाशक्ति हम ने सिद्ध किया है कि स्वामीजी को सोलह संस्कार मुख्य रूप से अभिमत थे, और उपसंस्कारों की अन्तर्गतत्व में उनके लेख में भेद है, मूल सिद्धान्त रूप में नहीं। इसका विशेष विवेचन मैंने संस्कार विधि मण्डन नामक ग्रन्थ में किया है, जो थोड़े काल में जनता के अभिमुख आ जावेगा॥

भारत की वर्त्तमान अशान्ति पर एक मनोवैज्ञानिक दृष्टि।

लेखक—"तत्ववेत्ता"

(१)

समाचार पत्र के सम्पादकों की दृष्टि में कदाचित् यह बड़े महत्वका प्रश्न होगा कि हमारे देश वासियों के लिये राजनैतिक शिक्षा आवश्यकीय विषय बनने के लिये पर्य्याप्त रहस्य पूर्ण है या नहीं। गत शताब्दी के पचासवें वर्ष के पश्चात् धुंधुले समय में निकटतम प्रश्न तो यह था कि हमारे सामाजिक जीवन में शिक्षा भी जीवन का आवश्यक भाग बन सकेगी या नहीं; किन्तु इस सुखमय अज्ञान के भ्रम को भंग करने के लिये पूरे पचास वर्ष लगे और अब राजनैतिक अज्ञान की छाया को दूर करने के लिये बाधायें हैं जिनके कारण प्रतीत होता है कि कुछ कम समय न लगेगा। लेकिन कुछ शान्तिप्रद अवस्थायें अब भी विद्यमान हैं और वर्त्तमान अलोचना में देश की मानसिक और सामाजिक दशाओं का विवरण करके सम्भवतः देश के नर और नारियों के हृदयान्तर्गत राजनैतिक भावों के विकास करने के हेतु उचित उपाय सोचना ही हमारा लक्ष्य है।

प्रथम बात जो कि स्पष्टतया अपने शुद्ध स्वरूप में बतला देनी चाहिये वह यह है कि (Politics) राजनीति के नाम से जिस अनिर्वचनीय वस्तु को हम पुकारते हैं उसका ठीक मूल्य और गुण क्या है। सरलतम शब्दों में नीति शासन कला का नाम है, और उसका मूल्य यह है कि जनता की समष्टि और व्यष्टि गत समृद्धि की रक्षार्थ अनुकूल दशायें हों और उसका गुण यह है कि प्रजा का सामाजिक जीवन प्राणी मात्र के कल्याण के सिद्धान्त को स्पष्ट शब्दों में स्वीकार करता हो। बहुधा यह प्रयत्न किये जातेहैं कि किसी ख़ास शासन प्रणाली को सर्वोत्तम प्रणाली वर्णन किया जावे किन्तु स्वभावतया राजनैतिक वृद्धि इन आवरणोंको उल्लँघ जातीहै। विचार उन्नतिकेसाथ२मानवीमूल्यबदल जाताहै और राजनीतिके क्षेत्रमें आचार सम्बन्धी सिद्धान्तों को यदि स्थिरता का रूप दिया जावे तो वह शीघ्र ही समयानुकूल नहीं रहते। चूंकि राजनीति की कला नितान्त सत्यकला नहीं (empirical) है इससे काल की अपेक्षा करती है। वर्त्तमान समयमें जो तरीक़े हमें निश्चयात्मक रीति से उपयुक्त प्रतीत होते हैं आज से सो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ष उपरान्त वही अजान से हानिकारक रीतियों और दुखदायी वृत्तियों के उत्पादक सिद्ध हो सक्ते हैं। इस लिये राजनीति क्षेत्र में किसी संस्था को अन्तिम स्वीकार कर लेने के विरुद्ध प्रथम सावधान कर देना उचित है।

दूसरा मुख्य अंश इस प्रश्न से सम्बद्ध देश है, जिस की प्राकृतिक और जल वायु की विशेषताओं के अनुकूल ही राजनैतिक संस्था होनी चाहिये। बर्फ से ढके हुए ग्रीनलैण्ड में जो शासन प्रणाली आदर्श रूप से वर्त्ती जा सक्ती है उसे अफ्रीका के अति उष्ण विभाग में उपयुक्त करने से राजनीति तन्तु पर जो खिंचाव पड़ेगा उससे वह संघटित नहीं रह सकेंगे। जिस देश में तुम रहते हो उसके राजनैतिक परिणाम यद्यपि दृष्टि गोचर न हों तथापि तुम पर इतना अधिक प्रभाव डालते हैं कि तुम उसे अनुमान नहीं करते। अंग्रेज ऐतिहासिक (Buckle) बकल ने यह बतलाया है कि मानवी जीवन के विविध स्वरूप-स्वभाव, रहन सहन, राजनैतिक और धार्मिक संस्थायें यह सब जलवायु के गुणों के अनुकूल होते हैं किन्तु हम इतनी दूर न जाकर केवल यह कहेंगे कि बकल के (Analysis) विश्लेषण में जो अनिवार्य्य सचाई है उसे उपेक्षा की दृष्टि से न देख कर देश की पहाड़ियों, और घाटियों, चरागाहों, और हरितभूमियों, नहरों और मरुभूमियों की ओर भी उचित ध्यान रखना चाहिये॥

तीसराभाग जनता है—बहुत दिनों के कष्टमय विकास से मनुष्य में सामाजिक भाव उत्पन्न हुआ है अतः एक जाति जिसको स्वराज्य के लिये ज़रा भी लालसा हो उसे व्यक्तिगत दैनिक जीवन में जितनी दान प्रदान के भावों की आवश्यक्ता होती है उस से कहीं अधिक उदार भावों को प्रयोग करना चाहिये। हम बहुधा सुनते हैं कि हमारे पूर्वजों के वर्णन हमारी नैतिक श्रद्धा की मात्रा को नियत करते हैं और यह सचाई इतनी स्पष्ट है कि हम इस की उपेक्षा नहीं कर सक्ते और नाही इसे बहुत स्पष्ट होने के कारण दृष्टि से च्युत ही कर सक्ते हैं। मनुष्य के जातीय जीवन में उनकी पैतृक-विचार-सम्पत्ति उन जड़ों को मज़बूत करने में जिन के आधार पर उन्नतिशील राजनैतिक संस्थायें कार्य करती हैं—बड़ा भारी भाग लेती है। हमें अर्वाचीन भ्रमात्मक विचार से-जो कि किसी के अपने राष्ट्रीय धर्म को डब्बी में बन्द कर के उनके स्वभाव, रीति और पैतृक-विचार-सम्पत्ति से सर्वथा असम्बद्ध (exotic) विदेशीय संस्था को उनपर अंकित करने का अध्यवसाय करते हैं—सावधान रहना चाहिये। यह कोई मदारी का खेल नहीं है कि तुम असत से सत को प्रादुर्भूत कर सक्ते हो अथवा बतखों के घोसले में से गृद्ध के झुण्ड बना सक्ते हो। किसी जाति की वृद्धि, उत्तरोत्तर वृद्धि के हेतु शृंखलाबद्ध इतिहास की विद्यमानता आवश्यकीय तत्व है। इतिहास की एकमात्र सच्ची व्याख्या वही है जो आदर्शों की दृष्टि से की जाती है और सच्ची से हमारा प्रयोजन उस व्याख्या से है जो कि उन्नति के नियम के सर्वांगों के अनुकूल है। आदर्श हमारे जीवन के प्रत्येक काल में अधिष्ठाता रहते हैं—हम उन की उत्पत्ति उनके झगड़ों, और अधूरी सफलता असफलताओं का पता लगा सक्ते हैं, हम उनसे सबक सीखकर अपनी कल्पना करने में उनके परिणामों से शिक्षाग्रहण करते हैं, हम आगे चलने के लिये पीछे दृष्टिपात करते हैं।

इस लिये राजनीति का प्रश्न काल, देश तथा जाति के सम्बन्ध से त्रिविध प्रकार का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है अतः वर्तमान परिस्थिति की आलोचना करने तथा किसी प्रकार निमातृ शक्ति का प्रयोग करने में इन तीनों दशाओं में से प्रत्येक के प्रभाव को प्रधान रखना चाहिये। और हमारी आलोचना के प्रत्येक भाग में हमारे वक्तव्य की इन्हीं कसौटी पर पहिचान करनी उचित होगी।

अब जब कि गवर्न्मेन्ट आफ- इण्डिया-बिल कानून बन गया है हम पर समय असमय पर यह बल पूर्वक अनुरोध किया जाता है कि इसे नवीन सम्वत्सर का सुप्रभात मानें और यदि हम उत्तम बच्चों की भांति रहते हुये चुपड़ी हुई और दो दो लेने की इच्छा न करें तो इसी पृथ्वी पर ही हमें नये स्वर्ग की प्राप्ति का आश्वासन दिया जाता है। प्रत्येक अवसर पर प्रत्येक व्यक्ति द्वारा अच्छे आचार का उपदेश दिया जाता है। हमारा उद्देश्य रिफार्म एक्ट पर निष्पत्ति देना अथवा जो लोग स्वच्छन्दता से उसे भारत का (मैग्ना कार्टा) अधिकार पत्र समझकर १८५८ ईस्वी के विख्यात घोषणा पत्र (dispatch) के समान उसका स्वागत करते हैं, उन की आलोचना करना नहीं है, और परमात्मा न करे कि उसकी भांति यह भी निष्फल सिद्ध हो। हमें आशावादी बन कर यह समझना चाहिये कि भारत की राजनैतिक गड्डा एक नये नक्षत्र में चलाया जारहा है जिसका शुभ या अशुभ सिद्ध होना जनता के अपने प्रयत्नों पर निर्भर है। किन अवस्थाओं में यह चाल प्रारम्भ हुई यह तो राह चलन्ते को भी मालूम है। क्या इसका जनता में राजनैतिक विचारों की अधिक वृद्धि के कारण प्रारम्भ हुआ? अथवा जनता में इस विवेक को उन्नत करने की अत्यन्त उत्कट इच्छा ही इस का कारण है? यह दो बिल्कुल भिन्न प्रकार के प्रश्न हैं और यदि हम क्षणमात्र के लिये इस 'नूतन चाल' के पूरे अर्थ समझने के लिये पीछे की ओर दृष्टिपात करने की चेष्टा करें तो ही ठीक होगा॥

मैं उन लोगों में से एक हूं जिन का विश्वास है कि भारत का राजनैतिक भाग्य सीमाप्रान्त के लोगों के हाथ है, विशेष करके पश्चिमोत्तर सीमा प्रान्त के। यदि पंजाब असहाय चूहिया की तरह चुप रहता तो राज विद्रोह के जुर्म, और विप्लव के प्रचार, चाहे कितने ही तीक्ष्ण और विदारक अन्य प्रान्तों में होते किन्तु उससे शासकों के हृदय में कुछ भी संकोच न पैदा होता। यदि पंजाब सुरक्षित रहे और सर्कार देश के अत्यन्त बलवान सुपूतों की शारीरिक शक्ति का तथा अज्ञानता और असहाय अवस्था का लाभ उठाती रहे तो फिर सर्कार के कान में जूं भी नहीं रेंगती। भारत के राजनैतिक भविष्य की कुंजी पंजाब के हाथ में है। मैं राजनीति में प्राकृतिक अंश की आवश्यक्ता पर बल देना चाहता हूं और यदि प्रकृति ने पंजाब को देश रक्षा की दृष्टि से एक महत्व पूर्ण स्थान प्रदान किया है तो इस बात को अच्छी तरह मान लेने में क्या हानि है?

मैं कोई भविष्य बाणी नहीं करता जिसे तुम न तो खण्डन कर सको न विश्वास कर सको, लेकिन यथार्थ बात-जो कि उसी की भांति अखण्डनीय और स्वयं सिद्ध है-इतिहास और दूरदर्शिता के आधार पर अवश्य कहूंगा वह यह है कि—"पंजाब में फसाद उठाओगे तो तुम सारे भारतवर्ष के लिये अग्नि प्रदीप्त करोगे; वह तुम्हारे काबू में रहे तो राजनैतिक आन्दोलन तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ सक्ता" अतः पंजाब की परिस्थिति की ही आलोचना में लगने का कारण वहां की स्थानिक अवस्थाओं के अतिरिक्त यह भी है कि हम भारत की राजनैतिक जीवनी के ऐसे अंग पर उचित

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अभिमान के साथ बल देते हैं जो लोगों की दृष्टि पथ से प्रायः च्युत हो जाते हैं॥

१९०५ से पूर्व पंजाब में राजनैतिक कार्य्य का चिन्ह भी न था—समस्त प्रान्त में मृत्यु-को भांति शान्ति थी और कुछ हिन्दू तथा मुसलमान समाज-संशोधकों के दृढ़ आन्दोलन के अतिरिक्त सारे प्रान्त में भय छाया हुआ था। ज़रा भी किसी ने आत्माभिमान के लिये सिर उठाया तो इतने ज़ोर से दबा दिया जाता था कि पंजाबियों की मशहूर युद्धशीलता हास्यप्रद भूत बन गया था, और लोग पुलीस वालों के या सफेदपोश सि. आई. डी. वालों के साये से भागते थे। जनता के इन दबे हुये भावों की प्रतिमूर्त्ति अंग्रेज़ और हिन्दुस्तानी नौकर शाही के विशिष्ट व्यवहार में झलकती थी। एक ओर सर्कारी नौकरियोंमें चापलूसी तथा रिश्वत लेना इतना प्रचलित हो गया कि अन्य सभ्य देश में कहीं न होगा, दूसरी ओर साधारण जनता के प्रति नौकर शाही की तिरस्कार युक्त घृणा का भाव इतना बढ़ा कि गाली देना, ठोकर लगाना साधारण बात थी। आर्थिक कष्टों ने जनता के हृदयों के कोमल भावों को कठोर बना दिया और यद्यपि मेरा विश्वास है कि पंजाबियों की तरह अन्य किसी में देश प्रेम इतना नहीं है तथापि देश त्याग करने पर आर्थिक स्थिति की उन्नति की आशा ने पंजाबियों के हृदय में छुपी हुई (adventure) परदेश घूमने की इच्छारूपी चिन्गारी को प्रदीप्त कर दिया और बीसवीं सदी के प्रारम्भ में पंजाब से झुण्ड के झुण्ड लोग भारत के अन्य प्रान्तों में, दूर के पूर्वीय देशों में, कनाडा, अफ्रीका और योरुप में जा बसे। इन प्रवासियों ने अपनी परिस्थिति तथा प्रतिष्ठा की परवाह न की। उन्होंने पंजाब से भागने में ही कल्याण समझा क्योंकि वहां का जीवन सर्वथा नीरस था और वहां खाने को कुछ न था। उनकी हार्दिक अभिलाषा यही रही कि पंजाब की आर्थिक तथा राजनैतिक उन्नति सदैव हो। उन्होंने विदेश में नये घर बना लिये किन्तु अपने स्वदेश को जहां से भागने पर वह वाध्य थे कभी निरादर की दृष्टि से नहीं देखना चाहते थे और हर्ष का विषय है कि वह पग २ पर बहुत से विघ्नबाधाओं का सामना करते हुये भी अपने उद्देश्य में बड़ी उत्तम रीति से सफल हुये हैं। एक तरफ तो उन्होंने अपने देश वासियों के लिये अकस्मात् समुद्र पार की कठिनाइयों का प्रश्न उपस्थित कर दिया है किन्तु दूसरी ओर उन्होंने अपने [illegible] और सब से ऊपर [illegible] के अर्पण किया है। वह साधारण लोग थे किन्तु संख्या में अधिक होने के कारण भूमण्डल के दूर २ कोनों में झुण्ड बना कर फैल गये; परन्तु वह हमेशः उन लोगों को। जो घर पर रहने पर वाध्य थे हर्ष और प्रसन्नता का सन्देश भेजते रहे। उन्हें फांके करने पड़े, दुर्गम आपत्तियों का सामना करना पड़ा और वह समृद्धिशाली भी हुये। उन्हें भारत में पुरानी शासन प्रणाली का रहना पसन्द नहीं था इस लिये उन्होंने उसके हटाने के लिये ऐसी दृढ़ता का प्रयोग किया जो विफल हो ही नहीं सक्ती थी। उन्होंने अन्याय और अत्याचार का मुकाबला प्रशंसनीय रीति से किया और अपने उच्च व्यवहार से पंजाब प्रान्त में नये जीवन का संचार किया। आओ हम आज इन जन साधारण के प्रति—जिन्होंने आत्म सम्मान के कठिन उद्धारक युद्ध में कष्ट झेल कर और प्राण अपर्ण करके औरों के लिये रास्ता साफ़ किया—अपनी असीम श्रद्धा, हार्दिक कृतज्ञता और स्नेह तथा प्रशंसा की भेंट चढ़ावें॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पंजाबी लोग साधारणतया मनोद्वेगों के आधीन होते हैं और इस अंधाधुंध जोश के कारण परिणाम पर विचार न करते हुए उन्हों ने भयंकर पथ का अनुसरण किया और मटिया मेट करने वाले काम करडाले। किन्तु यदि कुछ लोगों पर प्रमत्तता सवार हुई तो उस के लिये बड़ी भारी उत्तेजना थी, इस लिये इसका पाप उनके सिरों पर है जो कि उत्तेजना के लिये उत्तरदाता थे। हम उन पागलपन के कार्य्यों की नीचता को जिन्हें यह मनुष्य करने पर वाध्य किये गये कम करके दिखलाना चाहते नहीं- प्रमत्तता की उपेक्षा नहीं की जासक्ती और नाहीं विचार शून्य कट्टरपन अथवा निरपराध निर्दयता ही उपेक्षणीय है। लेकिन इतिहास से सिद्ध है कि विचार शून्यता ने उतना ही अपना काम किया है जितना कि धार्मिक उत्तेजना में आकर मूर्खता के उद्वेगों ने। यद्यपि इन क्रूर कर्म करने वालों के साथ हमारी सहानुभूति नहीं है तथापि हम न्याय पूर्वक इनके हृदयों को प्रेरणा करने वाली शक्ति पर, उनके कार्य्यों के प्रेरक हृदय पर, और उन्हे आगे वढ़ाने वाली उत्तेजना पर अवश्य विचार करसक्ते हैं।

उन्होंने व्यर्थ कष्ट सहन नहीं किये, उनके कष्टों का प्रभाव देश की निर्जीव अकर्मण्यता पर अच्छा पड़ा और उसने इसे जगाकर क्रिया शीलता में परिणत कर दिया। व्यक्तिगत नुकसान से लोगों का ध्यान अपनी अधोगति की ओर आकर्षित हुआ। आर्थिक-भार जो कि आगे ही अत्याधिक था उसने सामाजिक वहिष्कार के साथ मिलकर लोगों को बतलाया कि तुम्हारी अपने देश में कोई परिस्थिति नहीं है। पंजाबी किसानों को छोटे २ नौकर शाही तंग करते थे तब लोगों को प्रवासी भाइयों के समुद्रपार कष्टों का पूरा २ पता लगने लग पड़ा।

जब कि पंजाब के कृषकों में इस प्रकार विदेश में पर्य्याप्त अर्थ प्राप्ति की खोज का अन्दोलन हो रहा था यहां पर एक स्थानीय झगड़े का कारण मिलगया। १९०७ का (The Land Alienation Bill) भूमि-क्रय करने का कानून उन अन्य सब सक्तियों से बढ़कर निकला जिसके नीचे कृषक वर्ग दुर्भाग्य से दव रह थे। इस प्रकार प्रगट और अप्रगट सक्तियों के विरुद्ध सन्ताप का भाव तो था ही केवल उसे भड़कीले शब्दों में प्रगट होने के लिये कोई वहाना चाहिये था। भूमि क्रय राजनियम ने उनके हाथों अन्दोलन के लिये न्याय युक्त शस्त्र का कार्य्य किया और जब राजकर्मचारियों ने अपने पुराने तरीकों को अक्तियार करते हुए जनता के मनोभावों की उपेक्षा की तो जनता की ओर से बड़े भारी और बड़े महत्व के अन्दोलन की तैय्यारी हुई। पहली वार यहां पर ऐक्यमत का प्रदर्शन हुआ जिस की उपेक्षा करनी कठिन थी लेकिन निर्दय निर्वासन, राजविद्रोह के मुकदमों और कई प्रकार की बहुत चुभने वाली यातनायों की शृंखला बंध गई। जाति की वाक शक्तियां लुप्त हो गईं किन्तु दृढ़ सन्ताप की धारा सुरंग में प्रवाहित होती रही। १९०६ या ७ के बाद दश वर्ष तक कुछ राजनैतिक घटना न हुई किन्तु आत्म-सम्मान के स्थापन के कौशल में यह शिक्षा प्राप्त करने तथा अभ्यास करने का समय था। यह तरीका बड़ा दुखदायी था क्योंकि वाकशक्ति राजनैतिक शिक्षा का जीवन प्राण है। इसलिये जब यूरोप का महायुद्ध प्रारम्भ हुआ तो पँजाब तो खास तौर पर अप्रसन्नता के भाव में था। आज्ञा पाते ही रंग-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रूटों की खूब भरती हुई और अप्रसन्नता से नहीं बल्कि खुशी से, क्योंकि युद्ध की उत्तेजना से उनके ऐसे हृदयों को जो कि निर्जीविता और निष्क्रियता से अब तक मन्दाग्नि हुए थे कुछ साहस दिखलाने का अवसर मिला। लेकिन जब कि घर पर रह जाने वाले लोगों को लगातार जख्मी हुए तथा मरे हुए सम्बन्धियों का दुःख समाचार मिलने लगा तो उन की सहनशीलता पर उल्टा प्रभाव पड़ा ख़ास कर स्त्रियां तो बहुत ही दुःखी हुईं। यद्यपि इन लोगों के हृदयों में एक प्रकार का भाव बैठ गया, जो था तो अशुद्ध कि सर्कार ने उनके सम्बान्धियों को समुद्र पार भेजकर उनको कष्ट पहुंचाये हैं लेकिन कोई भाव बन जाने पर मुश्किल से हटाया जासक्ता है। सब से ऊपर (war loan) युद्ध-ऋण तथा उसकी आपत्ति के बादल मंडराने लगे। छोटे २ राजकर्मचारियों की रंगरूटों की भरती तथा रूपया इकट्ठा करने की कमी बढ़ती के अनुसार ओहदे, सन्मान और पदवृद्धि होने लगी। जहां युद्ध के लिये धन तथा मनुष्य भरती करने का प्रश्न था वहां इनको बिल्कुल निरंकुश स्वतन्त्रता दी गई। रंगरूटों की भरती में तो बहुत देर तक यह नीति चल ही रही थी किन्तु जब इस प्रकार विस्तृत रूप से जीवन के आवश्यकीय दान का अभ्यास किया जा रहा था तो राज कर्मचारियों को यह अन्याय युक्त मालूम हुआ कि धन दान में इतनी झंझट और रूकावटें क्यों हों? वह इस बात को तो भूल गये कि गला घोंटकर भरती करने में जिस का गला घोंटा गया वह तो परदेश पहुंच जाता था और जब तक वह विशेष रूप से भाग्य शाली न हो या युद्ध में अंग विहीन हो कर न लौटे तब तक उसका कुछ पता ही न चलता था किन्तु युद्ध-ऋण के लिये लोगों से बलात द्रव्य लेने में तो वह पीड़ित जन देश में ही रह जाते थे और अन्त में वहां पर इन व्यक्तियों से छोटे २ असन्तोष के केन्द्र बनते जाते थे। नौकर शाही ने समझा कि सब कुछ सुरक्षित है। एक निहत्थी जाति को दबाने की प्रथा इतनी बहुत कठिन नहीं है किन्तु तभी तक जब तक कि शासित लोग अपनी सारी सम्मिलित शक्ति उनके विरुद्ध प्रयोग न करें। "ज़बरदस्त शासक" के हाथ में दलन करना निर्वासन करना, कैद करना और फांसी चढ़ाना यह शक्तियां बड़ी प्रभाव शालिनी तो होती हैं किन्तु केवल थोड़े समय के लिये सम्मिलित जनता के विरुद्ध उनका नितान्त विफल होना स्पष्ट ही है। आयरलैण्ड और एजिप्ट अपनी कहानी बतलाते हैं और पंजाब अपनी रीति पर अपनी गाथा अलग ही बतलाता है। १९१७ में एक अंग्रेजी रेडिकल (Radical) पत्रने--जबकि व्यक्ति-स्वातन्त्र्य पर दिन प्रतिदिन बन्धन होते जाते थे--लिखा था कि "Dora's skirts swell up fuller and fuller under a gale, until there is a slight rent, a prick of the baloon and the ugly form shows in all hideousness."

इस प्रणाली का केवल एक परिणाम हो सक्ता था--भड़कना, अतः वह हो गया यद्यपि उसके होने के तत्कालीन कारण चाहे जो कुछ हों॥

१९१९ के मार्च और अप्रेल की घटनाओं के ठीक पहिले की खास परिस्थिति की पहिचान करना इस लेख का विषय नहीं है किन्तु उन अंधाकार के दिनों में जो भाव जनता के हृदय को उद्वेलित कर रहे थे उनकी महत्ता को समझना आवश्यक है क्योंकि उस से देश में विद्यमान प्रेरक भाव को भलि भांति समझजा सक्ता है। उनके कार्य्य का लक्ष्य क्या

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

था, किस उत्तेजना ने उनसे वह कार्य करवा डाले जिनको देखकर स्थूल बुद्धि वाले चकृत हुए इनकी खोज में ही हम अपने प्रश्न की सिद्धि का भेद पावेंगे। लक्ष्य ऊपर से चिपकी हुई वृद्धि नहीं होती वह हृदय में वर्द्धित होते हैं। मनुष्य के गम्भीरतम हृदय तल से उनका प्रादुर्भाव होता है। एक खास कार्य्य किसी बात का बहुत फीका लक्षण होता है उसका प्रभाव शृंखला बद्ध होता है और यदि हम उनकी महत्ता का पूर्ण परिचय चाहते हैं तो हमें केवल उनके कार्य्यों की शृंखला राशि का ही ज्ञान प्राप्त करना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि उन पुरुषों का भी जिन्होंने वह कार्य्य किये, उन स्त्रियों का जिन्होंने भाक्ते से उनका समर्थन किया तथा उनके रस्म रिवाज गाथा और कहावत का, तथा आर्थिक कष्टों अथवा धनधान्यपूर्णता का, सामाजिक पक्षपात और सामाजिक दशा का भी ज्ञान होना आवश्यक है। यह एक बड़ा भारी काम है और हम इसे विनीत भाव से ही छूने का हौसला कर सक्ते हैं। हम उनके पृथक २ प्रभावों का वर्णन न करसकें किन्तु न्याययुक्त शासन को भविष्य कार्य्य के बतलाने का दावा करने के पूर्व हमें अपने आप तो इस को समझ लेना आवश्यक है। इसलिये हमारी राजनैतिक शिक्षा में प्रथम प्राण सम तत्व यह है कि हम सहानुभूति और पूर्ण विवेचना से अपने आपका, अपने इतिहास का और अपनी संस्थाओं का अध्ययन करें। आप कहेंगे कि इसमें तो एक जाति की समग्र शिक्षा आजाती है, हां बात तो यही है। मेरा अभिप्राय तो केवल यही है कि जो बात स्पष्ट और आवश्यक है उसी पर बल दिया जाय और हमारे राजनैतिक पुनः-निर्माण में जो सब से बड़ी आवश्यक्ता है उस की उपेक्षा न की जाय।

मित्रराष्ट्र और जर्मन सन्धि की आर्थिक दृष्टि से आलोचना।

लेखक—श्रायुत् प्रो० छेदीलाल एम.ए. (आक्सन) बैरिस्टर-एट-ला।

(२)

संधि की इन शर्तों को एकबार भी पढ़लेने से यह निश्चय पूर्वक कहा जासक्ता है कि राष्ट्रपति विलसन के चौदह सिद्धान्तों में से किसी एक का भी इनमें लेशमात्र भी भास नहीं है। प्रत्युत इसके कई क्या लगभग सब सिद्धात इस सन्धि द्वारा भंग किये गए हैं। सन् १८८७ में विस्मार्क ने जो फ्रान्स को युद्ध में हराकर सन्धि करने पर विवश किया था उसकी भी सन्धि इतनी कड़ी शर्तों की संधि नहीं थी। संसार में विजेता विजित देश पर सदैव दबाव डाला करते हैं किन्तु कभी भी किसी ने न्याय और ऊंचे सिद्धान्तों की इतनी दुहाई देकर इस तरह की कड़ी सन्धि किसी से नहीं की। ध्यान पूर्वक देखने से विदित होता है कि इन शर्तों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का केवल एक ही ध्येय है कि जर्मनी कभी भी अपनी उन्नति न कर सके। यूरोप में सत्रहवीं सदी तक जर्मनी की स्थिति बहुत खराब थी किन्तु फ्रेडेरिक दी ग्रेट के राज्यकाल से प्रशिया की उन्नति आरम्भ हुई। और विसवार्क के समय में जर्मनी साम्राज्य का संगठन पूर्वरूप से हुआ। केवल दो ही सदी में जर्मनी ने आश्चर्य जनक उन्नति करली। जर्मनों के इस उन्नति के मुख्य तीन कारण ज्ञात होते हैं और इन्हीं कारणों को जड़से काटने का प्रयत्न मित्र-दल ने सन्धि में किया है। जर्मनी की आर्थिक उन्नति के मुख्य कारण ये हैं। पहिला जर्मनी का वैदेशिक व्यापार बहुत बढ़ा चढ़ा था। इसके मुख्य कारण उसकी आश्चर्यजनक जहाजी उन्नति थी जिससे बारबरदारी में जर्मनी को बहुत धन मिलता था। पुनश्च, जर्मनी बहुत सा धन अन्य देशों के व्यापार आदि में लगारखा था इससे भी जर्मनी को बहुत लाभ होता था। इसके अतिरिक्त जर्मन अपने उपनिवेश द्वारा भी बहुत धन कमाते थे। यही नहीं अपनी उद्योगशीलता के कारण जर्मन व्यापारियों ने संसार के सब स्थानों में अपनी दुकानें खोल रखी थीं और इस कारण अपने देशका माल हर स्थान में पहुंचा कर ये बहुत मुनाफा पाते थे। तात्पर्य इसका यह कि अपनी कार्य-कुशलता के कारण उन्होंने अपने वैदेशिक व्यापार की पूरी उन्नति उपरोक्त कारणों से करली थी।

दूसरा, जर्मनी ने आभ्यान्तिरिक व्यापार में भी बड़ी तरक्की हासिल की थी। यहां पर लोहे और कोयले की खदानें बहुत होने के कारण जर्मनी लोहे के सामान के लिये संसार में प्रसिद्ध हो गया था। यही नहीं वरन इन दोनों खनिज पदार्थों के कारण बहुत से उद्योग धन्धे जर्मनी में खड़े हो गये थे। और जर्मनी का व्यापारिक संसार में झंडा फहरा रहा था। जर्मनी को उसके खदानों के सुभीते नहीं मिलते तो उसकी इतनी व्यापारिक उन्नति होना असंभव ही था।

अंतिम कारण जर्मनी की आर्थिक उन्नति का उसकी नाविक शक्ति में उन्नति और चतुर वाणिज्य नीति था। जर्मनी ने इतने जहाज़ तैय्यार करा लिये थे कि संसार में बारबरदारी का काम बहुत कुछ ये ही लोग करते थे और इस कार्य में बेहद लाभ उठाते थे। इसके अतिरिक्त इनकी वाणिज्य-रक्षण-नीति ऐसी थी कि इन्होंने अपने देश में हर प्रकार के उद्योग धन्धों को तरक्की दी थी। जर्मनी की आर्थिक उन्नति की इमारत इन्हीं तीन मुख्य कारण रूपी खंभों पर निर्धारित की गई थी। मिस्टर लायड जार्ज क्लेमेंशो तथा सी० आर लोंडो ने इसे अच्छी तरह समझलिया था। उनकी इच्छा जर्मनी से बदला लेकर कड़ी से कड़ी सजा जर्मनी को देने की थी। प्रतिकार के भूत ने इन को ज्ञान शून्य कर दिया था, और ये लोग यही सोचने लगे कि जर्मनी इस तरह से सदैव के लिये पंगु कर दिया जावे ताकि वह उठ ही न सके। अतः इन लोगों ने निश्चय कर लिया कि जर्मनी की व्यापारिक उन्नति की नींव ही खोद डाली जावे। इसी विचार को ध्यान में रख इन्होंने संधि की व्यापारिक शर्तें निर्धारित कीं। ऊपर वर्णन किये हुए संधि की शर्तों में से १ से ६ तक जर्मनी के विदेशी व्यापार को पूर्णरूप से नाश करने ही के लिये रखे गये हैं। व्यक्ति विशेष जर्मनों की सब सम्पत्ति जब्त कर लेना अन्तर्राष्ट्रीय नियमों के प्रतिकूल है। करोड़ों रूपये की जर्मन जायदाद जो कि विदेश में थी जब्त करली गई और भविष्य में जर्मनी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का विदेशीय व्यापार इन शर्तों के कारण बिल-कुल असंभव हो गया। इस से केवल जर्मनों ही को धक्का नहीं लगा लेकिन वैयक्तिक संपत्ति के मूलतत्वों पर बड़ा आघात पहुंचा। जर्मनी अब किसी देश का सहारा नहीं लेसकता। उदासीन राष्ट्र भी अब उसकी सहायता नहीं कर सक्ते। इन सबका एक ही अर्थ है याने जर्मनी का संसार से आर्थिक बहिष्कार। क्या यही प्रेसीडेण्ट विलसन के उदार कथनों का कार्य रूप में परिणत करना है? क्या प्रेसिडेण्ट विलसन के सिद्धान्तों की इस में हत्या नहीं हुई?

संधि की शर्तें ७ से १० तक जर्मनी के कोयला पर पूर्ण रीति से आघात करती हैं। मित्र राष्ट्रों ने इन शर्तों से जर्मनी को ऐसा जकड़ दिया है कि जर्मनी को अपने घरेलू खर्च के लिये भी कोयला मिलना असंभव हो जावेगा। सारव्हेलीका फ्रेंच के हाथ सौंपना केवल अन्याय प्रद ही नहीं है बल्कि राष्ट्रपति विलसन के स्वभाग्य निर्णयात्मक सिद्धांत के बिलकुल ही प्रतिकूल है। वहां की आबादी लगभग ६½ लाख है, जिन में से कठिनता से १०० फ्रेंच होंगे। १००० वर्ष से ये लोग जर्मनी में शामिल हैं और अब भी जर्मनी को ही अपनी मातृभूमि मानते हैं। अकारण ही फ्रान्स का इसे हथिया लेना इस बात का सब से बड़ा प्रमाण है कि मुंह से स्वतंत्रता २ चिल्लाते रहने पर भी मित्र राष्ट्र दूसरे की जायदाद हड़प करने में जर्मनी से किसी भी तरह कम नहीं हैं॥

जर्मनी की स्थिति कोयले के विषय में कितनी शोचनीय है निम्नलिखित अंकों से स्पष्ट हो जावेगा। सन १९१३ में जर्मन खदानों से कुल १९ करोड़ १५ लाख टन कोयला निकाला गया इसमें से लगभग १ करोड़ ९० लाख टन खदानों में खर्च हुआ। ३ करोड़ ३५ लाख टन विदेश में भेजा गया बाकी १३ करोड़ ७ लाख टन जर्मनी ने अपने घर खर्च में इस तरह लगायाः—

रेलवे	१ करोड़ ८० लाख
गैस, बिजली, पानी	१ ,, २५ ,,
घरमें जलाना तथा कृषी वो छोटे धंधे	२ ,, ४० ,,
बंकर	,, ६५ ,,
उद्योग धन्धे	७ ,, ८० ,,

जर्मनी को अपने खर्च के लिये कोयले की बड़ी आवश्यकता है यह उपरोक्त अंकों से स्पष्ट हो जावेगा। अब एक तो अलसेस लोरेन, सारवेसन तथा अपर सिलेसिया के खदानों के जर्मनों के हाथ से निकल जाने के कारण करीब ६ करोड़ ८ लाख टन याने एक तिहाई कोयला यों ही कम होगया। जो कुछ बचा उसमें से ४ करोड ५० लाख टन कोयला फ्रान्स, इटली वगैरह को प्रति वर्ष देना होगा। अब जर्मनी के पास अपने उपयोग के लिये लगभग ८ करोड टन कोयला बच जाता है। यदि यही बात रही तो जर्मनी यातो मित्र दल को कोयला न देसकेगा या उसे अपने बहुत से कारखाने बन्द करने होंगे। फिर इसे भी ध्यान रखना चाहिये कि जितना कोयला युद्ध के पहिले निकलता था अब कई कारणों से नहीं निकल सकेगा। परिणाम यह होगा कि यदि जर्मनी सन्धि की शर्तों को मानने पर विवश किया जावेगा और उससे सन्धि के अनुसार कोयला लिया ही जावेगा तो अपने कोयले के लिये जर्मनी पर अवलम्बित रहने वाले देश स्विज़रलैंड तथा आस्ट्रेलिया पर्याप्त कोयला न पासकेंगे और इनकी दशा अत्यन्त शोचनीय होजावेगी। जर्मनी भी बहुत सी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आवश्यक चीजें अपने कोयले के बदले इनसे खरीदता है अब वह भी न खरीद सकेगा इससे उसकी औद्योगिक उन्नति अत्यन्त निराशाप्रद हो जावेगी। यूरोप में कोयले के लिये अवश्य खींचातानी होगी। फ्रान्स और इटली तो अपना काम किसी तरह चला लेवेंगे। बाकी देश वाले इतना कष्ट उठावेंगे कि वहां राज्यक्रान्ति होना बहुत कुछ संभव हो जावेगा॥

रही जर्मनी की लोहे की खदाने, इसमें ७५ सैकड़ा लोहा अलसेस लोरेन से निकलता था। यह तो उसे वापस करना ही पड़ता किन्तु यदि लोहे के पत्थर निकाल कर इन्हीं जर्मनों के ही हाथ बेच दिये जाते तो अधिक हानि न होती और योरोप में लोहे के सामान के लिये तंगी होती किन्तु फ्रान्स इसे स्वयं लोहा बनाने के कार्य में लाने का प्रयत्न करेगा और इस काम म पर्याप्त अनुभव तथा ज्ञान न होने के कारण जर्मनी के समान न उतना अच्छा ही, न उतनी तौल में भी लोहा बना सकेगा। इसका भी परिणाम केवल जर्मनी ही को नहीं वरन समस्त योरोप को भोगना पड़ेगा।

जर्मनी की आर्थिक उन्नति में उसकी नाविक उन्नति ने बड़ी सहायता दी थी। संधि का फिकरा १ इसकी जड़ पर कुठाराघात करता है। जर्मनी में जितने बड़े जहाज थे सब छीन ही लिये नहीं गये वरन मित्र दल की इच्छा के अनुसार जर्मनी को बीस लाख टन जहाज प्रति वर्ष बनाकर देना होगा जिसका अर्थ यह है कि अन्त तक जर्मनी अपनी नाविक शक्ति नहीं बढ़ा सकेगा। सन्धि की ११ से लेकर १३ तक की शर्तें जर्मन व्यापार नीति का सर्वथा नाश कर देती है। इन सब बन्धनों के होते हुए भी जर्मनी अपनी चतुर वाणिज्य नीति द्वारा कुछ न कुछ उन्नति अवश्य कर लेता किन्तु जर्मनी अब यह भी नहीं कर सकेगा। अपने नये २ उद्योग धंधों की रक्षा भी नहीं कर सकेगा। यही नहीं बल्कि युद्ध काल के पूर्व अपनी समृद्ध दशा में विदेश से जो ऐयाशी का सामान खरीदता था उसे भी वह अब अपने देश के लाभ के लिये नहीं रोक सक्ता। जर्मनी का सब वर्तमान धन ही नहीं लिया गया वरन भविष्य में भी बड़ी रकम मांगी गई और जिस के साथ साथ यह शर्त भी की गई कि मित्र राष्ट्रों के सामान जर्मनी जाने में कुछ भी अड़चन न डाले जावें।

जर्मनी को बहुत से एंजिन तथा गाड़ियां मित्र राष्ट्रों को देना पड़ा। जर्मनी से छीने हुए देशों में जर्मनी का रेल सम्बन्धी बहुत सामान था वह भी जब्त कर लिया गया। इन कारणों से जर्मन रेल की दशा अब उतनी अच्छी नहीं रह सक्ती जितनी उसके पूर्व थी। इतनी कमजोर अवस्था में भी इस विषय में जर्मनी के भीतरी प्रबन्ध में इतने अड़चन डालना निश्चय इस बात का द्योतक है कि मित्र राष्ट्र कभी भी नहीं चाहते कि जर्मनी किसी भी तरह की उन्नति करे।

यदि जर्मनी के व्यापार का केवल नाश ही होगया होता तो इतनी कठिनता न होती। जर्मनी के ऊपर संधि के फिकरा १४ के अनुसार ८ अरब पौंड का भार डाला गया है। लायड जार्ज तथा क्लिमेंशो ने समझ लिया था कि जर्मनी की व्यापारिक शक्ति का एकदम नाश कर उससे इतना रुपया पाना असंभव होजावेगा। किन्तु इन्होंने पार्लीमेंटरी चुनाव के वक्त लोगों को जर्मनी से बड़ी बड़ी रकमें पाने की झूठी आशा दिलाई थी। इसलिये जर्मनी से इतना हर्जाना लेने के लिये उन्हें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विवश ही होना पड़ा। केम्ब्रिज के प्रसिद्ध अर्थ शास्त्रज्ञ मिस्टर कीन्स ने हिसाब लगाया है कि मित्र दल की कुल हानि २ अरब १२ करोड़ पौंड से अधिक की नहीं हुई है। इस कारण इस रकम से अधिक लेना केवल राष्ट्रपति विलसन के त्यक्त सिद्धान्तों का और भी अपमान करना ही नहीं है वरन जर्मनी के साथ विश्वासघात तथा अन्याय भी है। कीन्स साहब कहते हैं ' These are few episodes in history which posterity will have less reason to condone—a war ostensibly waged in defence of the sanctity of international engagements ending in a definite breach of one of the most sacred possible terms of such engagements on the part of the arectorious champions of these ideals कीन्स साहब का कथन है कि जर्मनी की व्यापारिक दशा इतनी हीन होजाने के बाद उस के लिये यह असंभव है कि इतनी भारी रकम वह मित्र राष्ट्र को देसके। पहिले तो युद्ध के कारण जर्मनी की आर्थिक दशा इतनी शोचनीय होगई है कि मई १९२१ तक जर्मनी १ अरब पौंड मित्र राष्ट्र को देही नहीं सक्ता। इसके अलावे जर्मनी को २ अरब पौंड का ब्याजू मुद्दती हुंडी मित्र राष्ट्रों को दे देना चाहिये। हुंडी का ब्याज १९२५ तक २॥ सैकड़ा है, उस के बाद लगभग ६ सैकड़ा हो जाता है। इसका मतलब यह कि सन १९२१ से १९२५ तक केवल ब्याज में जर्मनी को ७ करोड़ ५० लाख पौंड देना होगा और इसके बाद १८ करोड़ पौंड केवल ब्याज ही में देना होगा। रिपेरेशन कमिशन इसी तरह हुंडियां बढ़ाता रहेगा जबतक कि बकाया ५ अरब पौंड भी पूरा न होजावे। जब इस पूरे रकम पर ब्याज चालू हो जावेगा तब जर्मनी को लगभग ४३ करोड़ पौंड प्रति वर्ष ब्याज में ही देना पड़ेगा। जर्मनी यदि ब्याज न देसकेगा तो ब्याज भी मूलधन में शामिल होता जावेगा। तात्पर्य यह कि ब्याज का ब्याज चालू रहेगा। जर्मनी के साथ इतना अन्याय किया गया है यह इससे स्पष्ट हो जावेगा कि यदि सन १९३६ तक जर्मनी मित्र राष्ट्र को प्रति वर्ष बराबर १५ करोड़ पौंड देता जाय जो कि उसके लिये वर्तमान स्थिति में सम्भव नहीं है तथापि जर्मनी पर मित्र दल का कर्ज़ा ८ अरब से बढ़कर १३ अरब पौंड हो जावेगा। जर्मनी इससे तब ही बच सक्ता है जब प्रति वर्ष मित्र राष्ट्र की sinking fund में ४८ करोड़ पौंड देवे। कीन्स ने हिसाब लगाया है कि हाल में जो धन जर्मनी देसक्ता है वह इस तरह है—

नगदी सोना चांदी	अंदाजन ६ करोड़ पौंड
जहाज वगैरह की कीमत	१२ „ „
जर्मनी का धन जो विदेश में लगा है	१० से २५ करोड़

इस में से नकदी सोना चांदी तो दिया ही नहीं जासक्ता कारण कि इसके देने से जर्मन मुद्रा प्रणाली का नाश हो जावेगा जिसका फल केवल जर्मनों को ही नहीं भोगना पड़ेगा किन्तु मित्र दल के मत्थे भी पड़ेगा। इस लिये १८२१ तक जर्मनी केवल २२ करोड़ और अधिक से अधिक ३७ करोड़ पौंड तक देसक्ता है। इससे अधिक वह एक पैसा भी नहीं देसकेगा। इस का अर्थ यह कि जर्मनी यदि देने की नीयत भी रखे और अपना वर्त्तमान धन दे भी डाले तो भी जर्मनी पर ब्याज का ब्याज लगते जावेगा और जर्मनी कभी भी इस कर्ज से न छूट सकेगा। इस में सन्देह नहीं कि रिपेरेशन कमीशन को यह अख्तियार दिया गया है कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जर्मनी की आर्थिक अवस्था के अनुसार इसमें वह घटी बढ़ी कर सके किन्तु इन दोनों बातों में बड़ा भेद है। पहिले इतनी रकम का नियत कर दिया जाना जिसे देकर जर्मनी अपने लिये प्रतिवर्ष कुछ बचा सके और दूसरी इतनी भारी रकम जर्मनी के मत्थे डालना जिसे वह दे ही न सके और उसके कम करने का अधिकार ऐसी दशा में एक विदेशी कमीशन को सौंपना जिसका मुख्य उद्देश्य यही रहे कि अधिक से अधिक धन लेना। पहिले के अनुसार उन्नति करने के लिये कुछ उत्साह के लिये स्थान रहता है। दूसरे में उन्नति की कोई आशा नहीं रहती। इसी दूसरी नीति के सम्बन्ध में कीन्स साहब कहते हैं It skins per alive year by year in perpetuity and however skillfully and discriatly the operation is performed with whatever regard for not killing the patient in the process, it would represent a policy which if it were really entertained and deliberately practiced the judgment of men would soon pronounce to be one of the most outrageous acts of a cruel victor in civilized history.

यदि इस सन्धि से केवल जर्मनी ही को हानि उठानी पड़ती तो कुछ कहने की आवश्यकता न थी। बहुत से एशियाटिक देश इसी तरह की दुर्दशा में पश्चिमीय राष्ट्रों के हाथ फंसे हैं जिनके बारे में कोई पूछता तक नहीं है। यदि केवल इस सन्धि से ऊंचे सिद्धान्तों ही की हत्या होती और मित्र दल पर बेइमानी का ही अभियोग आता तो भी कोई विशेष बात न होती कारण कि कई यूरोपियन शक्तियों ने कई पूर्वीय देशों में इन सिद्धान्तों से भी ऊंचे सिद्धान्तों का खून किया है और अपनी अनन्त स्वार्थ प्रियता का परिचय दिया है। जर्मन संधि के प्रतिकूल जो इंग्लैंड के प्रसिद्ध लेखक फ्रेडेरिक हेरिसन ए. जी. गार्डिनर तथा कीन्स आदि आवाज उठा रहे हैं उसका कारण केवल मित्र राष्ट्रों का घोर अन्याय तथा प्रतिज्ञा भंग करना ही नहीं है। इन दोनों बातों के लिये यूरोपियन राष्ट्रों की ये कितनी जगह समालोचना करसके हैं। मुख्य कारण इनके विरोध का यह है कि जर्मनी की व्यापारिक अवनति तथा आर्थिक हीनता का घोर परिणाम समस्त यूरोप को भोगना पड़ेगा। जर्मनी के कमजोर होते ही बोलशिविज्म का प्रचार चारों ओर बड़े जोरों से हो रहा है। कोई भी देश बोलशिविज्म के विचार तरंगों से रक्षित नहीं है और सब जगह बोलशिविज्म की उन्नति तथा प्रचार के लक्षण दृष्टिगोचर हो रहे हैं। बोलशिविज्म के प्रचार से सामाजिक संगठन में एक घोर क्रान्ति हो जावेगी, जिसके होने से यूरोप अपनी वर्तमान राजनैतिक स्थिति की रक्षा नहीं कर सकेगा। इसके प्रचार को सुव्यवस्थित रूप से शासित जर्मनी अच्छी तरह से रोक सक्ता। दूसरा कारण जर्मनी की रक्षा करने का यूरोप को दीवालिया होने से बचाना है। चाहे मित्र राष्ट्र इस बात को अभी क्रोध और बदला लेने की इच्छा के कारण न समझते हों किन्तु बहुतसी बातों में उनकी उन्नति जर्मनी की उन्नति के साथ बंधी है। यूरोप की बढ़ती हुई जनसंख्या के लिये उतना अनाज यूरोप पैदा नहीं कर सक्ता। यूरोप को अपनी जनसंख्या के लिये खाद्य पदार्थ संसार के दूसरे हिस्से से मंगाना पड़ता है। खाद्य पदार्थ के बदले इन देशों को भी कुछ चीज यूरोप को तैय्यार कर देना पड़ता था। अर्थात् यूरोप को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपने उद्योग धंधों की पूरी उन्नति, अपने भोजन प्राप्ति के हेतु करनी पड़ती थी। जर्मन बड़े वैज्ञानिक थे उनकी भौगोलिक स्थिति ऐसी थी कि वे अपने विज्ञान का पूर्ण उपयोग कर अपने उद्योग धंधों की उन्नति अच्छी तरह कर सक्ते थे। इस लिये जर्मन उद्योगशीलता के कारण उसके आसपास के यूरोपीय देशों को भी अपनी व्यापार की उन्नति करने में भी पूर्ण सहायता मिली और आर्थिक दृष्टि से जर्मनी पर सब यूरोपीय राष्ट्र निर्भर होने लगे। रूस नार्वे, हालैंड; वेलजियम, स्विटज़रलैन्ड इटली, तथा आस्ट्रियाहंगरी की चीजों का सबसे भारी खरीददार जर्मनी ही था। ग्रेटब्रिटेन, स्वीडन, तथा डेनमार्क के सबसे बड़े खरीददारों में जर्मनी का दूसरा नम्बर तथा फ्रान्स के खरीददारों में तीसरा नम्बर था। यह केवल इनका खरीददार ही नहीं था किन्तु इनके पास माल भी बहुत बेचता था। रूस, नार्वे, स्वीडन डेनमार्क, हालैंड, स्विज़रलैंड, इटली, आस्ट्रियाहंगरी, रोमानिया तथा वलगेरिया अपनी आवश्यकता की जितनी आर्थिक चीजें जर्मनी से खरीदते थे किसी दूसरे स्थान से नहीं मंगाते थे। ग्रेट ब्रिटन फ्रांस तथा वेलजियम में विदेश से जितना सामान आता था उनमें जर्मनी का नम्बर दूसरा था। ग्रेट ब्रिटन जितना अपना माल जर्मनी भेजता था, हिन्दुस्तान को छोड़ उससे अधिक कहीं नहीं भेजता था। और जितना माल जर्मनी से खरीदता था अमेरिका को छोड़ उससे अधिक कहीं नहीं खरीदता था। यूरोप का कोई ऐसा देश न था जिसका एक चौथाई व्यापार जर्मनी से न होता हो। यही नहीं, रूस, आस्ट्रियाहंगरी, वलगेरिया और रोमानिया को जर्मनी ने व्यापार के लिये बहुत साधन दिया था। तात्पर्य यह कि यूरोप के व्यापार का जर्मनी एक मुख्य केन्द्र था, जिस पर बहुत से यूरोपीय देश अवलंबित थे। इसी व्यापार की रक्षा में ही यूरोप का कल्याण था, कारण कि बिना इसके यूरोप को दूसरे स्थानों से भोजन नहीं मिल सक्ता। जर्मनी को पंगु कर दिये जाने से इन सब राष्ट्रों को आर्थिक हानि उठानी पड़ेगी, उनके व्यापार को बड़ा धक्का पहुंचेगा जिसका परिणाम अन्त में यह होगा कि यूरोप वालों को पर्याप्त भोजन न मिल सकेगा। बढ़ती हुई जनसंख्या और व्यापार के अभाव से भोजन की कमी यूरोपीय समाज में अवश्य घोर क्रान्ति उपस्थित कर देंगे। फिर चारों ओर बोलशिविज्म का डंका भी बज रहा है। इसलिये जर्मनी की रक्षा यूरोप की रक्षा के लिये अत्यन्त आवश्यक है और यही मुख्य कारण है कि बहुत से दूरदर्शी विद्वान संधि की तीव्र आलोचना कर रहे हैं ताकि जर्मनी की स्थिति इतनी निराशाप्रद न होजाय।

१--वज्र के समान कठोर हृदय वाला भी आत्म-बल की अग्नि में पिघल सकता है। यह अतिशयोक्ति नहीं, गणित के अङ्कों के समान है।

२—सत्याग्रही वही हो सकता है जिसकी धर्म्म में सच्ची निष्ठा हो। 'मुख में राम बगल में छुरी' को निष्ठा नहीं कहते। धर्म का नाम लेकर उलटे काम करना धर्म नहीं है।

३—पश्चिमी सभ्यता निरीश्वरी है भारत की सेश्वरी। इस अन्तर को समझ कर भारत-भूमि के हितेच्छुओं को अपनी सभ्यता से उसी प्रकार अंकित रहना चाहिए जिस प्रकार बच्चा मां से अंकित रहता है। (महात्मा गांधी)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आह्वान ।

लेखक-श्रीयुत् पंडित गया प्रसाद 'श्रीहरि' ।

बता दो अये निठुर नटवर कहां वंशी बजाते हो ?
ललित लीला लता लोनी, ललामा लोक जो इक थी ।
उसी जग पावनी जननी, को क्योंकर अब लजाते हो ॥१॥

सहज सुखमा सदन सुखदा, सदा जो सस्य श्यामल थी ।
सुधासी कल्प-तरु सी थी, उसे दीना बनाते हो ॥ २ ॥

जहां सब देश देशों के, दुःखी अवलम्ब पाते थे ।
उसी के हा दुलारों को, विदेशों में पढ़ाते हो ॥ ३ ॥

नवल अनसी कुसुम सुन्दर, करों में लेके रथ रश्मि ।
कहो किस युद्ध प्रांगण में, विजय वांछा मनाते हो ॥ ४ ॥

वहां इक कृष्ण कृष्णा के, पटाकर्षन से तुम रोये ।
यहां कुल कामिनी लाखों, निरख आंसू न लाते हो ॥ ५ ॥

गईं सुरलोक बिन पट के, लजीली बहु सुललनायें ।
न फिर भी इत दयादृग हैं, कहो किस रंग राते हो ॥ ६ ॥

जहां की रत्न गर्भा थी, सुरत्नों से सदा भूषित ।
वहां इन कागज़ों के हा ! प्रभो नोटें चलाते हो ॥ ७ ॥

न घर में अन्न धन, तन में, न पट मन में न बल दल है ।
अभागे भारतीयों को, कहो क्योंकर जिलाते हो ॥ ८ ॥

पड़े रोते हैं अलसीले, मसलते लोल लोचन ये ।
किसे गीता के उपदेशों, से "श्रीहरि" अब जगाते हो ॥९॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इंगलैण्ड की महिलाएं।

लेखक-श्रीयुत् प्रो० बालकृष्ण एम. ए. (लंडन)

(१)

एक भारतवासी के लिये जिसने अपने देश में आजकल भी स्त्रियों को घरों में बन्द और घूंघुट के पीछे छिपी हुई और दबी चाल से चलते हुए कभी २ देखा हो इङ्गलैण्ड में क़दम रखते ही स्त्रियें ही उसका ध्यान खैंचती हैं। उनकी चहल पहल, रंगबिरंगे, चमकीले वस्त्र, उनके दमकते हुए लालिमा-मय गोरे चेहरे, चिकनी चुपड़ी बातें अवश्यमेव ध्यान आकर्षित करती हैं। जिस दुकान पर जावो, वहीं स्त्रियां ही सामान बेचने वाली हैं, जिस होटल और विश्रामगृह में जावो वहां स्त्रियां ही सेवा करने वाली हैं, जिस स्टेशन पर जावो वहां स्त्रियां ही टिकट देने वाली हैं, जिस दफतर में पहुंचो वहां स्त्रियां ही काम करती दिखाई देती हैं। डाकखानों में तो लगभग स्वराज्य ही स्त्रियों ने किया हुआ है। लेखक और टाइप करने वाली तो बिना अपवाद के देश भर में इस समय स्त्रियां ही हैं। छोटे स्कूलों में जाइये वहां स्त्रियां ही अध्यापन का काम करती हैं, कारखानों में भी प्रायः स्त्रियां ही दिखाई देती हैं, कहीं २ स्त्रियां ही मोटर, बस, लारी आदि के चलाने में लगी हैं। एवम् औषधालयों में तो निर्विवाद राज्य ही स्त्रियों का है। फिर नाटकघरों, गान और नृत-भवनों में पुरुषों का क्या काम है? एवम् सामाजिक जीवन के हर एक काम में स्त्रियों का बहुत बड़ा हिस्सा है। जीविका कमाने में स्त्रियां पुरुषों के साथ सहयोग देती हैं। जातीय धन की उत्पत्ति में स्त्रियों का उतनाही भाग है जितना पुरुषों का। हमारे देशमें स्त्रियां घरों में रेशम या सूत कात कर या कोई २ सिलाई का काम करके दो तीन पैसे रोज कमाती हैं, परन्तु यहां चौदह वर्ष की कन्या दो पाउण्ड (२० रुपये) प्रति-सप्ताह केवल ६-७ घण्टे प्रतिदिन काम करके बड़ी आसानी से कमा लेती है। पढ़ी लिखी या हिसाब किताब जानने वाली स्त्रियां ३० रुपये प्रति सप्ताह कमाती हैं और सूत कातने और वस्त्र बुनने की कलाओं में ३० रुपये प्रति सप्ताह कमाना सुगम है। इस प्रकार दोनों स्त्री पुरुष कमाई करके सब प्रकार के भोग भोगते हैं। यदि एक घर में एक पिता एक माता और ३ कन्याएं और पुत्र १३ या १४ वर्षों से ऊपर के हों तो उस घर में सब काम करने वाले होंगे। यदि मजदूरी पेशा लोगों का यह परिवार मानें तो भी आजकल १६ पाउण्ड प्रति सप्ताह इस परिवार की आमदनी साधारण है। इस प्रकार सात सौ रुपया महीना मास में कमाकर सुख के साधनों का उपलब्ध करना क्या कठिन है?

हमारे देशमें एक तो काम नहीं, दूसरे केवल पुरुष ही काम करने वाले हैं, तीसरे मज़दूरी अतीव न्यून है, इस कारण दरिद्रता के बदबूदार गढ़े में पड़े लोग सड़ते रहते हैं। न इस दुनियां में सुखप्राप्त करते हैं और न आगामी में। न उन्हें दीन ही मिलता है न दुनियां ही।

दिन चर्य्या—यहां की महिलाओं के जीवन का दिगदर्शन कराने के लिये उनकी दिन चर्य्या मोटे तौर पर देखनी चाहिये, फिर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उनके अङ्गों पर दृष्टि हम डालेंगे। प्रातः सात-बज से पूर्व व उठती हैं, पानी गर्म कर, चाह बना कर, घर में जितने आदमी निवास करते हैं, एक २ को जगाकर उसे बिस्तरे पर ही बिस्कुट समेत चाह पिलाना प्रथम काम है। फिर प्रत्येक के लिये गर्म पानी के ढके लोटे उनके कमरों में रखना ताकि वे हजामत बना और मुंह धो सकें। तत्पश्चात् छोटी हाज़री तय्यार करके सबको खिलाकर स्वयम् खाकर अपने काम के लिये तय्यार हो जाना। जो स्त्रियां घर से बाहर कमाई के लिये जाती हैं वे प्रायः ८½ बजे या उस से कुछ पहिले या पीछे निकल पड़ती हैं, क्योंकि ९ बजे सब दफतर या दुकानें खुलती हैं। ९ से १ बजे तक काम करतीं और फिर एक घन्टे की छुट्टी में मध्यान्ह का भोजन किसी विश्रामगृह में खाने जाती हैं। फिर दो बजे से ५ बजे तक के काम से फरागत पाकर घर लौटतीं या जिन्हें घर का काम नहीं होता वे अपने पुरुष मित्रों के साथ सैर तमाशे के लिये निकल जातीं। ५ से १२ बजे रात्रि तक जिन पर घर के काम का भार है वे तो उस में ही प्रायः लगी रहतीं—दूसरी केवल भोजन का समय छोड़कर अपना सम्पूर्ण समय सैर तमाशे में व्यतीत करती हैं या कुछ पढ़ने और सीखने में लगाती हैं। बहुत सी कन्याएं रात्रि पाठशालाओं में अपनी २ रुचि के अनुसार विद्याएं और कलाएं प्राप्त करती हैं। कोई दफतर का काम सीखती है, कोई भाषाएं पढ़ती हैं, कोई सिलाई इत्यादि का काम या नृत और गान सीखती हैं। जो इस दर्जे में से गुज़र चुकी हैं वे पुरुषों के साथ गान, नृत नाटक, सिनेमा देखने, सैर करने या कोई व्याख्यान सुनने के लिये जाती हैं। इस प्रकार काम के साथ २ आराम, सैर तमाशा, भोग सब मिले हुए हैं।

काम करने में फुरती और चालाकी तो कूट कूट कर भरी हुई है। हलकी फुलकी होने से इनकी चाल ढाल में बड़ी तेज़ी है। विश्रामगृहों और दफतरों में इन्हें दौड़ते हुए देखना और लगातार काम करते पाना बड़ा आश्चर्य्यदायक है। इनके भोगों के साथ यह फुरती, यह चालाकी, यह काम का अथक स्वभाव विचित्र दीख पड़ता है। घर के कार्य्यों में भी इनका अथक और नियम पूर्वक स्वभाव कम विचित्र नहीं। इनके घर काफ़ी बड़े और कीमती सामान से भरपूर होने के कारण बड़ी रक्षा चाहते हैं। जिस तनदही से कमरों के सामान, दर्वाजों और खिड़कियों के शीशों को साफ करती हैं वह देखने से वास्ता रखती है। बहुतसी स्त्रियों ने या परिवारों ने खर्च देने वाले मिहमान घरों में रखे हुए हैं। अपने परिवार के काम के अतिरिक्त उन की सेवा भी सन्तोषजनक होती है। उदाहरण के तौर पर मैं अपने घर की स्वामिनी को लेता हूं। अकेली दम और ५५ वर्षों की आयु वाली है। अपने पुत्र के अतिरिक्त इस घर में ६ अतिथि रखे हुए हैं। प्रातः काल ही सब को चाह, गर्म पानी और फिर छोटी हाजिरी बना कर देना और साढ़े आठ बजे तक इस काम से विश्राम पा सकना कितना कठिन सा प्रतीत होता है। सबके पृथक् २ कमरों को साफ करना उनके जूतों को पालिश करना, बिस्तरे लगा देना हर एक कमरे में ताज़ा जल के बर्तन भर देने, वहां के सामान-कुर्सी मेज़, शीशे, तस्वीरें आदि झाड़ना, हर एक कमरे में आग जलाने के लिये अंगीठी को साफ़ करके कोयला लकड़ी आदि ठीक लगाकर रख देना-यह काम प्रतिदिन होते हैं। फिर दोपहर को वस्त्र धोना, बाज़ार से सौदा लाना, कभी २ दोपहर के भोजन का पकाना, फिर चार पांच बजे चाह का प्रबन्ध

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करना, तत्पश्चात् ७-८ बजे भोजन पका कर सब को इनके कमरों में खिलाना। जब हम यह देखते हैं कि मेरे लिये वह आठ दस चीज़े प्रतिदिन बना लाती है, एवम् दूसरों के लिये अन्य चीज़ें उसे बनानी पड़ती हैं और फिर हर एक को खिलाने में तीन चार दफ़ा उसे ऊपर जाना आना पड़ता है तो काम की अधिकता का पता लगता है। परन्तु भोजन के दो घन्टे पश्चात् फिर चाह कहवा या कोको आदि तय्यार कर के हर एक को दे जाती।इस प्रकार प्रातःकाल से लेकर ग्यारह बारह बजे रात्रि तक काम करती है परन्तु कभी थकी हुई प्रतीत नहीं होती। सब मिहमानों के मित्र और डाकिये आदि आकर जब दर्वाज़ा खटखटाते हैं तो हर समय नीचे से आकर खोलना-कम से कम १५ बार तो यह चक्कर भी लगाना पड़ता है। सामान की रक्षा की यह अवस्था है कि एक कमरे में ही २००)पाउण्ड का सामान समझिये। एक २ तस्वीर १०) पाउण्ड की है, परन्तु उसके पास इन तस्वीरों को पड़े २५ वर्ष हो चुके हैं वे अब भी नई प्रतीत होती हैं। २०००) रुपये के सामान को यदि प्रतिदिन परिश्रम से साफ़ न रखा जावे तो कितनी हानि हो? इसी सफ़ाई के कारण वह सामान सन्ततियों तक जाता है। मख़मल की एक कुर्सी आज कल १०) पाउण्ड में मिलती है। हर एक कमरे में एक दो ऐसी कुर्सियां हैं। सब को बड़ी सावधानी से रखती है। अभिप्राय यह है कि जिस घर में १०००) पाउण्ड का सामान कमरों में पड़ा हो उस की सफाई पर पर्याप्त समय चाहिये। यह सब काम वह बुढ़िया करती है और उस की दो पुत्रियां हैं,वे दोनों पृथक् अन्य घरों में रहती हैं।अपना कमाती खाती और पतियों की तलाश में और सैर तमाशे में समय व्यतीत करती हैं। नहीं उसका पुत्र घर के काम में किञ्चित्मात्र सहायता देता है। लंडन का ही यह हाल नहीं, यही दशा सारे देश में देखी जाती है। घरों की सफाई में इतना समय लगाती हैं कि शीशे की न्याई सब चमकते हैं। हर एक घर में गमलों में लगाए हुए बेल बूटे, दीवारों पर चढ़ाई हुई बेलें और घर के आगे और पीछे के छोटे २ बाग़ों का काम भी कुछ कम नहीं। परन्तु इन सब काय्यों को वे नियम पूर्वक करती हैं, इस कारण उन्हें कुछ भार नहीं प्रतीत होता। मैंने भारतवर्ष में स्त्रियों को इतना लगातार और कठिन काम करते कभी नहीं देखा। इनका जातीय स्वभाव और विद्या के कारण नियम-मय जीवन यह सब काम कराये जाता है। हमारी स्त्रियों में उतनी शक्ति और दम नहीं और जो पढ़ी लिखी स्त्रियों की नई सन्तान हमारे यहां हो रही है,वह देश के लिये बड़ी हानिकर साबित होगी। उनमें काम न करने का झूठा गर्व आगया है। वह केवल आरामपसन्द होरही हैं, और उनके शरीरों में वह बल नहीं जो उनसे पूर्व की कन्याओं में था। हमारी कन्याओं को पढ़ने के साथ २ शरीर सुधार का ध्यान रखना चाहिये और घर के कामों से कभी उन्हें घृणा नहीं करनी चाहिये। नियमपूर्वक जीवन बना कर आराम करें तो शोभा देता है। यहां की महिलाएं कैसे अपना समय आराम आसाइश में देती हैं, यह आगे वर्णन करूंगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उजेला ।

लेखक—श्रीयुत् बंशीधर ।

ख़ाली रुलाने वाले ! कैसे हंसाया तूने ।

आंखों से रात दिन हम आंसू ढलका रहे थे,
खुशियों का प्रेम रङ्गत कैसे चढ़ाया तूने ॥१॥
आगे था हर तरफ़ ही छाया हुआ अन्धेरा,
गिरने के वक्त कैसे दीपक दिखाया तूने ॥२॥
कुचले हुए दिलों से आहें निकल रही थीं,
बीणा का तान मीठा कैसे सुनाया तूने ॥३॥
रातें गुज़र रहीं थीं बे नींद के हमारी,
दुखड़ों पै डाल पर्दा कैसे सुलाया तूने ॥४॥
जीवन बना था मुर्दा जीते हुए हमारा,
ज्योती नई दिखाकर कैसे जिलाया तूने ॥५॥
आंखों में अश्रुधारा, छाती में प्रेमधारा,
दोनों मिलाके धारा कैसे हंसाया तूने ॥६॥

मारिशस द्वीप ।

लेखक—श्रीयुत् स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी

(१)

मारिशस एक छोटा सा द्वीप है जो कोलम्बू से दक्षिण पश्चिम में २१०० मील तथा मदगासकर द्वीप से पूर्व ५०० मील की दूरी पर है । यह द्वीप केवल ४० मील लम्बा और ३० मील चौड़ा है । इतना छोटा होने पर भी ईश्वर ने इसकी विचित्र सृष्टि की है । यथा वहां वह स्थान हैं जिन स्थानों पर शीत के कारण प्रायः धनी अपने भवन निर्माण करते हैं, और वह स्थान भी हैं, जहां उस शीत के दर्शन किसी भी ऋतु में नहीं होते । ऐसी जगहें हैं जहां पर वर्षा प्रति दिवस नहीं तो तीसरे दिवस अवश्य होती है, और वह भी जगह है जहां पर वर्षा के दर्शन वर्ष भर में कभी भूल कर ही होते हैं । आप एक ओर को चलें तो एक मील में एक नदी अवश्य दृष्टि गोचर होगी और दूसरी ओर पदार्पण करें तो १२ मील तक किसी नदी का चिन्ह तक न मिलेगा । इसी कारण मारिशस के भूगोल में लिखा गया है :—

"भारतीय समुद्र में मारिशस एक मोती है"

जिस भांति पूर्व के देशों में प्रथम पुर्तगीज़ आये, उसी भांति मारिशस द्वीप को भी प्रथम उन्होंने ही ढूंढ़ा और एक राज कुमार के नाम पर इसी द्वीप को मारिशस (Mauritus) नाम दिया । किन्तु, पुर्तगीज़ इस द्वीप में अधिक ठहर नहीं सके, स्वयं छोड़ कर चले गये । कुछ समय तक यह द्वीप फिर निर्जन ही रहा (निर्जन इसलिये लिखा है कि मारिशस का कोई इतिहास यह नहीं बतलाता कि वहां कोई मनुष्य जाति वास करती थी) दैवयोग से उस भूमि पर फिर फरांसीसियों ने डेरा डाला और उसका नाम मारीस (Maurice) रक्खा । इन्होंने वहां कृषि का काम आरंभ किया, भारत की ओर आने वाले पोत वहां ठहर कर आते

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रहे और उन्होंने इस द्वीप को उस समय तक नहीं छोड़ा जिस समय वृटिश जाति ने उन्हें उस द्वीप में अपनी सैनिक शक्ति से परास्त नहीं किया। वृटिश जाति ने यह कार्य १८१० में किया। उस समय से वहां इसी जाति का आधिपत्य है।

प्रवासी।

जिस समय फरांसीसियों ने कृषी का कार्य आरंभ किया था, उस समय उन्हें भी यह सोचना पड़ा था कि श्रमी कहां से लाये जावें, क्योंकि, जिस द्वीप को उन्होंने संभाला था उस में कोई मनुष्य जाति वास नहीं करती थी। उनके सौभाग्य से उस समय दास पद्धति प्रचलित थी, इस लिये सहज में ही उनका मनोरथ सिद्ध हो गया, और अभागे अफ्रीका निवासियों को उनके स्थानों से पकड़ कर जहाज पर लाद कर इस द्वीप की शोभा को बढ़ाया गया। यह कार्य तो सिद्ध हो गया, किन्तु उस समय इस भूमि पर मूषक बाहुल्यता से रहते थे, और वह फ़सल को विगाड़ देते थे। उनके लिये भी एक उपाय सोचा गया, वह उपाय यह था कि नकुल किसी अन्य स्थान से लाकर यहां छोड़े जावें, जो इन चूहों को मार कर समाप्त कर दें। मनुष्य अपने स्वार्थ के लिये सब कुछ कर डालता है। सो ऐसा ही किया गया, परन्तु ईश्वर की माया विचित्र है। उन नकुलों ने वहां पहुंच कर मनुष्य की इच्छा के अनुकूल प्रथम तो चूहों को समेटा, जब वह अन्तप्राय हो गए तो इन्हें तो अपना पेट भरने को कुछ चाहिये ही था अतः इन्होंने उस समय मनुष्यों के गृहों में जो कुक्कुटों के स्थान थे उन स्थानों को ढूंढ कर कुक्कुटों पर आक्रमण करना आरंभ किया। जिस समय यह दशा हुई उसी समय वहां की सरकार ने घोषणा करदी कि 'जो नकुल को मार कर लावेगा उसे रुपए मिलेंगे (इस समय भी ॥) मिलते हैं पूर्व ५) थे) बस फिर क्या था, फिर तो इनकी भी गति बनने लगी॥

यह प्रथा मनुष्य समाज में प्रायः पाई जाती है कि पशु पक्षियों को छोड़ कर मनुष्य मनुष्यों पर भी स्वार्थ सिद्धार्थ स्नेह करता है। जब स्वार्थ में कुछ अंतर आने लगे तो स्नेह का स्थान द्वेष से पूर्ण किया जाता है। यही अवस्था जातियों की है, अब उन अभागे दासों की जो दशा थी वह अत्यंत दुःखदायिनी है। ईश्वर किसी को दास न बनावे, यही शब्द मुख से निकलते हैं॥

मारिशस का कोई नियमवद्ध इतिहास नहीं है, उसका भी यही कारण है कि यदि कोई लिखना चाहता है उसे वह दास संतति अपने ऊपर व्यतीत हुए अत्याचारों को लेखवद्ध करने के लिये वाध्य करती है, और योरोप वाले उन्हें लिखना नहीं चाहते। उस समय के अत्याचारों की अनेक कथाएँ सुनने में आती हैं उन में से मैं यहां पर केवल एक घटना लिखता हूं। एक भूमिपति के पास अनेक दास थे। एक दिन वह दासों को संबोधन करके कहता है कि "मकई की फसल पकने को है अतः मकई के क्षेत्रों के लिये कोई रक्षक होना चाहिये। यह एक सुखद कार्य है, इस लिये कोई स्त्री आगे आवे जिसे इस काम पर नियत किया जावे"। उसे जितनी व्यक्तियों की आवश्यकता थी उतने नाम लिख लिये जाते हैं, और उन्हें कहा जाता है कि "कल प्रातः काल कार्यालय में आना"। दूसरे दिन जब वह वहां उपस्थित होती हैं, तो उनके हाथ में एक पत्र दिया जाता है और उन्हें कहा जाता है चिकित्सालय में ले जाओ। जब चिकित्सालय में जाकर वह पत्र दिया तो डाक्टर जी उन्हें अंदर बुलाते हैं और उनके दांत निकाल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देते हैं। वह बेचारी दुःखी होती हैं,और स्वामी के पास आकर पूंछती है कि डाक्टर ने हमारे दांत क्यों उखाड़ दिये ? तब स्वामी उत्तर देते हैं कि "मैंने ही पत्र में लिखा था कि इनके दांत निकाल दो, क्योंकि आप को मकई के क्षेत्र की रक्षिका नियत किया है, यदि आप के दांत होते तो आप मकई खा जातीं। अब हमें अपनी फसल की हानि का भय नहीं है" इत्यादि अनेक कथायें प्रचलित हैं। जिस भांति के दृश्य "टाम काका की कुटिया" के लेखक ने लिखे हैं वैसे ही प्रायः सुनने में आते हैं। जब इस समय में, जब कि सभ्यता का प्रसार अधिक माना जाता है, नाना प्रकार की वेदनायें श्रमियों को दी जाती हैं तब उस समय के लिये जो कहा जाता है ठीक ही होगा, मेरी ऐसी धारणा है॥

काल चक्र से वा किसी अन्य कारण से उन दासों में से कुछ एक व्यक्ति दास भाव से मुक्त होगए। उस समय मुख्याधिकारी महोदय लावरदोने थे। उन्हों ने उन को मारुनस (बेघर) का नाम दिया। उनके लिये भी नियम थे कि अमुक वर्ण का वस्त्र पहरें, तथा अमुक मार्ग पर चलें। उसी समय में उनकी शिक्षा का प्रश्न उठा। पादरी लोगों का विचार था कि वह भी पाठशालाओं में जाकर फरांसीसी बालकों के साथ पढ़ें; परन्तु अन्य फरांसीसी इसमें अपमान समझते थे। एक "गौराङ्ग बालक के पास एक कृष्णांग बालक कैसे बैठ सकता है?" यह वर्ण भेद उनकी शिक्षा में भी प्रतिबंधक रहा। किंतु, फिर भी उनकी शिक्षा का प्रबंध कुछ पादरियों ने किया।

संसार चलनात्मक है,जगत का चक्र स्थाई नहीं है। इसी नियम के अनुसार मारिशस में भी विशेष परिवर्तन के दिन समीप आगए थे। जिस समय भारत में मदरास की ओर द्वीप सुलतान से युद्ध होरहा था, उन दिनों में फ्रांस से सहायतार्थ जो पोत आते थे प्रथम वह मारिशस द्वीप में ठहरते थे। यही द्वीप भारत को आने वाले पोतों का अड्डा था। इसलिये उस समय बृटिश सरकार ने यह सोचा कि मारिशस द्वीप प्रथम अपने हाथ में होना चाहिये। अतः द्वीप पर आक्रमण किया गया। उस समय मारिशस की राजधानी महिवर्ग में थी [आजकल पोर्टलुई है]। समुद्र का मार्ग उत्तम न होने से कई पोत चटानों से टकरा कर टूट गए,अन्त में वह नगर सरकार के हाथ में आगया। दूसरा युद्ध पोर्टलुई में हुआ, फरांसीसियों की सेना अधिक संख्या में न थी, इसलिये युद्ध शीघ्र ही समाप्त होगया और विजय लक्ष्मी बृटिश सरकार को ही मिली। उस समय जितने दास थे वह सब राजाज्ञा से स्वतंत्र कर दिये गए और उसी दिन से उनका नाम 'क्रियोल' रक्खा गया। क्रियोल शब्द के अर्थ हैं 'वह व्यक्ति जिसका पैतृक सम्बंध योरोप से हो'। यह बात विवाद-शून्य है कि उनका पैतृक संबंध योरोप से नहीं है। हां यदि किसी योरोपीय पुरुष ने बलात्कार वा प्रलोभन अथवा दास होने से किसी रमणी का सतीत्व नष्ट किया हो और उससे मान लिया जावे कि उस बालक का योरोप से संबंध है तो भिन्न बात है॥

१८१० में यह द्वीप बृटिश जाति के हाथ में आया। उस समय भूमि के मालिक फरांसीसी थे, भूमि उपजाऊ थी और क्षेत्र विस्तार युक्त थे, किन्तु श्रमी नहीं थे। जिस भांति पिंजरे में बन्द शुक से मनमाने अलाप सुन सकते हैं उस भांति मुक्त पोपट राग गाने के लिये कब तय्यार होता है ? जैसे गृह का कूकुर पूंछ हिलाकर, पांव उठाकर, नाना प्रकार की चेष्टायें करके,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपने मालिक को प्रसन्न करने का यत्न करता है, वैसे एक स्वतन्त्र श्वान से आशा करनी मूर्खता का सूचक है। जिस तरह एक बाजीगर अपने बन्दर से अपने पेट के लिये अनेक प्रकार के नृत्य करवा सकता है, उसी तरह के नाच एक मुक्त कपि कभी नहीं करता। वह अपने लिये श्रम करके पेट भर लेगा किन्तु दूसरे के लिये उसका कोई परिश्रम नहीं होता। इसी तरह जिन मनुष्यों से भूमि के मालिक अपनी इच्छानुसार काम लेते थे, अब वह उनके उस प्रभाव के मोह से पृथक् हो चुके थे। अतः वह अपनी इच्छा से काम करते थे, और अपने श्रम का दाम भी अपनी बुद्धि से लगाकर मांगते थे। जिन आदमियों ने पूर्व स्वच्छन्दता पूर्वक अत्याचार किये हों, उन्हें यह असह्य था, और सरकार को भी चिंता थी, कि किस रीति से इस द्वीप को बसाया जावे। कई साल यह प्रश्न उलझा ही रहा। अन्त में एक उपाय सूझ पड़ा और उसी के अनुसार कार्य प्रारम्भ किया गया, जिसका परिणाम सरकार तथा जमींदारों के वास्ते अच्छा था। यदि किसी अन्य को लाभदायक न हो तो उसके भाग्य की बात समझना चाहिये। वह उपाय यह था कि श्रमी भारत से लाये जायं।

भारतवासी।

प्रथम वहां १८३४ में गए। जो पहला वर्ग मारिशस में गया, वह मालावार से गया था। मालावार से जाने के कारण वहां भारतवासियों का नाम 'मलावार' पड़ा। इस समय भी प्रत्येक श्रमी को मलावार कहा जाता है और स्वयं श्रमी भी अपने आपको इसी नाम से पुकारते हैं। जैसे संस्कृत साहित्य में हिन्दू शब्द न होने पर भी आर्य्य के स्थान पर इसका प्रयोग हुआ, और आर्य्य जाति ने स्वयम् भी अपना नाम हिन्दू मान लिया, उसी भांति वहां पर भी मलवार शब्द का प्रयोग हुआ।

भारत से श्रमी प्रथम मदरास प्रांत से गए, पश्चात् संयुक्त प्रांत, विहार की प्रधानता हुई। कुछ बंगाल तथा महाराष्ट्र से भी पहुंचे। श्रमी भेजते समय यह भी ध्यान रक्खा जाता था कि उच्च वर्ण के मनुष्य न भेजे जांय, इसलिये अधिक संख्या नीच वर्ण की ही है। साथ ही स्त्रियों की संख्या प्रति शतक तीस थी, इससे अधिक स्त्रियें नहीं भेजी जाती थीं। इस प्रथा से जो भारत की रमणियों में सतीत्व का भाव था, वह प्रायः नष्ट होगया, जिसका वर्णन मैं आगे चलकर करूंगा। एक २ रमणी को कई मनुष्य के साथ रहना पड़ता था। जिसने इस में अनिच्छा प्रकट की उसके लिये अन्य विघ्न बाधायें मुंह बाए खड़ी थीं। कुली प्रथा में आर्काटियों के हथकंडे दुहराने की आवश्यकता नहीं। नाना प्रकार के छल कपट से अपने देश वासियों को विपत्ति में डालकर अपने पेट को पूर्ण किया जाता था। जहाज़ में बड़े उत्साह से बैठते हैं किन्तु भ्रम तो समुद्र में निवृत्त होजाता है, जो शेष रहता है वह मारिशस में उतरते ही इस तरह भागता है जैसे प्रकाश से अंधकार। वहां नीच से नीच काम करना पड़ता है। यदि कोई ननूनच करता है तो बेंत से बुद्धि ठिकाने कीजातीहै। कौन जानता है कितने भारतीयों ने इन नीच कामों तथा असह्य वेदनायों के कारण अपने आपको महासागर में डाल इस भौतिक स्थान (शरीर) से प्राण पंखेरुओं को उड़ा दिया? अगणित मनुष्यों ने इस शरीर की भी आहुति प्रचण्ड हुताशन में दी, अनेको ने गले में रज्जू डालकर वृक्षों का आश्रय लेकर, आत्मा को इस काया रूपी बन्धन से पृथक कर दिया। इसी भांति जिसके मन में जो आया उसने वैसा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर लिया। मैं इसे अधिक विस्तार देना इस समय उपयुक्त नहीं समझता।

जिन्होंने अपने जीवन को उन्हीं नियमों के अनुकूल बनाया उनको भी कई वार कारागार की यात्रा करनी पड़ती थी। जिस समय क्षेत्रों में काम हो उस समय काम पर, जब काम नहो तो अधिक संख्या कारागार वासी होते थे। यदि काम के समय में अपराध हो तो बेंत का दण्ड, यदि अन्य समय में हो तो अन्य दण्ड ही दिया जाता था।

वेदने।

लेखक—"ध्रुव"।

वेदने! मत कर तू हैरान।

पहले से हूं दुख का मारा,
लुटा चुका हूं अपना सारा,
तुझे नहीं है कुछ भी ध्यान।
वेदने! मत कर तू हैरान ॥१॥

अपनी बीती किसे सुनाऊं,
किसके पास भला मैं जाऊं!
जाता रहा हाय! अवसान।
वेदने! मत कर तू हैरान ॥२॥

अपने ही से दुःख सहेड़ा,
जान बूझकर लिया बखेड़ा,
हुआ है अब जाकर हा! ज्ञान।
वेदने! मत कर तू हैरान ॥३॥

क्योंकर बदल बदल कर रंग,
भला! करती है हमको तंग?
अब तो भला छोड़ दे जान।
वेदने! मत कर तू हैरान ॥४॥

भारतवर्ष के राजनैतिक आकाश पर एक घटा।

[लेखक—श्रीयुत् कृष्ण बी. ए. सम्पादक प्रकाश व प्रताप]

भारत के राजनैतिक आकाश पर एक घटा दृष्टिगोचर हो रही है। इस समय यह बदली एक हाथ से लम्बी नहीं; परन्तु सम्भव है कि फैलकर सारे आकाश को घेर ले॥

यह बदली कौनसी है? यह महात्मा गांधी का असहयोग अर्थात् Non-co-operation का आन्दोलन है। इस समय यदि कोई एक विषय है जिस पर सारे देश में आन्दोलन हो रहा है, जिस पर सारे सुशिक्षित भारत का मन और मस्तिष्क लग रहा है, तो वह सहयोग त्याग का आन्दोलन है। गत वर्ष इन्हीं दिनों में सत्याग्रह की चर्चा थी, इस वर्ष असहयोग का दौर दौरा है। दोनों के जन्म दाता महात्मा गांधी हैं। सेंट्रल खिलाफ़त कमेटी तो असहयोग का निश्चय कर चुकी। प्रथम अगस्त से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उसने असहयोग रूपी युद्ध की घोषणा भी कर दी। इस विषय पर विशेष रूप से विचार करने और इसका निश्चय करने के लिये इंडियन नेशनल कांग्रेस अथवा आल इंडिया मुसलिम लीग के विशेष अधिवेशन कलकत्ता नगर में सितम्बर के प्रथम सप्ताह में होने वाले हैं॥

यह कोई नवीन आन्दोलन नहीं।

एक प्रकार से यह कोई नया आन्दोलन नहीं। इससे पूर्व भी भारत और संसार के सन्मुख आ चुका है। उस समय इसका नाम Boycott अर्थात् बहिष्कार था, इस समय Non-co-operation अर्थात् असहयोग है। दोनों में अधिक भेद नहीं। भेद यदि हैं तो केवल इतना कि बहिष्कार (Boycott) के शब्द में किसी क़दर दुर्गन्धि (Bad Odour) आती है। महात्मा गांधी बहिष्कार के कट्टर विरोधी हैं। उन्हें इस शब्द से घृणा की गन्ध आती है और घृणा को वह अपने पास तक भी फटकने नहीं देते। महात्मा गांधी का पक्ष यह है कि बहिष्कार केवल वहीं हो सक्ता है जहां एक दूसरे से घृणा करना हो; परन्तु असहयोग प्रेम रखते हुये भी हो सकता है। एक पुत्र किसी बात पर रुष्ट होकर अपने पिता से असहयोग कर सकता है परन्तु वह उसका बहिष्कार नहीं कर सक्ता॥

महात्माजी का कथन सत्य है परन्तु फिर भी यह मानना पड़ता है कि जहां तक इस नियम के प्रयोग (Application) का सम्बन्ध है वहां तक असहयोग और बहिष्कार में अधिक भेद नहीं। न तो सर्वसाधारण इस भेद को समझ सकते हैं और नाहीं इन दोनों के परिणाम में अधिक भेद है। न्यून से न्यून १५ वर्ष हुये होंगे जब पहले पहल मिस्टर श्यामजी कृष्ण वर्मा बहिष्कार अर्थात् Boycott का आन्दोलन चलाया। उन्होंने Indian Socialgist के नाम से एक लंडन में एक साप्ताहिक पत्र निकाला जिसमें उन्होंने इस बात पर बल देना आरंभ किया कि भारतवासियों के लिये उचित है कि वे ब्रिटिश सरकार का बहिष्कार (Boycott) करें। कोई भारतीय सरकार की चाकरी न करे, इस प्रकार सरकार के लिये भारत में शासन करना दुस्तर हो जायगा।

यदि मेरी स्मृति मेरे साथ विश्वासघात नहीं करती, तो उन्हीं दिनों में वंग विच्छेद का आन्दोलन आरंभ होगया। लार्ड कर्ज़न ने समस्त बंगाल की सम्मति के विरुद्ध बंग विच्छेद कर दिया। समस्त बंगाल में क्रोध की अग्नि प्रचंड होगई। बंगाल ने एक स्वर से कहा, "हम इस बंग विच्छेद को स्वीकार न करेंगे और जबतक बंगमाता के दोनों भाग एक न कर दिये जायंगे तबतक हम चैन न लेंगे"। इस समय के माडरेट नेता बा० सुरेन्द्रनाथ बनर्जी उस समय बायकाट आन्दोलन के नेता थे। निश्चय हुआ कि बाहिष्कार के शस्त्र को प्रयोग में लाया जावे। प्रत्येक वर्ष १६ अक्तूबर को समस्त बंग देश में बहिष्कार का जन्म दिवस मनाया जाने लगा। अंग्रेज़ी माल को इकट्ठा करके उसे अग्नि देवता के अर्पण कर दिया जाता। बहिष्कार ने कतिपय रूप धारण किये। सरकारी विद्यालयों और महा विद्यालयों का बायकाट भी हुआ। एक Bengal National Council of Education की स्थापना की गई, जिसके आधीन एक जातीय शिक्षालय खोला गया। बंगाली युवकों ने जोश में आकर सरकारी स्कूलों को परित्याग कर दिया। सारांश यह कि बहिष्कार का कौन शस्त्र था, जो ब्रिटिश सरकार को नीचा दिखलाने के लिये बंगाली प्रयोग में न लाये॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

महात्मा गांधी के आन्दोलन में नवीनता ।

परन्तु जैसा कि महात्मा गांधी का कथन है, उस आन्दोलन की आधार शिला घृणा थी। परिणाम यह हुआ कि ऐसे शस्त्र भी प्रयोग में लाये गये जो न केवल धर्म और नीति के विरुद्ध हैं प्रत्युत उनसे देश को हानि ही हानि है, लाभ कोई नहीं। बंग के बायकाट आन्दोलन ने भारत की पवित्र भूमि में अनारकिज्म जैसे घृणित सिद्धान्त का प्रवेश कर दिया। Bomb and Revolver (बम और रिवाल्वर) का सिद्धान्त बल पकड़ गया। घृणा के मद में अंधे हुए हमारे इन देश निवासियों ने न सोचा कि क्या कर रहे हैं। बंग विच्छेद तो एक ओर रह गया, बम की सहायता से ब्रिटिश सरकार को भारत से निकालने के षड़यंत्र रचे गये। इनका अकृतकार्य होना आवश्यक था और हुये। कुछ काल के पश्चात् बहुत से लोगों के लिये बायकाट पर आचरण करना असंभव होगया, क्योंकि बायकाट का सम्बन्ध बम के साथ जोड़ा जाने लगा। बंग विच्छेद अपनी Legacy बम के रूप में छोड़ गया केवल इसलिये कि बायकाट का भवन घृणा की आधार शिला पर निर्माण किया गया था ॥

मिस्टर श्यामजी कृष्ण वर्मा के आन्दोलन का होना ही क्या था ? पश्चिमी राजनीति में पले मिस्टर वर्मा अंग्रेज़ों के साथ यूरोप के कुटिल शस्त्रोंसे युद्ध करना चाहते थे, इसलिये जब मिस्टर श्यामजी कृष्ण वर्मा ने देखा कि इंगलिस्तान के निवास में उनके पकड़े जाने का भय है, वह लंडन छोड़ कर फ्रांस चले गये। सन् १९१४ ई० में जब फ्रांस का जर्मनी के साथ युद्ध छिड़ा और इंगलिस्तान फ्रांसके साथ मिल गया, तो उस समय मिस्टर वर्मा ने अपने को संकट में देख स्वीटज़रलैंड भाग गये, इस के पश्चात् उनका नाम सुनने में नहीं आया, इसलिये उनका आन्दोलन भी मर गया ॥

परन्तु महात्मा गांधी का आन्दोलन मर नहीं सक्ता, क्योंकि उसकी आधार शिला घृणा नहीं। महात्मा गांधी अपने अनुयायियों को पहला आदेश यह करते हैं कि उन को सारे संसार को मित्र की दृष्टि से देखना चाहिये, किसी को इनसे भय न होना चाहिये। सारे संसार को चाहे अंग्रेज़ हो अथवा और कोई उन्हें अभयदान देना चाहिये। अहिंसा का पूर्ण स्वरूप इन्हें होना चाहिये।

बम और रिवाल्वर से उनका कोई काम नहीं है। किसी के शरीर पर आघात करना उनके धर्म के विरुद्ध है। जो कोई उन आज्ञाओं का उलंघन करेगा उसे भ्रातृ-मंडल से पृथक् कर दिया जायगा। यदि उलंघन करने वालों की संख्या अधिक होगी तो महात्मा गांधी स्वयम् पृथक हो जायंगे। इसी कारण से उन्हों ने अपने सिद्धान्त का नाम सत्याग्रह रक्खा है। किसी दुराग्रही के लिये उनके मंडल में स्थान नहीं। महात्मा गांधी दुराग्रह का खंडन केवल वाणी से ही नहीं प्रत्युत कर्म द्वारा करते हैं। गत वर्ष जब अहमदाबाद निवासियों ने कतिपय अंग्रेज़ों के शरीरों पर आघात किया और कारख़ाने (Mills) जलादिये तो सब से प्रथम व्यक्ति जिसने उस दुराग्रह के विरुद्ध शब्द उठाया, वह महात्मा गांधी है। गवर्नमेन्ट को भी इस बात का निश्चय है कि महात्मा गांधी अपने आन्दोलन को Violence की ओर न जाने देंगे और यदि वह आन्दोलन Violence की ओर झुकेगा तो महात्मा का उस से कोई सम्बन्ध न रहेगा ॥

महात्मा गांधी के आन्दोलन की दूसरी विशेषता अथवा विशेषता यह है कि जो कुछ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri and S3 Foundation USA

वह वाणी द्वारा कहते हैं उसको कार्य में परिणत करने को सर्वदा उद्यत रहते हैं। वह उस जर्नेल की भांति नहीं जो सेना के पीछे रहता है और जिस समय देखता है कि समस्त सेना कट गई वह चुपके से अपनी जान बचा कर भाग आता है, प्रत्युत महात्मा गांधी उस सेना पति के सदृश हैं जो सेना का अगुआ बन कर स्वयं सबसे प्रथम खतरे में पड़ता है। महात्मा गांधी का सारा जीवन मेरे इस कथन की पुष्टि करता है। ब्रिटिश पूर्व अफ्रिका में महात्मा गांधी ने सत्याग्रह का मत चलाया। इसका ज्वलंत प्रमाण देने के लिये वह सबसे पहले जेल में गये—अकेले नहीं गये प्रत्युत धर्म पत्नी सहित गये। परिणाम यह हुआ कि इसमें विजय हुई। भारत में भी हमने यही देखा।

चम्पारन में जब वह वहां के भारतीय कृषकों के उद्धारार्थ गये तो डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट ने उन्हें आज्ञा दी कि आप यहां से चले जायं। महात्मा ने उत्तर दिया कि "मैं आपकी आज्ञा पालन नहीं कर सक्ता आप अपने बलसे मुझे निकाल दें मैं स्वयम् नहीं जाऊंगा" उस समय उन्होंने यह भी कहा कि "मैं अनुभव करता हूं कि (Civil Disobedience) अर्थात् सरकार की आज्ञा न मानने का आन्दोलन चलाने में खतरा है और मैं सरकार के शासन को स्थिर रखना चाहता हूं, परन्तु मैं अपने आत्मा की सरकार को ब्रिटिश सरकार से उच्च समझता हूं, मैं अपने आत्मा की सरकार की आज्ञा के सामने शिर झुकाता हूं, ब्रिटिश सरकार अपने बल से मुझे इस प्रान्त से निकाल दे, मुझे कोई आपत्ति नहीं"। जिस समय यह समाचार समाचारपत्रों में प्रकाशित हुआ, उस वक्त देश में जोश और उत्साह फैल गया, वकील और बैरिस्टर तुरंत चंपारन पहुंचे। उन्होंने कहा कि हम आपका मुकदमा लड़ेंगे। महात्मा ने उत्तर दिया—"मैं कोई वकील नहीं करना चाहता नाहीं मैं कोई उत्तर देना चाहता हूं। मेरे आत्मा ने जो कुछ कहा मैंने किया, ब्रिटिश सरकार का जो आत्मा कहे वह करे"। डिप्टी मजिस्ट्रेट को साहस न हुआ कि वह महात्मा पर मुकदमा चलाये। उसने बिहार के लाट महोदय से आज्ञा मांगी कि क्या करूं? वहां से आज्ञा मिली कि गांधी को छोड़ दो, और जो कुछ वह करते हैं और जहां कहीं विचरते हैं उन्हें विचरने दो, कोई हस्ताक्षेप न करो। अंत में चम्पारन के गोरे Tea planters के पद दलित भारतीय Tenants के दुख निवारणार्थ एक कमेटी सरकार की ओर से बनाई गई, जिसके मन्त्री महात्मा गांधी बनाये गये। इस कमेटी ने जो सिफारिशें कीं उनसे भारतीय कृषकों के बहुत से दुख दूर हुए। इस प्रकार महात्मा गांधी विजय-पताका फहराते हुए घर लौटे॥

इसी प्रकार महात्मा को गुजरात देश के केरा प्रान्त में सरकार के विरुद्ध और एक समय अहमदाबाद में वहां के कारखाना—दारों (Factory Owners) के विरुद्ध विजय प्राप्त हुई॥

मैं जानता हूं कि यह सारी कथा जो मैंने वर्णन की है इसका इस विषय से कोई सम्बन्ध नहीं जिस पर मैं लिख रहा हूं, परन्तु मैंने इस घटना का इतना लम्बा वर्णन केवल यह दर्शाने के लिये किया है कि महात्मा गांधी भागने वाला जर्नेल नहीं प्रत्युत सबसे प्रथम अपना सिर कटाने वाला। यह भी संभव है कि जर्नेल की मृत्यु से सेना निरुत्साहित हो जाय परन्तु बहुधा यही होता है कि सेना में नया उत्साह आजाता है। महात्मा गांधी का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जीवन इस पक्ष की पुष्टि करता है। इस समय भी महात्मा असहयोग के आन्दोलन के अगुआ हैं और जेल में जाने के लिये तैय्यार हैं। गवर्नमेन्ट यह भी जानती है कि महात्मा के लिये जेल कोई भय नहीं रखता इस लिये उन्हें जेल भेजती भी नहीं और भेजे भी कैसे जब कि वह नियम विरुद्ध कोई कार्यवाही नहीं करते। और जब करते भी हैं तो खुलमखुल्ला और गवर्नमेन्ट को नोटिस देकर, इसलिये महात्मा गांधी की अध्यक्षता में इस आन्दोलन का यह नयापन स्थिर होगा॥

आन्दोलन का आरम्भ।

असहयोग का आरम्भ कैसे हुआ? महात्मा गांधी इसके दो कारण बतलाते है: (१) यह कि पंजाब के विषय में न्याय नहीं किया गया (२) यह कि खिलाफ़त के विषय में अन्याय किया गया है। दिसम्बर सन् १९१९ तक महात्मा गांधी सरकार के साथ सहयोग (Co-operation) के पक्ष में थे। लोकमान्य तिलकने जो प्रस्ताव कौंसिलों के संशोधनों के विषयमें कांग्रेस में पेश किया था उसका संशोधन उन्होंने उपस्थित किया, जिसमें स्पष्ट कहा था कि सम्राट की घोषणा के अनुसार हमें भारत सरकार के साथ सहयोग करना चाहिये, परन्तु अब वह असहयोग के पक्षपाती हैं, इसका कारण वह यह बतलाते हैं कि दिसम्बर सन् १९१९ तक मुझे यह विश्वास था कि पंजाब के साथ न्याय होगा, लार्ड हन्टर पर बड़ा विश्वास था, परन्तु सब से अधिक विश्वास मिस्टर मांटेगू पर था, महात्मा को मिस्टर मांटेगू पर यहां तक विश्वास था कि वह समझते थे कि यदि इंगलिस्तान का मंत्रि-मंडल पंजाब के साथ न्याय न करेगा तो मिस्टर मांटेगू त्याग पत्र दे देंगे, परन्तु हुआ क्या? न केवल लार्ड हन्टर की कमेटी के बहुपक्ष ने अन्याय किया प्रत्युत भारत सरकार और भारत और इंगलिस्तान के मंत्रि-मंडल ने उनके साथ सहमत होकर पंजाब के साथ न्याय करने से इनकार किया। न केवल उन अपराधी अफसरों को जिन्होंने मार्शलला के दिनों में पंजाब की निरपराध प्रजा पर अत्याचार किये थे उन्होंने उन्हें कोई दंड नहीं दिया प्रत्युत सर माइकल ओड्वायर की प्रशंसा की है जो इस सारे अत्याचार के मूल आधार थे, इस लिये मुझे अब अंग्रेजी सरकार पर कोई विश्वास नहीं रहा। मुझे आशा नहीं कि उससे न्याय मिले इसलिये अब मैं स्वयं न्याय लूंगा और अपनी जाति को उस सड़क पर चलाऊंगा जिस पर चलकर एक आत्माभिमानी जाति न्याय ले सकती है॥

खिलाफ़त के विषय में उनकी सम्मति यह है कि अमेरिका के राष्ट्रपति मिस्टर विलसन ने जो १४ सिद्धान्त निर्धारित किये थे उनके अनुकूल टर्की के साथ संधि नहीं की गई। इंगलिस्तान के प्रधान मंत्री मिस्टर लायड जार्ज ने टर्की के साथ थ्रेस आदि प्रान्तों के विषय में जो स्पष्ट प्रतिज्ञा की थी उसका भंग किया गया है। मुसल्मानों की ख़िलाफत को धूल में मिला दिया है, टर्की का सुल्तान अब कोई राजा नहीं रहा प्रत्युत एक क़ैदी है। मुसल्मानों की शिकायत दुरुस्त है और चूंकि वे मेरे देश में रहते हैं, मेरे भाई हैं, इसलिये मैं उनकी विपत्ति में उनके साथ हूं॥

इन दो कारणों से महात्मा गांधी सरकार से असहयोग के सिद्धान्त का प्रचार कर रहे हैं। उनका कथन यह है कि कोई भारतीय जिस में आत्म-सम्मान और जाति-सम्मान (National Honour) का लेश मात्र भी है इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सरकार से सहयोग नहीं कर सकता और यह असहयोग उस समय तक जारी रहेगा जब तक सरकार पंजाब और टर्की के साथ न्याय न करेगी। असहयोग की प्रथम Stage वह यह निश्चय करते हैं कि उपाधियां और समस्त आनरेरी (अवैतनिक) कार्य त्याग दिये जायं, नई कौंसिलों का बायकाट किया जाय, इसके पश्चात् सरकार की प्रत्येक प्रकार की चाकरी का बहिष्कार आयेगा और इसके पश्चात् टैक्स, लगान आदि का देने से इनकार करना॥

महात्मा गांधी से मत भेद।

महात्मा गांधी के इस आन्दोलन का देश में घोर विरोध हो रहा है। एक ओर एंग्लो इंडियन सज्जन और "जी हजूर" लवाइलिस्ट हैं। इन्हें तो प्रत्येक आन्दोलन में जो गवर्नमेन्ट की इच्छा के विरुद्ध हो सिडिशन (sedition) नज़र आता है और अब तो उनकी दृष्टि में इस आन्दोलन के राज विद्रोही होने में कोई संदेह नहीं रहा, क्योंकि भारत सचिव मिस्टर मांटेगू ने कामन्स सभा में इसको Mischievous effort (आपत्ति जनक प्रयत्न) का नाम दिया है, परन्तु देश को इन सज्जनों की सम्मति की किंचित् मात्र भी परवाह नहीं, यदि परवाह है तो यह कि जो कुछ वे कहेंगे देश उससे उलटा सत्य समझेगा। असहयोग आन्दोलन के दूसरे विरोधी हमारे नर्म दल के नेता हैं। इन्हीं में इस समय श्रीमती एनीविसेंट की गणना भी समझनी चाहिये। मैं यह मानता हूं कि ये महानुभाव सज्जन शुद्ध भाव से महात्मा गांधी का विरोध कर रहे हैं। इनकी दृष्टि बिन्दु ही भिन्न है, वे देश का भला इसी में समझते हैं कि सरकार के साथ सहयोग किया जाय। इस असहयोग के आन्दोलन में उन्हें वैसा ही भय दृष्टिगोचर होता है जैसा कि गत वर्ष सत्याग्रह में होता था। उनका कहना यह है कि गत वर्ष के अनुभव ने यह सिद्ध कर दिया है कि सर्व साधारण को असहयोग के मार्ग पर डालना आपत्ति जनक है। माडरेट नेताओं की सम्मति का देश में आदर है परन्तु बहुत नहीं। तीसरा दल जिस की ओर से असहयोग का विरोध किया जा रहा है वह गर्म पक्ष अर्थात नेशनलिस्ट दल है। वे असहयोग का नियम स्वीकार करते हैं परन्तु उसके रूप के साथ सहमत नहीं। वे कौंसिलों का बहिष्कार करने के लिये उद्यत नहीं, नाही उसको उचित समझते हैं। लोकमान्य तिलक का पक्ष यह है कि महात्मा गांधी Passive Non-co-operation (निष्क्रिय असहयोग) का प्रचार करते हैं और हम Aggressive Non-co-operation का। हम कौंसिलों में जायेंगे सहयोग करने के लिये नहीं प्रत्युत अधिकारी वर्ग को नीचा दिखाने के लिये। हम कौंसिलों में अपना बहुपक्ष बनायेंगे। यदि सरकार किसी विषय पर हमारी बात न मानेगी तो हम उस के लिये शासन दुस्तर कर देंगे। सरकार की शक्ति को कम करने के लिये जितने भी साधन हो सकते हैं उनमें हम योग देने को तैय्यार हैं परन्तु कौंसिलों का बहिष्कार सरकार की शक्ति को घटा नहीं सक्ता प्रत्युत बढ़ावेगा।

मद्रास और बंगाल के नेशनलिस्टों की भी यही सम्मति है कि हम कौंसिलों में जायेंगे, यदि सहयोग अर्थात् co-operation से हमारे देश का भला होगा तो सहयोग करेंगे, यदि मातृभूमि की सेवा असहयोग में होगी तो उस शस्त्र को प्रयोग में लायेंगे। संयुक्त प्रान्त और पंजाब की सम्मति भी अधिकतया यही प्रतीत

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

होती है। पंजाब में लाला लाजपतराय ने कौंसिलों के बहिष्कार का आन्दोलन चलाया परन्तु इस में उन्हें सफलता नहीं हुई॥

अकेला क्षेत्र में।

जहां तक कौंसिलों के वायकाट का सम्बंध है ऐसा प्रतीत होता है कि सारा देश एक तरफ़ है और महात्मा गांधी जी एक तरफ़। महात्मा अकेला क्षेत्र में खड़ा है। उसे पूर्ण विश्वास है कि उसका पक्ष सत्य है और उसकी विजय होगी। संसार की सम्मति उसकी सम्मति को बदल नहीं सकी। जबकि उन्होंने स्वयम् बतलाया था—"मुझे इस बात की चिन्ता नहीं कि संसार क्या कहता है, मुझे चिन्ता है तो इस बात की कि मेरा मन क्या कहता है? जब तक मेरा मन न कह दे कि तुम असत्य पर हो तब तक मैं उस मार्ग को परित्याग नहीं करता"। और इस बात के हमारे पास प्रमाण भी हैं॥

मतभेद का होना आश्चर्य-जनक नहीं

मुझे आश्चर्य नहीं कि महात्मा एक तरफ़ है और भारत के नेता दूसरी तरफ। महात्मा जाति को स्वावलंबन की शिक्षा देना चाहते हैं, माडरेट नेता जाति को पहले ही लाइन पर ले जाना चाहते हैं कि गवर्नमेन्ट से विनती करो, जो कुछ वह देवे लेलो, यदि न देवे तो चुप ही रहो। महात्मा गांधी यह नहीं मानते, इन का मत यह है कि यदि ब्रिटिश सरकार हमें हमारे अधिकारों से वंचित रक्खेगी तो हम ऐसे शस्त्र प्रयोग में लायेंगे जिनसे वह हमें हमारे अधिकार देने पर वाधित हो। नेशनलिस्ट लीडर इस बात में महात्मा गांधी से सहमत हैं परन्तु उनका और महात्मा गांधी की वृत्ति का भेद है। वह राजसिक वृत्ति के हैं, महात्मा गांधी सात्त्विक वृत्ति के हैं। हमारे नेशनलिस्ट नेता यद्यपि भारत में स्वराज्य का झंडा खड़ा करना चाहते हैं तथापि वह योरुप के मानसिक दासत्व में फंसे हुये हैं। वह उन्हीं साधनों से भारत को मुक्त कराना चाहते हैं, जिन साधनों से पश्चिम ने स्वतंत्रता प्राप्त की है। महात्मा गांधी प्राचीन शस्त्रों से लड़ना चाहते हैं, उनकी वृत्ति सात्त्विक है, उनका कथन है कि उनके मन, वाणी और कर्म में कोई भेद न होगा, यदि वह कौंसिलों में जायेंगे तो सरकार के साथ सहयोग करने के लिये, सरकार के काम में रुकावट डालने के लिये नहीं, कौंसिल का मेम्बर बनते हुये प्रत्येक मनुष्य को Loyalty अर्थात् सरकार-भक्ति की शपथ (oath) लेनी पड़ती है, जब वह कौंसिल में जायेंगे तो मन में कोई reservation रख कर नहीं॥

विजय महात्मा गांधी की होगी

मेरा विश्वास है कि विजय महात्मा गांधी की होगी, देश असहयोग का व्रत धारण करेगा, उसके रूप में संभव है कोई परिवर्त्तन आजाय, उसका एक बड़ा जबर्दस्त कारण तो वह है जो महात्मा गांधी वर्णन कर चुके हैं। वह यह कि भारत सरकार क्या, और ब्रिटिश सरकार क्या दोनों ने पंजाब और खिलाफ़त के विषयों में न्याय नहीं किया? इस बात को सब देश मानता है भविष्य में न्याय मिलने की कोई आशा नहीं। कामन्स सभा और लार्डस सभा में डायर के विषय में जो वक्तृतायें हुईं और जिस तरह लार्डस सभा ने बहु पक्ष से भारत सरकार और कामन्स सभा और ब्रिटिश सरकार पर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

डायर को दंड देने के लिये Vote of Censure पास किया है इससे न्याय की कोई आशा नहीं रही। जब आशा न हो तो देश न्याय प्राप्त करने का कोई साधन सोचेगा। महात्मा गांधी एक साधन बतलाते हैं, दूसरे नेता कोई साधन नहीं बतला सक्के। महात्मा गांधी एक पूर्ण प्रोग्राम देश के सामने उपस्थित करते हैं, देश के अन्य नेता उस से भिन्न कोई प्रोग्राम नहीं बतला सक्के। इस लिये आवश्यक है कि महात्मा गांधी जो साधन बतलाते हैं उस पर देश आचरण करे, दूसरे साधन अब चल भी नहीं सक्के। इस समय तक जो शस्त्र बर्ते जाते रहे थे वे कुंद हो गये। देश अब अपने अधिकार लेगा। विनती करने, गिड़गिड़ा कर रोने और हाथ जोड़ने को उद्यत नहीं और इस में कुछ लाभ भी नहीं। महात्मा गांधी सिद्ध कर चुके हैं कि इस समय तक किसी शक्ति-हीन और बल-हीन जाति ने इंगलिस्तान के साथ रहकर लाभ नहीं उठाया। शक्ति शाली जातियों ने लाभ उठाया है, इस लिये यदि भारत इंगलिस्तान से कोई लाभ उठाना चाहता है तो उसे शक्ति शाली बनना चाहिये। जेनरल बोथा ने लार्ड मिलनर का बायकाट किया, आज ट्रांसवाल का सारा राज्य बोथा के हाथ में है। यह एक ऐसा विचार है जिसका खंडन नहीं हो सक्ता॥

एक आशंका।

परन्तु एक आशंका मुझे है जो महात्मा जी के हृदय में भी प्रतीत होती है वह यह कि असहयोग की एक stage टैक्स और लगान देने से इनकार करना है। प्रश्न यह है कि जिस समय राज के कर्मचारी टैक्स वसूल करने के लिये कुर्की का वारंट लेकर आयेंगे उस समय क्या कृषक लोग इतना धैर्य धारण कर सकेंगे कि कुर्की करालें और शांत रहें। यदि उन्होंने उस समय सत्याग्रह का परिचय न दिया तो सारा काम बिगड़ जायगा और असहयोग का आन्दोलन कृतकार्य न होगा। गत वर्ष जब अमृतसर अहमदाबाद आदि स्थानों में प्रजा की ओर से उपद्रव हुये थे तो उस समय महात्मा गांधी ने अपनी भूल स्वीकार करके उसे Himalayan Miscalculation बतलाया था, क्या इस वर्ष भी ऐसी ही भूल न होगी? जैसा कि महात्मा जी स्वयं कह चुके हैं वह एक ही हैं जो सत्याग्रह के वास्तविक भाव पर आचरण कर सक्के हैं। सर्व साधारण का तो क्या कहना, प्रान्तों के नेताओं से भी आशा नहीं हो सक्ती कि वे सत्याग्रह की डोरी को न छोड़ेंगे जिस समय उन के मन में कोई क्षोभ अर्थात् excitement होगा। महात्मा जी ने अपनी एक वक्तृता में इस आशंका का उत्तर दिया था, परन्तु मैं उसे समझ नहीं सका॥

इस एक आशंका को छोड़ कर मैं समझता हूं कि महात्मा गांधी का एक प्रोग्राम है जिस पर देश चल कर कुछ प्राप्त कर सक्ता है। बुद्धि बतलाती है और इतिहास इसका साक्षी देता है कि बल हीन, शक्ति हीन, शस्त्र हीन, धन हीन पादाक्रान्त और दास जातियों के लिये यदि आशा की रेखा नज़र आसक्ती है तो वह असहयोग द्वारा। वह समय गया जब कि बम अथवा रिवाल्वर से कोई काम चल सक्ता था। अब शस्त्रों से कोई मुकाबिला नहीं हो सकेगा, अब तो शस्त्र हीन मुकाबिला ही होगा—वह आत्मिक बल (Soul force) अर्थात् सत्याग्रह का मुकाबिला है॥

गवर्नमेन्ट जितना इस आन्दोलन का विरोध करेगी उतना ही यह फैलेगा। मिस्टर मांटेगू ने कामन्स सभा में कहा कि वह Non-co-operation movement को Mischievous effort

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समझते हैं और उन्होंने भारत सरकार को पूर्ण अधिकार दे दिये हैं कि वह इस आन्दोलन को जिस तरह चाहे दबायें। लार्ड सिन्हा ने बुद्धिमता से लार्ड सभा में मिस्टर मांटेगू के इस धमकी का खंडन कर दिया है। उन्होंने कहा कि मैं इस आन्दोलन के विरुद्ध कोई Coercion अर्थात् सख्ती करने के पक्ष में नहीं, यह स्वयम् बैठ जायगा। यदि भारत सरकार ने इस समय तक हस्ताक्षेप न करने की जो बुद्धिमता की नीति अवलंबन कर रक्खी है उस पर उसे स्थिर रहने दिया गया तो देश में कोई उपद्रव न होगा॥

मैं तो यह नहीं मानता कि महात्मा गांधी का आन्दोलन मर जायगा। यह आन्दोलन मर नहीं सक्ता जब तक सरकार की नीति में परिवर्त्तन नहीं होता। सरकार की नीति दिन प्रतिदिन भारतीय प्रजा को अविश्वास की ओर लेजा रही है। ज्यों २ सरकार के प्रति भारतीय प्रजा का अविश्वास बढ़ता जायगा त्यों २ असहयोग का आन्दोलन फैलता जायगा। हां यह मैं मानता हूं कि यदि मिस्टर मांटेगू की धमकी ने जब्र अर्थात् Repression का रूप धारण किया तो यह बदली जो इस समय बहुत छोटी दिखाई दे रही है सारे आकाश को आच्छादित कर देगी और सारे भारत मंडल में अंधकार ही अंधकार हो जायगा। उसके पश्चात् क्या होगा, भगवान जाने। यदि लार्ड सिन्हा की उत्तम सम्मति पर आचरण किया गया तो और कुछ हो भारत में कोई उपद्रव नहीं हो सक्ता, क्योंकि जिस आन्दोलन के नेता महात्मा गांधी होंगे उस में Violence नहीं आसक्ती॥

परमात्मा करे कि भारत सरकार किसी विपरीत मार्ग का अवलंबन न करे जिससे यह आन्दोलन देश के प्रति हितकर होने के स्थान में अहितकर हो जाय॥

प्राचीन भारत में युद्ध कौशल।

(२)

(लेखक 'इतिहासज्ञ')

इस में सन्देह नहीं कि महाभारत के काल में बहुत भयङ्कर अस्त्र थे। तोप और बन्दूक के सदृश अग्नि की सहायता से चलने वाले भी भयङ्कर अस्त्र उस समय विद्यमान थे। भीष्म पर्व में युद्धका वर्णन करते हुये लिखा है कि:—

अग्नि के अस्त्र

"रथी लोग अग्निरथों कर्णिपत्र और नालिकास्त्रों (बन्दूक) से वीरों को युद्ध में मार कर सिंह नाद करने लगे" (१)

द्रोण पर्व में लिखा है कि:—

"चारों ओर पत्थरों की वृष्टि हो रही थी। सन्ध्या काल में शस्त्रों का और भी अधिक बल था। केरे के बने चक्र भुशुण्डियें तोमर शक्तियें

(१) रथिनश्चरथैराजन् कर्णिना लोक सामकैः
निहत्य समरे वीरान् सिंहनादान् विनेदिरे॥ ३१॥ (भीष्म० अ० ९६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शूल पट्टिश और शतघ्नियें (तोपें) बराबर पड़ रही थीं ॥ (१)

इसी प्रकार भीष्म पर्व में युद्धभूमि का वर्णन करते लिखा है :—

"युद्ध में गिरती हुई शक्ति ऋषि तोमर तद्वावार पट्टिश प्रासलोह भाले और कुहाड़ों से परघभिन्दि पाल और शतघ्नी (तोपों) और मुर्दों से सारी पृथ्वी ढक गई ॥ (२)

भीष्म पर्व में ही कलिङ्ग देश के राजा के हाथियों का वर्णन इस प्रकार किया है :—

"उसके पर्वत के तुल्य महागज मशीनों से तोमरों और तुणीरों से और ध्वजाओं से सुशोभित थे ॥ (३)

इसी प्रकार ' कर्णशरों और नालिकास्त्र से छोड़े लघुबाणों से उसकी सम्पूर्ण सेना को ढक दिया ॥ (४)

द्रोण पर्व में शकुनि ने अर्जुन और कृष्ण पर लगुड़ लोह, गोलक, पत्थर, तोप, शक्ति, गदा, परिघ,तलवार,शूल,मुद्गर, पट्टिश, कम्पन ऋषि, नरवर, मुसल, कुठार, क्षुर, प्रनालिकास्त्र, (बंदूक) आदि शस्त्रास्त्रों की वर्षा की ॥ (५)

भीष्म पर्व में :—

"भीष्म ने नव बाणों से शतघ्नी (तोप) को भेद दिया" ॥ (६

"जिस प्रकार खूब भड़कती हुई आग वायु की सहायता पाकर सब ओर फैल जाती है उसी प्रकार भीष्म अपने दिव्य अस्त्रों को प्रयोग करता हुआ जल उठा" ॥ (७)

---

(१) ततोऽस्म वृष्टि रत्यन्त मासीत्तत्र समन्ततः,
संन्ध्याकालाधिक वलैर्विमुक्ताः राक्षसैः क्षितौ ॥ ६२ ॥
आयसानि च चक्राणि भुशुण्डचः शक्ति तोमराः,
पतन्या विरताः शूला शतघ्न्यः पट्टिशास्तथा ॥ ६९ ॥ (द्रोण०अ० १५६)

(२) परिघैर्भिन्दिपालैश्च शतघ्नीभिस्तथैवच,
शरीरैः शस्त्रभिलैश्च समास्तीर्यति मेदिनी ॥ ५८ ॥ (भीष्म० अ० ९७)

(३) तस्य पर्वत सकाशा व्यरोचन्त महा गजाः
यन्त्र तोमर तुणीर पताकाभिश्च शोभिताः ॥ ३४ ॥ (भीष्म० अ० १७)

(४) कार्णिनात्मीकं नाराचैश्छादयामासतद् वलम् ॥ १३ ॥ (भीष्म० अ० १०७)

(५) लगुड़ा यो गुड़ाश्मानः शतघ्न्यश्च सशक्तयः ।
गदा परिघनिस्त्रिंश शूल मुद्गर पट्टिशाः ॥ १६ ॥
सकम्य नष्टि नरवराः मुशलानि परश्वधाः ।
क्षुराक्षुर प्रनालीकाः वत्सदन्तास्थिसंधयः ॥ १७ ॥ (द्रोण० अ० ३०)

(६) सविभेद शतघ्नीश्च नवभिः कङ्कपत्रिभिः ॥ ४१ ॥ (भीष्म० अ० ११४)

(७) यथाग्निः सुमहानिद्धः कक्ष चरातिसानिलः ।
तथा जज्वाल भीष्मोपि दिव्यान्यस्त्रण्युदीरपन् ॥ ६१ ॥ (भीष्म० अ० ११७)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उद्योग पर्व में :—

"जिस समय गाण्डीव को धारण करने वाला अर्जुन कर्णीशर और नालिकास्त्र और मर्मवेधी बाल फेंकता है तो उसके मुकाबिले पर कोई भी नहीं आ सक्ता"॥ (१)

शान्ति पर्व में राजधर्म के प्रकरण में दुर्ग निर्माण बताते हुए कहते हैं :—

"नगरों को द्वार सहित कोट बना कर रक्षा करनी चाहिये और द्वारों पर बड़े २ यन्त्र रखवादे और शतघ्नियें (तोपें) चढ़ा दे और राजा यह सब प्रबन्ध अपने हाथ में रक्खे" ॥ (२)

वन पर्व में इन्द्र के अर्जुन के लिए भेजे रथ का वर्णन करते हुए अशनि शस्त्र का इस प्रकार वर्णन आता है :—

"अशनि ऐसी है जिस में एक २ मन के गोले डाले जाते थे और उन के नीचे चक्र लगे हुए थे और वायु में ही फूट जाते थे और बड़ा भारी धक्का पहुंचाते थे और बादलों की न्याईं घोर नाद करते थे" ॥ (३)

द्रोण पर्व में नारायणास्त्र का वर्णन आता है कि :—

"प्रथम अगले भागों से जलते हुए बाण प्रगट हुये और सारी दिशायों में फैल गये फिर उसके बाद तारों की तरह चमकते हुए (काष्णिमस) शीशे के चमकते हुए गोले छोड़े गये। चार चक्रों वाली विचित्र प्रकार की शतघ्नियें और और बड़े २ गोले और ऐसे २ छुरों की चक्र धारायें भी बाद को प्रगट हुईं, वे ज्यों २ लड़ते गये त्यों २ अस्त्र भी बढ़ता गया। उस नारायण अस्त्र द्वारा वे सब शत्रु ऐसे मारे गये मानो आग ने उन्हें भून दिया हो। शीतकाल के चले जाने पर जिस प्रकार अग्नि बांस को जला देती है उसी प्रकार उस अस्त्र ने भी सारी पाण्डवों की सेना को भस्म कर दिया" ॥

शुक्र नीति के चौथे अध्याय में तोपों और बंदूकों का वर्णन इस प्रकार आता है:—

तोप और बन्दूक

बड़े और क्षुद्र (छोटे के) भेद से नालिक दो प्रकार का है—तिरछा ऊपर को छिद्र और जड़ के भेद से पांच वालिस्त का नाल होता है ॥२८॥

मूल और अग्र भाग से जो ऐसे लक्ष्य (निशाने) को जो तिल और विन्दु के समान होवे जिस में यन्त्र के दबाने से अग्नि लगे और पिसा हुआ चून (दारु) पड़ा होवे ॥२९॥

---

(१) अस्यतः कर्णनालीकान् मार्गणान् हृदयच्छिदः।
प्रत्येतान समः कश्चिद् युधिगाण्डी वधन्वनः ॥ ३ ॥ (उद्योग० अ० ५१)

(२) तोपाचद्वार वदूगुप्ति कार्यी सर्वात्मना भवेत् ॥ ४४ ॥
द्वारेषु च गुरुराथेव यन्त्राणि स्थापयेत् सदा।
आरोपयेच्छतघ्नीश्च स्वाधीनाति चकारयेत् ॥ ४५ ॥ (शान्ति० अ० ६९)

(३) तथैवाशनयश्चैव चक्रयुक्तस्तुला गुड़ाः।
वायुस्फोटासनिर्घाता महामेयस्वनास्तथा ॥ ५ ॥ (बन पर्व० अ० ४२)

नालिकं द्विविधं ज्ञेयं बृहत्क्षुद्र विभेदतः।
तिर्यगूर्ध्वच्छिद्र मूलं नालं पंचावितस्तिकं ॥ २८ ॥
मूलाग्रयोर्लक्ष्य भेदी तिल बिंदु युतं सदा।
यंत्रा घाताग्नि कृद्दाव चूर्ण मूलक कर्णकं ॥ २९ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दृढ़ जिसमें काठ हो भीतर से एक अंगुल पीली हो, जिसमें अग्नि चूर्ण पड़ा हो और शलाका (लोहे का गज) से भी युक्त और दृढ़ हो ॥३०॥

ऐसी लघु नालिका (बंदूक) को पदाति और सवार धारण करे और जितनी २ मोटी त्वचा हो और बीच का जितना २ बिल जिसका मोटा हो ॥३१॥

जितनी लंबी हो और जितना बड़ा गोला आवे और दूर के निशाने को भी भेदन करे और मूल की कील उखाड़ने से जो निशाने के समान लगे ॥३२॥

ऐसी वृहन्नालिका (तोप) जो काष्ठ वुध्न (ऊपर का काठ) से वर्जित हो और भली प्रकार लगाने से विजय को देने वाली वह शकट आदि से चलाने योग्य होती है ॥३३॥

गोला बारूद बनाने और तोप बन्दूक चलाने की रीति ।

इसी अमूल्य पुस्तक में बारूद बनाने और बन्दूक तोप चलाने के विषय में निम्न लिखित विस्तार है:—

जिसमें पांच पल सोरे का लवण एक पल गंधक और अग्नि से पके हुये आकस्नुही (सेहड) इनके पल भर कोयले हों ॥३४॥

इन सबको शुद्ध २ लेकर पीस ले और केले के रस में मिला कर पुट दे और धूप में सुखा लें ॥३५॥

यह अग्नि चूर्ण पिसकर खांड के समान हो जाता है, सोरे के लवण के ६ वा चार भाग लें ॥३६॥

सुकाष्ठोपांग वुध्नंचमध्यां गुलविलांतरं ।
स्वांतेग्नि चूर्ण संत्रात्री शलाका संयुतं दृढ़ं ॥ ३० ॥
लघुनालिकामप्येतत्प्रधार्यं पत्तिसादिभिः ।
यथा यथा तुत्वक् सारं यथा स्थूल विलांतरं ॥ ३१ ॥
यथा दीर्घं वृहद्गोलं दूरभेति तथा तथा ।
मूलकीलोद्गमालक्ष्य समसंधानभाजियत् ॥ ३२ ॥
वृहन्नालिक संज्ञं तत्काष्ठ वुध्नविवर्जितं ।
प्रवाह्यं शकटा द्यैस्तु सुयुक्तं विजयप्रदं ॥ ३३ ॥

(शुक्रनीति अ० ४)

सुवर्चिलवणात्यं तपलानिगंधकात्सलं ।
अंतर्धूम वियत्कार्क स्नुह्याघं गारतः पलं ॥ ३४ ॥
शुद्धात्संग्राह्य संचूर्ण्य समील्य प्रपुटेद्रसैः ।
शुद्धार्काणांरसातस्य शोषयेदातपेन च ॥ ३५ ॥
पिष्ट्वाशर्क स्वच्चैदग्नि चूर्णं भवेत्खलु ।
सुवर्चिलवणाद्भागा षड्वाचत्वार एव वा ॥ ३६ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गंधक और कोयले पूर्व के समान तोप के लिए जो दारु बनाने की यह रीति है और डालने का गोला सब लोहे का हो अथवा जिस के भीतर छोटी २ गोली हो ऐसा हो ॥३७॥

बंदूक के लिये शीशे का अथवा अन्य धातु का गोला होता है, और तोप के लिए लोह-सार का अथवा अन्य धातु का होता है ॥३८॥

और उसको नित्य मांजना स्वच्छ रखना और गोलंदाजों से युक्त रखना चाहिये और केलेगंधक सोरे का नोन मनासिल हस्ताल-सीसे का मेल,हिंगुल,कान्तिसार,लिहा,खपरिया, लाख वा राल नील (देवदारु) सरल का गोंद इन सबके समान वा कम ज्यादा अंशों से अनेक प्रकार की दारु बनती है ॥३९, ४०, ४१॥

दारु जानने वाले चांदनी के समान प्रकाश करने वाली अनेक प्रकार की दारुओं को कल्पना करते हैं और तोप के गोले को अग्नि के संयोग से निशाने पर फेंकते हैं ॥४२॥

पहिले तोप को भली प्रकार शुद्ध करे और फिर उसमें दारु को डाल दे। फिर उस दारु को (गज) से तोप की जड़ में दृढ़ता से जमादे ॥४३॥

उसके ऊपर गोला रखदे फिर तोप के कान में दारु को रख दे फिर कान के दारु में अग्नि को लगाकर गोले को निशाने पर फेंक दे ॥४४॥

कतिपय विचित्र अस्त्र

इनके अतिरिक्त अन्य भी विचित्र २ प्रकार के अस्त्रों का वर्णन महाभारत में आया है जिनका प्रयोग सम्भवतः पृथ्वी मण्डल के अन्य किसी भाग में न हुआ हो।

अन्तर्धानास्त्र

कुबेर धनाध्यक्ष अन्तर्धान नाम के अस्त्र को अर्जुन के प्रति देता है। उसका इस प्रकार वर्णन करता है कि ये मेरा प्रिय अन्तर्धान नाम अस्त्र तू ले ले यह औज और तेज को बढ़ाने वाले, दीप्ति को करने वाला, शत्रु को सुलाने वाला और नाश करने वाला है। शङ्कर के

नालास्त्राग्निचूर्ण तुगंधांगारौ तु पूर्ववत् ।
गोलो लोह मयोगर्भ गुटिकः केवलो पिवा ॥ ३७ ॥
सीसस्यल लघुनालार्थे ह्यन्यधातुसवोपिवा ।
लोहसार मयंवापि नालास्त्रंत्वन्यधातुजं ॥ ३८ ॥
नित्यसंमार्जन स्वच्छ मस्त्रपातिभिरा वृतं ।
अंगारस्यैवंगंधस्य सुवर्चिलवणस्य च ॥ ३९ ॥
सिलाया हरितालस्य तथा सीसमलस्य च ।
हिगुंलस्य तथाकांतरजसः कर्परस्य च ॥ ४० ॥
जतोर्नील्याश्चसरलनिर्यासस्यतथैव च ।
समन्यूनाधि कैरंशैरग्निचूर्णान्यनेकशः ॥४१॥
कल्पयंतिचताद्विधाश्चं द्रिकाभातिमंति च ।
क्षिपंतिचाग्नि संयोगाद्गोलं लक्ष्ये सुनालगं ॥४२॥
नालास्त्रं शोधपेदादौ दद्यात्तत्राग्निचूर्णकं ।
निवशयेत्तं दंडेननाल मूले यथादृढ़ं ॥४३॥
ततः सुगोलकं दद्यात्ततः कर्णेग्नि चूर्णकं ।
कर्णचूर्णाग्निदानेन गोलं लक्ष्येनिपातयेत् ॥४४॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

76183

पुर को नाश करने के लिये भी इसी का प्रयोग किया गया था। इससे बड़े २ असुर जल गये थे।

रण व्यूह शिक्षा

व्यूहों का अभ्यास और नियम पूर्वक व्यूह-रचना आदि सभी युद्धोचित उपयोगी क्रियाभ्यास (ड्रिल) कराया जाता था। द्रोणपर्व में व्यूहों का इस प्रकार वर्णन है:—"भारद्वाज वंशोत्पन्न द्रोणाचार्य इस प्रकार चक्र सहित शकट व्यूह बनाया जो १२ गव्यूती (४२ मील) लम्बा ५ गव्यूती (२० मील) पीछे से चौड़ा था। इस व्यूह में नाना राजा नाना वीर अपने २ स्थान पर नियत किये गये थे। हाथी और घोड़ों के समूह ही उसमें व्यय होगये। पिछले आधे में बड़ा दुर्भेद गर्भ व्यूह था और सूपद्म के बीच में गूढ़ व्यूह था इस प्रकार द्रोण ने व्यूह बनाया शूचीमुख में वीर कृतवर्मा था।

शिविर रचना

महाभारत के जमाने में सेना के रहने के लिये शिविर बनाये जाते थे और तम्बू और डेरे गाड़े जाते थे। जिस में सैनिक आनन्द पूर्वक युद्ध की तैय्यारियां करते थे उद्योग पर्व में सेनायों का वर्णन करते हुये लिखा है :—

तदिदं प्रतिगृह्णीश्व अन्तर्धानं प्रियं मम।
ओजस्तेजो द्युतिकरं प्रस्वापन मरातिनुत् ॥ ३९ ॥
महात्मना शङ्करेण त्रिपुरं निहतं पुरा।
तदैतदस्त्रं निर्मुक्तं येनदग्धाः महासुराः ॥ ४० ॥ (वन पर्व अ० ४०)

(१) अनीकयो सहतयो यदीमाद् ब्राह्मणोऽन्तरा।
शान्तिमिच्छन्नुमयतो नयोद्धव्यं तदा भवेत् ॥ ८ ॥
मर्यादां शाश्वतीं भिन्द्या दब्रा ह्यणयोऽभि लङ्घयेत्।
अथेच्चलङ्घयेदेतां मर्यादां क्षत्रिय ध्रुवः ॥ ९ ॥
असख्येयस्तदूर्ध्वं स्यादनादेयश्च संसदि ॥ १० ॥ (शान्ति अ० १६)

(२) दीर्घोद्वादशम व्यूति पश्चार्धेपञ्च विस्तृतः।
व्यूहः सच कुशकरो भारद्वाजेन निर्मितः ॥ २२ ॥
ताता नृपतिभिः वीरैः तत्र २ व्यवस्थितैः।
रथाश्वग जपत्यौद्यैर्द्रौणेनविहितः स्वयम् ॥ २३ ॥
पश्चाद्धतस्य पप्लस्य गर्भव्यूहः सुदुर्भिदः।
सूची यद्धस्म गर्भस्था गूढ़ो व्यूहः कृतः पुनः ॥ २४ ॥
एव मेतं महाव्यूह व्यूह यद्रोणो व्यवस्थितः।
शूचीमुखेमहेश्वासः कृतवर्मा व्यवस्थितः ॥ २५ ॥
शिविराणी महाहीणि तत्रराज्ञां पृथक् पृथक्।
विमानानीव राजेन्द्र निविष्टानिमहीतले ॥ ११ ॥ (उद्योग अ० ५१०)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राजाओं के बहुमूल्य पृथक् पृथक् शिविर अर्थात् डेरे जमे हुये थे जैसे मानो पृथ्वी तल पर विमान ही उतर जायें हों ॥

निशा युद्ध

महाभारत काल के आर्य वीर राजि के समय भी बहुत वीर युद्ध करते थे रात्रि के घोर अन्धकार होने से युद्ध करना तथा शत्रु और मित्र को पहचानना और घोड़ों रथों और गजों का मार्ग देखना तथा सेनाओं का ठीक प्रकार से शासन करना कठिन था इस लिये प्राचीन योद्धा अपने घोड़ों के साथ रथों के साथ गजों के साथ किसी अगम्य विधि से दीपकों या लैम्पों के जोड़ लेने का प्रबन्ध कर रक्खा था द्रोण पर्व में रात्रि व्यूह की तैय्यारी का वर्णन करते हुये लिखा है ॥

प्रत्येक रथ पर पांच लैम्प या दीवे जगाये गये और प्रतिगज गज पर ३ प्रदीप प्रति घोड़े पर १ महाप्रदीप पर रखा गया क्षण भर में सब दीप कहीं दीपक जल गये ॥

शब्द न करने वाले चक्रों से युक्त रथ।

प्रायः सभी प्राचीन सभ्यता के धारण करने वाली जाति में उन में भी विशेषतः यूनानी और भारत वर्ष की नासिनी आर्य जाति रथों पर सवार होकर युद्ध करती थी, महाभारत के काल उन्नत शिल्पियों सभी रथों को भी आविष्कार कर लिया था जिनके चलते हुए चक्रों में से किसी प्रकार का शब्द नहीं होता था उसके चक्र की परिधि पर रबड़ का टायर लगाते थे या कुछ और वस्तु इसका कुछ भी पता नहीं चलता उद्योग पर्व में सहदेव के विषय में लिखा है :—जिस समय सरलतया गति करते हुये अक्ष द्वारा भी शब्द न करते हुये सुवर्ण के बने तारा से सुशोभित सुशिक्षित घोड़े से युक्त रथ पर सहदेव चढ़कर राजाओं के गले काटेगा तब दुर्य्योधन युद्ध करेगा ॥

हमारी मंजूषा।

(१) वैदिक धर्म—यह मासिक पत्र हमारे सुप्रसिद्ध पण्डित श्रीपाद् दामोदर सातवलेकरजी के सम्पादकत्व में स्वाध्याय मण्डल औंध ज़िला सितारा से प्रति मास प्रकाशित होता है। वार्षिक मूल्य ३॥) है। यह पत्र बैदिक धर्म की व्याख्या तथा वेद सम्बन्धी ज्ञान का विस्तार करना है और आधुनिक विज्ञान के मूलतत्व वेदों में से ही लिये हैं इस बात का युक्ति तथा प्रमाणों द्वारा समर्थन करता है। इसका तृतीय अंक हमारे सामने है इसमें "वेद में लोहे के कारखाने" शीर्षक लेख है उसमें प्रथम सुई का वेदों से वर्णन है यह दर्शाया गया है। यूरोपियन लोगों का यह कथन कि "आर्य्यों को

महाधनैराभरणैश्च दीप्तै शस्त्रैश्च दिव्यैरभिसम्पतद्भिः ॥ १५ ॥
रथे रथे पञ्च विदीपिकास्तु प्रदीपिका मजगजे त्रभश्च।
प्रत्यश्च मेकश्च महाप्रदीप कृतास्तुताः पाराः ऽव कौरवैर्घे ॥१६॥ (द्रोणा०अ० १६३)
यदा गतो हाह मकुजवाक्षं सुवर्णतारं रथमात तायी।
दान्तै युक्तं सहदेवोऽधि रूढः शिरांसि राज्ञां क्षेप्यते मार्गणौघैः ॥ २२ ॥ (उद्योग० अ ४७)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कपड़े सीने की विद्या का ज्ञान न था" इसका खंडन बड़ी अच्छी तरह किया गया है। दूसरी बात यह है कि "गोघ्नो अतिथिः" यह प्रयोग संस्कृत साहित्य में बहुत आता है जिसका अर्थ बहुत से भारतीय पण्डित तथा यूरोपियन लोग "गौभक्षक अतिथि" करते हैं, परन्तु उन्होंने 'घ्न' के अर्थ 'रक्षक' सिद्ध करके दिखलाये हैं। प्रत्येक जातीय गौरव के रक्षक भारतीय नरनारी को इस पत्रका ग्राहक बन कर इससे अवश्य लाभ उठाना चाहिये।

(२) अथर्व वेदीय-पञ्चपटलिका—अर्थात् अथर्ववेद का तृतीय लक्षण ग्रन्थ भावानुवाद सहित जो कि अथर्ववेद के मंत्रों, विभागों और रचना प्रकार पर प्रकाश डालता है। इसके सम्पादक पण्डित भगवद्दत्त बी. ए. संस्कृताध्यापक तथा रिसर्च स्कालर डी. ए. वी. कालेज लाहौर हैं। मूल्य प्रति पुस्तक १) है। यह पुस्तक स्वाध्याय करने वालों के लिये बड़ी उपयोगी है।

(३) संस्कारविधि मंडनम्—यह पुस्तक महर्षि दयानन्दजी कृत संस्कारविधि पर किये गये आक्षेपों का उत्तर है। विपक्षियों के आक्षेपों का उत्तर प्रमाण और युक्ति से दिया गया है। लेखक पण्डित रामगोपाल शास्त्री धर्माध्यापक लाहौर हैं। मूल्य ॥) है और शामदास बधवा मैनेजर ऐंग्लो संस्कृत पुस्तकालय शहालमी दरवाज़ा बाज़ार मच्छीहट्टा लाहौर से मिलती है।

विलाप पञ्चक।

लेखक—श्रीयुत पण्डित गयाप्रसाद 'श्री हरि'

* हा हन्त हन्त जगदीश! कृत किमेतत् *

जगदीश! हा हा हन्त! तुमने क्या किया कैसा किया।
इस आर्त भारत भूमि के आंसू न दो पुंछने दिया॥
निज दुःख दग्धा मात के वे दुख सुनाते नित नये।
श्री बालगङ्गाधर निकट हा बालगङ्गाधर गये॥१॥

प्रिय कर्म गीता छोड़ अपनी दुःख गीता मात की।
सब देश देशों में सुनाकर दुर्दशा जग तात की॥
स्वर्गीय जनता को सुनाने चल दिये किस चाल में।
हा हा तिलक! भारत तिलक! भारत तिलक! दुष्कालमें॥२॥

बत्तीस कोटिक प्रियजनों का भार निज कर धार कर।
हा बन गये हैं चिर प्रवासी वाष्प वारिधि पार कर॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जग पावनी जननी बहा ले अश्रुधारा शोक से ।
तेरि नैय्या के खेवैय्या चल दिये इस लोक से ॥ ३ ॥
जिस भव्यभारत भूमि के हित दुःख सब तुमने सहे ।
हा ! हा ! सुदुःखागार कारागार बहु वत्सर रहे ॥
देखा न उसके सौख्य को निज पुण्य-फल को भी अहो।
हेद्विज तिलक!इस दुस्समयमें चलदिये फिर क्यों कहो॥४॥
हे पूज्य, परमाराध्य ! अब तो प्रार्थना है बस यही ।
बनकर विदेशी देश के दुःख भूल मत जाना कहीं ॥
हे धर्म धाराधार ! भारत कर्णधार गुरो ! कभी ।
प्रिय देश के उद्धार हित आना पुनः भारत कभी॥५॥

कुसुमोद्यान

जनेवा में वोट-अधिकारिणी-स्त्रियों की अन्तर्जातीय समिति ।

पूर्वीय स्त्रियों की संध्या कालीन सभा ।

लंडन का (India) इन्डिया नामक पत्र लिखता है कि—"युद्ध के पश्चात् वोट अधिकारिणी स्त्रियों की अन्तर्जातीय समिति का प्रथम सम्मेलन ६ जून से लेकर १२ तक जनेवा में हुआ। यह एक बड़ा विचित्र अवसर था क्योंकि पिछले सात आठ सालों में बीस देशों ने अपनी स्त्रियों को वोट देने का अधिकार स्वीकार किया था और इसमें वह स्त्रियां शामिल थीं जो कि पार्लियामेन्ट की सभासदा थीं, जो नागरिक सभाओं की सदस्या थीं, तथा जिन्होंने युद्ध के समय बड़ी नीतिज्ञता प्रकट की थी। परन्तु यह अवसर बड़े महत्व का इसलिये था जैसा कि सभाधिष्ठात्री मिसेज़ चैपमैनकैट ने स्वयं बतलाया—कि इसमें पूर्व देश की स्त्रियां विद्यमान थीं। दुर्भाग्य-वश जापान, भारत वर्ष और टर्की केवल यही तीन पूर्वीय देश की प्रतिनिधि थीं। ईजिप्ट की डेलीगेट स्त्रियां पास पोर्ट न मिलने के कारण न आ सकीं और चीन की प्रतिनिधि स्त्रियां रास्ते में थीं पर पहुंच न सकीं।

१० जून की शाम को ख़ास तौर से "पूर्वीय स्त्रियों की वक्तृता के लिये" नियत कर रक्खा था। इस सभा में बड़ी भीड़ थी क्योंकि लोग यह जानने के लिये बड़े उत्सुक होरहे थे कि पूर्व की पददलित स्त्रियां अपने विषय में क्या कहना चाहती हैं।

भारतीय दस प्रतिनिधियों में से तीन ने वक्तृता दी। मिसेज़ सेन के निबन्ध का मुख्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भाव यह था कि पूर्व और पश्चिम के भेदभाव अथवा भिन्न जातियों के प्रश्न अनावश्यक हैं। हम लोग यहां पर स्त्री-सम्बन्धी प्रश्नों पर विचार करने के लिये स्त्रीत्व रूप से एकत्र हुई हैं। मिसेज़ ताता ने भारत में स्त्रियों के वोट अधिकार का संक्षिप्त इतिहास बतलाते हुये स्पष्ट रूप से कहा कि भारत के पुरुष गण सर्वत्र स्त्रियों के पक्ष में हैं और चूंकि बृटिश पार्लियामेन्ट ने स्त्रियों को वोट मिलने के प्रश्न को भारत की जनता की प्रथम कौंसलों के निश्चय पर छोड़ दिया है अतः भारतीय महिलाओं को अपने अधिकार प्राप्त कर लेने में कठिनाई न होगी। मिसेज़ सरोजिनी नायडू ने सारी कार्य्यवाही को काव्य-रचना में बदल दिया। उन्होंने पूर्वीय प्रतिनिधियों की तुलना उन पूर्वीय लोगों के साथ की जो एक सहस्र वर्ष पूर्व बेथलेहम में उत्पन्न हुये बच्चे को श्रद्धाञ्जलि अर्पण करने आये थे। पूर्वीय तथा पश्चिमीय स्त्रियां उदय होते हुये स्वाधीनता के तारे को अर्घ्य देने के लिये सम्मिलित हुई हैं। उन्होंने कहा कि मुझे यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि मातृत्व के अधिकारों को स्वीकार करने तथा उन पर बल देने के पूर्वीय विचारों के साथ पाश्चात्य भी सहमत होने लग पड़ा है। वह देश महान् नहीं है जिसके पास भौतिक सम्पत्ति अधिक है अथवा जिसके पास बहुत सी भूमि-सम्पत्ति है किन्तु वह देश सब से महान् है जो मातृत्व के अधिकारों को स्वीकार करता है।

दो जापानी स्त्रियां सब से पीछे बोलीं। मिसेज़ गान्टलेट जापान में मद्यनिषेध सभा की प्रतिनिधि-ने इस सम्बन्ध में स्त्रियों से किये कार्यों का वर्णन किया। मिस कौरी ने कहा कि जापान की स्त्रियां अभी तक अपने अधिकारों को समझने योग्य नहीं बनी हैं तथापि वह पाश्चात्य स्त्रियों के संघर्षण को बड़ी उत्सुकता से देख रही हैं और उनकी ग़लतियां तथा उनकी असफलता को बड़े ध्यान से देख रही हैं। उदाहरणार्थ बराबरी और स्वतन्त्रता के अर्थ समझने में वह बड़ी भूल कर रही हैं क्योंकि चुरुट पीने जैसे दुर्गुण में भी पुरुषों की नकल करना अपना अधिकार समझती हैं। उनके उदाहरण से पूर्व को लाभ होगा किन्तु इनमें जागृति आने से पश्चिम को भय होने लग पड़ा है।

यह सभा बड़ी सफलता से हुई और स्विस समाचार पत्रों में इसकी बड़ी चर्चा रही। सारे सम्मेलन की कृतकार्य्यता इसी सन्धा कालीन सभा के कारण हुई। स्त्रियों में से एक ने कहा कि इस सारी प्रदर्शनी में पूर्व की स्त्रियां केवल शरीर रूप से ही विद्यमान न थीं बल्कि पूर्व का आध्यात्मिक भाव भी इसमें वर्त्तमान है। एक देवी हेलनवे के रीस्को ने कहा कि विजित पूर्व ने विजेता को ही आकर्षण द्वारा बन्दी कर लिया है।

पूर्वीय देवियों को इन बातों पर ध्यान रखते हुये पूर्वीय धर्म-मर्य्यादा, रीति, नीति का परित्याग न करके उत्तरोत्तर वृद्धि द्वारा समग्र संसार की महिलाओं की अग्रसर बनने की चेष्टा करनी चाहिये। भारतीय स्त्रियां इस अवस्था में भी कैसी संसार की स्त्रियों में प्रतिष्ठा पात्र बन रही हैं यह कम महत्व की बात नहीं।

इंग्लैन्ड वासी भारतीय युवक क्या कहते हैं?

जून १९ के अंग्रेजी पत्र नेशन (Nation) में इस शीर्षक का सम्पादक के नाम पत्र है जिसे किसी एडिनबरा निवासी भारतीय ने लिखा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है। वह कहता है कि स्वयं भारतीय होने के कारण और प्रवास में थोड़ा बहुत ज्ञान जो मुझे है वह मैं इंग्लैंड प्रवासी भारतीय युवकों के प्रतिनिधि रूप से वर्णन करना चाहता हूं। हम नवयुवकों ने जिनमें बहुत से विद्यार्थी हैं और जिन्हें इन कार्य्यों के लिये समय नहीं मिलता अब तक लेखों तथा व्याख्यानों द्वारा बहुत कुछ इस विषय में नहीं किया लेकिन तथापि चेम्सफोर्ड, डायर, ओड्वायर, जैसे लोग तथा मार्शलला हमें सोच विचार करने से नहीं रोक सके। बृटिश गोलियां भी हम लोगों को अपनी देश भक्ति प्रगट करने से नहीं रोक सकीं। (हां मैं यह कह देना चाहता हूं कि एक भारतीय में देश भक्ति होने को साधारणतया ऐंग्लो इन्डियन लोग राज विद्रोह के नाम से ही पुकारते हैं)॥

अच्छा तो सुनिये। भारत में बृटिश राज्य इस अंश में तो बड़ा अकृतकार्य्य सिद्ध हुआ है कि वह आधीन-जाति के हित के लिये शासन है। वहां पर शासक और शासित के मध्य में कोई स्नेह-बन्धन नहीं है। वह खाई जो एक भारतीय को एक अंग्रेज से अलग करती है वह केवल जाति तथा वर्ण के भेद के कारण नहीं है बल्कि वह भिन्न सभ्यता के कारण है। इस सचाई की उपेक्षा करने की चेष्टा करना सर्वथा निरर्थक है और दोनों ओर से चाहे कितना ही पाखण्ड रचा जावे यह खाई लांघी नहीं जासकी।

लेकिन कई यूरोपीय लोगों की दृष्टि में बृटिश राज्य मानों परमेश्वर दत्त शासन है। उन्होंने झट पहिचान लिया कि अपनी ही जाति के नौकरशाही की सहायता से वहां पर ढेरी लगा लेने की बहुत सम्भावनायें हैं। भारत केवल एक चरागाह है जहां पर निकृष्ट वर्ग के अंग्रेज लोग जाकर (क्योंकि यही लोग प्रायः वहां पहुंचते हैं) मोटे होते हैं॥

प्रति वर्ष भारत के धन में से कई करोड़ रुपये विलायत चले जाते हैं और उसके बदले में जो कुछ भारत को मिलता है वह यह है कि कुछ थोड़े और जहाज सैनिकों और नौकरशाही से भरे हुये पहुंच जाते हैं जिनका काम यह होता है कि विदेशी धन लोलुप लोगों को उनके भारत में बृटिश राज्य के बढ़ाने के कार्य्य में तथा इंग्लैन्ड के झण्डे को जहाजों की चोटी पर फहराते हुये देखने में सहायता दें॥

हां यहां के राह चलन्तों को इसका स्वप्न में भी ज्ञान नहीं हो सक्ता कि उनकी बाबत भारत क्या कहता है और डेढ़ सौ वर्ष के उत्तम बृटिश राज्य के बाद एक भारतीय के मुख से यह सब बातें सुन कर उन्हें आश्चर्य्य होगा। और वह यूरोप वासी जो भारत में हो आया है और जो दावतों में तथा चुरुट पीने के कमरे में अभिमान पूर्वक कहता है कि मैं भारत को तथा भारतीयों को जानता हूं बहुधा केवल अपने बड़े भारी बंगले के भीतरी हिस्सों, खूब सजी हुई होटलों, और फर्स्ट क्लास रेल के डब्बों—जिन के ऊपर लिखा होता है रिजर्वड फार यूरोपियन्स-के अतिरिक्त और कुछ नहीं जानता। एक भारतीय के हृदय को समझने के लिये न तो उसके पास अवकाश ही होता है और न उसे इस बात की कुछ परवाह ही होती है। लोगों की भलाई तथा जनता की राय तो केवल छोटी २ विस्तार की बातें हैं जिन के वास्ते ऐंग्लो इन्डियन नौकरशाही को सुमेरु शिखर पर विहार करते हुये वह अगम्य-भूमि जिस के द्वार पर कोई भारतीय प्रविष्ट नहीं हो सक्ता-तंग नहीं करना चाहिये॥

अब देखना यह है कि कोई जाति यह नहीं पसन्द करती कि उस की उपेक्षा की जाय (to be bossed over) तथा अपनी जन्मभूमि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में ही विदेशियोंका अधिकारहो। अतःस्वाभाविकतया भारतीय लोग इस बात पर एतराज़ करते हैं कि अपने ही देश में वह पराये बन कर क्यों रहें। लेकिन भारत में बृटेन की शक्ति ही अधिकार है। यूनियन जैक के झण्डे तले रहने वाली जातियों के लिये, निर्बल जातियों के लिये आत्मनिर्णय का नियम (principle of self-determination) नहीं है इस लिये विद्रोह रोकने के लिये ब्रिटेन को अपने हठीले पराधीन राज्य को कड़े सेनाधिकार में रखना ही पड़ता है। विचार शील पुरुषों को जनता में अपने खतरनाक विचार फैलाने तथा प्रगट करने से रोकने के लिये रौलट बिल सरीखे नियम पास किये जाते हैं, समाचार पत्रों का दलन प्रेस ऐक्ट बड़ी उत्तमता से करता है, प्राइमरी शिक्षा का सार्व जनिक होना इस लिये वर्जित है कि जनता का मूर्ख रहना शासक जाति को लाभकारी है, (Arms Act) आर्म्स ऐक्ट तथा (D. O. R. A.) राज्य-रक्षा-नियम इसलिये हैं कि विरोध करनेके उद्योगसे दूर करके, भारतको निस्सहाय करदिया जावे, वहां पर सी. आई. डी. का एक खास विभाग भी है जो उन लोगों के सिर पर सवार रहते हैं जो कि जनता के सन्मुख व्याख्यानों तथा लेखों द्वारा वह बातें कहने का साहस करते हैं जिन्हे प्रत्येक देश-भक्त भारतीय अपने हृदय पटल पर अंकित किये हुये है। पिछले कई वर्षों में कई लोग जनता में से बग़ैर धमकी, दलील, अथवा मुकदमें के अन्तर्ध्यान हो गये॥

हां यह तो स्पष्ट ही है कि इस प्रकार के देश में जहां राजाबिद्रोह इतना फैला हुआ हो तो राष्ट्र में उच्च तथा आवश्यक तथा अधिक उत्तर दातृत्व के पद उस देश के पुत्रों के हाथ में तो नहीं दिये जासक्ते। भारतीय होना ही एक अवगुण है और इन सैनिकों के प्रथक् करने के दिनों में केवल यही बात कि फलाने अंग्रेज ने युद्ध में सेवा की है उसे एक भारतीय उम्मेदवार की अपेक्षा इम्पीरियल सार्विस के किसी पद पर नियुक्त किये जाने का अधिक उत्तम बहाना मिलजाता है, यद्यपि वह भारतीय उस पद के लिये अपने कुल और शिक्षा के कारण चाहे कितना ही योग्य क्यों न हो।

अब मैं विचारशील बृटिश जनता से पूंछता हूं कि इन सचाइयों के विद्यमान रहते इस पृथ्वी पर आप यह कैसे आशा कर सक्ते हैं कि कोई भारतीय ब्रिटेन और उसके झण्डे का भक्त रह सकेगा? क्या यह सरकार यह विचारती है कि भारत में वह प्रजा को राजभक्त तथा आधीन दाबने वाले कानून और मार्शल ला से कर सक्ती है? मैं आशा करता हूं कि युद्धशील शासक तथा मूर्ख सेनापति गण जिन्हे केवल बन्दूकों, खाइयों तथा हवाई जहाज से बम्ब छोड़ने के ही स्वप्न आसक्ते हैं इस प्रमाद-युक्त युक्ति (Stupid policy) की (folly) मूर्खता को देखेंगे।

निस्सन्देह यह विचित्र बात है कि भारत में अंग्रेज इतने बहिरे बन बैठते हैं कि उन्हें भारत की यह बाणी कि "यदि तुम इतने मूर्ख हो कि वर्त्तमान राज-नैतिक दबाव हत्या और हिन्सा के राज्य को जारी रक्खे रहोगे तो तुम्हारे बड़े साम्राज्य की सारी सेनायें भी भारत को तुम्हारे राजा तथा देश के प्रति भक्त नहीं बना सकेंगी" नहीं सुनाई पड़ती।

अगर पंजाब में आज सैकड़ों विधवा मातायें हैं जो कि अपने नन्हे बच्चों को दूध पिलाने के साथ २ उनके दिलों में अपने पितृ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हन्ताओं के लिये अमर घृणा का भाव भी पैदा करती हैं तो इसमें किस का दोष है? तब क्या यह अचम्भे की बात है कि डेढ़ सौ वर्ष के अंग्रेजों के बुरे शासन का फल कुछ और न होकर केवल यही हुआ कि प्रत्येक भारतीय के हृदय भारत में रहने वाले विदेशियों की ओर से खट्टे हो गये हैं।

निस्सन्देह बृटिश जनता का बड़ा भाग उनके साम्राज्य के प्राण सम विभाग में क्या २ गुल खिल रहे हैं इस से बिल्कुल परिचित न होकर सुखमय भ्रम में है। दुःखी जाति की बदला देने की परमेश्वर की दुहाई की सर्द आहें भारत वर्ष और इंग्लैण्ड के बीच में जो दूरी है उस में डूबजाती हैं।

मैं चकित हूं कि बृटिश जनता तथा बृटिश पार्लियामेण्ट अगर भारत में प्रचलित दशाओं का सच्चा हाल जानें तो क्या करें?

यूरोप में मदिरापान निषेध करने के परिणाम।

जून मास का (Literary Digest) लिट्-रेरी डाइजेस्ट नामी पत्र कहता है कि मदिरा-पान निषेध के प्रचारक अभी से मदिरा के व्यवसाय के बन्द करने के परिणाम जो साधारण स्वास्थ्य पर पड़ रहे हैं उनकी गणना के लिये तालिका बना रहे हैं। एक अमेरिका का पत्र कहता है कि "अल्कोहाल (एक प्रकार की शराब) के पीने में जो रुकावट की गई है यद्यपि बिल्कुल बन्दिश नहीं हुई तथापि उसमें केवल अमेरिका ही नहीं बल्कि युद्ध के दिनों में मित्र राष्ट्र तथा शत्रुदल और वह उदासीन देश जो मध्यवर्त्ती साम्राज्यों को घेरे हुए हैं सभी शामिल हैं। यह बन्दिश केवल उन कानूनों के बनने से कि खास समय पर खास स्थान पर ही मद्य बेचे जावें नहीं हुई बल्कि चीजों की कमी और मंहगी के कारण खरीदना कठिन हो जाने से भी हुई है।

सेना विभाग में हजारों मनुष्यों को मदिरा पान की रुकावट से लाभ हुए हैं। जर्मनी सर्कार की ओर से कई वैज्ञानिकों तथा पादरियों ने एक समिति द्वारा अन्य सिविलियन जनता के विषय में जो बहुतायत में मदिरा सेवन करती थी पता लगाया और १९१९ में मनोरंजक रिपोर्ट छापी। प्रोफेसर पार्टश की रिपोर्ट से ज्ञात होता है कि प्रशिया में मद्यसेवन के कम होने से वहां पर बारम्बार मद्य पीना घट गया और इसी से मानसिक विकार भी कम होगये तथा तत्सम्बन्धी शारीरिक रोग भी घट गए। बुद्धि सम्बन्धी रोग तो साम्राज्य के किसी विशेष विभाग में ही नहीं वरन सर्वत्र घट गये। और सबसे बढ़कर बात जो रिपोर्ट बतलाती है वह यह है कि जो लोग पहिले निरन्तर शराब में मस्त रहते थे उनमें से बहुत से आर्थिक दृष्टि से लाभकारी कामों में लगगये।

यदि युद्ध की आवश्यक्ताओं के कारण सच-मुच मद्य निषेध ने जातियों पर इतना उत्तम प्रभाव डाला है तो जनता के स्वास्थ्य के पोषक प्रचारकों के लिये यह एक बड़ा विचारणीय प्रश्न है कि इस उत्तम प्रभाव को सदा के लिये कायम रखने का यत्न किया जावे।

हमारे भारतीय सुधारकों को भी इन बातों पर ध्यान देते हुए मद्य निषेध करने का शीघ्र ही यत्न करना चाहिये। आर्थिक कष्टों के रहते हुए भी यहां पर मद्य सेवन बहुत है।

नया वैज्ञानिक आविष्कार फोटोफोन।

(The Scientific American) अमेरिका के वैज्ञानिक पत्र में हर्बर्ट टी बेड लिखते हैं कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वाशिंगटन की वैज्ञानिक सभा ने एक नया यंत्र निकाला है जिसको फोटोफोन कहते हैं जिसको मामूली सन्दूक में बन्द करके जहां चाहो भेजा जा सक्ता है। इसमें एक कुप्पा और टेलीफ़ोन का तार रहता है जिसमें से बेतार वर्की द्वारा घंटी बजती, बाजा बजता और व्याख्यान दिये जाते हैं। कुप्पे को छोड़कर यह कोई १२ इञ्च ऊंचा होता है और खूब पास पास कल पुरज़े होते हैं। इसके चलाने के लिये किसी विशेष जानकार की ज़रूरत नहीं बल्कि कोई मनुष्य भी इसे लगा सक्ता है। फोटोफोन से कई लाभ की सम्भावना है। उदाहरणार्थ यदि ८-३० पर प्रत्येक सन्ध्या समय कोई बड़े शहर से अपने बेतार वर्की द्वारा नाच का वाद्य भेजे तो जो लोग नाचना चाहते हैं वह अपने २ फोटोफोन को मेज़ पर रखकर बिजली का करेन्ट खोल लें तो एक छोटे कमरे में नाच के लिये जितना बाजा चाहिये वह मिल सक्ता है। अथवा प्रातः काल जब लोग जलपान करने लगें तो चाहें उनके यहां समाचारपत्र हों या न हों वह अपने फोटोफोन खोल रक्खें तो उन्हें सारे दिन की खबरों का संक्षिप्त वर्णन भेजा जा सक्ता है।... .....इसमें एक ख़ास ज़ोर से बोलने वाला टेलीफोन लगा रहता है जिस में सिग्नल होते ही बड़ी ज़ोर से झनकार सुनाई देती है और बड़े कुप्पे में जाकर आवाज़ गूंजती है फिर कमरे में भर जाती है। यह यंत्र जो कुछ अब तक बन पाया है उससे १५ मील की आवाज़ तक ग्रहण कर सक्ता है और इससे भेजी हुई सन्सनाहट ऐसी लहर वाली नहीं होती कि व्यापारिक बेतारवर्की के साथ टकराये। यह इतना बड़ा नहीं है कि सर्कारी, जहाजी तथा व्यापारिक स्थानों से दूर से आये हुये सिग्नल का उत्तर दे सके। अब तक तो उसी वैज्ञानिक सभा की ओर से तजुर्बे के लिये ही फोटोफोन बर्ता गया है किन्तु इसमें अधिक उन्नति करने की आशा है"।

आधुनिक विज्ञान वेत्ताओं का ध्यान भोग विलास की ओर इतना आकर्षित है कि नित्य नये साधन भोग के उपस्थित होते जाते हैं चाहे शरीर रक्षा के साधन कितने ही घट जावें और आत्मा कितना पतित होता जावे इसकी कुछ परवाह नहीं है।

गुजरात का कर्त्तव्य।

अपने गुजराती समाचार पत्र "नवजीवन" में महात्मा गांधी ने "गुजरात का कर्त्तव्य" पर एक बड़ा विवेचना पूर्ण महत्त्व का लेख लिखा है जिसमें उन्होंने भारतीय इतिहास के इस बड़े आवश्यक समय में 'गुजरातियों का क्या कर्तव्य होना चाहिये' यह स्पष्ट रीति से बतलाया है। किन्तु वह बातें इतने महत्व की हैं कि प्रत्येक प्रान्त के वासियों के लिये उतनी ही महत्त्वपूर्ण हैं जितनी कि गुजरात के लिये अतः हम यहां पर कुछ मुख्य २ बातें बतलाना आवश्यक समझते हैं। वह कहते हैं कि "मैंने अपने लेख का शीर्षक 'गुजरात का कर्तव्य' जान बूझकर ख़ास मतलब से रक्खा है क्योंकि नवजीवन गुजराती भाषा भाषियों के लाभ के लिये निकाला जा रहा है और उसके द्वारा मैंने अपने सर्वोत्तम विचार को जिन्हें मैं अपने जीवन में कार्य्यरूप में परिणत करने का यथाशक्ति यत्न करता हूं अपने स्वदेश बन्धुओं के सन्मुख बढ़ाने तथा व्याख्या करने का यत्न कर रहा हूं। कई गुजरातियों से मेरा घनिष्ठ सम्बन्ध है और मैं स्वच्छन्दता से उनके सामने अपने विचार प्रगट करता हूं। वह मेरे जीवन की छोटी मोटी बातें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भी देख सक्ते हैं। मैं उनसे अपनी कमजोरियां छिपा नहीं सक्ता और न मैं छिपाने का यत्न ही करता हूं" अतः गुजरातियों से वह आशा रखते हैं कि वह उनके साथ विशेष रीति का सलूक करें। जो विचार महात्माजी ने उनके सामने रक्खे हैं वह न तो अपरिपक्व हैं और नही अविचारशील मस्तिष्क से निकले हैं किन्तु वह तीस वर्ष की कड़ी परीक्षा द्वारा जांचे हुये हैं। हो सक्ता है कि उनमें न्यूनता रह गई हो, हो सक्ता है कि वह अशुद्ध भी हों क्योंकि जीव की अल्पशक्ति होने के कारण कदाचित् महात्माजी को अपनी कमजोरियों का पता न चला हो तथापि वह यह चाहते हैं कि उनकी उचित परीक्षा किये बिना उन्हें न त्याग दें। गुजरातियों का यह मुख्य कर्तव्य है कि वह उनको बड़े ध्यान से जांच करें क्योंकि महात्माजी के पास रहने से उन्हें जांच करने में सुविधायें बहुत हैं।

मैं स्वर्गीय जीव या साधू नहीं किन्तु (Practical) क्रियात्मक मनुष्य हूं।

महात्मा गांधी कहते हैं कि—"मेरे विचारों को यह कह कर टाल देना कि मैं संसार त्यागी हूं या मैं साधु होगया हूं अथवा यह कह देना कि यह विचार तो अच्छे हैं पर हमारे जैसे दुनियावी मनुष्य उन्हें कार्य्य में परिणत नहीं कर सक्ते इत्यादि यह तो कायरपन की बातें हैं। मैं अपने को स्वर्गीय जीव या साधु होने का दोषी नहीं ठहरा सक्ता। अपने सहयोगियों को देख कर अपने दोषों को देखने में समर्थ हूं। मैं अपने को दुनियावी मनुष्य मानता हूं। मैं अपने पड़ोसियों की अपेक्षा अधिक आनन्दित सन्तोषी और निर्भीक हूं तथापि मैं संसारी कार्यों में इस कारण कम फंसा नहीं हूं। मेरे पड़ोसी मेरे अगणित कार्यों को देख कर घबड़ाते हैं किन्तु मैं दृढ़ता पूर्वक उन्हें चला ही रहा हूं। औरों की भांति मेरे भी पुत्र कलत्र हैं मैंने उनके प्रति अपने कर्तव्य छोड़ नहीं दिये हैं बल्कि इनकी एक २ छोटी २ बातें अध्ययन की हैं और किसी एक की भी अवहेलना नहीं की। मैं वनवासी नहीं बन गया हूं प्रत्युत मैं देखता हूं कि मेरा सम्बन्ध बढ़ता ही जारहा है। मैं नहीं समझ सक्ता कि किस अंश में औरों ने मेरी अपेक्षा संसार से अधिक नाता जोड़ा है। मुझे साधू कहकर मेरी अवहेलना करना मेरे साथ अन्याय करना है और गुजरात को मेरी तुच्छ सेवा से वंचित करना है"।

जनता के अधिक विचारशील बन जाने का भय।

(Times Weekly) टाइम्स वीक्ली में एक छोटीसी टिप्पणी है जिससे ज्ञात होता है कि विलायत में लोगों को इस बात का भी भय है कि कहीं जनता अधिक विचारशील न बन जावे। कहते हैं कि महा मन्त्री लायड जार्ज अपनी पत्नी और पुत्री सहित एक वेल्स गिरजे के सालाना उत्सव पर गये थे वहां उनका भी भाषण था। उन्होंने पहिले वेल्श भाषा में फिर अंग्रेजी में भाषण करते हुये कहा कि मेरे पूर्व वक्ता ने जो कहा कि जनता अधिक विचारशील बनती जाती है यह बड़े सौभाग्य की बात है। यह बड़ी उत्तम बात है और मुझे लोगों की विचारशीलता से भय नहीं है किन्तु बिना सोचे विचारे जो काम हो जाते हैं उनका डर मुझे रहता है। मुझे इसकी परवाह नहीं है कि लोग कितना विचार करते हैं और नांही मुझे इस बात की परवाह है कि उनकी विचारकोटि किधर जाती है क्योंकि जब एक बार लोग विचार करने लग पड़ेंगे तब अन्त में ठीक बात आप ही होने लग पड़ेगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार प्रवाह

एक शोक जनकमृत्यु ।

आजसारी भारत जाति मातम मना रही है। क्यों ? इसलिये कि भारतके जातीय भवन का एक स्तम्भ गिर गया। निर्दयी मृत्युने भारत के वृद्ध अनुभवी नेताका हाथ जाति के सिर से उस समय उठा लिया जब कि इस जाति की जान जोखों में थी और सनाथ जाति को अनाथ कर दिया। हाय ! लोकमान्य तिलक चल बसे, इस कुसमाचार को पढ़ सुन कर कौन सा पत्थर दिल है जो फटता नहीं ? कौनसा कठोर हृदय है जिसपर घाव नहीं लगता ? सभी देशभक्त नर्म गर्म और सत्याग्रही आज मातम मना रहे हैं ? सभी नेता खून के अश्रु बहा रहे हैं। तिलक मर तो गये किन्तु वह एक बहुमूल्य सम्पत्ति अपने देश को छोड़गये हैं, जिस सम्पत्ति की हम रक्षाकरें और उसको बढ़ाते जावें तो लोकमान्य की मृत्यु का कष्ट भी हमको लाभ पहुंचा जावेगा। वह सम्पत्ति उन गुणों का समूह है जिनके कारण लोकमान्य की मनोहर मूर्ति प्रत्येक भारतीय के हृदय में स्थापित अर्चित और पूजित थी। पहिला गुण निःस्वार्थता का था। लोकमान्य वकालत करते तो लाखों कमाते किन्तु उन्होंने देश के लिये धनाढ्य बनने की सर्व आशाओं को त्यागा। उनमें दूसरा बहुमूल्य गुण निर्भयता का था। वह तीन वार जेलमें गये किन्तु उनके मुखसे एकवार भी क्षमा व पश्चाताप का शब्द नहीं निकला और नहीं कारागार के कष्टों ने नौकरशाही की ज़ियादतियों के विरोध में उस वीरके वलको तनिक मात्र भी कम किया। वीर सेनापति नौकरशाही के साथ निरन्तर युद्ध में कई वार घायलभी हुआ किन्तु उन घावों के चिन्हों को साथ लेकर वह इस पुरातन जाति की स्वतन्त्रता के युद्ध में आखिरी दम तक डटा रहा। तीसरा गुण जिसके कारण लोकमान्य इस जाति के माथे का तिलक बना उसकी उदारता थी। महात्मा गोखले के राजनैतिक विचार लोकमान्य के विचारोंसे कई अंशों में सर्वथा विरूद्ध थे फिर भी जब गोखले की मृत्यु हुई तो श्मशान भूमि में लोकमान्य ने जो वक्तृता की उससे स्पष्ट पता लगता था कि उनका हृदय बड़ा उदार था। यह बात जन साधारण को मालूम नहीं कि जिन लेखोंके कारण लोकमान्य दो वार जेल में गये उनमें से कोई लेख भी उनकी लेखनी से न निकला था। उनकी अनुपस्थिति में वह लेख उनके सहायकों ने लिखे थे। कोई साधारण पुरुष होता तो अनुपस्थिति का अड़ंगा लगा कर अपनी चमड़ी बचा लेता किन्तु लोकमान्य महान् आत्मा थे, उन्होंने सारा उत्तरदातृत्व अपने ऊपर लेलिया और वास्तविक लेखकों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का बाल भी बांका न होने दिया। लोकमान्य के अन्दर और भी अनेक गुण थे। वह संस्कृत के प्रसिद्ध पंडित और अन्य कई विषयोंके भी उच्च कोटि के विद्वान् थे। वह बड़े अच्छे वक्ता और लेखक थे किन्तु यह गुण उनको महान् पण्डित महान् वक्ता महान् लेखक बनासक्ते थे किन्तु महापुरुषों की नामावली में उनकी गणना इन्हीं तीन गुणों के कारण है। ईश्वर करे कि हमारे अन्य कई नेताओं के अन्दर विशेषतया और तिलक की प्यारी दुलारी आर्य्य जाति के अन्दर साधारणतया इन गुणों का आगे से अधिक मात्रा में प्रवेश हो ताकि लोकमान्य का जीवन और उनकी मृत्यु पूर्णतया सफल हो। जिस जाति के अन्दर निःस्वार्थता, निर्भयता और उदारता के गुण आजावें वह बहुत देर तक आधीन नहीं रहसक्ती। स्वाधीनता का मुकुट ही उसको शोभा देता है।

गोवध में सरकार की सहायता।

मध्य प्रदेश के समाचार पत्रों के अवलोकन से पता लगा है कि वहां पर चालीस लाख रुपये की पूंजीसे कुछ अंग्रेज़ लोग एक कम्पनी खोलने वाले हैं जिससे कि चमड़े के व्यवसाय की उन्नति की जाय। बड़ी अनुग्रह करके मध्य प्रदेश की जनता को यह रियायत दी गई है कि वह एक मास के अन्दर ही अन्दर दस लाख के हिस्से खरीदलें इसके बाद फिर उन्हें और हिस्से न मिल सकेंगे। कलकत्ते की डेविन पोर्ट एन्ड कम्पनी ही इस नई कम्पनी का इन्तज़ाम करेगी॥

हमारी मध्यप्रदेश की दयालु सरकार ने भारतीय व्यवसाय बढ़ाने की नीयत से बड़ी कृपाकर इस अंग्रेजी कम्पनी को बहुत कुछ सुविधायें देनी निश्चय की है। ८४३ एकड़ भूमि नाम मात्र मूल्य पर दी है। चमड़े को कमाने के लिये ७१३५० मन मसाला जितने भी जंगल से मिल सके उतने जंगल का ठेका देदेने का वचन दे दिया है और अपने व्यय से दो लाख रुपये की लागत से कम्पनी के लिये एक बूचड़-खाना बनवाना निश्चित किया है। इसके हाते में ७७००० रुपये से एक तालाव बनेगा। हाते के अन्दर सड़कें भी सरकार ही बनवायेगी और रेलका स्टेशन भी सरकार ही बनवायेगी। सुना गया है कि २५०० के लगभग गाय और बैल रोज काटे जायंगे॥

क्यों न हो हमारी दयालु सरकार को भारतवासियों की बहुत फिक्र हैं तभी तो तमाम व्यवसायों को छोड़कर इस गोहत्या के व्यवसाय का भार अपने ऊपर लिया है। जिस भारत भूमि में दूध घी की नदियां बहती थीं वहां पर गोभक्षण के कारण अब घी छटांकों से तौल २ कर बिकने लगा है। तिस पर भी अभी हमारी दयालु सरकार को समझ न आई तब उसने एक इतना विशाल जिवहख़ाना खुलवाने का प्रबन्ध किया। शोक! शोक! क्या प्रजा मांगती है क्या राज्य देता है। कहां तो हमारे मुसलमान भाई गोवध त्यागने के प्रण कर रहे हैं कहां हमारे शासक ऐसी कारवाइयां करते हैं॥

क्या हम पूंछ सकते हैं कि बुभुक्षा पीड़ित प्रजा को दुर्बल, हीन, क्षीण, बनने से रोकने के लिये सरकार का यह कर्तव्य नहीं था कि जगह२

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पर गौओं को सुधारने, बलवान बनाने, दूध बढ़ाने के हेतु गोशालायें स्थापन करे। सरकार का यह कर्तव्य है कि पीड़ित प्रजा के दुःखों को दूर करने के लिये उपाय सोचे। कहा जा सक्ता है कि सरकार ने डेरियें खोली हैं उन में गौओं की रक्षा होती है। परन्तु हम हिन्दुस्तानियों को और हमारी पवित्र गौओं को इन से कष्ट ही होता है। इन डेरियों ने ही हमें मक्खन निकला हुया फोका दूध पिलाना आरम्भ किया है। राज कर्मचारियों के लिये तो मक्खन, क्रीम, दूध पहुंचाया जाता है। किन्तु २ बछड़े और बछड़ियां कसाइयों को जवा करने के हेतु बेंच दिये जाते हैं। बुढ्ढी गौएं तो कभी रहने ही नहीं पातीं। विचारे नन्हे २ फुदकते हुवे बछड़े अपनी मांओं से प्रसव होते ही छुटा लिये जाते हैं और उन्हें नलकियों से वही मक्खन निकला हुवा दुग्ध पान कराया जाता है। गौ माता के स्तनों का दूध भी प्रायः नलकियों द्वारा निचोड़ लिया जाता है कि कहीं रह न जाय। और जहां पर गौ माताओं को इतनी पीड़ा हो वहां दूध और घी के अकाल न हों तो क्या हो? हमारे कृषि प्रधान देश में हल चलाने, जमीन बोने इत्यादि के लिये बैल बड़े उपयोगी पशु हैं। यदि यह कहें कि जिमीदारों की आजीविका और उन्नति का एक मात्र अवलम्ब हैं तो अनुचित न होगा। आजकल लोग नये तरीकों से कृषि की उन्नति करने में लगे हुये है, जिसमें बड़ी २ मशीनों द्वारा सुगमता से काम हो सके। यदि मशीनें चलीं तो फिर बैलों की आवश्यक्ता न रहेगी। यह फालतू बैल कहां जायंगे? किंचित् इसी समस्या को हल करने के लिये यह कम्पनी चली है।! जब बैल न होंगे तो मशीन की रिवाज सुगमता से चल पड़ेगी। इस से भारत की कृषि की जहां उन्नति होगी वहां मालिकों को भी लाभ पहुंचेगा। यह न केवल एक पन्थ दो काज वरन् एक पंथ तीन काज होगा॥

हमारे सहयोगी समाचार पत्रों और जनता को सरकार की इस रीति नीति का अनुभव करते अब बहुत दिन हो गये। अब चेतना चाहिये। राज्य कर्म्म-चारियों का आश्रय अबलम्बन खोजना निष्फल सुतरां बड़ी भारी भूल है। हमें स्वयं गोपालन का भार अपने कन्धों पर उठाना चाहिये। प्रत्येक भारतीय को योग्य है कि तन मन धन से इस का विरोध करे। आन्दोलन किया जाय कि पशु पालक लोग कम्पनी के हाथ पशु न बेचें। जो बेंचने लावें उनको अधिक धन लेकर गो शालायें लेलें वा धनी मानी जन लेलें। एक बात हम भारतीयों को अत्यन्त विचारणीय सुतरां व्यवहरणीय है। प्रत्येक भारतीय नर नारि का कर्तव्य है कि वह चमड़े के प्रयोग का यथा साध्य बायकाट करे। प्राचीन काल में हमारे यहां मृत पशुओं का चमड़ा जूते बनाने के हेतु वर्ता जाता था और जूते भी केवल गृहस्थी लोग तथा कोई खास आवश्यक्ता से चमड़ा व्यवहार किया जाता था। ब्रह्मचारी, बानप्रस्थी और सन्यासी को जूते का प्रयोग करने की व्यवस्था नहीं थी। इस प्रकार जन संख्या का चतुर्थ भाग ही जूते का व्यवहार करता था सो भी आवश्यक समय पर। कहां उसी भारत भूमि के पाश्चात्य सभ्यता के उपासक युवक युवतियों तनिक २ से बच्चों का दैनिक कार्य्य बिना चमड़े चलता ही नहीं। हमारे बूट जूते के जोड़े पर जोड़े चले आते हैं। अच्छा होता यदि जूते के प्रयोग तक ही रुक जाते किन्तु हमने की नकल करते २ हैन्डबैग, मनीबैग, सूट केस, बिस्तरबन्द, पेटियां, गैलिस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यहां तक कि हाथ की घड़ियां भी चमड़े में लगा लगा २ कर पहिरना आरम्भ कर दिया। और पता नहीं कितनी सैकड़ों वस्तुऐं चमड़े की प्रयोग करने लगे। परिणाम क्या हुवा? यही कि चमड़ा प्रयोग करने से काला साहब बनने की नकल तो हो गई किन्तु पशुओं की कमी से कृषी को हानि पहुंची। पेट भूखा रहने लगा और शरीर शिथिल हो गये, सहस्रों रोग दौड़ने लगे और भारतीय जाति संसार से उखड़ने लगी। नवीन सभ्यता जैसे २ पैर फैलाती गई जीवहत्या से हमें घृणा हटती गई और दिल खोल कर हमने खाना पहिरना सब कुछ जीवहत्या के आश्रय कर लिया। नौबत यहां तक पहुंची कि गोहत्या के प्रति भी शिथिलता हो गई। प्रथम धीरे २ अन्य जाति ही गौ चर्म मांस व्यवहार करते थे अब भारत के दुर्दिन में नवीन सभ्यता में रंगे हुवे भारतीय युवक युवतियां भी बेधड़क प्रयोग करने लगे। बस फिर क्या था गो वध करने वालों का साहस बढ़ा और उन्होंने यह नवीन व्यवसाय उसी धारा में और आरम्भ कर दिया। इसके प्रतिरोध का केवल एक मात्र यही उपाय है कि हम केवल मुख या लेखनी का आश्रय ही न लें वरन् अपने प्रतिदिन के व्यवहार में चमड़ के प्रयोग को रोकें और गौ पालन में तन मन धन से सहायता दें। ऐसी दुर्भीक कम्पनियों में हिस्से लेना तो दूर रहा यथा शक्ति उनको तोड़ने भेदने का प्रयत्न करें॥

जातीय शिक्षा क्या है?

हम भारतीयों में जातीय शिक्षा के विषय में कई भ्रमात्मक विचार फैले हुये हैं और यद्यपि सभी का लक्ष्य एक है किन्तु उस लक्ष्य को पहुंचने के मार्ग भिन्न २ बन रहे हैं। अनेक शिक्षा सम्बन्धी संस्थायें स्थापित हो रही हैं जिन में जातीयता के नाम पर लाखों का दान और सहस्रों की शक्ति व्यय हो रही है। पर क्या यह संस्थायें जातीयता की उत्पादक बन रही हैं? यह एक प्रश्न है जो जनता के सन्मुख उपस्थित होता है और जिस को सिद्ध करना सहज काम नहीं है। अभी थोड़ा ही चिर हुआ हमारे परम माननीय डाक्टर रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने विलायत में भारतीय विद्यार्थियों के संघ के सन्मुख भारतीय शिक्षा के केन्द्र पर बड़ा प्रभावशाली, मर्मस्पृक् और ओजस्वी व्याख्यान दिया है जिस में उन्होंने भारतीय शिक्षा के पुनरुद्धार पर अपने गूढ़ विचार प्रगट किये हैं। उन का कथन है कि विश्वविद्यालय का अभिप्राय यह नहीं है कि केम्ब्रिज या आक्सफोर्ड की भांति एक स्थान विशेष में शिक्षणालय स्थापित होजावें प्रत्युत विश्वविद्यालय स्वयं जाति के जीवन में उनके रीति रिवाज विचार और भाव, कला साहित्य और संगीत, समाचार और व्यवहार में स्थित होने चाहिये। उन्होंने विदेशीय भाषा द्वारा वर्त्तमान शिक्षा प्रचार के ढंग को गर्हित ठहराया है क्योंकि उस से भारतीयों के जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वह विचार शून्य होते जाते हैं और उन में मौलिकता का अभाव हो रहा है॥

हम डाक्टर टैगोर के साथ सर्वथा सहमत हैं कि जातीय शिक्षा वही है जो मनुष्य के रीति रिवाज, विचार, भाव साहित्य संगीतकला, आचार और विचार' में अपना प्रभाव दिखलावे। केवल जातीय नाम होने से विदेशी वेष, भूषा धारी भाषा भाषी, विदेशी रहन सहन आचार विचार वाले, विदेशीय भावों से पूरित मस्तिष्क वाले, विदेश पर गौरव करने वाले जन उत्पन्न करके कोई संस्था जातीय नहीं हो सकती। क्या हमारे जातीय शिक्षा प्रचार-रत

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देश भक्त डाक्टर टैगोर के कथन पर एकबार विचार दृष्टि डालकर उस से लाभ उठाने का यत्न करेंगे ? क्या हिन्दु यूनिवर्सिटी के संस्थापक पूजनीय मालवीय जी इस पर विचार करेंगे—क्या कहीं वह एक स्वर्णीय अवसर खो तो नहीं रहे ?

आंगल पार्लियामेण्ट और डायर।

"ज्योति" का गत अंक छपने के पश्चात डायरके अत्याचारों के विषय में इंग्लैण्ड की पार्लियामेण्ट के दोनों विभागों में वाद विवाद हुआ। लोकसभा (House of Commons) में यद्यपि सर एडवर्ड कार्सन और हत्याकाण्ड के दूसरे समर्थकों ने पूरा बल लगाया तथापि भारतीय सचिव मिस्टर मांटेगू, युद्ध सचिव मिस्टर चार्चिल विरोधी दल के नेता मिस्टर ऐस्किथ और अर्थ सचिव मिस्टर चौनरला की वक्तृतायें अपना प्रभाव डाल गईं और बहुपक्ष से लोकसभा ने डायर की करतूत को अनुचित ठहराया और मन्त्रिदलने जो दण्ड उसे दीदिया था, अर्थात् बृटिश साम्राज्य की सेवा से पृथक्ता, उसको स्वीकार किया। यद्यपि यह दण्ड ऐसे घोर अपराध के लिए कोई दण्ड नहीं है और भारत का असन्तोष इस दण्ड से दूर नहीं हुआ तथापि लोकसभा ने न्यून से न्यून भारतवासियों की आंखें पोंछनेका प्रयत्न तो किया किन्तु लार्ड सभा ने तो अनर्थ ही कर दिया है। उससभा ने यह प्रस्ताव पास कर दिया है कि डायर के साथ न्याय नहीं हुआ इसका प्रभाव भारतवर्ष पर बहुत बुरा हुआ है। साधारण लोग यह कहते हुए सुनाई देते हैं कि इंग्लैंड से भारत को न्याय की कोई आशा नहीं रखनी चाहिये क्योंकि लार्ड फिनले जैसे राजनियम विशारद भी निरपराधियों के हत्याकाण्ड करने वाले के पोषक हैं। लार्ड लोग सदा से ही इंग्लैण्ड के अपयश को बढ़ाने वाले रहे हैं। उन्नति के विरोध में ही लार्ड सभा सदा अपनी शक्ति व्यय करती रही है। स्वयम् इंग्लैण्ड में ही स्वतन्त्रता का विरोध यह लोग सदा करते रहे हैं। इङ्गलैण्ड की प्रजा को जब इन लोगों ने बहुत तङ्ग किया तो इनके अधिकार भी जाते रहे। अब तो इनको अधिकार कोई नहीं। इनके इस प्रस्ताव से न तो डायर को नौकरी मिलजावेगी और नहीं मन्त्रिदल की स्थिति पर कोई प्रभाव पड़ेगा, किन्तु एक अधिकार लार्ड महाशयों को अब भी प्राप्त है और वह यह कि यह लोग बृटिश राज्य के यश को बट्टा लगा सक्ते हैं।

कांग्रेस के विशेष अधिवेशन के प्रधान

पंजाब के शिक्षित वर्ग ने इस समाचार पर प्रसन्नता प्रगट की है कि जातीय महासभा के इतिहास में पहिलीवार एक पंजाबी को कांग्रेस का प्रधान नियत किया गया है। प्रान्तों की कमेटियों ने बहुसम्मति से श्रीयुत् लाला लाजपतराय को कांग्रेस के विशेष अधिवेशन का जो कलकत्ते में सितम्बर के प्रथम सप्ताह में होनेवाला है, प्रधान चुना है। इस अधिवेशन में पंजाब और खिलाफ़त के विषयों पर ही विषेश रूप से विचार होगा। लाला लाजपतराय अपने उच्च-चरित्र आत्मत्याग देशभक्ति निस्वार्थतायुक्त देशसेवा के कारण इस उच्चतम मान्य के जो किसी भी भारतवासी को प्राप्त होसक्ता है हर प्रकार से योग्य हैं। यद्यपि विद्वत्ता में वह मोतीलाल नेहरू, मालवी अम्बिका चरण मोजूमदार-रोमेशचन्द्रदत्त, गोखले, लालमोहन घोष, दादाभाई, फीरोज़शाह मेहता का तो कहना ही क्या है—का भी मुकाबिला नहीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करसक्ते किन्तु देशभक्ति, वक्तृता-शक्ति, और त्याग में वह किसी से भी पीछे नहीं हैं। वह भारतीय जातिके मस्तिष्क के नहीं तो हृदय के प्रतिनिधि अवश्य हैं। उनका हृदय अपने भाइयों के दुख से दुःखी होता है और भारत की परतन्त्रता उनको अखरती है। उनके नेत्र अश्रु बहाने, उनकी भुजाएं सेवा करने के लिए हर समय तय्यार रहती हैं। कहीं अकाल पड़े लाला जी सहायता के लिए उद्यत रहते हैं। दुखिया दिल की दर्दनाक कहानी सुनने के लिए लाला जी के कान हर समय खुले रहते हैं इसलिए ऐसे अधिवेशन के प्रधान पदको जिसमें पंजाबके दर्द का और मुसलमानों की दारुण पीड़ा की ही चर्चा होनी है लाला जी ही सुशोभित करसक्ते हैं। हम आशा रखते हैं कि लाला जी के नेतृत्व में कलकत्ते का अधिवेशन बड़ी सफलता से होगा और दुखियों को कोई आश्वासन दायक सन्देशा सुना सकेगा।

वेद प्रचार।

आर्य्य समाज की वेदी से वेद प्रचार के विषय में बड़े २ व्याख्यान होते रहते हैं और वेद प्रचार की आवश्यक्ता बतला कर वेद प्रचार फंड के लिये बड़ी लम्बी चौड़ी अपीलें होती रहती हैं। इतना ही नहीं समाचार पत्रों में भी प्रायः इस विषय पर आन्दोलन होता रहता है किन्तु जब हम आर्य्य समाज के कार्य्य पर गहरी दृष्टि डालते हैं तो पता लगता है कि वेद प्रचार की अवस्था क्या है? आर्य्यसमाज के कतिपय अर्धशिक्षित तथा कुशिक्षित उपदेशक भजन मण्डलियों के साथ गावों २ में फिर कर अनपढ़ मूर्ख जनता को धर्मोपदेश देते फिरते हैं जिनसे जनता में उल्टे सीधे विचार फैलते जा रहे हैं। किन्तु वैदिक धर्म का गौरव उनको ज्ञात होता है या नहीं यह कहना मुशकिल है। परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि यही उपदेशक लोग जब उच्च शिक्षा प्राप्त प्रोफ़ेसरों, कालिज के विद्यार्थियों तथा अन्य मतावलम्बी पण्डित दार्शनिकों के सन्मुख वैदिक धर्म का प्रचार करते २ ऐसी २ बातें करने लगते हैं जो कि विज्ञान और दार्शनिक दृष्टि से देखने से बिल्कुल हास्यप्रद मालूम होती हैं तो वैदिक धर्म के लिये उन लोगों के हृदयों में श्रद्धा व भक्ति तथा प्रेम पैदा करने की अपेक्षा उल्टे उनमें और अनिच्छा उत्पन्न करके अपने उद्देश्य से उल्टा प्रभाव डालते हैं।

यह दशा बड़ी शोचनीय है और इस के हटाने का शीघ्र ही प्रयत्न होना चाहिये। इसके हटाने के लिये दो बातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यक्ता है (१) तो उत्तम उपदेशक तैय्यार किये जावें (२) अच्छे २ विद्वान् शास्त्रज्ञ लोगों को ही उपदेशक बनाया जावे जिस से उपदेशक बनना कोई तुच्छ वा हल्कापन का कार्य्य न समझा जाकर बड़े महत्त्व का कार्य्य बनजावे। अच्छे उत्तम उपदेशक तय्यार करना गुरुकुलों से सम्भव तो है किन्तु देश की आवश्यक्तानुसार सभाओं को उचित है कि इसके लिये एक विशेष संस्था बनाकर भी सुविज्ञ लोगों को आर्य्य सिद्धान्त की शिक्षा देकर उन के जीवन को जाति और धर्म की सेवा के योग्य बना कर उन्हें उस कार्य्य में लगावें और विद्वानों को भी उचित है कि वह इस कार्य्य के लिये अपने आप को उपस्थित करें। जैसे ईसाई लोगों में बड़े २ विद्वान बड़ी २ उपाधि लेकर भी प्रचार के कार्य्य में अपने जीवन को लगाते हैं और उन के विशप इत्यादि का पेशा ही यह बन जाता है, उन्हें धर्मका कार्य्य और जीविका-उपार्जन दोनों पृथक् २ नहीं करने पड़ते वह

CC-0. Gurukul Kangri Vishwavidyalaya Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२४ घंटे धर्म के कार्य्य के हेतु उपस्थित रहते हैं इसी प्रकार आर्य्य समाजियों को भी उचित है कि वह वेद प्रचार के लिये ऐसे उपदेशक तैय्यार करावें जिन के जीवन का उद्देश्य ही धर्म प्रचार हो, जो बड़े विद्वान हों, जो प्राचीन शास्त्रों और वेदों के अध्ययन से ऋषियों की शिक्षा के साथ आधुनिक विज्ञान और आधुनिक शास्त्रज्ञों के विचार से भी पूर्णतया परिचित हों ताकि उन के उपदेश से शिक्षित वर्ग भी लाभ उठा सके। वेद प्रचार विभाग के अधिष्ठाताओं से हमारी यह विनीत प्रार्थना है कि गुड़ियों के खेल के दिन अब गये अब वह ज़माना है जब कि योग्यता और कार्य्यक्षमता ही स्थिर रह सक्ती है अतः वेद प्रचार को इस प्रकार संगठन करें कि वह बहुत से अनपढ़ अशिक्षित उपदेशक नाम धारी अयोग्य पुरूषों की उदर पूर्ति का साधन न बन कर वास्तव में अपने नाम को चरितार्थ करने वाला बने चाहे थोड़े उपदेशक रक्खे किन्तु विद्वान् धार्मिक वृत्ति वालों को रखें तो इससे उपदेशक विभाग की प्रतिष्ठा बढ़ कर उस में उत्तम विद्वान् भाग ले सकेंगे और दूसरे लाभ भी बहुत होंगे।

केवल वचनों पर न जावो किन्तु पिछले जीवन पर भी दृष्टि डालो।

नई कौंसलों के जाने के इच्छुकों की संख्या खूब बढ़ रही है, चारों तरफ से लोग अपनी योग्यता अयोग्यता, त्याग अथवा स्वार्थ का सोच विचार किये विना ही अपने आपको प्रतिनिधि बनने के हेतु उपस्थित कर रहे हैं। यही नहीं अपने चुनाव के लिये अपने प्रतिद्वन्दियों (rivals) के ऊपर संकेतों द्वारा तथा खुले तौर से आक्षेप करने से नहीं चूकते मानों अपने गुण प्रकाश करने के लिये दूसरों के दोषों को प्रकाशित करना या बढ़ाना आवश्यकीय गुण है। दैनिक प्रताप में इस सम्बन्ध में कुछ ही काल हुआ बड़ा अच्छा लेख निकल चुका है जिस से बहुत से पाठकों को इस विषय का ज्ञान ठीक २ हो गया होगा। हम भी केवल इतना ही कहना चाहते हैं कि जो उम्मेदवार हैं उन्हें अपना मुंह अपनी देश-सेवारूपी शीशे में देख कर पुनः जनता के सन्मुख प्रस्तुत होना चाहिये। जैसा कि हम अपने एक नोट में बता चुके हैं जो लोग प्रतिनिधि बन कर जावें उन्हें एक विशेष प्रतिज्ञा करके जाना मिलना चाहिये और वह प्रतिज्ञा भोगी और लोभी मनुष्य पालन नहीं कर सक्ते। उसके लिये बड़े त्याग सहनशीलता और निर्भयता की आवश्यक्ता है। कायरलोगों का काम नहीं है। जहां तक हमारी दृष्टि पड़ी है उमेदवारों में उन वकीलों, तथा अन्य लोगों के नाम हैं जिन्होंने या तो अब तक देश सेवा में आगे पैर ही नहीं रक्खा या भागतों के आगे और मारतों में पीछे रहे हैं। ऐसे लोगों की पूर्व जीवनी ही उन का भविष्य कार्य्य क्षमता का फैसला कर सक्ती है। पंजाब में मार्शल-ला के दिनों में जो वकील बारिस्टर अफसरों के डर से पीड़ित देश-वासियों की रक्षा के हेतु खड़े न हुये थे अथवा जिन्होंने अपने बन्धुओं के दुःख को अपने धन कमाने का साधन समझ कर बड़ी फीसें लेकर वकालत की थी अथवा पंजाब के पुराने राजनैतिक कष्टों में दुखियों के साथ कायरता दिखलाई थी ऐसे लोगों से क्या आशा है कि भविष्य में पुनः ऐसी ही अवस्थायें उत्पन्न होने पर अब वे अपने उत्तरदातृत्व का ध्यान रखते हुये पंजाब की मान, मर्य्यादा, को जीवित रखने का यत्न करेंगे। इस लिये हम बड़े अनुरोध से जनता को यही कहेंगे कि वोट देने का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

काम बड़े उत्तरदातृत्व का है, देश की अवस्था बड़ी नाजुक है अतः अपने उत्तरदातृत्व को समझ कर और देश की अवस्था को सामने रख कर केवल धर्मात्मा त्यागी, वीर निर्भय देश-भक्तों को ही अपने प्रतिनिधि चुनें ॥

———

पंजाब में आर्य समाजियों में शिथिलता ।

पंजाब में आर्य्य समाज का कार्य्य कुछ दिनों से शिथिल हो रहा है। कारण यह कि यहां पर धार्मिक जीवन का बल तो है नहीं केवल उत्तेजना द्वारा कार्य्य हो रहा था और जब उत्तेजना कम हो जाये तो शिथिलता होनी स्वाभाविक ही है। संयुक्त प्रान्त और पंजाब दोनों की समाजों में कछुवे और ख़रगोश वाला हाल है। पंजाब वाले अपनी कृतकार्य्यता पर इतने मुग्ध हुये हैं कि समझ बैठे हैं कि वह आगे रहेंगे ही किन्तु पता लगा है कि कछुवे और खरगोश की कहानी की भांति उन की भी कथा है। कई अंश में संयुक्त प्रान्त वाले धीरे २ चलते २ आगे चले गये हैं और पंजाब पीछे पड़गया है। संयुक्तप्रान्त की प्रतिनिधिसभा में कहा जाता है कि २०० से अधिकसंख्या है अतः उन का कोरम होना कठिन है तथापि वहां के लोग इतने ध्यान से अपने कार्य्य में दत्त चित्त हुये हैं कि उन का अपना कोरम पूरे से कहीं ज्यादः हो जाता है और कई कार्य्य हैं जो उन्होंने कर भी डाले हैं परन्तु पंजाब प्रतिनिधि सोचती ही रहगई है–यथा स्त्रियों को प्रतिनिधि सभाओं में निर्वाचित करने का प्रश्न जो कई वर्षों से प्रस्तावित था संयुक्त प्रान्त में स्त्रियां निर्वाचित हो भी चुकी हैं परन्तु खेद है कि पंजाब प्रतिनिधि का अब तक कोरम ही नहीं हुआ कि इस प्रश्न पर विचार किया जाता। इसके अतिरिक्त अन्य कई प्रश्न पड़े हुये हैं जो कोरम न होने के कारण निश्चित नहीं होते। जिन में से मुख्य प्रश्न गुरुकुल के प्रबन्ध के लिये पृथक् सभा का होना है ॥

आर्य्य समाजियों की यह शिथिलता उस समय जब कि जातीय जीवन में जागृति सर्वत्र दृष्टि गोचर हो रही है बड़ी हानि का कारण है। किन्तु इस शिथिलता का मूल क्या है? जहां तक हमारा अनुभव है वह यह है कि आर्य्य समाज में धार्मिकता की न्यूनता है। एक धार्मिक संस्था जिसका धर्म आधार हो धर्म के बिना ठहरे तो कैसे ठहरे ?। समाज में जो मंत्री प्रधान तथा सभासद होते हैं उनके जीवन में कोई धर्म का चिन्ह नहीं न स्वाध्याय करते हैं न सदाचार पर चलते हैं हवन सन्ध्या किसी ने करली किसी ने न की। समाज की ओर से इस पर कुछ बल नहीं दिया जाता। मुसल्मानों के मुल्ला, ईसाइयों के पादरी, हिन्दुओं के पुजारी इन के जीवन का कार्य्य उनके धर्म का कार्य्य ही हैं किन्तु आर्य्य समाज में यह बात नहीं है। कोई कैसा भी मनुष्य हो वकील हो, बाबू हो, व्यापारी हो, राय बहादुर हो समाज की प्रधानी उसके बायें हाथ का खेल है इतना ही नहीं बल्कि समाज की वेदी पर से उपदेश का कार्य्य भी वह लोग करते रहते हैं जिन्होंने कभी वेदका स्वाध्याय नहीं किया और न कभी वैदिक धर्म के मूलतत्त्वों पर विचार किया और आचरण करना तो बात ही दूसरी है। जिस संस्था में इतनी धार्मिक जीवन की कमी है वह चिरस्थायी कैसे रहेगी॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ॐ

वनिता विनोद

स्त्री उपयोगी स्त्रियों द्वारालिखित लेखों का संग्रह।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१—समाचार।	२५२	३—सुस्थिर प्रतिष्ठा—(लेखिका श्रीमती लक्ष्मी देवी जौहरी	२५५
२—कला कौशल्य—(ले० श्रीमती ओ३म्वती देवी)	२५३		

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समाचार ।

बारीक कपड़े के कारण वधू विवाह मण्डप से निकाल दी गई ।

(Daily mail) डेली मेल समाचार पत्र कहता है कि न्युयार्क अमेरिका में एक पादरी ने इटली की एक अति धनवान रमणी को विवाह मण्डप से इसलिए निकाल दिया कि उसका शादी वाला गवन बड़ा बारीक था। इसका कारण यह था कि अभी थोड़ा ही काल हुए पादरियों ने यह नियम बना लिया है कि गिरजे में कोई स्त्री बारीक अथवा नग्नप्राय वस्त्रों में न आने पावे। कहा जाता है कि विवाह का सब सामान ठीक था। वर विवाह मण्डप में आचुका था। बाजा बज रहा था। और जैसे ही वधू अपने पिता के साथ मण्डप में आई उसके बारीक कपड़ों पर रोशनी पड़ते ही अंग दिखलाई देने लगे। पादरी साहब घबरा गये। उन्होंने चपरासी से रोशनी बुझाने को कहा कि लोगों की दृष्टि उस वधू पर न पड़ सके। और अन्धेरे में उसे गिरजे से बाहर भिजवा कर दूसरे कपड़े पहना कर फिर देर से शादी कराई ।

एक और गिरजे के बाहर यह नोटिस लगाई गई है कि "वह स्त्रियां जो खुले गले खुली छाती वाले कपड़े पहिने हों अथवा वह जो आधी बांह के या टिहुनी तक जिनकी नंगी हों अथवा और किसी प्रकार से काफी ढके हुए शरीर जिनके न हों वह इस गिरजे में नहीं आसक्तीं। अंग दिखलाने वाले कपड़े पहिने हुए कोई स्त्री यहां नहीं आने पावेंगी"। विदेश में इस प्रकार स्त्रियों के कपड़ों के विषय में राय है परन्तु भारतीय स्त्रियां उन तरीकों को ग्रहण कर रही हैं। क्या खेद की बात है !

चर्खे का मधुर गान ।

महात्मा गांधी अपने पत्र यंग-इण्डिया में लिखते हैं कि जब तक चर्खे का प्रचार गांव २ और शहर २ में सब नर और नारियों में न होगा तब तक भारत का उद्धार न होगा । उनका कहना है कि पण्डित मालवीय जी तालुकेदारों तथा रानी महारानियों में भी चर्खा कातने की प्रथा डालने का उद्योग कर रहे हैं। पंजाब में श्रीमती सरलादेवी चौधरानी, धर्मपत्नी रतन-चन्द्र और बुग्गा चौधरी तथा रतनदेवी (जिन्हों ने जलयां वाले बाग में सारी रात मुर्दों के बीच में अपने पति के मृत शरीर को गोद में रक्खे बिताई थी) इस चर्खे के प्रचार का बड़ा उद्योग कर रही हैं और बम्बई में भी कई महिलायें इस के प्रचार में दत्तचित्त हैं और सेवा सदन इत्यादि शिक्षा केन्द्रों में इसे प्रचलित कर रही हैं। महात्मा गांधी जी का कथन है कि चर्खे का मधुर स्वर हारमोनियम, सितार तथा अन्य बाजों से अधिक मधुर है। और अगर चर्खे का प्रचार घर २ हो जाय तो हमारी बहुत कुछ आर्थिक तथा आत्मिक उन्नति शीघ्र हो सक्ती है। हम आशा करते हैं कि हमारी बहिनें इस ओर ध्यान देंगी और जहां २ उनका प्रभाव पहुंचता होगा वहां चर्खे कातने का कार्य्य फैलाकर इस जातीय कार्य्य में भाग लेंगी। स्त्रियों के पास इन कार्य्यों के लिए समय बहुत रहता है और यह है भी उन्हीं का कार्य्य। अतः यदि सब स्त्रियें इस ओर ध्यान दें तो बहुत शीघ्र इसका प्रचार होसक्ता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

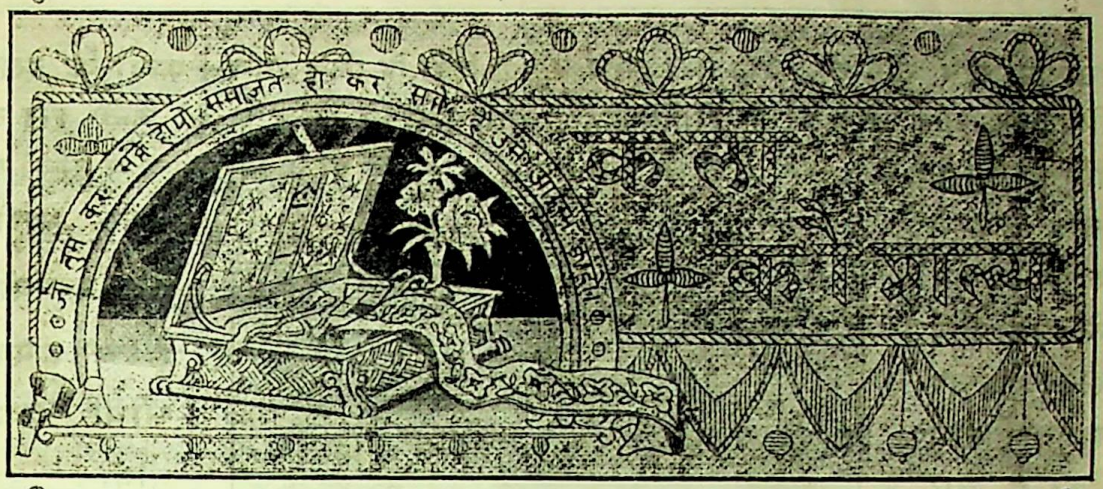

मोज़े

आवश्यक्ता :—लगभग एक पाव गाढ़ा ख़ाकी रंग व मूंगिया मोटा ऊन और थोड़ासा आसमानी रंग का ऊन, ४ सलाइयां १२ नं० की अन्दाज से बहुत पतली न हों बहुत मोटी न हों ॥

आरम्भ में ७६ फ़न्दे सलाइयों पर बनाओ (चौविस २ दो सलाइयों पर २८ तीसरी पर)॥

संकेत :—सीधा फन्दा, उल्टा फ़न्दा, चढ़ाना, उतारना, बढ़ाना घटाना, (ज्योति का पहिला नं० देखो) "सी," "उ," "फ़" ॥

४ पंक्तियां २ सी, २ ऊ, की बीनो गाढ़े रंग से। आसमानी ऊन जोड़ो। और एक पंक्ती सीधे फ़न्दे की बुनो, फिर एक पंक्ती उल्टे फ़न्दों की,। गाढ़े ऊन से १ सीधे, फ़न्दों की, १ उल्टे फ़न्दों की फिर एक सीधी एक उल्टी आसमानी से ॥

२ पंक्ती सीधी बीनो गाढ़े से, २ फ़न्दे बढ़ाओ पिछली वार।

पहला नमूना चारों ओर, १ नीला सी., ५ ख़ाकी सी. फ़न्दे।

दूसरा नमूना चारों ओर, २ नीले सी, * ३ ख़ाकी., ३ नीले और।

इस * चिन्ह से बराबर बीनते जाओ अंत में एक नीला होना चाहिये।

तीसरा घेरा—१ ख़ाकी, २ नीले चारों ओर।

चौथा घेरा—३ ख़ाकी * २ नीले, ४ ख़ाकी, इस * चिन्ह से बनाते जाओ अन्त में एक ख़ाकी हो।

पांचवां घेरा—२ ख़ाकी * २ नीले ४ ख़ाकी, इस * चिन्ह से दोहराओ अन्त में एक ख़ाकी।

छठा घेरा—१ ख़ाकी, २ नीले चारों ओर।

७वां घेरा—२ नीले * ३ ख़ाकी, ३ नीले, इस * से दोहराओ।

८वां घेरा—१ नीला, २ ख़ाकी चारों ओर।

९वां १०वां घेरा—ख़ाकी से सीधे फ़न्दे बीनो।

११वां घेरा—नीले से सीधे बीनो।

१२वां ,, —नीले से उल्टे फ़न्दे बीनो।

१३वां घेरा—ख़ाकी से सीधा बीनो।

१४वां ,, —ख़ाकी से उल्टा बीनो।

१५वां ,, —नीले से सीधा बीनो।

१६वां ,, —नीले से उल्टा बीनो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नीला ऊन अब तोड़ दो, एक घेरा सीधे फ़न्दे बीनो इसके बाद चार घेर २ सी., २ ऊ., के बीनो। अगले घेर में ३ पर बढ़ाओ फिर उसके बाद वाले में ३ घर बढ़ाओ जिसमें कुल फ़न्दे ८४ हो जायं (७६+२+३+३ अन्दर का बीना हुवा हिस्सा बाहर करलो आर फिर टांग के वास्ते बीनो।

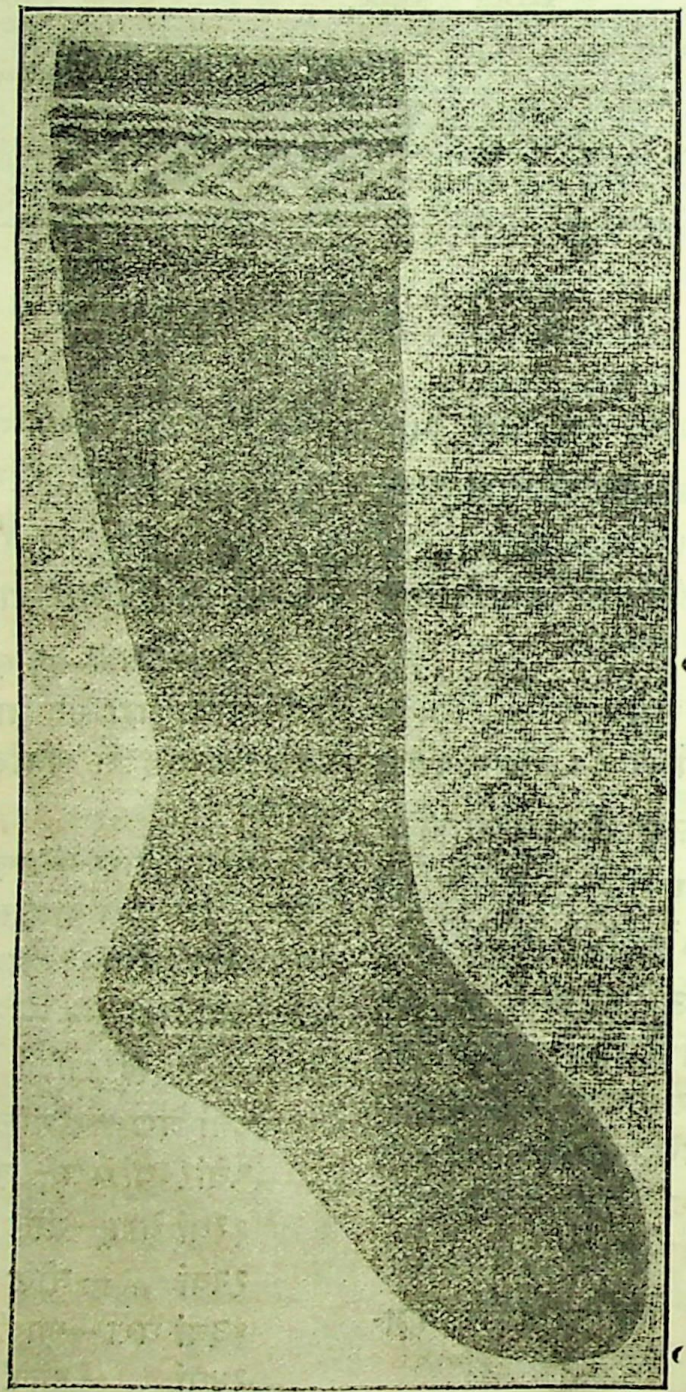

टांग :—* ९ सी., १ ऊ., १ सी., १ ऊ., इसी प्रकार * चिन्ह से लेकर साढ़े चार इंच तक बिनते जाओ। इस के बाद पहली सलाई पर के ११वें और १२वें फ़न्दे को इकट्ठे बीनकर घटाओ। हर दो घेरे बीन ाओ बराबर लकीर र फिर घटाओ उसी जगह पर तीसरे घेरे में २ उल्टे फ़न्दों को इकट्ठे बीन कर।

इसी प्रकार प्रत्येक तीसरे घेरे में उसी जगह पर घटाते जाओ जब तक ६२ फ़न्दे रह जांय इसके बाद बीनते जाओ जब तक कि मोज़ा आरम्भ से लेकर ८ इन्च लम्बा न हो जाय॥

एड़ी के लिये भाग—फ़न्दों के इस प्रकार भाग करो कि जिस से ३१ फ़न्दे इस तरह रहें कि धारी को दो लकीरें बीच में हों। यह इसी प्रकार धारीदार २ इन्च तक बीनो फिर $\frac{3}{4}$ इंचतक एक लकीर सीधी एक उल्टी बीनो।

एड़ी का घुमाव:—१८ सीधे, १ साद उतारलो, १ सीधा फ़. बीनो फिर सादे को सीधे फ़न्दे पर से नंघा दो, १ सीधा फन्दा लौटो। ७ उल्टे, २ उल्टे इकट्ठा, १ उल्टा, लौटा। ८ सी, १ सादा, १ सी, सादे को सीधे पर से नंघा दो, १ सी.। इसी प्रकार बनाते जाओ, हर एक पंक्ती में १ सीधा अधिक बीनते हुवे जब तक कि सारे दोनों ओर के फन्दे ख़तम न हो जांय, १ सीधी पंक्ती बीनो।

नोट:—पंजे के हिस्से के फन्दे एक ओर पड़े रहेंगे। ३ सलाइयों से एड़ी बिनती रहेगी। फिर यह हो जाने पर इकट्ठा कार्य्य आरम्भ होगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१६ फ़न्दे एड़ी के वग़ल में से उठाओ, पंजे ाली सामने की सलाई पहिले की भांति धारी ार बीनो। १६ फ़न्दे एड़ी की दूसरी तरफ़ से ठाओ।

एक घेरा सामने की सलाई के फ़न्दे धारी ार रखेत हुवे बीनो। दूसरे घेरे में पहली लाई की समाप्ती पर जब तीन फ़न्दे रह जायं व एक सादा, १ सी., सादे को सीधे पर नंधा ो, १ सी., बीच की सलाई उसी प्रकार धारी ार। तीसरी सलाई बीनने के आरम्भ में सी, २ सी इकट्ठा बीन कर घटाओ. वाक़ी ारी सीधी। इस प्रकार प्रत्येक तीसरे घेरे में स्टाओ (अथवा एक पंक्ती बिना घटाये बिनो सरी घटा कर) जब तक ६१ फ़न्दे रह जांय न्नेते जाओ।

बीनते जाओ जब तक कि पैर $८\frac{3}{4}$ इन्च म्बा न होजाय। फिर पंजे के वास्ते घटाओ ामने पंजे वाली सुई पर ३१ फ़न्दे होने चाहियें ी अब सीधे २ बिना धारी के बीने जायंगे और इधर उधर की सलाइयों पर पन्द्रह २ फ़न्दे होने चाहिये।

पहिली सलाइ—सीधी बीनो जब तक तीन फ़न्दे रह जायं फिर १ सादा, १ सीधे., सीधे पर सादा नंधाओ, १ सीधा।

दूसरी सलाई—१ सी., २ सी. इकट्ठे बीन कर घटाओ, सीधे बीनो जब तक कि तीन फ़न्दे रह जायं, १ सादा., १ सी., सी., पर सादा नंधा दो, १ सी.।

तीसरी सिलाई— १ सी., २ सी इकट्ठे। सीधी सीधी।

एक घेरा सीधा।

इसी प्रकार प्रत्येक तीसरी पंक्ति में घटाओ जब तक कुल १८ फ़न्दे रह जांय फिर पहिली सलाई के फ़न्दे तीसरी पर उतार लो। दूसरी और तीसरी सलाई को एक में मिलाकर बराबर कर एक २ फ़न्दा दोनों में से एक साथ लेकर बीन कर 'उतार दो' (ज्योति के पहिले अंक में बताये हुये ५वें संकेत के अनुसार)

सुस्थिर प्रतिष्ठा।

लेखिका—श्रीमती लक्ष्मीदेवी जौहरी

आजकल प्रायः सभी बहिनों के जी में यह उमंग उठती है नहीं नहीं किन्तु समस्त भूमण्डल के जीवधारियों में उस परमपिता परमात्मा ने यह इच्छा प्रगट की है कि वे अपने को सुस्थिर तिष्ठा के पात्र बनावें अर्थात् उनका नाम सृष्टि अन्त तक इस संसार में प्रसिद्ध रहे।

हमारी भोली बहिनें सुस्थिर प्रतिष्ठा को प्राप्त करने की इच्छा तो करती हैं परन्तु यह तनिक भी नहीं सोचतीं कि इस गूढ़ शब्द का अर्थ क्या है ? अथवा यह क्यों कर प्राप्त हो सक्ती है।

मनुष्य के धन, धर्म्म, बल विद्या और प्रशंसनीय सत्कर्म्मादि सुयशरूपी स्मारकों को प्रतिष्ठा कहते हैं और जो प्रतिष्ठा निश्चल अथवा अटल रहती है उसी का नाम सुस्थिर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रतिष्ठा है। आज कल बहुधा देखा गया है कि हमारी भोली बहिनें धनाढ्य होने तथा घमंड करने ही में अपने को प्रतिष्ठित समझती हैं। यदि किसी को बहुमूल्य आभूषणों से सुसज्जित देखती हैं तो कहती हैं वह कितना प्रतिष्ठित पुरुष है जिसकी स्त्रियाँ बहुमूल्य रत्नों से आच्छादित है। मेरी समझ में ऐसी प्रतिष्ठा प्रतिष्ठा नहीं किन्तु अप्रतिष्ठा है। किन्तु कूप तड़ाग सरितादि के सेतु को बनवाना पृथ्वी को उपबन बाग वाटिकादि पुष्प वृक्षादिकों से शोभित करना–धर्म्मशाला, अनाथालय, देवालय, विद्यालय और चिकित्सालय आदि को प्रतिष्ठा प्राप्ति का सेतु कह सकते हैं–परन्तु स्मरण रखना चाहिये कि उपरोक्त प्रतिष्ठा अथवा इसी प्रकार की अन्य प्रतिष्ठाओं में से एक को भी सुस्थिर प्रतिष्ठा कदापि नहीं कह सक्ते, क्योंकि द्रव्य की प्रतिष्ठा द्रव्य ही तक है। जब द्रव्य निकल जाता है प्रतिष्ठा भी गमन कर जाती है। इसी प्रकार कूप तड़ागादि की प्रतिष्ठा का त्याग कूप तड़ागादि के साथ ही और उपवन, अनाथालयादि की प्रतिष्ठा का त्याग उपवन अनाथालय के साथ ही हो जाता है। अर्थात् जिस समय तक प्रतिष्ठा का कारण संसार में विद्यमान रहता है उसी समय तक वह प्रतिष्ठा भी स्थिर रहती है। सारांश यह कि इन कारणों में से किसी को भी स्थिरता प्राप्त नहीं हो सक्ती इसलिये इन में प्राप्त हुई प्रतिष्ठा कदापि सुस्थिर नहीं कही जासक्ती॥

सम्भव है कि हमारी बहिनों को इस बात की उत्कंठा हो रही हो कि सुस्थिर प्रतिष्ठा क्या है? अथवा हम उसे क्योंकर प्राप्त कर सक्ती हैं? इस कारण अब विलम्ब न कर शीघ्र ही बताना उचित समझती हूं। वेदादि सच्छास्त्रों में सुस्थिर प्रतिष्ठा का प्राप्त होना केवल इन्द्रिय निग्रह पर ही निर्धारित किया है अर्थात् जो सत्याचार में प्रवृत्त और जितेन्द्रिय हैं वही सुस्थिर प्रतिष्ठा की पात्री हैं, वही सद्विद्याओं की पूर्ण ज्ञाता हो ऐश्वर्य्यादि युक्त होती हुई धर्म्मानुष्ठान, परोपकार और सत्योपदेशादि में तत्पर रह कर विद्या दानादि से अपने तथा अन्य सांसारिक जनों के दुःख दूर करती हैं और स्वप्रतिष्ठा को विष के तुल्य समझती हुई सर्वप्राणियों से निर्वैर रह कर, अपनी आत्मा और परमात्मा में स्थिर हुये उस विज्ञानमय के योग और विचार में मग्न रहती हैं। प्रिय पाठिकाओ! वही महात्मा बहिनें अन्य मलिनता के नाशक असुर अर्थात् मूर्खों की अविद्या का छेदन कर उस सुस्थिर प्रतिष्ठा को प्राप्त कर सक्ती हैं जो महा प्रलय तक सूर्य्य चन्द्र की न्यांई रात्रिदिन प्रकाशित रहती हैं जैसा कि आपको आगे चल कर पूर्वकाल की देवियों के उदाहरण से प्रत्यक्ष विदित होगा।

पूर्वकाल की देवियों में से सीता लीलावती विद्योत्तमा, पद्मावती मन्दालसा इत्यादि अनेक देवियां अपने उदाहरण हमारे अनुकरणार्थ छोड़गई हैं। प्रिय बहिनो! सीतादेवी के नाम से हमारी सभी बहिनें परिचित हैं। उनको यह चिरस्थाई प्रतिष्ठा केवल इन्द्रियनिग्रह से ही प्राप्त हुई। अनेक कष्ट पड़ने पर भी वह साहस नहीं छोड़तीं। अपनी इन्द्रियों को चंचल नहीं होने देतीं किन्तु किस धीरता के साथ रावण को अपनी इन्द्रियनिग्रह का परिचय देती हैं। लीलावती इन्होंने बात की बात में इन्द्रियनिग्रह के ही कारण अपने ही नाम की गणित पुस्तक रचडाली जिससे बड़े २ बुद्धिमानों की बुद्धि चकरा जाती है। विद्योत्तमा इन्होंने भी बात की बात में सच्छास्त्रों का पूराज्ञान प्राप्त कर शंकराचार्य्य जैसे सुप्रसिद्ध पण्डितरत्न को हरा दिया। क्या आजकल भी हम

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

बहिनें इतना साहस करसक्ती हैं कि पुरुषों से शास्त्रार्थ अथवा साधारण वार्तालाप भी करसकें ? कदापि नहीं। इसका कारण फिर भी मुझे कहना पड़ता है कि इन्द्रियनिग्रह का भूल जाना है। पद्मावती का नाम भी हमारी बहिनों ने अवश्य ही सुना होगा। जिस समय मुँह से इनके पति को बादशाह लेजाता है किस बुद्धिमत्ता से वह शत्रु का सामना कर उनको शत्रुदल से मुक्त करती हैं। प्रिय बहिनो! इतने बड़े शत्रु का सामना तो दूर है यदि एक कीटक भी निकल आवे—जैसे सर्प बिच्छू आदि तो घबराकर कोसों भागने लगती हैं। वर्तमान देवियों की इस शोचनीय दशा का कारण भी इन्द्रियनिग्रह का भूलजाना है। क्या हम ऐसी चंचलता की चेरी हो पूर्वविख्यात देवियों के अनुकरण का साहस करसक्ती हैं ? कदापि नहीं। प्रिय पठिकाओ ? सम्भव है आप सोचती हों कि इन देवियों में कोई विशेष शक्ति हो अथवा वर्तमान स्त्री जाति से दीर्घकाय होती हों ऐसा मनन करना व्यर्थ है। भग्निगणो! वह हम से अधिक कोमलाङ्गी तथा सुकुमारी थीं क्योंकि वह कलिकाल के कष्टों से मुक्त थीं। फिर वह क्यों इतनी विदुषी तथा सुस्थिर प्रतिष्ठा की पात्र हो गईं ? केवल इन्द्रियनिग्रह तथा स्वार्थत्याग से वह कोई भी कार्य्य स्वप्रतिष्ठा के लिये नहीं किन्तु धर्म्मपरायणता से करती थीं। हमारी जैसी चंचल इन्द्रियवाली तथा स्वप्रतिष्ठा की दासी न थीं। पूर्व उदाहरणों से भलीभांति आपकी समझमें आगया होगा कि इन्द्रियनिग्रह ही सुस्थिर प्रतिष्ठा के प्राप्त करने का आदि तथा मुख्य कारण है। क्योंकि इस सुप्रतिष्ठा का जन्म केवल विद्या विज्ञानादि के गर्भाशय से है, और सत्यविद्या विज्ञानादि का प्राप्त होना इन्द्रियनिग्रह पर निर्भर है। इससे निश्चय हुआ कि सुस्थिर प्रतिष्ठा की प्राप्ति के लिए इन्द्रियनिग्रह करना परमावश्यक है।

इस कारण सुस्थिर प्रतिष्ठा की इच्छुकों को उचित है कि सर्व प्रकार की प्रतिष्ठाओं से अनिच्छुक हो सदैव इन्द्रिय निग्रह में तत्पर रहकर सत्विद्या विज्ञानादि की प्राप्ति का प्रयत्न अपनी सामर्थ्यभर करती रहें। अर्थात् सच्छास्त्राज्ञानुकूल यम नियम और प्राणायामादि के सेवनद्वारा सर्वेन्द्रियों पर शासनकर्ता मन का संयम भली प्रकार करें, क्योंकि संयम ही से सर्वेन्द्रियों का जीतना सम्भव है, इसलिये मन की इच्छानुसार किसी इन्द्रिय को उसका विषय रूपी भक्षण मत दो, क्योंकि जिस विषय को भोगने की मनकी इच्छा होती है, उस विषय के भोगने से मन की शान्ति कदापि नहीं हो सक्ती, किन्तु उसकी इच्छा का प्रबल होना ही सम्भव है। आपने देखा होगा जब दूध उबलने लगता है तो पानी के छींटे देकर उसे शान्त करते हैं। यदि ऐसा न किया जाय तो दूध उबलता चलाजावे। ठीक उसी प्रकार हमारी मानसिक विषय वासनायें हैं। जितनी बढ़ाओ विस्तृत होती चली जाती हैं और अन्त में परिणाम सिवाय हानि के कुछ नहीं। पानी के छींटों की भांति यदि विषय के दोषों का वर्णन उनको सुनाया जाय तो सम्भव है मन सर्वेन्द्रियों सहित शान्त दशा को प्राप्त हो और फिर कोई भी इन्द्रिय किंचित् मात्र भी किसी प्रकार के विषयभोग की इच्छा न करती हुई हमारी तत्त्व ज्ञान बुद्धि को कभी नष्ट भ्रष्ट न होने देंगी। इस प्रकार हम पूर्ववर्णित सर्व सत्कर्म्म करती हुई सबसत्यविद्या तथा विज्ञानादि की प्राप्ति कर उस सुस्थिर प्रतिष्ठा की अधिकारिणी बन सकती हैं॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

॥ उत्तेजना ॥

भारत सपूतो प्यारे ! कुछ नाम कर दिखाओ ।
करते बड़े तुम्हारे, वह काम कर दिखाओ ॥
संतान देश की सब बल-हीन हो रही हैं ।
उन में विवेक विद्या पुरुषार्थ भर दिखाओ ॥
शूद्रादि जाति सारी सन्मार्ग से विमुख हैं ।
तुम हाथ थाम उनको विद्या का घर दिखाओ ॥
वंचित विवेक से हों उनमें विवेक भर दो ।
सुकुलीनपन का उनको झूंठा न डर दिखाओ ॥
विज्ञान बल का सागर भर दो न देर होवे ।
व्यापार, शिल्प कृषि की बहती नदी दिखाओ ॥
यह शूद्र हैं, अधम हैं ऐसा विवाद छोड़ो ।
जननी के पुत्र हैं सब "केशर" वह दिन दिखाओ ॥

केशर कुंवरि देवी, झालरापाटन, राजपूताना ॥

पाश्चात्य स्त्रियों का अनोखा अधिकार ।

विलायत का 'टाइम्स' समाचार पत्र कहता है कि एक विलायती महिला मिस हेलन वटलर जहाज़ पर चढ़ी कनाडा जा रही थीं वहां पर कैप्टेन टी, एच किचन के साथ उन की शादी होने वाली थी । रास्ते में एक कैप्टन मिलर महाशय से उनका परिचय होगया । मेल जोल इतना बढ़ा कि कनाडा पहुँच कर उन्हें यह निश्चय करना मुश्किल हुआ कि वह विवाहार्थ किस को चुनें । अन्त में कैप्टन किचन ने उस को कह दिया कि तुम्हारी मर्ज़ी जिस को चुनने की हो चुन लो, मैं तो तुम्हें सुखी देखना चाहता हूं । देवी जी ने झट कैप्टन मिलर को ही वरण किया और कैप्टन किचन के अनुरोध से उनसे मार्ग व्यय लेकर विलायत के लिये चल पड़ीं, क्योंकि कनाडा सरकार ने उन्हें कैप्टन मिलर के साथ विवाह करने की आज्ञा न दी । धिक्कार है ऐसे अधिकारों पर जो कि किसी मूल सिद्धान्त के अनुकूल न होकर केवल भोग तृष्णा के बहावमें आकर लिये जायं ।

गोद खिलौने ।

नन्हे बालक का कान बह रहा है शीघ्र खबर लो नहीं तो एक दिन निपट बहिरा हो जायगा। देखो बल्लभ ऐण्ड को० पीलीभीत का जग-द्विख्यात करामात तैल निपट बहिरेपन, कम सुनने, शब्द होने, जख्म, खुजली, परदोंकी कमजोरी, नजला, भारीपन, कान बहने व कान के सर्व रोगों पर वह रामबाण अनुभवी हुक्मी दवा है। यह वह महोषधि है जिसके गुण ग्राही स्वय बहुत अंगरेज बने हुए हैं। मान्यवर सिविलमिलट्री गजट, सीलोन टाइम्स इत्यादि जैसे समाचार पत्रों से जिसकी बड़ाई जानी जा सकती है। हर घर में हर समय रखने योग्य है। मू० फी शीशी १।) Rs. 1-4-0। हिमाद्री रसायन, स्त्रियों के प्रदर बांझपन, समय पर मासिक धर्म का न होना, निर्बलता व गर्भ के समय में अनेकानेक कष्टों से बचाती है। पुरुषों के प्रति बलवान बनाती है प्रमेह और नाताकती व शिर की कमजोरी व बालकों की दुर्बलता, मन्दाग्नि, नजला, मृगी (अपसमार) की हुक्मी दवा है मू० फी बक्स २।) बादशाही मंजन दांतों को सुदृढ़ बनाने वाला मू० फी शीशी ।) आना। पता साफ लिखिये। मिलने का पता-बल्लभ ऐण्ड को पीलीभीत, यू.पी.।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

Regd. No. L. 1240.

वर्ष १] भाद्रपद १९७७—सितम्बर १९२०. [खण्ड १, संख्या ५

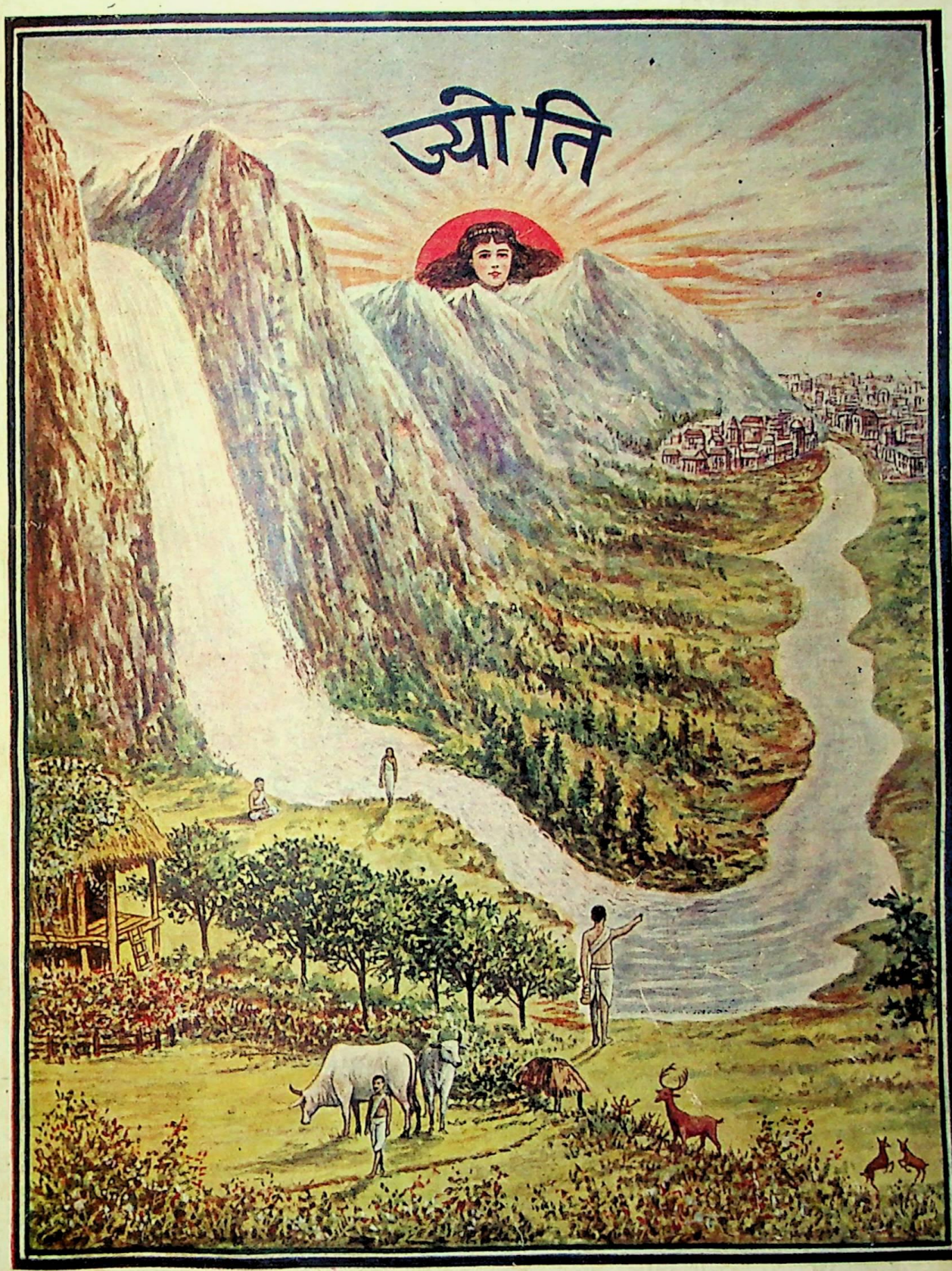

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय-सूची ।

विषय पृष्ठ

१—कृषक-महेश-वन्दना [कविता]-लेखक श्रीयुत् पंडित पारसनाथ त्रिपाठी २५९

२—ज्ञान गंगा-लेखक श्रीयुत् प्रोफैसर सिद्धेश्वर वर्मा यम. ए. २६०

३—क्या निघण्टु यास्क कृत है ?-लेखक श्रीयुत् रघुनाथदत्त बन्धु २६३

४—रुक्मिणीहरण नाटक-अनुवादक श्रीयुत् मेधाव्रत जगजीवन २६६

५—पाश्चात्य विद्वानों में पुनर्जन्म पर विचार-लेखक श्रीयुत् प्रो० नन्दकिशोर विद्यालंकार २७२

६—मातृ-भाषा की अपील [कविता]-लेखक श्रीयुत् डाक्टर रलाराम २८०

७—जगद्गुरु श्री १०८ शङ्कराचार्य का गुरुकुल कांगड़ी में शुभागमन-लेखक श्रीयुत् पण्डित कन्हैयालाल शास्त्री २८१

८—काल महिमा [कविता]-ले० पं० गया प्रसाद "श्रीहरि" २८५

९—पृथ्वी नाटक-लेखक श्रीयुत् प्रिंसिपल कुंवरसेन यम. ए. ला कालेज लाहौर २८६

१०—दुर्याधन[कविता]-लेखक श्रीयुत् मणिराम गुप्त २९१

११—गृहिणी का साम्राज्य-लेखक श्रीयुत् प्रो० इन्द्र विद्या-वाचस्पति २९१

१२—हमारी मंजूषा २९४

१३—कुसुमोद्यान— २९७

१-वेद में सुई का वर्णन २९७

२-पाश्चात्य शिक्षा का भारत पर प्रभाव २९९

३-काग़ज़ के सिक्के का आविष्कार ३०१

४-संसार की सब से अद्भुत खान ३०१

५-राजा तथा रानी का आतिथ्य ३०२

६-ऋतु परिवर्तन द्वारा निमोनिया और इन्फ्लुयन्ज़ा का इलाज ३०४

७-तम्बाकू पीने के दुष्परिणाम ३०५

१४—विचार प्रवाह— ३०६

१-असहयोग तथा प्राचीन आर्य्य धर्म ३०६

विषय पृष्ठ

२-लार्ड सिंह के विहार और उड़ीसा के प्रथम गवर्नर बनने पर मिस्टर पाल की चिड़चिड़ाहट ३०७

३-मिश्र देश स्वतन्त्र हो गया ३०९

४-अर्द्ध सरकारी बूचड़खाना समझो बन्द हो गया ३१०

५-कांग्रेस के प्रधान की वक्तृता ३१०

६-खेरी के डिप्टी कमिश्नर का वध ३११

७-जापान और कोरिया ३१२

८-विशेष कांग्रेस ३१२

९-महात्मा गांधी जी का प्रस्ताव ३१३

१५—वनिता विनोद— ३१५

१-रुदन-लेखिका तिलककी भक्त ३१६

२-कला कौशल्य-ले० श्रीमती ओ३म् वती देवी ३१७

३-सुधार का मूल पारिवारिक जीवन-ले० कुमारी मनोकामना देवी ३२१

ज्योति के नियम

ग्राहकों के लिये ।

१. ज्योति प्रति अंग्रेजी मास की १५ को ग्राहकों के पास पहुंचा करेगी ।

२. डाक व्यय सहित भारत के लिये इस का मूल्य ४॥) और छे मास के लिये २॥) वी. पी. का व्यय ≡) अलग है प्रति अंक का मूल्य ॥) है । भारत से बाहर विदेश के इसका वार्षिक मूल्य ६) है । मूल्य मैनेजर ज्योति लाहौर के नाम आने चाहिये ।

३. पुरानी प्रतियां जो मिलसकेंगी उनका मूल्य प्रति संख्या ॥) से कम नहीं होगा ।

४. पते के परिवर्त्तन की सूचना पत्र के निकल से १५ दिन पूर्व मैनेजर को मिलनी चाहिये ।

५. यदि कोई संख्या किसी ग्राहक को न पहुंचे तो पहिले अपने डाक घर से पूछना चाहिये। यदि पता न चले तो डाक घर से जो उत्तर आवे उसे प्रबन्ध कर्त्ता के पास भेजदेना चाहिये । परन्तु यह सूचना अगले अंक के निकलने से १५ दिन पूर्व तक मिलनी चाहिये अन्यथा दूसरी प्रति विना मूल्य नहीं दी जायगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

॥ ओ३म् ॥

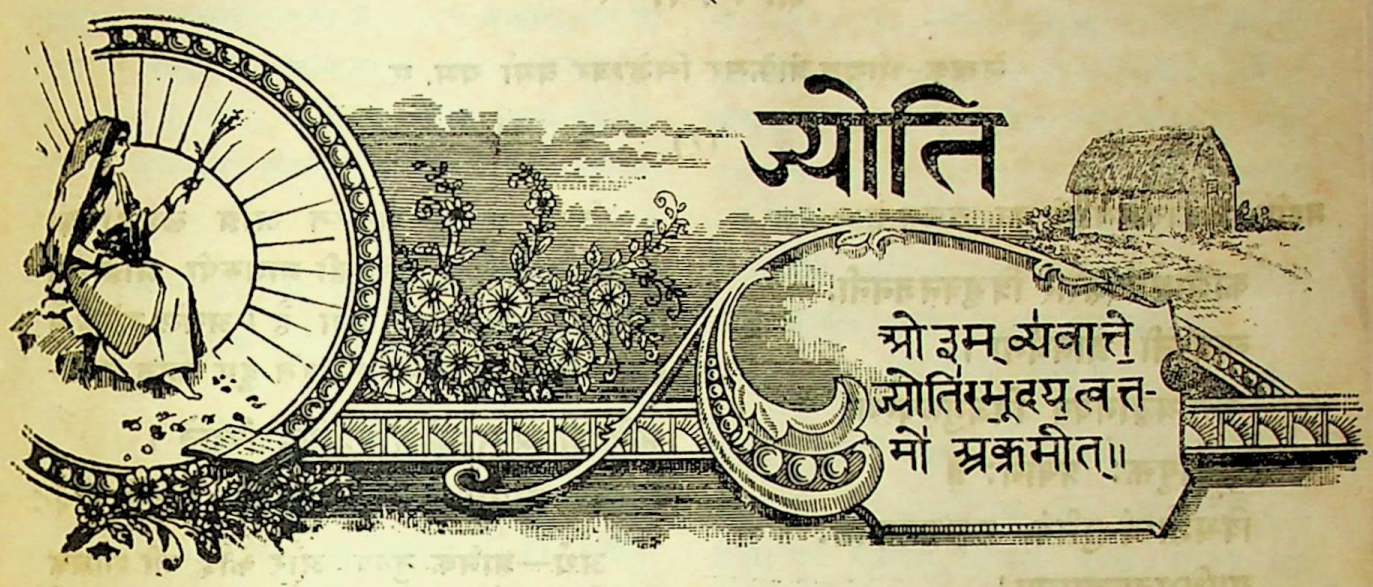

वर्ष १ | भाद्रपद १९७७—सितम्बर १९२० | संख्या ५

कृषक-महेश-वन्दना।

लेखक—श्रीयुत् पण्डित पारसनाथ त्रिपाठी।

(१)

भारत-निधि मथ दिया विदेशी-शासन-गिरि ने,
उसके सेवक-'देव'-भवन अपनाया श्री ने।
काल कूट सी ले दरिद्रता-विपद जगत की-
रक्षा की है, कृषक-ईश! तू ने सब मत की।
अब भारत-श्मशान में कर निवास ला रांख-रज,
शोभित कृषक महेश हैं, वाह! त्रिशूल सुशस्त्र-सज।

(२)

पार्वती हैं साथ अपर्णा होकर, देखो,
नर-मुण्डों की माल पड़ी है कैसी, देखो!
जीवन-यात्रा समय बैल बस, एक सहायक,
सुत हैं विकृत-बदन[1], उदर भी है दुख दायक।
मन-मोदक हैं खा रहे, मोर-मूस-आरुढ़ हैं।
मोटर, व्योम, विमान से अलग हुवे ये मूढ़ हैं॥

(३)

तो भी दांत निकाल भूत-बैताल खड़े हैं,
आशु-तोष, सब पेट-पालने हेत अड़े हैं।
झिड़की सहते, जली-कटी भी सुन लेते हैं,
औढर ढरन किसान-ईश, सबको देते हैं।
हे हर! प्रणत विपन्न की, शीघ्र आपदा से हरो।
अब भारत-श्मशान को सत्वर मङ्गलमय करो॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१ दैविक, दैहिक, भौतिक। २ षडानन।

ज्ञानगंगा ।

लेखक-श्रीयुत् प्रोफेसर सिद्धेश्वर वर्मा यम. ए

(१)

महर्षि शंकराचार्य्य जी का वचन है:—

काशीक्षेत्रं शरीरं त्रिभुवनजननी,
व्यापिनी ज्ञानगंगा ।
भक्तिश्रद्धागयेयं निजगुरुचरण,
ध्यानयुक्तः प्रयागः ॥
विश्वेशोऽयं तुरीयं, सकलजनमनः
साक्षिभूतान्तरात्मा ।
सर्वं देहे मदीये यदि वसति,
पुनस्तीर्थमन्यत् किमस्ति ॥

अर्थ—यह शरीर ही मानों काशी का क्षेत्र है। इस में ज्ञान ही मानों गंगा है जो सर्वत्र व्यापक और तीनों लोकों की माता है। भक्ति और श्रद्धा ही मानों गया तीर्थ हैं। अपने गुरु के चरणों में ध्यान ही मानों प्रयाग है। तुरीय अवस्था ही जिस में आत्मा का साक्षात्कार होता है मानों विश्वेश्वर का मंदिर है। यदि यह सब निर्दिष्ट गुण मेरे देह में ही वर्तमान हों तो इनसे दूसरा और तीर्थ क्या है?

इस श्लोक से ज्ञान का शोधकत्व गुण प्रतीत होता है। ज्ञान और उसके सहचारी गुणों के होने पर मानों सब तीर्थ आजाते हैं, क्योंकि प्रायः लोग तीर्थों का पापशोधकत्व ही विशेष गुण मानते हैं। भगवान् कृष्णदेव जी ने भी गीता में कहा है कि:—

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात् कुरुतेऽर्जुन ।
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा ४,३७

जिस प्रकार प्रदीप्त अग्नि लकड़ी को भस्म कर देती है, वैसे ही ज्ञानरूपी अग्नि सब कर्मों को भस्म कर देती है। अगले श्लोक में इसी तात्पर्य का समर्थन करते हुए कहते हैं कि—

नहि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।
तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विंदति ४,३८

अर्थ—ज्ञानके तुल्य और कोई भी शोधक पदार्थ इस संसार में नहीं है। वह ज्ञान मनुष्य को तब प्राप्त होता है जब मनुष्य योग द्वारा सिद्धि को उपलब्ध करके अपने आत्मा में ही उसे पाता है।

ज्ञान के दो पक्ष ।

ऊपर के श्लोकों में ज्ञान का साधनपक्ष दिखाया गया है। ज्ञान विषय के दो पक्ष हैं—एक साधनपक्ष और दूसरा साध्य पक्ष। इस में सन्देह नहीं कि प्राच्य और पाश्चात्य विद्वानों में से अधिकांश ने ज्ञान को साध्य ही स्वीकार किया है। ज्ञान का साध्यत्व ही सर्व शास्त्रों का तात्पर्य है। ज्ञान वह पराकाष्ठा है जिससे आगे कोई और प्राप्य अवस्था नहीं है। इसी ज्ञान में ही वेद और वेदान्त का मुख्य तात्पर्य है। यही ज्ञान—यथार्थ ज्ञान—आनन्दादि प्रापणीय अवस्थाओं का लक्षण मात्र है, क्योंकि यद्यपि न्यायादिक शास्त्रों में "ज्ञानान्मुक्तिः"—"ज्ञान से मुक्ति होती है" यह विषय आपात दृष्टि से ऐसा प्रतीत होता है मानों ज्ञान पहले होता है और मुक्ति पीछे होती है, परन्तु यदि सूक्ष्मदृष्टि से देखा जावे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri

तो प्रतीत होगा कि ज्ञान और मुक्ति कोई भिन्न कालिक अवस्थाएं नहीं हैं। यदि यथार्थ आत्म ज्ञान हो गया, तो शोकमोक्ष और आत्मतृप्ति स्वयमेव हो गई, क्योंकि मोक्ष नाम ही है स्वरूप बोध का। इसमें उपनिषद् का भी प्रमाण है, यथाः—

"यस्मिंस्तु सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोकएकत्वमनुपश्यतः" ॥
(ईशोपनिषद)

अर्थः—उस अवस्था में जब कि यथार्थ जानने वाले के लिये सब भूत प्राणी आत्मा ही हो गये, और जब वह एकता को ही देखने लगा तब क्या शोक और क्या मोह वहां रह सकते हैं? कदापि नहीं! अर्थात् ज्ञान की अवस्था ही शोकमोक्ष का दूसरा नाम है। इसी अवस्था में ही प्रापणीय प्राप्त हो जाता है। यही अवस्था मुख्य अर्थ में परम पुरुषार्थ है। यही ज्ञान प्रधान अर्थ में साध्य है।

हमने ज्ञान की महिमा को ऊपर दोनों पक्षों से दर्शाने का प्रयत्न किया है। साधन रूप से ज्ञान एक अद्वितीय शोधक शक्ति है, साध्यरूप से ज्ञान परम पुरुषार्थ है। अतः ज्ञान से एक पन्थ दो काज सिद्ध होते हैं। ज्ञान प्राप्ति से जहां मनुष्य-जीवन के उद्देशों का उद्देश प्राप्त हो जाता है, वहां गौण रूप से वासना मलों की भी निवृत्ति और अतएव मन की शुद्धि हो जाती है।

ज्ञान प्रधान है अथवा कर्म?

अनेक शताब्दियों से यह शास्त्रार्थ इस देश में और अनेक अन्य विचार शील जातियों में चला आया है कि ज्ञान, कर्म, और भक्ति में से कौन प्रधान है? जीवन का आदर्श क्या है? क्या स्वतन्त्ररूप से ज्ञान, कर्म और भक्ति में से कोई एक विकल्प से मनुष्य का आदर्श हो सकता है? अथवा इन तीनों का समुच्चय ही मोक्षजनक है? अथवा क्या इन में से कोई एक प्रधान है और दूसरे उसके आवश्यक अंग हैं? यदि कोई एक इन में से प्रधान है तो वह ज्ञान है, अथवा कर्म है अथवा भक्ति है? हमारे शास्त्रों का अधिकांश में इस विषय में क्या तात्पर्य है?

जीवन का आदर्श।

इस लेख का उद्देश है कि इन सब प्रश्नों की यथार्थ समालोचना करके सिद्धान्त को प्रकाशित करें। हम इन सब प्रश्नों पर क्रमशः विचार करेंगे। परन्तु यह सब प्रश्न तब ही हल हो सकते हैं जब हम सबसे पहले यह विचार करें कि जीवन का आदर्श ही क्या है? क्या मनुष्य जीवन का आदर्श विषय सुखों का उपभोग करना है? क्या मनुष्य जीवन का आदर्श संसार में यश और कीर्त्ति को उपलब्ध करना है? क्या मनुष्य जीवन का आदर्श एक कल के पुर्जे के समान अपने कर्त्तव्य को पालन करके चला जाना है? क्या मनुष्य जीवन का आदर्श इस संसार रूपी बन्धन को वैराग्य रूपी धिक्कार से तिरस्कृत करके छोड़ जाना है? क्या मनुष्य जीवन का आदर्श सब सांसारिक सम्बन्धों को पददलित और भस्मीभूत करना है? जब तक साध्य का निश्चय न हो साधनों का निश्चय नहीं हो सकता।

(क) इस में कोई सन्देह नहीं कि समय २ पर चार्वाक आदि लोकायतक और प्रकृतिवादी शिक्षकों ने विषय सुख को ही मनुष्य जीवन का आदर्श माना है। "यावज्जीवेत् सुखं जीवेत् ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्"—"जब तक जीवे सुख से जीवे, और कर्ज़ा उठा करके भी घी पीवे"—यह इन आचार्यों का गुरु-मन्त्र है। इस गुरु-मन्त्र

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के आधार पर एक बड़ी भारी सच्चाई है। सुख के लिये अभिलाषा और प्रयत्न मनुष्य का स्वाभाविक गुण है। आनन्द और सुख की अभिलाषा किस प्राणी को नहीं? सच तो यह है कि मनुष्य का जीवन सुख है। उपनिषद् में भी कहा है "आनन्दाद् हि एव इमानि भूतानि जायन्ते, आनन्देन जीवन्ति" आनन्द से सब प्राणिमात्र उत्पन्न होते हैं, और आनन्द से ही जीते हैं। यदि सुख न हो तो प्राणी शीघ्र ही आत्महत्या र लेवें। इसके विपरीत मनुष्य कैसा ही रोगों पीड़ित हो, दरिद्रता से कर्शित हो, सम्बन्धि क्लेशों से सताया हुआ हो, आपत्तियों से दबाया हुआ हो, चिन्ता और शोक से मुरझाया हुआ हो, तो भी यदि अपनी मृत्यु का नाम सुने तो भयभीत हो कर कांपने लगता है। इस जीवन अभिलाषा का सार यही है, कि जीवनमात्र में सुख है॥

यदि जीवन का आधार ही सुख है, तो जीवन की सब चेष्टाओं का लक्ष्य सुख की प्राप्ति है। कोई प्रवृत्ति भी प्रयोजन के बिना नहीं हो सकती। और कोई प्रयोजन भी ऐसा नहीं हो सकता, जिसके आधार पर सुख की अभिलाषा न हो। इसी सिद्धान्त के आश्रय पर चार्वाक आदि शिक्षकों ने उपदेश दिया है कि सुख की अभिलाषाओं को दबाना, स्वाभाविक आनन्द वासनाओं को कुचलना ठीक नहीं। यह प्रकृति और मनुष्य-स्वभाव के विरुद्ध है कि मनुष्य सुख वासनाओं को दबावे। उपनिषद् में भी कहा है,—"आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रियं भवति" अपनी कामना की तृप्ति के लिये ही तो सब संसार के व्यक्ति और वस्तुएं मीठी लगती हैं। जिस प्रकार कि चिकित्सक लोग आठ प्रकार के वेगों, अश्रु, थूक, मूत्र आदि को दबाना अपथ्य मानते हैं वैसे ही स्वाभाविक सुख की वासनाओं का दबाना भी मानसिक अपथ्य है, जिस से अनेक मानसिक विकारों के उत्पन्न होने की सम्भावना है। इस लिये इन भोगवादियों के मत में दमनवादी सर्वथा भ्रम में हैं। सब प्रकार की तपस्या, शम, दम, तितिक्षा, उपरति आदि साधन-सम्पत्ति न केवल अस्वाभाविक और निष्फल है, अपितु अनेक आधियों और मानसिक रोगों का उत्पत्तिजनक है। इस लिये मनुष्य को "खाओ, पियो, और खुश रहो" इसी मूलमंत्र को ही कार्य्यरूप से जीवन में घटाना चाहिये। आज कल के यूरोपीय भोगवादी और प्रकृतिवादी भी इसी सार सिद्धान्त को आधार मान कर वृद्धि और उन्नति का अर्थ भोग सामग्री को बढ़ाना मानते हैं। सच तो यह है कि इस भोगवाद की लहर ऐसी बलवान् हो गई है कि बड़े २ विचारशील सज्जन भी कहने लग पड़े हैं "अब ज्ञान ध्यान के दिन गये, अब तो ज़माना प्राकृतिक वृद्धि का है। जो इस प्राकृतिक वृद्धि की लहर के विरुद्ध चलेगा, कुचला जावेगा"॥

इस में सन्देह नहीं कि इन अवस्थाओं में जीवन के सच्चे आदर्श का दृढ़ बोध करना और कराना बहुत ही कठिन है। जब हमारा मनुष्य स्वभाव ही सुख प्राप्ति हर समय चाहता है और उस के लिये प्रयत्न करता रहता है, और जब यह ज़माना ही ऐसा बलवान है कि यह हमको सुखभोग की सामग्री एकत्र कराने के लिये बाध्य करता है, यहां तक कि यदि हमारे पास भोग-सामग्री कम हो, तो हम इस संसार में अपने आप को नीच और आतुर समझने लग जाते हैं। किसी के पास अधिक सामान देख कर ईर्षा-ग्राह से ग्रसित हो जाते हैं। सांसारिक सम्बन्धों अथवा आयु के बढ़ने पर सुख सामग्री घट जाने से चिन्ता के समुद्र में डूब जाते हैं।

CC-0.Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri

इस भोगवाद ने गृहस्थियों के हृदयों पर तो विशेष आक्रमण कर लिया है। प्रायः यह आज कल देखा जाता है कि एक गृहपति चाहे स्वयम् कैसा ही संयमी और दृढ़ क्यों न हो, जब उस के बच्चे और उस के अन्य नज़दीकी सम्बन्धी सुन्दर वस्त्रादि मांगते हैं, तो उस का हृदय पिघल जाता है, और वह कहता है, इस गृहस्थ जीवन का फल ही क्या हुआ, यदि अपनी स्त्री और अपनी सन्तान को सुख न दिया ? चाहे कैसा ही उपाय करना पड़ जावे, चाहे वह उपाय धर्म के अनुकूल हो अथवा धर्म के विरुद्ध हो, अपने परिवार के लिये सुखभोग की सामग्री को उपार्जित करना और बढ़ाना वह अपना मुख्य कर्तव्य समझने लग जाता है ॥

इसी लिये इस भोगवाद के आदर्श के साथ युद्ध करना और उस को नष्ट भ्रष्ट करना बड़े शूरवीर का कार्य्य है। जैसा कि जर्मनी के प्रसिद्ध डाक्टर दायसन ने कहा है—"इस संसार में आज कल विरले ही मनुष्य हैं जो इस ज़माने के विरुद्ध चल सकते हैं, जिसका जीवन ही भोगवाद है ॥

जीवन के आदर्श को ऊपर विचार करते हुए हमने भोगवाद को उस के दृढ़ और बलवान रूप में प्रकट करने का प्रयत्न किया है। अगले लेख में हम भोगवाद की त्रुटियों पर पूर्णता से विचार करेंगे ॥

क्या निघण्टु यास्क कृत है ?

लेखक—श्रीयुत् रघुनाथदत्त बन्धुः।

निरुक्तालोचन में सत्यव्रतजी ने "साक्षात्कृतधर्माण ऋषयो बभूवुः, तेऽवरेभ्योऽसाक्षात्कृतधर्मभ्य उपदेशेन मन्त्रान् सम्प्रादुः। उपदेशाय ग्लायन्तोऽवरे बिल्मग्रहणायेमं ग्रन्थं समाम्नासिषुर्वेदं च वेदाङ्गानि च ॥१—२०—२।

यह निरुक्त का प्रमाण देकर सिद्ध किया है कि यहां "इमं ग्रन्थं" से निघण्टु का ही ग्रहण होता है, निरुक्त का नहीं। क्योंकि निरुक्त जो अभी तक बन रहा था, उस के लिये भूतकाल का प्रयोग कोई कैसे कर सकता था ? इसलिये निघण्टु का कर्त्ता निरुक्तकार यास्क नहीं हो सकता, किन्तु उससे भिन्न कोई और ही है। यह लिख कर उन्होंने महाभारत के—

वृषोहि भगवान् धर्मः ख्यातो लोकेषु भारत !
निघण्टुकपदाख्याने विद्धि मां वृष मुत्तमम् ॥२३॥
कपिर्वराहः श्रेष्ठश्च धर्मश्च वृष उच्यते।
तस्मात् वृषाकपिंप्राह कश्यपोमां प्रजापतिः ॥

शा० प० अ० ३५२ श्लो० २४ ॥

इन दो श्लोकों से बतलाया है कि कश्यप के बनाये हुए निघण्टु में वृषाकपि पद है और वह पद इसी निघण्टु ५—६ में १६वां है। इस लिये वर्त्तमान निघण्टु के कर्त्ता का नाम कश्यप है ॥

मधुसूदन सरस्वती ने लिखा है कि निघण्टु यास्क का ही बनाया हुआ है। इस पर सत्यव्रत कहते हैं—"मधुसूदन सरस्वती का यह लेख इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय में उसके अन्धकार (अज्ञान) को ही प्रकट करता है।

उन्हों ने लिखा है—"ओ मधुसूदन ! तुझे अपने ग्रन्थ में स्वयं उद्धृत किये हुए "समाम्नायः समाम्नातः सव्याख्यातव्यः" इस वचन पर भी ध्यान नहीं आया ? भला इस युग के पुरुष द्वारा बने हुए ग्रन्थ को समाम्नाय कैसे कहा जा सकता है ? वे जोश में आकर मधुसूदन का उपहास करते हुए कहते हैं—"अथवा आप जैसे भ्रान्ति वादी वेदान्तियों से एसी बात (भूल) का होना उचित ही है" ॥

यहां सत्यव्रत का भाव यह है कि यास्क के समय में बने ग्रन्थ को समाम्नाय नहीं कहा जा सकता। इस आक्षेप की ओट से सत्यव्रत जी ने मधुसूदन सरस्वती और वेदान्तियों को जो बुरा भला कहा है, वह सर्वथा अनुचित है ॥

हम हैरान हैं कि एक इतना बड़ा वेद का पण्डित यह कहे कि यास्क के समय में बने ग्रन्थ के लिये म्ना धातु का प्रयोग नहीं किया जा सकता। मालूम होता है कि उन्होंने "यत्तुसंविज्ञान भूतं स्यात् प्राधान्यस्तुति-तत्समामने" अ० ७ खं० १३। इस निरुक्त के पाठ की ओर कभी दृष्टि देने की कृपा नहीं की थी। यदि यह पाठ एक बार भी ध्यान पूर्वक देख लिया होता तो निरपराध मधुसूदन को फिर केवल इस बात के लिये कुछ कहने का साहस न करते, क्यों कि यहां स्वयं यास्क ही अपने बनाये ग्रन्थ के लिये म्ना धातु के उत्तम पुरुषका (अहं) "समामने") प्रयोग कर रहे हैं। फिर मधुसूदन पर इतना क्रोध क्यों ?

और यदि यह पाठ कभी भी उन्होंने ध्यान पूर्वक पढ़ा है तो हम उन्हींके एक अनुमान "सम्भाव्यते, सोऽप्यासीद् दाक्षिणात्य एवेति, तत्र नैसर्गिक गौडविद्वेषदुर्गन्धोपलब्धेः" नि० श्लो० २८० से कह सकते हैं कि सत्यव्रत जी का भी वेदान्तियों से कोई वैसा ही स्वाभाविक विरोध होगा, अन्यथा ऐसी निर्मूल युक्ति के बल पर एक विद्वान् का इतना तिरस्कार करना सर्वथा अनुचित है ॥

"साक्षात्कृत धर्माणः" इस वाक्य की बाबत सामाश्रमीजी लिखते हैं कि "यह वाक्य यास्क का अपना बनाया हुआ नहीं है किन्तु किसी पूर्वाचार्य का यह वाक्य उन्होंने उद्धृत किया है। इसी लिये इस में आये हुए बिल्म शब्द का उन्हें निर्वचन करना पड़ा है"। भला कोई अपने शब्द का भी निर्वचन करने बैठता है ? वे कहते हैं—"यदि कोई कहे कि भाष्य में अपने प्रयुक्त शब्द का भी वर्णन किया जाता है और निरुक्त को निघण्टु का भाष्य रूप होने से इस में अपने पद का भी वे निर्वचन कर सकते थे तो वे (सत्यव्रत) कहते हैं कि बिल्मं, भिल्मं भासनं वा, इस 'वा' से ध्वनित होता है कि यास्क को बिल्म शब्द के अर्थ में सन्देह था कि इसका अर्थ भिल्म है या भासन"।

किसी को स्वप्रयुक्त वाक्यार्थ पर कभी भी सन्देह नहीं होता और यास्क को इस पद में सन्देह है इसलिये यह वाक्य ही यास्क का अपना नहीं किन्तु किसी और पूर्वाचार्य का है ॥

इस पर भगवद्दत्तजी "ज्योति" में लिखते हैं कि सत्यव्रत की यह युक्ति हेय है, क्योंकि "एतावन्तः समान कर्माणो "धात्वः"=धातुर्दर्धातेः ॥ नि० १। ११। निश्चय ही यास्क का अपना है। यहां यास्क अपने अतीव साधारण पद का व्याख्यान कर रहा है।

जान पड़ता है कि सत्यव्रतजी के प्रश्न पर उन्होंने भली भान्ति ध्यान ही नहीं दिया। जब

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कि सत्यव्रतजी मानते हैं कि भाष्य में अपने पद की व्याख्या भी हो सकती है तो फिर भगवद्दत्त जी का दिया उदाहरण "धातुर्दधातेः" सत्यव्रतजीके प्रश्नका उत्तर कैसे हो सकता है? उनका प्रश्न तो केवल यही अवशिष्ट रह जाता है कि अपने प्रयुक्त पद के आगे कोई 'वा' शब्द का प्रयोग इसलिये नहीं करता कि वक्ता को अपने वाक्य में संशय नहीं होता और 'वा' शब्द संशय द्योतक है। जब कि धातुर्दधातेः में 'वा' शब्द आया ही नहीं तो यह उनके प्रश्न का उत्तर कैसे हो सकता है? 'वा' शब्द यहां संशयार्थक नहीं किन्तु समुच्चार्थक है, यह हम फिर कभी सिद्ध करेंगे; परन्तु इस समय हमें यहां यह बताना है कि निघण्टुकार कौन है?

इसी पर मई मास की "ज्योति" में निघण्टु शीर्षक श्रीयुत भगवद्दत्तजी बी. ए. का लेख प्रकाशित हुआ है। आपने सत्यव्रत के दिये प्रमाणों का खंडन करते हुये यह बतलाया है कि निघण्टु भी यास्क का बनाया हुआ है।

आपका कथन है कि इमं शब्द से यदि यहां यही निघण्टु लियाजाये तो सप्तम में आने वाले "यत्तुसंविज्ञानभूतं स्यात्प्राधान्यस्तुति तत्समामनेः" इस वचन से बड़ाभारी विरोध यह आयेगा कि "समाम्नासिषुः" इस से तो यह सिद्ध होगा कि निघण्टु किसी और ने बनाया था, और "समामनेः" इस से यह स्पष्ट हो रहा है कि मैं (यास्क) बना रहा हूं अतः दोनों बातों में परस्पर विरोध आयेगा, इस लिये 'इमं' से यहां जो सब से पहिले निघण्टु था उसकी ओर ही संकेत है, इस निघण्टु की ओर नहीं, क्योंकि यास्क स्वयं कहते हैं कि मैंने भी कोई समाम्नाय किया था और वह यही निघण्टु है अतः निघण्टुकार कश्यप नहीं किन्तु यास्क ही है॥

महाभारत के विषय में तो आपकहते हैं कि अभी तक उसके वचनों से किसी बात का भी निश्चय नहीं करना चाहिये। इस पर हमारा वक्तव्य यहहै कि व्याकरणके नियमानुसार "इदमस्तुसन्निकृष्टे" इदं शब्द का प्रयोग समीपस्थ वस्तु के लिये ही होता है, इसलिये इमं ग्रन्थ से यहां कदापि जो सब से पहले निघण्टु था उसका ग्रहण नहीं हो सकता, किन्तु जिस निघण्टु पर यास्क भाष्य कर रहे हैं 'इमं' शब्द से वही यहां लिया गया है। और जिस "समामनेः" का "समाम्नासिषुः" से विरोध जानकर आपने उसके परिहार के लिए "इमं" के अर्थ परिवर्तन करने का प्रयत्न किया है वह "समामनेः" वस्तुतः निघण्टु के लिये नहीं किन्तु निरुक्त के लिये है, क्योंकि देवताओं पर विचार निघण्टु में नहीं किन्तु निरुक्त में ही चला है। और देवताओं के विषय में उसी प्रकरण में "समामनेः" यह कहा गया है। हम यहां उस प्रकरण के विषय को उद्धृत करते हैं जिससे कि स्पष्ट हो जायगा कि "समामनेः" यह निघण्टु के लिये नहीं किन्तु निरुक्त के लिये ही है। वहां विचार यह चलता है कि "तिस्र एव देवता इति नैरुक्ताः"—नैरुक्तों के मत से तीन ही देवता हैं। आगे उनके नाम स्थान और आकार पर विचार के अनन्तर "तिस्र एव देवता इत्युक्तं पुरस्तात्तासां भक्ति साहचर्य्यं व्याख्यास्यामः" यह लिखकर सोम, वरुण पर्जन्य, पूषा, चन्द्रमा आदि कुछ एक सहचर देवताओं के नामादि लिख कर "इतीमा देवता अनुक्रान्ता" कह कर इस विचार को समाप्त किया ही था कि यह प्रश्न उपस्थित हुआ कि औरों ने तो बहुत आदि को भी लिखा है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

और यहां सहचरों में उनका नाम क्यों नहीं लिखागया? इसका उत्तर देते हुए यास्काचार्य लिखते हैं—"यदि ऐसे २ विशेषणों को लिखें तो ग्रन्थ गौरव होगा इसलिए जो २ प्रधान हैं हम उन्हीं को निरुक्त में समाम्नान करते हैं।

यह निरुक्त में लिखे सहचर देवताओं के प्रश्न के विषय की बात है, निघण्टु से इसका कोई भी सम्बन्ध नहीं है। इसलिये "समाम्नासिषुः" यह पद निघण्टु के लिये और "समामनं" यह निरुक्त के लिये है। इनका परस्पर कोई भी विरोध नहीं। अतः 'इमं ग्रन्थ समाम्नासिषुः" इस से सिद्ध है कि निघण्टुकार यास्क से कोई पृथक ही है, यास्क नहीं।

महाभारत के विषय में आपकी यह विचित्र सम्मति है। क्या मैं आप से पूंछ सकता हूं कि बिना किसी हेतु के भी यदि महाभारत के लेखों पर अविश्वास किया जाय तो पाण्डवों का वृत्तांत, भीष्म की प्रतीज्ञा और उस घोर युद्ध के इतिहास का कहीं लोप तो न हो जायगा? इसलिये जब तक आप कोई प्रबल प्रमाण उपस्थित न करें तब तक यह कहना कि निघण्टुकार कश्यप नहीं, सर्वथा असङ्गत होगा। पहले "समाम्नासिषुः" से यह तो सिद्ध है कि निघण्टुकार और निरुक्तकार दोनों भिन्न २ हैं और "वृषोहि भगवान् धर्मः" इस महाभारत के लेख से सिद्ध है कि निघण्टुकार का नाम यास्क नहीं किन्तु कश्यप है॥

'रुक्मिणी हरण नाटक'।

अनुवादक—श्रीयुत मेधाव्रत जगजीवन।

प्रस्तावना।

सूधधार—बालिकाएं :—

(कानरा)

ब्रह्माण्ड का वह आकर्षण श्रीकृष्ण नाम।
दुनिया का दीपनचन्द्र आनन्द धाम॥ ब्रह्माण्ड०
तू गोप नामक पृथ्वी का पालक,
गोपी इन्द्रिय वृत्ति का आत्मनायक,
गोलोक में तेरी सब रास पूर्ण काम॥ ब्रह्माण्ड०—

[गायन के बाद नेपथ्य में से नटी नाटक का पुस्तक पढ़ती हुई आती है।]

सूत्रधार—कल्याणि? क्या तूने—
नवभव्य नाटक रुक्मिणीहरणाख्य देखा आर्यका?
है मान करता नारियों के जो स्वयंवर कार्य का।
अरु है बताया एक पत्नीव्रत नरोत्तम कृष्ण का
आदेश रखता है जो गीतामय पवित्र चरित्रका॥

नटी—जी हाँ, आर्य पुत्र? मैंने रुक्मिणी-हरण नाटक संपूर्ण पढ़ लिया। सामाजिक, राजनैतिक तथा आध्यात्मिक भावनाओं से सीज़र को शरमाने वाला, अॅलेक्ज़ान्डर को भुलाने वाला, नेपोलियन को नमाने वाला तथा क़ैसर को कंपाने वाला, धर्म, अर्थ, काम और मोक्षरूप पुरुषार्थ रत्नमाला को धारण किये हुए श्रीकृष्णचन्द्र का ऐसा निष्कलंक जीवन चरित्र अभी तक रंगभूमि पर नहीं बताया गया॥

सूत्रधार :—पुराणों की अन्य विवादास्पद चर्चाओं को एक ओर रखकर इस नाटक से श्रीकृष्ण का जीवन केवल हिन्दुओं की दृष्टि में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by 83 Foundation USA

ही नहीं, अपितु संसार के समग्र मानवों की दृष्टि में भी पूज्य एवं वन्दनीय सिद्ध करने की मेरी पवित्र महत्वाकांक्षा है। यदि राजनीतिज्ञ लोग श्रीकृष्ण को राजनीति की प्रचण्ड शक्ति-रूप पहिचान सकें और शूरवीर लोग उसको शूरवीरता की जीती जागती मूर्त्ति देख सकें तथा प्रेमी भक्तजन उसको प्रीतिभक्ति की अखंड गीता प्रतिकृति रूप अनुभव कर सकें तो देशोन्नति की अनेक शुभ प्रवृत्तियों में इस प्रयोग की भी सार्थकता गिनी जावे॥

नटी—सत्य है प्राणनाथ! किन्तु आपने तो नाटक के प्रारंभ में ही श्रीकृष्ण को गुरुकुल में विद्याध्ययन करते हुए पवित्र ब्रह्मचारी तथा पश्चात् एक पत्नीव्रत धारी आदर्श पुरुषोत्तम के रूप में चित्रित किया है तो फिर बाल्यकाल में उसने गोपी वस्त्र-हरण आदि लीला एवं सोलह हजार आठ स्त्रियों के साथ क्रीडा की है यह जो माना जाता है इसका क्या?

सूत्रधार—इन क्रीड़ा तथा लीलाओं को तो अब सनातन धर्मीय पण्डितगण भी आध्यात्मिक-स्वरूप देने लगे हैं, जिस से उसकी ऐतिहासिक सत्यता तो नष्ट ही होती है। इस लिये श्रीकृष्ण का ऐतिहासिक उज्ज्वल स्वरूप रंगभूमि पर दिखलाना मेरा उद्देश्य है, और तभी श्री कृष्ण का मानवमान्य गीता में कहा हुआ यह वचन उसके लिये भी चरितार्थ होगा॥

'यद् यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
सयत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनु वर्त्तते॥'

सुजन श्रेष्ठ चलें जिस मार्ग से,
इतर लोक उसी पथ को धरे।
अरु प्रमाण जिसे बुध मानलें,
तदनुवर्तन लोग सदा करें॥

नटी—सचमुच, ऐसे लोक-मार्ग दर्शक आदर्श पुरुषोत्तम में स्व-वचन विपरीत आचरण संभवनीय ही नहीं॥

सूत्रधार—जी हाँ! कैसे संभवनीय हो?

मनस्येकं वचस्येकं कर्मण्येकं महात्मनाम्।
मनस्यन्यद् वचस्यन्यत् कर्मण्यन्यद् दुरात्मनाम्॥
मन वचन अरु कर्म ते सज्जन एक सरूप।
मन वचन अरु कर्म ते दुर्जन भिन्न सरूप॥

नटी—ठीक है। तभी इस विषय में राधा के निष्काम भक्तिमय तपस्वी पाठ-द्वारा कोई अपूर्व ही प्रकाश डाला गया है। एतदतिरिक्त हमारी स्त्री जाति की शुद्ध स्वतन्त्रता एवं स्वयंवर विवाह के सम्बन्ध में भी श्रीकृष्ण तथा रुक्मिणी का जीवन अतीव आदरणीय है॥

सूत्रधार—स्त्रियों का विवाहोद्धार एवं समाज सुधार करना भी इस नाटक का महान् लक्ष्य है। चलो तब अब हम भारत के प्रेक्षक समाज में श्रीकृष्ण तथा रुक्मिणी के जीवन गौरव से ब्रह्मचर्यमयशिक्षण, गीता का कर्म-योग एवं प्रेमलग्न का पावनयज्ञ प्रगट करने के लिये 'रुक्मिणीहरण' नाटक प्रारंभ करें, और कुरूढ़ी एवं कुरीति से कलुषित हुए देश के वातावरण को शुद्ध एवं स्वर्गसौरभान्वित करने के लिये ईश्वर कृपा की याचना कर तय्यार हो जावें॥

(सब गाते हैं)

स्वातन्त्र्य स्वर्ग में इस भारत को ईश! जगा दे।
दासत्व राक्षसों के दुःस्वप्न से हटा दे॥

आवेश की वह अग्नि नस में अजब जला कर।
आलस्य के धुओं को उद्योग से मिटा दे॥

सभ्यत्व सिन्धु की वह उछलें तरङ्गमाला।
दुनिया के सब तटों को उससे प्रभो! भिगादे॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अंध रूढि-राक्षसी के टीलों ऊपर लेजाकर।
यत्नों के यान हमारे आकाश में उड़ा दें॥

वायु के वेग दौडे पुरुषार्थ बिन रुकावट।
उनमें तू आर्य जातीय यश सुरभि को मिलादे॥

आचार विचार हमरे पल्वल से है यह सड़ते।
स्वाधीन कर्म-प्रज्ञा-नद में उसे वहादें॥

नक्षत्रवत् हमारे मुख शीश जगमगादे।
श्रीकृष्ण-रुक्मिणी से पति पत्नी यहाँ बढ़ा दे॥

पहिला-अङ्क। प्रवेश-पहिला।

[स्थान—सान्दीपन ऋषि का गुरुकुल ब्रह्मचर्याश्रम।]

पात्र-गण।

कृष्ण—नंदनदन, मथुरानरेश उग्रसेन का दौहित्र, रुक्मिणी-हृन्मणि।

बलदेव—कृष्ण का ज्येष्ठ भ्राता।

कर्मयोग—कृष्ण का सहाध्यायी भक्त, राधा का सहोदर, सिद्धि का प्रियवर।

प्रारब्ध—कृष्ण का विनोदी गुरु-बन्धु।

सांदीपन—कुलपति।

उग्रसेन—मथुरा-नरेश, कृष्ण का मातामह।

और भी ब्रह्मचारी तथा अनुचरगण।

दृश्य—[विशाल नदी-प्रदेश पर दूर तक दीखते हुए आश्रम। यज्ञशाला में यज्ञ दर्शन। व्यायामशाला में व्यायाम करते हुए ब्रह्मचारी। सघन वन में क्रीड़ा कल्लोल करत हुए चित्र विचित्र पक्षी मृगगण। कृष्ण लकड़ी चीर रहा है। प्रारब्ध नदी में से आश्रम के लिये पानी भर रहा है एवं अन्य ब्रह्मचारी गण कसरत तथा भिन्न भिन्न प्रकार की आश्रम-सेवा कर रहे हैं और निम्न गायन गा रहे हैं।]

(मालकोष।)

कृष्ण आदि ब्रह्मचारी—

हमीं भारत माता के उद्धारक सन्तान।
हमीं ब्रह्मचर्य धारी बनि हैं महा मस्तान॥हमीं०

विश्वामित्र, परशुराम, राम, लक्ष्मण हनुमान्।
उनाहिं समान जीवन करिहैं बलवान्॥
यम अरु नियम धारी, विद्या तप को संभारी,
धीर, वीर, शूर बनी कम्पाइहैं जहान,
पाइहैं पवित्र चरित्रन वीरेन्द्र से सम्मान॥हमीं०

देशहु का अभिमान, देश वाणी वस्तु मान,
आर्य जाति गौरव की जग में गूँजे तान,
कर्म-योग आदरिहैं आत्मत्याग को धरिहैं,
धर्म संसार में जान करिहैं कुरबान,
मुक्तिस्वतन्त्रता है हमारी ज़िन्दगी का ध्यान॥हमीं०

(गायन समाप्त होता है। प्रारब्ध पानी भर कर ले जाता हुआ ठोकर खाके गिर पड़ता है जिससे अन्य विद्यार्थी हंस पड़ते हैं।

कृष्ण—कल्याण! (कहकर तत्काल प्रारब्ध को उठाने ज्यों ही दौड़ता है त्यों ही कर्मयोग उठाता है।)

प्रारब्ध—हे भगवान्!

ब्रह्मचारीगण—(हंसते हुए) प्रारब्ध ने किया भूमि को प्रणाम।

कृष्ण—प्रारब्ध की घटना पर हंसते हो?

प्रारब्ध—तुम भी गिरकर होवोगे बदनाम (तुम्हारा होगा ऐसा ही परिणाम) [यह कह कर एक छात्र को पैर अड़ा गिराता है।]

कृष्ण—जो पतित का अपमान कर हंसता है वह हैवान है।
अरु पतित का उद्धार कर्त्ता सत्य वह इन्सान है॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गिरि पर से गिरते वारि को पाषाण
ठोकर देत है।
किन्तु चित्त उदार कर सागर उसे
उर लेत है॥

देखो! इस कर्मयोग ने गिरे हुए प्रारब्ध की तरफ तुम्हारी तरह उपेक्षा बुद्धि न रखकर उसे उठाने में अपना सुन्दर नाम सार्थक किया है। उससे कर्मयोग का सच्चा पाठ सीख लो।

कर्मयोग—भगवन् कृष्णचन्द्र! मैं तो मेरी बहिन राधा की नांई आपके चरणांगुलीनख चन्द्र किरणों का चकोर हूं। आप श्रेष्ठ गुरुबन्धु की हैसियत से हमारे शिक्षणक्षेत्र के निपुण कृषक एवं हमारे गहन जीवन-वन के आदर्श-दर्शक बने हुए हो।

प्रारब्ध—किन्तु भाई कृष्ण जी! मानो कि मैं गिर गया सो तो मैंने जाना कि खैर! होगा क्योंकि

जाना कि मेरे भाग्य में गिरना बदा होगा।
गिरा मैं जान बूझ कर आपको पता होगा॥

किन्तु ये मेरी हड्डियां रगड़ जाने से मुझे ज़रा लघुशंका हो आई है। यह पढ़ना बढ़ना तो मैंने जाना कि खैर, किन्तु गुरू जी उसके साथ में यह गर्दभ कर्म हमसे क्यों करवाते होंगे?

कृष्ण—प्राचीन काल से पुण्यभूमि भारत के राष्ट्रीय संस्कृत-शिक्षण का उद्देश्य मनुष्य को केवल पुस्तक घुकवाकर तोता बनाने का नहीं, किन्तु उसको तन, मन तथा चेतन शक्ति में बलवान् बनाने का है। पुस्तक के कीड़े बनाने का नहीं किन्तु हृदय तथा जीवनकला को शरत् पूर्णिमा के सौभाग्य से अलंकृत करने का है। मस्तिष्क पर व्यर्थ भार लाद कर शरीर से दुर्बल शूद्र-दास बनाने का नहीं किन्तु भव्यबुद्धि विकास एवं दिव्य आत्मप्रकाश से मनुष्यता की पूर्णता (Supermanliness) को विकसित करने का है। मनुष्य को ज्ञानयज्ञ का उपासक, पितृयज्ञ का पालक, ऋषियज्ञ का रक्षक, प्राणिमात्र का पोषक, स्वमातृभूमि का उद्धारक नागरिक तथा स्वतन्त्रता-देवी का सेवक बनाने का है॥

प्रारब्ध—इतना यह मेरे नाना के नाना जैसा पुराना और ऊंट जैसा लंबा चौड़ा शिक्षण पुराण मुझे जरा भी मालूम न था। हम तो जानते थे कि पढ़ना उदर भरने के लिये, स्वार्थ साधने के लिये, सुधरे हुए ठग बनने के लिये, अपढ़ का गला घोटने के लिये, पदवी पाकर पराये धन से सुख चैन करने के लिये, बेवकूफ को स्वाहा कर जाने के लिये, अगर वकील हुए तो सच का झूंठ और झूंठ का सच बना कलहदलाल हो असील की जेब और दिल की जीभ कतरने के लिये और जो अमलदार हुए तो शैतान का साला बन हाथ में दंभ की माला पकड़ आंख मूँदकर 'अहं ब्रह्मास्मि' की धुन में भगवान् की नकल कर मलकाने के लिये होगा। किन्तु चलो, आज तो शिक्षण का ग़ज़ब का ही कड़वा चिरायता चखा, अच्छा तो और सब के लिये हमने जाना कि खैर! किन्तु यह नहीं समझ में आता कि पढ़ने के साथ २ इस प्रकार लकड़ी चीरने तथा पानी भरने आदि का कष्ट किस लिये?

कृष्ण—हड्डियाँ हराम न हो जायँ इसलिये कसरत की कसरत और उसके साथ स्वावलंबी बन कर कठिन से कठिन कार्य करने में भी शरीर को कसने के लिये, विद्यार्थी जीवन में से रंक से राजा तक सब को आवश्यकीय ग़रीबी का तथा मेहनत का मीठा अभ्यास डालने के लिये, कि जिस से समय आने पर [illegible] एवं प्रजाकीय सेवा व्रत में चाहे जितना

CC-0. Gurukul Kangri Vishwavidyalaya Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

परिश्रम उठाकर जीवन-योद्धा बन सकें तथा संसार-संग्रामको जीत सकें ॥

प्रारब्ध—ऐ हड्डियों के हराम विद्यार्थियो! शिक्षण-कामधेनु की यह खाना मीठी शक्कर जैसा लात ! तुम्हारी तो भैंस के सींग भी भैंस को भारी पड़ जाँय-ऐसी है बैठ बैठ जंभाई लेने की बात। सुख से रहने और भूखे मरने की पंचात। अच्छा कृष्णजी! इस प्रकार के नीच काम नौकरों द्वारा न कराये जायं, ऐसे मजदूरी कामों में तो हमें शरम लगे, भैय्या!

कृष्ण - शरम रक्खो शैतानों की नीच नौकरी, खुशामद या दीन दासत्व स्वीकार कर देश तथा जाति के द्रोह करने में। फिर तुम गरीब हो या अमीर, अपने देश, जाति बन्धु तथा बड़ों के किंकर बनो, मजदूर बनो। अरे, उनके भावी कल्याण के लिये ज्ञान विज्ञान के साथ सख्त मेहनत, जबरदस्त जहमत तथा आवश्यकीय ऐच्छिक मजदूरी एवं ग़रीबी का कष्ट सहना सीखो। विद्यार्थी जीवन में ही तपस्वी तथा परिश्रमी स्वभाव बनाये बिना देश के कला-कौशल, शोधखोजा, साहसी एवं स्वराज्य स्वातन्त्र्य के कार्य कदापि सिद्ध नहीं हो सकते ॥

प्रारब्ध—ऐ आराम तकिये पर लेटे २ जंभाई लेने वाले मेरे शाहजादो! यह कड़वा चिरायता गले उतरता है या यह सब सुनकर भी यही कहोगे कि हम तो जानते हैं कि खैर! जाने दो ॥

कृष्ण—मन के साथ तन को कसोगे, झूठी बड़ाई और मिथ्या अभिमान त्यजोगे तभी तुम स्वदेश के मजबूत रक्षक या सैनिक बन सकोगे। प्रसंग पड़ने पर सत्य तथा आत्मसत्व के लिये लड़ाई लड़ सकोगे एवं ईश्वरदत्त स्वतन्त्रता को शौर्यपूर्वक संभाल सकोगे। इसी हेतु तन मन के संयमन, नियमन तथा बुद्धिबल के ग्रहण के लिये भारत का शिक्षण ब्रह्मचर्य के साथ ही दिया जाता है ॥

प्रारब्ध—ब्रह्मचर्य को हम तो जानते हैं कि ख़ैर!

कृष्ण—खैर कैसे? यह ब्रह्मचर्य ही मानव-जाति को जीती जागती रखने वाली जाज्वल्यमान शक्ति है। अद्भुत ज्ञान, विज्ञान, बल, पराक्रम तथा प्रतापी वीरों को उत्पन्न करने वाली विभूति है। 'ब्रह्मचर्य प्रतिष्ठायां वीर्यलाभः' इस कथन से ब्रह्मचर्य ही इहलोक तथा परलोक में अपनी स्वतन्त्रता मुक्ति है। क्योंकि-'नायमात्मा बलहीनेन लभ्यः' वज्र को तोड़ने वाला, पृथ्वी को तोलने वाला, पर्वत को फोड़ने वाला तथा महासागर को मथने वाला ब्रह्मचर्य मन, वचन और कर्म से पालना चाहिये।

ब्रह्मचारीगण—तथास्तु, तथास्तु, तथास्तु!

प्रारब्ध—(जंभाई लेता हुआ) जृम्भास्तु जृम्भास्तु, जृम्भास्तु!

कृष्ण—जब तक इस आर्यावर्त में ब्रह्मचर्य का पालन किया जाता है, जीवनामृत रूप वीर्य की रक्षा होती है तब तक यहाँ उज्ज्वल नक्षत्र गण सदृश सैकड़ों परशुराम, राम, लक्ष्मण, अंगद, हनुमान, भीषम तथा शुकदेव जैसे महापुरुषों के बहुमूल्य दिव्यदर्शन होते रहते हैं; जिन से संसार थर्राता है, धरणी कांप उठती है एवं देश तथा जाति की अजेय ब्रह्मनिष्ठता राक्षित होती है। किन्तु जिस दिन यहां ब्रह्मचर्य का लोप होगा उसी दिन से आर्य-जाति नपुंसक निर्बल, कर्महीन तथा दीन बन कर निज धन, धाम, स्वातन्त्रगौरव एवं स्वराज्यसर्वस्व को भी खो बैठेगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ब्रह्मचारीगण--ईश्वर ऐसा समय नहीं दिखायेगा।

प्रारब्ध--किया प्रारब्ध का होगा यह जग बैठा हवा खायगा।

कर्मयोग--भैय्या कृष्ण! आप के उपदेश की प्रति पङ्क्ति अमृताहुति बनके हमारे आत्म-यज्ञ की ज्वालाओं को दिव्यमार्ग की ओर ले जारही है। कृष्ण का कर्मयोग भारतीय जनों के जीवन में अविचलरूप से अवतीर्ण हो यही प्रभु से प्रार्थना है। आज से मैं आपके चरण समीप प्रतिज्ञा लेता हूँ कि—

तव ज्ञान गीता भावना से है घड़ा यह कर्मयोग।
मैं कृष्ण सिद्धि साधने सर्वस्व दूँगा आत्मभोग॥

प्रारब्ध—

प्रारब्ध कर्मके साथ रहता है कृष्णके तावेतमाम।
मैं कृपा पाऊँगा तुमरी राम की जैसे हनुमान्॥

बलराम—(प्रवेश कर) भाई! भाई! मथुरा से उग्रसेन नाना हम को बुलाने यहाँ आये हैं। उनको साथ लेकर गुरुजी आरहे हैं।

[सांदीपन तथा उग्रसेन प्रवेश करते हैं।]

कृष्ण आदि ब्रह्मचारी--प्रणाम!

सांदीपन-उग्रसेन—कल्याण!

उग्रसेन—प्यारे कृष्ण, बलराम! शिशुपाल के साथ जरासंध पुनः मथुरा नगरी पर आक्रमण करने आ रहा है, ऐसा समाचार मिला है; इसीलिये वृद्धावस्था से अशक्त हुआ मैं उनके सामने लड़ने तथा देश-गौरव सुरक्षित रखने के लिये तुम को सहायतार्थ बुलाने आया हूँ।

सांदीपन--धर्मात्मा पुत्रो! वर्णाश्रमधर्महर्म्य के मूल शिलारूप शारीरिक तथा आत्मिक उन्नति के स्तम्भ समान ब्रह्मचर्य को बड़ी आयु तक पाल कर तुम ने ज्ञान, तप एवं बल पाया है। मैं आज तुम्हारा समावर्तन-संस्कार कर डालूँ, जिससे कि तुम क्षात्र-धर्मानुष्ठान में तथा ग्रहस्थाश्रम कर्म में सम्मिलित होने के लिये खुशी से पधारो।

मातृ भूमि यह तुम्हारी, रक्त से भर जायगी।
यदि न दौड़ो तुम मदत में शूरबन, मर जायगी॥
पहिनो फ़रज बख्तर सभी, हिम्मतकी खंजर हाथलो
आवेश से दिल को भरो, शिर दुश्मनों के काट लो

कृष्ण बलरामः—

निज मातृ-भू का भार हरने को लिये अवतार ये।
शुचि आर्य धर्मोद्धार हेतु हैं किये संस्कार ये॥
शुभधर्म रिपु सिर पै हमारी नित गिरें तरवार ये।
निज देश अरु निज धर्मके गूँजे सदा जयकार ये॥

[गायन]

है मातृभूमि हम को निजप्राणहुँ से प्यारी।
उसके लिये भले हो कुरबान जान हमारी॥
जो हुक्मी जुल्मियों की होवें अधर्मकारी।
उस वक्त धर्मियों को रक्षें असि हमारी॥
दुख में प्रजा दुखी हो जब आर्तनाद करती।
दुःखाग्नि को बुझाने यह देह होवे वारि॥
ब्रह्मर्षि-ऋण चुकाने निज धर्मधन कमाने।
सर्वस्व करके अर्पण बनिहैं परोपकारी॥

[सब का प्रस्थान]

(गुजराती से अनुवादित)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पाश्चात्य विद्वानों में पुनर्जन्म पर विचार।

लेखक-श्रीयुत् प्रो० नन्दकिशोर विद्यालंकार

" I have also remarked that it is at once obvious to every one who hears of it for the first time." "Schopenhawr."

" Metempsychosis is the only theory of the soul to which philosophy can hearken, since " What is incorruptible must be ungenerable." Hume.

शोपनहार जर्मन तत्त्ववेत्ता कहता है कि 'पुनर्जन्म' के सिद्धान्त में सुनते ही निश्चय हो जाता है।

अपने अभिमत सिद्ध करने के लिये हम योरुप के दर्शनाशास्त्र की जन्मभूमि ग्रीस देश से से प्रारम्भ करते हैं। हम पहले देख चुके हैं कि ग्रीस के प्राचीन दार्शनिक सिद्धान्तों पर भारतीय दार्शनिक सिद्धान्तों का पूरा २ असर हुआ है। कदाचित् इसीलिये यह बात सत्य है कि प्राचीन ग्रीक विद्वानों में हमें वैदिक पुनर्जन्म (Transmigration) का ठीक २ भारतीय विचार मिलता है, और 'वैदिक पुनर्जन्म विचार ही मिलता है-अवैदिक नहीं। इतिहास बताता है कि 'मध्यकाल (dark ages) में यह विचार वहां विलुप्तप्राय होगया। किन्तु फिर कुछ समय से लगभग गत १०० वर्षों से 'सर्वजगद्धर्मपरिषत् (World's Parliament of religions) में जो कि अमरीका के शिकागो नगर में सन् १८९३ में हुई, भारत के प्रतिनिधि विद्वानों से पश्चिमजगत् में पुनर्जन्म का नाद सुनायागया। किन्तु इस समय वहां 'नवीन विकासवाद उदय होचुका था अतः पुनर्जन्म ने अवैदिक पुनर्जन्म (Reincarnation) का रूप धारण कर लिया, यह हम ऊपर देख ही आये हैं। इसी बात को हम पाश्चात्य विद्वानों की निम्नश्रृङ्खला में पायेंगे:—

I एम्पिडोक्लीज की शिक्षा में यह विचार था, थेल्स इसे मानता था यह हम पहले देखआये हैं। पिथागोरस की सारी शिक्षा बुद्ध धर्म की थी इसलिये उसकी शिक्षा में पुनर्जन्म का सिद्धान्त भी था। पिथागोरस कहता है:—

" All things are but altered, nothing dies,
And here and there Th' unbodied spirit flies.
By time and force or sickness dispossessed,
And lodges where it lights in man or beast."

" Pythagoras in Drydon's Ovid."

नित्य आत्मा मृत्यु के अनन्तर कर्मों के अनुसार मनुष्य जन्म या पशु जन्म धारण कर लेता है॥

II अब हम दार्शनिकों की दूसरी श्रेणी (Systematic philosophers) में उतर आते हैं। प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो पुनर्जन्म मानता था इस को सिद्ध करने की तो आवश्यकता नहीं, पहले सिद्ध किया जाचुका है किन्तु यहां यह बतलाना है कि वह "वैदिक पुनर्जन्म" को मानता था। 'टिमियस' पुस्तक में प्लेटो लिखताहै:-

"पुनर्जन्म का विचार सर्वसाधारण में फैल रहा है। यह आत्मा पहले २ मनुष्य शरीर में आता है। इस जन्म में जो सब से अधिकसत्य का अन्वेषण करता है वह और उससे कम २ सत्यान्वेषी क्रमशः—१. तत्त्वज्ञानी शिल्पी या गानकला का वेत्ता, २ सद्राजा, क्षत्रिय या रईस (lord), ३ नीतिज्ञ व्यापारी या अर्थशास्त्री ४

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वैद्य या व्यायाम प्रिय (Gymnastic-lover) ५ पैगम्बर, ६ कवि या नक्काल ७ मूर्तिकार या कृषक (husbandman), ८ अतितार्किक (Sophist) ९ और अत्याचारी बनता है। यह मनुष्य जन्म परीक्षास्थल है। इस में यदि अच्छे कर्म करेगा तो उत्तरोत्तर उन्नति पायेगा अन्यथा नीची योनियों में गिरेगा"। नवीन प्लेटोवादी प्लाटिनस् ने भी इसी से दीक्षा ली और स्पष्ट किया। 'वैदिक पुनर्जन्म से यहां इतना ही तात्पर्य है कि वह मनुष्य जन्म से नीची योनियों में जाना बताता है तथा वृक्ष कीट पश्वादि से उन्नत होता हुआ जीवात्मा मनुष्य जन्म में आया इसका भी विरोध कहता है। यह तो हम सर्वत्र देखेंगे कि वैदिक सिद्धान्तों को भारतीय क्षेत्र ही अच्छी भूमि थी अन्यत्र जाकर वह आधे २ रूप में रह गये--अस्तु।

प्लेटो के दो प्रसिद्ध वाक्य यहां और भी उद्धृत कर देना उचित प्रतीत होता है:—

"The soul always weaves her garment anew आत्मा अपना चोला सदा बदलता रहता है। तथा "The soul has a natural strength which will hold out and be born many times."—आत्मा में वार २ जन्म लेने की एक स्वाभाविक शक्ति विद्यमान है॥

III अब हम प्लेटो के सुयोग्य किन्तु प्रतिद्वन्दी शिष्य 'अरस्तू' के पास आते हैं, सुनिये वह क्या कहता है:—

"यह जीवात्मा सारे जगत् का एक छायाचित्र (microcorm) है जो कि पशु वनस्पति कीट मनुष्यादि सर्व योनियों में गुज़रकर उस २ योनि का अनुभव एकत्रित करता जाता है। यह नित्य है और यतः सब शरीरों में प्रवेश करता है अतः उन भौतिक शरीरों से पृथक रह कर नित्य है—as something civine and-Immortal" (Te Gen Animal–II 3)

IV अब एपिक्यूरियन्स के पास आते हैं-"यह और स्टोइक दोनों ही परमाणुवादी थे। वह मानते थे कि संसारचक्र अनन्त है, कई वर्षों के पीछे फिर वही संसार चक्र चलेगा और फिर प्लेटो उसी प्रकार अपना व्याख्यान देगा आदि" ('Reincarnation' by E. D. Walker से उद्धृत)

यद्यपि अपने सिद्धान्तों में यह लोग पूर्णतया चार्वाक तथा देहात्मवादी थे तथापि देखना यह है कि पुनर्जन्म का खण्डन करते हुए भी वह उसे किस प्रकार मान लेते हैं। अर्थात किसी न किसी रूप में पुनर्जन्म उन्हें भी मानना पड़ता है।

V अब हम तृतीय शताब्दी के धार्म्मिक काल में प्रवेश करते हैं। दो मुख्य धर्म यहां उन्नत हो रहे हैं—एक नवीन प्लेटोवाद दूसरा इसाई धर्म।

१--नवीन प्लेटोवाद (NeoPlatonism) का आचार्य्य प्लौटिनस था यह उसके अपने शब्द हैं:—

"जो मानुषिक शक्तियों का सदुपयोग करता है वह फिर मनुष्य जन्म धारण करता है, यदि इन्द्रियों के वश में रहे तो पशु जन्म मिलता है, यदि क्रोधवश रहे तो हिंस्र जन्तु बनता है, जो लालच में फंसते हैं वह भक्षक (पेटू) जानवर-(गृध्र आदि) बनते हैं। जिहोंने इन्द्रियों का दुरुपयोग किया वह वनस्पति वृक्षादि बनते हैं, गाने वाले तथा शुद्ध-चरित पुरुष गाने वाले पक्षी बनते हैं, अत्याचारी पुरुष उकाब (Eagle) बनते हैं। जो दैवीय पदार्थों पर विश्वास नहीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करते वह आकाशीय पक्षी आदि बनते हैं"। (Reincarnation by Walker से)

२—ईसाई धर्म में आत्मसम्बन्धी विचित्र ही विचार है। किश्चियन दार्शनिक मानते हैं कि आत्मा की उत्पत्ति परमात्मा से हुई परन्तु यतः वह आत्मा निरवयव है अतः उत्पत्तिमान् होने पर भी अविनाश्य [immortal] है। आत्मा की इस प्रकार की अमरता का सिद्धान्त प्रत्येक दार्शनिक को खटकता है। दर्शन शास्त्र का यह सिद्धान्त है कि 'जिस पदार्थ का अन्त कोई नहीं उसका आदि भी कोई नहीं हो सकता' 'नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः'। इसी को लेकर ह्यूम कहता है कि:—

"What is incorruptible must be ungenerable."

तब बाइबिल के सिद्धान्तानुसार पुनर्जन्म नहीं सिद्ध होता। किन्तु उपरोक्त स्थिति, ऐसा पता लगता है कि बाइबिल को स्वयं सन्तोषजनक नहीं प्रतीत हुई अतएव कहीं २ पुनर्जन्म में विश्वास दिखाई देता है--'अपोकलिप्स् (Apocalypse) में—"Him that overcometh will I make a pillar in the temple of God, and he shall go no more out. (Rev. iii 12) ऐसे पुरुष का फिर इस लोक में जन्म नहीं होता, अर्थात् शेषों का होता है। तब पता लगा कि 'पुनर्जन्म बाइबिल को भी अभिप्रेत है। 'वाकर' प्रमाणों तथा उद्धरणों द्वारा हमें सिद्ध करके बताता है कि प्रारम्भ २ के प्रायः सभी प्रामाणिक ईसाई पादरी (Church fathers) इस पुनर्जन्म में विश्वास रखते आये हैं [देखिये Reincarnation by E. D. Walker)

VI. मध्यकाल में यह विचार योरप में नहीं रहा। वर्त्तमान काल में भी प्रथम २ 'स्पिनोज़ा में यह विचार मिलता है। स्पिनोजा का सिद्धान्त वही है जो भारतवर्ष में शङ्कराचार्य्य का है। उसका भी कहना है कि 'यतः हम नश्वर पदार्थों से प्रेम करते हैं अतः इस देह बन्धन से ज्ञान (Knowledge ब्रह्मात्मैक्य ज्ञान) द्वारा छूट कर मुक्तिपद प्राप्त कर सकते हैं। इस जीवन को वह बन्ध कहता है—अर्थात् जब तक ज्ञान नहीं हो जाता तब तक जीवात्मा देह बन्ध में फंसता अर्थात् बार बार जन्म लेता रहता है।

VII. स्पिनोज़ा से चलकर 'ह्यूम' पर पहुंचते हैं। हम ऊपर देख चुके हैं कि ह्यूम पुनर्जन्म में विश्वास करता है। वह कहता है कि "यदि बाइबिल के अनुसार आत्मा को इस जन्म के अनन्तर अमर मानते हो तो अनादि भी मानो, और सब से युक्तियुक्त सिद्धान्त 'पुनर्जन्म आवागमन' भी स्वीकार करो।"

VIII. आगे चलकर हम फ्रांस के Enlightenment' में पहुंचते हैं—लैसिङ्ग कहता है कि मनुष्य का, बाइबिल जिसे स्वभावतः 'पाप' युक्त होना बतलाती है यह तभी माना जा सकता है जब कि मनुष्य का पूर्व जन्म भी माना जावे। अन्यथा 'पाप। (evil) कहां से आया? यदि कहो ईश्वर ने मनुष्य के साथ लगा दिया तो ईश्वर पापी ठहरता है"।

IX अब हम १९वीं सदी में पहुंचते हैं। काण्ट, हेगल, फिखटे, यह सब आत्मा की नित्यता, तथा स्वतन्त्रता मानने वाले हैं। काण्ट ने अपने सारे ब्रह्मविज्ञानशास्त्र (Metaphysics) को सदाचार शास्त्र के ही आधार पर माना है। वह कहता है कि धर्मका सम्बन्ध सुख के साथ है और अधर्म का दुःख

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के साथ—किन्तु हम देखते हैं कि इस जगत् में दुर्जन पुरुष फलते फूलते तथा सज्जन दुःख पाते हैं। यदि कोई ईश्वर न्यायकारी इस जगत् का अधिष्ठाता है तो वह अवश्य भविष्य जन्मों में दुष्टों को दुःख तथा सज्जनों को सुखभोग करावेगा ही। काण्ट के उत्तराधिकारी फिखटे तथा हेगल ने भी पुनर्जन्म तथा आत्मा की नित्यता को माना॥

X हेगल के पीछे दर्शन में शोपनहार जिस के सिद्धान्त प्रायः बुद्ध से मिलते हैं किस प्रकार 'पुनर्जन्म' को स्वीकार करता है यह हम पहले देख चुके हैं।

XI अब हम सर्वथा नवीन काल में पहुंचते हैं। इस २० वीं शताब्दी के मुख्य दार्शनिक जर्मनी का 'आइकन' है और फ्रांस का वर्गसन्। आइकन (Eucken) का कहना है कि जीवन की सब से पुष्ट व्याख्या वह है जो कि मनुष्य को नीच प्राकृतिक जगत् से उठाकर परमात्मा की ओर लेजावे तथा यह भी बता दे कि उन्नति का क्षेत्र इसी जन्म तक परिमित नहीं रहता अपितु भविष्यत् जन्म में भी उन्नति की आशा है। आधुनिक प्रकृतिवाद (Naturalism) को वह इसी लिये निकम्मा समझता है, क्योंकि वह हमें स्वार्थी बनाता तथा इसी जगत् तक परिमित रखता है। जिस प्रकार काण्ट ने कहा था कि दुष्टों को फलते फूलते तथा सज्जनों को दुःख पाते हम देखते हैं तो समझते हैं कि कभी न कभी भविष्य जीवन में अवश्य पुण्य का फल मिलेगा :—

'If this does not happen in the present life, then it must happen in a future life, and so that life may confidently expect. The more detailed elaboration of this conception has struck different paths. One such was the doctrine of Transmigration of souls, another that of a final world-judgment."

(Eucken's Essays p. 106).

वर्गसन् मानता है कि सारा जगत् एक ही शक्ति (force) जिसे हम शङ्कर के शब्दों में ब्रह्म कह सकते हैं, का रूप है। उस शक्ति ने ही क्रियात्मक जीवन व्यतीत करने के लिये पृथक २ इतने भेद बना लिये हैं। यह बन्धन-रूप प्रकृति उसी शक्ति का परिणाम है। ज्यों २ हम बुद्धि [जो कि ब्रह्म, जीव, तथा प्रकृति में भेद दिखाती है] से परे हटकर अन्तर्ध्यान होकर अन्तिम सत्ता के साथ अपने को एक करके समझेंगे तभी हम स्वतन्त्र होंगे और मुक्ति प्राप्त करेंगे अर्थात् उसी ब्रह्म के स्वरूप बन जांयगे। इसलिये शङ्कराचार्य के समान ही यह भी मानता है कि जब तक हम ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेते तब तक बार २ जन्म बन्धन में फंसना ही होगा :—

"At one point alone it passes freely, dragging with it the obstacle which will weigh on its progress but will not stop it (current of life)..... Humanity may be able to beat down every resistence and overcome death." (Henri Borgson People's book Series p. 89.)

XII डोएसन जर्मनी का प्रसिद्ध अध्यात्मशास्त्र वेत्ता लिखता है :

"कि सदसद्विवेक की जो शक्ति हमारे आत्मा में रक्खी गई है यह सिद्ध करती है कि न केवल यह कि आत्मा नित्य है अपितु यह कि कई जन्मों से गुज़र कर उन्नति के शिखर पर पहुंचता है:—

".....tells not for immortality in the usual sense but for transmigration".

XIII पुनर्जन्म का विचार वर्त्तमान युग में सब विचारकों के हृदय में राज्य पा रहा है क्योंकि वह अब इस सिद्धान्त की सत्यता को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्पष्ट देखते जाते हैं। प्रोफेसर मैक्टेगर्ट ट्रिनिटि कालेज कैम्ब्रिज में दर्शनशास्त्र के उपाध्याय हैं। अपनी एक पुस्तक में आपने आत्मा के पुनर्जन्म के विषय में कई साक्षी दी हैं। पुस्तक का नाम है "Human Immortality and preexistence"

उन सब युक्तियों को हम 'पुनर्जन्म' पर सामान्य दृष्टि डालते हुए अगले प्रकरण में रक्खेंगे किन्तु एक युक्ति का यहां दे देना आवश्यक है। हमने देखा था कि ईसाई लोग आत्मा की उत्पत्ति मानते हैं, नाश नहीं मानते। मि. मैक्टेगार्ट कहते हैं कि यदि आत्मा बनाया गया तो प्रश्न होगा कि किस लिये बनाया गया? यदि प्रत्येक आत्मा नया पैदा किया जाता है और उसकी उत्पत्ति से पूर्व भी संस्कार-चन्द्र चल रहा था तो उस के उत्पन्न करने की क्या आवश्यकता थी?

"If the Universe got on without me a hundred years ago, what reasons could be given for denying that it might get on without me a hundred years hence."

इसलिये वह कहते हैं कि यदि आत्मा को अनन्त मानते हो तो अनादि भी मानो। और जब इस प्रकार आत्मा को अमरणधर्मा तथा अनादि भी मान लिया तब यह मानना चाहिये और मानना पड़ेगा कि प्रारम्भ से ही अनेकों आत्मा हैं, कोई आत्मा किसीसे पैदा नहीं होता।

"There seems, therefore, good reason for regarding plurality of lives as the least improbable alternative, even if we accept immortality without accepting pre-existence. But if pre-existence is also accepted, the case for a plurality of lives becomes stronger."

IX अब हम वर्त्तमान युग के दो और पाश्चात्य अन्वेषणों (observation) की ओर नज़र फेरते हैं। इनमें से प्रथम हैं अमेरिका के Dr. Sscripture (डा० स्क्रिप्चर) नामी एक मनोविज्ञान वेत्ता ने बहुत परिगणन के पीछे बतलाया है कि ऐसे पुरुष देखे गये जिन को प्रारम्भ २ में–बचपन में–तो गणित शास्त्र के कठिन से कठिन तथा लम्बे से लम्बा गुणा भाग आदि कण्ठ और थोड़े से समय में कर देने के कारण हम मेधावी (genius) कह सकते थे किन्तु जब वह बड़े हुए तब उन में वह शक्ति नहीं रही। उनके परिगणन का चित्र इस प्रकार से है :—

मेधावी बच्चों के नाम	अवस्था	कब तक शक्ति रही	अच्छी या साधारण-गुण
अम्पायर्	४	कुछ सालों तक बचपन में	बहुत उत्कृष्ट थी
बिडर्	१०	जीवन भर रही	अच्छी थी
कीलवर्न्	६	थोड़े वर्षों तक	साधारण मध्यम श्रेणीकीथी
डेस्	बचपन	जीवन भर रही	तीसरी श्रेणी की थी
गैव्स्	३	कुछ वर्षों तक	उत्कृष्ट
सैफ्फ़ई	६	,,	अच्छी थी
मि. वान आऔदयुटिका	६	,,	साधारण
बाट्ले	३	,,	अच्छी थी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(i) मि० बिडर की प्रतिभा जन्मभर रही किन्तु ज्यों २ वह बड़ा होता गया घटती गई। मि० F. R. S. उसके विषय में लिखते हैं कि-वह कण्ठ से ही सात २, आठ २ राशियों का लौगरिथम् पता लगा लेता था-कण्ठ ही से लम्बी२ राशियों के उत्पादक (factors) निकाल लेता था। उसे १७८६१ राशी उत्पादक निकालने को दी गई-उसने तत्क्षण उत्तर दिया कि ३३७×५३-किन्तु पूछा गया कि कैसे किया तब वह विधि (method) नहीं बता सका।

(ii) पादरी वाट्ले की प्रतिभा बचपन समाप्त होने के पूर्व ही लुप्त होगई थी। उसने अपना वृत्तान्त आप लिखा है:—"मुझ में कुछ विचित्र ही गणना-शक्ति थी। ५, ६, वर्ष की अवस्था में यह प्रकट हुई और ३ वर्ष तक रही। बड़े २ कठिन प्रश्न हर समय मेरे मस्तिष्क में रहते थे। कागज़ पैंसिल से प्रश्न हल करने वालों की अपेक्षा मैं शीघ्रतर हल कर लेता था, और जहां तक मुझे स्मरण है मैंने कभी अशुद्धि नहीं की; परन्तु जब मैं पढ़ने के लिये स्कूल गया तब वह शक्ति सहसा सर्वथा लुप्त होगई और मैं निरा मूर्ख का मूर्ख ही रह गया (Human personality-Myers. कृत से उद्धृत)

(iii) प्रोफ़ेसर 'सैफ़र्ड' को कालिज में ज्योतिष विषय पर व्याख्यान देने के लिये नियुक्त किया गया। उसे शक्ति बढ़ाने का अवसर भी दियागया किन्तु जहां १० वर्ष की अवस्था में वह बड़े से बड़े गुणे कण्ठ करलेता था अब बिलकुल कुछ नहीं करसकता।

(iv) ऐसे ही मि. वान आर् के विषय में डा. स्किप्चर कहते हैं कि ६ वर्ष की अवस्था में उस को गणितशक्ति प्राईभूत हुई परन्तु प्रश्नों को हल करने की विधि उसे स्वयं मालूम नहीं थी। प्रश्न बड़ी जल्दी हल करता था। कुछ सालों के पीछे वह लुप्त हो गई।

(v) मि. डेस की यह प्रतिभा जीवनभर स्थिर रही किन्तु अपनी भाषा के अतिरिक्त उसे अन्य किसी भी भाषा का शब्द तक नहीं आया। गणित में भी उत्पादक निकालने के अतिरिक्त और उसे कुछ नहीं आता था। उसे हैम्बर्ग के विश्वविद्यालय में गणित का प्रोफेसर नियत कियागया था और उस पद पर रह कर उसने कई उत्पादक निकाले हैं।

इन सब अद्वितीय उदाहरणों की व्याख्या करते हुए मि० मेयर्स कहते हैं कि हमें मानना पड़ता है पूर्व जन्म के गणित के प्रभाव उनके आत्मा में थे। वह उचित सम्पर्क पाकर जाग उठे। वह कहते हैं कि चेतना रूप आत्मा का ही एक अंश 'उपचेतना' (sub-conciousness) है। उसमें यह सब संस्कार दबेपड़े रहते हैं तथा अवसर पाकर स्मृति के रूप में उद्बुद्ध होते हैं। इसी उपचेतना का हम लिंग शरीर कह सक्ते हैं। यदि उन्होंने पूर्व जन्म में गणित का अभ्यास नहीं किया था तो यह प्रभाव कहां से आया? इसलिये पूर्वजन्म मानना पड़ता है।

X द्वितीय नवीन अन्वेषणा का उल्लेख वर्त्तमान युगके प्रसिद्ध विद्वानों में से एक विचारक "मैटरलिंक" ने अपनी 'दि अननोन गेस्ट् (The unknown guest) नामी ग्रन्थ में किया है।

"प्रथम २ जर्मनी में 'घोड़ों' पर शिक्षा का परीक्षण किया गया। विलहल्मवानआस्टन नामी एक साधारण पुरुष ने यह परीक्षण किया। उस के दिल में एक विचार था कि पशुओं में भी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

बुद्धि होती है। इन घोड़ों का नाम है 'एल्बर-फील्ड'। जनोवा युनिवर्सिटी के प्रोफैसर 'ई. क्लारपीड' ने इनका वर्णन इस प्रकार दिया है:- "उनके स्वामी ने उन्हें 'दायां, बांयां, शिखर-भाग, तथा तलभाग, इत्यादि कुछ एक भावों का ज्ञान कराके अङ्कगणित पढ़ाना प्रारम्भ किया। एक टेबल पर पहले एक फिर दो, तीन इस प्रकार कई छोटे २ पिन् रक्खे गये। तब वानआस्टन ने 'हैन्स' [घोड़े का नाम] के पास झुककर उसके खुरसे उनपर क्रमशः आघात कराये और साथ २ वह २ संख्या भी उच्चारण की। फिर इन पिनों के स्थान पर तख्ती पर लिखे हुए अंक रक्खे गये। परिणाम बड़े अश्चर्यजनक सिद्ध हुए। केवल खुर मारकर गिनती करलेना ही नहीं किन्तु छोटे २ प्रश्न भी वह निकाल लेने लगा।....."परन्तु हैंस यही नहीं कि केवल प्रश्न करता हो, वह पढ़ना भी जानगया, गान सीखगया, यहां तक कि स्वरों में भेद तक कर सकता था। उसकी स्मरण शक्ति अपूर्व थी। प्रत्येक सप्ताह की प्रत्येक तिथि उसे याद रहती थी। तात्पर्य यह कि बुद्धि गम्य सभी बातें जो १४ वरस का एक लड़का कर सकता है वह करता था"। [पृ० १८२,८३]

'आस्टन' के इन परीक्षणों ने बड़ी खल-बली मचादी। जन साधारण उसके विरुद्ध हो गये कि पशुओं को भी मनुष्य के समान ही बना दिया। किन्तु उसकी मृत्यु के उपरान्त 'क्राल' नामी एक अन्य विद्वान् ने यही परीक्षण किया। उसने 'मुहम्मद तथा जरीफ' नामी दो अरबी घोड़ों पर परीक्षण किया। यह पहले घोड़े से बढ़कर निकले। इस पुरुष की शिक्षा शैली अच्छी थी। १५ दिन में ही वह घोड़े योग क्षण सीखगये। योग क्षण के चिन्हों तथा इकाई दहाई के भेद को समझने लगगये। ४ दिन के पीछे गुणा भाग भी सीखगये और अगले मासों में वर्गमूल घनमूल भी निकालने लग गये और पढ़ना तथा हिज्जे करना भी भली प्रकार जानगये। इनके लिये निम्न प्रकारकी विशेष वर्णमाला बनाई गई है:—

	1	2	3	4	5	6
10	E	N	R	S	M	L
20	A	H	L	T	A	CH
30	I	D	G	W	J	SCH
40	O	B	F	K	O	
50	U	V	Z	P	V	
60	E.G	A U	E.U	X	2	

'ई' अक्षर बतलाने के लिये वह एक वार दायें पांव के खुर को, और एक वार बायें को पटकेंगा। इसी प्रकार 'L' के लिये वार२ बांये पांव को और तीन वार दांये को.....इत्यादि। उनको यह वर्णमाला इतनी कण्ठ है कि बहुत ही कम कभी अशुद्धि करते होंगे। उनके सामने जो बातचीत होती है, दोनों ही वह सारी की सारी सुना सकते हैं। दर्शकों के नामों के हिज्जे करते हैं" [पृ० १८९] "गन्ध, रङ्ग, शब्द आदि में भी वह परस्पर विवेक करते हैं, घड़ी में समय देखते हैं, फोटो पहचानते हैं, ज्यामिति की आकृतियां जान लेते हैं। कितने ही बड़े २ विद्वानों को इस घटना ने अचम्भे में डाल दिया है। डा. क्लारफीड कहते हैं कि यह 'The most sensational event that has ever happened in the Psychological world." [पृष्ठ १९१]

"इस प्रकार के चार घोड़ो को एकत्र शिक्षा दी गई है। और उनमें शिक्षा का क्रम समान रहते हुए भी मनोवृत्तियां तथा योग्यताओं में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ऐसे ही परस्पर अन्तर है जैसा कि हम मनुष्यों में पाते हैं (पृ. १९८)" ॥

"प्रश्न करने में वह कभी २ अशुद्धि भी करते हैं। ४७ को प्रायः ७४ लिख जाते हैं। किन्तु यदि उन्हें यह सुझा दिया जाय तो स्वयं ठीक कर लेते हैं।" 'जरीफ' 'मुहम्मद' की अपेक्षा कम गणित जानने वाला है किन्तु यदि किसी दिन उसे यह कह दिया जाय कि आज बस यही एक काम है और अमुक प्रश्न के हल करने पर अमुक भोजन इनाम में मिलेगा, तो वह प्रश्न को बड़े ध्यान से, शोक से तथा ठीक २ करेगा (मानो कहीं मनुष्य बच्चों की पाठशाला का दृश्य देख रहे हों)" (पृ. २१७) ॥

"गणितज्ञों को पता है कि ६ अंकों की राशी का चौथा मूल निकालने में १८ वार गुणा, १० वार घटाना, तथा ३ वार भाग करना पड़ता है। परन्तु घोड़ा ऐसे ३१ प्रश्न ५, ६ सेकण्ड में कर लेता है (पृ. २५९)। "क्राल का यह दावा है कि घोड़ों की मस्तिष्क तथा इच्छाशक्ति ठीक वही काम करती हैं जो मनुष्य की करती हैं॥"

"डा. एच् हेमल्, साक्षी देते हैं कि उन्होंने परीक्षा ली है। मि. क्राल उस समय बाहर टहलने चले गये और उन्होंने कई प्रकार के प्रश्न किये। ९ तथा ३ के अङ्कों से अङ्कित दो कार्ड एक टेवल पर रक्खे और कहा कि योग करो- उत्तर मिला १२। कहा गुणा करो, उत्तर मिला- २७। तब उस विद्वान् ने एक कार्ड पर लिख कर रक्खा—४√७८९०४८१—मुहम्मद ने उत्तर दिया-५३. (पृ. २२९)

"६ घोड़ों में से केवल २ ही घोड़े ऐसे हैं जिन्हें कुछ न्यून शक्ति प्राप्त है। इन्हें हम मूर्ख (idiots) कह सकते हैं। ऐसे ही दृष्टान्त मनुष्यों में पाये जाते हैं"। यह सारी घटना अपने आप पुकार २ कर कह रही है कि पूर्व जन्म-पुनर्जन्म का सिद्धान्त ही ऐसी घटनाओं की व्याख्या कर सकता है, अन्य नहीं। इस घटना से 'अवैदिक पुनर्जन्म (Reincarnation) का सिद्धान्त भी खण्डित हो जाता है। क्योंकि यह घोड़े अवश्य पूर्व किसी जन्म में मनुष्य रहे होंगे अन्यथा इतने प्रवीण कैसे हुए? अस्तु। इस घटना को देकर अन्त में मि. मैटरलिंक आशा दिलाते हैं कि 'हमारे पश्चिम देशों में आत्मिक विज्ञान (Psychical researches) की ओर अभी थोड़े ही समय से प्रवृत्ति हुई है। हमारे पास ऐसे साधन हैं जो कि एशिया के विद्वानों के पास कभी नहीं थे। अतः निश्चय हम कुछ समय में उन लोगों से बढ़कर इस विषय में उन्नत परिणाम दिखलायेंगे"। अच्छा है-हम भी उस दिन की बड़ी शान्ति तथा उत्सुकता से प्रतीक्षा करेंगे ॥

इस प्रकार हमने देख लिया कि पश्चिम में 'पुनर्जन्म सिद्धान्त' का प्राचीन समय से लेकर अभी तक अखण्ड राज्य रहा है ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मातृ-भाषा की अपील ।

लेखक—श्रीयुत् डाक्टर रलाराम ।

मेरे बिना न होगा कोई भारती भी हिन्दी ।
हिन्दी हमारी भाषा हिन्दी हमारी जाती ।
पर शोक अनेक जन को हिन्दी नहीं है आती ॥
यह ऐक्य मूल मंतर भारत-मही का हिन्दी ।
हिन्दू मुसलमान हिय को लो यह मिलाती हिन्दी ॥१॥

मेरे बिना न होगा.....

हिन्दी कहे सुतों से मुझ को बनालो अपना ।
मेरे बिना न होगा कोई भारती भी हिन्दी ॥
हिन्दू हो या मुसलमान हो पारसी इसाई ।
जो देश-भक्ति भावे बन जावो सारे हिन्दी ॥२॥

मेरे बिना न होगा.....

थे खानखाना हिन्दी अब्दुररहीम हिन्दी ।
मीरा मुनीस अब भी देखो हैं सच्चे हिन्दी ॥
कितने कुरैशी हिन्दी करामत दिखा रहे हैं ।
है शोक हिन्दू जनता अब सो रही है हिन्दी ॥३॥

मेरे बिना न होगा.....

भाषा तो देश की है मत हो कोई कहीं का ।
देशोन्नति के हित तुम सीखो सभी ही हिन्दी ॥
बंगला हो या मराठी पंजाबी मंद्राजी ।
निकले सुमंजु मुख से सब के यह पाठ हिन्दी ॥४॥

मेरे बिना न होगा.....

हिन्दी में कार्य करना जिस को नहीं है आता ।
अरु मातृ-भाषा सेवा जिसको नहीं है भाता ॥
फिर भी अगर वह आकर कहता है मैं हूं हिन्दी ।
यह दो मुझे बता तुम फिर कौन है न हिन्दी ॥५॥

मेरे बिना न होगा.....

प्रातः से सांझ तक तुम मिल्टन पढ़ो पढ़ाओ ।
[illegible] ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

टेनिसन अरु थेकरे से मन को सदा लगाओ। ७
फिर भी कहे चलो तुम हम हैं भले ही हिन्दी ॥६॥
मेरे बिना न होगा.....

पबलिक में बोलना कुछ जो पड़ गया कहीं पर।
गिटपिट वहां पै छानी यह खूब ठाठ हिन्दी ॥
कहती हूं फिर मैं तुम से अब तो संभल के चलना।
अरु मेरे कार्य पथ से अपना न पग फिसलना ॥७॥
मेरे बिना न होगा.....

हिन्दी हैं हम वतन है यह हिन्द देश अपना।
यह देवतों की जाति नागरि बनेगी हिन्दी।
फिर अन्य देश सारे आयेंगे सीखने को।
अरु शिल्प अरु कला भी इस देश की हो हिन्दी ॥८॥
मेरे बिना न होगा कोई.....

हे "राम" ऐसा वर दो होवें सभी हम हिन्दी।
अरु मातृ सेवा करके सोवें सभी हम हिन्दी ॥
जो जागते हैं हिन्दी सोते हैं तो भी हिन्दी।
मरकर रहे यह मिट्टी बस भारती अरु हिन्दी ॥९॥
मेरे बिना न होगा.....

जगद्गुरु श्री १०८ शङ्कराचार्य का गुरुकुल कांगड़ी में शुभागमन।

लेखक—श्री पण्डित कन्हैयालाल शास्त्री।

सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने पर ठीक २ पता लग जायगा कि कर्म साधन, भक्तिसाधन, ज्ञानसाधन, ये तीनों ही जीव-जगत् को कल्याण मार्ग में अग्रसर करने के लिये समशक्ति से काम लेते हैं। और साथ ही मैं यह भी मानता हूं कि कर्म का अधिकार सब से विस्तृत और परमावश्यकीय है। कारण कि कर्म के साधन जिस प्रकार स्थूल से अति स्थूल हैं उसी प्रकार कर्म के संस्कारों की शक्ति सहनीय तथा इन्द्रियातीत है; किन्तु कोई भी कर्म कैसा ही क्यों न हो, चाहे शुभ कर्म हो, अथवा अशुभ कर्म, कर्ता अपनी योग्यता के अनुगुण कर्मधारा के कल्पान्त पर्य्यन्त तज्जन्य इष्टानिष्ट फल का भोगी अवश्यमेव बनता है। यही कारण है कि मोहनिशा में प्रसुप्त, प्रकृतिमाता के करकमलों के क्रीड़ाकुमार भी अपने कल्याण-मार्ग की दिशा में ईसत् दनन्पान करते समय सुकृतवश

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यदि कहीं "कर्म वन्धनं हि वन्धनं सौम्य" इस अव्यक्त मधुरनाद को सुन लेते हैं तो सहसा ही उनकी निद्रा भङ्ग हो जाती है। सञ्चित कर्मों के फल भोग के लिये सम्प्राप्त पुनः पुनः जीवन मरण की तीव्रयातना एक विकरालरूप धारण करके उनके सामने नृत्य करने लग जाती है। उस समय प्रत्येक साधक को ही

आत्मानमुपासीत
ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः

इन्हीं श्रुति सिद्धान्तों की शरण लेकर अपना कल्याण-मार्ग निश्चित करना पड़ता है। कारण कि उपासना के द्वारा परमात्मा की आनन्द सत्ता और ज्ञान के द्वारा उनकी चित्सभा की उपलब्धि हुवा करती है। इसी विषय को पुष्ट करने के लिये अनेक प्रमाण हैं। यथा—

तद् विज्ञानेन परिपश्यन्ति धीराः
आनन्दरूपममृतं यद् विभाति ॥
ज्ञानप्रसादेन विशुद्ध सत्व
स्नतस्तु तं पश्यते निष्फलं ध्यायमानः॥१॥

वस, इसी जटिल समस्या को हल करने के लिये (कर्म वन्धन से विमुक्त होने के लिये) श्रुति भगवती एक स्वर से

पुत्रैषणाया वित्तैषणाया लोकैषणाया
व्युत्थापाथ भिक्षाचर्यं चरन्ति ॥

इत्यादि उपदेश वाक्यों द्वारा, पुत्रैषणा, वित्तैषणा, लोकैषणा इन तीनों एषणाओं से विमुख वीतराग मुमुक्षु पुरुष के लिये सन्यास धर्म का उपदेश करती है, किन्तु अत्यन्त शोक की बात यह है कि आज कल साधु व सन्यासियों की संख्या आवश्यकता से अधिक और शास्त्र के अनुशासन के विपरीत इतनी बढ़ गई है, और बढ़ती जा रही है जिसके स्मरणमात्र से एक विवेकी जन का हृदय सहसा ही विदीर्ण होने लग जाता है। इन महानुभावों की यह बढ़ती, देशोन्नति की ही बाधिका नहीं वरन् जाति तथा धर्म की महत्ता को भी थोड़े ही समय में रसातल को पहुंचा देगी। इस विषय में मैं बाबा लोगों को उतना अधिक दोषी नहीं मानता हूं जितना कि भोले भाले गृहस्थों को। यदि वे लोग योग्य तपःस्वाध्यायरत, जितेन्द्रिय, ज्ञानी, और निष्कामव्रतपरायण साधु सन्यासियों का ही विशेष सम्मान एवं अयोग्य, प्रकृतिपदाम्बुजपूजापरायण साधु सन्यासियों का तिरस्कार करते रहते तो अयोग्य व्यक्तियों की संख्या इतनी बढ़ कर हमारे देश, जाति, तथा धर्म का मुख इस प्रकार कलङ्कित न करती। अतः अयोग्य व्यक्तियों का तिरस्कार और योग्य व्याक्तियों के पुरस्कार करने की ओर हिन्दु जाति का विशेष ध्यान रहना चाहिये। मैं आज आप लोगों का उन आदर्श तपोराशिके साथ परिचय करा रहा हूं जिन्हों ने भारत से अविद्यान्धकार के हटाने और धर्ममूल के सुदृढ़ स्थापन में समस्त धर्माचार्यों से अधिक भाग लिया है। आप लोगों को स्मरण होगा कि जिस समय भारतवर्ष में धर्म का विल्कुल ह्रास हो रहा था, शास्त्र विमुख विपथगामियों के लीलानाट्य से मोहित होकर जिस समय इस पवित्र भारतवर्ष के धर्मप्राण हिन्दुगण एक गम्भीरगर्त में गिरने जारहे थे, जिस समय इन विश्वासी भारतवासियों की धर्ममयी जीवन-नौका को अगम गम्भीर अज्ञान महासागर के अनुकूल प्रलोभनरूप भीषणभ्रमरों से पार करने में समर्थ कोई भी चतुर कर्णधार नहीं था, जिस समय बहुसंख्यक धर्म जीवी हिन्दुगण "अहिंसा परमो धर्म," इस भोज्य लालसा से अलसीले होकर अपने सुरम्य जीवन को कपट वंशी का शिकार बना चुके थे। जिस समय इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वैदिक-धर्म-कल्पद्रुम का मूल बिल्कुल जीर्ण शीर्ण हो गया था, कोई भी इसका अवलम्बन शेष नहीं रह गया था। उसी समय भारत के सौभाग्यवश चिरकाल से मोहनिशा के अज्ञानान्धकार में पड़े हुये आंखे मसल मसल कर देखने पर भी अपना गन्तव्यमार्ग निश्चित करने में असमर्थ, एक मनोरथ इन पवित्र आर्य सन्तानों के अज्ञानतमोवृत हृदयाकाश को निर्मल करने तथा इनको पुनः धर्म-कर्म-क्षेत्र में पदार्पण कराने के लिये किसी अनिर्वचनीय पवित्र प्रदेश में त्रिकालदर्शी लोकोत्तर शक्तिशाली विद्याभास्कर भगवान् शङ्कराचार्य का उदय हुवा था। जिन्होंने अपनी दैवीशक्ति के द्वारा विमतवादियों का मुखमर्दन करके श्रुति-सम्मत-धर्म का संस्थापन, तथा भारतवासियों के नीरस हृदय प्रवाह में एक वार फिर कहीं पवित्र प्रेम की धारा कहीं भवभय-हारिणी विमल-विज्ञान की धारा, कहीं अपनी अनुपम कार्य-कुशलता, क्षमता, तथा धर्म-मय-जीवन के आदर्श द्वारा धरातिशायिनी धर्मधारा को प्रवाहित कर दिया था। साथ ही उन्होंने दाम्भिक पाखण्डी प्रवञ्चक-धर्म-धूर्तों से वैदिकधर्म कल्पद्रुम को सुरक्षित रखने, और भी विविध प्रकार के अन्य आक्रमणों से बचाने, तथा उसके मूल को सुदृढ़ बनाने के लिये पूर्वदिशा जगन्नाथपुरी में गोवर्धनमठ, पश्चिम द्वारकाक्षेत्र में शारदामठ, उत्तर वद्रीनारायण के समीप में ज्योतिर्मठ तथा दक्षिण में मैसूर राज्यान्तर्गत शृङ्गगिरिमठ, इन चारों मठों को भारतवर्ष के चतुर्भागों में बड़ी चतुरता के साथ स्थापित किया था। और चारों मठों में ही अपने प्रतिनिधिस्वरूप चार योग्य शिष्यों को सर्वतोभावेन धर्म की सुरक्षा करने के लिये नियुक्त किया था। उनके लीला संवरण के अनन्तर भी परमगुरु, श्रीशङ्कराचार्यजी के आदेशानुसार तब से ही उन्हीं चारों मठों में गुरु-परम्परागत अद्भुत-शक्तिशाली कोई न कोई विद्वान् शङ्कराचार्य की उपाधि धारण करके उस गुरुतर धर्म के भार को अबतक पूर्ववत् बड़ी योग्यता के साथ वहन करते आये हैं। जिनमें से इस समय में आप लोगों का परिचय शारदामठ के श्रीशङ्कराचार्य के साथ करा रहा हूं। यद्यपि मैंने पहले आर्य मित्र आदि पत्र पत्रिकाओं तथा जनश्रुति द्वारा ही आपकी मधुर-कीर्ति-गीति को सुनकर समस्त धर्माचार्यों के जीवन-पोत के पथ प्रदर्शन के लिये ध्रुवतारा की भांति इस वैदिक धर्म की महत्ता तथा आपके सदृश भारत-भूषण धर्माचार्य की सम्प्राप्ति के अभिमान से ही हृदय में फूला नहीं समाता था; किन्तु भगवान् की असीम दया से जो कुछ हृदय में शेष वाञ्छा थी वह भी शीघ्र ही पूर्ण हो गई। कारण कि वही शारदामठ के श्री शङ्कराचार्य जी महाराज आगरा आदि स्थानों को अपने शुभागमन से पवित्र करते तथा उन २ स्थानों के सौभाग्यशाली सुजनों को अपनी धर्ममूर्ति का दर्शन देते तथा सुधामयी सरस्वती से उनकी चिरकालीन हृदय-पिपासा को शान्त करते हुए आप हरद्वार क्षेत्र में पधारे। उस समय आपका निवास स्थान हरद्वार के सुप्रसिद्ध गुरु-मण्डलाश्रम में था। आपके आगमन का शुभसन्देश पाकर मैं गुरुकुल कांगड़ी के महाविद्यालय (कालेज) विभाग के दर्शनाचार्य न्याय वेदान्ततीर्थ श्री पं० योगेन्द्रनाथ जी भट्टाचार्य के साथ वहीं गुरुमण्डलाश्रम में आपके दर्शन करने के लिये गया। यहां पर सबसे मार्के की बात यह है कि जिस समय मैं अपने निर्निमेष नयनों से श्री महाराज के मधुरदर्शन का शीतल-शान्त-रस पान कर रहा था उसी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समय श्री युक्त भट्टाचार्य जी ने न्याय वेदान्त विषयक गूढ़ से गूढ़ विषम से विषम कुछ प्रश्न उनके समक्ष उपस्थित किये, जिनका उत्तर आपने अनायस ही हंसते २ दे दिये। उस समय आपकी नवनवोन्मेषिणी प्रतिभा का अपूर्व विलास देखकर मैं मन्त्रमुग्ध की भांति अवाक होगया। मेरा चञ्चल मन न जाने किस विचित्र बुद्धि-निकेतन की मुखच्छवि देखने के लिये अचल होगया। उस समय वहीं पर गुरुकुल कांगड़ी के मुख्याध्यापक, अध्यापक उपाध्याय तथा कालेज के कुछ ब्रह्मचारी भी उपस्थित थे। सब ही आपकी अपूर्व प्रतिभा को देखकर चकितचकित थे। उस मनोहर समय में सभी की एकमात्र यही हृदयाकांक्षा थी कि यदि महाराज अपने दया दृक्पात के पात्र कुलवासियों को बनाते हुए एक दिवस वहां भी पधारने का कष्ट उठाते तो बड़ा अनुग्रह होता।

जाकर जापर सत्य सनेहु।
सो तिहिं मिलै, न कछु सन्देहु॥

इस तुलसीदास की कहावत के अनुसार इतने हृदयों के प्रेमाग्रह को कौन टाल सकता है? अनन्तर साहित्यपरिषत् के निमन्त्रण को आपने स्वीकार कर लिया और दूसरे दिन ठीक २॥ बजे आप गुरुकुल कांगड़ी पहुंच गये। उसी समय आपको परिषद् की तरफ से एक बहुत ही सुन्दर अभिनन्दन पत्र दिया गया, जिसमें आपकी कुलवासियों को दर्शन देने की दया, आपका अपूर्व त्यागभाव तथा अन्य भी लोकोत्तर कृतियों का बड़ी सुन्दरता के साथ वर्णन था। अनन्तर उपदेश देते हुए आपने अपने ओजस्वी मधुर व्याख्यान में "पुमर्थाश्चत्वारः" इस विषय को इतनी सुन्दरता के साथ समन्वित किया जिसका वर्णन मेरी लेखनी शक्ति के सर्वथा अतीत है। लगभग २॥ घण्टा ऐसे विषम विषय के ऊपर धारावद्ध, परिमार्जिति सुललित संस्कृत में आपने व्याख्यान दिया। इसके बाद अधिक से अधिक आध घण्टा विश्राम करके पुनः आपने शिक्षा विषय के ऊपर अंग्रेजी में व्याख्यान देना आरम्भ किया। उस समय समस्त उपस्थित जनता एक अल्प-वयस्क ब्रह्मचारी को लेकर उच्चकोटि के उपाध्याय पर्य्यन्त सभी इतने मुग्ध तथा शान्तभाव से आपका व्याख्यान सुन रहे थे कि मानों सब ही किसी आनन्द धाम के अनुपम अङ्क में आसीन होकर पीयूष-पान के द्वारा अपने आपको भी भूल गये हैं। इस समय पुनः आपने ३॥ घण्टा अविश्रान्त रूप से अपनी मधुर वक्तृता के द्वारा लोगों को कृतार्थम्मन्य बनाया। एक विपुल प्रवाहवती गम्भीर महानदी में उसकी ललित लोल लहरिकायें एक दूसरे से स्पर्धा करती हुई एक के ऊपर दूसरी, दूसरी के ऊपर तीसरी एवंरूपेण अपने सम्भ्रान्त लीलागमन से जिस प्रकार प्रकृति की सुन्दरता के पक्षपाती जनों का मनोमोहन करती हैं, ठीक उसी प्रकार श्री महाराज के दोनों व्याख्यान में ही मधुर मृदुल मञ्जुल पदावली एक दूसरी से शास्त्र-रहस्य विकासन की स्पर्धा करती हुई अपनी धारावाहिकगति से क्या प्रस्तुत पण्डित-मण्डली, क्या उपाधिधारी उपाध्यायगण, क्या कोमल हृदय कुल-ब्रह्मचारीवृन्द, क्या शेष श्रोतृसमूह सभी के विश्वस्त हृदयों को अपने करकमलों के कन्दुक बना रही थीं। इस प्रकार आपने एक समय में संस्कृत तथा अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं को मिलाकर पूरे ६ घण्टा व्याख्यान दिया। इतने अधिक समय तक बोलते रहने पर भी आपके प्रतिभोद्भासित मुखमण्डल पर विवर्णता, श्रान्ति, क्लान्ति आदि का नामो-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निशान भी नहीं था। अच्छा होता कि मैं श्री महाराज के सुरम्य व्याख्यानों का सार भी अपने प्रिय पाठकों के सामने उपस्थित करता किन्तु लेख के बढ़ जाने के भय से तथा उन व्याख्यानों की कुछ दो एक बातें गुरुकुल कांगड़ी से प्रकाशित "श्रद्धा" पत्रिका में निकल जाने के कारण मैं इस समय उस कार्य से विरत हो रहा हूं। यद्यपि मुझे आशा है कि आप लोग इस लेख से मेरे उदारचरित चरितनायक की अलौकिक योग्यता से पूर्णरूपेण परिचित होचुके होंगे तथापि आवश्यक है कि मैं अपने टूट फूट शब्दों से आपकी योग्यता का कुछ गुणगान करलूं। आप संस्कृत भाषा के धुरन्धर तथा मार्मिक विद्वान् होते हुए भी आंग्ल भाषा के एक अद्भुत विद्वान् हैं। आपने अंग्रेजी गणित तथा फिलास्फी तीनों ही उत्कृष्ट विषयों में प्रथम कक्षा में एम. ए. (M. A.) की उपाधि-परीक्षा पास की है। आपने बहुत दिनतक बड़ी योग्यता के साथ सर्व-प्रिय होकर राजामुन्द्री के नेशनलकालेज (National College) में प्रिन्सिपल का कार्य वहन किया है। आप उस समय उक्त कालेज में धर्मार्थ ही कार्य करते थे। आपकी धर्ममयी-प्रवृत्ति का परिणाम यह हुवा कि आप शीघ्र ही कलि-कलुषित हृदयों के कल्याण के लिये निवृत्ति पथ के पथिक बन गये और श्री शारदामठ के जगद्गुरु श्रीशङ्कराचार्य श्री त्रिविक्रमतीर्थ महाराज के श्रीचरणों में सन्यास धर्म को ग्रहण करके उनके मुक्तिधाम के गमनानन्तर स्वयं श्री महाराज ने जगद्गुरु श्री शङ्कराचार्य की उपाधि को धारण किया। तब से ही आप श्रौतधर्म के प्रचार में अथक परिश्रम कर रहे हैं। आपके परिश्रम का फल बहुत कुछ हो चुका है, तथा हो रहा है। आपकी इस समय प्रौढ़ावस्था है। आप अपनी यात्रा में कुछ योग्य शिष्यों तथा आवश्यक वस्तु जात के सिवाय कुछ नहीं रखते हैं। गुरुकुल के चमत्कृत पुस्तकालय में आपके व्याख्यान के प्रथम आपकी शिष्यमण्डली ने बड़े ही मधुर स्वर से वेद का गान किया था। इसके सिवाय आशुकवि श्री महाराज ने भी अपने व्याख्यान के आरम्भ में देववन्दना विषयक सद्यः स्वरचित बहुसंख्यक श्लोकों का मङ्गल पाठ किया था। भगवान इस दीन हीन भारत के कल्याण के लिये कोरे गोरे वस्त्रों को गेरुवे रङ्ग में बोरे कञ्चन कामिनी से नेहनाता जोरे हुए इन बाबा लोगों को यहां से सदा के लिये विदा करके एक बार फिर इसको अपने करुण-कटाक्ष निरीक्षण द्वारा स्वर्ग-सुन्दर, स्वर्गीयजनों का स्तुति भाजन बनाते हुए ऐसे ही त्यागमूर्ति, विद्यानिधि, लोक-कल्याण-कल्पतरु सन्यासि-रत्नों को प्रदान करें। शुभम्। ओ३म्

शान्तिः शान्तिः शान्तिः।

काल महिमा।

काल कपालिक कैसे कहैं तव केलि कथा न कछू कहि जाती।
क्रूर, कुरूप, कलङ्की, निशङ्क, न रङ्क, न राव गनै जगघाती॥
भोगी, सुयोगी, संयोगी, वियोगी विकात तेरी विपणी इक भांति।
"श्री हरि" दीन अदीन न जानत लूटत है सब की नित थाती॥ १॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पृथ्वी नाटक ।

(गतांक से आगे)

लेखक—श्रीयुत प्रिंसिपल कुँवरसेन यम. ए. ला कालेज लाहौर

(भूमिका)

ब्रह्मांड नाटक में पृथ्वी को सूर्य की पुत्री और इसी प्रकार नवग्रहों को पुत्र पुत्रियां कल्पित करके ज्योतिष-विद्या के सिद्धान्त एक कहानी के रूप में वर्णन किये जा चुके हैं । पृथ्वी कुमारी ने प्रेमवश होकर सूर्य महाराज से प्रार्थना की थी कि मंगल कुमार से स्वयंबर रचाने की आज्ञा दी जाय, पर सूर्य महाराज ने इसे अस्वीकार कर दिया था । इससे उसके हृदय पर इतना आघात पहुंचा कि पृथ्वी सुध बुध खो बैठी। परन्तु कुछ देर पश्चात उसमें धर्मभाव की जागृति हुई और उसकी तत्त्वदर्शी आंखें खुल गईं । उसने प्रत्यक्ष देख लिया कि ब्रह्मांड भर में सब कार्य नियमानुसार होते हैं और विकास और विनाश का तार बंधा हुआ है जो खुलता और सिमटता रहता है ॥

अब इस नाटक में उसी अलंकार रूप में भूगोल विद्या की बातें पाठकों के मनोरंजन के लिये प्रस्तुत की जाती हैं ।

स्टेज (रंगमंच) अब आकाश से उतर कर पृथ्वी पर आता है । नाटक के पात्र तारागण के स्थान पर पृथ्वी की जड़ चेतन वस्तुऐं होंगी, जैसे-पर्वत, सागर, वायु, अग्नि इत्यादि, और जो कार्य या अभिनय वे करेंगे उसे कोई प्रकृति का खेल समझना चाहिये ॥

प्रथम दृश्य में पृथ्वी को अपने इष्टदेव सूर्य भगवान की उपासना करते हुये दिखाया गया है, जिसका तात्पर्य यह है कि सूर्य को पृथ्वी से सब कुछ मिला--अग्नि, वायु, जल, वनस्पति, जीव जंतु सब सूर्य की कृपा के फल हैं । भूगोल-विद्या और ज्योतिष से पता लगता है कि पहिले पृथ्वी बहुत शीघ्रता से घूमती थी परन्तु अब धीरे २ चलती है जिससे दिन मान और साल अब बड़े होते जाते हैं । यही पृथ्वी की गति का न्यून होना पूरी शान्ति का अभाव है । देववाणी में भविष्य का प्रतिबिम्ब दिखलाया है कि मनुष्य जाति सर्वोच्च पद प्राप्त करेगी ।

दूसरे दृश्य में ज्वालामुखी पर्वतों की कार्य शैली का चित्र प्रदर्शित किया गया है जो भूगोल विद्या के अनुसार पृथ्वी के पहिले पहिल इतिहास में प्रतीत हुआ ।

ज्यूं २ मिट्टी की तह अग्नि के गोले पर जमने लगी त्यों २ भीतर की गर्मी जो पहले समस्त ब्रह्मांड में फैल सक्ती थी भीतर ही भीतर रुकती और बंद होती गई । यद्यपि मिट्टी और पत्थर को अग्नि पिघला सक्ती है तथापि वे गर्मी को बहुत कुछ रोक लेते हैं । जब ज्वालामुखी पर्वत फटने लगते हैं तो भूचाल आते हैं मानो पृथ्वी थर २ कांपती, बिजली चमकती और कड़कती है, बादल गरजते हैं, लावा बह निकलता है, जो मानों पर्वतों का रुधिर है । यह जिधर बहता है वहां सब कुछ भस्म कर देता है, वनस्पतियों का सत्यानाश कर देता है; परन्तु यह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

हरियाली ही है जो पर्वतों की कन्दराओं को ढांप लेती है, इसलिये हरियाली को मरहम पट्टी करने वाली बताया है जो मानों पर्वत के घावों को अच्छा करती है ॥

दृश्य नं० २।

[अंधेरा वन्दीगृह, कई पंदे रंगविरंग आगे पीछे पड़े हैं, उभरे हुए गाल, मोटे होंठ, बेडौल शरीर भीमकाय एक काला देव बाहर सोया हुआ है]।

अग्नि देवी—कैदखाने के अंदर सूक्ष्म लाल पीले वस्त्र पहने गाती आती है–

सूरज महाराज की प्यारी। गत तेरी बनी है न्यारी॥
बंदी घरमें बंद पड़ी है। बोझ है सिर पर भारी॥
क्रोधसे तेरे डरते हैं सब। होगया तुझको क्या री॥

मैं भी अच्छी फंसी। सूरज महाराज के पास जब तलक रही ब्रह्माण्ड में स्वच्छन्द फिरती थी, अब उनका कहा मान कर पृथ्वी के वश में आगई। इसने तो मुझे बांध ही लिया है। पहाड़ देव सा भूत मेरे ऊपर पहरा लगाए पड़ा रहता है। न जाने इसका कलेजा पत्थर का है या लोहे का? इतने कड़े बंधन में रखता है कि कहीं निकलने नहीं देता। क्या करूं सूरज महाराज के क्रोध से डरता हूं, नहीं तो यह है क्या चीज़? इसको फूंक मार कर उखाड़ फेंकूं। इसका ऐसा पतला हाल कर दूं कि याद ही रक्खे। (पहाड़देव को ठुकराती है)

पहाड़देव—ऊंह! हम को कौन ठोकरें लगाता है? (आंखें बंद।

अग्निदेवी फिर उसको ज़ोर से हिलाती है।

पहाड़देव—हो! हो! कौन है? हम को आराम करने दो।

अग्नि—उठ, रस्ता छोड़!

पहाड़देव—हैं! हम से हंसी दिल्लगी करने का परिणाम बुरा होगा। यदि हम उठे तो बड़ी बिपत्ति आ जायगी। (उच्च स्वर से) दुनिया में उत्पात मच जायगा। (फिर आंखें बंद कर लेता है और खुर्राटे लेने लगता है)

अग्निदेवी उस को फिर हिलाने लगी थी कि चपला और चम्बका दौड़ती आ गईं, एक चमक सी होगई।

(दोनों सूक्ष्म व चमकीले वस्त्र पहने हुए हाथ में § और U की शकल के शस्त्र लिए हुए हैं)

चपला—क्यों देवी! क्या बात है? आज तुम्हारा बदन लाल नज़र आता है, कुछ गरमाई हुई सी मालूम होती हो, किसी ने क्रुद्ध कर दिया है क्या?

अग्नि—कोई बिगड़े न तो क्या करे? कारावास किस को अच्छा लगता है, और फिर इस दुष्ट काले भूत के पहरे में। (उस को फिर ठुकराती है) यह चौकीदार है! दिन रात अफ़ीमचियों की तरह पड़ा सोता रहता है, हिलता है न जुलता और कहने को पहरा दे रहा है। ऐसे निकम्मे दुष्ट मनुष्य के वश में रह कर किस का जी नहीं घबराता?

पहाड़देव—यह कोलाहल कैसा है? क्या कोई अराजक सभा तो नहीं हो रही है? (आंखें मलता हुआ लेकिन लेटे लेटे) ..... खूब! चिमगादड़ों का जमघटा है!

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अग्नि—इस का हृदय भी पत्थर और इस के शब्द भी पत्थर।

चपला—अरे तेरी बुद्धि पर पत्थर तो नहीं पड़ गए कि सूर्य जाई देवियों के सामने इस तरह बोलता है। तेरी पसलियां तो अग्नि देवी इतनी दफ़ा मरोड़ चुकी हैं। तू अब भी अपनी ही हांके जाता है।

पहाड़देव—ओफ़ो! यही बात है! यह तितिलियां मुझ को भय दिलाती हैं। (जुगनू) कोशिश करते हैं कि विशाल महल को तोड़ कर नौ दो ग्यारह हो जांय (गाता है)—

हम लोग हैं अफ़ीमी जब रंग जमादेंगे।
चपला! तेरे नशे को मिट्टीमें मिलादेंगे॥
तू हमसे बहादुर है हम तुमसे बहादुर हैं।
पीनग से ज़रा चौंके तो फिर तुझको बतादेंगे॥
हैं गोलियां खाने की दिन रात हमें आदत।
अफ़ीम की तू डिबिया देखे, तो दिखादेंगे॥

यह खबर नहीं कि यदि मेरी ऊंगली हिली तो आपत्ति आजायगी। मैं भी आखिर पृथ्वी की पसली से निकला हूँ। अरी पिद्दिओं! तुमने मुझको क्या समझ रक्खा है?

चपला—अरे भोंदू तू जानता नहीं कि यह देवी शक्ति-स्वरूप है। इसको यदि क्रोध आजाय तो तेरी हड्डियां चूर चूर करदे, तुझे मोम की तरह पिघलादे, तेरा चिन्हमात्र भी न छोड़े। इसके आगे तू चीज़ क्या है?। सुन यह राग भी इसी का गाया जारहा है॥

देववाणी—

सूरज से तुम ने जन्म लिया।
पृथ्वी में आकर बास किया॥
सब मित्रों का उद्धार किया।
शत्रु का सत्यानाश किया॥
जो सख्त था उस को नरम किया।
जो सर्द था उसको गरम किया॥
जो ऐंठा उसको भस्म किया।
जो दूर था उसको पास किया॥

पृथ्वी—यह कौन गा रहा है?

चपला—पवनसेन, वह भी आ रहा है।

पहाड़देव—मैंने इसको भी देख लिया और तुझे भी। क्या पिद्दी और क्या पिद्दी का शोरबा! तुमको शायद यह ज्ञात नहीं कि मैं इस निरपराधिनी को तंग नहीं करता, कई वार ऊंचे नीचे कूदती फिरती है अन्यथा यदि चाहूं तो ऐसा दम बंद कर दूं कि घुट कर मर जावे, मेरे भार से ही इसकी चीं बोल जावे। अपनी कुलाह[1]-बर्राक की रूई भी अगर इस पर झोकदूं तो ठंडी हो जावे, मेरे कारूर[2]ः से सुन्न हो जावे।

चपला—चुप रह मुए, इन देवियों के आगे मुंह बंद रख नहीं तो मुंह की खाएगा॥

पहाड़देव—भला तुम्हारे कहने से मैं चुप हो जाऊं? तुम नागिन की सी ज़बान को जरा मुंह से बार बार बाहर न निकालो। यदि अग्नि का पक्ष करना है तो लगाओ जोर, लो, मैं इस की जंजीरें और कसता हूं॥

चपला—खबरदार! ऐसा करेगा तो पछ-ताएगा॥

पहाड़देव—(क्रोध में आकर उठ खड़ा होता है और अग्नि के ऊपर जा गिरने लगता

१ बर्फ जो पहाड़ों की चोटियों पर जमी रहती है। २ नदियां जो पहाड़ी झीलों में से निकलती हैं॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है) लो चक्खो मज़ा—चपला कड़की, एक चमक सी हुई और उसने अपनी बर्छी पहाड़देव के सिर पर ऐसी मारी कि उसके घाव हो गया। अग्नि तमतमाई और कारागृह के पर्दों को फाड़ती हुई निकल आई और पहाड़देव की पसली चीर डाली। एक आंधीसी आगई पहाड़ देवके शरीर से रक्त की धारा प्रवाहित हो गई और उसकी आंखों से और मुंह से झाग निकलने लगा। क्रोध और दुःख के मारे कांपने लगा। (इतने में हरियाली चिल्लाती हुई आई)।

हरियाली—हाय ! हाय !! यह क्या अनिष्ट हो गया ? मैं जल भुन गई, मेरा घरबार सब नष्ट हो गया ॥

(देखती है कि पहाड़देव घायल पड़ा कराहता है) हाय अग्नि ! तू कैसी पाषिन है !

(इतने में कोलाहल और हाहाकार सुनकर पृथ्वी कांपती हुई आ गई)। चंबका ने चपला के हाथ से दीपक लेकर प्रदीप्त किया ॥

पृथ्वी—हैं ! हैं !! यह क्या ? (पहाड़ देव को कराहता हुआ देख कर) अरे यह किसने किया ? (अग्नि की ओर देखती है) (अग्नि देवी आग बबूला हो रही है, क्रोध के मारे फुंकारे मार रही है, कुछ बोल नहीं सकती। पवनसेन झट आ मौजूद होता है बोलता कुछ नहीं मगर पृथ्वी और अग्नि को पंखा झलने लगता है) ॥

चपला—यह इस दुष्ट की अपनी करतूत है, न अग्नि से बिगाड़ करता न उल्टी मुंह की खाता ॥

पृथ्वी—पहाड़देव की तरफ झुक कर घाव को बंद करना चाहती है और हरियाली की ओर संकेत करती है कि इसकी मरहम पट्टी करे। वह करने लगती है ॥

पृथ्वी—(अग्नि की ओर घूम कर और उस को गले लगा कर) आओ देवी ! पहाड़ देव मूर्ख है जो तुम से बिगाड़ करता है ॥

अग्नि—(ज़रा क्रोध दूर होता है) मैं तो इस कारागृह को तोड़ इस देव का सिर फोड़ उड़ चली थी।

पृथ्वी—क्यों मुझ से क्रुद्ध हो गई हो क्या ?

अग्नि—नहीं तुम से तो नहीं, पर तुम्हारे कारागृह से और तुम्हारे कारागृह के संतरी से।

पृथ्वी—ओहो ! तुमने उसको कारागृह समझ लिया है क्या ? यह तो मेरे अपने महल हैं, जिन में तुमको इसी तरह रखती हूं जैसे मैं आप रहती हूं ॥

अग्नि—तो यह पर्दे और संतरी क्यों रख छोड़े हैं ?

पृथ्वी—क्या बड़े आदमियों के यहां दर्बान नहीं होते ? और क्या महल व अंतःपुर कभी खुले व बेपर्द होते हैं ?

अग्नि—तो क्या कोई अच्छा सा संतरी नहीं मिलता जो इस भूत को मेरे ऊपर पहरेदार कर रक्खा है? मुझे यह तो बहुत ही बुरा लगता है।

---

१ यह सारा ज्वाला मुखी पहाड़ का कार्य दिखाया है। बिजली आंधी भूचाल लावा की दरिया यह सब Volcanic eruption के साथ आते हैं ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पृथ्वी—क्या तुमसी अप्सरा कभी दर्बान बनेगी? क्या यह काम चपला से हो सकेगा या चंबका से ? वह तो दम भर भी एक जगह पर नहीं रह सकतीं, हरियाली इस तरह खड़ी २ सूख कर मर जावे। प्यारी तुमने सुना नहीं कि "जिसका काम उसी को साजे, और करे तो ठेगा बाजे"

अग्नि—क्या और कोई नौकर तुम्हारे पास नहीं था ?

पृथ्वी—ओहो ! अब मैं समझी—अच्छा प्यारी पवनसेन को कह दूंगी कि तुम्हारे पास आमोद प्रमोद के लिये आजाया करे । आओ अब तुम और हम मिलजुल कर रहें, किसी की मजाल नहीं जो तुम्हें तंग करे, और तुम्हें तंग कर कौन सकता है ? तुमने मेरे इतने काम किये और करती हो, मैं तुम्हारा उपकार मानती हूं। यदि रह गया तो बस वही एक जिसके लिए मैं भटकती फिरती हूं (एक दीर्घ निःश्वास लेती है) आ.....ह !

अग्नि—क्यों प्यारी ! वह क्या काम है? शोक, मुझे अब तलक पता नहीं न तुमने बताया? तुम तो उसके ध्यान से ही उदास हो गई हो। (पृथ्वी के पास आकर उसके साथ २ चलती है)

चपला—(आगे बढ़कर और अग्नि को एक तरफ करके) यह काम मेरे और तुम्हारे करने का है, कहने कहाने का नहीं है । मैं तुम्हें बता दूंगी, चलो अब पृथ्वी का मन बहलावें नहीं तो इसका दौरा फिर आजावेगा ॥

पृथ्वी—(सिर हिला कर, मन में) मेरा दौरा दूर न हुआ, पर न हुआ । (चपला अग्नि और पृथ्वी चम्बका चली जाती हैं) ॥

पहाड़देव—(कराहता हुआ)ओ...वो...ह हाय, दर्द (सिर पर हाथ रख कर) यह चपला का घाव है। (पसली को दबा कर) और यह अग्नि का, हा.....आ.....य, मोटा व भीमकाय होना भी कष्टदायक है । शीघ्रता से चलना फिरना असंभव है अन्यथा मैं भी आक्रमण तो करता ही,खाली तो न जाने देता। एक कहावत प्रसिद्ध है 'कि मोटा आदमी भी कोई आदमी है' मैं भी इस ज़ोम में था और अस्फन्देयार की तरह कुंभकर्णी नींद में .....ओ.....हाय..... पड़ा रहता था मगर अब पता लगा कि मौलाना रूमने सच कहा है —

'रण में काम आते योधा हैं नहिं कायर से चलता काम' पर क्या करूं यह चर्बी नींद लाती है। (सोने लगता है, थोड़ीसी नींद लेकर...)॥

हरियाली तू धन्य है धन्य है ! ! तूने पट्टी बांध दी जिस से मेरा घाव तो भर आयेगा ! परन्तु मेरे हृदय के घाव के लिये भी तो इलाज कर, जो तेरे नयनबाण द्वारा किये गये हैं..... हाय ! (गाता है.....) ॥

दिल की जराहतों[१] के मरहम[२] कहां से लाऊं,
फटता रहा वह दामन[३] जिसको सिया किया मैं।

(दूसरा गाना)

इलाही बर्क[४] है सीमाब[५] है कि शोला[६] है,
तड़प रहा है दिले बेकरार[७] पहलू में।
सिवा होता है हर लहजा[८] कम नहीं होता,
यह कैसा दर्द है परवरदिगार[९] ! पहलू में।

हरियाली थपक २ कर लोरियां देकर सुलाती है ॥

---

१ घाव, २ लेप, ३ किनारा, ४ विद्युत, ५ पारा. ६ अग्निशिखा, ७ बेचैन ८ पलपल ९ ईश्वर।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दुर्योधन।

लेखक—श्रीयुत् मणिराम गुप्त।

(१)

दुर्योधन! तू दृढ़-प्रतिज्ञ औ वीर बड़ा था,
यद्यपि था न दूरदर्शी पर धीर बड़ा था।
नहीं शत्रु से कभी तनिक भर तू डरता था,
था अन्यायी बड़ा, न्याय नहिं तू करता था॥

(२)

चाहा तूने पांडव को नीचा दिखलाना,
चाहा उनका इस दुनियां से नाम मिटाना।
उनका तू ऐ दुष्ट! राज सब लेना चाहा,
नहीं सुई के नोक बराबर देना चाहा॥

(३)

बड़े २ धीमानों ने तुझको समझाया,
मगर हाय! कुछ नहीं समझ में तेरे आया।
भाई का भी स्वत्व दबाना तूने चाहा,
जान बूझकर पाप कमाना तूने चाहा॥

(४)

नहिं जाना क्या पापों का परिणाम बुरा है?
किसी मनुज का स्वत्व दबाना काम बुरा है।
नहीं कहीं अन्याय बहुत दिन तक चलता है,
पर का गौरव, सच है, दुष्टों को खलता है॥

(५)

स्वबंधुओं से लड़कर तूने सरबस खोया,
अपने ही से अपने मग में कंटक बोया।
तुझे चाहता था भाई की करना रक्षा,
कर उनसे विद्रोह किया तूने नहिं अच्छा॥

(६)

शायद तुझको राजनीति का ज्ञान नहीं था,
देश काल का भी तुझको कुछ ध्यान नहीं था।
भाई से विद्रोह नहीं तो कभी न करता,
पांच ग्राम के लिये सकुल क्योंकर कट मरता?

(७)

मिली धूल में क्षण भर में सोने की लंका,
गया हना लंकेश, बजा रघुबर का डंका।
क्योंकर यह आपत्ति भला रावण पर आई?
इसीलिये, कि गया फूट उसका सग भाई॥

(८)

कभी बन्धु-विद्रोह नहीं ज्ञानी करते हैं,
और माल के लिये सदा मानी मरते हैं॥
पापी! तूने अनय कपट से नाता जोड़ा,
अपने ही से तूने अपना भांडा फोड़ा॥

(शेषफिर

गृहिणी का साम्राज्य।

लेखक—श्रीयुत् प्रो० इन्द्र विद्या-वाचस्पति।

जहां मेरा राज्य है, वहां मैं प्रसन्न हूं। वह एक गज़ जगह है या बीस गज़, इसकी मुझे बहुत चिन्ता नहीं, मुझे चिन्ता है इस बात की कि मेरे राज्य में दख़ल देने वाला कोई नहीं। स्वर्ग की गुलामी से नरक की स्वाधीनता, और फिर स्वाधीनता भी पूरे अधिकारों के साथ, किस व्यक्ति को प्रिय न होगी? जो तोता जंगल के घोंसले की स्वच्छन्द बागडोर दूसरे के हाथ में सौंप कर स्वयं पिंजरे के चावलों का लोभ करता है, वह कम बुद्धि है। उसे कमबुद्धि कहना उसकी हल्की से हल्की स्तुति करना है। सुख स्वच्छन्दता में है, हृदय के विस्तार में है, चित्त के प्रमोद में है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चावल के दाने में या पानी की चीनीदार थाली में नहीं! स्वच्छन्द साम्राज्य का सुख मनुष्य की अपेक्षा पक्षी अधिक समझता है, पक्षी की अपेक्षा अधिक तो नहीं पर उसके समान जंगली हरिण भी समझता है। एक बार एक जंगली हरिण को दयालु शहरियों ने कुत्तों से बचाने के लिये एक लकड़ी के साथ बांध दिया। वह हरिण कुत्तों से तो बच गया पर एक घण्टे के भीतर ही भीतर लकड़ी से ठोकरें मार कर उस ने अपना सिर फोड़ लिया। वह हरिण जंगल का सम्राट् था, ज़ंजीर ने उसे गुलाम बना दिया। हरिण ने साम्राज्य के बिना जीवन को तुच्छ समझा और गुलामी छोड़ कर मृत्यु की शरण ली।

सब का अपना २ साम्राज्य है। ग़रीब का अपने घर में साम्राज्य है। एक किसान अपने छोटे से खेत का अधिपति है, एक बढ़ई अपनी आरी का मालिक है, और एक लुहार अपनी फूंकनी का स्वामी है। इस समय की बिगड़ी हुई गन्दी सामाजिक दशा पर न जाइये। यह दशा कुछ बिलक्षण ही है। समाज के अत्याचारों ने हालत ऐसी बिगाड़ दी है कि मनुष्य चांदी को फेंक कर गिल्ट की ओर भागा जा रहा है और गंगातीर के वासी कुएँ खोद रहे हैं। ऐसी दशा को अस्वाभाविक कहा जाता है। इस समय साधारण मनुष्य-समाज घर की अपेक्षा जेल को ज़्यादा पसन्द करता है, क्योंकि वहां दो समय भोजन तो निश्चित है। इस अस्वाभाविक दशा को जाने दीजिये। सामान्य तौर पर पशु पक्षी भी चमकदार गुलामी की अपेक्षा दरिद्र स्वाधीन साम्राज्य को पसन्द करते हैं।

मनुष्य के गृहस्थ-जीवन के दो भाग हैं। उसका एक भाग घर की चार दीवारी से बाहिर का है; और एक अन्दर का। घर की चार दीवारी से गृहस्थ जीवन के जो विस्तृत और आवश्यक सम्बन्ध हैं, उन्हें ठीक रखना पुरुष का कर्तव्य है। चारदीवारी के अन्दर के साम्राज्य की महाराणी गृहिणी है। पुरुष चाहे कितना ही अनुदार हो, वह घर के साम्राज्य का अधिकार अपनी गृहिणी से नहीं छीन सकता। स्त्री गृहरूपी विशाल राज्य की शासिका है। उस राज्य के सम्बन्ध में पुरुष उसका विदेश-सम्बन्धी सचिव है। घर के घेरे से बाहिर की दुनियां से गृहस्थ के सम्बन्धों को स्थापित करना और निभाना पुरुष का काम है। चार दीवारी से बाहिर पुरुष मालिक है, पर अन्दर स्त्री ही स्वामिनी है। स्त्री का स्वामी वहां अपने अर्धांग का शासन स्वीकार करता है।

मनुष्य समाज की इकाई परिवार है-एक चारदीवारी में आने वाला घर है। राष्ट्रों का मूल गृह है, क़ौम की बुनियाद परिवार है। घर और परिवार के भरोसे दुनियां खड़ी हुई है, उन्हीं के बनने और बिगड़ने से राष्ट्र बनते और बिगड़ते हैं। जिस जाति का महावृक्ष सुसंगठित परिवार की क्यारी में उगता है, उसकी उन्नति को रोकना कठिन है, क्योंकि परिवार का संगठन जाति की दशा पर प्रभाव उत्पन्न करता है।

वह गृह-साम्राज्य जो राष्ट्र का मूल है, स्त्री को अपना अधिपति स्वीकार करता है। जातियों का भविष्य परिवार के भविष्यों से बंधा हुआ है। परिवार के मनकों को परोने वाला हाथ स्त्री जाति का हाथ है। इस समय मनुष्य समाज परिवर्तन की दशा में है। उसके आदर्श, और लक्ष्य बदल रहे हैं, निरन्तर उलट फेर के शिकार होरहे हैं। ऐसे समय में चित्त में यह सन्देह उत्पन्न होना स्वाभाविक है कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कहीं घर, परिवार, और उसकी महाराणी के परस्पर सम्बन्धों में कोई भेद न आजाय। भय है कि कहीं अनाज के साथ घुन भी न पिस जाय। जायदाद और राज्य सम्बन्धी दुष्ट संस्थाओं के साथ समानवाद की चक्की में आ कर गृह-साम्राज्य का भाव भी न कुचला जाय। जहां घर और परिवार के संगठन को पवित्र समझा जाता है, और उसकी शिथिल निर्बल परन्तु धार्मिक सीमान्त रेखा से आगे पैर बढ़ाने का यत्न नहीं किया जाता, वहां समाज और राज्य में जो आपत्तियां उत्पन्न होती हैं, वह दीवारों पर टक्करें मार सकती हैं, नींव को नहीं हिला सकतीं। घर और परिवार की पवित्रता स्त्री जाति के अधिकार के साथ बंधी हुई है। यदि घर में स्त्री का साम्राज्य माना जाय तो स्वभावतः उस में पराया दख़ल नहीं हो सकता।

घर पर स्त्री का जो स्वच्छन्द साम्राज्य है, उस पर दो ओर से चोट हो सकती है। कभी २ जाति या राज्य की ओर से पारिवारिक संस्था पर आक्रमण होता है। हम नहीं जानते कि कहना कहां तक ठीक है, परन्तु कहा जाता है कि बोलशविज्म पारिवारिक सम्बन्धों की और गृह-राज्य की पवित्रता को स्वीकार नहीं करता, यहां तक कि पति पत्नी के परस्पर सम्बन्ध को भी तुच्छ समझता है। यह स्त्री के साम्राज्य पर बाहिर का धावा है। पति पत्नी सम्बन्ध के बिना स्त्री का साम्राज्य कहां? इस प्रकार के धावे को रोकना किसी जाति के भविष्य जीवन के लिये अत्यन्त आवश्यक है। परिवार की एकता रहने पर बिखरी हुई जाति भी इकट्ठी हो सकती है, पर उसके न रहने पर जातीय महल का चूरा चूरा हो जाता है, उसे फिर बनाना कठिन ही नहीं, बल्कि असम्भव है॥

गृह-साम्राज्य पर दूसरा धावा अन्दर से हो सकता है। स्त्री स्वयं ही अपने राज्य को लात मार सकती है। प्रमाद से वह साम्राज्य की ईंट से ईंट बजा सकती है। क्रोध से वह अपने आप को महाराणी होने के अयोग्य सिद्ध कर सकती है, और अज्ञान से वह पवित्र और स्वच्छन्द राज्य को छोड़ कर साधारण, गन्दे और मनुष्यों के जूठे अधिकारों की ओर भाग सकती है। यह प्रवृत्ति इस समय स्त्रियों में विशेष तौर पर पाई जाती है। वह समझती हैं कि परिवार चन्द्र का केन्द्र बनना एक तुच्छ बात है। प्लैटफार्म पर व्याख्यान देना, या सम्मतियां एकत्र करने के यत्न करना, या लम्बे २ सफर करना, यह बहुत बड़ी बात है। पुरुषों में यह बहुत तुच्छ बात है। इन कामों को सैकड़ों पुरुष कर सकते हैं, और महापुरुष इन्हें तुच्छ समझने लगते हैं। अपिच यह कार्य ऐसे हैं कि पुरुष इन में सिद्धहस्त है। अनन्त-काल से यह पुरुष का राज्य है, इस में वह सिद्धहस्त हो चुका है। स्त्रियां यदि एक अनिश्चित अधिकार के लिये निश्चित साम्राज्य को छोड़ बैठें तो उन्हें बुद्धिमती कौन कहेगा?

इस प्रकार बाहिर और अन्दर के आक्रमणों से बचा कर यदि गृह-साम्राज्य पर स्त्री का दयाशील स्वच्छन्द शासन हो तो फिर संसार के सुख का क्या कहना है?

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारी मंजूषा।

१. हमारी कारावास कहानी—नवजीवन निबन्ध माला सं० १। जिन वीरों ने महात्मा गान्धी के नेतृत्व में दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह आन्दोलन को फैलाने और सफल करने में भाग लिया उन में से हमारे पाठकों के पूर्व परिचित श्री० भवानी दयाल जी का नाम विशेषतया उल्लेख योग्य है। आप ही इस पुस्तक के लेखक हैं। आपने इस पुस्तक में सत्याग्रह आन्दोलन की मुख्य २ घटनाओं का बड़ी मार्मिक भाषा में वर्णन किया है। आप और आप की धर्मपत्नी किस प्रकार जेल में गये, और वहां आप के साथ क्या सलूक हुआ, फिर वहां से कैसे छुटकारा हुआ, तथा इस अशस्त्र राष्ट्रीय संग्राम से भारत का मस्तक कितना ऊंचा हो गया है यह जानने के लिये इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिये। पृष्ठ ८६ मूल्य ॥)

२. बालोपदेश—नवजीवन निबन्धमाला सं० २। लेखक श्रीयुत पं० रामनारायण मिश्र बी० ए०। इस पुस्तक में लेखक ने स्कूलों के विद्यार्थियों के लिये बड़े अनुभव-पूर्ण, कर्तव्य-पथ दिखलाने वाले तथा आत्मिक-उन्नति का गौरव जतलाने वाले उपदेश लिखे हैं। विद्यार्थियों के लिये उपयोगी है। पृष्ठ ८०, मूल्य ॥)

३. ट्रान्सवाल में भारत वासी—नवजीवन निबन्धमाला सं० ३। लेखक श्रीयुत भवानी दयाल। बोअर राज्य में भारतवासियों की क्या अवस्था थी, उनको क्या २ सुविधा प्राप्त थी और कौन से कानून उन के लिये घातक थे इसका उल्लेख करने के पश्चात् लेखक ने बोअर युद्ध और उसके कारणों का वर्णन करते हुये यह बतलाया है कि इस युद्ध में भारतीय प्रजा ने—जिन के हित के लिये ही कहा जाता था कि यह युद्ध हुआ है—क्या भाग लिया और अंग्रेजी सरकार की क्या सहायता की। परन्तु सरकार ने उन अपने किये हुये प्रण को तोड़ कर, इस सेवा और सहायता के पुरस्कार में भारतीयों को कड़े से कड़े कानून बनाकर उन पर अत्याचार आरम्भ कर दिये और उनके आत्म-सम्मान को पाँव तले रौन्दने लगी। यह सब पढ़कर कौन भारतीय हृदय है जो रो न उठेगा? सब से दुखमय बात जो इस पुस्तक के पाठ से पता लगती है वह यह कि अफ्रीका में भी हिन्दू मुसलमानों का प्रश्न उसी भीषण रूप से उपस्थित हो गया है जैसा कि कभी यहां पर था। हमें आशा है कि जहां अपने देश में आजकल हिन्दू मुसलमानों में मेल बढ़ रहा है वैसे ही विदेश में भी हम भाई भाई बनकर काम करेंगे॥

इस पुस्तक की लेखशैली के विषय में लेखक से एक प्रार्थना है। इस पुस्तक में लेखक ने महात्मा गान्धी और उन की अफ्रीका में कार्य्य-नीति पर कुछ आक्षेप किये हैं। महात्मा गान्धी हमारे पूज्य नेताओं में से एक हैं। उन की देश भक्ति, उनकी सार्वभौमिक-प्रेम, सत्यप्रियता, निर्भीकता और स्वार्थ-त्याग जगत प्रसिद्ध हैं। इतना होते हुये भी हमें उनकी रीति और नीति पर समालोचना—कड़ी समालोचना—करने का पूर्ण अधिकार है। वह मनुष्य हैं और उन से भूल हो जाना स्वाभाविक है। हमारा धर्म है कि हम उन से, या किसी से भी, अपने मत-भेद को बड़े जोर से परन्तु न्यायशीलता से प्रगट करें परन्तु ऐसा करते हुये हमें न्याय,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation, USA

भाषा की शिष्टता और बड़ों के लिये मान और श्रद्धा को हाथ से नहीं जाने देना चाहिये। आशा है हमारे भाई हमें इन स्पष्ट शब्दों के लिये क्षमा करेंगे। पृष्ठ ७४ मूल्य ।≡)

४ शिक्षित और किसान—नवजीवन निबन्धमाला सं ४। लेखक श्रीयुत भवानीदयाल जी। पृष्ठ ६१ मूल्य ॥=)

यह पुस्तक एक बैरिस्टर और किसान की बात चीत के ढंग पर लिखी गई है। इस में किसानों की वास्तविक स्थिति और दीन दशा का बड़ा सुन्दर फोटो खैंचा गया है। अपने कार्य्य में दक्ष और बुद्धिमान होने पर भी किस प्रकार समय के फेर से और अवस्थाओं से विवश होकर हमारे ग्रामीण भाई दुःख उठा रहे हैं और किस प्रकार नगरों में रहने वाले शिक्षित भारती उनकी वास्तविक दशा और उसके कारणों से अनभिज्ञ होने के कारण उन की उन्नति के लिये बहुधा अयुक्त उपाय सोचते रहते हैं, यह इस पुस्तक के पाठ से भली प्रकार पता लग जायगा। पुस्तक शिक्षाप्रद मनोरञ्जक और पठनीय है।

५ नेटाली हिन्दू—नवजीवन ग्रन्थमाला सं० ५। लेखक श्रीयुत भवानीदयाल जी। इस पुस्तक में एक आख्यायिका के रूप में नेटाल निवासी एक ब्राह्मण गृहस्थ का वर्णन है। सामान्य जनता के लिये पुस्तक बड़ी उपयोगी है। पत्नी के मुख से पति को इतने लम्बे चौड़े उपदेश और फिर सास स्वसुर के सन्मुख, कुछ खटकते हैं। इन में कुछ अस्वाभाविकता सी दिखाई देती है। पृष्ठ १५२, मूल्य ॥=)

६ भारतीय नवयुवकों को राष्ट्रीय-सन्देश—नवजीवन निबन्धमाला सं० ६। संग्रहकर्ता श्रीयुत रघुनाथप्रसाद, पृष्ठ ११६ मूल्य ॥)

इस पुस्तक में संग्रहकर्ता ने भारत के प्रसिद्ध २ नेताओं के नवयुवकों को दिये हुये उपदेश तथा उनके लिये लिखे हुये लेख एकत्र कर बड़ा उत्तम कार्य्य किया है। श्रीयुत गान्धी, रवीन्द्रनाथ टागोर, ह्यूम आरन्डेल, गोखले, लाजपतराय, सरोजिनी नायडू इत्यादि महानुभावों के शुभ विचारों तथा नवयुवक समाज के हितार्थ सदुपदेशों का संग्रह है; साथ ही साथ श्रीयुत् श्रीधर पाठक, एक भारतीय आत्मा सैय्यद अमीरअली, माधव शुक्ल प्रभृति प्रसिद्ध २ कवियों की ओजस्विनी, मनोहरी कवितायें भी हैं।

७ दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास—नवजीवन ग्रन्थमाला सं० २। लेखक श्रीयुत भवानीदयाल जी, द्वितीया आवृति, पृष्ठ ३७४ सुन्दर सुनहरी अक्षरों से अंकित सजिल्द पुस्तक मूल्य ३॥)

हमें यह जान कर प्रसन्नता हुई कि इस उपयोगी पुस्तक का दूसरा संस्करण प्रकाशित होगया है। अपने विषय की आर्यभाषा में यह पहिली पुस्तक है। दक्षिण अफ्रीका में महात्मा गान्धी के नेतृत्व में लड़े गये सत्याग्रह युद्ध से समस्त संसार परिचित है। यह उसी सत्याग्रह का क्रमबद्ध इतिहास है। इस के लेखक इस आन्दोलन के नेताओं में से स्वयं एक हैं अतः पुस्तक की प्रमाणिकता और भी बढ़ गई है। जिस कूटनीति का आश्रय लेकर दक्षिण अफ्रीका की "अंग्रेज़ी" सरकार ने प्रवासी भारतीयों के सत्व और उनके पुरुषत्व को पाँव तले रौंदने का प्रयत्न किया और किस स्वार्थ त्याग, वीरता, धीरता और प्रेम से हमारे भाई और बहिनों ने उसका मुक़ाबिला किया, इसका विस्तृत वृतान्त इस पुस्तक में पढ़कर कौन भारतीय हृदय है जो एक बार पिघल न उठेगा? अपने भाई और बहिनों के दुखों और कष्टों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को पढ़कर जहां हमें रोना आता है वहां साथ ही उन के सत्य-प्रेम, उत्साह, श्रद्धा, भक्ति, सहिष्णुता इत्यादि स्वर्गीय गुणों का प्रकाश देख मन में आनन्द की बिजली दौड़ उठती है। हम अपने पाठकों से बड़े बलपूर्वक अनुरोध करेंगे कि इस पुस्तक को अवश्य पढ़ें। पुस्तक सचित्र है।

ऊपर की सब पुस्तकें श्रीयुत द्वारकादासजी सेवक सरस्वती सदन इन्दौर (मध्य प्रदेश) से मिल सक्ती हैं। हम सेवक जी को ऐसी अच्छी पुस्तकें प्रकाशित करने के लिये बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि वह मातृभाषा के भण्डार-पूर्ति के लिये ऐसे ही यत्नवान रहेंगे।

नागरी हितचिन्तक कार्यालय देवरी सागर से हमें तीन पुस्तकें समालोचनार्थ प्राप्त हुई हैं:—

(१) सदाचार सोपान—यह श्रीयुत अविनाशचन्द्रदास एम० ए० की बंगला "सुकथा" का अनुवाद है। इस पुस्तक का बंगाल प्रान्त में बड़ा आदर है। इस में सुनीति, शिक्षा, स्वावलम्बन, धैर्य, चरित्रगठन, कर्तव्यपालन इत्यादि विषयों पर सोलह निबन्ध हैं। पुस्तक बालक और बालिकाओं के लिये उपयोगी है। पृष्ट ४३, मूल्य।)

(२) आदर्श चरितावली—लेखक श्रीयुत शिवसहाय चतुर्वेदी। इस पुस्तक में स्वदेशीय तथा विदेशीय वीरों के जीवन-चरित्र दिये गये हैं। महापुरुषों के जीवन का पाठ किसी भी देश के उत्थान के लिये सदा श्रेयस्कर होता है। पृष्ट ६२, मूल्य ।=)

(३) भारतीय-नीति कथा—लेखक श्री शिव सहाय चतुर्वेदी पृष्ट १७० मूल्य ॥।)

इस पुस्तक में महाभारत के समय की राजनीति, धर्म तथा समाज सम्बन्धी कथाओं का संकलन है। महाभारत का समय भारत के इतिहास में गिरावट का समय है। परन्तु ऐसे समय में भी हमारे पूर्वजों का चरित्र कितना ऊंचा था और सत्य तथा धर्ममर्यादा क्या थी इन कहानियों से भली प्रकार पता लगता है।

११. श्री शारदा—यह आर्य्य-भाषा की सचित्र मासिक पत्रिका चैत्र मास से जबलपुर (मध्य प्रदेश) से प्रकाशित हो रही है। अब तक हमें तीन अंक देखने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है और हम निश्चय से कह सक्ते हैं कि प्रत्येक अंक पिछले से बढ़ चढ़ कर निकला है। ज्येष्ठ मास की संख्या में श्रीयुत गुलाब रायजी एम० ए० का "वर्त्तमान भारत वर्ष में मौलिकता का अभाव" शीर्षक लेख बड़े महत्त्व का है। पं० रघुवर प्रसादजी बी० ए० का "आधुनिक शिक्षा के गुण-दोष" और प्रोफैसर रामदास गौड़ एम० ए० का "संसार चक्र और लट्टू का खेल" लेख भी खूब बढ़िया हुए हैं। इसके अतिरिक्त कितने ही उपयोगी और चित्ताकर्षक लेख और कवितायें हैं। हम श्री० शारदा सम्पादक साहित्य शास्त्री पं० नर्म्मदा प्रसाद मिश्र, बी० ए० को पत्रिका के वाह्य रूप रंग और अंतरीय सद्गुणों के लिये बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि यह पत्रिका मध्य प्रदेश में आर्य्य भाषा के प्रचार में सफल साधन सिद्ध होगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुसुमोद्यान

वेद में सुई का वर्णन।

श्रीयुत् पण्डित श्रीपाद दामोदर सातवलेकरजी अपने पत्र "वैदिक धर्म" में पाश्चात्य वेदतत्त्वज्ञ पण्डितों के इस सिद्धान्त के खण्डन में कि आर्य्य सभ्यता के समय विज्ञान इतनी उन्नति पर न था जितना कि वर्त्तमान समय पर है वेदों के प्रमाणों से यह दर्शाते हैं कि आर्य्य सभ्यता के एकमात्र आधार वेद विज्ञान से भरे पड़े हैं। हम अपने पाठकों के हितार्थ यहां पर उनका वेदों में सुई का वर्णन उद्धृत करते हैं:—

"सुई बनाने की विद्या वेद में है। अच्छी सुई विशेष प्रकार के इस्पात अथवा फ़लाद से बनती है, साधारण लोहे से अच्छी सुई नहीं बन सक्ती। यदि वेद में सुई का उल्लेख है तो विशेष प्रकार के इस्पात की विद्या भी वेद में हो सक्ती है क्योंकि सुई और इस्पात का सम्बन्ध वही है जो कि मेज़ और लकड़ी का होता है।

सुई का उपयोग कपड़े सीने आदि कामों में होता है। यदि वेद में सुई का उल्लेख है तो कपड़े सीने की विद्या अर्थात् दर्ज़ी का काम धंधा भी वेद में हो सक्ता है। परन्तु विद्वान् युरोपियन पण्डित तथा उनके अनुचारी हमारे देशीय भाई कहते और मानते हैं कि कपड़े सीने की विद्या अर्थात् दर्जी का काम धंधा आर्य्यों में कभी न था। ऋग्वेद के काल से लेकर महाभारत के काल तक आर्य्यों में सीये हुये कपड़े अर्थात् कुरता, अंगरखा, पतलून, शर्ट, कोट आदि पहिनने का रिवाज न था। जब ग्रीस के लोगों के साथ आर्य्यों का सम्बन्ध हो गया तब से दर्ज़ी का पेशा आर्य्यों ने सीख लिया। इसकी सत्यता अथवा असत्यता का विचार हम किसी अन्य स्थान पर करेंगे यहां केवल इतना ही देखना है कि वेद में सुई है या नहीं और यदि है तो उसका उपयोग किस काम के साथ वर्णन किया है। देखिये निम्न मन्त्रः—

अयोमुखाः सूचिमुखा अथो विकंकतीमुखाः। क्रव्यादो वातरंहस आसजन्त्वमित्रान् वज्रेण त्रिसन्धिना॥ अथर्व ११। १०। २॥

अर्थ—अयोमुखाः Iron-faced लोहे के मुँह वाले; सूचिमुखाः needle-faced सुई के समान मुँह वाले; अथो और विकंकती मुखाः comb-faced कंघे के समान मुँह वाले जो वात रंहसः वायु के साथ घूमते हैं और जो त्रिसंधिना वज्रेण तीन सन्धियुक्त वज्र से क्रव्य अदः मांस खाते हैं, वे सब अमित्रान् शत्रुओं में आसजन्तु सम्मिलित हैं।

मच्छड़ आदि प्राणी जो सुई के समान मुँह धारण करते हैं और जो अपने मुख के तीन धारा वाले शस्त्र से खून चूसते हैं तथा जो वायु के वेग के साथ भ्रमण करते रहते हैं, वे सब शत्रु हैं। अर्थात् मच्छड़ आदि प्राणी मनुष्यों के शत्रु हैं यह इस मंत्र का तात्पर्य है। इस मंत्र में सूचिमूखाः needle-faced सुई के समान मुख धारण करने वाले प्राणियों का उल्लेख है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह गुण बोधक नाम है, सुई की उपमा सुख के लिये यहां आ गई है। सुई के आकार की निश्चित कल्पना यहां है तथाः—

ये अंस्या ये अग्या सूचिका ये प्रकंकताः।
अदृष्टा किंचनेह वः सर्वे साकं निजस्यत॥
ऋग्वेद १।१९१।७॥

अर्थ—ये अंस्याः जो बाहु वाले, ये अंग्याः जो अवयवों वाले, ये सूचिकाः जो सुई वाले, ये प्रकंकिताः जो विष धारण करने वाले प्राणी इह यहां हैं किंचन अदृष्टाः किसी प्रकार भी जो दिखाई नहीं देते वे सर्वे सब वः आप लोगों से दूर साकं निजस्यत सब मिलकर जावें।

इस मंत्र में सूची के समान अवयव से काटने वाले सूक्ष्म प्राणियों का वर्णन है। ये प्राणी भी मनुष्यों के शत्रु हैं इनमें कई आंख से दीखते हैं और कई दीखते भी नहीं। बिच्छू आदि प्राणी सुई के समान दुम से काटते हैं तथा अन्य अदृश्य भी होंगे। इनके विष से बड़ा कष्ट होता है। इसलिये इनका नाश करने की आज्ञा वेद ने दी है। इस मन्त्र में सूचिकाः needle-string सुई के समान अवयव से दंशने वाले प्राणी यह शब्द पूर्व शब्द के समान ही सुई की कल्पना स्पष्टता से बता रहा है।

उपमा उन पदार्थों की दी जाती है कि जो सब को ज्ञात हो सकते हैं। सुई यदि अज्ञात पदार्थ होगा तो उसकी उपमा योग्य नहीं हो सक्ती इससे व्यक्त होता है कि सुई की स्पष्ट कल्पना यहां है इसीलिये उसकी उपमा सूक्ष्म प्राणियों के अवयवों की दी है। अब सूची का उपयोग देखियेः—

सीव्यत्वयः सूच्याऽच्छिद्यमानया।
ददातु वीरं शतदाय मुक्थ्यम्॥
ऋग्वेद २।३२।४॥

अर्थ—अच्छिद्यमानया with never breaking न टूटने वाली, सूच्या needle सुई से अयः सीव्यतु may she sew her work वह अपना काम सीये; और उकथ्यं प्रशंसा योग्य शतदायं सैकड़ों प्रकार के दान देने वाले वीरं वीर को ददातु देवे।

स्त्रियां न टूटने वाली सुई से अपना कपड़ा सीयें और वैसा सिया हुआ कपड़ा शूरवीर को देवें। इस मंत्र में आर्च्छद्यमानया सूच्या अयः सीव्यतु (with never breaking needle may she sew her work) न टूटने वाली सुई से वह स्त्री अपना काम सीवें, ऐसा स्पष्ट कहा है। सुई का सीने के काम में उपयोग यहां स्पष्ट शब्दों में वर्णन किया है। अर्थात् सुई की और कपड़े सीने की कल्पना इस मन्त्र में स्पष्ट है। अच्छिद्यमाना सूची अर्थात् 'न टूटने वाली सुई' इस मन्त्र में कही है इस से दो प्रकार की सुइयों की कल्पना विदित होती है (१) टूटने वाली सुई और (२) न टूटने वाली सुई। टूटने वाली सुई खराब होती है और न टूटने वाली सुई अच्छी होती है। इस लिये न टूटने वाली सुई से सीओ ऐसा वेद ने कहा है। सुइयां बनाने वाले कारखाने वालों को भी उचित है कि वे न टूटने वाली सुइयां बनावें और टूटने वाली न बनावें। उक्त मन्त्रों से इतनी बात स्पष्ट होती है। तथाः—

देवानां पत्न्यो दिशः सूचिभिः शम्यन्तु त्वा।
यजु० वा० सं० २३। ३६॥

अर्थ—देवों की धर्म पत्नियां सुइयों से तुम को वश tame करें। इस मन्त्र में पशुओं को अथवा जंगली जानवरों को वश करने में सुइयों का उपयोग करना लिखा है। इस विषय में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अधिक विचार करके योग्य निश्चय करना उचित है, परन्तु सुइयों का उपयोग और प्रयोग इस मंत्र में है, इस में कोई सन्देह नहीं। इस प्रकार वेदों में सूची का वर्णन है। अब ब्राह्मण ग्रन्थों में सुई का वर्णन देखिये :—

× × × × ×

शतपथ ब्राह्मण में देखियेः—

सूचीभिः कल्पयन्ति। शत० ब्रा० १३।२।१०।२
त्रयः सूच्यो भवन्ति। लोहमयो रजता हिरण्यः॥
शत० ब्रा० १३। २। १०। ३

सुइयों से तैय्यार करते हैं। तीन प्रकार की सुइयां होती हैं–लोहे की, चांदी की, और सोने की। इस प्रकार शतपथ वर्णन है। इसके अतिरिक्त तैत्तिरीय ब्राह्मण ३। ९। ६। ४, जैमिनीय ब्राह्मण २। १०; जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण १। १०। ३ आदि ग्रन्थों में सूची का उल्लेख आगया है पाठक वहां देखें। इस से स्पष्ट होता है कि कपड़ा सीना और न टूटने वाली सुई बनाना वेद में है॥

सीने की सुई जहां होती है वहां सीये हुये कपड़े न होंगे ऐसा कैसे माना जासक्ता है? वेद में तर्प्य कुरता; सामूल ऊनीशर्ट; द्रापी ओवरकोट आदि शब्द सीये हुये कपड़े के लिये आगये हैं। इस लिये धागे सींये हुये कपड़े वेद में लिखे हैं। कपड़ों पर विचार करने के समय इसका विशेष विचार करेंगे। यहां सुई के साथ जिनका सम्बन्ध विशेष कर आता है उनके नाम ऊपर दिये हैं॥

अस्तु इस प्रकार इस्पात की अच्छी अर्थात् न टूटने वाली सुई का उल्लेख वेद में है यह बात सिद्ध हो गई॥

पाश्चात्य शिक्षा का भारत पर प्रभाव

उच्च शिक्षा-प्राप्त भारतीय नवयुवक तथा देवियों ने वर्त्तमान भारत की आर्थिक दशा पर बड़ा हानिकारक प्रभाव डाला है। महाशय प्रमथनाथ बोस बी. यस. सी. (लंडन) अपनी पुस्तक (Illusions of new India) इल्यू-जन्स आफ न्यू इन्डिया में लिखते हैं कि मैकाले की भविष्य वाणी कि "अंग्रेजी शिक्षा से ऐसे मनुष्य तैय्यार होवेंगे जो कि पैदाइश और रूप रंग में तो भारतीय होंगे परन्तु रुचि में विचार में, नीति में, तथा बुद्धि में अंग्रेज होंगे" बिल्कुल सत्य हुई है जैसे कि होना चाहिये थी। ज्ञान से अथवा अज्ञान से, सीधे तौर पर अथवा घूम घुमा कर, स्वेच्छा से अथवा स्वभाव से नव्य भारतीय पाश्चात्य सभ्यता के भौतिक आदर्शों को ग्रहण करते हैं तथा हिन्दू सभ्यता से पाश्चात्य सभ्यता को उत्तम समझ कर उन्नति और सुधार के मार्ग में पाश्चात्य रीति नीति का अनुसरण करते हैं। सभ्यता के पाश्चात्य विचार में मस्त भारतीय रहन सहन के तरीकों में वृद्धि करने को उन्नति के मार्ग का इतना आवश्यकीय अंग समझते हैं कि इस जल वायु में जहां खुली हवा अत्यन्त सुखद, स्वास्थ्यकर होती है वहां सिर से पैर तक अपने शरीर को इतना ढक लेते हैं कि किसी प्रकार वायु का प्रवेश न हो सके। वह चाहे कुछ भी तकलीफें उठालेवें, चाहे कितने ही तंग हों लेकिन जनता के सन्मुख खास कर युरोपियनों के सामने अपने देश वासियों के जंगली लिबास (धोती कुरता) में न उपस्थित होंगे। यदि अपनी जातीय धोती को धारण किये हों तो भी उन्हें पाश्चात्य लिबास के आवश्यकीय अंग—शर्ट, कोट, जुरावें इत्यादि सब चाहिये। युरोपियन फैशन के अनुसार वस्त्र भूषा की रुचि के प्रचार के कारण

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्त्तमान भारत में सिले हुये विदेशी वस्त्रों तथा सूती और ऊनी वस्त्रों की आयात में खूब वृद्धि हुई है और दिन प्रति दिन होती जा रही है। १८८१ से १९०९ तक तीस वर्ष के अन्दर सिले हुये वस्त्रों की आयात लगभग ८० लाख रुपयों से ३ करोड़ रु० से ऊपर हो गई है... ...

... ...

केवल कपड़े ही भारतीय धन के विदेश जाने के मुख्य वस्तु नहीं हैं किन्तु असंख्यात अन्य वस्तुयें हैं जो कि धन-निर्यात का कारण हैं। इन में मादक द्रव्य तथा सिगरेट भी शामिल हैं, जिन के कारण १९११ में दो करोड़ से ऊपर धन विदेश गया। विदेशी बूट तथा शू की मांग खूब बढ़ रही है। १९००—१९०९ के बीच में ७ लाख जोड़े से १६ लाख जोड़े आये। नव्य भारतीयों में विदेशी भोजन तथा विदेशी शीशे के बर्तनों की रुचि भी बहुत बढ़ी है और बीमारी में वह विदेश से पेटेन्ट दवाइयां बहुधा मंगाते हैं। १९०१-२ और १९१०-११ के बीच में विदेशी खाद्य वस्तुओं का मूल्य १,९८,४६,७२१ रुपये से ३,२,९३,७७० रुपये हो गया: शीशे तथा शीशे के बर्तनों को १,४,४३,७४९ रु० से १,५१,९२,०५२ रु० हो गया: और औषधियों इत्यादि का १,०७,९८,७२८ रु० से १,५१,९२,०५२ रुपये हो गया॥

नवीन भारत में स्वदेशी बाजों का स्थान हारमोनियम तथा पियानों ने ले लिया है। यद्यपि स्वदेशी बाजे भारतीयों के लिये अधिक उपयोगी हैं और प्रतिवर्ष ३४ लाख रुपयों के बाजे विदेश से आते हैं। स्वदेशी खिलौने हमारे बच्चों को अब आनन्दित नहीं करते और हमारे नवयुवक स्वदेशी खेलों तथा व्यायामों में आनन्द नहीं पाते इसलिये ३० लाख रुपये से अधिक के खिलौने और व्यायाम के सामान विदेश से आते हैं। विदेशी अतर और साबुन की रुचि भी फैल रही है और १९०८ में ४५ लाख रुपये की यह वस्तुयें बाहर से आई। फिर घर युरोपियन रीति पर सुसज्जित और सजाये जाने चाहिये जहां तक किसी की आय की अनुमति हो। पाश्चात्य सामान से सुसज्जित मेज़ पर खाना खाना हमारी प्राचीन आसन पर बैठ कर खाने की साधारण प्रथा का स्थान ले रहा है। जन्म दिवसों तथा विवाहों पर चूड़ियां कड़े तथा अन्य व्यर्थ की छोटी २ वस्तुयें उपहार में देने की प्रथा प्रति वर्ष बढ़ रही है। इस में सन्देह नहीं कि योरोपियन जन-संख्या की वृद्धि के कारण भी इन वस्तुओं के उपयोग में कुछ वृद्धि हुई है किन्तु इस में भी शक नहीं कि हमारे देशवासी स्वयं इस वृद्धि के लिये बहुतया उत्तरदाता हैं।

विदेशी व्यापार में लगे हुये भारतीयों के लाभ को निकाल कर पाश्चात्य सभ्यता के मार्ग पर चलने के कारण प्रति वर्ष भारत का धन जो विदेश जाता है वह कदाचित ३५ करोड़ रुपये से कुछ कम न होगा। नव्य भारत में यह शोर मचा हुआ है कि पिछले पचास वर्षों से होम चार्जेज इत्यादि के कारण भारत निर्धन हो रहा है। इस में सन्देह नहीं कि वह भी भारत के निर्धन होने का एक आवश्यक कारण है और कई निष्पक्ष अंग्रेज़ भी इसे मानते हैं, किन्तु यह ऐसा कारण है जिसका हटाना अभ्यासित राजनीति के क्षेत्र से बाहर है और उसे कार्य्य करने के समय अनिवार्य्य समझ लेना चाहिये। किन्तु नव्य भारत के हानिकारक प्रभाव के कारण जिस धन-हानि से उसी प्रकार भारत निर्धन होरहा है उसके विषय में हम बहुत कम सुनते हैं। निर्धनता के इस कारण को हटाना बहुत कुछ स्वयं भारतीयों के हाथ में है यदि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वह केवल एक वार अपने मन को इस ओर लगा देवें।

हमें पूर्ण आशा है कि हमारी शिक्षित बहिनें तथा भाई बोस महाशय की इस राय पर ध्यान देंगे और महात्मा गांधी के स्वदेशी प्रचार में शीघ्र सम्मिलित होकर भारत को निर्धन होने से बचाने की एक बड़ी उत्तम रीति का अनुसरण करते हुये देश के कल्याण के भागी बनेंगे। विदेशी मानसिक दासत्व के कारण जो लोग महात्मा जी के स्वदेशी प्रचार को अशक्य समझलेते हैं उन्हें एक वार विचार करना चाहिये कि बोस महाशय भी विदेश देख चुके हैं तथापि वह विदेशी वस्त्र भूषा, रहन सहन, खान पान, इत्यादि की हानियें बतला रहे हैं। ऐसी स्पष्ट हानि को देखते हुये कौन आत्म गौरव रखते हुये भारतीय नर व नारी अपने क्षणिक सौख्य के कारण अपने देश, जाति, धर्म के प्रतिकूल कार्य्य करके न केवल अपना ही वरन अपनी सन्तति का नाश करने पर उतारू होंगे?

कागज़ के सिक्कों का आविष्कार।

कहा जाता है कि सब से प्रथम कागज़ का सिक्का १४८३ ईस्वी में चला गया था। इस का ईजाद एक कौन्ट डी टेन्डिला नामक व्यक्ति ने उस समय किया था जब कि वह ग्रनाडा (Granada) के अलहमा (Alhama) नामक शहर में शत्रुओं से घिरा हुआ था। उस के पास सोना वा चांदी कुछ न थी जिस से अपने सैनिकों को वेतन देता अतः उस ने छोटे २ कागज़ के टुकड़े लेकर उन पर प्रत्येक में द्रव्य की संख्या अपने हाथ से लिख कर उस पर अपने हस्ताक्षर कर दिये। इस प्रकार सैनिक लोग शहर के व्यापारियों से जीवन की आवश्यकीय वस्तु खरीद सके और अन्त में कौन्ट ने उन कागज़ के सिक्कों का दाम चुका दिया।

संसार की सब से अद्भुत खान।

अंगरेज़ी पत्र टिट बिट्स (Tit Bits) बतलाता है कि संसार में सब से अधिक आश्चर्य जनक निमक की खान पोलैन्ड में विलिज़्का (Wieliezka) में है। वह सचमुच में निमक का नगर है। उस में बड़े विशाल गिरजे घर, सन्तों की मूर्त्तियां, विशाल रमणीय नाट्यशाला, तथा खूब चौड़ी २ आश्चर्य्यजनक सड़कों की बनावट होटलें, रेलवे स्टेशन, तथा अन्यान्य चीज़ें जो कि स्थल पर होती हैं सब निमक की हैं। इन खानों में से हज़ार वर्षों से अधिक समय से लगातार निमक निकाला जारहा है और अब भी खूब ज़ोर शोर से यह कार्य्य होरहा है। गैलीशियन लोगों का धार्मिक जोश और आन्तरिक रमणीय-प्रियता विख्यात है अतः जब निमक खोदने का कार्य्य प्रारम्भ हुआ तो कार्य्यकर्ताओं ने सोचा कि वह इस प्रकार की बड़ी २ रमणीय गुफ़ायें बनायें जो खोखली हों और जिन के मध्यवर्त्ती भाग बड़ी चौकोन दिवालों से घिरे हुये हों।

यह धरातल के आभ्यन्तरवर्ती शहर आस्ट्रिया-हंगरी राज्य की सम्पत्ति है अथवा यह कहना चाहिये कि था और इस की रक्षा बड़ी सावधानी से की जाती थी। इन अद्भुत चमत्कारों को देखने की आज्ञा नाकों सिकोड़ कर दी जाती थी। इन में निरन्तर दिन रात काम होता रहता है और काम तीन भागों में बंटा हुआ रहता है। यहां पर कार्य्यकर्ताओं को केवल उन्हीं समयों में छुट्टी मिलती है जब कि इस धरातलवर्त्ती शहर में कोई मेला या त्योहार होता है और उस समय यह लोग अपने मनो-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भावों को प्रगट करने के लिये स्वतन्त्र होते हैं। यहां का जीवन बड़ा कड़ा है। मज़दूर लोगों की नंगाझोरी न केवल खान में आने जाने के समय ही ली जाती है वरन् दिन में घड़ी २ में। एक समय था जब कि निमक सिक्का समझा जाता था किन्तु अब तो वह कुछ पेन्स में एक हन्ड्रेडवेट भर संसार के किसी हिस्से में खरीदा जा सक्ता है अतः कुछ औन्स के लिये मज़दूरों की तलाशी लेने में क्या उद्देश्य है यह समझा नहीं जा सक्ता। इस शहर में बहुत सी झीलें और गुप्त सुरंगों में बहने वाली धारायें हैं जिन में बहुत प्रकार की नौकायें चलती हैं॥

——

राजा तथा रानी का आतिथ्य

एक हज़ार पौण्ड एक दिन में!

विलायती पत्र टिट-बिट्स (Tit Bits) वर्णन करता है कि विलायत में राजा जार्ज और रानी मेरी का आतिथ्य अपने घर एक दो दिन करने में एक हज़ार पौण्ड अर्थात् १५ हज़ार रुपया एक दिन के लिये चाहिये। राजा और रानी का स्वागत सम्मान करने के लिये बहुत सी तकलीफें पहिले उठानी पड़ती हैं और ध्यान से तैय्यारी करनी पड़ती है, और चाहे वह कुछ घंटे ही ठहरें तुम्हें उसके लिये अपनी सम्पत्ति व्यय करनी पड़ती है। इस का यह अर्थ नहीं है कि महाराज या महाराणी को प्रसन्न करना कठिन है अथवा वह ऐसे अतिथि हैं जिन्हें दूसरों के व्यय का ख्याल ही नहीं। यह नहीं बल्कि राजा और रानी का यत्न हमेशः यही होता है कि वह अपने आतिथ्य-कर्त्ताओं तथा आतिथ्य-कर्तृयों को कम से कम कष्ट देवें, किन्तु यह स्वाभाविक ही है कि वह साधारण रीति से आमन्त्रित किये ही नहीं जाते। कार्य शैली तो यह है कि वह स्वयं ही लोगों को आमन्त्रित करते हैं और जो व्यक्ति इस प्रकार सन्मानित होता है उसे महीनों पहिले आमन्त्रण की सूचना मिल जाती है।

अगर तुम राजा और रानी के अतिथ-सत्कार करने वाले हो तो तुम्हें उनके वर्त्तने के लिये कम से कम बीस जोड़ा कमरे उन्हें देने होंगे जिनमें उनके दो शयनागार होंगे, दो कपड़े पहिनने के कमरे, दो स्नानागार, एक जलपान का कमरा, एक बैठक और एक अध्यनागार जिसमें टेलीफोन अवश्य लगा हुआ होना चाहिये और जिसमें राजा के कार्य्य के अनुकूल आवश्यक सर्व प्रकार की पुस्तकों की एक २ प्रति रक्खी रहनी चाहिये।

दो हज़ार पौण्ड एक रात के लिये

इसके अतिरिक्त तुम्हें राजा के सहचर तथा रानी की बांदी के लिये उचित स्थान ढूंढ़ रखना होगा तथा अन्य असंख्य नौकरों के लिये भी जो राजा रानी के साथ आवेंगे। इन नौकरों में राजा का खानसामा, तथा खिदमद्-गार—जो कि राजसी अतिथियों की खाने के समय सेवा करते हैं—कई बांदियां, चपरासी तथा अन्य छोटे २ सेवक लोगों की गणना है।

कई बड़े २ घरानों यथा गुडवुड, चैट्स-वर्थ, ईटन हाल, और वेलबेक ऐबी में कई कमरों को बना छोड़ा है जिन्हें राजा रानी को छोड़कर अन्य कोई नहीं वर्तता। प्रत्येक आग-मन के पूर्व ये कमरे सर्वतः पुनः सुसाज्जित किये जाते हैं। उनकी सजावट का ढंग तथा वस्तुओं के रखने का ढंग इस प्रकार का होना चाहिये जो राजा रानी को प्रिय हो। रंगों का चुनाव भी बड़ी सावधानी से होना चाहिये कि वहां ऐसी कुछ बात न हो जो राजसी आगन्तुकों के स्वाद के प्रतिकूल हो और यह सब केवल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

एक आगमन के लिये जो कि तीन दिन से अधिक नहीं होता।

एक प्रसिद्ध बैरोनेट (Baronet) ने जिस ने पहिले राजाओं को कभी आमन्त्रित नहीं किया था राजा यडवर्ड के केवल एक रात के वर्त्तने के लिये खास कमरों को तैय्यार करने में दो हज़ार पौण्ड व्यय किये!॥

अतिथियों का चुनाव।

राजसी अतिथियों के आगमन से कुछ दिन पहिले राजा का एक सहचर कमरों की जांच पड़ताल करता है कि प्रत्येक वस्तु राजा रानी की रुचि के अनुकूल है या नहीं। इसके बाद राजसी पुलीस का एक अफसर आता है जो कि बाहर और भीतर से घर की खूब देख भाल करता है। इसके बाद भी यह देखने के लिये कि स्वास्थ्य की दृष्टि से घर बिल्कुल ठीक है उस की खूब परीक्षा की जाती है। राजा रानी के साथ जो लोग अतिथि बनें उनका चुनाव करना तुम्हारी कठिनताओं को और भी अधिक बढ़ा देगा। जहां सम्भव हो वहां तो अतिथि उन लोगों में से ही चुने जाते हैं जिनके साथ राजा रानी का घनिष्ट सम्बन्ध ज्ञात होता है किन्तु नाम की सूची में अन्यों के नाम भी प्रविष्ट कर दिये जाते हैं तब वह सूची राजा की अनुमति के लिये भेजी जाती है।

इसके बाद खाद्य और पेय वस्तुओं का विचार किया जाता है। राजा जार्ज और रानी मेरी दोनों को बहुत साधारण भोजन रुचिकर है किन्तु जब वह किसी के घर को अपने पदार्पण से सम्मानित करते हैं तो उस समय प्रत्येक उत्तम भोज्य पदार्थ मेज पर रक्खा जाता है। कभी २ केवल एक समय के भोजन में चार सौ पौण्ड व्यय हो जाते हैं।

प्रत्येक प्रातःकाल जब तक राजसी अतिथि रहते हैं राजा रानी की खास आवश्यक्ताओं की सूची आतिथ्य करने वाली गृहणी को दे दी जाती है जिसे वह अपने भण्डारिन के पास भेज देती है।

राजा रानी के आगमन पर गृहपति तथा गृहणी दोनों उनका स्वागत करते हैं। पुनः वह उसी समय अपने आवास-गृह में चले जाते हैं। गृहपति राजा को बहुत बार मिले या नहीं यह राजा की इच्छा पर ही बिल्कुल निर्भर है। अगर उनकी मर्जी हुई तो राजा रानी दिन का बहुत भाग अपने आवास-गृह में ही व्यय कर सक्ते हैं। इसके विपरीत गृहपति गृहणी तथा अन्य अतिथि लोग अपने उठने के पूर्व राजा को भ्रमण से लौटते हुये देखकर चकित होते हैं क्योंकि राजा को प्रातः उठने की बान है।

जलपान (luncheon) तो प्रायः साधारण ही होता है किन्तु डिनर के लिये बड़े २ सामान तैय्यारियां तथा नियम होते हैं। राजा पहिले गृहणी को सूचना भेजता है कि मैं डिनर के लिये आऊंगा फिर वह गृहणी को साथ लेकर डिनर के कमरे में जाता है और रानी की बांह पकड़ कर गृहपति ले जाता है। जब तक राजा रानी न बैठ जावें अथवा अपने हाथ के इशारे से राजा यह सूचना न दे कि सब लोग बैठ जावो तब तक कोई नहीं बैठता है।

खाने के समय के नियम।

राजा का खानसामा राजा की कुर्सी के पीछे खड़ा रहता है। वह राजा के सामने वह रकेबियां रखता है जो कि राजा के खिदमदगार लोग उसे पकड़ाते जाते हैं और उन खिदमदगार लोगों को घर के नौकर लोग ला लाकर पकड़ाते जाते हैं।

खाने के समय बातचीत या तो राजा रानी प्रारम्भ करते हैं अथवा गृहपति और गृहणी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और लोग जब तक उन से बात चीत पहिले न हुई हो तो गृहपति या गृहणी को छोड़कर राजा के प्रति कहे हुये वाक्यों का प्रत्युत्तर नहीं देते। किन्तु जब राजा रानी अपने पास वालों के साथ बात चीत करते हों तो यह नियमानुकूल है कि बाकी लोग भी धीमे स्वर में परस्पर वार्तालाप करें।

डिनर एक घंटे से अधिक नहीं रहता। इस के बाद रानी, गृहणी तथा अन्य निमन्त्रित देवियां तो बैठकों में चली जाती हैं जहां वह चाहें बात चीत करें, चाहें सर्वोत्तम गाने वालों का बाजा सुनें, चाहे नाट्य तमाशा देखें। राजा और पुरुष लोग—किसी खास जल्से में जब कि उनकी विद्यमानता की आवश्यक्ता हो उसके अतिरिक्त—प्रायः चुरुट पीने के तथा बिलियर्ड खेलने के कमरों में चले जाते हैं। राजा और रानी १० बजे से अधिक सोने जाने में देरी नहीं करते॥

राजा अपने सचिवों तथा मन्त्रियों के कार्य्य से सर्वथा अभिज्ञ रहे इस हेतु गृहपति सदैव तार और टेलीफोन लगवाने का प्रबन्ध कर छोड़ता है। राजा जार्ज के गांव के घर में जाने में एक बार एक गृहपति ने एक सौ पचास पौण्ड उस घर से खास तार लगवाने में व्यय किये। राजा ने उसे केवल एक बार वर्त्ता सो भी केवल सात शब्द के तार देने में।

ऋतु परिवर्तन द्वारा निमोनिया और इन्फ्लुयन्ज़ा का इलाज।

—:-०-:—

अमरीका के Ecology नामक त्रैमासिक पत्र में उक्त शीर्षक से एक बड़ा ही रोचक और शिक्षाप्रद लेख प्रकाशित हुआ है। महायक्ष्मा का सब से उत्तम इलाज खुली और शुद्ध वायु ही माना जाता है। इसी लिये इस के रोगी को बहुधा पहाड़ों पर भेज देते हैं। इस से यह सिद्ध होता है कि फेफड़ों के सब रोगों के लिये बाहर की खुली हवा का सेवन ही सर्वोत्तम इलाज है। वायु के हलकापन और शुद्धता के अतिरिक्त तीन अन्य बातों का विचार भी आवश्यक है। (१) वायु ताप (२) वायु में जलवाष्प की मात्रा अथवा सील और (३) वायु की गति और उसमें परिवर्तन। पहिले केवल यही पर्याप्त समझा जाता था कि रोगी को अधिक ताप से बचाया जाय; आजकल ऐसी वायु को अधिक उपयोगी समझा जाता है जो कि चलती फिरती हो और बदलती रहे। परन्तु लेखक का अनुमान है कि भविष्य में ऊपर लिखी तीनों आवश्यक्ताओं पर ध्यान दिया जायगा॥

इसी विचार को सन्मुख रख कर लेखक ने न्यूयार्क (New York) नगर में गत २९ वर्ष में वायु की अवस्था और निमोनिया और इन्फ्लूयन्जा रोग में क्या सम्बन्ध रहा है इस की विवेचना की है। आप इस नतीजे पर पहुंचे हैं कि ज्यों २ ताप की मात्रा कम पड़ती जाती है इन रोगों से मृत्यु संख्या बढ़ती जाती है। जब अधिक सरदी के साथ २ वायु में सील भी कम हो तो निमोनिया से मृत्यु अधिक होती है। ताप के घटने और बढ़ने से मृत्यु संख्या कम होती है, घटने से बढ़ने की अपेक्षा अधिक लाभ होता है और बढ़ने से स्थिर रहने की अपेक्षा लाभ अधिक होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि मनुष्य शरीर के लिये वायु का ताप, वायु में जलवाष्प की मात्रा और वायु में परिवर्तन एक विशेष सीमा तक लाभदायक होते हैं और इन का उस सीमा से न्यूनाधिक होना अहितकर है। अतः सर्वोत्तम वायु वह है जो कि (१)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ताप में परिवर्तनशील हो (२) पर्याप्त जलवाष्प से लदी हो और (३) अधिक गर्म न हो जैसा कि भारतवर्ष में अप्रैल और अक्तूबर के दिनों में होती है॥

लेख से प्रतीत होता है कि लेखक के विचार में निमोनियां और इन्फ्लुयन्जा के रोगियों को यदि कृत्रिम विधि द्वारा उपरोक्त मौसम उत्पन्न करके उस में रक्खा जावे तो आरोग्यता प्राप्त करने की बड़ी सम्भावना है॥

बड़े २ नगरों में रहने वालों के लिये यह कितना आवश्यक है कि वह अपने छोटे, अंधेरे और वायु से सुरक्षित घरों को छोड़ कर खुले और हवादार मैदानों और बागों में अपना अधिक से अधिक समय बितावें। बच्चों और स्त्रियों के लिये तो इसकी विशेष आवश्यक्ता है। प्रातः काल नगर से बाहर नदी पर जा स्नान ध्यान करने की प्रथा कितनी उत्तम है। शोक कि इस का रिवाज अब कम पड़ता जाता है। शिक्षणालय, पूजनालय, कचहरी दफतर इत्यादि का नगर से बाहर होना ही उत्तम है। वहां जाने के बहाने ही शुद्ध वायु के सेवन का अवसर मिल सकेगा। हमारी भारतीय सभ्यता वनों से विशेष सम्बन्ध रखती है और हमें पुनः वनों का ही आश्रय लेना चाहिये। आधुनिक विज्ञान की भी यही पुकार है॥

तम्बाकू पीने के दुष्परिणाम।

—:-o-:—

आजकल सभ्यता का किसी न किसी रूप में तम्बाकू पीना भी आवश्यक अंग बनता जाता है। मनुष्य समाज इसके दुष्परिणाम को जानते हुये भी इस ओर सचेत नहीं होता। महा शोक की बात है कि योरुप महाद्वीप में कोमलांगी माधुरी ललनायें भी इस भयंकर विष के पान करने से अपना नवीन प्राप्त कार्य्य-स्वतन्त्रता तथा बुद्धि-स्वतन्त्रता की घोषणा देना चाहती हैं। इस में निकोटीन (Nicotine) नाम का जो विषैला पदार्थ है उसका ज्ञान तो बहुतों को है। परन्तु इसके धुयें में एक और भी विष है जिसकी ओर कि अभी तक ध्यान नहीं दिया गया। जरनल आफ फिजियालोजी (Journal of Physiology) के गतांक में हार्ट्ज महाशय के कुछ परीक्षणों का सार छपा है। कार्बन एकाम्लजिद नामक एक बड़ी जहरीली गैस होती है। कोयले लकड़ी इत्यादि जलने से यह पैदा होती है। जब कोयले जलते हों तो कभी २ उन के ऊपर हरे रंग की जलती हुई लाट दिखलाई पड़ती है। यह इसी गैस के जलने से पैदा होती है। कई बार सुना गया है कि सरदी के दिनों कोयले जला कर और सब द्वार बन्द कर के रात को कुछ आदमी सोये और प्रातः वह सब मरे हुये पाये गये। उनकी मृत्यु का कारण भी यही गैस थी जो कि कोयलों से निकल कर बाहर जाने का कोई मार्ग न पाकर सोने वालों के फेफड़ों में घुस गई और वहां उनकी गति को बन्द कर मृत्यु का कारण बनी। हार्ट्ज साहब का कथन है कि सिग्रेट में से भी यही गैस पैदा होती है और पीने वाले के फेफड़ों में पहुंचती है। दो तम्बाकू पीने वालों के रक्त की भी आप ने परीक्षा की। इन में से एक में तो कुछ नहीं निकला परन्तु दूसरे में ६ प्रति शतक तक इस गैस की मात्रा पाई गई। आपके विचार में अधिक मात्रा में तम्बाकू पीने वालों के रक्त में इस विषैली गैस का बड़ा भारी संचार होता है॥

क्या हम आशा करें कि तम्बाकू पीने वाले इस खोज की ओर ध्यान देंगे। कम से कम यह तो हम सब का कर्तव्य होना चाहिये कि हम अपनी सन्तान को इस विषपान से सदा बचाते रहें॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार प्रवाह

असहयोग तथा प्राचीन आर्य्य धर्म ।

सहयोगी इन्डियन सोशल रिफार्मर महात्मा गान्धी के असहयोग के सर्वथा प्रतिकूल है। इस में कोई शक नहीं और भी कितने प्रतिष्ठित पत्र इस संस्था को न केवल लाभकारी नहीं है यही नहीं मानते बल्कि इसे भारत के लिये नाशक अथवा कोमल शब्दों में अनिष्टकर समझते हैं। और महात्मा गांधी के प्रति असीम भक्ति प्रगट करते हुये भी उन्हें इस कार्य्य से परावृत हो जाने के लिये नम्रता-पूर्वक अनुरोध भी करते हैं। चाहे यह लोग हार्दिक विश्वास रखते हों कि यह असहयोग का तरीका ठीक नहीं है अथवा असहयोग के परिणाम जो सिंध में हुये हैं उन से भयभीत हों अथवा मिस्टर मान्टेग्यू के भ्रूभंग के चढ़ने से इन के हृदय कम्पायमान हो रहे हों किन्तु इस का निश्चय करना कठिन कार्य है और हमें किसी के शुद्ध विचारों के प्रगट करने में विरोध नहीं। जो जिसकी शुद्ध राय हो वह उसे प्रगट करना ही चाहिये चाहे लोकमत कितना ही विरुद्ध हो। परन्तु हमें एक बात जो विशेष रूप से कहनी है वह यह है कि हमारे सहयोगी ने यह जो सिद्ध करने का यत्न किया है कि असहयोग प्रत्येक बड़ी धार्मिक संस्था के विरुद्ध है विशेषतया हिन्दू धर्म के, और (गीता की शिक्षा के) (असहयोग के नियम को) प्रतिकूल बताया है। इतना ही नहीं, मुसल्मान, पारसी और इसाई भाइयों की सहानुभूति धर्म के प्रेम से आकर्षित करने के लिये असहयोग को इन सब धर्मों के प्रतिकूल बतलाया गया है। यह ठीक नहीं है, अस्तु हम आज यह बतलाना चाहते हैं कि सत्याग्रह तथा असहयोग कम से कम प्राचीन आर्य्य सभ्यता में अज्ञात न थे। यही नहीं बल्कि प्रचलित भी थे। रामायण में कवि वाल्मीकजी स्थान २ पर इसका उपयोग करते हैं। बालकाण्ड में जब कौशिक मुनि राजपुत्र राम लक्ष्मण को मांगने आते हैं और राजा दशरथ—यह समझ कर कि ऋषी कुछ साधारण धन धान्य सैनिक इत्यादि की सहायता लेने आया होगा—प्रतिज्ञा कर लेते हैं कि जो कुछ चाहिये देंगे। पर जब पता लगता है कि ऋषि उनके हृदय के टुकड़े प्यारे पुत्रों को राक्षसों से युद्ध के लिये ले जाना चाहते हैं तो वह मूर्छित हो जाते हैं और व्याकुल होकर अपना सर्वस्व देना चाहते हैं किन्तु राम लक्ष्मण को नहीं। उस समय विश्वामित्र जी के यह शब्द हैं:—

यदीदं तत्क्षमं राजन् गमिष्यामि यथागतम्।
मिथ्या प्रतिज्ञः काकुत्स्थ सुखीभव सुहृद्वृतः॥

ऋषी उन्हें गाली नहीं देते, शाप नहीं देते बल्कि कहते हैं कि तुम सुखी रहो पर मैं जैसे आया था वैसे लौट जाऊंगा। यह सत्याग्रह नहीं तो क्या है? और देखिये महारानी कैकयी पुत्र प्रेमवश भरत के लिये राज्य मांगती है, वह अपने सौभाग्य को नष्ट करके भी पुत्र को राज्याधिकारी देखना चाहती है पर होता क्या है? जब भरत जी को सारा हाल मालूम होता है तो वह माता से बहुत कुछ ऊंच नीच बात करने के बाद यह शब्द कहते हैं:

अथवा मे भवेच्छक्तिर्योगैर्बुद्धिबलेन वा।
सकामां न करिष्यामि त्वामहं पुत्रगर्धिनीम्॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अर्थात् तूने अनुचित कर्म किया है अतः शक्ति रहते हुये भी तेरी इच्छा पूरी न होने दूंगा। उस समय भरत के दिल में पूरा विश्वास था कि राम को लौटा लाऊंगा किन्तु जब यह न हो सका तो उन्होंने भी राज त्याग कर तपस्वी बन कर १४ वर्ष बिताने में लगाये।

और भी रावण विभीषण सम्वाद पढ़ो। विभीषण ने बड़ी नम्रता से बुद्धिमत्ता से राजा तथा भ्राता रावण को ऊंच नीच समझाने का यत्न किया किन्तु जब वह न समझा तो अन्त में उन्होंने कहा—

सत्वं भ्रान्तो सि मे राजन् ब्रूहि मां यद्यदिच्छसि
ज्येष्ठो मान्यः पितृ समो न-च धर्मपथे स्थितः।
सुनीतं हित कामेन वाक्य मुक्तं दशानन।
न गृहणन्त्यकृतात्मानः कालस्य वश मागताः॥
सुलभा पुरुषा राजन् सततं प्रिय वाहिनः।
अप्रियस्य च पथ्यस्य वक्ता श्रोता च दुर्लभः॥
तन्मपर्यतु मच्चोक्तं गुरुत्वाद्धित मिच्छता।
आत्मानं सर्वथा रक्ष पुरींचेमां सराक्षसाम्॥

उन्होंने क्रोध को रोक कर पूरे सत्याग्रह के भाव में आकर उसे सच्ची २ बात कह दी और यह भी कहा कि अब राक्षसों के साथ अपनी तथा अपनी पुरी की रक्षा कर मुझ से किसी प्रकार की सहायता की आशा न रख और इस प्रकार आगाह करके फिर वह राम के पास गये हैं। रावण के प्रति विभीषण का यह व्यवहार आज कल की भाषा में असहयोग नहीं तो क्या है?

असहयोग आर्य-नीति का मूल मन्त्र है। प्रह्लाद ने कितने कष्ट उठाये किन्तु पिता के साथ असहयोग ही किया।

इसलिये असहयोग प्रजा के हाथ में एक सुदर्शनचक्र है जिस को प्रजा हाथ में ले ले और आत्मसंयम में स्थिर रहे, क्रोध में आकर फसाद करके शासकों को फिर से दबाने का अवसर न दे तो राज्य-व्यवस्था को अपनी इच्छानुसार करवा सक्ती है। भारतवासियो! क्या तुम्हारे अन्दर इतना आत्मबल है? नहीं तो धारण करो और नीति-आचार्य्य गान्धी के नेतृत्व में तुम्हारी देश-भक्त सेना जिस के आगे असहयोग अहिंसा और सत्य की पताका लहराती होगी वह विजय प्राप्त करेगी जो न नैपोलियन के वीर सैनिकों के भाग्य में थी और न हिन्डनवर्ग फ्रेंच और फौच ने कभी स्वप्न में भी देखी थी।

प्राचीन ब्राह्मण कभी २ राजा के साथ असहयोग करते हुए भूखे राज ड्योढ़ी में धरना धर के बैठ रहते थे और जब तक न्याय न करवा लेते थे उठते न थे।

लार्ड सिंह के बिहार और उड़ीसा के प्रथम गवर्नर बनने पर मिस्टर पाल की चिड़चिड़ाहट।

श्रीमान् सत्येन्द्रप्रसन्न सिंह महोदय के गवर्नर बनने की जनश्रुति तो बहुत दिनों से थी ही किन्तु अब यह बात निश्चित रूप से तय होगई कि आगामी नवम्बर मास में नई कौंसिलों के खुलने पर लार्ड सिंह प्रथम भारतीय गवर्नर के रूप में बिहार और उड़ीसा का शासन करेंगे। हमें इस बात से बड़ा हर्ष है कि एक योग्य भारतीय को उस की योग्यता के अनुकूल पद देकर बृटिश सर्कार ने न केवल अपनी ही योग्यता-परिचय करने की योग्यता तथा उदारता दर्शायी है वरन् अपने ऊपर से इस कलंक का टीका हटाने का यत्न किया है कि भारत में भारतियों को शासन के उच्च पद

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पर नियुक्त नहीं किया जाता क्योंकि भारतीय लोगों के लिये अंग्रेजी राज्य से पूर्व किसी प्रान्त का गवर्नर बनना एक साधारण बात थी। मुसल्मानों का हिन्दुओं के साथ इतना विरोध होते हुए भी मुसल्मानी बादशाहत में भी हिन्दू लोग न केवल प्रान्तिक शासक ही बनते थे वरन् महामन्त्री तथा सेनापति इत्यादि पदों पर नियुक्त होते रहे हैं, परन्तु बृटिश राज्य के स्थापित होने के बाद भारत में यह प्रथम अवसर है जब कि एक भारतीय प्रान्त का शासक नियुक्त हुआ है। इस शुभ अवसर पर बृटिश सर्कार, लार्ड सिंह अथवा समस्त भारत या केवल बिहार और उड़ीसा प्रान्त इन में से कौन अधिक वधाई का पात्र है यह कहना कठिन है। परन्तु इस में सन्देह नहीं कि यह नियुक्ति भारतवर्ष के लिये शुभोदर्क होगी, क्योंकि लार्ड सिंह के लिये उच्चपदों की प्राप्ति एक साधारण बात होगई है अतः इस से उनका दिमाग बिगड़ने की कोई सम्भावना नहीं है और नाही वर्त्तमान जागृत भारत को किसी प्रकार से उन की इस नियुक्ति के कारण अनिष्ट होने की सम्भावना होगी। फिर भी हमारे एक दो सह योगियों को इस में हर्ष होने के स्थान में खेद हुआ है।

प्रयाग का इन्डिपेन्डेन्ट लार्ड सिंह की नियुक्ति को देश के लिये हानिकारक तथा प्रान्तीय झगड़ों की जड़ डालने वाली अथवा भारतीयों को फंसाने के लिये नौकरशाही की एक कूटनीति के रूप में देखता है। मिस्टर बिपिनचन्द्रपाल ने गत मास में इस विषय को लेकर बड़ा ही तूल तमाड़ा बनाया और रस्सी को सांप बनाने की कोशिश की है। प्रथम उन्होंने यह प्रस्ताव किया कि प्रत्येक नैशनलिस्ट तथा देशभक्त, भारत सचिव, महामन्त्री तथा बृटिश प्रेस को यह तार दें कि चूंकि लार्ड सिंह पंजाब के अत्याचारों के विषय में अपनी स्वतन्त्र राय जनता के विरुद्ध रखते हैं तथा नरम दल के भारतीयों के साथ सहानुभूति रखते हैं अतः देशवासियों की दृष्टि में वह गिर गये हैं इस हेतु उनकी इस उच्चपद पर नियुक्ति देश वासियों का अनादर है। अन्त में आपने बिहार निवासियों को भड़काने का यत्न किया और कहा कि जैसे सर बैम्फ्लाइड फुलर को १५ वर्ष पूर्व बंगाल ने शासन करना असह्य बनादिया था उसी प्रकार बिहार को भी चाहिये कि एक बंगाली के शासन को असह्य बनादें। बिहारी पहिले ही से बंगालियों के आधिक्य से तंग आये हुये हैं। मिस्टर पाल का कहना है कि क्या बिहारी किसी से कम योग्यता के हैं जो अपने प्रान्त के शासक नहीं बन सक्ते ? फिर आप कहते हैं कि " हम इस नियुक्ति को भारतीय राजनीतिज्ञों को गिराने तथा नीतिज्ञों के कुछ अंश को वर्तमान विदेशीय नौकर शाही के इर्द गिर्द फिराने के लिये चाल बाज़ी समझते हैं जिस से हमारी राजनैतिक दासता बनी रहे" इसके अतिरिक्त आप अन्य कई असंगत बातें समय असमय पर लिखते रहे हैं जिन का एक दूसरे से सम्बन्ध नहीं मिलता। आप के आक्षेपों के उत्तर समय समय पर 'सर्चलाइट' तथा अन्य पत्रों ने बड़ी उत्तमता से दिये हैं अतः हम उस पर अधिक कहना नहीं चाहते। हम तो केवल इस बात को पुष्ट करना चाहते हैं कि लार्ड सिंह को बिहारी प्रान्तीय भाव से नहीं देखते वरन एक भारतीय की दृष्टि से, और त्रुटियां तो प्रत्येक व्यक्ति में कुछ न कुछ रहती हैं। यदि लार्ड सिंह पंजाब के अत्याचारों की घोरता को उचित रूप नहीं देते तो इस से उनकी एक प्रान्त के शासन करने की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

योग्यता एक अन्य विदेशी शासक की अपेक्षा घट कैसे गई ?

बंगाली बिहारी का प्रश्न उठाना इस समय जब कि हिन्दू मुसल्मान भाई भाई बन कर एक दूसरे के प्रश्न को अपना रहे हैं कैसी असंगत बात है। आज एक बंगाली लाट है तो कल को एक बिहारी भी बनेगा। और यह कहना कि यह भारतीयों के फंसाने की चाल है सो अगर यह चाल हो भी यह मान लिया जावे तो वर्त्तमान जागृति को सन्मुख रखते हुये क्या यह सम्भावना हो सक्ती है कि अब भारतीय लोग इस कूटनीति के वश हो जावें ? जिन भारतीयों ने लार्ड सिंह को कटाक्षेपों द्वारा आहत करने की बान अब तक न छोड़ी वह भविष्य में उन की त्रुटियों को देख कर कैसे चुप रहेंगे ? अतः इन आशंकाओं तथा आक्षेपों को छोड़ कर समस्त भारतीयों को सहर्ष लार्ड सिंह के साथ मिल कर उन्हें भारत के उन्नत बनाने की ओर लगाना चाहिये और ऐसा प्रयत्न करना चाहिये कि लार्ड सिंह का शासन राजा और प्रजा दोनों के लिये कल्याणकारी बनकर भविष्य में प्रत्येक प्रान्त का शासक भारतीय ही बनाया जावे इस बात की पुष्टि करने वाला हो। परमात्मा लार्ड सिंह को भी सुबुद्धि प्रदान करें कि वह भारतीयों के हृदय ग्राही बन कर इस उचित बड़े भारी उत्तरदातृत्व के कार्य्य का बड़ी योग्यता से सम्पादन कर सकें और लोगों की आशंकाओं के लिये कोई कारण उत्पन्न न हो।

मिश्र देश स्वतन्त्र हो गया।

सारे भारतवासी यह सुनकर प्रसन्न होंगे कि मिश्र देश को बृटिश सरकार ने स्वतन्त्रता प्रदान कर दी है। केवल अन्य देशों के साथ अपने सम्बन्ध का निर्णय करने में मिश्र की सरकार को ध्यान रखना होगा कि वह इङ्गलैण्ड के स्वार्थ को हानि नहीं पहुंचाती अन्यथा उस क्षेत्र में भी वह सर्वथा स्वाधीन होगी। जो अंग्रेज मिश्र में नौकरी करते हैं वह मिश्रियों के आधीन कार्य करेंगे और मिश्र सरकार को उनको अपनी सेवा से मुक्त करने का भी पूरा अधिकार होगा। सुना है कि अरब वालों को भी स्वराज्य मिलने वाला है। जापान से समाचार आया है कि फार्मूसा की असभ्य जाति को जापानी सरकार स्वतन्त्रता प्रदान करने वाली है। आयरलैण्ड को पूरा स्वराज्य शीघ्र मिलेगा इस में कोई सन्देह नहीं। यह युग ही स्वराज्य और स्वतंत्रता का युग है, फिर क्या भारत ही ऐसा अभागा देश है कि इसको अपने भाग्य-निर्णय करने का अवसर नहीं ? हमारी सम्मति में भारत को इस समय स्वराज्य की आवश्यक्ता विशेषतया बहुत है क्योंकि माडेल-ला के दिनों के अत्याचारों ने सिद्ध कर दिया है कि वर्त्तमान शासन प्रणाली निकम्मी है॥

डायर को पेन्शन भारतवासियों के धन से मिलेगी। जो देश अपनी इच्छा के विरुद्ध अपने निरपराधी पुत्रों के घातक को पालने के लिये बाधित हो सक्ता है उससे बढ़कर स्वराज्य के लिये अन्य कौन देश तड़फ सक्ता है ? यदि भारतीय सरकार भारत की प्रजा की सम्मति ले तो टिवाना जैसे सौ दो सौ आदमियों को छोड़ कर शायद ही कोई भारतीय होगा जो इस बात को स्वीकार करे कि दुखी भारतवासियों के धन से डायर और ओड्वायर को पेन्शन देकर भारत माता के घावों पर नमक छिड़का जावे। भारत की तप्त आत्मा केवल स्वराज्य के अमृत से शान्त हो सक्ती है। भारतवासी बृटिश साम्राज्य में ही रहना चाहते हैं, किन्तु वह उस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

साम्राज्य में बराबरी और सादृश्य का दर्जा चाहते हैं, न कि पराधीनता का। जब उनको बराबरी का दर्जा मिल जावेगा तभी सहयोग की नीति के कुछ अर्थ भी होंगे क्योंकि सहयोग मित्रों में होता है, न कि सेवक का अपने स्वामी के साथ, जो कि यह अनुभव करता है कि मेरे कर्त्तव्य तो असंख्य हैं और अधिकार थोड़े और वह भी स्वामी की कृपा और दयालुता की अपेक्षा रखते हैं॥

अर्द्ध सरकारी बूचड़खाना समझो बन्द हो गया।

हमारे पाठकों को यह जान कर अत्यन्त हर्ष होगा कि हिन्दु मुसलमानों का सम्मिलित बल-युक्त आन्दोलन फलीभूत हुआ है और रतोना का अर्द्ध सरकारी बूचड़खाना अब शायद न खुलेगा। हिन्दु मुसलिम प्रेम के वृक्ष को यह पहिला मीठा और स्वादिष्ट फल लगा है। यदि यह वृक्ष बढ़ता फूलता और फलता गया तो किसी दिन इसी की छाया में भारतीय स्वराज्य का विशाल भवन तैय्यार होगा॥

कांग्रेस के प्रधान की वक्तृता.

कलककत्ता में कांग्रेस का विशेष अधिवेशन हो चुका है। प्रधान श्रीयुत लाला लाजपतराय की वक्तृता को पञ्जाब के पीड़ित हृदय का चित्र कहना उचित होगा। इस वक्तृता में लाला जी ने यह सिद्ध किया है कि पंजाब में जो अत्याचार हुए हैं उन सब के लिये वास्तविक उत्तर दातृत्व सर माइकल ओड्वायर पर ही है। डायर, बोसवर्थ स्मिथ इत्यादि उसके उपकरण मात्र थे और भारतीय सरकार ने जो कुछ किया उससे ही दब कर किया। लाला जी इन महाशय के शासन काल का जो संक्षिप्त इतिहास देते हैं उसको पढ़ने मात्र से यह विश्वास हो जाता है कि इतिहास और आगामी प्रसूतियां यदि किसी एक मनुष्य को इग्लैण्ड और भारत के बीच में गहरी खाई खोदने के घोर पाप का दोषी ठहरायेंगी तो वह व्यक्ति सर माइकल ओड्वायर है। सर माइकल ने लाट बनते ही पंजाबियों को जतला दिया था कि उन को अपने आत्म-सम्मान से हाथ धो बैठना चाहिये। पहिले लाट जब म्युनिसिपल कमेटियों से अभिनन्दन पत्र लेते थे तो सभ्यों के साथ हाथ मिलाया करते थे, यहां तक कि महाराज जार्ज ने भी जब वह प्रिन्स आफ़ वेल्ज़ की स्थिति में भारत में पधारे थे, लाहौर की कमेटी के सभ्यों से हाथ मिलाये थे, किन्तु ओड्वायर महाशय भारतवासियों पर शासन करने आये थे उन से सहयोग करने नहीं, इस लिये आपने दर्बारों की प्रणाली चलाई। कमेटियों के सभ्यों को नीचे से ही सलाम करनी पड़ती थी और यह महाशय मंचान पर बैठे हुए सिर हिला देते थे। पञ्जाब के आत्म-सम्मान को आघात पहुंचाने के अनन्तर सर माइकल पञ्जाब को स्वतन्त्रता और स्वराज्य की हवा से बचाने को तत्पर हुये। इसकी रीति केवल लोगों को भयभीत करना था। प्रजा के साधारण अधिकारों पर भी ओड्वायरी कुल्हाड़ा चलने लगा। महात्मा हंसराज के पुत्र पर एक पोलिटिकल अभियोग चला। उन के एक मित्र वकील ने उस मुकदमे को ले लिया। वह महाशय पंजाब लेजिस्लेटिव कौन्सिल के सभासद थे। ओड्वायर ने पहिले तो अभियोग के दिन कौन्सिल से अनुपस्थित होने के कारण उनसे लिखित उत्तर मांगा और उनके साथ ऐसा व्यवहार किया जैसा कि भगोड़े विद्यार्थियों के साथ मास्टर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

किया करते हैं। यहां तक ही नहीं, किन्तु अपने सेक्रेटरी द्वारा वकील महाशय पर अपनी अप्रसन्नता भी प्रगट की। इस प्रकार के कई उदाहरण लाला जी ने अपनी वक्तृता में दिये हैं। समाचार पत्रों के साथ ओड्वायर महाशय के दुर्व्यवहार का वर्णन भी पूरा २ किया है। लाला जी ने अपने व्याख्यान में बड़ी निर्भयता के साथ यह भी जतलाया है कि जिस समय बैंकें टूटी थीं-उन को तुड़वाने वाले के पीठ पर कई सरकारी अफसर थे, जिन की पीठ लाट साहब ठोंकते थे-उस समय पंजाब सरकार ने योरोपियन बैंकों को पूरी २ आर्थिक सहायता दी किन्तु पंजाब के नेशनल बैंक को सहायता देने से सरकारी बैंक ने कोरा इन्कार कर दिया। सर माइकल ओड्वायर ने लाट बनते ही प्रगट कर दिया था कि वह राजनैतिक स्वतन्त्रता के विरोधी हैं। लोकमान्य तिलक, बाबू बिपिन चन्द्रपाल और अन्त में देवता स्वरूप महात्मा गांधी जी का पंजाब में आना उन्होंने बन्द किया था। अच्छे २ समाचार-पत्रों का प्रवेश भी पंजाब में उन्होंने ही रोका था। Defence of India Act के शंकनीय भाग्य और रोलेट एक्ट भी पहिले पहिल उनके ही मस्तिष्क से निकले थे। जिस समय बृटिश सरकार का घोषणापत्र निकला था कि बृटिश सरकार का अन्तिम उद्देश्य भारत को स्वराज्य देना है उस समय पंजाब के भूतपूर्व लाट ने भारतीय कौंसिल में पञ्जाब को स्वराज्य के अयोग्य बतलाया था और शिक्षित लोगों को गालियां निकाली थीं॥

इसके लिये उनको क्षमा भी मांगनी पड़ी थी किन्तु फिर भी पंजाब कौंसिल में उन्होंने ऐसी ही भड़काने वाली वक्तृता की। पंजाब में जो फसाद हुए उनका मूलकारण डाक्टर सत्यपाल और डाक्टर किचलू का निर्वासन था। उसके लिये भी लाट साहब अकेले ही उत्तरदाता थे। उन्होंने इस सम्बन्ध में न तो डिप्टी कमिश्नर की सम्मति ली न कमिश्नर की। मार्शल-ला की आज्ञा भारतीय सरकार से उन्हों ने यह कहकर ली थी कि पंजाब के जरनेल की सम्मति उनके साथ है। यह सर्वथा असत्य है। भारतीय सरकार मई में ही मार्शल-ला हटाना चाहती थी परन्तु इन महाशय के दुराग्रह के कारण ही मार्शल-ला अधिक देर तक रहा। जब "विद्रोह" का बहाना न चल सका तो आपने भारतीय सरकार को यह सम्मति दी कि अब अफगान युद्ध का नाम लेकर ही मार्शल ला जारी रक्खो। डायर के हत्याकाण्ड पर अपनी मोहर लगाकर उन्होंने उसका उत्तरदातृत्व भी अपने ऊपर ले लिया। लालाजी ने १२ दोष ओड्वायर महाशय पर लगाये हैं और सरकार को चैलन्ज किया है कि खोज करे और उनको असत्य सिद्ध करे। ओड्वायर का दुःखदायक और लज्जास्पद इतिहास जिसको संक्षेप से पढ़ना हो वह लालाजी का भाषण पढ़ ले।

खेरी के डिप्टी कमिश्नर का बध।

यह समाचार बड़े शोक और दुःख से सुना जावेगा कि किसी मुसल्मान मूर्ख और धूर्त्त ने खेरी के पुरुप्रिय डिप्टी कमिश्नर मिस्टर बिलोवी का बध कर दिया है। इस कायरता युक्त नीच और राक्षसी कर्म्म से देश भर में त्रास फैल गया है। ऐसे पागलों को भूलना नहीं चाहिये कि ख़िलाफत का आन्दोलन एक धर्म्मयुक्त आन्दोलन है और धर्म्म की वृद्धि पाप द्वारा कदापि नहीं हो सक्ती। महात्मा गांधी शान्तियुक्त असहयोग के पक्ष में हैं और वह कह चुके हैं कि यदि इस आन्दोलन के साथ निरपराधियों का बध व किसी प्रकार की हिंसा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भी जुड़ गई तो वह इस आन्दोलन से पृथक् हो जावेंगे। हमें विश्वास है कि मिस्टर विलोवी के बध को मुसल्मान प्रजा उसी घृणा की दृष्टि से देखती है जिस घृणा की दृष्टि से कि इस कार्य्य को अङ्गरेज और हिन्दू देखते हैं। हमें यह भी आशा रखनी चाहिये कि संयुक्त प्रान्त के सर्वप्रिय लाट सर बटलर इस दुर्घटना के पीछे भी शान्ति उदारता और न्याय प्रियता की नीति का ही अनुसरण करते रहेंगे।

——

जापान और कोरिया।

किसी समय पूर्व को जापान पर बड़ा अभिमान था। समझा जाता था कि समग्र एशिया की स्वतन्त्रता की रक्षा जापान करेगा किन्तु पश्चिमी सभ्यता की लपेट में आकर जापान पूर्वीय धर्म्म, पूर्वीय सभ्यता, और पूर्वीय सहिष्णुता सब कुछ भूल गया। अब वह रक्षक के स्थान में भक्षक बन रहा है। कोरिया की स्वाधीनता को तो जापान ने छीन ही लिया है अब अपने अधिकार अनिच्छुक कोरियन जाति पर बलात्कार क़ायम रखने के लिये उसने पहिले से कहीं बढ़कर क्रूरता और अन्याय के शस्त्र का प्रयोग आरम्भ किया है। अपने देश को स्वाधीन करने के यत्न में ३१ कोरियन मारे गये और १४०९ घायल हुए, ६८९३४ गिरफ्तार हुए, इनमें से ९८०४ को नव्वे २ कोड़े लगाये गये। जापान को अपना प्रभुत्व स्थिर रखने के लिये ही यह सब कुछ करना पड़ता है इससे स्पष्ट सिद्ध है कि कोरिया जापान के आधीन रहना नहीं चाहता। फिर जापान क्यों उसको तङ्ग कर रहा है? क्या कोरिया को आत्म निर्णय (Self-determination) का अधिकार नहीं? जातीय समिति (League of Nations) कहां सो रही है?

विशेष कांग्रेस।

विशेष कांग्रेस हो चुकी है उसका अधिवेशन बड़े समारोह के साथ हुआ प्रतिनिधियों की संख्या ५००० के ऊपर थी यद्यपि पंडाल में १५००० मनुष्यों के बैठने की गुंजायश थी तथापि वह खचाखच भर गया था प्रतिनिधियों के हृदयों में नई २ उमंगे थी उनके चेहरों पर नवीन उत्साह की ज्योति चमक रही थी और ऐसा होना स्वाभाविक ही था क्योंकि उनका बहुपक्ष देश में एक नये युग की नीव रखने के लिये कलकत्ता में एकत्रित हुया था इस कांग्रेस ने पंजाब के अत्याचारों के विषय में उचित प्रस्ताव स्वीकृत किये किन्तु कांग्रेस का सारा बल असहयोग के प्रस्ताव पर था पूरे तीन दिन तक विषय निर्धारण सम्मति में इस विषय पर बाद विवाद होता रहा कई प्रस्ताव उपस्थित हुए, कई संशोधनों पर धुंआधार वक्तृताऐं हुई अन्त में महात्मा गांधी का प्रस्ताव और असहयोग का प्रोग्राम ७ सितंबर को विषय निर्धारण सम्मति और ८ तारीख को रात के ८ बजे कांग्रेस ने स्वीकार कर लिया उसी दिन मुसालिम लीग ने भी यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। इस प्रस्ताव की स्वीकृति भी एक चमत्कार है पं० मदन मोहन मालवी मिसिज बैसेन्ट मिस्टर सी० आर० दास मिस्टर वैपटिस्टा मिस्टर बिपिन चन्द्रपाल सब ही महात्मा गांधी के प्रोग्राम के साधारणतया और कौंसलों के बायकाट के विशेषतया विरुद्ध बोले बड़े लीडरों में से केवल पं० मोतीलाल नेहरू ही महात्मा गांधी के प्रस्ताव के पक्ष में थे साधारण प्रजा ने सारे अन्य नेताओं को छोड़कर इस समय महात्मा गांधी के चरणों की शरल ली है अब नाव को समुद्र में डाल दिया गया है लौट-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ना असम्भव है भारत की शिक्षित प्रजा ने जान बूझ कर सोच विचार कर स्वावलम्बन का पथ चुना है और साथ ही यह व्रत लिया है कि इस युग में जब कि पश्चिम प्रकृति पूजा में डूबा हुआ केवल पाशविक साधनों में विश्वास रखता है भारतवासियों ने महात्मा गांधी द्वारा घोषणा की है कि हम इस युग में भी अहिंसा और सत्य को न छोड़ेंगे पाशविक बल की शरण न लेंगे और आत्मिक बल के सुदर्शन चक्र से ही विरोधि शक्तियों को परास्त करके स्वराज्य प्राप्त करेंगे। जो अपनी सहायता आप करता है परमात्मा उसकी सहायता करता है भारतवासियो ? कठोर तप के लिये तैय्यार हो जायो तप से सब कठिनाइयां दूर हो जावेगीं कष्ट सहन करना सीखो तुम्हारा चरित्र बनेगा तुम्हारी आत्मायें बलवती होंगी और तुम्हारे दृढ़ संकल्प के आगे कोई शक्ति ठहर न सकेगी। स्मरण रक्खो कि असहयोग की सफलता में ही तुम्हारा जातीय जीवन है जो प्रणाली तुम्हारे विश्वासों और तुम्हारे स्वार्थों के अनुकूल नहीं उसके प्रचालन में यदि तुम्हारे में सच्ची वीरता है तो सहयोग मत दो तुम्हारे सहयोग के बिना कोई काम नहीं चल सक्ता आप ही प्रणाली बदल जावेगी इस प्रणाली को आत्मिक बल से बदल कर तुम भारत और इंग्लैंड दोनों का यश बढ़ायोगे और संसार धर्म्म की जय ध्वनि से गूंज उठेगा॥

महात्मा गान्धीजी का प्रस्ताव।

"कांग्रेस में स्वीकृत प्रस्ताव यह है।"

इस बात को दृष्टि में रखते हुए कि खिलाफ़त के प्रश्न के सम्बन्ध में भारतीय तथा इम्पीरियल गवर्नमेण्ट दोनों ने भारत के मुसलमानों के प्रति अपने कर्तव्य के पालन करने में विशेष उपरामता दिखलाई है और महामन्त्री ने अपनी प्रतिज्ञा को जो उनसे उनसे की थी जान बूझ कर भङ्ग किया है और यतः प्रत्येक मुसलमानों से इतर भारतवासी का यह कर्तव्य है कि वह अपने मुसलमान भाइयों की उनके धर्म पर आई हुई विपत्ति की निवृत्ति में हर प्रकार की उचित सहायता करें और इस बात को भी दृष्टि में रखते हुए कि अप्रेल १९१९ की घटनाओं के सम्बन्ध में उपरोक्त दोनों गवर्नमेण्टों ने पञ्जाब के निरपराध जनता की रक्षा करने और उन कर्मचारियों को जो जनता के साथ क्रूर और क्षात्र धर्महीन व्यवहार के अपराधी हैं दण्ड देने में अत्यन्त सङ्कीर्णता प्रकट की है और उन गवर्नमेण्टों ने सर माईकल ओड्वायर की प्रशंसा की है जिसने अपने आपको प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रीति से कर्मचारियों के मुख्य अपराधों के लिये उत्तरदाता सिद्ध किया है और जिसने अपने आधीन प्रजा के कष्टों के प्रति कठोर उपेक्षा प्रकट की थी, और हाउस आफ़ कामन्स और विशेषतया हाउस आफ लार्ड्ज़ में जो पञ्जाब सम्बन्धी विवाद हुआ था उससे भारतवासियों के साथ सहानुभूति की शोकजनक न्यूनता और पञ्जाब में जनता को भयभीत करने के जिन सीधे उपायों का अवलम्बन किया गया था उनका समर्थन प्रकट होता है और वाइसराय की पिछली वक्तृता में इस बात का सबूत है कि खिलाफ़त और पञ्जाब की दुर्घटनाओं में उन्हें कोई पश्चाताप नहीं अतः इस कांग्रेस की सम्मति है कि उपरोक्त इन दो अपराधों के प्रतीकार के बिना भारतवर्ष में कदापि शान्ति का स्थापन नहीं हो सक्ता। और यतः जातीय सन्मान की रक्षा और आगामी अत्याचारों के रोकने का एकमात्र उपयुक्त उपाय स्वराज्य की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्थापना है अतः इस कांग्रेस की यह सम्मति है कि अब भारतवासियों के लिये इसके अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं रहा कि जब तक उपरोक्त अपराधों का प्रतिकार नहीं किया जाता और स्वराज्य स्थापित नहीं होता वे क्रमशः असहयोग की नीति का अवलम्बन करें और उसका अनुकरण करें। और यतः इसके सम्बन्ध में पहिले उन श्रेणियों को करनी चाहिये जो इस समय तक लोक सम्मति को बनाने तथा प्रजा को राह दिखाने का कार्य करती रही हैं और यतः गवर्नमेण्ट अपनी शक्ति को उपाधियों और पुरुस्कारों के द्वारा और पाठशालाओं की स्थापना के द्वारा और अपने न्यायालयों तथा लेजेस्लेटिव कौन्सलों के द्वारा पुष्ट करती है। और यतः यह उचित है कि असहयोग की नीति का अवलम्बन करते हुए कष्टों का सामना किया जावे और आत्मसमर्पण का परिचय दिया जावे अतः यह कांग्रेस प्रजा को निम्न सम्मति देती है--

१ उपाधियों तथा अवैतनिक पदवियों को त्याग दिया जावे और स्थानीय सभाओं की सभासदी से सम्बन्ध छोड़ दिया जावे।

२—सरकारी निमन्त्रणों और दरबारों तथा सरकारी और अर्ध सरकारी जलसों में जो सरकारी कर्मचारियों की ओर से अथवा उन के सन्मानार्थ किये जावें उन में सम्मिलित होने से इन्कार कर दिया जावे।

३—सरकारी स्कूलों और कालिजों से अथवा उन संस्थाओं से जिन को सरकार की ओर से सहायता प्राप्त होती है धीरे धीरे अपने बच्चों को निकाल लिया जावे। और इन संस्थाओं के स्थान में जातीय शिक्षणालय स्थापित किये जावें।

४—वकीलों और अन्य प्रजा को सरकारी न्यायालयों को बायकाट कर देना चाहिये और पारस्परिक झगड़ों का निर्णय करने के लिये पञ्चायती न्यायालयों की स्थापना करनी चाहिये।

५—फ़ौजी रङ्गरूट क्लर्क और मज़दूर लोग इराक अरब में सेवा करने से इन्कार कर देवें।

६—नई कौंसलों के उमेदवार चुनाव में प्रविष्ट न हों और सम्मति देने वाले ऐसे उमेदवारों को जो कांग्रेस की इस सम्मति के विरुद्ध कौंसलों में जाने के लिये तैयार हों सम्मति देने से इनकार कर दें।

७—विदेशी चीज़ों का बायकाट किया जावे। और यह असहयोग को एक नियन्त्रणा और आत्मत्याग के अनुसार स्वीकार किया गया है, कि जिस के बिना कोई जाति वास्तविक उन्नति नहीं कर सकती, और यतः असहयोग की पहिली सीढ़ी पर ही प्रत्येक पुरुष स्त्री और बच्चे को इस नियन्त्रणा और आत्मत्याग का अवसर देना चाहिये। अतः यह कांग्रेस प्रजा को सम्मति देती है कि एक विस्तृत परिमाण में स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग किया जावे। और यतः भारतवर्ष के वर्तमान देसी कारख़ानों में पर्याप्त सूत पैदा नहीं होता और ना ही जाति की आवश्यकताओं के अनुसार पर्याप्त कपड़ा बनता है अतः यह कांग्रेस सम्मति देती है कि प्रत्येक गृह में चर्ख़ा कातने और लाखों जुलाहों के जिन्हों ने सहायता के न मिलने पर अपने पूर्वजों के सन्मानित व्यवसायों का त्याग कर दिया है दस्ती कर्घों पर कपड़ा बुनने की विधि को पुनः जारी करके एक विस्तृत परिमाण में कपड़ा तैयार करने की प्रथा को तुरन्त जारी कर दिया जावे॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ॐ

वनिता विनोद

स्त्री उपयोगी स्त्रियों द्वारालिखित लेखों का संग्रह।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१—रुदन (ले० तिलक की भक्त)	३१६	३—सुधार का मूल-पारिवारिक जीवन—(ले० श्रीमती कुमारी मनोकामना देवी।	३२१
२—कला कौशल्य—(ले० श्रीमती ओ३म्वती देवी)	३१७		

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रुदन

हे देव ! क्या दुख ही लिखा था इस अभागे भाल में ।
रोना निरन्तर रह गया फंस कर विपत्ती जाल में ॥
हे मेदनी ! तू ना फटी गिरि क्यों न तू शत कण हुआ ?
भव सिन्धु नाविक तिलक का देहान्त हा ! जिस क्षण हुआ ॥ १ ॥
हा ! हा !! हमारे हृदय का अनुपम खिलौना खोगया ।
गोदी हुई खाली तिलक वरवीर छोना खो गया ॥
कृपणा दरिद्रा का अहो ! अनमोल सोना खो गया ।
वृद्धा दशा में नेत्र तारा सुत सलोना खो गया ॥ २ ॥
बेटा तुम्हारी आश करके आज तक जीती रही ।
तुम बिन लड़ेते लाल मेरी गोद फिर रीती रही ॥
यह विह्वला माता तुम्हारे बिन पराधीना हुई ।
अवलम्ब लकड़ी खो गई, हीना हुई, दीना हुई ॥ ३ ॥
मेरे लिये बेटा अनेकों व्याधियां तुमने सहीं ।
सन्मुख रहे दुखदाइयों के पर हटे पीछे नहीं ॥
इक मातु सेवा के लिये सरबस समर्पित कर दिया ।
लेकर पताका शान्ति का परिवार तर्पित कर दिया ॥ ४ ॥
कीन्हा हमारे ही लिये स्वीकार कारागार को ।
ऐसे सहस्रों दुख सहे निज मातु के उद्धार को ॥
लालन ! तुम्हारे ही परिश्रम से मिला अधिकार है ।
सम्भावना थी स्वत्व की जब मिल चुका हथियार है ॥ ५ ॥
हा ! हा !! हमारे जीर्ण तरणी का खिवैया है कहां ?
आंधी चले मझदार है तट पर लगैया है कहां ?
हा हृदय धन जीवन हमारा प्राण प्यारा है कहां ?
माता अभागिन का दुलारा सुत सलोना है कहां ?

"तिलक की भक्त"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

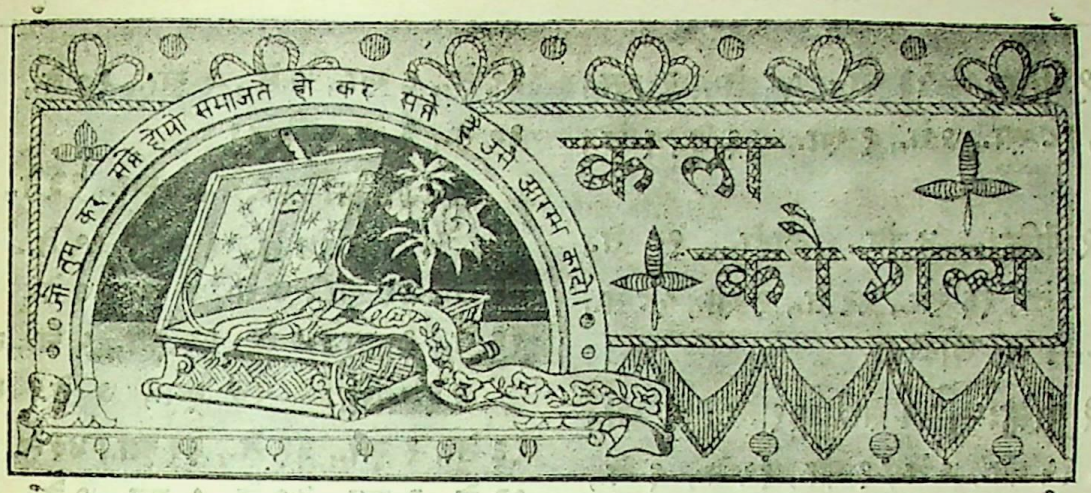

घोड़ा बग्घी जाल।

संकेतः—चे.=चेन, ते.=तेहरा क्रोशिया, दो.=दोहरा क्रोशिया, ख़ा.,=ख़ाना., सादा=सादा क्रोशिया।

सूचनाः—तेहरों के ऊपर तेहरे बनाने में जहां पर पास नमूना बनता है क्रोशिये को सादा अगले धागे में से ही निकालना चाहिये दोनों में से नहीं। नहीं तो काम फैलकर बढ़ जाता है और सिरे में तंग होने के कारण सुन्दरता जाती रहती है।

यदि ३० नं० के बढ़िया सूत से और ६½ नं० के क्रोशिये से बनाया जाय तो बहुत अच्छा हो। यह काम कोई १३½ इन्च लंबा पहुंचता है और प्रायः कुर्सियों के पीछे किसी पट्टी के सहारे टांक कर पिनों द्वारा बांध दिया जाता है। इस नमूने की यदि लेस बनाई जाय तब बहुत महीन सूत काम में लाये।

आरम्भ में ३१० चेन बराबर २ और पास २ करो।

१ पंक्तिः—७ चे. छोड़कर १ ते.,—तब २ चे., २ छोड़ो, १ ते., चेन के जंजीरे पर बनाते जाओ जब तक १०० ख़ा., न बन जांय लौटने वाली चेनों को मिलाकर., ५ चे., लौटो।

२ पंक्तिः—१ ख़ा., तब ते., बनाओ, प्रत्येक घर में पंक्ति के अन्त तक (२९८), ३ चे., लौटो।

३ पंक्तिः—२९८ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

४ पंक्तिः—१ ख़ा., ७ ते., ९७ ख़ा., ५ चे., लौटो।

५ पंक्तिः—९७ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १० चे., लौटो।

६ पंक्तिः—१ चे., छोड़ो, ४ सादे., ३ चे., और छोड़ो, २ ते., अगली २ चे. पर, १ ते. ते. पर, १ ख़ा., ७ ते., २७ ख़ा., १९ ते., ६४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

७ पंक्तिः—५७ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., २५ ते., २६ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., १० चे., लौटो।

८ पंक्तिः—१ चे. छोड़ो., ४ सादे., ३ चे. और छोड़ो., ९ ते., १ ख़ा., ७ ते., २५ ख़ा., ४९ ते., ५६ ख़ा., ५ चे., लौटो।

९ पंक्तिः—५४ ख़ा., ५५ ते., २५ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., ६ चे.,।

१० पंक्तिः—४ चे छोड़ो., १५ ते., १ ख़ा., ७ ते., २० ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ५५ ते., ५४ ख़ा.- ५ चे., लौटो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

११ पंक्तिः—५३ ख़ा.; ५८ ते., २ ख़ा., १६ ते., १८ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., ६ चे., लौटो।

१२ पंक्तिः—४ चे., छोड़ो., १८ ते., १ ख़ा., ७ ते., १६ ख़ा., २२ ते., २ ख़ा., ५८ ते., ५३ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१३ पंक्तिः—५२ ख़ा., ६१ ते., २ ख़ा., २५ ते., १५ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १९ ते., ६ चे., लौटो।

१४ पंक्तिः—४ चे. छोड़ो., १९ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., १५ ख़ा., २८ ते., २ ख़ा., ५८ ते., ५२ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१५ पंक्तिः—५२ ख़ा., ९४ ते., १४ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., ३ ख़ा., ७ ते., ६ चे., लौटो।

१६ पंक्तिः—४ चे., छोड़ो, १२ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., ७ ते., १४ ख़ा., ९४ ते., १४ ख़ा., १३ ते., ३४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१७ पंक्तिः—३१ ख़ा., १९ ते., १५ ख़ा., ४० ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ४३ ते., १३ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

१८ पंक्तिः—२४ ते., १ ख़ा., ७ ते., १२ ख़ा., ४६ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ४० ते., १५ ख़ा., २५ ते., २९ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१९ पंक्तिः—२८ ख़ा., ७ ते., ३ ख़ा., १० ते., १६ ख़ा., ४६ ते., ४ ख़ा., ४९ ते., १० ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

२० पंक्तिः—९ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ७ ते., ८ ख़ा., ५२ ते., ५ ख़ा., ४६ ते., १६ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., २७ ख़ा., ५ चे., लौटो।

२१ पंक्तिः—२६ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ७ ते., १७ ख़ा., ४३ ते., ८ ख़ा., ४९ ते., ६ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., १० ते., ३ चे., लौटो।

२२ पंक्तिः—९ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ७ ते., ५ ख़ा., ३४ ते., १ ख़ा., १९ ते., ७ ख़ा., ४३ ते., ११ ख़ा., ७ ते., ४ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., ७ ते., २५ ख़ा., ५ चे., लौटो।

२३ पंक्तिः—२४ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., ३१ ते., ११ ख़ा., ४० ते., ७ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., ३७ ते., ५ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

२४ पंक्तिः—२४ ते., १ ख़ा., ७ ते., ४ ख़ा., ४३ ते., २ ख़ा., ७ ते., २ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ ते., २ ख़ा., ४० ते., ११ ख़ा., ३१ ते., १ ख़ा. १६ ते., १ ख़ा., १० ते., २३ ख़ा., ५ चे., लौटो।

२५ पंक्तिः—२२ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., १९ ते., १२ ख़ा., ३७ ते., २ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., ४३ ते., ४ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

२६ पंक्तिः—१२ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., ४ ख़ा., ४६ ते., ५ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ ते., ३ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २२ ते., १३ ख़ा., २५ ते., १ ख़ा.; १० ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., १० ते., २१ ख़ा., ५ चे., लौटो।

२७ पंक्तिः—२१ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ३१ ते., १४ ख़ा., १३ ते., ७ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते., ५ ख़ा., ४९ ते., ३ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., ३ ख़ा., ७ ते., ३ चे., लौटो।

२८ पंक्तिः—९ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., ३ ख़ा., ५५ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ ते., २५ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., २२ ते., १ ख़ा.,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

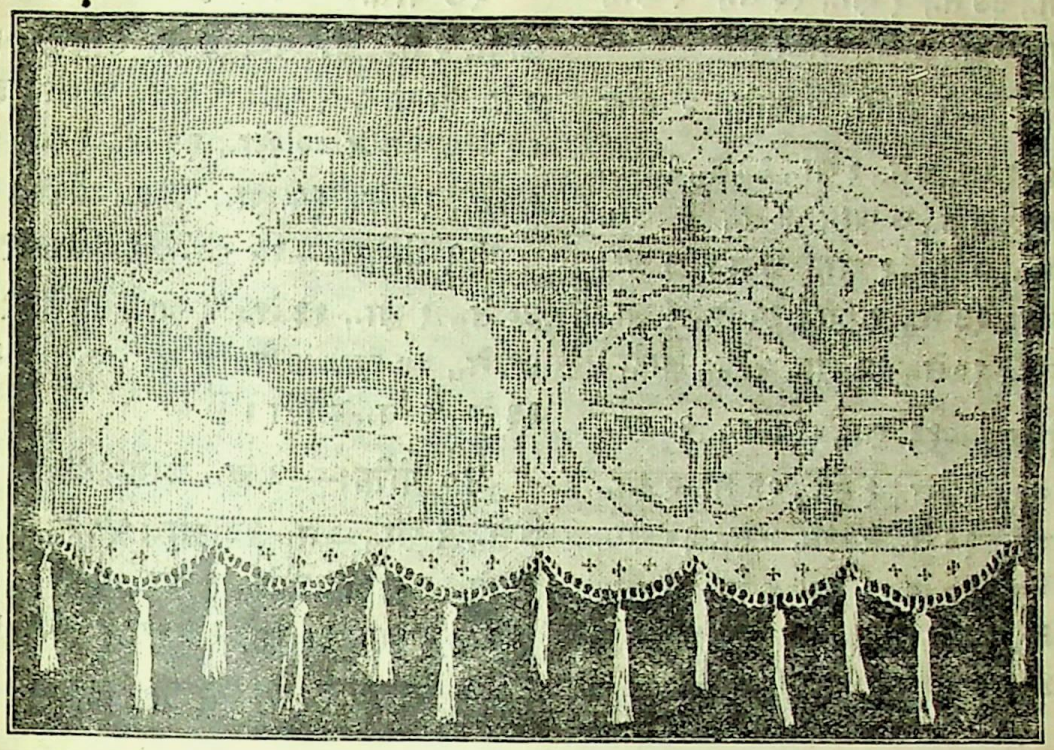

७ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ खा., ७ ते., २१ खा., ५ चे., लौटो।

२९ पंक्तिः—२० ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २२ ते., १ ख़ा., १० ते., २५ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ५५ ते., ३ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १९ ते., ३ चे., लौटो।

३० पंक्तिः—१८ ते., १ ख़ा., ७ ते., ३ ख़ा., ५५ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ ते., २५ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., १९ ते., २ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., १० ते., १९ खा, ५ चे., लौटो।

३१ पंक्तिः—१९ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २२ ते., १ ख़ा., १६ ते., २४ खा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते., ४ ख़ा., ५५ ते., २ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., ३ चे., लौटो।

३२ पंक्तिः—१५ ते., ७ ते., २ ख़ा., ५५ ते., ४ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ ते., २३ ख़ा., १९ ते., १ ख़ा., २२ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., १० ते., १९ ख़ा., ५ चे., लौटो।

३३ पंक्ति—१८ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., ३१ ते., १ ख़ा., २८ ते., ३ ख़ा., ७ ते., १६ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते., ४ ख़ा., ४३ ते., १ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ चे., लौटो।

३४ पंक्तिः—१ सादा फन्दा ४ ते. के साथ ३ चे., ९ ते., १ ख़ा., ७ ते., २ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ४० ते., ५ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ ते., १५ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ३४ ते., १ ख़ा., २८ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ खा १० ते., १८ ख़ा., ५ चे., लौटो।

३५ पंक्तिः—१७ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., २८ ते., १ ख़ा., १६ ते., ५ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., १५ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा.,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

४ ते., ६ ख़ा., ३७ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., ७ चे., लौटो।

३६ पंक्तिः—१ छोड़ो, ४ सादे, २ और छोड़ो, ३ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., २५ ते., १ ख़ा., ७ ते., ७ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ ते., १६ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., ३ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., २५ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., १० ते., १७ ख़ा., ५ चे., लौटो।

३७ पंक्तिः—१६ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., २५ ते., १ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., १६ ते., २ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ४ ते., ३० ख़ा., १९ ते., ३ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., १० चे., लौटो।

३८ पंक्तिः—१ छोड़ो, ४ सादे, ३ और छोड़ो, २ ते. चे. पर, ७ ते. ते पर,—१ ख़ा., ७ ते., दो बार, ५ ख़ा., १३ ते., ७ ख़ा., ३७ ते., १२ ख़ा., ४३ ते., २ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ४३ ते., १ ख़ा., १० ते., १५ ख़ा., ५ चे., लौटो।

३९ पंक्तिः—१५ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ४० ते., १ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., ४३ ते., ११ ख़ा., ४९ ते., १४ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., ६ चे., लौटो।

४० पंक्तिः—४ चे., छोड़ो, १५ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., १३ ख़ा., ५५ ते., ११ ख़ा., ४३ ते., २ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., १० ते., ४ ख़ा., १९ ते., १ ख़ा., १० ते., १४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

(शेष फिर)

नोटः—(१) ज्योति में अब तक जो शिल्पकला सम्बन्धी लेख निकलते रहे हैं आशा है कि उद्योगी महिलाओं, कन्याओं ने उन से लाभ उठाया होगा। जिन को किसी कार्य्य के बनाने में प्रूफ की गल्ती अथवा भूल से अशुद्धि रह जाने से कठिनाई हुई हो वे सम्पादिका के नाम स्थान पंक्ति जहां कठिनता हुई हो ज्योति का अंक नंबर जिस में वह छपी हो पूर्णतया लिख भेजें तो सर्वथा भ्रम निवारण किया जायगा॥

(२) ज्योति के ६ अंकों में जितने शिल्प के नमूने होंगे उन्हें जो नारियां सम्पूर्ण रीति से अर्थात् अब तक ६ निकले हैं उन छै को बनाकर भेजेंगी उन्हें ५) के मूल्य की जो वस्तु कहेंगी पारितोषिक रूप से दी जायगी और जो आधे नमूने भेजेंगी उन्हें २) का पारितोषिक मिलेगा। शीघ्रता कीजिये अक्तूबर के अन्त तक अवश्य "सम्पादिका ज्योति" के नाम सब वस्तुएं पहुंचनी चाहिये। पारितोषिक मिलने पश्चात् उनके नाम ज्योति में छाप दिये जांयगे और वस्तुएं सब की शीघ्र ही लौटा दी जांयगी॥

—o—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुधार का मूल-पारिवारिक जीवन

लेखिका—कुमारी मनोकामना देवी

एक ही देश का कभी उत्थान और कभी अधः पतन होना बिलकुल स्वाभाविक है। जो देश आज कल उन्नति को पहुंचा हुआ है वह अवश्य ही किसी समय हीन दशा को प्राप्त होगा और जो आज कल हीन दशा में पड़ा हुआ है वह किसी समय अवश्य उन्नति को प्राप्त होगा। इसी अटल प्राकृतिक नियम के वश में आकर रोम यूनान और मिश्र इत्यादि जो किसी समय में सारे संसार के शिरमौर थे और जिन से कि उस समय के गिरे हुए बहुत से देश शिक्षा लेते थे वे ही मिश्र यूनान इत्यादि आज इस दशा को प्राप्त हैं। आज उन्हें कोई पूछता भी नहीं। कोई इनकी परवाह भी नहीं करता। इसके प्रतिकूल इंग्लैण्ड, जर्मनी, अमरीका इत्यादि को देखिये। यह देश जहां कि पहिले जंगली मनुष्य बसते थे, जिनका कोई नाम भी न जानता था, जिनसे उस समय में कभी किसी ने कुछ शिक्षा ग्रहण नहीं की सो वे इंगलैण्ड इत्यादि आज कल सभ्यता के केन्द्र माने जाते हैं। हमारा प्यारा भारत भी इसी अटल प्राकृतिक नियम से न बच सका। भारत की प्राचीन सभ्यता किसे विदित नहीं है? यह कौन नहीं जानता कि आजकल बहुत सी वैज्ञानिक बातों का जिसके लिये कि योरोपियन लोग झूंठा घमंड करते हैं, असल में भारत ही गुरु है यद्यपि वह दूसरे को शिक्षा देकर अपने आप चेला बन बैठा है। किसी समय में यह भारत ही सारे संसार में सितारे की तरह चमक रहा था और यही सभ्यता का केन्द्र था इत्यादि। पर आज क्या हो रहा है? आज हमारी दशा पहिले की अपेक्षा बिलकुल उलटी है जिसे कि सब स्वयं ही समझ सकते हैं। पर अब ऐसा मालूम होता है कि उसी प्राकृतिक नियम के अनुसार भारत फिर उठना चाहता है। क्यों कि हर जगह देश में उन्नति के चिन्ह दिखाई देने लगे हैं और देश भक्ति देशप्रेम तथा देशोन्नति बहुत से मनुष्यों का जीवन-लक्ष्य होता जाता है। इसी कार्य्य की पूर्ति के लिये अर्थात देश को सुधारने के लिये जगह २ सभा और सोसाइटियां खोली जारही हैं, स्कूल खोले जारहे हैं, नीच जाति को उठाने की घोषणा चारों ओर से उठ रहे हैं इत्यादि। पर इन सब सुधारों का मेरे विचार में एक मुख्य और मूल उपाय है और उसी को मैं आप के सामने रखना चाहती हूं—अर्थात "पारिवारिक जीवन और उसका सुधार।

अब यदि ग़ौर से देखा जावे तो मालूम होगा कि परिवार ही सारे देश की जड़ है। क्योंकि देखिये देश जो है वह कितने ही प्रान्तों से मिल कर बना है और प्रान्त कितने ही नगरों से मिल कर, और नगर कितने ही परिवारों के समूह से बनता है। तो सब का मूल परिवार ही है। तो फिर जब तक जड़ ही दृढ़ नहीं तो यह आशा कैसे की जा सकती है कि उसकी शाखायें तथा फल जैसे होने चाहियें वैसे होंगे। जब तक पारिवारिक जीवन का सुधार नहीं होगा तब तक कैसे वह सन्ताने जिन्होंने कि अपनी आयु का बड़ा भाग अपने घर ही में बिताया है, योग्य होकर उचित प्रकार से देश सेवा कर सकती है।

यह तो मानी हुई बात है कि मनुष्य जो कुछ बचपन में सीख लेता है वह फिर सारे जीवन भी उसे नहीं भूलता। या बचपन में जैसी उसकी आदत पड़ जाती है वह सारे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जीवन भी पत्थर की लकीर की तरह नहीं जाता, चाहे वह आदतें बुरी हों चाहें अच्छी। बचपन में बालक अपने घर में जैसा होते देखता है वह भी बड़े होकर वैसा ही करने लगता है। उसके पारिवारिकों के जैसे आचरण होते हैं बड़े हो कर उसमें भी वहीं आचरण रहते हैं। इसलिये इन बालकों को सुधारने की कितनी बड़ी आवश्यकता है इसे कौन नहीं जानता? क्योंकि बड़े हो कर यही तो देश के नागरिक होंगे। तो फिर जब पारिवारिक जीवन इतना उत्तर-दायित्व-पूर्ण है और जब कि सारे देश की स्थिति उन्नति इसी पर निर्भर है तो फिर हम लोगों को यही प्रयत्न करना चाहिये कि हमारे देश के हर एक परिवार की दशा सुधरे। हर एक परिवार एक आदर्श परिवार बने। यदि हम अपने देश का उत्थान करना चाहते हैं, हम में कुछ भी देश प्रेम है, तो हमें इसी सुधार का जी जान से प्रयत्न करना चाहिये। हमें परिवारों की शारीरिक आत्मिक और सामाजिक उन्नति करनी चाहिये। इन तीनों विषयों को मैं अलग २ लूंगी और बतलाऊंगी कि इनके सुधार के लिये किन २ बातों की ओर ध्यान दिया जाना आवश्यक है। सब से पहिले

(१) शारीरिक उन्नतिः—शरीर को पुष्ट बनाने की बहुत ही अधिक आवश्यकता है। क्योंकि रोगी मनुष्य विचारा कर ही क्या सकता है? उसका तो जन्म लेना उसके लिये बिल्कुल भार रूप है। अब शारीरिक अवस्था को सुधारने के लिये या शरीर स्वस्थ बनाये रखने के लिये निम्न लिखित बातें बहुत आवश्यक हैं—

(क) स्वच्छ वायु (ख) स्वच्छ तथा सादा भोजन, अलग खाना या किसी का जूठा खाना न खाना, जूठा पानी न पीना (ग) साफ कपड़े पहिनना, शरीर साफ रखना, घर की सफाई रखना—इत्यादि।

अब इन विषयों को फिर से मैं अलग २ समझाने का प्रयत्न करती हूं कि वे क्यों आवश्यक हैं और किस प्रकार हम इन बातों को सुधारें।

(क) स्वच्छ वायु—यह सभी कोई जानते हैं कि हवा बिना मनुष्य का एक पल भी जिन्दा रहना असम्भव है। हवा दो प्रकार के गैसों से मिल कर बनती है:—

(१) कारबोनिक ऐसिड गैस (Carbonic acid gas) (२) औक्सीजन (Oxygen) इन में से पहिली तो खराब हवा होती है जो कि मनुष्य सांस बाहर निकालते समय अपने शरीर से बाहर निकलता है और दूसरी अच्छी हवा होती है जिससे कि मनुष्य सांस भीतर लेते समय भीतर लेता है। तो फिर मनुष्य को ऐसी हवा में रहने की आवश्यकता है जिसमें कि औक्सीजन अधिक हो। घरों में ऐसी स्वच्छ हवा तभी रह सकती है जब कि घर में सफाई रहे और उसमें बाहर से साफ हवा आती जाती रहने के लिये प्रबन्ध हो। यानी उसमें काफी खिड़कियां इत्यादि हों। यदि मनुष्य के शरीर में आक्सीजन कम हो जावे तो उसके लिये थोड़े दिन जीना भी कठिन है, अच्छा स्वास्थ्य तो अलग रहा। तो फिर यह कितना आवश्यक है कि मनुष्य को साफ हवा मिले जिससे कि वह अपने शरीर को स्वस्थ रखने के लिये आक्सीजन का बड़ा भाग भीतर लेसके॥

(अपूर्ण)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. L. 1240.

वर्ष १] आश्विन १९७७—अक्टूबर १९२० [खण्ड १, संख्या ६

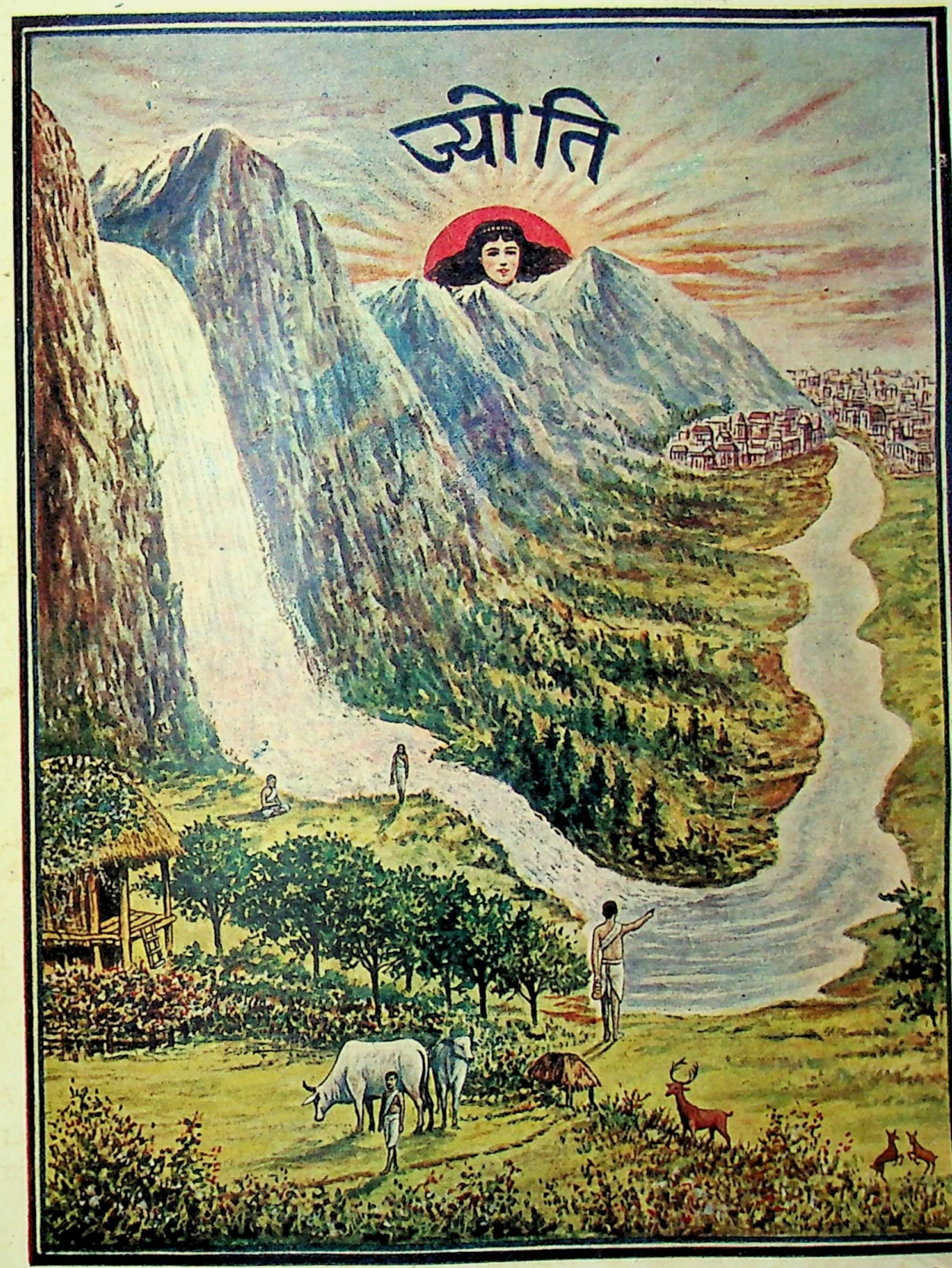

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय-सूची ।

विषय — पृष्ठ

१—एक कहानी [कविता]–लेखक श्रीयुत् पण्डित रामनरेश त्रिपाठी । ३२३

२ - सदाचार-शिक्षा–लेखक श्रीयुत् प्रोफेसर विश्वनाथ विद्यालंकार । ३२४

३—ताज महल [कविता]–लेखक श्रीयुत् हरिशंकर भट्ट । ३२६

४—क्या इंगलैंड ऊंचे सिद्धान्तों के लिये और बेलजियम की रक्षा के लिये युद्ध में सम्मिलित हुआ–लेखक श्रीयुत् ठाकुर छेदीलाल एम० ए० (आक्सन) बारिस्टर एट ला । ३२७

५—रुक्मिणीहरण नाटक–अनुवादक श्रीयुत् मेधाव्रत जगजीवन । ३३३

६—दृष्टि [कविता]–लेखक श्रीयुत् पण्डित गयाप्रसाद 'श्रीहरि' । ३४१

७—जनसंख्या की समस्या–लेखक श्रीयुत् देवदत्त बी० ए० सम्पादक 'प्रभा' । ३४२

८—दुर्योधन[कविता]–लेखक श्रीयुत मणि-राम गुप्त । ३४८

९—जातिपंथ–लेखक श्रीयुत् प्रोफ़ेसर गोपाल दामोदर तामस्कर एम० ए० एल० टी० । ३४९

१०—कुसुमोद्यान— ३५७

१–बिना स्वर ऊंचा किये लाखों लोगों को वक्तृता सुनाने का नया आविष्कार । ३५७

२–क्या विचार स्वातन्त्र्य भयानक है । ३५८

३–बच्चों को चूसने से हानि । ३५९

४–वेद में जल विद्या । ३५९

११—हमारी मंजूषा— ३६५

१२—विचार प्रवाह— ३६८

१–कांग्रेस और नैशनलिस्ट दल । ३६८

२–आत्मा का प्रश्न । ३६९

विषय — पृष्ठ

३–क्या वास्तव में बहु सम्मति असहयोग के पक्ष में न थी । ३६९

४–आत्म हत्या अथवा निज सम्मति बलिदान । ३७०

५–क्या कांग्रेस वास्तविक रूप में देश की प्रतिनिधि नहीं । ३७०

६–न इधर न उधर । ३७०

७–स्कूलों और कालिजों का बहिष्कार । ३७०

८–वकील और असहयोग । ३७१

९–पकड़ धकड़ । ३७१

१०–आयरलैण्ड और इंगलैण्ड । ३७२

११–अशुद्धि–पिछले वनिता विनोद की । ३७२

१३—वनिता विनोद— ३७३

ज्योति के नियम

ग्राहकों के लिये ।

१. ज्योति प्रति अंग्रेजी मास की १५ को ग्राहकों के पास पहुंचा करेगी ।

२. डाक व्यय सहित भारत के लिये इस का मूल्य ४॥) और छे मास के लिये २॥) बी. पी. का व्यय ≡) अलग है प्रति अंक का मूल्य ॥) है । भारत से बाहर विदेश के लिये इसका वार्षिक मूल्य ६) है । मूल्य मैनेजर ज्योति लाहौर के नाम आना चाहिये ।

३. पुरानी प्रतियां जो मिलसकेंगी उनका मूल्य प्रति संख्या ॥) से कम नहीं होगा ।

४. पते के परिवर्त्तन की सूचना पत्र के निकलने से १५ दिन पूर्व मैनेजर को मिलनी चाहिये ।

५. यदि कोई संख्या किसी ग्राहक को न पहुंचे तो पहिले अपने डाक घर से पूछना चाहिये। यदि पता न चले तो डाक घर से जो उत्तर आवे उसे प्रबन्ध कर्त्ता के पास भेजदेना चाहिये । परन्तु यह सूचना अगले अंक के निकलने से १५ दिन पूर्व तक मिलनी चाहिये अन्यथा दूसरी प्रति विना मूल्य नहीं दी जायगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

॥ ओ३म् ॥

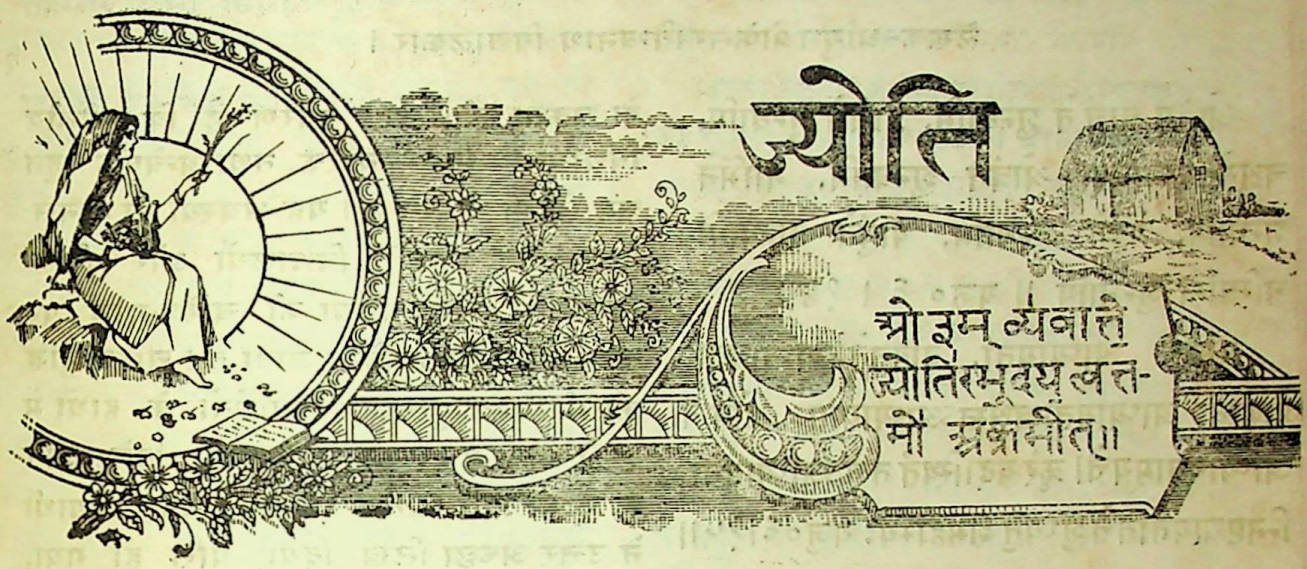

वर्ष १ | आश्विन १९७७—अक्टूबर १९२० | संख्या ६

एक कहानी

लेखक—श्रीयुत् पण्डित रामनरेश त्रिपाठी

जब गभीर तम अर्द्ध निशा में जग को ढंक लेता है,
अन्तरिक्ष की छतपर तारों को छिटका देता है।
सस्मित बदन जगत का स्वामी मृदु गति से आता है,
तट पर खड़ा गगन गंगा के मधुर गीत गाता है॥
उस में ही विमुग्ध हो नभ में चन्द्र विहँस देता है,
वृक्ष विविध पत्तों पुष्पों से तन को सज लेता है।
पक्षी हर्ष सँभाल न सकते मुग्ध चहक उठते हैं,
फूल साँस लेकर सुख की सानन्द महक उठते हैं॥
बन, उपवन, गिरि, सानु कुंज में मेघ बरस पड़ते हैं,
मेरा आत्म-प्रलय होता है नयन नीर झड़ते हैं।
पढ़ो लहर पर तृण, तरु, नभ गिरि, किरन जलद पर प्यारी,
लिखी हुई यह मधुर कहानी विश्व विमोहन-हारी॥
कैसी मधुर मनोहर उज्ज्वल है यह प्रेम-कहानी,
जी में है अक्षर बन इस के बनूँ विश्व की बानी॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सदाचार-शिक्षा।

लेखक-श्रीयुत प्रोफेसर विश्वनाथ विद्यालंकार।

ओ३म् वाचं ते शुन्धामि, प्राणंते शुन्धामि, चक्षुस्ते शुन्धामि, श्रोत्रंते शुन्धामि, नाभिंते शुन्धामि, मेढ्रंते शुन्धामि, पायुंते शुन्धामि चरित्राँस्ते शुन्धामि ॥ यजु० ६। १४॥

मनस्त आप्यायतां, वाक्ततेऽआप्यायता प्राणस्तऽ आप्यायताञ्चक्षुस्तऽआप्यायता ९, श्रोत्रं त आप्यायताम्यत्ते। क्रूरं यदास्थितं तत्तऽआप्यायता नष्टयायतांतत्ते शुध्यतु शमहोभ्यः यजु०६।१५॥

अर्थः—गुरु शिष्य के प्रति कहता है कि तेरी वाणी को शुद्ध करता हूँ, तेरे प्राण को शुद्ध करता हूँ, तेरी चक्षु को शुद्ध करता हूँ, तेरे श्रोत्र को शुद्ध करता हूँ, तेरी नाभि को शुद्ध करता हूँ, तेरी जनेन्द्रिय को शुद्ध करता हूँ, तेरी गुदेन्द्रिय को शुद्ध करता हूँ, और तेरे चरित्रों को शुद्ध करता हूँ।

इस शुद्धि से तेरा मन वृद्धि और उन्नति को प्राप्त हो, वाणी तेरी उन्नति को प्राप्त हो, प्राण तेरा उन्नत हो, चक्षु तेरी उन्नत हो, श्रोत्र तेरा उन्नत हो, तेरे हरेक अङ्ग प्रत्यङ्ग में जो २ क्रूर भाव दृढ़मूल होकर स्थित हैं वह विध्वस्त हों और तेरे अङ्गों में वृद्धि हो, पूर्ण वृद्धि हो।

पाठक वृन्द ! आजकल का शिक्षा-क्रम निराला है। बच्चों की शिक्षा केवल उन्हें पुस्तक के सिद्धान्त कण्ठ कराने तक में पर्य्याप्त समझी जाती है। उच्च कक्षाओं में भी समझ के स्थान में रटने को प्रधान स्थान मिलता है। परीक्षा का तरीका भी आजकल इस प्रकार का है कि विद्यार्थी बिना वर्ष भर परिश्रम किये पुराने पर्चों को हलकर उत्तम विभाग में उत्तीर्ण हो सकता है। यही कारण है कि भारतीय विद्यार्थी स्वतन्त्र विचारक, तथा अन्वेषक बहुत कम संख्या में होते हैं। यह अवस्था तो मानस-शिक्षा की है। हमारे विद्यालयों और विश्व-विद्यालयों में विद्यार्थियों की चरित्र-शुद्धि पर बहुत थोड़ा ध्यान दिया जाता है। चरित्र-शुद्धि की भी पाठ्य पुस्तकें विद्यार्थियों के हाथों में दे दी जाती हैं। सिद्धान्त समझा दिये जाते हैं, रटवा दिये जाते हैं। प्रश्नपत्र बने, विद्यार्थी ने उत्तर अच्छा लिख दिया, पास हो गया, बस चरित्र-शुद्धि का मामला भी समाप्त। भला इस प्रकार चरित्र-शुद्धि होना सम्भव है? चरित्र का अधिक सम्बन्ध तो कर्मकाण्ड के साथ है। जबतक सदाचार के सिद्धान्त कर्म में परिणत नहीं होते तबतक चरित्र का पाठ पढ़ा देना किसी काम का नहीं। अगर चरित्र-शुद्धि के नियमों के ज्ञान तथा स्मरणमात्र से चरित्र-शुद्धि हो जाय तब तो जो जानता है कि सत्य बोलना वैयक्तिक तथा सामाजिक दृष्टि से श्रेयस्कर है पर कौड़ी भर स्वार्थ की उपस्थिति में सामाजिक स्वार्थ की तनिक भी परवाह नहीं करता वह सच्चरित्र अवश्य कहलाने योग्य होगा। परन्तु इस के प्रतिकूल जो सत्य के गहरे असूल नहीं भी जानता, जिसे वैयक्तिक और सामाजिक स्वार्थों में परस्पर संघर्ष होने पर सत्यासत्य के निर्णय करने के दार्शनिक सिद्धान्त नहीं भी आते, परन्तु जो सत्य धर्म पालन करना चाहिये इस विश्वस्त हृदय से मन, वचन और कर्म से सत्यानुष्ठान करता है, वह सच्चरित्र अवश्य ही है, और उसे सभी सच्चरित्र कहेंगे। चरित्र का सम्बन्ध अधिकतर संस्कारों से है। जैसे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संस्कार होंगे वैसा ही चरित्र होगा। चरित्र-रूपी वृक्ष का बीज संस्कार है। ज्ञान तो इस चरित्र-वृक्ष की वाह्य परिस्थिति रूप है। धातुओं को शुद्ध कैसे किया जाता है, समासों के मिश्रण (mixture of salts) साल्ट मिक्सचर का विश्लेषण कैसे किया जाता है, इन विषयों पर चाहे उपाध्याय कितनी गम्भीरता तथा स्पष्टता से विद्यार्थियों को व्याख्यान दे परन्तु यह व्याख्यान नाट्यरूप ही समझा जावेगा। विद्यार्थियों के चित्त पर इस के संस्कार गहरे नहीं पड़ सकते, और नहीं विद्यार्थी संस्कारों की इस पूञ्जी को लेकर अपनी क्रियात्मक रसायन की सम्पत्ति को ही बढ़ा सकता है। इसके लिये तो प्रयोगशाला में जाकर विद्यार्थी के हाथों उस विधि की प्रत्यक्ष क्रियाओं में से गुज़ारना पड़ेगा तभी पैदा हुए संस्कार विद्यार्थी को इस रसायन विभाग में सिद्धहस्त तथा क्रियाकुशल बना सकते हैं। यही सिद्धान्त सदाचार शिक्षा पर भी लगता है। गुरु को चाहिये कि वह सर्वदा विद्यार्थी के साथ रहे, विद्यार्थी को सदुपदेश देते हुए, कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य के लाभ हानियों को सर्वदा विद्यार्थी के चित्त के सन्मुख खचित चित्रवत् रखते हुए, विद्यार्थी को प्रत्येक इन्द्रिय के कर्मकाण्ड में से गुज़ारता हुआ चौकीदार का काम करे। उसे चरित्र का पाठ पढ़ाते हुए दिन रात उस के चरित्र-मातङ्ग पर अङ्कुश का काम करे। तब तो सम्भव है कि विद्यार्थी चरित्रवान् बन सके। आजकल की चरित्रशिक्षा का प्रचलित तरीका विद्यार्थी को मक्कार बनने में तो सहायता देता है, चरित्रवान् बनने में नहीं। विज्ञ होने के कारण जनता के सन्मुख ये लोग चरित्र के सिद्धान्तों की व्याख्या तो अच्छे प्रकार कर देते हैं, परन्तु इन के व्यवहाररूपी कमल पत्ते पर उस ज्ञानरूपी जलकण का कोई भी गहरा सम्बन्ध नहीं होता।

अतः शिक्षा में वेद की आज्ञा है कि विद्यार्थी की चरित्र-शिक्षा को सब से प्रथम और मुख्य-स्थान मिलना चाहिये। प्रत्येक वस्तु की उन्नति के दो साधन होते हैं (१) बाधक का अभाव तथा (२) साधक का सद्भाव। किसी अङ्कुर की यदि वृद्धि करनी हो तो अङ्कुर की वृद्धि के बाधक कारणों का अभाव करना चाहिये। उन कारणों से अङ्कुर की रक्षा करनी चाहिये। पशु का खा जाना, गर्मी सर्दी का असर हो जाना ये अङ्कुर की वृद्धि में बाधक हैं। इन से अङ्कुर की रक्षा करनी पड़ेगी। परन्तु इसके साथ ही अङ्कुर की वृद्धि के साधक उपायों पर भी ध्यान देना आवश्यक है। ताप और प्रकाश का होना, जल तथा खाद का मिलना ये अङ्कुर की वृद्धि के साधक कारण हैं। अङ्कुर की वृद्धि इन दोनों कारणों पर आश्रित है। यह सिद्धान्त प्रत्येक वस्तु की वृद्धि पर समरूप से लगता है। हम स्वदेशी का प्रचार करना चाहते हैं। इसके लिये स्वदेशी प्रचार के बाधक कारणों का अभाव करना पड़ेगा, और स्वदेशी प्रचार के साधक कारणों को उत्तेजित करना पड़ेगा। बाधक कारणों के हटाने का नाम ही शुद्धि है और साधक कारणों की उपस्थिति को ही आप्यायन कहते हैं। सदाचार शिक्षण के उपरोक्त दो मन्त्रों में से पहले मन्त्र में शुद्धि का वर्णन है और दूसरे में आप्यायन अर्थात् वृद्धि का। सदाचार शिक्षण में चित्त-भूमि में से कुसंस्काररूपी बाधक कारण का अभाव कर प्रथम उस भूमि की शुद्धि करनी पड़ेगी, तत्पश्चात् उस शुद्ध भूमि में सुसंस्काररूपी साधक कारण का बीज बोना होगा। तभी सदाचार का हरा भरा पौदा तय्यार हो सकता है, अन्यथा नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पूर्व मन्त्र में वाणी, प्राण, चक्षु, श्रोत्र, नाभि, मेढ़ और पायु की शुद्धि के पश्चात् चरित्रशुद्धि का वर्णन आया है। इससे प्रतीत होता है कि चरित्रशुद्धि तब तक होना असम्भव है जब तक पूर्वोक्त साधनों की शुद्धि न हो।

उपरोक्त साधनों को हम चार हिस्सों में बाँट सकते हैं। (क) वाणी, चक्षु तथा श्रोत्र शुद्धि (ख) प्राण शुद्धि (ग) नाभि और मेढ़ शुद्धि (घ) पायु शुद्धि। इन शुद्धियों के होने पर परिणामभूत चरित्र शुद्धि होती है।

(क) वाणी, चक्षु और श्रोत्र शुद्धि से-असत्य भाषण, कुवचन, निन्दा, शपथ, कुदृष्टि, अश्लील तथा श्रवणादि बुरे विषयों से इन्द्रियों के रोकने का अभिप्राय है।

(ख) प्राण-शुद्धि का अभिप्राय प्राण-विद्या अथवा प्राणायाम साधना है। प्राणायाम से श्वास की गति समता को पहुँचती है और प्राणों की इस समता से ही चित्त वशीभूत होता है और कुविचारों को रोकने का सामर्थ्य पैदा होता है।

(ग) नाभि और मेढ़ शुद्धि से अभिप्राय (Sexual) जनन-शास्त्र-सम्बन्धी तत्त्वों के परिज्ञान से है। वेद इस सिद्धान्त को अच्छे प्रकार अवगतार्थ कराना चाहता है कि अनुचित व्यापार शरीर मन और आत्मा इन तीनों को गिराने वाले हैं। कई विद्वान् बच्चों की शिक्षा के क्षेत्र में जनन-शास्त्रीय सिद्धान्तों को स्थान नहीं देना चाहते। यह बात ठीक है कि ऐसे सिद्धान्तों का समझाना बहुत कठिन है। और भय है कि ऐसे अनुचित व्यापारों से बच्चे को पृथक् करते २ कहीं उसका मन इन व्यापारों की खिचावट का शिकार न बन जावे। तथापि यदि इस शिक्षा का कार्यभार अनुभवी विद्वानों के हाथ में दिया जाय तो हानि के स्थान में लाभ की अवश्य सम्भावना है। वेद में "जनः पुनातु नाभ्याम्" इस वर्णन में नाभि का जनन शक्ति के साथ सम्बन्ध स्पष्ट रीति से दिखाया है। और मेढ़ पद तो जननेन्द्रिय का वाचक ही है।

(घ) पायु शुद्धि से अभिप्राय शरीर की वाह्य शुद्धि से है। यमनियमों में भी शौच की बड़ी महिमा गाई है। अन्तः शुद्धि का अवलम्ब वाह्य शुद्धि है। इसी लिये मन्त्र में वाह्य शुद्धि पर भी ज़ोर दिया है।

इन शुद्धियों के उपरान्त ही चरित्र संगठन हो सकता है, अर्थात् संस्कार और वाह्य व्यवहार की पवित्रता हो सकती है। पाठकों से प्रार्थना है कि वे इस मन्त्र पर और अधिक विचार करें। इस प्रकार मन्त्र का गम्भीर आशय और भी स्पष्ट हो जायगा।

॥ ताजमहल ॥

लेखक—श्रीयुत् हरिशंकर भट्ट

रहा नहीं पाषाण-भवन वह प्रेम भवन है।
रूप-राशि यश-पुञ्ज मनोहर सुखद सदन है॥
है धारी तन-युगल परन्तु एक ही मन है।
दो प्रेमी की प्रेम-कली का खिला-सुमन है॥
रवि-सुता के कूल पर वह प्रेम का आवास है।
प्रेम का आवास क्या है? प्रेम का इतिहास है॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

क्या इंगलैंड ऊंचे सिद्धान्तों के लिये और बेलजियम की रक्षा के लिये युद्ध में सम्मिलित हुवा ?

लेखक—श्रीयुत् ठाकुर छेदीलाल एम. ए. (आक्सन). बारिस्टर-एट-ला।

यूरोपियन राजनीतिज्ञों की यह प्राचीन चाल है कि अपनी वैदेशिक नीति के संचालन में चाहे ये कितना भी नीच व्यौहार क्यों न करें सदैव ये उच्च सिद्धान्त तथा न्याय की दुहाई देते हैं। वर्तमान युद्ध जब छिड़ा उस समय भी प्रत्येक राष्ट्र के घोषणा को पढ़ने से यही मालूम होता है कि न्याय और सत्यता का सब से बड़ा संरक्षक वही है। मित्र राष्ट्रों ने संसार को यह समझाने का प्रयत्न किया कि संसार में अन्यायी तथा कपटी जर्मनों से बढ़ कर कोई दूसरा नहीं है। इसके प्रतिकूल जर्मन सब अपराध मित्र राष्ट्र के मत्थे मढ़ना चाहते थे। इंगलैंड की युद्ध घोषणा संबंधी वक्तव्यों को देखने से यह प्रतीत होता है कि इंगलैंड ने निःस्वार्थ भाव से न्याय की रक्षा के लिये ही वर्तमान युद्ध में मित्र राष्ट्रों का साथ दिया। जिस बेलजियम ने निरीह कांगो निवासियों पर जुल्म की हद कर दी और न्यायपूर्ण इंगलैंड इसके लिये बेलजियम को कुछ भी नहीं कहा उसी बेलजियम पर जब जर्मनों ने हमला किया इंगलैंड तुरंत बेलजियम की स्वतंत्रता की दुहाई देकर रणांगन में कूद पड़ता है। इस लेख का विषय केवल इसी बात की मीमांसा करना है कि क्या इंगलैंड ने यथार्थ में बेलजियम के ही लिये और इन उच्च सिद्धान्तों की रक्षा के ही लिये युद्ध में पदार्पण किया ?

बेलजियम और इंगलैंड से वास्तविक संबंध क्या था इसके समझने के लिये १८३९ की संधि पर विचार करना आवश्यक है। १८३९ की सन्धि आस्ट्रिया, फ्रान्स, प्रशिया, रूस, हालैंड और इंगलैंड के बीच हुई थी। इस सन्धि की मुख्य शर्त यही है कि ये सब राष्ट्र बेलजियम के स्वत्वों की रक्षा करेंगे और उसे तोड़ेंगे नहीं। इतना स्मरण रखना चाहिये कि उस सन्धि में ऐसी कोई शर्त नहीं है जिस से इंगलैंड का शर्त तोड़ने वाले राष्ट्र के विरुद्ध लड़ने की व्यवस्था हो। इस सन्धि के अनुसार इंगलैंड के कर्त्तव्य का अन्त इतने में ही हो जाता है कि वह स्वयं बेलजियम की निष्पक्षता को भंग न करे। इस लिये यह कहना कि इंगलैंड ने संधि-रक्षा के लिये युद्ध घोषणा की भ्रमात्मक है। अब यह देखना है कि क्या बेलजियम की रक्षा करना ही इंगलैंड को अभीष्ट था।

यदि युद्ध घोषणा के पूर्व जो कुछ लिखा पढ़ी जर्मनी से तथा इंगलैंड से हुई उस पर विचार किया जावे तो इस रहस्य-मय लिखा पढ़ी से भी यही ध्वनि निकलेगी कि बेलजियम की रक्षा करना ही इंगलैंड के युद्ध में भाग लेने का मुख्य कारण नहीं हो सक्ता। यदि इंगलैंड बेलजियम को केवल बचाना ही चाहता तो बिना युद्ध में सम्मिलित हुवे ही उसकी रक्षा कर सक्ता था। सन् १८७० में जर्मनी फ्रान्स युद्ध के समय ग्लेडस्टन ने इसी नीति के अनुसरण से बेलजियम को बचा लिया। जब जर्मनी ने फ्रान्स के विरुद्ध युद्ध आरंभ कर दिया उस वक्त ग्लेडस्टन ने फ्रान्स तथा जर्मनी दोनों को लिखा कि इनमें से कोई बेलजियम की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निष्पक्षता को भंग न करे और यदि कोई करेगा तो इंगलैंड उसका प्रतिकार शस्त्र से करेगा। इसका यह परिणाम हुवा कि दोनों शक्तियों को मालूम हो गया कि बेलजियम में आक्रमण करने का अर्थ इंगलैंड की शत्रुता है इसलिये दोनों में से किसी ने बेलजियम पर धावा नहीं किया और बेलजियम उस युद्ध काल में सुरक्षित रहा। यदि १९१४ में भी अंग्रेजी राजनीतिज्ञ इसी नीति का अनुसरण करते तो बेलजियम पर यह आपत्ति कदापि नहीं आती ॥

२४ जुलाई सन १९१४ से यूरोपीय राजनैतिक क्षेत्र में युद्ध का बाज़ार गर्म होने लगा। अंग्रेजी फ्रेंच तथा जर्मन राजनीतिज्ञों में २४ जुलाई से ३ अगस्त तक जो कुछ लिखा पढ़ी हुई उस पर विचार करने से भी यही मालूम होता है कि इंगलैंड का मुख्य अभिप्राय बेलजियम की रक्षा न था। यद्यपि सब देश के कूट नीतिज्ञ प्रयत्न कर रहे थे कि इंगलैंड उनका साथ दे। इंगलैड ने २९ जुलाई तक किसी भी राष्ट्र को अपना सहयोग देने का वचन नहीं दिया वरन फरांसीसी राजदूत से भी उन्होंने टाल टूल कर दिया। आश्चर्य तो यह होता है कि ३१ जुलाई तक किसी भी पत्र में बेलजियम का नाम तक नहीं आता। फरांसीसी राजदूत मो० केम्बों को सर एडवर्ड ग्रे ने यह कहा कि रूस के नाम से इंगलैंड का युद्ध में सम्मिलित होना लोकमत के अनुकूल न होगा। उन्हों ने कहा "Up to the present moment we did not feel and public opinion did not feel that any treaties or obligations of the country were involved. Further Developments might alter this situation and cause the Government and Parliament to take the view that intervention was justified. The preservation of the neutrality of Belgium might be, I would not say a decisive but an important factor in determining our attitude.

इसका भावार्थ यह है कि अबतक न हमें न जनता को ही मालूम था कि सन्धि की अवहेलना की गई है। कुछ समय के पश्चात् भले ही परिस्थिति आकर उपस्थित होजाय जिस से सरकार और पार्लीयामेंट को दखल उचित जान पड़े। बेलजियम की निष्पक्षता को सुरक्षित रखना हमारा प्रथम नहीं तो मुख्य कर्त्तव्य अवश्य है। और हमारा क्या भाव होगा यदि पूर्ण रूप से नहीं तो अधिक बेलजियम के साथ कैसा व्यवहार होगा उसी पर निर्भर रहेगा—

इस प्रकार बेलजियम का नाम पहिली वार आता है। जर्मनी ने इंगलैंड से कहा कि यदि जर्मनी के वचन देने पर कि वह बेलजियम की निष्पक्षता न भंग करेगा वर्तमान युद्ध में इंगलैंड उदासीन रहने का वचन देवे तो जर्मनी कभी बेलजियम पर धावा नहीं करेगा। किन्तु सर एडवर्ड ग्रे ने इसे भी स्वीकार नहीं किया। यदि इंगलैंड की इच्छा केवल बेलजियम का बचाव करने की थी तो जर्मनी का प्रस्ताव इन्हों ने क्यों नहीं माना? पार्लियामेंट के सामने ३ अगस्त १९१४ को जो उन्हों ने वक्तृता दी उस से स्पष्ट है कि जर्मन राजदूत ने उनसे आग्रह पूर्वक उदासीन रहने के लिये कहा। सर एडवर्ड ग्रे ने जर्मनी की इस बात को नहीं माना इससे बिलकुल स्पष्ट है कि बेलजियम की रक्षा युद्ध का मुख्य कारण नहीं है। आश्चर्य तो यह है कि बेलजियम की रक्षा करने के लिये ग्लेडस्टन फ्रान्स या जर्मनी से युद्ध तक करने को तुले थे मगर सर एडवर्ड ग्रे बेलजियम की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रक्षा के लिये अपनी निष्पक्षता का भी वचन नहीं दे सके। ऐसा मालूम होता है कि अंग्रेज़ कूट नीतिज्ञों ने युद्ध घोषणा के समय बेलजियम का नाम इसलिये लिया ताकि लोकमत उनके कार्य का अनुमोदन कर उन्हें सहायता देवे। युद्ध के असली कारणों को बृटिश जनता की आंखों से ओट कर बेलजियम का नाम लेना केवल इसी प्रयोजन के लिये था।

इसी सम्बन्ध में एक बात विचारणीय और है कि यदि इंगलैंड निष्पक्षता भंग करना इतना अनुचित समझता था तो स्वयं उसने ही युद्ध छिड़ जाने के कुछ दिन बाद ही सालोनिका में अपनी फौज उतार ग्रीस की निष्पक्षता क्यों भंग की? यदि बेलजियम की इच्छा के प्रति कूल बेलजियम में फौज भेज कर जर्मनी ने अनुचित किया तो क्या ग्रीस की बातों को न मान कर इंगलैंड ने सालोनिका में फौज भेज कर बुराई नहीं की? क्या कहने के और करने के सिद्धान्तों में भेद होता है?

ऊपर के कथन से स्पष्ट हो गया होगा कि इंगलैंड के युद्ध में सम्मिलित होने का मुख्य कारण बेलजियम नहीं है। अब यह देखना है कि क्या इंगलैंड ने युद्ध स्वभाग्य-निर्णायक आदि ऊंचे सिद्धान्तों के लिये किया जैसा कि कहा जाता है। इंगलैंड के महामंत्री अपनी वक्तृता में पार्लियामेंट के सन्मुख कहते हैं--
"We are fighting to vindicate the principle which in these days when material force sometimes seems to be the dominant influence and factor in the development of mankind, that small nationalities are not to be crushed in defiance of international good faith by the arbitrary will of a strong and over mastering power."

जिसका भावार्थ यह है कि इस वाह्य आडंबर के युग में भी जब कि मनुष्य की उन्नति करने में पाशविक शक्ति का ही असर पड़ता है और उसी की प्रधानता रहती है, हम लोग इस सिद्धांत की रक्षा के लिये लड़ रहे हैं कि कोई भी सर्वशक्तिशाली राष्ट्र अपनी स्वेच्छाचारिता से अन्तर्राष्ट्रीय व्यवहारों को तिलांजली दे किसी भी छोटे राष्ट्र को नहीं कुचल सक्ता।

इसी युद्ध संबंधी दूसरी वक्तृता में भी उन का कथन बड़े मार्के का है। वे कहते हैं "We shall never sheath the sword, which we have not lightly drawn untill Belgium, and I will add Servia recovers in full measure all and more than all, which she has sacrificed, untill France is adequately secured against the menace of aggression, untill the rights of the smaller nationalities of Europe are placed upon an unassailable foundation and untill the military domination of Prussia is wholly and finally destroyed." जिसका भावार्थ यह है हम अपनी तलवार, जिसे हमने बहुत सोच कर खींचा है तब तक म्यान में न डालेंगे जब तक बेलजियम और उसके साथ सर्व्हिया की जो कुछ हानि हुई और इन्हें जो कुछ त्याग करना पड़ा है केवल उसकी पूर्ण रूप से पूर्ति ही न हो जावे बल्कि उस से भी अधिक इन्हें कुछ मिले, जब तक फ्रान्स पर दुबारा आक्रमण न हो सकने का हमें पूर्ण विश्वास न हो जावे, जब तक छोटे राष्ट्रों की स्थिति ऐसी न हो जावे कि उनके साथ कोई मनमाना व्यौ-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हार न कर सके और जब तक कि प्रशिया के सैनिक प्रभाव का पूर्ण रूप से अंत नहीं कर दिया जावे। इसमें संदेह नहीं कि यदि युद्ध इन सिद्धान्तों के लिये छेड़ा गया तो इस से अच्छी कोई दूसरी बात नहीं है। अपने लिये तो सब मरते हैं किन्तु जो दूसरे के लिये मरे उसी का मरना उत्तम है। किन्तु यदि हम इंगलैंड के उन कार्यों पर बिचार करें और उन सन्धियों को ध्यान से पढ़ें जिन्हे इंगलैंड के कूटनीतिज्ञों ने अन्य यूरोपीय राष्ट्रों को अपनी ओर युद्ध में मिलाने को उन से की तो निश्चय हो जावेगा कि इंगलैंड के मंत्रियों का इस तरह शेखी मारना निरा ज़बानी जमाखर्च था। जिस समय अंग्रेजी मंत्री छोटे राष्ट्रों की रक्षा करके अपने पवित्र कर्त्तव्य के पालन करने के राग अलाप रहे थे उसी समय मित्र राष्ट्रों से इन्होंने बहुत से माहदे ऐसे किये थे जिन से इन सिद्धांतों को सब से बड़ा आघात पहुंचता था। इन माहदों के मुताबिक संसार में मित्र राष्ट्र के शक्तियों की भूमि सर्व साधारण से छिपा कर बढ़ाने का प्रस्ताव था और ये माहदे ऐसे थे कि निश्चय इन से छोटे राष्ट्रों को ही हानि उठानी पड़ती क्योंकि इन्हीं के ज़मीन का बटवारा इन्होंने आपस में किया था। अंग्रेजी कूटनीतिज्ञों को इस तरह सिद्धांत की दुहाई सर्व साधारण में देना और गुप्त रूप से छोटे राष्ट्रों की भूमि का इस तरह बटवारा कर लेना जैसा कि जर्मन भी नहीं करेगा इस कहावत को कि "मुंह में राम बगल में छुरी" पूर्ण रूप से चरितार्थ करता है। आश्चर्य तो यह है कि इन सन्धियों का सर्व साधारण को पता तक नहीं था। यदि रूस में ज़ारशाही का अंत न हो जाता और रूस में बोलशेविक शासन की स्थापना न हो गई होती तो जनता को इन सन्धियों के विषय में कुछ भी नहीं मालूम होता। पश्चिमीय राष्ट्र की पोल खोलने के लिये और इनकी धूर्तता को संसार में सब के प्रति प्रगट करने के लिये बोलशेविक सरकार ने जितनी सन्धियां यूरोपियन राष्ट्रों ने गुप्त रूप से आपस में की थीं और जिनकी ठीक नकल रूसी वैदेशिक सचिव के दफ्तर में थी पूरी तौर से छाप कर प्रकाशित करदी। मित्र राष्ट्र के कूटनीतिज्ञ आज तक इसको अस्वीकार नहीं कर सके हैं इससे यही अभिप्राय निकलता है कि जिन सन्धियों का विवरण उस पुस्तक में दिया गया है करीब २ सब सच हैं। यूरोपियन राजनीतिज्ञों की चाल को समझने के लिये और उनकी धूर्तता को पूर्णरूप से अनुभव करने के लिये यह आवश्यक है कि इन गुप्त सन्धियों का कुछ विवरण दिया जावे। तब यूरोप वालों के स्वभाग्य निर्णयात्मक सिद्धांत का पता सबको लग जावेगा। यहां पर यह भी बता देना आवश्यक है कि जिन राष्ट्रों की भूमि का इन लोगों ने चोरी २ बटवारा किया था उनकी सम्मति किसी भी तरह से इस विषय में नहीं ली गई। सम्मति लेना तो एक ओर रहे उन्हें इस बटवारे का ध्यान भी नहीं था। इन गुप्त सन्धि पत्रों का विवरण देशवार निम्न लिखित रीति पर है :—

पहिली फरांसीसी अंग्रेजी तथा रूसी सन्धि।

(१९ फरवरी से ४ मार्च १९१५ को स्वीकृत)

इसके अनुसार रूस को कुस्तुनतुनिया, वासफोरस का पश्चिमीय किनारा, मारमोरा का समुद्र, दर्रे दानियाल, दक्षिणीय थ्रेस इनास मीडिया सीमा तक, वासफोरस और सफारिया नदी के बीच का एशिया-माइनर का हिस्सा, इम्ब्रास और टेनीडास के द्वीप, दिये गये थे। रूस की ओर से इसके बदले में यह वायदा किया गया था कि वह फ्रान्स और इंगलैंड

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तुर्किस्तान से जो कुछ मांगे इसका समर्थन करे। इन लोगों की मांग यह थी कि एशिया टर्की में फ्रान्स और इंगलैंड का हक होना रूस स्वीकार कर लेवे, इरान के उस हिस्से में जहां किसी का अधिकार नहीं है इंगलैंड का अधिकार माना जावे॥

दूसरी फरांसीसी रूसी तथा अंग्रेजी सन्धि।

(३० जनवरी १९१७)

फ्रान्स को युद्ध के अन्त होने पर केवल अलेसस लोरेन ही के देने का वचन नहीं दिया गया वरन सारब्हेली तथा राइन नदी के किनारे तक की ज़मीन पर फरांसीसी अधिकार रहने देने का वचन दिया गया ताकि सैनिक दृष्टि से फ्रान्स को किसी तरह की अड़चन न हो। इस के बदले रूस को अपनी तरफ जर्मनी की सीमा निर्धारित करने का वचन दिया गया। इंगलैंड फ्रान्स और रूस ने एशिया टर्की का इस तरह बटवारा आपस में कर लिया। इंगलैंड को दक्षिणी बगदाद सहित मेसापोटामिया, और सिरिया में दो बन्दरगाह दिये गये। फ्रान्स को सिरिया, अदाना, विलायत तथा पश्चिमीय खुर्दिस्तान पर कब्ज़ा दिलाने का वायदा किया गया और रूस को ट्रेविज़ोन्ड, इरज़ेरूम, विटलिस, व्हान तथा दक्षिणी खुर्दिस्तान मिला। तात्पर्य यह कि तुर्किस्तान के सब मुल्क का इन्होंने आपस में बटवारा कर लिया।

तीसरी फरांसीसी रूसी तथा अंग्रेजी सन्धि।

(११ मार्च १९१७)

पश्चिमीय भाग में जर्मनी की सीमा निर्धारित करने का सब अधिकार फ्रान्स तथा इंगलैंड को दिया गया और इसके बदले पूर्व में जर्मनी तथा आस्ट्रिया हंगरी की सीमा मुकर्रर करने का संपूर्ण हक रूस को दिया गया। इसके साथ २ पोलैंड में जहां कि रूस के अत्याचार की मात्रा काफी से अधिक थी किसी भी स्वभाग्य निर्णायक सिद्धान्त को लागू नहीं किये जाने का वचन दिया गया।

इटली, फ्रान्स, इंगलैंड तथा रूस की सन्धि।

(२० अप्रैल १९१५)

इटली से वायदा किया गया कि यदि वह जर्मनी के विरुद्ध लड़ेगा तो विजयी होने की हालत में उसे ट्रेनटिनो, दक्षिणी टिरोल ट्रीस्ट, गोरीज़िया प्रदेश इसट्रिया तथा डालमेशिया प्रान्त दिये जावेंगे। इसके बदले इटली ने इकरार किया कि वह फ्रान्स इंगलैंड तथा रूस को मान्टनीग्रो, सर्विया तथा ग्रीस के बीच आलबानिया के विभाग करने में नहीं रोकेगा। जर्मनी के आफ्रिकन प्रदेश में भी इटली को हिस्सा देने का वचन दिया गया। इसके अनुसार बहुत सा प्रदेश जहां के निवासी, जर्मन स्ल्याव्ह, ग्रीक तथा अलबानियन हैं इटली के आधीन किये गये।

ऊपर दिये हुवे इतने ही उदाहरण इस बात को पूर्ण रीति से सबूत कर देते हैं कि मित्र राष्ट्र जिन सिद्धान्तों के लिये लड़ना सब से प्रगट करते थे उन्हीं के बिलकुल विरुद्ध बराबर छिपा कर कार्य भी करते जाते थे। जनता जो पानी की तरह अपना खून इन सिद्धान्तों के लिये बहा रही थी इन कूट नीतिज्ञों के इन करतूतों से बिलकुल अपरिचित थी। उनको इन सन्धियों की किंचित मात्र भी खबर नहीं दी गई थी। इसी संबंध में लार्ड लोरबर्न का कथन विचारणीय है। वे कहते हैं:—

In public we were told that none of the allies would claim any condition

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

of peace without the consent of the allies and that the objects of the war were fine ideals, freedom, the protection of small nationalities and the defeat of a cruel military bully.

In private the consent of our Government was given beforehand to vast schemes of territorial annexations in which great districts were distributed among other great powers including ourselves with no stipulation for consulting the wishes of the population concerned, but simply by the right of conquest. इसका भावार्थ यह है कि प्रकाशित रीति से तो हमें यह बताया जाता है कि मित्र दल का कोई देश बिना सर्व सम्मति सन्धि की शर्तें स्वीकार न करेगा। हमसे कहा जाता है कि युद्ध के कारण ऊंचे आदर्श, स्वतंत्रता तथा छोटे राष्ट्रों की रक्षा के साथ २ अत्याचारी सैनिक शक्ति का नाश है। किन्तु एकान्त में हमारी सरकार ने, भूमि के बटवारे के बहुत बड़े प्रस्ताव में जिसके मुताबिक इंगलैंड सहित सब बड़ी शक्तियों ने भूमि के बहुत हिस्सा को बांट लिया, स्वीकृति दे दी। किन्तु जिनके देश का बटवारा किया गया उनसे पूछा तक नहीं गया और इस तरह बटवारा करने का एक मात्र कारण युद्ध में विजय लाभ करना ही प्रतीत होता है।

इस सब कथन का एक ही सारांश है कि यथार्थ में यह युद्ध इन ऊंचे सिद्धान्तों के लिये नहीं लड़ा गया जिनकी दुहाई देकर मूर्ख जनता को प्राणपण से स्वार्थ त्याग करने को कहा गया और जिन पर विश्वास कर संसार के सब लोगों ने बहुत आत्मोत्सर्ग किया।

इस संबन्ध में इतना स्मरण रखना चाहिये कि व्हरसेयी में जो सन्धि की गई रूस को छोड़ कर बहुत कुछ इन्ही गुप्त सन्धियों के आधार पर की गई।

अब केवल एक प्रश्न रह जाता है। वह यह है कि जब इंगलैंड के युद्ध में भाग लेने का कारण न बेलजियम है न उच्च सिद्धान्तों की रक्षा ही है जैसा कि उपरोक्त कथन से स्पष्ट हो गया होगा, तब उसके युद्ध में सम्मिलित होने का कारण क्या है? कारण इसका एक मात्र यह है कि इंगलैंड जर्मनी की व्यापारिक प्रतिद्वंदिता से असंतुष्ट था। जर्मनी की बढ़ती हुई शक्ति को वह नहीं देख सक्ता था। इसलिये फ्रान्स के साथ जो जर्मनी से अलसेस लोरेन के कारण असंतुष्ट था इंगलैंड ने मित्रता जोड़ी और बिना स्पष्ट शब्दों में ऐसा इकरार किये केवल अपने कार्य द्वारा ऐसी दुरवस्था उत्पन्न कर दी कि जर्मनी से युद्ध होने पर दोनों मिल कर जर्मनी के खिलाफ लड़े। इंगलैंड भी लड़ने को मौका ढूंढ़ता था इस लिये जिस समय यूरोप में युद्ध के बादल घिर रहे थे उन्हें रोकने का बिलकुल प्रयत्न नहीं किया। कई राजनीतिज्ञों का मत है कि यदि युद्ध घोषणा के पूर्व ही इंगलैंड जर्मनी और आस्ट्रिया को स्पष्ट रूप से बता देता कि वह युद्ध होने पर फ्रान्स का साथ देगा तो यूरोपीय महाभारत कभी न छिड़ता। जर्मनी ने युद्ध आरम्भ इसीलिये किया था कि उसे विश्वास था कि इंगलैंड निरपेक्ष राष्ट्र रहेगा। इस कारण युद्ध के आरम्भ करने का बहुत कुछ दोष इंगलैंड पर ही लगाया जा सक्ता है और उसके युद्ध में शामिल होने का कारण उसकी जर्मनी के प्रति घृणा है। दूसरा कारण बताना वास्तविक प्रतीत नहीं होता।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रुक्मणी हरण नाटक

अनुवादक—श्रीयुत् मेधावत जगजीवन

प्रवेश दूसरा।

[स्थान—सांदीपन ऋषि के गुरुकुल सम्मुख का मार्ग]

पात्रगण।

रुक्मिणी—कुन्दनपुर के राजा भीमक की पुत्री, कृष्ण की प्रणयिनी।

रुक्मी उर्फ रुक्मैया—रुक्मिणी का भाई, शिशुपाल की बहिन सिद्धि से बलात् ब्याहने को उम्मीदवार।

शिशुपाल—चेदीपुर का राजा, कृष्ण का ममीआई भाई होता हुआ शत्रु, रुक्मिणी को पत्नी बनाने के लिये आतुर।

सिद्धि—शिशुपाल की भगिनी, कर्मयोग की हृदयेश्वरी।

जरासन्ध—मगध सम्राट्, कृष्ण का शत्रु, शिशुपाल का सहायक।

तदतिरिक्त—सैनिक, अनुचर आदि।

दृश्य—[आश्रम के सामने उभयपार्श्व-सघन वृक्षमण्डित-राजपथ पर से जाता हुआ रथ। रथ के आगे २ चलता हुआ अश्वारोही रुक्मैया दिखाई देता है। रुक्मिणी रथ में से बाहर आती है। रुक्मैया घोड़े पर से नीचे उतरता है]

रुक्मैया—फतेह बेड़ा पार है, बस अब किनका भार है?

प्रारब्ध—(नेपथ्य में से ताकता हुआ स्वगत) प्रारब्ध पर आधार है।

रुक्मिणी—हे रुक्मी भय्या! बादल में घिरी हुई बिजली की नाईं मुझे तुम इस प्रकार दूर दूर कहां और किसलिये ले जाते हो?

रुक्मैया—ठहर बहिन ठहर! बिजली की अचानक चमक की माफिक ही तुम्हारी शंका का समाधान होता है। सुनो, हमारे गुप्त संकेतानुसार सम्राट जरासन्ध के साथ महाराज श्री शिशुपाल यहां दहेज लेकर आवेंगे, और उनके साथ तुम्हारा पाणिग्रहण होगा।

प्रारब्ध—(स्वगत) पर क्रिया प्रारब्ध का होगा।

रुक्मिणी—(चौंककर) हैं! यकायक काल सर्प के फूत्कार जैसा यह विश्वासघात! हे पृथ्वी! फटजा। हे मेघो प्रलय में गरज उठो। ऐ आकाश के तारो! टकराकर गिर पड़ो। मैं रथ पर बैठकर घूमने निकली थी वहाँ सारथी के साथ गुप्त मसलत कर मुझे अकेली को जल्दी उठा लाने की यह दगलबाज़ी?

रुक्मैया—हाँ जी बहिन! हाँ जी!

प्रारब्ध—(स्वगत) अरे बाहरे मेरे पाजी

रुक्मिणी—पिताजी ने तो मेरा स्वयंवर रचने का निश्चय किया है और तू मुझे ऐसे राक्षसी बलात्कार रूप विवाह यज्ञ में स्वाहा कर देगा? अमृतधारा को साँप के मुख में डालेगा? पुष्पमाला को जलते रणाग्नि में फेकेगा? चन्द्रज्योत्स्ना को राहु से निगलवायेगा? मैं इस अनार्य शिशुपाल को चाहती ही नहीं, और इस लिये उससे ब्याहूँगी ही नहीं। सिंही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को कुत्ते के सामने नमाने की भांति तेरा प्रयत्न व्यर्थ होगा।

रुक्मैया—हुँ ! वह देखा जायगा। तुम्हे यहाँ कोई नहीं छुड़ावेगा।

प्रारब्ध—(स्वगत) किया प्रारब्ध का होगा, मदद में कृष्ण दौड़ेगा।

रुक्मिणी—किन्तु यज्ञ को घेरने वाले धूएं की तरह इस प्रकार मेरे स्वयंवर में बाधा डालने से तेरा क्या स्वार्थ सिद्ध होगा ?

प्रारब्ध—(स्वगत) संभव है कि शायद नकटे का नाक कटेगा।

रुक्मैया—सुनो, मैं शिशुपाल जैसे प्रतापी राजा का साला कहाऊँ यह पहला स्वार्थ। और तुम्हारी उसके साथ शादी करा देने से वह भी अपनी बहिन सिद्धि से मेरा विवाह करा देने को तैय्यार है, इससे हम दोनों आपस में साले साले होंगे यह दूसरा स्वार्थ।

प्रारब्ध—(स्वगत) अरे वाहरे वाह ! मेरे साले के साले तेरे नखरे निराले।

रुक्मिणी—गुलामों के बड़प्पन की तरह, भिक्षुकों की बड़ाई की तरह, धर्म्म भ्रष्टों की दांभिकता की भांति, तथा अब्रह्मचारी अनार्यों की जनोई की नाई शरम शरम है तुझको ! जो तू इस प्रकार बहिन के बदले में स्त्री को लेने तथा इवान का साला बनने चला है। किन्तु स्मरण रखना कि यह रुक्मिणी आर्य क्षत्रिय रमणी है, स्त्री स्वातंत्र्य-स्वर्ग की उच्च निःश्रेणी (सीढ़ी) है, स्वयंवर विवाहयज्ञ की पावन अग्नि है।

अबलों न भारत में घटी स्त्रीरत्न की सुस्वतंत्रता।
अरु नाहिं मिटी निजरक्त की वो आत्मगौरव गर्वता॥
जनक,भाई कन्यका को यदि सतावें तुम समान।
नाश होवे देश का निश्वास से उसके महान ॥१॥

रुक्मैया—वह देखा जायगा। यदि तू सरलता से न मानेगी तो शिशुपाल के हाथ से तेरा हरण कराया जायगा।

प्रारब्ध—(स्वगत) तो हरण से कृष्ण उसे फिर स्त्री बनादेगा।

रुक्मिणी—शिशुपाल ऐसे मेंढक को यह सर्पिणी कदापि प्रीति के फन पर नहीं बिठावेगी। मैं देखती हूँ कि मेंढक सर्पिणी से विवाह करता है या सर्पिणी उसे निगलती है।

रुक्मैया—(नेपथ्य की ओर देखता हुआ) यह आपहुँची सवारी शिशुपाल की अब कहाँ जावोगी ? करोगी जो कुछ अनाकानी तो फिर पछताओगी।

प्रारब्ध—(स्वगत) किया प्रारब्ध का होगा दूसरे बैठे छींकें खायेंगे। चलो, यह खबर शीघ्र कृष्ण को दें। और इन लोगों का मनोरथ तोड़ दें। (जाता है)

[त्योंहीं शिशुपाल अपनी बहिन सिद्धि को लिये प्रवेश करता है।]

सिद्धि—अमावस्या के अन्धकार जैसे इस रुक्मैया को मेरा हृदय-चकोर जीते जी तो नहीं वरेगा।

शिशुपाल—सिद्धि ! ऐ सिद्धि ! स्वेच्छा से नहीं तो बलात्कार से वरना ही होगा।

सिद्धि—जिसका मुख तक देखना मुझे पसंद नहीं उसे सिद्धि का हाथ कैसे ग्रहण करेगा ?

रुक्मैया—यह तो देखा जायगा। किन्तु मेरा मुंह तो मुसाफिरी के धूल से काला हो गया है। नहीं तो यह मुख क्या कम रसीला है?

सिद्धि—युद्ध से भागने वाले क्षत्रिय के अपयश जैसा, सत्याग्रह की प्रतिज्ञा में से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्खलित हुए मलिन अन्तःकरण जैसा, दंभी के आडंबर जैसा, तथा ऋषिमुनियों के चरित्र की निंदा करने वाले नीच वचन जैसा यह तेरा मुख है।

शिशुपाल—(अवगणनापूर्वक) सांडसी में आई हुई सर्पिणी के मिथ्या फूत्कार! बस, रुक्मीदेव! अब क्या देर है?

रुक्मैया—मुझे साला बनाओ और तुम भी साला बनो, बस इतनी ही देर है।

शिशुपाल—अच्छा तो अब देखता हूं कि हमारी धारणा को कौन रोकने वाला है?

रुक्मिणी—सिद्धि--सती के शाप जैसा हमारा घोर तिरस्कार!

रुक्मैया—तुम्हारी मजाल क्या है मजाल!

शिशुपाल—(नेपथ्य में देखता हुआ) अरे, कोई है महाराज हाथ ग्रहण कराने वाला?

प्रारब्ध—(झट प्रवेश कर) जी हां यह है प्रारब्ध जोशी ताबेदार [छींक खाता हुआ] राम तो बोलो राम यार!

[ससंभ्रम से शिशुपाल और सिद्धि इन दोनों भाई-बहिन का हाथ मिलाने लगता है]

शिशुपाल--अरे, मूर्ख के सरदार! इस रुक्मैया और सिद्धि का पाणिग्रहण करा दे।

सिद्धि--अरे, कोई बचाओ, हम पै यह राक्षसी बलात्कार!

रुक्मिणी—हे प्रभु! उबार, उबार।

कृष्ण-कर्मयोग-(एकदम प्रवेशकर)खबरदार!

कृष्ण--कौन करता है निराधार अबला पर अत्याचार!

रुक्मिणी-सिद्धि--हे देव तारनहार!

[रुक्मिणी कृष्ण को और सिद्धि कर्मयोग को लिपट जाती है]

शिशुपाल--यह तो कृष्णगोपाल, कंस का काल!

कृष्ण—जी हां! पाप, अत्याचार, जुल्म और मानवमुक्ति के विरोधियों का मैं हूं काल किन्तु धर्म्म, न्याय, स्वातंत्र्य और साम्यवाद का अमृतावतार। मानवजाति की पुण्यमय भावना का उद्धार, साधु भक्तों का रक्षण, दुष्टों का दमन और मनुष्य मात्र का मोचन रूप प्रभु संदेश का स्थापनहार।

शिशुपाल—शृगाल! सिंह के शिकार पर से हाथ हटा दे नहीं तो बुरी मौत मरेगा।

कृष्ण—शिशुपाल! जुल्मियों का कमज़ोर ज़ोर इँच भर की क्षुद्र जीभ पर या बिन (हथियार वाली निर्बल प्रजा पर ही चल सकता है। किन्तु यदि तू मुझे मार सकेगा तो पतंग सूर्य को मंद तेज बना देगा, तुच्छ कीट समुद्र को पी लेगा, परमाणु आकाश को निगल जायगा और नपुंसकत्व ब्रह्मचर्य्य को जीत लेगा। नक्षत्रों को तोड़कर गिरा देने जैसी तिनके की दुराशा, भगवान् की मुक्तिस्वाधीनता छीन लेने की शैतान की लालसा!

शिशुपाल—ऊफ़, धृष्टता की हद, अब नष्ट होगा।

कृष्ण--जगत में से जुल्मियों का राज्य।

शिशुपाल—बे-मौत मरेगा।

कृष्ण—ज़ालिमों का अहंकार।

शिशुपाल—अच्छा देखता हूँ कि तू गोपाल क्या कर सकता है?

कृष्ण—गो अर्थात् पृथिवी का पालन और तुम जैसे भेड़ों का ताड़न।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शिशुपाल—यह अभिमान !

कृष्ण—भले यही हो उसका प्रत्यक्ष प्रमाण।

शिशुपाल—जान खोवेगा जान।

कृष्ण—आत्मकीर्ति और फ़र्ज के ख़ातिर वह भी कुर्बान।

शिशुपाल—अच्छा तो होशियार! (तलवार ले बढ़ता है)

कृष्ण—मेरा सुदर्शन तैयार। (सुदर्शन चक्र घूमता है)

शिशुपाल—[डरता, घबराता हुआ रुक्मैया से] जरासन्ध महाराज को बुलाओ। (रुक्मैया भागता है) अभी सेना कितनी दूर है ? उसको शीघ्र यहां लाओ। (स्वयंपलायन)

प्रारब्ध—होने वाले साले साले भागे और दूसरों के ही भाग जागे।

कृष्ण—देवि रुक्मिणी ! अभी इस रथ में बैठकर शीघ्र कुंदनपुर को पधारो।

रुक्मिणी—उषा के सूर्य की नाईं आप ही मेरे रथ के सारथी बन जाइये नहीं तो वे मुझे पीछे से पकड़ लेंगे।

कृष्ण—घबराना नहीं बाले ! सूर्य के उदय के सामने अन्धकार जैसे उनको मैं विरुद्ध दिशा में ही भगा दूँगा।

रुक्मिणी—तो भी मुझे डर लगता है। आप मेरे भय-भञ्जन बने हो इसलिये अब इस दासी को शरण में रख लो।

कृष्ण—सुज्ञ कुमारि! इस समय समयसूचकता धारण करो। वीर्य और रणशौर्य के धगधगते हुए रेती के रण में शृंगार और प्यार के मेघों की धारासार वर्षा निष्फल गिनी जाती है। इसलिये जल्दी करो और इस आकस्मिक आपत्ति में से छूट जाओ। वे सारी सेनासहित अभी यहाँ आ पहुँचेंगे।

रुक्मिणी—तो मैं लाचार हूं। जीवन प्राणों के जल-कणों को कृष्ण चरणाम्बुज युगल में ही अर्घ्यरूप चढ़ाकर यह काया जलधरी विदा होती है, उसे पुनरपि अनुग्रह रस से अवश्य भर दीजियो। गायन—

रुक्मिणी—प्रभुजी, इस शरणागत को कबहुं ना बिसारियो।
चरणामृत की माछली को बिरह से ना मारियो॥ प्रभु०

कृष्ण—जेहि भाव मुझ को भजें तेहिं करहुं प्यार।
अपने सच्चे स्नेही का मैं हूं ताबेदार।

रुक्मिणी—नाथ, हाथ सौंपा, तुम तारियो डुबाइयो। प्रभु०

[रुक्मिणी का रथ में बैठ कर प्रस्थान। कृष्ण नेपथ्य में विदा करने जाते हैं।]

जरासन्ध आदि—(प्रवेशकर) मारो इस कृष्ण और कर्मयोग को।

कर्मयोग—कृष्ण का कर्मयोग प्रथम उसकी ढाल बनने तैयार होता है।

[लड़ाई होती है और कर्मयोग सिद्धि सहित पकड़ लिया जाता है]

शिशुपाल—अब पकड़ो इस जीते कृष्ण को।

कृष्ण—(प्रवेश कर) सूर्यमंडल सदृश छोड़ता हूँ मेरे सुदर्शन चक्र को।

[दुश्मनों का चक्र में घिर जाना, भागना तथा चकित होना]

टेब्लो। (शनैः शनैः जवनिका पतन)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रवेश २रा।

[स्थान-गोकुलग्राम की गली।]

पात्र-वर्ग।

राधा—कृष्ण की बालसखी। कर्मयोग की भगिनी।

ललिता—विशाखा-राधा की सखियां।

नंद—कृष्ण का पालक पिता।

यशोदा-कृष्ण की पालन करने वाली माता।

इतर प्रजाजन।

राधा—(सखियों के सहित प्रवेशकर) गायन गाती है।

अहा, सखि! कृष्णचन्द्रजी आये। अहा०—
सुन्दर कोमल बदन चन्द्र से हर्ष सुधा बरसाये॥
तन, मन धन सब अर्पण करिके,
हृदयसिन्धु उछलाऊँ। अहा०—
नेत्र जलाञ्जलि रूप पाद्य से,
उनके चरण धुलाऊँ॥
पाणिपादुका पहिनाकर मैं,
हृदयासन बैठाऊँ।
प्राणकुसुम से अर्चन करिके,
आत्मदीप दिखलाऊँ॥ अहा०—

ऐ मेरे पुण्य प्रदेश व्रज की रज! तू सचमुच भाग्यशालिनी है, क्योंकि तुझ पर स्वर्गीय सौरभ फैलाने वाले कृष्णचन्द्र के कमल कोमल चरणों ने क्रीडा की है; और आज फिर वे तुझ पर से गुज़र कर तेरा अमूल्य मुक्तामणि तुल्य सम्मान करेंगे तथा तुझको परिमल प्रफुल्लिनी बनावेंगे। सखियो! इस वक्त यदि मैं इस व्रजमार्ग की धूलि होती तो अपने को बड़ी सौभागिनी समझती कि जिससे मैं कृष्ण के चरण कमल की नखकलिका में प्रविष्ट होकर सदा वहीं रहती।

ललिता—सचमुच राधा! कृष्ण ने बाल्य काल में अपने गंगोत्री पवित्र चरित्र से व्रजवासियों के मनमीनों को मुदित किया है, और बड़ी उमर में लोकनायक सिद्ध होकर, संकट सहायक बन, सूर्यताप सदृश निज प्रचण्डप्रताप से अनेक वार अपनी जन्मभूमि एवं प्रजा को शत्रुओं के त्रास में से मुक्त किया है; जिस कारण हमारे ही मनोमन्दिरों में केवल उन्होंने देवतुल्य प्रतिष्ठा नहीं पाई, अपितु भविष्य की भारत सन्तान भी उनको इतिहास श्रेष्ठ, दिव्यांशी, पुरुषोत्तम समान मान दिये बिना नहीं रहेगी।

राधा—देखो! स्वर्गीय देवों के यज्ञ धूम्रको भी पवित्र करने को जाते हुए कृष्ण चरण रजों के पुञ्ज दिखाई पड़ते हैं। चलो, प्रियवर के स्वागत की तय्यारी करें। इस मार्ग को साफ करें, सींचें और फूलों से सजावें। मैं बुहारती हूँ।

विशाखा—ना री सखि ना! यह तो मेरे जैसी कठोरा स्त्री का काम!

ललिता—(राधा से) कल्पलता कोमलाङ्गी तू फूलों से ही मार्ग को सजा।

राधा—नहीं बहिनो! मेरा नाम राधा अर्थात् भक्ति-आराधना है, मानव अन्तःकरणों को भक्ति की बुहारी से साफ करना मेरा प्रथम कर्त्तव्य; कि जिससे उनमें आदित्य किरणसमान भगवच्चरण पधारें।

(गायन, राग सोरठ की धून।)

जय श्रीकृष्ण, जय श्रीकृष्ण, जय श्रीकृष्ण हाँ रे।
श्रीकृष्णचन्द्र का चरित्र शुद्ध दिल में धारें॥ जय०—
जब नाश होवे धर्म का अरु घोर अत्याचार हो।
ऐसे महात्मा जन्म लें तब देश का उद्धार हो॥
सज्जनों को पालकर वे दुष्टजन ताड़न करें।
देवत्व पाकर लोक में निज नाम को अमृत करें॥
उनके दर्शन करने को मम नेत्र तृषित रे॥ जय०—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(तीनों का प्रस्थान)

प्रजाजन--(नेपथ्य में से) जुल्म विदारक, धर्म-उद्धारक, स्वभूमितारक श्रीकृष्णचन्द्र की जय। [कहकर मस्तक को ज़मीन पर टेक प्रणाम करते हैं]

कृष्ण--मेरे प्रिय आत्म बन्धुओ! यह क्या?

प्रजाजन—

उपकार से ऋणमुक्त होने की नहीं प्रभु! शक्ति है।
पदपद्म को सिर पै चढ़ाने की हमारी भक्ति है॥

कृष्ण—

उपकार का बदला न सेवाधर्मिजन हैं चाहते।
निजदेश सेवा में ही सच्चा आत्म-मंगल मानते॥

उग्रसेन--भैय्या कृष्ण! यद्यपि देहसम्बन्ध से तू हमारा बालक अवतीर्ण हुआ है तदपि तेरे ज्ञान से तथा कंस-जरासन्ध के सामने ब्रह्म-कर्मसदृश पराक्रम से मेरे जैसे वृद्ध राजा, यह प्रजा एवं तेरी जन्मभूमि का तू पालक तथा उद्धारक प्रमाणित हुआ है तो तेरे उस प्रकार के महान् गिरिपरंपरा समान उपकार के बदले में ये लोग अपनी कृतज्ञता का क्षुद्र कणमात्र प्रदर्शित करने के अतिरिक्त और क्या कर सकते हैं?

कृष्ण--वत्सवत्सल मातामह! इस पुण्य-शीला भारतभूमि पर जन्म लेकर हमको गुरु-कुल में वेदानुकूल कर्मयोग का ऐसा विलक्षण शिक्षण मिला है कि प्रजाकीय प्रसिद्ध जीवन बिताने हारे एवं सेवा-धर्म बजाने वाले को मान,-पान एवं धन धाम की लेशमात्र भी अपेक्षा नहीं रखनी चाहिये। उनको निष्काम भाव से कर्त्तव्यकर्म में संलग्न होकर विश्वयज्ञ में आत्मबलिदान करना सीखना चाहिये एवं भविष्य प्रजा के सामने ऐतिहासिक ऐसा उच्च उदाहरण बनते जाना चाहिये कि उनके जीवन रथ स्वनिर्मित निष्काम कर्म पथ पर चलते हुए निज संसार यात्रा को निभाते रहें तथा उस कर्म मार्ग में दूसरों को अनुसराते रहें।

उग्रसेन--तृषित जगत् पर निःस्वार्थ अमृत धारा बरसाने हारे, गगनचुम्बी गिरिवर के शिर पर भी पग रखने हारे, जलधर समान तेरे ऐसे उदार आचार के कारण ही तू जनता का शिरोनायक तथा पूजने लायक साबित हुआ है।

कृष्ण--जैसे पृथ्वी पर के रस में से उत्पन्न मेघ ऊँचा चढ़ा हुआ भी अन्त में अपने को अपनी जन्मदात्री-भूमि पृथ्वीमाता को ही अर्पण करता है, वैसे ही समाजशास्त्र के नियमानुसार मनुष्य का देश पिता है एवं स्वदेशीय कौम माता है। स्वदेश पिता और स्वजातीय प्रजा माता से पाला पोसा हुआ तथा विद्यालयों में प्रजा के द्रव्यों से गढ़ा हुआ मनुष्य, समय आने पर पिता-माता तुल्य देश-समाज या क़ौम के ख़ातिर अपना सर्वस्व अर्पण करें तो भी थोड़ा है। इसमें उपकार क्या? पुजवाने लायक क्या?

पूजा कराने लोकनायक जो हुए शठ शूद्र वे।
दृष्टान्त बनते हैं प्रजाजन-जीवनों में क्षुद्र वे॥
कर्त्तव्य में अधिकार फल में कुछ न तृष्णा भोग्य है।
ऐसे विरागी देशभक्त सुने तृपद के योग्य है॥

उग्रसेन--तो कृतज्ञ लोग अपनी कृतज्ञता कैसे प्रकट करें?

कृष्ण--देशहित या जनसेवा के कार्य-कर्ताओं को मान के ऊँचें छप्पर पर चढ़ा, अहंकाररूप वायुचक्र से गिरा देने एवं उनके तनु पूजन करने की अपेक्षा उनके कथन तथा आचरण का अनुसरण करोगे तो उसमें ही उन का सच्चा सम्मान और प्रजाकीय कल्याण है; इसलिये उठो!

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रजाजन--धन्य है कृष्ण के निष्काम धर्म्य-वचन को। [लोग उठते हैं।]

[नंद, यशोदा तथा राधा प्रवेश करते हैं।]

नंद-यशोदा--ऐ मेरे प्यारे कन्हैया! [कह कर आलिङ्गन करते हैं।]

कृष्ण--प्रणाम।

यशोदा--भैय्या अब तो तू श्रीकृष्ण महाराज कहाता है, तो भी हमने तुझको तूकार से कन्हैय्या कहकर बुलाया; इससे तुझको बुरा तो नहीं लगा न?

कृष्ण--यशोदा मैय्या! तुम यह क्या कह रही हो?

मुझको अवश्य बुरा लगा अपमान है मेरा किया।
जो आपने काना कन्हूड़ा नाम मेरा नहिं लिया॥

राधा--(स्वगत) अहा! कल्पवृक्ष को भी शरमा कर नमा देने जैसा यह इनका विनय!

कृष्ण--पूज्यवरो! इस समय मैं आपके अन्तिम दर्शन करने को यहाँ आया हूँ।

नंद-यशोदा--अन्तिम दर्शन कैसे? बेटा!

कृष्ण--मुझ पर कंस के वैर का बदला लेने के लिये जरासंध और शिशुपाल आदि शत्रु गोकुल-मथुरा पर बारबार आक्रमण करते हैं; इस लिये मेरे खातिर गोकुल-मथुरा को हर समय युद्ध संकट में डालने की अपेक्षा मैं समुद्र में द्वारका नाम का द्वीप बसाकर वहाँ अपना नवीन साम्राज्य स्थापन करना चाहता हूँ और उस के लिये मैंने विश्वकर्मा को आज्ञा भी देदी है।

नंद--शीतल मेघरूप तेरे बिना हमारे हरे भरे जीवन-बन शुष्क मरुस्थल समान हो गये थे, उसमें और उसी मेघ में से वियोग उद्गाररूप-अंगार कैसे बरसे?

यशोदा--हाय! सत्यानाश हो जाय इस शिशुपाल और जरासंध का जो कि बछड़े जैसे हमारे कान्हा से हम गोकुल वासियों का वियोग करा रहे हैं!

कृष्ण--मोह न पाओ माता! उपकार मानो उनका कि वे मुझ से पान किये हुए तुम्हारे तथा देवकी माता के स्तन्य तथा कुख (कुक्षि) को संसार के सम्मुख दिपाने के दुर्लभ प्रसंगों को लारहे हैं और मेरे नाम एवं इतिहास को अमर कर रहे हैं। माता को अपने बच्चों को दूध पिलाकर किस लिये बड़ा करना चाहिये? फकत उनके देह को मल, मूत्र, अस्थि, चर्म तथा मिट्टी के कूडे-करकट जैसे ढेर को देखने नहीं किन्तु संसार के सामने उन्नत-मस्तक-सुवर्णमेरु पर्वत सदृश दिखाने के लिये! अपनी मातृशक्ति तथा कीर्ति ध्वजा को अनन्त आकाश में फहराने के लिये; जननी अपने बालक को दस मास गर्भ में धारण कर, कष्ट सहती हुई जन्म किस लिये देती है? क्या काक कुक्कुर सदृश पेट भरने या विषय भोगने के लिये? नहीं नहीं! केवल धर्म-यज्ञ में जीवन बलि देने के लिये। गृहमूषक समान बनाने को नहीं किन्तु गगनगामी गरुड़ जैसे होने के लिये। खिलाड़ी के मर्कट बनाने को नहीं किन्तु देवों के दिग्गज जैसे डुलाने के लिये! तेलियों के बैल समान घूमाने को नहीं किन्तु इन्द्रदिशा के पुत्र प्रभाकर तुल्य तेज से प्रकाशने के लिये! आकाश को लांघने वाले, पवन को पराजित करने वाले, सूर्य से स्पर्धा करने वाले तथा समुद्र शोषने हारे धीर बीर पुत्रों को जन्म देने वाली माताएँ [एं] भले ही गर्भ धारण करें तदतिरिक्त बेहतर है कि बन्ध्या रहें।

राधा--(स्वगत) धन्य श्रीकृष्ण धन्य हो! आपका उपदेश मानवमाता के रुधिरों में प्रवेश

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर तो अवश्य घर घर सुरगंगानिर्झर से जग-देकशरण राम कृष्ण चरण अवतरें।

यशोदा—(कृष्ण से) तेरे विचार के सामने हम लाचार! अच्छा तो तेरी यह बालप्रिय-सखी राधा तेरे विरह में निशदिन तेरा ही नाम रटती रहती है; उसके साथ तेरा विवाह करने का अन्तिम आनंद हमको प्रदान करके फिर तू जा।

राधा—(स्वगत।) हृदय! धीरज धर! तेरे भाग्य का निर्णय अभी हो जाता है।

कृष्ण—राधा मेरे तुच्छ भौतिकदेह से संबंध करने की अपेक्षा मेरे आत्मिक स्वर्गीय स्नेह से अपनी भक्ति द्वारा कभी की सम्बद्ध हो चुकी है। राधा से लौकिक देहलग्न करना मानो उस के अलौकिक स्नेहचन्द्र को कलङ्क लगाना है। उसको तन की स्त्री बनाना मानो उसकी चेतनश्री को मलिन करना है। ज्ञान के साथ आराधना की नांई, आत्मा के साथ भक्ति के तुल्य, योग के साथ मुक्ति की भांति, वेद के साथ ऋचा की तरह और ब्रह्म के साथ प्रकृति के सदृश, कृष्ण के साथ राधा का सम्बन्ध ही है।

यशोदा—अच्छा भैय्या? तेरी तो बात २ में गगन की अनन्तता, सागर की गंभीरता, सुर-सरिता की पवित्रता तथा गिरिराज की स्थिरता!

नंद—तो अब यहां से चलो, गोकुल का गृहगृह कृष्ण के स्वागत की प्रतीक्षा कर रहा है।

सब जन—अच्छा चलो। [सब आगे जाते हैं और कृष्ण पीछे से जाने लगता है। राधा अपनी हथेली ज़मीन पर रखकर बैठती है जिस पर कृष्ण के पैर पड़ते हैं।]

कृष्ण—[राधा की हथेली पर पैर पड़ जाने से चौंक कर।] राधा, राधा यह क्या?

राधा—गोकुल की धूलि जितनी भी मेरी हथेली भाग्यशालिनी नहीं क्योंकि उस पर पदपङ्कज रखने को आप हिचकते हो?

कृष्ण—[हथेली को अपनी आंखों से लगा कर] कमल कली सी तेरी कोमल अंगुलियां मेरे वज्र समान कठिन चरणों से कचरा गई।

राधा—नहीं जी नहीं! संसार के पापान्ध-कार को धवलित करने वाले अरुण किरण-सदृश आपके चरण स्पर्श से वे उलटी खिल उठीं।

कृष्ण—राधा! मुझे क्षमा करना। तेरे विवाह सम्बन्ध में मेरे कथन से तेरा मन खिन्न तो नहीं हुआ न?

राधा—आप को राधा की भक्ति-श्रद्धा पर अविश्वास है क्या जो इस प्रकार पूंछते हो?
तन भिन्न ये मन एक जहाँ वह आत्मशुद्धाद्वैत है।
श्रीकृष्ण भक्ति राधिका राधा श्रीकृष्ण अभेद है॥
हैं नाशवान् शरीर उनका प्रेमबन्ध अनित्य है।
मैंने किया जो आप से यह आत्मबन्धन नित्य है॥

कृष्ण—धन्य राधा तेरी अनन्य श्रद्धाको! अच्छा, यदि कृष्ण के देह या स्नेह की कोई और भागिनी हो तो उसकी तुझे हरकत नहीं न?

राधा—हम को सब युद्ध समाचार मिल चुके हैं। रुक्मिणी आपकी पटरानी होवे राधा तो श्रीकृष्ण चरण की किङ्करानी ही रहेगी। रुक्मिणी आपकी भोगिनी तो यह राधा आप की योगिनी। रुक्मिणी आपकी गृह जीवन भागिनी तो यह राधा आप उभय की पुजारिणी मेरे भाई कर्मयोग ने आपके चरण में जैसे जीवन अर्पण किया है वैसे यह राधा भी अब से भक्ति-स्वरूप बनकर जिस जिस पर कृष्ण की प्रीति और जिस २ की कृष्ण पर प्रीति होवे उसको प्राप्त करा देने तथा कृष्ण की इच्छा को पूर्ण करने में अपने को कृतकृत्य मानेगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कृष्ण--शाबास राधा ! शाबास ।

आराधना कर राधिके !
निज नाम है सार्थक किया ।
निजदेह मन के गर्व का,
मुझ को समर्पण है किया ॥
तव भक्ति देखि भविष्य में,
यह नाम लेगा जग सभी ।
नहि 'रुक्मिणी-'श्रीकृष्ण,
किन्तु 'राधिका श्रीकृष्ण', ही ॥

[गायन राग कल्याण]

राधाकृष्ण, राधाकृष्ण जग गायेगा ।
पर रुक्मिणी कृष्ण न कहावेगा- ॥
मुझ में मन अरु भजन मेरा,
मुझ में यजन नमन ही मेरा,
मम नाम जपत यह आतम तेरा,
मदात्म-मय हो जायेगा ।
तव नाम अमर मम संग होगा- ॥

[दोनों का निर्गमन]

॥ दृष्टि ॥

लेखक श्रीयुत् पण्डित गयाप्रसाद 'श्रीहरि'

नयन ! तुम देखहु नेकु विचार ।

जीवन नौका बह जावेगी तव अंसुवन की धार ॥ ध्रुव ॥

ग्रन्थि बिहीन गुंथे गजमुक्ता हारन के अनुहार-
टूटे तरल तरलगति सों तुम झर झर झरत हजार ॥ १ ॥

परम अपावन लोक-प्रेम प्रति करि ईर्ष्या संचार-
उमड़ि घुमड़ि नवघन से बरसत तनिक न मानत हार ॥२॥

सिसकत सकत न रोकि स्रोत को गुन सुमिरन सिंडवार-
नव प्रवाह बिच बहत सोउ इत यह कैसा उद्गार ॥ ३ ॥

लाल लाल हो रहे लाल ! तुम रोचन सम इकवार-
रंगे रङ्ग हो उसी रङ्ग के कौन करे उपचार ॥ ४ ॥

मानत हो न बात इक मेरी समुझायो बहु बार-
'श्रीहरि' बिन कोउ नहीं सनेही स्वारथ रत संसार ॥५॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जनसंख्या की समस्या।

लेखक--श्रीयुत् देवदत्त बी. ए. सम्पादक 'प्रभा'

जनसंख्या की समस्या अत्यन्त प्राचीन समस्या है। अर्थशास्त्र के जनक आदम स्मिथ का कहना है कि जनसंख्या सम्बन्धी समस्यायें सभ्यता से भी प्राचीन हैं। यह ठीक है कि प्राचीन काल में इस समस्या का रूप इतना स्पष्ट न था तथापि संसार में सदा से, विचारशील पुरुषों का ध्यान इसकी ओर आकर्षित हुआ है। प्राच्य और पाश्चात्य धर्मशास्त्रकारों और स्मृतिकारों ने इस समस्या को हल करने के लिए अनेक नियम और विविध विधान बनाये थे। डा० मार्शल का (मुख्यतः पाश्चात्य देशों के सम्बन्ध में) कथन है कि "प्रबल जातियों में, और युद्ध काल में उन्होंने युद्ध करने योग्य पुरुषों की संख्या बढ़ाने के उद्देश से नियम बनाये और उन्नति की उच्च श्रेणियों में उन्होंने मनुष्य-जीवन की पवित्रता के प्रति महान सम्मान के भावों का प्रचार किया परन्तु निम्न श्रेणियों में उन्होंने निर्बल और बुड्ढों की और कभी कभी कन्याओं की हत्या करने के लिए लोगों को प्रोत्साहित किया। प्रोत्साहित ही नहीं, यदा कदा, लोगों को इनकी हत्या करने के लिए विवश भी किया॥

प्राचीन ग्रीस और रोम में क्रीट, सोलन, फीडन, प्लेटो और अरस्तू आदि ने जनसंख्या की समस्या को हल करने का प्रयत्न किया। इन दिनों उपनिवेश-स्थापना और निरन्तर युद्ध के कारण इन देशों को शस्त्र वहन करने योग्य पुरुषों की आवश्यकता थी इसलिए उनकी संख्या की वृद्धि सार्वजनिक शक्ति की वृद्धि का स्रोत मानी जाती थी।

लोकमत से विवाह करना अच्छा समझा जाता था। क़ानूनों से भी विवाह को प्रोत्साहन दिया जाता था। परन्तु तब भी विचारकों के मन में जनसंख्या की अत्यधिक वृद्धि से होने वाली हानियों की आशंका उदित हुई थी। उदाहरणार्थ प्लेटो चाहता था कि दरिद्रता दूर करदी जाय और सम्पत्ति सब को बराबर बराबर बाँट दी जाय। परन्तु अरस्तू ने अपनी पुस्तक 'राजनीति' (Politics) में यह कहकर इसका विरोध किया कि जब तक राज्य जनसंख्या की वृद्धि मर्यादित न रक्खेगा तब तक यह स्कीम सफल नहीं हो सकता। हमारे देश में भी प्राचीन काल में जनसंख्या की समस्या की ओर विचारकों का ध्यान गया था। उन दिनों यहां की विशाल भूमि उर्वरा थी और जनसंख्या कम। साथ ही वह समय निरन्तर युद्ध का था इसलिए 'नापुत्रस्य लोकः' की सृष्टि हुई। पुत्र शब्द की व्याख्या 'पुन् नरकात् त्रायतेति पुत्रः' हुई। पिण्डदान और श्राद्ध के लिए पुत्र का होना अनिवार्य बताया गया। इस प्रकार धार्मिक और सामाजिक विधानों से लोकमत जाग्रत कर के जनसंख्या की वृद्धि को प्रोत्साहन दिया गया। जर्मन अर्थशास्त्रवेत्ता रोश्चर (Roscher) के अनुसार, पिछले समय में, लोकमत, जैसी आवश्यकता होती कभी इस पक्ष में हो जाता कि राज्य जनसंख्या की वृद्धि को उत्तेजना दे और कभी इस पक्ष में कि राज्य जनसंख्या की वृद्धि को रोके। इङ्गलैण्ड में ट्यूडरों के राजत्व-काल में लोकमत इस पक्ष में था कि राज्य जनसंख्या की वृद्धि को उत्तेजना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दे। सोलहवीं शताब्दी में यह मत शिथिल पड़ गया और लोकमत का झुकाव जनसंख्या की वृद्धि रोकने की ओर हो गया। इन दिनों धार्मिक ब्रह्मचारियों की प्रथा बन्द हो जाने के कारण तथा देश में शान्ति होने से जनसंख्या बढ़ गई थी और मज़दूरों की मांग कम हो गई थी। पीछे यह वृद्धि रहन-सहन का ढंग उन्नत हो जाने के कारण रुक गई और लोगों को यह भ्रम हो गया कि इङ्गलैण्ड की जनसंख्या घट गई है। पैटी (Petty) ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक (Political Arithmetic) में घनी आबादी के लाभ बताये। उसने कहा कि आबादी घनी होने के कारण हौलैण्ड फ्रान्स से अधिक धनी है। चाइल्ड (Child) ने अपनी पुस्तक (Discourses on Trade, ch. X) में लिखा है कि "जिन कारणों से देश की जनसंख्या घटती है उन्हीं कारणों से देश दरिद्री हो जाता है। और "संसार के सभ्य भागों के अधिकांश राष्ट्र अधिक या कम धनी या निर्धन इसलिए हैं क्योंकि उनकी आबादी क्रमशः अधिक या कम है अर्थात् जिनकी आबादी अधिक है वे धनी हैं जिनकी आबादी कम है वे निर्धन।" हैरिस (Harris) भी जनसंख्या की वृद्धि के पक्ष में हैं। उसका (Essay on Coins, P. P. 32, 3) प्रस्ताव है कि 'जिन लोगों के बाल बच्चे हों उन को विशेषाधिकार देकर नीची जातियों में सन्तानोत्पत्ति बढ़ानी चाहिये।" अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक इङ्गलैण्ड का लोकमत जनसंख्या की वृद्धि के पक्ष में रहा। सन् १७९६ में पिट ने कहा कि जो कोई बाल बच्चे उत्पन्न करके देश की सम्पत्ति बढ़ाता है वह देश से सहायता पाने का अधिकारी है। जिस समय नैपोलियन से युद्ध हो रहा था उस समय तो यह प्रवृत्ति और भी बढ़ गई। सन् १८०६ में एक कानून पास किया गया कि जिस किसी के दो से अधिक बच्चे होंगे वह करों से मुक्त कर दिया जायगा। परन्तु ज्योंही नैपोलियन सैण्ट हैलीना में नज़रबन्द कर लिया गया त्यों ही यह क़ानून रद कर दिया गया। यद्यपि लोकमत जनसंख्या की वृद्धि के पक्ष में था तथापि सामाजिक समस्याओं पर गम्भीरता पूर्वक विचार करने वालों में यह धारणा प्रबल होती जाती थी कि जनसंख्या की निःसीम वृद्धि से राज्य की शक्ति बढ़े या न बढ़े परन्तु उससे अनेक कष्ट अवश्य होंगे। विशेष कर फ्रान्स में, फ़िज़ियोक्रेट्स (Physiocrates) अर्थशास्त्रज्ञों का एक सम्प्रदाय विशेष जनसंख्या की वृद्धि के विरुद्ध था। इन्हीं दिनों में गौडविन (Godwin) ने अपनी पुस्तक (Inquiry concerning political justic 1792) में समाज की दशा सुधारने का एक प्रस्ताव उपस्थित किया जिसके अनुसार बाल-बच्चों के पालन-पोषण का समस्त भार समाज के ऊपर पड़ता था। इसी प्रस्ताव की समालोचना करने के लिए माल्थस ने अपनी पुस्तक (Essay on the Principle of Population) लिखी।

माल्थस का सिद्धान्त।

इसी पुस्तक में माल्थस ने जनसंख्या के सम्बन्ध में अपने सुविख्यात सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। उसने अपने विषय को दो भागों में विभाजित किया।

(१) अब तक मनुष्य जाति के सुख-प्राप्ति के मार्ग में किन किन कारणों ने बाधा डाली है?

(२) क्या, भविष्य में, इन कारणों का पूर्णतः या अंशतः दूर होना सम्भव है?

पहले भाग के विषय में उसने कहा कि प्राणीमात्र चैतन्य-जगत (animated life) की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निरन्तर प्रवृत्ति उनके लिए मौजूद खुराक से अधिक बढ़ जाने की ओर रही है। अर्थात् प्रकृति ने चैतन्य जगत् की जितनी संख्या के लिए खुराक उत्पन्न की है वह सदैव उससे अधिक बढ़ जाती है। यही प्रवृत्ति मनुष्य जाति की सुख-प्राप्ति का मुख्य बाधक कारण है। समाज के आरम्भ काल से ऐसी प्रवृत्ति ने मनुष्य जाति को सुख प्राप्ति से रोका है। पाप, अनेक प्रकार के कष्ट और प्रकृति के प्रसादों का अक्षय विभाग सब इसी प्रवृत्ति के कुफल हैं। यह प्रवृत्ति इतनी प्रबल है कि यदि संसार में अन्य पौधे न होते तो एक ही पौधा फैलकर समस्त भूमण्डल को आच्छादित कर लेता। और यदि संसार में अन्य जातियाँ न होतीं तो कुछ ही युगों में एक ही जाति-उदाहरणार्थ अंग्रेज जाति—से समस्त संसार भर जाता। माल्थस का कथन है कि इस सत्य का कोई खण्डन नहीं कर सकता। पशु और वनस्पति जगत में प्रकृति ने जीवन के बीज अत्यन्त मुक्त-हस्त होकर फैलाये हैं, परन्तु उसने उनके लिए आवश्यक स्थान और खुराक देने में कञ्जूसी से काम लिया है। पृथ्वी में जीवन के जितने कीटाणु हैं यदि उन सब को पर्याप्त भोजन और पर्याप्त स्थान मिल जाय तो वे कुछ ही सहस्र वर्षों में अपनी वृद्धि से हमारे जैसे लाखों संसारों को भर दें। परन्तु वृद्धि को प्रकृति का सर्वव्यापी नियम, अवश्यमेव उनकी वृद्धि को सीमाबद्ध रखता है। मनुष्य अपनी बुद्धि-बल से, इस महान बाधक नियम से नहीं बच सकता। पौधों और पशुओं में तो संख्या की समस्या अत्यन्त सरल है। वे प्रबल सहजबुद्धि (instinct) से प्रेरित होकर अपनी जाति की वृद्धि करते हैं परन्तु वे अपनी सन्तति को पर्याप्त स्थान और पर्याप्त खुराक नहीं दे सकते इस लिए उनका स्वजाति-वृद्धि का कार्य रुक जाता है। वृद्धि की स्वतन्त्रता मिलते ही वे अपनी वृद्धि की शक्ति से काम लेते हैं परन्तु वनस्पति जगत् में पर्याप्त स्थान और पर्याप्त खुराक की कमी के कारण और पशु-जगत् में परस्पर एक दूसरे का भक्ष्य बन जाने के कारण उनकी वृद्धि रुक जाती है।

मनुष्य जगत् पर प्रकृति की इस रोक का प्रभाव अत्यन्त जटिल होता है। मनुष्य भी सन्तानोत्पत्ति के लिए उतनी ही प्रबल सहज-बुद्धि से प्रेरित होते हैं जितनी से कि पशु-पक्षी और पौधे; परन्तु वे अपनी विवेक-बुद्धि से अपने स्वभाव की प्रेरणा को रोक लेते हैं। जिन के पास जीविकोपार्जन का कोई साधन नहीं रहता उनके सम्मुख यह समस्या उपस्थित हो जाती है कि हम सन्तानोत्पत्ति करें या न करें। यदि वे अपनी आर्थिक दशा से विवश होकर सन्तानोत्पत्ति न करने का निश्चय करते हैं तो इस प्रतिबन्ध से बहुधा अनेक प्रकार के पापों की सृष्टि होती है। और यदि वे सन्तान पैदा करते चले जाते हैं तो मनुष्य-जाति सदैव जीवन-निर्वाह के साधनों की सीमा का उल्लङ्घन कर जाने को प्रयत्न करेगी। परन्तु जन संख्या वास्तव में जीवन-निर्वाह के साधनों से अधिक कदापि नहीं बढ़ सकती क्योंकि मनुष्य-जीवन के लिए भोजन आवश्यक है इसलिए भोजन प्राप्त करने की कठिनाई से सदैव जन-संख्या की वृद्धि मर्यादित रहेगी। यह कठिनाई—भोजन की कमी की कठिनाई—मनुष्य-जाति के किसी न किसी भाग पर अवश्य पड़ेगी। जिस भाग पर यह कठिनाई पड़ेगी वह विविध प्रकार के क्लेशों की पीड़ा का अनुभव करेगा। उस समय के लगभग सभी मुख्य मुख्य देशों की जन-संख्या की दशा का अध्ययन करके माल्थस इस निष्कर्ष

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पर पहुँचा है। उसका कहना है कि अमेरिका की उत्तरी रियासतों में तो कुछ शताब्दियों तक जन-संख्या प्रति पच्चीसवें वर्ष दुगुनी हो जाती रही। अर्थात् यदि पहले १० करोड़ थी तो पच्चीस वर्ष बाद २० करोड़ और ५० वर्ष बाद ४० करोड़ हो गई। कुछ देशों में तो जन-संख्या १५ वर्ष में ही दुगुनी हो गई। यूलर (Euler) के अनुसार यदि जन्म और मृत्यु की तुलना ३ और १ मान ली जाय तो केवल १२½ वर्ष में ही आबादी बढ़ कर पहले से दुगुनी हो जायगी। सर विलियम पैरी ने अपनी पुस्तक (Political Arithmetic P. 84) में हिसाब लगाया है कि जन-संख्या दस वर्ष में ही दुगुनी हो जाती है। माल्थस का कहना है कि तो भी हम गल्ती की सारी सम्भावनाएँ मिटाने के लिए यह मान लेते हैं कि जन-संख्या २५ वर्ष में दुगुनी हो जाती है, क्योंकि इससे सब लोग सहमत हैं। सारांश यह कि अखण्डनीय प्रमाणों के आधार पर माल्थस इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि यदि किसी प्रकार की बाधा न डाली जाय तो जनसंख्या २५ वर्ष में दुगनी हो जाती है अर्थात् वह द्विगुणित-क्रम से (Geometrical ratio) १,२,४,८,१६,३२—के हिसाब से बढ़ती है।

परन्तु खाद्य पदार्थों की उत्पत्ति इस हिसाब से नहीं बढ़ती। यद्यपि उनकी उत्पत्ति की ठीक ठीक गति जानना कठिन है तथापि यह निश्चित है कि वह जन-संख्या की वृद्धि की गति से कम ही होगी क्योंकि खाद्य-पदार्थों की उपज क्रमागत ह्रास-नियम (Law of diminishing return) से मर्यादित है। उसका कहना है कि चीन, जापान, आदि घने देशों में नाजों की उपज मानवी उद्योग के सर्वोत्तम उपायों से अनेक वर्षों में एक बार भी दुगुनी की जा सकती है या नहीं इस में भी सन्देह है। जहाँ आबादी कम है वहां की असभ्य जातियां कृषि के वैज्ञानिक उपायों का उपयोग नहीं करतीं। इङ्गलैण्ड, फ्रान्स इत्यादि उन्नत यूरोपियन देशों में भी अब तक उद्योग और सर्वोत्कृष्ट वैज्ञानिक उपायों से यह कल्पना तो की जा सकती है कि पहले २५ वर्षों में नाज की उपज दुगुनी हो जाय। परन्तु इस बात की कल्पना भी करना सर्वथा असम्भव है कि पचास वर्षों में वह चौगुनी हो जायगी। इसलिए माल्थस कहता है—कि हम दलील के लिए क्रमागत-ह्रास नियम के विरुद्ध यह माने लेते हैं कि इङ्गलैण्ड में नाज की उपज प्रति पच्चीसवें वर्ष उतनी ही बढ़जाया करेगी जितनी कि वह पहले थी। कोई मनुष्य इससे अधिक वृद्धि की कल्पना नहीं कर सकता। और थोड़ी देर के लिए हम यह भी माने लेते हैं यद्यपि ऐसा करना ठीक नहीं है कि संसार भर में नाज की उत्पत्ति इसी प्रकार बढ़ सकेगी तो भी भूमि की वर्त्तमान दशा का विचार करते हुए जीवननिर्वाह के साधन-सारी से भारी सुकाल में भी, अङ्कक्रम (Arithmetical Ratio) से–१, २, ३, ४, ५, के हिसाब से अधिक नहीं बढ़ सकते।

मान लो कि दो शताब्दी तक जन संख्या और नाज की उपज इसी हिसाब से बढ़ते रहें तो नाज की उपज तो १,२,३,४,५,६,७,८,९, होगी और जन-संख्या, १,२,४,८,१६,३२,६४, १२८.२५६ होगी। अर्थात् दो शताब्दी में जन संख्या और नाज की उपज में जो पहले बराबर थे–२५६ और ९ का भेद होगा। इसी हिसाब से तीन शताब्दी में ४०९६ और १३ का भेद हो जायगा और दो हज़ार वर्ष में तो इतना अन्तर हो जायगा कि उसका हिसाब भी नहीं लगाया जासकेगा। यह स्पष्ट है कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

खाद्य पदार्थ कम होने से लोग भूखों मरने लगेंगे, अर्थात् प्रकृति अपने नियम—आवश्यकता के नियम-से जन संख्या की वृद्धि को रोकेगी।

जन संख्या की वृद्धि को जीवन-निर्वाह के साधनों से अधिक न बढ़ने देने के लिए प्रकृति किन २ उपायों से काम लेती है, इसका विचार माल्थस ने अपनी पुस्तक के दूसरे अध्याय में किया है। उसके अनुसार जब जन-संख्या जीवन-निर्वाह के साधनों से बढ़ जाती है तब प्रकृति युद्धों, अकालों और रोगों से उसे कम कर देती है। जन-संख्या को मर्यादित रखने के लिए युद्ध, अकाल और प्लेग, इन्फ्लुएञ्जादि सहस्रों प्रकार के रोग प्रकृति के तीन अमोघ शस्त्र हैं। इन्हें माल्थस ने विधेयात्मक रोक (Positive checks) कहा है। परन्तु मनुष्य संयम तथा अन्य साधनों के उपयोग से भी तो जन संख्या को मर्यादित रख सकते हैं और युद्ध अकाल एवं रोग की पीड़ा से बच सकते हैं। इस प्रकार की रोक को माल्थस ने प्रतिबन्धात्मक रोक (Preventive checks) कहा है। ये भी दो प्रकार के होते हैं। एक पापाचरण द्वारा-यथा विवाह न करके अन्य प्रकार से कामेच्छा को तृप्ति करना, विवाह करके कामेच्छा को तृप्त करते रहना परन्तु औषधादि से सन्तान न होने देना—दूसरे आत्म-संयम द्वारा। आत्म-संयम के साधन का विचार माल्थस ने अपनी पुस्तक के चौथे अध्याय में किया है। इस अध्याय में वह इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि यदि हम युद्ध अकाल रोग और पापों की वृद्धि को रोकना चाहते हैं तो हमें उस समय तक विवाह कदापि न करना चाहिये जब तक कि हम अपने बाल बच्चों का पालन पोषण करने में पूर्णतया समर्थ न हो जायं।

माल्थस के सिद्धान्त की समालोचना।

कुछ लोगों ने माल्थस के सिद्धान्त की समालोचना यह कह कर की है कि उसका यह कहना कि जनसंख्या द्विगुणित क्रम से बढ़ती है और नाज की उपज अङ्क-क्रम से--गणित की दृष्टि से ठीक नहीं। यह समालोचना यद्यपि कुछ अंशों में ठीक है तथापि इस से माल्थस के सिद्धान्त के सार को तनिक भी आघात नहीं पहुंचता। यह सत्य हो सकता है कि जन-संख्या और जीविका-निर्वाह के साधन सदैव क्रमशः द्विगुणित क्रम और अङ्क-क्रम से न बढ़ते हों परन्तु इस में लेशमात्र भी सन्देह नहीं कि जन-संख्या जितनी शीघ्र बढ़ती है नाज की उपज उतनी शीघ्र नहीं। अतः यदि मनुष्य इन्द्रिय-दमन द्वारा या नोल्टन के मतानुसार अन्य-औषधादि द्वारा जनसंख्या मर्यादित न रक्खेंगे तो प्रकृति, युद्धों, अकालों और विविध रोगों द्वारा उसे बढ़ने से रोकेगी। माल्थस ने अर्थ-शास्त्र के आगमन के ढंग (Inductive method) से अपने निष्कर्ष निकाले थे। अपने समय के और अपने से पहले के सभी मुख्य मुख्य देशों की जनसंख्या का अध्ययन करके वह उन निष्कर्षों पर पहुंचा था जो ऊपर बताये जा चुके हैं। उस का अनुमान परीक्षा-प्रसूत अनुमान था अतः परीक्षा-प्रसूत-अनुमानों में जो दोष होता है वह दोष उन में भी रहा, अर्थात् परीक्षा से माल्थस यह न जान सका कि मेरे पीछे की शताब्दियों में जनसंख्या की वृद्धि और नाज की उपज का क्रम क्या रहेगा। इसलिए इन दोनों की वृद्धि का उसका अनुमानिक क्रम अर्वाचीन समय के लिए लागू नहीं। वाष्पादि आविष्कारों की सहायता से इस समय अमेरिका प्रभृति देशों में सम्पत्ति भी उतनी ही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बढ़ रही है जितनी कि जनसंख्या। वैज्ञानिक आविष्कारों और नवीन औद्योगिक संगठनों ने उत्पत्ति की क्षमता को कई गुना बढ़ा दिया है। और विद्या के प्रसार से एवं रहन-सहन का ढंग उन्नत हो जाने से जनसंख्या की वृद्धि में कुछ कमी हुई है। इसलिए माल्थस के पहले निष्कर्ष का समय कुछ प्राचीन होगया है। परन्तु यथार्थ में वह उतना ही प्रबल है जितना कि पहले था क्योंकि क्रमागत ह्रास नियम के अनुसार अन्ततोगत्वा सम्पत्ति की वृद्धि का जनसंख्या की वृद्धि से कम होना अवश्यम्भावी है। यद्यपि इस समय कुछ बाधक कारणों ने क्रमागत ह्रास नियम के कार्य्य प्रभाव को रोक लिया है परन्तु कालान्तर में उस का प्रभाव अपरिहार्य हो जायगा। इसलिए यद्यपि माल्थस के सिद्धान्त की निठुरता कम हो गई है तथापि उस की युक्तियुक्तता वैसी ही बनी है। हां, अमेरिकन अर्थशास्त्रज्ञ कैरी (Carey) और सुविख्यात अर्थशास्त्रज्ञ वेकफील्ड (Wakefild) ने माल्थस के सिद्धान्त की जो समालोचना की है वह अवश्य युक्तियुक्त है। उनका कहना है कि स्वयं जनसंख्या की वृद्धि से भी अनेक लाभ होते हैं। उससे लोगों की सम्मिलित-क्षमता (Collective efficiency) बढ़ जाती है, साखा और बैङ्कों के कार्य में सुविधा रहती है, चीज़ों का मूल्य बढ़ जाने से उत्पत्ति को उत्तेजना मिलती है, मार्ग की सुविधायें बढ़ती हैं, मनुष्यों की ज्ञान-परिधि बढ़ जाती है और विविध विज्ञानों की उन्नति होने से मनुष्य-जाति के सुख-समृद्धि की वृद्धि होती है। इस लिए जनसंख्या की वृद्धि विशुद्ध बुराई (unmixed evil) नहीं। इन दोनों महानुभावों ने घनी आबादी के लाभों की बड़े विस्तार से विवेचना की है। परन्तु इस पर भी यह प्रश्न उठता है कि क्या जनसंख्या की वृद्धि से उत्पन्न होने वाली उत्पत्ति की क्षमता इतनी स्थायी और प्रबल होती है कि वह सदैव के लिए क्रमागत ह्रास-नियम के अशुभ प्रभाव को रोक सके?

इन समालोचनाओं के अतिरिक्त माल्थस के सिद्धान्त पर किये गये दो आक्षेप और ध्यान देने योग्य हैं। उनमें से पहला तो यह है कि यदि स्वयं मनुष्य प्रतिबन्धक रोकों (Preventive checks) से जनसंख्या को सीमाबद्ध कर देंगे तो जीवन-संग्राम (Struggle for existence) शिथिल पड़ जायगा और उसके परिणाम स्वरूप योग्यतम का चुनाव (survival of the fittest) न हो सकेगा। यह आक्षेप अकाट्य नहीं। इसका उत्तर यों दिया जा सकता है कि स्वयं योग्यतम का चुनाव कोई विशुद्ध भलाई नहीं। जीवन संघर्ष द्वारा योग्यतम का चुनाव होने देना एक तो प्रकृति के निठुर और निर्भय ढंग से योग्यतम का चुनाव होने देना है और दूसरे इस प्रकार से चुने गये योग्यतम का अर्थ सर्वथा देश कालावस्था को लाभ पहुंचाने वाला योग्यतम नहीं होता बल्कि देश कालावस्था में स्वयं सब से अधिक फलने-फूलने वाला योग्यतम है। यह 'योग्यतमा मनुष्य जाति के लिए हानिकर भी हो सकता है, इसलिए यदि इन्द्रिय दमन द्वारा योग्यतम के आधुनिक चुनाव में बाधा भी पड़े तो भी यह सम्भव है कि उस बाधा से हानि के स्थान पर लाभ हो। दूसरा आक्षेप अधिक प्रबल है और वह यह है कि माल्थस के सिद्धान्त के अनुसार कार्य करने वाले लोग बुद्धिमान और धनवान ही होंगे क्योंकि वे ही इस सिद्धान्त को जान कर उसे व्यवहार में लावेंगे। फल यह होगा कि योग्यों के, बुद्धिमानों और धनवानों के सन्तति न होगी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और अयोग्यों के नीच, निर्धन और विद्याविहीन जातियों के सन्तति उत्पन्न होगी जिससे जाति और राष्ट्र का ह्रास होकर धीरे धीरे उसके नाश तक नौबत पहुँच जायगी। यह आक्षेप सन्तान शास्त्र (Eugenics) के सिद्धान्तों के आधार पर किया गया है और निस्सन्देह अकाट्य है। फ्रान्सादि कुछ यूरोपियन देशों में ऐसा हो भी चुका है। परन्तु यह आक्षेप भी माल्थस के सिद्धान्त का खण्डन नहीं करता, वह केवल उसके सिद्धान्त के दुरुपयोग से होने वाली बुराइयों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित करता है। इस दुरुपयोग से बचते हुए माल्थस के सिद्धान्त के अनुसार काम करने से जनसंख्या की समस्या बहुत कुछ हल हो जाती है। मनुष्यों को चाहिये कि वे यदि सन्तान का लालन पालन करने में समर्थ हों और उत्तम सन्तति उत्पन्न कर सकते हों तो लोकसंग्रह के लिए सन्तानोत्पत्ति अवश्य करें। स्वार्थ के लिए वैवाहिक जीवन के उत्तरदायित्व से बचने के लिए सन्तानोत्पत्ति न करना निंद्य है। परन्तु जो मनुष्य अपनी सन्तान का लालन-पालन करने में असमर्थ हैं और जो उत्तम सन्तान उत्पन्न नहीं कर सकते उन्हें कदापि सन्तानोत्पत्ति न करनी चाहिये।

दुर्योधन।

(गतांक से आगे)

लेखक—श्रीयुत मणिराम गुप्त।

(९)

कपट जाल रच तूने फांसा धर्मराज को,
जीत लिया जूये में उनके सर्व राज को।
फिर पांडव को तूने बन की हवा खिलाई,
लाक्षागृह में उन्हें बंदकर आग लगाई॥

(१०)

भ्रातृ वधू को दुष्ट! बुलाकर बीच सभा में,
करना चाहा उसे नग्न, ऐ नीच! सभा में।
जंघे पर उसको चाहा तूने बिठलाना,
अबला पर चाहा तूने निज बल दिखलाना॥

(११)

अरे निर्दयी! तुझे तनिक भी दया न आई,
अरे बेहया! तुझे तनिक भी हया न आई।
जंघे पर बिठलाना चाहा नारि पराई,
गई बिगड़ सब बात इसी से बनी बनाई॥

(१२)

करता नाना रहा पाप तू इस प्रकार से,
अरे अधी! दब गई धरा तव पाप भार से।
बड़ा नीच औ बड़ा घृणित था कर्म तुम्हारा,
बिल्कुल लुप्तप्राय हुआ था धर्म तुम्हारा॥

(१३)

रहा समझता तू अपने को सब से ज्ञानी,
इसीलिये हो गया नाश तेरा अभिमानी।
कभी किसी की बात नहीं तुझ पर चलती थी,
और किसी की दाल नहीं तुझ से गलती थी॥

(१४)

अपने पैरों आप कुल्हाड़ी तूने मारी,
जान बूझ कर बात बिगाड़ी तूने सारी।
पांडव को बन भेजा तूने भाई होकर,
पड़ा इसी से तुझे अंत में खाना ठोकर॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(१५)

वही रक्त की नदी तुम्हारे कारण रण में,
कितने हुये अनाथ कटे लाखों नर क्षण में।
तेरे चलते दुष्ट देश का नाश हुआ है,
रहा कभी जो स्वामी अब वह दास हुआ है॥

(१६)

अपने हाथों अपने कुल का नाम मिटाया,
जैसी करनी किया नीच! फल वैसा पाया।
अनय औ अत्याचार भला कब तलक चला है,
नहिं जाना क्या मूर्ख! भले का अंत भला है॥

(१७)

फला न कोई कभी अन्य का स्वत्व दबाकर,
सुखी न कोई रहा निबल को वृथा सता कर।
जालिम सुख से नहीं बहुत दिन तक हैं रहते,
दुःख अनल में बहुत शीघ्र ही हैं वे दहते॥

(१८)

है मनुष्य का धर्म, धर्म-धन संचय करना,
है नीचों का कर्म टके के पीछे मरना।
पर पीड़न में कभी न अपना जन्म गंवाओ।
कभी स्वप्न में भी न किसी का स्वत्व दबाओ।

जातिपंथ।

लेखक—श्रीयुत् प्रोफेसर गोपाल दामोदर तामस्कर एम. ए. एल. टी.

कोई हिन्दुस्थान का इतिहास उठाकर देखता है, उसे जाति-पंथ का जोर देखकर आश्चर्य होता है। यूरोप के देशों के अमरीका के अथवा दुनियां के अन्य देशों के इतिहास में यह व्यवस्था कहीं नहीं पाई जाती, केवल हिन्दुस्थान में ही दीख पड़ती है। और इतिहास के प्रत्येक विद्यार्थी को यह देखकर आश्चर्य होता है कि इस जातिपंथ का झगड़ा दिनों दिन बढ़ता जाता है। बहुतेरे तो इसी को धर्म समझे बैठे हैं, बहुतेरे इसे ईश्वर सृष्ट कहते हैं। वास्तव में न तो यह धर्म हो सक्ता है और न ईश्वर सृष्ट ही है। यही जातिपंथ—ठीक इसी तरह का—आप क्रीष्ट धर्म, इसलाम अथवा दुनियाँ के और किसी धर्म, में पैदा कर सक्ते हैं। हमारा हिन्दुधर्म इस जातिपंथ में समाप्त नहीं हो सक्ता। अगर कोई ऐसा कहे तो यही उत्तर देना पड़ेगा कि हिन्दूधर्म के तत्त्व आप को मालूम नहीं। अगर यह ईश्वर कृत हो तो वह सब स्थानों में पाया जाना चाहिये, हिन्दुस्थान में ही क्यों इस की उत्पत्ति और स्थिति बनी रहे? इतिहास इस बात का साक्षी है कि यह ईश्वर कृत नहीं वरन इस की ऐतिहासिक उत्पत्ति है।

हिन्दुस्थान के सब से प्राचीन काल का इतिहास देखा जाय तो इस जातिपंथ के झगड़े का नाम व निशान न था। ऋग्वेद काल के ऋषि लोगों में ये अनेक रोगोत्पादक झगड़े और नियम न थे। उस समय के आर्य ऋषियों का कोई विशिष्ट वर्ग न था। वे सब खेत जोतते और बोते थे, युद्ध करते और द्रव्य, पशु, जय और पत्नी पुत्र इत्यादि सुख-प्राप्ति के लिये अपने देवताओं की प्रार्थना भी करते थे। यह जरूर था कि ऋग्वेद की ऋचाएं विशिष्ट लोगों की बनाई हैं, पर उनका कोई ख़ास जातिपंथ नहीं था। किसी ऋषि ने शत्रुओं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

से जय पाने की प्रार्थना की है। दूसरे ने द्रव्य अनाज और शत्रुओं का दमन करने योग्य पुत्र-प्राप्ति की प्रार्थना की है। तीसरा द्रव्य, गाय ढोर खूब अच्छी फसल और अच्छी सन्तान की इच्छा करता है। इसी प्रकार के सैकड़ों उदाहरण भरे पड़े हैं। कोई भी पक्षपात रहित मनुष्य इस पर से यही कहेगा कि इस समय जातिपंथ का झगड़ा नहीं था। इतना ही नहीं, उस ग्रन्थ में किसी स्थान में जातिपंथ का उल्लेख भी नहीं है। क्या ऐसा ही होसक्ता है कि जाति-पंथ रहा हो पर उसका कहीं भी उल्लेख न हो? ऐसा कदापि नहीं हो सक्ता। उस ग्रन्थ में मामूली से मामूली बातें आई हैं, पर यह ही क्यों कर छुटसक्ती है? एक ऋषि कहता है देखो, मैं ऋचाओं का कर्त्ता हूं, मेरा पिता वैद्य है, मेरी मां चक्की में अनाज पीसा करती है। हम सब भिन्न धन्धों में लगे हुए हैं। जिस प्रकार खेतों में भोजन के लिये गायें भिन्न भिन्न दिशाओं में जाती हैं उसी प्रकार हे सोम! हम भिन्न भिन्न धन्धे करते हुये भी तेरी पूजा करते हैं।" जिसका पिता वैद्य है, जिसकी मां अनाज पीसा करती है और जो स्वतः ऋचा बनाता है, वह किस जातिभेद का पुरुष हो सक्ता है?

अगर वेदकाल में जातपाँत का झगड़ा न था, तो पीछे से पैदा हुआ होना चाहिये। यज्ञ, मन्त्र, तन्त्र ज्यों ज्यों बढ़ने लगे और ज्यों ज्यों वे क्लिष्ट होने लगे, ज्यों ज्यों उनका महत्त्व बढ़ने लगा, त्यों त्यों उनके करने वाले विशिष्ट लोग होने लगे। सम्पत्ति शास्त्र का एक नियम है कि जो कार्य हम नित्य करते हैं, उस में हम कुशल हो जाते हैं। उसे हम थोड़े समय में कम श्रम से अच्छी तरह कर सक्ते हैं। इस कारण यह कार्य बहुधा उन्हीं लोगों को सौंपा जाता है जो अच्छी तरह कर सक्ते हैं। धीरे धीरे वह उनका उद्योग हो जाता है। दूसरी बात यह भी है कि पुत्र इत्यादि अपने पिता का उद्योग बहुत जल्द सीख सक्ते हैं, क्योंकि सीखने और देखने का बहुत मौक़ा मिला करता है। इनका एक वर्ग बन जाता है। इस प्रकार हिन्दुस्थान में जातिभेद की सामग्री पैदा हुई। जब इन पुरोहितों ने देखा कि हम अत्यंत पवित्र कार्य करते हैं हमारा कार्य अत्यंत महत्त्व का है, तब वे दूसरों से धीरे धीरे भिन्न होने लग गये। तथापि रोटी बेटी व्यवहार बंद होने के लिए समय लगा। जिन कारणों से पुरो-हितों का एक अलग वर्ग बनने लगा, उन्हीं कारणों से युद्ध कार्य के करने वालों का अलग वर्ग बनता चला। ये धन्धे आनुवंशिक हो गये। युद्ध करने वाले बहुधा राज्यकार्य भी किया करते थे और इस कारण वे केवल वाणिज्यव्यवहार और खेती करने वालों से अपने को उच्च समझते थे, इस में कुछ आश्चर्य नहीं। इस प्रकार तीसरा भेद भी तय्यार हो गया। परन्तु इन भेदों के उत्पन्न होने से पहले आर्य और अनार्य ये भेद पैदा हो गये थे। इन अनार्यों को उन्होंने दस्यु इत्यादि कहा है। इन लोगों में भेद होने का कारण स्वाभाविक ही था। आर्य सुन्दर, गोरे, बड़े डीलवाले, सुडौल थे तो दूसरे यहां के मूल निवासी ठीक उसके उलटे थे। उन्हें जीतने पर उनसे संमिश्रण होना असंभव था। यहां ही क्या वरन यूरोप के ग्रीस और रोम के प्राचीन इतिहास से यह बात दीख पड़ती है, जिनलोगों को जीत लोगों ने दास बनाया है। कोई आश्चर्य नहीं कि हिन्दु-स्थान में भी आर्यों ने यहां के मूल निवासियों से सेवा वृत्ति का काम करवाया।

अब प्रश्न हो सक्ता है कि अगर इस तरह से यहां जातिभेद उत्पन्न हुआ, तो यूरोप में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

क्यों न उत्पन्न हुआ ? यूरोप में भी धर्म कार्य के करने वाले लोग थे और उनका भी बहुत कुछ अंश में भिन्न वर्ग था, फिर वहां यह झगड़ा क्यों न उत्पन्न हुआ ? प्रश्न विचार करने के लायक़ है और इसका उत्तर इतिहास से ही मिल सक्ता है। अगर प्राचीन काल को लें तो यह दीख पड़ेगा कि वहां भी बहुत अंश में भिन्न वर्ग दीख पड़ते थे, तथापि रोटी बेटी व्यवहार बंद नहीं हुआ था। वहां पर वहां की स्थिति के कारण धर्म के भिन्न भिन्न अंगों की इतनी उन्नति नहीं हुई कि वह कार्य नितांत भिन्न कर देने की आवश्यकता पड़ती। दूसरे, जब कभी भिन्नता दीख पड़ी है तो भिन्नता दूर करने के लिये अत्यंत झगड़े हुए हैं। ग्रीस देश के इतिहास में धर्म के तंत्रों की अपेक्षा तत्त्वज्ञान की ओर ही विशेष झुकाव दीख पड़ता है। और तत्त्वज्ञान में भिन्नता करने की आवश्यकता नहीं रहती। रोम के पैट्रिशियन और पब्लिकन लोगों का झगड़ा सर्व विदित ही है। आखिर को नीचतर समझे जाने वाले पब्लिकन लोगों ने उच्चतर समझे जाने वाले पैट्रिशियन लोगों से अनेक झगड़े कर समता प्राप्त कर ली। वहां की स्थिति में इन झगड़ों की आवश्यकता थी। हिन्दुस्थान में एक तो उच्चतर वर्ग के लोगों ने नीचतर वर्ग के लोगों से बहुत काल तक अच्छा वर्ताव रक्खा। फिर यहां की ज़मीन अत्यंत उपजाऊ थी। तीसरे, यहां भूमि की कमी न थी। इस कारण यहां झगड़े फ़िसाद उत्पन्न होने की कोई वजह न थी। फिर यह ख्याल रखना चाहिये कि हिन्दुस्थान में आर्यों की चढ़ाइयां समाप्त होने के बाद ही ये भेद उत्पन्न होने लगे। उसके पहले न थे। रोम इत्यादि देशों में विदेशियों के इतने हमले होते रहे कि जो छोटे मोटे थोड़े बहुत भेद उत्पन्न हो भी गये थे, उनके प्रस्थापन के लिये शान्त समय न मिला। फिर इन आक्रमणों से नये नये लोगों का संमिश्रण होता गया। उच्चता नीचता की वृद्धि के लिये विशेष मौक़ा न मिलने के कारण जाति भेद की उत्पत्ति नहीं हो सकी। रोटी-बेटी व्यवहार बंद होने का कोई कारण नहीं था। अब यूरोप के आधुनिक काल को लीजिये, रोम के पादड़ियों ने पोप की सहायता से अपना भिन्न वर्ग बनाना ही चाहा था कि उनके विरुद्ध चिल्लाहट पैदा हुई और उनकी उच्चता उन्हें खोनी पड़ी। इसका बड़ा भारी कारण यह था कि ये अत्यंत नीच, स्वार्थी, और नीति हीन होगये थे। इतना ही नहीं लोगों से उनका बर्ताव भी ठीक न था। इसका परिणाम झगड़े में हुआ और उच्चता-नीचता का बंधन तोड़ डाला गया। हिन्दुस्थान के उच्चतर वर्गों ने बहुत काल नीचतर वर्गों से अच्छा बर्ताव किया है। यहां झगड़े का बहुत कालतक कारण पैदा नहीं हुआ और जब कारण पैदा भी हुआ तब जाति भेद इतना दृढ़ होगया था कि उसके टूटने की कोई संभावना न रही। इस प्रकार हिन्दुस्थान में जाति-भेद पक्का हुआ है।

वायुपुराण में बतलाया है कि कृतयुग में कोई जातिभेद न थे। पर पीछे से ब्रह्मा ने लोगों के कर्मों के अनुसार उनमें भेद उत्पन्न कर दिये। जो साहस के कृत्य और हुक्म चलाने लायक थे, उन्हें उसने क्षत्रिय बनाया। जो वेद ठीक ठीक कह सक्ते थे और सत्य बोलते थे उन्हें उसने ब्राह्मण बनाया। जो उद्योग धंधे करते, खेत जोतते और कृषि-कार्य करते थे उन्हें उसने वैश्य बनाया। जो सफाई का काम और सेवावृत्ति करते थे, उन्हें उसने शुद्र कहा। देखिये, इस में जातिपंथ का इतिहास सारांश

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में भरा पड़ा है। यही बात साधारणतया इसी तरह अन्य पुराणों में भी लिखी है।

रामायण के उत्तरकाण्ड में बतलाया है कि कृतयुग में केवल ब्राह्मण ही तपश्चर्या इत्यादि किया करते थे। त्रेतायुग में क्षत्रिय पैदा हुए और फिर चार जाति का आजकलका वर्ग पूरा हो गया। अगर इस से कहानी का भाग दूर कर दिया जावे तो इसी बात को ऐसा कहेंगे कि वैदिक काल में हिन्दुओं में कोई भेद न थे और सब ही धार्मिक आचार किया करते थे। रामायण काल में ब्राह्मण और क्षत्रिय बिलकुल भिन्न हो गये। वैश्यों और शूद्रों की भी जातियां बनगईं, और चतुर्वर्ण पूरा हो गया। महाभारत के शांति पर्व में कहा है कि जो रक्ताँग द्विज इन्द्रिय सुख के लोभी थे, जो अपना यज्ञादि कर्म ठीक न करते थे और जो साहसी थे, वे क्षत्रियों के वर्ग में कर दिये गये। आजकल कितने ब्राह्मणों को इस प्रकार उनकी श्रेणी से च्युत किया जाता है? फिर आगे उसी में लिखा है जो पीताँग द्विज गोपालन और कृषिकार्य से अपना निर्वाह करते थे, और जो धार्मिक कर्म नहीं करते थे, वे वैश्यों के वर्ग में डाल दिये गये। जो काले द्विज अशुद्ध रहते थे, जो झूठ बोलते थे, जो लोभी थे और जो अनेक कार्य कर अपना पेट भरते वे शूद्रों की जाति में कर दिये गये। आजकल के कितने ब्राह्मण इस प्रकार करने को तैयार हैं? मैं समझता हूं कि आज कल के ब्राह्मणों को यह नियम लागू किया जाय तो ब्राह्मण कोई न बचेगा सब के सब शूद्र हो जावेंगे।

तथापि महाभारत-रामायण काल में इस भेद के विशेष बुरे परिणाम नहीं दिखलाई दिये थे। सब लोग धर्म संबंधी ज्ञान और विद्या प्राप्त कर सक्ते थे और धार्मिक-कर्म भी करते थे। ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्यों में विवाहादि भी हो जाया करते थे। जातिभेद के बुरे परिणाम मुसलमानों के आने के बाद ही दिखलाई पड़े। महाभारत-रामायणादि काल में जातिपंथ इतना कड़ा नहीं हुआ था।

विश्वामित्र की कथा से यह बात स्पष्ट है। वह क्षत्रिय होने पर भी जब उसने अपने को ब्राह्मण योग्य बना लिया तब ब्राह्मण समझा गया। फिर सत्यवती नाम की क्षत्रिय की लड़की रिचीक नाम के ब्राह्मण को व्याही गयी। रिचीक ने ऐसा भोजन तैयार किया कि पत्नी को ब्राह्मण-गुणसंपन्न पुत्र उत्पन्न हो, और अपनी सास के लिये ऐसा भोजन तैयार किया कि जिससे उसे क्षत्रिय-गुणसंपन्न पुत्र उत्पन्न हो। किसी कारण भोजन की अदल बदल हो गई। नतीजा यह हुआ कि क्षत्रियाणी को ब्राह्मणगुण संपन्न पुत्र पैदा हुआ और रिचीक की पत्नी को क्षत्रियगुण-संपन्न पुत्र हुआ। अब कण्व और अत्रि की कथा लीजिये। विष्णुपुराण में लिखा है कि कण्व पुरु नामक क्षत्रिय का वंशज था। इतना होने पर भी कण्व को ब्राह्मण कहते थे। फिर देखिये, शान्तनु राजा का भाई देवादी पुरोहित था, ब्राह्मण द्रोणाचार्य क्षत्रिय कर्म करते थे, और जनक वगैरः भी ब्राह्मण का बहुतसा कर्म किया करते थे। आजकल के जातिपंथ और उस समय के जातिपंथ में इस प्रकार का मुख्य भेद है। उस समय योग्य पुरुष होने से वे दूसरे वर्ग का भी कार्य कर लिया करते थे। आजकल वैवाहिक और सामाजिक बंधन इतने बढ़ गये हैं कि योग्यता के लिये स्थान ही नहीं रहा। उस समय एक जाति से दूसरी ऊंची नीची जाति में गुण कर्म के अनुसार लोग कर दिये जाते थे। ऐतरेय ब्राह्मण में लिखा है कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अगर किसी यज्ञ में ब्राह्मणों के लिये रक्खा हुआ भाग क्षत्रिय खा ले तो उसकी संतति ब्राह्मण गुणसंपन्न होगी और दूसरी या तीसरी पीढ़ी में वह ब्राह्मणत्व की प्राप्ति के योग्य हो जाती है। अगर वह वैश्य का भाग ले तो उस की संतति वैश्य गुणसंपन्न होगी और दूसरी या तीसरी पीढ़ी में वह वैश्य वर्ग में जाने योग्य हो जाती है। अगर वह शूद्र का भाग ले तो उसकी संतति शूद्र गुणसंपन्न होगी और उन्हें तीन उच्च वर्ग की सेवा करनी चाहिये और दूसरी या तीसरी पीढ़ी में शूद्रवर्ग में जाने योग्य वह संतति हो जावेगी। छांदोग्य उपनिषद् में एक अच्छी कथा है। जबालापुत्र सत्यकाम ने अपनी मां से कहा कि हे मां, मैं ब्रह्मचारी बनना चाहता हूं। मेरा कुल कौनसा है? मां ने उत्तर दिया कि मैं नहीं जानती तू किस कुल का है। जवानी में यहां वहां आया जाया करती थी और उस समय तू गर्भ में रहा। मेरा नाम जबाला है और तेरा सत्यकाम। तू अपने को सत्यकाम जबाला कहा कर। वह बालक हरिद्रुमत् के पास गया और उससे कहा कि मैं ब्रह्मचारी बनना चाहता हूं। क्या मैं आपके पास आया करूं? उसने उत्तर में पूछा कि तुम किस कुल के हो? बालक ने उत्तर दिया कि मैं ने अपनी मां से पूछा और उसने उत्तर दिया कि 'जवानी में मैं यहां वहां काम करने के लिये आया जाया करती थी और उसी समय तू गर्भ में रहा। मैं नहीं जानती कि तू किस कुल का है। मेरा नाम जबाला है और तेरा सत्यकाम। तू अपने को सत्यकाम जबाला कहा कर'। गुरु ने उत्तर दिया कि सच्चे ब्राह्मण के सिवा और कोई ऐसा सत्य भाषण न कहेगा। जावो और समिधा ले आवो। मैं तुम्हारे संस्कार करूंगा। तुम सत्य से च्युत नहीं हुए हो। आगे यह बालक बहुत विद्वान् और ब्रह्मज्ञानी हुआ है। उस समय का और आजकल का फ़र्क देखिये!

आगे जब सूत्रकारों ने जातिभेद के कड़े नियम बनाये तब उन्हें कुछ बातों के कारण दिखलाना मुश्किल हुआ। वे कहते हैं कि पहले पहल चार जातियां थीं। परन्तु उन्हें तो दीखता था कि इनके सिवा और भी जातियां हैं। फिर ये कहां से पैदा हुईं? उनकी उत्पत्ति कैसे हुई? इस पर उनका उत्तर है कि पूर्व में सब मनुष्य चार जातियों में बंटे थे, और पीछे से इन्हीं में से दूसरी जातियां भी पैदा हुईं इसके लिये उन्होंने यह बात रची कि मिश्रविवाह से ये नयी भिन्न जातियां पैदा हुईं। यह बात हिन्दुस्थान में अभी तक प्रचलित है। एक जगह लिखा है कि शूद्र पुरुष और ब्राह्मण स्त्री की संतति चांडाल होती है। शूद्र पुरुष और क्षत्रिय स्त्री की संतति वैण होती है। शूद्र पुरुष और वैश्य स्त्री की लड़की अंतावसायी होती है। वैश्य पुरुष और ब्राह्मण स्त्री की संतति शमक होती है। इस प्रकार बड़ी भारी फेहरिस्त दी है। इसमें पूरा विश्वास करना कठिन है। यह जातियों की उत्पत्ति के बाद एक कठिन बात समझाने का तरीका मात्र है। वास्तव में मागध, वैदेह, चांडाल इत्यादि कई भिन्न कौम के थे, और इनमें से कई यहां के मूल निवासी थे। पीछे पीछे से ज्यों ज्यों ये हिन्दुसमाज में शामिल होने लगे त्यों त्यों उनकी उत्पत्ति चातुर्वर्ण से हुई है, ऐसी बात रची जाने लगी। क्योंकि उस समय के कड़े नियम सब को समान लागू करना चाहते थे। उस समय धंधे रोजगार के नाम से जानी जाने वाली जातियां न थीं। भिन्न भिन्न कौमों के मिश्रण की जातियां थीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

एक जगह लिखा है कि जो ब्राह्मण वेद का अभ्यास नहीं करते, न सिखलाते हैं, वे शूद्र के समान हैं। हमारे यहां के ब्राह्मण इस पर क्या उत्तर देंगे? परन्तु यह स्थिति बुद्धकाल में बदलती गई और इस कारण उस समय बुद्ध धर्म अनेकों ने स्वीकार किया है। मनु ने अनेक जातियों का उल्लेख किया है और सबके सब बहुधा मिश्र विवाह से उत्पन्न हुई ऐसा दिखलाया है। इनमें उसने अब तक धंधे रोजगार की जात नहीं पाई। इसका कारण यह है कि धंधे से उस समय तक जात नहीं बनती थी। परन्तु तदनंतर धीरे धीरे धंधे रोजगार इत्यादि से भी जातियां बनने लगीं, और अन्य जातियों के लिये बनाये हुए नियम इनको भी लागू होने लगे। आज कल की जातियां धंधे रोजगार से बनी हैं, इसमें कोई शंका नहीं। जाति भेद की संख्या एक और कारण से बढ़ी होनी चाहिये। यह आर्य लोग ज्यों ज्यों स्थानांतर करते गये, त्यों त्यों थोड़ा बहुत भेद होता गया। उस समय रेल गाड़ी के समान शीघ्रगामी उपाय न होने के कारण जो जहां गये वहीं के बहुधा होजाया करते थे। उनके रीति रिवाज में तो भेद हो ही जाता था, परन्तु यह भी ख्याल रखना चाहिये कि उनके विवाहादि भी नज़दीक के लोगों में हुआ करते थे, दूर जाना उस समय विशेष संभव नहीं था। "सरयूपारी ब्राह्मण" "गंगापारी ब्राह्मण" कान्य कुब्ज ब्राह्मण" इत्यादि शब्दों की उत्पत्ति इसी तरह समझाई जा सक्ती है। दूसरे, ज्यों ज्यों विद्या और तत्वज्ञान बढ़ते गये, त्यों त्यों भी रीति रिवाज बदले होंगे। क्योंकि आखिर सब ज्ञान कृत्यों में रूपांतरित होता है। जो जैसा विद्या विभूषित रहा होगा, उसके कर्म उतने अच्छे रहे होंगे। जिस समाज में इस तरह बदल हुई, वह समाज अपने को अन्यों से अधिक पवित्र ही समझने लगा होगा। इस प्रकार जातियों में से उपजातियां पैदा हुई ऐसा जान पड़ता है। एक बार जातिपंथ की प्रस्थापना होजाने पर उपभेद इस प्रकार सरलता से पैदा होसक्ते हैं। उत्तर हिन्दुस्थान के रीति रिवाजों का जिसे थोड़ा बहुत ज्ञान है, वह इस बात का अच्छी तरह ख्याल कर सक्ता है।

अब ख्याल करना चाहिये कि ब्राह्मणों की उस समय प्रधानता थी जिसका अवशेष अब तक थोड़ा बहुत बचा हुआ है। ब्राह्मण धर्म जानते थे, तंत्र मंत्र के ज्ञाता थे, और अपने पवित्र कार्य को उन्होंने स्वाभाविक ही अधिक महत्व का समझा। यही हाल यूरोप में हुआ है। यहां तो राजा भी विप्रों का सेवक था ही, पर यूरोप में वहां के बादशाह ने पोप के चरणों में सिर नवाये हैं। इसका क्या कारण है? इसका यही कारण है कि धर्म की सच्ची कल्पना में कई बातें ऐसी जोड़ दी जाती थीं कि जिस से इन ब्राह्मणों और पादड़ियों का स्वभाविक ही महत्त्व बढ़ गया। ब्राह्मणों के सिवा वेद दूसरे न पढ़ें, धार्मिक कर्म उनके सिवा अन्य कोई न करें, ब्राह्मण प्रत्यक्ष देवों के रूप हैं, उन के आशीर्वाद के बिना मुक्ति मिलनी कठिन है, इत्यादि इत्यादि। ठीक यही बात यूरोप के पादड़ियों के बारे में चरितार्थ होती है। परन्तु दो भारी भेद थे। एक, यूरोप के पादड़ी विवाह न करते थे। दूसरे, वहां भोजन वगैरः का प्रतिबंध न था। विवाह न होते थे, इसके कारण वहां पादड़ियों की प्रजा उत्पन्न नहीं होती थी। संतति न रहने के कारण अपने वर्ग में उन्हें समय समय पर दूसरे वर्गों के लोगों को पादड़ी बनाना पड़ता था। इस कारण दूसरे लोगों में और पादड़ियों में पूरा भेद कभी न हो सका।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और इस कारण भोजन का भी प्रतिबंध न हो सका। ये दो प्रतिबंध नहीं हुए, इस कारण वहां पादड़ियों की ब्राह्मणों के समान कोई जाति नहीं बन सकी। तथापि अनेक तरह से वे ब्राह्मणों के समान ही थे। यहां पर ब्राह्मण विवाह करते थे, इस कारण उनकी संतति भी रहती थी। जब संतति रही तब भिन्न जाति बना लेना उन्हें कठिन न था। रोटी बेटी व्यवहार ज्यों ज्यों उन्हीं उन्हीं में होने लगा त्यों त्यों उनकी जाति बनने लगी। और जिस दिन इस बात का दूसरों से संबंध बिलकुल तोड़ डाला, उस दिन उन की जाति अलग हो गई। और ऐसा करना उनके फायदे का था। उन्हें महत्व खोना नहीं था. इसलिये ऐसे निर्बंध उन्होंने उत्पन्न किये होंगे इसमें कोई आश्चर्य नहीं। दूसरों से थोड़ा दूर रहे सिवा किसी का महत्त्व बढ़ता नहीं। फिर वे धर्म के सर्वथा मालिक थे। फिर क्या पूछना है? कोई आश्चर्य नहीं कि बड़े बड़े राजाओं ने भी उनके चरणों में मस्तक नवाये। धर्म की कल्पना ही ऐसी महत्त्व की है, उसका हमारे जीवन से ऐसा घनिष्ट संबंध है कि उस के रक्षक राजाओं के भी राजा बन सक्ते हैं। बहुत काल तक यूरोप में पादड़ियों ने और यहां ब्राह्मणों ने बहुत अच्छा कार्य किया। पवित्राचरण से रहकर दूसरों के आदर्श बने रहे, विद्या और ज्ञान बढ़ाया, धर्म की उन्नति की और तदनुसार दूसरों को आचरण करने को बरबस भी किया यह सब कुछ ठीक था। मैं यह भी स्वीकार करता हूं कि उस समय इस बात की आवश्यकता थी कि कोई धर्मरक्षक रहें, तो कोई देश रक्षक रहें, तो कोई द्रव्योत्पन्न करें। परन्तु यह नितांत आवश्यक नहीं कि रोटी बेटी व्यवहार बंद कर जातिपंथ केवल जन्म की नींव पर रचा जाय। विद्वान् पिता का पुत्र हमेशा उसी के समान होगा, ऐसा नहीं कह सक्ते। दुर्गुणों की ऐसे समय खूब बन जाती है। इसके उदाहरण इतने पाये जाते हैं कि यहां देने की आवश्यकता नहीं। ऐसे उदाहरण प्रत्येक को मालूम हैं। जब यूरोप के पादड़ियों में भौतिक द्रव्य और अधिकार की लालसा अत्यंत बढ़ गई, तब उनका ही नहीं तो सारे समाज का अधःपात शुरू हुआ। फिर द्रव्य के बदले मोक्ष बिकने लग गया। मानों मोक्ष की गठरी बांधकर तराजू लिये बाज़ार में मोक्ष बेचने आ बैठे। यूरोप में जाति भेद का झगड़ा न रहने के कारण वहां थोड़े बहुत प्रमाण में विद्या दूसरों को भी प्राप्त हो सक्ती थी। परन्तु हिन्दुस्थान में विद्या का ठेका ब्राह्मण ही लिये बैठे थे। इस कारण ब्राह्मण जो बतलाते वही सत्य, वही विद्या, वही ज्ञान, वही कर्त्तव्य, वही तत्त्व, वही नीति, उनका वाक्य सब कुछ हो गया। जब दूसरों के पास विद्या ही नहीं, तो लोग कर ही क्या सक्ते थे? फिर जातिभेद का झगड़ा इतना पक्का हो गया था कि बुद्ध जैसे शक्तिशाली पुरुष भी जातिभेद को न तोड़ सके। पीछे पीछे से तो बौद्धधर्म में जातिभेद जा घुसा। आजकल भी धोबी किरस्तान, चमार किरस्तान अथवा हिन्दू आर्यसमाजी, मुसलमान आर्यसमाजी ऐसे भेद पाये जाते हैं। यह बात जातिपंथ की दृढ़ता के कारण होती है और उसका दृष्टांत भी है। दूसरी अन्य जातियों को ब्राह्मणों ने जो दबा रक्खा, सो हमेशा के लिये दबा ही लिया। फिर उनकी ब्राह्मणों के विरुद्ध कुछ न चली। फिर गुण कर्म का विचार न रहा। केवल जन्म के कारण प्रत्येक ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र इत्यादि बनने लगा। क्षत्रिय, वैश्य शूद्र बहुधा विद्याहीन रहने लगे। इतना ही नहीं तो ब्राह्मणों के उदरनिर्वाह का बोझ भी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उन पर था। इस कारण उन्हें केवल उनकी सेवा में लगा रहना पड़ा। जो थोड़ी बहुत विद्या थी वह ब्राह्मणों के पास थी। उनका जब अधःपात हुआ तब समाज का रखवाला कोई न रहा। फिर विद्या की उन्नति कहां से होती और समाज का उद्धार कहां से होता ? यही कारण है कि हिन्दुस्थान के इतिहास में कुछ काल तक विद्या बढ़ी चढ़ी दीख पड़ती है, पर उसके बाद कुछ उन्नति नहीं दीख पड़ती। कुछ लोग कहेंगे कि उस काल के ग्रंथ नष्ट हो गये, इस कारण वे उपलब्ध नहीं। माना कि कुछ ग्रंथ नष्ट हो गये होंगे, पर एक विशिष्ट काल के बाद सब विषयों के लिखे हुए सारे ग्रंथ ही किस प्रकार नष्ट हो सक्ते हैं ? क्या मुसलमानों के समय में ये ही ग्रंथ चुन चुन कर नष्ट कर दिये गये ? यह कदापि संभव नहीं। मुसलमानों ने अगर हमारे ग्रन्थ नष्ट किये ही होंगे तो किसी विशिष्ट काल के ही ग्रन्थ क्योंकर चुने ? क्या इस में कुछ हेतु हो सक्ता है ? इस में न तो कुछ हेतु होसक्ता है, न ऐसा जानबूझ कर, उन्होंने किया ही होगा। अगर उन्होंने ग्रन्थ नष्ट किये होंगे तो जो कुछ उनके हाथ में पड़े, वे सब ही नष्ट किये होंगे। किसी विशिष्ट काल के ग्रन्थ चुनकर नष्ट करने का कोई कारण नहीं दीख पड़ता। कुछ काल के बाद उन्नति रुकने का कारण ब्राह्मणों का अधःपात मुख्य है। सेवावृत्ति में जो दूसरे बढ़े पले, वे किस प्रकार स्वतन्त्र कार्य कर सक्ते थे। स्वतन्त्र विचार के लिये विद्या का कुछ जोर आवश्यक है। परिणाम यह हुआ कि ब्राह्मणों का अधःपात होने पर भी उनका अधिकार बना रहा और इस कारण बाकी लोगों को वे हमेशा गुलामों की तरह दबाये ही रहे। जहां मन का जोर न रहा वहां किस बात का जोर रह सक्ता है ? कोई आश्चर्य नहीं कि ये मुसलमानों से टक्करें न ले सके और उनके सामने हार खानी पड़ी। अबतक ब्राह्मणों के इस अधिकार के कटु फल हमें चखने पड़ते हैं। साढ़े एकतीस करोड़ में लाख भी पुरुष मिलना कठिन है जिन्हें भलेबुरे का, धर्म, अधर्म का स्वतन्त्र विचार करने की शक्ति है। जब तक हमारे मन की पराधीनता न नष्ट हो जावेगी तब तक हम स्वतन्त्र कार्य के योग्य नहीं हो सक्ते। हर्ष का विषय है कि अंग्रेजों की कृपा से विद्या का भाण्डार धीरे धीरे सब को खुला हो रहा है और नाना उपायों से उसकी वृद्धि हो रही है। सेवावृत्ति से पुश्तों तक दबे हुए मनको स्वतन्त्रता देना भी सरल कार्य नहीं। यह कार्य बहुत धीरे धीरे हो सकेगा। इसके कुछ बुरे भी लक्षण दिखाई देंगे और दे रहे हैं। पर स्वतन्त्र विचार करने की शक्ति और हिन्दु धर्म की जोड़ी हो जाने पर जो अच्छे परिणाम होंगे, उससे हिन्दुस्थान का अगला इतिहास सहस्रों वर्षों के बाद फिर रचाजाने वाला है। अगर दुनियां में कोई धर्म ऐसा है जो स्वतन्त्र विचार के सामने भी टिका रहे, इतनी ही नहीं, जो स्वतन्त्र विचार की आंच में पड़ने पर और भी उज्ज्वल दिखे तो वह हिन्दु धर्म ही है। इसके सिवा कोई धर्म नहीं जो स्वतन्त्र विचार के सामने टिक सकेगा और जिसका उससे उज्ज्वलरूप बनेगा। हमारे ऊपर के विवेचन का यही स्पष्ट सारांश है कि हिन्दुस्थान की आज की स्थिति के लिये हिन्दु धर्म के उत्पादक ब्राह्मणों के वंशज ही जवाबदार हैं। यह कहने में हमें कोई डर नहीं क्योंकि इतिहास ही इस बात का गवाही है। जब उन्होंने अपना वर्चस्व बनाये रहने के लिये अनेक कृत्रिम नियम रचे, तो दूसरा कौन इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बात के लिये जवाबदार हो सक्ता है ? जाति-भेद अगर दुनियां में मुस्तकिल हो सक्ता है, तो वह "गुणकर्म" के ही नींव पर हो सक्ता है। "शमो दमस्तपः शौचं क्षांतिरार्जव मेव च। ज्ञानं विज्ञान मास्तिकयं ब्रह्मकर्म स्वभावजं।" शम, दम, तप, शुचिर्भूतता, शान्ति, सरल स्वभाव, ज्ञान यानी अध्यात्मज्ञान विज्ञान यानी विविधज्ञान और आस्तिक बुद्धि, ये ब्राह्मण के स्वाभाविक गुण होने चाहिये। इन गुणों से जो युक्त होगा, वही ब्राह्मण होगा। "शौर्यं तेजो धृतिदर्क्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्। दानमीश्वरभावश्च क्षात्रंकर्म स्वभावजम्।" शौर्य, तेजस्विता, धैर्य, दक्षता, युद्ध से न भागना; दातृत्व, और अधिकार दिखलाना, ये ही क्षत्रिय के स्वभावसिद्ध गुण हैं। इन से जो युक्त होगा, वही क्षत्रिय होगा। "कृषि-गोरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजं" कृषि, गोरक्षा, और वाणिज्य यानी व्यापार, ये वैश्य के स्वाभाविक कर्म हैं। ये जो करेगा, वही वैश्य होगा। इसी प्रकार "परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजं" सेवा वृत्ति शूद्रों का स्वाभाविक कर्म है। इसी अर्थ से भगवान् श्री कृष्ण ने कहा है "चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुण कर्म विभागशः" गुण और कर्म के भेद के अनुसार चातुर्वर्ण्य की रचना मैंने की। सारांश परमेश्वर की सृष्टि में लोगों में अगर कुछ भेद हो सक्ता है तो वह गुण और कर्म के अनुसार होगा, केवल जन्म के अनुसार कदापि नहीं यही हमारा कहना है।

कुसुमोद्यान

बिना स्वर ऊंचा किये लाखों लोगों को वक्तृता सुनाने का नया आविष्कार।

जून १९२० के समाचार पत्र साइन्टिफ़िक अमेरिकन लिखता है कि "बहुत वर्षों के बाद अब पहिली वार नेशनल प्रेसीडेन्शल कनवेन्शंस में श्रोतागणों की संख्या व्याख्यानदाता के स्वर सुनने के लिये अत्यधिक न हुई। इस का यह कारण नहीं कि लोगों की भीड़ कम है अथवा वह लोग बहुत पास २ ठस कर बैठे हैं बल्कि उच्च स्वर से बोलने वाले टेलफ़ोन के नूतन आविष्कार का चमत्कार है जिस के द्वारा प्रत्येक व्याख्यानदाता का स्वर इतना ऊंचा किया जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति सुन सके। बिजली की लम्बी डंडी व्याख्यान दाता के स्वर के चारों ओर शक्ति को लपेट कर उसे इतना शक्तिशाली बना देती है कि वह दूर पर बैठे हुये श्रोतागणों के पास सम्पूर्ण भाव और गम्भीरता के सहित ही पहुँचता है।

इस पर माडर्न रिव्यू टिप्पणी करता है कि भारत में बहुत लोगों के समुदाय को व्याख्यान सुनाने के अवसर प्रति वर्ष बढ़ते ही जाते हैं लेकिन सभी समझदार विचारशील योग्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पुरुषों का स्वर ऊंचा नहीं है इसलिये भारतीयों के लिये यह उत्साह दिलाने वाली बात है कि उपरोक्त आविष्कार का प्रादुर्भाव हुआ है।

——

क्या विचार-स्वातन्त्र्य भयानक है?

सितम्बर मासके माडर्न रिव्यू में (Century) सेन्चुरी अखबार से निकाल कर मिस्टर ग्लेन फ्रैंक के विचार-स्वातन्त्र्य के विषय में जो विचार हैं वह उद्धृत किये हैं जिन का सार हम यहां पर देते हैं :—

वह कहते हैं कि मैं एक अमेरिकन महा-पुरुष के शब्दों पर विश्वास करता हूं कि दबाव डालने के मूल्य की अपेक्षा स्वतन्त्रता का मूल्य कम है। किसी बुद्धिमान पुरुष को इस में विवाद नहीं कि वाक्य-स्वातन्त्र्य छापेखाने का स्वातन्त्र्य और सभा-स्वातन्त्र्य होने में अनर्थ की सम्भावना है किन्तु "अनर्थ की सम्भावना न रखने वाली" नीति वह नीति है जिन से कुछ काल के लिये मूढ़-दासत्व जो कि एक सत्ताधारियों (autocrats) को प्रिय होता है उत्पन्न हो जावे किन्तु अन्त में वह विप्लवजनक होता है। रूस ने "अनर्थ की सम्भावना न रहने वाली" नीति का अनुसरण किया, परिणाम यह हुआ कि ज़ार गोलियों की मार का लक्ष्य बना और रूस को भयानक तथा बहुमूल्य विप्लव द्वारा दूसरी कार्य्यशैली का अनुसरण करना पड़ा है। जर्मनी ने होहेन्ज़लर्न वंशावली के समय में अनर्थ की सम्भावना रहित रीति का अनुसरण किया, जिस का परिणाम यह हुआ कि उसके बड़े२ विचारशील तत्त्ववेत्ताओं की तेजस्विनी शक्ति को भंग करके उन का बहिष्कार किया गया और जर्मनी दुर्भाग्यवश दीन दशा को प्राप्त हुआ।

बहुतेरे दबाव डालने की नीति के पक्षपाती इस विश्वास पर रहते हैं कि प्रत्येक स्वतन्त्र-विचारशील जन पिशाची खेल विप्लव का भक्त वैसे ही है जैसे कि मनुष्य पोलो इत्यादि खेलों के हुआ करते हैं। निस्सन्देह कुछ स्वाभाविक विप्लवी लोग हैं—वह लोग जो स्वर्ग में भी योद्धा सन्नद्ध करने का यत्न करते या न्यू ज़ेरू सलम (New Jerusalem) में भी साम्य-वाद उत्पन्न करते हैं—किन्तु उनकी संख्या बहुत कम है। विप्लव के बहुत से पक्षपातियों को कोई शिकायत रहती है अथवा यह कहना चाहिये कि वह समझते हैं कि उन्हें रहती है। शान्तियुक्त उन्नति के लिये यह आवश्यक है कि इनकी प्रत्येक शिकायत सुनी जावे। यदि किसी व्यक्ति की शिकायत ठीक है तो हमें उसे सुनना चाहिये और शीघ्र ही उसके प्रतीकार का उपाय करना चाहिये परन्तु यदि किसी व्यक्ति की शिकायत कल्पनामात्र है तो भी हमे उसको सुनना चाहिये और सुनकर अपने दिमाग़ को उसके दिमाग़ के साथ लड़ा कर यह सिद्ध कर देना चाहिये कि उसकी शिकायत काल्पनिक है। उसको सुनने से इन्कार करना प्रजातन्त्र राज्य की रक्षा करना नहीं है। उसके विपरीत यह तो एक असन्दिग्ध मार्ग यह निश्चय दिलाने का है कि उसके पास के केवल शारीरिक बल या प्रतिहिंसामात्र ही रह गई है कि जिस भाषा में वह बोल सक्ता है।

सामाजिक जीवन में आवश्यक इस सहिष्णुता के भाव को वाल्टेर (Voltaire) ने हेलविटियस (Helvetius) को जो पत्र लिखा था उसमें बड़ी उत्तमता से दर्शाया है। वह कहते हैं कि "जो तुम कहते हो उससे मैं बिल्कुल असहमत हूं किन्तु अपने कथन के कहने का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जो तुम्हारा अधिकार है उसकी मृत्यु पर्य्यन्त मैं रक्षा करूंगा।

क्या हमारी भारतीय सर्कार इधर ध्यान देगी? सहयोग की चाहना पूरी होने के लिये क्या यह आवश्यक नहीं कि कौंसिल के सब सभासदों को विचार-स्वातन्त्र्य दिया जावे और यदि वह विचार काल्पनिक हों तो उन्हें वैसा सिद्ध कर दिया जाय किन्तु यदि वास्तविक हों तो दूर करने का यत्न किया जावे।

बच्चों को चूमने से हानि।

सितम्बर मास के माडर्नरिव्यू में कई प्रसिद्ध अंग्रेज़ डाक्टरों की सम्मति इस विषय में दी है कि बच्चों को चूमने से कई रोगों के उत्पन्न होने की सम्भावना है। हमारे शास्त्रों में प्रेम का प्रकाश शिर के सूंघने में दर्शाया है किन्तु पाश्चात्य सभ्यता में चुम्बन माता पिता भाई बहिन इत्यादिकों को छोड़कर प्रत्येक निकटतम सम्बन्धी तथा मित्र के बच्चे के प्रति स्नेह का चिन्ह माना जाता है। हमारे भारतीय बन्धु तथा भगिनी गण इस पाश्चात्य रीति को उत्तम समझ कर इसका अनुकरण बहुत करने लग पड़े हैं अतः आज हम उन्हें इसकी हानियें पाश्चात्यों के मुख से ही सुनाना चाहते हैं। आशा है कि जनता इस पर ध्यान देगी। डाक्टर हैरीरावर्टस लण्डन यूनीवर्सिटी में रसायनाचार्य्य हैं। वह इस विषय में कहते हैं कि माता का बच्चे को चूमना ठीक है किन्तु अन्य किसी का चूमना स्वाभाविक ज्ञान तथा (Court of æsthetics) के विरुद्ध है। बनावटी प्रेम से दर्शाका नारियों तथा चाचियों ताइयों का चुम्बन मूर्खता है क्योंकि उससे बच्चे को आनन्द नहीं मिलता। बच्चे को उसकी इच्छा के विरुद्ध चूमना दण्डनीय होना चाहिये।

एक दूसरे डाक्टर रावर्टवेल F. R. F. P. S. अन्तर्जातीय ज़हरवाद-गवेषणा-समिति के उपप्रधान इस विषय में कहते हैं कि "निस्सन्देह चुम्बन उस समय सत्यप्रेम का सूचक होने से क्षन्तव्य है जब कि चुम्बन करने वाला और वह बच्चा जिसे चुम्बन दिया जावे दोनों एक दूसरे से बहुत परिचित हों और स्वस्थ हों किन्तु जिस तिस का चूमना विष की भांति त्यागना चाहिये क्योंकि वह रोगों के रूप में विष का प्रयोग कर देता है। माता तथा धायी का यह विशेष कर्तव्य है कि बच्चों को अन्य लोगों के चुम्बन से बचावें तथा घनिष्ट मित्रों के चुम्बन से भी यदि उनके बिलकुल स्वस्थ होने में कुछ भी शक हो, क्योंकि यह कहना व्यर्थ है कि इस बनावटी-स्नेह-दर्शन की रीति से बच्चों को बहुधा रोग लग जाने की सम्भावना है और अक्सर रोग लग भी जाते हैं।

बच्चों को कुत्ते बिल्लियों को चूमने से रोकना चाहिये क्योंकि उनके बालों में रोगों के कीट रहते हैं और उन कीटों से रोग बच्चों को भी लग जाते हैं।

वेद में जल विद्या।

पण्डित श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी अपने पत्र 'वैदिक धर्म' में इस विषय पर निम्न प्रकार लिखते हैं :—

आज इस लेखमें जलविद्या के विषय में कुछ थोड़े विचार संगृहीत करने का यत्न किया है। विचिकित्सक पाठक इन का विचार करें और सोचें कि वास्तव में वेद का मंतव्य कितना उच्च और श्रेष्ठ है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस लेख में जल के विषय में विचार करना है इस लिये सब से प्रथम जल के नामों का विचार करेंगे। निघण्टु अ० १।१२। में जल के सौ नाम दिये हैं उन में जन्म शब्द है। जो जन्म लेता है उस का नाम जन्म हो सक्ता है। इस वैदिक नाम से यह बात स्पष्ट होती है कि पानी का जन्म होता है अथवा पानी उत्पन्न होता है। जन्म प्राप्त करने का तात्पर्य बनने अथवा उत्पन्न होने से है। सृष्टि के सब ही पदार्थ जन्मते हैं, फिर वेद ने जल का ही नाम 'जन्म' क्यों रक्खा इस बात का पता लगाना आवश्यक है। अन्य पदार्थों के जन्म की अपेक्षा पानी के जन्म में कुछ न कुछ विशेषता अवश्य होगी। जल का जन्म कुछ असाधारण प्रतीत होता है। आधुनिक विज्ञान-शास्त्र कहता है कि दो वायुओं के संयोग से जल का जन्म होता है अर्थात् आधुनिक विज्ञान के अनुसार भी जल का 'जन्म' नाम सार्थ होसक्ता है परन्तु इसका विचार करनेके पूर्व जलवाचक अन्य नामोंका यहां विचार करेंगे।

'भूतं, भुवनं, भविष्यत्' ये तीन शब्द वेदमें जल वाचक हैं। पूर्वोक्त निघण्टुका भाग देखिए। 'भु' धातुसे ये तीन शब्द बनते हैं और 'भु' धातुका अर्थ To be, to become, to be born, to be produced होना, बनना, जन्म होना, बनाया जाना, यह है। अर्थात् इन अर्थोंका विचार करनेसे उक्त शब्दोंके अर्थ 'बनता था, बनता है, और बनेगा' इस प्रकार हो सकते हैं। इन अर्थोंका तात्पर्य यह है कि जिन नियमों के अनुसार जलका जन्म पूर्व समयमें होता था, उसी प्रकार अब भी हो सकता है और भविष्यत् में भी होगा। जल बननेके जो नियम हैं बिलकुल अटल हैं, यह भाव उक्त अर्थों में टपकता है।

जलके सौ नामों में 'रेतः' शब्द है। अर्थात् वेदमें 'रेतः' का अर्थ उदक है। साधारण भाषा में 'रेत' शब्दका अर्थ पुरुषका है, परंतु वेदमें जल अर्थमें रेत शब्द प्रयुक्त है। इस शब्दका भाव मनमें धारण करनेसे ब्राह्मण ग्रंथोंमें आई हुई मित्रावरुणोंकी एक कथा विशद हो सकती है। परंतु उक्त मैत्रावरुणीय गाथा देखनेके पूर्व निम्न वचन देखिए।

मित्रावरुणौ त्वा वृष्ट्याऽवताम्॥

वा. यजु. २।१६ शत. ब्रा. १।८।३।१२

'मित्र और वरुण वृष्टि करके तुह्मारी रक्षा करें।' इस मंत्रमें कहा है कि जलको उत्पन्न करनेका कार्य मित्र और वरुणोंका है। मित्र और वरुण दोनों देव जल उत्पन्न करते हैं और वृष्टि बरसा देते हैं। अर्थात् पानीका जन्म मित्रवरुणोंके सम्बन्धसे होता है। इनमें स्त्री-पुरुषसंबंध नहीं है। दोनों पुरुषही हैं और दोनों मिलकर जलको उत्पन्न करते हैं। यही भाव अथर्ववेदकी श्रुतिमें है।

मित्रावरुणौ वृष्ट्याधिपती तौ मावतां॥

अथर्व. ५।२४।५

मित्र और वरुण ये वृष्टि के अधिपति हैं, वे दोनों मेरा रक्षण करें।' इस श्रुतिमें भी मित्रावरुणोंका सम्बन्ध वृष्टि अर्थात् जलके साथ बताया है। इस सम्बन्धका विचार करते हुए आप मैत्रावरुणीय गाथाका विचार कीजिए

मित्रावरुणोंकी कथा—भगवान देवदेवेश्वर इंद्रके दरबारमें सब देव विराजमान हुए थे, उनमें अपने अपने स्थानपर मित्र और वरुण भी बैठे थे। दरबार के कार्य समाप्त होने के पश्चात् अप्सराओं का गायन और नाच शुरू हो गया

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जब उर्वशी नाचने लगी तब मित्रावरुण मोहित हो गये और उनसे रेतका स्खलन हो गया—

मित्रावरुणयो रेतश्चस्कंद।

मित्रावरुणोंसे एकदम रेत स्खलित हो गया। यदि यहां रेत शब्दका अर्थ उदक मान-लिया जाय और मित्र वरुणोंको वायु माना जाय, तो उक्त कथाका बीभत्स और अश्लील भाव हट जाता है, और प्रतीत होने लगता है, कि यह एक निसर्गकी घटनापर रूपक रचा है।

ऐतिहासिक लोग समझते हैं, कि यह कथा इसी प्रकार बनी थी। परन्तु ऐसा माननेमें कई दोष प्रतीत होते हैं। (१) स्वर्गमे पुण्य करनेवाले धार्मिक लोक जाते हैं वहां वारांग-नाओंकी क्या आवश्यकता है? धार्मिक लोक वेश्यागमन नहीं करते। (२) यदि वहां स्वर्गमें भी वेश्याएं हैं ऐसा माना जाय, तो भी मित्र और वरुण ये दो (पुण्यकृतौ राजानौ। निरु) पुण्य कर्म करनेवाले राजा थे। ऐसे सदाचारी राजाओंका भरे दरबारमें दोनोंका एकदम वीर्य स्खलन होना यह असंभव प्रतीत होता है। तथा इसकी सत्यता माननेपर भी इस निज अथवा गुप्त बातका सब जगतमें प्रचार क्यों किया गया? इत्यादि विचारसे पता लग सक्ता है, कि वह व्यवहारिक घटना नहीं है, प्रत्युत कुछ आलंकारिक गूढ इस कथामें अवश्य है।

'रेत' शब्दका अर्थ वैदिकभाषामें 'उदक' है, यह बात पूर्वोक्त निघण्टुके आधारसे बताई है। यदि यह अर्थ इस गाथामें देखा जायगा तो सब अश्लील भाव लुप्त हो जाता है। और इस बातका संभव प्रतीत होने लगता है, कि कदाचित मित्र और वरण ये दो वायु होंगे कि जिनसे जल उत्पन्न होता है। मित्रावरुणों से रेतकी उत्पत्ति हो गई अर्थात् दो वायुयोंके संयोगसे जलकी उत्पत्ति हो गई, ऐसा अर्थ बिलकुल सीधा प्रतीत होता है।

इंद्र के दरबार के विषय में हमें बहुत दूर जाने की जरूरत नहीं है। प्रत्येक रात्री में हम आकाश में स्वर्ग का दर्शन करते हैं। चंद्र, गुरु, शुक्र, शनि आदि सब ग्रह तारा और नक्षत्रगण जहां रहते हैं, वह ही इंद्रका दरबार है। दूरबीण से इसका दर्शन दिनके समय में भी हो सकता है। अर्थात् यह खगोल ही स्वर्ग है। इस पृथ्वी लोक को 'इहलोक, ऐहिक, मृत्यु लोक' कहते हैं; और ऊपरके तेजस्वी खगोल को 'आमुष्मिक, स्वर्गलोक' कहते हैं। उपनिषदों में भी 'अस्मिल्लोके अमुष्मिल्लोके' अर्थात् इस लोक में और उस लोक में ऐसे शब्द प्रयुक्त होते हैं। तात्पर्य जैसा यह भूलोक मनुष्यों को प्रत्यक्ष है उसी प्रकार स्वर्ग भी प्रत्यक्ष दृश्य है, अन्यथा 'अमुष्मिल्लोके' इस शब्द का कोई तात्पर्य ही नहीं है। 'यह और वह' ये शब्द जैसे प्रत्यक्ष विषयक होते हैं उसी प्रकार 'अस्मिन्-अमुष्मिन' ये शब्द प्रत्यक्ष पर ही हैं। अस्तु। इस ग्रह तारा नक्षत्र मंडल के स्वर्ग में पूर्वोक्त कथा का चमत्कार होता है, यह भाव उक्त कथा में स्पष्ट है।

स्वर्ग के सूर्य चंद्रादि देव प्रत्यक्ष दीखते हैं, उनका व्यवहार हमें प्रत्यक्ष है, वे भ्रमण करते हैं, किसी समय एक दूसरे के पास आते हैं पश्चात् दूर होते जाते हैं, यद्यपि उनका वार्तालाप हम श्रवण नहीं कर सकते, तथापि उनका भ्रमणादि व्यवहार हमें प्रत्यक्ष है। पुराणों के कथा भाग यदि ठीक प्रकार से ज्ञात होते हैं तो इस स्वर्ग-धाम की कल्पना से ही हो सकते हैं। इस आकाशरूपी स्वर्ग में अप्सरागण कौन हैं? उक्त देवताओं के दर्बार में कौन अप्सराएं हैं कि जो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नाचती हैं ? इस प्रश्न का उत्तर 'अप्–सरः' शब्द ही दे सकता है। वैदिक अथवा संस्कृत भाषा में प्रत्येक शब्द उस २ पदार्थ का स्वरूप अच्छी प्रकार व्यक्त करता है। यही एक सुभीता है जिस के आधार से वैदिक उपदेश का गूढ व्यक्त किया जा सकता है ॥

'आप्' अर्थात् जल के आश्रय से जिसका 'सरण' अर्थात् संचार होता है उसका नाम 'अप्–सरः' (अप्सु सरंति इति अप्सरसः। अमरकोश–क्षीरस्वामी टीका १।१।११) अप्सरा होता है। पर्जन्य काल में आकाश में मेघ आते हैं, मेघों की भयानक गर्जना होती है, बिजलियों का नाच शुरू होता है और वृष्टि होती है। बिजलियां मेघों के आश्रय से यहां नाचती हैं। बिजली और जल का इस प्रकार संबंध है। जल के आश्रय से विद्युत का संचार होता है, यही 'अप्–सर' पन है। यद्यपि केवल शुद्ध उदक विद्युत का संचार करने के लिये योग्य नहीं है तथापि साधारण जल विद्युत के लिये (Good conductor) अच्छा प्रवाहकारी है इसमें कोई संदेह नहीं है। यही भाव स्वयं 'अप्सरः' शब्द से निकलता है।

अप्सरागणों का नाच भगवान इंद्र के दरबार में चलता रहता है इस बात का अनुभव पाठकगण वर्षाकाल में वारंवार देख सकते हैं। जब अप्सराओं का नाच होता है उस समय मित्र और वरुण नामक जलदेवों से रेत अर्थात् जल गिरने लगता है अर्थात् वृष्टि होती है। इत्यादि रूपक यहां स्पष्ट ज्ञात हो सकता है। अब अप्सराओं के कुछ अन्य अर्थ यहां देखना उचित है:—

(१) घृताची—(घृत) उदक का अंचन अर्थात् प्रवाह करने वाली। यह एक अप्सरा का नाम है। यह विद्युत के लिये बिलकुल सार्थ होता है।

(२) उर्वशी—(उरु वशे यस्याः) जिसके आधीन सब कुछ है उस विद्युत को उर्वशी कहते हैं। विद्युत के आधीन जगत के अनंत पदार्थ हैं यह बात सुप्रसिद्ध है। इसका दूसरा अर्थ भी मनन करने योग्य है। 'उरु बहु अश्नुते' जो बहुत भक्षण करती है। विद्युत के पतन से किस प्रकार नाश होता है यह तथा अन्य बातें देखने से इस बात का ज्ञान हो सकता है कि विद्युत का सर्व भक्षकत्व किस प्रकार है। 'सर्वत्र व्यापक' ऐसा भी इससे एक भाव निकलता है।

'पुरुरवा और उर्वशी' का संबंध नाटक और पुराणों में प्रसिद्ध है। 'पुरु–रवा' का अर्थ जिस का बड़ा आवाज है ऐसा है। मेघों का गड़गड़ाहट इस शब्द के अर्थ से ध्वनित होता है। इसलिये 'पुरु–रवा' शब्द मेघवाची है और उर्वशी शब्द विद्युत वाचक है। निरुक्तकार कहते हैं:—

पुरू–रवा बहुधा रोरूयते ॥

निरु० ५।४।४६

'जो अनेक प्रकार से बड़ा बड़ा शब्द करता है वह पुरूरवा समझिए।' मेघ और विद्युत का संबंध यहां स्पष्ट है। अस्तु। इस प्रकार अप्सराओं का विद्युत होना और विद्युत का मेघों और जलधरों के साथ संबंध होना उक्त रूपक का विशेष स्पष्टीकरण स्वयं करता है। विद्युत के चमकाहट के साथ मेघों से वृष्टि हो गई इतनी ही बात उक्त कथा में दर्शाई है। अस्तु। इतना देखने पर भी मित्रावरुणों के स्वरूप का बोध नहीं होता। क्योंकि मित्रावरुण मेघों में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रहते हैं ऐसा किसी स्थान पर नहीं कहा। इस लिये मित्रावरुणों का स्वरूप कुछ विलक्षण होना आवश्यक है। अब वेद मंत्रों में देखेंगे कि उन का स्वरूप क्या है—

मित्रं हुवे पूतदक्षं
वरुणं च रिशादसं।
धियं घृताचीं साधन्ता॥

ऋ० १।२।७

यह मंत्र वायुसूक्त के अंदर मित्रावरुण देवता का है। इस मंत्र के तीन खंड हैं। इनका अर्थ निम्न प्रकार है—

(१) पूत-दक्षं मित्रं हुवे।—बलवान मित्र वायु को मैं स्वीकार करता हूं।

(२) रिशाऽदसं च वरुणं हुवे।—जंग (मोरचा Rust) चढ़ाने वाले वरुण वायु को भी मैं लेता हूं।

(३) घृताऽचीं धियं साधन्ता—ये दोनों जल उत्पन्न करने का कार्य सिद्ध करते हैं।

इस मंत्रार्थ के साथ उक्त कथा की तुलना करने से जलके जन्म का वृत्तांत ज्ञात हो सकता है। अब मित्र और वरुण कौन हो सकते हैं इसका विचार करेंगे।

'वरुण' शब्द का विशेषण 'रिश-अदस्' उक्त मंत्रमें देखिए। 'रिश-अदस्' का अर्थ दूसरों का स्वरूप बिगाड़ने वाला। 'रिश्, रिष्, रुश् रुष्' इन धातुओं का अर्थ विकृत करना, दुःख देना है। इनके रूप 'रिष्ट, रुष्ट' (Rust) ऐसे होते हैं। इंग्लिश भाषा का Rust शब्द इस धातू से ही बनाना उचित है। यद्यपि कोशों में 'रुधिर' से इसका संबंध जोड़ दिया है तथापि इतना दूरान्वय करने की कोई आवश्यकता नहीं है, रुष् धातु से सीधा 'रुष्ट (Rust)' बनता है।

आक्सिजन (Oxygen gas) का धर्म (Oxidize) जंग चढ़ाना है। लोहा आदि धातुओं पर जंग इसी वायु से होता है। मूल धातु का स्वरूप बिगाडना इसका धर्म है और वह ही 'रिश्-अदस्' शब्द बता रहा है। इस से पता लग सकता है कि वरुण वायु आक्सिजन का वाचक होगा। 'वरुण' शब्द का अर्थ करने अर्थात् चुनने और पसंद करने योग्य है। आक्सिजन वायु सब प्राणिमात्र अपने जीवन के लिये पसन्द करते हैं। प्राणियों का जीवन इसके बिना नहीं होसकता, इसलिये यह प्राण वायु है ऐसा कहा जा सकता है।

वरुण वायु का इस प्रकार ज्ञान होने से मित्र वायु का ज्ञान तर्क से भी हो सकता है। प्रायः यह हैद्रोजन वायु होगा। क्योंकि 'मि-त्र' शब्द 'मा-माने' धातु से बनता है। मिननेवाला, मापने वाला ऐसा इसका शब्दार्थ है। इंग्लिश भाषा में Meter, metre शब्द इसी 'मित्र' का रूपान्तर है। 'मा' धातु से 'मित्र' शब्द बनता है और 'मित्र' शब्द से Meter, metre शब्द बनता है। इसके और शब्द देखिए—

(१) थर्मा-मीटर Thermo-meter } =घर्म=मित्र=उष्णता मापने का यन्त्र।

(२) ब्यॉरो-मीटर Baro-Meter } =भार-मित्र=भार मापक यन्त्र।

(३) ज्यॉ-मीटर Geo-meter } =गो-मित्र=भूमिति शास्त्रज्ञ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(४) हैड्रो-मीटर Hydro-meter } =सार्द्र-मित्र=घनत्वमापक यन्त्र।

(५) पायरो-मीटर Pyro-meter } =वर्हि-मित्र=अग्निमापक यन्त्र।

(६) लाक्टो-मीटर Lacto-meter } =रस-मित्र=गोरस मापने का यन्त्र।

(७) ज्यो-मेट्री Geo-metry } =गो-मित्री=भूमापन विद्या

इन शब्दों के प्रयोगों से 'मित्र' शब्द का meter शब्द के साथ किस प्रकार का सम्बन्ध है इसका ज्ञान हो सकता है। छंद वाचक meter शब्द है। वहां भी इसका अर्थ 'परिगणित अक्षर इतना ही है। अर्थात् मित्र शब्द का अर्थ 'मिनने वाला, मापने और गिनने वाला यह सर्वत्र सार्थ होता है। मात्रा, मित्र, मीटर meter आदि सब शब्दों में उक्त भाव ही है। इसलिये 'पूतदक्ष मित्र' का अर्थ 'अन्य पदार्थोंका तोल अथवा माप बतानेवाला बलवान वायु' इतना है। हैड्रोजनसे सबका तोल किया जाता है। इसलिये जलके घटकोंमें मित्रवायु हैड्रोजन ही संभवतः हो सकता है। 'दक्ष' शब्दका अर्थ To increase अर्थात् आकार से बढ़ना है। यह गुण भी हैड्रोजनके विषयमें संगत हो सकता है। 'पूत' शब्दका अर्थ (Pure) शुद्ध है। शुद्ध हैड्रोजन वायु जो सबका तोल करनेवाला है, वह और प्राणवायु मिलकर जल उत्पन्न करनेका कार्य करते हैं यह उक्त मंत्रका आशय है

'मैं पूतदक्ष मित्र वायुको लेता हूं और रिशादस वरुणको लेता हूं। ये दोनों मिलकर जल उत्पन्न करनेका कार्य करते हैं। यह उक्त मंत्रका शब्दार्थ है। पाठक यहां जान सकते हैं कि उक्त शब्दों में कितना गूढ़ अर्थ भरा है।

इस सब वर्णनसे जलका जन्म नाम कितना सार्थ है, इस बात का बोध हो सकता है। मित्रावरुणोंका जलके साथ संबंध और पूर्वोक्त मैत्रावरुणीय गाथाका गूढार्थ यहां स्पष्ट हो सकते हैं। वेद मंत्रों के गूढ आशय को लेकर ब्राह्मण और पुराणों में बड़ी बड़ी कथाएं बनी हैं। उन कथाओं का तब तक आशय नहीं समझ सकता, जबतक उनका संबंध मंत्रों के साथ ज्ञात नहीं होता। इससे वेद के स्वाध्याय का कितना महत्त्व है इस बात का परिज्ञान हो सकता है।

श्लोक—"अपनयति यदन्तर्ध्वान्तजालं जनाना-
मुपनयति मुदं यज् ज्ञाननेत्राम्बुजानि।
चटुलयति रसज्ञां यच्च भृङ्गीमिवालं
जयति जगति तन्नो वाङ्मयं ज्योतिरेकम्॥"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारी मंजूषा

१-यूरोप में बुद्धि स्वातन्त्र्य-बुद्धि-स्वातंत्र्य पुस्तक माला का प्रथम पुष्प-पृष्ठ ११४, मूल्य १।) बुद्धि-स्वातंत्र्य-साहित्य भण्डार, देवरी, सागर म० प्रदेश से प्राप्त।

सुविख्यात इतिहास लेखक लेकी ने History of Rationalism in Europe नाम का एक अपूर्व और महत्तापूर्ण ग्रन्थ लिखा है। यह पुस्तक उसी के पूर्वार्द्ध का हिन्दी अनुवाद है। मूल पुस्तक का विद्वतमण्डली में बड़ा मान है। और हमें आशा है कि हमारे आर्यभाषा जानने वाले देशवासियों में भी इस की क़दर होगी। लेखक ने उपोद्घात में संक्षेप से यूरोप का आरम्भ से इतिहास देकर वहां की राजनैतिक, सामाजिक और शिक्षा सम्बन्धी घटनाओं पर प्रकाश डाला है। इस के पीछे शनैः २ किस प्रकार आज अपने और अपने ही को सभ्य कहने वाली यूरोपीय जातियें, अपनी जंगली अवस्था, नीच प्रकृति और लूटमार की आदतों को छोड़ 'सभ्यता' की ओर बढ़ने लगी इस का संक्षिप्त इतिहास है। हमारे देश की तरह वहां पर भी गन्डा तावीज, जादू, डाकिनी शाकिनी इत्यादि का महा प्राबल्य रहा है। जब यहां पर वाममार्ग का जोर था तब यूरोप भी इसके चंगुल में फंसा हुआ था। पुस्तक के तीसरे अध्याय में ग्रन्थकार ने यह दर्शाया है कि ज्यूं २ वहां पर कला विज्ञान और शिक्षा का प्रचार बढ़ता गया इन जंगलियों को भी होश आने लगी और आज यह प्रदेश अपने को सभ्यता का एक भारी केन्द्र मानता है। पुस्तक बड़ी उपयोगी है और हम अपने पाठकों से इस को पढ़ने का अनुरोध करते हैं।

२. यूरोप के शिक्षण सुधारक-लेखक श्री चन्द्रशेखर वाजपेयी एम०एस०सी०, एल० टी०, प्रकाशक ज्ञानमण्डल कार्यालय काशी, सजिल्द १८८ पृष्ठ की पुस्तक, मूल्य १॥=)

हमें यह जान कर बड़ी प्रसन्नता है कि बनारस का ज्ञानमण्डल, आर्यभाषा साहित्य में, उत्तम २ पुस्तकें प्रकाशित कर, बड़ी वृद्धि कर रहा है। इन पुस्तकों की बड़ी विशेषता यह है कि यह हमारी भाषा में स्थायी और विचार वर्धक साहित्य को उत्पन्न कर रही है। भारत की इस जागृति के समय में हमें यह जानना परमावश्यक है कि किस प्रकार अन्य देश और जातियों ने उन्नति की है। पैतृक प्रभावों के अतिरिक्त मनुष्य के जीवन पर शिक्षा का सब से अधिक प्रभाव पड़ता है। बाल काल में जो संस्कार पड़ जाते हैं वह बड़े होकर स्वभाव बन जाते हैं। इसी लिये प्रत्येक देश और जाति में ऐसे २ सुधारक हुये हैं जिन्होंने जाति के बालकों का शिक्षा द्वारा सुधार परमावश्यक समझा है। मनुष्य को मनुष्यत्व पर पहुंचाने के लिये शिक्षा एक परम उपयोगी साधन है। भिन्न भिन्न सुधारकों ने भिन्न प्रकार की शिक्षा पद्धति पर बल दिया है। इस पुस्तक के पाठ से भली प्रकार पता लगता है कि यूरोप में १७ वीं शताब्दी से आज तक किस प्रकार शिक्षण सुधारकों ने शिक्षणपद्धति को उन्नत और सृष्टि नियमानुकूल ढालने का यत्न किया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कमीनियस ने ही पहिले पहल शिक्षा को बालकों को मनोविज्ञान की नींव पर निर्धारित किया। महात्मा लाक जो कि इस के पीछे हुये उन्होंने बालकों के चरित्र गठन पर बड़ा बल दिया। उनकी युक्तियों और धारणाओं को पढ़ कर भारत के प्राचीन गुरुकुलों का स्मरण हो आता है। पुस्तक में फ्रांस निवासी रूसो की उद्दण्ड और विनाशकारिणी शिक्षा-पद्धति का बड़ा विस्तृत वर्णन है। रूसो ने राजकीय निरङ्कुशता, प्रमाणिकता, सामाजिक कुप्रथाओं और कृत्रिम बातों के गढ़ को छिन्न भिन्न तो किया परन्तु उसकी पूर्ति न की। यह पेस्टलोज़ी ही था जिस को नष्ट भ्रष्ट गढ़के स्थान पर एक सुन्दर, विशाल और स्थायी भवन के बनाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। उसके पीछे फ्रीवल की शिक्षा का उल्लेख है। इनके मत में शिक्षा बालक की वास्तविक और सामयिक स्थिति के अनुकूल होना चाहिये, मानसिक शिक्षा के साथ २ शारीरिक शिक्षा का पूरा प्रबंध होना चाहिये। स्त्रियों और ग़रीबों की शिक्षा का उचित और अन्यो जैसा प्रबन्ध होना चाहिये। अन्त में उसका कथन है कि शिक्षा की रीति का आधार वैज्ञानिक और मानासिक नियमों के अनुकूल होना चाहिये। यह फ्रीबल ही था जिस ने कि किन्डरगार्टन पद्धति पर अधिक बल दिया और उसे पहिले पहिल यह नाम दिया। पुस्तक के अन्तिम अध्याय में हर्बर्ट की शिक्षा पद्धति का सार और आलोचना है।

पुस्तक परम उपयोगी है, भाषा रोचक है। शिक्षा सुधार में लगे हुये प्रत्येक भारतीय से हमारा अनुरोध है कि इस पुस्तक का पाठ करें।

३. इटली के विधायक महात्मा गण (सजिल्द)-प्रकाशक ज्ञानमण्डल काशी, पृष्ठ संख्या २४५, मूल्य २।)

यह मनुष्य का स्वभाव है कि उसे पराधीनता खटकती है। स्वाधीनता ही मनुष्य जीवन का सार है। यही एक कारण है कि पराधीन जातियों में सदा ही स्वाधीन होने की चेष्टा बनी रहती है। यह सत्य है कि पराधीनता के चिरस्थायी होने पर न केवल मनुष्य का शरीर वरन उसका मन और मस्तिष्क भी पराधीन हो जाते हैं। यह पराधीनता की पराकाष्ठा है। ऐसी जाति को स्वाधीन करने के लिये बड़े यत्न और परिश्रम की आवश्यक्ता है। इटली देश भी इस पराकाष्ठा को पहुंच चुका था। वहां के निवासियों में यह धारणा प्रबल होगई थी कि अब हम इतने गिरगये हैं कि हमारा उठना असम्भव है। परन्तु आज इटली स्वतन्त्र है। न केवल इतना ही वरन संसार की महाजातियों में इसकी गणना है। इटली का गत दो सौ वर्ष का इतिहास उसके लेखकों, कवियों, राजनीति-विशारदों, और स्वार्थ रहित वीरों के उन कार्य्यों से परिपूर्ण है जिन से कि इटली को यह आज का सौरभ प्राप्त है। इस पुस्तक में इटली देश के निर्माताओं की जीवनी और उनके उज्ज्वल कार्य्यों का बड़ा ही रोचक और मनोहर वर्णन है। अब जब कि भारत माता की नसों में भी उसी रक्त का संचार होरहा है हमारे लिये उस का पाठ बड़ा लाभकारी होगा। भिन्न भिन्न क्षेत्रों में कार्य करते हुये भी किस प्रकार कवि रालफिरी, लेखक मेजीनी, फिलासफर जियोबर्टी, राजनीति विशारद काबूर धर्मवीर गिरीबाल्डी प्रभृति इटली के सपूत अपनी मातृभूमि की सेवा और उसका उद्धार करने में कृतकार्य हुये, यह इस पुस्तक के पाठ से भली प्रकार पता चलता है। प्रत्येक व्यक्ति अपने निजू क्षेत्र में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कार्य करता हुआ देश की सेवा कर सक्ता है। मातृभूमी के हित के लिये कोई भी सेवा तुच्छ नहीं।

इस समय इस पुस्तक का प्रकाशन कर ज्ञानमण्डल काशी ने हिन्दी साहित्य और भारत वासियों का बड़ा उपकार किया है। ऐसे उत्तम ग्रन्थ प्रकाशन के लिये हम ज्ञान मण्डल को वधाई देते हैं।

४ प्रभा—इस नाम की सचित्र राजनैतिक मासिक पत्रिका गत जनवरी मास से कानपुर से प्रकाशित हो रही है। यह निर्विवाद है कि पत्रिका उच्चकोटि की है और देश और जाति की बड़ी सेवा कर रही है। इसका ९वां अंक तिलकांक था जिसमें स्वर्गीय बालगंगाधर तिलक के जीवन पर सुविज्ञ लेखकों द्वारा लिखे हुए कितने ही लेख और कवितायें थीं। लोकमान्य की मृत्यु सम्बन्धी कितने ही चित्र थे। अक्तूबर का अंक भी निकल आया है और हमारे सामने है इसमें ८ लेख और ७ कवितायें हैं। "भारतवर्ष में क्रान्ति की लहर" और "हमारे कालिजों में इतिहास की पुस्तकें" लेख बहुत उत्तम हैं। इसके अतिरिक्त और भी जानने योग्य कितनी ही बातों का संग्रह है। ११ चित्र हैं। हम प्रभा के संचालकों को इस सफलता पर बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि यह आगे को और भी उन्नति करेगी।

५ चैतन्य चन्द्रिका—यह पत्रिका श्रीयुत कृष्ण चैतन्य गोस्वामी के सम्पादकत्व में भाद्रपद मास से पटना से निकलनी आरम्भ हुई है, पृष्ठ संख्या ३४ और मूल्य ३) वार्षिक है। लेख विशेषकर धार्मिक और भक्तिपूर्ण हैं। आशा है पत्रिका हिन्दी संसार में उपयोगी सिद्ध होगी।

सौरभ—यह पत्रिका सितम्बर १९२० से झालरापाटन राजपूताना से निकलनी आरम्भ हुई है। ज्योति के साइज़ के ४८ पृष्ठ हैं और मूल्य ४) रु० वार्षिक। झालावार नरेश का विद्या प्रेम प्रसिद्ध है। इन्हीं के आश्रय यह पत्रिका निकलनी आरम्भ हुई है। प्रथमांक में विज्ञान, अर्थशास्त्र, साहित्य, समाज इत्यादि विषयों पर छोटे बड़े १६ लेख हैं। पत्रिका होनहार प्रतीत होती है। हम आशा करते हैं कि यह आर्यभाषा और देश के लिये हितकर सिद्ध होगी।

सूचना।

दैनिक प्रताप—गत ७ वर्ष से कानपुर का साप्ताहिक प्रताप जिस निर्भयता और योग्यता से देश और जाति की सेवा कर रहा है वह हिन्दी संसार को भली प्रकार पता है। हमारे पाठक यह जानकर प्रसन्न होंगे कि अब प्रताप का दैनिक संस्करण विजयदशमी ता० २२ अक्तूबर १९२० से निकलेगा। पत्र को सर्वोपयोगी बनाने का पूरा यत्न किया जा रहा है। डिब्यून जैसे ८ पृष्ठ होंगे और मूल्य १८) रु० वार्षिक। हम सहयोगी के लिये शुभाकांक्षी हैं।

आर्यमित्र का ऋषि अंक—आर्यमित्र आगरा का श्री स्वामी दयानन्दजी के परलोक गमन की तिथि पर ऋषि अंक निकलने की हमें सूचना मिली है। इसमें मोशियो रिचर्ड, मि० आरण्डेल, मि० खापर्डे, प्रिंसिपल वस्वानी, महाराज कोल्हापुर इत्यादि महानुभावों के ऋषि चरित्र सम्बन्धी लेख रहेंगे। और प्रति अंक का मूल्य ।-) होगा। हम आशा करते हैं कि ऋषि प्रेमी इसे अवश्य खरीदेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार प्रवाह

कांग्रेस और नैशनलिस्ट दल।

हमें यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि यद्यपि नैशनलिस्ट नेताओं ने कांग्रेस में महात्मा गांधी के असहयोग सम्बन्धी प्रस्ताव का घोर विरोध किया था तथापि उनमें से बहुतों ने उस प्रस्ताव के आगे शीश झुका दिया है। बंगाल के नेताओं ने जिनमें मिस्टर सी० आर० दास और मिस्टर चक्रवर्ती भी सम्मिलित हैं और बम्बई प्रान्त के नेताओं ने जिनमें मिस्टर केलकर और मिस्टर वैपटिस्टा शामिल हैं घोषणा दे दी है कि कांग्रेस की आज्ञानुसार उन्होंने कौन्सिलों का बहिष्कार करने का विचार कर लिया है। कांग्रेस के प्रति अपने विचारों को त्याग कर भी भक्ति प्रगट करने में इन नेताओं ने बड़ी बुद्धिमत्ता और बड़े आत्मत्याग से काम लिया है। जिस जाति के अन्दर संस्था और स्वनिर्मित संस्था के लिये इतना मान्य का भाव है वह जाति वास्तव में पूर्ण स्वराज्य के योग्य है। विजित जातियां तभी तक आधीन रखी जा सक्ती हैं जब तक कि उनमें आपापन्थी का राज्य हो और जातीय जीवन में यन्त्रणा न हो। अंग्रेजों और हिन्दुस्तानियोंमें यही भेद अब तक था। अंग्रेज लोग अपनी निजी सम्मति को प्रकाशित तो कर देते हैं किन्तु करते वही हैं जो उनका राष्ट्र निर्णय करे। उनके देश में राज्य और राष्ट्र में कोई भेद नहीं। उनकी राज्यसभा ही राष्ट्रीय सभा है। हिन्दुस्तानियों में यह दोष रहा है कि प्रत्येक को अपनी बांसुरी बजानेमें ही आनन्द आता था। भारतवासी कई सहस्र वर्षों से आपस में लड़कर ही विदेशियों को पंच बनने का अवसर देते रहे हैं। पानीपत के पहिले युद्ध में बाबर हारा हुआ था। उसने परमात्मा के सन्मुख गिड़गिड़ाने के प्रायश्चित रूप में मद्य की बोतलों को तोड़ना आरम्भ कर दिया था, और चारों ओर से उसको निराशा ने घेर लिया था। उसी समय सलोदी का अन्य राजपूतों से मतभेद होगया और वह बाबर से आ मिला। इस प्रकार मुगल राज्य की नींव रक्खी गई। क्लाईव, अमीचन्द, मीरजाफ़र और मीरक़ासिम की सहायता से ही ब्रिटिश राज्य की जड़ स्थापित कर सका। यह तो एक ऐतिहासिक सत्यता है कि भारतवासियों ने ही अंग्रेजों को भारत का राज्य दिलाया है। अंग्रेजों को भारतवर्ष का राज्य मिलना परमात्मा की अटल न्याय व्यवस्था के अनुकूल ही था क्योंकि यह बात सृष्टि क्रम के विरुद्ध है कि कोई जाति जो अपने झगड़ों का आप निपटारा नहीं कर सक्ती, जो अपने राष्ट्र की सम्मिलित आज्ञा का पालन नहीं कर सक्ती वह अपने स्वतन्त्र अस्तित्व को खो न बैठे। अमरीका देश के राष्ट्र में संगठन था इसी कारण वह स्वतन्त्रता को प्राप्त कर सका। १६१९ में बर्जाईना में प्रजा ने अपना संगठन स्थापित किया। १७८७ में उन्होंने कांग्रेस बनाई और जो कुछ बहुसम्मति से निश्चय होता था उसको मानने लगे। जब इंगलिश शासन हट गया तो प्रबन्ध की बागडोर इसी कांग्रेस ने लेली। हम भारतवर्ष के अन्दर राष्ट्रीय संगठन की वेदी पर व्यक्तिगत सम्मति

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की बलि चढ़ाने की इस नई सिरीज़ का स्वागत करते हैं। भावी स्वराज्य की सीढ़ी का यह पहिला सोपान है।

आत्मा का प्रश्न।

कई लोग यह कहते हैं कि जब हमारी सम्मति कांग्रेस के बहुपक्ष की सम्मति के विरुद्ध है तो हम कांग्रेस के निर्णय को स्वीकार करके अपनी आत्मा का खून क्यों करें? हम पूछते हैं कि यह महाशय प्रेसएक्ट, सिडीशस मीटिंग्ज़ एक्ट और डीफेन्स ऑफ इन्डिया एक्ट का पालन क्यों करते हैं जब कि यह लाजनियम उनकी सम्मति के विरुद्ध स्वीकृत हुये थे? क्या जिन कौंसिलों में हमारे देशवासियों को अधिकार नहीं उनका निर्णय मानने—जब कि वह निर्णय हमारी सम्मिलित सम्मति के विरुद्ध भी हो—से तो हमारे आत्मा का खून नहीं होता किन्तु राष्ट्रीय सभा की सम्मति के मानने में जब कि वह सम्मति हमारी सम्मति के विरुद्ध हो हमें आत्मा पर अत्याचार प्रतीत होता है? जब हम स्वराज्य प्राप्त करलेंगे फिर भी तो अपनी चुनी हुई पार्लियामेन्ट के निर्णयों को स्वीकार करना ही पड़ेगा चाहे हमारी सम्मति के वह अनुकूल हों चाहे प्रतिकूल! इसका अभ्यास अभी से क्यों न डालें। क्या राष्ट्र की आज्ञा पालन का स्वभाव बिना अभ्यास के हमको पड़ जावेगा? यदि नहीं तो उस अभ्यास का आरम्भ कांग्रेस के प्रस्ताव पर आचरण से ही होना चाहिये।

क्या वास्तव में बहु सम्मति असहयोग के पक्ष में न थी?

कई महाशय यह आशंका करते हैं कि चूंकि वोट लेने के समय बहुत से प्रतिनिधि चले गये थे इसलिये कांग्रेस के प्रस्ताव को बहुपक्ष का प्रस्ताव नहीं कह सके।

यह विचित्र युक्ति है। पहले दिन जब प्रधान महाशय ने कांग्रेस की सम्मति पूछी तो इनको यही पता लगा था कि बहुपक्ष महात्मा गांधी के प्रस्ताव के पक्ष में है और उन्होंने यह घोषणा भी कर दी थी। दूसरे दिन प्रान्तवार सम्मतियों की गिनती केवल बाबू विपिनचन्द्र-पाल के आशंका उठाने पर हुई। ऐसी अवस्था में प्रतीत तो यही होता है कि बहुत से प्रतिनिधि यही समझ कर कलकत्ता से चले गये कि असहयोग के पक्ष में सम्मति इतनी अधिक है कि उनकी अनुपस्थिति से कोई भेद न पड़ेगा और प्रस्ताव स्वीकृत हो ही जावेगा। कुछ भी हो इस बात का कोई प्रमाण हमारे पास नहीं कि जो महाशय चले गये वह असहयोग के विरुद्ध थे। इसके विरुद्ध तो एक उदाहरण है। मध्यप्रदेश के कुछ प्रतिनिधि २४ मिनट देरी से आये और प्रधान ने उनको वोट देने की आज्ञा नहीं दी। यदि आज्ञा मिल जाती तो मध्यप्रदेश भी असहयोग के पक्ष में समझा जाता। अधिक से अधिक यह कहा जासक्ता है कि अनुपस्थित महाशय उदासीन थे क्योंकि यदि असहयोग के विरोधी यह कह सक्ते हैं कि वह पक्ष में थे तो आए क्यों नहीं? तो असहयोग के पक्षी यह उत्तर देसक्ते हैं कि यदि विरुद्ध थे तो खुली कांग्रेस में विरोध करने को क्यों नहीं पधारे? उदासीन लोगों की सम्मति कभी भी निर्णय की प्रमाणकता पर कोई प्रभाव नहीं डालती। यदि एक सभा में १० सभासद उपस्थित हों ७ उदासीन हों और ३ किसी प्रस्ताव के पक्ष में हों तो सभाओं के नियमों के अनुसार समझाजाता है कि निश्चय सर्व सम्मति से हुआ। चाहे हम इस विषय पर किसी दृष्टि से विचार करें यह परिणाम अनिवार्य है कि जो प्रतिनिधि सम्मति स्थिर कर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सकें थे उनमें से ३ से अधिक महात्मा गांधी के पक्ष में थे।

आत्म हत्या अथवा निज सम्मति बलिदान।

कई लोग आत्मासम्बन्धी और विचार संबन्धी विषयों में भेद नहीं कर सके। आत्मा का प्रश्न वहां उत्पन्न होता है जहां पुण्य पाप की चर्चा हो, शेष बातें विचार भेद से सम्बन्ध रखती हों। कौन्सिलों में न जाना, वकालत छोड़ देना इत्यादि पाप नहीं। क्या तिलक महाराज पापी थे? क्या किसी के मत में भी गान्धी जी और लाला लाजपतराय जी पापी हैं जो अभी तक कभी भी किसी कौंसिल के मेम्बर नहीं बने? जब यह प्रश्न पुण्य पाप का है ही नहीं तो फिर समझ में नहीं आता कि आत्मा के प्रश्न को क्यों निष्कारण घसीटा जाता है? यदि विचारभेद और आत्महत्या को पर्य्याय वाचक शब्द माना जावे तो फिर क्यों वह लोग जिन्हों ने लाला लाजपतराय जी के प्रधान होने के विपक्ष में वोट दी थी उनको प्रधान मानने को बाधित थे।

क्या कांग्रेस वास्तविक रूप में देश की प्रतिनिधि नहीं।

कई महाशयों ने यह प्रश्न उठाया है कि कांग्रेस का चुनाव ही इस प्रकार होता है कि उसको हम सत्यार्थ में राष्ट्र की प्रतिनिधि सभा नहीं कह सके। यह आशंका बहुत ही अद्भुत है, विशेषतया जब वह ऐसे महानुभावों के मुखारविन्द से निकलती है जिन्होंने विशेष कांग्रेस से कुछ देर पूर्व यह शोर मचाया था कि नये सुधारों की उपसभायें नियत करने में सरकार ने राष्ट्रीय पक्ष को अवहेलना की दृष्टि से देखा है। क्योंकि जिन कांग्रेस के सभासदों को इन उपसभाओं में रक्खा था उन्होंने अमृतसर में बहुपक्ष के विरुद्ध सम्मति दी थी। क्या कांग्रेस का राष्ट्रीयत्व तीन चार मास में ही लुप्त होगया।

न इधर न उधर।

सबसे विचित्र स्थिति उन नेताओं की है जो न इधर हैं न उधर हैं और बीच समुद्र में गोता लगा रहे हैं। उनके मुखिया विशेष कांग्रेस के प्रधान श्रीयुत् लाला लाजपतराय जी हैं। आपने कलकत्ता की अन्तिम वक्तृता में कहा था कि चूंकि कांग्रेस ने असहयोग का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है इस लिये अब असहयोग की नीति को सफल बनाना चाहिये; किन्तु प्रचार वह यह कर रहे हैं कि कौंसलों का बहिष्कार तो किया जावे किन्तु सरकारी स्कूलों से विद्यार्थी न उठाये जावें। यदि कांग्रेस के प्रस्ताव को सफल बनाने की रीति यही है कि प्रत्येक व्यक्ति जिस भाग को चाहे उसको मान ले और जिस भाग को चाहे उसका तिरस्कार कर दे तो ऐसी अराजकता मचेगी जिसका अन्दाज़ा लगाना ही कठिन है। जब प्रधान महाशय ही कांग्रेस के प्रस्ताव के साथ यह व्यवहार करते हैं तो संस्था की भक्ति का नवजात भाव जड़ कैसे पकड़ेगा?

स्कूलों और कालिजों का बहिष्कार

हमारी अपनी सम्मति तो यह है कि नौकरशाही की शक्ति का वास्तविक केन्द्र सरकारी स्कूल और कालिज ही है। इन स्कूलों और कालिजों में अशुद्ध इतिहास पढ़कर हमारे नवयुवकों में जातीय अभिमान का भाव निर्बल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हो जाता है। अपने देश के भूत में विश्वास के कम होते ही उसका भविष्य उनको निराशा जनक प्रतीत होने लगता है। अपनी देशी भाषा स्वदेशी साहित्य और रीति रिवाज से अनभिज्ञ होने के कारण हमारे नवशिक्षित युवक भारतीय प्रजा के हृदयों को जीत नहीं सकते, और देश की सेवा के लिये बेकार हो जाते हैं। वह कभी सोच ही नहीं सकते कि उनकी जाति कभी सर्वथा अपनी टांगों पर खड़ी हो सकती है। उनके मन में भारतीय जाति का गौरव नहीं बिठलाया जाता प्रत्युत इंगलिश जाति का। इस प्रकार स्वावलम्बन के भावों से शून्य होकर नौकरशाही से भिक्षा मंगवाना ही उनके लिये राजनीति का मूल मन्त्र होजाता है। सरकारी नौकरी में ही वह अपना कल्याण समझते हैं, या विदेशी राजनियम की व्याख्या में ही देश का भला समझते हैं। उनकी शिक्षा उनके मास्तिष्क और हृदय के ऊपर विदेशियों की उन्नति, और स्वदेशियों की अधमता का ऐसा सिक्का बिठला देती है कि वह कभी स्वावलम्बन के पथका अनुसरण करने का विचार ही नहीं कर सकते। इसलिये यदि हम असहयोग के मार्ग पर चलना चाहते हैं तो हमको अपने पुत्रों और पुत्रियों को ऐसे शिक्षणालयों में शिक्षा नहीं दिलवानी चाहिये जो कि युवकों को न केवल सरकार के साथ सहयोग किन्तु नौकरशाही के पद चिन्हों पर चलने के लिये तैय्यार करते हैं।

वकील और असहयोग।

अंगरेज़ों के राज्य से पूर्व मुसलमानी काल में देश की जन संख्या का ⅔ भाग सरकारी न्यायालयों में अपने अभियोग न लेजाकर अपनी पंचायतों द्वारा ही अपने झगड़े निपटा लेते थे किन्तु अब मुक़द्दमा बाज़ी ज़ोरों पर है। इसका एक मुख्य कारण स्थान २ पर न्यायालयों और वकीलों का होना है। यह कोई नहीं कहता कि पंचायतें अन्याय करती थीं। फिर पंचायतों की शक्ति कम क्यों हुई? इस लिये कि धनी लोगों ने समझा कि न्यायालयों में वकील स्याह को सफ़ेद और सफ़ेद को स्याह सिद्ध कर सकते हैं। आशा की तार टूटती ही नहीं और इसी कारण वंश के वंश नष्ट भ्रष्ट होगये। हाईकोर्ट तक और प्रिवी कौंसिल तक पहुंचने में कई वार सम्पत्ति का सर्व नाश हो जाता है और जीतने वाले और हारने वाले की आर्थिक स्थिति में भेद भी कम रह जाता है। किन्तु वकील लोग आशा की तार को टूटने नहीं देते। अपील पर अपील होती जाती है। यदि वकील लोग प्रैक्टिस छोड़ देंगे तो लोगों का न्यायालयों में जाने का उत्साह भङ्ग होजावेगा, पंचायतें पुनः जीवित हो जावेंगी, लाखों रुपयों का नाश बन्द हो जावेगा और देश की सम्पत्ति की रक्षा होगी॥

न्यायालयों की शरण लेने से हमारे अन्दर परावलम्बन का भाव दृढ़ होता है। यदि पारस्परिक विवादों के लिये हम को विदेशी पंचायत की ज़रूरत है तो फिर हम स्वावलम्बन का अभ्यास कैसे करेंगे? स्वराज्य मिलने पर भी तो हमें राष्ट्र के नियत किये हुए न्यायाधीशों के निर्णय मानने पड़ेंगे। क्यों न उस स्वर्गीय काल के लिये हम अभी से अपने को तैय्यार करें।

"सर्वं परवशं दुःखं सर्वमात्मबशं सुखम्"

पकड़ धकड़।

हमारी सरकार ने अब खिलाफ़त का काम करने वालों की पकड़ धकड़ आरम्भ की है। लाहौर में मौलवी ज़फ़रअली, हरदोई में पं० रामनारायण जी, लखनऊ में मौलवी ज़फ़रु-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लमुल्क पर राजविद्रोह के अभियोग चलाये गये हैं। मौलवी ज़फ़रअली ने कोई सफाई पेश नहीं की और शेष मुकद्दमे चल रहे हैं। हमारी समझ में नहीं आता कि केवल स्वतन्त्रता से अपने विचार प्रकाशित करने वालों पर अभियोग चलाने से हमारी सरकार को लाभ क्या होता है? जिन लेखों को पहले ५,००० मनुष्यों ने भी नहीं पढ़ा होगा, वह लेख, जब उनके कारण पकड़ धकड़ होती है तब लाखों मनुष्य पढ़ते हैं। अभियुक्त पुरुष अपने बयान में और उसका वकील अपनी बहस में उन्हीं विचारों को दोहराते हैं। परिणाम यह होता है कि जिस को दबाने का प्रयत्न किया जाता है वह बड़ीतेज़ी के साथ फैलता है और लेखक शहीद बन जाता है। इंगलैण्ड में पूरा २ विचार स्वातंत्र्य है। प्रत्येक मनुष्य को अपने विचार चाहे वह कितने ही क्रान्तियुक्त क्यों न हों फैलाने का अधिकार है। वहां खतरनाक विचारों को प्रकाशित करना दोष नहीं। उन पर आचरण निस्सन्देह दोष है। यह तो निर्विवाद है कि इस पकड़ धकड़ से असहयोग की गति मन्द न होगी प्रत्युत तीक्ष्ण होगी।

आयरलैण्ड और इंगलैण्ड।

आयर्लैण्ड में जो उपद्रव मचा हुआ है और उस की जो भयंकर स्थिति हो रही है वह पाठकों से छिपी नहीं है। लण्डन का सहयोगी डेलीटेलीग्राफ लिखता है कि "हमें यह स्वीकार करना पड़ता है कि आयर्लैण्ड के अधिकांश भाग में खुलमखुल्ला राजविद्रोह फैला हुआ है और एक प्रकार से वहां प्रजासत्तात्मक राज्य की स्थापना भी हो गई है। इस में अधिकतर सिवीलियनों का, विशेषतः डाक कर्मचारियों का हाथ है। यह तमाम पत्रों की निगरानी करता है, और इसने डबलिन में डाक सम्बन्धी तथा टिकटों और मुहरों का स्वयं ही प्रबन्ध कर लिया है। रेलवे का प्रबंध भी इसी की इच्छानुसार होता है। इसने स्वयं अपने न्यायालय स्थापित कर लिये हैं तथा दक्षिणी और पश्चिमी भागों में वहां की गवर्नमेंट से खुलमखुल्ला युद्ध करके शासन सम्बन्धी अन्य कार्यों को भी सम्पादन कर रहा है। मारकाट तथा अन्य प्रकार के उपद्रवों का बाज़ार खूब ही गर्म है। यह कहना बिल्कुल भूल है कि यह सब बातें केवल राष्ट्रीय भावों की प्रेरणा से हो रही हैं। विपरीत इसके कल का Nationalist Ireland दक्षिण की भांति उसी प्रकार बग़ावत की दशामें है जबकि इसने उत्तर से पृथक होने और American Union को चकनाचूर करने का विचार किया था। चंद दिन पूर्व की शोकजनक घटनाओं को देखकर महामन्त्री के उन शब्दों को स्मरण दिलाना जो कि उन्हों ने केवल एक सप्ताह पूर्व कहा था अनुचित न होगा। उन्होंने कहा था कि "दक्षिणी प्रान्तों की स्वतन्त्रता स्वीकार करने की अपेक्षा Lincoln ने लाखों मृत्युओं को सहन किया तथा पंच-वर्षीय-युद्ध का सामना किया।"

अशुद्धि।

पिछले वनिता विनोद के अंक में जो अशुद्धियें हैं उन्हें पाठिकायें ठीक कर लें।

१३ पंक्ति—१९ तेहर के स्थान पर ९ ते. समझो।
१६ पंक्ति—१६ ते., के स्थान पर १० ते., समझो।
२१ पंक्ति—अंतिम १० ते., के स्थान पर ७ ते., समझो
३५ पंक्ति—अंतिम ७ चे., के स्थान पर ३ चे न समझो
३७ पंक्ति—३० खा., के स्थान पर १५ खाने समझो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ॐ

वनिता विनोद

स्त्री उपयोगी स्त्रियों द्वारालिखित लेखों का संग्रह।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ
१—समाचार	३७४
२—कला कौशल्य–(ले० श्रीमती ओ३म्वती देवी)	३७५
३—सुधार का मूल-पारिवारिक जीवन–(ले० श्रीमती कुमारी मनोकामना देवी।	३७९
४—भारतवर्ष की उन्नति का सच्चा उपाय–(ले० कुमारी विद्यावती विशारदा पुत्री बा० प्रतापसिंह नासिक।	३८०

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समाचार ।

भारतीय महिला-विश्वविद्यालय ।

भारतीय महिला-विश्वविद्यालय धीरे २ उन्नति कर रहा है। इस से चार महिलायें ग्रैजुयेट बनी हैं।

हिन्दू विधवाओं की दुर्दशा ।

बंगाल के जेलखाने की दशा-विवरण १९१९ से पता लगता है कि क़ैदी स्त्रियों की संख्या ७०६ थी। इन में से ३७२ हिन्दू १९३ मुसलमान, ५ बौद्ध तथा जैन १४ ईसाई और १२२ अन्य मतावलम्बी थीं। इन में २७५ विवाहिता, ११ कुमारी, २५४ विधवा और १६६ वेश्यायें थीं। यद्यपि बंगाल में हिन्दुओं की अपेक्षा मुसलमानों की संख्या अधिक है और क़ैदियों में अगर ५६ प्रतिशतक मुसल्मान हैं तो ४१ प्रतिशतक हिन्दू हैं, लेकिन स्त्री-क़ैदियों में यह बात नहीं है। वहां हिन्दूओं की संख्या मुसल्मान स्त्रियों से कहीं बढ़कर है। अतः यह स्पष्ट है कि हिन्दू विधवाओं का जीवन कष्ट मय है। बंगाल में जितनी विवाहिता स्त्रियें हैं उन में से लगभग आधी विधवायें हैं लेकिन शोक है कि विवाहित क़ैदी स्त्रियों की और विधवा कैदियों की संख्या बराबर है। अपरंच हिन्दू विधवा-कैदियों की संख्या २६ लाख है और मुसल्मान विधवाओं की संख्या लगभग १८ लाख है, इसलिये विधवा कैदियों में से अधिक संख्या हिन्दू स्त्रियों की है। क्या हिन्दुओं के लिये यह शोचनीय विषय नहीं है?

पाश्चात्य देवियों में नई आशा ।

जनेवा की अन्तर्जातीय स्त्रीमण्डल से लौट आने पर भारतीय महिलाओं ने एक सभा की, जिस के अन्त में श्रीमती सरोजनी नायडू ने अपनी वक्तृता में कहा कि हमारा भारतीय महिलाओं का डेपूटेशन पूर्वीय रीति के अनुसार केवल प्रमाण-पत्रों के साथ ही नहीं आया बल्कि उपहार भी लेकर आया है। और पूर्वीय स्त्रियां जिस उपहार को और बढ़ाना चाहती हैं वह शान्ति का भाव तथा सेवा का आदर्श है। उन्होंने बतलाया कि भारतीय जीवन से इन दोनों तन्तुओं का मेल है और अन्यों से बलात शक्ति छीनने के आदर्श से यह बिल्कुल उल्टा है। उन्होंने कहा कि शक्ति अनिष्टकर है और सेवा बलप्रद है। इन आदर्शों के लिये खड़ी होने से स्त्रियों में स्वयं शक्ति उत्पन्न हो जाती है, जिससे समस्त संसार के आत्मिक जीवन को उन्नत करके एक नया युग ले आसकती हैं, जिस में प्रत्येक व्यक्ति सार्वजनिक कल्याण के लिये यत्न करता है ताकि केवल व्यक्तिगत अथवा जातीय शक्ति बढ़ाने का प्रयत्न ही न हो। सरोजनी देवी की इस वक्तृता से अन्य देशों की डेलीगेट स्त्रियों में बड़ा जोश उत्पन्न हुआ और उन में एक नई आशा की ज्योति जागृत हो गई।

हिन्दू यूनीवर्सिटी में महिला-आश्रम ।

हर्ष का विषय है कि स्त्रियों की शिक्षा की ओर हमारे भारतीयों का ध्यान चारों ओर से आकर्षित हो रहा है। अभी बम्बई में माननीय पण्डित मदनमोहन मालवीय जी को जो २५ लाख की दक्षिणा मिली है उस में से ढाई लाख का दान तीन सेठों—मूलराज खटाऊ त्रिसुनदास खटाऊ और तुलसीदास गोवर्धनदास खटाऊ का स्त्रियों के लिये हिन्दू यूनीवर्सिटी के सम्बन्ध में आश्रम खोलने के लिये है। इस आश्रम का प्रबन्ध अलग से स्त्रियों द्वारा ही होगा।

इलाहाबाद में विधवा आश्रम ।

हमें सूचना मिली है कि पुराने भारतीय भवन के पास धर्मपत्नी बाबू विष्णुदास जी फाइनैन्शल सेक्रेटरी महाराज सिकिम ५२ लूकरगंज प्रयाग ने एक आश्रम खोला है जिस में हिन्दी मिडिल तक पढ़ाई होगी और वाल्मीकी रामायण तथा गीता भी पढ़ाई जावेगी। और अनाथ विधवाओं को आश्रम से ही भोजन वस्त्र मिलेगा। इस आश्रम में पांच वर्ष का भी बालक न जासकेगा। जनता को चाहिये इसे सहायता दे और इससे लाभ उठावे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

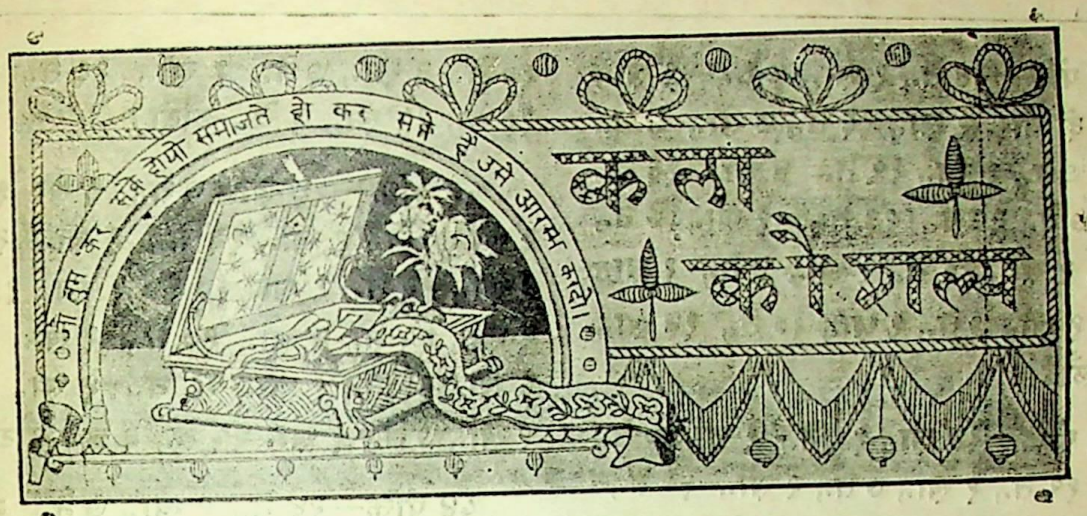

घोड़ा बग्घी जाल।

(गतांक से आगे)

४१ पंक्ति—१४ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ४३ ते., ११ ख़ा., २२ ते., २ ख़ा., १६ ते., २ ख़ा., १९ ते., २ ख़ा., ४ ते., ९ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., ६ चे., लौटो।

४२ पंक्ति—४ चे., छोड़ो, १८ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते., ७ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १९ ते., ५ ख़ा., १० ते., ५ ख़ा., २२ ते., १६ ख़ा., २५ ते., १ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., १० ते., १४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

४३ पंक्ति—१४ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., १६ ते., २ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., १३ ते., २० ख़ा., १९ ते., ८ ख़ा., ४ ते., ८ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., ७ ते., ६ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १९ ते., ६ चे., लौटो।

४४ पंक्ति—४ चे., छोड़ो, ९ ते., १ ख़ा., १० ते.,—१ ख़ा., ७ ते., दोवार, ४ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., ९ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ८ ख़ा., १६ ते., १२ ख़ा., १९ ते., ४ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., २२ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., १० ते., १४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

४५ पंक्ति—१४ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., ३४ ते., ९ ख़ा., १६ ते., ९ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा. ४ ते., ११ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., १० ते.,—१ ख़ा., ७ ते., दो वार, २ ख़ा., ७ ते., ६ चे., लौटो।

४६ पंक्ति—४ चे., छोड़ो, १२ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १९ ते., १ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., ७ ते., ८ ख़ा., ४ ते.,—१ ख़ा., ४ ते., दो वार, ८ ख़ा., १६ ते., ६ ख़ा., ४३ ते., ३ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., १३ ते.,—१ ख़ा., १० ते., दो वार १४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

४७ पंक्ति—१४ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १० ते.; १ ख़ा., १६ ते., २ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., २२ ते., १ ख़ा., १३ ते., ७ ख़ा., १६ ते., ७ ख़ा., १० ते.,-१ ख़ा., ४ ते., दो वार, ७ ख़ा., १३ ते.,—२ ख़ा., १३ ते., दो वार, १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

४८ पंक्ति—२४ ते., १ ख़ा., ७ ते.,—१ ख़ा., १३ ते., दो वार, २ ख़ा., १६ ते., ७ ख़ा., ४ ते.. १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १९ ते., ४ ख़ा., १६ ते., ३ ख़ा., ७ ते., २ ख़ा., १३ ते.,—१ ख़ा., ७ ते., दो वार, २ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १९ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १० ते., १४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

४९ पंक्ति—१४ ख़ा., १० ते.; १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १९ ते., १ ख़ा., ७ ते., २ ख़ा., १० ते.,–१ ख़ा., ७ ते., दो वार, १ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १६ ते., ३ ख़ा., २५ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते., ७ ख़ा., १९ ते., २ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

५० पंक्ति—९ ते., १ ख़ा., १३ ते.,—१ ख़ा., ७ ते., दो वार, १ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., १६ ते., ९ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., २८ ते., २ ख़ा., १३ ते.,—१ ख़ा., १३ ते., दो वार १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., २२ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १० ते., १४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

५१ पंक्ति—१५ ख़ा., ७ ते., २ ख़ा., १९ ते., ३ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., १३ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १३ ते., ३ ख़ा., २५ ते., २ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ४ ते., ७ ख़ा., २५ ते., १ ख़ा., १३ ते.,—१ ख़ा., ७ ते., दो वार, १ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., ७ ते., ३ चे., लौटो।

५२ पंक्ति–९ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ३१ ते., ६ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., २२ ते., ३ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., १० ते., १५ ख़ा., ५ चे., लौटो।

५३ पंक्ति—१६ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा १३ ते., २ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., १३ ते., ४ ख़ा., १० ते., १ ख़ा. १० ते., १ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., २५ ते., ४ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ४ ते., ६ ख़ा., ३१ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ ते.. १ ख़ा. २५ ते., ३ चे., लौटो।

५४ पंक्ति—२४ ते., १ खा., ७ ते., २ खा., १३ ते., १ खा., ३४ ते., ६ खा., ४ ते., २ खा., १० ते., ४ खा., ७ ते., १ खा., १६ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., २ खा., ७ त., १ खा., १३ ते., १ खा., १६ ते., १ खा., ७ ते., २ खा., १३ ते., १ खा., ७ ते., १६ खा., ५ चे., लौटो।

५५ पंक्ति—१७ खा., ७ ते., १ खा., २२ ते., १ खा., १९ ते.,—१ खा., १० ते., दो वार, २ खा., ७ ते., ३ खा., १३ ते., १ खा., १६ ते., १ खा., ७ ते., ४ खा., १० ते.,—१ खा., ४ ते., दो वार, ६ खा., ३४ ते., १ खा., १३ ते., २ खा., ७ ते., १ ख़ा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

५६ पंक्ति—१२ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., २ खा., १० ते., १ खा., ३७ ते., ६ खा., ४ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., १३ ते., ६ खा., १६ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., १० ते., ३ खा., १० ते., २ खा., ४ ते., १ खा., २५ ते., १ खा., १९ ते., १ खा., ७ ते., १७ खा., ५ चे., लौटो।

५७ पंक्ति—१८ खा., ७ ते., १ खा., १३ ते., २ खा., २२ ते., ३ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ४ ते., २ खा., ७ ते., १ खा., १० ते., १२ खा., ४ ते.,—१ खा., ७ते., दो वार, १ खा., ४ ते., ६ खा., ३७ ते., १ खा., १० ते., २ खा.,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

७ ते., १ खा., ७ ते., ३ खा., ७ ते., ३ चे., लौटो।

५८ पंक्ति—९ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १० ते., २ खा., ३४ ते., ७ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ४ ते., १ खा., ७ ते., ११ खा., १३ ते., १ खा., ४ ते., २ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ४ ते., १ खा., ३४ ते., ४ खा., ७ ते., १९ खा., ५ चे., लौटो।

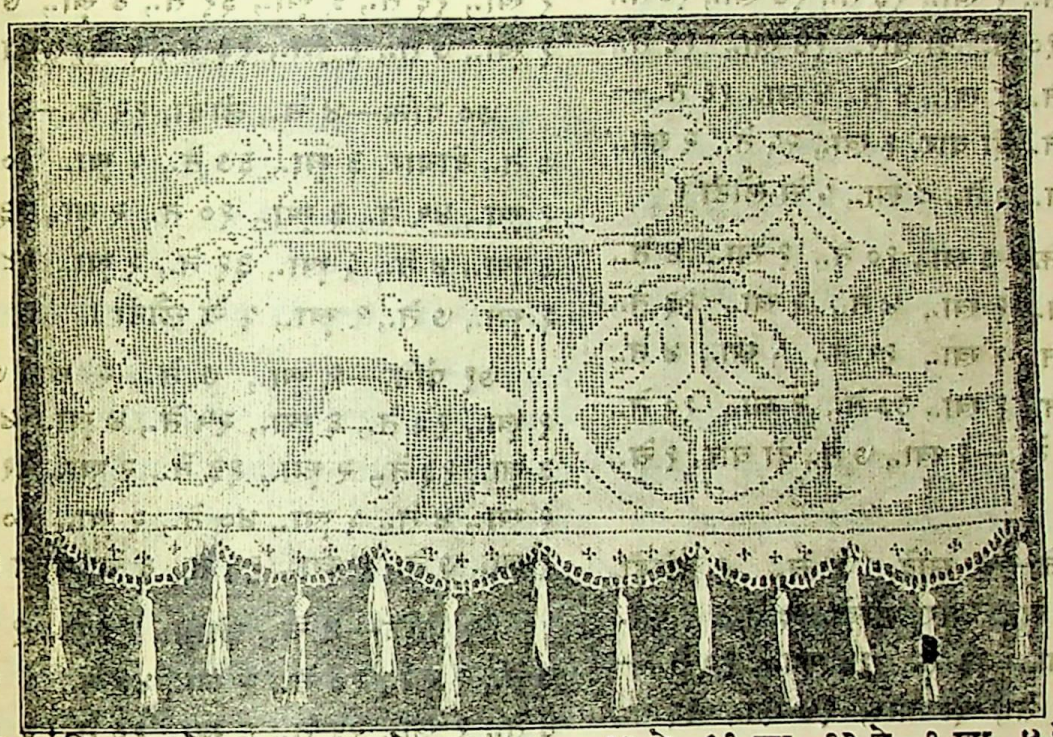

६० पंक्ति—१८ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १० ते., १ खा., १९ ते., १ खा., १० ते., २ खा., १० ते., १ खा., १३ ते., १ खा., १६ ते., ६ खा., ७ ते., १ खा., १० ते.,—१ खा., ४ ते., दो वार, १ खा., ७ ते., ३ खा., ४ ते., २ खा., २९ ते., ४ खा., ७ ते., २ खा., ७ ते., १८ खा., ५ चे., लौटो।

६१ पंक्ति—१७ खा., १३ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., ३७ ते., १ खा., ४ ते., ३ खा., ७ ते.,—१ खा., ४ ते., दो वार,—१ खा., १० ते., दो वार, २ खा., १९ ते., २ खा., १३ ते., १ खा., १६ ते., ११ खा., १३ ते., १ खा., ४ ते., २ खा., ७ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १६ ते., ३ चे., लौटो।

५९ पंक्ति—१८ खा., ४ ते., २ खा., ४३ ते., २ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ४ ते., २ खा., ४ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ४ ते., ८ खा., १३ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ४ ते., ८ खा., ३४ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते., ३ चे., लौटो।

६२ पंक्ति—१५ ते.,—१ खा., ७ ते., दो वार, २ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., ११ खा., २२ ते., १ खा., १६ ते., १ खा., १९ ते., २ खा., ४ ते., २ खा., १० ते.,—१ खा., ४ ते., तीन वार, ४ खा., ४ ते., २ खा., २१ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते., १ खा., १० ते., ११ खा., ५ चे., लौटो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

६३ पंक्ति—९ खा., ४ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., १९ ते.,—१ ख़ा., ४ ते., दो वार, २ खा., १९ ते., ३ खा., ४ ते., ६ खा., ४ ते., १ खा., ४ ते., १खा., १३ ते., २खा., २२ते., १ खा., १६ते., १ खा., १० ते., ३ खा., १० ते., १६ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १३ ते., १ चे., लौटो।

६४ पंक्ति—४ सादे फन्दे, ३ चे., ९ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १३ ते., १४ खा., १० ते., —१ खा., १० ते., दो वार, १४ खा., १६ ते., १ खा., ४ ते., ८ खा., ४ ते., ४ खा., १६ ते.,— १ खा., ४ ते., दो वार, १ खा., २५ ते., २ खा., ७ ते., १ खा., ७ ते., ८ खा., ५ चे लौटो।

६५ पंक्ति—७ खा., १० ते., १ खा., ४ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., ४ ते., २ खा., १३ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., १९ ते., ५ खा., ४ ते., ७ खा., ७ ते., १ खा., ६७ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ६४ ते.,—१ खा., ७ ते., दो वार, १ चे., लौटो।

६६ पंक्ति—४ सादे, ७ चे., १ छोड़ो, ४ सादे, २ चे., और छोड़ो, ३ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १३ ते., १४ खा., १० ते.,— १ खा., १० ते., दो वार, १४ ख़ा., १६ ते., १० खा., ४ ते., ५ खा., १९ ते., १ खा., ४ ते.,— १ खा., १० ते., दो वार, १ खा., ७ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., ७ खा., ५ चे., लौटो।

६७ पंक्ति—७ ख़ा., १० ते, २ ख़ा., २५ ते., २ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १२ ख़ा., ४ ते., ७ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., ३४ ते., १ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., १० ते., १६ ख़ा., १० ते.,—१ ख़ा., ७ ते. दोवार १० चे. लौटो।

६८ पंक्ति—१ चे. छोड़ो, ४ सादे, ३ चे. और छोड़ो, ९ ते.,—१ ख़ा., ७ ते., दोवार, ७ ख़ा., १९ ते., ५ ख़ा., २२ ते., १ ख़ा., ४० ते., ४ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., १० ते., ४ ख़ा., ४ ते., १४ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २८ ते., १ ख़ा., १० ते., ८ ख़ा., ५ चे, लौटो।

६९ पंक्ति—८ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., २८ ते., २ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., ७ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., ४६ ते., १ ख़ा., १६ ते., ५ ख़ा., ३१ ते., ४ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., ६ चे, लौटो।

७० पंक्ति—४ चे., छोडो, १२ ते.,—१ ख़ा., ७ ते., दोवार, ३ ख़ा., ३७ ते., ५ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ४९ ते., ३ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., १३ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ५ ख़ा., ३१ ते., २ ख़ा., २८ ते., १ ख़ा., ७ ते., ९ ख़ा., ५ चे लौटो।

७१ पंक्ति—९ ख़ा., ७ ते., २ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., ६ ख़ा., २५ ते., ४ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., ५१ ते., १ ख़ा., ४ ते., ५ ख़ा., ४० ते., २ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., ६ चे, लौटो।

७२ पंक्ति—४ चे., छोड़ो., १८ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ४० ते., ५ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., २५ ते., ६ खा., १० ते., २ खा., १३ ते., २ खा., ४ ते., १ खा., ७ ते., ३ खा., ४ ते., ४ खा., १९ ते., ९ खा., १८ ते., १ खा., ७ ते., १० खा., ५ चे., लौटो।

७३ पंक्ति—११ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., १३ खा., १९ ते., ३ खा., ४ ते., २ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., २ खा., १३ ते., ३ खा., ४ ते., १ खा., १९ ते., १ ख़ा., २२ ते., १ खा., ४ ते., ५ खा., ३७ ते., २ खा., १० ते., २ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते., ६ चे. लौटो।

शेष फिर।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुधार का मूल—पारिवारिक जीवन।

(गतांक से आगे)

लेखिका—कुमारी मनोकामना देवी।

(ख) स्वच्छ तथा सादा भोजन—इस विषय पर बहुत कहने की आवश्यकता नहीं है क्योंकि मनुष्य का जी अपने आप ही प्रकृति के अनुसार यह चाहता है कि भोजन हमेशा साफ हो। हां जिनका स्वभाव मलिन हो वह दूसरी बात है, पर अधिकतर यही देखने में आता है कि मनुष्य की नियत ऐसी वस्तुओं के खाने को नहीं करती जो कि सफाई से न बनाई तथा रक्खी गई हों। और जो रुचि से न खाया जावे वह ठीक से पचता भी नहीं।

सादे भोजन की बहुत बड़ी आवश्यकता है। यह तो डाक्टरों द्वारा मानी हुई बात है कि बहुत मसाला इत्यादि खाना स्वास्थ्य के लिये बड़ा हानिकर है। मसाला इत्यादि ऐसी २ उत्तेजक चीज़ें खाने से बहुत से रोग पैदा हो जोत हैं। उदाहरणार्थ मसाला फेफड़ों को बहुत हानि पहुँचाता है, और जिसे भी खांसी इत्यादि हो या तपेदिक, जो कि आज कल हमारे देश में बहुत फैल रही है, उसके लिये मसाला बड़ा ही हानिकर है। जिसके फ़ेफड़ों में कुछ कमज़ोरी हो उसे तो मसाले के पास भी नहीं जाना चाहिये। सादे भोजन की पुष्टि "जल चिकित्सा" की जो किताबें हैं उनसे बहुत स्पष्ट होती है। जिसने इन किताबों को एक बार भी पढ़ लिया है फ़िर वह सादे भोजन ही का भक्त हो जावेगा। फ़िर वह मसालों तथा अचार इत्यादि का खाना कभी भी पसन्द नहीं करेगा। यह सब उत्तेजक वस्तुयें पाचन-शक्ति के लिये भी बहुत हानिकर होती हैं और जब पाचनशक्ति ठीक नहीं तो फिर सारे शरीर का क्रम बिगड़ जाता है। अभी अमरीका के एक मनुष्य का कथन है कि "यदि मनुष्य अधिक फ़ल इत्यादि खाकर रहे तो उसकी आयु १६० वर्ष की हो सकती है और १०० वर्ष की युवावस्था हो सकती है"। इन महाशय का कथन है कि "वस्तु को जितना पकाने की आवश्यकता है वह सूरज के द्वारा स्वयं हो जाती है। आग पर पकाने से तो उस वस्तु में जो कुछ लाभकारी चीज़ है वह और जाती रहती है फ़ायदा कुछ भी नहीं होता"। पर हमारे लिये यह तो असम्भव सा प्रतीत होता है कि फ़ल या कच्ची तरकारी खाकर ही अपना जीवन व्यतीत कर दें। पर हां इतना अवश्य कर सकते हैं कि मसाला इत्यादि और दूसरी उत्तेजक वस्तुयें न खायें।

(ग) साथ खाना पीना—आप चाहे किसी भी डाक्टर या हकीम वैद्य से पूछिये आप को कोई भी यह सलाह नहीं देगा कि एक थाली में खाओ या किसी का जूठा पानी पियो। इसके बहुत से कारण हैं। सब से बड़ा कारण यह है कि ऐसा करने से जो लगनी बीमारियां हैं वह एक से दूसरे को लग जाती हैं। और सिवाय इसके अलग २ खाने पीने से सफ़ाई भी रहती है। आज कल कुछ यह रीति हो गई है कि साथ २ खाने पीने ही में प्रेम माना जाता है पर यह प्रेम नहीं यह तो एक तरह से दुश्मनी है। अब कोई यह कहे कि जो मनुष्य स्वस्थ है उसके साथ खाने में क्या हर्ज है। पर यह बात इस तरह से समझाई जा सकती है कि यह आवश्यक नहीं है कि जब मनुष्य प्रत्यक्ष में बीमार हो तभी उसके शरीर में बीमारी के सूक्ष्म कीड़े हों। मनुष्य के शरीर में जो कुछ भी बीमारी होने को होती है उसके शरीर में उसके जर्म्स (germs) पहिले ही से होते

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हैं। जब तक उसका शरीर इतना बलवान होता है कि उन जर्म्स (germs) का असर न होने दे तब तक तो वह अच्छा दीखता है पर जब उसका शरीर निर्बल हो जाता है तभी वे जर्म्स अपना काम कर बैठते हैं। इसी तरह से समझ लीजिये, आप ने तो यह समझ कर एक मनुष्य के साथ खा लिया या उसका जूठा पानी पी लिया कि वह स्वस्थ है पर उसमें कहीं बीमारी की जगह में जाने से जो स्वयं ही कुछ बीमारियों के जर्म्स हैं और जिन्हें कि अपना शरीर बलवान होने के कारण से वह रोके हुये है, पर वही जर्म्स यदि आप में आ गये और यदि आप का शरीर काफ़ी बलवान नहीं है तो फिर वह जर्म्स फ़ौरन ही आप पर बुरा असर दिखायेंगे। कम से कम बच्चों को तो बिलकुल ही अलग खिलाना चाहिये तथा जूठा पानी नहीं देना चाहिये क्योंकि वे बहुत नाजुक होते हैं और उन्हें दूसरे से बीमारी लेते कुछ भी देर नहीं लगती॥

——

भारतवर्ष की उन्नति का सच्चा उपाय।

लेखिका—कुमारी विद्यावती विशारदा पुत्री बा० प्रतापसिंह नासिक।

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापि हितं मुखम्।
तत् त्वं पूषन्नया वृणु सत्य धर्माय दृष्टये॥

आज भारत के चहुंओर यही ध्वनि गूंजती हुई कानों में पड़रही है, कि देश की उन्नति करो। यूरोप आदि सब देशों से भारत को उन्नावस्था में लाओ तथा भारतमाता को पिशाची पराधीनता के पञ्जे में से छुड़ा कर दैवी स्वतन्त्रता का राज्य जमाओ।

किन्तु अब विचारणीय विषय यह है कि उन्नतावस्था में किस प्रकार पहुंचे? इसको स्वराज्याधिकार किस प्रकार प्राप्त हो? तथा इसका दासत्व किस विधि से दूर किया जाय इत्यादि।

पाठक! अगर भारत की उन्नति करना चाहते हो, अगर भारतमाता को दुःखों से दूर रखना चाहते हो, अगर इस में प्राचीन समय की तरह फिर से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, तथा शूद्र इन चारों वर्णों को यथावत् अपना अपना धर्म पालन करने वाला पैदा करना चाहते हो तो प्रथम यह सोचना चाहिये कि वह ऐसा कौनसा रोग है जिसने कि इस अभागे भारत को अपने पंजे में दबा रक्खा है जिसमें से इस को निकलना अति कठिन हो रहा है।

यह जगत् प्रसिद्ध बात है कि जब तक एक वैद्य को अपने मरीज़ की दशा का ठीक २ हाल मालूम न हो जाय कि आया इसे कोई रोग है या एक वृद्ध की तरह कमज़ोरी ही शेष है, तब तक वह वैद्य उस रोगी को किसी प्रकार भी अच्छी दशा में नहीं ला सक्ता। क्योंकि अगर एक रोगी को कमज़ोरी ही शेष है तब तो उसके वास्ते दूध, घृतादि पुष्टिकर वस्तुएं भी उत्तम होंगी, और अगर उसे विषम ज्वरादि रोग हो तो उसके वास्ते किसी औषधादि का सेवन ही लाभकारी होगा। अस्तु। अब आप ज़रा अपने भारत की दशा पर भी दृष्टिपात करें, तथा प्राचीन समय के साथ इसकी तुलना करते जांय। देखिये जो भारत कभी धर्म्म तथा कर्म में प्रधान गिना जाता था

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जहां सत्य के नाम पर प्राणतक देने में किसी को भी संकोच नहीं होता था, जहां क्षत्रिय अपने देश के लिये राज्यादि सुखोपभोगों का लोभ न करते हुए समर भूमि में जाकर शत्रुका सामना करने में ज़रा भी न हिचकते थे, वहां आज धर्म्म के नाम का अभाव दिखाई देता है। धर्म्म इसका नाम नहीं कि अपने देश भाइयों से किसी उच्चपद की प्राप्ति पर घृणा की जाय, धर्म्म इसका नाम नहीं कि सत्य के नाम पर तिलाञ्जली देदी जाय। आज आप बाज़ार में जाकर किसी दुकान से किसी चीज़ का दाम पूछेंगे, तो आप को मालूम हो जायगा कि एक आने की चीज़ के दोआने से कम दाम नहीं बोले जाते। किन्तु अन्त में होते २ अपने ठीक दाम पर पहुंच ही जाती है। अब आप सोच सक्ते हैं कि इससे क्या हानि होती है। प्रथम तो अपना आत्मा नीचे गिरता है जिसका कि मूल्य आज भारतियों की दृष्टि में कुछ भी नहीं रहा; किन्तु प्राचीन समय में इस आत्मा को ही उच्च बनाने के वास्ते ब्रह्मचर्य्यादि नाना प्रकार के नियमों का पालन कराया जाता था। दूसरे वह अमूल्य समय इस व्यर्थ के झगड़े में गया जो कि एकबार हाथ से निकल कर फिर हाथ में नहीं आता, जैसे

सदा दौर दौरादिखाता नहीं। गयावक्त फिर हाथ आता नहीं।

अगर यही समय किसी उत्तम विचार में या किसी देशहित सम्बन्धी कार्य्य में लगाया जाता तो उसका कितना मूल्य होता? एक नहीं ऐसे हज़ारों उदाहरण देखने में आते हैं। अगर आप रेल में किसी पूरी बेचने वाले से पूछें कि "भाई! क्या पूरी गर्म हैं?" तो बड़ी तेज़ी से उत्तर मिलता है "जी महाराज!" लेकिन जब हाथ में लेकर देखो तो पूरी ठंडी की ठंडी। यही नहीं कि नीच जाति की ही यह दशा है किन्तु अगर किसी औषधालय में जाकर देखें तो वहां भी यही दशाहै। बड़े २ वकीलों और बैरिस्टरों की इससे भी बढ़कर दशा है। वहां तो झूठ के नाम पर मस्तक ही नवाया जाता है। इसी प्रकार कई उदाहरण हैं कहांतक गिनाऊं। इन्हीं दो चार, उदाहरणों से आप को अनुमान कर लेना चाहिये कि जिस देश में सत्य को (जिसको सभी मतावलम्बी धर्म्म का एक अंश मानते हैं) इस प्रकार पछाड़ा हुआ है तो उसकी इस अधोगति में परिवर्तन कैसे आसक्ता है? प्रत्युत प्राचीन समय में सत्य के नाम पर यह जाति प्राण तक न्योछावर करना कुछ भी कठिन न समझती थी। एक छोटे से छोटा बच्चा भी यह जानता था कि मेरे जीवन का उद्देश्य क्या है तथा मेरा धर्म्म क्या है जैसे—

भारत की अधोगति के समय में भी जब मुहम्मद कासिम ने सिन्ध पर चढ़ाई की तो सिन्धपति राजा दाहिर उसमें मारे गये। उनके पीछे उनकी रानी ने अपने राज्य की रक्षा के लिये अपने हाथ में कृपाण लेकर बड़ी वीरता के साथ शत्रु का सामना करते हुए अपने प्राण देदिये। जिस समय रानी तथा राजा असार संसार से चल बसे तो अन्य राजपूत रमणियों ने अपने धर्म्म की रक्षा के लिये चितायें बनानी प्रारम्भ कर दीं। इतने में किसी पास के गुरुकुल में से कुछ ब्रह्मचारियों को आते हुए देखा। तो उन्हों ने इस भय से कि कहीं यवन इन को धर्म्मभ्रष्ट न कर दें कहा कि कहीं भाग जाओ। किन्तु देखिये, वे नन्हें २ धर्म्मवीर, धर्म्मरक्षक बालक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

क्या उत्तर देते हैं। कि ऐ माताओ! क्या किसी धर्म्म-पुस्तक में आप दिखला सकती हैं कि क्षत्रिय पुत्र भाग कर अपनी प्राण रक्षा करें। पुनः माताओं ने उनको अपने साथ चिता में जलने के वास्ते संकेत किया। इस पर भी उन्होंने आत्मघात के दोष बताते हुए युद्ध के अर्पण अपने प्राण कर दिये।

अब आप ज़रा सत्य की महिमा को भी देखिये कि प्राचीन समय में यह कितनी बढ़ी हुई थी। आपका इतिहास आपको बतला रहा है कि जिस समय ऋषि विश्वामित्र जी महाराजा हरिश्चन्द्र जी की परीक्षा लेते हैं तो उन्होंने अपने इन बचनों की—

"चन्द्र टरे सूरज टरै टरै जगद्व्यवहार।
पै दृढ़ हरिश्चन्द्र को टरै न सत्य विचार॥"

पूर्ति के लिये अपनी रानी तथा प्रजा को बेंच कर अपने आप भंगी के घर की सेवा की, किन्तु उन सुनहरे अक्षरों को केवल शोभा के वास्ते ही नहीं रक्खा किन्तु सचमुच में अपने आचरण द्वारा सिद्ध करके दिखला दिया; किन्तु धर्म्म को नहीं छोड़ा। इसी प्रकार पितामह भीष्म की प्रतिज्ञा की तरफ दृष्टि डालिये। क्या आज है कोई ऐसा जो पिता की इच्छा को पूर्ण करने के लिये सांसारिक सारे सुखों को लात मार कर आजन्म ब्रह्मचारी रहकर अपनी प्रतिज्ञा पालन कर सके? सच है धर्म्मपालन इसी का नाम है, कर्तव्यपालन इसी का नाम है देश रक्षा इसी का नाम है। यह सुनहरे जीवन अपने ही वास्ते नहीं हुए किन्तु आज तक हमारी जीवनरक्षा इन्हीं से हो रही है। जहां धर्म के दशलक्षण बताये जाते हैं, इनमें से न तो आज दम है और ना ही इंद्रिय निग्रह है। याद रक्खें जब तक दम तथा इन्द्रिय निग्रह नहीं है तब तक किसी भी कार्य्य में सफलता प्राप्ति की आशा रखना निरर्थक ही है। जब तक हम ईश्वरीय आज्ञा का पालन नहीं करते, यम, नियमों का सेवन नहीं करते तथा—
"अद्भिर्गात्राणि शुध्यन्ति मनः सत्येन शुध्यति।
विद्या तपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिर्ज्ञानेन शुध्यति"॥

इसको पूर्णतया आचरण में नहीं लाते। अपने आप को पृथ्वी का भारभूत न बनाकर जब तक इस जननी की सेवा नहीं करते तब तक आशा के ही पुल बांधने से हाथ में कुछ न लगेगा। तथा अन्य देश हमारे देखते ही देखते उन्नति के शिखर पर चढ़ जांयगे किन्तु भारत पीछे पड़ा हुआ देखता ही रह जायगा।

यह तो मैंने आप की सेवा में धर्म, कर्म के विषय में कुछ थोड़ा सा निवेदन किया है, किन्तु अब आप ज़रा अपनी शारीरिक, मानसिक, तथा आत्मिकोन्नति की तरफ भी दृष्टि डालें। आज कल के विद्यार्थी जिस समय विद्याभ्यास करके निकलते हैं तो उनके मुख पर कांति, तेज, तथा ब्रह्मचर्य्य के प्रभाव की जगह दुबलापन, तथा अत्यन्त निर्बलता के चिन्ह दृष्टि-गोचर होते हैं। यही दशा आत्मिकोन्नति तथा मानसिकोन्नति की है। अब रही सामाजिकोन्नति, उस की आशा रखना तो वृथा ही है।

ठीक आज इस अभागे भारत की वही दशा हो रही है, जैसे किसी के नेत्र अच्छे न होने पर वह बिल्लौर के नेत्र लगाले, और एक दूसरा आदमी उसके चमकते हुए नेत्रों को देखकर उसे अपना पथप्रदर्शक बनाले तो उसके सर्वनाश होने में कोई संदेह नहीं रह जाता। इसी प्रकार आज भारत के अपने ही आलस्य से इसकी शक्तियों के ह्रास होने पर उसके ऊपर आंग्ल भाषारूपी बिल्लौरी नेत्रों के लग जाने पर समझा तो यह गया कि भारत उन्नति के शिखर पर

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बढ़ रहा है किन्तु सच पूछो तो यह अधोगति में डालने वाली पहिली सीढ़ी है। क्योंकि अंग्रेज़ी भाषा भाषी ही हमारे शिक्षक होगये जिनके धर्म्म में तथा हमारे धर्म में बड़ा भारी अन्तर है। तो आप समझ सक्ते हैं कि क्या विदेशीय धर्म हमारी रक्षा कर सक्ता है! कभी नहीं। अस्तु। अब हमें देखना यह चाहिये कि यह त्रुटियें दूर किस प्रकार से हो सक्ती हैं? तो इस क उत्तर एक मात्र शिक्षा पर ही निर्भर है। जैसी शिक्षा होगी वैसी ही उन्नति भी होगी। आजकल की शिक्षा में तथा प्राचीन शिक्षा में क्या अन्तर है? उसके गुण तथा आधुनिक शिक्षा के दोषों पर विचार करते हुए पाश्चात्य शिक्षा हमें उपयोगी क्यों नहीं इस पर संक्षेप से विचार करते हैं। क्या इस भारत में कभी कुछ था ही नहीं? न धर्म, न कर्म, न बल, न धन, न शिक्षा, न विद्या इत्यादि। नहीं, कभी नहीं! यह भारत कभी विद्या तथा गुणों का खान था, शिल्पप्रधान था, शस्यशाली था। देखिये जिस समय हम विद्या की तरफ ध्यान करते हैं तो हमारे सामने चारों वेद, वेदांग, ६दर्शन, तथा उपनिषदादि खड़े हो जाते हैं। जिस समय इसके व्यापार की तरफ दृष्टिपात करते हैं तथा शिल्प आदि गुणों की ओर देखते हैं तो इसका शस्यशाली तथा धन धान्यादि युक्त होना इतिहास से सिद्ध होता है। किन्तु आज की दशा को देखकर रोंगटे खड़े हो जाते हैं। भारत की गुणगरिमा को मैक्समूलर प्रभृति बड़े २ विद्वानों ने भी माना है। इसकी विद्वत्ता को मुक्तकंठ से स्वीकार किया है। इन संपूर्ण बातों से पता चलता है कि यह अभागा भारत इस अधोगति तक कभी नहीं पहुंचा था। इसी प्रकार अब यदि आप धर्म की तरफ ध्यान दें तो उन धर्म-धुरन्धर युधिष्ठिर प्रभृति की कथायें सामने आडंठती हैं। आज्ञापालन पर विचार करें तो मर्यादापुरुषोत्तम श्री रामचन्द्रजी का जीवन सामने आखड़ा होता है। बल, भ्रातृ-प्रेम, तथा अपने अधिकार को पहचानना, इन बातों पर विचार करें तो भीम, अर्जुन जैसे योद्धा, लक्ष्मण जैसे भ्रातृ-प्रेम करने वाले तथा भरत जैसे वेद की आज्ञा को मानने वाले वीरों के चरित्र सामने उपस्थित हो जाते हैं। अब ज़रा स्त्री जाति की तरफ भी देखिये! प्राचीन समय में वेद की आज्ञानुकूल स्त्रियें भी कभी अपने अधिकारों को पहिचानती हुई पुरुषों की तरह युद्धादि सब विषयों में अपना भाग लेती थीं। जो कि आज चार दीवारी के अन्दर रहने के सिवाय कुछ जानती ही नहीं।

मेरा इस लेख में विशेष कर अपनी स्त्री जाति से ही अनुरोध है कि उन्हें अपनी शिक्षा पर आप आन्दोलन करना चाहिये। अपने अधिकारों को आप पहिचानना चाहिये। याद रक्खें जब तक आप इस संसार रूपी समुद्र को पार करने के वास्ते अपने हाथ पांव स्वयं नहीं मारतीं तब तक आप की सच्ची उन्नति नहीं हो सक्ती। और नाही भारतमाता की गोद फिर से उन वीर, धीर यतियों से भर सक्ती है, क्योंकि यह सब कुछ आप ही पर निर्भर है। आज जिन अधिकारों के वास्ते पाश्चात्य रमणियें झगड़ती हैं, लेकिन मिलते नहीं, वह सब प्राचीन महिलाओं को प्राप्त थे। एक नहीं हज़ारों ऐसे उदाहरण हैं जिन से पता चलता है कि ब्रह्मचर्य्य, तथा ब्रह्मविद्यादि गुणों में भी स्त्रियें पुरुषों से किसी क़दर कम न थीं। इस विषय पर सोचने पर सुलभा तथा गार्गी जैसी देवियों के चरित्र याद आने लगते हैं। सतीत्व पर विचार करने पर माता सीता तथा पद्मिनी जैसी पटरानियों की दुःख भरी कहानियें स्मरण होने लगती हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बस अब आप इन पूर्वोक्त उदाहरणों से समझ गये होंगे कि भारत बड़े २ रोगों से घिरा हुआ है। इसकी अवस्था वृद्ध की सी नहीं। कभी इस भाग्यशाली भारत के अन्दर सब कुछ था किन्तु इस को ऐसे रोगों ने घेरा हुआ है कि इसको उनसे बच कर उठना तक भी कठिन होरहा है। किन्तु अब इसके असली रोग को ढूंढना चाहिये तथा उसकी निवृत्ति किस प्रकार हो सक्ती है। मेरी तुच्छ सम्मति में तो "प्राचीन शिक्षा" का न होना ही एक मात्र बड़ा भारी रोग है। तो क्या यहां शिक्षा का अभाव है? नहीं। अभाव नहीं। किन्तु पूर्वोक्त बिल्लोर की आंख वाली बात है। अस्तु। अब हमें शिक्षा-शैली के भेद पर विचार करना है। संसार में देखा जाता है कि ऐसा कोई भी काम नहीं कि जिसे मनुष्य न कर सके। आज विचारादि शक्तियों के न रहने से शक्ति तथा अधिकारों का अभाव होरहा है क्योंकि शक्ति तथा अधिकार विचारों के ही होते हैं। विचार ही हैं जिन से मनुष्य शूरवीर से कायर तथा कायर से शूरवीर बन जाता है। विचार ही हैं जो मृतक जाति के अन्दर जागृति पैदा करते हैं, विचार ही हैं जिनसे मनुष्य सदाचारी से दुराचारी तथा दुराचारी से सदाचारी बन सक्ता है।

अतः अब हम शिक्षाशैली पर ही विचार करेंगे जिससे कि विचार उत्तम हों तथा पिचाशी पराधीनता दूर होकर दैवी स्वतन्त्रता के दर्शन हों। देश से कायरता दूर होकर निर्भीकता का राज्य हो। दुर्भिक्ष दूर होकरशारीरिक, आत्मिक, तथा सामाजिकोन्नति प्राप्त हो।

यद्यपि संसार में नाना प्रकार की शिक्षायें हैं किन्तु हम यहां पर केवल दो प्रकार की शिक्षाओं पर ही विचार करेंगे।

देखिये एक प्राचीन शिक्षा है दूसरी पाश्चात्य शिक्षा है। इस पर कई सज्जनों का मत है कि शिक्षा अर्थात् "विद्या" एक पदार्थ है किन्तु अगर सच पूछा जाय तो इसमें पूर्व तथा पश्चिम दिशाओं की तरह भेद है। प्राचीन शिक्षा परोक्ष को उत्तम तथा पाश्चात्य शिक्षा प्रत्यक्ष को उत्तम समझती है।

अब आप समझ गये होंगे कि पाश्चात्य शिक्षा सांसारिक चमत्कारिक पदार्थों में फंसना सिखाती है किन्तु प्राचीन शिक्षा अपने धर्म्म का पालन करते हुए, संसार में रहते हुए भी अपनी आवश्यक्ताओं को न बढ़ाते हुए, आत्मा की उन्नति करते हुए, अपने असली उद्देश्य (अर्थात् ईश्वर-प्राप्ति तक पहुंचना) सिखलाती है। अगर आज आप किसी स्कूल में जाकर आज कल के नवशिक्षितों से यह प्रश्न करें कि तुम्हारे जीवन का उद्देश्य क्या है? तो सौ में से अस्सी विद्यार्थी ऐसे होंगे जिनका उत्तर यह होगा कि "नौकरी"। हा शोक! जिस शिक्षा का परिणाम ही भिक्षावृत्ति है वह शारीरिक तथा आत्मिकोन्नति क्या सिखलायेगी? जब अपनी ही उन्नति नहीं तो सामाजिकोन्नति की तो बात ही कौन कहे। यह सब शिक्षा का दोष है। अतः यह तो सिद्ध हो गया कि जिस आदमी को अपने जीवनोद्देश्य का ही पता नहीं वह अपने जीवन में सफलता को क्या प्राप्त करेगा?

अस्तु। अब आप ज़रा अपनी प्राचीन शिक्षा पर भी दृष्टि डालें, जो कि बालक के जन्म दिन से ही लेकर उसे यह सिखलाती है कि तेरे जीवन का उद्देश्य शारीरिक, आत्मिक, तथा सामाजिकोन्नति करते हुए अपनी आवश्यक्ताओं को न बढ़ाते हुए, इस संसार में न फंसते हुए ईश्वरप्राप्ति ही एक मात्र है। अब आपको

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह प्रश्न होगा कि क्या यह भी कभी हो सक्ता है कि जन्म दिन से ही एक बालक को उसके जीवन का उद्देश्य बतलाया जा सके ?

किन्तु इसमें कोई भी आश्चर्य की बात नहीं। जिसने कभी किसी आर्य्यगृह में जन्म संस्कार होते हुए देखा होगा तो उसे मालूम होगा कि प्रथम जब बालक उत्पन्न होता है तो थोड़ा मधु, तथा घी मिलाकर एक स्वर्ण की शलाका के द्वारा उसकी जिह्वा पर "ओ३म्" यह शब्द लिखे जाते हैं तथा कान में "वेदोसीति" अर्थात् उसी समय से उसे शिक्षा मिलती है कि ऐ प्राणी ! जिस प्रकार इस संसार में आकर यह घृत, तथा मधु तेरे शरीर के वास्ते पुष्टिकर चीज़ें हैं तथा सोना तेरी सांसारिक आवश्यक्ताओं की पूर्ति के लिये है इसी प्रकार "ओ३म्" तेरे आत्मा की शान्ति के लिये है। बस अब आप इस पूर्वोक्त उदाहरण से भली भान्ति समझ गये होंगे कि प्राचीन तथा पाश्चात्य शिक्षा में किस प्रकार अन्तर है। यह तो हुई जन्म संस्कार की बात। अब ज़रा आगे चलकर देखिये कि जिस समय बालक की अवस्था सात वर्ष की होती थी तो उसे जन्मदाता माता पिता की गोद में से निकाल कर विद्या "माता" तथा गुरु "पिता" की गोद में डाल दिया जाता था। इसीलिये इनको द्विज भी कहा गया है क्योंकि उनका दूसरा जन्म यहां से प्रारम्भ होता है।

प्राचीन शिक्षणालयों में आजकल की तरह ग़रीब तथा अमीर में भेद-भाव नहीं समझा जाता था। सब को एकसा भोजन, वस्त्र दिये जाते थे। सब से एकसा व्यवहार होता था। किन्तु आजकल धनी का लड़का बिचारे ग़रीब के मैले कुचैले कपड़ों को देखकर उससे घृणा करता है बस वहीं उनमें ईर्षारूपी अग्नि पैदा हो जाती है। बस जब बीज ही ऐसा बोया गया तो उससे अच्छे फल की तो आशा ही क्या की जा सक्ती है ?

किन्तु एक तरफ प्राचीन शिक्षा का बीज ही ऐसा बोया जाता था कि प्रेम भाव उत्पन्न हो क्योंकि उसके शिक्षक जो कि बीज बोने वाले थे तथा जो बीज बोया जाता था वह सर्वथा ईर्षारूपी अग्नि से दूर रखने वाला होता था। अब लीजिये वह उद्देश्य जिनकी पूर्ति के लिये ब्रह्मचारी शिक्षा पाते थे। उसका चिह्न प्रत्येक ब्रह्मचारी के गले में रहता था। यद्यपि आजकल यज्ञोपवीत केवल चाबी बांधने या शपथ खाने के अतिरिक्त किसी काम में नहीं आता, किन्तु प्राचीन समय में इन्हीं सूत की तीन तारों की बड़ी भारी महिमा गाई गई है। इस एक २ तार से मनुष्य हर समय अपने जीवन के उद्देश्य को सामने रख सक्ता था।

अब प्रश्न यह होता है कि जनता का यह शुद्ध भाव क्यों दूर हो गया ? तो इसका सीधा सादा उत्तर यही है कि जो भी प्राणी दूसरे के अधिकारों पर बलात्कार हमला करता है वह सर्वदा पराजय पाता है। जब से पुरुषों ने स्त्रियों को नीच समझ कर उनके अधिकारों को पददलित कर उन्हें अशिक्षिता बनाया है तथा उनके भाग को उन्हें न देकर अपने ही गले में तीन तारों की जगह ६ तारें ठोंस ली हैं, तभी से उनकी सब उन्नतियों के साथ ही साथ यज्ञोपवीत के पवित्र उद्देश्य का भी सर्वनाश हो गया है। आप कहेंगे कि कभी धागे की तीन तारें भी कुछ उपदेश कर सक्ती हैं ? तथा इनका आशय ही क्या हो सक्ता है।

सुनिये ! इसका बड़ा भारी आशय यह है कि ब्रह्मचारी जिस समय यज्ञोपवीत धारण करता है तो वह प्रतिज्ञा करता है कि मैं तीनों आश्रमों को (क्योंकि चौथे आश्रम अर्थात्

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

संन्यासाश्रम में यज्ञोपवीत उतार दिया जाता है) यथावत् पूर्ण रीति से पालन करूंगा। तथा तीनों ऋणों को जो कि प्रत्येक मनुष्य पर हैं अर्थात् देवऋण, पितृऋण, तथा ऋषिऋण इन को उतारूंगा। तीनों कांडों की पालना (अर्थात् कर्म्म कांड, उपासना कांड, तथा यज्ञ कांड) भली प्रकार करूंगा इत्यादि अन्य कई प्रकार की प्रतिज्ञायें की जाती थीं। सब से उत्तम बात प्राचीन शिक्षा में यह होती थी कि इतनी शिक्षा होने पर भी उनके शरीर सुदृढ़ तथा आत्मा बलवान् होते थे। किन्तु आजकल की शिक्षा में यह बड़ा भारी दोष आ गया है कि विचारे विद्यार्थियों की शारीरिक दशा पर तनिक भी विचार नहीं किया जाता।

अस्तु, अब आप समझे गये होंगे कि प्राचीन तथा पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली में क्या भेद है। अगर प्राचीन शिक्षा को "रामबाण" कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी।

मृतक देश में जो दोष आगये हैं वह सब इससे दूर होसक्ते हैं। क्योंकि ब्रह्मचारी होने से शारीरिक तथा आत्मिक निबलता दूर हो जायगी। बाल विवाह न होने से विधवाओं का दुखड़ा दूर हो जायगा। परोपकार की शिक्षा मिलने से स्वार्थ का नाम मिट जायगा। सब की विद्या माता व, गुरू पिता होने से फूट का मुंह काला हो जायगा। वेद, वेदांग की पूर्ण शिक्षा मिलने से अविद्या का नाश तथा ज्ञान का प्रकाश हो जायगा। ब्रह्मचारियों के तपस्वी होने पर तथा स्वदेशी शिक्षा के मिलने पर व्यभिचार का नाश तथा उनके विचार स्वदेशी हो जांयगे। स्वदेशी चीजें भी अच्छी लगने लगेंगी। स्वदेशी कला कौशल भी उन्नति को प्राप्त होगा। सारांश यह है कि कोई भी त्रुटि नहीं रह सक्ती। अर्थात् भारत की सच्ची उन्नति इसकी शिक्षा पर ही निर्भर है।

जो यह कहते हैं कि भारत में कुछ भी नहीं था, कला कौशलादि कोई भी सामग्री न थी, वह श्री० १०८ महर्षि स्वामी दयानन्दजी के जीवन चरित्र को पढ़ जांय कि क्या स्वामी कोई नई विद्या लेकर इस संसार में आया था। नहीं वह अपनी रची हुई पुस्तकों में स्थान २ पर यही लिखते हैं कि जो कुछ मैं लिख रहा हूं यह सब प्राचीन ऋषियों कृत ग्रन्थों में से या वेदों में से लिये हुए हैं।

तो अब उस महर्षि की जमाई हुई इस दृढ़ नींव (अर्थात् ब्रह्मचर्य्यरूपी नींव) को कोई उखाड़ तो सक्ता ही नहीं, क्योंकि वह एक अखंड ब्रह्मचर्य्य की शक्ति है। किन्तु आज हम देखते हैं कि उस बाल ब्रह्मचारी के लगाये हुए पौधे की शाखायें तथा पत्ते पहिले की अपेक्षा कुछ मुर्झाकर नीचे गिर रहे हैं। यह क्यों? देखिये यह सब सिद्धान्तों को छोड़ने से, कायरता की शिक्षा से, द्वेष के अधिक बढ़ जाने से और सब से अधिक वैदिक शिक्षारूपी जल के न मिलने से पत्ते सूखे तथा मुर्झाये हुए दिखाई देते हैं; किन्तु जड़ वैसी ही हरी भरी है। अतः मेरी देश भाइयों से, सब से अधिक मेरी अपनी प्रिय बहनों से, यह प्रार्थना है कि स्वामी के लगाये हुए इस पौदे को सूखने न दें तथा उपरोक्त वेद मंत्र को अपने ध्यान में रखते हुए अर्थात् चमत्कारिक वस्तुओं से जो सच्चाई ढकी हुई है जो चाहते हैं कि हमारी उन्नति हो वह इस झूठे पर्दे को अपने ब्रह्मचर्य्य रूपी बल से उखाड़ने की कोशिश करें।

किन्तु यह निश्चय रक्खें कि वह सच्ची हिम्मत उन्हें प्राचीन शिक्षा तथा वैदिकधर्म्म के आश्रय से ही मिल सक्ती है अन्य किसी धर्मावलम्बन करने से नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. L. 1240

वर्ष १] कार्त्तिक १९७७—नवम्बर १९२० [खण्ड १, संख्या

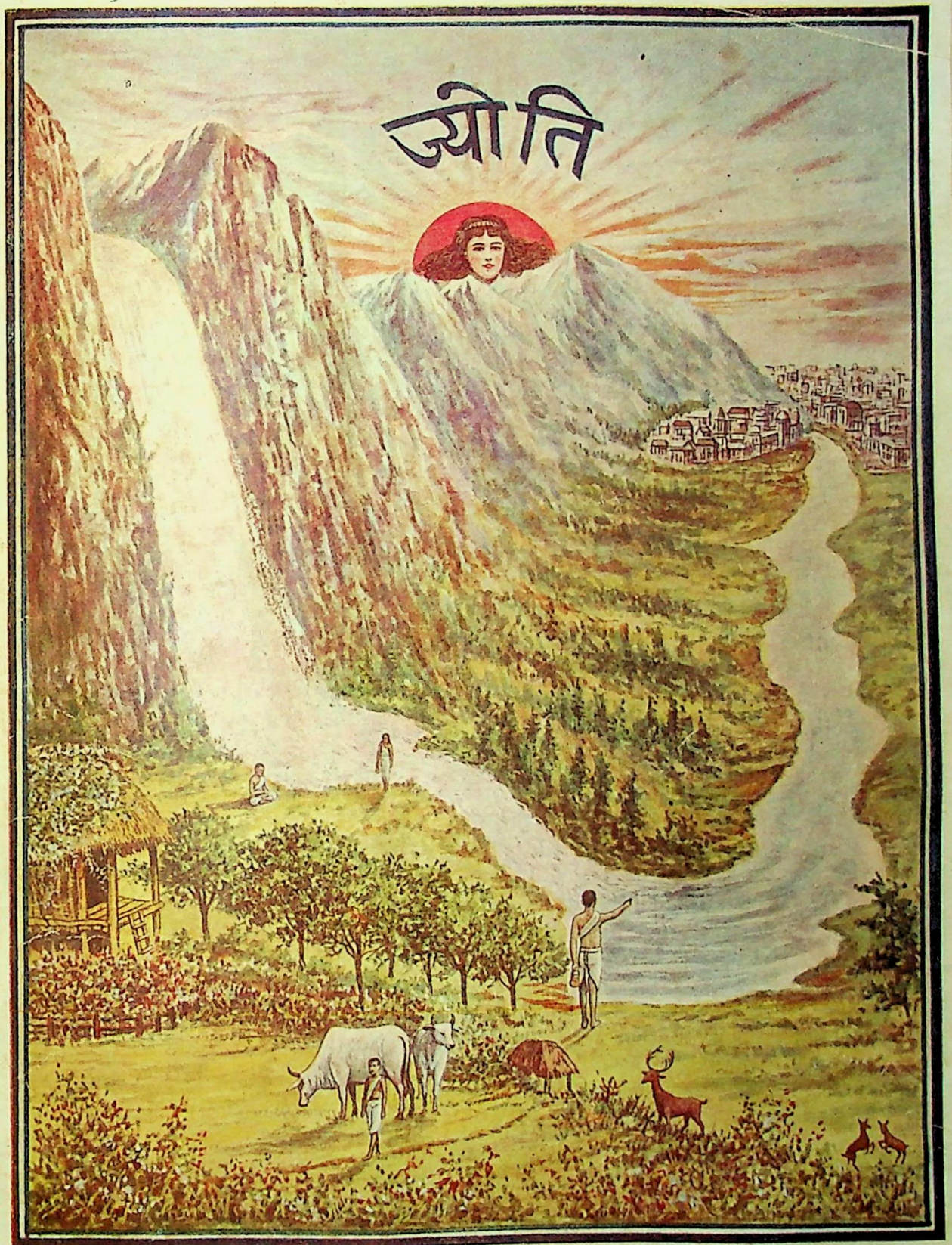

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ५)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय-सूची ।

विषय	पृष्ठ
१ क्षमा-प्रार्थना [कविता]-लेखक हरिशङ्कर भट्ट	३८७
२—धार्मिक जीवन की जागृति ओर विकास-लेखक श्रीयुत् प्रोफेसर सुधाकर एम.ए.	३८८
३—विधवा-विलाप [कविता]-लेखक श्रीयुत् पंडित पारस नाथ त्रिपाठी	३९२
४—वायु वृत्तान्त-लेखक श्रीयुत् प्रोफ़ेसर माणिकचन्द्र एम. एस. सी.	३९३
५—प्रभु लीला-लेखक श्रीयुत् मेधाव्रत जगजीवन	४००
६—रुक्मिणी हरण नाटक-अनुवादक-श्रीयुत् मधाव्रत जगजीवन	४०१
७—जाति पंथ-लेखक श्रीयुत् प्रोफ़ेसर गोपाल दामोदर तामस्कर एम. ए. एल. टी.	४०६
८—कन्हैया [कविता]-लेखक श्रीयुत् मणि राम शुक्ल	४१०
९—देश में नये आत्मा का प्रवेश-लेखक श्रीयुत् कृष्ण बी. ए. सम्पादक "प्रकाश व प्रताप"	४११
१०—पहिचान—लेखक-श्रीयुत् मंजुलिका	४१६
११—देवी जोन-लेखक-श्रीयुत् सुखदेव शर्मा	४२२
१२—हमारी मंजूषा	४२७
१३—कुसुमोद्यान	४२९
१४—विचार प्रवाह	४३३
१५—वनिता विनोद	४४१

ओ३म्

आनन्द दायक ।

वर्तमान इश्तिहार बाज़ी पर अविश्वाश रहते हुये भी कई मित्रों की प्रबल इच्छा पर यह प्रसिद्ध औषधि आपके सन्मुख लाई जाती ह। पाचन शक्ति की कमी, जिगर की कमज़ोरी, तिल्ली का बढ़ना, पित्त, यरकान, अनिमिया (रुधिर की कमी) तथा अन्य जिगर सम्बन्धी रोगों के लिये—जैसे जिगर का बढ़ जाना और पीड़ा करना, आलस्य, प्रमाद, पुराना ज्वर, शरीर की सोजन, जलन्धर, मलेरिया—यह औषधि अत्यन्त गुणकारी है। स्त्री सम्बन्धी रोग-जैसे उल्टी आना, पित्त पड़ना, दिल धड़कना, हाथ पैर की सोजन तथा रुधर की कमी के कारण ऋतु का न आना, थोड़ा आना, तथा दर्द से आना इत्यादि में अत्यन्त लाभकारी है। अन्य भी कितने ही रोगों के लिये इसकी परीक्षा जा चुकी है। इसके गुणों के कई प्रसंशा पत्र आचुके हैं। उनमें से केवल प्रसिद्ध।

लेखक—श्रीयुत कृष्ण बी० ए०।

सम्पादक प्रकाश का ही प्रशंसा पत्र दिया जाता है। वह प्रकाश में लिखते हैं :—

"कि आनन्द दायक बदहज़मी, पाचन शक्ति को बढ़ाने तथा हाजमें के लिये बड़ी गुणकारी सिद्ध हुई है"।

मूल्य एक शीशी का २)। प्रयोग की विधि साथ दी जायगी, आर्डर करते समय रोगी की अवस्था लिख भेजना बड़ा लाभकारी होगा।

टी. आर. मैनेजर कल्याण कारक औषधालय

काटे अद् जिला मुजफ्फरगढ़ (पंजाब)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

॥ ओ३म् ॥

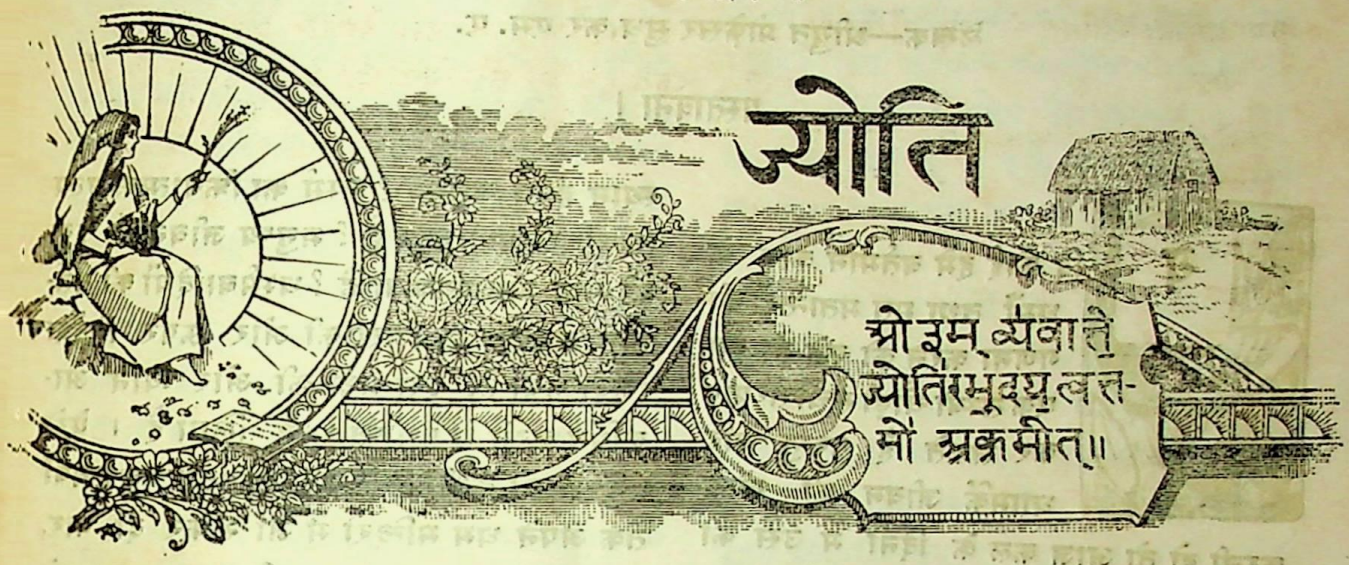

वर्ष १ | कार्तिक १९७७—नवम्बर १९२० | संख्या ७

॥ क्षमा-प्रार्थना ॥

हे मित्र ! बहु अपराध मैंने, साथ में तव हैं किये ।
पर आपने उपहार ही हैं, सर्वदा मुझ को दिये ।
फिर आज क्या है ? मित्रवर ! जो मौन है धारण किया ।
यों त्याग कर मुझ को सखे ! जो दुःख दारुण है दिया ।

माना कि मैं हूँ नीच पापी, क्रूर कामी निर्गुणी ।
पर हो दया के धाम तुम तो, हो क्षमा के भी धनी ।
फिर कौन सा अपराध मुझ से, हा ! हुआ इस बार है ।
उमड़ा हुआ इस बार जिससे, क्रोध-पारावार है ।

कहता नहीं मैं दंड मुझ को, आप कुछ देवें नहीं ।
पर जोड़ कर, विनती यही है, क्रुद्ध हाँ होवें नहीं ।
यदि दंड ही के योग्य हूँ तो, दंड मुझ को दीजिये ।
पर प्राण बल्लभ ! करुण होकर, अब निठुर मत हूजिये॥

हरिशङ्कर भट्ट ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

धार्मिक जीवन की जागृति और विकास।

लेखक—श्रीयुत प्रोफ़ेसर सुधाकर एम. ए.

प्रस्तावना।

यदि कोई हमें वर्तमान काल के धर्मों तथा मत मतान्तरों की गणना करने को कहे तो हम एक लम्बी चौड़ी सूची तय्यार कर सकते हैं परन्तु यदि धार्मिक जीवन की खोज करनी हो तो आज कल के दिनों में उस की उपलब्धि अत्यन्त कठिन प्रतीत होती है। कारण यह है कि धर्मवादियों और मतवादियों ने अपने धर्म और मत को विशेष विश्वासों के स्वीकार करने, विशेष सिद्धान्तों के अङ्गीकार करने, तथा निश्चित प्रकार के वाह्य आडम्बरों में जीवन यात्रा व्यतीत करने के अतिरिक्त कुछ नहीं समझा। प्रत्येक धर्म और मत अपने मन्दिरों और शिवालयों की संख्या बढ़ाने में दत्तचित्त नज़र आता है। उन मन्दिर और शिवालयों गिरजों और मसजिदों में पूजा पाठ करने वाले अनुयायियों की संख्या बढ़ाने में भी उतना ही कटिबद्ध दीखता है परन्तु शोक है कि धर्म का वास्तविक तत्त्व जो धार्मिक जीवन द्वारा प्रकट होना चाहिये उस का अधिकांश अभाव ही हो रहा है॥

वर्तमान समय में जब कि लोगों की प्रवृत्ति प्रत्येक पदार्थ के क्रियात्मक मूल्य-निर्णय की ओर बढ़ रही है तो स्वभावतः चिन्तनशील मनुष्यों के अन्दर यह प्रश्न वेगपूर्वक उठ रहा है कि धर्म्म का, नवीन जीवन स्थिति के अन्दर क्या स्थान होना चाहिये? धर्म्म का क्रियात्मक मूल्य (cash value) क्या है? मनुष्य जीवन में इस की क्या आवश्यकता है? धर्म्मवादियों की वर्तमान अवस्था ने, जिस की ओर ऊपर निर्देश किया गया है, इस प्रश्न की ओर ध्यान आकर्षित करने में पर्याप्त भाग लिया है। ऐसे मनुष्यों की कमी नहीं जो लगातार कई वर्षों तक अपने धर्म मन्दिरों में जा २ कर दो बार, तीन वार, अथवा चार वार नियमानुसार अपने धर्म की पूजा-पद्धति का अवलम्बन करके ईश्वराराधना करते रहे हैं परन्तु उन के लौकिक क्रियात्मक जीवन में धर्म्म की गन्ध तक नहीं आती, मानो धर्म ने उन को छुआ तक नहीं। जिस धर्म्म का प्रभाव हमारे वाह्य लौकिक जीवन में प्रकाशित नहीं होता वह धर्म्म न जाने किस मर्ज़ की दवा है?

मतवादियों के इस जीवन व्यवहार ने जहां धर्म की ओर से लोगों को उपराम कर दिया है वहां अन्य भी कई शक्तियां मनुष्यों को धार्मिक जीवन व्यतीत करने से विमुख कर रही हैं। उन में से पहिली आधुनिक शिक्षा है। वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में धर्म्म का कोई स्थान नहीं। मनुष्य के दिमाग़ को उन्नत करने की पर्याप्त सामग्री आज कल के शिक्षणालयों में एकत्रित की जाती है परन्तु बालकों के हृदयों को उन्नत करने तथा उन में धर्म के बीज को अङ्कुरित करने का कोई उपाय नहीं किया जाता। इसके अतिरिक्त वर्तमान समय के घोर जीवन संग्राम

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में मनुष्यों को बहुधा अपने साधारण जीवन निर्वाह तथा उदर-पूर्ति के लिये दिनभर का इतना समय देना पड़ जाता है कि वे अपने आत्मा की यथार्थ आवश्यकताओं को अनुभव करने तथा पूर्ण करने के लिये थोड़ासा समय भी निकाल नहीं सकते। यह अवस्थाएं तो निस्सन्देह मनुष्यों की धर्म्म-प्रवृत्ति में बाधक हो रही हैं परन्तु शोक तो यह है कि जो लोग धर्म्म के अन्दोलन के लिये समय और शक्ति रखते हैं और धर्म्म सम्बन्धी नाना कार्य्यों में व्यग्र भी हो रहे हैं वे भी धर्म्म के वास्तविक स्वरूप को न समझ कर अपने धार्मिक जीवन का गौरव प्रकट नहीं कर सकते। इस लेख में हम यह दिखाने का प्रयत्न करना चाहते हैं कि मनुष्य के हृदय में धर्म्म के वास्तविक स्वरूप का जागरण कैसे होता है और धार्मिक जीवन के विकास का क्रम क्या है? किन २ अवस्थाओं से एक धर्म्मपरायण जीवन गुज़र कर उस सार्वभौमिक उदारता को प्राप्त करता है जो धार्मिक जीवन की चरमावस्था है। इस में हमारा अभिप्राय यह है कि पाठकगण अपने हृदयनिष्ठ धर्म्म के अङ्कुरों को विकसित होते हुए अवलोकन कर सकें तथा अपने व्यक्तिगत जीवन के विकास को नियमित रूप दे सकें।

क्रान्ति-काल।

धार्मिक जीवन का जागरण क्रान्ति-काल (Crisis) से होता है। क्रान्ति काल हृदय के विशेष परिवर्तन का नाम है। संसार का धार्मिक इतिहास इस प्रकार के हृदय-परिवर्तन के अनेक उदाहरण पेश करता है। संसार के महापुरुषों का जीवन-इतिहास अवलोकन करने से इस क्रान्तिकाल का पता चलता है। यह क्रान्ति काल किसी जीवन की विशेष घटना का फल रूप होता है। एक व्यक्ति के जीवन में यों तो अनेक घटनाओं का गमनागमन होता रहता है जिन की ओर वह दृष्टिपात नहीं करता। परन्तु एक विशेष समय और अवस्था के उपस्थित हो जाने पर न जाने कैसे और क्यों एक साधारण सी घटना उस के हृदय को ठेस लगा देती है और उस के अन्दर एक असाधारण जागृति उत्पन्न कर देती है। वह घटना किसी प्रिय की मृत्यु के रूप में अथवा जीवन में किसी विशेष हानि के अनुभव के रूप में, अथवा किसी तीव्र आशा पर आकस्मिक आघात के रूप में प्रायः प्रकट हुआ करती है। उस समय का हृदय-परिवर्तन वस्तुतः मनुष्य के प्रकृति-परिवर्तन का समय होता है। उस का सारा स्वभाव एक बारगी पलट जाता है। वह अपने आप को एक नये संसार में पाता है। उस के पुराने संस्कार तथा पूर्वोपार्जित सम्बन्ध अब उस को रुचिकर प्रतीत नहीं होते। वह इन से छूटना चाहता है और नए सम्बन्ध गांठना चाहता है। यहां से उस के नए जीवन का प्रारम्भ होता है जो धार्मिक जीवन कहलाता है। अब से उसके हृदय में गम्भीरता और विचार-शीलता अपना आसन जमाती हैं। वह अपने स्वत्व को अनुभव करता है। उसे अपनी स्थिति का परिज्ञान होने लगता है। जहां पहिले वह अपने आप को जीवन के बाह्य धन्धों में खो बैठा था, अब फिर से वह अपने आप को पा लेता है। यही अपने आप को पाना, बाह्याडम्बरों से पृथक कर लेना, मनुष्य के जीवन का क्रान्ति-काल है। यह क्रान्ति-काल महात्मा बुद्ध के जीवन में आया, ईसामसीह के जीवन में आया, भगवान दयानन्द के जीवन में भी यह क्रान्ति-काल शिवरात्रि के रूप में उपस्थित हुआ था और अपने साधारण रूप में हम सा-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

धारण जनों के जीवन में यही क्रान्ति-काल आया करता है। धन्य हैं वे लोग जो इस क्रान्ति-काल के लिये अपने आप को तय्यार रखते हैं और उस के आजाने पर उस का हार्दिक स्वागत करते हैं क्योंकि वे ही सच्चे अर्थों में धर्म्म के जिज्ञासु होते हैं। आङ्गल भाषा में इस क्रान्ति-काल का धार्मिक अनुभव (Religious Experience) के नाम से वर्णन किया गया है। यह एक प्रकार की उच्च दृष्टि की प्राप्ति है जो आगामी जीवन के विकास को सुगम बना देती है।

प्रयोजनात्मकता।

क्रान्ति-काल का जो प्रत्यक्ष प्रभाव मनुष्य के बाह्याचरण में दीखता है वह यह है कि वह आगे से जीवन के प्रत्येक व्यापार में प्रयोजनात्मकता को दर्शाता है। उस का खाना, पीना, पहिरना तथा अन्य सब क्रियाएं प्रयोजन की दृष्टि से होने लगती हैं। वह अब अपने व्यवहार में शून्य-प्रकृति नहीं दीखता। वह हर बात में गम्भीरता का परिचय देने लगता है, अपने मित्रों सहपाठियों तथा सहकारियों के प्रति वह एक परिमित रूप में प्रकट होता है। हर एक बात में वह अपने सामने यह प्रश्न उठाता है कि क्या यह कार्य मेरे योग्य है? क्या इस कार्य के करने में मेरा अथवा अन्यों का हितसाधन होता है? मैं क्यों खाऊं, कितना खाऊं क्यों हँसूं, कैसे हंसू, किन के बीच में रहूं, कैसे वार्तालाप करूं, इत्यादि साधारण प्रश्न पग पग पर उसके हृदय में उठते हैं, और उस के सामान्य व्यवहार को प्रयोजानधीन करते हैं॥

आत्म-निरीक्षण की प्रवृत्ति।

उपरोक्त प्रयोजनात्मकता उसे अन्तर्मुखी बना देती है। जहां पहिले वह वह बाह्य प्रवृति का अनुसरण करते हुए पाद कन्दुक के समान इधर उधर मारा २ फिरता था, अब वह अपने आप को निश्चल स्थिर दशा में पाकर अपने अन्तःकरण का अवलोकन तथा अपने सामर्थ्य की जांच पड़ताल करने लगता है। वह यह अनुभव करता है कि जिस जीवन यात्रा का मैं अनुगामी हूं उसको भली प्रकार निभाने के लिये किन किन बाह्य तथा आन्तरिक शक्तियों की मुझे आवश्यकता है। इस अन्तर्मुखी अवलोकन को आत्म-निरीक्षण कहते हैं।

प्रत्यहं प्रत्यवेक्षेत नरश्चरितमात्मनः।
किंतु मे पशुभिस्तुल्यं किन्तु सत्पुरुषैरपि॥

इस श्लोक का बारम्बार जाप करता है। आत्मनिरीक्षण द्वारा वह अपने आत्मा का साक्षात् करता है। आत्म-ज्ञान ही सर्वोत्कृष्ट जीवन का मूल मन्त्र है, इसी बात को ध्यान में रखकर हमारे धर्म्म शास्त्रों ने इसकी उपयोगिता पर सब से अधिक बल दिया है। "आत्मावारे द्रष्टव्यः" की उच्च ध्वनि सारे प्राचीन धार्म्मिक साहित्य से निकलती है। सुकरात महोदय ने भी इसी पथका अनुसरण करते हुए कहा है "Know thyself" अपने आपको पहिचानो। आत्मज्ञान हमें अपनी त्रुटियों तथा अपने गुणों दोनों का बोध करवाता है। हमारी वास्तविक स्थिति क्या है इस का ज्ञान भी इसी के द्वारा मिलता है।

लक्ष्य परायणता।

अपने अन्तरीय गुण दोषों के विवेचन हो जाने पर मनुष्य अपने साध्य का चिन्तन करता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है। अपने लक्ष्य की ओर टकटकी लगाता है। मैं क्या हूं, यह जान कर, मुझे क्या बनना चाहिये इसका अनुसन्धान उसके हृदय में आरम्भ होता है। इस अवस्था में प्रायः यह देखने में आता है कि कोई मुख्य आदर्श ही मनुष्य को आकर्षित करता है। संसार के महापुरुषों में से किसी का चरित्र उसे मोहित कर लेता है। उस महापुरुष को वह अपना नेता तथा अपने हृदय-राज्य का शासक स्वीकार करके अपने दैनिक जीवन में उसका अनुकरण करने में प्रवृत होता है। यहां से उसके जीवन का क्रियात्मक निर्माण शुरू होता है। हमें एक नवयुवक का अच्छी तरह परिचय है जिन्होंने अपने इस लक्ष्यपरायणता के काल में भारतवर्ष के आधुनिक महापुरुष ऋषि दयानन्द के नेतृत्व को स्वीकार करके उसके चरित्र का अनुकरण करना प्रारम्भ किया। उसका उज्ज्वल परिणाम उसके जीवन पर यह हुआ कि वह बाल विवाह के घोर कन्दरा में गिरने से बच गया। ऋषि दयानन्द का जीवन ब्रह्मचर्य्य का एक देदीप्यमान उदाहरण था। इसी का आकर्षण अनुभव करके वह ब्रह्मचर्य्य व्रत धारण करके अपने मनोवांछित लक्ष्य की ओर बढ़ने लगा। लक्ष्य का अनुकरण मनुष्य की बिखरी हुई शक्तियों को एकत्रित कर देता है। अन्य शक्ति होते हुए भी एकत्रित शक्ति का बड़ा बल होता है। दुःसाध्य पदार्थ भी उसे सुसाध्य नजर आने लग जाते हैं। अतः लक्ष्य परायणता जीवन-साफल्य के लिए अत्यावश्यक साधन है॥

एकान्त सेवन।

लक्ष्य का चिन्तन मनुष्य के अन्दर एकान्त सेवन की प्रवृति उत्पन्न करता है। मनुष्य यह अनुभव करने लग जाता है कि समय समय पर संसार के बाह्य घोर संग्राम से हट कर किसी निर्जन स्थान में अपने आप को साधन सम्पन्न करने के लिए लेजाना आवश्यक है। धार्म्मिक जीवन के अभिलाषी लोग एकान्त सेवन को सर्वदा साधनभूत समझते हैं। वे इसके द्वारा तपोबल को प्राप्त करके पुनः जीवन के युद्धक्षेत्र में आ उपस्थित होते हैं। लेन देन मनुष्य जीवन का एक अति साधारण व्यापार है। लेना देने के लिए होना चाहिये, और देने में लेना छिपा रहता है। एकान्त सेवन में मनुष्य शक्तियों को लेता है और सामाजिक जीवन में अन्य व्यक्तियों को वह उन्हें देता है। देते २ अथाह भण्डार भी समाप्त होजाते हैं अतः वे लोग जो बिना शक्तियों के समय समय पर उपार्जन करने के निरन्तर उन्हें देते ही जाते हैं, वे शीघ्र ही शून्य और शुष्क हो जाते हैं। धार्मिक जीवन का विकास चाहने वाले एकान्त सेवन से नहीं घबराते। अपितु इसकी सहायता से वे अपनी अन्तरीय अगाध शक्तियों को बाह्य जगत के हितार्थ व्यय करने का पूरा सामर्थ्य प्राप्त करते हैं॥

सत्सङ्ग।

धार्मिक जीवन के विकास में सत्सङ्ग भी एक सीढ़ी है। सत्सङ्ग का तात्पर्य सत्पुरुषों का सङ्ग है अर्थात् उन उच्च कोटि के पुरुषों का सहवास, जिन्होंने अपने जीवन को धार्मिक दृष्टि से पूर्णतया विकसित कर लिया है। यह महापुरुष उस कोटि के हैं जिन का गीता में इस प्रकार वर्णन किया गया है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थ! मनोगतान्।
आत्मन्येव आत्मनस्तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते॥
दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीतरागभय क्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते॥

इस प्रकार स्थितप्रज्ञा (निश्चल बुद्धि तथा स्थितधी) वाले मुनि अपने सहवास के गुप्त आकर्षण से साधारण जनों को अपने गुणों से प्रभावित कर लेते हैं तथा उन के हृदय में धर्म यथावलम्बी बनने की उत्कट इच्छा की स्थापना कर देते हैं॥

यह उपरोक्त धार्मिक जीवन के विकास का विवरण हम अपने इर्द गिर्द के धार्मिक व्यक्तियों के जीवन में घटा हुआ देख सकते हैं। जो लोग इस क्रम से गुज़रते हैं वे ही सच्चे अर्थों में लोक सेवा का जटिल व्रत निभा सकते हैं। हम ने जान बूझ कर किसी विशेष धर्म का वर्णन नहीं किया। हमारी यह सम्मति है कि धार्मिक जीवन का विकास न्यूनाधिक सब धर्मों में होता आया है। यह एक विश्वव्यापी घटना है। इतिहास इसका साक्षी है। हां विशेष धर्म उपरोक्त प्रतिपादित जीवन-विकास में सहायक होते हैं। जितना कोई धर्म अधिक उन्नत होगा उतना ही वह अपने अनुयाइयों के जीवन को अधिक विकसित करने में सहायक होगा॥

विधवा-विलाप।

लेखक—श्रीयुत् पण्डित पारसनाथ त्रिपाठी।

(१)

हाय करूं क्या राम! कहां जाऊं क्या जीऊं?
मुख दिखलाऊं हाय! कौन विधि? विष ही पीऊं
पति विहीन धिक्कार तुच्छ मेरे जीवन को।
क्यों दरिद्र रह गया, गंवा निज जीवन धनको!

(२)

बिना मेघ यह वज्रपात हा! हुआ कहां से?
नहीं दया का नाम, वज्र यह गिरा जहां से।
मेरा जीना हुआ भार जिसके बिन जग में,
आगे क्यों नहिं गई, महायात्रा के मग में?

(३)

छाती पर रख वज्र मांग का सिन्दुर धोया—
गहने खोले सभी; प्राण नहिं तब कुछ रोया।
जब अचेत थी पड़ी, चारु वह चूरी-चारो—
किसी निठुर ने हाय फोड़ दी, मेरी, यारो।

(४)

खुली आंख जब, नहीं निकट था कोई मेरे।
सहानुभूति थी नहिं समाज में वाचक! तेरे।
कह अभागिनी, मुझे मुंहजली दूर खड़े थे।
सभी स्वजन ने मोह-पाश मुझ से तोड़े थे।

(५)

यज्ञ याग में, उत्सव में, चाण्डालिन मैं थी।
मंगल में मैं हाय! अमङ्गल-मूर्तिमान थी।
तीज पर्व पर भार स्वजनके घर में मैं थी।
कहूं कहां तक, नर-पिशाचिनी ही बस मैं थी!

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(६)

मेरी छाया छुए, पाँप सबको लगता था।
मेरा मुख लख, स्वजन-बदन कुम्हला जाता था।
हाय किया अपराध कौन? यह फल पाती हूं।
मरने पर मुस्तैद; नहीं मरने पाती हूं।

(७)

कुल में कालिख हाय! लगाऊं कैसे भगवन्,
धर्म्म तजूँ या तजूँ प्राण अब कहिये भगवन्।
दासी तज घर-बार लोक-सेवा को जाती,
दीजै हरि! बल कर्म्म-उदधि में अभी समाती।

वायु वृत्तान्त।

लेखक-श्रीयुत् प्रोफेसर मणिकचन्द्र एम. एस. सी

ते जागते, उठते बैठते प्रत्येक स्थान में और हर समय चहुँ ओर वायु के होते हुए भी इसका सर्व साधारण को ठीक ठीक ज्ञान नहीं है। यद्यपि यह देखी नहीं जा सकती पर जंगली और असभ्य पुरुष भी इस की शक्ति को भूले हुए नहीं हैं। वह जानते हैं कि जब इस के भयानक तूफान आते हैं तो बड़े बड़े ऊंचे वृक्ष घास के तिनकों की तरह उड़ने लगते हैं और जंगल के जंगल विनष्ट हो जाते हैं—साधारण पुरुष तो अपनी अज्ञानता के कारण इन्हें देवी देवताओं का कोप समझते रहे हैं।

वायु यद्यपि दिखाई नहीं देती, पर यह एक ऐसे ही प्राकृतिक पदार्थ है जैसा कि ईंट और पत्थर—इस का ईंट पत्थर लोहे लकड़ी आदि की न्याईं भार होता है—एक गज़ लम्बे चौड़े और गहरे सन्दूक में एक सेर के क़रीब वायु होती है। और एक साधारण लेक्चर हाल में वायु का भार ३०, ४० टन होता है। यह दिखाई क्यों नहीं देती? इस का कारण यही है कि हम इस में डूबे हुए हैं और यह हमारे चहुं ओर है।

हम पानी को देख सकते हैं, परन्तु समुद्र की मछलियें नहीं देख सकतीं क्योंकि उन के चारों ओर पानी ही पानी है। ठीक इसी तरह हम वायु को नहीं देख सकते, क्योंकि हमारे सब ओर वायु ही वायु है—परन्तु पानी में से निकलते हुए हवा के बुलबुलों को हम देख सकते हैं। इस का वास्तविक कारण यह है कि केवल वही वस्तु देखी जा सकती है जो कि सीमा बद्ध हो, जो कि रंग, रोशनी आदि में आस पास की अन्य वस्तुओं से कुछ भेद रखती हो। वास्तव में हम किसी पदार्थ को भी नहीं देख सकते। हम केवल भिन्न भिन्न पदार्थों के आपस में रंग रोशनी आदि के भेद को ही देखते हैं जिस से हमें उन के आकार का ज्ञान होता है।

यह तो स्यात सभी जानते हैं कि हम इस के अथाह समुद्र के नीचे रह रहे हैं पर यह बताना कठिन है कि यह वायु मंडल कितना ऊंचा है। साधारणतया यह अनुमान किया गया है कि इसकी ऊंचाई पृथ्वी से दो सौ मील है, मगर यह समझना भी भूल होगी कि यह केवल पृथ्वी के ऊपर ही ऊपर है। यह धर्ती के अन्दर भी कुछ दूर तक धसी हुई है और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सब नदी नालों तथा चश्मों के पानी में भी घुली हुई है।

जिसे साधारणतया हम वायु कहते हैं वह वास्तव में कई गैसों का समूह है। इन में मुख्यतः दो गैसें आक्सिजन और नाईट्रोजन हैं, जिन की मिलावट से वायु बनता है। इन में एक भाग आक्सिजन और चार भाग नाईट्रोजन के हैं– इन के अतिरिक्त कार्बन डाई ओक्साईड, पानी के बुखारात तथा अन्य गैसें भी थोड़ी थोड़ी पाई जाती हैं। यद्यपि यह थोड़ी आज कल वायु से उसे दबा कर सैंकड़ों प्रकार की कलाएं भी चलाई जाती हैं और कई एक कारखानों में तो यह आप की शक्ति से बहुत सस्ती पड़ती है। कोयले की कानों में से कोयला निकालने में, सुरंगे खोदने में और पत्थर काटने में वायु की शक्ति ने आप की शक्ति को मात कर दिया है और कई अंशों में यह विद्युत शक्ति से भी बढ़ चढ़ कर है। कोयले की कानों में तो विशेषतया यह अत्यन्त उपयोगी है क्योंकि इस से न तो चिनगाड़ियां निकलती हैं और न आग लगने का भय रहता है। इस के अतिरिक्त यह पृथ्वी के नीचे कानों में काम करने के लिये बहुत लाभदायक है, क्योंकि इस से जो कला चलती है उसके चलने के पश्चात उस में से बहुत सी वायु निकलती है जो सारी कान में फैल जाती है और गंदी हवा को बाहर निकाल देती है।

यह अत्यन्त आश्चर्य्यजनक है कि यह दो चार गैसें जिनके समूह को हम वायु कहते हैं पृथ्वी पर अर्थात ठीक उसी स्थान में और उसी मात्रा में उपस्थित हों जहां कि इन की इतनी अधिक आवश्यकता है। यह कहां से और कैसे आई, इस विषय में वैज्ञानिकों के कई मत हैं। इन में से एक मत के अनुसार यह गैसें उस जलते हुए पुराने नैबुला से, जिस से पृथ्वी सूर्य्य आदि बने हैं, बची खुची हैं जो कि जम नहीं सकीं और जो कि पृथ्वी की टेम्प्रेचर से जम नहीं सकतीं और जिन के जमाने के लिये अत्यन्त ठंडक की आवश्यकता है। इससे भी अधिक आश्चर्य्य इस बात का है कि यद्यपि इस पृथ्वी पर पुरुष, जानवर पौदे, ज्वालामुखी, अग्नि इत्यादि सब के सब भिन्न भिन्न गैसें निगल और उगल रहे हैं तिस पर भी इनकी मात्रा बढ़ती घटती नहीं दीखती। वास्तव में इनकी बढ़ती और घटती मनुष्य जाति के लिये एक गम्भीर प्रश्न है, क्योंकि यदि आक्सिजन कम हो जावे तो पुरुष सुस्त और पुरुषार्थहीन हो जावें, यदि यह बढ़ जावे तो उस की शक्तियां भी वैसे ही तीव्र हो जावें। यह तो स्यात सभी जानते हैं कि पुरुषों और जानवरों के श्वासन से, सबज़ी की सड़ांद से, और अग्नि के जलने से वायु में बहुत सी कार्बन डाई ओक्साइड प्रतिक्षण जमा होती रहती है और आक्सिजन कम होती है, परन्तु इसके साथ ही जितनी कार्बन डाई आक्साईड बारह तेरह पुरुष अपने अन्दर से निकालते हैं उसे एक एकड़ ज़मीन पर उगी हुई सबज़ी शुद्ध कर देती है और पुनः वायु मण्डल में शुद्ध आक्सिजन जमा कर देती है। पौदों के अतिरिक्त समुद्र भी वायु को कार्बन डाई ओक्साईड से शुद्ध करता है। समुद्र में हवा से सत्ताईस गुणा अधिक यह गैस घुली हुई है और जब जब यह वायु में बढ़ जाती है तो इस का बहुत सा भाग समुद्र हज़म कर जाता है और इसे नियमित मात्रा से अधिक बढ़ने नहीं देता।

एक कवि ने सत्य कहा है:—

शंकर देख ! विचित्र, सृष्टि–रचना शंकर की।
बोल ! किसे कब थाह मिली संसृति-सागर की॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जड़ चेतन, के खेल, मनोहर दृश्य भरे हैं।
इन में मङ्गल-मूल, निरे उपदेश भरे हैं॥

मात्रा में मिलती है तथापि सारे वायु मंडल में केवल पानी ही इतना है कि यदि इसे इकट्ठा किया जावे तो उस से एक मील गहरा और बारह हज़ार वर्ग मील पानी की झील बन सकती है।

अब प्रश्न यह है कि इस महान वायुमंडल का हमें क्या लाभ है? यह किस प्रयोजन को सिद्ध करता है? और इस की क्या आवश्यकता है? इस संसार में कोई अनावश्यक वस्तु देखने में नहीं आती। इस वायुमंडल में भी जितनी गैसें हैं और जिन से यह बना है वह सब की सब संसार चक्र में बड़े काम की हैं। इन की उपयोगिता पर विचार करने से ज्ञात होता है कि यदि यह न होतीं तो संसार एक बंजर सुनसान बयाबान होता। यह वायु उन सब सुन्दर २ वस्तुओं को जनती और पालती पोसती है जो यहां पाई जाती हैं। इसकी अनुपस्थिति में न तो कोई जीव जन्तु रह सकता और न बनस्पति उत्पन्न हो सकता है। यह ही और विशेषतया आक्सिजन इन सब के जीवन का आधार है—सब जीवित पदार्थ चाहे छोटे से छोटे कीड़े हों जो बिना विशेष यन्त्रों द्वारा देखे नहीं जाते या बड़े २ हाथी, मछलियां हों या मगरमच्छ—कङ्गाल हो या चक्रवर्ती राजा, बिना प्राण वायु ओक्सिजन के जीवित नहीं रह सकते। यह सब इस को अपने अन्दर श्वास द्वारा ले जाते हैं और इसी से सब की जीवन-कला चलती रहती है। पौदे तो वायु से पलते भी हैं क्योंकि इन सब में कार्बन अवश्य होता है। हरे भरे पौदे सूर्य्य की रोशनी में वायुमंडल से कार्बन डाई ओक्साइड (जिसे मनुष्य तथा अन्य सब प्राणी श्वास द्वारा बाहर निकालते हैं) को छिन्न भिन्न कर देते हैं और इस का एक टुकड़ा अर्थात कार्बन अपने अन्दर चूस लेते हैं और इसी से पलते हैं। इसका दूसरा भाग आक्सिजन रह जाता है जो पुनः प्राण वायु का काम देती है। अतः पौदे दिन के समय कार्बन डाइ ओक्साइड अर्थात प्राणियों के लिये गंदी और अनुपयोगी वायु को शुद्ध कर देते हैं, और अपने अन्दर कार्बन जमा करते रहते हैं। इस पृथ्वी पर सब की सब कोयले की कानें उसी कार्बन से बनी हैं जो कि किसी पूर्व काल के जंगलों के वृक्षों ने वायु से निकाल अपने अन्दर हज़म कर ली थी। जानवरों के शरीरों में भी बहुत भाग कार्बन का होता है। इन्हें जो कार्बन दरकार है, वह अनाज, सबज़ी, फल आदि के खाने से इन्हें प्राप्त हो जाता है। यदि हवा में कार्बन डाई ओक्साइड न होती तो पत्ते टहनियां फल फूल कैसे बनते? और हमारे शरीर भी कार्बन कहां से प्राप्त करते? इस से सिद्ध हुआ कि हवा में यह गैस जिसके बुलबुले हम सोडावाटर की बोतल में निकलते देखते हैं अत्यन्त आवश्यक है।

हमने ऊपर दर्शाया है कि मनुष्य के प्राण वायु पर निर्भर हैं। विचार करने पर पता लगता है कि यह केवल जीवन के देने वाली ही नहीं बल्कि इसको सुखमयी बनानेके लिये भी आवश्यक है। यदि हमारे शरीर ऐसे बने होते कि हवा के बिना भी हम जीवित रह सकते तो भी हमारी अवस्था इस के बिना अत्यन्त शोचनीय होती, क्योंकि आक्सिजन के बिना, जो कि हवा में पाई जाती है, हम आग न जला सकते और बिना अग्नि के कोई कला कौशल न होता-रेल गाड़ी, मोटरकार, जहाज़, टेलीफ़ोन, तारबर्की, दूरबीन, खुर्दबीन इत्यादि स्वप्न

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में भी न देखतेः—

हवा में बहुत सा भाग नाईट्रोजन का है जो कि न तो हमारे प्राणों के लिये और न ही आग जलाने और अन्य आवश्यकताओं के पूरा करने के लिये किसी काम की है। यह केवल ओक्सिजन की तेज़ी को कम करती है-यदि वायु में यह न होती और केवल ओक्सिजन ही होती तो भी हमारा ज़िन्दा रहना सम्भव न होता। लोहे की अंगीठी में लकड़ी या कोयला जलाना और उससे भोजन बनाना बहुत कठिन हो जाता, क्योंकि यह इतनी तेज़ी से जलते और इतनी अधिक रोशनी और गर्मी होती कि आंखें चुन्धियां जातीं और सब लकड़ी आदि कुछ क्षणों में ही जल कर भस्म हो जातीं। यह ही नहीं, इनके जलने से इतनी गर्मी निकलती कि लोहे की अंगीठी भी पिघल जाती और लोहा भी लकड़ी और कोयले की भान्ति जल जाता और जलती हुई आग कभी बुझ न सकती। इस से सिद्ध हुआ कि नाइट्रोजन भी कितनी उपयोगी है॥

यदि यह भी मान लिया जावे कि मनुष्य श्वास लिये बिना और आग जलाये बिना जीवित रह सके तो भी जीवन व्यतीत करना अत्यन्त दुस्तर हो जाता, क्योंकि वायु की अनुपस्थिति में हम दिनभर सूर्य्य की किरणों से भुन जावें और रात को सर्दी से जम जावें। पृथ्वी की सब ओर जो दो सौ मील वायु की तह है वह दिन के समय तो एक बड़े छाते का और रात को कम्बल का काम देती है। यह सूर्य्य के ताप को कम करती है और सूर्य्य के अस्त होने पर सर्दी को घटा देती है।

अब यह विचार करना है कि यह सूर्य्य की गर्मी को कैसे कम करती है अर्थात् यह किस प्रकार एक छाते का काम देती है। पृथ्वी के सब भागों में, सब ऋतुओं में और दिन के सब घंटों में एक जैसी गरमी नहीं होती। भिन्न भिन्न भागों में, ग्रीष्म और शरद ऋतु में, प्रातः और दोपहर की गर्मी का भेद केवल वायुमंडल की न्यूनाधिक रुकावट के कारण ही है। जितनी तिरछी सूर्य्य की किरणें होती हैं उतनी ही अधिक मोटी वायु की तह से उन्हें गुज़रना पड़ता है और उतनी ही अधिक रुकावट सूर्य्य की किरणों के लिये होती है। गरम देशों में यह किरणें शर्द देशों की अपेक्षा अधिक सीधी पड़ती हैं। इस प्रकार दोपहर को प्रातःकाल की अपेक्षा और गर्मियों में सर्दियों की अपेक्षा सूर्य्य की किरणें हमारे ऊपर अधिकतर सीधी पड़ती हैं। जितनी अधिक वायु में से सूर्य्य की गर्मी को पृथ्वी पर पहुंचने के लिये गुज़रना पड़ता है उतनी ही तपिश उसकी कम हो जाती है। इसी प्रकार हम ज्यों ज्यों ऊपर को चढ़ते हैं त्यों त्यों हमारे और सूर्य्य के बीच में हवा की तह पतली होती जाती है और सूर्य्य की गर्मी अधिक। यह अन्दाज़ा लगाया गया है कि वायु मंडल में से गुज़रने पर सूर्य्य की गर्मी का दो तिहाई भाग कम हो जाता है। हमारे ऊपर नीले आकाश की छत भी यही जतलाती है कि वायु सूर्य्य की किरणों को रोक लेती है। सात रंगों से मिली हुई किरणें छिन्न भिन्न हो जाती हैं और नीले रंग वाली पृथ्वी पर पहुंचती हैं। परन्तु जब सूर्य्य की रोशनी सीधी नहीं पड़ती इसकी किरणें तिरछी आती हैं तो हवा की अधिक मोटी तह में से गुज़रने पर लाल किरणें भी मुड़ पड़ती हैं, जैसा कि हम सूर्य्य के अस्त होने के समय देखते हैं। यदि यह वायुमंडल न होता तो हमें यह आकाश काला दिखाई देता। हमें तारे दिन को नज़र आते और सूर्य्यास्त की शोभा के मनोहर दृश्य हमें देखने में न आते।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह देखा गया है कि बहुत ऊंचे पर्वतों के शिखर से आकाश कुछ काला सा प्रतीत होता है और कुछ तारे भी दिन को दिखाई देते हैं। इससे यह सिद्ध हुआ कि सूर्य्य की किरणें वायु मंडल से रुक कर आती हैं। यदि इस वायुमंडल को बिलकुल हटाया जावे तो सूर्य्य की गर्मी असह्य हो जावे। अब भी ११,००० फुट की ऊंचाई पर काले बर्तन या बोतल में पानी केवल धूप में रखने से ही उबलने लग जाता है। और यदि इस वायु मंडल का लेशमात्र भी न हो तो सब समुद्रों का जल उबल पड़े और सब का सब भाप बन कर उड़ जावे। यह भी सम्भव है कि इतनी गर्मी पड़े कि चट्टानें भी पिघल पड़ें अर्थात् दिन भर गर्मी बड़ी भयानक हो॥

सूर्य्य में केवल तापन-शक्ति ही नहीं इसकी किरणों में रसायनिक शक्ति और सम्भवतः विद्युत और अन्य शक्तियां भी हैं। ऊदे और नीले रंग की किरणों में मक्खियां अपने अंडे सेहती हैं और यह किरणें कई रोगों के कीड़ों को मार देती हैं। फ़ोटो के प्लेट और काग़ज़ पर भी इन्हीं किरणों के द्वारा चित्र खींचे जाते हैं। यह तो हम ऊपर लिख आये हैं कि वायुमंडल सूर्य्य की किरणों को कम करता है और छान देता है। और सूर्य्य की वह किरणें जो इसमें से गुज़र कर हम तक पहुंचती हैं और पृथ्वी पर गर्मी पहुंचाती हैं, जो पत्तों को हरा भरा और गालों को लाल करती हैं वह छनी हुई और चुनी हुई किरणें हैं। यदि सूर्य्य की सब की सब किरणें ही बिना रोक के हम तक पहुंचतीं तो इसका परिणाम भयानक होता। अधिक गर्मी होती और हम भुन जाते। अधिक रोशनी होती और हम चुन्धिया जाते। ऊदे और नीले रंग की किरणें अधिक होतीं और हमारा छोटे छोटे कीड़ों की न्याईं घात हो जाता या हमारी मानसिक तथा शारीरिक अवस्था में परिवर्तन हो जाता।

इसके अतिरिक्त यह वायु मंडल हमें आकाश की भयानक गोलाबारी से भी बचाता है। हमारी तेज़ से तेज़ गोली एक सेकंड में आधे मील से ज्यादा नहीं जाती, मगर आकाश में अनगणित ही दुमदार तारे, एक छोटे से अणु से लेकर ऊंचे ऊंचे पर्वतों तक चुप चाप एक सेकंड में बीस मील से लेकर सौ मील तक उड़ते फिरते हैं। यदि हमारा वायुमंडल हमें इनसे बचाना छोड़ देवे तो इन दुमदार तारों की पृथ्वी पर दिन रात वर्षा होती रहे, जिससे दृढ़ चट्टानें भी टुकड़े टुकड़े हो जावें। जब हम जानते हैं कि आज कल १२ इंच वाली तोप का गोला जो कि एक सेकंड में एक मील के तीसरे भाग से अधिक तेज़ नहीं जासकता एक फुट मोटी फौलादी चादर में से ऐसी आसानी से गुज़र जाता है जैसा कि वह एक साधारण गत्ते की चादर होती है, तो हम भली भांति अनुमान कर सकते हैं कि इस से कई सौ गुणा अधिक तेजी से जाने वाले दुमदार तारों में कितनी नाशक शक्ति होगी, जिससे यह वायु मण्डल हमें बचा कर रखता है और हमारी रक्षा करता है। यद्यपि यह कहना बड़ा आश्चर्य्य जनक प्रतीत होगा पर वास्तव में इनकी तेज़ चाल ही हमें इन से बचाये हुए है, क्योंकि इतनी तेज़ी से चलने से इन्हें हवा में बड़ी भारी रुकावट का सामना करना पड़ता है जिससे रगड़ पैदा होती है और रगड़ से गरम होकर यह लाल हो जाते हैं और अन्त में जल जाते हैं या पृथ्वी पर पहुंचने से पहिले ही इनके छोटे छोटे टुकड़े हो जाते हैं। आकाश में जब हमें चमकता हुआ दुमदार तारा थोड़ी देर के लिये दीखता और फिर लुप्त हो जाता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है, उसी समय इन में से एक का नाश हो जाता है और हम उसके घात से बचजाते हैं। इसी प्रकार अल्प दुमदार तारों के उपद्रव से वायुमण्डल हमारी रक्षा करता है।

अब यह तो ज्ञात हो गया कि यह वायु मण्डल छाते की न्याईं सूर्य्य की किरणों से किस प्रकार हमें बचाता है, पर यह कम्बल और लिहाफ का काम कैसे दे सकता है? विचार करने से पता लगता है कि यह सूर्य्य की किरणों को पृथ्वी पर पहुंचने के लिये ही नहीं रोकता प्रत्युत यह पृथ्वी से निकलती हुई गर्मी को भी रोकता है। दिन भर पृथ्वी सूर्य्य की गर्मी से तप जाती है और रात्रि के समय पृथ्वी से गर्मी निकलती है और ठंडी हो जाती है। पर इस गर्मी को वायु मण्डल और विशेष तया इसमें जल के बुखारात और कार्बन डाई-ओक्साईड रोक लेते हैं और इसे फिर वापस पृथ्वी की ओर भेज देते हैं। इसी लिये वह रात्रियें जब कि बादल होते हैं अन्य रात्रियों से गर्म होती हैं। पानी के बुखारात पृथ्वी से गर्मी को निकलने से ही नहीं रोकते, बल्कि इन में बहुत सी गर्मी जमा भी रहती है जिसे यह ठंडी हवा के साथ मिलने से जम कर निकाल देते हैं। इनके अतिरिक्त यह गर्मी को नियम बद्ध रखने में भी विचित्र साधन हैं। जब सूर्य्य की गर्मी अधिक होती है तो पानी अधिक मात्रा में वाष्प बन कर उड़ जाता है। कुछ ऊंचाई पर यह ठंडक से मेघों का रूप धारण कर लेता है और फिर यही बादल गर्मी की अधिक किरणों को गुजरने नहीं देते अतः गर्मी कम हो जाती है, इसी प्रकार जब सर्दी बढ़ जाती है तो यही बादल बरस पड़ते हैं और पुनः गर्मी की किरणों को पृथ्वी पर पहुंचने के लिये खुला रास्ता मिल जाता है और यह गर्मी पहुंचाने लग जाती हैं।

वायु में कार्बन डाई ओक्साईड भी हमें अधिक गर्मी सर्दी से बचाने के लिये अत्यन्ता-वश्यक है, क्योंकि जो गर्मी पृथ्वी से निकलती है उस की किरणें इस में से बिलकुल नहीं गुज़र सकतीं। यद्यपि वायु में इस का अंश बहुत थोड़ा है-अर्थात एक हज़ार में केवल चार भाग, तथापि इसका इतना थोड़ा सा भाग भी न होने पर परिणाम बहुत बुरे हों, क्योंकि इस के न होने से इस पृथ्वी की टेम्प्रेचर बहुत कम हो जावे और हमारा रहना बहुत कठिन हो जावे।

सारांश यह है कि यह वायुमण्डल दिन के समय सूर्य्य की असह्य गर्मी से हमें एक छाते की न्याईं बचाता है और रात्रि को सूर्य्य के अस्त हो जाने पर कम्बल का काम देता है और सर्दी से बचाता है। क्योंकि यदि यह न हो और हटा लिया जावे तो सूर्य्य की सब किरणें बिना रोक टोक के पूरे बल से पृथ्वी पर पड़ें और अपने तेज से समुद्रजल को भाप बना उड़ा दें और यह पृथ्वी के सब ओर जमा हो जावें। सूर्य्य के अस्त होते ही जल के वह बुखारात जो पृथ्वी से दूर अन्त-रिक्ष के साथ मिले हों वह वहां की अतीव ठंडक से (जहां की टेम्प्रेचर सिफ़र दर्जे से भी २३६ दर्जे कम है) तुरंत जम जावें और इस से बर्फ़ और ओले रात भर पड़ते रहें। यहां तक कि यह सारी पृथ्वी इनसे ढप जावे और पुनः सूर्य्य के उदय होने पर यह पिघलनी आरम्भ हो जावे। सम्भवतः यह सब की सब सूर्य्य की गर्मी से पिघल भी न सकें। पाठक स्वयम् अनुमान करलें कि वह दृश्य कैसा भयानक हो।

वायु में हम ने ऊपर दर्शाया है कि प्राण

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वायु आक्सिजन, उस की तेजी को कम करने वाली नाइट्रोजन, पृथ्वी की टेम्प्रेचर को नियम बद्ध और हमारे अनुकूल बनाने वाले कार्बन डाई आक्साइड और पानी के बुख़ारात हैं। इन के अतिरिक्त इसमें छोटे छोटे अनगणित परमाणु इधर उधर घूमते फिरते हैं जो हमें एक अन्धेरे कमरे में से गुज़रती हुई सूर्य्य की रोशनी में नाचते दिखाई देते हैं। प्रत्येक बड़े नगर की वायु में इनके अँबार के अँबार लगे हुए हैं-उन सब छोटे छोटे परमाणुओं को चाहे वह मिट्टी और रेत के हों या नमक के, और चाहे छोटे छोटे कीड़े हों, मिट्टी के नाम से ही पुकारे जाते हैं। वायु इन्हें पृथ्वी से, खेतों और रेगिस्तानों से, चुरा ले जाती है। समुद्र पर चलती हुई वायु समुद्रजल की बौछाड़ में से नमक को पृथक कर अपने साथ उड़ा ले जाती है। ज्वालामुखी पर्वत अपने पेट में से मिट्टी निकाल निकाल कर आकाश की ओर फेंक रहे हैं। घरों और कारखानों की अंगीठियों से निकलता हुआ धुआं आकाश को काला कर रहा है। इसी लिये जिधर देखें वहीं यह मिट्टी के परमाणु विराजमान हैं। यह जान कर बड़ा आश्चर्य्य होता है कि यह परमाणु एक स्थान से दूसरे बड़े बड़े दूर स्थानों तक पहुंच जाते हैं। चीन की लाल रेत केलिफोर्नियां में पाई गई है, पोर्चूगाल की वायु में वह कीड़े पाए गये हैं जो कि अमेरिका से समुद्र पार कर आये होंगे, अफ्रीका के छोटे छोटे कीड़े बर्लिन की वायु में पहिचाने गये हैं। मिट्टी के यह परमाणु भी हमारे लिये अत्यन्त उपयोगी हैं। यह सूर्य्य की किरणों पर अपना विचित्र प्रभाव डालते हैं। इनके द्वारा दिन लम्बा हो जाता है अर्थात सूर्य्य के अस्त हो जाने पर भी सूर्य्य की रोशनी इन्हीं के द्वारा पृथ्वी पर कुछ काल तक पहुंचती रहती है। इन के कारण आकाश प्रकाशमय और सुन्दर नीले रंग वाला प्रतीत होता है और हमें इन्द्र महाराज के धनुष के दर्शन प्राप्त होते हैं, और सूर्य्यास्त के समय मनोहर दृश्य दीखते हैं। इन्हीं के कारण राशनी में मुलाइमी सी आजाती है।

यद्यपि यह साधारणतया बुद्धि के विपरीत है तथापि यह सत्य है कि यह मिट्टी के परमाणु आकाश को अंधियारा भी करते हैं, क्योंकि इन्हीं के ऊपर और इनके ही द्वारा बादल और धुन्ध बनते हैं, जिनसे अन्धेरा हो जाता है, अर्थात प्रकाश पहुंचाने वाले मिट्टी के परमाणु अंधेरा ले आते हैं और स्वयम् सूखे होने पर भी वर्षा बरसाते और सब स्थानों में जल थल कर देते हैं। यदि यह वायु में न हों तो न ही बादल और न ही धुन्ध हो, और इनके न बनने से वायु में पानी के बुखारात बहुत अधिक जमा हो जावें और यदि उनके ठंडा होकर जमने के लिये यह परमाणु न हों तो पृथ्वी के सब पदार्थ ही इनके स्थान में इन्हें ठंडा करने और जमाने का काम दें। अर्थात घास के प्रत्येक तिनके और वृक्ष की प्रत्येक टहनी से नमी टपकने लग जावे, हमारे कपड़े गीले हो जावें, उनसे पानी टप टप करता रहे और छाते किसी काम के न हों। मगर हमारे दुख की कहानी का यहां ही अन्त न हो, हमारे कमरों में भी दीवारें और सब वस्तुयें पानी से तर बतर हो जावें।

वायुमंडल से और वायु के मुख्य अंशों से जो लाभ हमें पहुंचते हैं वह कुछ ऊपर लिखे गये हैं। इनके अतिरिक्त शब्द को हमारे कानों तक पहुंचाने के लिये भी वायु अत्यन्तावश्यक है। इसके बिना सारे संसार में बड़ी भयानक चुपकी होती, पहाड़ों में बहते हुए नाले व्यर्थ ही अपना माथा पत्थरों से टकराते, बिजुली की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कड़क चुपके से गुज़र जाती।

और भी गूढ़ विचार से पता लगता है कि वायु मंडल से हमें अन्य कई लाभ प्राप्त होते हैं जो साधारणतया हमें कभी ध्यान में भी नहीं आते। यह किस को ध्यान होता है कि वायु मंडल के भार से ही हमारी टांगें ऊपर के धड़ से जुड़ी हुई हैं, यदि यह हटा दिया जावे तो हम सब लुढ़ लुढ़ाते फिरें। सारांश यह है कि यदि वायु के बिना हमारा जीवन रहना सम्भव भी हो तो ऐसे जीने से हमें क्या सुख जब कि हम लंगड़े, अन्धे और बहरे हों, आकाश डरावना काला प्रतीत हो, सूर्य्योदय और सूर्य्यास्त की कोई शोभा ही न हो, और हम दिन के समय तो भुने जावें और रात्रि को सर्दी से सुन्न हो जावें और हमारे पास हिमानी खतों में जल उबलता दिखाई देवे।

प्रभुलीला।

लेखक—श्रीयुत मेधाव्रत जगजीवन।

—[१]—

उषाकाल आया लिये लालिमा।
भगाता हुआ विश्व की कालिमा॥
प्रभापुञ्ज ज्योती लिये सातरङ्ग।
सजाये दिशा आ रही पूर्वसङ्ग॥
हुई व्योम व्यापी प्रभा-मण्डिता।
तमः सन्तती भी सभी खण्डिता॥
सहस्रांशु को यह बना कुञ्जिका।
दिशारूप खोले सुमञ्जूषिका॥
करी ज्ञान-ज्योति प्रकाशित जहाँ।
न अज्ञान का है ठिकाना वहाँ॥
रचा खेल जिसने, उसी ईश को।
नमस्ते नमस्ते समस्तेश को॥

—[२]—

खिली पंकजों की सभी मण्डली।
दिखाई रमा ने सुदन्तावली॥
मरन्दावली को द्विरेफावली।
चखें मञ्जु गूँजे सरों में भली॥
अहा अर्घ देती अरण्यस्थली।
मनोरम लिये यह प्रसूनावली॥
खगों के रवों से हि गाती हुई।
गुणों को उसी के दिखाती हुई॥
सभी ओस के बिन्दु मोती बनें।
रवि-ज्योति से रम्यकान्ती बनें॥
रचा खेल जिसने उसी ईश को।
नमस्ते नमस्ते समस्तेश को॥

—[३]—

प्रचण्डांशुमाली चढ़ा व्योम में।
सता के सभी को फँसा फाँस में॥
चढ़ें जो सिरों पै बड़ों के अहा।
गिरे हैं सदा गर्त में वे महा॥
प्रतीची दिशा में भये भानु अस्त।
हुए चन्द्र प्राची दिशा में हि मस्त॥
दशा एकसी है न रहती कदा।
विधाता दिखाता इसी से सदा॥
चला कर नियम से रवी चन्द्र को।
सिखाता सभी को नियम मन्त्र को॥
रचा खेल जिसने उसी ईश को।
नमस्ते नमस्ते समस्तेश को॥

—[४]—

हुआ इन्दु प्राची दिशा में उदय।
किया अभ्युदय कैरवों का सदय॥
महोदय का होता जभी है उदय।
निजालम्बियों का करें वे उदय॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

खिली है सभी ओर की चान्दनी।
विलोकें चकोराङ्गना नन्दिनी॥
विधु व्योमसागर में तारावली।
चुगें हंस सा मान हारावली॥

कुमुद्वान का सार रम्या मही।
वियत् तारकों से सजाया कहीं॥
रचा खेल जिसने उसी ईश को।
नमस्ते नमस्ते समस्तेश को॥

रुक्मणी हरण नाटक।

अनुवादक—श्रीयुत मेधाव्रत जगजीवन।

प्रवेश चौथा।

[स्थान-कुण्डिलपुर का राज-उद्यान]

रुक्मणी-[सखियों के साथ प्रवेशकर] गीतगातीहै।
चरित शुभदेख लोरी, सबक सब सीखलोरी,
बहिनों! प्रकृति सती महिला का॥ चरित०—
इच्छाके अनुकूल स्वपति की, करतीहै नित काज।
स्वामीचरणों में रतहोकर, सजती है सब साज॥
चरित शुभदेख लोरी, बहिनों! प्रकृति०—
इन्द्रदिशामें कनकासन रच, उषाप्रिया सानन्द।
स्वागत करतीहै रविपति का, प्रकटा प्रेम अमन्द॥
आलिङ्गन कमलिनी दयित का, पाकर पुलकितकाय
केसर से रञ्जित करतीहै, प्रिय मधुकर का काय॥
प्राणनाथ-जल से क्रीड़ा कर, मछली कहे विनीत।
इसीभांति प्रियतमसे रखना, प्यारे! प्रीति पुनीत॥
हंसी-हंस सारसी सारस, खेलें हिलमिल खेल।
दरसातेहैं पति पत्नी का' इसीभांति प्रिय मेल॥
उन्नतगिरि-पीहरसे सरिता, वनिता धारिउमङ्ग।
जातीहै लवणाम्बुधिपति का, करने को प्रियसङ्ग॥
विछा मनोहर संध्यादासी, पश्चिम में सतरङ्ग।
दम्पतिका वन्दन करतीहै, निरख अनूठा सङ्ग॥
तारक-कन्दुक फेंक २ कर, ज्योत्स्ना करें विलास।
दयितचन्द्रके साथ गगन में, कान्ता प्रेम विकास॥
चरित शुभ—बहिनों! प्रकृति०—

[सखियों का निर्गमन।]

रुक्मणी-[बाग को निहारती हुई।]
सद्भाग्य-हास्यसमान हंसकर पुष्प ये कुछ कहरहे
सत्पुण्य-नृत्यस्वरूप निर्झर दिव्यभाव जतारहे॥
जयबाण के टंकार से झङ्कार मधुकर कर रहे।
शुभ शकुन बांई आँख फरके.....

[त्योंही श्यामसुन्दर राधास्वामी ज्योतिषी नामक दूतके वेश में पृष्ठ भाग से स्वयं कृष्ण-चन्द्र प्रवेश करते हैं।]

कृष्णचन्द्र-"कृष्ण जयश्री पारहे"

रुक्मिणी-[सुनकर सहसा] अमृत के तुषार से उद्गार, सखी!

[भूल से दूत के वेश में खड़े हुए कृष्ण को सखी समझ आलिङ्गन करती है किन्तु पीछे से चकित होती है।]

कृष्ण-(स्वगत)
चन्द्रमुखीके चन्द्रकिरणसम, अङ्गोंका ज्यों स्पर्श हुआ
त्यों मममुग्ध देहसागर में, अङ्गतरङ्गोत्कर्ष हुआ॥

रुक्मिणी-यह देह कृष्ण सिवाय अन्य किसी पुरुष का जाने बेजाने भी आलिङ्गन करने में पाप समझता है, तथापि न जाने अकस्मात् यह अपराध कैसे हो गया?

कृष्ण-जैसा तुम मानती हो वैसे इस श्याम-सुन्दर राधास्वामी ज्योतिषी ने भी अभी तक निजप्रियजन को छोड़ अन्य किसी का आलि-ङ्गन किया ही नहीं, तथापि कृष्ण के प्रेमावेश में मेरा आलिङ्गन हो गया तो वह कृष्ण-स्वरूप का ही हुआ, ऐसा समझलो-जिससे कोई बाधा नहीं आती।

रुक्मिणी-आप कृष्णस्वरूप? यह और अजब का दूत!!

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कृष्ण–घबराओ नहीं राजकुमारी ! दूत यह राज-प्रतिनिधि है और इसी से अपने भूप का नैतिकस्वरूप ही है।

रुक्मिणी–क्या आप कृष्ण के दूत हो ? उन के विश्वास पात्र हो ?

कृष्ण–अरे, ऐसा विश्वास पात्र कि मानो स्वयं कृष्ण ही साक्षात्।

रुक्मिणी—तब तो मेरी मुग्धता तथा उद्धतता के लिये मुझे क्षमा करेंगे महाराज !

कृष्ण—कुछ नहीं जी कुछ नहीं। (स्वगत) इस पागलपन तथा उद्धतपन में ही है प्रेमी की परीक्षा।

रुक्मिणी—अच्छा श्यामसुन्दर ! द्वारका साम्राज्य के महासागर को उछालते हुए कृष्णचन्द्र अनेक राजताराओं में से इस रंकतारा की ओर अपने स्मरण के एक किरण को भी फेंकने की कामना करते हैं क्या ? वह सौभाग्य मेघराशी इस प्यासी चातकी को कृपावर्षण के एक कण से भी प्रसन्न करना चाहते हैं क्या ? वह पावन नन्दनवसन्त इस तुच्छ लता को प्रणयपवन के एक उच्छ्वासन से भी प्रफुल्ला बनाने की इच्छा रखते हैं क्या ?

कृष्ण—अरे, इच्छा रखते हैं इतना ही नहीं किन्तु तुझ तारा को विकसाने के लिये वह कृष्णचन्द्र अपने रिपुरूप राहु के राज्य सिर के ऊपर ही पाँव रखने का साहस उठा रहे हैं। तुझ चातकी को प्रसन्न करने के लिये वह कृष्णमेघ अपने शत्रु पर्वतों की छाती पर ही वज्र गिराने का जोखम झेल रहे हैं। तथा तुझ लता को प्रफुल्ला बनाने के लिये वह वासुदेव वसन्त अपने दुश्मन हिम के मर्मस्थल को ही भेद रहा है।

रुक्मिणी—अहा, मेरे भाग्यबिन्दु के सागर के से सौभाग्य ! किन्तु द्वारका में रहकर वे मेरा किस प्रकार उद्धार करेंगे। वे किसी प्रकार यहाँ आ जावें तो मैं उन्हें निज अंगों में समा डालूँ; अरे, आंखों में छिपा लूँ।

कृष्ण—तुम तो छुपा लोगी किन्तु तुम्हारी ओर अनन्यभाव होने से उन्होंने तो तुम्हारी आंखों में निवास किया ही है।

रुक्मिणी—अरेरे ! किन्तु मुझ से तो नहीं देखे जा सकते ?

[इतने में ही नेपथ्य में से भक्ति नामक पुरुष के वेश में राधा गायन गाती हुई प्रवेश करती है और कृष्ण दूर खड़े रहते हैं।]

राधा—

अतिशय पास होने से नहीं दिलबर नज़र आते
मिटें बिन चित्त का अध्यास नहीं प्रत्यक्ष वे होते॥
यथा लोचन के अञ्जन को नहीं लोचन निरख पाते
हृदय की नाड़ियों का नाद नहीं वे कर्ण सुन पाते।
जठर अरु देह की गरमी त्वचा अनुभव नहीं करती
सुगंधी नाक अन्दर की नहीं वो नासिका गहती॥
रहे जिमि काष्ठ,तिल,पय में हुताशन,तेल अरु माखन।
तथा प्रियतम सबहुँ व्यापक धरूँ यदि ध्यान दें दर्शन

कृष्ण—(स्वगत) राधा ने भक्ति का पाठ प्रयोग आरंभ किया।

रुक्मिणी—(भक्ति से) आओ भैय्या ! तुम कौन हो ?

राधा—श्रीकृष्ण की स्वामिनी राधा का भक्ति नामक नौकर हूँ।

रुक्मिणी—(स्वगत) श्रीकृष्ण की स्वामिनी राधा ! यह और मेरे बीच में अजब बाधा।

राधा—(स्वागत) तीव्र विरह वेदना प्रकटा कर मुझे कृष्ण की ओर रुक्मिणी का अनुराग बढ़ाना है तथा भाई कर्मयोग को छुड़ाने के लिये मूर्ख रुक्मैया को फँसाना है।

रुक्मिणी—भक्ति भैय्या ? तुम यहां किस कारण आये हो ?

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राधा—तुम को राधा का संदेशा सुनाने के लिये कि—"राधा श्रीकृष्ण को पहिले से प्रेमलग्न से ब्याह चुकी है और श्रीकृष्ण भी उस को अपनी स्वामिनी स्वीकार कर चुके हैं इस लिये अब तुझे राधा के प्रेम के बीच में बाधा डालने का साहस नहीं करना चाहिये।"

रुक्मैय्या—[सहसा प्रारब्ध के साथ प्रवेश कर] फ़तह बेड़ा पार, क्यों रुक्मिणी बहिन! सुन लिया न इस कालिया का राधा के साथ का शुभ समाचार? तू नाहक होती है खुँवार।

रुक्मिणी—हाय री दैय्या? मेरे स्नेह सागर में और यह राधा नाम का वड़वानल कहाँ से जल उठा?

रुक्मैय्या—यह तो जैसे को वैसी मिल गई। इस ग्वाले ने राधा ग्वालिन को ही अपनी कर रखी।

रुक्मिणी—अच्छा तो मैं राधा ग्वालिन की भी दासी बनकर रहूँगी।

रुक्मैय्या—वह मैं देख लूँगा। क्या तू इस रुक्मैय्या की बहिन उसकी दासी बनेगी?

प्रारब्ध—डूब मरने का अवसर है।

रुक्मैय्या—अेर यह देखा जायगा।

प्रारब्ध—किया प्रारब्ध का होगा।

रुक्मिणी—भक्ति भैय्या! राधा को मेरी ओर से बिनती कर कह दीजो कि कृष्ण ने राधा को यदि स्वामिनी गिनी है तो भले मैं उसी को अपनी रानी समझूँगी और उसकी किङ्करीराणी बन कर रहूँगी।

रुक्मैय्या—क्या बोली? तू क्या बोली? शिशुपाल की रानी होकर तू क्या किंकराणी कहायेगी?

प्रारब्ध—दो इँच की नाक कटायेगी।

रुक्मैय्या—अेर, यह देखा जावेगा।

प्रारब्ध—किया प्रारब्ध का होगा।

राधा—अफसोस! रुक्मिणी बहिन! राधा तुम्हारी यह बात न मान सकेगी।

रुक्मैय्या—ठीक है, ठीक है। भक्ति! मैं स्वयं तथा महाराज शिशुपाल दोनों जने तुझे बड़ी पदवी देंगे। अपनी सिठानी को तू दृढ़ रखना और वैसा कर हमारी मेहरबानी मिलाने को कहना। बहिन रुक्मिणी! अब तू भी ठंडा पानी पीना।

रुक्मिणी—भक्ति भैय्या! मेरी ओर से राधा को पैर छूकर विनय कीजो कि भले ही राधा कृष्ण की पत्नी बनें किन्तु मुझे केवल उनके चरण की सेविका बन कर रहने का अधिकार दें तो भी मुझे बहुत है।

रुक्मैय्या—बसबस। मेरे ये कान हैं या तेरे ऐसे शब्दों का हथोड़ा सहन का घन है। तुझे ग्वाले की सेविका बनना है क्या? कान्हा राधा का दास है दास।

रुक्मिणी—तो मैं हूँ उस राधा के दास की भी दासानुदास।

राधा—(स्वगत) शाबास!

रुक्मैय्या—देख तो सही कि मैं इसका कैसे करता हूँ सत्यानाश!

कृष्ण—[ज्योतिषी के भेष में।] राजकुमारी! न होवो उदास। विश्वास रखना कि कृष्ण पर प्रीति रखने हारे प्रेमी भक्तों का संबंध तोड़ने की किसी में नहीं ताक़त। रही इस भक्ति के कथनानुसार राधा की बात। सो वह राधा भी तुम्हारी बाधिका नहीं हो सकती क्योंकि राधा का विवाह तो मेरे साथ ही हो चुका है और इसी से मेरा नाम श्याम-सुन्दर राधास्वामी दुनियाँ में मशहूर है।

राधा—[कृष्ण को पहचान न सकने से]।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विश्वप्रपञ्च के षड्यन्त्र में से यह और कौनसा अवज़ार निकल पड़ा ? तुम कोई बेशरम बनावटी मालूम होते हो कि जिससे सूर्य नक्षत्र केसे राधा के पुण्यचरित्र में कलंक की कालिमा का आरोपण करते हो। राधा तुम को पहचानती ही नहीं।

कृष्ण—तब तो मुझे प्रतीत होता है कि तुम राधा के नौकर ही नहीं और इसी से भक्तिनाम धारण करके ही राधा पहचानती नहीं; अन्यथा राधा मुझे ठीक पहचानती है और मैं राधा को ठीक पहिचानता हूँ।

राधा—ऐसा है तो कहो—देखें कि—राधा कितनी बड़ी और कैसी है ?

कृष्ण—वह अपने भक्तिनाम वाले नौकर जितनी बड़ी और वैसी ही है।

राधा—(स्वगत) यह तो भाई, कोई हृदय घुस कर निकला है कि क्या ? (प्रकट) ष्ण को छोड़ अन्य किसी को राधा चाहती ी नहीं।

कृष्ण—संदेह में मत पड़ो, रुक्मिणी। मैं सिद्ध करने के लिये तैयार हूँ कि राधा मेरे सिवा अन्य किसी कृष्ण से व्याही ही नहीं।

राधा—(सक्रोध) राधा पर इस प्रकार दोष मढ़ने वाले की मैं जीभ काट लूँगी।

कृष्ण—[राधा को एक ओर लेजाकर] भक्तिभाई ! इस ज्योतिषी को अधिक छेड़ोगे तो मैं सब पोल खोल दूँगा।

राधा—(स्वगत) न जाने भाई, कोई भगवान् का जासूस तो नहीं उतर पड़ा है ?

रुक्मैय्या—(कृष्ण से) श्यामसुन्दर ! तुम कौन हो और कैसे आये हो ?

कृष्ण—मैं ज्योतिषी हूँ और रुक्मिणी का ज्योतिष देखने आया हूँ कि ग्रहचक्र के अनुसार उसके भाग्य में कृष्ण ही भर्तार है।

रुक्मैय्या—अरे, इस में क्या एतबार ? तुम्हारे ग्रहों को भी हमारे वास्ते हमारी मर्जी के मुताबिक घूमते रहना पड़ेगा—क्यों प्रारब्ध जोशी !

प्रारब्ध—सही है सरकार ! इसको ज्योतिष देखना आता ही नहीं। बाकी मेरे ग्रह तो मेरे यजमान की इच्छा के अनुकूल आकाश में भ्रमण किया करते हैं। यदि ये अधिक गड़बड़ करें तो मैं अपने मंत्रजप बल से रोक सकता हूँ और लकड़ से मकड़ जोड़ सकता हूँ।

रुक्मैय्या—इसीलिये तो अपने ग्रहों को अनुकूल बनाने के लिये हमने तुमको अपने पास रखा है।

प्रारब्ध—(स्वगत) और मैंने भी तुम्हारा सिर घोटने के लिये अपना प्रतिकूल उस्तरा पहना रखा है।

रुक्मैय्या—अच्छा तब रुक्मिणी की जन्मकुण्डली देखो और साबित करो कि उसके नसीब में शिशुपाल ही भर्तार है।

प्रारब्ध—

जंभाई छींक लेने दो भविष्य को देख लूँ मैं यार।
वरें शिशुपाल रुक्मिणीको करो जो राम का उच्चार

रुक्मैय्या—क्या प्रारब्ध ! जन्मकुण्डली क्या कहती है ?

प्रारब्ध—(स्वगत) तुम्हारा मरण। (प्रगट) जन्मकुण्डली के साथ कर्मकुण्डली मिलाकर देखो श्यामसुन्दर ! इस रुक्मिणी के ठीक सामने कृष्ण का चन्द्र ज्यों ही प्रकाशित होता है त्यों ही बीच में आकर शिशुपाल का राहु और इस रुक्मैय्या का शनि बाधा डाल रहा है।

रुक्मैय्या—ओह ! मैं शनि और शिशुपाल राहु ? तब तो इस कृष्ण को खाऊँ बस खाऊँ। वाह—प्रारब्ध ! वाह तेरा ज्योतिष !

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रारब्ध—ऐ मेहरबान ! मेरे ज्योतिष के जोश से तो ग्रह इस मेरे पेट के आकाश में बूँदी के लड्डू की तरह घूम रहे हैं और जब राहु सब निगल जाता है तब वह विचारा मेरी होली जैसी जठराग्नि ज्वाला में पड़ा २ हज़म हो जाता है।

कृष्ण—पर कृष्ण का यह बुध ग्रह रूप सुदर्शन शिशुपाल राहु को दुर्बल बना भगा रहा है और शनि को नष्ट कर रहा है। अन्त में तो जय कृष्ण की ही है।

रुक्मिणी—तुम्हारे मुख में शक्कर। तो लो यह पारितोषिक रूप गले में रत्नहार।

कृष्ण—यह रत्नहार पाने से कृष्ण के साथ रुक्मिणी का स्वयंवर हुआ ही समझो।

रुक्मैय्या—पत्थर, पत्थर इसके नसीब में काला पत्थर। वह कृष्ण तो हमारे डर के मारे मथुरा से भाग कर एक निर्जन टापू को बसा वहाँ देश-बहिष्कृत हुआ है। अब उसकी मजाल क्या है कि वह हमारे सामने आ भी सके ?

कृष्ण—इस में एक नहीं। तुम्हारी आंखों के तारे तो तुम्हारे नष्ट हुए ग्रहतारों के स्थान में आकाश में जा बैठे हैं इसलिये तुम उसको कहाँ से देख सकोगे ? नहीं तो कृष्ण कहाँ नहीं है ?

रुक्मैय्या—होगा कहीं काले पानी में। अच्छा इस रुक्मैय्या की नज़र में तो आवे फिर देखा जायगा।

प्रारब्ध—हाँ, नज़र में तो आवे। (स्वगत) फिर अन्धे से देखा जायगा।

रुक्मैय्या—थोड़े ही दिन में अब मैं रुक्मिणी का स्वयंवर रचता हूँ और शिशुपाल महाराज को आमंत्रण करने को मैं स्वयं ही कल जाता हूँ। वहाँ पकड़े हुए उस कर्मयोग को भी उचित फल चखाऊँगा और साथ में सिद्धि ब्याहूँगा।

राधा—कर्मयोग के लिये भी मुझे राधा ने भेजा है कि उसे समझा बुझाकर सिद्धि के मोह जाल से छुड़ा देना।

रुक्मैय्या—वाह वाह ! तब तो तू मेरे साथ चेदीपुर चल। इस प्रकार सिद्धि के काम में भी तू मेरा मददगार होगा तो कर्मयोग को बचाने में मैं हूँगा तेरा और राधा का मददगार।

राधा—(स्वगत) मुझे यही दरकार।

कृष्ण—यह चाहे जितना समझावे, सिद्धि कर्मयोग को छोड़ अन्य किसी को वरेगी ही नहीं और तुम रुक्मिणी के लिये स्वयंवर रचोगे तब चाहे आकाश को सिकोड़ना, वायु को रोकना, सागर को सुखाना तथा उससे भी अधिक जो होवे सो करना किन्तु कृष्ण को तो नहीं २ और नहीं ही रोक सकोगे यह मेरा भविष्य जरूर मानना।

रुक्मैय्या—अपने भविष्य का तुझे इतना अभिमान है ? सो उस आते हुए कृष्ण को रोकने के लिये लाखों का लश्कर तैयार रहेगा। तेरी भविष्यवाणी को तेरे सामने झूठी सिद्ध करने को तुझे आज से नज़र कैद रखेंगे।

प्रारब्ध—(स्वगत) तभी किया प्रारब्ध का होगा और जैसा किया वैसा भुगतना होगा।

रुक्मैय्या—तेरा सब झूठ सिद्ध होने के बाद तुझे भयंकर से भयंकर सज़ा होगी। कृष्ण मेरे सामने आवेगा ! मेरे सामने वह फरक सकेगा।

प्रारब्ध—कभी नहीं, अन्यथा कोई नेत्र होते हुए अन्धा ही बनेगा।

कृष्ण—"महासागर की लहरी वह,
नहीं तृणगण से रुक सकती।
तथा वह कान्ति सूरज की,
नहीं तिमिरों से रुक सकती॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

न रोके कृष्ण रुक सकता,
चाहे जो तुम यतन कर लो।"
रुक्मिमैस्या—अरे, देखेंगे फिर वीरो !
इसे तो कैद अब कर लो॥
प्रारब्ध—किया प्रारब्ध का होगा।
[टॅबलो।]

जाति पंथ।

(गतांक से आगे)

लेखक—श्रीयुत् प्रोफेसर गोपाल दामोदर तामस्कर एम. ए. एल टी।

पिछले अंक में मैंने गुण कर्म से वर्ण व्यवस्था के उदाहरण दिये थे। अगर आप कहें कि खानपान इत्यादि एक ही वर्ग के लोगों में करना ठीक है, तो इसका अर्थ यही होना चाहिये कि जिनके गुण और कर्म एक समान हों उन्हीं में यह व्यवहार हो सक्ता है। ब्राह्मण-गुण-संपन्न कहीं भी क्यों न पैदा हो, वह ब्राह्मण ही है। और शूद्र-गुणसंपन्न कहीं भी क्यों न पैदा हो, वह शूद्र ही कहलाया जाना चाहिये। उच्चकुल में पैदा होने पर भी अगर वह शूद्र कर्म करे तो ब्राह्मण कदापि नहीं हो सक्ता। इतना तत्त्व अगर मान लिया तो हमारा सब झगड़ा ही मिट जावेगा। एक बार वशिष्ट और भारद्वाज के नाम के दो ब्राह्मण इस बात पर झगड़ रहे थे कि कोई पुरुष ब्राह्मण किस प्रकार बन सक्ता है। आखिर को वे भगवान् गौतम बुद्ध के पास आये। गौतम ने और २ कई बातें बतलाने पर कहा कि घास, वृक्ष, कीट, पतंग, चौपाये, सर्प, मछलियां, और पक्षी ये सारे किसी विशिष्ट चिन्हों के कारण एक दूसरे से भिन्न हैं। मनुष्य में भी कुछ विशिष्ट बातें हैं और उस प्रकार का उसका उद्योग होना चाहिये। जो गोरक्षा कर उदरनिर्वाह करता है, वह कृषिकार यानी वैश्य है, वह ब्राह्मण कदापि नहीं हो सक्ता। जो व्यापार कर जीता है, वह व्यापारी है, ब्राह्मण नहीं। जो सेवा वृत्ति कर जीता है, वह शूद्र है, ब्राह्मण नहीं। जो चोरी करके जीता है, वह चोर है, ब्राह्मण नहीं.....मैं जन्म से किसी को ब्राह्मण नहीं मान सक्ता। जिसके पास कुछ है नहीं, न किसी वस्तु की इच्छा करता है; वह ब्राह्मण है। जो क्रोध से रहित है, पवित्र कार्य करता है, जो सदाचारी, निरिच्छ, संयमपूर्ण है उसे मैं ब्राह्मण कहता हूँ। कमलपत्र पर पानी जिस प्रकार रहता है, उसी प्रकार जो इंद्रिय सुखों से दूर रहता है, उसे मैं ब्राह्मण मानता हूँ।" बतलाइये, कितने इस कसौटी पर ठहरेंगे? एक बार गौतम बुद्ध और आस्सलायन नामक ब्राह्मण विद्वान् से बाद हुआ। गौतम ने पूछा, "और स्त्रियों के समान क्या ब्राह्मण स्त्रियों को प्रसूति की वेदनायें नहीं होतीं?" आस्सलायन ने कहा "हां, होती हैं।" फिर गौतम ने पूछा "अगर कोई ब्राह्मण चोर, खूनी, स्त्रीलंपट, असत्यवादी, निंदक, दुष्टभाषी, लोभी निकले तो मृत्यु के पश्चात् और जाति के लोगों के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समान उसे क्या दुर्गति प्राप्त न होगी?" यह भी बात उस ब्राह्मण ने स्वीकार की। गौतम ने फिर आगे कहा "घोड़ी से अगर गदहे का संयोग हो जावे तो उसकी संतति खच्चर होती है, पर क्षत्रिय और ब्राह्मण का संबंध हो तो उनकी संतति ठीक उन्हीं के समान दीखती है। क्या इस से स्पष्ट नहीं दीखता कि क्षत्रिय और ब्राह्मण में कोई भेद नहीं है?" अब ब्राह्मण कुछ उत्तर न दे सका। आखिर को वह भी बुद्ध का शिष्य हो गया। और इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं। उस समय भी इस पंथ के झगड़े से लोगों का जी ऊब चुका था। बुद्ध धर्म की दीक्षा लेने से इन सब बातों से उन्हें मुक्ति मिल जाती थी। भगवान् बुद्ध ने कहा है कि पवित्रांतःकरण और शुद्धाचरण, संयम और दम से कोई भी ब्राह्मण हो सक्ता है। यही ऊच्च दर्जे का ब्राह्मणत्व है। इसी महापुरुष ने एक बार और कहा है, "कुल, जन्म अथवा जटा से कोई ब्राह्मण नहीं होता। जिसे सत्य प्रिय है, जो सदाचार पूर्ण है, वही ब्राह्मण है।" आजकल के कितने ब्राह्मण इस प्रकार ब्राह्मण कहलाये जा सक्ते हैं? हमारे ऊपर के विवेचन का सारांश इतना ही है कि गुणकर्म से ही कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्र बनता है, जन्म से नहीं। और परमेश्वर ने इस सृष्टि में इन चारों कर्मों की आवश्यकता रख दी है। सब देशों में, सब काल में, इन चारों प्रकार के कर्म लोगों को करने पड़ते हैं। जान बूझकर उन्हें नाम देने की कोई आवश्यकता नहीं। जिस में जिस प्रकार के गुण होंगे, वह उस प्रकार के कर्म करने योग्य है, और उसके कर्म से उसका दर्जा निश्चित होना चाहिये। केवल जन्म से किसी को योग्यता नहीं प्राप्त होती। अगर नाम देकर ही चतुर्वर्ग बनाना हो तो गुणकर्म के अनुसार बनाओ ताकि अयोग्य पुरुष को बड़े अधिकार मिलकर नीचता का काम वह न करने पावे, और सुयोग्य मनुष्य को योग्य कर्म करने का मौका मिले। यही 'चातुर्वण्यं मया सृष्टं गुणकर्म विभागशः' इस श्लोक का अर्थ है।

यह हम जो आंदोलन कर रहे हैं, यह नया नहीं है। वह अत्यंत प्राचीन है। गौतम बुद्ध ही हमारे सबसे प्राचीन मार्ग दर्शक हैं। इस महा पुरुष की ऊपर जो दो चार उक्तियां दी हैं, उसी से यह बात स्पष्ट है। तदनंतर दूसरा बड़ा भारी प्रयत्न महा पुरुष गुरुनानक ने किया था। तीसरा और अर्वाचीन प्रयत्न स्वामी दयानंद सरस्वती जी का है। इन तीनों समय प्रयत्न बहुत सफल न हुए। इसका कारण यही रहा कि ब्राह्मणों ने जो एक बार बीज बो दिया और उसका जो प्रचंड वृक्ष बना और उसकी छाया में जो बढ़े, वे उसे छोड़कर स्वतंत्र न हो सके। एक बार जो ब्राह्मणों ने और लोगों को गुलाम बना लिया, वह सदा ही के लिये कर लिया। विद्या की गठरी जब तक उनके हाथ में थी, तब तक स्वतंत्र विचार पैदा होना और अगर किसी के दिल में पैदा भी हुए तो उनका ग्रहण करना उनसे नहो सक्ता था। इसके परिणाम अब तक बने हुए थे। अब २ विदेशियों की कृपा से विद्या का भाण्डार खुला हुआ है। खेद की बात यह है कि अब भी उसका प्रचार बहुत धीरे २ हो रहा है।

जातिपंथ से कई तरह के नुकसान हुए हैं, और उनमें से कुछ आगे बतला चुके हैं। एक नुकसान की भरपाई कभी नहीं हो सक्ती। धर्म की वृद्धि विकास और प्रचार को भी उसने रोक दिया। ब्राह्मण जब पतित हुए, तब वे तो स्वतः कुछ नहीं कर सके थे। दूसरों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को भी वे कुछ नहीं करने देते थे। और अन्य तीन वर्ग के लोगों ने कुछ किया भी होता तो वे भी कुछ न कर सके। इतना ही नहीं तो इन तीनों वर्गों को वे इसकारण अपने साथ ले डूबे। जब आर्य्यों में से कुछ लोगों को विद्या और धर्म का आधिकार न रहा, तब विदेशियों को अथवा अन्य कौमों के लोगों को ये क्यों कर विद्या और धर्म सिखलाते? एक कहावत तो अबतक प्रसिद्ध है कि वेदोच्चार शुद्र के कान में न पड़ने पावे। फिर वेदों का पढ़ना कहां? ठीक है! जो अपनी नीचता, अयोग्यता, मूर्खता इत्यादि छुपाना चाहते हैं और अपने अधिकार खोने का जिन्हें डर रहता है, वे दूसरों को बनते तक अंधकार में ही रखना चाहते हैं! विद्या-प्राप्ति के बाद विद्या का परिणाम हुए सिवा नहीं रहता। ऐसी दशा में सब से बेहतर यही कि विद्या की कुंजी बिलकुल ज़मीन के भीतर गाड़ दी जाय! यही ब्राह्मणों ने किया। नहीं तो इतनी अधोगति आज न रहती। इसी परिणाम का एक दूसरा स्वरूप और है। अगर ये विदेशियों को भी अपना धर्म सिखलाकर अपने में कर लेते तो सब से पहले यह बात होती कि जीते जाने पर भी ये जेते के समान रहते। पराधीनता के कटु फल न भोगने पड़ते। ग्रीस रोम के अधीन होने पर भी इस दुर्दशा को प्राप्त न हुआ। ग्रीस ने अपनी विद्या, ज्ञान, इत्यादि रोम को सिखला कर उसे जीत लिया 'Greece captured her victor' अपने जेते को ही ग्रीस ने क़ैद किया। यह कहावत अंग्रेजी में मशहूर है। धर्म का दान कर हिन्दुस्थान इससे अधिक कार्य्य कर सक्ता। यह ख्याल रखना चाहिये कि असिविजय से धर्म विजय अधिक चिरस्थायी होता है। कोई आश्चर्य की बात नहीं कि करोड़ों रुपये खर्च कर यूरोप और अमरीका के निवासी हमारे हिन्दुस्थान में ईसाई धर्म का प्रचार करने का प्रयत्न निःस्वार्थ बुद्धि से कर रहे हैं। यह बात भी दयानन्द स्वामी ने पहिचान कर ही आर्य्य समाज सब के लिये खुला कर दिया है। अब भी चाहें तो बहुत कुछ हो सकता है। श्री विवेकानन्द स्वामी के प्रयत्नों का कुछ फल सबके सामने प्रत्यक्ष है—किसी को बतलाने की आवश्यकता नहीं। इसी प्रकार प्रयत्न जारी रखा तो दुनियां के चौपट पर हमारी जीत हुए सिवा न रहेगी। कुछ विद्वानों ने इस बात को पहिचाना भी है। एक ओर से जो नुकसान हुआ है, वह दूसरी ओर से धर्म के प्रचार के द्वारा पूरा हो जावेगा।

आज कल के इतिहास के विषय में मुझे कुछ कहना है। जब से नयी विद्या का प्रचार हुआ तब से स्वच्छंदता का साम्राज्य चारों ओर बढ़ रहा है। इसके अनेक कारण होंगे पर मेरी समझ में एक प्रधान कारण इस पुराने जातिपंथ ने पैदा किया है। जिन्हें ब्राह्मणों ने नीच समझा था, और दबाकर रखा था, उन्हें अब कर्म और मन की स्वतंत्रता मिली है। परिणाम यह होता है कि समाज के अनेक बंधनों का विचार न कर वे चाहे जैसा वर्ताव करने लगे हैं। इसमें कोई आश्चर्य नहीं मानना चाहिये। उन पर अब तक अतीव बंधन था। स्वतंत्रता मिलते ही वे दूसरी छोर को जा पहुंचे। यह मनुष्य-स्वभाव ही है। अतिबंधन का हमेशा ऐसा परिणाम हुआ करता है। क्या इस इतिहास से हमें कुछ सीखना है? हां, जरूर। हमें एक भारी बात सीखनी है। अगर कुछ विशिष्ट नियमों के अनुसार यह जातिपंथ का झगड़ा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शिथिल न करेंगे तो ये नई रोशनी वाले जाति-पाँथ को तो तोड़ ही डालेंगे पर धर्म, सामाजिक आचार विचार, नीति नियम सब को नष्ट कर डालेंगे। फिर हमारे भाइयों की अधोगति की सीमा न रहेगी। फिर हमें उबारने वाला केवल परमेश्वर ही रहे तो रहे, दूसरा कोई न रहेगा। बुद्धिमानों का कर्त्तव्य है कि इस बात का दृष्टि से विचार करें और कुछ निश्चय करें ताकि समाज नष्ट न होने पावे। ख्याल रखिये कि जिस प्रकार लूथर के प्रयत्न के कारण पोप-शाही को नष्ट हो जाने का डर पैदा हुआ, वैसा ही डर यहां भी है। आखिर को पोप लोग बुद्धिमान् निकले और उन्होंने पादड़ियों का और धार्मिक आचार विचार का सुधार करना शुरू किया ताकि सारा धर्म न नष्ट हो जावे। लूथर का प्रयत्न तो ठीक दिशा में था, पर हमारे यहां के स्वेच्छाचारी केवल नाश की दिशा में भटक रहे हैं। इसलिये जातिबंधन का झगड़ा थोड़ा शिथिल कर उनको समाज से दूर न होने देना चाहिये। हिन्दू धर्म का जातिपंथ के झगड़े के बिना एक बाल भी बांका नहीं हो सकता। जो समझे हुए हैं कि हिन्दूधर्म केवल जातिपंथ पर अवलंबित है वे नितांत भटके हुए हैं। वे सुंदर कमलयुत तालाब में जाकर कमलपुष्प के केशर को छोड़ वहां की कींच खा रहे हैं। हिन्दू धर्म के तत्व इतने सार्वत्रिक, सार्वदेशिक, सार्वलौकिक हैं कि वास्तव में जातिपंथ के झगड़े से उसे कुछ भी नहीं करना है। इतने विवेचन से यह दीख गया है कि यह झगड़ा हिन्दुधर्म में पीछे से घुसा हुआ है। उस पर किसी प्रकार हमारा हिन्दुधर्म अवलंबित नहीं। उसके बिना भी हम उज्ज्वल हिन्दू बने रह सक्ते हैं। डर करने का कोई काम नहीं। अगर जातिपंथ को हम चिपके ही रहे तो हमारा सर्वनाश हुए सिवा न रहेगा, क्योंकि नयी विद्या की रोशनी कुछ ऐसी वैसी नहीं है, बड़े जोर की है और बड़े बड़े बुद्धिमानों की आंखों को उसने चकाचौंध कर डाला है। अगर प्रत्येक नवशिक्षा प्राप्त विमार्ग में चला जावे तो हमारा नाश हुए सिवा न रहेगा। इस नयी रोशनी को हम रोक नहीं सक्ते। वह भी अपने प्रकार की एक प्रचंड शक्ति है, उसके आगे हमें सिर नवाना ही होगा। ख्याल इतना ही रखना चाहिये कि हम किसी ऐसे मजबूत स्थान को धरे रहें कि हमें वह जाने का डर न रहे। यही बात विद्वानों के सोचने की है। अगर वे लोग हमारे मार्गदर्शक न होंगे, अगर वे लोग हमारे हाथ पांव खुले न करेंगे तो हम अपना बचाव न कर सकेंगे और इस नये प्रवाह के साथ अवश्य ही बह जावेंगे। इसलिये आप हमारा हाथ पकड़िये, हमें अपना समझिये, और हमारे धर्म के तत्व अच्छे सिखलाइये। फिर हम तुम सब एक हो जावेंगे, एक परमेश्वर देखने लगेंगे, और एकत्व और एकता का लाभ उठा सकेंगे। अगर आप अपने कर्त्तव्य में चूके तो जान रखिये कि आप की हमारी कभी आगे फिर भेंट न होगी और हिन्दू, और आर्य कहलाने वाला कोई न रह जावेगा। आपने हमें बहुत काल तक दूर रखा। अब तो भी अपनाइये अथवा हम सदा के लिये दूर हो जावेंगे। यह धमकी नहीं है। यह जो कोई देखता है उसे दीख रहा है। सोचो, विचारो और उदार बनो। केवल अपने को ही परमेश्वर के लाड़ले पुत्र न समझे रहो। परमेश्वर ने सब को पैदा किया है। उसके पास ब्राह्मण क्षत्रिय सब बराबर हैं। आप भी हमें अपनाओ। अगर इतिहास से किसी को अपनी आंखों में अंजन डालना है, तो हे ब्राह्मणो, दूसरी नीच कही जाने वाली जातियों के प्रत्येक मनुष्य को उसकी योग्यता के अनुसार इस समाज में स्थान दो नहीं तो न तुम न हम!

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कन्हैया ।

लेखक—श्रीयुत् मणिराम गुप्त ।

आकर के देखो भारत का है अब कैसा हाल कन्हैया ।
वही आज कंगाल बना है जो था मालामाल कन्हैया ॥ १ ॥

जो था जगद्गुरु कहलाता वही बना है शिष्य कन्हैया ।
किस का चित्त न व्याकुल होगा भला देख यह दृश्य कन्हैया ॥ २ ॥

जो था सबको कभी खिलाता, वही न पाता अन्न कन्हैया ।
भला देश भारत सा दूजा होगा कौन विपन्न कन्हैया ॥ ३ ॥

जहां कभी थे लोग समझते बीमारी को पाप कन्हैया ।
वहीं लोग अब रोग-ग्रस्त हो सहते हैं संताप कन्हैया ॥ ४ ॥

धर्म कर्म से विमुख हो रही ऋषियों की संतान कन्हैया ।
इसीलिये तो सहना पड़ता है इतना अपमान कन्हैया ॥ ५ ॥

जो भारत था कभी कर रहा भूमंडल पर राज कन्हैया ।
वही दासता की बेड़ी में बँधा हुआ है आज कन्हैया ॥ ६ ॥

रक्षक ही भक्षक बन करते जब हैं अत्याचार कन्हैया ।
तुम्हीं बता दो भला किस तरह होगा बेड़ा पार कन्हैया ॥ ७ ॥

हाय ! हो रहे भारतवासी दुख से बिल्कुल चूर कन्हैया ।
अब तो भला कृपा कर इनका करदो सब दुख दूर कन्हैया ॥ ८ ॥

बली चाहते हैं निबलों का कर देना संहार कन्हैया ।
नहीं रहा अवलंब कोई अब तुम्हीं करो उद्धार कन्हैया ॥ ९ ॥

भूल गये हैं भारतवासी निज भाषा औ वेश कन्हैया ।
एक वार फिर कर्मयोग का दे जाओ उपदेश कन्हैया ॥ १० ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देश में नये आत्मा का प्रवेश।

लेखक—श्रीयुत कृष्ण बी.ए. सम्पादक "प्रकाश व प्रताप"।

रत की भूतपूर्व राजधानी कलकत्ता नगरी में राष्ट्रीय-संघ का सम्मेलन होने वाला है। देशभर में चिन्ता के चिन्ह दृष्टिगोचर हो रहे हैं, असहयोग के विषय में कांग्रेस क्या निश्चय करेगी। क्या कहीं कांग्रेस रूपी नौका असहयोग रूपी चट्टान से टकरा कर चूर २ तो न हो जावेगी? मित्र और हितैषी चिन्तित हैं, परन्तु शत्रुओं के घर में घी के चिराग जल रहे हैं। उन्हें पूर्ण विश्वास है कि १९०७ की भान्ति इंडियन नेशनल कांग्रेस में फिर फूट पड़ने वाली है:—

और शत्रुओं का यह हर्ष अकारण न था। यद्यपि सर्व प्रान्तों की कांग्रेस कमेटियों ने असहयोग के नियम Principle को स्वीकार कर लिया था और एक दो ने महात्मा गांधी के सविस्तर प्रोग्राम को भी, तथापि यह कहने में कोई अत्युक्ति न होगी कि प्रोग्राम के विषय में देश में घोर मतभेद था। महात्मा गांधी के प्रोग्राम की पहिली अवस्था में निम्नलिखित चीजों का बहिष्कार था।

(१) सरकार की ओर से दी हुई उपाधियों और आनरेरी पदों का।

(२) न्यायालयों का, जिसमें यह भी सम्मिलित था कि वकील महाशय वकालत का त्याग करें।

(३) स्कूलों के विद्यार्थियों के माता पिता से यह आशा की गई थी कि वह अपने पुत्र अथवा पुत्री को किसी ऐसे विद्यालय में न भेजेंगे जो सरकार से सम्बन्धित हो या उससे सहायता पाता हो।

(४) नवीन सुसंस्कृत कौंसिलों का।

उपाधियों के विरुद्ध तो समस्त राष्ट्रमंडल है अथवा था। ऐसे राष्ट्रीय नेता बहुत कम हैं जिन्हें सरकार ने उपाधियां दे रक्खी हैं, और जिनके पास हैं उनके लिये उनका त्याग दुस्तर नहीं। आनरेरी पदों को भी वह तिलाञ्जलि दे सक्ते हैं। यह भी सब मानते हैं कि यह उपाधियां और आनरेरी पद मनुष्यों को नपुंसक और शक्ति हीन बनाते हैं, और भारतीय जन जितना उनसे बचे रहें उतना ही अच्छा है।

परन्तु पहिली अवस्था के शेष जितने भाग हैं उनके विषय में राष्ट्रीय-मंडल में मत भेद था। न्यायालयों और विद्यालयों के बायकाट के विषय में मतभेद का रूप भिन्न था। इस बात तो पर सर्व सम्मति थी कि न्यायालय अंग्रेजी शासन को भारत में सबसे अधिक दृढ़ करते हैं। जब तक भारतीय जनता का अंग्रेजी न्याय पर विश्वास है तब तक उनका शासन दृढ़ रहेगा। इसी प्रकार इस बात पर भी सर्व सम्मति थी कि सरकार से सहायता पाने वाले अथवा शिक्षा विभाग से सम्बन्ध रखने वाले वर्त्तमान विद्यालय दास उत्पन्न करने की मशीन हैं। उनके द्वारा राष्ट्र के बच्चों के मस्तिष्क में जो असत्य विचार डाले जाते और जिस तरह इन्हें देशहित के अयोग्य बनाया जाता है इसकी तुलना किसी अन्य वस्तु से नहीं हो सक्ती; परन्तु इनका बहिष्कार उन्हें क्रियात्मक नज़र न आता था

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इसलिये जग हँसाई के भय से वह इसका समर्थन न करते थे।

परन्तु कौंसिलों का बहिष्कार एक ऐसा विषय है जिस पर वास्तविक मतभेद था। राष्ट्रीय दल यह समझता था कि इतने वर्षों के निरन्तर परिश्रम के पश्चात् कौंसिलों में हमें बहुपक्ष प्राप्त हुआ है अब यदि देशहित रखने वाले और किसी भी भय तथा प्रलोभन में आकर देशहित को त्याग न करने वाले पुरुषों को कौंसिलों में भेजा जाय तो हम गवर्नमेन्ट को अपनी इच्छा के अनुसार चला सक्ते हैं। जो विषय भारतीय मन्त्रियों के हाथ में होंगे उनमें देश का बहुत कुछ उद्धार हो सक्ता है। इसके अतिरिक्त एक विचार यह भी था कि यदि राष्ट्रीय दल ने कौंसिलों का बायकाट कर दिया तो नर्म दल या 'हुकुम-हजूर' कौंसिलों में चले जावेंगे और देश के नाम से कौंसिलों में वह बातें स्वीकार हुआ करेंगी जिन्हें देश पसन्द नहीं करता। मद्रास में एक कठिनाई और थी। ब्राह्मण अब्राह्मण का प्रश्न बड़े वेग से उमड़ रहा है। यह सत्य है कि किसी समय में ब्राह्मणों ने अब्राह्मणों पर अत्याचार किये थे और इस कारण से अब्राह्मणों को ब्राह्मणों पर कोई विश्वास नहीं रहा, परन्तु इस समय अब्राह्मणों की मानसिक अवस्था इस प्रकार की होरही है, जिससे किसी भी देशभक्त को सहानुभूति नहीं हो सक्ती। अब तो अब्राह्मणों ने अपना यह काम समझ रखा है कि जिस बात को ब्राह्मणों ने पसन्द किया हो उसके वह अवश्य विरुद्ध होंगे चाहे उसमें देश की हानि ही हो। देश ने एक स्वर होकर स्वराज्य मांगा, वर्षों के बिगड़े हुये मुसलमान भी इस मांग में हिन्दुओं के साथ मिल गये, परन्तु अब्राह्मण अलग के अलग रहे। उन्होंने न केवल यहां स्वराज्य की मांग का विरोध किया प्रत्युत विलायत में अपने प्रतिनिधि विरोध के लिये भेजे। सो राष्ट्रीय नेता यह समझते हैं कि यदि हमने कौंसलों का त्याग किया तो मद्रास प्रान्त की ओर से अब्राह्मण कौंसलों में चले जावेंगे और non-official majority एक force अर्थात् मखौल बन जावेगी इसलिये बंगाल, मद्रास, महाराष्ट्र, तथा संयुक्त प्रान्त के राष्ट्रीय दल के नेता कौंसिलों में अपने प्रतिनिधि भेजने के पक्ष में थे।

***

इंडियन नेशनल कांग्रेस की बैठक हुई। उस के समक्ष वस्तुतः एक ही विषय था और वह यह कि भविष्य में देश सहयोग की पालिसी वर्तः करेगा अथवा असहयोग का शस्त्र चलावेगा। समस्त राष्ट्रिय दल की शक्ति एक ओर थी, यहां तक कि उस कांग्रेस के प्रधान लाला लाजपत-राय की सहानुभूति भी उन लोगों के साथ थी जो महात्मा गांधी के प्रोग्राम से मतभेद रखते थे। निरन्तर कई दिन और कई रात देश के उच्चतम मस्तिष्क इस विषय पर विचार करते रहे अन्त में विजय महात्मा गांधी की हुई और निश्चय होगया कि कौंसिलों को बहिष्कृत सम-झना चाहिये। कारण क्या ?

***

विषय निर्धारिणी सभा में तो सम्मतिओं का भेद अधिक न था, परन्तु जिस समय यह विषय खुली कांग्रेस में पेश हुआ उस समय ज्ञात हुआ कि मानो देश असहयोग के पक्ष में है। जनता सहनशीलता को इतना हाथ से दे चुकी थी कि सहयोग के पक्ष में बोलने वालों को वह सुनना ही न चाहती थी। पण्डित मदन-मोहन मालवीय जैसे नेता को किसी ने न सुना। कांग्रेस की बैठक के पूर्व यह कहा और समझा जाता था कि बङ्गाल में कौंसिलों का बायकाट स्वीकार न हो सकेगा, परन्तु जब समय आया तो मालूम हुआ कि असहयोग के

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शस्त्र चलाने के लिये बंगाल किसी अन्य प्रान्त से कम उद्यत नहीं है। ***

महात्मा गांधी के विजय का कारण क्या था? यह कि कोई राष्ट्रीय दल का नेता असहयोग के सिद्धान्त से इन्कार न करता था। जब उन्होंने सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया तो उनसे प्रश्न होता था कि इस सिद्धान्त को कार्य्य में कैसे लाओगे? इसका वह कोई उत्तर न दे सके थे। महात्मा गांधी के प्रोग्राम के अतिरिक्त असहयोग के सम्बन्ध में यदि कोई विशेष बात पेश की गई है तो वह विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार है, परन्तु हम जानते हैं हमारे देश की वर्त्तमान अवस्था में यह असम्भव है और जिस हद्द तक हम इस पर कार्य्य कर सके हैं वह स्वदेशी के अन्तर्गत है। इस प्रकार कोई भी राष्ट्रीय नेता महात्मा गांधी के प्रोग्राम को उन्नत न कर सका था और इसमें सन्देह भी नहीं कि देश इस समय महात्मा गांधी के प्रोग्राम को कार्य्य में परिणत कर सके अथवा न कर सके परन्तु है यही एकमात्र प्रोगाम जिस पर चलकर हम स्वराज्य की योग्यता दर्शा सके हैं। यदि हम न्याय को अपने हाथ में नहीं ले सके और संसार को इस बात का प्रमाण नहीं दे सके कि हमारे देश निवासी हमारी अपेक्षा विदेशियों को अधिक न्यायशील नहीं समझते और उनके न्याय पर अधिक विश्वास नहीं रखते तो हम स्वराज्य के अधिकारी कैसे हैं? यदि हमारे वकील देश को सङ्कट से निकालने के लिये कुछ काल के लिये धन कमाने के कार्य्य को तिलाञ्जली नहीं दे सके तो हम स्वराज्य के अधिकारी कैसे हैं? यदि हम अपने बच्चों की शिक्षा को अपने हाथ में लेने की योग्यता नहीं रखते तो हम स्वराज्य के अधिकारी कैसे हैं? और यदि कौंसलों को बायकाट करके संसार को यह नहीं दर्शा सके कि हम देश की पीड़ा और आपत्ति के निवारणार्थ एक मन और एक विचार के हो सके हैं तो हम स्वराज्य के अधिकारी कैसे हैं?

लोगों ने महात्मा गान्धी से आशङ्का की कि आप का असहयोग का प्रोग्राम चलेगा नहीं। उन्होंने उत्तर दिया मुझे क्या अगर भारतीय प्रजा असहयोग के इस प्रोग्राम पर कार्य्य नहीं कर सकती तो इसे स्वराज्य भी नहीं मिल सकता। स्वराज्य कोई बच्चों का खेल नहीं, इसके लिये तो असीम त्याग करना पड़ेगा। पढ़ो संसार के इतिहास को और देखो कि भिन्न २ जातियों ने अपनी जातीयता और स्वतन्त्रता को स्थिर रखने के लिये कितना त्याग किया है। अंगरेज़ जाति को ही ले लो। जर्मन आक्रमण के समय उनकी स्वाधीनता ख़तरे में थी। इसकी रक्षा के लिये लाखों लड़कों ने अपने प्राणों को न्योछावर कर दिया, रक्त जल की भान्ति बहाया गया, करोड़ों और अरबों रुपये व्यय किये गये। कौनसा कष्ट था जो अंगरेज़ों ने सहन नहीं किया? कौनसा अंगरेज है जिसके परिवार का एक या अधिक पुरुष इस युद्धरूपी-यज्ञ में स्वाहा नहीं हुए। अंगरेज़ों ने यह सब कुछ किया तब कहीं जाकर इन्हें विजय प्राप्त हुई और स्वदेश की स्वाधीनता को सुरक्षित रख सके। कौन है जो महात्मा गान्धी के इस कथन की सत्यता से इन्कार कर सके? भारत यदि चाहता है कि इसकी गणना स्वतन्त्र जातियों में हो तो इसे इस बात का प्रमाण देना होगा कि वह स्वतन्त्रता का अधिकारी है। महात्मा गान्धी के प्रोग्राम की अभी तो प्रथम अवस्था आई है। इस पर ही भारतीय साहसहीन हो रहे हैं तो आगेचल कर वे क्या करेंगे? आगामी अवस्थाओं में तो बहुत कष्ट होगा। संसार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में Law of Suffering प्रसिद्ध है। व्यक्ति क्या और जाति क्या जिसने तप किया, कष्ट उठाया उसने फल पाया। जातियों का उत्थान और स्वाधीनता कोई टैनिस का खेल नहीं। यह वीरों का क्षेत्र है। इसमें वही उतर सकते हैं जो सिर को हथेली पर रक्खे हों कायरों का यहां कोई काम नहीं।

***

कांग्रेस ने यह निश्चय कर दिया कि भारत अब स्वराज्य प्राप्ति के लिये असहयोग का शस्त्र हाथ में लेगा, परिणाम अच्छा हो या बुरा परन्तु अंगरेज़ी के शब्दों में The die is cast जो भाग्य में लिखा है हो जायगा और भाग्य का निश्चय हमारे कर्मों ने करना है। भारत की महती राष्ट्र-सभा ने इसके भाग्य का निश्चय कर दिया। लार्ड चेमस्फोर्ड ने असहयोग को Most foolish of all foolish schemes बताया था। देश ने इसका जवाब यह दिया कि इसे अपना लिया। अब यह बुद्धि से गिरी हुई संस्था केवल महात्मा गान्धी की नहीं प्रत्युत सारे भारत की है। इसके बुरे भले के लिये सारे देश का उत्तरदातृत्व है।

भय था कि असहयोग का प्रस्ताव स्वीकार होने से कांग्रेस दल में फूट हो जावेगी। यद्यपि अभी तक वह भय दूर नहीं हुआ तथापि अब भय इतना नहीं रहा। भारत माता के सुपुत्रों ने इस समय अपने विचारों को माता के हित पर न्यौछावर कर दिया है। वह जन जो कौंसलों में जाने के बड़े पक्षपाती थे उन्होंने भी कांग्रेस के निश्चय को शिरोधार्य मान कर कौंसिलों में जाने का विचार छोड़ दिया है। बङ्गाल के राष्ट्रीय दल के सज्जनों ने मिस्टर चक्रवर्ती और मिस्टर दास के नेतृत्व में और महाराष्ट्र की कांग्रेस डैमोक्रेटिक पार्टी ने कांग्रेस के निश्चय के सामने सिर झुका दिया है और उन्होंने आघोषित कर दिया है कि वे कौंसिलों में न जायेंगे। इसी तरह प्रत्येक प्रांत से कौंसलों के उमीदवारों के घोषणापत्र प्रकाशित हो रहे हैं कि वे कांग्रेस के निश्चय के पश्चात् कौंसिलों में जाना अपना धर्म नहीं समझते।

असहयोग को सफल बनाने के लिये कौंसिलों में जाना अच्छा है या बाहर रहना यह एक विवादास्पद विषय है। दोनों पक्षों में गुण और अवगुण हैं और यह निश्चय करना कठिन है कि दोनों में से किसमें देशका हित है। कम से कम मेरा मास्तिष्क यह नहीं कहता कि कौंसलों में जाकर असहयोग नहीं हो सकता। इसलिये मैं इन महानुभावों को भी देश भक्त समझता हूं, जो असहयोग के उद्देश से कौंसिलों में जाते हैं स्मरण रहे कि असहयोग भी स्वयं एक साधन है उद्देश तो स्वराज्य प्राप्ति है। प्रत्येक पुरुष जो भारत को स्वराज्य की ओर एक पग ले जाना चाहता है वह हमारे धन्यवाद का पात्र है चाहे वह कौंसल के अन्दर हो चाहे बाहर।

परन्तु Uniformity अर्थात् समानता के विचार से मैं इस बात के पक्ष में हूं कि किसी देशभक्त भारतीय को अब कौंसिलों में न जाना चाहिये। इस समय यह दर्शाने की आवश्यकता है कि हम एक हैं न कि यह कि कांग्रेस के प्रस्ताव की भी हमारे लिये कोई binding force नहीं। इससे हमारे देश की अति हानि होगी और भविष्यत् के लिये एक हानिकारक दृष्टान्त स्थिर होजायगा। आज तो भारत के बहुत से प्रसिद्ध नेता कौंसिलों में जाने के पक्ष में हैं और जाने में लाभ भी है, परन्तु यदि कांग्रेस के प्रस्ताव हमारे लिये माननीय ही नहीं तो कल को कोई भी प्रस्ताव किसी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के लिये मान्य न होगा। इस तरह कांग्रेस एक निरर्थक शक्तिहीन संस्था बन जायेगी।

***

कौंसिलों के बायकाट के अतिरिक्त स्कूलों और न्यायालयों का बायकाट भी है परन्तु इसकी ओर अभीतक अधिक दृष्टि नहीं हुई। गुजरात प्रदेश में जिसे महात्मा गान्धी के कार्य का गढ़ समझना चाहिये, दो प्रोफ़ैसरों ने पद का त्याग कर दिया है। कुछ विद्यार्थियों ने कालिज और स्कूल छोड़ दिये हैं। जातीय महाविद्यालय और जातीय विश्वविद्यालय स्थापित करने का भी वहां यत्न हो रहा है। गुजरात के बाहर प्रोग्राम के इस विभाग पर कोई कार्य्य नहीं हुआ। इसका एक कारण तो यह है कि भारत में ऐसे शिक्षाणलयों का अभाव है कि जिनका किसी युनिवर्सिटी से सम्बन्ध न हो। इसलिये यदि विद्यार्थी वर्तमान विद्यालयों और महा विद्यालयों को त्याग करें तो कहां जावें। दूसरा कारण यह है कि कौंसिलों के निर्वाचन में केवल एक दो मास हैं, असहयोग वादी यह समझते हैं कि इस समय तो सारा बल कौंसिलों के बहिष्कार पर लगालो दिसम्बर के पश्चात् सरकार के स्कूलों और न्यायालयों का बहिष्कार कर लेंगे।

तो क्या असहयोग सफल न होगा मैंने एक क्षण के लिये भी नहीं सोचा कि असहयोग को सफलता न होगी। मेरा दृढ़ निश्चय है और मेरा आत्मा साक्षी देता है कि असहयोग को अवश्यमेव सफलता प्राप्त होगी। प्रोग्राम मेरे लिय परिवर्तनशील है। सम्भव है कि नागपुर कांग्रेस तक इसमें परिवर्तन हो जावे। समय २ के अनुकूल प्रोग्राम बनता रहेगा परन्तु असहयोग has come to stay अब यह न जायगा। यह एक view point अर्थात् दृष्टि बिन्दु है। भारतीय प्रजा का दृष्टि बिन्दु बदल चुका है अब वह अपने अधिकार लेने पर उतारू हो रही हैं। यदि सरकार इनके अधिकार देने को उद्यत न हो अथवा उनकी आवाज़ को न सुने तो वह सुनाने के लिये अर्जी पत्री न भेजेगें प्रत्युत सत्याग्रह और असहयोग का शस्त्र धारण करेंगे। देहली सरकार का उदाहरण हमारे सन्मुख है। उसने वहां के लोगों पर एक लाख से ऊपर तावान लगा दिया। टैक्स सर्वथा अनुचित था। लोगों ने निश्चय किया कि हम यह टैक्स न देगें और उन्होंने आघोषित कर दिया कि सरकार यदि चाहे तो उनका माल असबाब कुर्क करा ले परन्तु वह अपने हाथ से एक पाई न देंगे। हकीम अजमलखां और डाक्टर अन्सारी जैसे पुरुष इस movement के नेता बने। बस फिर क्या था? मामला ढीला पड़ चुका है और मुझे पूर्ण विश्वास है कि देहली निवासियों से यह टैक्स वसूल न किया जायगा।

***

असहयोग केवल एक प्रकार से असफल होसकता है वह इस तरह कि गवर्नमैण्ट की नीति सर्वथा बदल जाय। इसका दृष्टीविन्दु विदेशी न रहे प्रत्युत जातीय हो जाय। राज्य कर्मचारी अपने को प्रजा के स्वामी नहीं प्रत्युत सेवक समझें। उनकी इच्छानुसार कार्य करें इन्हें किसी प्रकार की शिकायत का अवसर न दें। प्रजाको यह भासने लगे कि विदेशी नहीं प्रत्युत अपना राज्य है। परन्तु इस प्रकार भी असहयोग की सफलता ही समझिये क्योंकि असहयोग भी इसी परिणाम के लिये था।

गवर्नमैण्ट की ऐसी नीति होती नज़र नहीं आती जिससे असहयोग की कोई आवश्यकता न रहे। हमारे शासक अभीतक शक्ति के मद में मस्त हैं। दो उदाहरण हमारे सामने हैं। मार्शलला के उन कर्मचारियों को जिन्होंने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पंजाब की प्रजा पर अनगणित और घृणित अत्याचार किये थे, उन्हें गवर्नमैण्ट ने क्या दण्ड दिया। यह कि इन्हें ताड़ना कर दी गई। क्या भारतीय प्रजा इस ताड़ना मात्र से संतुष्ट हो सकती है? क्या गवर्मैण्ट के इस कार्य से लोगों का विश्वास इसके न्याय पर शिथिल न हो जायगा? और क्या इनका यह विचार न होगा कि सरकार हमारी इच्छा की कोई परवाह नहीं करती? सरकार स्वयं तो न्याय नहीं करती इससे न्याय प्राप्त करने का कोई साधन सोचना चाहिये।

दूसरा उदाहरण यह है कि माननीय मिस्टर शास्त्री ने कौंसिल में प्रस्ताव किया कि मार्शल ला के अपराधी राज्य कर्मचारियों को गवर्नमैण्ट की ओर से दण्ड दिया जाय परन्तु वाइसराय ने इस प्रस्ताव को कौंसल में पेश होने की आज्ञा न दी। वाइसराय ने अपने अधिकार का दुरुपयोग करके असहयोग को बहुत लाभ पहुंचाया। लोगों को मालूम हो गया किस प्रकार अधिकारों का अनुचित उपयोग भी हो सकता है।

मेरा विश्वास है कि गवर्नमैण्ट की वर्तमान नीति में तो असहयोग बढ़ता ही जायगा। देश की अवस्थायें इसके अनुकूल हैं और संसार की अवस्थायें भी इसके अनुकूल हैं। असहयोग क्या है? देश के अन्दर एक नये आत्मा का प्रवेश है वह सब जन जिनको देश के लिये प्रेम है जिन्होंने अपने हृदय मन्दिर में मातृभूमि की मूर्ति को स्थापित कर रक्खा है जो इसे अपना एक इष्टदेव समझते हैं, जिनकी इच्छा है कि इन की माता की गणना भी स्वतन्त्र देशों में हो जो चाहते हैं कि इनकी मातृभूमि जो किसी समय समस्त देशों की सिरताज थी फिर से उसी उच्च पद को प्राप्त होवे। उनको इसका हृदय से स्वागत करना चाहिये। यह अवश्य देश की काया को बदल देगा। प्रत्येक भारतीय का कर्तव्य है कि इसके लिये अनुकूल अवस्थायें उपस्थित करे।

फिर वह देखेगा कि उसका देश किस उच्च अवस्था को प्राप्त होता है॥

पहिचान।

(गल्प)

ले०—मंजुलिका।

(१)

लिखित मपि ललाटे प्रोञ्छितुंकः समर्थः।

माधुरी अभी चार वर्ष की अबोध बालिका ही थी कि उसकी सगाई की तैय्यारियां हो गई। पिता की अत्यन्त अनिच्छा थी कि बालिका का भाग्य अभी से बांध दिया जाय किन्तु बूढ़ी २ नानी दादियों के सन्मुख उनकी पर्वाह न की गई।

माधुरी की बुआ का विवाह था तमाम सम्बन्धिजन उपस्थित थे। बिहारी लाल एक दूर के बड़े धनाढ्य सम्बन्धी थे उनकी स्त्री माधुरी के मधुर रूप लावण्य पर मुग्ध हो रही थी उनकी प्रबल इच्छा थी कि उनके लड़ैते सात वर्ष के पुत्र की वह वधू बने। वे लखपती साहूकार थे फिर भला इच्छा पूर्त्ति में क्या देर थी। माधुरी की दादी बड़ी प्रसन्न हुई वाग्दान हो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी

गया, सोने में सुहागा मिल गया, बिहारीलाल ने बड़ी धूम धाम की, माधुरी के लिये तमाम आभूषण आये खिलौने आये और भावी सास, श्वसुर उसे बड़े चाव से गोद में लेने लगे किन्तु वह चपल बालिका अपनी आगामी सास की सूरत देख दूर भाग जाती।

माधुरी के पिता महाबीर प्रसाद ने बिहारीलाल से वचन लिया कि वे रूपकिशोर की पढ़ाई का सुप्रबन्ध करें ऐसा न हो कि अमीरों के बेटों की भांति वह बिगड़ जाय और मूर्ख रहे। तिस पर भावी समधिन ने बड़ी सारी नथ हिला २ कर अंगूठियों से लदी उंगलियां नचा २ कर कहा कि क्या मेरे बच्चे के लिये खाने की कमी है, क्या नौकरी करानी है जो पढ़ावें अभी तो बच्चा है राम बनाये रक्खें खेलने खाने के दिन हैं जीता रहे बहुत पढ़ लेगा।

दिवस जात नहिं लागहिंबारा। आठ दस वर्ष बीत गये बूढ़े बूढ़ियां जीवनलीला समाप्त कर चलते बने। चलायमान संसार ने कितने नवीन रूप धारण कर लिये किन्तु माधुरी की भावी सास में तिलमात्र भी परिवर्तन न हुवा, हां दो कन्याएं बेशक उन्होंने प्रसव कीं।

दो वर्षों से वे विवाह के लिये धरती सिर पर उठाये हैं किन्तु महाबीर प्रसाद टस से मस नहीं करते। संसार की आंखों में माधुरी चाहे पूर्णाङ्ग युवती विवाह योग्य कन्या हो किन्तु पिता की दृष्टि में माधुरी अभिनव विकसित कोमल कली की भांति मंजु थी सुतरां वे नहीं चाहते थे कि नव मल्लिका माधुरी अभी से मसल डाली जाय। उन्होंने जिस प्रकार कन्या को शिक्षा दी थी जिस सौजन्यता से उसका लालन पालन किया था उनका हृदय उसे तनिक भी विछोह करने को नहीं चाहता था। उन्होंने माधुरी को अबकी मैट्रिक की और शास्त्री की परीक्षा दिलाई थी अब वे उसे कालिज की शिक्षा दिलाने की तय्यारी करते थे। वे इस सगाई के बन्धन से ऐसे चिन्ताकुल और क्रुद्ध रहते थे कि बिलकुल दुर्बल हो गये थे किन्तु भाग्य के आगे सिर झुका दिया, सगाई तोड़ने की शक्ति नहीं थी।

बिहारीलाल यद्यपि लखपती थे तथापि थे कृपणता के साक्षात् अवतार। बनियों की वह पुरानी सभी आदतें विद्यमान थीं केवल एक ही तिनके का सहारा था, वे बात के धनी थे। महावीर प्रसाद से अपने पुत्र के पढ़ाने का वचन दे चुकने पर और मनमें पुत्र को बी. ए. पास करा सरकार से बड़ी २ पदवी दिलाने की आकांक्षा रक्खे हुवे–भरसक प्रयत्न से पढ़ाने का प्रबन्ध किया। उधर माता का दुलारा और माता की भरपूर बाधाओं को झेलता हुवा बिचारा रूप भी बड़ी कठिनता से मैट्रिक पास कर एफ. ए में दाखिल हुवा। देवनागरी का उसे काला अक्षर भैंस बराबर।

वही सास जो माधुरी के रूप पर लट्टू हो कर बहू बनाने को उद्विग्न हो रही थी गालियों से बात करती था। नित्य उसके मां बाप को कोसना, बहू को गन्दी २ गालियां देना, अपने पति को पुत्र के इस प्रकार पढ़ाने में व्यस्त देख कर देवासुर संग्राम मचाये रहना उनका नैमित्तिक कर्म था। एक दिन हठ पड़ गई कि "सगाई छोड़ दो। मैं चाहूं तो इसी दम बीसियों व्याह बेटे के कर लूं, मुझे नहीं चाहिये अरबी फ़ारसी पढ़ी हुई, उसका बाप उसी की कमाई खाता होगा, नौ नाक से नंगी कर रक्खी है जाने सब गहना पत्ता बेंच खाया। मैं अब यह बिलकुल न मानूंगी यातो इसी महीने में व्याह कराओ नहीं तो सगाई छोड़ो। अभी कल ही ल० झण्डू-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मल की कोठी वालों की मां खुशामद करती थीं अपनी पोती साथ लाई थीं। पहिने ओढ़े ग्वालिन जैसी ऐसी प्यारी लगती थी, ऐसे २ गीत गाती थी, नाचती थी, बड़ी चटक, यह इतनी बड़ी चौलठा आवेंगी तो दुनियां थूकेगी। मुझे तो इस निगोड़े ने ऐसा फांसा, कहीं का न रक्खा। मैं तो आज उन्हें बुलवाऊंगी ठीक करूंगी कुछ अरमान भी निकलेगा इस मदमुक्खे के पास क्या धरा है। सच्ची मानों चोरी ओरी नहीं हुई गहना सब बेंच खाया"।

बिहारीलाल जोरू के डर से कुछ न बोले उन पर मानों बज्रपात हुवा उल्टे पैरों चल पड़े।

(२)

विधि रहो बलवानितिमे मतिः।

महाबीर प्रसाद किं कर्तव्य विमूढ़ हो रहे थे। यद्यपि वे देवकन्या तुल्या उस अनुपमेय रत्न को इस प्रकार फेंकने से हृदय से दुःखित थे किन्तु कोई चारा न चला शुभ लग्न शुभ महूर्त में विवाह हो गया। अपने भरसक इन्होंने बरातियों को भरपूर आदर सन्मान किया किन्तु वे लड़ते जूझते ही रहे। चोरी गया हुवा गहना सारा भर दिया तथा अन्य कई हज़ार का सुंदर उपयोगी सामान दिया किन्तु सासदेवी को कुछ पसन्द न आया वे मू फुलाकर हाथ नचा २ कर सबको कहती रहीं कि ऐसा रत्न जैसा लड़का कौड़ियों के मोल भी न गया।

कृपण बिहारीलाल ने ब्याह में मनमाना धन लुटाया नाच तमाशे आतशबाजी किसी की कमी न थी। दिन रात खुशामदी दोस्तोंका जमघट जुड़ा हुवा था बढ़िया मिठाइयों की दावतें उड़ रहीं थीं। उनके पड़ोसी मि० वर्मा ने कहा लालाजी इतनी फ़जूल ख़र्ची से क्या लाभ? नाच तमाशे से तो किसी उत्तम स्थान पर दान देते तो उपकार होता। लालाजी बिदा हुवे, ब्याह शादियों के मौके पर भी तुम आर्य्य समाजियों को यही सूझता है, मैं ऐसा बेवकूफ़ नहीं जो चार सम्बन्धियों के बीच में ज़रासा के वास्ते नाक कटाऊं। आखिर लोग बाग आवें तो क्या देखें किस तरह दिल बहलाव हो?

इधर गृह में झुंड के झुंड रमणियां छम २ करती हुई गोटे किनारी के चमकते हुए रंग विरंगे कपड़ों और सोने चांदी से लदी हुई अपनी अलबेली छटा दिखा रहीं थीं। एक ओर ढोल मंजीरे की झंकार और नारियों का कोकिल कंठ दूसरी ओर बालक बालिकाओं का कल २ शब्द आकाश को गूंजे देता था कान पड़ी आवाज़ सुनाई न देती थी। कहीं फैशनेबिल नवीन से नवीन वस्त्राभूषणों की समालोचना हो रही थी तो किन्हीं यौवन मदमाती विहार प्रिय नवेलियों का एक निराले प्रकोष्ठ में एक दूसरे से हंसी ठठोली करतीं फुस २ कर रहीं थीं। कतिपय प्रमदा स्त्रियां खाना खिलाने के उपचार में व्यग्र थीं। किन्तु प्रौढ़ा स्त्रियों को विधाता ने एक ही कार्य्य सौंपा है वे चारों ओर से एकत्रित हो होकर नववधू की भरपेट समालोचना करती थीं।

नववधू विचारी गहनों से लदी एक लम्बा घूंघट निकाले अवनत शिर किये सब चुपचाप सुनती थीं इसके सिवाय अन्य और उपाय भी क्या। 'मौन ही दुर्बलों का शस्त्र है'। कभी २ उसकी समवयस्का नन्हें तथा कन्याएं उससे बोलने के लिये आग्रह करतीं कभी आप ही आप आये हुवों की पहिचान तथा नाम इत्यादि बतातीं। किन्तु 'हीरे की परख जौहरी जाने' पड़ौस में वकील वर्मा साहब की स्त्री सुकुमारी से उसकी कुछ बातचीत हुई वह माधुरी को देखते ही उसके गुण शील पर मुग्ध हो रही थी। स्वयं भी वह सुगुण युक्त सुशिक्षिता

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar, Collection. Digitized by eGangotri Foundation

और हंसमुख था गृहणी से अब तक इसकी अच्छी बनी हुई थी। यद्यपि इसके घर का रहन सहन बड़ी स्वतन्त्रता का और पक्के आर्य्यों का था। माधुरी की सास जब कभी आवश्यक्ता होती अपने बच्चों के कपड़े इत्यादि इससे सिलाती। यह भी इनके कर्कश स्वभाव से सदा समव्यवहार करती और तुरन्त कार्य्य कर देती।

आज उसी सुकुमारी और माधुरी का प्रथम सौख्य स्थापित हो गया।

(३)

अवश्यं भाविनो भावा भवन्ति महतामपि।

आमोद प्रमोद का दिन बीत गया। माधुरी को आये कितने मास व्यतीत होगये। इस बीच में उसे मायके से कई बुलावे आये परन्तु सास ने नहीं भेजा। वह अब प्रफुल्ल बदना माधुर्यता युक्त माधुरी नहीं रही। दिन प्रति दिन उसका तिरस्कार बढ़ने लगा। उससे उसके पिता की दी हुई पुस्तकें इत्यादि सब ले ली गईं। पति देवता यद्यपि माधुरी के रूपगुण पर मुग्ध थे तथापि माता के सामने बिल्ली बने रहते थे। इतनी शक्ति कहां कि इस दावानल से अपनी आर्य्या के स्वत्त्वों की रक्षा कर सकें? एक आध बात में दखल देते ही उनको ऐसी फटकार पड़ी और माधुरी को वह नसीहत मिली कि उसका रोम २ कांप उठा। वे फिर पढ़ने के लिये बोर्डिंग में दाखिल कर दिये गये। फिर कभी उसे सम्मिलन का अवसर ही नहीं प्राप्त हुआ। माधुरी को पत्र लिखने की आज्ञा नहीं थी। सोने जागने नहाने धोने किसी भी कार्य्य में उसकी इच्छा न चलती। एक तो सवेरे से शाम तक वह एक सजीव मशीन की भांति चलाई जाती तिस पर कटुवाणों की वर्षा। एकमात्र शांतिदायिनी सहचरी सुकुमारी का मिलन गृहणी के प्रकोप से आगे ही बंद हो गया था। क्योंकि वह माधुरी के ऊपर किये गये अत्याचारों पर टीका टिप्पणी कर देती थी। एक वार उसने माधुरी को पिता के पास यह सब लिखने की सलाह दी किन्तु वह उनका दिल दुखाने को सहमत न हुई। कभी २ खिड़की में खड़ी होकर बात करना या एक दूसरे को पत्र भेज देना भी अब माधुरी को दुराचारिणी कह २ कर बंद करा दिया गया। सुकुमारी को भी कितने दोष लगाये गये।

इतने ही से विधाता ने दुःखिनी माधुरी को नहीं छोड़ा। समयान्तर में गृहणी ने पुत्र प्रसव किया। फिर क्या था उनकी और भी चढ़ बजी। वे पलंग से नीचे पैर नहीं रखने की और नित्य रोगी बन गईं। नौकर का वधू के आगमन से घर में आना बंद था। आवश्यक्ता भी क्या थी, माधुरी है किस वास्ते?

आज तीन चार महीने से माधुरी मन ही मन बड़ी चिन्तित और उदास है किन्तु किस से कहे, कौन उसकी पूंछा करता? उसे माता के रुग्ण होने की खबर मिली थी फिर कुछ पता न लगा। लगे भी कैसे कौन कहे? पति देवता कुसंग में फंस गये, कभी सुध न ली। श्वशुर महाराज बात भी नहीं पूंछते और पर्दे के बड़े प्रेमी हैं।

कई दिनों से घर में पुत्र के नामकरण के कारण महोत्सव मनाया जारहा है। सब आमोद प्रमोद में व्यस्त हैं। उत्सव में सुकुमारी भी आई किन्तु कार्य्य-व्यस्त होने के कारण कोई बात न हुई और यदि कुछ कहते कोई देखले तो माधुरी असीम डर से तुरन्त कांप जाती। उत्तर देने का साहस न था। इस बीच में माधुरी के मायके की एक जान पहचान की नायन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बड़ा दुःख दिखाकर बोली--"बिचारी की मां बड़ी अच्छी थी, जब हम गये कभी खाली हाथ नहीं लौटे, सब घर बिगड़ गया। बाबू जी बिचारे दुःख के मारे उस दिन से देखे नहीं गये कहां गये। बिटिया बिचारी नहीं गई। महतारी देखने को तरसती रही। दुःख से तो यह सूख कर कांटा हो रही है वह रूप रंग सब इतने ही दिन में बिला गया"। न मालूम माधुरी कहां खड़ी यह सुन रही थी। एक दम रोती २ पछाड़ खा कर गिर पड़ी। दुःख का आवेग रोके न रुका। इस बिच में सब स्त्रियां इकट्ठी होगई सुकुमारी उसे उठाने और सान्त्वता देने लग गई। कई अन्य उसका दुःख सुन आंसू बहाने लगीं। इतने में बादलों की घोर गर्जना सदृश शब्द करती हुई गृहणी ने बड़े कुपित स्वर से सबको ललकारा "कहां तो आज बच्चे का कारज कहां यह बदशगुन रोना संसार में एक न एक दिन मरना सबने है, आज की बात है तीन चार महीने मरे भी हो गये। मैंने कहा सुनकर रोवेगी क्या कहना है" बनावटी बातें कहीं। नायन को तो फौरन निकाल बाहर किया। बादल घिर रहे थे बूंदा बांदी शुरू थी स्त्रियां भी झट पट बहाना करके सब अपने २ घर खिसक गईं। सुकुमारी जाती नहीं दिखाई दी तो उसे कुवाच्य कहकर, बहू को बिगाड़ने आई है तुम दोनों की साठ गांठ है, पढ़ २ कर क़सबी बन २ कर बैठ जाओ, राम २ साक्षात् कलयुग विराजमान है, निकाल दिया। फिर क्या मैदान साफ़ था। माधुरी का हाथ घसीट कर सावन भादों की झड़ी बरसने लगी। लज्जाशीला माधुरी भी असह्य वेदना से पीड़ित थी अतः सह न सकी। उत्तर प्रत्युत्तर देने लगी। फिर तो क्या था। अग्नि ऐसी प्रज्वलित हुई कि माधुरी के केश खींचती हुई गृहणी ने उस शीतकाल की मेघाच्छन्न अंधियारी रात्रि में उसे निकाल बाहर कर दिया। बादलों की गड़गड़ाहट और मेघ के घोर गर्जन में उस दुखिया का क्रन्दन किसी ने नहीं सुना।

(४)

उत्साहवन्तः पुरुषा नाव सीदन्ति कर्मसु।

ओह! इस अन्धकारमय रजनी में पवित्र शोभायमान यमुना तट कैसा भयानक प्रतीत होता है। तिस पर यह श्मशान का पार्श्व तो मानों चारों ओर से खाने को दौड़ता है। कैसी भयंकर निशा है। उधर कालिन्दी का कलकल निनाद, उधर मेघों की घोर गर्जन, कहीं उल्लुवों का शब्द और गीदड़ों का मर्मभेदी चीत्कार, पत्तों की खड़खड़ाहट से ऐसा प्रतीत होता है मानों भूत, प्रेत, शाकिनी डाकिनी मानव-रक्त पिपासा से नाच रहे हों। घोर तम में हाथ से हाथ नहीं सूझता। हृदय की धड़कन धंसाये दे रही है। ऐसे समय में यहां कौन आया होगा? मृत्यु इच्छुक वा मृत्युजयी। साधु ऐसा सोचता२ दूर तक जमुना जल पर दृष्टिपात करने लगा कि एकाएक बिजली बड़ी वेग से चमकी। आशा में निराशा और निराशा में आशा संसार की प्रगति ही है। संन्यासी को निर्दिष्ट वस्तु दिख गई और वह धड़ाम से नदी में कूद पड़ा.....

बादल हट चुके थे। तारे कहीं २ तनिक २ टिमटिमा रहे थे। निशा देवी विदा होने की तैय्यारियां करने लगीं थीं कि सन्यासी नंग धड़ंग एक कोपीन बांधे पीठ पड़ गट्ठड़ लादे एक निस्तब्ध कोने में एक स्वच्छ कुटिया में प्रवेश कर गया। गठड़ी उतार साधू ने तुरन्त एक काठ की दीवट पर रक्खे हुवे दीपक को जलाया और समीप लाकर बड़ी उत्सुकता और चातुर्य से उसे खोला। प्रकाश में जो कुछ देखा तो आश्चर्य्य क्षोभ की सीमा न रही।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सामने एक बड़ा रमणीक स्थान है। दूर २ पर अनेकों कुटियां बनीं हुई हैं, स्वच्छ हरी २ घास पर गौऐं चर रही हैं, सुन्दर सुहावने वृक्षों पर पक्षी चहचहा रहे हैं, जगह २ जंगली लता गुल्में फैली हुई मन्द मधुर सुगन्ध युक्त फूलों की वर्षा कर रही हैं। सामने पतित पावनी जान्हवी गङ्गा बह रही हैं। दूर पर पर्वत श्रेणी की धुंधली आकृत दिखाई देरही है। यही है संन्यासी का सेवा आश्रम। कितने ही युवक साधु के पास अध्ययनार्थ आते हैं। कतिपय सेवाव्रत धारी यहां व्रत लेकर निवास करते, निराश्रय दीन दुःखियों की सेवा करते हैं। असहाय विद्यार्थी गण आश्रय पाते हैं। भूली भटकी आत्माओं को शान्ति मिलती है। कई युवक दिन में नगर में अध्ययनार्थ वा प्रचारार्थ चले जाते हैं, संध्या समय विश्राम इस आश्रम में लेते हैं। सन्यासी का सभी पर समान प्रेम है।

सन्ध्या समय एक युवक गङ्गा तट पर एक शिला खंड पर जल में पैर लटकाये हाथ पर गाल रक्खे एकाग्र चित्त से नदी को निहार रहा है। युवक के अभी युवापन के चिन्ह भी नहीं आये हैं। बड़ा कोमल दुर्बल प्रतीत होता है। उसका मुख कमल म्लान है। किसी मानसिक पीड़ा वा स्मृति से अति चिन्तित प्रतीत होता है। सन्यासी ने धीरे से कन्धे पर हाथ रखकर पूंछा "मधुर आज बड़े चिन्ता में मग्न हो, सन्ध्या काल व्यतीत हुवा चाहता है, सब अग्निहोत्रादि में लगे हुवे हैं और तुम यहां हो"? युवक ने संन्यासी के चरण छूकर विनीत भाव से कहा "मैं कल का भविष्य चिन्तन कर रहा था और और कुछ पूर्व स्मृति होगई थी। भगवान् आज आठ वर्ष से मुझे आपने आश्रय दिया है। इस अवसर में आप की महती कृपा और आप के पिता तुल्य स्नेह से लालायित होकर मैंने यथा शक्ति पठन पाठन किया और विश्वविद्यालय की उच्च परीक्षायें पास कीं। अब तक आपने उपाधि ग्रहण का मेरे बिना प्रगट हुये ही प्रबन्ध कर दिया था, किन्तु इस बार आप की आज्ञा है कि स्वयं प्रस्तुत होकर उपाधि पारितोषिक इत्यादि ग्रहण करूं। किस प्रकार कल प्रगट होने का साहस करूं यही चिन्ता है।

"मधुर आज ही क्या आठ वर्ष इस आश्रम में तुम्हें व्यतीत हुवे किन्तु निरन्तर चिन्ता विषाद और यूनीवर्सिटी की परीक्षाओं के क्लिष्ट परिश्रम से तुम दुर्बल होगये। इतनी वार उपदेश देने पर भी तुमने दृढ़ता धारण नहीं की। संसार में कितनी परीक्षाओं का समय आवेगा। कल तो अभी प्रथम ही सामान्य अवसर है। संसार के कार्य्य क्षेत्र में कितनी प्रचण्ड आंधियों का वेग ज्वलन्त अग्नि के जलते हुवे अंगारों के सदृश वाक वर्षा सहानुभूति रहित मित्रों का असहयोग और कठोर शत्रुओं का पैशाचिक व्यवहार का सामना करना होगा, नदी के तीक्ष्ण वहाव के आवेग को यदि सहार सकोगे तभी कुछ कर सकोगे। परमात्मा का चिंतन करो, सांसारिक गत बातों के चिन्तन से क्या लाभ? अन्य दीन दुःखियों को देखो। सेवा व्रत जो धारण किया है उसके लिये कटिबद्ध हो जाओ मन को दृढ़ करो, और संसार में बेधड़क विचरो, जगदीश्वर तुम्हारा कल्याण करेंगे। जाओ नित्यकर्म का समय हो गया। युवक-नतशिर धीरे २ चला गया। संन्यासी उसी शिला खंड पर बैठगया। मुख पर गम्भीरता थी, किन्तु विषाद की एक रेखा थी जो बहुत विलीन होगई। हाथ जोड़ ध्यानमग्न हो उच्च स्वर से कहा, प्रभो इस को दृढ़ता देने हारे आपही हो। आपकी सहायता से मृत्यु के ग्रास

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

से इसे मैंने बचाया था, संसार के वेग से उसकी रक्षा करो यह भक्त की प्रार्थना है।

(५)

सोत्साहस्यास्ति लोकेऽस्मिन्न किंचिदपि दुर्लभम्।

आज यूनीवर्सिटी हाल में खूब चहल पहल है। चपरासी गण इधर उधर दौड़रहे हैं। प्रबन्धकर्ता सजावट सफाई में अस्तव्यस्त हैं। उत्तीर्ण युवक गण शान से गौन हाथ में दबाए इधर उधर मित्रों से वार्तालाप करते ऐंठ रहे हैं। फिटनों की झनकार, मोटरों की भकभक और लैन्डों की टनटनाहट से कान गूंजने लगे। दर्शकगण भी धीरे २ दलों के दल उपास्थित होने लगे। कुछ एक युवतियां भी आकर बैठ गईं। धीरे २ विस्तृत हाल भर गया। इस वार अन्य वर्षों से अधिक भीड़ भाड़ दिखाई देती है। कई राजागण प्लैटफार्म पर उपस्थित है, बैण्ड बजने लगा और चारों ओर उत्सुकता से गर्दन बढ़ा २ लोग देखने लगे। दर्शकों में आज बड़ी उत्सुकता है। किसी छोटे से युवक ने बड़ी २ कई उपाधियें और पारितोषक पाये हैं, उन्हें लाट महोदय स्वयम् प्रदान करेंगे। धीरे २ समय निकट आगया। लाट साहब सभापतित्व पर विराजमान हो गये। इतने में दाहिने तरफ के द्वार से निकल कर एक संन्यासी और युवक ने हाल में प्रवेश किया। लाट महोदय ने उन्हें सिर झुकाया और वे प्लैटफार्म पर बैठा दिये गये। युवक मानों पत्थर की मूर्ति की भांति बैठा था।

लाट महोदय ने संन्यासी से कुछ परामर्श की, फिर कुछ कहने के हेतु खड़े हो गये, और युवक की ओर इंगित करके उसका कुछ थोड़ा सा वृत्तान्त उपास्थित सज्जनों को बताना चाहा।

इतने में सहसा भीड़ में से किसी ओर से दौड़ती हुई एक रमणी ने आकर युवक को यह कहते २ गले लगा लिया, "माधुरी तुम चाहे किसी भेष में कहीं पर हो, सुकुमारी नहीं भूल सक्ती। इतना साहस इतनी सफलता मैंने कितना अनुसन्धान किया...माधुरी निश्चेष्ट होकर भूमि पर गिर पड़ी और हाल में चारों ओर खलबली मच गयी।

देवी जोन।

लेखक—कुमार सुखदेव शर्मा।

'लौरैन' प्रदेश के 'डुमरिम' ग्राम में सन् १४१२ ई० में एक किसान के घर में 'जोन आफ आर्क' का जन्म हुआ था। जोन का पिता 'जोकोयेस आर्क' एक सामान्य कृषक था। उसकी माता इसाबेला बड़ी ही कर्त्तव्य निष्ठा तथा धर्म-परायणा स्त्री थी। यह ईसाइयों की प्रधान तीर्थ-भूमि 'रोम' से ही आई थी अतः इसे 'रोमी' की उपाधि प्राप्त थी। जोन के ग्रामवासी उसे जेहानेट (Jehnette) और फ्रांस का जन समूह जिहान (Jehanne) के नाम से पुकारता था। कई उसे कुमारी 'ला पुसेल' 'जोन आफ आर्क' और 'जियान डार्क' भी कहते थे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जोन के तीन भाई और एक बहिन थी। यह सब से छोटी थी। इसके परिवार का नाम 'आर्क' था। माता की गोद में ही जोन ने भगवान के चरणों में आत्मसमर्पण तथा देश वासियों के लिये जीवन दान करने का पाठ पढ़ा था। स्वदेश वासियों को विदेशी क्रूर सैनिकों से पीड़ित होते देख उसका दिल दुखने लगा। जोन स्वभाव से ही दयावती और कोमल हृदया थी अतः विदेशियों के अत्याचारों को देख उसके हृदय पर चोट लगती थी और वह सदा स्वतन्त्र होने के उपाय सोचा करती थी। उसमें दया तथा परसेवा की भी आदत थी। जब कभी उसे रोगी का पता लगता तो वह शीघ्र जा उसकी सेवा शुश्रूषा करती थी। अपने धर्म में तथा परमात्मा में उसकी अटल श्रद्धा थी। उसे एकान्त ही सदा पसन्द था। प्रकृति के अद्भुत दृश्यों को देख वह गदगद हो जाती थी। उसके माता पिता उसकी सांसारिक विषयों से उदासीनता देख उसके विवाह की चिन्ता में लगे। एक युवक ने, उसके पाने की इच्छा से अन्धा हो उस पर धर्म-विचारालय में इस आशय का अभियोग चलाया कि जोन विवाह करने की प्रतीज्ञा कर अब उसका पालन नहीं करती। जोन ने इसको मिथ्या सिद्ध कर दिया। बस उस दिन से देशसेवा का विचार और भी दृढ़ हो गया। किन्तु किसी महान् कार्य के समय विघ्न बाधाएं परीक्षा लेने के लिये उपस्थित हो ही जाती हैं। दुर्बल-चित्त व्यक्ति उसे देखकर डर जाते हैं, पर संयमी दृढ़-चित्त मनुष्य उनकी परवाह न करते हुये निर्दिष्ट पथ पर बढ़ते ही चले जाते हैं।

फ्रांस की अवस्था।

राजा पञ्चम हेनरी ने, जो कि इंग्लैंड का अधिपति था सन् १४१५ ई० में, फ्रांसीसियों को एगिन कोर्ट के युद्ध में हराया। दो साल बाद फिर 'नार्मेंडी' को जीता। फ्रांसीसी राजाओं में आत्म विद्रोह बढ़ता जाता था। एक पक्ष का नेता बर्गन्डी का राजा जोन था। वह मारा गया। उसके पुत्र फिलिप को बहुत क्रोध आया। उसने इसका बदला लेना चाहा। उसने स्वदेश और स्वजाति के स्वार्थ पर पदाघात कर अंग्रेजों के साथ मित्रता कर ली। फ्रांस के राजा चार्ल्स छठे ने अपने को अंग्रेजों से निर्बल समझ सन् १४१२ ई० में सन्धि कर ली। सन्धि के अनुसार फ्रांसीसी राजा की कन्या केथरिन के साथ इंग्लैंड नरेश का विवाह हो गया। फ्रांस नरेश के मरने पर वही उसका उत्तराधिकारी हुआ। उत्तर फ्रांस के बहुत से प्रदेश उसके आधीन हो गये। किन्तु राजकुमार डाफिन ने दक्षिण फ्रांस में सिर उठाया और पितृ-सिंहासन का दावागीर हुआ। इंग्लैण्ड नरेश ने युद्ध-यात्रा की, पर सन् १४२२ ई० में ही मर गया। उसके बाद ही राजा चार्लस भी मर गया। इसके बाद इंग्लैंडाधिपति का शिशु पुत्र हेनरी (छठा) इंगलैंड और फांस के सिंहासन पर अधिष्ठित हुआ। इसका चाचा, बेडफ़ोर्ड का राजा उसका अभिभावक होकर राज्य का शासन करने लगा। डफिन का सा दुर्बल चित्त राजा, दक्ष और चतुर बेडफोर्ड की शक्ति का सामना कब कर सकता था? फ्रांसीसी भी उसके पक्ष से हटने लगे। अधिकांश प्रदेशों ने अंग्रेजों का दासत्व स्वीकार कर लिया। एक इतिहास लेखक लाम टाईन फ्रांस की दशा वर्णन करते हुए लिखता है कि—"राजा ने देखा कि जनसाधारण में अपने को प्रजा कहने के लिये कोई नहीं और फरांसीसियों ने देखा कि उनका राजा कहलाने वाला कोई नहीं तथा उनके देश में अपना देश कहने के लिये कुछ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नहीं।" ऐसी दशा उपस्थित थी।

स्वर्गीय दूत का साक्षात्।

जोन सदा निर्जन बन में बैठकर करुणा हृदय से प्रार्थना किया करती थी—"क्या भगवान् हम पतित देश वासियों का उद्धार न करोगे? क्या इस दासत्व नरक से हमें न निकालोगे? क्या पापियों को दण्ड न दोगे? हे भगवान् क्या हमारे लिये मुक्तिदाता न भेजोगे?"

एक दिन इस प्रकार प्रार्थना करते हुए उसे देववाणी सुनाई पड़ी कि—"जोनत पवित्र चरित्र है, भगवान् पर भरोसा कर उस समय वह १४ वा १५ वर्ष की थी। एक बार फिर उसको यह देववाणी सुनाई पड़ी। इस घटना के बाद फिर दो स्वर्गीय दूत सशरीर दिखाई दिये। उन्होंने कहा "जोन, डफिन की सहायता के लिये युद्ध में प्रवृत्त हो और पतित देश का उद्धार कर।" जोन, विस्मित तथा भयभीत होकर बोली—"मैं अबला हूँ, मैं नहीं जानती कि युद्ध किस प्रकार किया जाता है।" दूत बोले—"कैथरिन् और मार्गरेट अवश्य तुम्हें सहायता देंगी।" इसके बाद भी उसे दूतों से साक्षात् हुआ और जब वह अन्तर्ध्यान होते तो जोन चिल्ला उठती—"मुझे भी अपने साथ ले चलो।"

जोन पिता के रोकने पर भी चचा के साथ दर्बार में भर्ती होने की प्रार्थना करने गई। उस की बहुत जगह परीक्षा ली गई और अंत में महासभा (Parliament) ने आज्ञा दे दी और राजा की ओर से यह घोषणा पत्र प्रकाशित हुआ कि—"फ्रांस को दासत्व से मुक्त करने के लिये राजा को सिंहासन पर अधिष्ठित करने के लिये कुमारी 'जोन आफ आर्क' ईश्वर के द्वारा आदिष्ट हुई है—यह बात वह स्वयं कहती है। मैंने स्वयम् इसकी गुप्त वा प्रकाश्यरूप में परीक्षा ली है। वह पुनीतचरित्रा, धर्मपरायणा, ईश्वर में निष्ठा सम्पन्न, तथा सरल हृदया, वीरा, और सत्यवादिनी है। महासभा ने भी उसकी परीक्षा कर उसे युद्ध में भेजने की आज्ञा दे दी है। मैं उसे युद्ध में भेजना चाहता हूं और उससे राज्य का अत्यन्त कल्याण होगा—यह विश्वास करता हूं।"

युद्ध यात्रा।

कई वीर योद्धा नीति निपुण जोन को युद्ध विद्या की शिक्षा देने लगे। थोड़े दिनों में ही वह युद्ध विद्या में चतुर हो सैनिक वेश धारण कर युद्ध भूमि में गई। सैनिकों के निराश हृदय ईश्वरीय दूत के आगमन से आशा युक्त हो गये। जोन ने पहिले चरित्र संशोधन की ओर ध्यान दिया और जुआ आदि बन्द कराया।

धार्मिक समाजें संस्थापित कर युद्ध भूमि को स्वर्ग भूमि बना दिया। सन् १४२८ में अंग्रेजों ने अरलिन्स के किले को जीत लिया। सन् १४२९ में जोन उसे जीतने गई। पहिले उसने पत्र लिखा कि बिना लड़ाई किये चले जाओ वा सन्धि कर लो। पर इसका उत्तर नकार से मिलने पर उसे चढ़ाई करनी पड़ी। ६ मई सन् १४२९ को जोन के सेनापतित्व में वह दुर्ग जीता गया। दूसरे दिन अंग्रेजों के एक और सुरक्षित दुर्ग पर आक्रमण किया गया। कई दिन तक घोर युद्ध होता रहा पर अंग्रेज न हारे। यह देख जोन दुर्ग में प्रवेश करने की इच्छा से एक सीढ़ी की सहायता से क़िले की दीवार पर चढ़ गई। इसी समय सहसा एक शत्रु ने उसकी ओर बाण चलाया जो कि उस की गर्दन को विध गया। वह दुर्ग की खाई में गिर पड़ी। अंग्रेजों ने उसे पकड़ने की कोशिश की पर फ्रांसीसी उसे पहिले ले आये।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यद्यपि जोन को अत्यन्त पीड़ा हो रही थी तो भी ईश्वर को तथा अपनी प्रतिज्ञा को स्मरण करके उठी और फिर युद्ध में तत्पर हो गई। फ्रांस के और नेता विजय की कोई आशा न देख उसे रणक्षेत्र परित्याग करने की सलाह देने लगे। पर वह वीराङ्गना युद्ध में तत्पर रही और अरलिन्स नगर के मुक्त होते ही नगर में आनन्द ध्वनि होने लगा। सारे फ्रांस निवासी जोन को हार्दिक बधाई देने लगे। परन्तु जोन ने भगवान की कृपा को ही सारी सफलता का कारण बतलाया। उसने नगर में ईश्वरोपासना का खूब प्रबन्ध किया।

उसके अनन्तर उसने जार्गो, बोगेंसी, पैटे आदि कई ग्राम जीते।

डफिन वा चार्लस का राज्याभिषेक।

डफिन का राज्याभिषेक रीम्स नगर में होना निश्चित हुआ। किन्तु रीम्स अभी तक शत्रुओं के हाथ में था। जोन ने इसकी कुछ परवाह न की और राजा को साथ ले बड़े समारोह से चल पड़ी। रास्ते में शत्रुओं के आधीन नगर भी इन की आधीनता स्वीकार करते रहे और रीम्स भी निर्विघ्न हाथ में आगया।

रविवार १७ जुलाई १४२९ ई० को राजा डफिन 'सप्तम चार्लस' के नाम से फ्रान्स के सिंहासन पर आरूढ़ हुआ। उसने प्रतिज्ञा की, कि राज्य में जिस से सुविचार और सुशासन की प्रतिष्ठा हो, ईसाई धर्म की मर्यादा रक्षित हो और प्रजा की सुख शान्ति जिसमें बढ़े, इस पर वह सदा ध्यान रक्खेगा। राज्याभिषेक हो चुकने पर जोन राजा चार्लस से बोली—"राजन्! जिसके शुभ आदेश से रीम्स नगर में आप के राज्याभिषेक का आयोजन किया गया है, आज उस मंगलमय परमेश्वर की इच्छा पूर्ण हुई। आज से आप यथा रीति राजपद पर अधिष्ठित हुए और फ्रांसीसी जाति सब विषयों में आप की आज्ञाधीन रहेगी"।

जोन का हारना।

राजा ने जोन की जन्मभूमि को राजकर से सर्वथा मुक्त कर दिया। अब जोन की इच्छा घर जाने को हुई पर राजा ने उसे पेरिस में से अंग्रेजों को निकालने का अनुरोध किया। वह राजा की आज्ञा को शिरोधार्य्य कर युद्ध की तैयारी करने लगी।

८ सितम्बर १४२९ को पेरिस पर आक्रमण हुआ। यह तिथि ईसाईयों का एक पर्व दिन था। अंग्रेज पहिले से ही सावधान बैठे थे। जोन उन्हें पराजित न कर सकी। जोन के सिपाही पीठ दिखाने लगे पर वह लड़ती रही। जोन मर न जावे इस भय से उसके साथी उसे रण-क्षेत्र से बलपूर्वक हटा ले गये।

इस युद्ध में पन्द्रह सौ योद्धा स्वर्ग यात्रा कर गये। इस भीषण नर हत्या के अपराध और जातीय पर्व दिन में पेरिस पर आक्रमण करके ईसाई धर्म की अवहेलना करने के लिये जोन पर अन्याय रूप से दोष लगाया गया था।

शत्रु के हाथ में।

उसने फिर कम्पियन नगर पर चढ़ाई की पर शत्रुओं से घेरी गई क्योंकि उसकी सेना भाग गई थी। जोन ने अपने आपको शत्रु पक्ष की सहायता देने वाले एक देश द्रोही फ्रांसीसी के हाथ में समर्पण कर दिया। इस देश द्रोही ने उसको ड्यक आफ बर्गंडी के प्रधान सेनापति कौंट लिग्नी के हाथ में अर्पण कर दिया। बहुतों का अनुमान है कि जोन के पक्षी कई एक सेना नायकों ने उसकी विमल-कीर्त्ति से जलकर उसे पकड़वा दिया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कारागार में जोन।

जोन १४३० की २३ मई को शत्रुओं के हाथ में पड़ी। सेनापति लिग्नी की देख रेख में इसे रक्खा गया। उसने इसी ड्यक आफ लक्जेमबर्ग के हाथ जोन को सौंपा। उस सहृदय ड्यूक ने उसे अपने अन्तःपुर में रक्खा और उसके साथ उत्तम वर्त्ताव किया। फिर वह रायन नगर के दुर्ग में लाई गई वहां उससे बहुत बुरा बर्त्ताव किया गया।

न्यायालय में विचार।

जोन को "शैतान की शिष्या" और "प्रचरित धर्म की विरुद्धाचारिणी कह कर विचार के लिये धर्म याचकों के हाथ में सौंपा गया। इन धर्म याचकों का मुखिया 'कचन' था। यह भी एक फ्रांसीसी था। अन्त में २९ मई १४३१ को यहां सुनाया गया—"कल धर्म द्वेषिता के अपराध में जोन का जीवित शरीर अग्नि कुण्ड में जला दिया जावेगा।

अग्नि कुण्ड में जोन।

३० मई को प्रातः ९ बजे जोन रायन नगर के एक पुराने बाजार में जहां वधस्थान निश्चित किया गया था—लाई गई। लकड़ियों के ढेर के मध्य एक बांस गड़ा हुआ था। जोन इस बांस के साथ बांधी गई। एक पुरोहित ने यथा रीति उपासना करके कहा—"जोन! जाओ शान्ति से इस लोक का त्याग करो। तुम स्वधर्म त्यागिनी हो अतः हम लोग तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकते। जोन ने कुछ देर परमेश्वर की आराधना की और उपस्थित जनता को लक्ष्य करके कहा—"आप लोग मेरी आत्मा के कल्याण के लिये भगवान् से प्रार्थना कीजिये"। उसने ऐसे आवेगा से यह शब्द कहे कि उसके शत्र भी आंसू न रोक सके। देश द्रोही कचन के निर्लज्ज नेत्रों से भी कई आंसू टपक पड़े। फिर घातक ने आग लगादी अग्नि से स्पर्श होते ही वह बोल उठी—"जिस-बाण को मैंने सुना था वह निश्चय ही भगवद्वाणी थी।"

मूहूर्त भर में विश्वध्वंशी अनलशिखा ने देव बाला के पुरातन शरीर को भस्मी भूत कर दिया।

फ्रांस की स्थिति।

जोन के मरते ही फ्रांसीसियों के घरेलू झगड़े खतम हो गये। विछिन्न देशवासियों के इस शुभ मिलन के फल से अंगरेज पेरिस नगर से निकाल दिये गये और सन् १४५३ ई० में तो बिलकुल ही फ्रांस से बाहर कर दिये गये।

परमात्मा वह दिन दिखावे जब हमारे भारत वर्ष में भी जोन जैसी सुपुत्रियां उत्पन्न हों जो जीवन को देकर भारत को फिर से सब का सिर ताज बनाने के लिये सर्वदा उद्यत रहें।

नोट—यद्यपि इस लेख में कोई विशेष नवीनता नहीं तथापि यह नव पंजाब के नवयुवकों की अर्थ भाषा की ओर रुचि बढ़ाने के हेतु प्रकाशित कर दिया है।

(सम्पादिका)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारी मंजूषा

१ निबन्ध रत्नमाला—लेखिका श्रीमती चन्दाबाई जैन, प्रकाशक कुमार देवेन्द्र प्रसाद प्रेम मन्दिर, आरा। मूल्य ॥) पृष्ठ संख्या १२०।

श्रीमती जी की दो पुस्तकों से हम पाठकों को परिचित कर चुके हैं यह कन्या विद्याव-लम्बिनी पुस्तक माला का तृतीय पुष्प है। इस में छोटे बड़े सत्रह निबन्धरूपी रत्न एक समुचित लड़ी में पिरो दिये गये हैं। पहिले यह कभी २ अन्य पत्रों में प्रकाशित होते रहे थे। स्वदेश सेवा, समय की उपयोगिता, कन्या महाविद्या-लय, अमृत संदेश बड़े ही उत्तम, शिक्षाप्रद और सुगठित हैं। प्रत्येक नारी के मनोगत करने योग्य हैं। केवल दो तीन निबन्धों—आत्मपदार्थ आत्मगुण इत्यादि—में कुछ जैन-धर्म-सम्बन्धी बातों का उल्लेख है जिनसे कि सब सहमत न हों। आदर्श महिलाएं शीर्षक लेख में यदि देवी जी सर्वमान्य देवियों के उदाहरण दे देतीं अथवा एक दो बात असम्भव सदृश निकाल देतीं तो समुचित था। अन्त में महात्मा गान्धी का सन्देश लिख कर बड़ी बुद्धिमत्ता की है। वास्त-व में उनका शिक्षाप्रद लेख नर नारी सभी का हित-साधक है। पुस्तक की बहिरंग सुन्द-रता इत्यादि का तो कहना ही क्या अति उत्तम है। स्त्री शिक्षा प्रेमीजनों को इसे शीघ्र ही अपनी स्त्रियों बहिनों तथा कन्याओं के भेंट कर अपनाना उचित है। श्रीमती जी का उत्साह सराहनीय है॥ मूल्य अधिक नहीं है।

२ पुष्पलता—ले० श्रीयुक्त सुदर्शन। हिन्दी ग्रन्थ रत्नाकर सीरीज का ४१ वां ग्रन्थ है। प्रकाशक हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर-कार्य्यालय, बम्बई, मूल्य १।) पृष्ठ संख्या १६८।

इसमें ग्यारह नैतिक शिक्षाप्रद गल्पों का संग्रह किया गया है। गल्पें रोचक हैं और विशेषता यह है कि अनुवादित नहीं हैं। भाषा सरल बोल चाल की है। लेखक महाशय के हाफ टोन चित्र के अतिरिक्त इस में छः और चित्र भी हैं। छपाई इत्यादि उत्तम है, किन्तु मूल्य कुछ अधिक है।

३ प्रवासी भारतवासी—लेखक "एक भारतीय", सरस्वती-सदन इन्दौर से प्राप्त। नवजीवन ग्रन्थमाला का प्रथम पुष्प। मूल्य ४।), पृष्ठ संख्या ७२८, उत्तम कपड़े की जिल्द। छपाई इत्यादि सब उत्तम है।

जिस परिश्रम तथा उद्योग से यह पुस्तक लिखी गई है उसे देखकर दो चार शब्द में इसकी समालोचना करना धृष्टता मात्र है। और वह केवल एक प्रकार का विज्ञापन देना मात्र होगा।

यह पुस्तक दो खण्डों में विभक्त है। आरम्भ में अनुक्रमणिका का ढंग उत्तम है। मा. ऐनड्यूज साहब और तोताराम जी की लिखी उत्तम भूमिकायें हैं। इसमें स्थान २ पर भारत हितै-षियों के आठ चित्र भी हैं। यह पुस्तक भारतीय प्रवास के प्रश्न पर पूर्णतया प्रकाश डालती है। और प्रत्येक घटना मनगढंत रीति से न देकर युक्ति तथा प्रमाणों द्वारा निश्चित रूप से दृढ़ की गई है। प्रथम खण्ड के पहिले परि-च्छेदों में प्राचीन काल में भारत के प्रवासों का वर्णन तथा उनका गौरव, धर्म, रीति,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नीति प्रमाणिक उपायों से सिद्ध किया है। यह दर्शाया है कि प्राचीन काल में जावा, सुमात्र, बाली, लम्बक, लक्षद्वीप, मालद्वीप इत्यादि भारतीय साम्राज्य में सम्मिलित थे। यहां पर आर्य्यों की प्राचीन सभ्यता के बिखरे हुए सूक्ष्म चिन्ह अबतक वर्तमान हैं। किन्तु काल की कुचक्रगति में भारत के अधःपतन से इसका भी एक २ करके विच्छेद होगया। फिर ग्रन्थकार महाशय ने यह बतलाया है कि आधुनिक काल में किस प्रकार बाहर जाना प्रारम्भ हुआ तथा किस प्रकार गोरों ने दासत्व का उच्छेद करके "कुलीप्रथा" नामक एक अन्य उपाय, जो कि केवल नाम का ही रुपान्तर समझिये, काले आदमियों से उपनिवेशों में कठिन कार्य्य कराने के लिये सोचा और अधःपतित भारत के अज्ञानी बुभुक्षा पीड़ित आदमी किस प्रकार सरकारी कानून द्वारा प्रतिवर्ष शर्तबन्द होकर वहां पहुंचाये जाने लगे। भारतीय आरकाटियों द्वारा बहका कर स्वदेश बाहर ले जाया जाना, धोखे से शर्त पर हस्ताक्षर कराया जाना, उनके धर्म, कर्म, आचार विचार का पूर्णतया नाश, स्त्रियों की पतित दशा का वर्णन, व्यभिचारयुक्त जीवन के मर्मभेदी उदाहरण का पाठ एक दम मानव हृदय तंत्री को तोड़ देते हैं। कौन देश का सपूत इन्हें पढ़कर अपने बान्धवों की दशा पर आंसू बहाये बिना रह सकेगा? तथा कौन नेता इन कष्टों को अपने अनुयाइयों पर होते देख बिना आन्दोलन मचाये, बिना सत्याग्रह किये चुप रह सक्ता है? सब प्रकार की हिन्दुस्तानियों की अपमान जनक बातों का वर्णन करने के पश्चात् सरकार की उनके प्रति जो attitude है वह दर्शाया है, तथा दक्षिण अफ्रीका में किस प्रकार कर इत्यादि लगे और हिन्दुस्तानियों पर अत्याचार हुये, और भारतीयों ने बोयर युद्ध में किस २ प्रकार इनकी सहायता की वह बड़ी सत्यता से दर्शाया है। दूसरे अध्याय में प्रथम मुख्य २ प्रवासी भारतीय नेतागणों का संक्षिप्त वर्णन अथवा कार्य्यक्रम स्वदेश-प्रेम, स्वार्थत्याग इत्यादि के उदाहरण दिये हैं। तत्पश्चात् सहृदय गौराङ्ग प्रेमीजनों के स्वार्थत्याग सहानुभूति इत्यादि का वर्णन है। फिर प्रवासियों की सामाजिक स्थिति कानूनी मामले भारतीयों के सत्याग्रह जो प्रायः समय २ पर समाचार पत्रों द्वारा जनता को पता लगते रहे हैं उनका वर्णन है। सरकार की भूलें तथा कर्तव्य की ओर भी ध्यान दिलाया गया है, फिर अन्त में प्रवासी भारतीयों के भविष्य पर कई प्रकार से प्रकाश डाला है।

दूसरे खण्ड को समाप्त कर परिशिष्ट, वहां की शिक्षा सम्बन्धी संख्या सूचक तथा अन्य आवश्यक चार्टस दिये हैं। अन्त में यह दर्शाते हुवे समाप्त की है कि स्वराज्य ही उन कष्टों को दूर करने की रामबाण औषधि है। पुस्तक बड़े मार्के की है और प्रत्येक भारतीय हिन्दीप्रेमी को अवश्य पढ़नी चाहिये। सरस्वती सदन से प्रकाशित पुस्तकों में से इसका दर्जा सब से ऊंचा है और हम इस पुस्तक के उत्तमता पर लेखक तथा प्रकाशक को अनेक बार बधाई देते हैं। न केवल हिन्दी में ही वरन और भी कितनी भी भाषाओं में यह अपने विषय की प्रमाणिक पुस्तक है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुसुमोद्यान।

उपहास और उसके आगे—

महात्मा गांधी अपने "यंग इन्डिया" पत्र में लिखते हैं कि असहयोग अब उपहास के युग से निकल चुका किन्तु यह अभी अनुभव करने वाली बात है कि उसे अभी रोका जायगा वा सन्मान दिया जायगा। किसी कार्य्यका उपहास उसके प्रतिरोध का एक सभ्य मार्ग है। वाइसराय ने जो—अनावश्यक सभ्यता रहित-उपहास-भाषण किया था वह भी इसका प्रतिवाद नहीं था। किन्तु अब परीक्षण का समय आगया है। किसी सभ्य देश में जब उपहास एक लहर को विनाश करने में असमर्थ हो जाता है तब वह लहर सन्मान पात्र बनने लग जाती है। प्रतिवादी उसे मान और समुचितवाद से व्यवहार करते हैं।

प्रत्येक दल एक दूसरे को अपने विचारों में बदलने का, युक्तियों तथा दलील द्वारा खींचने का प्रयत्न करता है।

इसमें सन्देह नहीं कि कौन्सिलों का बहिष्कार चाहे पूर्णतया न हो किन्तु बहुत विस्तृत रूप में होगा। विद्यार्थियों में असन्तोष फैल गया है। मुख्य २ संस्थायें किसी काल भी जातीय शिक्षणालय बन सक्ती हैं माननीय पण्डित मोतीलाल नेहरू का अपनी अद्वितीय वकालत को छोड़ देना मानो असहयोग को उपहास से सन्मान पथ पर लाना है। इससे प्रभावित होकर जनता को अपने व्यवहार को भली भांति सोचना होगा है। हमारी शासन पद्धति में अवश्यमेव कुछ बड़ी बुराई है, जिस से बाधित होकर पण्डित मोतीलाल यह त्याग करने पर विवश हुये। डाक्टरी वाले विद्यार्थियों ने अपनी अन्तिम परीक्षा में प्रवेश होने से इन्कार कर दिया है। सुतरां इन धारणाओं से असहयोग पागलपन की लहर नहीं कही जासक्ती। यातो शासक जनता की इच्छा के जो कि शुद्ध रूप से असहयोग द्वारा प्रगट की जारही है—आगे सिर झुकावे अथवा दबाव से उसे कुचलकर रोक दे। किसी गवर्नमेन्ट अधिपत्य से प्रयोग की गई प्रत्येक शक्ति प्रत्येक दशा में अनुचित प्रतिरोध नहीं कहाती। किसी व्यक्तिका उत्पात के साधनों के फैलाने के कारण अभियोजित होने पर प्रकट रूप से विचार किया जाना प्रतिरोध नहीं कहाता। प्रत्येक राज्य को उत्पात को बल से रोकने का अधिकार है किन्तु मौ० ज़फरअलीखां तथा पानीपत के दो मोलवियों के अभियोग से प्रगट होता है कि सरकार उत्पात को रोकना नहीं चाहती बल्कि विचार स्वातन्त्र्य तथा असंतोष को फैलने से रोकना चाहती है। यह अभियोग उसके आरम्भ मात्र हैं। अभी इनका ज़हर बहुत नहीं फैला यदि इनसे असहयोग का प्रचार बन्द न हुआ तो यह अधिक सम्भव है कि सरकार बड़े बल से उसको कुचलने के लिये यत्न करेगी।

इस असंतोष को फैलने से बचाने का दूसरा एक ही उपाय है। वह यह कि इसके कारणों को मिटाया जाय और वह तभी होगा जब असहयोग के कार्यक्रमानुसार देश की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri

जागृति को सन्मान दिया जाय। ऐसी सरकार से जो सफलता और शक्ति से मदोन्मत्त हो प्रायश्चित्त और दीनता की आशा अत्योक्ति है। अतः हमें समझ लेना चाहिये कि जिस २ क्रम से असहयोग वृद्धि करेगा उसी क्रम से शक्ति रूपी प्रतिरोध सरकार का कार्य्य क्रम होता जायगा। और यदि लहर प्रतिरोध के धक्कों से बच जायगी तो सत्य की जय समीप ही है। सुतरां हमें अभियोगों, दंडों और देशनिर्वासनों के हेतु सुसज्जित हो जाना चाहिये। हमें नेता के बिना ही अपने कार्य्य क्रम पर चलते रहने का अभ्यास होना आवश्यक है। इसका तात्पर्य्य स्वराज्य की योग्यता है। और क्योंकि कोई शासन संसार में किसी सारी जाति को जेल नहीं भेज सक्ता अतः वह अवश्य उसकी इच्छाओं को स्वीकार करेगी अथवा उस जाति की समुचित शासनपद्धति के हेतु स्वतंत्रता प्रदान करेगा।

यह स्पष्ट है कि अपने कार्य्यक्रम में दृढ़ता तथा शक्ति का निष्प्रयोग ही हमें अपने आदर्श को प्राप्त करने का उपाय है। सरकार की इच्छा चाहे लहर को सन्मान दे अथवा उसे अमानुषिक साधनों से कुचलने का यत्न करे। हमारी इच्छा हो हम शक्ति विरोध में दब जायं वा प्रतिरोध को ढकेलते हुवे लांघते चले जांय।

आज्ञापालन की आवश्यक्ता।

महात्मा गांधी ने मद्रास में आज्ञापालन की आवश्यक्ता का अनुभव जैसा हुआ था बताया था। अब उसी प्रकार की आवश्यक्ता उन्हें रुहेलखन्ड में भी प्रतीत हुई। प्रत्येक स्थान पर कोलाहल तथा गड़बड़ होती है इस हेतु नहीं कि प्रबंधकर्त्ता नहीं हैं किन्तु स्वयंसेवक शिक्षित नहीं हैं। उन्हें एक अनोखे जनसमूह तथा अवस्था का प्रबंन्ध करने को कहा जाता है अतः कार्य्य से अधिक शब्द तथा गड़बड़ी होती है।

अभी महात्मा गांधी और मौलाना शौकत-अली मोटर पर अलीगढ़से हाथरस गये। वहां कड़ी धूप में पहुंचे। बड़ा कोलाहल जनक था विस्तृत सभा हुई जिसमें कदाचित् बलवान् से बलवान वाचक भी रह जाय। वहां से वे एटा पहुंचे वहां भी वही हाथरस सी दशा। यहां से वे कासगंज मोटर पर गये। मार्गमें कई घटनायें होती थीं और गाड़ी चलने में असमर्थ हो जाती थी। कासगंज में बड़ी कठिनता से सभा का कुछ उचित प्रबंध किया गया। तमाम जनता की पादस्पर्श करने की प्रथा से बड़ा समय व्यर्थ जाता है तथा बड़े जनसमूह में हानिकारक भी है किन्तु इसे कोई नहीं सुनता। कासगंज से वे रात्रि को रेल में कानपुर के लिये आरूढ़ हुवे किन्तु प्रत्येक स्टेशनों पर एकत्रित हुवे जनसमूह ने उनके थोड़े से भी विश्राम में बड़ी बाधा डाली। उन्हें तनिक देर का भी विश्राम न प्राप्त हुआ। जनता उनको दर्शनों के लिये विवश करती और श्रीमती गांधी तथा अन्यों के बहुभांति समझाने पर भी एक न सुनती। यदि बत्ती बुझा दी जाती तो वे तुरंत जला देते यदि खिड़कियां बंद करतीं तो तुरंत खोल देते। जनता दर्शनों की उत्सुकता से बहुत दूर से आती है सही किन्तु क्या उन्हें अपने प्रिय नेता के विश्राम के लिये कुछ भी आदर नहीं? क्या वे चाहते हैं कि नेता का जीवन शारीरिक कष्ट भोगे? नहीं २ हृदय यह नहीं मानता कि जिस सच्चे कर्मवीर की जनता अनन्य भक्ति करती है उसके विश्राम काल में वह इतनी बाधा डाले और उन्हें जरा भी सोने न दे। उनके पास जो हमारे लिये आशा का संदेशा है वह हमें किस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अवस्था में प्राप्त होगा। तभी जब हम त्याग, आज्ञापालन और स्वावलम्बन के रंग में रंगे जायेंगे। केवल त्याग से कार्य्य नहीं होसक्ता। आज्ञापालन अत्यन्त आवश्यक है। इतनी प्रेमी जनता की गड़बड़ के बीच में आज्ञापालन शक्ति अर्थात् डंडे के ज़ोर--जिस प्रकार सर माइकेल ओडायर ने किया था—नहीं किया जा सक्ता।

भारत को स्वराज्य जब तक आज्ञापालन न आ जाय नहीं मिल सक्ता। इस प्रकार गड़-बड़ी से स्वविनाश ही होगा। यह मोह जाल है सच्चा हित नहीं। जिस प्रकार माता की अत्यधिक ममता बच्चे के भावी जीवन पर रुकावट डाल देती है उसी भांति नेता के प्रति अपनी मोह जाल की अनन्य भक्ति कुसमय प्रगट करने से उन्हें पीड़ा देती है। वे भी तो शरीरधारी मनुष्य हैं। इतना कार्य्य करते, इतनी चिंता करते हैं उन्हें कुछ तो विश्राम मिलना चाहिये। अतः जनता को रात्रि में इस भांति प्रेम दिखलाना पूर्णतया छोड़ देना चाहिये।

हमें अपने छोटे से छोटे बन्धु की इच्छा का ख्याल करना चाहिये। हमें एक भरी हुई रेलके यात्रियों के विश्राम में विघ्न नहीं डालना चाहिये। हमें अपने नेता के प्रति अनन्य प्रेम दिखाने का अवसर लाभकारी कार्य्यों के समय अपरिमित प्रयत्न दिखाने में परिवर्तित कर देना योग्य है, पैर छूकर तथा कोलाहल मचाकर जिसे प्रेम की सन्त्वना हो जाती है वह समयान्तर में स्तम्भित हो सक्ता है, अथवा बुराई में परिवर्तन हो सक्ता है। जाति के सन्मुख यदि कोई वास्तविक कार्य्य करना हो तो अपनी भावनाओं को आज्ञापालन के रूप में सीमाबद्ध करने की आवश्यक्ता है।

असहयोग ने द्वेष उत्पन्न करने के लिये जन्म नहीं लिया किन्तु जाति को बाह्य वा आन्तरिक हानिकारक प्रयोगों से पूर्णतया पवित्र बनाना है।

वैज्ञानिक संसार।

१. रबड़ की सड़कें।

प्रोफैसर एस. जे. पीची का नया आविष्कार रबड़ के व्यवसाय में एक आश्चर्य-जनक उन्नति और परिवर्तनकारी सिद्ध होगा। एक निस्तब्ध रात्रि में अपनी रसायन शाला में कार्य्य करते हुवे उन्हे एक वर्ष के निरन्तर परिश्रम के पश्चात् यह अनुभव हुवा कि रबड़ को सस्ती और मामूली गैसों द्वारा बिलकुल थोड़े व्यय में कड़ा किया जाना अर्थात् उसका जमाना संभव है। प्रोफ़ेसर साहब के आविष्कार के आधार पर अन्य नूतन अनुभवों द्वारा रबड़ का इसके घोल में भी जमजाना ज्ञात हुवा। यह प्रथम ही अवसर था जब कि रबड़ इस भांति घोल में जमाई गई हो अतः इससे एक विस्तीर्ण नूतन कार्य्य क्षेत्र खुल गया है। इस आश्चर्य्यप्रद नूतन आविष्कार द्वारा प्राप्त रबड़ पहिले से अधिक सस्ता पड़ेगा और भी अब भिन्न भिन्न प्रकार के उपयोगों में लाया जासकेगा। यह रबड़ का युग एक नया शान्तियुग पदार्पण करने को प्रस्तुत है।

कदाचित् रबड़ की सड़कें शीघ्र ही बनेंगी और नागरिक शब्दायमान जीवन का जहां पर दिन रात टांगे और टमटमों की कर्ण भेदी गड़-गड़ाहट रहती है--अन्त होगा। अन्य वस्तुएं बूट, ईंटें, पेटी, पुस्तकों की जिल्दें, खिलौने, गुड्डियां, दरियां, दस्ताने प्रभृति भी तैय्यार होंगी और सस्ती बिकेंगी। क्या ही अच्छा हो यदि प्रकृति देवी का यह अनुपम रबड़ रूपी पौधा उन वस्तुओं को तैय्यार करने का उतना माल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रदान कर सके जिससे संसार को चमड़े की आवश्यक्ता न रहे और बिचारे निरपराध पशु न मारे जांय।

भारतीयो! उद्योग करो कि हमारे यहां भारत के मद्रास प्रान्त में जहां रबड़ के पैदा होने योग्य भूमि तथा जल वायु है इतनी रबड़ पैदा हो जाय कि जिसमें हमारी अपनी आवश्यक्ताएं पूरी हो जांय और हम चमड़े के प्रयोग से बचें और उन "बाबू" लोग तथा "नवीन भारतीयों" को जो चमड़ेका अधिक प्रयोग करते हों उसे न छोड़ने का कोई बहाना न मिले।

२. सज्जी का सरोवर।

ब्रिटिश पूर्वीय अफ्रीका में एक "मागधी" नामक सरोवर है। यह झील अपनी अपरिमित सज्जी की राशि के हेतु बड़ी प्रख्यात है।

कुछ ही काल हुए कि इस प्राकृतिक उपहार का पता जनता को हुआ है। क्योंकि यह झील एक ऊजड़, जलशून्य स्थल पर प्रादुर्भूत हुई है, कुछ दिनों से अंग्रेजों की एक कम्पनी ने यहां रेलवे निर्माण की है, जिससे सज्जी भर २ कर अन्य स्थलों पर पहुंचाई जा सके। अतः अब सुगमता से इस आश्चर्य्यमयी दैवीभेंट का लाभ मनुष्यों को प्राप्त होगा।

प्रायः झील इस प्रकार जमी हुई प्रतीत होती है कि मानो बर्फ की श्वेत चादर से ढंपी हुई है, जो कि कुछ २ पिघलने लगी हो किन्तु इस दृष्टि भ्रम को वहां की तापमात्रा (Temp.) तत्क्षण दूर कर देती है। वहां की उष्णता अति तीक्ष्ण है और दोपहर के समय असह्य है। सज्जी मानवों के पैरों को चाहे मोटे २ जूते से क्यों न ढके हों जला देती है, और यदि जूते के तले बहुत ही मोटे न हों, सुन्दर हिमतुल्य कण पैरों को काट देते हैं। वर्षा के पश्चात् जिस समय झील के अधिकांश भाग पर जल की एक तह बिछ जाती है तब यह मानों एक गुलाबी रंग की सुन्दर साड़ी धारण कर लेती है। किन्तु चन्द्रमा की निर्मल चांदनी में इसकी सुमनोहर छटा अवर्णनीय है। सरोवर में लाखों टन सोडा भरा पड़ा है और आन्तरिक चश्मों से निरन्तर उसका उदर पूर्ण रहता है। इस समय अथाह सोडा भरा पड़ा है और जितना निकाला जाता है उतनी ही पूर्ति मातृ प्रकृति की कोख से हो जाती है। सुतरां सरोवर को कोई घाटा नहीं रहता।

३. रेडियम।

रेडियम के नाम से हमारे पाठक अपरिचित न होंगे। हम इसके विषय में एक सुविस्तृत लेख शीघ्र ही 'ज्योति' में प्रकाशित करेंगे। आजकल यह धातु कम हो रही है और वैज्ञानिकों को भय है कि कहीं यह सर्वथा ही लुप्त न हो जाय। अमरीका की एक कम्पनी इस बात का ठेका करती है कि वह आगामी २० वर्ष तक १½ छटांक रेडियम प्रतिवर्ष दे सकेगी। यदि यह कम्पनी ऐसा कर सकी तो न केवल यह कितने ही डाक्टरों और वैज्ञानिकों की चिन्ता को दूर कर सकेगी वरन् स्वयं भी ४८०,०००,००० रुपये का लाभ उठा सकेगी। आजकल रेडियम का मूल्य १५३६०००० रु० प्रति छटांक है और यह अभी और भी बढ़ेगा, यदि रेडियम रखने वाली अधिक उत्तम कच्ची धातुका पता न लगा

रेडियम का न मिलना पीड़ित संसार के लिये बड़ा दुःखदायी होगा। उसके द्वारा फोड़े फुंसी, रसौली, गंठिया इत्यादि की चिकित्सा में बड़ी सहायता मिली है।

श्रीमती क्योरी ने इस धातु का आविष्कार करके संसार का बड़ा उपकार किया है। यह धातु Pitchbiend नाम की कच्ची धातु में से निकलती है और क्योरी के अविष्कार से पहले Pitchblende को अनावश्यक समझकर फेंक दिया जाता था; परन्तु अब इसके लिये बड़ी मांग है। कोई हज़ार मन कच्ची धातु में से एक माशा भर रेडियम प्राप्त होती है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार प्रवाह

असहयोग और विद्यार्थी।

असहयोग की लहर बड़े वेग से विद्यार्थियों में फैल रही है। अलीगढ़ कालिज बन्द है और मौलाना मुहम्मदअली कालिज भवन के ठीक सामने नैशनल युनिवर्सिटी खोले बैठे हैं। नैशनल युनिवर्सिटी के मकान तैय्यार होरहे हैं। १०० से अधिक विद्यार्थी सम्मिलित हो चुके हैं। प्रार्थना पत्र धड़ाधड़ आ रहे हैं। बड़े २ विद्वानों ने आश्चर्यजनक आत्मत्याग दर्शा कर उपाध्याय बनना स्वीकार कर लिया है। उन विद्वानों में से एक सज्जन भारत के सुप्रसिद्ध इंगलिश हितचिन्तक महाशय एण्ड्रूज हैं। अलीगढ़ कालिज के ट्रस्टी लोग किसी दिन घोर पश्चाताप करेंगे। और कालिज को राष्ट्रीय न बना सकने में जो शोकजनक भूल उन्होंने की है उसको समझते हुए यह अनुभव करेंगे कि सर सय्यद के स्मारक चिन्ह की तबाही का उत्तरदातृत्व इन्हीं पर है और केवल उन्हीं पर है। यह भय तो उनको अभी से होगया है कि यावत् काल मौलाना मुहम्मदअली अलीगढ़ में डेरा लगाये बैठे हैं तावत् काल अलीगढ़ कालेज की स्थिति सर्वदा संकट में है और सम्भव है कि वह अब खुले ही न। लाहौर का इस्लामिया कालिज भी बन्द है। अमृतसर के इस्लामिया स्कूल ने युनिवर्सिटी से सम्बन्ध तोड़ लिया है। देहली का एङ्गलो-अरेबिक विद्यालय बन्द है और वहां एक राष्ट्रीय महाविद्यालय खुलने वाला है। गुजरात प्रान्त में कई स्कूलों और कालिजों ने युनिवर्सिटी से सम्बन्ध तोड़ लिया है और अहमदाबाद में निखिल भारतवर्षीय राष्ट्रीय विश्वविद्यालय खुलने वाला है। जब से सिक्खों ने अपने सिक्ख लीग के सम्मेलन में असहयोग के सिद्धान्त और प्रोग्राम को स्वीकार कर लिया है तब से खालसा कालिज के विद्यार्थी भी अड़ बैठे हैं। खालसा कालिज की प्रबन्धकारिणी सभा ने भी वही भूल की है जो अलीगढ़ कालेज के ट्रस्टी लोगों ने की थी उसका फल यह हुआ कि वह कालिज भी बन्द है लाहौर के डी. ए. वी. कालेज में पहिले तो ज्वाला भड़क उठी थी किन्तु अब आग सुलग रही है। कारण यह है कि लाहौर में विद्यार्थियों को सम्भालने वाला कोई नेता नहीं। डाक्टर किचलु दौरे पर रहते हैं और अन्य किसी त्यागी नेताने यह कार्य्य अपने हाथ में लिया नहीं। किन्तु डी. ए. वी कालेज के अधिकारियों को अलीगढ़ कालिज और खालसा कालेज की जो गति बनी है इससे शिक्षा लेनी चाहिये। राष्ट्रीय भाव की बाढ़ रेतीले बान्धों से नहीं रुक सक्ती। महात्मा हंसराज जी का दिव्यून में एक लेख छपा है जिसमें वह यह कहते हैं कि लड़कियों की एक राष्ट्रीय युनिवर्सिटी खुलनी चाहिये क्योंकि स्त्रियों का जातीयता के भावसे शून्य होना और भारतीय न रहना पुरुषों के काले योरोपियन बन जाने की अपेक्षा अधिक खतरनाक है। हम महात्मा जी की सेवा में सविनय निवेदन करेंगे कि जबतक पुरुषों के मस्तिष्क पर विदेशी दासता की मोहर लगाने वाले पुतली घर जिनमें से एक के अध्यक्ष महात्मा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जी स्वयम हैं बन्द न होंगे तब तक लड़कियों का राष्ट्रीय विश्वविद्यालय चल ही नहीं सक्ता। जाति की स्त्रियों में प्रायः वही गुण आते हैं जिनकी जाति के पुरुष क़दर करते हैं। क्या महात्मा जी को मालूम नहीं कि उनके कालिज में कितने ग्रेजुएट हैं जिनके ऊपर उनका प्रभाव भी प्रबल है। अपनी लड़कियों को उनकी आर्य कन्या पाठशाला को छोड़कर सेक्रेड हार्ड स्कूल में भेजते हैं हमने बहुत सी कन्या पाठशालाओं—जिनका प्रबन्ध आर्य्यों और सिक्खों,और हिन्दुओं के हाथ में है-के संचालको से पूछा कि थोड़ी अंग्रेजी पढ़ाकर और इस थोड़ी अंग्रेजी की वेदी पर धर्म और राष्ट्रीयता और राजनीति की शिक्षाका बलिदान करके वह देशके अन्दर ऐसी अर्धशिक्षित युवतियों की संख्या क्यों बढ़ा रहे हैं जो अशुद्ध अंग्रेजी में ऐसा पत्र तो लिख सक्ती हैं जिसको पढ़कर अंग्रेज ललनाओं के पेट में हंसते २ बल पड़ जावें किन्तु जिनको अंग्रेजी इतनी भी नहीं आती कि मार्डन रिव्यू समझ सकें, संस्कृत इतनी भी नहीं आती कि गीता का पाठ कर सकें हिन्दी इतनी नहीं आती कि तुलसी कृत रामायण के एक दोहे का अर्थ लगा सकें और राजनीति से इतनी अनभिज्ञ हैं कि स्वराज्य और स्वतन्त्रता में भेद नहीं जानतीं। यह नहीं बतला सक्तीं कि रिफार्म एक्ट किस चिड़िया का नाम है, तो उत्तर मिलता है कि आज कल के कालिजों से निकले लोग ऐसी ही धर्म पत्नियां चाहते हैं जो अंग्रेजी की टांग तोड़ सकें वास्तविक ज्ञान चाहे उनको कितना ही थोड़ा हो—वास्तविक ज्ञान तो उनको आप भी बाजबी ही होता है और विदेशी भाषा के माध्यम द्वारा पढ़ने से मानसिक शक्तियों का विकास तो होता ही नहीं हां घोटा लगाकर डिगरी अवश्य प्राप्त करली जाती है हम महात्माजी से बलपूर्वक निवेदन करेंगे कि घोड़े को गाड़ी के पीछे लगाने से गाड़ी का भी पहिया टूटेगा और घोड़ा भी घायल होगा।

वर्त्तमान शिक्षा प्रणाली के समर्थक।

एक उच्च कोटि की राष्ट्रीय पत्रिका में यह युक्ति पढ़कर हमें बड़ा दुःख हुआ कि वर्त्तमान स्कूलों और कालिजों में दासता की कालिख की जो लेप लगाई जाती है वह पोलिटिकल व्याख्यानों द्वारा धोई जा सक्ती है। कैसी विचित्र युक्ति है ? जिस मकान की बुनियादें गहरी खोदी गई हों और उनमें पत्थर भरे गये हैं उस मकान को यदि कोई पिचकारियों से गिराना चाहे तो उसके प्रयत्न को हम क्या कहेंगे। पहिली श्रेणी से लेकर एम.ए.क्लास तक इतिहास साहित्य अर्थशास्त्र की सहस्रों पृष्ठों की विशेष भाव से लिखी हुई पुस्तकों द्वारा जो विचार विद्यार्थियों के मन में बैठ चुके हैं क्या वह दो चार व्याख्यानों से उड़ जावेंगे ?

जो लोग यह कहते हैं कि भारत की जागृति के अध्यक्ष वर्त्तमान शिक्षा प्रणाली ने उत्पन्न किये हैं वह राष्ट्रीय जागृति के रहस्य को ही नहीं समझते। इस जागृति के परम गुरु महर्षि दयानन्द थे उन पर सभी मानते हैं कि वर्त्तमान शिक्षा का कोई प्रभाव न था, पंजाब और संयुक्त प्रान्त की हिन्दू प्रजा में जो जीवन है। उसका सारा यश भगवान दयानन्द को है मुम्बई प्रांत में जो जागृति है उसके कुछ भाग के लिये रानाडे महोदय उत्तरदाता हैं और रानाडे बड़े अभिमान से अपने आपको दयानन्द का शिष्य कहते थे। लोकमान्य तिलक का प्रभाव प्रजापर इसलिये न था कि वह बी. ए. एल. एल. बी. थे वर्त्तमान शिक्षा की योग्यता तो मिस्टर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गोखले की भी कम न थी किन्तु तिलक के मुकाबिले में साधारण प्रजा पर गोखले का प्रभाव पासंग भी न था। तिलक की सर्वप्रियता का रहस्य उसकी संस्कृत की विद्वत्ता थी। वह पश्चिमीय सभ्यता से इतना प्रभावित न था जितना कि शास्त्रों से। शास्त्रों के रङ्ग से वह रङ्गा था। बङ्गाल में जागृति के उत्पादक रामकृष्ण परम हंस, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, बंकिमचन्द्र और रविन्द्रनाथ टैगोर हैं। इनमें से बंकिमचन्द्र के अतिरिक्त और कोई भी वर्त्तमान युनिवर्सिटियों ने उत्पन्न नहीं किया। और बंकिम की व्यक्ति भी उस समय प्रभावशाली बनी जब उन्होंने अंग्रेजीपन को छोड़कर भारतीय साहित्य की शरण ली। महात्मा गांधी कईबार कह चुके हैं कि उनके विचार प्रवाह का स्रोत उपनिषद् और गीता है। पश्चिमी शिक्षा का विरोध इस समय जितना वह कर रहे हैं और कोई नहीं करता। मद्रास में अभी तक कोई बड़ा संशोधक उत्पन्न नहीं हुआ जिसका मस्तिष्क और हृदय भारतीय हो किन्तु आत्मा विलायती हो और इसीलिये वहां जागृति सब से कम है और जितनी है वह देवी बसन्ती के कारण से है, जिसका शरीर विलायती है किन्तु आत्मा हिन्दी है। हिन्दी मस्तिष्क, हिन्दी हृदय और हिन्दी आत्मा उन कारखानों में तैय्यार नहीं होसक्ती जो विदेशी दिमाग, विदेशी दिल और विदेशी आत्मा के गढ़नेके लिये खोले गये हैं। यदि कोई २ पुण्यात्मा इन प्रभावों से बच निकले तो इससे वह शिक्षा प्रणाली निर्दोष नहीं सिद्ध हो जाती। कुमारिल भट्ट जैनियों की पाटशाला में पढ़े थे तिस पर भी वह वेद के रक्षक बन गये। क्या इससे यह सिद्ध होगया कि बालकों को आस्तिक बनाने की प्रशस्त रीति यह है कि उनको नास्तिकों के विद्यालय में शिक्षा दी जावे।

मैक्सवैनी की मृत्यु।

आयरलैण्ड के नगर कार्क के सत्याग्राही लार्ड मेयरमैक्सवैनी जिनको ब्रिटिश सरकार ने कैद कर लिया था और जिन्होंने उनके हाथ से उनकी स्वतन्त्रता छीनी थी भोजन स्वीकार करने से इन्कार कर दिया था दो महीने से अधिक क्षुधा का वीरतापूर्वक मुकाबला करके अन्त को परलोक सिधार गये हैं। उन्होंने स्वतन्त्रता के यज्ञकुण्ड में अपने जीवन की आहुति डालकर यह सिद्ध कर दिखलाया है कि आत्मविश्वासी लोगों के लिये पराधीन जीवन की अपेक्षा मृत्यु श्रेयस्कर है, और अपनी जाति के लिये एक ज्वलन्त उदाहरण उपस्थित किया है। बर्नर्डशौ ने सत्य कहा है कि यदि कोई सरकार किसी मनुष्य को कारागार में डालदे और वह बीर मनुष्य पराधीनता का जीवन स्वीकार न करे तो समझना चाहिये कि सरकार ने उस को कैद का दण्ड नहीं दिया किन्तु साथ ही मृत्यु दण्ड भी दिया है। वह यह भी कहते हैं कि इस प्रकार का सत्याग्रह कोई चोर उचक्का या पापी मनुष्य नहीं कर सकता और न ऐसा करने से कोई उसको लाभ है, क्योंकि यदि वह कारागार में मर जाय तो प्रजा परमात्मा का धन्यवाद करती है और समझती है कि समाज की शान्ति को भङ्ग करने वाली एक आपत्ति दूर हो गई। ऐसा सत्याग्रह वे ही महात्मा कर सकते हैं जिनको अपने पक्ष की सत्यता में पूर्ण विश्वास है। ऐसे पुण्यात्मा यदि सत्याग्रह करते २ स्वर्ग सिधार जावें तो उनके देशवासी उनकी स्मृति पर श्रद्धा और पूजा के पुष्प चढ़ाते हैं और जिस पक्षके लिये वह मरे थे वह पक्ष प्रबल हो जाता है। अतएव यही समझना चाहिये कि महात्मा मैक्सवैनी ने अपनी मृत्यु

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

से जितना लाभ पहुंचाया है उतना लाभ कदाचित् अपने जीवन से न पहुंचा सकते।

— —

ईजिप्ट की आधुनिक स्थिति पर साद पाशा जगलूल।

ईजिप्ट में साद पाशा जगलूल ऐसी ही आदर की दृष्टि से देखे जाते हैं जैसे भारतवर्ष में महात्मा गान्धी। आप भी महात्मा जी के सदृश सूक्ष्म शरीरधारी सादे पहरावे में रहते हैं। आपकी आखों से तेज टपकता है और शान्त मोहनी आकृति को देखकर कौन फड़क नहीं उठता? आपके श्रीमुख से जो शब्द निकलते हैं वह जादू का असर रखते हैं। आपको अपने उद्देश्य और कार्य्य में कभी असफलता का सन्देह नहीं हुआ।

आप Moderate पार्टी के सदस्य थे। शिक्षा विभाग के मिनिस्टर भी रह चुके हैं। सर्वदा से आप ईजिप्ट के लिये पूर्ण स्वतंत्रता उपलब्ध करने के लिए चेष्टा करते रहे हैं।

१९१० ई० में Moderate पार्टी का अन्त होगया और १९१२ में आपको Legislative Assembly का Non-official उपप्रधान चुना गया। गत वर्ष ईजिप्ट की समस्त संस्थाओं ने प्रस्ताव पास किये, हस्ताक्षर सहित प्रार्थना पत्र भेजे, जिससे Princes राज्य कर्मचारी स्त्रियें तथा किसान सहमत थे, और निश्चय किया कि सादपाशा जगलूल को पूर्ण अधिकार दिये जावें ताकि जिस तरह चाहें ब्रिटिश पार्लीमेन्ट से स्वतंत्रता प्राप्त करें। Legislative Assembly ने भी ऐसे ही प्रस्ताव पास किये।

लार्ड ऐलनबाई ने पहिले इस जागृति तथा जातीय लहर में हस्ताक्षेप करना उचित न समझा, अन्त को सर्व प्रकार के political विज्ञापन छपने बन्द करवा दिये और आज्ञा दी कि जो कोई ऐसा करेगा दण्डनीय समझा जावेगा। सादपाशा जगलूल की अध्यक्षता में ईजिप्ट डैलिगेशन ने पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करने के निमित्त बड़ा भारी आन्दोलन किया। एक और पाशा का निम्न लिखित सम्भाषण मिश्र की वर्तमान मानसिक अवस्था पर प्रकाश डालता है:—

प्रश्न—क्या आपका विचार है कि ब्रिटिश पार्लीमेंट ईजिप्ट को स्वतंत्र कर देगी?

उत्तर—इसमें सन्देह नहीं, मिस्टर बैलफोर ने कामन्ज़ में कहा है कि ईजिप्ट में ब्रिटिश Supremacy स्थिर रखनी चाहिये और लार्ड कर्ज़न ने हौस आफ लार्ड में कहा है कि हमें ब्रिटिश अध्यक्षता में Repeesentitive Institutions बनाने चाहियें। परन्तु ईजिप्ट ने पूर्व से ही यह निश्चय कर रखा है कि हम पूर्ण स्वतंत्रता चाहते हैं। सुधारादि जब तक British Protectorate के आधीन होंगे हमारे लिये हितकर नहीं, इसलिये हम स्वीकार नहीं करेंगे।

प्र०—परन्तु इङ्गलैण्ड में बारबार यह दर्शाया गया है कि पढ़े लिखे तथा विचारशील ईजिपशन टर्की की अपेक्षा ब्रिटिश राज्य के आधीन रहना अच्छा समझेंगे।

उ०—टर्की की मृत्यु की दुन्दुभि मैहमत-अलीने बजाई जिसको आधुनिक टर्की का निर्माता कहसकते हैं। इसने सुलतान से बहुत सी स्वाधीनता प्राप्त करने की प्रतिज्ञा ली।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मैहमतअली तथा इबराहीम के विजयी शस्त्रों ने प्रतिज्ञा को क्रियात्मक तौरपर ठीक कर दिखाया। और अबी पाशाने ईजिप्ट की जातीय तथा धार्मिक स्वतन्त्रता को एक पग आगे ले गया। हम मानते हैं ब्रिटिश राज्य की उपस्थिति से हम को सांसारिक उन्नति करने का जोश पैदा हुआ परन्तु हम साथ ही कहते हैं कि ब्रिटिश राज्यने हमारी आत्मिक उन्नति और आत्मविश्वास को पांवों तले रौंद-कर अत्यन्त हानि पहुंचाई है। हम नवीन सुधार करने में अशक्त हैं और प्रजा के कष्टों को दूर नहीं कर सकते क्योंकि देश के प्रबन्ध में हमारा कोई दखल नहीं।

प्र०—यदि पूर्ण स्वतन्त्रता न मिली तो क्या आप स्वराज्य within the Empire स्वीकार कर लेंगे?

उ०—ईजिप्ट ने सर्वदा ब्रिटिश protectorate को अनुचित समझा है। ग्लेड-स्टोन से लेकर सैलिसबरी तक नेभी इसको अनुचित समझा है। इसको सर्वदा आवश्यक प्रत्युत अस्थायी समझा गया है। आपके महा-राज ने भी युद्ध में विजय प्राप्त करते के पश्चात् ईजिप्ट को स्वाधीन करने की प्रतिज्ञा की थी। हम कभी भी ब्रिटिश राज्य के आधीन न थे और न ही किसी प्रकार की अधूरी स्वाधीनता लेना स्वीकार करेंगे। हम पोलैण्ड और बैलाजियम के न्याई स्वाधीन होना चाहते हैं। हम नये देश या नगर लेना नहीं चाहते प्रत्युत अपने देशपर पूर्ण अधिकार हमारा हो यही हमारा उद्देश्य है। सर विलियम ब्रनयट ने जो स्कीम बनाई थी वह नौकरशाही मूर्खता का उत्तम उदाहरण था। लार्ड ऐलनबाई की स्कीम का एकमात्र यही उद्देश्य था कि ब्रिटिश राज्य की कड़ी ज़ंजीरों से इस जकड़ा जावे और जाती-यता के नवजीवन का गला घोंटा जावे। परन्तु हम इस धोखे की टट्टी में कभी नहीं फंस-सकते, यदि फंस जावें तो भूगोल के प्रत्येक भाग के धन के शिकार के लिये एक उपजाऊ भूमि बनी रहेगी।

प्र०—यदि ब्रिटिश सेना लौटा ली जावें तो क्या विरोधी शक्तियां बल प्राप्त न कर लेंगी?

उ०—कौनसी शक्तियां? क्या हम सब एक नहीं हैं? क्या कौपट्स और मुसलमान सब ईजिप्ट को स्वतंत्र देखना नहीं चाहते?

प्र०—पर क्या आपको धार्मिक झगड़ों के प्रादुर्भाव होने का भय नहीं?

उ०—जब हम स्वतंत्रता मांगते हैं तो हमारा यह तात्पर्य नहीं कि सब मुसलमान एक हो जावें। हम Theocratic Republic नहीं चाहते जैसे भारतवर्ष में कई लोग चाहते हैं। हम स्वतंत्र ईजिप्ट चाहते हैं जिसमें ईजिप-शियन राज्य कर्मचारी प्रजा के प्रतिनिधियों की सहायता द्वारा राज्य करें। हमारा उद्देश्य इसलाम को उन्नत करना नहीं प्रत्युत जनता को शिक्षा द्वारा ऊंचा करके ईजिप्ट को सभ्य जातियों का शिरोमणि बनाना है। क्या आप इस भ्रमात्मक कहानी में विश्वास करते हैं कि केवल पश्चिम की जातियें ही उन्नति कर सकती हैं। कृपया वैयक्तिक कटाक्ष न समझें। मैं ने ईजिप्ट की लड़कियों को उत्साहित किया कि वह पश्चिम में जावें वहां शिक्षा ग्रहण करें और फिर लौटकर स्वदेश में शिक्षा फैलावें। जो २ भी नई बातों में सत्य है उसको लेने के लिये मुझे कभी हठ नहीं हुआ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

५०—यदि अनुचित न हो तो क्या आप कृपया बतायेंगे कि सारे ईजिप्ट का प्रतिनिधि होने के लिये Deputation के पास क्या प्रमाण है ?

उ०—स्वतंत्रता के लिये जो Manifesto मैं ने लिखा था उस पर हज़ारों व्यक्तियों के हस्ताक्षर थे। हमीदपाशा बीडूइन नेता बड़ी भारी सभा के सभापति थे। लार्ड ऐलनबाई लोकमत की एकयता से इतना भयभीत हो गये कि कइयों को intern कर दिया और कइयों को आन्दोलन करने से रोका। मेरे साथी मोहम्मदपाशा, महमूद इसमाईल सिदकी पासा महानुभावों का ईजिपशियन पर खूब प्रभाव है। ऐलऐज़हार विश्वविद्यालय के रेक्टर तथा उसकी प्रबन्धकारिणी सभा ने हमें सहयोग दिया है। भूतपूर्व प्रधान मंत्री हुसैन रशीद पाशा तथा आदिल पाशा सर्वांश में हमारे साथ हैं। केवल सेना विभाग के कर्मचारी 'प्रमाण' मांगते हैं।

प्र०—क्या लार्ड मिलनर का तथा उसके सहयोगियों का प्रस्ताव ईजिप्ट के लोग स्वीकार कर लेंगे ?

उ०—यह मैं नहीं कह सकता। हमें आज्ञा थी कि ब्रिटिश Crown के मंत्रियों से बात चीत करें परन्तु अन्तिम निश्चय या संधि जनता की सम्मति के बिना करने का हमारा अधिकार नहीं।

यह भाषण लण्डन की पत्रिका Venturer में छपा है।

योगी अरविन्द और असहयोग।

कई महानुभावों ने यह विचार फैला दिया है कि श्रीअरविन्दघोष भी असहयोग के विरोधी हैं। जब हमने यह विचार माडरेट समाचार पत्रों में देखा था तो उसी समय हमने समझा था कि लेखक महाशयों को भ्रम हो गया है। भला यह कैसे सम्भव हो सकता है कि स्वाधीनता और स्वावलम्बन का स्तम्भ अरविन्द असहयोग के विपक्ष में हों ? स्वावलम्बन का पूर्ण रूप और स्वाधीनता के मार्ग की सीढ़ी असहयोग ही है। मछलीपटम के साप्ताहिक समाचारपत्र 'जन्मभूमि' में एक लेख छपा है जिसमें किसी जानकार महाशय ने असहयोग के विषय में महात्मा घोष के विचारों का प्रमाणिक उल्लेख किया है। श्रीयुत अरविन्द घोष महात्मा गान्धी के सारे प्रोग्राम से सहमत हैं। उनकी सम्मति में वकीलों को तुरन्त वकालत त्याग देना चाहिये। हां वह यह अवश्य कहते हैं कि पहले जातीय विद्यालय खोल देने चाहिये और फिर स्कूल और कालेज का बहिष्कार करना चाहिये। उनकी यह भी सम्मति है कि कांग्रेस का उद्देश्य ब्रिटिश साम्राज्य में रहते हुए स्वराज्य की प्राप्ति न होना चाहिये किन्तु स्वाधीनता। यह सम्मति उनकी व्यक्तिगत है किन्तु वह कांग्रेस के निर्णय के प्रतिकूल कोई आचरण न करेंगे। वह इस बात पर बल देते हैं कि प्रत्येक ज़िले, ताल्लुके और ग्राम में स्वराज्य सभायें स्थापित होनी चाहिये। युवकों को जातीय स्वयंसेवक बनकर देशसेवा का व्रत धारण करना चाहिये। उन का यह भी मत है कि भारतवर्ष में विलायती ढंग के पुतली घर न खुलने चाहिये प्रत्युत भारतीय प्रजा को अपने हाथ से कपड़ा बुनना चाहिये और अन्य वस्तुयें बनानी चाहिये।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

असहयोग की सफलता में उनको पूर्ण विश्वास है, और उनको निश्चय है कि 'असहयोग' नौकरशाही के शासन को असम्भव बना देगा। हम समझते हैं कि अब जब कि महात्मा गान्धी के साथ महात्मा अरविन्द घोष भी मिल गये हैं असहयोग के विषय में किसी भारतवासी के हृदय में सन्देह न रहना चाहिये।

——

कन्या पाठशाला बिसवां।

सीतापुर के प्रान्त में एक बिसवां नामी कसबा है। उसमें कुछ आर्य देवियों ने एक कन्या पाठशाला खोली हुई है जिसमें मानसिक शिक्षा के साथ धार्मिक शिक्षा और देश भक्ति की शिक्षा भी विशुद्ध रूप में दी जाती है। यह विद्यालय सच्चे अर्थों में राष्ट्रीय है। इसके प्रबन्ध के साथ तथा इसकी शिक्षा के साथ सरकार का किसी प्रकार से सम्बन्ध नहीं है। यह देवियां इस पाठशाला के साथ एक आश्रम भी खोलना चाहती हैं ताकि दूर स्थलों में रहने वालीं कन्यायें भी इस पवित्र विद्यालय की सर्वोत्तम शिक्षा से लाभ उठा सकें। यह देवियां जिन्होंने इस विद्यालय की उन्नति में अपनी सम्पत्ति भी बहुत लगाई है आर्य प्रजा से आर्थिक सहायता की अभ्यर्थना करतीं हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि दानी सज्जन इस पवित्र कार्य में इन पवित्र देवियों का हाथ अवश्य बटायेंगे। धन श्रीमती मन्त्रिणी कन्या पाठशाला बिसवां जि० सीतापुर के नाम भेजना चाहिये।

——

स्त्री-जाति और व्यवसाय।

हम कई वार अपना विचार प्रगट कर चुके हैं कि नारी का मिशन माता बनना है। वह राष्ट्र की उच्चतम सेवा उत्तम सन्तान उत्पन्न करके और उस सन्तान को उत्तम रीति से शिक्षित बनाकर ही कर सक्ती हैं। उसका सब से बड़ा व्यवसाय भी सन्तानोत्पत्ति और पालन ही है। भारतवर्ष के लोगों का अनादि काल से यही विचार चला आया है किन्तु पश्चिम में स्वतन्त्रता की लहर ने स्वच्छन्दता का रूप धारण कर लिया है। वहां की कई देवियां यह समझती हैं कि पतियों से पालित पोषित होना उनके आत्म सन्मान को धक्का लगाता है और उनको दासत्व की जंजीर में जकड़ता है। वह भोली नारियां जीवित मनुष्य गढ़ने के कार्य को उतना भी महत्व नहीं देतीं जितना मिट्टी के खिलौने गढ़ने के कार्य्य को। यह विचार सृष्टि-नियम के विरुद्ध हैं, इसलिये सफल नहीं हो सके। इस सिद्धान्त को मानकर भी अमरीका की स्त्रियों का बहुपक्ष उस दासत्व के जीवन को ही चुनता है जो परमात्मा ने उनके लिये निर्धारित किया है। अमरीका में तीन करोड़ नव्वे लाख पुरुष हैं उनमें से २ करोड़ ३७ लाख ५४ हजार अपनी आजीविका आप कमाते हैं। स्त्रियों की कुल संख्या तीन करोड़ सत्तर लाख है उनमें से केवल ५३ लाख उन्नीस हजार अपनी रोजी आप कमाती हैं। इससे ज्ञात होता है कि जहां पुरुषों की $\frac{२}{३}$ संख्या अपनी आजीविका कमाते हैं वहां स्त्रियों का $\frac{३}{४}$ भाग "दासत्व" के जीवन का आनन्द लेता है। क्या वह अर्धशीक्षित भारतवासी जिन्होंने स्त्रियों के अधिकारों का ठेका ले लिया है अमेरिका के अनुभव से कोई लाभ उठावेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारे पाठक जानना चाहेंगे कि ५३ लाख स्त्रियां किन किन कामों में लगी हुई हैं? निम्न लिखित ब्योरे से उनकी उत्सुकता किंचित् मात्र पूरी हो जावेगी।

अध्यापिकाएं	३,२७,०००
डाक्टर	७,३९९
गान विद्याविशारदा	५२,०००
आलेख्य विशारदा	११,०००
ग्रन्थ लेखिका	५,९८४
सम्पादिका तथा सम्बाद दाताएं	२,१९३
सरकारी कर्मचारिणियां	६,०००
भवन निर्माता	१,०००
उपदेशिकाएं	३,४०५
गृह सेविकाएं	१२,४३,०००
रोगी सेवा का कार्य्य करने वाली	१०,०००
होटलों की स्वामिनियां	१,४७,०००
आश्रम प्रचालिकाएं	५९,४५५
धोबिनें	३,२५,०००
स्वतन्त्र गृह सेविकाएं	२४,०००
बीमा कम्पनियों की ऐजन्ट	१,०००
गणिकाएं	७४,०००
दुकानों की गुमाश्ता टाईपिस्ट	१,४९,०००
तार बाबू	२२,०००
दूकानदार	२४,०००
बड़ी सौदागर	२६१
भ्रमण करके वस्तु बेचने वाली	४९६
साहूकार	२९३
दर्जिनें	१,४६,०००
कपड़े के कारखानेमें कार्य्य करनेवाली	१,२०,०००
रेशम का काम करने वाली	३२,०००
चुरट बनाने वाली	१४३,०००
कपड़ों को काढ़ने वाली	१३४४,०००
बज़ाज	८६,०००
जिल्द साज	१५,०००
यन्त्रालयों में कार्य्य करने वाली	१६,०००
सन्दूक बनाने वाली	७७,०००
जूते बनाने वाली	३९,०००

इस ब्योरे से स्पष्ट पता लगता है कि स्त्रियां व्यवसाय भी ऐसे करती हैं जिनका सम्बन्ध बच्चों के साथ और गृह प्रबन्ध के साथ है।

सूचना—ज्योति के भाद्रपद—(सितम्बर) के अंक में सूचना दी थी कि इसके ६ अंकों में जितने शिल्प के नमूने होंगे उन्हें जो बहिनें सम्पूर्ण रीति से बनाकर भेजेंगी उन्हें ५) और २) की जो वस्तु कहेंगी पारितोषिक में भेजी जायेंगी। अब यह अवधि और बढ़ादी गई है अर्थात दिसम्बर के अंक में घोड़ा बग्घी जाल का नमूना समाप्त होगा और जनवरी १९२१ से पहिले सब बहिनें गत ८ अंकों में निकले हुये नमूने बनाकर भेज सक्ती हैं। आशा है जिन्होंने अभी तक नमूने न बनाये हों या अभी अधूरे हों वह भी यत्न पूर्वक इस दो मास में बनाकर "सम्पादिका ज्योति लायलपुर" के नाम भेजेंगी। सब बहिनों को यत्न करना चाहिये कि नमूने सुन्दर और स्वच्छ हों।

अशुद्धि।

पिछले वनिता विनोद के शिल्प लेख में नीचे लिखी अशुद्धियें हैं उन्हें ठीक करलो।

७० पंक्ति—१२ ते के स्थान में १५ ते।

७३ पंक्ति—तीसरी लकीर में १३ ते के स्थान में १० ते।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar. Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

ॐ

वनिता विनोद

स्त्री उपयोगी स्त्रियों द्वारालिखित लेखों का संग्रह।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१—समाचार	४४२	३—गृह प्रबन्ध—	४४७
२—कला कौशल्य—(ले० श्रीमती ओ३म्वती देवी)	४४३	४—स्त्री जाति और राजनैतिक आन्दोलन—(ले० श्रीमती सरोजनी नायडू)	४४८

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation.USA

समाचार।

बीबी वज़ीरकौर ने जो कि सिक्ख कन्या महाविद्यालय के उपदेशक सरदार हरनाम सिंह की सुपुत्री हैं इस वर्ष पञ्जाब युनीवर्सिटी की बी. ए. परीक्षा पास की है। क्या हम आशा करें कि देवी जी सिक्ख कन्या महा विद्यालय का चार्ज लेकर उसको सच्चे अर्थों में सिक्खों का राष्ट्राय विद्यालय बनाने में सहायक होंगी।

निखिल भारतीय स्वराज्य सभा की अन्तरंग सभा की प्रधाना श्रीमती सरोजनी नायडू नियत हुई हैं।

बड़ी प्रसन्नता की बात है कि असहयोग के काम में देवियां भी सहायक होरही हैं। इलाहाबाद की मिसेज़ मोतीलाल नेहरू और मिसेज़ श्यामलाल नेहरू ने अपनी पुत्रियां योरुपियन स्कूल से हटा लीं हैं। क्या पंजाब की देवियां इनका अनुकरण करती हुई आर्य सुकुमारियों को सेक्रेड हार्ट स्कूल से न हटायेंगी? जहां इनके राष्ट्रयिता पर कुठाराघात चलाया जाता है। सेक्रेड हार्ट स्कूल में कई प्रसिद्ध नेताओं से सम्बन्ध रखने वाली कन्यायें भी पढ़ती हैं यह बात बड़ी लज्जा स्पद है।

कन्या महाविद्यालय के अध्यक्ष श्रीयुत् लाला देवराज जी ने औनेरेरी मजिस्ट्रेटी छोड़ दी है हम आशा करते हैं कि इसका प्रभाव विद्यालय की छात्राओं पर बहुत अच्छा पड़ेगा।

बड़े शोक की बात है कि लाहौर में कोई भी ऐसा उत्तम कन्या पाठशाला नहीं है जो सरकार से सहायता न लेता हो और जिसमें असहयोग के सिद्धान्त को मानने वाले अपनी कन्याओं को भेज सकें। आर्य कन्या पाठशालायें दो हैं जिनमें से एक जिसका सम्बन्ध अनारकली समाज से है लगभग सरकारी ही है और दूसरा भी जिसका सम्बन्ध बच्छोवाली समाज से है सरकारी परीक्षाओं के लिये लड़कियों को तैय्यार करता है। क्या आर्य पुरुष अपनी कन्याओं को विदेशी सांचे में ही ढालना चाहते हैं? क्या वह आर्य समाज जो गुरुकुल, वेद प्रचार के लिये प्रतिवर्ष सहस्रों रुपये एकत्रित कर सकता है आर्य पुत्रियों को शुद्ध वैदिक शिक्षा देने के लिये लाहौर में भी एक बालिका विद्यालय नहीं चला सकता?

पिछले दिनों जब महात्मा गान्धी लाहौर में पधारे थे तब उनके साथ उनकी धर्मपत्नी देवी कस्तूरी बाई भी थीं। उनके दर्शनों से लाहौर नगर निवासनियों ने बड़ा लाभ उठाया श्रीमती गान्धी की सरलता और पतिभक्ति सराहनीय और आदरणीय है। वह भारत की गृहणियों के लिये आदर्श रूप हैं।

करांची का अंगरेज़ी अख़बार न्युटाइम्स लिखता है कि वहां की आर्य समाज के वार्षिक उत्सव पर व्याख्यान देते हुए प्रोफेसर रामदेव ने वहां की देवियों को उपदेश दिया कि उनको अपने मद्यसेवी मांसभक्षी और तम्बाकू-प्रिय पतियों का सुधार असहयोग नीति का अवलम्बन करके करना चाहिये। हम सहर्ष और सबल प्रोफेसर महोदय के इस विचार का समर्थन करते हैं। मुसलमानी काल में असहयोग के शस्त्र को प्रयोग में लाकर ही भारतीय देवियों ने आर्य धर्म और सभ्यता की रक्षा की थी। यदि वे देवियां जो कपड़े और भूषण की प्राप्ति के लिये भूखी रह कर अपने पतियों को अकारण तंग करती हैं यह व्रत धारण कर लें कि जब तक उनके पति भाई और पुत्र कुलक्षण और दुर्व्यसन न छोड़ लें तब तक वे सत्याग्रह करेंगी तो सामाजिक बुराइयें शीघ्र ही दूर हो जावें। भारत की देवियो! निर्बल जातियों के लिये असहयोग ही एक अमोघ अस्त्र है। स्त्री जाति भी एक निर्बल जाति है फिर वह क्यों न इस अस्त्र को काम में लावे।

CC-0. Gurukul Kangri Vishwavidyalaya Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

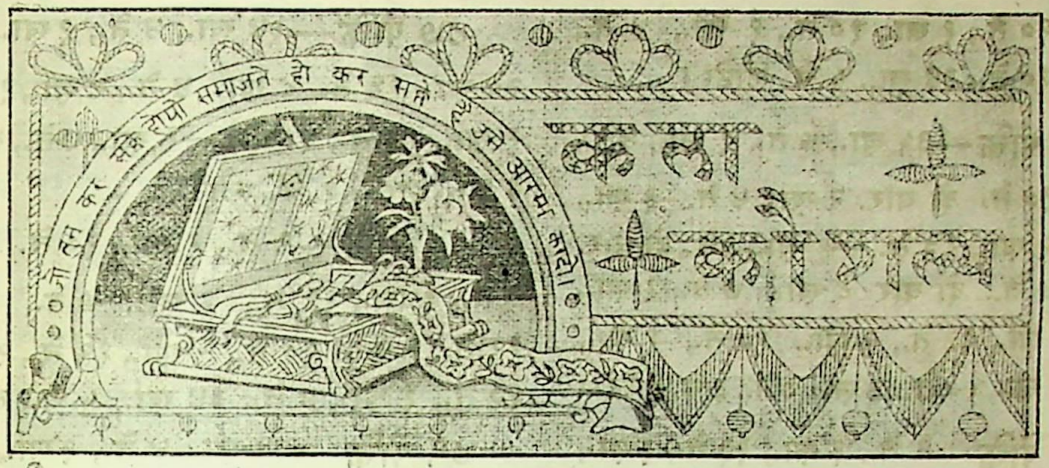

घोड़ा बग्घी जाल।

(गतांक से आगे)

७४ पंक्ति—४ चे., छोड़ो, ९ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., २ खा., १० ते., २ खा., ३७ ते., ५ खा., ४ ते., १ खा., १९ ते., १ खा., २५ ते., ३ खा., १३ ते., २ खा., ७ ते., १ खा., १० ते., २ खा., ४ ते., ३ खा., १६ ते., १७ खा., ४ ते., १२ खा., ५ चे., लौटो।

७५ पंक्ति—३१ खा., १६ ते.,२ खा., ४ ते., २ खा., १० ते., १ खा., १० ते., १ खा., १३ ते., ३ खा., ४ ते., ६ खा., ७ ते., १ खा., १६ ते., १ खा., ४ ते., ५ खा., ३४ ते., २ खा., १३ ते., २ खा., ७ ते., १ खा., ७ ते., ३ खा., ७ ते., ६चे लौटो।

७६ पंक्ति—४ चे., छोड़ो १२ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., २ खा., १३ ते., २ खा., ३४ ते., ५ खा., ४ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ७ ते., २ खा., १३ ते., ४ खा., १३ ते., २ खा., १३ ते., १ खा., ७ ते., २ खा. ४ ते., २ खा., १३ ते., ३२ खा., ५ चे. लौटो।

७७ पंक्ति—३३ खा., १३ ते.,१ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., १ खा., १६ ते., १ खा., १३ ते., ३ खा., २२ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ४ ते., ५ खा., ३१ ते., २ खा., १३ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

७८ पंक्ति—२४ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., १३ ते., २ खा., ३१ ते., ५ खा., ४ ते.,-१ खा., ७ ते., दोवार, १ खा., २५ ते., २ खा., १३ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ४ ते., १ खा., १३ ते., ३३ खा., ५ चे लौटो।

७९ पंक्ति—३४ खा., १० ते.,१ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., १३ ते,. २ खा, ४ ते., ४ खा., १० ते.,-१ खा., ७ ते., दोवार, १ खा., ४ ते., ६ खा., २५ ते., २ खा., १३ ते.,-१ खा., ७ ते., दोवार, १ खा, २५ ते., ४ चे लौटो।

८० पंक्ति—९ते.,१ खा.,१३ ते.,-१ खा., ७ते., दोवार १ खा., १३ ते., २ खा., २२ ते., ७ खा., ४ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., ७ ते., २ खा., ७ते., १ खा., १३ ते., २ खा., १३ ते., २ खा., ४ ते,.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२ खा., १० ते., १ खा., १० ते., १ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., ३४ ख़ा,. ५ चे. लौटो।

८१ पंक्ति--३५ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १० ते. दो वार. २ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., १३ ते., २ ख़ा., १३ ते.--१ ख़ा., ७ ते., दो वार, १ ख़ा., ४ ते., दो वार ८ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., २ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., ७ ते., ३ चे., लौटो।

८२ पंक्ति—९ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ७ ते.,—१ ख़ा., १३ ते., दो वार १ ख़ा., ७ ते., ११ ख़ा., ४ ते.,—१ ख़ा., ४ ते., दो वार, २ ख़ा., ७ ते.,—१ ख़ा., १३ ते., दो वार, २ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ ते., ३५ ख़ा., ५ चे., लौटो।

८३ पंक्ति--३५ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४० ते., २ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ३४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १० ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

८४ पंक्ति--२४ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १९ ते., १ ख़ा. १३ ते., १० ख़ा., ४ ते., १२ ख़ा., १३ ते., १७ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ७ ते., ३५ ख़ा., ५ चे., लौटो।

८५ पंक्ति--३४ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., १८ ख़ा., १३ ते., ११ ख़ा., ४ ते., ११ ख़ा., १३ते., १ ख़ा., २२ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

८६ पंक्ति--१२ ते., १ ख़ा., १० ते., १ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २५ ते., १ ख़ा., १६ ते., ९ ख़ा., ४ ते., ९ ख़ा., १६ ते., १९ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., ३४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

८७ पंक्ति—३४ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १०ते., २० ख़ा.. १६ ते., ८ ख़ा. ४ ते., ८ ख़ा., १६ ते.,-१ खा., १३ ते., दो वार—१ ख़ा., ७ते., दो वार, ३ ख़ा., ७ ते., ३ चे., लौटो।

८८ पंक्ति--९ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा.. ७ ते., ३ ख़ा., १९ ते., ५ ख़ा., १० ते. ५ ख़ा., १९ ते., २१ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ४ ते., ३४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

८९ पंक्ति--३४ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १०ते., २३ ख़ा., १८ ते., २ ख़ा., १६ ते., २ ख़ा., १९ते., ८ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १९ ते., ३ चे., लौटो।

९० पंक्ति--१८ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., १० ख़ा., ५२ ते., २५ ख़ा., ४ते., १ख़ा., ४ ते., ३६ ख़ा., ५ चे., लौटो।

९१ पंक्ति--३४ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ते., २७ ख़ा., ४० ते., ८ ख़ा., ७ ते., २ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., ३ चे., लौटो।

९२ पंक्ति--१५ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ख़ा., १३ ते,, ३ ख़ा., १० ते., ९ ख़ा., ३१ ते., २ ख़ा., १३ ते., २२ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ३४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

९३ पंक्ति--३४ ख़ा., ४ ते., ३ख़ा., ४ते., १८ ख़ा., २८ ते., १० ख़ा., १० ते., ४ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., ४ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ चे., लौटो।

९४ पंक्ति--४ सादे., ३ चे., ९ ते.,—१ ख़ा., ७ ते., दो बार, ५ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ९१ ते., १६ ख़ा., ४ ते., ६ ख़ा., ४ ते., ३४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

९५ पंक्ति--३४ ख़ा., ४ ते., ३ख़ा., ४ते., १५ ख़ा., १३ ते., ८ ख़ा., ७ ते., १७ ख़ा., ४ ते.,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१ ख़ा., ७ ते., ३ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते.,—१ ख़ा., ७ ते., दो वार., ७ चे., लौटो।

९६ पंक्ति—४ सादे फन्दे छोड़कर, २ छोड़ो ३ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., ४ ख़ा., ७ ते.; १ ख़ा., ५२ ते., २ ख़ा., २५ ते., २ ख़ा., ७ ते., ५ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ३४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

९७ पंक्ति—३४ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १४ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., ८ ख़ा., ७ ते., १० ख़ा., १३ ते., ३ ख़ा., ७ ते., ५ ख़ा., १३ ते., —१ ख़ा., ७ ते.; दो वार., १० चे., लौटो।

९८ पंक्ति—१ चे. छोड़ो., ४ सादे., ३ छोड़ो., ९ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., ६ ख़ा., १३ ते., ४ ख़ा., ३१ ते., २ ख़ा., २५ ते.,

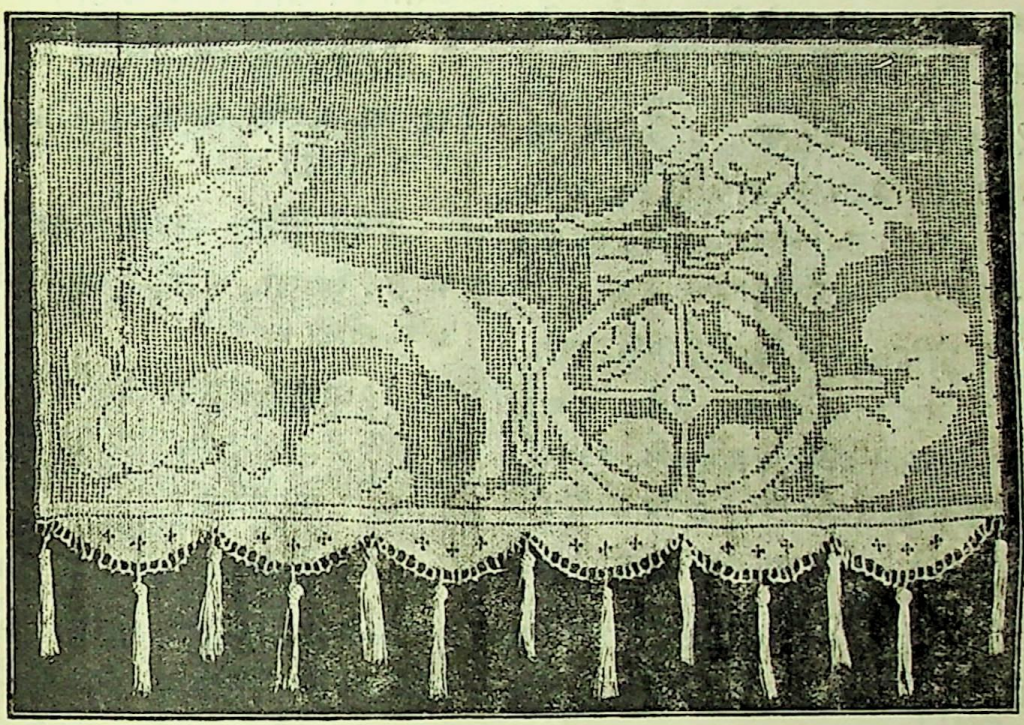

—१ ख़ा., ७ ते., दो वार., १३ ख़ा., ४ ते., ३१ ख़ा., ४ ते., ३४ ख़ा., ५ चे., लौटो।

९९ पंक्ति—३४ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १३ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १३ ते., ८ ख़ा., १९ ते., ५१ ख़ा., १९ ते., ९ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., ६ चे., लौटो।

१०० पंक्ति—४ चे. छोड़ो., १५ ते., १ ख़ा., ७७ ते., १ ख़ा., १३ ते., १८ ख़ा., ७ ते., १६ ख़ा., १३ ते., १३ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., ३४ ख़ा., ५ चे., लौटो.

१०१ पंक्ति—३४ ख़ा., ४ ते., ३ ख़ा., ४ ते., १३ ख़ा., १० ते., १७ ख़ा., १९ ते., १५ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., ६ चे., लौटो।

१०२ पंक्ति—४ चे., छोड़ो., १८ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १० ते., ३ ख़ा., ५८ ते.,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१६ खा., १० ते., १३ खा., ४ ते., ३ खा., ४ ते., ३४ खा., ५ चे., लौटो।

१०३ पंक्ति—३५ खा., ४ ते., २ खा., ४ ते., १३ खा., १० ते., १५ खा., ६१ ते., ४ खा., ७ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते., ६ चे., लौटो।

१०४ पंक्ति—९ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., ४ ते., ५ खा., ६४ ते., १५ खा., ७ ते., १३ खा., ४ ते., २ खा., ४ ते., ३५ खा., ५ चे., लौटो।

१०५ पंक्ति—३५ खा., ४ ते., २ खा., ४ ते., १३ खा., ७ ते., १२ खा., ३१ ते., ७ खा., ३४ ते., १ खा., ४ ते.,—१ खा., ७ ते., दो वार ३ खा., ७ ते., ६ चे., लौटो।

१०६ पंक्ति—४ चे., छोड़ो., १२ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., ३ खा., ७ ते., १ खा., १३ ते., १४ खा., ४६ ते., ५ खा., ४ ते., १३ खा., ४ ते., २ खा., ४ ते., ३५ खा., ५ चे., लौटो।

१०७ पंक्ति—३५ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., ४ ते., १३ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., ५५ ते., १६ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १० ते., २ ख़ा., ७ ते.. १ ख़ा २५ ते., ३ चे., लौटो।

१०८ पंक्ति—२४ ते., १ ख़ा., ७ ते., २ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ४ ते., १८ ख़ा., ५८ ते., १ ख़ा., ४ ते., १२ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., ४ ते., ३५ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१०९ पंक्ति—३५ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., ४ ते., १३ ख़ा., ६१ ते., २१ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २५ ते., ३ चे लौटो।

११० पंक्ति—९ ते., १ ख़ा., १३ ते.,—१० ख़ा., ७ ते., दो वार, २३ ख़ा., ६१ ते., १२ खा., ४ ते., २ खा., ४ ते., ३५ खा., ५ चे., लौटो।

१११ पंक्ति—३५ खा., ४ ते., २ खा., ४ ते., १२ खा., ५८ ते., २५ खा., ४ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १० ते., ३ खा., ७ ते., ३ चे., लौटो।

११२ पंक्ति—९ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ७ ते., २८ खा., ५८ ते., ११ खा., ४ ते., २ खा., ४ ते., ३५ खा., ५ चे., लौटो।

११३ पंक्ति—३५ खा., ४ ते., २ खा., ४ ते., ११ खा., ५८ ते., २८ खा., ७ ते., १ खा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

११४ पंक्ति—२४ ते., १ खा., ७ ते., २९ खा., ५८ ते., १० खा., ४ ते., २ खा., ४ ते., ३५ खा., ५ चे., लौटो।

११५ पंक्ति—३५ खा.. ४ ते., २ खा., ४ ते., १० खा., ५८ ते., २९ खा., ७ ते., १ खा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

११६ पंक्ति—१२ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., ३० खा., ५५ ते., १० खा., ४ ते., २ खा., ४ ते., ३५ खा., ५ चे., लौटो।

११७ पंक्ति—३६ खा., ४ ते., १ खा., ४ ते., १० खा., ५२ ते., ३१ खा., ७ ते., १ खा., ७ ते., ३ खा., ७ ते., ३ चे., लौटो।

११८ पंक्ति—९ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., ३३ खा., ४८ ते., ८ खा., ४ ते., १ खा., ४ ते., ३६ खा., ५ चे., लौटो।

११९ पंक्ति—३६ खा., ४ ते., १ खा., ४ ते., ९ खा., ४० ते., २९ खा., १३ ते., ३ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते., ३ चे., लौटो।

(शेष फिर)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गृह प्रबन्ध।

(फुटकर बातें)

चांदी की वस्तुएं सूखे आटे में रखने से काली नहीं पड़तीं।

———

टूटे हुवे कांच के टुकड़ों को उठाने का सब से शीघ्र और सुगम तरीका यह है कि एक भीगे हुए कपड़े से समेट जांय।

———

सिरके और नमक को मिलाकर उससे चाह के प्यालों पर के धब्बे छुड़ाये जांय तो हट जाते हैं।

———

बरतनों से जले हुए दूध के धब्बे दूर करने की सुगम रीति यह है कि उन्हें नमक से रगड़ कर मांजो।

———

खिड़कियों और दर्वाजों के सूती पर्दे और बच्चों के कपड़ों को आग लगने से बचाने के हेतु उनको २ आउन्स फिटकरी और १ गैलन पानी के घोल में डुबो कर सुखा लेना चाहिये।

———

रंगीन रुमाल या रंगीन किनारे वाले रुमालों को धोते समय प्रथम ठंडे पानी में भिगो लेने से उनके रंग हलके पड़ने या बिलकुल उड़ जाने रुक जाते हैं।

———

तौलिया या अन्य झालर वाली चीज़ों को धोकर सुखाते समय खूब झाड़ना उचित है। फिर सूखने के वास्ते फैलादो। बीच २ में दो तीन बार उतार २ कर झाड़ दो। इससे झालर आपस में सिकुड़ती नहीं और बिना कैंची किये बड़ी साफ़ हो जाती है।

———

सिलाई की मशीन चलाने वालों को यह ध्यान में रखना योग्य है कि मशीन को तेल देते समय यह न करें कि महीने दो महीने पीछे खूब तेल भर दें किन्तु जल्दी २ चौथे छठे दिन थोड़ा २ डालती रहें। और डालने के पश्चात् खूब घुमावें फिर अन्दर से धागों के फूसड़े तथा मैल इत्यादि झाड़ दें। फिर सुई धागा इत्यादि अपने २ स्थान पर लगाकर कार्य्य आरम्भ करें।

———

प्रायः घरों में बाल्टियों, टबों में टूटने पर काठ लगवा लेते हैं जिनसे वह बड़ा अच्छा कार्य्य देने लगते हैं। किन्तु जब कभी वे कुछ दिन भी बेकार रहें तुरन्त फट जाते हैं। कारण कि लकड़ी सूखने से चिटख जाती है अतः इस बचाव के लिये उनमें दो इन्च के लग भग जल सदा पड़ा रहने देना चाहिये। इससे वे कभी न ख़राब होंगे।

———

एक गिलास जल में आधे निम्बू का रस निचोड़ कर पीने से सिर दर्द तुरन्त ठीक हो जाता है।

———

मलेरिया अर्थात् जूड़ी प्रायः घरों में बहुत प्रचलित होती है इसके उतारने की एक सुगम औषधि है। पांच, छः लाल मिर्च लेकर पानी डालकर पीस लो जिससे गाढ़ा २ लेपसा हो जाय। फिर एक सफ़ेद कपड़ा कोई ६ इन्च लम्बा ३ इन्च चौड़ा लेकर उस पर लेप को बराबर २ फैला दो कपकपी लगने के समय के दो घन्टे पूर्व ही उस कपड़े को दहिने हाथ की अंगूठे के पास वाली उंगली पर बांध दो। तीन चार घंटे तक इसे रक्खो चाहे रोगी कितनी ही मिन्नत करे। प्रायः ९६ प्रति सैकड़ा मलेरिया के रोगी इससे एक ही दिन में अच्छे हो जाते हैं।

———

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री-जाति और राजनैतिक आन्दोलन।

स्त्रियों को राजनैतिक आन्दोलन में भाग नहीं लेना चाहिये क्योंकि यह अपवित्र कार्य्य है। हम अपनी नारियों को जातीय आदर्श की संरक्षिणी देखना चाहते हैं। परन्तु उन्हें जातीय जीवन की ओर ध्यान रखना चाहिये और उसे पवित्र बनाये रखना चाहिये। वोट देने की शक्ति से जातीय जीवन उच्च होना चाहिये। जब मैं राजनीति में भाग लेती हूं तो मैं आदर्श के लिये बलपूर्वक खड़े रहने को ही अपनी सेवा की भेंट समझती हूं। दलबन्दी में वास्तविक स्वरूप को भूलकर केवल काल्पनिक परछायीं पर ही युद्ध होता है। पुरुष सदा दलबन्दी करेंगे, परन्तु आदर्श सदा जातीय बना रहेगा। स्त्रियें इस दलबन्दी को दूर कर राजनीति में एकता स्थापन करेंगी। उनका स्वभाव उन्हें कर्मक्षेत्र में उतरने के लिये बाधित करेगा परन्तु दलों में जाने के लिये नहीं। हम चाहती हैं कि स्त्रियें जातीय जीवन को उत्साहित करें और उसे सर्वथा पवित्र रखें। हम दलों के साथ योग न देकर आदर्शों के लिये भाग लेंगी। हम उनका साथ देंगी जो कि ठीक मार्ग पर चल रहे हैं। इस अवस्था में हम किसी रीति की भक्ति के आधीन न होकर केवल आदर्श की ही भक्त रहेंगी।

(श्रीमती सरोजनी नायडू)

वैदिक विज्ञान ग्रन्थमाला।

राज्यरत्न आत्मारामजी कृत

अपने ढङ्ग की अपूर्व वैज्ञानिक सचित्र

अद्वितीय पुस्तकें।

सृष्टि विज्ञान—में डार्विन साहब के क्रमागत सृष्टि विज्ञान का बहुमान्य सिद्धान्त तथा सृष्टि उत्पत्ति पर हमारे आर्य्य ऋषि मुनि और महात्माओं के विचार लिखकर तुलनात्मक पद्धति से खंडन मंडन किया है जिससे पुस्तक बहुत माननीय तथा अपने ढंग की अद्वितीय हो गई है। मूल्य सचित्र का २)

शरीर विज्ञान—सचित्र अनुपम पुस्तक में शल्यविद्या का आदिमूल वेद में है तथा वात पित्त कफ के सिद्धान्त की सत्यता दिखाकर युरोप के कई साइंस के मन्तव्यों को अमान्य ठहराया है। बढ़िया छपी पुस्तक का मूल्य ।≡)

ब्रह्मयज्ञ—जो लोग धर्म्म और ईश्वर के नाम से दूसरों को गाली दिए बिना अपनी वाणी और लेखिनी को सफल नहीं समझते उन्हें यह पुस्तक अवश्य पढ़ना चाहिए। बढ़िया कागज़ पर छपी पुस्तक है। मूल्य ।॥)

त्रिदेव निरूपण—मूल्य ।-)

कोल्हापुर नरेश के कार्य्य—(सचित्र) मूल्य -)

आदर्श चरितावली—मूल्य ।=)

दृष्टान्त सागर—इस पुस्तक में २०० के करीब उत्तम २ दृष्टान्त हैं। व्याख्याताओं के बड़े काम की है। मूल्य १।)

मिलने का पता—

जयदेव ब्रदर्स, बड़ौदा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. L. 1240.

वर्ष १] मार्गशीर्ष १९७७—दिसम्बर १९२० [खण्ड १, संख्या ८

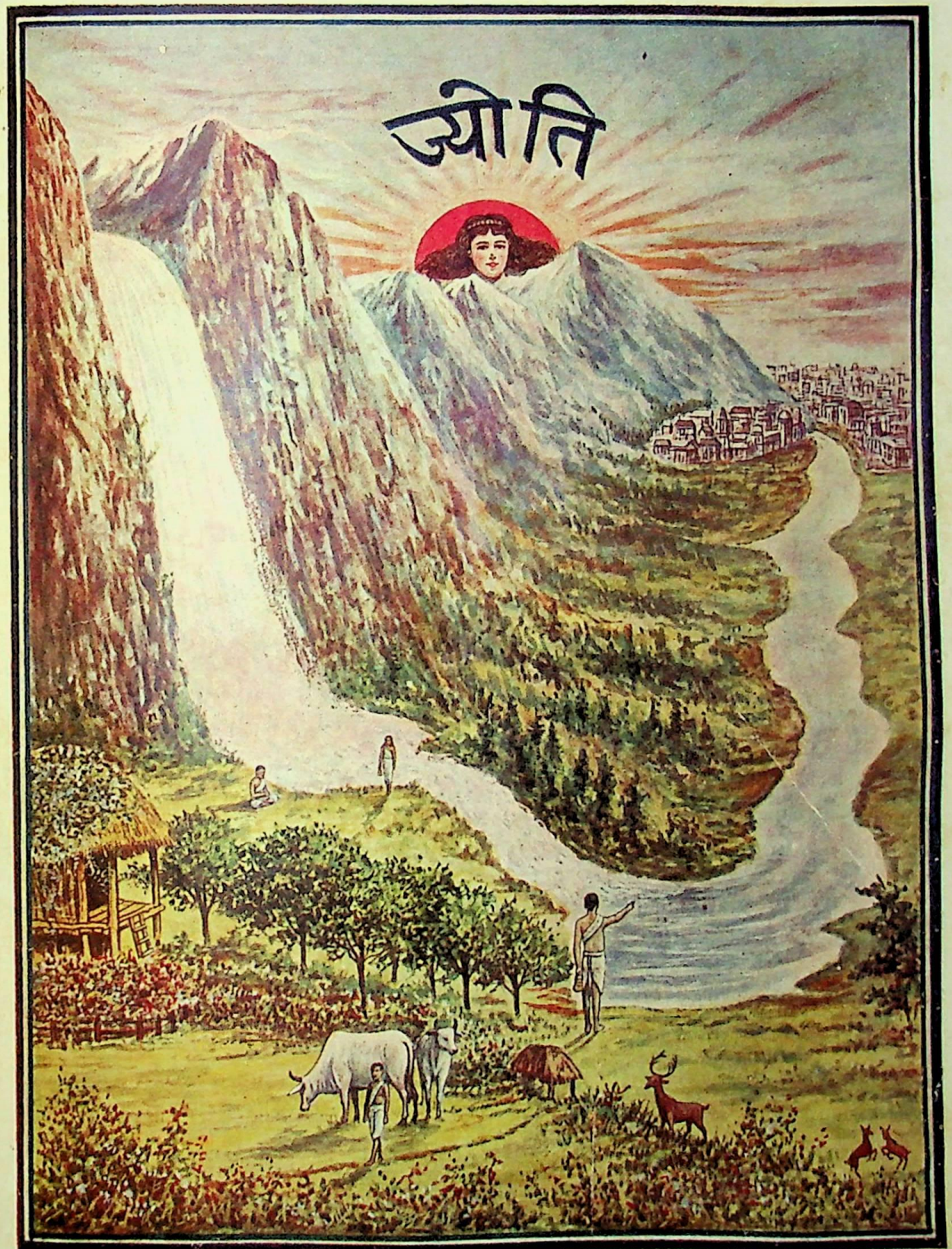

वार्षिक मूल्य ४॥) सम्पादिका—विद्यावती सेठ बी. ए. स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
प्रति संख्या ॥) विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय-सूची।

विषय	पृष्ठ
१ प्रार्थना—लेखक श्रीयुत रूपनारायण पाण्डेय।	४५१
२ शुक्रनीति के समय में न्याय व्यवस्था—लेखक श्रीयुत प्रो० रामदेवजी बी. ए. एम. आर. ए. एस.	४५२
३ अस्तोन्मुख द्विजराज [कविता]—लेखक श्रीयुत मेधाव्रत जगजीवन।	४५९
४ योरुपी सभ्यता पर विचार—लेखक श्रीयुत बालकृष्ण एम.ए. [लण्डन]	४६०
५ कुन्ती और कर्ण [कविता]—लेखक श्रीयुत हरिशंकर भट्ट।	४६२
६ रुक्मिणी हरण नाटक—अनुवादक श्रीयुत मेधाव्रत जगजीवन।	४६४
७ विजेताराम [कविता]—लेखक पंडित गयाप्रसाद [श्रीहरि]	४७०
८ 'सदाचार मीमांसा'—लेखक श्रीयुत सत्यव्रत जगजीवन।	४७१
९ दया धन! धरो धरणि अवतार [कविता] लेखक श्रीयुत भवानीशंकर याज्ञिक।	४७४
१० गंगा-जमनी-नलनी—लेखक श्रीयुत 'पागल'	४७६
११ राम आगमन [कविता]—लेखक पं० गयाप्रसाद [श्रीहरि]	४८०
१२ मारिशस द्वीप—लेखक श्रीयुत स्वामी स्वतंत्रानन्दजी।	४८०
१३ हमारी मंजूषा—	४८३
१४ कुसुमोद्यान—	४८५
१५ वैज्ञानिक संसार—	४८८
१६ विचार प्रवाह—	४९०
१७ वनिता विनोद—	४९९

ज्योति के नियम

ग्राहकों के लिये।

१. ज्योति प्रति अंग्रेजी मास की १५ को ग्राहकों के पास पहुंचा करेगी।

२. डाक व्यय सहित भारत के लिये इस का मूल्य ४॥) और छे मास के लिये २॥) वी. पी. का व्यय ≡) अलग है प्रति अंक का मूल्य ॥) है। भारत से बाहर विदेश के लिये इसका वार्षिक मूल्य ६) है। मूल्य **मैनेजर ज्योति लाहौर** के नाम आना चाहिये।

३. पुरानी प्रतियां जो मिलसकेंगी उनका मूल्य प्रति संख्या ॥) से कम नहीं होगा।

४. पते के परिवर्त्तन की सूचना पत्र के निकलने से १५ दिन पूर्व मैनेजर को मिलनी चाहिये।

५. यदि कोई संख्या किसी ग्राहक को न पहुंचे तो पहिले अपने डाक घर से पूछना चाहिये। यदि पता न चले तो डाक घर से जो उत्तर आवे उसे प्रबन्ध कर्त्ता के पास भेज देना चाहिये। परन्तु यह सूचना अगले अंक के निकलने से १५ दिन पूर्व तक मिलनी चाहिये अन्यथा दूसरी प्रति विना मूल्य नहीं दी जायगी।

लेखकों के लिये

६. लेख पढ़ने योग्य अक्षरों में हाशिया छोड़कर एक ओर ही लिखे जाने चाहियें। लेखों के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादिका को है। जो लेख प्रकाशित नहीं किये जासकेंगे वह टिकट और पता साथ होने पर लौटा दिये जावेंगे।

८. लेख कविता समालोचना के लिये पुस्तकें और परिवर्त्तन के पत्र सम्पादिका ज्योति **लायलपुर** के पते पर आने चाहियें।

मूल्य तथा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र प्रबन्धकर्त्ता **ज्योति लाहौर** के पते पर आने चाहियें।

विज्ञापन दर यह होगी।

प्रतिमास।

पूर्ण पृष्ठ या दो कालम १०) आधा पृष्ठ या एक कालम ६) चौथाई पृष्ठ या आधा कालम ३) चौथाई कालम २) टैटिल पेज का तीसरा पृष्ठ १२) टैटिल का अन्तिम पृष्ठ १५)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

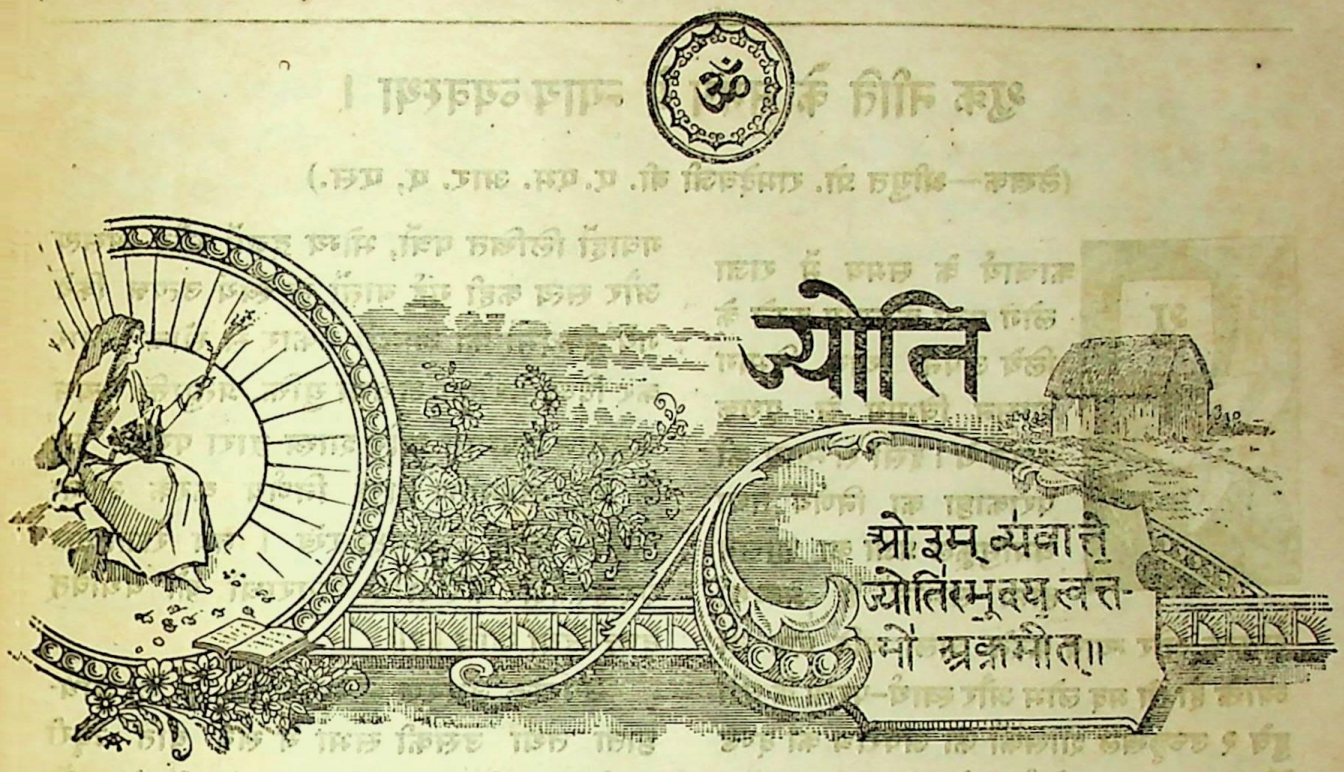

वर्ष १ | मार्गशीर्ष १९७७—दिसम्बर १९२० | संख्या ८

प्रार्थना।

ले० श्रीयुत रूपनारायण पाण्डेय।

कर कृपा देश पर स्वामी।
मिटे द्रोह, दारिद्र्य, दुरित, दुख, दुर्मति की बदनामी।
धरें धर्म का ध्यान हृदयमें, करें न उसमें खामी॥
रहे न एक देश में कायर क्रूर कुमति खलकामी।
हों सब सच्चे आर्य्य जाति के बच्चे मनु-अनुगामी॥
भिक्षाभक्ति न शिक्षा से हो, मन भावे न गुलामी।
स्वावलंब प्रिय स्वाभिमानयुत, हों स्वराज्य के स्वामी॥
विज्ञ ज्ञान-विज्ञान बढ़ाकर, बनें विप्रवर नामी।
क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र मिलकर हों, देश भक्ति के हामी॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शुक्र नीति के समय में न्याय व्यवस्था।

(लेखक—श्रीयुत प्रो. रामदेवजी बी. ए. एम. आर. ए, एस.)

शुक्राचार्य के समय में राजा लोग प्रजा के न्याय करने के लिये अपना न्याय विभाग शासन विभाग से पृथक् रखते थे। इसी से न्याय की पराकाष्ठा का निर्णय तथा धर्मानुकूल प्रजा का शासन होना सम्भव है अन्यथा शासक और न्याय करने वाला यदि एक ही व्यक्ति हो तो मद लोभ और स्वार्थ-परता के वश हुवे २ उच्छृंखल शासकों को अपराध का दण्ड देने वाला दूसरा कोई न होगा तथा शासक का भी यथेच्छ पापाचारी और अत्याचारी हो जाना सम्भव है। प्रजा की दुःख भरी आहों पर ध्यान देने वाला कोई धर्म भी भूतल पर शेष नहीं रह जायगा। इससे धर्म के मूल को दृढ़ता से गाड़ने तथा न्याय की प्रतिष्ठा रखने के लिये शासन कर्त्ता और न्याय विभाग के अधिष्ठाता दोनों पृथक् २ होने चाहिये।

इसी तत्त्व को प्राचीन ऋषियों ने साक्षात् करके अपने धर्म शास्त्रों तथा अर्थ शास्त्रों में भी यही मर्यादा रक्खी है जैसा कि शुक्राचार्य कहते हैं। प्राड् विवाक् (Chief Justice) अपनी सभा (Council) में बैठा हुवा गवाहों लिखित पत्रों, भोग्य द्रव्यों और असत्य और सत्य कही गई बातों से स्वयं उत्पन्न किये गये मुकदमों को अच्छी प्रकार से सोच विचार कर दिव्य परीक्षा अथवा युक्ति प्रत्युक्ति प्रत्यक्ष अनुमान उपमान और शास्त्र द्वारा परीक्षा कर के बहु सम्मति द्वारा निर्णय करके अपना फैसला राजा के समक्ष रखे। तब राजा उस पर हस्ताक्षर करे और अपराधी को यथावत् दण्ड दिया जावे ॥१॥

उपरोक्त उद्धरण में न्याय विभाग का अधिष्ठाता तथा उसकी सभा ये सब बातें ज्यूरी कमीशन आदि की प्राचीन प्रथा के ही द्योतक हैं। जिन अवस्थाओं में राजा स्वयं न्याय विभाग अपने हाथों में न लेसके उस समय राजा उस स्थान पर वेदों के अच्छे ज्ञाता जितेन्द्रिय कुलीन दूसरों के चित्त को दुखित न करने वाले स्थिर स्वभाव परलोक का भय खाने वाले धर्मनिष्ठ क्रोधशून्य ब्राह्मण को न्याय विभाग का अधिष्ठाता बनावे। यदि ब्राह्मण विद्वान् न हो तो क्षत्रिय या धर्मशास्त्र के जानने वाले वैश्य को उस स्थान पर नियुक्त करे।

न्याय सभा के सभासदों के गुण

न्याय सभा के सभासद व्यवहार के जानने वाले वृत्तशील और गुणों से युक्त शत्रु और मित्र में

---

(१) साक्षिभिर्लिखितैर्भोगै श्छलैर्भूतैश्च मानुषान्। स्वेनोत्पादित सम्प्राप्त व्यवहारान् विचिन्त्य च ॥९६॥

दिव्य संसाधनाद्वापि केषु किं साधनं परम्। प्रत्यक्षानुमानोपमानैर्लोक शास्त्रतः ॥९७॥

बहु सम्मतसंसिद्धान् विनिश्चित्य सभास्थितः। सभ्यः प्राड् विवाकस्तु नृपं संबोधयेद् ततः ॥ शुक्र० अ० २॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समान धर्म के जानने वाले सत्यवक्ता आलस्य रहित काम क्रोध लोभ मोह आदि को जीतने वाले प्रिय वाक्य बोलने वाले होने चाहियें ऐसों को ही राजा सभी जातियों में से न्याय सभा के सभासद बनावें ॥१॥

किसान, तरखान, राज, महाजन, नाचने वाले नट, पाखण्डी, चोर, आदि का फैसला राजा उन्हीं के धर्म के अनुकूल करे इनका फैसला इन्हीं जाति के कर सक्ते हैं दूसरे नहीं कर सक्ते। परस्पर झगड़ते हुए द्विजातियों के आश्रमों में राजा स्वयं उलटा सीधा फैसला न देवे ॥२॥

तपस्वियों के कार्य्यों का फैसला तथा माया विद्या और योग विद्या के जानने वालों का निर्णय भी स्वयं न करके त्रिवेद जानने वाले विद्वानों से करावे क्योंकि विरुद्ध निर्णय होने पर ये लोग रुष्ट होकर राजा की हानि कर देते हैं। इस प्रकार जंगल के वासियों के निर्णय जंगल के वासी, सैनिकों के सैनिक, जिन के अभियोग हों वहीं के वासियों से उनका न्याय होना चाहिये। इस प्रकार राजा लोक व्यवहार तथा न्याय व्यवहार के कार्य को चलाने के लिये धार्मिक सुपरिक्षित सभ्यों को लगावें ॥३॥

लोक और वेद दोनों के जानने वाले ५, ७, या ३ भी ब्राह्मण जिस सभा में हों वह सभा यज्ञ के सदृश पवित्र है। व्यवहार सम्बन्धी अभियोगों के सुनने के लिये वणिजों को नियुक्त करना चाहिये। शास्त्र को जानने वाला चाहे नियुक्त हो चाहे अनियुक्त हो वह सदा दिव्य वाणी ही बोलता है ॥४॥

---

(१) व्यवहार विदः प्राज्ञाः वृत्त शीलगुणान्विताः। रिपौ मित्रे समा ये च धर्मज्ञाः सत्यवादिनः ॥१६॥

निरालसा जितक्रोध काम लोभाः प्रियंवदाः। राज्ञा नियोजितव्यास्ते सभ्याः सर्वासुजातिषु ॥१७॥

(२) कीनाशाः कारुकाः शिल्पि कुसीदि श्रेणी नर्त्तकाः। लिङ्गिनस्तस्करांः कुर्युः स्वेन धर्मेण निर्भयम् ॥१८॥

अशक्यो निर्णयोह्यन्यैस्तज्ज्ञैरेवतु कारयेत्। आश्रमेषु द्विजातीनां कार्ये विवदतां मिथः ॥१९॥

न निर्ब्रूयात् नृपो धर्मे चिकीर्षुर्हितमात्मनः ॥२०॥

(१) तपस्विनां तु कार्याणि त्रैविद्यैरेव कारयेत्। माया योगविदांचैव नस्वयं कोपकारणात् ॥२१॥

(२) आरण्यास्तु स्वकै र्कुयुः सार्थिकाः सार्थिकैः सह। सैनिकाः सैनिकैरेव ग्रामेऽप्युभयवासिभिः ॥२२॥

(३) अभियुक्ताश्च ये यत्र यन्निबन्धानियोजनाः।तत्रत्य गुण दोषाणांतएवहि विचारकाः ॥२४॥

(४) राजातु धर्मिसभ्यान् नियुज्यात्सुपरीक्षितान्।व्यवहारधुरं वोढुं ये शक्ताःपुंगवा इव ॥२५॥

लोक वेदज्ञ धर्मज्ञा सप्त पञ्च त्रयोपि वा। यत्रोपविष्टा विप्राः स्युः सायज्ञसदृशीसभा ॥२६॥

श्रोतारोवणिजस्तत्र कर्त्तव्याः सुविचक्षणाः। अनियुक्तो नियुक्तो वा धर्मज्ञोवक्तु मर्हति ॥२७॥

दैवीं वाचं स वदति यः शास्त्र मुपजीवति।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मनुष्य या तो सभा में न जावे, जावे तो सत्य ठीक ठीक बात कहे, सत्य न बोलता हुवा या असत्य बोलता हुवा पुरुष पापी होता है ॥५॥

राजा जिन जनसंघों, गणों या कुलों पर पूरा विश्वास रखता हो उनको डाका या चोरी आदि के मामलों को छोड़ कर शेष का निर्णय उनके हाथ ही में दे देवे। कुल जिस बात का विचार न कर सके उसका श्रेणियें करें जिसका निर्णय श्रेणी न करे उसका विचार गण करें गणों के भी न किये गये निर्णय को कतिपय नियुक्त पुरुष करें। कुलादिकों से भी अधिक उत्कृष्ट सभा के सभ्य हैं उनसे भी उत्कृष्ट उनका अधिप सभापति है इन सभी से अधिक धर्माधर्म का निर्णय करना है। ऊंचे नीचे और मध्य के सब प्रकार के झगड़ों को उसे विचार करना पड़ता है इससे सब बुद्धियों के ऊपर राजा की बुद्धि होती है ॥६॥

राजसभ्यों द्वारा पृथक् २ एक बार दोबारा तिबारा या चौबारा भी विचार करा कर निर्णय करावे। वादी और प्रतिवादी को और शेष सभ्यों को लेखकों और दर्शकों को जो धर्मानुकूल वाक्यों से प्रसन्न करता है वह सभा को तराने वाला सभास्तार कहाता है ॥१॥

इस प्रकार परीक्षा के करने वाले राजा अधिकारी सभ्य स्मृतियें (धर्मशास्त्र) गणक लेखक सुवर्ण अग्नि, जल और राजपुरुष ये दशाङ्ग हैं। इन दशों अंगों सहित राजा सभापति के आसन पर बैठ कर न्याय देखे ऐसी सभा यज्ञ के सदृश्य पवित्र है ॥२॥

इन दशों के कार्य निम्न प्रकार से हैं। वक्ता या प्राड् विवाक् अध्यक्ष हैं और शासक राजा है कार्य की परीक्षा करने वाले सभ्य लोग हैं। स्मृति फैसला देती है और जप दान दम का उपदेश करती है। शपथ के लिये सोना और

---

(५) सभा वान प्रवेष्टव्या वक्तव्यं वा समञ्जसम् ॥२८॥

अनब्रुवन् विब्रुवन् वापि नरो भवति किल्बिषी ॥२९॥

(६) राज्ञा ये विदिताः सम्यक् कुल श्रेणि गणादयः। सहस्र स्त्रेय वर्ज्यानि कुर्युः कार्याणि नेतृणाम् ॥३०॥

विचार्य श्रेणिभिः कार्यं कुलैर्यन्न विचारितम्। गणैश्चश्रेण्यविज्ञातं गणज्ञातं नियुक्तकैः ॥३१॥

कुलादिभ्योऽधिकाः सभ्यास्तेभ्योऽध्यक्षोधिकः कृतः। सर्वेषामधिको राजाधर्माधर्म नियोगिकाः ॥३२॥

उत्तमाधममध्यानांवादानां विचारणात्। उपर्युपरिबुद्धीनांचरन्नीश्वरबुद्धयः ॥ ३२ ॥ [शुक्र० अ० ४ अ० ५]

[१] एक द्वित्रिचतुर्वारं व्यवहारानुचिन्तितम्। कार्यं पृथक् २ सभ्यैराज्ञा श्रेष्ठोत्तरैःसह ॥ ३६ ॥ अर्थि प्रत्यर्थिनौ सभ्यान् लेखकप्रेक्षकांश्चयः। धर्मवाक्यैरंजयतिससभास्तारतामियात् ॥३७॥

[२] नृपोधिकृतसभ्याश्च स्मृतिर्गणकलेखकौ। हेमाग्न्यम्बु स्वपुरुषाः साधनाङ्गानि वैदश ॥ ३८ ॥

एतद्दशाङ्गकरणं यस्यामध्यास्य पार्थिवः। न्यायान् पश्यस्तृतमतिः सा सभाऽध्वरसन्निभा ॥ ३९ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

आग है भूखे और प्यासे के लिये जल है गणक वस्तु की संख्या करे लेखक फैसला लिखे। (३)

राजा गणक और लेखक शब्दशास्त्र और कोष के जानने वाले तथा नाना लिपि के ज्ञाता रखे। (४)

कचहरी

कचहरी को प्राचीन काल में धर्माधिकरण कहा जाता था क्योंकि इस सभा में धर्मशास्त्रों के अनुसार व्यवहार शास्त्र का विवेचन किया जाता था। इस धर्मसभा में व्यवहारों को देखने की इच्छा वाला राजा मन्त्रज्ञ मन्त्रियों और ब्राह्मणों के सहित प्रवेश करे और धर्मासन पर बैठकर आये अभियोगादिकों को देखे। पूर्व पक्ष और उत्तर पक्ष दोनों के प्रति समदर्शी होकर राजा दोनों पक्षों से पूछे। प्रतिदिन देश में देखे शास्त्र में देखे हेतुओं द्वारा जाति तथा राष्ट्र के धर्मों को तथा सम्प्रदाय और कुलों के धर्मों की रक्षा करे। (१)

पहिले से चले आये देश और जाति के धर्मों के अनुसार उन्हीं को पालन करना चाहिये जिससे प्रजा विरुद्ध होकर बिगड़ न उठे ॥२॥

कचहरी की कार्यवाही

मुद्दई अर्थी कहाता है मुद्दाला प्रत्यर्थी कहाता है। अर्थी धर्मासन पर आरूढ़ राजा को देखकर अधर्म से रहित ठीक २ सत्य २ सोचकर और लिख कर नम्र होकर नमस्कार करके अपना कार्य निवेदन करे राजा उसको साम पूर्व शान्त करके अपना धर्म नियम

---

[३] दशानामपि चैतेषां कर्म प्रोक्तं पृथक् २। वक्ताध्यक्षोनृपः शास्त्रसभ्याः कार्यपरीक्षकाः ॥४०॥

स्मृति र्विनिर्णयं व्रते जपं दानं दमं तथा। शपथार्थे हिरण्याग्नी अम्बु नृपतिक्षुब्धयोः ॥४१॥

गणको गणयेदर्थं लिखेन्न्यायं च लेखकः ॥४२॥

[४] शब्दाभिधान तत्त्वज्ञौ गणनाकुशलौ शुची। नाना लिपिज्ञौ कर्त्तव्यौ राज्ञागणक लेखकौ ॥४३॥

[१] धर्मशास्त्रानुसारेण ह्यर्थ शास्त्र विवेचनम्। अत्राधिक्रियते स्थाने धर्माधिकरणं हि तत् ॥४४॥

व्यवहारान्दिदक्षुस्तु ब्राह्मणैः सह पार्थिवः। मन्त्रज्ञैर्मन्त्रिभिश्चैव विनीतः प्रविशेत् सभाम् ॥४५॥

धर्मासन मधिष्ठाय कार्यदर्शन मारभेत्। पूर्वोत्तर समो भूत्वा राज्ञा पृच्छेद्विषादिनौ। प्रत्यहं देश दृष्टैश्च शास्त्रदृष्टैश्च हेतुभिः। जातिजानपदान् धर्मान् श्रेणीधर्मांस्तथैव च ॥४६॥

समीक्ष्य कुलधर्मांश्च स्वधर्मं प्रतिपालयेत् ॥४७॥ [शुक्र० अ० ४, अ० ५]

[२] धर्मासनगतं दृष्ट्वा राजानं मन्त्रिभिः सह। यथा सत्यं चिन्तयित्वा लिखित्वा च समाहितः। नत्वा च प्राञ्जलिः प्रह्वोह्यर्थं कार्यं निवेदयेत् ॥५८॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बतला दे। और पीछे विनीत अर्थी को पूछे कि तुझे क्या कष्ट है और क्या कार्य है। हे मनुष्य तू भय मत कर किसने कहां! कब! क्यों तुझको कष्ट दिया। इस प्रकार पूछ २ कर स्वभावतः उसके मुख से निकले वचन को राजा सुने उसके कहे को प्रसिद्ध लिपि या प्रसिद्ध भाषा में लेखक लिखे। उस लेखक को राजा चोर की तरह दण्ड दे जो कुछ कहे को कुछ लिख दे। ऐसे अशुद्ध लिखे को कभी भी सभ्य लोग स्वीकार न करें यदि वे अहङ्कार से ऐसे असत्य लेख को मान ले तो राजा उन्हें भी चोर के सदृश ही दण्ड देवे। (१)

प्राड् विवाक्

राजा के न होने पर प्राड् विवाक् सभा में राजा के आसन पर कार्य करे प्राड् विवाक् वादियों को वह पूछता है इससे प्राड् कहाता है विवेचन करने से विवाक् कहाता है। या सभ्यों द्वारा विवेचन करता है या धर्म और अधर्म का निर्णय करता है इससे भी विवाक् कहाता है। (२)

सभ्य

सभा के योग्य श्रेष्ठ पुरुष सभ्य कहाते हैं। स्मृति और आचार से रहित प्रकारों

कचहरी

से पीड़ित होकर दुःखित आदमी राजा के पास अपनी शिकायत करता है इसी से कचहरी शब्द व्यवहृत होता है। [३]

राजा स्वयं कभी किसी से विवाद या झगड़ा न करे नाहीं राजा के पुरुष भी कभी किसी से मुकदमा करें। राजा कभी राग से लोभ से या क्रोध से किसी को पीड़ा न दे। नृप आवेदकों के बिना भी दूर से उपस्थित की गई बातों को अपनी बुद्धि से सूचकों और स्तोभकों से सलाह करके फैसला करे विशेषतः जिसमें उसका अपना सम्बन्ध है। बिना राजा की आज्ञा लिये भी शास्त्र के अनुकूल जो पहिले निवेदन करता है वह स्तोभक कहाता है। [४]

सूचक

दूसरों के दोषों को देखने के लिये जो राजा से नियुक्त किया गया है वह सूचक कहाता है। (१)

वादी को दण्ड

उद्धत (गुस्ताख़) क्रूर भाषण करने वाला, गर्वित क्रोधी न्यायाधिकारियों के बराबर के आसन पर बैठने वाला घमण्डी वादी दण्ड योग्य है। [२]

आवेदन और साक्षी

अर्थी की लिखित प्रार्थना आवेदन कहाती है। प्राड् विवाक् या न्यायाधिकारियों के प्रति कही

---

[१] [शुक्र० अ० ४, श्लोक ५२—६३]

[२] वादिनौ पृच्छति प्राड् वा विवाकोऽपि निमित्ततः। विचारयति सभ्यै र्वा धर्मार्थान् विवक्ति वा ॥६६॥

सभायां येहिताः योग्याः सभ्यास्ते चापिसाधवः ॥६७॥

[३] स्मृत्यान्वाख्ययेतेन मार्गेणाधर्षितः परैः। आवेदयति चेद्राज्ञे व्यवहारपदं हि तत् ॥६८॥

(४) शास्त्रेणानिन्दितस्त्वर्थीनापि राज्ञा प्रचोदितः। आवेदयतियत्पूर्वं स्तोभकः स उदाहृतः (शुक्र० अ० ४ अ० ५)।

(१) नृपेण विनियुक्तो यः परदोषानुवीक्षणे। नृपं संसूचयेज्ज्ञात्वा चरः स उदाहृतः ॥ ८०१ ॥ [शुक्र० अ० ४, अ० ५]

(२) [शुक्र० अ० ४, अ० ५, ८२]

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भाषा बहुत सरल होनी चाहिये जिसे सब कोई समझ सकें। [३]

दी हुई साक्षी पर अर्थी या वादी के हस्ताक्षर कराकर राजा अपनी मोहर से छाप दे। जो सभासद लोग बिना स्पष्ट किये ही राग लोभादि के कारण बिना विचारे निर्णय दे देते हैं उनको राजा दण्ड दे।

"ग्राह्य और अग्राह्य विवाद की बातों को राजा अच्छी तरह से विचारे। पूर्व पक्ष पर्याप्त हो जाने पर आवेदक को राजा विसर्जन करे। फिर राजा की आज्ञा से अपने ऊपर लगाये पूर्व पक्ष को स्वीकार न करने वाले प्रत्यर्थी को भद्र पुरुषों द्वारा पकड़वाले इस पकड़ने को आसेध कहा जाता है। (४)

आसेध ४ प्रकार का होता है स्थानकृत कालकृत प्रवासकृत और कर्मकृत। प्रत्यर्थी इस कैद का उल्लंघन न करे।

वारण्ट

जिसका मुकदमा हो वास्तविक हो या शङ्का हो उसे राजा अपनी मुद्रा से अंकित शासन द्वारा या राज पुरुष द्वारा बुला लेवे। (१)

किनको न बुलावे

राजा रोगियों को बालकों, बूढ़ों, नाना कार्यों में फंसे हुये आपद्ग्रस्तों, कार्य में व्यग्रों, और व्यसनियों, राजा के कार्यों में लगे हुवे, और उत्सवों में व्यापृतोंको, मत्तउन्मत्त, प्रमत्त दुःखित भृत्यों को भी न बुलावे। सम्बन्धि रहित युवती को, कुल देवी को, प्रसूता को उच्चवर्ण की कन्या को और जिन के पतियों का पता न हो ऐसी स्त्रियों को भी राजा न बुलावे।

इसी प्रकार राजा विवाह में लगे, रोगी, यज्ञ में व्यग्र, तथा आपद्ग्रस्त, या किसी अन्य २ अभियोग में व्यग्र या राज कार्य में व्यग्र, ग्वालों, किसानों शिल्पियों और युद्ध में लगे योद्धाओं और अप्राप्त व्यवहारों (नाबालिगों) को भी न बुलावे (२)

राजा उपरोक्तों में से भी देशकाल और कार्य के बलाबलको जांचकर कुछकाल के लिये यानादि द्वारा बुला सक्ता है।

अभियोग को ठीक जांच कर वनस्थी और सन्यासियों को उनके अधिक कार्य में विघ्न न करता हुआ उन्हें बुला सकता है।

प्रतिनिधि वकील

व्यवहार से अनभिज्ञ या अपने कार्य में अधिक व्याकुल अर्थी या प्रत्यर्थी अपने लिये योग्य विज्ञ प्रतिनिधि ले सकता है। (१)

जड़ उन्मत्त वृद्धा, स्त्री, बालक और रोगियों की ओर से कोई उनका बान्धव या अन्य नियुक्त मनुष्य वक्ता हो सकता है।

---

(३) अर्थिना कथितं राज्ञे यदावेदनसंज्ञकम्। कथितं प्राड्विवाकादौसा भाषाखिलबोधिनी ॥ ९० ॥

(४) [शुक्र० अ० ४, अ० ५,९१-९५]

(१) यस्या नियोगं कुरुते तत्त्वेनाशङ्क्यथवा। तमेवाह्वानयेद्राजा मुद्रया पुरुषेण वा ॥ १०० ॥ (शुक्र० अ० ४ अ० ५)।

(२) (शुक्र० अ० ४ अ० ५, १०१—१०६)।

(१) व्यवहारानभिज्ञेन त्वन्यकार्याकुलेन च। प्रत्यर्थिना तज्ञः कार्यः प्रतिनिधिस्तदा ॥११०॥ शेष (शुक्र अ० ४ अ० ५, श्लो० १३१)।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पिता माता सुहृद बन्धु भ्राता और अन्य भी सम्बन्धी यदि वेद को उपस्थित कर सकें तो भी मुकदमे पर विचार हो सक्ता है। जो कोई जिसकी आज्ञा से कार्य करे वह उसी का समझा जायगा। उससे दूसरे का नहीं। नियोजकवादी वकीलक कहाता है। (१)

वकील का वेतन

अभियोग के जीत लेने पर जितना लाभ हो उसका १६वां भाग वकील या प्रतिनिधि को मिलना चाहिये। ज्यों २ रक्षणीय द्रव्य की मात्रा बढ़ती जाय त्यों २ वकील की भृति न्यून होती जाती है।

यदि बहुत से नियुक्त प्रतिनिधि या वकील होंवे तो उनकी भृति दूसरे प्रकार से नियत करनी चाहिये। वादी या प्लीडर को धर्मों का जानने वाला और मुकद्दमों (व्यवहारों) से अभिज्ञ होना चाहिये अन्यथा नहीं। इन उचित प्रकारों से अतिरिक्त किन्हीं रिश्वतादि उपायों से द्रव्य लेता हुआ वकील दण्डनीय है। राजा अपनी बुद्धि के अनुसार वकील को नियत करे लोभ के वश वकील गड़बड़ करे तो वह दण्डनीय है। नर हत्या चोरी, व्यभिचार अभक्ष्यभक्षण कन्या की चोरी कन्या को दूषित करना कठोरता जालसाजी, राजद्रोह, डकैती, इन कार्यों में वकील नहीं हो सकता प्रत्युत् अभियुक्त स्वयं विवाद करे। (२)

ज़मानत

यदि कोई अभियुक्त राजा की आज्ञा द्वारा बुलाया जाकर बन्धु के बल या धनादि के गर्व से न आये तो राजा उसे लगाये अपराध के अनुसार दण्ड देवे। यदि वादी और प्रतिवादी किसी अन्य कारण से पीड़ित या व्यग्र है तो उचित ज़मानत पर या किसी को ज़ामन (प्रतिभू) बनाकर छोड़ दें। (१)

अर्ज़ीवा प्रतिज्ञा वाक्य

वादी को अपना पक्ष ऐसा रखना चाहिये जिसमें दोष न हो पर पोषक युक्तियें हो सन्देह जनक न हो और लोक में सम्भव हो। अन्यार्थ अर्थ हीन प्रमाण आगम रहित अधिक ठहर२ न्यून और भ्रष्ट ये भाषा के दोष कहे जाते हैं। अप्रसिद्ध उच्छृंखल निष्प्रयोजन निरर्थक असाध्य वा विरुद्ध पक्षी भार को छोड़ देना चाहिये। जो किसी ने न देखा न सुना हो वह अप्रसिद्ध है जैसे मुझे गूंगे ने गाली दी बांझ के पुत्र ने मारा ये अप्रसिद्ध है। यह पढ़ता है अपने घर में आनन्द करता है इस का घर का द्वार बाज़ार में खुलता है इत्यादि निराबाध तथा निष्प्रयोजन है मेरी (दीहुवी) कन्या का यह जमाई उपयोग करता है यह बन्ध्या होकर गर्भ नहीं धारण करती यह मरा हुवा नहीं बोलता इत्यादि असाध्य और विरुद्ध है। मेरे दुःख में दुःखित नहीं और सुख में प्रसन्न नहीं होते इत्यादि निरर्थक है। इन दोषों से रहित वादी का पूर्व पक्ष होना चाहिये। ऐसे

(१) (शुक्र अ० ४ अ० ५, श्लो० ११४—११७)

(२) दूतेनाहूयानितं प्राप्ताधर्षकं प्रतिवादिनम्। दृष्ट्वा राज्ञा तयोश्चिन्त्या राथहि प्रतिभूस्त्वतः ॥१२४॥

(१) (शुक्र अ० ४, अ० ५, १२८—१३६)॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निर्दोष पूर्व पक्ष लिखे जाने पर फिर उत्तर पक्ष लिखाया जावे। (२)

जिरह

मोह से या शठता से जो बात पूर्व वादी ने नहीं कही या उत्तर में विशेष बात कही गई है उसको नाना प्रश्नों द्वारा पता लगा लेना चाहिये। (३)

चतुष्पाद व्यवहार

व्यवहार के चार पाद होते हैं प्रथम पूर्व पक्ष द्वितीय उत्तर पक्ष तृतीय क्रिया और चतुर्थ निर्णय। (४)

प्रार्थनाओं के निर्णय क्रम

सभी अभियोगों में से जिस क्रम से प्रार्थना-पत्र आये हों उसी क्रम से उनका निर्णय करे या वर्ण के अनुक्रम से ही उनका क्रम बांध ले। राजा जो कुछ लिखे दोनों पक्षोंके समक्ष लिखे।

साक्षी

पूर्ण साक्षी देने वाले तथा झूठे अभियोग घड़ने वाले को राजा दण्ड देवे।

इत्यादि प्रकार से कचहरी या किसी न्याय विभाग का प्रबन्ध पूरा २ शुक्र नीति के समय में स्थापित दीखता है जिसके अपने ही विशेष नियम बनाये गये हैं। जिनसे राजा प्रजा को न्याय मार्ग में चला सके।

अस्तोन्मुख द्विजराज।

[लेखक—मेधाव्रत जगजीवन।]

अतुल अनन्त अशेष सृष्टिकर्ता हे स्वामी।
तू है परमानन्द कन्द जगदन्तर्यामी॥
हमने तेरी भक्ति छोड़ प्रभुजी? यह सारा।
जन्म गमाया काज काह नर तन धरि सारा॥१॥
बाल्यकाल अति खेल कूद में सदा बिताया।
यौवन में विषयोपभोग कर देह नसाया॥
अब आया वार्द्धक्य दुखद यह घोर हमारा।
जन्म वृथा ही काज काह नर तन धरि सारा॥२॥
जब सोचे यह शान्त विचारों से मन मेरा।
तब देखूँ भय काम क्रोध ने मुझको घेरा॥
तब भी पापी हृदय धरै नहिं ध्यान तुम्हारा।
जन्म वृथा यह काज काह नर तन धरि सारा॥३॥
मचा जभी चहुँ ओर शोर यह जगमें भारी।
काम क्रोध मद लोभ मोह की भई बीमारी॥
भिषग्वर्य ऋषि दयानन्द ने दिया सहारा।
दिखलाया यह काजकाह नरतन धरि सारा॥४॥
जब जगमें अज्ञान तिमिर ने राज्य जमाया।
वैदिक विद्या धर्म कर्म निज अंक छिपाया॥
ऋषि चन्द्रोदय होत नाशि तम हुआ उजारा।
दर्शाया हम काज काह नर तन धरि सारा॥५॥
दयानन्द रमणीय चन्द्र जब छवि फैलाई।
बुधजन गन नक्षत्र गगन की बढ़ी निकाई॥
सुखद गिराता वसुधा पर है सुधा-सुधारा।
जतलाया हम काज काह नर तन धरि सारा॥६॥
दयानन्द आनन्द चन्द्र रवि-वेद निहारा।
अरुण किरण से रञ्जित था जग पूरव सारा॥
देख उदय श्रुतिभानु मोद ऋषि अति विस्तारा।
बतलाया हम काज काह नर तन धरि सारा॥७॥
अस्तोन्मुख-द्विजराज देखि श्रुतिरवि का आना।
तिमिरावृत-जननेत्र कुसुम खिल रहे समाना॥
शान्ति समीर सुखद बहता मनमें सुख धारा।
प्रकटाया ऋषि काज काह नर तन धरि सारा॥८॥
अयि देव देव दयानिधे! हम दीन पर कीजे दया।
ऋषिकी विमल यशचन्द्रिका जगमेंलसै सुकृतोदया
विलसैअमल उस ओ३म् की नित वैजयन्ती व्योममें
व्रतिवृन्द की पितु मातुमेंअरु भक्ति होगुरु ओ३म् में।

(२) मोहाद्वा यदि शाठ्याद् यत्रोक्तं पूर्व वादिना। उत्तरान्तर्गतं वा तद् प्रश्नैर्ग्राह्यं द्वयोरपि॥१४३॥
(३) पूर्व पक्षः स्मृतः पादो द्वितीयश्चोत्तरात्मकः। क्रियापादस्तृतीयस्तु चतुर्थो निर्णयात्मकः॥१४४॥
(४) क्रमागतान् विवादांस्तु पश्येद्वा कार्य गौरवात्। यस्या वाधिकापीड़ा कार्य वाभ्यधिकंभवेत्॥१५६
वर्णानुक्रमतो वापि नयेत् पूर्वं विवादयेत्॥१५७॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar. Collection. Digitized by S3 Foundation USA

योरुपी सभ्यता पर विचार।

ले० श्रीयुत बालकृष्ण एम. ए. (लण्डन)

त कतिपय दिनों में कुछ ऐसी घटनाएं हुई हैं जो योरुपी सभ्यता पर प्रकाश डालने में परम उपयोगी हैं। इस सभ्यता के बहुत से प्रशंसनीय गुण हैं, पर कुछ दोषों के कारण इसे राहु ने तिमिराच्छादित किया हुआ हैं। आज हम इनके पारिवारिक जीवन पर दृष्टि डालते हैं। फ्रान्स से सूचना छपी है कि कुछ दिनों में तीन उदाहरण ऐसे हुए है कि पतियों ने अपनी धर्मपत्नियों को खिड़कियों में से धक्का देकर नीचे बाज़ार में गिरा दिया है। एक मनमौजी ने ठीक कहा है कि यदि यह आदत बढ़ती गई तो बाजार में चलने वाले नर नारियों को बहुत कष्ट होगा।

कल एक बुढ़िया ने न्यायालय में शिकायत की कि वह अपनी लड़की के मकान में किरायेदार के तौर पर रहती है, जहां उसने और किरायेदारों का किराया बढ़ाया है वहां उससे भी ६ पैंस सप्ताह में अधिक लेने का नोटिस दिया है, जब उसकी पुत्री बच्ची थी तो उसके पालने में कितने छै पैंस उसने खर्च किये थे, पर फिर भी वह किराया बढ़ाने से नहीं चूकी।

न्यायाधीश भी न्याय परायण थे-उन्होंने आज्ञा दी कि यही बातें अपनी पुत्री को सुनाना और मुक़द्दमा बर्ख़ास्त कर दिया।

कल से एक अन्य महत्व का मुक़द्दमा चलने लगा है एक युवक ने अपनी निरपराध माता का घात कर दिया था-न्यायालय में उसने अपना अपराध मान लिया और कारण बताया कि शैतान ने उसे ऐसे बल से इस घोर कर्म करने पर बाधित किया कि वह नहीं रुकसका! शैतान भी इस लोकसत्ताक लोक में अपने एक सत्ताक राज्य को देख कर उसे अधिक बलयुक्त बनाने की चिन्ता में होगा-ऐसा प्रतीत होता है। यदि यह कारण मान-लिया जावे तो सभी निरपराधी रहेंगे!

एक पुरुष पर फ्रांस में अभियोग चलरहा है कि उस ने (एक दूसरे के पश्चात्) अपनी दस धर्म पत्नियों का घात किया है! इस पर भी शैतान ने खूब सवारी की प्रतीत होती है!

एक कविता-प्रवीण स्त्री ने अपने पति का घात कर दिया है, न्यायालय में अपराध मानते हुए उसने कहा कि घात आवश्यक था-उसका पति सदैव दूसरी स्त्रियों की संगत में रहता, मदिरापानादि में जीवन तथा धन का अपयोग करता और केवल कुछ घण्टों के लिये मदमस्ती की हालत में रात्रि के समय घर आता-शेष सारा समय बाहिर रहता था-अतः तंग आकर उसे मार डाला गया।

इधर इंगलैण्ड में भी एक ऐसा घोर हादसा हुआ है। एक स्त्री ने अपने सोते हुए पतिका गला उस्तरे से काट डाला तत्पश्चात् उसने अपना गला भी काट दिया-इस प्रकार दोनों मरे हुए बिस्तरे पर मिले। तलाश होने पर एक पत्र मकान में मिला जिस पर लिखा था मेरे पति नें मुझे ११ बजे दिन के मारने का [illegible] उसे १२ बजे रात को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मार डाला। मैं अपना गुप्तचर आप रही हूं अधिक कहने की आवश्यकता नहीं, जनता विश्वास नहीं करेगी।

यह घटनाएं केवल दो दिनों के दो समाचारपत्रों में दी हुई थीं, शेष ऐसे घोर कर्म कितने हो रहे होंगे, उन का पता नहीं, निस्सन्देह योरुप में पति पत्नी के सम्बन्धों में वह पवित्रता नहीं रही जो युद्ध से पूर्व दीख पड़ती थी और शोक की बात यह है कि यह सम्बन्ध अधिक ढ़ीले होते जोत हैं।

दुराचार की लहर भी बढ़ती जा रही है। युद्ध में जिन वीरों ने जानें दी हैं उनकी विधवा स्त्रियां दूसरा विवाह करने के स्थान पर अविवाहित पुरुषों के साथ रह रही हैं। इन स्त्रियों को पैन्शन मिलती है-यदि यह विवाह कर लें तो पैन्शन बन्द हो जावेगी-अतः पैन्शन न खोने की खातिर विवाह नहीं किया जाता किन्तु दुराचार पूर्वक जीवन व्यतीत किया जाता है। राज्य की ओर से पता लगाये जाने पर मालूम हुआ कि इंगलैण्ड में ५०,००० से अधिक युद्ध-विधवाएं हैं जो अनुचित अनाचार की अपराधी हैं।

इस दुराचार को वास्तविक स्वरूप में देखने के लिये दूर जाने की आवश्यकता नहीं होती, लंडन में हाइड पार्क (Hyde Park) में १०-११ बजे एक चक्कर लगाने से उस का पूर्ण स्वरूप प्रकट हो जाता है। सैंकड़ों पुरुष युवती स्त्रियों को पास सुलाए रखते हैं, कोई स्त्री के ऊपर सोये हुए प्रेम के सब कर्म करता है, कोई स्त्री को ऊपर सुलाए हुए हैं, कोई एक दूसरे की गोद में लेटे हैं, कोई गले लगे हुए लेटे हैं, कोई चुम्बन का आनन्द लेते हैं, यह सब बातें आने जाने वाले स्त्री पुरुषों के सामने होती रहती हैं:-यतः आङ्गल जनता इसे कुदृष्टि से नहीं देखती, यह कर्म बढ़ते जाते हैं, हमारा कथन केवल साधारण जनता के सम्बन्ध में हैं, नहीं तो बहुत से विचारक, पादरी, प्रचारक, सुधारक आदि लोगों ने व्याख्यानों तथा लेखों द्वारा, इस लज्जास्पद कर्म के विरुद्ध शब्द उठाया है, स्त्री पोलीस ने कई एक लड़कियों को पुरुषों के जाल में फंसने से बचाया है और हाइड पार्क की नग्न दुरावस्था की ओर ध्यान आकर्षित किया है, अतः हम यह नहीं कह सकते कि यहां के नेता और विचारक लोग इन कर्मों के विरुद्ध नहीं, परन्तु साधारण जनता में इस के विरुद्ध जोश न होने के कारण सम्भवतः कुछ भी नहीं हो सकता।

हम उन लोगों के विरुद्ध हैं जो ऐसी मछली की भान्ति देखते हैं जिस की आंख है और वह भी कीचड़ में। निस्सन्देह स्त्री पुरुष के पारिवारिक जीवन के उच्च उद्देश्यों ने अभी तक योरुप में अङ्कुर नहीं लिया। साथ ही महा संग्राम ने योरुप की वही अवस्था कर दी है जो भारत में महा-भारत युद्ध के पश्चात् हो गयी थी यह स्वभाविक परिणाम स्वभाविक कारणों से उत्पन्न हो रहे हैं, किन्तु महान आश्चर्य्य यह है कि योरुपी समाज में उक्त दोष होते हुए भी कर्मण्यता, शौर्य, सत्यपरायणता, स्वावलम्बन, कठिन समय में दैवी वीरता, शारीरिक बल, उन्नति प्रेम, उच्च दिमाग़ की अधिकता है, यदि भारत वासी उक्त दोषों से बचे हुए हैं, पर आवश्यक मानुषी गुणों से हीन हैं तो इन योरुपी लोगों का वह क्या मुकाबला कर सकते हैं। अतः यदि हम उक्त

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दोषों से पाक होते हुए कुल गुण धारण कर सकें तो आगामी दौड़ में हम कुछ कर सकेंगे, या इन लोगों के दुराचारों पर समालोचना करते हुए अच्छे भी प्रतीत होंगे। पर अब इन लोगों के दुराचारों पर हास्य उड़ाने और इन के आवश्यक गुणों को तिलांजली देने से जातीय मृत्यु के अतिरिक्त कुछ भी नहीं। अतः अपने पाठकों से हमारा नम्र निवेदन है कि जहां वह योरुप समाज के पारिवारिक दोषों से दूर रहने का यत्न करें, वहां उन के गुणों को ग्रहण करने में बहुत अधिक उत्सुकता दिखावें, यतः सच्ची उन्नति के लिये वही गुण ही सहायक हो सकते हैं॥

कुन्ती और कर्ण।

लेखक—श्रीयुत हरिशङ्कर भट्ट।

[१]

कौरव-सभा का हाल जब सब स्वयं कुन्ती ने सुना।
"देंगे न पाण्डव को तनिक भी भूमि हम रण के बिना।"
तब मोह चिंता में पगी वह धैर्य्य सब खोने लगी।
निज पुत्र-रक्षा के लिये आकुल बहुत होने लगी॥

[२]

सुनकर विदुर से—"कर्ण ही इस समर का बस मूल है।
इस शांति-स्थापन-मार्ग में केवल वही इक शूल है।"
जाना स्वयं निश्चय किया तब कर्ण के बस पास ही।
सुत-प्रेम में पड़कर कहो क्या मातु करती है नहीं?

[३]

भागीरथी के कूल पर उस काल अतिशय नेम से।
बस कर्ण बैठे कर रहे थे पाठ-पूजा प्रेम से।
निज कार्य्य में अति मग्न उनको देख कुन्ती उस घड़ी।
चुपचाप बिल्कुल जा वहां पीछे हुई उनके खड़ी॥

[४]

जब दो-पहर-पश्चात् दिनकर पूर्व्व से पश्चिम गया।
तब कर्ण का भी मुख उसी दम पूर्व्व से पश्चिम हुआ।
अवलोक सम्मुख मातु को निज, कर्ण अति विस्मित हुए।
फिर प्रेम से उन्मत्त होकर मातु-सम्मुख नत हुए॥

[५]

"हे देवि! अधिरथ-पुत्र करता विनय सहित प्रणाम है।
क्या सूत-कुल-उत्पन्न-नर के योग्य सेवा-काम है?
मैं धन्य हूं, हे देवि! इतना कष्ट जो तुमने किया।
किस हेतु कह दो आपने इस अधम को दर्शन दिया॥"

[६]

"हे कर्ण बेटा! सूत-कुल में तुम नहीं उत्पन्न हो।
ले जन्म मेरे ही उदर से वीर-गुण-सम्पन्न हो।
क्या नीच-कुल में जन्म लेते वीर-कुल-भूषण, अहो!
क्या निम्ब तरु से हैं निकलते आम्र के मधुफल कहो?

[७]

हो पुत्र राधा के नहीं तुम मम दुलारे लाल हो।
मम भीम अर्जुन तुल्य ही हे कर्ण तुम भी बाल हो।
अतएव चलकर संग मेरे बंधुओं से निज मिलो।
लड़कर उन्हीं के पक्ष में यश-कीर्ति का वैभव भरो॥

[८]

निज बंधुओं से अलग हो किसका हुआ सन्मान है।
टूटे हुए भी दांत को मुख में मिला क्या स्थान है?
निज वंश को जो छोड़कर अन्यत्र जाता है कहीं।
हे पुत्र! उसको फिर कभी हा! मान मिलता है नहीं॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

[९]

तब संग में जो आज कौरव कर रहे बर्त्ताव हैं।
वह प्रेम का हे सुत ! नहीं पर स्वार्थ का ही भाव है।
है कौन किसका जगत में सब स्वार्थ का ही खेल है।
बस स्वार्थ-साधन हेतु ही जग में परस्पर मेल है॥

[१०]

धन मित्र भार्य्या पुत्र फिर हैं जगत में मिलते सभी।
माता पिता प्रिय बंधु, पर, फिर फिर नहीं मिलते कभी।
फिर मोह-वश क्यों पुत्र ! हो, तुम छोड़ते निज बंधु को।
हा ! क्यों पड़े हो मरिचिका में तज सुधा के सिंधु को"॥

[११]

सुनकर बचन निज मातु के जो प्रेम-रस में थे पगे।
चुपचाप रह कुछ काल तक फिर कर्ण यों कहने लगे।
"हे देवि ! जो कुछ कहा तुम ने योग्य है वह सर्व्वथा।
पर स्मरण आती अब नहीं क्या जन्म की मेरे कथा॥

[१२]

हा ! वीर-कुल में जन्म लेकर थी हुई मम यह दशा।
होता रहा अपमान मेरा सर्व्वदा ही नीच सा।
हे मातु ! तेरा सुत न क्या तब यह अभागा कर्ण था।
जब द्रुपद-कन्या ने बनाया, हा ! मुझे पर-वर्ण था॥

[१३]

जब 'सूत-सुत' कह पार्थ ने था मुझे संबोधन किया।
'अति नीच-कुल-उत्पन्न हो' कह बैर मुझ से था लिया।
तब था न मैं क्या बंधु उनका उचित या व्यवहार था ?
अथवा अनुज के हाथ से वह अनुज का सत्कार था॥

[१४]

है मान से बढ़कर जगत में और कुछ प्यारा नहीं।
सन्मान होता है जहां मिलता पदारथ सब वहीं।
सन्मान से रहना नरक में भी मुझे स्वीकार है।
पर मान खो यदि स्वर्ग जाऊँ तो मुझे धिक्कार है॥

[१५]

होता रहा मेरा सदा ही कौरवों में मान है।
अतएव उनकी प्राण-रक्षा के लिये मम प्राण है।
यदि मान-रक्षा के लिये है प्राण भी जाता कहीं।
तो वीर-कुल-उत्पन्न नर कुछ शोच है करता नहीं॥

[१६]

हे मातु ! तुम ही अब कहो कैसे उन्हें मैं छोड़ दूँ ?
क्या स्वार्थ-वश होकर कहो मुंह धर्म्म से भी मोड़ दूँ ?
हा ! अन्न खा उनका उन्हीं के रक्त से कर को रँगूं।
विश्वासघाती नीच पापी हा ! भला कैसे बनूं ?

[१७]

सुतवत्सले ! यदि पुत्र-हित के अर्थ आई हो यहां।
तो कर्ण करता आज प्रण है जो, उसे सुन लो यहां।
अतिरिक्त अर्जुन के समर में पाण्डवों का बध नहीं।
बस मैं करूंगा हाथ से निज, शपथ खाता हूँ यहीं॥

[१८]

अतएव प्रमुदित चित्त हो निज भवन को अब जाइये।
निज पुत्र-रक्षा हेतु उर में दुख नहीं कुछ लाइये।
यदि पार्थ अथवा मैं हुआ हत शोक करना है वृथा।
फिर भी रहेंगी पांच सुत की आप माता सर्वथा"॥

[१९]

सुनकर बचन तब कर्ण के, कुन्ती पुनः कहती हुई।
"हे पुत्र ! प्रण मत भूलना रण में कहीं" निज गृह गई।
पूजादि कर्म्मों से निवृत्त हो कर्ण भी फिर घर गये।
पर मातु के सब बचन उनके कान में थे भर गये॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रुक्मिणी हरण नाटक।

अनुवादक—श्रीयुत मेधाव्रत जगजीवन।

प्रवेश ५वां।

स्थान—कुण्डिनपुर का राज भवन।

[कुण्डिनपुर का नरेश, रुक्मी-रुक्मिणी का पिता। भीमक प्रवेश करता है और उस के पीछे अन्य जन।]

भीमक-आत्म निर्णय पर अन्याय की तरह, विश्वास पर धोखे की तरह तथा शील पर अत्याचार की तरह राजदूत पर जुल्म यह महान् राजकीय अधर्म!

रुक्मैय्या-धर्माधर्म का विचार दूसरों के लिये। उस कृष्ण के लिये तो मुझे सब कुछ हज़म।

प्रारब्ध-(स्वगत) चूंकि लड़ाई में हलुआ खिलाता है गरमा गरम।

रुक्मैय्या-मुझे उस के इस दूत का भविष्य इस के समक्ष ही झूठा बना इस की उद्दण्डता का दण्ड देना है। यह गौओं को चराने हारा ग्वाला? मेरी बहिन! अरे किस की? मेरी! मेरी-सम्राट् जरासंध के भावी सेनापति की, महाराज शिशुपाल के होने वाले साले की?

प्रारब्ध-अक् छीः। राम तो बोलो राम यार इस भोले की!

रुक्मैय्या-मेरी बहन को व्याहेगा? स्वयंवर मण्डप में आ सकेगा? मेरे घर में यह ग्वाला प्रवेश कर सकेगा? मेरी नजर में आवेगा? मेरे सामने फरकेगा? अरे इस की मजाल क्या है मजाल!!

प्रारब्ध-हूँ, इस की मजाल क्या है मजाल। वह कृष्ण तुम्हारे सामने? तुम्हारी नजर में आ सके?

कृष्ण-(दूत वेश में) जी हाँ। कृष्ण तुम्हारे घर में, नजर में तथा स्वयंवर में पहाड़ की तरह खड़ा रहेगा। तुम्हारी ही दुर्बुद्धि एवं कुनीति के हथियार से वह विजय पावेगा।

रुक्मैय्या-सुनते हो? सुनते हो क्या-पिता जी? इस का कृष्ण विषयक घमंड! कृष्ण मेरे समक्ष खड़ा रहेगा? हम पर विजय पावेगा? इस की मजाल क्या है मजाल! जो ऐसा हो तो मैं अपने कान कटा लूं, मूंछ मुड़ा लूं।

प्रारब्ध-अरे, साथ में कह दो न कि नाक भी कटा लूँ।

रुक्मैया-और नहीं तो याद रखना, श्याम सुन्दर? कि तेरी गरदन उड़ा लूं।

कृष्ण-मुझे स्वीकार है। यह लो मेरा सत्याग्रही के सा वचन। (रुक्मैय्या के हाथ पर हाथ मारता है।)

रुक्मैय्या-मेरा भी यही वचन। मेरे सामने अब यह कालिया खड़ा रह सकेगा? मुझे हाथ ताली दे सकेगा?

भीमक-रुक्मैय्या? सैकड़ों राज नीतिज्ञों के मस्तिष्क निष्कर्ष सी, राजनैतिक महासागर के मथनसार सी तथा नैपुण्यपातालकूप की गंभीर गहराई सी कृष्ण की राजनीति अकलित एवं अजित है। जादूगर की तरह गुनहबाज़ (मायावी) बिलकुल पास होता हुआ भी सामने वालों की आंखों में धूल डालता है, वचनाडम्बर के वंचनाजाल में भोले मानवमीनों को फंसा ठगता है, निःशस्त्र होकर भी भेदमात्र के हथियार से ही शत्रुदल का दलन करता है, पवित्र मित्रता का आ-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

डम्बर दिखला भयंकर से भयंकर शत्रु जिसे न कर सके उसे वह करता है, सरोवर में मृग-जल और मृगजल में सरोवर बतला हीन-भागी हरनों के आशा २ में ही प्राण हर लेता है। विश्वास के सुवास में सर्प के श्वास फूँकता है, आशा की हरी भरी हरियाली जतला शिकार को नीचे ढके हुए गूढ़ कपट-कूप में गिरा देता है तथा उपरि दिखावट के मेघाडम्बर में मूढ़ चातक को तरसा मारता है।

रुक्मैया—मैं वह सभी जानता हूँ। और इसीलिये इस कृष्ण के कुटिल जाल को तोड़ने तथा उसका अपमान करने के लिये उसके इस दूत को बंदीवान् बना रखता हूँ।

भीमक—किन्तु दूत को पकड़ना दुश्मन का नहीं अपितु अपने ही राज-धर्म का प्रकट अपमान तथा अज्ञान है। तू ने रुक्मिणी बहन के स्वयंवर में अन्य राजाओं को निमन्त्रित किया है और शिशुपाल को तू स्वयं बुलाने जाता है सो कृष्ण को भी आमन्त्रण कर। उसके इस दूत को छोड़कर उसके ही द्वारा द्वारका में आमंत्रण पत्री भेज।

रुक्मैया—क्या महासागर पोखर (पल्वल) की बिनति करेगा? सूर्य पतंग को प्रभुत्व अर्पण करेगा? आकाश अणु का आदर करेगा? वैसे क्या वह कृष्ण-तृण हमारे बराबरी का है कि प्रलयपवन समान यह रुक्मैय्या उसको आमन्त्रणपत्रिका भेजेगा?

भीमक—फलवान् आम्रवृक्षों की भांति महानुभावों की महत्ता नम्रता में ही है। सिद्धि-युक्त योगिओं की तरह शक्तिशाली नृपतिओं की शोभा समदर्शिता में ही है। तू नहीं भेजेगा तो मैं भेजूँगा कृष्ण को आमन्त्रण।

रुक्मैया—तुम्हारी बुद्धि को होगया है पतन।

'तुम्हारा और रुक्मिणी का मैं मतलब जानूँ बाबा हो? करूंगा कैद मैं तुम को—'

प्रारब्ध—[अर्ध-स्वगत] 'सपूतर हो तो ऐसे हो॥'

रुक्मैया—कहाँ हम भूपाल और कहाँ वह गोपाल!!

कृष्ण—जरूर। गो अर्थात् पृथ्वी और पाल अर्थात् रक्षक। इस अर्थ में तुम्हारे कथनानुसार भी कृष्ण गोपाल-पृथ्वी-रक्षक ही प्रमाणित होता है।

रुक्मैया—इस बक का बकवाद सुनते हो क्या?

भीमक—उसका बचाव न्याय है। इस समय कृष्ण द्वारकाधीश महाराज कहाते हैं।

रुक्मैय्या—कहीं के कालेपानी में स्थित हुए निर्जन द्वीप का राजा। याद रखना बापा कि तुम उस सम्राट् जरासंध तथा शिशुपाल के बंडखोर को राजा मान कर राजद्रोही बनते हो। "कहूँ मैं सत्य ही तुम को प्रशंसा उसकी जाने दो। नहीं तो मैं बुरा हूँ हाँ—"

प्रारब्ध—[स्वगत]"सपूतर हो तो ऐसे हो॥"

रुक्मैया—इसको राजा कौन गिनता है? कहीं का लुटेरा है लुटेरा!!

कृष्ण—सचमुच; अपने शत्रुओं के शौर्य की इसने जगज़ाहिर लूट की है और इसी से कृष्ण लुटेरा भी सच है। किन्तु सच्चा राजा कौन कहलाता है? वह जो जुल्मी दबाव से नहीं किन्तु अन्तःकरण के प्रेममय आकर्षण से प्रजा की पूजा भक्ति का पात्र हो, पत्नीव्रतधारी सुपति समान नृपति प्रजावधू के सुख दुःख में साथी हो, प्रजासागर में से कररूप से लिये हुए ज़र-जल को पुनः बरसाने हारा मेघ हो; प्रजाशरीर

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation, USA

का रक्षक बाहुबल हो। तुम सब जन्म से माने हुए राजा, कठपुतली की तरह राजगद्दी पर बिठलाये गये हो और बिना परिश्रम प्राप्त हुए पैतृक-पुरस्कारों को पचा गये हो किन्तु कृष्ण ने मानवमुक्ति धर्म के लिये अपने परमपराक्रम एवं उत्तम क्षात्र कर्म से कंस जैसे अजेय मनाते जुल्मी अधर्मी राजा को मारकर, तुम जैसों के सम्राट्-सच पूँछो तो पापभागी-जरासंध और शिशुपाल को अनेक बार हरा तथा भगा कर सिद्ध कर दिया है कि एक कंगाल गोपालरूप में पालित कृष्ण भी स्वाश्रय एवं आत्मबल से प्रजा की पूजा तथा पसंदगी को पाकर स्वतंत्र राजा द्वारकाधीश हो सकता है।

भीमक-इस लिये भाई ? एक राजा की हैसियत से उस को आमन्त्रण भेज इतना ही नहीं किन्तु आने की बिनति कर।

रुक्मैया-बिनति ! बिनति ! उस महाराजा कंस के घातक की बिनति करूँ ? उस की तो क्षति, क्षति, बस क्षति ही करूँ ! !

कृष्ण-कंस था महाराज या अत्याचार का भयंकर अवतार ? जो राजा प्रजा का पालक होने का दावा कर उस पर अधर्म एवं अन्याय्य कर्म से जुल्म करें, पीड़ित प्रजा की प्रार्थना सुनने के स्थान में उसी पर उलटा संकट गिरावें, मानव जाति के प्रभुसमर्पित जीवन स्वातन्त्र्य के जन्मसिद्ध हक़ को भी छीन लेवें एवं प्रजा के ही अन्न से पुष्ट हो कर प्रत्युत उस का रुधिर पीवें वह प्रजा रक्षक भूपाल नहीं किन्तु प्रजा भक्षक विकराल व्याघ्र है। ऐसे जुल्मी आततायियों के खून, खून नहीं किन्तु गौ को बचा कर व्याघ्र के मारने के पुण्य जैसा वह पुण्य है पुण्य ! !

रुक्मैया-उफ़, ये शब्दोच्चार हैं या वज्र प्रहार ? इस के दूत का यह आकार !

भीमक-सच बात। कृष्ण ने न्याय के लिये अन्याय के सामने, धर्म के लिये अधर्म के सामने तथा स्वातन्त्र्य के लिये जुल्म के सामने युद्ध कर मानव मुक्ति के विरोधियों को मारा है और इसी से वह एक प्रजा प्रिय राजा तथा धर्मनेता गिने जाते हैं।

रुक्मैया-ओह् ! यह कौन मेरा बाप ? मुझ रुक्मैया का बाप खुल्लमखुल्ला हमारी बुराई तथा काले पानी में निकाले हुए कालिया की भलाई कर रहा है ?

प्रारब्ध-(स्वगत) बाप होने में भी सपूत को शंका रह गयी है क्या ?

भीमक-जी हां। जिस का सत्य, न्याय तथा धर्म की ओर लक्ष्य उसी तरफ मेरा पक्ष।

रुक्मैया-बस बस।

'तुम्हारा पुत्र मैं नहिं हूं न मेरे भी पिता तुम हो। हटा दूंगा मैं गद्दी से-'

प्रारब्ध-[स्वगत] 'सपूतर हो तो ऐसे हो ॥'

भीमक-सचमुच, ये मेरे सफेद बाल तथा डाढ़ी तेरे लिये शरमिन्दा होती हुई अनुभव का प्रकाश दे रही है कि तुझे उत्पन्न करने के समय मैंने एक पवित्र बाप की तरह कर्तव्य पालन नहीं किया होगा किन्तु अपवित्र पाप समान विषय सेवन किया होगा, पूर्वजों का ऋण चुकाने के लिये धर्म पुत्र की भावना नहीं रखी होगी किन्तु हबस पूर्ण करने [इच्छा तृप्ति] के लिये कामवासना का कर्ज़ अदा किया होगा, गर्भाधानादि संस्कार समझ कर राम-भरत का स्मरण नहीं किया होगा किन्तु स्वार्थ को खुश करने के लिये हैवान इवान बताया होगा और इसी से ही तू जीते हुए मेरा इस तरह कर रहा है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation, USA

प्रारब्ध–वर्तमान तथा भविष्य के पिताओ? यह सन्तानोत्पत्ति का शास्त्र समझने लायक है। अन्यथा सन्तान नहीं, किन्तु हैवान शैतान पैदा करने का कारखाना बनने जैसा है।

भीमक–मैं जाते २ अब भी कहता हूँ कि कृष्ण से वैर छोड़ दे और रुक्मिणी की इच्छानुकूल विवाह सम्बन्ध जोड़ दे। [जाता है]।

रुक्मैया–'हुआ तय्यार बूढ़ा यह अभी समशान जाने को। करूंगा मैं स्वमन माना–'

प्रारब्ध–[स्वगत] 'सपूतरहो तो ऐसे हो॥'

रुक्मैया–बस कल ही इस घमंडी श्याम सुन्दर को साथ लेकर महाराज शिशुपाल को आमंत्रण करने जाऊं और उन्हें भक्तिद्वारा कर्मयोग को समझा सिद्धि को प्राप्त कर इस का प्रथम भविष्य इसी के सामने वहीं झूठा करूँ तभी मेरा रुक्मैया सच्चा नाम। [जाता है।]

प्रारब्ध–[जाता हुआ।] अक् छीः। राम तो बोलो भाई राम। [जाता है।]

[श्याम सुन्दर रूप में कृष्ण अकेले खड़े हैं वहाँ भक्ति के पुरुष वेश में विद्यमान राधा सहित रुक्मिणी प्रवेश करती है।]

रुक्मिणी—[गुप्तचर वेश वाले कृष्ण से।] श्यामसुन्दर, श्यामसुन्दर? तुम इस दूसरे मार्ग से होकर यहाँ से चले जाओ और श्रीकृष्ण को मेरे स्वयंवर समय मेरी सहायता के लिये एकदम भेजो।

कृष्ण—उस विषय में तुम निश्चिन्त रहना। किन्तु उसके बदले में तुम भी इस भक्ति भाई को मनवाकर उसकी सिठानी राधा को मेरे साथ ब्याहने में मेरे मददगार बनना। [जाते २ स्वगत।] अब इस भक्ति भाई उर्फ राधा को बनाने के लिये मैं ही राधा बनकर आता हूँ। [जाता है।]

रुक्मिणी—भाई भक्ति? श्रीकृष्ण कल्पवृक्ष पर मेरी प्रीतिलता को फलवती बनाने के लिये एक दासी तुल्य भी मेरा तू राधा के पास स्वीकार नहीं करा देगा?

राधा—रुक्मिणी बहन? जिसकी श्रीकृष्ण में अनन्य प्रीति है उसके अन्दर ही राधा भक्ति स्वरूप हो रहती है और इसी से प्रेमी की कृष्ण प्रति प्रीति बढ़ाने एवं फलित करने में ही इस भक्ति की प्रवृत्ति है।

रुक्मिणी—मेरी निराशा की निशाभरी दिशा में आशा की ऊषा चमकी।

कृष्ण—[राधा के वेश में प्रवेश कर।]आप ही रुक्मिणी राजकुमारी क्या?

रुक्मिणी—जी हाँ–बहन? तुम कौन हो?

कृष्ण—मैं हूं राधा। [भक्ति नाम धारिणी राधा से।] ओहो, भक्ति भैया?

राधा—(स्वगत।) अरे दैय्या! यह और कैसा इन्द्रजाल कि जहाँ पल २ में विचित्र जादू जन्म ले रहे हैं?

कृष्ण—[रुक्मिणी से।] तुमको इस मेरे भक्ति द्वारा मेरा संदेशा मिला क्या?

रुक्मिणी—जी हाँ। अभी ही मुझे भक्ति ने तुम्हारी अच्छी निष्ठा तथा उदार सहृदयता पर विश्वास दिलाया है कि तुम–राधा–श्रीकृष्ण की मेरी ओर की प्रीति में बाधा नहीं डालोगी।

कृष्ण—भक्ति के भोलेपन का मुझे भय था और वह सच हुआ। अच्छा हुआ कि उसको पीछे बुलाने को मैं स्वयं आगयी और तुम्हारी खिचड़ी ठीक न पकी नहीं तो बड़ी गड़बड़ मच जाती। क्यों भक्ति? क्या राधा की कृष्ण पर की प्रीति चली जाय? उसके स्थान में कोई और आजाये?

राधा—इस जन्म में तो क्या किन्तु अनन्त जन्म तक भी राधा की प्रीति कृष्ण पर से हटने की ही नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कृष्ण—[रुक्मिणी से] लो, सुन लिया न ? राधा की सौत [सपत्नी] बनना चाहती हो तो अब विचार करना भला !!

रुक्मिणी—[घबरा कर] अरे भक्ति ? अभी कहकर फिर बदल जाता है ?

राधा—मुझे माफ करना। मेरी मति मूढ़ हो रही है।

कृष्ण—मति कैसे न मूढ़ हो जाय ? ऐसी किसी की मिलती जुलती बात किस तरह की जाय ?

रुक्मिणी—[राधा वेशधारी कृष्ण से।] राधा बहिन ? कृष्ण प्रेम प्राप्ति की हर्ष डोला पर झूलती हुई मुझ को इस प्रकार एकदम नीचे गिरा कर विषाद की चोट लगाओगी ?

कृष्ण—वैसी तुम को राधा के लिये चिन्ता नहीं होती ?

रुक्मिणी—जरूर होती है। स्वीकार हो तो मैं तुम राधा जैसी गरीब ग्वालन बनने को तय्यार हूँ और तुम्हें मेरी-रुक्मिणी की-सब राजसत्ता, बड़प्पन तथा सगपन भी दे देती हूँ।

कृष्ण—यह भी ठीक ! अर्थात् रुक्मिणीरूप बनी हुई मुझ राधा से शिशुपाल ब्याह कर लेवे और तुम्हें इस प्रकार कृष्ण खेल खिलावें !! अरे बाहरे तुम्हारी अपनी बला दूसरों पर डाल देने की लुच्चाई ! दूसरों को यति बनाने की चतुराई !!

रुक्मिणी—तुम तो सखी ? बड़ी नुक्तचीनी करने वाली मालूम होती हो ? अब मैं तुमको और किस तरह मना सकती हूँ ?

कृष्ण—इस तरह कि मुझे अभी यहाँ आते समय मेरे वर श्यामसुंदर मिले थे जो तुम्हारा संदेशा लेकर कृष्ण के पास जारहे थे। उन्होंने मुझे चाहा है किन्तु ब्याहा नहीं। अब जिस दरज मैं [राधा] कृष्ण को चाहती हूं उसी दरजे वे श्यामसुन्दर मुझे चाहते हैं। किन्तु अभी तुम को देख कर वे तुम पर मोहित होगये हैं और इसी से मुझे कहते गये हैं कि यदि मैं उन का तुम्हारे संग विवाह करा दूं तो वे मुझे कृष्ण से विवाह करने के लिये खुशी से आज्ञा देंगे। अतः तुम ही मेरी बात मान लो न ? मेरे श्यामसुन्दर से शादी कर मुझे कृष्ण से शादी करने का सौभाग्य दे दो न ?

रुक्मिणी—अरर दैय्या, यह श्यामसुन्दर ऐसा कपटी था कि परस्त्री पर मोहित हुआ ?

कृष्ण—अभी तुम कन्या हो अर्थात् परकीया या परस्त्री नहीं हुई और इसी से श्यामसुन्दर का तुम पर मोहित होने का हक भी नहीं चला गया। वास्तव में तो तुम कपटी हो कि राधा के होगये हुए परकीय कृष्ण पर मोहित हो गई हो और उलटी चोर कोतवाल को दण्ड देरही हो। सो मेरा कहना यदि न मानो तो मेरे कृष्ण की आशा भी छोड़ देना। चलो—भक्ति ? यहां तो मोह का ही मद्य है कहीं नशा न चढ़ आवे। [जाने लगता है कि।]

रुक्मिणी—[कृष्ण का अञ्चल पकड़ कर।] राधा बहिन ? मुझे यदि कृष्ण नहीं मिलें तो मैं उनके विरह में अपघात करूंगी और वह स्त्री हत्या का पाप तुम्हारे शिर पर चढ़ाऊँगी। मैं तुम्हारी सौत बनना नहीं चाहती किन्तु तुम्हारे प्रेमरत्न की ज्योत बनना चाहती हूं और राधा कृष्ण के संयुक्त स्वरूप की निज नयन मन्दिर में स्थिर स्थापना कर सेवा करनी चाहती हूँ।

कृष्ण—यदि ऐसा ही है तो प्रिय सखी ? मुझे तुम्हारे भक्ति भाव पर अब अतीव प्रीति तथा सहानुभूति होती है। तुम्हारे लिये अब मैं जरूर स्वार्थ त्याग करूँगी। अपने स्थान में तुमको ऐसी प्रसन्नता से कृष्ण की गोद में खेलने दूंगी और चन्दन खण्ड से इस गोरे गाल पर अमृत

CC-0. Kurukshetra University Kurukshetra. Gurukul Kangri Collection, Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चुम्बन लेने दूंगी। [कृष्ण अभिनय पूर्वक गोद में लेकर चूमता है।]

रुक्मिणी—अहा! तुम्हारा परम उपकार।

राधा—[स्वगत] मैं जागती हूं, स्वप्न में हूं या किसी मायाविनी भ्रान्ति में हूं!!

कृष्ण—[रुक्मिणी से।] किन्तु अब तुम्हें भी मेरा एक कार्य साधना होगा।

रुक्मिणी—वह क्या?

कृष्ण—वह यह कि कृष्ण को तो मुझे तुम्हारे खातिर छोड़ना पड़ा। किन्तु साथ में ही इस भक्ति के लिये अब मैं अपने चाहे हुए किन्तु ब्याहे हुए नहीं ऐसे वर श्यामसुन्दर को भी छोड़ना चाहती हूं क्योंकि आज अकस्मात् श्यामसुन्दर की अपेक्षा मैं इस भक्ति पर ही अधिक मोहित हो गई हूँ और इसी से तुम मुझे भक्ति के साथ ही ब्याह दो कि जिस से कृष्ण और राधा संबन्धी तुम्हारी व्याकुलता भी दूर हो जाय।

रुक्मिणी—[राधा से] भक्ति? तेरे अहो भाग्य कि तेरी सिठानी ही तेरी गृहिणी होने की आतुरता रखती है।

राधा—[स्वगत] किस की सिठानी और किसकी गृहिणी? यह मेरी करनी मुझे ही सता रही है। मैं पुरुष वेश में मायावी बनी तो मुझ पर ही कोई अजब माया चल रही है। न कहा जाय न सहा जाय।

रुक्मिणी—आओ भक्ति भैया? इस राधा जैसी सुन्दर स्त्री और कहीं नहीं मिलेगी।

राधा—न मिलें तो यहां किसके पेट में जले हैं? मैंने तो आजन्म कुमार रहने की ही प्रतिज्ञा की है।

कृष्ण—मुझ से विवाह करके भी तुम खुशी से कुमार ही रहना। मैं कभी तुम्हारी विघ्नकारिणी न हूंगी। मैं तो देह संबन्ध की अपेक्षा स्नेह सम्बन्ध की ही भूखी हूं।

रुक्मिणी—सचमुच भक्ति भैया? तुम सुखी हो। आओ आओ। [दोनों के हाथ मिला कर।] राधा और भक्ति का अविचल मेल मिला कर मैं विदा होती हूं तथा कुतूहलकारी इस युगल का कल्याण चाहती हूं। [जाती है।]

[भक्ति वेशधारिणी राधा किं कर्तव्यमूढ होकर खड़ी है और राधा वेशधारी कृष्ण मर्मनाट्य से देख रहा है।]

कृष्ण—यह मेरे भक्ति भरतार ऐसे ठंडेगार होकर कैसे खड़े हैं? क्या स्त्री की अपेक्षा पुरुष को ज्यादा शरम आती होगी? शायद बड़ी स्त्री के स्वामी को आती होगी सही!!

राधा—[स्वगत] हे भगवान्? न जाने इस भूल भूलैय्या का तू कैसे अन्त लावेगा? मैं क्या जानती थी कि अपने गूंथे हुए जाल में मैं ही फंस जाऊंगी।

कृष्ण—[राधा के पास जाकर।] स्वामिनाथ? देखो, अब यदि आप पुरुष हो कर ज्यादा शरमाओगे तो फिर मुझ स्त्री को आप की शरम छुड़ानी पड़ेगी। आप प्रेम न करेंगे तो ज़बरदस्ती से कराना पड़ेगा। पानी में गिरने के बाद कोरे [शुष्क] नहीं रह सकोगे .....हां।

राधा—[स्वगत] कहीं की इस [धृष्टा] के सामने अब सच्चा स्वरूप प्रकटाये बिना नहीं चलेगा। [प्रकट] तू कहीं की बनावटी राधा बनकर आयी है सो उस अपने प्रपञ्च में तू ही ठगी है।

कृष्ण—ऐसा क्या? तब तो तुम कहीं के भक्ति बनकर आये हो सो उस अपनी जादू में तुम ही जकड़े गये हो; मैं नहीं।

राधा—किस तरह?

कृष्ण—वह तुम ही प्रकट करो न? बाकी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri

में तो नहीं; यह निश्चित।

राधा—अरी भोली बीर? तू एक स्त्री से ब्याही है और वह भक्ति नहीं किन्तु देख, यह सच्ची राधा है। [पुरुष वेश को त्याग राधारूप से प्रकट होता है।] और तू बनावटी राधा है। कहो, अब तुम ठगी कि नहीं?

कृष्ण—बिलकुल नहीं। उलट तुम सफाई करती थी और ना कहती थी तो भी समझाने से नहीं तो हार जाने से भी राधा इस श्याम-सुन्दर की ही साबित हो चुकी है और रुक्मिणी के हाथ से विवाह कर चुकी है।

[स्त्री वेश में से कृष्ण श्यामसुन्दर रूप में प्रकट होते हैं।]

राधा—(सक्रोध) पर गृह में प्रविष्ट होकर हम दोनों कुमारियों को लाञ्छन लगाने की तूने चेष्टा की?

कृष्ण—(सहास्य) श्यामसुन्दर के सिवा तुम किसी दूसरों की हो ही नहीं और इसी से तुमको लांछन भी नहीं लगा।

राधा—खबरदार-धूर्त? हम श्रीकृष्ण-कुसुम की ही भ्रमरियाँ हैं।

कृष्ण—तो तुम्हारे लिये हम श्यामसुन्दर स्वयं कृष्ण बनने के लिये तय्यार हैं। [मूल कृष्ण-स्वरूप में प्रकट होता है।]

राधा—(साश्चर्य दखकर।) ए मेरे प्रभु? तुम्हारी लीला अपार है। जैसी शत्रुओं के सामने राजनीति में निपुणता वैसी ही भक्तों को पवित्र प्रेमलक्षणादोला में झुलाने की भी प्रवीणता। बारह कला के राम तो सोलह कला के कृष्णचन्द्र वह इसका नाम।

गायन।

राधा-ये वो कैसी कन्हैयाजी माया तुमारी।
माया से बनते हो बहुरूपी नरनारी॥ ये०-
कृष्ण-आत्मा ये है न स्त्री पुरुष या न है कुमार कुमारी।
अव्यक्त जो उसे तनुधारी मानें वो अविचारी॥
राधा-साँवरिया? तुम्हारी गीता की बलिहारी॥ ये०

[दोनों का निर्गमन।]

विजेता राम।

ले० पण्डित गयाप्रसाद (श्रीहरि)

विजेता राम? बतला दो विजय भारत भी पायेगा। ध्रुव॥
गई निज देशकी दौलत विदेशों में करोड़ों की।
उसे निजबाहुबल से क्या प्रभो? फिर फेर लायेगा॥ १॥
वहां इक श्यामसुख रावण रुलाता था सुदेवों को।
सहस्रों श्वेतमुख इत हैं कहो, क्यों त्राण पायेगा॥ २॥
वहां इक जानकी गाहक हुई थी जान की रावण।
कुलस्त्री कोटि वन वहि न इनको क्या जलायेगा॥ ३॥
कहीं स्वाराज्य की भिक्षा मिली रोकर के है भगवन्।
शिखण्डी सा बना भारत ये कबतक शिर झुकायेगा॥ ४॥
विजय पा वीर रावण से बने रघुवीर विजयी हो।
कहो कबतक निलज भारत ये बातों को बनायेगा॥ ५॥
वही वर दो, वही कर दो, वही शर दो, इसे 'श्रीहरि'।
जिसे पाकर के भारत भी विजय वंशी बजायेगा॥ ६॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

'सदाचार मीमांसा'

[लेखक श्रीयुत सत्यव्रत जगजीवन]

सदाचार एक ऐसा विषय है जिसकी आवश्यकता प्रत्येक व्यक्ति को चाहे वह स्त्री हो या पुरुष सब को है, सदाचार अर्थात् 'सत्पुरुषों का आचार' जो जो श्रेष्ठ धर्माचरणों के करने वाले साधु महात्मा पुरुष हुए हैं या इस समय विद्यमान हैं उनके सदृश अपने आचरणों को बनाना अथवा जो जो सत्य है उसको आचार में लाना ही सदाचार है।

किसी भी जाति या समाज की उन्नति उस २ जाति के या समाज के सदाचारों स्त्री पुरुषों पर ही निर्भर है क्योंकि जब तक हमारी जाति के स्त्री पुरुष सदाचारी न बनेंगे, जब तक हम अपनी इन्द्रियों के गुलाम बने रहेंगे, जब तक हम अपने आप पर स्वराज्य करना नहीं सीखेंगे, जब तक हम अपने देश में प्राचीन गौरव को पुरुज्जीवित करने वाली, विद्या के साथ २ ब्रह्मचर्य आदि नियमों का पालन कराने वाली तथा च शारीरिक उन्नति के साथ २ चारित्र्यवान् बनाने वाली संस्थाएं जगह जगह पर प्रचलित नहीं करेंगे तब तक हम में दूसरों के दासत्व को चिरकाल के लिये परित्याग करने, अपने स्वालम्बन पर दृढ़ रहने, देश सेवा में सतत प्रयत्नशील होने और चरित्र को पवित्र बनाने तथा च सर्व प्रकार से देश की उन्नति के शिखर पर पहुँचाने का यथार्थ आत्मिकबल नहीं आसक्ता। यदि माता पिता सच्चरित्र शाली होगें तो उनकी सन्तान भी आदर्श बन सकती है, प्रायः सदाचारी मनुष्य के अन्दर सत्यप्रियता, दयालुता, पवित्रता, मिष्ट भाषिता तथा सर्वप्रियता आदि उत्कृष्ट गुण पाये जाते हैं हम सब में प्रथमतः सदाचार का होना अत्यन्त आवश्यकीय है इसके होने से ही हमारा जीवन यथार्थ जीवन हो सकता है और हम में सदाचारण के होने से ही हमारी प्रतिष्ठा चिरस्थायी हो सकती है यदि कोई कहे कि संसार में विद्वान् होने से भी तो बहुत प्रतिष्ठा हो सकती है तो मानना पड़ेगा कि केवल बहुत पढ़कर भी यदि आचरण भ्रष्ट है तो उसका पढ़ना तोते की तरह व्यर्थ है एक अपढ़ आदमी जो अपनी जीवन पवित्रता से बिताता है उससे कई गुना अच्छा है। एक तरह से तो दुराचारी विद्वान् की अपेक्षा दुराचारी मूर्ख अच्छा क्योंकि विद्वान् तो भले और बुरे का ज्ञान होते हुए भी दुष्चरित्र बनता है तो फिर मूर्ख तो मूर्ख ही है वह तो भले बुरे के परिणाम से अनभिज्ञ है उदाहरणार्थ पुलस्ति-मुनि (ब्राह्मण) का पुत्र रावण बड़ा भारी वेद तथा आयुर्विद्या आदि का विद्वान् होने पर भी दुर्वृत्ति के कारण राक्षस कहलाया और दूसरी तरफ श्रीरामचन्द्रजी को क्षत्रिय कुलोत्पन्न होने पर भी अपने उत्तम आचार व्यवहार के कारण पुरुषोत्तम कहते हैं जिनका नाम भारत के प्रत्येक नर नारी के मुख से अत्यन्त गौरव के साथ सुना जाता है जिनके जीवन चरित्र को पढ़ने से पितृ-आज्ञापालन, भ्रातृप्रेम, एक पत्नीव्रत धर्म और मित्रस्नेह आदि अनेक गुणों का समावेश पाया जाता है यह सब बातें उनका दृढ़ सदाचरण का होना ही बतलाता है आचार के श्रेष्ठत्व की पुष्टि करते हुए मानवधर्म शास्त्र में मनु महाराज कहते हैं कि:—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आचाराद्विच्युतो विप्रो न वेद फलमश्नुते।
आचारेण तु संयुक्तः सम्पूर्ण फलभाग्भवेत् ॥

क्योंकि जो विद्वान् या ब्राह्मण धर्माचरण से रहित है वह वेद प्रतिपादित धर्मजन्य सुख रूप फल को प्राप्त नहीं हो सकता और जो विद्या पढ़के सदाचरण से युक्त है वह सम्पूर्ण सुखरूप फल को प्राप्त होता है। इससे यह मतलब नहीं कि विद्या पढ़के कुछ लाभ नहीं होसकता किन्तु विद्या के साथ २ सच्चरित्र का होना जीवन के लिये अत्यन्त लाभप्रद होकर अन्त में शान्ति और सुख का अनुभव हो सकता है। बहुत से लोग विद्या को दोष देकर कहते है कि कन्याओं को विद्या पढ़ाने से वे विगड़जाती हैं और दूसरों के साथ विद्या का गर्व होने से बुरा वर्ताव करती हैं इत्यादि। इस प्रकार का उनका कहना बिलकुल निरर्थक है क्योंकि विद्या के पढ़ने से एक आदमी तो सुधर जाय और स्त्री न सुधरे ऐसा कभी नहीं हो सकता, विद्या तो सबको समान गुण देने वाली है जो शक्ति ईश्वर ने मनुष्य के अन्दर विद्या ग्रहण करने की दी है वही स्त्री के अन्दर भी है यदि कोई स्त्री विद्या पढ़कर भी ख़राब आचरण या चाल चलन वाली है तो पुरुषों में बहुत से पढ़े लिखे होने पर भी दुश्चरित्र दिखाई देते हैं। इससे जानना चाहिये कि विद्या एक निर्दोष हथियार है जैसे एक आदमी हथियार को लेकर किसी साधु सत्पुरुष को मारे या उसी हथियार से उस महात्मा पुरुष की दुष्ट पुरुषों से रक्षा करे, तो इसमें उस हथियार का कुछ दोष नहीं किन्तु दोष हथियार से काम लेने वाले आदमी का है अतः मानना पड़ेगा कि विद्या के साथ सदाचार का जोड़ जीवन को उन्नत मार्ग में पहुंचाने के लिये आवश्यकीय है वस्तुतः स्त्री या पुरुष के विद्या पढ़ने पर भी दुश्चरित्र होने का यही मुख्य कारण प्रतीत होता है कि बालकपन में उनके माता, पिता या गुरु द्वारा धार्मिक या नैतिक शिक्षण बराबर नहीं मिलता यदि छोटेपन में ही माता पिता उनके बालकों को नैतिक शिक्षण देते हुए बालक के चालचलन आदि व्यवहारों पर पूरा २ ध्यान रक्खें तो बड़ेपन में अवश्य सदाचारी हो सकता है अतः अत्यन्त आवश्यक है कि सब से प्रथम बालक या बालिका को सच्चरित्रवान् बनाने का पूर्ण यत्न करना चाहिये प्रायः सच्चरित्र बालक जैसा २ बढ़ता जाता है जो २ वह करना चाहता है थोड़े प्रयत्न से साध्य कर सकता है और उसके आचार विचार के पवित्र होने से उसकी विवेक शक्ति का भी दिनों दिन अधिक विकास होता जाता है, जो पवित्र आचरण रखने वाले हैं उनके चित्त की वृत्तियां स्वभावतः अच्छे अच्छे कार्य के करने में प्रवृत्त होती रहती है ईश्वर के प्रति दृढ़भक्ति व प्रेम के भाव दिनों दिन बढ़ते रहते हैं और संसार में वेही लोग वास्तविक शान्ति का अनुभव कर सकते हैं।

हम को सदाचारी बनने के लिये मुख्यतः निम्न साधनों की अत्यन्त आवश्यकता है-सब से प्रथम हम को संयमी बनने का यत्न करना चाहिये अर्थात् सम्पूर्ण इन्द्रियों को अपने वश में रखना चाहिये जितनी भी बुरी बातें, बुरी आदतें जो हमारे जीवन को पवित्रता से गिराने वाली हैं और जो जो दुष्कर्म हमारे विचारों को मलीन करने वाले हैं उससे अपनी चंचल इन्द्रियों को वशीभूत रख कर सर्वदा भलाई के कार्यों को करने में तथा अपने को पवित्र बनाने वाले उत्तम उत्तम विचारों में लगाना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चाहिये ज तक हम अपने मन को वश में रख इन्द्रियों पर पूर्ण अधिकार न जमा लेंगे तबतक हम को कोई भी अच्छा कार्य करने में पूरी सरलता न होसकेगी दूसरी बात अपने विचारों पर बहुत ध्यान रखना चाहिये क्योंकि कोई ऐसा समय नहीं कि जिस में हमारा मन कुछ कार्य न करता हो, चाहे देखने में हम कुछ भी करते न दीखाई पड़े, परन्तु हमारे मन में कुछ न कुछ विचार प्रवाह चलते ही रहते हैं यदि हमारे विचार उच्च उद्देश्य की ओर होंगे तो हम बराबर अपने आदर्श की ओर बढ़े चले जायंगे जो मनुष्य जैसे अपने विचार रखेगा उसी के अनुकूल वह अपना चरित्र बनाता चला जायगा, पवित्र विचार होंगे तो पवित्र बनेंगे और मलिन विचार होंगे तो मलिन (पतित) होंगे मनुष्य का जीवन ऊंच और नीच बनना उसके विचारों पर ही निर्भर है अतः हम को प्रतिदिन के विचारों की ओर अवश्य ध्यान रखना चाहिये, प्रत्येक को अपने जीवन का कोई भी उच्च उद्देश्य अवश्य बनाना चाहिये फिर वह परोपकार करने का हो, चाहे ईश्वर प्राप्ति का हो, चाहे देश सेवा का हो, चाहे ऐहिक और पारमार्थिक दोनों सुखों के प्राप्त करने का हो कोई भी हो, पाये हुए उत्कृष्ट मनुष्यजन्म के जन्म की कुछ भी सार्थकता हो ऐसा हो। पश्चात् जिस उद्देश्य को हम ने अपना लक्ष्य बना लिया है फिर उसके सिद्धि के लिये मार्ग में कितनी भी रुकावटें या आपत्तियाँ क्यों न आवें धैर्य से सहन करते हुए अपने विचारों को उसी उद्देश्य की पूर्त्ति में लगा दें तो अवश्य वह समय एक दिन आवेगा, कि स्वतः उस परिश्रमके सफलता का अनुभव हृदय में होने लगेगा अतः स्पष्ट है कि मनुष्य के विचार भी उसके उन्नति व अवनति में बहुत कुछ सहायभूत होते हैं।

तीसरी बात सच्चरित्र बनने के लिये सत्संग की भी बड़ी भारी आवश्यकता है-संग का ऐसा प्रभाव होता है कि अच्छे को बुरा और बुरे को अच्छा बना देता है यदि कोई अपरिपक्व विचारों का एक सदाचारी आदमी बहुत से दुराचारी आदमियों में रोज बैठता उठता हो तो प्रतिदिन के संसर्गाधिक्य से वही बातें और विचार सामने आने से सदाचारी आदमी के विचार थोड़े २ बदलते २ एक दिन उन्ही कासा हो जाता है इसी तरह दुराचारी मनुष्य सदाचारी मनुष्यों में सर्वदा रहने से सच्चरित्र बन जाता है अतः हमको चाहिये कि सदा भले आदमियों के साथ व्यवहार करना तथा साधु महात्मा पुरुषों के सहवास में रहना तथा अच्छे २ पुरुष व स्त्रियों के सभा में जाया करना, जिससे हमारे विचार तथा आचार उन्नत बनते रहें।

चौथी बात आचार को सुधारने या बिगाड़ने की पुस्तकें भी बड़ा भारी साधन होती है, बहुत से लोग अश्लील और गन्दी पुस्तकें रचकर सर्व साधारण को बड़ा भारी नुकसान पहुँचाते हैं इस प्रकार की खराब पुस्तकें पढ़कर बहुत से आदमी दुश्चरित्र बन जाते हैं अतः जब तक हमारे देश में धार्मिक और सामाजिक उन्नति जनक साहित्य के पुस्तकों का चारों तरफ फैलाव न होगा तब तक सच्चरित्र और उन्नत विचार रखने वाले आदमियों की संख्या बढ़ना कठिन है जैसे २ धार्मिक और सामाजिक साहित्य का सुधार होता जायगा वैसे २ हमारी प्रचलित कुरीतियां दूर होकर देश की उन्नति होती जायगी यदि हम अपने आचार विचार को परिष्कृत करना चाहते हैं तो प्रतिदिन सन्ध्या के पश्चात् दिनभर के किये हुए कार्यों और विचारों की आलोचना करें, कि दिन में हमने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कोई कुत्सित कार्य या ख़राब विचार तो नहीं किया जो हमारे लिये हानिकारक हो, यदि कोई अज्ञानता से भूल हो गई हो तो उस पर पूर्ण आन्तरिक पश्चात्ताप करना कि जिससे कम से कम यह भूल तो फिर से न हो सके, ऐसा प्रतिदिन के प्रयत्न करने से उसके एक २ दोष कम जायगा और एक दिन वह आ जायगा कि उसके जीवन में पवित्रता, विनय शीलता, मधुर-भाषिता, गम्भीरता सहृदयता और सच्चरित्रता का साम्राज्य होने लगेगा।

यदि हम अपने आर्य जाति के अन्दर पुनः प्राचीन गौरव को लाना चाहते हैं यदि हम अपने देश के अन्दर राम और कृष्ण जैसी पवित्र सन्तान पैदा करना चाहते हैं यदि हम हरिश्चन्द्र के से, सत्य के लिये सब कुछ न्योछावर करने वाले सपूत पैदा करना चाहते हैं यदि हम अपनी भारत माता की गोद को पुनः निष्कलंक करना चाहते हैं तो प्राचीन शिक्षा प्रणाली के अनुसार प्रत्येक बालक और बालिका को मस्तिष्क की उन्नति के साथ २ शारीरिक और आत्मिक उन्नति का भी शिक्षण देने का पूर्ण प्रयत्न करें बस अन्त में:—

अज्ञान-अन्धकार को हे ज्ञान-ज्योति ? दे हटा।
चहुँ ओर फैला शान्तिको दुःखीजनों के दुख मिटा।

दयाधन ! धरो धरणि अवतार।

[ले० श्रीयुत भवानीशङ्कर याज्ञिक]

दीन दुखियों के तुम आधार।
दयाधन धरो धरणि अवतार ॥ १ ॥
तुम्हीं हो कारण कर्त्ता कार्य। तुम्हीं सब जग तुम हो अनिवार्य ॥
तुम्हीं हो उपवन माली फूल। सूक्ष्म से सूक्ष्म स्थूल से स्थूल ॥
तुम्हीं हो निराकार साकार।
दयाधन धरो धरणि अवतार ॥ २ ॥
सभी तुम में तुम सब में व्याप्त। सकल जग तुम में है परियाप्त ॥
खिलाड़ी तथा खिलौना खेल। सभी से अलग सभी से मेल ॥
तुम्हारी महिमा अपरम्पार।
दयाधन ! धरो धरणि अवतार ॥ ३ ॥
जगत के कर्त्ता तुम हो एक। तुम्हारे रूप परन्तु अनेक ॥
प्रकृति सब आप रूप भगवान। ताल में तोय तरङ्ग समान ॥
तुम्हीं हो लीलामय करतार।
दयाधन धरो धरणि अवतार ॥ ४ ॥
अगोचर गोचर हो भगवन्त। अपार अखण्ड अनादि अनन्त ॥
अगम पर सुगम भक्त के अर्थ। छिपे माया-पट पीछे व्यर्थ ॥
तुम्हारे अट पट हैं व्यवहार।
दयाधन धरो धरणि अवतार ॥ ५ ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रमापति ! जहाँ रचा था रास। मिटाया जहाँ दास का त्रास॥
जहाँ की मिट्टी खाई श्याम। वही तव प्यारा लीला धाम॥
हुआ है दुखिया दीन अपार।
दयाधन धरो धरणि अवतार॥ ६॥

द्वेष दावानल करता दाह। सताता भारत गज को ग्राह॥
कर रहा धूम कलह का कंस। होरहा हाय देश विध्वंस॥
हो रहे नाना अत्याचार।
दयाधन धरो धरणि अवतार॥ ७॥

तुम्हारे दास सहें दुख द्वन्द। फिरें पापी पूरे स्वच्छन्द॥
धर्म की धूलि उड़ाई जाय। विधर्मी विपुल बड़ाई पाय॥
लजाते हो कुछ दशा निहार।
दयाधन धरो धरणि अवतार॥ ८॥

बढ़ रहा वैर विरोध विकार। घट रहा विनय विवेक विचार॥
दबाता दुसह दासता भार। होरहा है हरि हाहाकार॥
करो कृपया कुछ तो उपकार।
दयाधन धरो धरणि अवतार॥ ९॥

उठालो गिरिधर दुख गिरिराज। रखो द्रोपदी देश की लाज॥
बुझाओ भेद भाव की आग। नाथ नाथो अनीति का नाग॥
बजाओ बंसी सब सुख सार।
दयाधन धरो धरणि अवतार॥ १०॥

जमाओ प्रबल प्रेम का रङ्ग। करो अब शकट भीरुता भङ्ग॥
मोह मटकी फोड़ो कंसारि। मार दो केशी कपट मुरारि॥
भरो धन से भारत भण्डार।
दयाधन धरो धरणि अवतार॥ ११॥

सुधारो दास दशा अब नाथ। अनाथों का अब पकड़ो हाथ॥
करो प्रभु पावन प्रेम प्रचार। जगाओ जागृति ज्योति अपार॥
हरो प्रभु भारत भू का भार।
दयाधन धरो धरणि अवतार॥ १२॥

———

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गंगा-जमनी-नलनी।

लेखक—श्रीयुत 'पागल'।

"असीर पञ्जेय अहेद शबाब करके मुझे।
किधर गया मेरा बचपन, ख़राब करके मुझे"

बहुत पुरानी बात है। शुरू २ की बात है। लड़कपन की बात है। मगर दिल पर ऐसी गड़ी हुई है कि अब तक वैसे ही याद है। इसी याद ने मुझे तबाह कर डाला। मेरी ज़िन्दगी ख़राब कर डाली। जहां कहीं रसीली आंख दिखाई पड़ी। नलनी की सूरत नज़रों के सामने से फिर जाती है। मुद्दतों का दबा हुआ ज़ख्म फिर उभर उठता है फिर वही जलन वही बेचैनी शुरू हो जाती है। और मैं फिर उस रसीली चितवन का वैसा ही दीवाना हो जाता हूं जैसा कभी नलनी के पीछे दीवाना था।

नलनी तूही मेरी तमाम मुसीबतों की जड़ है। तूही ने मेरी लापरवाही छीनी। तूने ही मेरे चैन ओ आराम को हमेशा के लिये जला कर ख़ाक कर दिया। तूही मुझे बहकाकर प्रेम गलियों में लेआई और यहीं ज़िन्दगी भर भटक भटक कर मरने के लिये छोड़कर ग़ायब हो गई अगर तू मुझे प्रेम करना न सिखाती तो ज़िन्दगीभर मुझे रोना क्यों पड़ता? तू अगर मेरे बचपन के नन्हे दिलको ज़ख्मी न कर देती तो मनमोहनियों का असर उस पर इतनी आसानी से क्योंकर हुआ करता? उनका ज़ोर फिर मेरे दिल पर क्या चलता?

अरे! क्यों २ तूने मेरे साथ ऐसी दुश्मनी की। मेरे सर पर इतनी बड़ी मुसीबत हमेशा के लिये क्यों डाल दी? कली खिलने के पहिले तेरे प्रेम के झोंके ने मरोड़ डाली। वह सिवाय दिनोदिन मुरझाने के कभी खिल भी सकती है।

तुझे देखकर मैं पहिले चिढ़ता था। जब तू मेरे साथ खेलने के लिये आती थी तो मैं तुझे मारता था और बहुत मारता था। तू शायद इसको अब भूल गई होगी। मगर तेरी पीठ की हड्डियां उसे कभी भूल नहीं सकतीं। जब तुझे मारता था तो तू रोती क्यों न थी? मुझे गालियां क्यों नहीं देती थी? क्या इसीलिये कि तू इसका बदला कुछ और देने के लिये सोचे हुए थी? इसीलिये तू मारने पर भी भगाने पर भी बार२ दौड़कर हंसती हुई मेरे पास आती थी? उफ़ बड़ा सख्त बदला लिया तूने नलनी।

(२)

"तुम कौन धों पाटी पढ़े होलला,
मन लेहू पै देहू छटांक नहीं।"

मेरे पिता हाल ही में बदल कर बंगाल के एक नगर में गये थे। वहीं मुझ से नलनी से भेंट हुई। क्योंकि मेरे पिता और नलनी के पिता दोनों एक ही आफ़िस में काम करते थे। नलनी बंगाली बाला थी और मैं युक्तप्रदेश का रहने वाला था। उसकी जन्मभूमि वहीं थी। और हम लोग परदेशी थे।

पिता के जाने के बाद मेरे स्कूल में गर्मियों की छुट्टी हुई। घरवालों के मना करने पर भी मैं ज़िद करके पिता के पास अकेले रवाना हुआ। उस वक्त मेरी उमर सिर्फ़ १३ बरस की थी और अंग्रेज़ी मिडिल क्लास में पढ़ता था इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लिये उमर भी कच्ची समझ भी कच्ची लियाक़त भी कच्ची होने के कारण सब लोग मुझे इतने लम्बे सफ़र पर जाने से रोकते थे। मगर मैंने न माना और एक दिन पिता के पास नौ बजे दिन को पहुंच गया।

पिता जिस मकान में रहते थे वह स्टेशन से मिला हुआ था। मकान काहे को था अच्छा ख़ासा बंगला था। चारों तरफ़ फुलवारी थी। हाते के भीतर पानी का नल था। सड़क के इस पार मेरा मकान था और उस पार नलनी का।

पिता खाना खाकर औफिस चले गये। और मैं दुबारा नहाने के लिये नल पर गया। क्योंकि पिता के सामने जी भरके नहा न सका था। नलनी नल पर नहा रही थी। मुझे देखते ही वह वहां से हट गई और मैं नल के नीचे बैठ गया। थोड़ी देर तक मैं नहाता रहा। नलनी ने मुझ से बंगला में पूंछ पाछ शुरू की। क्योंकि वह समझी कि शायद मैं बंगाली हूं। या मैं भी अपने पिता की तरह बंगला बोलना जानता हूं। मैं उसकी बातों का मतलब समझता था। मगर कभी बंगला बोलने की नौबत नहीं आई थी। इसलिये हिचहिचाहट के मारे चुप रहा। तब वह टूटी फूटी हिन्दी बोलने लगी।

नलनी—"तुम कब तक नहायेगा?"

मैं—"जब तक मेरी खुशी होगी।"

नलनी—"हम भी नहायेगा।"

मैं—"जाकर अपने घर पर नहा।"

नलनी—"हमरा घर वह है। हम रोज यहां नहाता है।"

मैं—"मगर अब यहां नहाने न पावोगी।"

नलनी—"क्यों?"

मैं—"क्योंकि अब मैं आगया।"

नलनी—"तुम कौन है?"

मैं—"मैं कोई हूं। तुम से मतलब?"

नलनी—तुमरा की नाम है?"

मैं—"क्या करोगी पूछ कर?"

नलनी—"हमरा नाम नलनी है।"

मैं—"होगा।"

नलनी—"तुम बड़ा बाबू का लड़का है?"

मैं—"हां हूं तो। मगर तुम अपना मतलब कहो।"

नलनी—"हम चटर्जी बाबू की लड़की है।"

मैं—"तो मैं क्या करूं?"

नलनी—अच्छा अब तुम नहा चुका अब हमको नहाने दे।

मैं—"जाती है यहां से कि दूं मुंह पर तमाचा कसके।"

नलनी—"तुम मारो हम नहीं जायेगा।"

अगर दिल चोट खाने के योग्य होता या पहिले कभी इसने चोट खाई होती तो उसकी इस बात पर इसका क्रियाकर्म सब हो जाता। मगर लड़कपन में इतनी गूढ़ बात समझने की समझ कहां? छिलकों के भीतर छिपे हुए रस के बीज को छीलकर निकालने और उसका स्वाद लेने का ढंग कहां? उसकी इस बात पर मुझे उल्टे और गुस्सा चढ़ आया इसलिये कि यह बड़ी ढीठ है। दिल में ठान लिया कि अगर अब यह बोली तो बिना मारे छोड़ूंगा नहीं। मगर खैरियत हो गई कि उसी वक्त एक वृद्ध बंगाली भले मानुस सड़क पर जाते हुए दिखाई दिये। उन्हें देखते ही वहां से चुपचाप वह खिसक गई। मैं नहा कर लौटा और सफर की थकावट के कारण चारपाई पर लेटते ही सो गया।

(३)

"ख़ता साबित करेंगे अपनी और हम उनको छेड़ेंगे।
सुना है उनको गुस्से में चिमट जाने की आदत है"॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri. Creative Commons USA

नौकर और भण्डारी मुझे सोता हुआ देख कर कहीं टहलने चलदिये। माली भी खाना खाने अपने घर रवाना हो गया। उस सुनसान घर में मैं ही अकेला रह गया। इतने में कुछ खटपट की आवाज़ हुई। और मेरी नींद उचट गई। देखा कि सामने ही मेरी चारपाई के पास नलनी खड़ी हुई मेरी तरफ़ देख रही है। मगर मेरी आंख खुलते ही वह भाग गई। मेरे बदन में आग लग गई कि कहां से आकर इसने मेरी नींद हराम की। तो भी अलसाया हुआ बहुत था। करवट लेकर फिर सोगया। जैसे ही आंख लगी थी वैसे ही बाहर की खिड़की से किसी ने मेरे बदन पर एक गिलास पानी फेंका। मैं झल्ला के उठ बैठा। खिड़की से देखा कि नलनी हाथ में गिलास लिये भागी जारही है। अब मुझे ताब कहां? जल्दी से मकान के बाहर हुआ। और दौड़ कर नलनी को पकड़ा और फिर उसके पीठ पर दो घूंसे कस कस के जमाये। नलनी के पिता दूर से यह मार पीट देख रहे थे। नलनी न तो रोई और न कुछ मुंह से बोली। मगर उसके पिता आंख लाल किये आस्मान सर पर उठाये मुझ पर फट पड़े। और लगे गरजने। नलनी वहां से सर झुकाए अपने घर चली गई और अपना चादर जो नल पर फीचने के लिये रखे हुए थी ले जाना भूल गई। एक तो मेरी नासमझी की उमर दूसरे गुस्सा चढ़ा हुआ था नलनी के पिता से उस वक्त मैं कब दबने वाला था? तमीज़ लिहाज़ का ख्याल चूल्हे में झोंक उनसे लड़ने को तयार होगया।

वह--तुम हमरा लेड़की को मारेगा?

मैं--हां और तुम को भी मारूंगा।

वह--बोदमाश! तुम हम को मारेगा?

मैं--हां और अच्छा तरह से।

इतना कहके मैं दौड़कर घर से डंडा ले आया। और दिखा कर कहने लगा कि--

"देखो इसी डन्डे से हम मारेगा।"

वह--"देखो शब लोग। यह छोकड़ा हम को मारने को बोलता है। हम इशके बाप शे बोलेगा।" इतना कहकर हज़रत चल दिये।

अरररर! सब मामला गड़बड़ होगया। बूढ़े ने ऐसी नस पकड़ी कि मेरी गर्मी उतरगई और दिल में डर समा गया। उसकी इस धमकी से मेरे हवास गुम होगए। मैं सोचने लगा कि अब क्या करूं। अगर पिता के कान में ज़रा भी मेरी शिकायत पहुंची तो ग़ज़ब हो जायेगा। बहुत ख़फ़ा होंगे। एक तो मैं मना करने पर भी ज़बरदस्ती चला आया हूं और दूसरे आते ही पाजीपन करने लगा। देवी देवता जितनों को मैं उस वक्त जानता था सब की याद की कि मुझे इस सङ्कट से उबारें। अगर नलनी इस वक्त न आती तो काहे को मेरे सर यह मुसीबत पड़ती। इसलिये रह रह कर उस पर मेरा गुस्सा चढ़ रहा था। इतने में वह घर से निकली और नल की तरफ़ बढ़ी जहां उसका चादर पड़ा हुआ था। उसे देखते ही मैं जल भुन के ख़ाक होगया। झट वह डन्डा जो मेरे हाथ में अब तक था उठा कर दूर ही से कहा।

"ख़बरदार! जो इस हाते के भीतर फिर कभी क़दम रखा तो तुम्हारी टांग तोड़ दूंगा।'

नलनी डन्डा देख कर सरसरा कर रुक गई। मैं उसका चादर उठा लाया। और उस पर अपना गुस्सा उतारने के लिये उसे एक दम जला देने का इरादा किया। मगर वक्त पर दियासलाई न मिली। इसलिये उसको छिपा कर रख दिया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

(४)

"E'en though vanquished, he could argue still" Goldsmith.

मैं मकान के बाहर फिर निकला और बड़ी देर तक खड़ा सोचता रहा कि नलनी के बाप की शिकायत का असर मेरे पिता के दिल पर किस तरह न हो। नौकरों का अभीतक पता नहीं था। माली ने नल के पास ही फुलवारी में नये नये फूल और तरकारियों के पौधे लगाये थे। मैंने नल को एक दम खोल दिया और पानी बहने की नाली बन्द करदी थी थोड़ी देर में तमाम क्यारियां पानी से भरगई और पानी छलक कर पटरियों पर पहुंचने लगा। मैं वैसे ही खुला हुआ नल छोड़कर भीतर चला आया और चारपाई पर लेटगया।

पिता दोपहर को मकान नहीं आते थे। इसलिये नौकर सब बेफिक्र थे। मगर मेरा दिल कहता था कि पिता आज ज़रूर आयेंगे मेरा ख्याल सही निकला। क्योंकि थोड़ी देर बाद पिता पहुंच गये। और आते ही पौधे और क्यारियों की दुरदशा देख आग होगये। माली को पुकारा। नौकर को बुलाया। भंडारी को ढूंढा। मगर किसी का पता नहीं। तब लगे बकने झकने कि कम्बख्तों को कई बार समझादिया कि किसी ऊपरी आदमी को नल पर न आने दिया करें। मगर कोई नहीं सुनता।

नलनी के बाप सुबह औफ़िस जाते थे और नौबजे लौटते थे फिर एक बजे जाया करते थे। उनसे और मेरे पिता से अभीतक मुठभेड़ नहीं हुई। पिता बाहर बिगड़ रहे थे कि इतने में आंख मलता हुआ मैं आया जैसे मालूम हो कि अभी सो के उठा हूं। मैंने दौड़ कर नल बन्द किया और क्यारियों में पानी भर जाने पर अफ़सोस ज़ाहिर किया। पिता भीतर आये और पूछा कि:—

"आख़िर सब के सब नौकर कहां ग़ायब हैं"

मैं० "मालूम नहीं। मैं तो सोगया था। शायद दोपहर को रोज़ घर चले जाते हों इसलिये आज भी चले गये होंगे"।

पिता "तभी तो फुलवारी दिनोदिन ख़राब होती जाती है। कभी बकरी चरजाती है। कभी नल खुला रह जाता है कोई देखने वाला नहीं।"

मैं० "नल तो खुला शायद वह बंगाली लड़की छोड़गई है। क्योंकि जब से आप गये हैं तब से अभी तक वह नल पर ऊधम मचाये हुए थी।"

पिता० "तुमने मना क्यों नहीं किया?"

मैं० "वह इसक़दर शरीर है कि वह सुनती भला किसकी है? मैंने कई दफ़े मना किया बल्कि ज़बरदस्ती हाते के बाहर करादिया। इस पर उसके बाप मुझ से उल्टे लड़ने के लिये आए। सैकड़ों उन्होंने साथ बातें सुनाई। तब मैं क्या करता। आकर सो गया। वह फिर आई होगी। और महज़ चिढ़ाने की ग़रज़ से नल खुला छोड़गई होगी।"

पिता अच्छा कह कर चुप हो गये। और मैं दौड़ कर स्टेशन चला गया। वहां पर एक बंगाली हलवाई की दुकान से आध सेर मिठाई और पाव भर बरफ़ खरीदी। पिता अभी तक आराम कुरसी पर आराम कर रहे थे। मैं ने थोड़ी सी मिठाई तश्तरी में लगाकर पिता के सामने रखी।

पिता–,' मिठाई कहां से आई?"

मैं–" मैं अभी बाज़ार से लाया हूं।"

पिता–" क्यों?"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मैं-"इसलिये कि आप को देर हो रही थी। और नौकर अभी तक आया न था।"

पिता-"नहीं मैं तो इस वक्त जलपान करने का आदी हूं भी नहीं। सिर्फ़ तुम्हारी वजह से आज इस वक्त चला आया। ख़ैर कोई हर्ज नहीं।"

मैंने झट से गिलास में बर्फ़ डाल कर पानी दिया। और उस के बाद पिता को पान इलायची देकर निहायत खुश विदा किया। और बन्दा शाम तक अपने अकेले मज़े मज़े मिठाई उड़ाता रहा।

औफ़िस में पहुंचते ही पिता और नलनी के बाप से मुठ भेड़ हो गई। यह उन की खोज में थे। और वह इन की ताक में थे। फिर क्या था खूब गर्मागर्म मुलाक़ात हुई। वह यह रट लगाये हुए थे कि आप का लड़का पाजी है। मगर क्यों? यह नहीं बताया। और पिता कहते थे कि आप की लड़की पाजी है। ग़रज़ यह कि बहस तो खूब हुई मगर न यह उन को क़ायल कर सके और न यह इन को। हम दोनों यों के यों ही रह गये। न वह पाजी ठहरी और न मैं पाजी।

[शेष फिर]

राम आगमन।

लेखक—पं० गयाप्रसाद (श्रीहरि)

अतसी कुसुमावलि मञ्जु मुखाम्बुज जाको लखे बहुलाजत काम हैं।
पितु के प्रण पालन हेतु तजे तृण सों जिन कोशल के धनधाम हैं॥
जग "श्रीहरि" होत न कौन निछावर जो निरखे सुषमा अभिराम हैं।
दशमौलिविनाशन नाशन शोक बने विजयी सोई आवत राम हैं॥१॥

मारिशस द्वीप।

(भारत के विषय में भ्रम)

लेखक—श्रीयुत् स्वामी स्वतंत्रानन्दजी।

(२)

जो भारतीय जाते थे उन में अधिक संख्या उनकी थी जो भारत के विषय में स्वयम् विशेष ज्ञान नहीं रखते थे, दूसरे जो उस पतितावस्था में जावे उसकी बात सुनता भी कौन है? तीसरे न भारत का इतिहास न भूगोल ही वहां पढ़ाया जाता है, इत्यादि सर्व कारण भ्रमोत्पादक ही मिलते हैं भ्रम नाशक की तो गंध भी नहीं मिलती, इस लिये भ्रम बढ़ता ही गया।

भूगोल विषय में भ्रम की एक घटना वर्णन करना उचित प्रतीत होता है यथाहि एक व्यक्ति जिसका नाम प्रतापसिंह है मारिशस में पुलीस में नौकर था वह स्वयम् यह बात सुनाता था कि मैं एक बार रोगी होकर चिकित्सालय में गया। जो कर्मचारी नाम लिखा करता था वह नाम लिखने के लिये आया और पूछा आपका

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नाम क्या है ? उत्तर प्रतापसिंह प्र० पिता का नाम, उ० गंगासिंह, प्र० जन्म स्थान, उ० जालंधर लेखक महाशय की लेखनी ठहर जाती है कुछ सोचकर प्रश्न करते हैं जिला कौनसा है, उ० जालंधर, प्र० जालंधर के समीप नगर (शहर) कौन है उ० जालंधर स्वयम् शहर है इसलिये उसके पास वाले शहर का नाम लेने की क्या आवश्यकता है। लेखक महाशय क्रुद्ध हो जाते हैं और कहते हैं ठीक २ बतलाओ यदि आप इस भांति उपहास करोगे तो मैं डाक्टर जी से आपकी शिकायत कर दूंगा मैंने भारत का भूगोल पढ़ा है भारत में केवल तीन शहर हैं कलकत्ता, मुंबई, मदरास और एक छोटासा शहर इनके अतिरिक्त करांची है। प्रतापसिंह कहता है इनमें कोई भी शहर १००० मील की दूरी से कम नहीं है क्या जब मैं गर्भ में था मेरी माता इन शहरों की यात्रा करती थी कि मेरा स्थान कोई इनमें से वा इनके समीप हो। इस पर कर्मचारी महाशय बिगड़ जाते हैं और डाक्टर जी से शिकायत कर देते हैं। डाक्टर महोदय को भी जब वही उत्तर मिलता है तो वह भी हैरान है अन्त में पूछते हैं अच्छा आप बतलायें कि आप जहाज पर कहां से सवार हुए थे। उत्तर दिया जाता है कलकत्ते से, तब डाक्टर महोदय लेखक महाशय से कहते हैं अच्छा आप इनका जन्म स्थान कलकत्ता लिख लीजिये" जहां भूगोल के इतने धुरंधर विद्वान् हों वहां की अवस्था का पाठक स्वयम् अनुमान कर सकते हैं।

जिस तरह भूगोल के विषय में भ्रम है उसी तरह इसमें भी भ्रम है कि भारत में बसने वाले किस योग्यता के मनुष्य हैं। इस विषय में लोगों की धारणा है कि भारत में मज़दूर ही हैं और कुछ सिपाही हैं। इसका कारण यह है कि भारत से प्रथम तो मज़दूर ही भेजे गए थे पश्चात् एक भारतीय तोपखाना गया था जिस में अधिक संख्या ज़िला रोहतक के जाटों की थी। कोई अन्य गया ही न था इसलिये जो भारतवासियों की संतान थी वह भी विश्वास नहीं करती थी कि भारत में लिखे पढ़े व्यक्ति भी हैं।

जब यह विश्वास हो उस समय भाषा की अवस्था क्या हो सकती है। सर्व क्रिपोली (फ्रेंच का अपभ्रंश) भाषाभाषी थे जो ग्रामीण थे उन्हें छोड़कर कोई भारत की भाषा न बोलता था। शिक्षित वर्ग तो यहां तक बढ़ गया था कि यदि कोई भारतीय जिसे क्रिपोली नहीं आती थी मार्ग में मिल जावे और मार्ग पूछे कि अमुक स्थान को किस मार्ग से जाऊं तो उसे भारतीय भाषा जानने वाला शिक्षित व्यक्ति क्रिपोली में उत्तर देगा न कि भारतीय भाषा में। यह रोग यहां तक बढ़ा कि इस समय कितने ही भारतवासी हैं जो भारतीय भाषा ही नहीं जानते और उस समय भारतीय होना एक लज्जा की बात मानी जाती थी इसी लिये लिखे पढ़े अपने आपको क्रिपोल प्रकट करते थे।

जिस समय यह अंधकार फैला हुआ था प्राकृत नियमानुकूल तम के पश्चात् प्रकाश होना आवश्यक है उसी नियमानुकूल इस भ्रमके दुर्ग का भेदक एक भारत सपूत मारिशस की भूमि पर पदार्पण करता है। क्या भारतीय क्या क्रिपोल उसे देखकर विस्मय समुद्र में पड़ जाते हैं। जिस बात का उन्हें स्वप्न में भी पता न था वह बात देखकर उनके आश्चर्य की कोई सीमा न थी। वह दांतों में अंगुली दबाते थे और कहते थे कि यह भारतवासी नहीं है अपने आपको छल से भारतवासी प्रगट करता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह भारतीय सपूत डा० मणिलाल एम, ए. एल. एल. बी. बैरिस्टर था। जिस समय यह वीर वहां पहुंचा दैवयोग से कुछ गुजराती व्यापारी और कुछ सिपाही जो नौकरी छोड़ कर वहां रहते थे इस वीर के साथी हो गए। इन्हों ने एक पत्र निकाला जिसका नाम हिन्दोस्तानी था। जो आधा आर्य भाषा और आधा आंगल भाषा में निकलता था। उस पत्र से लोगों में प्रचार किया और बात चीत से लोगों को समझाया, शिक्षित वर्ग का कुछ भ्रम दूर किया कि भारतीय भाषा के बोलने से तुम अपमान मत समझो, प्रत्येक देश की अपनी भाषा है, प्रत्येक उसी भाषा को बोलने से अपने देश को प्रगट कर सकता है। तुम क्रिपोल क्यों बनते हो ? तुम भारतीय बनो तुम्हारे लिये भारतीय शब्द लज्जा सूचक नहीं किन्तु क्रिपोल लज्जा जनक है। दूसरी ओर उन्होंने श्रमियों में आत्म सन्मान का भाव भरना आरंभ किया। जो अभियोग उन पर चलाये जाते थे उन में सहयोग देना आरंभ किया। उन के सहयोग से जहां भारतीयों को उत्साह हुआ, वहां फरांसीसी जो भूमि के मालिक थे उन्हें भय भी हुआ। जिस का फल यह हुआ कि समाचार पत्रों में कटीले लेख निकलने लगे। उधर ज़मींदारों ने श्रमियों को बहकाना और धमकाना आरंभ किया, वह इस में सफल भी हो गए। श्रमियों के अतिरिक्त एक पढ़े लिखों का दल भी डाक्टर मणिलाल जी की प्रतियोगिता में आ खड़ा हुआ। अधिक बाधा इन्हों ने ही डाली। यह वह दल था जो फरांसीसियों के साथ मिल कर भारतीयों पर अत्याचार करता था। इन्हों ने लोगों को भड़काया कि हम अपना सुधार स्वयम् करेंगे, डा० जी भारत का सुधार करें, वहां कौन सा आनंद है इत्यादि।

जब बुरे दिन होते हैं उस समय ऐसा ही होता है, जब अपने ही शत्रु समझें तो काम करना अति कठिन हो जाता है। इसी भांति यह कर्मबीर चारों ओर से शत्रुओं से घिरा हुआ था।

समय प्रतिकूल होने पर भी इस उत्साह पूर्ण आत्मा ने कितने कार्य कर ही डाले। विवाह में सुधार (इसका विशेष वर्णन आगे करूंगा) भारतीय माल पर टैक्स में सुधार, भारत से कुलियों का मारिशस में जाना बन्द, श्रमियों में नियमबद्ध के स्थान पर स्वतंत्र रह कर काम करने की रुचि, भारतीयों का आपस में सहानुभूति युक्त व्यवहार, भारतीयों की भारत के लिये श्रद्धा, आत्म सन्मान, इत्यादि अनेक कार्य इस बीरात्मा ने किये। जो द्रव्य गृह से लेकर चले थे वह भी व्यय कर डाला, शकरकंदी खाकर दिन व्यतीत किये, अनाथ भारतीयों का नाथ बनकर अभियोगों में सहयोग दिया, जो कुछ कर सकते थे किया अन्त में जब देखा कि अब यहां ठहरने से लाभ के स्थान में हानि होने की संभावना है-क्योंकि जो भारतीय दल शत्रुता पर तुला हुआ था, जिसकी पीठ फरांसीसी ठोंक रहे थे, वह दल अधिक उद्दण्ड हो रहा था-इस अवस्था में इस बीर ने मारिशस से सिधारने का निश्चय करके अपने साथियों को ढ़ारस देकर और कार्य संभाल कर अपना रास्ता लिया। (शेष फिर)

"प्रजा की साधारण सम्मति के विरुद्ध राजा वा राजपुरुष न हों, राजा की आज्ञा के विरुद्ध राजपुरुष वा प्रजा न चले।"

(महर्षि दयानन्द)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारी मंजूषा।

१. "पथिक"—लेखक श्रीयुत रामनरेश त्रिपाठी। "श्रीयुत रामनरेश त्रिपाठी प्रयाग' से प्राप्त मूल्य ॥) पृष्ठ संख्या १००। हमारे पाठक त्रिपाठी जी की प्रतिभासम्पन्न सर्वाङ्गपूर्ण हृदय-ग्राही सुमधुर सरस कविता से आगेही परिचित हैं, सुतरां इस पथिक रूपी कविता के रत्नकी समुज्वल आभा का प्रकाश नाम से ही ज्ञात हो जायगा। यह एक छोटी सी विरह कथा है पांच भागों में विभक्त है। स्थान २ पर प्राकृतिक सौन्दर्य्य का वर्णन सामयिकता तथा स्वाभाविकता पूर्ण है। प्रत्येक कविता प्रेमी को इसे मंगाकर रसास्वादन करना चाहिये। रंग रूप छपाई सजावट अच्छी है। मूल्य थोड़ा होता तो अच्छा था।

२. "रामचरितचंद्रिका"—रचयिता महाकवि पं० रामचरित उपाध्याय। प्रकाशक ग्रन्थमाला कार्य्यालय बांकीपुर "मूल्य ॥) पृष्ठ संख्या ८८ है। इसमें रामायण के मुख्य २ पञ्चीस पात्रों के चरित्रों का सुमनोहर पद्यों में वर्णन है पुस्तक की आभा रंग ढंग अच्छा है॥

३. "राम चरितचिन्तामणि"—इसके रचयिता भी महाकवि पं० रामचरित उपध्याय ही हैं और उपरोक्त स्थान से मिलती है। ३७४ पृष्ठ की यह मोटीसी पुस्तक खड़ी बोली की कविता में है मूल्य २) पण्डित जी का एक चित्र भी है। पर काव्य एक प्रकार से रामायण का नये रूप से अन्य २ प्रचलित छन्दों में रूपान्तर है। इस में पञ्चीस सर्ग हैं पुस्तक की भाषा सरल और भाव पूर्ण है। रामायण प्रेमियों को पढ़ना योग्य है।

४ "सिखों का बलिदान"—अनुवादक हैं पण्डित राधामोहन मिश्र। उपरोक्त स्थान से प्रकाशित। यह छोटी सी पुस्तिका एक वंग महिला श्रीमती कुमुदिनी मित्र बी० ए द्वारा लिखित है मूल्य =) पृष्ठ संख्या २९ है। इस छोटी सी पुस्तक में धर्म के हेतु जिन सिखों ने आत्म बलिदान किया है ऐसे छः ऐतिहासिक महानुभावों का वर्णन है। बालकों के पढ़ाने योग्य उनमें साहस और वीरता का रस उत्पन्न करने के लिये बड़ी अच्छी कथा है।

५ 'हिन्दी ट्रान्सलेशन"—लेखक पं० रामदहिन मिश्र और बा० शिवपूजन सहाय उपरोक्त स्थान से प्राप्त। मूल्य १।) पृष्ठ संख्या २५०।

प्रवेशिकादि परीक्षाओं में अंग्रेज़ी से अनुवाद करना एक मुख्य विषय है। यह हमारा अनुभव है कि बी० ए० एम० ए० परीक्षा पास कर लेने पर भी विद्यार्थियों को अंग्रेज़ी से अनुवाद करने में बड़ी कठिनता होती है। इसका कारण यही है कि न तो पर्याप्त शब्द कोश ही पास रहता है। और न व्याकरण के नियम ही पता होते हैं। हिन्दी का व्याकरण अंग्रेज़ी व्याकरण से सर्वथा भिन्न है अतः अनुवाद में अशुद्धि हो जाना सम्भव है। इस त्रुटि को दूर करने के लिये इस पुस्तक की रचना की गई है। हम समझते हैं कि लेखक को अपने उद्देश्य में बड़ी सफलता प्राप्त हुई है। अन्य बातों के अतिरिक्त वाग्रचना के हेतु जो उदाहरण दिये गये हैं वह बड़े ही उपयोगी हैं। हमें आशा है शुद्ध हिन्दी सीखने के उत्सुक विद्यार्थी इस पुस्तक से अवश्य लाभ उठावेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

६ "कन्योपनयन-विधि"—लेखक श्री पण्डित महाराणी शङ्कर अम्बाशङ्कर शर्मा, मूल्य ।=) लेखक से कन्या गुरुकुल बड़ौदा के पते से प्राप्त । पं० वीरभानुशर्मा ने कन्योपनयन निषेध नाम की एक पुस्तक लिखी थी यह पुस्तक उसी के प्रत्युत्तर में लिखी गई है। पुस्तक बड़े खोज और परिश्रम से लिखी गई है। वेद उपनिषद, दर्शन इतिहास इत्यादि के प्रमाण देकर यह सिद्ध किया है कि कन्याओं को भी वैसा ही उपनयन का अधिकार है जैसा कि लड़कों को। इस मुख्य विषय के अन्तरगत लेखक ने यह भी भली भान्ति दर्शा दिया है कि कन्याओं को ब्रह्मचर्य्य धारण करने वेद शास्त्र के पढ़ने, यज्ञ करने, उपदेश इत्यादि देने का सम अधिकार हमारे शास्त्र देते हैं और इसके अनेक उदाहरण हमारे प्राचीन इतिहास से मिलते हैं। पुस्तक की भाषा सरल और सब के समझने योग्य है। कन्याओं और स्त्रियों की उन्नति को रोकने के लिये शास्त्रों का सहारा लेकर जो थोथी युक्तियां दी जाती हैं उनका इस पुस्तक में भली भान्ति खण्डन किया गया है इस पुस्तक के विषय में विशेष बात यह है कि लेखक महाशय ने गुजराती होते हुए भी आर्य भाषा में इसकी रचना की है। देश भाषा से आपका यह प्रेम सराहनीय और अनुकरणीय है।

आर्य्य सामाजिक पत्रों के 'ऋषि अङ्क'।

७—१ आर्य्यमित्र—ऋषि अङ्क बड़ी धूमधाम से निकल गया। पुस्तकाकार में, स्वामी जी के चित्र से प्रथम पृष्ट सुशोभित है। इसमें छोटे बड़े सब ३५ वक्तव्य हैं लेख एक से एक उत्तम और भक्ति पूर्ण है। विशेषता यह है कि बहुत लम्बे २ नहीं जिससे पाठक उकता जांय। एक महर्षि का पर्वत भ्रमण में अलखनन्दा नदी को पार करने का दृष्य प्रदर्शक रमणीक चित्र है। और अन्त में एक महाराजा कोल्हापुर का चित्र है॥

२ प्रकाश लाहौर—ऊर्दू भाषा के इस प्रसिद्ध सामाजिक पत्रका ऋषि अङ्क सदा की भांति बड़ी सज धज से निकला। कोई चालीस से ऊपर उत्तम लेखों और कविताओं से सुशोभित यह अंक बड़े मौके का था। जनता ने इसका कितना आदर किया यह इस बात से पता लगसक्ता है कि इसकी १८ सहस्र प्रति छापी गई जो कि सब की सब लग गई। लेखकों में भारत के प्रसिद्ध २ नेताओं और विचारकों के नाम देख बड़ी प्रसन्नता होती है।

३ श्रद्धा—हमारी सहयोगिनी श्रद्धा का भी ऋषि अंक खूब बढ़िया निकला परन्तु कुछ अनिवार्य्य कारणों से दीपमालिका से कुछ दिन पीछे निकलने से पाठकों के आनन्द में कमी अवश्य हुई परन्तु लेखों के सौन्दर्य से वह दूर हो गई।

हम अपने सहयोगियों को इस सफलता के लिये बधाई देते हैं इन लेखों के पढ़ने से जो एक बात हमें पता लगती है वह यह है कि किस प्रकार भिन्न रुचि और विचारों को रखते हुए भी ईसाई, मुसलमान, हिन्दु यहूदी सज्जन और देवियां दयानन्द के गुण गायन करने में एक स्वर हैं। यह ऋषि की कितनी बड़ी जय है। दयानन्द तुम धन्य हो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुसुमोद्यान

बहुत भटके अब तो घर की राह लो।

(जन्मभूमि मछलीपटम के एक लेखका छायानुवाद)

नौकरशाही अपने लक्ष की ओर बढ़ी चली जारही है। वङ्ग विच्छेद के आन्दोलन के दिनों में रिज़लेसकर्युलर ने विद्यार्थियों को जकड़ा था। अब एक और सकर्यूलर का अवतरण हुआ है इसका नाम शायद ग्रीष सकर्युलर है। जो हो महाशासन निकल गया है कि कोई अध्यापक असहयोग आन्दोलन में सम्मिलित न हो। प्रतीत होता है कि ऐसी सभाओं में शिक्षकों की उपस्थितिमात्र उनकी ग्रीवा उलझाने के लिये काफ़ी है और इस लिये उनका इन सभाओं में जाना वर्जित है। बन्धन कुछ विस्मयजनक नहीं। जिस प्रथा का मूल ही विचार निग्रह के सिद्धान्त पर हो उससे और आशा ही नहीं होसकती। बरसों तक हम संसार की घटनाओं के विषय में शासकों की छलनी के छने हुए भोजन पर पलते रहे हैं फिर भला यदि सरकार स्वतंत्र के स्रोत पर बांध लगाने पर उतर आए तो इस में अचम्भा या अनहोनापन क्या है। यदि तुम यह समझलो कि तुम विचारों को लोहरथों व्योमयानों और सकर्युलरों से घेर कर पाशबद्ध कर सकते हो तो हम सिवा इसके क्या कहें कि अहो तुच्छता!

अच्छा सरकार को अपनी राह जाने दो! क्या हमारे शिक्षक इस अधःपतन के शिकार होंगे जिस प्रकार कि हमारे हेडमास्टर डाइरेक्टर के सामने विडम्बना के पात्र हो चुके हैं। ओह! वह शिकार होगये क्योंकि अब हमें किसी असहयोग सभा में कोई शिक्षक नज़र नहीं आता वह देश के वाह्य विशालतर प्रवाही जीवन से सदा पृथक् रहे हैं इसी लिये अब इस विश्वव्यापी समारम्भ में वह बिलकुल ही लुप्त होगये हैं। अब उन्हों ने विद्यार्थियों के विचारों को बड़े निष्करुणरूप से दबाना आरम्भ किया है। और इस पवित्र व्यापार में वह अपनी गुरु नौकरशाही को भी पीछे छोड़ रहे हैं उनकी शिक्षा ने उन्हें दास बनाया और अब वे भारत के नवयुवकों को जो कल भारत के भाग्य विधाता होंगे उसके आत्मसन्मान के रक्षक और स्वाधीनता के पहरेदार होंगे दास बनाए बिना न रहेंगे। शोक कि जो तीन कार्य्य हमारे नवयुवक इस शिक्षा को पाकर कर सकते हैं उनमें से एक शिक्षा है। जिस में आज उन्हें नौकरशाही के आगे गिड़गिड़ाना होता है इष्ट देवता मान कर पत्र पुष्प नैवेद्य चढ़ाना होता है और जो विश्वास के साथ उनके हाथ में सौंपे जाते हैं उनके पीछे गुप्तचर बन कर विचित्र वृत्ति धारण करनी होती है।

जब जिन के हाथ में आचार निर्माण के लिये धरोहर की तरह जाति अपनी सन्तान अर्पण करती है जो सरस्वती के पवित्र सिंहासन के अधिपति हैं जो देश के भावी ज्ञान कोष के अधिष्ठाता हैं जिन के सामने किसी दिन संसार के बड़े से बड़े मानी मुकुट झुक कर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अपने को धन्य मानते थे उन गुरुओं को ही इस प्रकार की वृत्ति धारण करनी पड़े विश्वास से निश्चन्त भोले बालकों की मानसिक दासता में सहायक बनना पड़े तो सच जानो जाति के रसातल पहुंचने के दिन आचुके। करीर बोकर आम चूसो यह हो नहीं सकता। पल २ में उन्हें सरकार की शक्ति के राग सुनाओ पल २ पर उन्हें नौकरशाही की अर्चना के पाठ पढ़ाओ वर्तमान शासन प्रणाली से छुटकारा पाने का चिन्तनमात्र करना भी प्रायश्चित्त का कारण बताओ तो फिर कहो कि राष्ट्र का विकास कैसे हो स्वाधीनता किस का आश्रय ले और आत्म सन्मान किस कोने में जा छिपे। वर्त्तमान शिक्षा प्रणाली का यही सब से बड़ा दोष है। यह एक विशाल लोहे की दीवारों वाला भवन है। विचार इन दीवारों में न घुसें, उन्नति के आन्दोलन बाहर रहें और स्वराज्य की दूर २ तक ध्वनि भी सुनाई न दे। युवक! क्यातुम इन भवनों में पड़े रहोगे? क्या इनका अध्यक्ष बनना तुम्हारे जीवन का उद्देश्य होगा? यदि नहीं तो फिर उलझन काहे की? प्रश्न सीधा है, दो ही उत्तर हैं या तो इन्हें साफ़ करो या जड़ से साफ़ करो। कार्य्यक्रम बदल दो, पाठविधि नई रख दो, धर्म्मशिक्षा देने लगो, बालचर बनाने लगो, अंग्रेज़ी की पढ़ाई कम कर दो, गान विद्या का प्रवेश करदो, ललित कलाओं को अपनालो परीक्षाएं उड़ादो, सब करलो पर शिक्षा राष्ट्रीय न होगी। शिक्षा राष्ट्रीय बनाने के लिये यह सब कुछ चाहिये पर इससे अधिक भी कुछ चाहिये। इसके लिये तो विचारक्रम ही बदलना होगा मूल का ही परिष्कार करना होगा आदर्श ही और होंगे कल्पना का स्रोत ही नया करना होगा अधिक क्या बिलकुल वायुमण्डल ही बदलना होगा उस में देशानुराग और भक्ति की विद्युत् का आवेश करना होगा।

यह सब होगा। कदापि भीरुता से बन्धनों को प्रणाम करने से न होगा, इन विद्यापीठों की स्वतन्त्र नकल करने से भी न होगा। स्वाधीनता के मंत्र का ओङ्कार ही दूसरा है। नया ही कपड़ा होगा और नया ही रङ्ग होगा हमें वह शिक्षा चाहिये जो देश के संस्कार की रक्षा करे और बढ़ाये। विद्यार्थियो और शिक्षको! उसकी रक्षा करो यही धर्म्म है। देखो, तुम्हारे पूर्वज चन्द्रगुप्त अशोकवर्धन समुद्रगुप्त हर्षवर्धन आदि ने साम्राज्यों की स्थापना और परिचालना की। ब्रिटिश साम्राज्य का जन्म १८वीं शताब्दी में हुआ है। जब कई पश्चिम की जातियों के लोग जङ्गलों में पत्थर के शस्त्रों से पशु मार कर खाते थे, कपड़े पहनना न जानते थे और लूटमार का जीवन व्यतीत करते थे उस समय भारत में वेद की गङ्गा बहती थी, उपनिषदों का प्रकाश फैला हुआ था। विज्ञान अपने चमत्कार दिखा रहा था।

भोले भाई! अपनी शक्ति को समझो, अपने प्राचीन इतिहास को समझो, गौरव को समझो। अंग्रेज़ी इतिहास बहुत पढ़ा, शेक्सपीयर के गीत बहुत गाए, बहुत घूमे, बहुत भटके, अब अपने घरकी ओर पग मोड़ो, बाल्मीकि का राग सुनो, कालिदास को अपनाओ और चन्द्रगुप्त का इतिहास पढ़ो। वसुंधरा के गर्भ से स्वर्ण किसने निकाला, रत्न दोहन किसने किया आयुर्वेद किस ने पाया, शारीरक का निर्माता कौन है। बुद्धि और इच्छा शक्ति के विषय में कल्पनातीत कल्पनाएं किस ने की, बारूद किसने बनाया, पुष्पक पर किस ने उड़ान लगाई, कुतुब मीनार किस ने खड़ा किया, ताजमहल किसने संसार को दिया? जातीय विद्यालय देशभक्ति और त्याग वृत्ति का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रवाह स्त्रोत होना चाहिये। लोगों ने कहा कि वौटर्लू का विजय ईटम की क्रीडा भूमि में प्राप्त हुआ था। सच जानो भारत की स्वतन्त्रता के रक्त हीन युद्ध अलीगढ़, बनारस, काङ्गड़ी, बोलपुर और मछलीपटम की भूमियों में लड़े और जीते जाएंगे। यह जाति के विकास का काल है, आज का पड़ा उत्तम बीज बड़े मीठे फल लाएगा। आज लगा रोग हड्डियों में रच जाएगा। उठो उदयाचल पर राष्ट्रीय मरीचिमाली अपनी सुनहरी किरणों की वर्षा कर रहे हैं। बाल वृद्ध नर नारी गुरु शिष्य सब मिलकर एक स्वर से इस मधुर प्रकाश की अभ्यर्चना करो, इस मन्दिर में अपने हृदयों का पुष्पोपहार अर्पण करो, इसी में कल्याण है यही उन्नति का राजपथ है चलो!

कठिनाइयों की भरमार।

२४ नवम्बर के यंग इण्डिया में महात्मा गान्धी इस प्रकार लिखते हैं—

गुजरात राष्ट्रीय विश्वविद्यालय की सेनेट ने म० एण्ड्रयूज़ के अछूत जाति के बालकों को विश्वविद्यालय से सम्बद्ध विद्यालयों में प्रविष्ट करने विषयक प्रश्न पर जो निर्णय किया है उस से अहमदाबाद में ख़ासा परिस्पन्द उत्पन्न हो गया है।

और क्योंकि यह कठिनता घरेलू है इस लिये यह अधिक भयानक है। क्योंकि कोई आन्दोलन घरेलू उपद्रवों के पश्चात् जीवित नहीं रह सकता यदि वह दिनों दिन बढ़ते जावें। परन्तु जो हो, शाखा विच्छेद के डर से सिद्धान्त का नाश कभी नहीं हो सकता। किसी भी कार्य्य को सफल नहीं बनाया जा सकता यदि उसका मूल ही खोखला होता जाय। मेरी सम्मति में क्योंकि हमने अपने भाइयों को पैरियाह बनाया है इसलिये हम ब्रिटिश साम्राज्य के पैरियाह बन गये हैं। दासों के अधिपति को दासों की अपेक्षा अधिक हानि पहुंचती है। यदि हम कहते हैं कि पैरियाह के साथ ऐसा दुर्व्यहार धर्म्म है तो श्वेताङ्ग संसार हमें पैरियाह बनाना अपना धर्म्म समझता है।

इसलिये गुजरात सेनेट ने इस तूफ़ान के सन्मुख डटते समय पलड़े तोल लिये थे। मैं तो समझता हूं कि अस्पृश्यता एक परम्परा मात्र है, यह हिन्दू धर्म्म का कोई वास्तविक भाग नहीं। कोई धर्म्म संसार के मौलिक सत्य सिद्धान्तों को कुचल कर खड़ा नहीं रह सकता। पाप को किसी प्रकार का भी रोचक रूप देना धर्म्म को इसी प्रकार नाश कर देगा जैसे रोग शरीर को।

प्रत्येक स्वराज्य प्रेमी हिन्दू को अछूत जातियों की उन्नति के लिये इतनी ही मेहनत से कार्य्य करना चाहिये जितना हिन्दू मुसलिम एकता के लिये। हमें उन्हें भाई समझना चाहिये और वही अधिकार देने चाहिये जो हमें प्राप्त हैं।

केवल अपने पड़ोसियों से ही प्रेम मत कीजिए; केवल मित्रों से ही प्रेम मत कीजिए बल्कि उन लोगों से प्रेम कीजिए जो कि आपके शत्रु हैं।

(महात्मा गांधी)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वैज्ञानिक संसार ।

(१) वैज्ञानिक हथियारों की रक्षा ।

अभी थोड़ा ही समय हुआ कि अमरीका में वैज्ञानिक अस्त्रों द्वारा एक बड़ा भारी हत्या काण्ड रचा गया जिसने कि सभ्य संसार में बड़ी हल चल मचादी। अमरीका का प्रसिद्ध वैज्ञानिक पत्र Scientific American इसी घटना को लेकर लिखता है कि "इस प्रकार के दुष्कर्म हमें स्मरण करवाते हैं कि प्राकृतिक शक्तियों को खोज और उन पर पराजय पाने से जो हितकर फल हमें प्राप्त होते हैं वह दुधारी तलवार की भांन्ति हैं। वास्तविक और उचित प्रयोग में लाये जाकर आधुनिक आविष्कारों से हमें इतना शारीरक सुख मिलता है जितना कि आज तक संसार के इतिहास में हमें कभी नहीं मिला, परन्तु हमें यह भूल नहीं जाना चाहिये कि धर्मभ्रष्ट और आचार हीन के हाथों में जाकर यही आविष्कार घृणा और बदला लेने के हथियार बनकर महा बिनाशक सिद्ध हो सक्ते हैं।

महा युद्ध की यह एक भयानक विरासत संसार को मिली है कि इस ने विशैली गैस, हाथ का तमंचा इत्यादि कई विनाशकारी हथियारों को दुष्ट और नीच प्रकृति जनों के हाथ में पहुंचा दिया है। और यह बड़ी सुगमता से विचार में आसक्ता है कि पैशाच लोग आगे नर हत्या करके या शान्ति प्रिय नागरिको का धन हरण करके अपनी इन करतूतों को छुपाने के लिये वायुयान का सहारा लेंगे, जिस से कि उनको पकड़ने वाले कोई चिन्ह भूमी पर न रह जाये। इस प्रकार विज्ञान के दुरुपयोग की भावना कितने ही लेखकों के मन में आचुकी है। उनका कथन है कि रोगों के कितने ही छोटे २ क्रिमि द्वारा अपने शत्रुओं का नाश करना एक बड़ी साधारण बात होगी।

सायिन्टिफिक अमेरिकन की सम्मति में इस प्रकार की आपदा से बचने का सुगम उपाय यही है कि प्रत्येक नागरिक का पुलिस के रजिस्टरों में नाम लिखा जाय। इस में निसन्देह गेहूं के साथ घुन के पिसने वाली बात होगा। परन्तु इस प्रकार के महा हत्या काण्डों की अपेक्षा यह एक बहुत छोटी बुराई है।

हमारी समझ में नहीं आता कि इस प्रकार के नाम लिखवाने से किस प्रकार इन व्याधियों से रक्षा हो सक्ती है। जब तक सभ्यता का केन्द्र आत्मा को न मानकर शरीर को ही मुख्य रक्खा जायगा इस प्रकार की घटनायें घटती ही रहेगीं। आवश्यक्ता है कि हम मनुष्य के वास्तविक उद्देश को समझें। हमारी शिक्षा ऐसी होनी चाहिये जिस में कि स्वार्थ (Utility) के स्थान में परोपकार को महानता दी जाये। प्राचीन भारत में ब्राह्मण को सब विद्या सीखने का अधिकार था, परन्तु गुरु पहिले शिष्य की परीक्षा लेकर–जिससे कि उसे पता लग सके कि अमुक शिष्य इस विद्या को प्राप्ति के लिये उचित पात्र है–ही दीक्षा दिया करता था। इस प्रकार की घटनाओं को रोकने के लिये आवश्यक है कि सभ्यता के आदर्श में परिवर्तन किया जाय और यह उसी शिक्षा द्वारा हो सक्ता है जिसमें गुरु और शिष्य का आत्मिक संबंध हो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चन्द्र सम्बन्ध हमारा ज्ञान।

चांद पृथवी का सब से निकट का पड़ौसी है तो भी हमें अपने पड़ौसी के घर का कुछ बहुत पता नहीं कि वह मिट्टी से बना है या पत्थर से, कोई बेल बूटों की उसमें सजावट है या ऊंची पर्वतस्थ कुटियों की तरह बरफ़ से ढंककर शोभायमान होता है। इस समय तक जो कुछ भी हमें इस शान्त प्रकाश पुञ्ज का ज्ञान है उसका वर्णन श्रीयुत हैक्टर मैकफ़रसन ने Discovery नामक मासिक पत्र में बड़ी सरल भाषा में दिया है। लेखक ने हर्शल के विचारों से लेकर जो कि उसने १७९४ में प्रगट किये थे आज तक के सब ही ज्योतिषियों का मत प्रकाशित किया है। इस लेख से यह भली प्रकार पता लगता है कि हमारे आधुनिक नामधारी ज्योतिषियों में जिनका टका कमाना ही एक मात्र धर्म और ज्ञान है और इन वैज्ञानिक ज्योतिषियों में कितना अन्तर है। कितने ही महानुभावों ने अपनी समस्त आयु चांद की प्राकृतिक रूपराशी की खोज में व्यय कर दी। अ-विज्ञानिक संसार में किंचित उनके इस परिश्रम को उपहास की दृष्टि से देखा जाय, क्योंकि न तो इससे धन उपार्जन के साधनों में कोई वृद्धि होती है और न ही शारीरिक आराम और चैन में ही कुछ बढ़ती। परन्तु यह याद रहे कि सच्चा वैज्ञानिक सत्य और सत्य की खोज और केवल सत्य के ही लिये सत्य की खोज के आगे और किसी वस्तु की परवाह नहीं करता और न ही कार्य करने के लिये उसके मन और इस सत्य आकांक्षा के अतिरिक्त और कोई प्रेरणा ही होती है। अस्तु—

कितने ही वर्षों तक यह विचार था कि चांद एक स्थिर, वायु रहित और जीव रहित भूमि है, न इस पर कोई बड़े जलाशय हैं और न ही वायु मंडल है, यदि है भी तो वह इतनी सूक्ष्म है कि किसी भी जीव का उसमें जीवित रहना असम्भव है, वहां का जल वायु, मौसम, और दिन हमारे भूगोल से सर्वथा भिन्न हैं और गहरे बादलों के बिना न वर्षा हो सकती है, न कोई नदी और झील ही बन सक्ते हैं।

परन्तु शनै २ यह विचार बदलते गये। ज्यों २ अधिक खोज होती गई, नयी बातें पता लगती गयीं और तदनुसार नई धारणाएं बनती गयीं।

आज कल ज्योतिषियों का मत है कि चान्द पर जो ज्वालामुखी पर्वत हैं वह थक कर बैठ नहीं गये वरन अब भी उनमें से धुवां और गैस बने हुये पदार्थ निकलते रहते हैं, वहां का प्रदेश नितान्त वायु शून्य नहीं, चाहे हलकी गैसें वहां न हों तो भी कर्बन द्वैओषद (Carbon Dioxide) और जल वाष्प का वायु मंडल अवश्य है (संभवतया हमारे वायु मंडल से कई हज़ार गुना हलका है); वहां पर बरफ़ पड़ती है और सूर्य की गरमी से पिघलती है और कि आरम्भिक प्रकार की बनस्पति भी वहां पैदा होती है। लेखक इन से यह परिणाम निकालते हैं कि चन्द्र एक "मुर्दा" नहीं वरन मृत प्राय सय्यारा है।

हमारे शास्त्रों में चन्द्र लोक शब्द आता है, जिससे अनुमान होता है कि वहां भी जीव रह सक्ते हैं। परन्तु विज्ञान द्वारा इस मत की पुष्टि न होती थी और न अब भी हुई है। तो भी यह कल्पना निराश्रित न होगी कि यदि चन्द्र अब मृत प्रायः है तो कभी जीवित भी होगा। क्या उस समय भी वहां जीव न रह सके होंगे। यदि रह सके होंगे तो हमारे शास्त्रों का कथन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सत्य मानने में कोई आपत्ति नहीं हो सकी। देखिये अभी आगे आगे विज्ञान क्या बतलाता है।

पशुओं का संगीत प्रेम।

अमरीका निवासी एक सज्जन ने यह खोज की है कि यदि गाय को दुहते समय संगीत का प्रबन्ध हो तो वह सौ पीछे १५ भाग अधिक दूध देती है।

शान्तिजनक संगीत से चिड़ियाघर के क्रूर से क्रूर पशु भी शान्त हो जाते हैं। जब कि एक लुभाने वाला गीत गाया जा रहा हो चीता भी चुपचाप बैठ जाता है। सिंह बड़ा संगीत प्रिय है, वह घन्टों चुपचाप बैठा हुआ इसका रस स्वादन करता रहता है।

सरकस वालों का अनुभव है कि हाथी बड़ी प्रसन्नता से अखाड़े में आ जाता है यदि गम्भीर और शान्दार संगीत होता हो, परन्तु यदि यह संगीत क्षुद्र प्रकार का हो तो वह आगे बढ़ने में अड़चन करता है।

ऊंट संगीत को सुनते हुये अधिक तेज़ी से दौड़ते हैं।

सर्प का संगीत प्रेम प्रसिद्ध है।

और तो और कीड़े भी संगीत को पसन्द करते हैं। यह देखा गया है कि येम्ज़ अम्बैन्कमैन्ट उद्यान में जब बाजा बजाया जाता था तो बाजा रखने के रोशनीदार चबूतरे के आस पास कितने ही कीड़े एकत्र हो जाते थे।

विचार प्रवाह

आर्य्य समाज लाहौर का वार्षिक उत्सव।

कई लोगों को ख़तरा था कि देश के अन्दर जो पोलिटिकल लहर चल रही है उसके कारण लोगों की आत्माओं के अन्दर धर्मोपदेश रूपी अमृत की पिपासा बुझ गई है, किन्तु लाहौर आर्य्य-समाज के उत्सव की अपूर्व सफलता ने इस भ्रमको दूर कर दिया है। इस उत्सव में सहस्रों नर नारी सम्मिलित हुए, व्याख्यान सभी अच्छे हुए, किन्तु बच्छोवाली समाज में स्वामी सर्वदानन्द, स्वामी सत्यानन्द, प्रोफेसर रामदेव, भाई परमानन्द और कुमारी लज्जावती के व्याख्यानों का विशेष प्रभाव रहा। श्री मती द्रौपदी देवी उपदेशिका श्रीमती आर्य्य प्रतिनिधि सभा पंजाब का व्याख्यान भी प्रभाव शाली था। तीन स्नातकों के व्याख्यान हुए, पण्डित बुधदेव जी विद्यालंकार प्राचीन आर्य्य सभ्यता की अपूर्वता पर बोले, पण्डित धर्मेन्द्र जी शास्त्री तर्क शिरोमणी का भाषण पश्चिमीय सभ्यता की अपूर्णता पर था, पण्डित ब्रह्मदत्त जी विद्यालंकार ने "आर्य्य समाज और राजनीति" के विवादस्पद विषय पर अपने विचार प्रकट किये। तीनों स्नातक उच्च कोटि के वक्ता हैं किन्तु प्रत्येक की व्याख्यान शैली की शान निराली है। पण्डित बुद्धदेव के व्याख्यानों से श्रोता गण को यह प्रतीत होता है कि वह प्रतिभा शाली पुरुष हैं जिनको समयोचित

CC-0. Gurukul Kangri Vishwavidyalaya, Haridwar. Collection. Digitized by eGangotri S3 Foundation USA

बातें सूझती और फुरकती हैं। पण्डित धर्मेन्द्र के व्याख्यानों से यह प्रतीत होता है कि उनका पाठ विस्तृत है और उनका यत्न वक्तृता को गवेषणा पूर्ण बनाने का होता है। पण्डित ब्रह्मदत्त जी का व्याख्यान भाव पूर्ण होता है श्रोताओं पर उनकी छबि का प्रभाव भी पड़ता है और करुणा रसमें लिप्त उनके शब्द हृदय को चीर जाते हैं। हमें पूर्ण विश्वास है कि तीनों स्नातक महाशय जिन्होंने गुरुकुल रूपी माता की गोद में बैठकर शास्त्रों का अध्ययन किया है माता का ऋण चुकायेंगे, और सदा आर्य्यसमाज की सेवा को ही अपने जीवन का उद्देश्य बनाये रक्खेंगे। अनारकली समाज में महात्मा हंसराज और भाई परमानन्द के व्याख्यानों में उपस्थिति बहुत थी और लाला लाजपतराय के लैक्चर में तो बेहद भीड़ थी। लाला लाजपतराय ने एक छोटा सा व्याख्यान बच्छोवाली समाज में भी दिया था। हमें यह समझ में नहीं आता कि लाला लाजपतरायजी को आर्य्य समाज की वेदी पर क्यों खड़ा किया जाता है। वेद को ईश्वरी ज्ञान वे नहीं मानते, संस्कृत को वह एक मृत भाषा समझते हैं और उनका यह विचार है कि साधारण विद्यार्थियों का संस्कृत पढ़ना हानिकारक है। अनारकली समाज में जो उनका व्याख्यान था उसमें उन्होंने अपने श्रोताओं को पश्चिम का अनुकरण करने की प्रेरणा की, और टिण्डल हक्सले इत्यादि को प्राचीन ऋषियों के तुल्य बतलाया। लाला जी ने यदि सत्यार्थ प्रकाश को भी साद्योपान्त पढ़ा होता तो उनको यह पता होता कि आर्य्य परिभाषा में ऋषि शब्द का प्रयोग केवल मन्त्र द्रष्टाओं और ब्रह्म वेत्ताओं के लिये होता है वैज्ञानिकों और गणितज्ञों के लिए नहीं। यदि उन्होंने टिण्डल और हक्सले की जीवनी का अवलोकन किया है तो उनको मालूम होना चाहिये कि इन महानुभावों का विषय ब्रह्म विद्या न था। और तो और, योरुप में भी इनके लिये Seer सियर या महात्मा का शब्द प्रयुक्त नहीं होता। यह शब्द कारलाइल, एमरसन, एडवर्ड कारपैन्टर, विटमैन इत्यादि के विषय में निःसन्देह कई बार प्रयोग में लाया जाता है। किन्तु लाला जी कदाचित् ब्रह्मविद्या को निरर्थक ज्ञान समझते होंगे, और उन्होंने पश्चिम में रह कर भी वहां के सच्चे ऋषियों की तलाश न की होगी। अस्तु लालाजी पर तो पश्चिम की सभ्यता की चमक का ताज़ा प्रभाव ही है; जो बात हमें आश्चर्य में डालती है वह यह है कि आर्य समाज के अधिकारी उनके विचारों को जानते हुए भी केवल उत्सव की शोभा बढ़ाने के लिये ही उनको वेदी पर खड़ा कर देते हैं। क्या आर्य समाज के उत्सव केवल मात्र लोगों को इकट्ठा करने के साधन हैं?

स्त्रियों को वोट।

यङ्ग इण्डिया लिखता है:—

मिसेज़ हीराबाई ए. टाटा ने इङ्गलैण्ड से हमारे पास एक अपील भेजी है जिस में उन्हों ने स्त्रियों के वोटाधिकार का समर्थन करने के लिये प्रार्थना की है। हमें खेद है कि हम इस आन्दोलन को समयोचित नहीं समझते। इस समय हमें इस बात की आवश्यकता है कि मातृशक्ति अपने पूरे सामर्थ्य से वर्त्तमान आन्दोलन को सफल बनाए। कांग्रेस ने स्त्रियों को वोटाधिकार देकर इस प्रश्न का निर्णय कर दिया है। क्या ही अच्छा हो कि चांद बीबी अहिल्याबाई पद्मिनी आदि वीराङ्गनाओं की शक्ति आज स्वराज्य प्राप्ति के स्वर्णीय कार्य में लग जावे। इस समय जाति की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्रियों को अपनी सम्पूर्ण शक्ति से पुरुषों की सहायता करते हुए, अपने सहचरों को तथा अपने आपको वर्त्तमान नौकरशाही के अधिकार से छुड़ाने का पूरा यत्न करना चाहिये।

क्या शराब हमारा पीछा छोड़ेगी।

अमेरिका ने मद्यपान बन्द कर के संसार का बड़ा उपकार किया है। जिन्हें राष्ट्र के सिर में भूसा भर के अपनी थैलियां भरने का व्यसन पड़ा हुआ था वह बहुतेरा चिल्लाए पर अन्त को मद्यपान के विरोधियों की जीत हुई। यह अमेरिका के लिये सौभाग्य की बात है। विरोधियों का चिल्लाना अभी भी बन्द नहीं हुआ; अब वे यह कह कर अपने जी का सन्तोष कर लेते हैं कि कानून बन गया हो पर शराब छिप कर अब भी उतनी ही पी जाती है-जितनी पहिले पी जाती थी। परन्तु एक प्रसिद्ध अमेरिकन पत्र कहता है कि हमें उनके धोखे में न आना चाहिये, यद्यपि हमें आंख मीच कर सन्तोष से न बैठ जाना चाहिये। क्योंकि बोतल वासिनी और नगद नारायण के उपासक इतनी सुगमता से राह पर न आएंगे और दिन रात कभी चैन न लेंगे। परन्तु इस में सन्देह नहीं कि मद्यवारण को बड़ी सफलता होरही है। कई स्थानों में जेलखानों के पहरेदार गश्ती सिपाही बना दिये गए हैं, पोलिस, म्युनिसिपैलिटी, पतितोद्धार सभा, सब ओर से एक ही समाचार आरहा है और वह यह कि देश बड़े मूज़ी के पञ्जे से छूटा। इंश्योरेंस कम्पनियों के मालिक कह रहे हैं कि मद्य निवारण के कारण मौतें इतनी कम होगई हैं :—

"१९१९ के आरम्भिक तीन महीनों में ६२ इस प्रकार की मौत हुई किन्तु १९२० में उतने ही अन्तर में केवल १२ मौतें हुई। अब अपना समय बिताने और विनोद के लिये लोग खेलकूद आदि स्वास्थ्यवर्धक बातों की ओर लग रहे हैं दूध की बिक्री में २० प्रतिशतक वृद्धि हो गई है"। सार यहकि वह दिन दूर नहींकि किसी दिन भारतवर्ष के सुपने का दूध का कटोरा अमेरिका में प्रत्यक्ष दीखने लगेगा। देश के नेता कौन्सिलों में नहीं जारहे, क्या हम जी हुजूरों से यह आशा करें कि वे इस पवित्र कार्य्य में भाग लेकर यह सिद्ध करेंगे कि पृथ्वी तल पर उनके जीवन का भी कोई प्रयोजन है। क्या हम नौकरशाही से यह आशा कर सकते हैं कि इस बार तो वह अपने पक्षपातियों को अपने पक्ष का उचित समर्थन करने का अवसर देगी।

भोगानभुक्ता वयमेवभुक्ता।

पाश्चिम को "भोजन मिले या न मिले पर भोग अवश्य चाहिये", इसी पगडण्डी पर अब भारत के भूले युवक भी भटक रहे हैं। एक दिन था, भारत का गृहपति गृहिणी से कहता था कि

पूर्णं नारि प्रभर कुम्भमेतङ्घृतस्य धारामेमृतेन सम्भृताम्।

इमान् पातॄनमृतेना समङ्ग्धि इष्टा पूर्त्तमभिरक्षात्येनाम्॥ (अथर्व वेद)

"प्रिये! यह घड़ा दूध का भर गया है इसमें अमृत मयी घृत धारा बहरही है, जा, यह पीने वालों की मण्डली जुटी है इसे अमृत से सींच दे, यही तेरे घर की सब से बड़ी रक्षा करने वाली है"। भला दूध पीकर फिर वह भोगों की लपेट में क्यों आता! परन्तु आज रङ्ग ही दूसरा है। आज हम दूध के स्थान पर मद्य का घड़ा रखदें तो कोई अयुक्ति न होगी। उधर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

अमरीका की हालत देखिये एक वर्ष की भोग सामग्री का मूल्य सुनिये।

तम्बाकू	२११००००००	डालर
मोटर आदि	२००००००००	,,
कैण्डी (एक प्रकार की मिठाई)	१०००००००००	,,
चबाने का गोंद	५००००००	,,
लेमोनेड आदि	३५००००००	,,
समूर	३०००००००	,,
सुगन्धित द्रव्य	७५००००००	,,
वायोलेट साबुन	४०००००००	,,
पियानो आदि	२५००००००	,,

क्या इस संसार को कोई राह पर ला सकता है!

स्त्रियों का जाति पर प्रभाव।

प्रायः स्त्रियों को समस्तदेशीय विद्वज्जनों ने अबला की उपाधि दी है किन्तु वास्तव में यह सर्वथैव युक्तियुक्त नहीं है। भर्तृहरि जी ने भी अपने नीतिशतक में स्पष्टतया उल्लेख किया है कि स्त्रियें अबला नहीं किन्तु प्रबला होती हैं। स्त्रियोंमें वह गुण तथा परिछन्न शक्तियां विद्यमान हैं कि जिनसे जातियां बन सकती हैं और समुन्नति के उच्च शिखर पर आरूढ़ हो सकती हैं। किन्तु यदि उनकी वही शक्ति दुरुपयुक्त हो जावे और यदि उनका दृष्टिकोण किञ्चिन्मात्र बदल जावे तो जातियां अपने सर्वपूर्वोपार्जित समुच्च गौरवास्पद से च्युत होकर धरातल के रसातल में लुप्त हो जाती हैं।

आधुनिक युरूपीय महायुद्ध में ही किस प्रकार एक स्त्री ने रूस जैसे विस्तृत देश में घोर क्रान्ति विस्तृत की और किस प्रकार उस क्रान्ति ने बीसवीं शताब्दी के इतिहास में अपूर्वदृष्ट अत्याचार का हत्याकाण्ड आरम्भ किया, यह रूस की महाराणी ज़ारीना के कुछ पत्रों से जो उसने अपने पति को युद्ध क्षेत्र में १९१५ में लिखे थे विदित होगा। यह स्त्री लोकसत्तात्मक राज्य की अपने समकालीनों में सब से बड़ी विरोधिनी थी। किन्तु आश्चर्य तो इस बात का है कि किञ्चिन्मात्र उन्मत्त तथा बुद्धिहीन होते हुये भी इसने समस्त जाति के भविष्य को परिवर्त्तित कर दिया और इसका प्रभाव केवल रूसनिवासियों तक ही परिमित न रहा किन्तु सारी मनुष्य जाति को प्रभावित कर गया।

ज़ारीना बड़ी ही धार्मिका थी और उसका पूर्ण विश्वास था कि स्वायत्ताधिपति ज़ार को सहायता देना सब धर्मनिष्ठ पादरियों का कर्त्तव्य है। वह बहुतसी भ्रम-मूलक बातों में भी श्रद्धा रखती थी। उदाहरणार्थ, उसने एकवार अपने पति ज़ार को लिखा कि आप कोई भी कठिन कार्य्य आरम्भ करने से पूर्व अवश्यमेव अपने केशों को कंघी से संवार लिया करें इससे आपको बड़ी सहायता मिलेगी। उसने युद्धक्षेत्र में सिपाहियों को जादू की पेटियां भेजीं जिनके पहिनने से उसके विचारानुसार उनको शत्रु कोई हानि नहीं पहुंचा सकता था। इत्यादि।

किन्तु उसका सबसे अधिक विश्वास तो स्वायत्ताधिपतित्व की शासनपद्धति में था, उसका विचार था कि ईश्वर स्वयमेव संसार का अकेला राजाधिराज है और वह संसार में अपने छोटे २ प्रतिनिधि स्वायत्ताधिपतियों की विशेष सहायता करता है। ज़ारीना के लिये प्रजासत्तात्मक वाद की बढ़ती दावाग्नि असह्य थी। उसने अपने पतिको लिखा कि "यदि प्रजा के प्रतिनिधियों की राजसभा को भी आप नहीं बन्द कर सकते तो आप के यहां रहने की आवश्यकता ही क्या है"। उसने पादरियों को भी इसी प्रकार अपना शत्रु

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बनाया हुवा था क्योंकि वह एक अशिक्षित मलीन और दुष्टाचारी (Rasputine) रैसपुटिन नाम पादरी से प्रेम करती थी और उसके लिये और उसके नियत किये मनुष्यों के लिये उनसे सर्वथा झगड़ती रहती थी। इन पादरियों को वह बुरी दृष्टि से देखती थी और उसने अपने पति को एकवार लिखा कि "आप राजसभा में से इस गन्द को क्यों नहीं निकाल देते"।

इस प्रकार ज़ारीना ने राष्ट्र-विप्लव का पूर्णोपक्रम करदिया। जो सामग्री किसी राष्ट्र-विप्लव के लिये आवश्यक होती है उस समस्त सामग्री को ज़ारीना ने उपस्थित करादिया। सारे सम्बन्धी भी इस से रुष्ट थे, प्रजा अत्याचार से पीड़ित थी, पादरी सब विरोधी बनाए हुए थे, सारी सेना में खलबली पड़ी हुई थी और राजसभा का बहिष्कार किया जा रहा था।

क्रांति की प्रथमगोली ने रैसपुटिन (Rasputine) का हनन किया और ज़ारीना की रक्षा के लिये किसी ने अंगुली न उठाई। इस सारे से यह परिणाम निकलता है कि अब संसार के भविष्य में स्वायत्तात्मक राज्य सफल न हो सकेंगे और जहां की प्रजा ऐसे स्वायत्ताधिपति का विरोध न करेगी वे अवश्यमेव नष्ट हो जाएंगे।

इन घटनाओं के उल्लेख का सारांश यह ही है कि यदि स्त्रियां शिक्षित न की गईं, यदि उन पर सुसंस्कार न डाले गये तो मानव जाति का सुधार होना कठिन है। इस पुण्यभारत भूमि में जबतक स्त्रियें सुशिक्षिता रहीं तबतक उन्नति रही। और उनकी शिक्षा के लोप होने के साथ ही भारत का गौरव चन्द्रमा लुप्त होगया। मानव जाति का सुधार करने के लिये स्त्रियों को सुशिक्षित करने की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त कोई अन्य प्रयत्न इतना फलीभूत नहीं हो सकता। अतः आजसे स्त्रियों का सुधार अपने हाथ में लेना चाहिये॥

ईजिप्ट की स्वाधीनता

और

भारत की स्वतन्त्रता।

ईजिप्ट की आधुनिक जागृति में विशेष महत्ता की बात यह थी कि देश की भिन्न जातियों में एक मात्र पूरी स्वतंत्रता के लिये ध्वनि उठी। समस्त धर्मावलम्बी मुक्त कंठ से स्वराज्य प्राप्त करने के हेतु अपने २ निज के झगड़े भूल गये। मुसलमान कोप्टस, राज्य कर्मचारी, स्त्रियें, राजकुमार और किसान, सब जातीय स्वतंत्रता उपलब्ध करने के लिये क्षेत्र में उतर आये। अलअजुहार विश्वविद्यालय के विद्यार्थी तथा कैबिनिट के भूतपूर्व मिनिस्टर रशीदपाशा स्वतंत्रता के आन्दोलन में भाग लिये बिना न रह सके।

कई वार शासक लोग ऊंचे २ पद अधिकार तथा सनदें देकर कुछ समय के लिये किसी जाति विशेष को प्रसन्न करके अन्य जातियों से उसका विरोध करवा देते हैं। परन्तु ईजिप्ट के लोग इस नीति के फंदे में न आये। कौन नहीं जानता कि सादपाशा ज़गलूल जैसे नामी महात्मा ने प्रधान मंत्री पद स्वीकार करने की अपेक्षा स्वतंत्र ईजिप्ट का साधारण नागरिक रहना उत्तम समझा।

१९१५ में जब टर्की का अधिकार ईजिप्ट से उठ गया तो ब्रिटिश सरकार ने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रतिज्ञा की थी कि 'जो दुष्प्रभाव ईजिप्ट की स्वतंत्रता तथा एकयता का नाश करेंगे उनको हम दूर करेंगे' ईजिप्ट के लोगों ने इस प्रतिज्ञा को सन्मुख रखकर अपनी आवश्यकताओं का ढांचा तैय्यार किया। टर्की का अधिकार ईजिप्ट पर नाम मात्र ही था, सुलतान को प्रतिवर्ष ३००,००० पौंड दे देने से ही छुटकारा होजाता था। जब ईजिप्ट का सम्बन्ध टर्की से नितान्त रूप से छूट गया तो ईजिपशियन प्रजा ने जातीय आन्दोलन और भी ज़ोर शोर से किया। ईजेपशियन प्रजा ने जातीय जागृति के जोश में इसलाम के खलीफा की धार्मिक आधीनता से भी मुख मोड़ लिया।

स्वतंत्रता की लहर परेरी की आग की तरह देश में फैल गई। व्यर्थ में प्रभुमण्डल ने कड़े नियम बना कर व्यवस्थापक सभाओं को बन्द कर के लोगों का विरोध किया। जातीयनेता शादपाशा जगलूल तथा अन्य नेताओं ने वर्सेल कान्फ्रेंस में अपने पक्ष को रखने के लिये आज्ञा मांगी पर गवर्मेण्ट ने इनकार कर दिया। यही नहीं किन्तु माल्टा के बन्दीगृह में उन्हें भेजा गया, ऐरोप्लेन तथा अन्य शस्त्रों द्वारा लोगों को भयभीत करने का प्रयत्न किया गया। नवम्बर १९१९ के टाइम्स में लिखा था "युद्ध के दिनों में रणक्षेत्र में जरनैलों की कमी थी परन्तु कैरो में ही केवल ९७ जरनैल थे जिन्हों ने ईजिप्ट के किसानों को कठोर दण्ड दिये। लार्ड क्रोमर की नीति थी कि ईजिपशियन लोगों को अधिक नौकरियें देनी चाहिये पर पता लगा कि इस नीति के विरुद्ध कार्य्य हो रहा है। ५०० पौंड या इससे ऊपर वेतन वाली नौकरियों में से केवल ७ देशियों को दीजाती थी। कर से केवल ३०००००० पौंड की आय थी और १४००००० लोगों की शिक्षा पर ३००००० पौंड व्यय किया जाता था। प्रजा के दृढ़ निश्चय ने सरकार को बाध्य किया कि फील्ड मार्शल लार्ड ऐलनवाई को बुलायें जो अपने असाधारण अनुभव से सरकार के Militarism को दूर करे। सादपाशा को पैरस जाने की आज्ञा मिल गई। एक कमीशन लार्ड मिलिनर की अध्यक्षता में होनी निश्चित हुई। जब कमीशन ईजिप्ट में आई तो लोगों ने इसका बहिष्कार किया किसी ने भी शहादत न दी। पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त करना उनका लक्ष्य था। इसलिये मध्यस्थावलम्बन को उन्होंने स्वीकार न किया। कमीशन को लौट जाना पड़ा।

ईजिप्ट के जातीय प्रातिनिधियों को लन्दन में गवर्नमेंट ने बुलाया ताकि अपनी शरतें बता सकें। वे चट्टान के सदृश अचल थे कि ब्रिटिश संरक्षता को स्वीकार नहीं करेंगे। वे पूर्ण स्वतंत्रता चाहते थे और युरोपियन अधिकारों को वहां तक मानना चाहते थे जहां तक कि इन के कामों में दखल न दिया जावे। सादपाशा ज़गलूल ने अपना प्रस्ताव पेश किया जो कि स्वीकार न हो सका, क्योंकि यह बृटिश सरकार के लिये अहितकर था। जब कमीशन ने शरतें लिखाईं तो पाशा ने सर्वथा अस्वीकार कीं, क्योंकि यह इनके उद्देश्यों से भिन्न थीं। कुछ सप्ताह पश्चात् निम्न लिखित शरतें पेश की गयीं।

(१) ईजिप्ट की स्वाधीनता स्वीकार की जावे।

(२) अन्दरूनी अधिकार देशियों पर छोड़ा जावे।

(३) विदेशी फौजें लौटा ली जावें।

(४) राजदूत Embassies में लिये जायें।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

(५) इजिप्ट में एक High Commissioner रक्खा जावे जो ईजिप्ट से ऋण वापस ले सके।

(६) युरोपियन देशों से ऐसी संधियें ना की जायें जो ब्रिटिश राज्य के विरुद्ध हों और High Commisioner को प्रत्याख्यान का अधिकार हो, जहां युरोपियन नागरिकों के विषय में कानून बने।

चूंकि प्रतिनिधियों को संधि करने का अधिकार न था इस लिये अभी अन्तिम निश्चय नहीं हुआ। ईजिपिशन एसोशीएशन पैरिस ने इन शरतों को दूषित ठहराते हुए कहां है कि यह संरक्षता का गुप्त रूप हैं। राजकुमार इब्राहीम आदि ने कहा है कि यह स्वतंत्रता के विरुद्ध हैं। परन्तु ज़गलूल महाशय ने इन शरतों पर खूब विचार किया है और कहा है कि इन पर सब विचार करें। इस में सन्देह नहीं कि यदि दोनों ओर से नीति विद्या विशारद निस्वार्थ होकर ईजिप्ट की सच्ची स्वतंत्रता को सन्मुख रख कर एक समझौते पर आ जावें तो भला ही भला है ?

ऐसे नाजुक मामले में जिस में कि अन्तर जातीय सम्बन्धों की नींव पड़नी हो यह हैरानी है कि लार्ड मिलनर ने श्रीयुत मान्टेगु पर विजय प्राप्त की है ! यह सत्य है कि बृटिश पार्लीमैन्ट ने प्रतिज्ञा की है कि भारत को पूर्ण स्वतंत्रता मिलेगी और बृटिश फैडरेशन का यह भाग होगा। परन्तु भारतवासियों की अभीष्ट और निर्दिष्ट उद्देश्यों की ओर जो उन्नति होनी है वह सब नौकरशाही के आधीन है। भारतीयों की आकांक्षाओं तथा निश्चयों का इस में अधिक प्रवेश न होगा। भारतीय सम्मति वैसे ही सर्वाधिकार युक्त रहेगी जैसे पहिले थी। प्रान्तिक प्रबन्ध का अधिकार बड़ी प्रान्तिक कौंसलों को दिया गया है जिस में अधिकांश चुने हुए सभासद होंगे। कुछ एक विषय भारतीय मन्त्रियों के आधीन होंगे शेष सब विशेष विषय सरकार के आधीन होंगे। नवीन ऐक्ट से केवल दो प्रति शतक जन संख्या स्वतंत्र हुई है। स्त्रियों और मजदूरों को कोई अधिकार नहीं मिला। भारतीय लोकमत इन असार सुधारों का अविष्कार करने को उद्यत हो रहा है। सितम्बर की कांग्रेस तथा मुसलिम लीग ने असहयोग का प्रस्ताव पास किया है। दिसम्बर की कांग्रेस के अन्तिम निश्चय पर एक शोचनीय अवस्था उपस्थित हो जावेगी।

एक मात्र शिक्षा जो आज कल के इतिहास से मिलती है वह यह है कि कोई भी विदेशी राज्य दूसरी जाति पर एक सत्ता रूप से अधिकार जमाये नहीं रख सकता। जब तक समस्त प्रजा को चुनाव का अधिकार नहीं दिया जाता तब तक पूर्ण सन्तोष नहीं हो सकता। अधिकारों के मिलने के पश्चात् ही सम्भव है कि पश्चिम की स्वतंत्र जातियें पूर्व की जातियों से सम्मति लें कि संसार में शान्ति का साम्राज्य कैसे फैल सकता है।

ईसाई धर्म और आधुनिक विज्ञान।

कैनन बारन्स इङ्गलैण्ड के एक प्रसिद्ध गणित वेत्ता हैं। आप रायल सोसायिटी के फैलो हैं और साथ ही वेस्ट मिनिस्टर गिर्जे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

के पादरी (Canon) भी हैं। ब्रिटिश ऐसोसियेशन के गत अधिवेशन में जो कि कार्डिफ नगर में हुआ आपने उपरोक्त विषय पर एक बड़ा महत्व पूर्ण उपदेश दिया। आपने कहा कि ईसाई धर्म के कितने ही प्राचीन विचारों पर आधुनिक विज्ञान ने आक्रमण किये। जिस प्रकार दो शताब्दी पहले रोमन कैथलिक सम्प्रदाय मनुष्य को सत्यज्ञान के ग्रहण से रोकने में असमर्थ हुआ, इसी प्रकार आजकल-भी धार्मिक सिद्धान्तों के मुकाबले में सृष्टि विज्ञान के नवीन सिद्धान्तों ने विजय प्राप्त की। आज सब मानते है कि भूमि सूर्य्य के चारों ओर घूमती है। १९ वीं शताब्दी के भूमि वैज्ञानकों के सिद्धान्त के आगे भी—कि जीव दसक्रोड़ वर्ष से इस पृथ्वी पर रहते है–आज सब शिर झुकाते हैं। यद्यपि यह दोनों सिद्धान्त ईसाई धर्म के विचारों के प्रतिकूल हैं। इसके पश्चात् पादरी साहिब बतलाते हैं कि किस प्रकार डार्विन के विकासवाद सम्बन्धी विचार प्रकाशित होने पर विज्ञान और ईसाई धर्म में मल्ल युद्ध हुआ और धर्म की पराजय होने पर उसके पुजारियों ने खेंचातानी करके यह सिद्ध करने का यत्न किया कि धर्म और विज्ञान में कोई विरोध नहीं। परन्तु सचाई की जीत हुई और ईसाई धर्म को अपने विचार बदलने पड़े।

"समय आगया है कि हम विकासवाद के सिद्धान्त मानने से जो नतीजे निकलते हैं उनसे बच नहीं सक्ते। उन धार्मिक विचारों को जिन को यह सिद्धान्त उखेड़ता है हमें चुपचाप नहीं छोड़ देना चाहिये। और हमें उन विचारों को जिन पर हम विश्वास रखते हैं अलंकार रुप से प्रासिद्ध करने के प्रलोभन से बचना चाहिये। अलंकार के लाभ अवश्य हैं परन्तु यह उसका दुरुपयोग है यदि उसे नवीन ज्ञान के क्रान्तिमय विचारों को छुपाने में व्यय किया जाय। धर्म का महत्व गम्भीर है और उसे हम सृष्टि विज्ञान के ऐसे सिद्धान्तों से नहीं जोड़ सक्ते जो कि असत्य हों या जिनकी सत्यता में सन्देह हो। यदि क्राईस्ट 'संसार का प्रकाश' है तो सब वैज्ञानिक खोज उसके बतलाये सत्यज्ञान का एक भाग होनी चाहिये। यदि उसने परमात्मा के स्वरूप और गुणों को ठीक २ बतलाया है, तब जितनी भी सचाई से हम यह खोज करेंगे कि किस प्रकार परमात्मा ने इस संसार को रचा, नियमबद्ध किया, और मनुष्य के रहने योग्य बनाया, उतना ही हमें क्राईस्ट की शिक्षा को मानने में सुगमता होगी। इसके प्रतिकूल यदि ज्ञान की बढती वास्तव में इसाई धर्म के उन विचारों को असत्य ठहराती है जो कि क्राईस्ट ने हमें दिये हैं तो हमें दुःख से मानना पडेगा कि क्राईस्ट मनुष्य जाति के लिये पथ प्रदर्शक नहीं हो सक्ता। चाहे कुछ भी परिणाम निकले हमें सचाई को मानना चाहिये, चाहे किसी ने उसे खोज निकाला हो। वह धर्म, जिसका आधार सत्य नहीं, व्यर्थ है। वह मत, जो ज्ञान की बढ़ती से डरता है, अपने नाश को आप बुलाता है।

कितने स्पष्ट शब्द हैं। आगे चल कर इन्हीं के आधार पर पादरी साहब बाइबल को सर्वथा सत्य मानने से इन्कार करते हैं। उनके मत में केवल इसके वही भाग माननीय हैं जिन में कि क्राईस्ट ने स्वयं अध्यात्मिक और परमात्मा सम्बन्धी उपदेश दिये हैं। इसकी अन्य बातें अशुद्ध हो सक्ती हैं। "यदि हमें यह पता लगे कि पुराने विचार जो कि क्राईस्ट के अतिरिक्त अन्यों के हैं, अशुद्ध हैं तो हमें घबराना नहीं चाहिये। पुराने यहूदियों या पुराने प्रचारकों (Apostles) के बाइबल में दिये विचारों को हम तुरन्त छोड़ सक्ते हैं यदि और जब वह असत्य सिद्ध हों। ईसाई धर्म

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

क्राईस्ट में और उसके बतलाये हुए मार्ग और सचाइयों में विश्वास का नाम है और वह मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति का प्रदर्शक था, यह बाइबल की वैज्ञानिक बातों या St. Paul की अटल सत्यता में विश्वास का नाम नहीं"।

ज्योति के पाठक देखेंगे कि कितना विचार परिवर्तन है। क्या हमारे देश में ईसाई धर्म के प्रचारक इन पर ध्यान देंगे? संसार चल रहा है। सत्य की जय होगी। और अवश्य होगी। जो सत्य धर्म है, और जो सत्य ज्ञान है, वही बच सकेंगे और इन दोनों में कोई भेद-भाव न होगा। यदि धर्म सच्चा है तो उसे सत्य ज्ञान की उन्नति से कोई भय नहीं हो सक्ता। यह विचार वैदिक धर्मावलम्बियों के लिये हर्ष जनक है॥

महात्मा गान्धी और प्राचीन कौशल।

भारत में महात्मा गांधी के खद्दर के तथा अन्य हाथ के कते बुने मोटे कपड़े पहिरने के आदेश से चहुं ओर से एक प्रकार का नाद उठा है कि क्या महात्मा गांधी जी प्राचीन स्वदेशीय बहुमूल्य सुन्दर भांति २ की कौशल सम्बन्धी वस्तुओं को भी हटा कर मोटा खद्दर चलाना चाहते हैं? क्या उस कौशल का पुनर्जन्म न हो? इस धारणा को सुलझाने के हेतु वे अपने पत्र "यंग इंडिया" में यह स्वभावना प्रकाशित करते हैं।

करघों से बुने हुवे कपड़े का चलन इस हेतु नहीं किया गया कि वह किसी वास्तविक भारतीय सुन्दर वस्त्र तथा अन्य वस्तु निर्माण का स्थान ग्रहण करे। वह भारत की हस्तनिर्मित प्राचीन कौशल के पुनरुज्जीवन को परास्त नहीं करती और न वह सचमुच के चौतुर्य्य कौशल से झगड़ती है; वरन् वह झूठे बनावटी फ़ैशन से, उच्च श्रेणी की महिलाओं के समय अपव्यय को, ग़रीब, दीन स्त्रियों को दरिद्रता से तथा जो बुभुक्षा पीड़ित होने से बाहर जाकर अन्य की मज़दूरी करती हैं उनके, बचाव के लिये झगड़ती है। वह अन्य देशीय कपड़े और सूत के आगमन को तथा स्वदेशनिर्मित मिल के कपड़े और सूत का भाव घटाना चाहती है। झगड़ा तो गंवारु रंगों, चिकने चुपड़े रूप से तथा मशीन की बनी हुई एक प्रकार की वस्तुओं से है। जो आजकल नासमझों के फ़ैशन की अग्रणी हैं। यह संग्राम उस दासत्व रुचि के प्रति है जो अन्य देशीय उद्योगी शिल्पी यहां अपनी वस्तुओं के हेतु उत्पन्न करते हैं। जो क्षमता रखते हों वे उसके अनुसार शिल्प कौशल के सुन्दर निर्माण धारण कर सक्ते हैं किन्तु उन्हें अपने छुट्टी के समय दरिद्रों के हेतु सूत कात कर जाति ऋण अवश्य चुकाना चाहिये। यही उच्च जातीय महिलाओं का फ़ैशन होने योग्य है।

देखो, हृदय! हम पूंछते हैं, दो बता हम को सही,
होकर विकल क्यों रात दिन प्रिय! सींचते सूखी मही।
जिसके लिये यह अश्रुधारा हो बहाते ताप से,
उसके दृगों से भी गिरे दो बूंद क्या सन्ताप से॥१॥

(श्रीहरि)।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ॐ

वनिता विनोद

स्त्री उपयोगी स्त्रियों द्वारालिखित लेखों का संग्रह।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१—स्त्री जगत	५००	४—दीप मालिका— ले० श्री लक्ष्मी देवी जौहरी	५०८
२—कला कौशल्य—(ले० श्रीमती ओ३म्वती देवी)	५०१	५—वर्तमान शिक्षा प्रणाली का देश तथा जाति पर प्रभाव ले० श्री कर्तारदेवी जी	५०९
३—सदुपदेश [कविता] (ले०श्री०केशर कुंवरदेवी	५०७		

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री जगत्।

स्वतन्त्रता के नाम से योरुप में जो उच्छृंखलता का राज्य हो रहा है उसका एक ताजा प्रमाण मिला है। इंगलैण्ड में दिन प्रति दिन उत्पत्ति कम होती जाती है, भोग विलास का जीवन स्त्रियों और पुरुषों को सन्तान उत्पत्ति के लिये अनिच्छुक बना रहा है। लण्डन में इस विषय पर अन्वेषण करने के लिये एक कमीशन बैठी है, उस कमीशन के प्रधान बर्मिंघम के लाट पादरी महाशय हैं। उक्त कमीशन के सन्मुख साक्षी देते हुए कुमारी नोरामार्च ने यह कहा कि आजकल की लड़कियां पतिव्रत धर्म के बन्धनों में जकड़ी नहीं रह सकती। यदि राष्ट्र को जनसंख्या बढ़ानी है तो इन बन्धनों को ढीला करना पड़ेगा। कैसे शोक और लज्जा की बात है कि आधुनिक सभ्यता ने देवियों के सतीत्व पर भी एक घोर आक्रमण किया है। कोई समय था जब देवियां अपने पतिव्रत धर्म की रक्षा के लिये जलती हुई आग में कूद पड़तीं थीं और हीरा चाट कर स्वर्गधाम को प्राप्त हो जातीं थीं आज नकशा ही पलट गया है। यह विषैली सभ्यता धर्म और पवित्रता का नाश कर रही है। इस बात को न समझते हुए कई भूले हुए भारतवासी इस देश की पवित्र देवियों को भी इसी जलती भट्टी में ढकेलना चाहते हैं भारत की मातृशक्ति की रक्षा इस हत्या काण्ड से केवल आर्य समाज कर सकता है यदि वह चेते और जागे।

———

महात्मा हंसराजजी जो महिला विश्व विद्यालय खोलना चाहते हैं। उसके विषय में समाचार पत्रों में खूब आन्दोलन हो रहा है। कन्या महा विद्यालय जलन्धर की प्रधान अध्यापिका कुमारी लज्जावती ने ट्रिब्यून में दो पत्र छपवाये हैं। जिन में वे लिखती हैं कि कन्या महाविद्यालय कई वर्षों से चल रहा है। उसके संचालकों को पुष्कल अनुभव भी है। इसलिये प्रस्तावित विश्व-विद्यालय का केन्द्र स्थान कन्या महाविद्यालय ही होना चाहिये। कुमारीजी की युक्ति में बड़ा सार है किन्तु वर्तमान लहर में बह कर कुमारी जी ने जो यह लिखा है कि कन्या महाविद्यालय एक सांप्रदायिक संस्था है उसको पढ़कर हम को बड़ा दुःख हुआ क्या इतनी देर आर्य समाज में रहकर भी हमारी बहन को अभी तक यह पता नहीं लगा, कि आर्यसमाज कोई संप्रदाय नहीं है उसकी स्थापना तो सर्वतंत्र सार्वजनिक वैदिक धर्म के पुनर्जीवन और मनुष्य जाति के कल्याण के लिये की गई है। ट्रिब्यून में एक पत्र श्रीमती ओम्वती देवी का भी छपा है उस पत्र में महात्माजी को कुछ खरी खरी सुनाई गई हैं। देवीजी ने सच लिखा है कि महात्माजी की नीति स्त्री जाति के विषय में सदा अनुदार रही है इसलिये जब तक कि महात्मा जी यह बतला न दें कि विश्व विद्यालय की प्रबन्ध कर्तृ सभा में स्त्रियों की क्या स्थिति होगी तब तक शिक्षित स्त्रियां इस संस्था की सहायक नहीं हो सकतीं। बहन ओम्वती जी ने यह भी ठीक लिखा है कि स्त्रियों के लिये एक पृथक् विश्व विद्यालय की आवश्यकता क्या है? क्यों न एक ही राष्ट्रीय विश्व विद्यालय खोल दिया जाय, जिसके साथ बालक विद्यालयों का भी सम्बन्ध हो और बालिका विद्यालय का भी सम्बन्ध हो। परन्तु यह तो उसी अवस्था में हो सकता है जब कि महात्मा जी लड़कों की शिक्षा को भी राष्ट्रीय बनाना चाहें। हम महात्मा जी से पूछना चाहते हैं कि क्या उन्होंने अपनी यह सम्मति बदल ली है कि देश की माताओं को परदे में बंद रखने में ही जाति का कल्याण है? यदि बदल ली है तो यह सम्मति परिवर्तन कार्य्य रूप में भी आना चाहिये।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

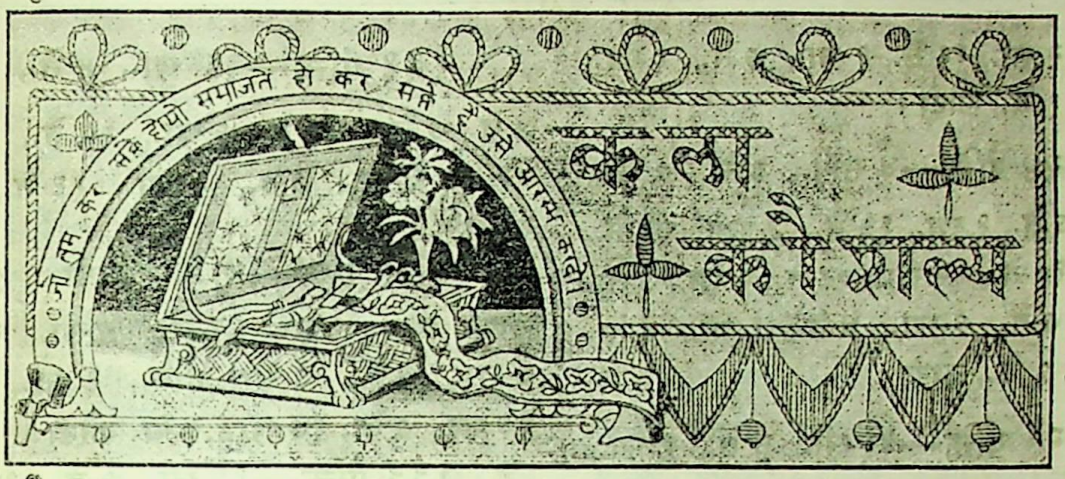

सूचना।

—:-०-:—

ज्योति के भाद्रपद—(सितम्बर) के अंक में सूचना दी थी कि इसके ६ अंकों में जितने शिल्प के नमूने होंगे उन्हें जो बहिनें और कन्यायें सम्पूर्ण रीति से बनाकर भेजेंगी उन्हें ५) और २) की जो वस्तु कहेंगी पारितोषिक में भेजी जायगी। अब यह अवधि और बढ़ा दी गई है अर्थात् इस अंक में घोड़ा बग्घी जाल समाप्त हो गया और जनवरी १९२१ से पहिले सब बहिनें गत ८ अंकों में निकले हुये नमूने बनाकर भेज सक्ती हैं। आशा है सब बहिनें नमूने बनाकर "सम्पादिका ज्योति लायलपुर" के नाम भेजेंगीं। कई बहिनों ने नमूने तो बनाये हैं परन्तु वे इनाम लेना नहीं चाहतीं। हमारी उनसे भी प्रार्थना है कि वह नमूने अवश्य भेजें अथवा इतना लिखकर अवश्य भेजें कि उन्होंने क्या २ बनाया है। हम यह जानना चाहते हैं कि कितनी बहिनों ने हमारे इस परिश्रम से लाभ उठाया है।

सम्पादिका।

घोड़ा बग्घी जाल।

(गतांक से आगे)

१२० पंक्ति—१८ ते., १ ख़ा., ७ ते., २ ख़ा., १९ ते., २३ ख़ा., ७ ते., ४ ख़ा., ३७ ते., ९ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३६ ख़ा., ५ चे लौटो।

१२१ पंक्ति—३६ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ९ ख़ा., ३४ ते., ३ ख़ा., १३ ते., १७ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., १८ ते., २ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., ३ चे., लौटो।

१२२ पंक्ति—१५ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २२ ते., १ ख़ा., १९ ते., १ ख़ा., १३ ते., १२ ख़ा., १९ ते., २ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., १० ते., ८ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३६ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१२३ पंक्ति—३६ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ९ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४० ते., १२ ख़ा.,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

४० ते., २ ख़ा., १६ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ चे., लौटो।

१२४ पंक्ति—४ सादे., ३ चे., ९ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ३४ ते., १ ख़ा., १० ते., १२ ख़ा., २८ ते., २ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., ९ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३६ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१२५ पंक्ति—३६ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ९ ख़ा., ७ ते., ४ ख़ा., २८ ते., ९ ख़ा., २२ ते., १ ख़ा., ३७ ते., १ ख़ा., १० ते.,—१ ख़ा., ७ ते., दो वार, ७ चे., लौटो।

१२६ पंक्ति—१ चे., छोड़ो, ४ सादे, २ चे., छोड़ो, ३ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ३७ ते., १ ख़ा., २५ ते., ८ ख़ा., ४९ ते., ८ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३६ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१२७ पंक्ति—३६ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते. ८ ख़ा., ४९ ते., ८ ख़ा., २५ ते., १ ख़ा., ४० ते.,—१ ख़ा., ७ ते., दो वार, १ ख़ा., ७ ते., १० चे., लौटो।

१२८ पंक्ति—१ छोड़ो, ४ सादे, ३ चे छोड़ो, ९ ते.,—१ ख़ा., ७ ते., दो वार, १ ख़ा., ४३ ते., १ ख़ा., २५ ते., ७ ख़ा., ४९ ते., ८ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३६ ख़ा. ५ चे., लौटो।

१२९ पंक्ति—३६ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ८ ख़ा., ४९ ते., ७ ख़ा., २५ ते., १ ख़ा., ५२ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १३ ते., ६ चे., लौटो।

१३० पंक्ति—४ चे., छोड़ो, १५ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ५२ ते., १ ख़ा., २५ ते., ७ ख़ा., ४९ ते., ८ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ३६ ख़ा., ५ चे. लौटो।

१३१ पंक्ति—३६ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ७ ख़ा., ५२ ते., ७ ख़ा., २५ ते., १ ख़ा., ५२ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १६ ते., ६ चे लौटो।

१३२ पंक्ति—४ चे छोड़ो, १८ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ५२ ते., १ ख़ा., २५ ते., ७ ख़ा., ५२ ते., ७ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १७ ख़ा., ७ ते., १७ ख़ा., ५ चे. लौटो।

१३३ पंक्ति—१७ ख़ा., ७ ते., १७ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ७ ख़ा., ५२ ते., ७ ख़ा., २५ ते., २ ख़ा., ४९ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., १९ ते., ६ चे. लौटो।

१३४ पंक्ति—४ चे., छोड़ो, ९ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४९ ते., १ ख़ा., २५ ते., ८ ख़ा., ५५ ते., ६ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १६ ख़ा., १० ते., १७ ख़ा., ५ चे. लौटो।

१३५ पंक्ति—१६ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४ ते., १६ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ६ ख़ा., ५५ ते. ८ ख़ा., २५ ते., १ ख़ा., ४९ ते.,—१ख़ा., ७ ते., दो वार, ३ ख़ा., ७ ते., ६ चे., लौटो।

१३६ पंक्ति—४ चे., छोड़ो, १२ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४६ ते., १ ख़ा., १० ते., १ ख़ा., १३ ते., ९ ख़ा., ५५ ते., ६ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., १६ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., ४ ते., १६ ख़ा., ५ चे. लौटो।

१३७ पंक्ति—१६ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १० ते., १२ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ६ ख़ा., ५५ ते., १३ ख़ा., १३ ते., १ ख़ा., ४६ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., २५ ते., ३ चे. लौटो।

१३८ पंक्ति—२४ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ४३ ते., १ ख़ा., १३ ते., १४ ख़ा., ५८ ते., ५ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ९ ख़ा., ७ ते.,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१ ख़ा १० ते., १ ख़ा., ४ ते., २ ख़ा., ७ ते., ५ ख़ा., ५ चे. लौटो।

१३९ पंक्ति—१५ ख़ा., ७ ते., २ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., १९ ते., १ ख़ा., ४ ते., ७ ख़ा., ४ ते., १ ख़ा., ४ ते., ५ ख़ा., ५८ ते., २० खा., ४० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २५ ते., ३ चे. लौटो।

१४० पंक्ति—९ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २२ ते., १ खा., १३ ते., २१ खा., ६१ ते., ४ खा., ४ ते., १ खा., ४ ते., ६ खा., ३४ ते., २ खा., ७ ते., १५ खा., ५ चे. लौटो।

१४१ पंक्ति—१५ खा., ७ ते., १ खा., ७ ते., ६ खा., १३ ते., १ खा., ४ ते., ४ खा., ४ ते., १ खा., ४ ते., ४ खा., ६१ ते., २६ खा., २२ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १० ते., ३ खा., ७ ते., ३ चे., लौटो।

१४२ पंक्ति—९ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २२ ते., २६ खा., ६४ ते., ३ खा., ४ ते., १ खा., ४ ते.,—३ खा., १३ ते., दो वार, १ खा., १९ ते., १५ खा., ५ चे., लौटो।

१४३ पंक्ति—१५ खा., १९ ते., १ खा., १९ ते., २ खा., १३ ते., २ खा., ४ ते., १ खा., ४ ते., २ खा., ६७ ते., २६ खा., २२ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

१४४ पंक्ति—२४ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २२ ते., ३ खा., १६ ते., १८ खा., ७० ते.,—१ खा., ४ ते., दो वार, १ खा., १० ते., ३ खा., १६ ते., २४ खा., ५ चे., लौटो।

१४५ पंक्ति—१५ खा., १९ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते., २ खा., १९ ते., १ खा., ७० ते., १७ खा., २२ ते., २ खा., २२ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

१४६ पंक्ति—१२ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते., १ खा., ३१ ते., २ खा., १९ ते., ८ खा., ६७ ते., २ खा., ७ ते., ४ खा., २२ ते., २ खा., ७ ते., १ खा., ४ ते., २ खा., १० ते., १५ खा., ५ चे., लौटो।

१४७ पंक्ति—१५ खा., ७ ते.,—१ खा., १० ते., दो वार, २ खा., २८ ते., १ खा., १० ते., २ खा., ६४ ते., ७ खा., २५ ते., १ खा., ३१ ते., २ खा., १६ ते.,—१ खा., ७ ते., दो वार, ३ खा., ७ ते., ३ चे., लौटो।

१४८ पंक्ति—९ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., ३१ ते., १ खा., २८ ते., ६ खा., ६१ ते., १ खा., ४ ते., ५ खा., २८ ते., २ खा., १० ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ४ ते., १५ खा., ५ चे., लौटो।

१४९ पंक्ति—१६ खा., १६ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., २५ ते., २ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., २ खा., ५५ ते., ६ खा., ६४ ते., १ खा., १६ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते., ३ चे., लौटो।

१५० पंक्ति—१८ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १६ ते., १ खा., ६७ ते., ६ खा., ४९ ते., २ खा., १० ते.,—१ खा., ४ ते., तीन वार, १ खा., २२ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ७ ते., २ खा., ४ ते., १६ खा., ५ चे., लौटो।

१५१ पंक्ति—१५ खा., ७ ते., १ खा., १० ते., १ खा., १३ ते., १ खा., १९ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १३ ते., २ खा., ४६ ते., ६ खा., ६४ ते., १ खा., १९ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १६ ते., ३ चे., लौटो।

१५२ पंक्ति—१५ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., ८५ ते., ६ खा., ४३ ते., २ खा., १३ ते.,

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

१ खा., १० ते., १ खा., १३ ते., २ खा., १३ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., १९ ते., २५ खा., ५ चे., लौटो।

१५३ पंक्ति—१५ खा., १९ ते.,—१ खा., १३ ते., दो वार, १ खा., १६ ते.,—१ खा., ४ ते., दो वार, १ खा., १६ ते., २ खा., ३७ ते., ७ खा., ८५ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १३ ते., १ चे., लौटो।

१५४ पंक्ति—४ सादे फन्दे, ३ चे., ९ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., ८५ ते., ७ खा., ३१ ते., २ खा., २२ ते., १ खा., ७ ते., २ खा., १९ ते., १ खा., १० ते., १ खा., १३ ते., १ खा., १९ ते., १५ खा., ५ चे., लौटो।

१५५ पंक्ति—१५ खा., १९ ते., १ खा., १० ते., २ खा., १० ते., १ खा., २२ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २५ ते., २ खा., २५ ते., ८ खा., ५२ ते., २ खा., २८ ते.,—१ खा., ७ ते., दो वार, ७ चे., लौटो।

१५६ पंक्ति—१ चे. छोड़ो., ४ सादे., २ चे., छोड़ो., ३ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २५ ते., २ खा., २५ ते., २ खा., २२ ते., ९ खा., २२ ते., २ खा., २५ ते.,—१ खा., ४ ते., दो वार, १ खा., २५ ते., १ खा., ७ ते., २ खा., १० ते., १ खा., १९ ते., १५ खा., ५ चे., लौटो।

१५७ पंक्ति—१६ खा., २८ ते., २ खा., ४ ते., १ खा., २८ ते., २ खा., ७ ते., १ खा., २८ ते., २ खा., १६ ते., १० खा., २२ ते., २ खा., २८ ते., २ खा., २२ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., ७ ते., १० चे., लौटो।

१५८ पंक्ति—१ चे., छोड़ो., ४ सादे फन्दे, ३ चे. और छोड़ो, ९ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २२ ते., २ खा., २८ ते., २ खा., २२ ते., १० खा., १० ते., २ खा., ७ ते., ४ खा., १० ते., १ खा., १० ते., १ खा., २५ ते., २ खा., ४ ते., ६ खा., १९ ते., १६ खा., ५ चे., लौटो।

१५९ पंक्ति—१६ खा., ७ ते., ९ खा., १० ते., १ खा., २५ ते.,—१ खा., ४ ते., दो वार, १ खा., १३ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १० ते., २ खा., ४ ते., १२ खा., १९ ते., १ खा., ३४ ते., २ खा., १९ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १३ ते., ६ चे., लौटो।

१६० पंक्ति—४ चे., छोड़ो., १५ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १६ ते., २ खा., ३७ ते., १ खा., १९ ते., १४ खा., १६ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ७ ते., २ खा., २२ ते., १ खा., १० ते., ३ खा., १० ते., ४ खा., ७ ते., १६ खा., ५ चे., लौटो।

१६१ पंक्ति—१६ खा., २२ ते., १ खा., ७ ते., ३ खा., १० ते., १ खा., २२ ते.,—१ खा., १० ते., दो वार, १ खा., ४ ते., १ खा., १९ ते., १४ खा., १३ ते., १ खा. ४० ते., २ खा., १६ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १६ ते., ६ चे. लौटो।

१६२ पंक्ति—१८ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १६ ते., २ खा., ४३ ते., १ खा., ७ ते., १३ खा., १३ ते., २ खा., ७ ते., १ खा., ४ ते.,—१ खा., १० ते., दो वार, १ खा., २२ ते., १ खा., १० ते., ३ खा., ७ ते., १ खा., २२ ते., १६ खा., ५ चे. लौटो।

१६३ पंक्ति—१६ खा., १० ते., २ खा., ७ ते., १ खा., ७ ते., ४ खा., १० ते., १ खा., १९ ते., १ खा., ४ ते., दो वार, १ खा., १० ते.,—२ खा., ४ ते., दो वार, १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १६ खा., ४३ ते., २ खा., १६ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते., ६ चे. लौटो।

१६४ पंक्ति—४ चे. छोड़ो, ९ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १६ ते., २ खा., ७ ते., २ खा., २७ ते., १६ खा., ७ ते., १ खा.,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१० ते., २ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., १३ ते., २ खा., १० ते. ६ खा., १० ते., १ खा., ४ ते., १ खा., ७ ते., १७ खा., ५ चे. लौटो।

१६५ पंक्ति—१८ खा., ७ ते., २ खा., ४ ते., ८ खा., १३ ते., २ खा., १३ ते., १ खा., १० ते., १ खा., १३ ते., २ खा., १३ ते., १ खा., ७ ते., १५ खा., ३४ ते., २ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते.,—१ खा., ७ ते., दो वार, ३ खा., ७ ते., ६ चे. लौटो।

१६६ पंक्ति—४ चे. छोड़ो, १२ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते., १ खा., ४ ते., १ खा., ३७ ते., १७ खा., ७ ते., १ खा., १३ ते.,—१ खा., १० ते., तीन वार, २ खा., १६ ते., १० खा., ७ ते., २० खा., ५ चे. लौटो।

१६७ पंक्ति—३२ खा., २८ ते., १ खा., ४ ते.,—१ खा., ७ ते., दो वार, १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १९ खा., ३७ ते., १ खा., २२ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २५ ते., ३ चे. लौटो।

१६८ पंक्ति—२४ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते., १ खा., ४३ ते., १९ खा., १६ते., १ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., २ खा., २८ ते., ३४ खा., ५ चे. लौटो।

१६९ पंक्ति—३८ खा., १६ ते., २ खा., ७ ते., ३ खा., १६ ते., १९ खा., ४९ ते., १ खा., १६ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २५ ते., ३ चे. लौटो।

७० पंक्ति—९ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १६ ते., १ खा., ४८ ते., २१ खा., १० ते., १ खा., ४ ते., ४८ खा., ५ चे. लौटो।

१७१ पंक्ति—४६ खा., ७ ते., १ खा., १० ते., २० खा., ४ ते., १ खा., ४९ ते., १ खा., १६ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १० ते., ३ खा., ७ ते., ३ चे., लौटो।

१७२ पंक्ति—९ ते., १ खा., १३ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १६ ते., १ खा., ४९ ते., १ खा., ७ ते., २ खा., १३ ते., १४ खा., ७ ते., १ खा., ७ ते., ४६ खा., ५ चे., लौटो।

१७३ पंक्ति—४५ खा., ४ ते., २ खा., ७ ते., १० खा., ४ ते., ३ खा., १६ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ४६ ते., २ खा., १६ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

१७४ पंक्ति—२४ ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १३ ते., ४ खा., ४३ ते.,—१ खा., १० ते., दो वार, २ खा., ७ ते., २ खा., १० ते., ७ खा., ७ ते., १ खा., ४ ते., ४६ खा., ५ चे., लौटो।

१७५ पंक्ति—४६ खा., ४ ते., १ खा., १० ते., ४ खा., १६ ते., १ खा., १३ ते., ६ खा., १० ते., १ खा., ३७ ते., १ खा., ७ ते., ३ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., २५ ते., ३ चे., लौटो।

१७६ पंक्ति—१२ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., १ खा., १० ते., ३ खा., ७ ते., १ खा., ३४ ते., १ खा., १० ते., ८ खा., ४९ ते., ४८ खा., ५ चे., लौटो।

१७७ पंक्ति—४९ खा., ४० ते., ५ खा., १३ ते., २ खा., १३ ते., १ खा., २८ ते., १ खा., १३ ते., ३ खा., ७ ते.,—१ खा., ७ ते., दो वार, ३ खा., ७ ते., ३ चे., लौटो।

१७८ पंक्ति—९ ते., १ खा., १० ते., १ खा., ७ ते., ६ खा., १६ ते., २ खा., १६ ते., २ खा., ३१ ते., ६७ खा., ५ चे., लौटो।

१७९ पंक्ति—६५ खा., ४३ ते., ५ खा., २२ ते., ६ खा., ७ ते., १ खा., १९ ते., ३ चे. लौटो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१८० पंक्ति--१८ ते., १ खा., ७ ते., ६ खा., ७९ ते., ६५ खा., ५ चे., लौटो।

१८१ पंक्ति—६३ खा., ८२ ते., ७ खा., ७ ते., १ खा., १६ ते., ३ चे., लौटो।

१८२ पंक्ति—१५ ते., १ खा., ७ ते., ७ खा., ४९ ते., १ खा., ३१ ते., ६३ खा., ५ चे., लौटो।

१८३ पंक्ति—६४ खा., २५ ते., ४ खा., ४० ते., ८ खा., ७ ते., १ खा., १३ ते., ३ चे., लौटो।

१८४ पंक्ति—९ ते., १ खा., ७ ते., १० खा., ३१ ते., ६ खा, १९ ते., ६५ खा., ५ चे., लौटो।

१८५ पंक्ति—७८ खा., २५ ते., ११ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ७ ते., १ चे., लौटो।

१८६ पंक्ति—४ सादे फन्दे, ३ चे., ३ ते., १ ख़ा., ७ ते., १२ ख़ा., १६ ते., ८० ख़ा., ५ चे., लौटो।

१८७ पंक्ति--९७ ख़ा., ७ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१८८ पंक्ति--१ ख़ा., ७ ते., ९७ ख़ा., ३ चे., लौटो।

१८९ पंक्ति--२९८ ते., १ ख़ा., ५ चे., लौटो।

१९० पंक्ति--१ ख़ा., २९९ ते., ५ चे., लौटो।

१९१ पंक्ति--१०० ख़ा.,

अब सिरे की तरफ़ दो पंक्तियां तेहरे क्रोशिये की वीनो केवल पंक्तियों के आरम्भ और अन्त में एक २ खाना वीनना उसके बाद एक तीसरी पंक्ति निरे खानों की वीनो जैसा तसवीर से ज्ञात हो जायगा।

अब झालर के लीजियेः—१ पंक्ति—वायीं तरफ़ से दाहिनी ओर कार्य्य करना—दोहरे क्रोशिये खानों में वनाओ (दाहिनी ओर से वाईं ओर फिर चेन फिर इसी प्रकार)–१५ चेन वनाकर अगले खाने में जोड़दो और जो खाना वनगया इसी में घूम कर ६ दोहरे क्रोशिये वीन दो, १० चेन वीनो और अगले खाने में जोड़दो फिर लौटकर उसी में ६ दोहरे क्रोशिये वीनो, ५ चेन, १ दोहरा पहिली छोटी सी नोक में डालो और ६ दोहरे क्रोशिये लौटकर उसी चेन के छल्ले में वीन दो (तसवीर देखो चेन से उसी समय छल्ले वनते जाते हैं उनमें लौट २ कर दोहरे क्रोशिये वनते जाते है) अब वे जो आगे गोल २ कंगूरे निकले हैं उनके चारों ओर वीनो—१० चेनें वीनकर एक नोक में डालो फिर लौटकर ६ दोहरे क्रोशिये वीनो और फिर १० चेन अगली नोक में डालो और ६ दोहरे वीनकर आगे चलो किन्तु इन छल्लों को तेहरों की प्रत्येक दूसरी नोक के वीच में जोड़ना और फिर छोटी २ नोकों में भी जब तक अन्तिम न आजाय यहां पर ५ चेन और ६ तेहरे और फिर ३ चेन वनाकर दूसरे गोल घेरे पर जाना चाहिये। फिर उसी प्रकार १० चेन इत्यादि।

२ पंक्ति—प्रत्येक छल्ले में ४ दोहरे क्रोशिये ४ चे ४ दोहरे, १ दो फिर किनारे की ओर को फिर शुरु से *इस चिन्ह से।

सब तैय्यार होने पर वीच में और प्रत्येक घेरों के अन्त पर फुदने बांध दो यह चाहे मोटे सूत से वांधे जायें तो भी कुछ हानि नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सदुपदेश।

[लेखका—श्री केशरकुंवर देवी]

"भ्राता समय प्रतिकूल उलटी चाल पर चलना नहीं"।

(१)

अपना बचाओ और को लूटो न तुम अन्याय से।
घाटा न होगा जो ज़ियादा व्यय न होगा आय से॥
अपव्यय बढ़ाकर क्यों वृथा ही देश का घोटो गला।
सादे पुराने भेष में भी है भला देखो भला...॥
निष्काम मिथ्या ढोंग के सांचे में तुम ढलना नहीं।
भ्राता समय प्रतिकूल उलटी चाल पर चलना नहीं॥

(२)

करते रहो शुभ कर्म, सीधी लीक पर चलते रहो।
बनता नहीं उपकार तो अपकार से टलते रहो॥
छोड़ो झमेले झूंठ के मन सत्यव्रत पालन करो।
धनहीन कुल के बालकों का, प्रेम से लालन करो॥
कर कर्म कोरे क्रूर, कालिख हाथ पर मलना नहीं।
भ्राता समय प्रतिकूल उलटी चाल पर चलना नहीं॥

(३)

सह कर हजारों कष्ट भी, निज सत्त्व को खोना नहीं।
देख के दुख दूसरों के नींद भर सोना नहीं.....॥
छोड़ सादी चाल, गठड़ी गर्व की ढोना नहीं।
सद्भाव सुरतरु काट कर विष वृक्ष का बोना नहीं॥
निज बंश की मर्याद से, तिल मात्र भी टलना नहीं।
भ्राता समय प्रतिकूल उलटी चाल पर चलना नहीं॥

(४)

झूठ भय का मूल है, शुचि सत्य सुख का धाम है।
कूट वादी कर्म हीनों से, बिधाता बाम है॥
गाया करो गुण ईश के, जिस का अमर जग नाम है।
है वही उद्धार कर्ता, और से क्या काम है॥
याद रख केशर ये शिक्षा देख तू भुलना नहीं।
भ्राता समय प्रतिकूल उलटी चाल पर चलना नहीं॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दीपमालिका।

[ले०—श्री लक्ष्मीदेवी जौहरी]

दीपमालिका—अर्थात् दिवाली। यह त्योहार समस्त भारतवर्ष में कार्तिक अमावस्या को बड़े समारोह के साथ मनाया जाता है वर्तमान समय में हमारी बहिनें त्यौहार तो मनाती हैं, परन्तु यह नहीं जानती कि यह क्या है? और हम इसे कैसे मनाती हैं। प्रिय बहिनों प्राचीनकाल में आज के दिन तक नया नाज खेतों से कट कर आजाता था। उस में से दीन दुखियों के दानार्थ हमारे पूर्वजों ने यह कार्तिक अमावस्या का दिन नियत किया था—आज ही के दिन प्रत्येक गृहस्थ अपने साल भर के खलियानों की सफ़ाई कराते और उन में आगामी वर्ष के लिये पुनः नाज एकत्रित करते थे—आज कल की भांति हमारा भारत दीन और हीन न था। इस भांति क्षय रोग से पीड़ित न था—चारों ओर से इस भांति हाय! हाय! की ध्वनि कानों में नहीं गूंजती थी—बरन् सुख और शान्ति की ध्वनि से भारतमाता सदैव प्रसन्न वदना प्रतीत होती थी—पृथ्वी माता इस भांति रक्त से न रंगी जाकर यज्ञ हवन द्वारा जल वायु से शुद्ध की जाती थी—उसी शुद्ध जल वायु को पान कर भारतवासी सदा निरोग तथा हृष्ट पुष्ट बने रहते थे। भारत सन्तान इस भांति कुमार्गी न थी। किसी का कथन सत्य है :—

"आपत्ति काले विपरीत बुद्धिः" जब विपत्ति आने वाली होती है तो बुद्धि उलटी हो जाती है। आज ही साल भर के आय व्यय का व्यौरा लगाया जाता तथा हानि लाभ पर विचार होता था। अहा! वह समय भी कैसे आनन्द का था जब कि परिवार के सब सम्बन्धिगण एकत्रित हो ऊंची ध्वनि से वेदमंत्रों का उच्चारण कर यज्ञ में सम्मिलित होते तथा एक दूसरे को उचित परामर्श देते थे। हाय! वर्तमान समय में क्या रह गया? एक दूसरे को बरबाद करना और बैर का बीज बोना।

प्रिय! पाठिकाओ! आज हम उसी स्वर्ग के सदृश दिवस को किस भांति व्यतीत कर रहीं हैं? नहीं, नहीं, आज ही का दिवस हमारी अधोगति का हमें प्रतीत होता है। आजकल उस के स्थान पर क्या होता है? साल भर का एकत्रित किया हुआ धन अनेक भारतसन्तान नष्ट कर घर छोड़ चले जाते हैं। कितने ही अकाल मृत्यु से मरते हैं। कितनी ही देवियों का सतीत्व नष्ट होता है। हमारी बहिनें सोचती होंगी वह कौनसी प्रथा है? वह सब को अधोगति पर पहुँचाने वाली द्यूतक्रीड़ा की प्रथा है।

जब से भारत के दुर्भाग्य आने लगे, भारत सन्तान कायर और कर्म्महीन होने लगे, तब से ही इस कुप्रथा का वर्णन इतिहास में आता है। देखिये त्रेतायुग में पांडवों को राज्यभ्रष्ट कर निकालने के लिये दुष्ट कौरवों ने यही उपाय सोचा था। आजकल समस्त नहीं तो अधिकतर कायरता तथा लोलुपता के वश होकर तस्करों की भांति जूआक्रीड़कों को भी सर्वदा यही अभिलाषा रहती है कि जिस प्रकार होसके दूसरों का धन और बहुमूल्य पदार्थ बिना परिश्रम ही के—सुलभता से हाथ आजावे।

जूआक्रीड़ा के समग्र दोषों में से दरिद्रता और शत्रुता को सर्वोपरि गिने जाते हैं—इन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

दोनों दोषों की उत्पत्ति बहुधा उस समय हुआ करती है, जब कि द्यूतक्रीड़ा का अन्तिम समय उपस्थित होता है। सच्छास्त्रों में स्पष्ट कहदिया है कि द्यूतक्रीड़ा ही महाशत्रुता और दरिद्रता का उत्पन्न करने वाला देखा गया है। इसलिये बुद्धिमान् लोग कभी हास्यार्थ भी इसका सेवन न करें। इसके दृष्टान्त केवल वर्तमान समय के ही जूआक्रीड़क जनों की दुर्दशा को न समझना चाहिये-किन्तु भूतकाल के उन ऐतिहासिक वृतान्तों का स्मरण करना भी योग्य है, जो इस विषय की पुष्टि भली भांति कर रहे हैं-जैसा कि वह भयंकर महाभारत नामी युद्ध जो अर्य्यावर्त के कुरुक्षेत्र नामी स्थान में हुआ और जिसने इस देश को ऐसा धक्का लगाया कि आज तक आरत से भारत अपनी दशा को प्राप्त नहीं हुआ। उस संग्राम का मुख्य जन्म हेतु कौरव और पांडवों का द्यूतक्रीड़ा करना ही था। दूसरा दृष्टान्त निषध देश के महाराजा नल को इस द्यूतक्रीड़ा ने ऐसा बरबाद किया कि अन्न वस्त्रादि से भी पीड़ित कर दिया। स्त्री और पुत्रादि का त्याग करा कर अयोध्या के राजा ऋतुपर्ण का सारथि बना दिया विचारणीय स्थल है कि जिस जूआक्रीड़ा से भाई भाईयों से परस्पर ऐसी शत्रुता हुई जिसने दोनों में से एक को दूसरे के रुधिर का प्यासा बना दिया-और जिस दुष्ट के कारण बड़े २ भूपालों को चार २ दिवस में भोजनार्थ केवल फलफूल ही प्राप्त हुये-वस्त्राभाव से स्त्री की साड़ी को फाड़ना पड़ा। क्या वह कभी किसी के लिये किसी भी काल में श्रेयस्कर हो सकता है? कदापि नहीं! कदापि नहीं!

भारत देवियो! अब बहुत दुर्दशा हुई। उठो अपने कर्तव्य को सम्हालो, अनाथ भारत को सनाथ बनाओ। जबतक स्त्री जाति न सुधरेगी भारत सन्तान का सुधार कैसे हो सकता है? क्योंकि जैसा आहार, व्यवहार मातायें रखती हैं वैसा सन्तान का भी अवश्य होता है-माता ही जैसे संस्कार चाहे बालकों में डाल सकती हैं। किसी कवि ने कहा है!

"शिशु बोलन लागत है जब से,
मातु पढ़ाय सकत है तब से"।

शास्त्रों में भी माता ही को सब से बड़ा गुरु कहा है। इसलिये मेरी सब बहिनों तथा भाइयों से यही प्रार्थना है कि वर्तमान समय में त्यौहारों में जो कुप्रथायें प्रचलित हैं उनको दूर कर आनन्द मित्रता और प्रसन्नतापूर्वक त्यौहारों को मनावें। हमारे पूर्वजों ने यह शुभ दिवस चुन चुन कर प्रसन्नता के लिये रक्खे हैं न कि वैर भाव बढ़ाने और शोक करने के लिये।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली का देश तथा जाति पर प्रभाव।

[ले—श्री कर्तारदेवी जी]

मनुष्य निज देश तथा जाति को जागृत रखने का प्रेमी है। अथवा जिन महापुरुषों तथा देवियों की हार्दिक प्रेम-मय उमङ्गें निज देश तथा जाति के सम्बन्ध में उठती रहती हैं। उन देशभक्तों के लिये उचित है कि वह सब से पहले वर्तमान शिक्षा प्रणाली के प्रभाव की ओर ध्यान दें। तदनन्तर सुधारों की ओर ध्यान दें यद्यपि इस गम्भीर तथा अथाह विषय की-समालोचना मेरी तुच्छ लेखनी से असंभव ही है। तथापि कुछ लिखने का साहस करती हूं। सब से पहले हमें यह जानना परमावश्यक है, कि वर्तमान

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समय में जो कन्याओं को इङ्गलिश अध्ययन कराने के लिये क्रिश्चियन स्कूलों तथा कालेजों में भेजा जाता है उस शिक्षा का प्रभाव उन पर क्या होता है ? जहरीली हलाहल विष पिला कर अज्ञान के गढ़े में फेंका जा रहा है। जिन्हें जन्म से ही विदेशी बनाया गया तथा विदेशी ही शिक्षा दी गयी वह शिक्षा निज देश जाति तथा सोसाईटी को जड़ से उखाड़ देगी। उनके हृदयरूपी मन्दिरों में सदैव प्रेममय तरङ्ग इङ्गलैंड के लिये ही उठेंगे। वहां की ही सर्व वस्तुयें तथा खान, पान, वस्त्र, बोलचाल प्रिय लगेगी। यही नहीं ! वह अपने संतान को बालपन से सी ए टी कैट आर ए टी रैट की सन्था देना आरम्भ कर देंगी अंततः उन्हें युरेशियन जाति में सुशोभित करेंगी।

यहां तक कि एक दिन ऐसा होगा कि वह निज देश तथा जाति को पूर्णरूप से तिलाञ्जलि दे बैठेंगी। तथा टिमटिमाता भारत-दीप जगने नहीं पायेगा, प्रत्युत भारतवर्ष का नामोनिशान लोप होकर युरोप के नाम में ही परिवर्तन हो जायेगा बहुसंख्यक बाबू लोग स्वार्थपरायण धन के दास बन कर अपने लड़के तथा लड़कियों को क्रिश्चियन स्कूलों में शिक्षा दिलवा लेडीज़ तथा साहिब ही बनाना अपने जीवन सम्पत्ति समझते हैं। छोटे से ५-६ वर्ष वाले बालक को हैट पहनाकर कैसी प्रसन्नता से अंग्रेजों की सभा में आ बैठेंगे तथा घर बार को आग लगा क्या खुश होते हैं। विदेशी लोग सदा उन्हें देखकर नकलमार कहेंगे तथा निर्लज्ज २ पुकारेंगे। इन अकल के अन्धे बालक शत्रु माता पिता को इतने पर भी कुछ समझ नहीं आवेगी। इन के दिमागों में कूट २ भूसा भरा होता है। अन्ततः इसका प्रभाव क्या है ? विचारे निःशस्त्र संसार रूपी युद्धस्थल में धोखे से पराजय किये जाते हैं उनके साथ घोर अत्याचार किया जाता है कि जो उन्हें अंग्रेजी में शिक्षा दी जाती है उन के अर्थ भी अंग्रेजी में ही सिखलाये जाते हैं। हाय ! यह कैसा शोकोत्पादक समाचार है कि उन्हें निज देश की बोल चाल सम्पत्ति से नितान्त वञ्चित रखने का प्रयत्न किया जाता है उन्हें कैसे प्रेम से हलाहल विष पिलाई जाती है उन के देश तथा जाति को नष्ट करने की बारीक चोरी कैसी चतुराई से की जाती है। अब वह निरपराध विचारे क्या करें ? उनकी तो सर्व सम्पत्तियें माता के गर्भ में चुराई गई। उनको पैदा होते ही देश तथा जाति से च्युत किया गया।

पैदा होते ही हैट तथा बूट, नकटाई, कौलर, बो, कोट, पत्तलून गैलिश इत्यादि वर्ताव में लाने तथा वीर रसोत्पादक तथा रणवीर देशभक्त शिक्षाप्रदायक श्लोकों के स्थानों में ईशा की पोयले वर्ताव कराने लग पड़े यह जन्ममात्र ही भारतवर्षीय रह गये। क्या होगा घर भुला देंगे दासत्व बन्धनों में जकड़े जायंगे। प्रायः देखा जाता है कि बहुतसी ग्रेजूयेट लड़कियें माता पिता को मूर्ख बताने लग पड़ती हैं यहां तक कि देश शत्रु वस्त्र (फैशनेबल नाम से कहती हुई जिसे प्रसन्न होती हैं) गौन तथा बूट पहर कर मलीन कपड़ों वाली सुशिक्षिता माता को भी नौकर ही बतायेंगी शोक ! शोक ! महा शोक धिक्कार है उनकी पठन पाठन पर तथा शिक्षाप्रदायक सज्जनों को जिनकी शिक्षा द्वारा वह आंखों से अन्ध तथा कर्तव्य विमूढ़ा हुई।

इस विषय में वे विचारे बालक तथा बालिकायें नितान्त निरपराधी हैं जैसे कहा भी है :—

यन्नवे भाजने लग्नः संस्कारो नान्यथा भवेत्।
कथा च्छलेन बालानां नीतिस्तादिह कथ्यते ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar. Digital Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(अर्थ) जैसे नये पात्र में लगा हुआ संस्कार भिन्नता को नहीं प्राप्त हो सकता, इसी प्रकार बच्चों के कोरे तथा सुलभ हृदयों में जो प्रथम से संस्कार किये जाते हैं वह सहस्रों यत्नों से भी नहीं दूर हो सकते उनके हृदयों में सदा ऐसे ही संस्कार गूंजते हैं वह मातृ पितृ भक्त बन ही नहीं सकते।

(शेष फिर)

लाहौर आर्य्य समाज का उत्सव और आर्य्य देवियां।

नवम्बर के अंतिम शनिवार और आदित्यवार को लाहौर आर्य्य समाज का वार्षिकोत्सव बड़े समारोह से हुआ। लंगेमंडी के पंडाल में सहस्रों की संख्या में स्त्रियां धर्म उपदेश सुनने गईं, किन्तु प्रत्येक वक्ता को यह शिकायत रही कि देवियां न आप सुनती हैं न पुरुषों को सुनने देती हैं। हमारी सम्मति में शोर मचा कर लाहौर की देवियों ने यहां के पुरुषों को उनके किये कर्म का उचित फल ही दिया है। यदि प्रत्येक साप्ताहिकसत्संग में देवियों को भेजा जावे, तो उनको महात्माओं और विद्वानों की वक्तृताओं को सुनने और समझने का स्वभाव पड़ जावे। अब तो वह मेला देखने जाती हैं और मेलों में जाने वालियों को शोर मचाने का अधिकार है ही। उत्सब के उपरान्त स्त्रियों ने अपना उत्सव भी मनाया उस में भी खूब शोर मचा, और कुमारी लज्जावती श्री द्रोपदीदेवी श्री० सरलादेवी चौधरानी और श्री विद्यावती के व्याख्यान हुए हमें यह समझ में नहीं आता, कि स्त्री समाजों की पृथक् आवश्यकता ही क्या है, ईसाईयों मुसलमानों सिखों और हिन्दुओं में स्त्री पुरुष एक ही सत्संग में सम्मिलित होते हैं। ऋषि दयानन्द ने मुंबई आर्य्य समाज के नियमों में स्पष्ट लिखा है। कि आर्य्य समाज के सभासद् स्त्री पुरुष दोनों हो सकते हैं। जिस भले आदमी ने स्त्री समाजों की बुनियाद डाली थी, वह स्त्रियों की उन्नति का शत्रु था क्योंकि यह तो निर्विवाद है कि अवनत समूह उन्नत समुह के संघर्षण से ही उन्नति को प्राप्त हो सक्ता है।

विसवां आर्य्य कन्या विद्यालय।

पिछले अंक में हमने आर्य्य कन्या विद्यालय विसवां के लिये धन की प्रार्थना की थी हमें यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि उक्त विद्यालय का एक डैपुटेशन कलकत्ता बनारस इत्यादि नगरों में घूम रहा है। और कई सहस्र रुपये एकत्रित हो चुके हैं। क्या हमारी पाठिकायें इस शुभ कार्य्य में सहायता देकर पुण्य की भागिनी न होगीं?

कन्या विश्वविद्यालय जालन्धर।

हमें यह जानकर प्रसन्नता हुई है कि १९ दिसम्बर को जालन्धर में स्त्री शिक्षा के प्रेमियों की एक कान्फ्रेंस होगी। जिस में यह निश्चय किया जायगा कि कन्या महाविद्यालय को किन साधनों से शीघ्र ही कन्या विश्वविद्यालय में परिवर्तित कर दिया जावे। हमारी सम्मति में इस कान्फ्रेंस में उन सब आर्य पुरुषों और आर्य देवियों को आमन्त्रित करना चाहिये जिन को स्त्री शिक्षा के प्रश्न में मनोरञ्जकता है और जिन को इस कार्य में अनुभव भी प्राप्त है। यदि कन्या विश्वाविद्यालय जालन्धर को सच्चे अर्थों में समग्र आर्य्य जनिता की सम्पत्ति बना दिया जावेगा और प्रबन्ध कर्तृ सभा में सुशिक्षिता देवियों की संख्या पर्य्याप्त रक्खी जावेगी तो निस्सन्देह संस्था दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करेगी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ओ३म्

आनन्द दायक ।

वर्तमान इशतिहार बाज़ी पर अविश्वास रहते हुये भी कई मित्रों की प्रबल इच्छा पर यह प्रसिद्ध औषधि आपके सन्मुख लाई जाती है। पाचन शक्ति की कमी, जिगर की कमज़ोरी, तिल्ली का बढ़ना, पित्त, यरकान, अनिमिया (रुधिर की कमी) तथा अन्य जिगर सम्बन्धी रोगों के लिये—जैसे जिगर का बढ़ जाना और पीड़ा करना, आलस्य, प्रमाद, पुराना ज्वर, शरीर की सोजन, जलन्धर, मलेरिया—यह औषधि अत्यन्त गुणकारी है। स्त्री सम्बन्धी रोग-जैसे उल्टी आना, पित्त पड़ना, दिल धड़कना, हाथ पैर की सोजन तथा रुधर की कमी के कारण ऋतु का न आना, थोड़ा आना, तथा दर्द से आना इत्यादि में अत्यन्त लाभकारी है। अन्य भी कितने ही रोगों के लिये इसकी परीक्षा की जा चुकी है। इसके गुणों के कई प्रसंशा पत्र आचुके हैं। उनमें से केवल प्रसिद्ध।

लेखक—श्रीयुत कृष्ण बी० ए०।

सम्पादक प्रकाश का ही प्रशंसा पत्र दिया जाता है। वह प्रकाश में लिखते हैं :—

"कि आनन्द दायक बदहज़मी, पाचन शक्ति को बढ़ाने तथा हाजमें के लिये बड़ी गुणकारी सिद्ध हुई है"।

मूल्य एक शीशी का २)। प्रयोग की विधि साथ दी जायगी, आर्डर करते समय रोगी की अवस्था लिख भेजना बड़ा लाभकारी होगा।

टी. आर. मैनेजर कल्याण कारक औषधालय काटे अदू जिला मुजफ्फरगढ़ (पंजाब)

वैदिक विज्ञान ग्रन्थमाला

राज्यरत्न आत्मारामजी कृत

अपने ढङ्ग की अपूर्व वैज्ञानिक सचित्र

अद्वितीय पुस्तकें।

सृष्टि विज्ञान—में डार्विन साहब के क्रमागत सृष्टि विज्ञान का बहुमान्य सिद्धान्त तथा सृष्टि उत्पत्ति पर हमारे आर्य्य ऋषि मुनि और महात्माओं के विचार लिखकर तुलनात्मक पद्धति से खंडन मंडन किया है जिससे पुस्तक बहुत माननीय तथा अपने ढंग की अद्वितीय हो गई है। मूल्य सचित्र का २)

शरीर विज्ञान—सचित्र अनुपम पुस्तक में शल्यविद्या का आदिमूल वेद में है तथा वात पित्त कफ के सिद्धान्त की सत्यता दिखाकर युरोप के कई साइंस के मन्तव्यों को अमान्य ठहराया है। बढ़िया छपी पुस्तक का मूल्य ।≡)

ब्रह्मयज्ञ—जो लोग धर्म्म और ईश्वर के नाम से दूसरों को गाली दिए बिना अपनी वाणी और लेखिनी को सफल नहीं समझते उन्हें यह पुस्तक अवश्य पढ़ना चाहिए। बढ़िया कागज़ पर छपी पुस्तक है। मूल्य ।॥)

त्रिदेव निरूपण—मूल्य ।-)

कोल्हापुर नरेश के कार्य्य—(सचित्र) मूल्य -)

आदर्श चरितावली—मूल्य ।=)

दृष्टान्त सागर—इस पुस्तक में २०० के करीब उत्तम २ दृष्टान्त हैं। व्याख्याताओं के बड़े काम की है। मूल्य १।)

मिलने का पता—जयदेव ब्रदर्स, बड़ौदा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पौष १९७७
जनवरी १९२१

वर्ष १ संख्या ९

ज्योति

मासिक पत्रिका

सम्पादिका—

विद्यावती सेठ बी. ए.

वार्षिक मूल्य ४॥) स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४) प्रति संख्या ॥)

बाम्बे मैशीन प्रेस लाहौर में मैनेजर पंडित हरभगवान के प्रबन्ध से मुद्रित हुआ और बाबू मदनलाल ने ज्योति कार्य्यालय लाहौर से प्रकाशित किया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय-सूची।

विषय	पृष्ठ
१ असहयोग [कविता]—लेखक श्रीयुत हरिशंकर भट्ट।	५१५
२ राष्ट्र निर्म्माण—लेखक श्रीयुत घासीराम एम. ए.।	५१७
३ ईश विनय [कविता]—लेखक श्रीयुत गयाप्रसाद (श्रीहरि)।	५२१
४ गंगा-जमनी-नलनी—लेखक श्रीयुत 'पागल'	५२२
५ स्वागत [कविता]—लेखक "एक राष्ट्रीय आत्मा"।	५२७
६ यज्ञ में पशु हिंसा—लेखक श्रीयुत विश्वनाथ विद्यालंकार।	५२९
७ अक्षय ज्योति [कविता]—लेखक श्रीयुत "नयन"।	५३२
८ रुक्मिणी हरण नाटक—अनुवादक श्रीयुत मेधाव्रत जगजीवन।	५३२
हरि-दर्शन [कविता]—लेखक श्रीयुत "मराल"।	५३९
१० पञ्जाब उठो—ले०श्रीयुत बुद्धदेवजी विद्यालंकार गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार।	५४०
११ बिन्दाल [कविता]—लेखक श्रीयुत सुमित्रानन्दन।	५४५
१२ विचार तरंग—लेखक लाला देवराज प्रधान कन्या महाविद्यालय जालंधर।	५४६
१३ हुमारी मंजूषा—	५४७
१४ कुसुमोद्यान—	५४८
१५ वैज्ञानिक संसार—	५५२
१६ विचार प्रवाह—	५५६
१७ वनिता विनोद—	५६३

ज्योति के नियम

ग्राहकों के लिये।

१. ज्योति प्रति अंग्रेजी मास की १५ को ग्राहकों के पास पहुंचा करेगी।

२. डाक व्यय सहित भारत के लिये इस का मूल्य ४॥) और छे मास के लिये २॥) वी. पी. का व्यय ≡) अलग है प्रति अंक का मूल्य ॥) है। भारत से बाहर विदेश के लिये इसका वार्षिक मूल्य ६) है। मूल्य मैनेजर ज्योति लाहौर के नाम आना चाहिये।

३. पुरानी प्रतियां जो मिलसकेंगी उनका मूल्य प्रति संख्या ॥) से कम नहीं होगा।

४. पते के परिवर्त्तन की सूचना पत्र के निकलने से १५ दिन पूर्व मैनेजर को मिलनी चाहिये।

५. यदि कोई संख्या किसी ग्राहक को न पहुंचे तो पहिले अपने डाक घर से पूछना चाहिये। यदि पता न चले तो डाक घर से जो उत्तर आवे उसे प्रबन्ध कर्त्ता के पास भेज देना चाहिये। परन्तु यह सूचना अगले अंक के निकलने से १५ दिन पूर्व तक मिलनी चाहिये अन्यथा दूसरी प्रति बिना मूल्य नहीं दी जायगी।

लेखकों के लिये

६. लेख पढ़ने योग्य अक्षरों में हाशिया छोड़कर एक ओर ही लिखे जाने चाहियें। लेखों के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादिका को है। जो लेख प्रकाशित नहीं किये जासकेंगे वह टिकट और पता साथ होने पर लौटा दिये जावेंगे।

८. लेख कविता समालोचना के लिये पुस्तकें और परिवर्त्तन के पत्र सम्पादिका ज्योति लायलपुर के पते पर आने चाहियें।

मूल्य तथा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र प्रबन्धकर्त्ता ज्योति लाहौर के पते पर आने चाहियें।

विज्ञापन दर यह होगी।

प्रतिमास।

पूर्ण पृष्ठ या दो कालम १०) आधा पृष्ठ या एक कालम ६) चौथाई पृष्ठ या आधा कालम ३) चौथाई कालम २) टैटिल पेज का तीसरा पृष्ठ १२) टैटिल का अन्तिम पृष्ठ १५)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

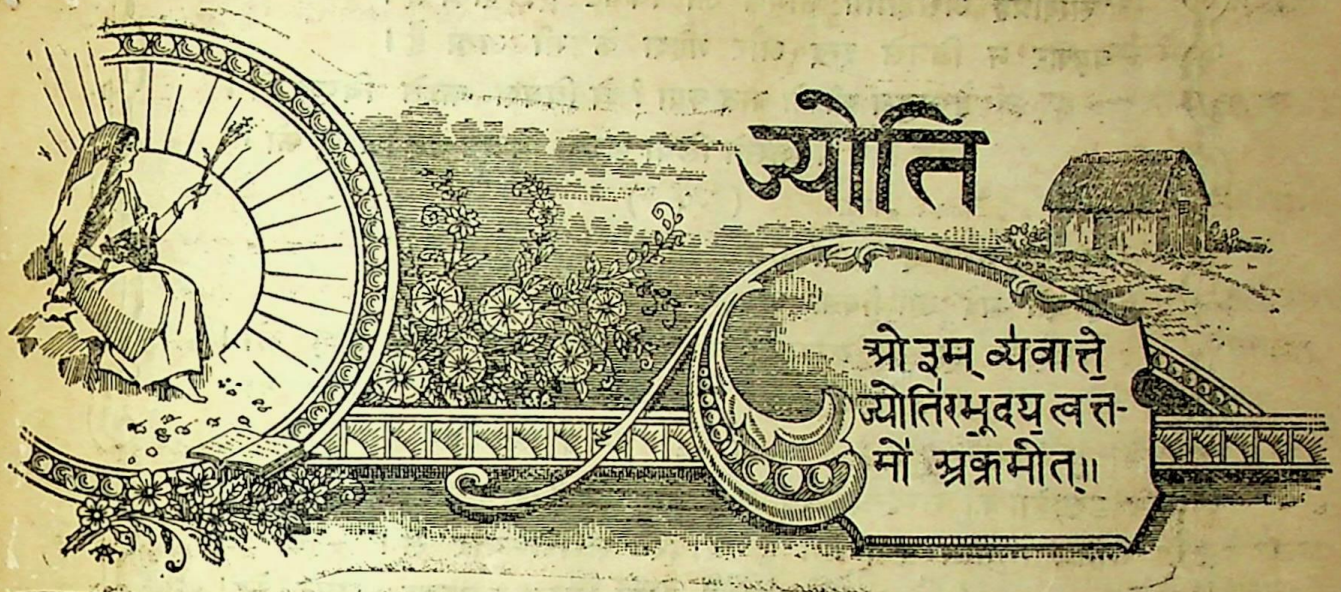

वर्ष १ | पौष १९७७—जनवरी १९२१ | संख्या ९

असहयोग

लेखक—श्रीयुत हरिशङ्कर भट्ट।

(१)

पट्टा दिया स्वाधीनता का जब प्रथम सर्व्वेश ने।
था कह दिया—स्वाधीन रहना सर्व्वदा—अखिलेश ने।
"ले मनुज-कुल में जन्म शुचि, स्वाधीन तुम रहना सभी।
परतंत्र होकर स्वप्न में भी सुख नहीं करना कभी।

(२)

"जातीयता आत्मीयता के शस्त्र तुम धारण करो।
ले हाथ में ये शस्त्र अपने देश का पालन करो।
है सबल निर्बल मनुज बनता जगत में निज कर्म्म से।
हैं जन्म से सब ही बराबर देव-नियमित-धर्म्म से।

(३)

"मैं आज निर्बल को स्वयं देता भयंकर शस्त्र हूँ।
है शक्ति जिनकी रुक नहीं सकती, अधिक मैं क्या कहूँ ?"
अवलोक कर ये शस्त्र ऋषियों ने मनुज के हाथ में।
तत्काल उनकी स्वयं महिमा भी कही सब साथ में।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(४)

"सत्याग्रह असहयोग नामक जो विकट दो शस्त्र हैं।
बढ़कर न जिनसे इन्द्र और महेश के भी अस्त्र हैं।
है मनुज की तो बात क्या ? वे विवश करते विष्णु को।
निज हाथ में जिसने लिया करता विजय वह जिष्णु को।"

(५)

अब आ गया है समय उनके मित्रवर ! उपयोग का।
है खो गई स्वाधीनता अवसर न है सहयोग का।
अतएव सत्याग्रह करो सहयोग से मुख मोड़ लो।
निज हाथ कंगन जो पड़ा परतंत्रता का तोड़ दो।

(६)

बस प्रेम का सम्बन्ध अब सब हो चुका सरकार से।
निभता भला क्या प्रेम है डायर सरीखे यार से।
है प्रेम का सम्बन्ध होता बस परस्पर प्यार से।
बढ़ता भला है क्या कभी यह प्रेम, अत्याचार से ?

(७)

उसकी सदयता का मधुर फल स्वयं हमको मिल गया।
पञ्जाब के जब रक्त-सर में नव कमल यह खिल गया।
स्वाधीनता-कमला स्वयं उस पर दिखाती आज है।
पर बन्धुवर ! तव हाथ ही में आज उसकी लाज है।

(८)

सहकारिता-लतिका को यदि अब तुम न तोड़ोगे कहीं।
तो कमल का नव-नवल भी बस सूख जावेगा वहीं।
स्वाधीनता-कमला मिलेगी फिर नहीं हम को कभी।
सब देश के ऊपर लगेगा रक्त का हा ! तिलक भी।

(९)

अतएव सोचो क्या तुम्हारा इस समय पर धर्म्म है।
निज बन्धु का मरना, कहो, क्या भूलना ही कर्म्म है।
अथवा कहो क्या निज दशा से स्वयं तुम संतुष्ट हो।
जो आज भी पशु-तुल्य-जीवन से बने परितुष्ट हो।

(१०)

"दो छोड़ अब सहयोग करना शीघ्र तुम सरकार से।"
हैं सुन पड़े ये शब्द वीणा राष्ट्र की झंकार से।
स्वाधीनता भी खुद प्रतीक्षा कर रही उस पार है।
जातीयता-सरिता में नौका भी पड़ी अब यार ! है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राष्ट्र निर्म्माण।

लेखक—श्रीयुत घासीराम एम० ए०

भारत भूमि के अन्न जल से पाला पोसा कौन ऐसा मनुष्य होगा जिसका अपनी मातृ भूमि की हीन, दीन और सर्वथा पराधीन दशा को देखकर चित्त विलोडित और हृदय व्यथित न होता हो, जिस के मन में उसके अभ्युत्थान की उत्कट इच्छा उत्पन्न न होती हो? कौन ऐसा होगा जो उसे पराधीनता की कठोर शृङ्खलाओं से मुक्त देखना न चाहता हो? स्वच्छन्दता किसे प्यारी नहीं? स्वतन्त्रता से किसे प्रेम नहीं? मनुष्य तो अलग रहा पशु और पक्षी तक भी परतन्त्र होकर रहना नहीं चाहते। एक पञ्जरावद्ध कीरकी अवस्था को देखो वह अपने कारावास से निकलने के लिए कितना फड़फड़ाता है। स्वतन्त्र रहने की इच्छा प्राणीमात्र में नैसर्गिक है। स्वतन्त्रता हर एक का जन्म सिद्ध स्वत्व है। यह हर एक की निज सम्पत्ति है जिसे वह अपने साथ लेकर उत्पन्न होता है।

भारतीय जन भी यदि स्वतन्त्र रहना चाहते हैं तो कोई ग़ज़ब नहीं ढाते, कोई अनहोनी वा अनहुई बात नहीं करते। ऐसी बात तो वह करते हैं जो भारतवासियों को अपने अधीन रखना चाहते हैं। किसी जाति को दूसरी जाति की स्वाधीनता छीनने का अधिकार नहीं है। और कोई जाति जो ऐसा करती है सभ्य कहलाने के योग्य नहीं है।

जो कुछ हमने ऊपर कहा है वह सिद्धान्त रूप से हमारे शासकों को भी स्वीकृत है। परन्तु जब इन सिद्धान्तों को कार्य्य में परिणत करने को कहा जाता है तब यह सिद्धान्त माननीय नहीं ठहरते। कभी कहा जाता है कि अभी भारतीय इस योग्य नहीं कि देश के शासन के गुरुतर भार को संभाल सकें वह अभी शासन कला से अतीव अनभिज्ञ हैं, वह भिन्न २ दलों में विभक्त हैं यदि उन्हें स्वतन्त्र कर दिया जायगा तो आपस में ही लड़ मरेंगे और देश में अराजकता फैल जायगी और न जाने कितने कारण और बहाने ढूंढे जाते हैं।

अब प्रश्न हमारे सामने यह रहता है कि हम अपने मनोरथ को कैसे सिद्ध करें। सफल मनोरथ होने के बहुत से उपाय बताये जाते हैं। आजकल उन उपायों में से दो उपाय ही जाति के सन्मुख हैं जिनपर घोर आन्दोलन मचा हुआ है। और जिन्होंने भारतवासियों को दो दलों में बांट रक्खा है। बड़ी अड़चन यह है कि दोनों उपाय एक दूसरे के विरुद्ध हैं उन में से यदि एक पूर्व को जाता है तो दूसरा पश्चिम को। एक कहता है कि स्वराज्य प्राप्ति का एक मात्र उपाय यही है कि शासकों के साथ जहांतक बने सहयोग किया जाय और अपने स्वत्वों की मांग के लिए नियमानुकूल आन्दोलन जारी रक्खा जाय। दूसरा कहता है कि सबल निर्बल को कभी भी उसके अधिकार सीधी उंगलियों नहीं दिया करता, निर्बल के लिए सबल को दबाना और उसे अधिकार देने पर बाधित करने का एक ही उपाय है और वह असहयोग है। निर्बल इतना कष्ट सहिष्णु बन जाय कि अनेक अत्या-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चार होने पर भी सबल के साथ किसी बात में भी योग न दे और सबल के कार्य्य मार्ग में अनेक प्रकार की विघ्न बाधाएं उपस्थित करदे जिस से वह एक पक्षाघात रोग पीड़ित मनुष्य के समान कार्य्य करने में असमर्थ बन जाय। सहयोगी सबल के दानदाक्षिण्य पर अधिक भरोसा करता है असहयोगी आत्म सम्मान और अपने स्वत्व पर खड़ा होता है। दोनों के दृष्टि कोण एक दूसरे से पृथक हैं। असहयोगियों ने जिसमार्ग का अवलम्बन किया है वह विघ्नसङ्कुल और कण्टकाकीर्ण है उस पर चलना साधारण मनुष्य का काम नहीं है। हमारी सम्मति में असहयोग का शस्त्र शून्य युद्ध तोप बन्दूक के युद्ध से बहुत कठिन है, यहां अच्छे २ जियाले और मन चले वीरों के छक्के छूटजाते हैं। गोलियों की बौछार को छाती पर लेना अपेक्षाकृत सहज है परन्तु गालियों धिक्कारों और अत्याचारों की वृष्टि में खड़ा रहना दुष्कर है। शस्त्र युद्ध में तुम शत्रु पर आक्रमण कर सकते हो बन्दूक की फ़ैर का उत्तर फ़ैर से दे सकते हो, हत्या के बदले हत्या कर सकते हो परन्तु शस्त्रशून्य युद्ध में तुम गालियों का उत्तर गालियों से नहीं दे सकते, अत्याचार का बदला अत्याचार से नहीं चुका सकते।

दूसरी बात यह है कि भारत के शासक इतने शक्ति सम्पन्न और बलशाली हैं कि उनके सामने असहयोग का आयुध लेकर खड़ा होना हंसी ठट्ठा नहीं है। उनका जाल इतना विस्तृत है कि उससे निकलना साधारण दृष्टि से तो असम्भवसा ही प्रतीत होता है। किस २ वस्तु से असहयोग करोगे? सहयोगी असहयोगियों की अभी से खिल्ली उड़ाते हैं और कहते हैं कि असहयोगियों को चाहिए कि वह सरकारी रेल गाड़ियों में चढ़कर यात्रा न करें, तार, डाक घर से उपयोग न लें, सरकारी रुपया और टिकट आदि न बरतें, सरकारी सड़कों पर न चलें इत्यादि।

ऐसे ही कारणों से कितने ही लोग जो असहयोग को सिद्धान्त रूप से मानते हैं उस पर कार्य्य करने से हिचकते हैं और सहयोग के सरल और निष्कण्टक मार्ग का अवलम्बन करते हैं।

हमारे लेख का उद्देश्य सहयोग और असहयोग में से किसी की निन्दा वा स्तुति करना नहीं है। हमने यह लेख दूसरे ही अभिप्राय से लिखा है जिस में सहयोगी और असहयोगी दोनों ही योग दे सकते हैं, जो शान्तिमय है और भय सङ्कट से शून्य है परन्तु जो राष्ट्रोन्नति और देशाभ्युत्थान के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

देशोन्नति के कार्य्य में अनेक प्रकार से योग दिया जा सकता है। वह इतना विशाल, विस्तृत और तारतम्य पूर्ण है कि उस में धनी और निर्धन, शिक्षित और अशिक्षित, बली और निर्बल, युवा और वृद्ध स्त्री पुरुष भाग ले सकते हैं। हमें अन्य कार्य्यों की न्याईं इस कार्य्य में भी श्रम विभाग के सिद्धान्त को प्रयोग में लाना चाहिए जिस से सब के लिए काम मिल सके और जो जिस काम के योग्य हो उसे वही काम दिया जा सके।

जो लोग युद्ध में भाग लेते हैं उनमें सब ही सिपाही नहीं होते। कोई सेना के लिए मार्ग-मार्जन करते हैं तो कोई हत और आहत योद्धाओं को युद्ध क्षेत्र से उठाकर लेजाते हैं हत की शव क्रिया करते हैं और आहत को चिकित्सालय में पहुंचाते हैं। चिकित्सक और रोगी सेवक और सेविकाएं आहत की दवादारू और मरहम पट्टी करता है। कुछ लोगों का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA.

काम योद्धाओं के लिए भोजन सामग्री और अन्य उपकरणों को एकत्र करना होता है। एक कार्य्यालय युद्ध के व्यय का व्यौरा रखने के लिए होता है। जनरल और नेता लोग सेना सञ्चालन का कार्य्य करते हैं इत्यादि।

इसी प्रकार सम्प्रति स्वराज्य प्राप्ति के लिए जो युद्ध आरम्भ किया गया है वह चाहे सहयोग की प्रणाली पर चलाया जाय वा असहयोग की प्रणाली पर परन्तु यह स्पष्ट है कि उस में सब ही लोग योद्धा नहीं होने चाहिएं और न ऐसा होना चाहिए कि योद्धाओं को उनके ही बलबूते पर छोड़ दिया जाय और उनकी पीठ पर उन्हें सहायता देने वाला कोई न हो। परन्तु हम शोक से देखते हैं कि हम में से जो निकलता है वह सिपाही ही बनकर युद्ध में जाना चाहता है कोई डोली उठाने वा रसद ढोकर लाने का कार्य्य करना नहीं चाहता। और जो कुछ अंग्रेज़ी की अस्तिभवति का ज्ञान रखते हैं वह तो मानो निरे फ़ील्ड मार्शल (सेनापति) ही हैं। वह अपना कार्य्य केवल यही समझते हैं कि अमुक मोर्चा सर करने के लिए अमुक यत्न किया जाय। कितने ही अपना कर्तव्य इतना ही समझते हैं कि सरकार के दोष दर्शन और छिद्रान्वेषण करते रहें।

ऐसी अवस्था में यह कैसे आशा हो सकती है कि युद्ध में हमारा विजय होगा? अब वह तो समय रहा नहीं कि घरों से हल मूसल लेकर निकल पड़े और लीजो २, भागने न पावे की चील पुकार मचाने से विपक्षी डर जाय और मैदान से हट जाय। अब तो समय ही और है। पुराने ढङ्ग के दाव पेचों से अब काम नहीं सरता। अब सफलता का मूलमन्त्र संगठन। संगठन द्वारा शक्ति को केन्द्रित करके उसका सदुव्यय करने से कुछ आशा हो सकती है। हाय हुल्लड़ करना गुल गपाड़ा मचाना वृथा है।

आजकल हम देख रहे हैं कि न तो सहयोगियों में ही संगठन है और न असहयोगियों में ही। जहां देखो वहां ही अपनी २ दफ़ली और अपना २ राग का दृश्य दृष्टिगोचर हो रहा है। एक तंबूरे की तुन २ में मस्त है तो दूसरा सारङ्गी की तना री री में निमग्न है हमें चाहिए कि संघशक्ति को दृढ़ करें और तब किसी अन्य काम के करने का नाम लें। नहीं तो परिणाम यही होगा कि बाहर वाले खा जावेंगे और घर के गीत गाते ही रह जावेंगे।

सब से पहिली बात तो यह है कि हम में आबाल वृद्ध कोई भी ऐसा न रहना चाहिए जो देशोत्थान के पवित्र कार्य्य में भरसक योग न देता हो अर्थात् हरएक के लिए कुछ न कुछ कार्य नियत होना चाहिए और जिसे जो कार्य सौंपा जाय वह उसे करने पर उद्यत रहे उस में मीन मेष न निकाले। काम भी हरएक को उसकी योग्यता और शक्ति के अनुसार देना चाहिए यह न हो कि मक्खी पर भेली लाद दी जाय या ऊंट पर जीरे का एक दाना धर दिया जाय।

हम पहिले ही कह चुके हैं कि राष्ट्रोन्नति का कार्य्य क्षेत्र बहुत ही विस्तृत है और उसमें हर स्त्री पुरुष के लिए कुछ न कुछ काम निकल सकता है। उदाहरण के लिए शिक्षा विस्तार के काम को ही लेलीजिए। यदि जाति इसे अपने हाथ में लेले तो बे पढ़े लिखे लोगों की संख्या देश में बहुत शीघ्र कम हो सकती है। हमें न बड़े भवनों की आवश्यकता है न चमकीले भड़कीले सामान की। हर नगर में एक संगठन बनाकर अवैतनिक अध्यापकों द्वारा सहस्रों नर नारियों को बिना बहुतसा धनव्यय

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

किये हुए लिखाया पढ़ाया जा सकता है। जो लोग अन्य काम नहीं कर सकते वा करना नहीं चाहते वह इस कार्य्य का भार अपने ऊपर लेलें तो देशका कितना कल्याण हो। शिक्षा केवल यहां तक ही परिमित रक्खी जाय कि पढ़ने वाला भाषा लिखने पढ़ने योग्य हो जाय। यदि सारे देश में ऐसे संगठन स्थापित हो जाय और देश हित रखने वाले नर नारी इसमें उत्साह और परिश्रम से योग देवें तो छः महीने में ही लिखे पढ़ों की संख्या दुगनी हो सकती है। जो लोग इस कार्य्य में अपना समय देंगे वह उन लोगों से जो पोलिटिकल हलचल में भाग लेते हैं देशका कुछ कम कल्याण नहीं करेंगे।

स्वदेशी का कैसा महत्वपूर्ण और आवश्यक प्रश्न है। कहने को बहुत कुछ कहा जा चुका है अब तो कार्य्य करने का युग है। इस के लिए भी हर नगर में एक पृथक संगठन हो जिसमें सम्मिलित होने वाले स्वयं भी स्वदेशी व्रतका पालन करें और दूसरों से पालन करायें। समाज के नेता यदि स्वयं स्वदेश निर्मित वस्तुओं का प्रयोग करने लग जांय तो इतरजन उन का सब अपने आप ही अनुकरण करने लगेंगे। इस संगठन के कई विभाग हो सकते हैं जैसे (१) जो लोगों को यह बतलाए कि देश में कौन वस्तु कहां बनती है और कितने मूल्य पर प्राप्त हो सकती है (२) जो अपने नगर और ज़िले की छोटी २ शिल्प कला को एक नियम के भीतर लाने का यत्न करे, कारीगरों को कच्चा माल सस्ते से सस्ते दामों पर मंगाने का और उनकी बनाई हुई वस्तुओं के लिए मंडी उत्पन्न करने का प्रबंध कर अच्छी २ शिल्पकला की शिक्षा के लिए स्कूल खोलें, यन्त्रादि के उन्नत करने का प्रयत्न करें इत्यादि; (३) जो को-आपरेटिव प्रणाली का प्रचार करें। इसी प्रकार अन्य कई विभाग हो सकते हैं।

एक संगठन ऐसा हो सकता है जो नगरों और ग्रामों में जाकर लोगों को मुक़द्दमे बाज़ी की लत छुड़वाने का यत्न करे, जगह २ पंचायतें स्थापित करे जो अपने नगर और ग्राम के झगड़े निबटाकर लोगों को झूठी गवाही देने दिलाने, रुपया बरबाद करने आदि से रोकें।

इस प्रकार अनेक संगठन हो सकते हैं जो अपने ऊपर एक २ काम ले सकते हैं और देश का महान हित साधित कर सकते हैं। इन कामों को छोटा न समझना चाहिए। वास्तव में यही ठोस काम हैं जिनसे लोगों का चरित्र बन सकता है। उच्च चरित्र के बिना कोई जाति भी नहीं उठ सकती। केवल समाचार पत्रों में गर्म २ लेख लिखने वा चटपटे व्याख्यान देने से कुछ नहीं बनेगा। यह ऐसे काम हैं जो सहयोगी और असहयोगी दोनों ही कर सकते हैं। इनके करने में किसी शोर शराबे की आवश्यकता नहीं, किसी को बुरा भला कहने की आवश्यकता नहीं, कुछ भय नहीं कुछ संकट नहीं। परन्तु कार्य्य हैं ऐसे जो जातीयता के भवन की नीव का काम देंगे जिनसे देश उठेगा, चरित्र संशोधित होगा, बलिदान का सामर्थ्य आयगा; जातीयता और निर्भीकता के भावों का उद्भव होगा। फिर अन्य कठिनतर कार्य्यों का करना सुगम हो जायगा और राजनैतिक आन्दोलनों में अग्रसर होने की जनसाधारण में योग्यता आ जायगी।

हमारे तुच्छ विचार में जब तक इस ढंग पर कार्य्य न होगा तब तक न सहयोगी ही कुछ कर सकेंगे और न असहयोगी ही कुछ बना सकेंगे और थोड़े दिन के पश्चात् अपनी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

आशा और अभिलाषाओं के शव पर आंसू बहाकर भग्नोद्यम, निरुत्साह और हताश हो कर बैठ रहेंगे।

इन कार्य्यों से वर्त्तमान राजनैतिक आन्दोलनों की गति में कोई बाधा भी नहीं पड़ेगी, वह ज्यों के त्यों चलते रह सकते हैं। हम असहयोगियों से असहयोग और सहयोगियों से सहयोग छोड़ने को नहीं कहते। दोनों अपने २ योग साधन में तत्पर रहें हमें किसी से कुछ झगड़ा नहीं है। हम तो केवल यही कहते हैं कि लोगों में संयम उत्पन्न करो, आपस की ईर्ष्या, द्वेष, मत्सरता, कलह, दुर्व्यवहार, कदाचार छोड़कर देश हित के लिए मिलकर काम करना सीखो, जो व्रत लो उसे भय, शङ्का, लज्जा से मुक्त होकर दृढ़ता से पूरा करो, शान्ति प्रिय परन्तु अन्याय असहिष्णु बनो, प्राणपण से भी आत्मसम्मान और जाति गौरव की रक्षा करो, श्रमशील और उद्योगी बनो, योगी तुम बन नहीं सकते और न कोई तुम्हें ऐसा उपदेश करता है परन्तु रोगी तो मत बनो, शरीरों को पुष्ट और आत्मा को बलवान बनाओ। हम और तुम सभी भोगी बनना चाहते हैं परन्तु याद रक्खो इन्द्रियाराम पुरुष, कुटिल और कलुषित प्रकृति का मनुष्य भोगी भी नहीं बन सकता इसके लिए भी तप, संयम, उद्यम परिश्रमादि अपेक्षित हैं।

ईश विनय।

ले० श्रीयुत गया प्रसाद (श्री हरि)

हे अज अनादि अनन्त अनुपम अखिल लोकपते प्रभो-
विश्वेश विबुधाराध्य वेदातीत विद्यानिधि विभो।
कल्यान्तकर करुणेश कौतुक-कान्त कामद श्रीहरे-
प्रिय पार कर दो पाप पारावार में हम हैं परे॥ १॥
करुणेश? अब हम क्या कहें, कुछ भी कहा जाता नहीं-
हे दीन दुख हारिन् हरे? यह दुख सहा जाता नहीं।
मुकुलित युगल कर से विभो? विनती यही है आपसे-
ले लीजिये निज अङ्क में कर दूर भव सन्ताप से॥ २॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

गंगा-जमनी

नलनी।

[लि० श्रीयुत पागल]

(५)

"नारी नाहीं जानत बैदा निपट अनारी"।

र के आगे भूत भागे मगर नलनी को मार का डर और असर कहां ? मारा पीटा डांटा डपटा सब कुछ किया फिर भी नलनी को जब देखो तब आंखों के सामने मौजूद। कभी नौकरों से उलझती, कभी राह चलने वालों से लड़ती। कभी अपने छोटे भाई को मारती कभी आकर पिता की मेज़ पर किताबें इधर उधर कर देती। इन्ही बातों में मैं कोई न कोई बहाना निकाल कर उसे ठोंक दिया करता था।

एक दिन मुझे यकायक ख्याल आया कि नलनी का चादर जो मैंने जलाने के लिये रख लिया था शायद यह उसी को लेने के लिये बार बार आया करती है। इस लिये मैंने सोचा कि अगर यह उसे लौटा दूं तो रोज़ रोज़ की मारपीट के झगड़े से छुट्टी पा जाऊं। मैं चादर का जलाना एकदम भूल गया था। क्योंकि नलनी ने न कभी उसे मांगा और न मैंने उसकी कोई खोज की।

मैं इसी सोच विचार में घर के भीतर अकेला बैठा हुआ था कि इतने में नलनी अपने छोटे भाई को गोद में लिये हुए आ पड़ी। मैं चुपचाप उठा और उसका चादर ढूंढ कर उसे दे दिया।

मेरी इस कारवाई पर वह मुस्करा पड़ी और उसकी शोख़ियां बढ़ चलीं। शायद वह समझी कि इसका जंगलीपन दूर हुआ और अब यह आदमी होने लगा। मगर मैं और भी चिढ़ उठा। वह चादर लेकर चली गई। थोड़ी देर के बाद फिर पहुंची। अब मुझ से न रहा गया। मैंने झुंझला कर कहा।

"अब तू यहां क्या करने आई ?"

नलनी—"हम खेलने आया है।"

मैं—"तो यहां कौन बैठा है तेरे साथ खेलने के लिये।"

नलनी—"हम अपने साथ खेलेगा।"

मैं—"जब अपने ही साथ खेलना है तो क्या तेरे घर पर जगह नहीं है।"

नलनी—"है। किन्तु वहां खेलने में जी नहीं लगता।"

मैं—"अच्छा अब ज्यादा पाजीपन न कीजिये। चुपचाप यहां से तशरीफ़ ले जाइये।

नलनी—अभी नहीं जायेगा।"

मैं—"क्यों ?"

नलनी—"यहां से जाने का जी नहीं चाहता।"

मैं—"बिना मार खाये तुम्हारा जाने का कभी जी नहीं चाहता क्यों ?

नलनी—"हिन्दुस्तानी लोग बड़ा जंगली होता है।"

मैं—"अब मैं भी यही सोचता हूं। अगर तू जंगली न होती तो मेरे एक बार कहने का तुझ पर असर न होता ?"

नलनी—"हम हिन्दुस्तानी नहीं है।"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मैं—"तब फिर कौन विलायत की जानवर है तू।"

नलनी—"हम बंगाली है।"

मैं—"तो जंगली मैं हूं क्यों।"

नलनी—"और नहीं तो क्या।"

मैं—"पाजी कहीं की खड़ी तो रह ज़रा।"

मैं मारने के लिये उठा। वह अपने भाई को वहीं रोता हुआ छोड़ कर भाग गई। मैंने उस बच्चे को उठाकर हाते के बाहर सड़क पर छोड़ दिया और दरवाज़ा बन्द कर अन्दर निहायत अफ़सोस में बैठा कि क्या कहूं भाग गई। मार न पाया।

(६)

"एक दिन मान ही जावेंगे हमारा कहना।
तुम कहे जाओ यही तेरी हक़ीक़त है॥"

बेशक मैं ही जंगली था। मैं क्या जानूं प्रेम किस चिड़िया का नाम है? लड़कियों के साथ मैं खेलना ज़रूर चाहता था। मगर इसलिये नहीं कि वे मुझे प्यारी मालूम होती थीं। बल्कि इसलिये कि वे मुझ से कमज़ोर हुआ करती थीं और उनके साथ मारपीट करने में कभी हारने या खुद पिट जाने का डर नहीं रहता था।

लड़कपन में कई लड़कियों के साथ खेला। मगर नलनी सभों से न्यारी थी। उसकी बात ही और थी। वह उस प्रदेश की रहने वाली थी जहां की मिट्टी में प्रेम, हवा में प्रेम, पानी में प्रेम है। जहां के बच्चे पैदा होते ही प्रेम मन्त्र ग्रहण करते है। जहां के लिये यह भही कहावत मशहूर है कि होशियार रहना क्योंकि वहां औरतें जादू से आदमियों को भेड़ बना देती है। वह जादू नहीं प्रेम है। भेड़ बनना नहीं बल्कि प्रेम जाल में फंस कर बेबस होजाना है। जहां नाजुक कलाओं की चर्चा घर घर फैली हुई है। जहां के साहित्य का सब से बोलबाला है। क्योंकि उसके रचने वाले प्रेम परीक्षा दिये हुए होते हैं। जबतक लेखक प्रेमरस में अच्छी तरह पगे हुए नहीं होते, कोमल भावों को पूरे तरह अनुभव किये हुए नहीं होते तबतक वह भावों के तरङ्गों में पाठकों को तैराना क्या जानें? कोई भी भाव की ठीक ठीक थाह अपने लेखनी से क्योंकर पावें? सभी भावों का पूरा पूरा अनुभव प्रेम ही द्वारा होजाता है। क्योंकि जहां प्रेम है तहां डाह भी है। बैर भी है, क्रोध भी है, डर भी है, जान देने की हरदम तैयारी भी है, सभी बातें हैं।

और मालूम होता है इन्हीं सब बातों के सिखलाने के इरादे से मुझे प्रेम परीक्षा के लिये तैयार करने के निमित नलनी मेरी गुरु थी। गुरु तो स्वाभाविक दिली, मगर कमसिन और नातजुरबेकार। क्योंकि इतना कठिन पाठ सीखने के लिये उस समय मेरे पास न दिलही था और न दिमाग़। इसलिये दो वर्ष तक उसकी शिक्षाओं का कुछ भी असर मुझ-पर न हुआ। मारना पीटना अलबत्ता कम होगया। क्योंकि इस बीच में मेरे घर वाले सभी आकर पिता के साथ रहने लगे। मैं ही अकेला स्कूल की पढ़ाई के कारण अन्य सम्बन्धियों के साथ घर पर रहता था और साथ में सिर्फ़ दो बार गर्मी और बड़े दिन की छुट्टियों में पिता के पास आता था। और तब वहां सब लोगों के रहने की वजह से नलनी को ठोकने का मौका नहीं पाता था। मगर इसकी कसर खेल में निकाल लिया करता था। क्योंकि मैं चोर अदबदा कर उसी को बनाता था। और यों उसे खूब हैरान करता था। जब कभी वह झूले के पास आकर खड़ी होती थी तब मैं तख्ता निकाल कर खाली रस्सियों पर उसे बैठता था। और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation 2021

इस ज़ोर से उसे झुला दिया करता था कि वह डालियों से भी ऊंची चली जाती थी। मगर थी बड़ी दुबली पतली और निडर। इस लिए कभी वह उसपर से गिरी नहीं। इसका मुझे उस वक्त बड़ा अफ़सोस था।

अन्त में जब मैं सोलह बरस का हुआ और इन्ट्रेंस का इम्तहान देकर पिता के यहां गया तब गुरु का पाठ समझ में आकर दिल में अनोखा मजा देने लगा। और तब मैं ने भी गुरु की गुरुवाई मान कर गुरु के आगे माथा नवा दिया।

(७)

"करो शौक से मुहब्बत मगर एक बात सुनलो।
किसी और काम के फिर न रहोगे दिल लगाकर"

लगातार पानी की धार से पत्थर ऐसी सख्त चीज़ पर तो निशान बन ही जाता है। शेर ऐसे खूनी जानवर प्यार और चुचकार से वश में आही जाते है। फिर नलनी का प्रेम जादू जो मेरे दिल पर चल गया तो कौन सी ताज्जुब की बात है? प्रेम के ढंग ही अनोखे और नाना प्रकार के हैं। कोई ठीक कह नहीं सकता कि यह किस ख़ास तरह से दिल पर हमला करता है। कभी दृष्टि मिलते ही दोनो ओर से इसके पुष्प वाण चल जाते हैं। कभी यह मुद्दतों तक अपने शिकार को लुभा लुभा कर धीरे धीरे अपने फन्दे में ला फंसाता है। कभी यह बरसों चुपचाप ताक लगाए बैठा रहता है और मौक़ा पाते ही किसी ख़ास बात या अदा पर यकायक अपने असामी को पकड़ लेता है। फिर वह बेचारा इस रोग में पड़कर सोचने लगता है कि अरे! कल जिससे मैं सीधे मुंह बात तक नहीं करता था आज यकायक मुझे क्या होगया कि उसे मैं तन मन धन से पूजने लगा।

जब मैं इलाहाबाद इन्ट्रेन्स का इम्तहान देने गया था। मैं बेहद बीमार था। पिता ने उस साल इम्तहान देने से मुझे मना किया था। तौ भी हेड मास्टर और अन्य मास्टरों ने मुझे ज़बरदस्ती इम्तहान में भेज दिया। क्योंकि स्कूल की नेकनामी का दारमदार उस वक्त मुझी पर समझा जाता था। कई बरसों से कोई लड़का प्रथम श्रेणी में मेरे स्कूल से नहीं पास हुआ था। और उस साल हेड मास्टर को उम्मीद थी कि यही अकेला प्रथम श्रेणी में पास होने वाला है। क्योंकि जब मैं नवे दर्जे में था तभी इन्सपेकटर ने मेरे जवाबों से खुश होकर कहा था कि यह इन्ट्रेन्स के लड़कों से भी लायक़ है और यही प्रथम श्रेणी में पास होगा। नवे के इम्तहान में भी मेरे नम्बर इतने आये थे कि कई बरसों तक उतने नम्बर किसी लड़के ने नहीं प्राप्त किये थे। इसी लिये मुझ पर यह मुसीबत पड़ी कि मेरा ढांचा लाद फान्द कर हेड मास्टर ने ज़िद करके इलाहाबाद भिजवा दिया।

पहले ही दिन इम्तहान में एक घन्टे बाद जूड़ी आ गई। तौ भी जब तक मैं लिख सका लिखता ही गया। मगर जब मजबूर हो गया तब कापी रखदी और बाहर आकर धूप में लेट गया। उसके दो घन्टे बाद मेरा साथी निकला और मुझे इक्के पर सवार कराकर डेरे पर ले आया। दूसरे दिन छोड़कर फिर तीसरे दिन आध घन्टे के बाद जूड़ी आ गई। उस दिन मैं दो ही सवाल कर सका। तब मैं ने डेरे पर सहपाठी से कहा कि मुझे पिता के पास भिजवा दो। मैं पास अब किसी तरह से नहीं हो सकता। यहां मर अलबत्ता जाऊंगा। वह मुझे एक बड़े डाक्टर साहब के पास ले गया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

उन्होंने मुझे ऐसी दवा दी कि जूड़ी का आना बन्द हो गया। मगर यह ताकीद करदी थी कि इम्तहान के बाद फिर दवा करना वरना अच्छे नहीं होंगे। क्योंकि बुख़ार ने एक दम साथ नहीं छोड़ा था।

इम्तहान से छुट्टी पाते ही कैसी दवा और कहां की दवा सीधे पिता के पास रवाना हुआ। इस बीमारी से मेरे मिज़ाज़ की तेज़ी और गर्मी सुस्त और ठंडी पड़ गई। खेल कूद दौड़ धूप का शौक़ बिल्कुल जाता रहा। जहां बैठ गया वहीं घण्टों बैठा रहता था। एक तो बीमारी से वैसे ही कमज़ोर हो रहा था दूसरे फ़ेल हो जाने के ख्याल से हरवक्त मुरदनी छाई रहती थी।

नलनी अब चौदह बरस की हुई। अब वह दुबली पतली नलनी नहीं रही बल्कि नव-जवानी के रस में वह कमल की तरह खिल निकली और उस पर प्रेम की दिव्य प्रभा और भी ग़ज़ब ढारही थी। और दूसरे बंगाल का पानी लड़कियों की सुन्दरता पर इस उमर में जो मोहनी मन्त्र फूंक देता है उसका जादू बस देखा ही जासकता है। लेखनी सर पटक के मर जाए लेकिन ब्यान नहीं कर सकती।

नलनी अब मेरे मकान पर नहीं आती थी। सड़क पर नहीं दौड़ती थी। नल पर नहीं नहाती थी। बल्कि जब मैं सड़क पर रहता था तब वह अपने दरवाज़े पर खड़ी रहती थी। और जब मैं अपने बरामदे में आकर आराम कुरसी पर लेट जाता था तब वह अपनी खिड़की पर बैठ जाती थी। क्योंकि वहां से मेरे बरामदे का सामना पड़ता था।

मैं मारे सुस्ती के दिन २ भर बैठा रहता था और जब आंख उठाता था तब नलनी को भी बराबर उसी तरह बैठी हुई देखा करता था। 'मेसमेरिज्म' और 'हिपनाटिज्म' में आंख ही लड़ाकर लोग बेहोश किये जाते हैं उनकी आत्माओं को वश में करके उनसे स्वेच्छापूर्वक काम कराया जाता है। इसी तरह मीठी निगाहें भी अपना असर दिखाने में नहीं चूकतीं। दिल के कोमल भाव उभार कर दिल को अपनी तरफ़ खींच लेती हैं। 'मेस्मेरिज़्म' में व्यक्ति जितना कमज़ोर होता है उतनी ही जल्दी उस पर निगाह का असर पड़ता है। बच्चों ही को ज्यादे-तर नज़र लगती है बड़ों को नहीं। और प्रेम में दिल जितना ही कोमल होता है उतनी ही आसानी से यह इसके पञ्जे में आजाता है। मैं और मेरा दिल योंही कमज़ोर होरहे थे। और उस पर नलनी की प्यार की नज़र। फिर क्या था। इस देखा देखी में नलनी की मोहनी मूर्ति मेरे दिल पर खिचने लगी। जो चीज़ दिन भर आंखों के सामने रहे वह वहां से हट जाने पर भी देखने वाले के ख्याल में बड़ी देर तक वैसी ही बनी रहती है। और खाली दिमाग़ में इसकी तस्वीर और भी देर तक खिंची रहती है। वैसे ही रात को भी नलनी मेरे ध्यान में रहने लगी यहां तक कि सोते उठते बैठते उसी की सूरत आंखों में फिरने लगी।

जब मैं शाम को सड़क पर टहलता था तो वह अदबदा कर अपने मकान से निकल पड़ती थी। और मेरे पास से गुजर कर अपने रिश्ते-दार के घर आया जाया करती थी। मगर न उसको छेड़ने की अब मेरी हिम्मत पड़ती थी। और न वह मुझे टोकती थी। एक दिन चांदनी रात को वह इस तरह से मेरी नजदीक से अठलाकर गुज़री कि उसकी साड़ी का किनारा मेरे हाथ में लग गया। वह झिझककर सिमटी मुड़कर देखा, लजाकर मुस्कुराई और बलखाकर चली गई। बस गज़ब हो गया। न जाने उस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by 33 Foundation USA

साड़ी में कौनसी बिजली थी कि मेरे सारे बदन में एक ज़नज़नाहट सी दौड़ गई। कलेजा धक से होगया। दिल धड़कने लगा। हवास गुम होगये। बदन में कपकपी जारी होगई। और मैं वहीं लड़खड़ा कर बैठ गया।

"तीर लगे तरवार लगे प लगे जनि काहू से काहू की आंखे।"

बदन में कपकपी शुरू होते ही मेरी पुरानी बीमारी उभर उठी। और मुझे पहिले की तरह जूड़ी आगई। मैं किसी न किसी सूरत से उठ कर गिरता पड़ता घर आया और पलंग पर गिर पड़ा। घर भरके लेहाफ कम्बल सब ओढ़ा दिये गये। मगर मेरी जूड़ी न गई। बैठक से सब लोग दौड़ पड़े। पड़ोस के सभी भले मानुस आए। डाक्टर साहब बुलाये गये। थरमामेटर लगाया गया। मालूम हुआ कि बोखार १०५ ड्रग्री का चढ़ा है। और कई दिन तक योंहीं चढ़ा रहा।

एक तो बोखार की बेचैनी। दूसरे नलनी के लिये बेचैनी। तीसरे नलनी की बेचैनी के ख्याल से बेचैनी। इन बेचैनियों से मेरी हालत दिनों दिन बिगड़ती गई। नलनी को देखने की लालसा हरदम सता रही थी। उसके देखे बिना आंखे तरस रही थीं दिल तड़प रहा था।

अब अपनी व्यथा सोचकर नलनी के दुख का पता चलने लगा। मैं सोचता था कि नलनी भी मेरे लिये मेरी तरह तड़पती होगी। मेरी राह देखती होगी। किस तरह उसे बतलाऊं कि बीमार हूं। बाहर नहीं आ सकता। ताकि वह मेरा आसरा न निहारे। फिर सोचता था कि क्या नलनी सचमुच मुझे चाहती है। अगर नहीं चाहती तो दिन दिन भर खड़ी क्यों रहती है। अगर चाहती है तो मुझ से बोलती क्यों नहीं? मेरे मकान पर क्यों नहीं आती? दिल कहता था कि ज़रूर चाहती है। क्योंकि अहमद से जो मेरी तरह छुट्टियों में अपने पिता के पास आया करता था जो मेरे साथ रातोदिन खेला करता था वह सीधे मुंह बात नहीं करती थी। हालांकि वह बहुत खूबसूरत था और नलनी से बहुत भली तरह पेश आता था। तारिणी बंगाली था। अहमद से भी खूबसूरत था। नलनी के घर आता जाता था तौ भी वह उसकी बातों का जवाब हमेशा झिड़कियों से दिया करती थी। मगर मेरी मार गाली पर भी नलनी ने सिवाय मुस्कराकर ललचाई हुई नज़रों से देखने के मुझ पर कभी कड़ी निगाह तक नहीं डाली। बात का जवाब देना कैसा? यही सब बातें अब मेरे हृदय को बेधने लगीं। और मैं अपने कुव्योहारों पर पछताने लगा। और जितना ही पछताता था उतना ही ज्यादा मैं उसको चाहने लगा। नलनी की सहेलियों में कई नलनी से भी खूबसूरत थीं। उनकी सुन्दरतायें उनके हावभाव, उनकी मीठी मीठी छेड़खानियां अकसर मेरे चित्त को डगमगा दिया करती थीं। एक प्रकार की अभिलाषा मेरे हृदय में उत्पन्न कर देती थीं। मगर नलनी की नज़रों में कुछ और ही बात थी। जो अब वह उसको मेरी निगाहों में सभों से सुन्दर बनाये हुए थी। उसके अटल अनुराग ने मेरी तमाम झूंठी अभिलाषाओं को दूर भगाकर दिल में शुद्ध प्रेम की आंच लगा दी।

वही नलनी है जिसको मैं इतना मारता था। और वही मैं हूं कि उससे बोलने तक की मेरी हिम्मत नहीं पड़ती। उसके सामने मेरी ज़बान बन्द हो जाती है। क्यों? किसी प्रेमी कि दिल से पूछो। अब मेरी हिम्मत क्या हुई। लापरवाही कहां गई? मुझ में ऐसी काया पलट हो गई? ऐसा विकार पैदा हो गया?

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अय प्रेम यह सब तेरे ही आगमन की निशानी है। यों चाहे हम किसी से दिन में सैकड़ों बार मिलते हों, हंसते हों, बोलते हों। कहीं कुछ भी नहीं मालूम होता। मगर कम्बख्त प्रेम का साया पड़ते ही खुद अपना ही दिल चोर हो जाता है। फिर झिझक परहेज़ डर घबड़ाहट सब एकबारगी दिल में घुस पड़ते हैं। जी मिलने को बहुत चाहता है मगर मिला नहीं जाता। पैर सौ सौ मन के हो जाते हैं। सामने जाते कलेजा कांपता है। पलकें ऐसी भारी हो जाती हैं कि नज़र उठाये नहीं उठतीं। सैकड़ों उपाय करने पर भी मुंह से बोल नहीं फूटता। और इसी तरह जहां वियोग होता भी न हो वहां प्रेम तू खुद वियोग पैदा कर लेता है। तू अपने को जितना ही छिपाता है उतना ही अपने को प्रकट कर देता है। और इन्हीं सब बातों से जहां बदनामी का डर भी न हो वहां तू अपने आप अपने ऊपर बदनामी ओढ़ लेता है। उफ़! तू बड़ा अनर्थकारी है प्रेम। ईश्वर जिसे मिटाये वह तुझे अपने हृदय में जगह दे जिसे तड़प तड़पकर बे मौत मरना हो वह तुझ से लगावट करे।

मैं इसी तरह के ख्यालात में परेशान हो कर प्रेम को कोस रहा था कि ऐन दोपहर को नलनी की आवाज़ नल पर सुनाई दी। मैं बाहर जाने के लिये छटपटाने लगा, मगर उठ नहीं पाता था। क्या करता? कलेजे पर पत्थर रखे लेटा ही रहा। थोड़ी देर में मेरी खिड़की पर खटपट की आवाज़ सुनाई दी। मैं ने ग़ौर से देखा तो मालूम हुआ कि दरारों से कोई झांक रहा है। मैं समझ गया कि नलनी है। चेहरा मारे खुशी के खिल गया। मगर कमरे में सभी बैठे थे। इसलिये न कुछ बोल सका और न खिड़की ही खुलवा सका। फिर ख्याल आया कि नलनी धूप में पत्थर पर खड़ी है। क्योंकि मेरे मकान के चारों तरफ़ पत्थर जड़े हुए थे जो दोपहर को गर्म तवे की तरह जलते हैं। नलनी के पैरों में छाले पड़ जायेंगे। बस मैं घबड़ा उठा। नलनी को पास पाकर खुशी तो बेहद हुई मगर उसकी तकलीफ़ का ख्याल करके यह चाहने लगा कि नलनी चली जाती तो अच्छा था। यह सोचकर मैंने करवट लेली लेहाफ ओढ़ लिया तो भी नलनी न हटी, तब मैंने सब से कहा कि दूसरे कमरे में मुझे लेटाओ यहां जी घबड़ाता है। वहां से मैं हटा दिया गया। नलनी दूसरी खिड़की पर पहुंची मगर खिड़की की सिटकनी बन्द न थी। नलनी ने धीरे से खिड़की को थोड़ा खोलना चाहा। मगर धक्का जोर का लग गया। खिड़की खुल गई। शीशियां टूट गईं। और सारा भण्डा फूट गया, क्योंकि सभों ने नलनी को देख लिया।

स्वागत।

स्वागत है प्यारे पथ-दर्शक! स्वागत है भारत के लाल।
आओ, अपनी दिव्य कान्ति से फैलाओ नव ज्योति विशाल॥
नव जीवन फैलाने वाले;
मुक्ति-मार्ग बतलाने वाले।
शुचि-सुख-सुधा बहाने वाले;
पर-हित कष्ट उठाने वाले॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

माता के मन मोहन, मानव-मन-मानस के मञ्जु-मराल।
स्वागत है प्यारे पथ-दर्शक! स्वागत है भारत के लाल॥
निबलों में बल भरने वाले;
दीनों का दुख हरने वाले।
कर्म-यज्ञ के करने वाले;
नित स्वच्छन्द विचरने वाले॥
असहयोग-गोवर्धन-धारण कर बृज भू का करो सम्हाल।
स्वागत है प्यारे पथ-दर्शक! स्वागत है भारत के लाल॥
नीति निपुण दृढ़ निश्चल नेता;
विज्ञानी वर वीर विजेता।
राष्ट्रीय नौका के खेता;
हिन्दू मुसलिम प्रेम-प्रणेता॥
दुःशासन का दर्प दमन कर, हो पाञ्चाली का प्रति-पाल।
स्वागत है प्यारे पथ-दर्शक! स्वागत है भारत के लाल॥
कर्म, बचन, मन से दृढ़ त्यागी;
मक्का-मथुरा के अनुरागी।
अचल अभय निष्काम विरागी;
गौरव-मय अनन्त यश भागी॥
दिलवाओ भूखे भारत को शीघ्र सरस स्वातन्त्र्य-रसाल।
स्वागत है प्यारे पथ-दर्शक! स्वागत है भारत के लाल॥
करते हैं नित ध्यान तुम्हारा;
रखते हैं सम्मान तुम्हारा।
कैसे हो गुण-गान तुम्हारा;
है हमको अभिमान तुम्हारा॥
अली बान्धवों के सुयोग से उन्नत हो जननी का भाल।
स्वागत है प्यारे पथ-दर्शक! स्वागत है भारत के लाल॥
सत्याग्रह-स्वदेश व्रतधारी;
कूट-नीति हारी बनवारी।
जय जय नन्दन-विपिन विहारी;
भव-भय-बन्धन मुक्त मुरारी॥
पहनाते हैं प्रभो प्रेम से, लो यह हृदय-सुमन की माल।
स्वागत है प्यारे पद-दर्शक! स्वागत है भारत के लाल॥

"एक राष्ट्रीय आत्मा"।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पुस्तकालय गुरुकुल कांगड़ी

यज्ञ में पशु हिंसा।

ले० श्रीयुत विश्वनाथ विद्यालंकार।

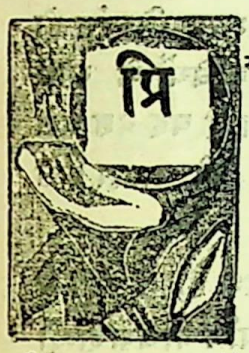

प्रिय पाठक! यज्ञ कैसा उत्तम कर्म है। अथर्व वेद १०म काण्ड ७ म० सूक्त में परमात्मा की महत्ता और दुर्ज्ञेयता के वर्णन क्रम में लिखा है "यज्ञोयत्र पराक्रान्त" अर्थात् जिस परमात्मा में यज्ञ पराक्रम कर वर्त्तमान है। इस प्रकार सब प्राणियों के मातृतुल्य परमात्मा में यज्ञ का निवास है, यह वर्णन इस बात की स्पष्ट साक्षी है कि यज्ञ अवश्य उत्तम तथा उपकार का कर्म है।

यज्ञ का अर्थ यज्ञ शब्द यज् धातु से बना है जिस के तीन अर्थ हैं (१) देव पूजा (२) सङ्गति करण (३) दान। इन अर्थों में कहीं भी हिंसा का भाव प्रतीत नहीं होता।

प्राचीन वेद-भाष्य कार तौ भी सायणाचार्य, उव्वट, महीधरादि वेद व्याख्याताओं ने यज्ञ के भाव को पशु हिंसा पङ्क से दूषित कर दिया है। वेदों में नर, अश्व, गौ बकरा तथा अन्य सैंकड़ों पशुओं को मार कर यज्ञ में आहुति देने तथा इस के अवशिष्ट भाग को खाने का विधान है—यह भाव इन के भाष्यों में स्थान २ पर प्रतीत होता है। "आम्नाय वचनाद् हिंसा" इस वाक्य के आधार पर हमारे पौराणिक भाईयों ने दीन तथा दयनीय पशु पक्षियों को मार यज्ञ में डालने को वैदिक आज्ञा बतला महाअनर्थ किया है।

कौत्स का आक्षेप वास्तव में निरुक्त में "स्वोधत! मैनं हिंसी रित्याहहिंसन्" यह कौत्स का कर्म काण्डियों पर आक्षेप बहुत विचार का प्रतीत होता है। व्यक्ति जो रोगी को कहता है कि पानी मत पीओ और साथ ही पानी का प्याला भर रोगी के हाथ में दे देता है, जैसे वह उन्मत्त कोटि का गिना जायगा, इसी प्रकार कर्म काण्डियों की यह उक्ति कि "तलवार! इसे हनन न कर और साथ ही हनन करना"—उन्हें अवश्य उन्मत्त कोटि में शामिल करती है।

सार्व भौम-प्रेम (क) विचित्र बात तो यह है कि यही भाष्यकार एक ओर तो उन मन्त्रों की व्याख्या करते हैं जिन में स्पष्ट लिखा है कि हे पापों की गांठ काटने वाले! मुझे दृढ़ बनाओ ताकि मुझे सब प्राणी मित्र की दृष्टि से देखें, मैं सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखूं, हम सब परस्पर मित्र की दृष्टि से देखें(१) और दूसरी ओर नर, पशु तथा पक्षियों का हनन करना वेद की आज्ञा बताते हैं। इन की विचार शक्ति इन दो प्रकार की सर्वथा परस्पर विरुद्ध व्याख्याओं में व्याहतार्थवादिता का दोष नहीं देखती। सच है कि संस्कार बहुत प्रबल होते हैं।

ऊपर के मन्त्र में व्यक्ति इस बात को अनुभव करता है कि स्वार्थ बहुत प्रबल प्रलोभन है इससे अंधा हुआ व्यक्ति धर्माधर्म की जटिल समस्याओं को भी अति तुच्छ गिन लेता है, अतएव वह परमात्मा से प्रार्थना करता है कि

(१) इते! इह मा मित्रस्य मा चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम्। मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे। मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे॥ यजु अ० ३६ म० १८।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"मुझे दृढ़ बनाओ" ताकि मैं स्वार्थ की लहर में बह न जाऊँ। वेद सब प्राणियों—मनुष्य, पशु, पक्षी तथा कीट पतङ्गों में मित्रभाव स्थापित करने की आज्ञा देता है और पाठक में इस अनुभव शक्ति को इतना उत्तेजित कर देता है कि पाठक स्वयं प्रार्थना करने लगता है कि वह सब प्राणियों को मित्र दृष्टि से देखे। भला वह व्यक्ति जिसे कि उस के हृदय के प्रेम तन्तु तुच्छातितुच्छ कीट पतङ्गों तक फैल मित्र सा मोहना रूप दिखाते हैं, क्रूर खड्ग को उठा उपकारी तथा उदासीन निरपराधी जन्तुओं पर कैसे चला सकता है।

कैसे बैलों से काम लो

(ख) वैदिक प्रेम तन्तुओं का फैलाव न केवल दार्शनिक विचारों तक ही सीमित है अपितु उस से वैदिक क्रियात्मक जीवन का एक मुख्य भाग शासित भी होता है। बैलों को गाड़ी के जूए लगाने में वेद की आज्ञा है कि वे (१) न्यून से न्यून दो हों (२) जूए का भार सह सकते हों (३) उनकी आखों में आँसुओं की धाराएं न बहती हों (*) उपरोक्त तीनों आज्ञाएं वैदिक हृदय की विशालता को दर्शाती हैं। आँखों में आँसुओं की धारा प्रायः शोक और दुःख का चिन्ह हुआ करती है। वेद बैलों के भी शोक, दुःख तथा कष्ट की जहाँ इतनी पर्वाह करता है वहाँ इन्हीं पर छुरा चलाने की आज्ञा कैसे दे सकता है।

ओषधि की हिंसा मत करो

(ग) न केवल वैदिक अहिंसा का भाव जङ्गम प्राणियों तक ही समाप्त होता है अपितु उस का फैलाव स्थानी प्राणियों अर्थात् वनस्पति जगत् तक भी है। यजुर्वेद में लिखा है "ओषध्यास्ते मूलं माहिंसिषम्" अर्थात् मैं ओषधियों के मूल की हिंसा न करूँ। अर्थात् इस प्रकार ओषधि को न उखाड़ूँ जिस से उस का आमूल विध्वंस हो जावे। इस प्रकार वेद जो ओषधियों के साथ बुरे सूलूक में भी हिंसा समझता है वह यज्ञ जैसे धर्म-कार्य के लिये पशु हत्या की आज्ञा कैसे दे सकता है।

अध्वर पद

(घ) यज्ञ के क्या अर्थ हैं, इसको मैं ऊपर बता चुका हूं। यज्ञ के पर्य्याय वाचक शब्दों में अध्वर शब्द भी आया है। अध्वर शब्द की व्याख्या में निरुक्तकार लिखते हैं "अध्वर इति यज्ञ नाम। ध्वरतिर्हिंसा कर्मा तत्प्रतिषेधः" निरुक्त अ० १ खं० ८॥ जिसका अर्थ यह है कि अध्वर यह यज्ञ का नाम है। ध्वर का अर्थ हिंसा और अ उसके निषेध को कहता है। इस प्रकार अध्वर पद स्पष्ट बता रहा है कि यज्ञ में हिंसा न होनी चाहिये।

अध्वर पद तथा देवराज यज्वा

निघण्टु में देवराज यज्वा भी इस अध्वर पद की निरुक्ति यास्काचार्य के अर्थों में ही करते हैं यथा "ध्वरते र्वध कर्मणः—नञ् पूर्वः" परन्तु इसके होते हुए भी वे यज्ञ में पशु हिंसा के समाधान के लिये एक अनौखी दलील का आश्रय लेते हैं। वे कहते हैं कि "ओषध्यः पशवोवृक्षाः तिर्यञ्चः पक्षिणस्तथा। यज्ञार्थं निधनं प्राप्ताः प्राप्नुवन्त्युच्छ्रितां गतिम्" अर्थात् ओषधियें, पशु, वृक्ष, पक्षी तथा कीट पतङ्ग अगर यज्ञ के लिये मारे जावें तो वे उत्तम गति को प्राप्त होते हैं। अतः उनकी हिंसा वास्तव

* उस्रावेतं धूर्षाहौ युज्येथा मनश्चू अवीरहणौ ब्रह्म चोदनौ। स्वस्ति यजमानस्य गृहान् गच्छतम्॥ य० ४। ३३॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में हिंसा नहीं, चूँकि उस हिंसा से वे उन्नतावस्था को प्राप्त होते हैं। यह हिंसा उन को उत्तम गति में पहुंचाने का द्वार है। इस प्रकार का कुटिल समाधान देवराज यज्वा दे तो गये परन्तु इस समाधान से उन की आत्म तुष्टि नहीं हुई। इसी लिये वे "अथवाषष्ठ्यर्थे बहुव्रीहिः" द्वारा एक और टेढ़ी निरुक्ति करते हैं जो यास्काचार्य की निरुक्ति द्वारा परिपुष्ट भी नहीं।

अतः यदि यह आचार्य अपने पुराने संस्कारों को छोड़ कर न्याय की दृष्टि से विचार करते तो इन्हें इस प्रकार के कुटिल समाधान घड़ने न पड़ते।

मेध पद

यज्ञ का और नाम मेध भी है। मेध का अर्थ पवित्र भी होता है। मांस के टुकड़ों से बिछी तथा लहू से लिपी वेदी को कोई भी पवित्र नहीं कहेगा। अतः मेध पद भी यज्ञ में पशु हिंसा के विचार का खण्डन करता प्रतीत होता है।

देवताता पद

यज्ञ का नाम "देवताता" भी है। अर्थात् जो देवों के लिये विस्तृत किया जाता है। देवों के लिये वेद में "देवाः आज्यपाः"। ऐसा वर्णन आया है। अर्थात् देव घी पीते हैं। वेद में देवों के लिये "मांसादाः" या "रक्तपाः" ऐसा कहीं भी वर्णन नहीं आया। जहां ऐसा वर्णन आया है वहाँ राक्षसादि लिये गये हैं न कि देव, इस बात को वेद के पाठक जानते हैं। देवताता पद यज्ञ का नाम है। यह देवों के लिये विस्तृत हुआ है न कि राक्षसों के लिये। इस लिये यज्ञ में घी की आहुति होनी चाहिये न कि मांस और रुधिर की।

अमृतान्धस और पिशाच

संस्कृत में देवों का नाम अमृतान्धस् भी है। वेद में भी "देवाः अमृत भुजः" ऐसा वर्णन आता है।

अमृतान्धस् पद के निम्न लिखित अवयव हैं:—

अ+मृत+अन्धस्। अ=न; मृत=मरा हुआ; अन्धस्=अन्न। अतः अमृतान्धस् का अर्थ है जो मरा हुआ अर्थात् मांस रूपी अन्न नहीं खाते और इसके विपरीत "पिशाच" नाम राक्षसों का है। पिश=मांस के टुकड़े, और, अच्=खाना। अर्थात् जो मांस को खावें। यज्ञ देवताओं के उद्देश्य से किया जाता है न कि राक्षसों के। अतः इन नामों से यह बात स्वयं सिद्ध है कि यज्ञ में पश्वाहुति न होनी चाहिये।

प्रजापति पद

यज्ञ का नाम "प्रजापति" भी है। प्रजापति का अर्थ है प्रजाओं की रक्षा करने वाला। राजा जो राष्ट्र को तङ्ग करता है, प्रजा पर अत्याचार करता है-राष्ट्र पति और प्रजापति नामों से कहलाने योग्य नहीं। पति जो स्त्री पर अत्याचार करता है रक्षा अर्थ में पति कहलाने योग्य नहीं। इसी प्रकार जिस यज्ञ पुरुष की तृप्ति प्रजाओं के मांस और रक्त विना नहीं हो सकती वह प्रजापति नहीं अपितु प्रजा भक्षक है। इस प्रकार इस लेख में मैंने पाठकों के सन्मुख यज्ञ में पशु हिंसा विषयक कतिपय विचार रक्खे हैं। अगले लेख में वेदों के मन्त्रों आर्ष तथा प्रसिद्ध ग्रन्थों को भी अपने विचार की पुष्टि में पेश करूँगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अक्षय ज्योति।

लेखक श्रीयुत "नयन"

न कहिये, है संसार असार।
दिखाता किसका विमल प्रसार?
नहीं है विश्व भयानक भूल,-
सभी वृक्षों में होती मूल!
बसाती नगर, पैर की धूल।
कौन यों उठा फूल में फूल-
कौन फल लेते हैं फल धार?
दिखाता किसका विमल प्रसार?
हवा क्यों लाती जीवन खींच?
हरा क्यों करता है जल सींच?
कौन सी ज्योति अग्नि के बीच?
न देखो यदि आँखों को मीच-
देख लो 'नयन' खोल व्यापार!
दिखाता किसका विमल प्रसार?
लहर में क्यों होता है गान?
चन्द्रमा क्यों इतना श्रीमान?
धर्म क्यों बना हुआ बलवान?
चूर्ण क्यों हो जाता अभिमान?
न है यदि कोई जगदाधार-
दिखाता किसका विमल प्रसार?

रुक्मिणी हरण नाटक।

प्रवेश ६ठा।

[स्थान—शिशुपाल की राजधानी चेदीपुर में पत्थर की खान।]

[पात्रगण—युद्ध में पकड़े हुए कर्मयोग आदि-कृष्ण तथा द्वारका भूमि के भक्त-कैदी और पहरेदार। पीछे से सिद्धि, शिशुपाल, रुक्मैया, प्रारब्ध, भक्तिरूपधारिणी राधा तथा श्यामसुन्दर ज्योतिषीवेश में कृष्णचन्द्र।]

(दृश्य—खान में कर्मयोग आदि कैदी पत्थर कापते हुए निम्नलिखित गायन गारहे हैं।)

गायन।

गुर्जरभूमी मात हमारी गुर्जरभूमी मात।
जननी जग विख्यात हमारी,
गुर्जरभूमी मात॥ गुर्जर०—
डगमग डोले दिग्गज से शत्रुञ्जय, आबू, गिरनार।
नदी नर्मदा, सिंहनाद से गरजे शूर सौराष्ट्र॥
हमारी०।
दिव्यद्वारिका पर करते हैं राज्य कृष्ण सम्राट्।
तीर्थरूप जिनकी गीता से पावन मानव-जात॥
हमारी०—
न्योछावर करि हैं स्वराज्य पै, तन मन धन भली भांत
बोलो जय श्रीमातृभूमि की जय श्री द्वारिकानाथ॥
हमारी०—

पहरेदार—[हाथ में चाबुक सहित प्रवेश कर] यह क्या पागलों का प्रलाप? हमारे राज्य में तुम्हारी देशभक्ति का आलाप? जानते नहीं क्या इस एक २ आलाप के बदले में करने पड़ेंगे सौ २ विलाप-सहने पड़ेंगे असह्य संताप?

कर्मयोग—आनंद सागर के उत्तुङ्ग तरंग से मातृभूमि के दिव्य गान! उनमें लवलीन जिह्वा मछली को विलाप का क्या भान! स्वर्गीय पारिजातक परिमल प्रफुल्ल बसंत पवन लहरी से स्वदेशीय तान-आलाप! उनमें विहरते हुए आत्माविहंग को और किसका संताप?

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पहरेदार—इस कोड़े की मार का। पाप ? [कोड़े मारता है]।

कर्मयोग—बोलो श्री मातृभूमि की जय, द्वारकाधीश कृष्णराज की जय।

[सब जन जय बोलते हैं।]

पहरेदार—अरे ढीठो ? तुम्हारा तो क्षय, क्षय बस क्षय। शिशुपाल महाराज का सख्त मनाई का हुकुम है कि तुम्हें अपनी मातृभूमि तथा सम्राट् जरासंध के द्रोही बंडखोर उस कृष्ण का नाम बिलकुल न लेना चाहिये, तो भी तुम मानते ही नहीं सो यह उसकी अब भी ज्यादा सज़ा। [कोड़े मारता है।]

कैदी—[कुदाल उठा कर।] आज तेरी भी क़ज़ा। तेरा यह अधम बोल कि हमारे कृष्ण महाराज बंडखोर ? [मारने जाता है।]

कर्मयोग—(बीच में पड़कर।) नहीं नहीं ए मेरे देश बन्धुओ ? हम सत्याग्रही हैं। हमारा काम है पर्वत की स्थिरता तथा पृथिवी माता की सहिष्णुता धारण कर आनंदपूर्वक तन मन को दमन करना। जुल्मी की जुल्म ज्वाला में स्वयं राल बनकर नहीं जलना किन्तु शीतल बर्फ़ बनकर अग्नि को भी शान्ति में बुझ जाने को सिखाना। सत्याग्रही जीवन तूफ़ानी पवन जैसा फ़ानी नहीं कि झट चढ़कर गिर जाये किन्तु हिमालय की चोटी जैसा शान्त ब्रह्मज्ञानी है कि जिस पर निर्दय ग्रीष्म के तीक्ष्ण किरण बाण पड़ने पर भी स्वयं छिन्न भिन्न होता हुआ संसार को अमृतवाहिनी गंगाधाराओं से तृप्त करता है। सत्याग्रही को प्रेम के द्वारा ही चिर-शान्ति की दृढ़ स्थापना करनी चाहिये न कि रक्तपात द्वारा। तलवार की धार में शान्ति नहीं अपितु खूंखार अशान्ति क्रान्ति है। जब दैवी प्रेमधारा के सामने आखिर राक्षसी पत्थर दिल का भी चूरा हो जाता है।

पहरेदार—हैं ? यह क्या कहता है ? क्या ज़हर को अमृत से अमर करता है।

कर्मयोग—(पहरेदार से) भाई ? इन लोगों ने भूल की कि आग से आग को बुझाने के लिये शक्ति ह्रास की कामना की ! ईश्वरीयमुक्ति पाने के लिये जैसे ब्रह्मयोगी प्रकृति भिन्न होकर द्वंद्वों को सहते हैं वैसे स्वदेशीयमुक्ति पाने के लिये कर्मयोगियों को भी चाहे जैसे कष्टों को सहन करना सीखना ही चाहिये। यह स्वदेशीय तपश्चर्या ईश्वरीयमुक्ति की सहचर्या है। वृक्षों की माफ़िक जीवन्मुक्तों को कटूउद्गार या शारीरिक मार की क्या परवाह ? पत्थर मारो या दण्डे से पीटो, वृक्ष तो बदले में मीठे फल ही अर्पण करते हैं।

कैदी—(पहरेदार से) अच्छा भाई ? तब तो तू अपना आसुरी स्वभाव अज़मा ! हम अपना दैवी भाव अज़माएँ।

जो है जलाता देह को चन्दन उसे देता सुगन्ध।
मृदितकर्ता को सुमन देता मनोहर है सुगन्ध॥
तनुभङ्गकारी को पिलाता इक्षुरस मीठा सदा।
सत्याग्रही मरते चिराते मेघवत् बरसे मुदा॥

शैतान तथा भगवान् के युद्ध में देखते हैं कि किस की जीत होती है ? [हथियार फेंक देते हैं।]

पहरेदार—धन्य-सत्याग्रहियो ? तुम्हारी प्रेमधवल हृदय की हिम्मत को तथा प्रभात उज्ज्वल सत्कर्म की कीमत को ! तुम्हारे उपदेश जल से मेरी क्रूरता की ऊषर भूमि दया की नन्दनवाटिका में परिवर्तित हो गई। आज से मैं शिशुपाल जैसे राक्षसों की नरक को न्योता देने वाली नौकरी को छोड़ता हूँ और स्वर्गीय सोपान जैसे धर्मात्मा श्रीकृष्ण के चरण में अपने जीवन को समर्पण करता हूँ। [प्रणाम कर चला जाता है।]

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर्मयोग—प्रेम धर्म के सामने अग्नि की ज्वाला इस तरह पुष्पमाला में परिणत हो जाती है।

[शिशुपाल की बहन सिद्धि प्रवेश करती है।]

सिद्धि—कर्मयोग! इस समय यहाँ कोई पहरेदार नहीं है सो इस जुल्म स्थान में से एकदम निकल जाओ।

कर्मयोग—प्रथम ये मेरे सत्याग्रही बन्धु चले जायें पश्चात् मैं देख लूंगा।

कैदी—नहीं! पहिले तुम और फिर पीछे हम।

सिद्धि—(स्वगत) अहा! जो राष्ट्र और राज्य का प्रजाकीय किला ऐसे आपस के अनुराग तथा स्वार्थत्याग के चटान पर चुना हुआ है उसके सामने दुश्मनों के विरोध वायु चक्र झख मारते हैं-आप ही आप शान्त हो जाते हैं।

कर्मयोग—भाईयो? तुम इस स्थान से एक २ निकल जाओ। अभी वादविवाद का समय नहीं। मैं पीछे से आ पहुँचूँगा।

कैदी—ऐसा ही है तो जैसी आज्ञा। हम एकान्त में आपकी राह देखते हैं। [जाते हैं।]

सिद्धि—प्यारे कर्म? मेरे लिये आप को ऐसे भयंकर दण्ड सहने पड़े हैं!! हाय! खान में से पत्थर कांपते २ इस हाथ में छाले पड़ गये हैं; पैर लोहूलुहाण होगये हैं। [अपनी साड़ी से पोंछती है।]

कर्मयोग—सिद्धि? ये कष्ट कुछ मैं तुम्हारे खातिर ही नहीं किन्तु अपने आत्मसत्व, प्रजाकीय गौरव तथा सत्क्षात्र धर्म की लड़ाई खातिर सहता हूँ। कर्मयोग कोई विलास नहीं तथैव दुख में उदास होना जानता नहीं। कर्तव्यपरायणता और सहनशीलता ये उसकी रोज़ की ख़ोराक है। आलस्य और भय ये उस की मूर्च्छा तथा मृत्यु है।

सिद्धि—पर मेरा भाई शिशुपाल अत्यंत निठुर है। कृष्ण पर का वैर लेने तथा मेरे प्रेम-पीयूष में विष घोलने के लिये वह तुम्हें रिबा २ कर मारना चाहता है।

कर्मयोग—सत्याग्रही कर्म योगियों का यह मूंहमांगा महापुरुषार्थ हो सकता है।

"जुल्म ज़ालिमोंके सहने की हमने पायी है शिक्षा।
संकटमें धीरज बल की भी माँगी है प्रभु से भिक्षा॥
धर्म कार्यके लिये राष्ट्रको सौंप दिये हैं तन मन प्राण।
यही हमारी इष्टसिद्धि है स्वतंत्रताकी रखलो जान"

सिद्धि—पर आप में जितना सहन करने का बल है उतना मुझ में श्रवण करने के लिये भी नहीं है। अतः आप किसी प्रकार यहाँ से शीघ्र चले जाइये।

कर्मयोग—सिद्धि? सिद्धि? मेरे जीवन के निर्भयप्रभात में ब्रह्मभानु के वैदिक किरण जगमगा रहे हैं और उनका पुण्य प्रकाश प्रकट होचुका है सो राजर्षि कृष्ण का भक्त चोर बन कर जीवन से डर कर भाग गया यह कलङ्क मैं अपने राजा की कीर्ति चन्द्रिका में कभी लगने ही न दूंगा।

सिद्धि—अररे! तब तो तुम्हारे जीवन की क्षति ही होगी और उससे यह सिद्धि भी दृष्ट नष्ट ही होगी। सो मैं भी तुम्हारे साथ ही आती हूं तो एकदम चल निकलो।

[त्यों ही शिशुपाल, रुक्मैया, प्रारब्ध और भक्तिवेश धारिणी राधा प्रवेश करती है।]

शिशुपाल—हँ, चल निकलो। हुल्लडखोर छोरी? तू इस फितूरी को भगा उसके साथ निकल जाने को तैयार हुई है क्या? दूसरे कैदी कहां हैं? [आसपास फिर कर देखता है।] पहरेदार भी नहीं दिखता! आह, दग़ा दग़ा!! मेरा घर ही फूट रहा है। मेरी भगिनी रूपमणि-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

माला ही तरवार की धारा बन मेरा गला काट रही है।

कर्मयोग—नहीं, इसमें सिद्धि का कुछ भी अपराध नहीं है। सत्यग्रहियों की धीरता की हिमशीतलता में तुम्हारे पहरेदार का लोहे का दिल भी कटते २ भीग गया और श्रीकृष्ण की सेवा में वह निकला मेरे लिये भी यह मोक्ष का द्वार खुला होने पर भी अपने और कैदी भाइयों का प्रतिनिधि रूप हो मैं अपने कृष्णराजा की भक्ति में पूर्णतया उत्तीर्ण होने को खड़ा हूं।

रुक्मैया-सुनते हो क्या शिशुपाल साले जी? इसका कृष्णविषयका घमण्ड। कृष्ण को राजा कहने का उद्दण्ड पाखण्ड!

शिशुपाल-इसके सारे इस घमंड और पाखण्ड के लिये मैं इसे आज जीते जी पत्थर में चुनवा गाड़ देने का मृत्यु दण्ड दूंगा।

सिद्धि-नहीं भाई? एक उमंग भरी कली के भोले भ्रमर को इस तरह पत्थर के नीचे कुचलना नहीं।

शिशुपाल—तेरीमुराद जानता हूं, बेशरम छोरी? इस भ्रमर को निगल जानेवाला मैं मुरग़ा बनूंगा और इसे जैसे के वैसा निगल जाऊंगा॥

प्रारब्ध—(स्वगत) अजी वाह, यह रुक्मैया का होने वाला साला मुरग़ा भी जबरा निकला।

शिशुपाल—तू इस षड्यन्त्र में शामिल हुई है क्यों? मैं अभी ही तुझे इस रुक्मीदेव के सङ्ग ब्याह दूंगा और इस कर्मकंगाल को दिवाल में चुनवा दूंगा।

सिद्धि—(कर्मयोग को आलिङ्गन कर।) नहीं भैया? नहीं!!

"इन्हीं के पूर्व ही मुझको भले पत्थर में चुनवा दो।
पर न ब्याहूंगी रुक्मीसे—"

प्रारब्ध—'प्रेमीजन हो तो ऐसे हो॥"

शिशुपाल—"मैं ब्याहूंगा रुक्मिणी को रुक्मी से ब्याह तुम करलो।

रुक्मैया—परस्पर होंगे साले हम—

प्रारब्ध—साले भी हों तो ऐसे हों॥"

कर्मयोग—सिद्धि? मेरे जैसे कठोर थोहर ख़ातिर तुम्हारी कायाकली को मुरझाने की ज़रूरत नहीं।

सिद्धि—काया बिन छाया, ब्रह्म बिनमाया और पति बिन जाया यह सब कल्पना ही कल्पना।

'मुझको बन्धन मिलें तुमारे ख़ातिर बेहतर।
चुनें भीत में मुझे तुमारे ख़ातिर बेहतर॥
निजप्राणों से भी तुम हो मुझको अति प्रियतर।
आप बिना समझूं मैं अपना जीना धिक्तर।
तुम्हें छोड़ मैं जी न सकूंगी प्यारे? क्षणभर।
कमल सङ्ग भृङ्गी भी बध सह सकती रहकर।

शिशपाल—ओह!! इतनी निर्लज्जता! मेरे सामने यह धृष्टता! तो चलाओ अनुचरो?

"चुनो पत्थर के भीतर ही इन्हीं दोनों को गडने दो।

कर्म-सिद्धि—हमीं तैयार एकात्मा—

प्रारब्ध—आत्मजन हो तो ऐसे हो॥"

(दोनों मिलकर खड़े होते हैं और उनके आसपास पत्थर चुने जाते हैं)

राधा—(भक्ति के पुरुषवेश में। स्वगत) अहा, धन्य है दोनों प्रेमी भक्तों को! दो आत्माओं के एक आचार, एक विचार और एक प्राण हो जाना ही प्रेम का परमधर्म है। जहाँ दो आत्माओं का एक स्थल पर अद्भुत मिलन होता है वहां ही सच्चा पुण्यतीर्थ है। (पत्थर चुने जाते हैं और कर्मयोग-सिद्धि गाते हैं।) कर्मयोग-सिद्धि—गायन।

हमीं प्रेम गगन के पंखी, करिहैं नन्दनवनसंचार॥
नन्दनवनसंचार, तजि तनपिञ्जर बंधन जाल॥हमीं०

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वायु, अनल, जल, पत्थरकरते, स्थूल देह संहार।
पर यह आत्मा अमर रहत, चाखि प्रेमामृत इकवार॥

(गले तक पत्थर चुने जाते हैं।)

शिशुपाल—क्यों सिद्धि? तू अब भी इस रुक्मीदेव से विवाह करने को करती है इन्कार?

सिद्धि—एक बार नहीं पर हज़ार वार।

शिशुपाल—(स्वगत) लाचार। इन लोगों ने मुझ जैसों के स्वभावसिंह को भी ख़रगोश जैसा सुकोमल बना दिया। काम विषय के काष्ठ तो कुहाड़ी से काट जासकते हैं किन्तु निष्काम प्रेम गंगोत्री के जलप्रवाह को किस तरह काट सकते हैं? अब ज़रा साम का प्रयोग करूँ। (प्रकट।) सिद्धि? आख़िर तू मेरी बहन है इस लिये मुझे दया तथा लोक लज्जा आती है और इसीसे कहता हूं कि यदि कर्मयोग उस बंडखोर कृष्ण का पक्ष छोड़ कर मेरे राज्याश्रय में रहना कबूल करे तो मैं इसे मुक्त करूँ।

रुक्मैया—[प्रारब्ध से।] अरे प्रारब्ध? मुझे सिद्धि मिलने में पगड़ी पर फिर मंगल तो नहीं चढ़ बैठा न?

प्रारब्ध—नहीं जी महाराज! पगड़ी पर से धोती में आ गया है।

कर्मयोग—शिशुपाल! मेरी द्वारकाराज्य की भक्ति तथा कृष्ण पर की प्रीति इसी तरह जन्मोजन्म भीत में चुनने पर भी नहीं छूटेगी।

शिशुपाल—जो ऐसा ही है तो सिद्धि! मैं तुझे इस कर्म के सङ्ग ब्याहने तो क्या मरने भी न दूंगा। [अनुचरों से] बस, दिवाल में से बाहर निकालो अकेली सिद्धि को।

सिद्धि—"अरे पानी के सङ्ग में ही न क्यों
मछली को मरने दो।
अकेली जीऊंगी कबलों—

प्रारब्ध—सती स्त्री हो तो ऐसी हो।"

[सिद्धि को बाहर निकालते हैं।]

शिशुपाल—सिद्धि! जो तू इस रुक्मीदेव से ब्याहने को तैयार हो जाय तो मैं कर्मयोग को मुक्त करूं नहीं तो अब तेरे सामने उसके ऊपर एक ही पत्थर चुनना बाकी है कि जिस से उसे खतम करूं।

सिद्धि—हे प्रभु! मेरे हृदयसागर में भयंकर तूफान उठ रहा है। धैर्य के किनारे टूट रहे हैं। टेक के चट्टान चूर्ण हो रहे हैं। क्या करूं? क्या कहूं? हाय! क्या इस मेरे प्यारे कर्मयोग को अपनी आँखों सामने बेमौत मरने दूँ? नहीं तो क्या उसे बचाने के लिये इस राक्षस रुक्मैया से विवाह कर प्यार का व्यभिचार करूं? ए परम प्रीति के पंथ! प्रगट हो। हे आगम निगम के सत्य? मेरी बुद्धि में जागृत हो। (विचार कर।) नहीं, नहीं बस! मेरे हृदय! दृढ़ बन। मेरे आत्मस्नेह के अवतार जैसा कर्मयोग तो मृत्यु तूफान के बीच में भी बेधड़क मिनारे की माफिक निश्चिन्त खड़ा है। इसका देह ही कोई स्नेह नहीं। स्नेह के नूर को दैहिक दृष्टि नहीं किन्तु आत्मिक दृष्टि देख सकती है और आत्मिक दृष्टि अनन्तता को ग्रहण कर सकती है तो फिकर नहीं..... भाई शिशुपाल! तू खुशी से कर्म को चुनवा दे और हमारे अमर जीवन की परीक्षा कर ले।

"चुनोगे देह को उसके न चुन सकते हो स्नेह ही को।
मैं ब्याहूंगी आत्मा को.....

प्रारब्ध—स्नेही स्त्री हो तो ऐसी हो।"

कर्मयोग—शिशुपाल? सिद्धि ने सत्य कहा है।

"मृत्यु न जिसको मारे, पानी जिसे न भिगावे।
वायु न जिसे सुखावे, अग्नि न जिसे जलावे।
पृथ्वी न जिसे समावे, शस्त्र न जिसको कापे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जहिं विज्ञानहि थाके, गगन न जिसको नापे।
ऐसा अमर जो आत्मा सोऽहं सोऽहं अड़ा हूं।
चहे जलाओ कापो गाड़ो, निर्भय होकर खड़ा हूं

प्रीति और नीति का मिनारा स्वतंत्र है। उसे फ़ानी तूफान या क्रूर वज्र का डर नहीं। वहां हाहाकार या भय चीत्कार नहीं। केवल शान्ति शासित एकान्त। प्रेम वहां अखंड समाधि पाता है।

सिद्धि—ज़रूर। पीछे से मैं भी उसी समाधि में लीन हूंगी। और द्वैत को अद्वैत कर दूंगी।

शिशुपाल—अेह! उसे मैं देख लूंगा।

राधा—(भक्तिवेश में स्वगत।) अब भेद अज़माने का प्रसंग आपहुंचा है नहीं तो कर्मयोग का अभी नाश होने वाला है। (प्रकट।) महाराज? मुझे राधा ने कर्मयोग के संबंध में संदेशा देकर भेजा है और उसने कहलाया है कि वह सिद्धि से विवाह न करें।

रुक्मैया—महाराज? जैसे इस भक्ति ने कहा वैसे राधा के भाई इस कर्मयोग को मुक्त कर राधा को राजी रखो कि जिससे वह राधा-जैसे मैंने कहा—कृष्ण को रुक्मिणी के लिये अपने बीच में आते हुए रोकेगी।

शिशुपाल—अच्छा। पर सिद्धि कहाँ सीधी मानती है।

रुक्मैया—अब सिद्धि के सीधे तथा टेढेपन पर क्या आधार है? हम आप सर्वशक्तिमान् हैं और इसी से जो चाहे सो कर सकते हैं फिर इन दो लड़कियों की क्या मजाल है? और प्रारब्ध के बल से ग्रह भी अपने ताबेदार हैं सो तुम ब्याहो मेरी बहन से और मैं ब्याहूँ तुम्हारी बहिन से। क्यों प्रारब्ध जोशी? ज्योतिष के ये ही समाचार हैं न? वह कृष्ण का जोशी श्याम सुन्दर कहाँ है? उसे यहां बुलाओ। [एक अनुचर नेपथ्य में बुलाने जाता है।] उसके सामने ही सिद्धि को मेरे साथ ब्याह दो और रुक्मिणी को ब्याहने के लिये आप स्वयंवर में चलो तथा उसका भविष्य झूठा सिद्ध कर दो। [कृष्ण प्रवेश करता है।]

प्रारब्ध—[कृष्ण को एक ओर ले जाकर।] महाराज? अब इस सिद्धि के लिये अपने ज्योतिष को पलट दो। शिशुपाल है निरा चंडीली रांड जैसा, तुम कहोगे उससे वह बन्दर की तरह उलटी ही कुलाहड़ी मारेगा।

कृष्ण—मैं सिद्धि और रुक्मैया का मेल कहता रहूंगा।

प्रारब्ध—और मैं सिद्धि का भक्ति के साथ चौकट बैठा दूंगा। तुम रुक्मिणी के साथ कृष्ण ही कहते रहना और मैं कहूंगा शिशुपाल। अर्थात् तुम्हारा ज्योतिष झूठा ठहराने के लिये शिशुपाल सिद्धि के सम्बन्ध में मेरा ही कहना करेगा और रुक्मैया अधर लटकेगा।

कृष्ण—यही नीति फलेगी।

रुक्मैया—क्यों प्रारब्ध? ग्रह हमारे अनुकूल हैं न?

प्रारब्ध—[पचांग में ऊंचे नीचे देखता हुआ छद्म करता हुआ] अफ़सोस इस समय तुम्हारे तो बिलकुल प्रतिकूल है। यह देखते २ तुम्हारे शुक्र के गणपति की जगह पर अभी शनि का हनुमान् कहां से आ गया।

रुक्मैया—पर उससे क्या भया?

प्रारब्ध—यही कि सिद्धि का ग्रहमेल तो इस भक्ति के साथ ही ठीक बैठता है कर्मयोग के साथ नहीं तथा तुम्हारे साथ भी नहीं।

रुक्मैया—अरे तेरे ज्योतिष का सत्यानाश हो।

प्रारब्ध—हां, किन्तु महाराजा शिशुपाल का मेल रुक्मिणी के साथ बराबर (अर्धस्वगत)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

बारहवे चन्द्र में है।

कृष्ण—प्रारब्ध! तुम्हारा ज्योतिष बिलकुल झूठा है। मैं ने अपने ज्योतिष से जैसे रुक्मिणी के लिये कहा है कि चाहे जो हो किन्तु रुक्मिणी कृष्ण को ही ब्याहेगी।

शिशुपाल—ऐसी बात कभी भी नहीं होगी।

कृष्ण—वैसे इस सिद्धि की मेष अर्थात् भेड बकरे की राशि पर इस रुक्मैया सिंह का ही ग्रह अभी जोर कर रहा है और करेगा।

शिशुपाल—क्यों प्रारब्ध! इसकी बात सच सिद्ध हो सकेगी!

प्रारब्ध—यदि सिद्धि और रुक्मैया संबन्ध की इसकी बात सच सिद्ध हो जाय तब तो कृष्ण के साथ रुक्मिणी की बात भी सच हो जाय और जो ऐसा हो तो अपना नाक ही कट जाय अतः यह सिद्धि तो भक्ति को ही दी जाय।

शिशुपाल—ठीक है। रूक्मी! इस श्याम सुन्दर के ज्योतिष को मैं अभी यहीं का यहीं झूठा कर दिखाता हूं। सिद्धि रूक्मैया को और रुक्मिणी कृष्ण को? यह ज्योतिष ही झूठा!! मैं इस प्रारब्ध के ज्योतिष को ही सच्चा कर बता-ऊंगा और सिद्धि भक्ति को ही दूंगा। इस कंगाल लड़की का नसीब ही कंगाल है।

रुक्मैया—(स्वगत) अरे इसके ज्योतिष का सत्यानाश हो जाय रे!! मैं तो त्रिशङ्कु की तरह हवा में बिलकुल अधर ही लटक गया।

शिशुपाल—क्यों रुक्मैयाजी? क्या विचार?

रुक्मैया—हां, सरकार। (हिचकता हुआ) भले.....भले.....आप मेरे नहीं तो भी मैं तो आपका साला बनने को तैयार।

शिशुपाल—बस तो सिद्धि? इस कर्मयोग के साथ तो मैं तुझे विवाह नहीं करने दूंगा। इस कृष्ण के ज्योतिषी के ज्योतिष को झूठा सिद्ध करने के लिये इस भक्ति के संग तुझे ब्याह करना ही होगा।

प्रारब्ध—(स्व०) और निज का नाक काट कर भी औरों का अपशकुन करना ही होगा।

शिशुपाल—(अनुचर से) नहीं तो हाथ में पकड़ रखो एक अन्तिम पत्थर। सिद्धि ना कहे कि कर्मयोग पर रख दो और तत्काल ही मैं इसका हाथ इस भक्ति के हाथ में रख दूंगा। बोल सिद्धि? जल्दी बोल; भक्ति को वर कर कर्मयोग को बचाना है कि नहीं?

कर्म०—राजकुंवरि? यदि भक्ति स्वयं अपने को श्रीकृष्ण का भक्त प्रकट करे तो मेरी आज्ञा है कि तुम उससे खुशी से विवाह कर लो।

शिशु०—कह दो—भक्ति! कि मैं कृष्ण का भक्त हूँ। खुशी से कह दो।

भक्ति—मैं श्रीकृष्ण का अनन्य भक्त हूं। उसके चरण का सेवक हूं।

सिद्धि—मेरे कर्म? क्या तुम मृत्यु से डर गये कि मेरे प्यार के त्यागनहार हुए?

कर्म०—कर्मयोगी को सिद्धि मिले या न मिले उसकी उसे कम दरकार है। उसका तो धर्म तथा कर्म में ही अधिकार है। वैसे इस संसार की तुझ सिद्धि की अपेक्षा भी मुझे अपने सत्याग्रह की महान् आत्मिक सिद्धि मिल चुकी है। मृत्युमूल्य पर भी मैं ने अपनी टेक तथा कृष्णराज्य की भक्ति कायम रखी है और भाव या अभाव से इस विरोधियों के मुख से भी कृष्ण भक्ति करवाई है। मैं मरने तैयार था अनंत जीने के लिये और वह मैं जी सका हूँ। सो अब मेरे भावी जीवन खातिर भी तुम उससे विवाह कर लो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सिद्धि—हे देव? जो वैसा होने से आपकी हत्या न होती हो तो आत्मस्नेह विना का यह स्थूल देह भलो भक्ति का होवे।

[मूर्च्छित होती हुई सिद्धि का हाथ शिशुपाल भक्ति के हाथ में रखता है।]

शिशुपाल—कर्मयोग को मुक्त करो। श्याम सुन्दर! तेरे एक भविष्य को तो मैं ने यहां ही झूठा कर दिया।

रुक्मैया—और अब स्वयंवर समय देखना कि तेरे दूसरे भविष्य का भी कैसा होता है हाल!! कृष्ण मेरे सामने! मेरी नज़र में! इस की मजाल क्या है मजाल?

[सब का प्रस्थान।]

प्रारब्ध—क्या बने हैं न उल्लू के सरदार? यह ज्योतिष भी मूर्खों को खूब करता है खुँवार।

प्रस्थान।

हरि-दर्शन।

(लेखक श्रीयुत "मराल")

ऐसो ना हरि दरस मिलैगो॥

नैन मूंद डुबकी जिन लाई,
तिन झांकी प्रभु की लख पाई।
तुम जग झांकी रहे भुलाई,
ऐसो ना प्रभु द्वार खुलैगो॥

जिन सरबस की गांठ लुटाई,
तिन प्रभु प्रीत की गांठ लगाई।
भोग की रस्सी तुम उलझाई,
ऐसो ना यह फांस कटैगो॥

बन मेहंदी के पात पिसाए,
सोई परमारथि रङ्गत लाए॥
तुम अपनी ही डाल सुखाए,
ऐसो ना यह रङ्ग खिलैगो॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पञ्जाब उठो।

लेखक—श्रीयुत बुद्धदेवजी विद्यालंकार गुरुकुल कांगड़ी हरिद्वार।

टटीरी आसमान को पैरों पर उठाना चाहती है, जुगनू अपनी चमक से अमावस की रात का अंधेरा मिटाना चाहता है, परवाना आग में कूद कर चाहता है कि उसका आत्मसमर्पण लोगों में रूह फूंकदे, नहीं तो शहीदों में नाम तो गिना जाय। पर यह सब कुछ नहीं होता, न सही। टटीरी विक्रमादित्य न कहलाये, जुगनू को कोई प्रातः काल उठ कर सूर्य्य की तरह प्रणाम न करे, परवाने को जीसस की उपाधि बेशक न मिले। पर उन के हृदय में घुस कर देखो तो वहां भी आग और लगन न विक्रम से कम है न प्रभु मसीह से। अभिमानी संसार! तुम्हें बेशक किनारे खड़े होकर इन अकिञ्चन जीवों पर ठठोली उड़ाने का खुला अवसर है। पर मत समझो कि कभी २ कोई २ विशाल हृदय सूक्ष्मदर्शी इन के लिये भी दो आंसू नहीं टपका जाते हैं! भूलना मत उन्हीं दो आंसुओं में डुबकी लगा कर टटीरी तर जाती है और जुगनू का जीवन निहाल हो जाता है।

कमल पुष्कर और नारियल की भूमि के उस रसभरे जादूगर ने एक बार अपना मोरछल हिलाकर सारे बङ्गाल को आनन्द-मठ बना दिया। न केवल बङ्गाल किन्तु सारा देश गूंजती हुई आवाज़ में पुकार उठा बन्देमातरम्! आवाज़ इससे भी ऊंची उठी और लहराती हुई हिमाद्रि के गौरी शिखर तक टकराती हुई अनन्त में लीन होगई। पर सच पूछो तो अभी तक चुप नहीं हुई। नहीं मालूम इस अनन्त के गर्भ में से वह अभी कौन २ से चमत्कार दिखाएगी। ऐ कवियों के असूयापात्र बङ्किम! तुम को सादर प्रणाम है। कविदेव! मेरे हृदय में एक विशाल ज्वाला दहक रही है, एक दर्दभरी आह चारों ओर टकरा रही है पल भर को अपनी विचित्र बंसी मुझे भी उधार दे दो एक बार तो बिजली गिरा लेने दो जो इन तीन कोटि पञ्जाबी सन्तानों के हृदय चीर निकले। सप्त कोटि का गीत तो तुम गा गये पर प्यारे! अभी २४ कोटि देव मण्डली तुम्हारी मधुर चुटकियों की प्रतीक्षा कर रही है।

महाराष्ट्र की पुण्य नगरी! मेरा हृदय तुम्हारे प्रति ईर्ष्या और क्रोध से जल रहा है। जी चाहता है कि छत्रपति की तलवार और बालगङ्गाधर की उस से भी प्रबल लेखनी तुम्हारे हाथ से छीन लूं। यही तो काश्मीर है जिस के लिये कल्हण कह गया "सहोदराः कङ्कुम केसराणां भवन्ति नूनङ्कविताविलासाः"। हरे ३ किस २ ने इस काश्मीर के गुण नहीं गाए। इसी पर तो कवि कह उठा था न "हमीनस्तो हमीनस्तो हमीनस्त"। पर सच जानना यहां उन की भी कमी नहीं है जिन्हें दूसरों से सुन कर विश्वास आया है कि काश्मीर स्वर्ग है और वह भी दिखावे का। दूर मत जाना वह अभागे प्रमाद के मारे यही पञ्जाबी हैं। यह परमात्मा की नाटक शाला के पहरेदार हैं। रात भर खड़े जागा करते हैं और नाटक रसिकों को कोसा करते हैं। इन्हों ने कभी पीठ फेर कर नहीं देखा कि विधाता की तूलिका के त्रिभुवन विमोहन सुरासुर-वन्दित-विलास इन्हीं की पीठ के पीछे है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बाबा के समय की कहानियां तो नहीं कहता तब तो यहां भी पाणिनी जैसे जादूगर ने पिटारा खोला था। पर जब से मुझे होश आया है तब से तो इन्हें सन्तरी के दर्जे से ऊंचा उठते कभी नहीं देखा। जहां का निवासी मैं हूं वहां के साईस सब कोनों में हैं और इस भूमि के सन्तरी। ऐ पञ्जाब! उठो, पहरा दो, और खूब दो। पर पहले यह खूब समझ लो कि यह तुम्हारी दासता का मूल नहीं, यह तुम्हारी जायदाद है। यह अमानत है तो ईश्वर की है, परन्तु इस पृथ्वी पर तुम्हीं इसके मालिक हो। इसे अपनी मलकीयत, अपनी अक्षय सम्पत्ति जानकर पहरा दो। हाय! तुम्हें थोड़ी सी भी ममता नहीं। मत समझना, कि मैं समझलूंगा तुम सन्यासी हो। सन्यासी लाल हीरों की क़ीमत जान कर उनका त्याग करता है, पर तुम्हें अपनी जायदाद का मूल्य ही मालूम नहीं। तुम सन्यासी नहीं निरे पशु हो। बुरा मत मानना यह तो इब्तिदाएइश्क है। बुरा मानोगे भी तो पर्व्वाह नहीं। यह वह नशे नहीं जिन्हें तुर्शी उतार दे, यहां तो "दूनों वेग गुँजाइगो जब होगा आघात।" मैं न बोलता परन्तु तुम्हारी यह निर्म्ममता अब पाप की सीमा में पहुंच रही है। मेरी चोटी वह पकड़ हिलारहा है जो आज ३१ करोड़ चोटियां हिलारहा है, जो उस चोटी पर खड़ा है जिसकी ऊंचाई की कल्पना से भी मैं चकरा जाता हूं। क्या देखते नहीं कि आज सारा देश किस वेग से कहां जारहा है? क्या तुम ने वह आवाज़ नहीं सुनी जो तुम्हारी बेड़ियां काट गिरायेगी? सुनी तो अवश्य है, पर मैं हैरान हूं तो इस पर कि तुम उस आवाज़ के अग्रगामी होते हुए इसे सुनकर ऐसे भौंचक्के से मुंहबाए खड़े हो। तुम्हें पता नहीं क्या करना है। कोई २ तुम में से नाक सिकोड़ता है यह उपेक्षा, यह निर्म्ममता, यह अहृदयता है जो मुझ से सही नहीं जाती। इस आवाज़ पर नाक सिकोड़ने वाले तुम्हीं नहीं और भी हैं। परन्तु हैरान तो इस लिये हूं कि उनसब ठठोलों की आंख खोलने वाला दण्ड तुम्हारे हाथ में है। इतना ही नहीं उस दण्ड के बनाने वाले भी तुम हो तिस पर भी तुम सोच में पड़े हो, क्या करें॥

आज असहयोग का आन्दोलन देश के एक कोने से दूसरे कोने तक भूकम्प लाकर बड़े २ लङ्का भवनों को डांवाडोल कर रहा है। पर उस की तीव्र आलोचना करने वालों की भी कमी नहीं। आश्चर्य तो यह है कि उनका उत्तर तुम्हारे और केवल तुम्हारे पास है। पर फिर भी तुम चुप हो यही खेद है, यही पाप है। तुम ने अपनी सम्पत्ति को अपनाना नहीं सीखा नहीं तो तुम अपना यह अपमान न सहार सकते।

इस आन्दोलन के कई भाग हैं। परन्तु सब से अधिक मतभेद इसी भाग पर है कि नौकरशाही के स्कूलों और कालिजों को ख़ाली कर देना उचित है वा नहीं। इस कायरता की तीव्र आलोचना नहीं करता। थोड़ी देर तीव्रता नहीं शान्ति से विचार करें। यद्यपि इस प्रश्न पर शान्ति से विचार करना धैर्य पर बड़ा भारी अत्याचार करना है; पर फिर भी थोड़ी देर शान्ति ही सही। असहयोग के विरोधियों ने जो २ कह डाला है उस सब से मुझे कुछ मतलब नहीं। मैं तो केवल उस प्रश्न को सामने लाना चाहता हूं जहां पञ्जाब के आत्मसन्मान पर आघात पहुंचता है, और फिर भी वह चुप है। जब २ शिक्षा को नौकरशाही के हाथों से जाति के अपने हाथों में ले लेने का प्रश्न उठा है तब २ उसके विरोधियों ने यही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA.

पुकार मचाई है कि यह असम्भव है। पर जिस भाग पर आज दृष्टि डालनी है वह वह युक्ति है जो इस असम्भवता को सिद्ध करने के लिये दी जाती है। वह युक्ति है जिसे पञ्जाब का एक क्षण के लिये भी सहारना आश्चर्य्य में डालने वाला है। हम राष्ट्रीय शिक्षा को अपने हाथों में लेने के योग्य नहीं, क्यों? क्योंकि बङ्गाल ने अपनी परीक्षणशाला में यह सिद्ध कर दिया है। स्वदेशी आन्दोलन के समय बङ्गाल में ऐसा ही हुआ था। उस समय बङ्गाल में अनेक नवयुवकों और नेताओं ने मिलकर नैश्नल कालेज की स्थापना की थी। पर वह स्थिर न रहा। बस जब बङ्गाल में इस प्रश्न पर अन्तिम मोहर लग गई तो हम बार २ इस प्रश्न को क्यों सामने अटकाते हैं।

बङ्गाल भारत का दिमाग़ है। बङ्गाल कविता की भूमि है। बङ्गाल बङ्किम राय और रवीन्द्र जैसे कवियों की क्रीड़ास्थली है। स्वदेशी आन्दोलन का जन्म स्थान है। जगदीशचन्द्र जैसे वैज्ञानिकों की रङ्गशाला है। सुरेन्द्र जैसे वक्ताओं का विलास केन्द्र है। बङ्गाल बङ्गाल है। फिर भला इस बङ्गाल के निर्धारित प्रश्न पर फिर विप्रतिपत्ति की आवाज़ उठाना निरी धृष्टता नहीं तो क्या है? अमृतबाज़ार पत्रिका के सम्पादक महोदय ने इसी बङ्गालवाद की घोषणा की। और ट्रिब्यून के दुर्ग पर बैठे कलीनाथ राय महोदय ने भी इसी नाद की सलामी बजाई। यह सब सज्जन कुछ अभिमान से ऐसा कहते हों सो नहीं। वे तो सचमुच विश्वास और सादगी से ऐसा कहते हैं। पर उन के विश्वास को खेड़ रहने देने का कलङ्क पञ्जाब की चुप पर है। यदि पञ्जाब ने अपनी सम्पत्ति को अपनाया होता तो आज बङ्गाली इस गजनिर्मालिका में आनन्द न लेरहे होते। पञ्जाब ने २० वर्षों तक प्रश्न का जीवित उत्तर दिया है। पर लीला की गति तो देखिये कि यह बात पञ्जाबियों को कहकर बताने की आवश्यकता पड़ती है। पञ्जाबी सन्तान! आश्चर्य में मत पड़िये। सोचिये तो सही क्या पवित्र जान्हवी के तीर पर आप २० वर्षों तक इस प्रश्न का जीवित उत्तर नहीं देते रहे? क्या आप अपने प्यारे गुरुकुल को इस तरह भूलना चाहते हैं? क्या आप अपने कार्य्य की विशालता के बोझ के नीचे अपने आप दबे जाते हैं? क्या पञ्जाब के जवान कन्धों से इसी बालकोचित दुर्बलता की आशा करनी चाहिये? उठो, एक बार अपनी क्रिया से संसार को बता दो कि पञ्जाब के कन्धे जवान हैं। निःशङ्क होकर बङ्गाली बाबू तुम्हारे मुंह पर काली कूची फेर जावें, वह कह जावें कि आज तक भारत में राष्ट्रीय शिक्षा का परीक्षण केवल बङ्गाल में हुआ और वह निकम्मा सिद्ध हुआ इसलिये राष्ट्रीय शिक्षा भारत में नहीं हो सकती; और तुम्हारे कानों पर जूं तक न रेंगे। ऐसा मत होने दो। एक बार फिर आवाज़ उठा दो कि पगड़ी सम्हाल ओ जट्टा।

सच जानिये यह गुरुकुल का घोर अपमान है। और गुरुकुल का अपमान सारे पञ्जाब का अपमान है। मानो न मानो, मैं फिर दोहराता हूं कि गुरुकुल का अपमान सारे पञ्जाब का अपमान है। एक बार दोहराता हूं, दो बार दोहराता हूँ, दस बार दोहराता हूँ, हज़ार बार दोहराता हूँ, गुरुकुल का अपमान सारे पञ्जाब का अपमान है। पञ्जाब ने कालिज बनाये, स्कूल बनाये, उनके लिये बड़े २ त्याग के आदर्श भी दिखाये, पर वह सब पञ्जाब की ख़ास सम्पत्ति नहीं। डी. ए. वी. कालिज के मुक़ाबिले पर महाराष्ट्र अपना फ़र्ग्युसन कालिज दिखला सकता है। पर गुरुकुल पर मोहर पञ्जाब और पञ्जाब पर मोहर गुरु-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कुल की है। जाओ, तुम पूछ लो। पञ्जाब के बालक और स्नेहमयी कुल लक्ष्मियां तुम्हें इस प्रश्न का उत्तर देंगी।

गुरुकुल की मीनार पर खड़ा होकर पञ्जाब शान से कहता है, "जो बङ्गाल ने नहीं कर पाया, जो पूना ने नहीं कर पाया, जो मद्रास ने नहीं कर पाया, जिसे बङ्गाल असम्भव बता चुका, वह यहां बोल कर नहीं, क्रिया से सम्भव कर दिखाया गया है"। तुम्हें विश्वास नहीं तो सर आशुतोषमुकुर्जी से पूछो, जो कहते थे पञ्जाब ने अगर अब तक डींग नहीं हांकी, अपना ढोल अपने आप नहीं पीटा तो यह उसके सौम्यशील और क्रियात्मक स्वभाव का प्रमाण समझा जाता था। किन्तु अब, जब कि बङ्गाल ने खड़े होकर ललकार सुनादी है, खुले मैदान चैलेञ्ज दिया है, ऐसे समय चुप रहना आत्मविश्वास और आत्मज्ञान के अभाव का सूचक समझा जायगा। उठो और संसार को भ्रम में मत रहने दो।

बङ्गाल से लहर उठती है कि राष्ट्रीय शिक्षा में हमें सफलता नहीं हो सकती। किन्तु गङ्गा के किनारे की उस छोटीसी, पर दृढ़ चट्टान से टकरा कर वह चूर २ होती हुई लौट जाती है। शोक, कि इस सुन्दर दृश्य को देखना पञ्जाब ने अपना कर्त्तव्य नहीं समझा। पञ्जाब उठो और अपने प्यारे गुरुकुल को अपनाओ। पञ्जाब की शान वहीं निवास करती है।

क्या तुमने कभी अनुभव किया है कि वहां उस तपोबन में कितना विशाल, कितना गौरवशाली काम होरहा है। बनको देखकर भूलो मत। भारत की शान नगरों में नहीं वह तपोबन में ही रहती है। उस तपोबन में, उस दुर्ग में, केवल पञ्जाब की शान का ही वास नहीं; वहां भारत की सच्ची झलक दिखाने का यत्न हो रहा है। इस जर्जर संसार के कायाकल्प का सामान हो रहा है।

इस संसार की अन्तिम आशा भारत की सभ्यता पर है। और भारत की सभ्यता के पुनरुत्थान का आश्रय दुर्ग वहीं, हिमगिरि के चरणों में बना है। वह दुर्ग है, सचमुच दुर्ग है। यह संसार आज सचमुच युद्ध क्षेत्र बना हुआ है जिसमें तुम्हारी सभ्यता का संसार की चाल से मुक़ाबला है। तुम हर बात में संसार से उलटा राग अलापते हो। संसार अपने जङ्गली दिनों को याद कर विकासवाद के गीत गारहा है तुम कह रहे हो:—

"जन्म संस्कार विद्यादेः बुद्धेः स्वाध्यायकर्म्मणोः।
ह्रास दर्शनतो ह्रासः सम्प्रदायस्यमीयताम्॥"

संसार प्रकृति का चीरहरण करने पर तुला हुआ है, तुम संसार को दुःशासन बना रहे हो। वहां भोगवाद है, तुम्हारे यहां निस्सङ्गवाद है। वहां शक्तौभक्तिः का नाद गूंज रहा है, तुम भक्तौ शक्तिः कह रहे हो। वहां मुण्डमाला पहिने देशभक्ति अनाथ और दीनों के अधिकारों की छाती पर पैर रखके अपना भैरव नृत्य कर रही है, यहां तुम "वसुधैव कुटुम्बकम्" की तानें ले रहे हो। वहां बोतलवासिनी के उपासक प्याला हाथ में लिये "ऋणं कृत्वा सुराम्पिवेत्" बड़ बड़ा रहे हैं, यहां तुम आंखें मूंदे कह रहे हो "ईशावास्य मिदं सर्व्वं यत् किञ्चित् जगात्यां जगत्"। वहां अधिकार अभिमान और समानता के सूत्र हैं, यहां कर्त्तव्य विनय और गुण गरिमा के मंत्र हैं। वहां राजदण्ड के आश्रय मनुष्य हैं, यहां मनुष्यों के आश्रय राजदण्ड है। तुम्हारी चाल निराली, ढाल निराली, शस्त्र निराले और लक्ष्य भी संसार से निराले हैं। फिर तुम निश्चेष्ट क्यों हो? या तो यह संसार से उलटे राग अलापने बन्द करदो या अपने दुर्गों को दृढ़ करके उनसे निकल २ कर धावे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बोलो यह दुलक मुलक चाल अब संसार में न चलेगी। बस, उठो और आगे बढ़ो।

तुम्हारे दुर्ग की स्थापना सचमुच तुम्हारी सभ्यता के अनुरूप यहीं हुई थी। अभी उस दिन की बात है, बनारस में हिन्दू विश्वविद्यालय की आधारशिला रखने के लिये एक बृहदुत्सव मनाया गया था। उसका वृत्तान्त पढ़ते समय मुझे अपने कुल में बैठे हुए बरसों पुरानी बात याद आगई। एक दिन हमारे कुल की भी स्थापना हुई थी, उस दिन के दृश्य का विश्वविद्यालय के दृश्य से मिलान करने पर एक विचित्र प्रतिराग आंखों के आगे नाचने लगा। एक ओर विशाल जाज्वल्यमान सभामण्डप में रत्नप्रभा की चकाचौंध विस्तार करती हुई राजमण्डली मणिखचित सिंहासनों पर शान दिखा रही है, दूसरी ओर चारदीवारों की टोली झाड़ झंखाड़ों और कण्टकावृत काननों को चीरकर निर्णय कर रही है कि यज्ञमण्डप कहां बनायाजाय। एक ओर विशाल प्रासादमाल गगन मण्डल में सिर ऊंचा किये खड़ी है, दूसरी ओर सघन वृक्षमाला अपना आतङ्क जमाए है। उधर राज्य, ऐश्वर्य्य, धन, सम्पत्ति की चतुरङ्गिणी लिये मालवीय जी विद्या का कारागार बनाने को घेरा डाले पड़े है, इधर एक भिखारी कंधेपर झोली डाले अपने प्रभुका द्वार खटखटाकर कह रहा है, प्रभो! सरस्वती का द्वार खोलदो। कैसी प्रतिरञ्जना है! सच कहना, तुम्हें कौन सी झांकी भाती है। यदि तुम्हारा हृदय भारतीयता से बिलकुल शून्य नहीं हो गया है तो तुम अवश्य कहदोगे कि सरस्वती जङ्गल में स्वाधीन होकर रहना पसन्द करती है, पर नगर के प्रासादों में लक्ष्मी की स्वर्णशृङ्खलाबद्धदासी बन कर रहना उसे क्षणभर के लिये भी स्वीकार नहीं।

उस दिन भारत के उस मुंह फट सन्यासी ने वहीं सभा मण्डप में भारत की आवाज़ सुना दी थी। उस दिन राज मण्डली ने बहुतेरा गुल गपाड़ा किया था पर उन्हें क्या पता था कि वह निर्भय वीर अभी कौन २ से नाद सुनाएगा। आज उसी गम्भीर नाद से बड़ों बड़ों के आसन डांवांडोल होरहे हैं। भारत का यही मूल मंत्र है। पञ्जाब! तुम्हारे दुर्ग में इसी मन्त्र की साधना होती है। उठो और अपने गुरुकुल को अपनाओ। यदि आज उस दुर्ग की दीवारें पोली हैं, यदि वहां मिट्टी पानी की कमी है, यदि योद्धाओं के हाथ ढीले और कभी २ उलटे पड़ने लगते हैं तो यह अपराध किस का है? तुम्हारे अपनी सम्पत्ति को न अपनाने का। परन्तु फिर भी, क्या आज तक हमने कोई विजय नहीं पाई। आज सनातन धर्म्मियों को ब्रह्मचर्य्याश्रम बनाने की सूझी है। २५ वर्ष की आयु तक अविवाहित रहना आज साधारण बात होती जाती है। यह किसका प्रताप है? इसे साधारण बात न समझो। यदि आज उस भूमि में हमारे बालक स्वभावतः ही विना प्रयास जिन दुर्व्यसनों से बच जाते हैं यदि उन दुर्व्यसनों का ही संसार से उच्छेद होजाय, तो यदि संसार का कल्याण नहीं होगया तो उस की पक्की सड़क अवश्य बन गई। क्या आज मद्यपान को दूर करने मात्र के लिये अमेरिका को हिमालय धारण नहीं करना पड़ा? क्या क़ानून बनाने पर भी इस पिशाची से अमेरिका का पिण्ड छूटा? इंग्लैण्डमें तो कानून भी नहीं बनने पाया। और रही अपने भारत की बात, यहां तो मद्य पान की बाधित और मुफ्त तालीम दी ही जाती है। विश्वास नहीं तो प्रति वर्ष जितने स्कूल और शराब खाने खुलते हैं उनकी तुलना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करके देखलो। क्या इसी का परिणाम नहीं कि आज २० वर्ष में हमारे इतने बड़े कुल में केवल ५ मौत होपाई हैं? क्या आज हमारे कुल ने उच्च से उच्च शिक्षा के लिये मातृभाषा की सब रुकावटों का दलन नहीं कर डाला? भारत में मातृभाषा के निबन्धों के पुरस्कार कहां जाते हैं? इन सब से बढ़ कर क्या आज अफ्रीका से सचमुच आवाज़ नहीं आरही कि गुरुकुल का ब्रह्मचारी हलचल मचारहा है? आज मद्रास में वैदिकधर्म का शंख नाद कौन गुंजा रहा है? निस्सन्देह आप कहेंगे कि घर की सुध कौन लेरहा है? पर अभी विलम्ब क्या हुआ है उठिये, और अपने कुल को अपनाइये। सब शक्तियां जो दूर जा पड़ी हैं घर की सहायता में लग जायेंगी। जो सहस्रों मील पर शंखनाद बजा सकते हैं उन्हें क्या घर की ममता बिलकुल न सताएगी? अवश्य सताएगी और सता रही है। इन शुभ लक्षणों को पहिचानो और आगे बढ़ो। पञ्जाब! उठो। वीर पञ्जाब! उठो और अपने कुल को अपनाकर इस संसार के भोग जर्जर शरीर में ब्रह्मचर्य्य के रसायन से सच्चा स्नेह डाल दो। सन्यासी का अलक्ष्य हाथ तुम्हारे सिर पर पहुंच कर तुम्हें आशीर्वाद देगा। और संसार में वह दर्द और प्रेम भरी आह गूंज जायगी कि "आहा प्रभु तूने अच्छी लीला की।" उठो पञ्जाब उठो और आगे बढ़ो।

---

*बिन्दाल।

(लेखक—श्रीयुत सुमित्रानन्दन)

[१]

सखी! सूखी-बिन्दाल।
सन्मुख बहती है वह नीरव,
निःसलिला, कङ्काल।
गिरी, बिखरी स्मृति सी प्राचीन।
अतृप्त, निठुर वियोग सी दीन!
अचिर-लालसा सी निर्बल वह,
वैभव सी कङ्काल।
हाय! 'बिगड़े नसीब' सी हीन।
एक 'उतरे खुमार' सी क्षीण!

[२]

चिकनी, चुपड़ी, उपल-राशि वह,
नीली, पीली, लाल।
बाल-लीला सी मेरी आज।
खो चुकी है निज निर्मल-साज!
पर, उन कोमल पद-चिन्हों से
कैसी अस्फुट-चाल।
दबाती है दिल को तत्काल?
कहाँ सूखी है अलि! बिन्दाल?

---

* बिन्दाल देहरादून में एक सूखी-नदी है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार तरंग।

ले० लाला देवराज प्रधान कन्या महाविद्यालय जालन्धर।

ईश्वर मरगया।

(१) उनके लिए, जो निराशता के भँवर चक्कर में पड़ कर उदासी भाव से संसार में विचरते हैं, जो घबराहट में पड़ कर धैर्य्य त्याग से मनोर्थ सिद्धि में परिश्रम करना छोड़ बैठे हैं, ईश्वर मर गया है।

(२) जो विघ्न हरण, संकट मोचन के उपाय से विमुख होकर ठण्डी सांस लेते हुये, दिनों को व्यतीत करते हैं, जिनके चित्त चिन्ता से खिन्न रहते हैं, ऐसे मनुष्यों का ईश्वर मर गया।

(३) जो हंसना नहीं जानते और न हंसाना, जो प्रमोदक वचन बोलने से प्रतिज्ञ हैं, जिन्हें न प्रसन्न रहना आता है, और जो दूसरों को प्रसन्न करना भी नहीं जानते, और न उन्हें दूसरों के मन को हर्षित करने का स्वभाव है, ऐसे लोगों को जाकर कहो कि तुम्हारा ईश्वर मर गया।

(४) जिन्हें यह मालूम नहीं, कि हँसने तथा उल्लासित रहने से बढ़ कर बल वर्धक, स्वास्थ्य दायक, जीवन प्रद, और कोई रोचक औषधि नहीं, और जो प्रकृति से जहाँ बैठते हैं, उदासीनता की छाया डाल कर, दूसरों को भी सोगियों की भान्ति बना देते हैं, जिनके रोग ग्रस्त अन्धेरे मन प्रकाश की किरणों से शून्य हैं, ऐसे मनुष्यों के ईश्वर का देहान्त होने पर आओ हम शोक करें।

(५) जिनकी खेलकूद में रुचि नहीं, जिन्हें दिन रात धन इकट्ठा करने की डाह सता रही है, जो क्या कार्यालय, क्या घर सब दशाओं में काम काज की चिन्ता में डूबे रहते हैं, जिन्हे हंसने, उल्लासित होने का स्वप्न में भी अवकाश नहीं मिलता, ऐसे दुर्भागी लोगों का ईश्वर, मर गया, मर गया, और मर गया।

(६) जो प्रफुल्लित होकर बच्चों के मनको प्रफुल्लिता से नहीं मारते, जो परिहास दातिता रखना, मर्य्यादा-हीनता समझ कर, बच्चों से नहीं मिलते जुलते, और उनसे खेलकर, उनका घोड़ा बनकर अपनी पीठ पर नहीं चढ़ाते, ऐसे सन्तान के शत्रु, सन्तान को उदासीनता के गढ़े में फेंकने वाले, और अमृत का तिरस्कार करने वाले, हत भागी मनुष्यों का ईश्वर न मरे तो क्या करे।

देवियो अपने मन से पूछो।

(१) हिन्दु, मुसलमान और इसाइयों में इत्तफ़ाक पैदा करने, इन सब का प्रेम बढ़ाने, मेलजोल की गांठ को दृढ़ करने में मैं क्या उपाय कर रही हूं?

(२) जाति और देशोन्नति के लिए मैं क्या साधन कर रही हूं, इस इच्छा पूर्ति के लिए क्या मैं कष्ट सहन और निजसुख त्याग के लिए तय्यार हूं, और कहां तक हूं?

(३) मैं उन्नतिपथ पर चल रही हूं, या अवनति मार्ग पर, जाति देश और संसार-हित की भावनाएं मेरे मनमें उत्पन्न होती हैं कि नहीं या मैं अपने ही सुखाभिलाषा में निमग्न हूं?

(४) मुझे धन प्यारा है, या सद्व्यवहार? किसी देश की अधोगति को देखकर मुझे उस के साथ सहानुभूति होती है कि नहीं, और क्या मैं इच्छा पूर्ति के लिए साधन भी करती हूं, या केवल इच्छा मात्र रह जाती है?

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation and Use

हमारी मंजूषा।

(१) रसाल-वन–लेखक श्रीयुत गिरीश (पं० गिरिजादत्त शुक्ल) प्रकाशिका श्री प्रेमलता देवी, पृष्ठ संख्या २३, मूल्य ।–) प्रेम मंदिर आरा से प्राप्त।

यह अनुपमेय प्रेम पुञ्जिका ललित पद्यों में एक महिला के करुण क्रन्दन का वक्तव्य है। अशिक्षित सासु जन पुत्रि तुल्या बधुओं को जिस प्रकार मार्मिक कष्ट देकर उसके सुखमय जीवन को कण्टकाकीर्ण बनाकर अनेक बाधाएं उपस्थित करती हैं तथा पुत्र उनके इस कष्ट को देखते हुवे भी कैसे निरुपाय रहते हैं बड़ी ही हृदय भेदी रचना द्वारा दर्शाया है। यद्यपि वर्णन इतना छोटा है तथापि सर्वाङ्ग पूर्ण है। प्रत्येक करुण रस प्रेमी को इसे मंगा कर कवि की अपूर्व पद्य प्रभा का रसास्वादन करना चाहिये॥

(२) सृष्टिविज्ञान–लेखक श्रीयुत आत्माराम तथा श्री० एस० ए० दुदानी प्रकाशक जयदेव ब्रदर्स बड़ौदा, पृष्ट सं० २७२, मूल्य २), प्रकाशक से प्राप्त।

आजकल विज्ञान का युग है। विज्ञान के आगे सब शिर झुकाते हैं। डारविन के विकास वाद ने आधुनिक पश्चमीय विचार पर पूरा प्रभुत्व जमा लिया। मनुष्य की शारीरिक, सामाजिक, आत्मिक प्रत्येक प्रकार की उन्नति को विकास की ही कसौटी पर कसा जाता है। इस पुस्तक में लेखक महानुभावों ने डारविन के सिद्धान्त की समालोचना की है और युक्तियों द्वारा यह सिद्ध करने का यत्न किया है कि न तो यह सिद्धान्त सृष्टि के सब नियमों को समर्थन करता है और न ही यह मनुष्य को आगे के लिये सुमार्ग दर्शाता है। इसके साथ ही वेदोत्पत्ति, ईश्वर की सत्ता और न्यायप्रियता, अमैथुनी सृष्टि, भाषा की उत्पत्ति, आत्मविकास इत्यादि कितने ही विषयों पर वैदिक धर्म के विचार से बड़ी मनोरञ्जक और सारगर्भित मीमांसा की है। पुस्तक बड़े खोज और परिश्रम से लिखी गई है और उन भारतीय नवयुवकों के लिये जिनकी आखें पश्चमी सभ्यता और उसके अनुयायियों के विचारों से चकाचौन्ध हो गई हैं बड़े काम की है। सर्वथा ध्येय और मनन करने योग्य है।

(३) ब्रह्म यज्ञ–ले० श्री० आत्माराम, प्रकाशक जयदेव ब्रदर्स बड़ौदा, पृष्ट सं० १६२, मूल्य ।॥), द्वितीय संस्करण—

इस पुस्तक में लेखक ने उपासना और उस की फ़िलासफ़ी पर सतर्क बहस की है। स्तुति प्रार्थना, उपासना क्या है और इनका क्या भेद है। पुराने समय में प्रार्थना का क्या स्वरूप था और किस प्रकार वह शनै २ बदलता गया। केवल पाठमयी प्रार्थना के दोष, परमात्मा के लक्षण और उनके चिंतन से लाभ, इत्यादि धार्मिक विषयों पर प्रकाश डाला गया है। आत्म सुख की प्राप्ति के जिज्ञासुओं के लिये पुस्तक बड़ी उपयोगी है।

(४) शरीर विज्ञान–ले० श्री आत्माराम–प्रकाशक जयदेव ब्रदर्स बड़ौदा, पृष्ट सं० ३८ मूल्य ।≡)

शरीर रचना सम्बन्धी विज्ञान तथा शल्य विद्या (Surgery) का आदिमूल वेदों में है और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

इस विज्ञान को भारत के प्राचीन ऋषि भली प्रकार समझते थे और उनका प्रचार करते थे यही इस छोटीसी पुस्तक में दिखलाया गया है।

(५) आत्मस्थान विज्ञान–ले० श्री० आत्मारामजी प्रकाशक जयदेव ब्रदर्स—मूल्य -)

इस छोटे से पैम्फलट में वेद और आधुनिक विज्ञान के आधार पर यह बतलाया गया है कि प्राणियों के शरीर में आत्मा का निवास स्थान हृदय है।

सूचना।

१. "चांद" नाम का साप्ताहिक पत्र शीघ्र ही इलाहाबाद से प्रकाशित होने वाला है। इसके सम्पादक हैं श्रीयुत रामरत्नसिंह सहगल और इसका उद्देश्य सामाजिक कुरीतियों का दूर करना और स्त्री शिक्षा का प्रचार करना रहेगा। वार्षिक मूल्य ४), ६ मास के लिये २॥)

२. स्वराज्य लाहौर—इस नाम की उर्दू भाषा में एक राजनैतिक मासिक पत्रिका जनवरी १९२१ से लाहौर से निकलेगी, मूल्य ५) प्रतिवर्ष।

कुसुमोद्यान

पेटकी लपेट और स्वराज्य की गोलमाल।

(जन्मभूमि के एक लेख का छायानुवाद)

स्वराज्य का प्रश्न क्या है? क्या इङ्गलैण्ड से द्वेष वा प्रतिहिंसा का प्रश्न है? बिलकुल नहीं। यह यश गौरव और ऐश्वर्य्य का प्रश्न भी नहीं, निरी स्वतन्त्रता का प्रश्न भी नहीं। स्वतन्त्रता भी एक साधन है जिसका उच्च उद्देश्य है आत्म विकास। बड़ा उच्च प्रश्न है, पर इसके साथ ही एक और प्रश्न भी है जो पेट से सम्बन्ध रखता है। पेट सुनकर घबराओ मत, नाक मत सिकोड़ो। हमने पेट का नाम लिया है रसना का नहीं। रसना के स्वाद के क्षुद्र प्रश्न को हम इस के साथ नहीं जोड़ना चाहते। हमतो बात कहते हैं पेट की धधकती ज्वाला की। उस ज्वाला की जो मुट्ठी भर अन्न से ही बुझेगी, तुम्हारे स्वराज्य की लाख गोलमाल से भी नहीं। जिस स्वराज्य में, जिस सुधार स्कीम में इस प्रश्न का उत्तर नहीं, वह कोरी गोलमाल है, निरा आडम्बर है, केवल गगनप्रासाद है। जब हम यह प्रश्न उठाते हैं तो नौकरशाही हमें उपज का तोता पाठ सुना देती है। यह क्या गोलमाल है? उपज से क्या मतलब? रेलवे लाइन के अर्धभक्षी ग्रास से जो दो चार भूमि के जूठे टुकड़े बच गए हैं उनकी उपज! वह हमें नहीं चाहिये।

पेट के पीछे कपड़े की बात है। इस पर एच० डब्ल्यू० वोल्फ़ महोदय फ़रमाते हैं कि मैंचेस्टर इस मामले में भारत के सहयोगियों को निश्चिन्त करने को तय्यार है।

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

प्रश्न फिर वही है कि पेट के भीतर भूख और ऊपर कपड़े की लपेट का क्या प्रबन्ध होगा? हम कहचुके हैं कि उपज का नाम लेना निरा गोलमाल है, बटोही को बगल की राह बताना है, छलनी में पानी बटोरना है।

उपज! उपज! कितनी उपज होगी? जब तक छलनी के छेद बन्द न होंगे, सातों सागर भी बादल बन बरस जांय छलनी में होगा वही दो बून्द पानी। प्रश्न उपज का नहीं लैभज का है। क्या भारत से अनाज बाहिर जाता है? हां, बेशक। युद्ध से पहिले राली की टोली ४४१०९०० टन अनाज लेभागती थी जिस का मूल्य ३०५४१००० पाउण्ड होता है। युद्ध के आरम्भ से इस में कुछ कमी हुई है पर अन्न का भाव लगभग ज्यों का त्यों हैं। सीधी बोल चाल में यह अन्नराशि ६ करोड़ बोरियों के बराबर है। हरे! हन्त! इन बोरियां पर कराची बन्दर में दिनरात पुकार पड़ती है लैभज लैभज उधर आप कहते हैं उपज उपज॥

के. एल. दत्त महाशय बताते हैं कि सुभिक्ष के वर्ष में भारत अपने चावल की उपज में से दो प्रतिशतक दूसरे देशों को देसकता है। अब यदि यह मानलें कि प्रति चौथे वर्ष दुर्भिक्ष पड़ता है तो गेहूं में से १२ प्रतिशतक और चावल में से ४ प्रतिशतक प्रति वर्ष बचाकर ३ वर्ष में ४२ प्रतिवर्ष की बचत हुई। इस में यदि दुर्भिक्ष की उपज में ५० प्रतिशतक की कमी मानलें तो ८ प्रतिशतक की कमी फिर भी रहजाती है। अब दूसरे भागकी ओर आइये। यह सर्वसम्मत है कि ६ करोड़ भारत वासी एक समय भोजन पाते हैं। अब रही कपड़े की बात, सो महाशय वोल्फ़ की बात पर ध्यान देना भी उस पर एहसान करना है, उस पर अटकने की आवश्यकता नहीं। कपड़े पहिनो तो अपने हाथों के, नहीं तो नङ्गे रहो। आगम और निर्गम दोहरी मार हम नहीं सहार सकते। निर्गम ने भोजन ले लिया और आगम ने कपड़ा। हम १ से २० शिलिङ्ग तक के सूत के ७९९०००० पौण्ड भारत में क्यों आने दें?

क्या कल तक यह सब सूत अपने ही घर में नहीं काता और बुना जाता था? हा कहां है हमारा चरखा और कहां है उस के चारों ओर घिरी हुई मीठी ठठोलियों से रसभरी टटोली? वह चरखे का मधुर राग और वह कुल कामिनियों के कोमल हाथ कहां है, जिन में से निकल कर कपास भी किसी दिन अपने आप को धन्य मानती थी? सवा दो रुपये में डेढ़ बिस कपास आती है। इसे हमारी गृह लक्ष्मी फ़ुरसत में कात कर २४ क्यूबिट सूत २० शिलिङ्ग का निकाल लेंगी, जिस से ४ मर्दाने वा दो ज़नाने कपड़े बन जाऐंगे, दो रुपये इन पर बुनाई आऐंगे। ४½ रुपए हुए। क्या इस में आशातीत सस्ता पन, सन्देहातीत सचाई और प्रश्नातीत आकर्षकता नहीं? कपड़ा बाहिर से आए, आय इतनी कम हो और हर प्रकार का अन्न बाहिर चला जाए, बस रहने दो, हम यह नहीं चाहते। यह अवश्य बन्द होना चाहिये। जब हम यह कर सकें तो समझो वह स्वराज्य है, वह आत्मशासन है, वह कोई यत्न योग्य उद्देश्य है, शेष सब गोलमाल है। अब मामला स्पष्ट है, यदि हम अन्न का भारत से बाहिर जाना बन्द कर दें तो ६ करोड़ बोरियों के रुकजाने से इन शेष भारतवासियों को दूसरे समय के लिये अन्न मिल सकेगा। परन्तु प्रश्न यह है कि क्या हमें भारत की व्यापार नीति पर कोई प्रभुत्व प्राप्त है? जौइण्ट कमिटी ने स्पष्ट रूपेण निर्णय कर दिया है कि व्यापार नीति का निर्णय व्यवस्थापक-सभा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

करेगी किन्तु वह साम्राज्य-नीति के अधीन होगा। अब यह लोक विदित है कि साम्राज्य-नीति भारत में से अन्न का बाहिर जाना आवश्यक समझती है। यही उलझन और यही समस्या है, यहीं पर भूखी प्रजा का स्वराज्य और अल्प दर्शी राजनीतिज्ञों की सेल्फ़गवर्नमेण्ट टक्कर खाते हैं। नए सुधारों में अपने अनाज की रक्षा का कोई उपाय नहीं है, यही गोलमाल है।

———

नागपुर कांग्रेस में असहयोग प्रस्ताव।

चूंकि कांग्रेस की राय में वर्तमान भारत-सरकार पर से देश का विश्वास उठ गया है और चूंकि भारत के लोग स्वराज्य स्थापना करने का निश्चय कर चुके हैं और चूंकि भारतीय महासभा के विशेष अधिवेशन के पूर्व भारतीयों ने जितने उद्योग किये वे सब उनके स्वत्वों का स्वीकार कराने और अन्यायों (विशेषतः ख़िलाफ़त और पंजाब सम्बन्धी अन्याय) के प्रतिशोध कराने में असमर्थ हुए हैं, इसलिए यह कांग्रेस कलकत्ते के विशेष अधिवेशन में पास किये गये अहिंसात्मक असहयोग के प्रस्ताव को दुहराते हुए यह घोषणा करती है कि अहिंसात्मक असहयोग का समस्त कार्य क्रम अथवा उसका एक या एक से अधिक अंश वर्तमान सरकारके साथ असहयोग से लेकर टैक्स देने से इन्कार करने तक ऐसे समय पर अमल में लाया जाय जिस का निश्चय राष्ट्रीय महा सभा अथवा आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी करेगी। और तब तक देश को तैयार करने के लिए निम्न लिखित उद्योग किये जाने चाहिये (अ) १६ वर्ष से कम आयु वाले छात्रों के माता पिताओं और संरक्षकों को इस काम के लिए आमन्त्रित किया जाय कि वे अपने लड़कों को सरकारी और सरकारी सहायता प्राप्त अथवा सरकार द्वारा नियन्त्रित स्कूलों से हटा लें और साथ ही साथ राष्ट्रीय स्कूलों में अथवा अन्य उपायों द्वारा उनकी शिक्षा का प्रबन्ध करें। (ब) १६ वर्ष या १६ वर्ष से अधिक आयु वाले छात्रों को इस बात के लिए आमन्त्रित किया जाय कि वे तुरन्त परिणामों का विचार न करते हुए उन विद्यालयों से जिनसे गवर्नमेंट का किसी प्रकार का संसर्ग हो अपने को निकाल लें, यदि ऐसे विद्यालयों में पढ़ना उनकी आत्मा के विरुद्ध हो जिनमें एक ऐसी गवर्नमेण्ट का प्रभुत्व हो जिसके सुधार करने का निश्चय देश ने कर लिया है। कांग्रेस ऐसे विद्यार्थियों का असहयोग सम्बन्धी किसी विशेष काम में लग जाने अथवा किसी राष्ट्रीय विद्यालय में शिक्षा पाने की सलाह देती है। (ख) यह कांग्रेस गवर्मेंट या गवर्मेंट से सम्बन्ध रखने वाले या सहायता पाने वाले स्कूलों के ट्रस्टियों मैनेजरों और अध्यापकों को और म्युनिसिपलिटियों और लोकल बोर्डों को अपने २ स्कूलों को राष्ट्रीय बनाने का आदेश देती है। (द) यह कांग्रेस वकीलों से वकालत छोड़ने का अधिक उद्योग करने तथा राष्ट्रीय सेवाओं के करने का जिनमें कि मुक़दमे बाज़ों द्वारा अदालत का बहिष्कार और पञ्चायतों द्वारा मामलों का निपटारा भी शामिल है, आदेश देती है। (य) यह कांग्रेस भारत वर्ष को आर्थिक रूप से स्वतंत्र व सन्तोषी बनाने के लिए व्यापारियों और व्यवसायियों को आदेश देती है कि विदेशी व्यापारिक सम्बन्धों का धीरे २ बहिष्कार करें जिस से कि चर्ख़े और कपड़े का व्यवसाय बढ़े और इसके लिए

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

आलइण्डिया कांग्रेस कमेटी की ओर से जानकारों की एक कमेटी आर्थिक बहिष्कार की एक स्कीम तैयार करे। (फ) चूंकि असहयोग की सफलताके लिए त्याग की बहुत ज़रूरत है इस लिए यह कांग्रेस देश के प्रत्येक समुदाय और प्रत्येक स्त्री और पुरुष को इस राष्ट्रीय आन्दोलन में अधिक से अधिक त्याग की भेंट चढ़ाने का आदेश देती है। (ज) असहयोग के प्रचार के लिए प्रत्येक प्रान्त के ख़ास शहर में केन्द्रस्थ संगठन स्थापित करते हुए प्रत्येक गांवों या गांवों के समूह में कमेटियां संगठित की जांय। (ह) इण्डियननेशनल सर्विस के नाम से राष्ट्रीय काम करने वालों का एक दल संगठित किया जाय (क) इस दल के लिए तथा असहयोग के प्रचार के लिए आलइण्डिया तिलक मेमोरियल स्वराज्य फण्ड नाम से एक राष्ट्रीय फण्ड की स्थापना के लिए प्रभावोत्पादक ढंग से काम किया जाय। यह कांग्रेस अभी तक असहयोग के कार्य्य क्रम के अनुसार किये गये काम पर देश को बधाई देती है, ख़ासकर वोटरों द्वारा कौंसिलों के बहिष्कार पर विशेष रूप से, और ऐसी परिस्थिति में इस बात का दावा करती है कि नई कौंसिलें देशकी सच्ची प्रतिनिधि स्वरूप नहीं हैं और विश्वास करती है कि जिन लोगों ने अधिकांश वोटरों के वोट देने के स्थान पर से जानबूझकर अनुपस्थित रहने पर भी अपने को चुनवा लेने दिया, वे कौंसिलों से इस्तीफ़ा दे देंगे और यदि अपने वोटरों की प्रगट इच्छा पर भी जनसत्ता के सिद्धान्त के विरुद्ध वे अपने स्थान पर बने रहें तो चुनने वाले लोग जानबूझकर उनसे किसी प्रकार की राजनैतिक सेवा न लें।

यह कांग्रेस जनता और पुलिस और सिपाहियों के बीच में पारस्परिक रूप से बढ़ती हुई प्रीति को सराहती है और आशा करती है कि पुलिस वाले और सिपाही लोग अपने अफ़सरों की आज्ञा के पालन में अपने सिद्धान्त और अपने देश को बलिदान करनेसे इन्कार करेंगे। और जनता के प्रति अपने शिष्ट और अच्छे व्यवहार से उस बदनामी को दूर करदेंगे जो उनके ऊपर इस रूप में है कि वे अपने ही आदमियों की भावनाओं का कोई ख़याल नहीं करते। और यह कांग्रेस उन सब लोगों से जो सरकारी नौकर है, अपील करती है कि जब तक देश की ओर से उन्हें अपनी नौकरी से इस्तीफ़ा दे देने का आमन्त्रण नहीं मिलता, वे इस प्रकार राष्ट्र की सेवा करें कि अपने देश भाइयों के साथ अधिक कृपा और ईमानदारीका व्यवहार करें, और खुलम-खुल्ला, निर्भय होकर सार्व्वजनिक अधिवेशनोंमें जांय उनके संचालन में तो योग न दें, परन्तु विशेषरूप से राष्ट्रीय आन्दोलनों को धनकी सहायता खुल्लम खुल्ला दें।

यह कांग्रेस इस बात पर विशेष रूप से ज़ोर देती है कि अ-हिंसात्मिकता, अ-सहयोग प्रस्ताव का मुख्य भाग है, और लोगों का ध्यान इस बात की ओर आकर्षित करती है कि बातों और कामों दोनों में, अहिंसा का भाव लोगों में आपस में उतना ही आवश्यक है जितना कि लोगों और गवर्नमेण्ट के बीच और कांग्रेस की यह राय है कि अशान्ति (उपद्रव) की भावना न केवल सच्ची जन-सत्ता की भावना ही के विरुद्ध है, बल्कि ज़रूरत पड़ने पर अ-सहयोग के कार्य्य क्रम में जिन दूसरी श्रेणियोंसे काम लिया जायगा उनके संचालन में रुकावट पड़ेगी।

अन्त में, इस लिए ख़िलाफ़त और पंजाब का अन्याय दूर हो जाय, और साल भर के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भीतर स्वराज्य प्राप्त हो जाय, कांग्रेस उन सब संस्थाओं से, जिनका सम्बन्ध कांग्रेस से हो या न हो, अनुरोध करती है कि वे अपनी समस्त शक्तियां अहिंसात्मक अ-सहयोग के प्रचार में लगा दें। अ-सहयोग की सफलता इसी पर निर्भर है कि लोग आपस में बिलकुल सहयोग करें। यह कांग्रेस सभी सार्वजनिक संगठनों से अनुरोध करती है कि वे हिन्दू मुसलिम एकता को बढ़ावें, और कांग्रेस के हिन्दू डेलीगेट हिन्दू नेताओं से अनुरोध करते हैं कि वे ब्राह्मणों और अ-ब्राह्मणों के झगड़ों को, जहां कहीं वे होते हों, निपटा दें और विशेषरूप से उद्योग करें कि हिन्दुओं में से अछूतों का अनादर उठ जाय, और धर्म-नेताओं से सादर अनुरोध करते हैं कि नीच जातियों के उठाने के काम में काम करने वालों को वे विशेष रूप से सहायता दें।

वैज्ञानिक संसार।

१ 'संजीवन बूटी'

रोगी की एक मात्र इच्छा स्वास्थ्य, चाहे प्राप्त हो वा न हो, वृद्ध की एक आकांक्षा यौवन प्राप्ति, चाहे इसका मिलना कितना ही दुःसाध्य हो। गत सौन्दर्य, बीती हुई शक्ति और गये हुए उत्साह को पुनः प्राप्त करना किस को नहीं भाता। इसके लिये क्या कुछ न्योछावर नहीं किया जासक्ता। कितने वृद्ध हैं जो हाथ मलते हैं कि हाय हम जवान न हुए नहीं तो यह करते और वह करते; कितने स्वास्थ्य हीन युवा हैं जो शैशव काल के आनन्दमय दिनों को स्मरण कर सर्द आहें नहीं भरते। परन्तु क्या गये हुये दिन फिर लौट सक्ते हैं? इस प्रश्न का एक ही उत्तर है जो कि सब को सूझता है। परन्तु वायिना के डाक्टर स्टैनिच इस उत्तर से सहमत नहीं। उनका कथन है कि इस प्रश्न का एक और भी उत्तर है जो कि निराशा के स्थान में आशा की मोहिनी मूर्ति दिखलाता है।

कुछ मास की बात है कि फ्रान्स की राजधानी पेरिस में यह समाचार प्रकाशित हुआ था कि डाक्टर वोरोनाफ ने एक बूढ़े बकरे को युवा बना दिया, पुनः यह प्रसिद्ध हुआ कि इसी डाक्टर ने एक चिम्पैन्ज़ी बन्दर के शरीर में से एक गिल्टी (gland) लेकर एक वृद्ध मनुष्य के शरीर में जोड़ दिया जिस से कि वह फिर यौवन का आनन्द प्राप्त करने लगा। इसके कुछ काल पीछे अमरीका से सूचना मिली कि वहां पर पोर्टलैण्ड आरिगान के डाक्टर मैक-कार्कल बकरे बकरियों के शरीर से गिल्टी निकालकर बड़ी सफलता से मनुष्यों के शरीर में इन "यौवन गिल्टियों को लगा रहा है। स्त्री और पुरुष दोनों पर ही यह अप्रेशन किया गया है। डाक्टर मैक कार्कल की सम्मति में इस क्रिया से गति और बलकी ही वृद्धि नहीं होती है परन्तु आयु की भी वृद्धि होगी।

परन्तु इन सब से बढ़कर आश्चर्य्य जनक तजरुबे डाक्टर स्टैनिच के हैं। पिछले युद्ध में ज़खमी सिपाहियों के टूटे हुए अंगों को काटने छाटने और उनके स्थान में अन्य पशुओं के नये अंग लगाने की बड़ी आवश्यकता पड़ी और इसी समय यह पतालगा कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यदि जवान पशुओं के लिंग सम्बन्धी अन्तरीय (शरीर के अन्दर रहने वाले) अंगों को काट कर बूढ़े पशुओं के इन अंगों के स्थान में लगा दिया जाय तब इन में पुनः यौवन का संचार हो जाता है। डाक्टर स्टैनिच के तजरुबों में बड़े महत्व की बात यह है कि वह केवल विशेष गिल्टियों को बदल कर उनके स्थान में नवीन गिल्टियें लगाने मात्र से ही यौवन संचार नहीं करता वरन इसके अतिरिक्त और भी तरीके हैं जिन्हें वह इस उद्देश्य के लिये काम में लाता है। उन तरीकों में से एक शरीर की विशेष नाड़ियों को एक विशेष प्रकार से बान्धना है और दूसरा विशेष अंगों को एक्सरेज अथवा रान्जण किरण के नीचे रखना है। इस पिछली रीति में यह विशेषता है कि न तो मनुष्य के लिये अन्य जीवों का हनन करना पड़ता है और न ही मनुष्य शरीर में पाशविक अंगों की स्थापना होती है।

१९१२ में डाक्टर स्टैनिच ने एक पन्द्रह दिन की आयु वाले खरगोश से लिंगिक अंगों को निकाल डाला और उनके स्थान में उसी जाति की एक मास की आयु वाली खरगोशनी के अंडकोश (ovaries) को लगा दिया। आप्रेशन से अच्छा होने पीछे खरगोश भली चंगी खरगोशनी बनगया। इस के कुछ ही समय उपरान्त विपरीत क्रिया द्वारा खरगोशनी को उसने खरगोश बना दिया। इसके पश्चात् उसने चूहों की ओर ध्यान फेरा। चूहों में बूढेपन का एक सब से बड़ा चिन्ह यह है कि उसके बाल कड़े पड़जाते हैं और कई स्थानों से झड़ने गलते हैं जिस से वह इन स्थानों पर गंजा हो जाता है। झुकी हुई कमर और नीचे की ओर झुका हुआ सिर बुढ़ापे के अन्य चिन्ह हैं। इन शारीरिक परिवर्तनों के साथ ही मन पर उदासी छाजाती है यहां तक कि वह युवती चुही के सन्मुख होने पर भी किसी प्रकार की उत्तेजना प्रगट नहीं करता।

क्या किसी प्रकार इस अधमुये जीव में यौवन की अग्नि का पुनः जागृत करना सम्भव है। स्टैनिच के तजरुबे इसका उत्तर 'हां' में देते हैं। उसका कथन है कि तीन प्रकार से यह आश्चर्य्यमय घटना घटी जासक्ती है। पहिला वीर्य्यक्रमी वाली नाड़ी को बंधने से दूसरे एक्सरे के प्रयोग से और तीसरे उपरोक्त जवान चूहे की गिल्टियों के लगाने से। इन तीनों में से किसी एक भी क्रिया के कुछ सप्ताह पश्चात् चूहे में नवीन जीवन का संचार भलीभान्ति दिखलाई देने लगता है। सिर ऊपर को उठ आता है, आंखों में चमक आजाती है, शरीर में अकड़पन दिखलाई देता है और गंज के स्थान पर फिर से बाल निकलने लग पड़ते हैं।

यह स्वभाविक था कि चूहों पर किये गये इन तजरुबों की सफलता, मनुष्यों को यौवन प्रदान करने की ओर ध्यान आकर्षित करती। १९१८ में स्टैनिच के सहायक डाक्टर लिचटैन्स्टर्न ने इस ओर तजरुबे आरम्भ किये और उन्हें बड़ी भारी सफलता प्राप्त हुई। बूढ़े मनुष्य इस आप्रेशन के पीछे न केवल युवा और नवीन ही दीखने लगे वरन अपने शरीर में अधिक बल और शक्ति का भी अनुभव करने लगे।

यह भी देखा गया है कि इस रीति से आप्रेशन करने पश्चात् खरगोश चूहे इत्यादि अपनी साधारण आयु से एक चौथाई अधिक जीते हैं। मनुष्य में यह नवीन शक्तियां कितने समय तक स्थिर रहेंगी यह भविष्य ही बतलायेगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यह महाशोक की बात है कि इस समय आस्ट्रिया में महा दुर्भिक्ष पड़ा हुआ है अतः डाक्टर स्टैनिच को अपना क्रिया भवन बन्द करना पड़ा है और अब वह बिना धन, सामग्री सहायता और जानवरों के बैठे हैं। लीपज़िग नगर के डाक्टर रोक्ष जनता से सहायता की अपील करते हैं।

हमें आशा है ज्योति के पाठकों और पाठकाओं को ऊपर दिया हुआ वृत्तान्त विस्मय जनक आनन्द प्रदान करेगा। इन तजरुबों से जो एक बात हमें दिखलायी देती है वह ब्रह्मचर्य्य की महिमा है। ब्रह्मचर्य्य द्वारा वाह्य और अन्तरीय लिंगों को पुष्ट रखते हुए आयु पर विजय पाना कितना सरल है। यही कारण है कि हमारे शास्त्र ब्रह्मचर्य्य पर इतना बल देते हैं। इन तजरुबों से हम समझसक्ते हैं कि मनुष्य के लिये दो सौ या चार सौ वर्ष तक जीना असम्भव नहीं।

(२) आधुनिक सभ्यता पर गत महायुद्ध का प्रभाव।

'ज्योति' के पाठक भली प्रकार जानते होंगे कि गत योरोपीय महायुद्ध में किस प्रकार विषैली गैसों द्वारा शत्रु पर आक्रमण किये जाते रहे हैं। सेना के दल के दल धावा करने के लिये आगे बढ़ते हैं, उन्हें पूर्ण विश्वास है कि शत्रु पर अवश्य विजय प्राप्त करेंगे, परन्तु बीच में ही अदृश्य गैस का संचार होता है जो कि उनकी नासिका द्वारा फेफड़ों में पहुंच खांसी आरम्भ कर देती है, आंखों और नासिका से पानी निकलना आरम्भ हो जाता है, सिर चकराने लगता है और शूरवीर सैनिक हताश हो गिर पड़ता है। इस समर रीति के पहिले पहल प्रयोग जरमनी द्वारा हुआ परन्तु शनैः २ फ्रान्स, इंग्लैण्ड, इटली, अमरीका इत्यादि सभी देशों ने इस का आश्रय लिया। जो जरमनी द्वारा आरम्भ की गयी इस समर क्रिया को पैशाचिक और अमानुषिक का विशेषण देते थे वह स्वयं इस के उपासक बन गये। अस्तु। युद्ध समाप्त होगया। आशा की जाती थी कि गैसों द्वारा समर करने की क्रिया के विरुद्ध निज को सभ्य कहने वाले देश बड़ा बल लगावेंगे और भविष्य में इस को युद्ध का आवश्यक अंग बनने से भरसक रोकेंगे। परन्तु शोक कि ऐसा नहीं हुआ। आधुनिक सभ्यता का चमकीला और सुन्दर चमड़ा तनिक भी कुरेदने पर नीचे से राक्षसी मान्स की दुर्गन्ध आने लग पड़ती है जिस में कि पैशाचिक रुधिर संचार कर रहा है। इंग्लैंड भी अपने को सभ्य जातियों में मुख्य कहने में किसी से कम नहीं, तो भी उस की अवस्था क्या है। उस देश के युद्ध विभाग ने अभी २ एक 'रसायनिक समर कर्तृ कमेटी' की स्थापना की है, जिस के सदस्यों में देश के धुरन्धर रसायनिकों के नाम (बिना उनकी आज्ञा लिये ही) लिखे गये हैं। इस कमेटी का काम होगा कि वह ऐसी २ गैसों और विषों का अनुसन्धान करे जो कि भविष्य में शत्रु को क्षण भर में यम लोक पहुंचा सकें। सभ्यते! तुम धन्य हो।

इस मेघावृत आकाश में विद्युत की केवल एक ही रेखा दिखलाई देती है। कुछ वैज्ञानिक ऐसे भी हैं जिन्हों ने इस अमानुषिक कार्य्य के विरुद्ध अपनी आवाज़ उठाई है। प्रोफ़ैसर अलैगज़ैन्डर मैकिन्ज़ी उन्हीं सज्जनों में से हैं। आप ने सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक पत्र नेचर (Nature) में एक पत्र छपवाया है जिस में इस प्रथा का विरोध किया है वह लिखते हैं।

"विषैली गैसों का युद्ध में प्रयोग एक पैशाचिक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्रथा है जिस को कि जर्मनी ने सभ्य देशों द्वारा स्वीकृत युद्ध नियमों का उल्लंघन करते हुये प्रचलित किया और उस समय मित्र दल के लिये इसका प्रतिकार करने के अतिरिक्त और कोई उपाय न था।... .....उस समय मैंने सहर्ष सहायता दी थी। परन्तु अब युद्ध के समाप्त होजाने से अवस्था सर्वथा बदल गयी। मेरे विचार में यह अनुचित है कि आज युद्ध की समाप्ति के दो वर्ष पीछे वैज्ञानिकों से प्रार्थना की जाय कि वह लड़ाई करने की ऐसी रीति पर अनुसंधान करें जिस को कि अभी तक नियमानुकूल नहीं माना गया।

यदि गैस द्वारा भविष्य में युद्ध करना स्वीकार किया गया तो उस का एक परिणाम यह होगा कि प्रत्येक जाति को निज रक्षा के लिये इस पैशाच क्रिया का आश्रय लेना और उसे विस्तृत करने के लिये प्रयत्न करना होगा। परन्तु अभी २ हमारे सन्मुख महा मन्त्री ने भिन्न देशों, मनुष्यों और जातियों के बीच सदवर्ताव बढ़ाने के लिये हार्दिक अपील की है।....."

(३) मैगेफोन।

जो लोग गत तीन चार वर्ष से कान्ग्रेस के अधिवेशनों में सम्मिलित हो रहे हैं वह भली प्रकार अनुभव करते होंगे कि वहां पर वक्ताओं को पन्द्रह बीस सहस्र मनुष्यों तक अपनी आवाज़ पहुंचाना बड़ी कठिनता का कार्य्य है। इस वर्ष भी नागपुर में श्रीयुत विजयराघव आचार्य सभापति कान्ग्रेस की आवाज़ बहुत बलवती न होने से उनकी वक्तृता पंडाल के दूर २ के कोनों में बैठी हुई जनता भली प्रकार न सुन सकी और इसलिये बहुत हुल्लड़ होता रहा। यह कष्ट सभी जगह—जहां २ भी अधिक संख्या श्रोताओं की हो—होता है। पिछले दिनों अमरीका में युद्ध के लिये धन एकत्र करने के लिये बड़ी २ सभायें करनी पड़ी थीं और वहां भी यही कष्ट अनुभव किया था। इसको दूर करने के लिये वहां के बोस्टन नगर में एक ऐसा चबूतरा बनाया गया है कि जिस पर खड़ा हो कर वक्ता बड़ी सुगमता से ५० सहस्र जनों तक अपनी आवाज़ पहुंचा सक्ता है। उसकी आवाज़ को सामने रक्खे छोटे यन्त्रों द्वारा जिनको माक्रोफ़ोन्स कहते है इकट्ठा कर लिया जाता है; वायुशून्य नलिकाओं को चक्करों द्वारा खूब ऊंचा कर दिया जाता है और फिर बड़े २ टैलीफ़ोन और मैगोफ़ोन्स द्वारा चहुं ओर फेंक दिया जाता है। इसका एक विशेष लाभ यह है कि खुली हवा में—बिना किसी मन्दिर या पंडाल बनाये के—इस यन्त्र द्वारा इतने मनुष्यों को व्याख्यान सुनाया जा सक्ता है।

———

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार प्रवाह

नागपुर कांग्रेस।

कांग्रेस के विशेष अधिवेशन के समाप्त होते ही लोग नागपुर कांग्रेस की ओर बड़ी उत्सुकता से ताक रहे थे, असहयोग के पक्षी और विपक्षी दोनों ही के हृदय उद्वेलित हो रहे थे। असहयोग वादी उल्लास से और विपक्षी भय से। किन्तु हर्ष का विषय है कि नागपुर कांग्रेस का यह अधिवेशन सफलता पूर्वक समाप्त होगया। पंडाल की सजावट, डेलीगेटों की उपस्थिति, दर्शकों की संख्या सभी अपूर्व थी परन्तु जो बातें सब से अधिक अचंभा होती थीं वह यह कि नागपुर कांग्रेस लीडरों और शानदार बड़े २ लोगों की प्रतिनिधि सभा न थी किन्तु यह सार्वजनिक संस्था थी और सर्व प्रकार की स्थिति के नरनारियों का संघ था यह सचमुच जातीय महासभा के नाम को चरितार्थ कर रही थी। प्रायः प्रतिवर्ष महासभा में बड़े २ शानदार लीडर बड़ी शान से पाश्चात्य रहन सहन वसन भोजन आदि आडम्बरों से जनता के ऊपर अपनी स्थिति का भय संचार करते हुये अपनी विशाल वक्तृताओं को सुना कर चले जाते थे जनता की आवाज़ मन्द होने के कारण उन तक पहुँचती ही न थी किन्तु सौभाग्य की बात है कि नागपुर में उस शानके स्थान में झोंपड़ियाँ, गांधी कैप और खद्दर के वस्त्र अपनी अपूर्व छटा दिखाकर जातीय प्रेम प्रकट कर रहे थे और जनता की आवाज़ इतनी ऊंची हो रही थी कि लीडरों को अपना मत उनकी आवाज़ के अनुकूल ही बनाना पड़ा अथवा यह कहना अत्युक्ति न होगी कि लीडर थे ही नहीं केवल एक नेता के, जनता के हृदय और मस्तिष्क दोनों के पथ दर्शक महात्मा गांधी के नेतृत्व में सारा कार्य्य हुआ।

आज ३५ वर्ष से जातीय महासभा कार्य्य कर रही थी किन्तु उस कार्य्य क्रम में और अब के कार्य्य क्रम में बड़ा ही अन्तर हुआ अब तो महा सभा ने काया ही पलट ली है। अब तक कांग्रेस का केवल यह कार्य्य था कि वह जनता के दुःखों और कष्टों की फ़र्य्याद लेकर शासकों के कानों तक पहुँचाकर उनसे उनके हटवाने का उद्योग करती रही किन्तु अब उसका विश्वास उस सिद्धान्त पर नहीं रहा उसने अपनी चेष्टा की विफलता पर्य्याप्त रूप से देखली अतः नागपुर कांग्रेस को ही यह सौभाग्य प्राप्त हुआ कि फ़र्य्यादों की शक्ति प्राप्त होने का गौरव त्याग कर स्वराज्य प्राप्ति—चाहे बृटिश साम्राज्यान्तर्गत अथवा स्वतन्त्र—ही उसने अपना ध्येय, नहीं नहीं, एक मात्र ध्येय बनाया और इस ध्येय में हिन्दू मुसलमान सत्याग्रही नैशनलिस्ट सभी ने अपना भेदभाव डुबो कर योग दिया। एक और विचित्रता जो कि कलकत्ता कांग्रेस से नागपुर कांग्रेस की तुलना करने पर ज्ञात होती है वो यह है कि कलकत्ता में जब महात्मा गांधी जी ने स्वराज्य प्राप्ति के हेतु असहयोग करने का प्रस्ताव उपस्थित किया तो जनता का कुछ भाग और कई लीडर दोनों भय के मारे कांपते थे कि कहीं अनिष्ट न हो जावे। अतः महात्मा जी को उनको समझाने और अपने साथ २ ले चलने के लिये बड़ा बल लगाना पड़ा था। किन्तु नागपुर में जनता और नेता ने ऐक्यमत से स्वराज्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

प्राप्ति को ध्येय माना और अहिंसात्मक असहयोग को ही उपयुक्त साधन स्वीकार किया। यह ध्येय और साधन इतने सार्वजनीन हुये कि किसी भी विपक्षवादी को अपना मत प्रकाशित करना जनता के धैर्य्य को भंग करना था। इन बातों के अतिरिक्त अत्यन्त गौरव और महत्व की बात यह थी कि जातीय महा सभा में अब उन आवश्यकीय बातों पर ध्यान दिया जाने लगा है जिन को आर्यसमाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द जी प्रारम्भ से ही उपयुक्त सिद्ध कर गये हैं। अछूतों का उद्धार, जातीय शिक्षा, पंचायती न्यायालय इत्यादि जिन सामाजिक धार्मिक बातों को आज राजनैतिक आन्दोलन के साथ जोड़कर स्वराज्य को सर्वांग सम्पन्न करने की चेष्टा की गई है वह सब ऋषी के स्वराज्य में वर्णित हैं यद्यपि कुछ वर्ष पूर्व यही बातें राजनैतिक क्षेत्र के बिल्कुल बाहर रक्खी गई थीं और राजनैतिक नेता इन्हें राजनैतिक क्षेत्र में अनुपयुक्त ही नहीं वरन् बाधक समझते थे। अतः यह कहना अत्युक्ति नहीं कि नागपुर कांग्रेस आत्मिक, सामाजिक तथा नैतिक सभी प्रकार की उन्नति की साधिका बनकर देश के लिये अपूर्व कल्याण की नेतृ बनी सचमुच ऐसी कांग्रेस कभी नहीं हुई!!

——

प्रधान की वक्तृता।

इस वर्ष कांग्रेस के प्रधान श्रीयुत सी० विजय राघवाचार्यर जी नियुक्त हुये थे। अपनी अनथक देश सेवा, योग्यता तथा वृद्धपन सभी कारणों से वह इस उच्चपद के योग्य थे उनकी वक्तृता बड़ी विद्वत्तापूर्ण और ओजस्विनी थी। कई लोगों का मत है कि उन्होंने कलकत्ता कांग्रेस के प्रस्तावों का खण्डन करके जनता का विश्वास जो उन पर था उसका घात किया है किन्तु हमारी समझ में यह बात बिल्कुल अशुद्ध है। जनता को अपने प्रतिकूल समझते हुये भी अपने स्वतन्त्र विचारों का प्रकाश जिस सरलता और वीरता के साथ उन्होंने किया उससे उनके हृदय की सरलता का परिचय भली भांति मिलता है उन्होंने अपने सिद्धान्तों के आगे लोक-संग्रह की परवाह नहीं की। यदि हमारे सभी राजनैतिक नेता सिद्धान्तों को लोकेषणा के ऊपर रक्खें तो इस से अधिक सौभाग्य की बात और क्या हो सकी है। किन्तु स्वभाव की सरलता चाहे कुछ हो प्रधान की वक्तृता इस अवसर पर बिल्कुल निष्फल गई मानों वह बहरे कानों में पड़ी उससे न तो नरम दल वालों की आत्मा सन्तुष्ट हुई न गर्म दल की। जब कि कांग्रेस ने स्वराज्य प्राप्ति अपना लक्ष्य बना ही लिया तब यह सिद्ध करने में व्यर्थ श्रम करना कि इसकी आवश्यक्ता है व्यर्थ था। इससे न तो उपस्थित जनता को ही लाभ था न बृटिश शासक वर्ग को क्योंकि योग्यता प्राप्त होने पर भारतीयों को स्वराज्य देना बृटिश शासकों ने स्वीकार कर ही लिया है। आप कहते हैं—"सुधार स्कीम नौकरशाही को राज़ी रखने के लिये बनाई गई है" तथा "सुधारों के नाम से एक ऐसी स्कीम काम में लाई गई है जिससे देश भिन्न २ राष्ट्रों में बट कर द्वेषभाव से सदा पिस रहे" अतः आपका कथन है कि "देश की इस शोचनीय दशा के कारण देश और कांग्रेस इस नतीजे पर आ गये हैं कि उत्तरदायी शासन की शीघ्र स्थापना और प्रान्तिक शासन का फिर से सृजना ही इसकी औषधि है" आगे जाकर आप मानते हैं कि हमें इंगलैन्ड को बाध्य करना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पड़ेगा कि वह हमें उत्तरदायी शासन प्रणाली दे और उसके लिये उपयुक्त शस्त्र असहयोग ही है। आप कहते हैं कि "स्वतन्त्रता प्राप्त करने के लिये असहयोग जैसे किसी संगठित शस्त्र की आवश्यक्ता है इस बात पर किसी भी समझदार आदमी की दो रायें नहीं हो सक्तीं" किन्तु जब असहयोग के ढंग और क्षेत्र की बात होती है तब आप खसक जाते हैं। असहयोग के सिद्धान्त को मानकर भी आप सारे प्रोग्राम से सहमत नहीं। कौंसिलों के बहिष्कार में असहयोग सफल हुआ है पर शिक्षा विभाग में उन्हें भय है कि स्कूल और कालेज एक दम ख़ाली करके सर्कार की नाक में दम करना हमारे लिये असम्भव है दूसरी बात यह कि नेशनल स्कूल कालेज बनाने के लिये शीघ्र द्रव्य न मिलेगा तथा जनता पर अधिक बोझ पड़ेगा इत्यादि। हमारी समझ में नहीं आता कि जब स्वराज्य प्राप्ति ध्येय हो गया है और शीघ्र ही प्राप्त कर लेने पर बल दिया जा रहा है तो शिक्षा का प्रश्न अधिक से अधिक दो तीन साल का हो सक्ता है। इस समय के लिये यदि राष्ट्रीय शिक्षणालय न भी बने तो कौनसा अंधेर हो चला है। अगर हम एक दम से वर्तमान स्कूल कालिजों से विद्यार्थियों को निकालकर वर्तमान शिक्षा प्रणाली को स्थगित कर सकें और सर्कार को जनता की आवाज़ से बाधित हो स्वराज्य दे देने पर बाध्य कर सकेंगे तो स्वराज्य प्राप्ति पर यही स्कूल कालेज राष्ट्रीय बनकर उपयुक्त शिक्षणालय बन जावेंगे। और शीघ्र स्वराज्य प्राप्ति कांग्रेस ने ध्येय मान ही लिया है। और महात्माजी तो साल के भीतर ही सम्भव समझते हैं। परन्तु एक शिक्षा विभाग ही नहीं राष्ट्रीय पंचायती न्यायालय से भी आप भय करते हैं भला जो भारतीय योग्य वकील इत्यादि अंग्रेजी कोर्टों में न्याय निष्पत्ति देते हैं वह पंचायती न्यायालयों में क्या कार्य्य न कर सकेंगे? अगर भारतीय इस कार्य्य को नहीं सम्भाल सक्ते तो स्वराज्य मिलने पर सारे देश का शासन कैसे करेंगे?

आगे चल कर प्रधान महाशय कहते हैं कि देश के भाग्य का निर्णय दो व्यक्तियों के हाथ में है—एक तो मिस्टर मांटेग्यू और दूसरे महात्मा गांधी। असहयोग के प्रस्ताव को स्वीकार करते हुये भी बृटिश शासकों को कांग्रेस का सन्देश भेजकर पुनः सफली भूत होने की आशा करना ऐसी असंगत बात मालूम होती है कि कहना पड़ता है कि प्रधान महोदय दो तर्फ़ी बातें कर रहे थे उनका चित्त डांवाडोल था और वह नैराश्य की लहर में पड़े थे। प्रधान की वक्तृता लोगों को पसन्द नहीं आई क्योंकि उसमें कोई ऐसा रचनात्मक तथा क्रियात्मक विधान नहीं था जो जनता की तर्कनाशक्ति अथवा अन्तरात्मा को प्रेरित करता।

असहयोग।

नागपुर कांग्रेस का मुख्य उद्देश्य सिद्ध हो गया असहयोग का प्रस्ताव जो कि कलकत्ता कांग्रेस ने स्वीकार कर लिया था किन्तु जिसके विषय में जनता में भेद भाव था अब प्रायः सर्व सम्मति से पास हो गया। कई लोगों की सम्मति है कि यह प्रस्ताव कुछ शिथिल कर दिया गया है परन्तु यदि पक्षपात को हटाकर सूक्ष्म दृष्टि से देखा जावे तो जो कुछ अदल बदल हुई है उससे असहयोग अधिक बलवान अहिंसात्मक शस्त्र बन गया है और इससे अधिक लाभ होगा। कलकत्ता प्रस्ताव के समय महात्मा

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar Collection. Digitized by eGangotri

गांधी और कुछ इने गिने लीडर और जनता का अधिकांश भाग एक ओर थे और शेष लीडर और थोड़ीसी प्रजा दूसरी ओर। किन्तु अब जब कि भरी कांग्रेस में दास, पाल, लाज और गांधी सभी सहमत हुये तो जनता में भ्रम फैलने का अंदेशा ही नहीं रहा अतः असहयोग से जिस भय की आशंका की जाती थी उसके लिये कोई स्थान नहीं। अब तो हम यही कहेंगे कि "सौ सयाने एकै मत" अब मिस्टर सी. आर. दास को चाहिये कि अपनी वकालत छोड़कर देश के काम में लग जावें और लाला लाजपतरायजी को चाहिये कि प्रान्त प्रान्त में घूम २ कर राष्ट्रीय कालेज स्कूल खुलवाने का कार्य्य अपने हाथ में लेवें क्योंकि उनका सिद्धान्त है कि राष्ट्रीय शिक्षणालय खुलने पर वर्तमान शिक्षणालयों का त्याग किया जावे। इसके अतिरिक्त असहयोग के पक्षपाती धनवानों को मिस्टर सी. आर. दास का अनुकरण करके जातीय कार्य्य के लिये द्रव्य द्वारा सहायता भी प्रदान करनी चाहिये। जैसे मिस्टर दास ने ढाका राष्ट्रीय कालेज का सारा व्यय अपने ऊपर लेने का वादा किया है उसी प्रकार यदि प्रान्त २ के धनवान इस बात का प्रण कर लेवें तो एक दिन में राष्ट्रीय शिक्षणालय तैय्यार हो सक्ते हैं और असहयोग की सफलता शीघ्र हो सक्ती है

——

ध्येयभेद।

कहा जाता है कि कांग्रेस के ध्येय में भेद हो गया अतः दो पक्ष होने से भेद भाव बढ़ेगा। हमारी समझ में कांग्रेस में भेदभाव न होकर अधिक एकता होगी क्योंकि बृटिश साम्राज्य के अन्तर्गत स्वराज्य का मांग पहिले ही थी किन्तु जो गर्म दल वाले थे वह उससे सन्तुष्ट न होकर अपने को कांग्रेस से पृथक समझते रहे परन्तु अब जब कि स्वतन्त्र स्वराज्य भी उसके उद्देश्य के साथ मिला लिया गया तो स्वतन्त्र स्वराज्य के पक्षपाती भी कांग्रेस से योग देने वाले बनगये हैं। अतः दोनों की हित सिद्धि इस नवीन ध्येय में आगई है उद्देश्य तो स्वराज्य प्राप्ति है चाहे जैसे हो। महात्मा गांधी स्वयं भी इस बात को मानते हैं कि यदि बृटिश साम्राज्यान्तर्गत सन्तोषदायी स्वराज्य प्राप्ति हो जावे तो स्वतन्त्र स्वराज्य के लिये आन्दोलन व्यर्थ है परन्तु यदि कार्य्य सिद्धि न हो तब तो स्वतन्त्र स्वराज्य प्राप्ति ही ध्येय होना चाहिये। इस प्रकार कांग्रेस का ध्येय पूर्व की अपेक्षा अधिक व्यापी हो गया है न कि भिन्न जैसा कि कई लोगों का विचार है।

——

महात्मा गांधी और अछूत जाति।

हमारे कई सनातन धर्मी भाई इस बात पर अभिमान करते हैं कि महात्मा गांधी सनातनी हैं यदि उनकी बात सच मान ली जावे तो क्या हम पूछ सक्ते हैं कि क्या सनातन धर्मियों ने अछूत जाति की शुद्धि करके उन्हें अपने गले लगाना अपने धर्मके अनुकूल मान लिया है? क्योंकि महात्मा गांधी अछूत जाति के उद्धार के बड़े पक्षपाती हैं और उन्होंने अभी नागपुर में अन्त्यज जातियों की सभा में जो वक्तृता दी है वह बड़े महत्व की है। ज्योति के पाठकों के हितार्थ हम उसे यहां उद्धृत करते हैं। वह कहते हैं:—

"हिन्दू धर्म के नाम पर सबसे बड़ा पाप भारत में छूत का पाप है। जब तक इस समस्या

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का सन्तोषजनक प्रबन्ध नहीं होगा तब तक भारत स्वराज्य के लिए सब प्रकार अयोग्य है। मैं हिन्दू धर्म और हिन्दू जीवन का अभ्यास करता रहा हूं, और मैं वर्णाश्रम धर्म का जानने वाला हूं। मैं सनातनी हिन्दू हूं, लेकिन मैं अपने अन्तःकरण से इस बात पर विश्वास करता हूं कि छूत का मानना हिन्दू धर्म का कोई अङ्ग नहीं। हिन्दु धर्म में साथ साथ खाना या एक जाति का दूसरी जाति में विवाह करना मना है, लेकिन आध्यात्मिक दृष्टि से छूत छात एक महान पाप है जो अभी तक निर्विघ्न माना जा रहा है। मुझे स्वर्गवासी म० गोखले के शब्द याद हैं। वे कहा करते थे कि भारत के हिन्दु अपने कर्मों का फल दक्षिण अफ़रीका और अन्य देशों में पा रहे हैं। अन्त्यज और उच्च दोनों जातियों को मैं यह चेतावनी देना चाहता हूं, कि वह इस आन्दोलन को अपनी आत्म पवित्रता और आत्म उन्नति की एक तपस्या समझें। मैं स्पष्ट तौर से यह कह देना चाहता हूं; कि मैंने निकृष्ट से निकृष्ट जाति वाले के साथ खाया पिया है। और अन्त्यज जाति के एक लड़के को गोद भी लिया है। मुझे अपनी स्त्री से इसके लिए झगड़ा करना पड़ा। मैं अन्त्यज जातियों से यह अपील करूंगा कि आप लोग अपने अपने व्यवसायों को शुद्ध और पवित्र समझिए। और इसके लिए न्याययुक्त जितनी मज़दूरी हो मांगिए। मैं आप लोगों से यह भी प्रार्थना करूंगा कि धार्मिक और अधार्मिक समस्त बातों में आप लोग सहनशीलता और स्वतन्त्रता पैदा कीजिए।"

यह स्मरण रखना चाहिये कि जब तक हम अपने ७ करोड़ भाइयों को ऊपर उठा न लें तब तक हम स्वराज्य प्राप्त नहीं कर सकते और यदि किसी प्रकार कर भी लेंगे तो उसे स्थायी रखना असम्भव होगा।

स्त्रिया और अंग्रेज़ी भाषा।

महात्मा गांधी स्त्रियों को अंग्रेज़ी सिखलाने के बड़े विरोधी हैं उन्हों ने नागपुर में स्त्रियों को अंग्रेज़ी पढ़ने में समय व्यर्थ नष्ट न करने का जो आदेश किया है उस पर कई लोग आक्षेप करते हैं। जनवरी के माडर्न रिव्यू में भी इस पर एक टिप्पणी है। उस का कहना है कि यदि पुरुषों के लिये अंग्रेज़ी सीखना आवश्यक है तो स्त्रियों के लिये क्यों नहीं? स्त्रियां भी मनुष्य हैं यद्यपि लोग यह भूल जाते हैं कि वह पुरुषों की भांति ही मनुष्य हैं। उसका कहना है कि भारतीय किसी भाषा साहित्य में इस प्रकार की पुस्तकें नहीं है जिन से वर्त्तमान समय के सब आवश्यक विषयों का ज्ञान जो कि साधारण ज्ञान के लिये अति उपयोगी है हो सके इत्यादि इत्यादि। हम समझते हैं कि वर्त्तमान समय में हमारे स्कूलों और कालिजों में जो शिक्षा नर व नारियों को अंग्रेज़ी द्वारा दी जाती है वह ही माडर्न रिव्यू के उद्देश्यों को पूरा नहीं करती। रट कर परीक्षा पास करके किसी आजीविका में लग जाना ही वर्त्तमान प्रणाली का लक्ष्य है। जितना ज्ञान अंग्रेज़ी द्वारा मिल रहा है उस से कई गुना भारतीय भाषायें अपने वर्त्तमान साहित्य द्वारा ही दे सकी हैं यदि उन के अध्ययन में वही श्रम किया जाय जितना कि अंग्रेज़ी में किया जा रहा है। और यदि किसी अंश में न्यूनता रहे तो उस की

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पूर्णता करनी चाहिये अंग्रेज़ी भी एक भाषा ही है चाहे गोरों की भाषा है। अगर हमारे मस्तिष्क में अब राष्ट्रीय निर्माण के समय भी राष्ट्र भाषा प्रेम नहीं, यदि हमारे दिमाग़ से इस समय भी गुलामी की बू नहीं हटती तो हम स्वराज्य के अधिकारी कभी नहीं हो सक्ते। खद्दर के कपड़े और गांधी कैप भी तो हैट, बूट, सूट की आभा नहीं रखते फिर उन्हें क्यों बर्ता जावे? शोक है कि हमारे सहयोगी विदेशी भाषा पर इतने मुग्ध हैं कि वह स्वदेशी भाषा में जो दोष नहीं भी हैं उन्हें कल्पना कर रहे हैं।

भारत का नया वाइसराय।

अब आगामी पांच वर्ष के लिये भारत के भाग्य निर्माता की नियुक्ति हो गई है। भारत के नये वायसराय लौर्ड रिडिङ्ग नियत हुए हैं जिनका अधिक प्रसिद्ध नाम सराइज़क रूफस है। आप यहूदी मत के हैं आप ब्रिटिश साम्राज्य में योग्यतम और अत्यन्त विचारशील नीतिज्ञों में से एक हैं। आप इंगलैण्ड के सुलिसिटर जनरल रह चुके हैं कुछ काल तक अमरीका में ब्रिटिश राजदूत रहे हैं और इस समय इंगलैण्ड के लौर्ड चीफ जस्टिस हैं। लौर्ड रिडिङ्ग राज नियम शास्त्र के अद्वितीय पण्डित हैं और राजनीति के मर्म को समझने वाले हैं।

लौर्ड रिडिङ्ग की नियुक्ति से इंगलैण्ड के सचिव मण्डल ने यह सिद्ध कर दिया है कि उनकी दृष्टि में इस समय भारती वायसरायका पद बड़े महत्व और उत्तर दातृत्व का पद है इंगलैण्ड के मन्त्रि दल को लौर्ड रीडिङ्ग के अवधि की समाप्ति पर ही यदि यह बात समझ में आगई होती तो आज भारत की अवस्था इतनी शोचनीय और समस्या पूर्ण न होती।

लौर्ड चमस्फोर्ड ने लौर्ड रिडिङ्ग के काम को बड़ा कठिन बना दिया है किन्तु यदि अब भी नये वायसराय महोदय अपूर्व साहस और असाधारण उदारता से काम लें तो भारत ब्रिटिश मुकुट की एक चमकदार मणि बना रह सकता है। यदि लौर्ड रिडिङ्ग वायसराय बनते ही रौलटैक्ट, प्रैस ऐक्ट, सिडिशिस मिटिङ्ग्ज़ ऐक्ट इत्यादि विचार बाधक राज नियमों को रद्द करदें, मार्शला के अत्याचारियों को समुचित दण्ड देदें, ख़िलाफत सम्बन्धि अन्याय को दूर करदें, प्रदेशों में पूर्ण स्वराज्य स्थापित करदें, भारतीय सरकार की रचना में उत्तरदातृत्व का प्रवेश करदें, पोलिटिकल बन्दियों के स्वतन्त्र करदें और भारत को आर्थिक स्वतन्त्रता प्रदान करदें, तो बिगड़ा हुआ मामला फिर संवर सकता है। लौर्ड रिडिङ्ग एक उच्च कोटि के न्यायाधीश रहे हैं क्या हम आशा कर सकते हैं कि वह भारत के साथ न्याय करेंगे? अपने देश वासियों को तो हम यही परामर्श देंगे कि वे कभी न भूलें कि उनका कल्याण लौर्ड रिडिङ्ग वा किसी भी आङ्गल नीतिमान के हाथ में नहीं है अपितु उनके अपने हाथ में है। जातियां स्वावलम्ब से उठती हैं जिस जाति को अपने ऊपर विश्वास नहीं उसका परमात्मा भी कुछ नहीं बना सकता और जिस का अपने ऊपर भरोसा है उसका बड़ी से बड़ी सांसारिक शक्ति भी कुछ नहीं बिगाड़ सकती। भारत के पुत्रों और पुत्रियों को अहिंसात्मक असहयोग के सुदर्शन चक्र का प्रयोग करते हुए महात्मा गान्धी के नेतृत्व में स्वराज्य प्राप्त करने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के यत्न को ढ़ीला नहीं करना चाहिये। यदि वे अपने भाग्य के आप निर्माता बनेंगे तो लौर्ड रिडिङ्ग और इंगलैण्ड की लोक सम्मति को वे अपने साथ लेलेंगे अन्यथा कदापि नहीं।

पंजाब की नई सरकार।

पंजाब की नई व्यवस्थापक सभा की पहली बैठक हो चुकी, उस अवसर पर पंजाब के गवर्नर महोदय सर ऐडवर्ड मैक्लैगन ने अपने भाषण में कतिपय विचित्र भावों का प्रकाश किया। आपने कहा कि इस व्यवस्थापक सभा में पंजाब की सर्व विचार शैलियों के प्रतिनिधि उपस्थित हैं और असहयोग के कारण बहुत ही कम सभासद व्यवस्थापक सभा से पृथक रहे हैं। यदि गवर्नर महोदय अपनी व्यवस्थापक सभा की वर्तमान रचना से सन्तुष्ट हैं तो हम रङ्ग में भङ्ग नहीं डालना चाहते किन्तु इतना अवश्य कहेंगे कि जिस सभा के सभासदों के चुनाव के समय शिक्षा के केन्द्र स्थानों में पांच प्रतिशतक सम्मतियां भी नहीं दी गईं और जिस कौंसल में पच्चीस प्रतिशतक सभासद अंग्रेजी भाषा से ही अनभिज्ञ हैं और जिस के कुछ सभासद निरक्षर भट्टाचार्य हैं उसको कोई निष्पक्ष सज्जन पंजाब की प्रतिनिधि सभा नहीं कह सकते। देश की सर्वोत्कृष्ट राजनैतिक संस्था की स्पष्ट आज्ञा की उपेक्षा करते हुए लाला हरकिशनलाल और मियां फज़लहुसैन ने मन्त्रिपद स्वीकार कर लिया है लाला हरकिशनलाल की योग्यता पर पंजाब को उचित अभिमान है पर इस नियुक्ति पर हम उनको बधाई नहीं दे सकते हमारा जी तो यह चाहता है कि उनके साथ सहानुभूति प्रकाशित करें। इस व्यवस्थापक सभा से वह कोई बड़े साहस का कार्य तो करवा सकेंगे ही नहीं हां यह वह अवश्य कहलवा लेंगे कि उनकी योग्यता का भारतीय नेता भी नौकरशाही की अपेक्षा अधिक कार्य क्षमता नहीं दिखला सकता। मियां फज़लहुसैन से क्या कहें उनसे तो हमें कभी भी बहुत आशा न थी।

ज्योति का टाइटल पेज।

ज्योति का सुन्दर सचित्र टाइटल पेज समाप्त हो चुका है नया अभी कलकत्ते से छप कर नहीं आया इसलिये अब की बार ज्योति को समय पर निकालने के लिये साधारण टाइटल पेज से ही काम लिया गया है आशा है कि ज्योति के पाठक हम को क्षमा करेंगे।

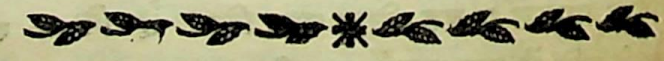

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वनिता विनोद

स्त्री उपयोगी स्त्रियों द्वारालिखित लेखों का संग्रह।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१—स्त्री जगत	५६४	४—कन्या विद्यालय बिसवां को दान	५६९
२—कला कौशल्य—(ले० श्रीमती ओ३म्वती देवी)	५६५	५—स्वदेशी और देश सेवा	५७१
३—आर्य्य वीर [कविता]—ले० कुमारी विद्यावती	५६८	६—बिसवां कन्या विद्यालय तथा आश्रम के डेपुटेशन का कार्य	५७३

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री जगत् ।

महिला सम्मेलन ।

मद्रास में २८ दिसम्बर १९२० को श्रीनिवास आयंगर की अध्यक्षता में जो स्त्री सम्मेलन हुआ उसके कई प्रस्ताव बड़े उपयोगी हैं जिन पर जनता का ध्यान आकर्षित करना है:—

[१] लड़कों की भांति लड़कियों को भी आवश्यकीय प्रारम्भिक शिक्षा करदी जावे ।

[२] स्त्रियों के लिये चिकित्सा-कालेज तथा ट्रेनिंग लेती हुई नर्सों के लिये क्षत्रावास और अधिक बनवाये जावें ।

[३] धार्मिक शिक्षा, शारीरिक शिक्षा तथा श्रेणीबद्ध गान सब स्कूलों में आवश्यकीय विषय रक्खा जावे ।

[६] सर्कार को प्रार्थना करना कि वह ऐसे नियम बनावे कि भारत में शराब का बनाना और विक्री करना बन्द हो जावे ।

[७] लड़कियों का विवाह जितनी देर से सम्भव हो किया जावे ।

[८] बच्चों और बालकों की रक्षा के हेतु स्कीम संस्था द्वारा सारे भारत में प्रचरित किये जावें और उन्हें स्त्रियां उत्साह से समर्थन करें ।

[९] फीजी में बहिनों की दशा सुधारी जावे और उनको सहानुभूति दिखलाई जावे ।

[१०] स्त्रियों की सभायें शहर २ में खोली जावें ।

इन प्रस्तावों के देखने से ज्ञात होता है कि कतिपय भारतीय देवियाँ भी अपने लिये उद्धार के उपाय सोच रही हैं और प्रकाशित भी कर रही हैं यह बड़े सौभाग्य की बात है। यदि प्रत्येक प्रान्त में देवियां अपने हाथ में बच्चों की रक्षा का स्कीम बनाकर कार्य्य में लावें तथा शराब बन्द करने का आन्दोलन करें तो बड़ा लाभ हो सक्ता है । आशा है कि शिक्षित देवियां इधर ध्यान देंगी ।

नागपुर में स्त्रियों की सभा ।

महात्मा गांधी का आदेश ।

१९ दिसम्बर को तीन बजे दोपहर को महात्मा गांधी जी ने नागपुर की स्त्रियों को उपदेश दिया । लगभग २००० स्त्रियां उपस्थित थीं । उन्होंने स्त्रियों से कहा कि आप लोगों को अंग्रेजी नहीं पढ़नी चाहिये बल्कि उसके स्थान में संस्कृत पढ़ो और यतः आप के देश की अवस्था बहुत गिरी हुई है इसलिये जब तक भारत की पूर्व समय की समृद्धि पुनः स्थापित न हो जाय तब तक आप लोगों को अपने शरीर की सजावट करना तथा फैशन की वस्तुयें वर्त्तना शोभा नहीं देता । आप लोग स्वदेशी का प्रचार करके देश की क्रियात्मक रूप से सेवा कर सक्ती हैं आप लोग चर्खा कातना सीखें । मुझे बड़ा हर्ष होगा जब कि मैं यह देखूंगा कि प्रत्येक घर में चर्खे और कर्घे का पुनः प्रचार हो गया है ।

महात्मा जी की यह वक्तृता आर्य्य भाषा में होने से बड़ी प्रभाव शालिनी हुई और उसकी समाप्ति पर स्त्रियों ने सुवर्ण के आभूषण तथा रुपये महात्मा जी को भेंट दिये ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

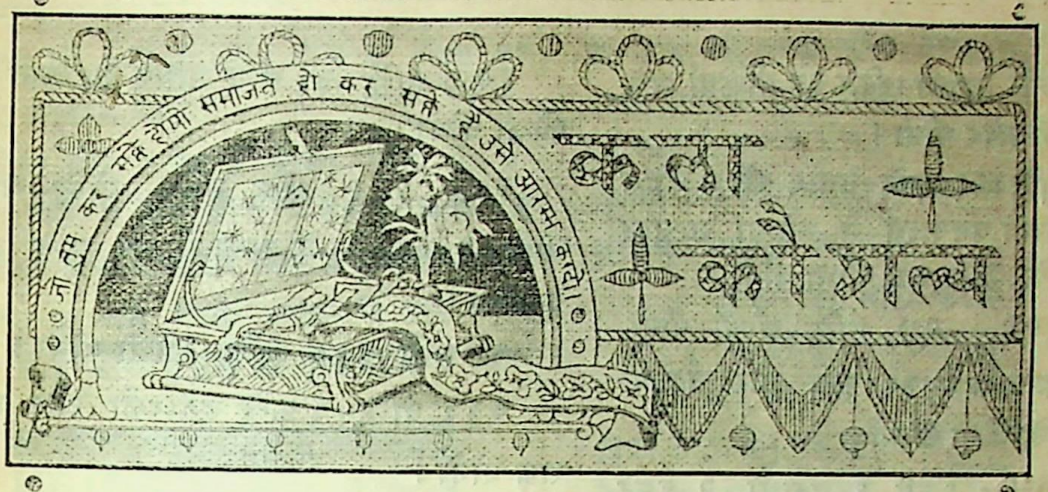

सूचना।

ज्योति के सितम्बर अंक से सूचना निकल रही है कि जो बहिनें घोड़ा बग्घी जाल तक के नमूने बनाकर भेजेंगी उन्हें ५] और २] की जो वस्तु कहेंगी पारितोषिक में भेजी जायगी। हमें शोक से कहना पड़ता है कि इस ओर बहुत कम बहिनों ने ध्यान दिया है और अभी तक हमारे पास बहुत थोड़े नमूने आये हैं। इस से जहां हमारा अभिप्राय अपनी बहिनों और कन्याओं को उत्साहित करना था वहां साथ ही यह भी जानने का प्रयोजन था कि हमें पता लग सके कि कितनी बहिनें हमारे इस उद्योग से लाभ उठा रही हैं। इसी लिये हमने यह भी लिख दिया था कि जिन बहिनों ने नमूने बनाये हों और वह इनाम न चाहती हों वह यह लिखकर नमूने अवश्य भेजें अथवा इतना ही लिखकर भेजें कि उन्होंने क्या २ बनाया है। यदि कला-कौशल सम्बन्धी लेखों से हमारी बहिनों को कोई लाभ नहीं पहुंचता या इन से उन्हें कोई प्रेम नहीं तो हम विवश होंगे कि इन लेखों को 'ज्योति' में बन्द कर दिया जाय। ब्लाक बनवाने में जो व्यय होता है उस से 'ज्योति' को बड़ा घाटा उठाना पड़ता है। अपनी बहिनों और कन्याओं के हित के लिये ही हमने यह घाटा सहना स्वीकार किया है। यदि उन्हें इससे कोई लाभ नहीं पहुंचता तब हम इस लेख माला को बन्द कर इस हानि से बच सक्ते हैं। आशा है सब बहिनें शीघ्र अपनी सम्मति देंगी।

सम्पादिका।

"शिशु गतिका"।

आवश्यक वस्तुएं:—एक आउन्स वा कुछ अधिक किसी रंगका ऊन महीन, यदि मोटा हो तो अधिक लें। २ सलाइयां ९ नंबर की, ६ बटन और २ गज़ पतला फ़ीता। यदि फ़ीता न लगाना हो तो चेन इत्यादि डोरी बटकर काम लिया जा सक्ता है।

संकेत:—सीधा फ़न्दा, "सी"; बढ़ाना, यानी बीच में से उठाकर एक और बीन लेना। घटाना यानी दो इकट्ठे बीन देना।

"उतारना", "चढ़ाना"।

एक सलाई पर ६० फ़न्दे चढ़ाओ और ६० पंक्तियां सीधी बीनो ६० वीं पंक्ति के अन्त

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में ६ फ़न्दे और बढ़ालो। फिर ३० पंक्तियां सारे ६६ फ़न्दों के ऊपर बीनो।

९१ पंक्ति–२६ फ़न्दे उतार लो (जिस प्रकार उतारना बनयाइन में बताया जाचुका है) और फिर अन्त तक सीधा बीनो।

९२, ९३, ९४ पंक्ति–सीधी बीनो, ९४ पंक्ति के अन्त में ३५ फन्दे और चढ़ाओ और ६ पंक्ति बीनो सीधी।

१०१ पंक्ति–६ सी, १ बढ़ाओ, २ इकट्ठे बीनो फिर अन्त तक सीधी बीनो।

१०२ से ११८ पंक्ति–सीधी बीनो।

११९ पंक्ति–१०१ पंक्ति की तरह।

१२० से १२४ पंक्ति–सीधी बीनो।

१९७ पंक्ति–३५ फ़न्दे उतार लो अन्त तक सीधी बीनो।

१९८, १९९, और २०० पंक्ति–सीधी बीनो। २०० पंक्ति के अन्त में २६ फ़न्दे और चढ़ाओ।

२०१ से २३० पंक्ति–सीधी बीनो।

२३१ पंक्ति–६ फन्दे उतारलो और अन्त तक बीनो।

२३२ से २६१ पंक्ति–सीधी बीनो।

२६२ पंक्ति–३ फ़न्दे उतार दो, १४ सी, १ बढ़ाओ, २ इकट्ठे बीनो, २१ सी, २ इकट्ठे, १ बढ़ाओ, १८ सी।

१२५ पंक्ति–१५ फन्दे उतार लो बाक़ी अन्त तक सीधी बीन लो।

१२६ से १६५ पंक्ति––सीधी बीनो।

१६६ पंक्ति–पहिले सीधी बीन कर अन्त में १५ फन्दे और चढ़ाओ।

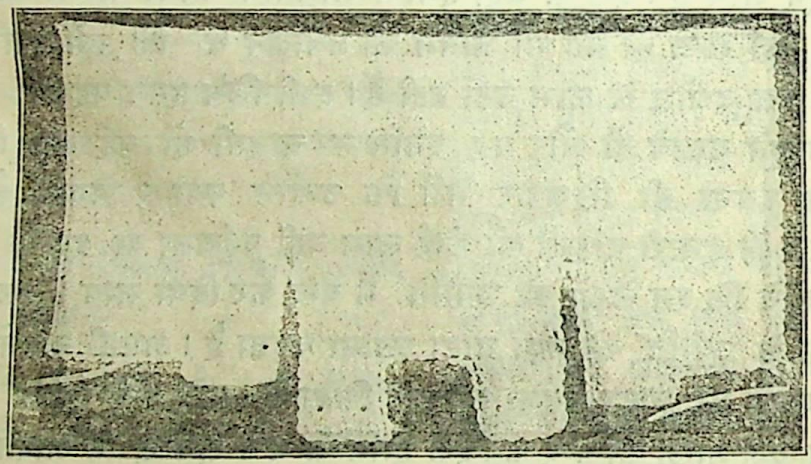

चित्र सं० १

२६३ से अन्त तक की पंक्तियों में प्रत्येक पंक्ति के आरम्भ में ३ फ़न्दे उतार दो जबतक कि कुल ६ फ़न्दे बीच में बच जांय फिर उन्हे उतार दो।

१६७ से १७२ पंक्ति–सीधी बीनो।

१७३ पंक्ति–६ सी, १ बढ़ाओ, २ इकट्ठे बीनो फिर अन्त तक सीधी बीनो।

१७४ से १९० पंक्ति–सीधी बीनो।

१९१ पंक्ति–१७३ पंक्ति की तरह।

१९२ से १९६ पंक्ति–सीधी बीनो।

अब सीने और समाप्त करने के लिये–दो २ बटन सामने कन्धे पर के हिस्से पर टांक दो इस तरह कि घरों के सामने हों जो कि बढ़े हुवे पिछले कन्धों के हिस्से पर बीने गये हैं। अन्य दो बटन बायें तरफ़ के टुकड़े में दहिनी ओर के घरों के सन्मुख टांक दो। अब यह गतिका तैय्यार हो गई है। किन्तु यदि रेशम से इसके किनारों पर कोहिये की झालर वा कंगूरा सा बीना जाय तो बहुत सुन्दर लगेगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रेशम को दाहिनी ओर नीचे के सिरे पर बांधकर आरम्भ करो।

५ चेन और १ तेहरा बीनो फिर ३ चे. १ तेहरा फिर ४ चेन और १ तेहरा ४ चे. में की पहिली चेन में डालो जिसमें नुकीला कंगूरा हो जाय। ३ चेन वाले स्थान से वार २ दोहराओ कोई चौथाई इंच की दूरी पर सब ओर।

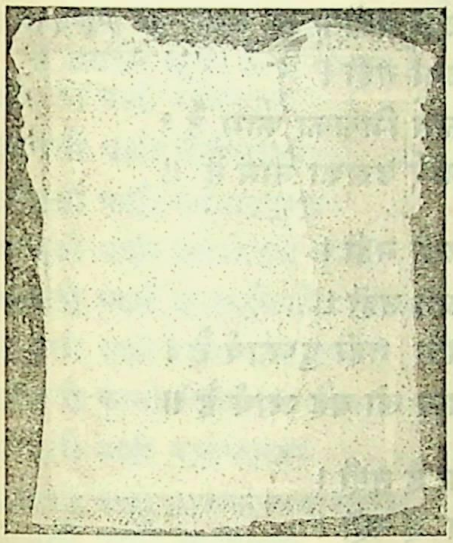

चित्र संख्या २

इन छेदों में पीछे से एक फ़ीता डाल दो और कोनों पर कस दो केवल गले की जगह ढीला रखना जिससे खींच कर बांधा जासके।

एक तसवीर बिलकुल बन्द की कराई गतिका की है दूसरी में सब हिस्से साफ़ २ फैला कर सुगमता के लिये दिखाये गये हैं।

पाठिकाओं की सेवा में अब तक सलाई वा क्रोशिये की चीजों के ही कुछ २ नमूने भेंट करने का अवसर प्राप्त हुवा है अब एक नवीन प्रकार के कार्य्य के कुछ नमूने देने का विचार है। यह खूब उभरा हुवा कई प्रकार का सूत वा रेशम से मोटे वा बारीक कपड़ों पर काढ़ा जाता है। इसमें कोई विशेष प्रकार की वस्तुओं की भी आवश्यक्ता नहीं होती। अपने पास जिस रंग रूप का धागा हो उसे मामूली सीने वाली सुई में पिरो कर ही यह कार्य्य किया जासक्ता है। लेसों की जगह छोटे बच्चों के कपड़ों में अपने हाथ से इस प्रकार बनाने से स्वदेशी का स्वदेशी कार्य्य और बचत भी होती है। बाज़ारु लेसें सिकुड़ कर ख़राब जाती है। कम ख़र्च बालानशीन कार्य्य है।

उभरी हुई मोटी कढ़ाई।

१. इकहरा सरल कांटा।

यह कांटे की तरह फ़न्दा सबसे सहल प्रथम दिया जाता है। यह सुगम तो प्रतीत ही होता है किन्तु इसकी बराबर बनवाई में ही सारी शोभा है अन्यथा टेढ़ावेढ़ा होने से सुन्दरता मारी जाती है। और नवीन बनाने वाले को चाहिये कि बराबरी रखने के लिये हलकी २ दो लकीरें कोई चौथाई इन्चके फ़ासले पर खींचले। फिर सुई में रेशम या मोटा धागा डाल कर जहां बनाना हो वहां दोनों लकीरों के मध्य में लगावे। धागे को बांये हाथ के अंगूठे के नीचे दबाकर दाहिनी हाथ की लकीर में सीधा टोप निकालो किन्तु सूई को उस धागे के ऊपर रखना है जो बांये अंगूठे से दबा हुवा है।

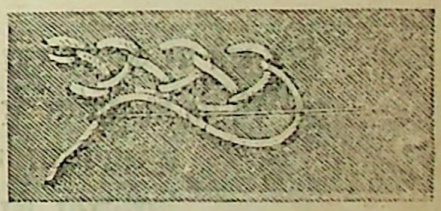

चित्र संख्या ३

सुई निकाललो फिर उसी प्रकार धागे को दबाकर अब की टोप बायें हाथ की लकीर पर निकालो जैसा कि तसवीर में ग़ौर करने से साफ़ पता लगता है। इस प्रकार एक वार इधर एक वार उधर की लकीर पर बनाओ किन्तु प्रत्येक टोप का सिरा अन्त वाले टोप की बराबरी पर निकले और बहुत कस कर न खींचो। जब ठीक बनने लगे लकीरें ना डाले और पास २ खूब बारीक बना सक्ता है।

अन्य तरह के नमूने आगे दिये जांयगे॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आर्य्य वीर।

कुमारी विद्यावती, बरेली द्वारा प्राप्त।

[१]

जो दीन जनों को नित्य ही निज बन्धु के सम देखता।
जो जीवधारी मात्र को निज प्राण के सम लेखता।
वात्सल्य भाव भरा हुआ जिसमें सहित औदार्य है।
हां हां वही है आर्य जो करता सदा सत्कार्य है॥

[२]

जो सर्प की सी कुटिल चालों से कभी चलता नहीं।
निज बन्धुओं की देख उन्नति जो कभी जलता नहीं।
निज नाम का भूखा नहीं निष्काम जिसका काम है।
जो सत्य का है सत्य सेवक आर्य उसका नाम है॥

[३]

जिसके सुकोमल हृदय में द्वेषाग्नि भी जलती नहीं।
जिसके परम पावन हृदय में पालिसी पलती नहीं।
जिसके सुकोमल करों से होता नहीं दुष्कार्य है।
जो न्याय पर आरूढ़ है बस जान लो वह आर्य है॥

[४]

जो नीच निन्दित कार्य में धन को लुटाता है नहीं।
जो पापियों दुष्कर्मियों को सर झुकाता है नहीं।
जो सत्य विद्या का सदा विस्तार करता प्रेम से।
वह आर्य है परमात्मा रक्खे उसे नित क्षेम से॥

[५]

निज धर्म पर जो डट रहा सह कर हज़ारों आपदा।
जो धर्म को ही जानता है मुख्य अपनी सम्पदा।
है श्रेष्ट विद्या दान सब दानों में जो यह जानता।
विद्यालयों को दान दे, मैं आर्य उसको मानता॥

[६]

यदि आर्य बनना है तुम्हें वैदिक धरम गुण धार लो।
निज हृदय की दुर्वासना को युक्ति पूर्वक मान लो।
दृढ़ आर्य बन संसार को आर्यत्व परिचय दीजिये।
तन और मन धन जाति सेवा हित समर्पित कीजिये॥

[७]

तब आर्य कुल गौरव पताका गगन में फैलायगी।
वैदिक धरम की धाक फिर संसार में जम जायगी।
होगा धरम का अभ्युदय क्षय पाप का हो जायगा।
संसार फिर इस देश के आर्यत्व का गुण गायगा॥

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar. Collection by Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan

[८]

हे आर्य सन्तानो उठो अवसर निकल जावे नहीं।
देखो बड़ों की बात जग में बिगड़ने पावे नहीं।
जग जान ले कि न आर्य केवल नाम के ही आर्य हैं।
वह नाम के अनुरूप ही करते सदा शुभ कार्य हैं।

कन्या विद्यालय बिसवां को दान।

कन्या विद्यालय बिसवां ज़िला सीतापुर यू.पी. को कलकत्ते से जिन देवियों ने धन दिया है उनकी सूची निम्न प्रकार है:—

१—श्रीमती पत्नी रामलाल ... १००)
२—श्रीमती पत्नी बेनीमाधो ... १००)
३—श्रीमती पत्नी सामलदास ... १००)
४—श्रीमती पत्नी मनमोहन लाल १००)
५—श्रीमती पत्नी श्यामकिशोर खन्ना १००)
६—श्रीमती पत्नी राजाराम टण्डन १००)
७—श्रीमती पत्नी विनायक मिश्र १००)
८—श्रीमती पत्नी बल्लभदास ... १००)
९—श्रीमती पत्नी द्वारकानाथ इटावा १००)
१०—श्रीमती पत्नी छज्जूमल ... १०१)
११—श्रीमती पत्नी दामोदरदास वर्मा ५१)
१२—लाला छज्जूमल जी द्वारा प्राप्त इनके नाम ज्ञात नहीं हैं ५१) ५१) ५१) ५१)
१३—एक देवी ... ... ५१)
१४—श्रीमती पत्नी रामचंद ... ४५)
१५—श्रीमती पत्नी छोटूलाल मिश्र २५)
१६—श्रीमती पत्नी जीवनलाल साटनवाले २५)
१७—श्रीमती पत्नी हीरालाल उत्तराधिकारी २५)
१८—श्रीमती पत्नी मोतीलाल ... २५)
१९—श्रीमती पत्नी कुन्दनलाल ... २५)
२०—श्रीमती पत्नी रामनरायण ... २५)
२१—श्रीमती पत्नी लक्ष्मण स्वरूप ... २१)
२२—श्रीमती पत्नी श्यामदेवी ... २०)
२३—श्रीमती भानादेवी ... ... २०)
२४—श्रीमती पत्नी सरजूनरायण ... १५)
२५—श्रीमती पत्नी सरजूप्रसाद ... १५)
२६—श्रीमती पत्नी कालाचंद ... ११)
२७—श्रीमती पत्नी परसोत्तमदास ... ११)
२८—श्रीमती पत्नी राधाकृष्ण ... १०)
२९—श्रीमती पत्नी माधोकपूर ... १०)
३०—श्रीमती पत्नी सोहनलाल ... १०)
३१—श्रीमती पत्नी गौरी बाबू ... १०)
३२—श्रीमती पत्नी देवी प्रसाद ... १०)
३३—श्रीमती पत्नी जगन्नाथ ... १०)
३४—श्रीमती पुत्री रामलाल वर्मन ४ पुस्तकें १०)
३५—श्रीमती लक्खी बीबी ... १०)
३६—श्रीमती पत्नी देवीप्रसाद ... १०)
३७—श्रीमती पत्नी बद्रीप्रसाद ... १०)
३८—श्रीमती जयन्ती देवी ... ७)
३९—श्रीमती शिवप्रसाद की माता ६)
४०—श्रीमती पत्नी कुंजबिहारी ... ५)
४१—श्रीमती पत्नी निक्कामल बाबू ... ५)
४२—श्रीमती पत्नी मनोहर लाल ... ५)
४३—श्रीमती पत्नी छग्गूलाल खत्री ... ५)
४४—श्रीमती पत्नी राजाराम ... ५)
४५—श्रीमती पत्नी बैजनाथ महेश ... ५)
४६—श्रीमती पत्नी शिम्भूनाथ मिश्र ५)
४७—श्रीमती पत्नी केशोबाबू उत्तारि ५)
४८—श्रीमती पत्नी लक्ष्मी नरायण ... ५)
४९—श्रीमती पत्नी रामस्वरूप टण्डन ५)
५०—श्रीमती पत्नी विन्देश्वरी ... ५)
५१—श्रीमती पत्नी पं० लक्ष्मीनरायण ५)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

५२-श्रीमती रूपेश्वरीदेवी ... ५)
५३-श्रीमती पत्नी लक्ष्मीनरायण ... ५)
५४-श्रीमती पत्नी बिहारीलाल ... ५)
५५-श्रीमती निक्कोबीबी पुत्री गौरी बाबू ५)
५६-श्रीमती पत्नी पं० हरिश्चन्द्र ... ५)
५७-श्रीमती पत्नी मदनलाल ... ५)
५८-श्रीमती पत्नी महेशदास ... ४)
५९-श्रीमती पत्नी छग्गो बाबू ... ४)
६०-श्रीमती पत्नी मुन्नीमहराजनी ४)
६१-श्रीमती पत्नी पन्नालाल ... ४)
६२-श्रीमती पत्नी निक्कामल खत्री ४)
६३-श्रीमती पत्नी अटलबिहारी... ४)
६४-श्रीमती पत्नी हृदय नरायण ... २)
६५-श्रीमती पत्नी मुन्ने बाबू ... २)
६६-श्रीमती पत्नी शिम्भूनाथ ... २)
६७-श्रीमती पत्नी रामकिसुन ... २)
६८-श्रीमती भोलानाथ की माता... २)
६९-श्रीमती जग्गो बाबू की बहू ... २)
७०-श्रीमती गनेस की माता ... २)
७१-श्रीमती पत्नी लखमीचन्द ... २)
७२-श्रीमती पत्नी स्याम सुन्दर ... २)
७३-श्रीमती पत्नी लल्लो जी ... २)
७४-श्रीमती पत्नी निहालचन्द ... २)
७५-श्रीमती पत्नी विशंभर जी ... २)
७६-श्रीमती पत्नी महादेव जी ... २)
७७-श्रीमती पत्नी शिंभूनाथ वर्मा ... २)
७८-श्रीमती पत्नी रामस्वरूपखत्री २)
७९-श्रीमती पत्नी सुक्खूमल २)
८०-श्रीमती पत्नी बृजकिशोर ... २)
८१-श्रीमती तारादेवी ... ... २)
८२-श्रीमती पत्नी माधोलाल कपूर २)
८३-श्रीमती पत्नी विश्वनाथ ... २)
८४-श्रीमती पत्नी निक्कोबाबू ... २)
८५-श्रीमती पत्नी किशनलाल ... २)
८६-श्रीमती पत्नी श्रीकृष्णलाल ... २)
८७-श्रीमती पत्नी काशीनाथ ... २)
८८-श्रीमती पत्नी रामनरायण ... १)
८९-श्रीमती देवीचरण की माता... १)
९०-श्रीमती छुन्नी देवी ... ... १)
९१-श्रीमती मन्नू की माता ... १)
९२-श्रीमती हीरोदेवी ... ... १)
९३-श्रीमती पार्वती देवी... ... १)
९४-श्रीमती द्रौपदी देवी ... १)
९५-श्रीमती जानकीदेवी... ... १)
९६-श्रीमती पत्नी बावनदास ... १)
९७-श्रीमती पत्नी शिवजी ... १)
९८-श्रीमती पत्नी जगदीश मेहरे... १)
९९-श्रीमती पत्नी हरनरायण ... १)
१००-श्रीमती पत्नी रामकिसुन बनारस १)
१०१-श्रीमती पत्नी सामलदास ... १)
१०२-श्रीमती पत्नी मूल नरायण... १)
१०३-श्रीमती पत्नी निक्कोबाबू खत्री १)
१०४-श्रीमती पत्नी कार्तिकबाबू ... १)
१०५-श्रीमती पत्नी बनारसी ... १)
१०६-श्रीमती पत्नी माठू ... १)
१०७-बिना नाम का ... ... १)
१०८-श्रीमती पत्नीहरशंकरलाल ... १)
१०९-श्रीमती पत्नी बड़ा भाई चन्दू १)
११०-श्रीमती पत्नी कम्मू बाबू मेहरे १)
१११-श्रीमती पत्नी भोलानाथ ... १)
११२-श्रीमती पत्नी नरायणदास ... १)
११३-श्रीमती पत्नी गोपालदास ... १)
११४-श्रीमती पत्नी लक्ष्मी नरायण खत्री १)
११५-श्रीमती पत्नी कन्हैया लाल... १)
११६-श्रीमती पत्नी जीवनराम खन्ना १)
११७-श्रीमती पत्नी निक्कोबाबू ... १)
११८-श्रीमती पत्नी किशनलाल ... १)
११९-श्रीमती पत्नी काशीनाथ ... १)
१२०-श्रीमती पत्नी श्रीकृष्ण ... १)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वदेशी और देश सेवा।

लेखिका श्रीमती चन्दाबाई जैन।

१

प्रिय पाठिका बहिनो! स्वदेश सेवा का संदेशा ज्योति के विगतांक में दे चुकी हूं उसी का परिशिष्ट निवेदन पुनः यहां पर किया जाता है आशा है कि आप लोग इसे अभ्यास में लायेंगी।

वर्तमान समय में हमारी स्त्री समाज का हृदय इतना घृणित और अंधकारमय नहीं है जितने कि अभ्यास घृणित हो रहे हैं।

बड़ों की आज्ञा पालन करना—बान्धवों के हित के लिये निरन्तर परिश्रम करते रहना इत्यादि बातें हमारी बहिनें बड़े सद्हृदय से करती हैं। परन्तु इतना अध्यवसाय करने पर भी परिजन समाज एवं जन समाज को हम से यथेष्ट लाभ नहीं होता इसका कारण केवल हमारा अटपटा व्यवहार ही है। यदि हम अपने व्यवहार की सुई फेर दें तो क्षणभर में मिनटों के घण्टे और घण्टों की मिनटें बना सकती हैं।

यद्यपि भारत के कितने ही अज्ञ लोगों का मत है कि स्त्रियां केवल मात्र भोगोपभोग की सागभाजी हैं—इन पर संसार का कोई भार नहीं है जो कुछ उत्तर दायित्व है वह सब पुरुषों पर ही निर्भर है—परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है, अपने प्राचीन पूज्य महर्षियों ने माता को परम पूज्य स्थान दिया है। समस्त संसार को उलट पलट कर सर्वोत्तम एवं हृद्यशब्द एक 'माता', 'मां', 'मय्या', 'मामा', या 'मदर' ही निकाला गया है। पूर्वकाल में हमारे आदि पुरुष जिस वस्तु को सर्वोत्कृष्ट एवं सर्वोपयोगी समझते थे उसी में मातृभाव की स्थापना करते थे, पृथ्वी को जगत् का मूल समझकर स्त्रीलिंग का प्रयोग कर माता की उपमा दी गयी है। गौ को पशु श्रेष्ट समझकर माता का पद प्रदान किया है इसी प्रकार प्रकृति देवी ने भी स्त्री संसार को सर्वस्व सौंप दिया है, संतान का समस्त संगठन और आपत्ति काल माता के भरोसे पर ही है, १० मास का बड़ा भारी उत्तर दायित्व माता के ऊपर ही निर्भर है। इस प्रकार संसार की मूलभूता हमारी बहिनें यदि अपने नित्य प्रति के व्यवहार स्वार्थ रहित शुद्ध सुयोग्य नहीं करेंगी तो समस्त भारत के मूल में घुन लग जायगा। जब तक अपना भार हम लोग स्वयं न लेंगी कदापि हमारी दशा नहीं सुधर सकती। अपना देश दिनों दिन किस रसातल को जा रहा है, इसका विवेचन ज्योति के प्रत्येक लेख से प्रत्यक्ष दीखता है, अतएव पुनः पिष्टपेशन करना व्यर्थ है, परन्तु विचार केवल उन बातों पर करना है कि जिनको व्यवहार में लाने से हम देश की माता सार्थक माता बन सकें।

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" इस वाक्य के अनुसार हम लोग स्वर्ग से भी प्यारी जन्मभूमि की सेवा करने की अधिकारिणी नहीं हैं? अवश्य हैं। यदि अपनी प्रतिज्ञा को सुदृढ़ रख सकें तो महिलायें पुरुषों की अपेक्षा विशेष कार्य कर सकती हैं। देखिये इतिहास प्राचीन वीरा माताओं को कैसा अमरत्व प्रदान कर रहा है—जसवन्तसिंह की रानी महामाया ने अपनी वैधव्य अवस्था में भी औरंगज़ेब से कैसा बदला लिया था और निहत्थी होकर भी किस प्रकार अपने छोटे पुत्र की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

थी, सैकड़ों स्वकर्तव्य निष्ट राजपूत अपना समस्त कार्य भार छोड़ २ कर बिना किसी वेतन और सम्मान के केवल महारानी की आज्ञानुसार सेना में भरती हो गये। और मुगलों के साथ भीषण युद्ध करके भले प्रकार बदला ले लिया। इसी प्रकार परम विवेकमूर्त्ति किरणदेवी राजा पृथ्वीसिंह की पत्नी का नाम भी भारत माताओं के लोकोत्तम गौरव को बढ़ा रहा है।

जिस समय मोगल शाहंशाह अकबर छद्म भाव से नौरोज का मेला कराता था और उस में समस्त गण्य माननीया स्त्रियों को बेगमों के पास आने के लिये बाध्य करता था उस समय भारत की सती बड़ी भारी विपत्ति में थीं। क्योंकि इस मेले में किसी पुरुष को जाने की आज्ञा न थी, परन्तु अकबर स्वयं बेगमों के वेष में छिपा रहता था और चाहे जिस रमणी पर मनमाना अत्याचार करता था। यह बात शनैः शनैः लोगों को ज्ञात होने लगी परन्तु इसका प्रतिकार किसी से कुछ न बना। एक मेले में विवश होकर किरणदेवी को भी जाना पड़ा, यह वीरा महिलारत्न अपने साथ एक छुरा ले गई और केवल एक दासी के साथ ही मेले में पहुंची इधर उधर घूमते घामते छद्मवेषी अकबर पर ज्योंही नज़र पड़ी कि उसकी भारी आवाज़ से उसको शीघ्र ही पहचान लिया और उसके दाव घात के पहले ही स्वयं पछाड़कर हृदय में छुरा गोभने का सामान कर लिया।

अकबर इस अबला के परमबल को देख कर भौचक हो गया और प्राणदान की भिक्षा मांगने लगा। भारत नारी जितनी वीरा होती हैं उतनी ही अगाध क्षमा भी रखती हैं। हिन्दू रमणी के दया की तुलना अद्वितीय है हिंसा घातादि से भयभीत होना भारत की स्वाभाविक धर्म है। अतएव देवी ने अकबर को क्षमा कर प्राणों का अभयदान प्रदान कर दिया और बदले में कई वचन लेकर सदा के लिये नौरोज़ का मेला बन्द कर दिया।

बहिनों इसी प्रकार पूर्व समय में अनेकानेक स्त्रियों ने स्वदेश के लाभार्थ अगणित कार्य किये हैं, इस समय उन्हीं की वंशीया हम लोगों का भी धर्म है कि अपने देशके धन-धान्य, पदवी-सन्मान, धर्म-कर्म की रक्षा करें।

इस समय हमारी बहिनों में शिक्षा और विद्या की नितान्त कमी हो गई है इसी कारण अपने कर्तव्य का ज्ञान प्रायः नष्ट हो चला है, जो बहिनें शिक्षिता हो चुकी हैं या हो रहीं हैं उनमें विदेशी अभ्यास इतने बढ़ते जाते हैं कि जिसके कारण लाभ के स्थान में हानि प्रतीत होती है।

पढ़ी लिखी बहिनों को उचित है कि वे अपने देश के व्यवसाय को बढ़ावें–धर्मानुकूल चलें, प्राचीन विद्या–कला कौशलों को चमकावें–परन्तु वर्तमान में इसके विपरीत करती हैं।

विदेशी बने विदेश के सिले, विदेश के ढांचे में ढ़ले वस्त्रों को जूतों को, आभूषणों को पहनती हैं भारत की दो पैसे की कंघी को छोड़ कर एक रुपये के विलायती कंघे से केश संभालती हैं, भारत के विश्वव्यापी–तिल-सरसों–नारियल आदि के तैल को छोड़कर मिट्टी से निकले मस्तिष्क को हानिकारक विलायती तेलों को लेविंडरों को लगाती हैं, विदेशी साबुनों को काम में लाती हैं, विदेशी खिलौने बच्चों के लिये लेती हैं, विलायती चीनी के पकवान बनाती हैं कहां तक कहा जाय प्रतिवर्ष करोड़ों रुपये का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

विदेशी माल क्रय विक्रय होकर स्त्रियों के भोगोपभोग में आजाता है।

विदेशी अभ्यासों ने हमारी विलासता इतनी बढ़ादी है कि भारत ऐसे कृषि प्रधान देश के लिये कदापि सहनीय नहीं है। जिस देश में नित्य आप अपने पाड़ पड़ौस में सैकड़ों बुढ़ियों को आटा पीस कर १ वार भोजन कर निर्वाह करते देख रही हैं, जहां सदैव किसी न किसी प्रान्त में भयानक दुर्भिक्ष से सैकड़ों बच्चे मरते और बिकते हैं उस देशवासिनी शिक्षिता बहिनों को विदेशीय विलासता में द्रव्य व्यय करना एवं इसी फ़ैशन में समय बरबाद करना शोभा नहीं देता।

प्राकृतिक नियम है कि चक्षुः विहीन मनुष्य को चक्षुवाला मार्ग बताता है परन्तु यदि आँखों वाला ही अंधा बन जाय तो अंधों का ठिकाना कहां लगे। विद्यालाभ करके (परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः) इस वाक्य के अनुसार अपने स्वभाव को नम्र और परोपकार शील बनाना चाहिये। स्त्रियां यदि कर्त्तव्य निष्ट हो जांय तो भारत माता की सेवा में देर न लगेगी। बाल विवाह करना, सन्तान को कर्म क्षेत्र से पराङ्मुख कर विषयी कर देना, व्यापार वृद्धि में सचेष्ट न करना, शर्मशील न बनाना आदि जो २ कुप्रथायें हैं सब मिट जायंगी।

रोगी मनुष्य का रोग दो कारणों से दूर होता है अन्तरङ्ग कारण दैनिक सावधानी यानी परहेज़ है और वाह्य कारण औषधि आदि हैं। इसी प्रकार देश सेवा के भी उभय अङ्ग हैं। यद्यपि द्वितीय कारण हमारे हाथ में नहीं है यह हमारे अधिकारों के आधीन हैं यानि भारत मंत्री और महानुभाव बड़े लाट साहिब एवं समस्त सिविलियनों के ऊपर निर्भर है तो भी अन्तरङ्ग देश सुधार सर्व प्रकारेण हमारे आधीन ही है हमारे सुचारु अभ्यासों पर निर्भर है।

अतएव हमारा कर्त्तव्य है कि हम स्वयं अपना और अपनी सन्तान का अन्तरङ्ग प्रबन्ध करें यही हमारी देश सेवा है। यदि ज्योति की विरली पाठिका बहिनें भी इस लेख पर ध्यान देकर विदेशी वस्तु और विदेशीय विलासता को छोड़ेंगी तो मैं अपना निवेदन सफल समझूंगी और पुनः लेख सेवा में उपस्थित करूंगी।

बिसवां कन्या विद्यालय तथा आश्रम के डेपुटेशन का कार्य्य।

ज्योति के पाठकों को स्मरण होगा कि पिछले दो अंकों में बिसवां कन्या विद्यालय और आश्रम के विषय में लिखा जाचुका है पाठशाला की ओर से जो डेपुटेशन कलकत्ता बनारस कानपुर उन्नाव आदि शहरों में गया था उसको कहां तक सफलता मिली है यह आज हम यहां पर संक्षेप से वर्णन कर देना उचित समझते हैं। पहली नवम्बर को अपने एक हितैषी श्रीमान् बाबू रामलालजी के आमन्त्रण पर श्रीमती राधाराणी जी अधिष्ठात्री पाठशाला श्रीमती सुशीलवतीजी अवैतनिक मुख्याध्यापिका, कुमारी कल्याणवती जी तथा कुमारी विद्यावती सेठ सम्पादिका 'ज्योति' एक साधारण डेपुटेशन बनाकर कलकत्ते पधारीं। वहां पर श्रीमती धर्म पत्नी बाबू रामलाल तथा धर्म पत्नी बाबू श्यामलदास जी के उद्योग से श्रीमती धर्म पत्नी विनायक मिश्र की प्रधानता में एक स्त्री सभा हुई जिस में लगभग छ सौ के परदेनशीन उच्च कुल की देवियां एकत्र हुईं। स्त्री शिक्षा और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्वदेश भक्ति पर देवियों के उत्तमोत्तम व्याख्यान तथा भजन हुये कलकत्ते की ओर से भी दो कन्याओं ने बड़े अच्छे भजन सुनाये। तत्पश्चात् बिसवां में कन्या आश्रम बनाने के लिये धन की अपील की गई और उसी समय लगभग १७००) रुपये नगद वसूल हुये जिस की सूची अन्यत्र प्रकाशित है कलकत्ते जैसे बड़े शहर में अनभिज्ञता होने के कारण बहुतों को सूचना समय पर न मिल सकी अतः बहुत सी देवियों को शिकायत ही रही कि उन्हें बुलाया नहीं गया।

इस धन राशि के अतिरिक्त बाबू रामलाल जी के उद्योग से २०००) रुपये और एकत्र हो चुके हैं और श्रीमान् बाबू पद्मराज जैन जी ने ५००) एकत्र करके देने का वादा किया जो आशा है कि शीघ्र ही मिलेगा।

श्रीमान् लाला छज्जूमल आर्य ने भी २५०) एकत्र कर दिये और पर्य्याप्त राशी एकत्र कर देने का वादा किया है इनके अतिरिक्त बाबू कृष्ण बलदेव वर्मा तथा श्रीमान् शम्भू बाबू जी कलकत्ता शेयर मार्केट के प्रसिद्ध रईस ने कई सहस्र का वादा दिया है जिसे वह शीघ्र ही पूरा कर सकेंगे क्योंकि उनका प्रभाव बहुत है।

कलकत्ते के बाद डेपुटेशन बनारस, कानपुर उन्नाव पहुँचा परन्तु इन स्थानों में समयाभाव से अधिक ठहरना न हुआ अतः कोई स्त्री सभा न की जासकी तथापि बनारस में बाबू महाराज किशोर खन्ना तथा बाबू गुरु प्रसाद धावन जी ने दो सहस्र का वादा दिया तथा कोरे लौटते देखकर २५) बयाने के तौर पर अपनी जेब से निकाल कर दिये।

उन्नाव में बाबू [illegible] जी ने एक हज़ार अवश्य इकट्ठा कर देने का वादा किया तथा उनकी धर्मपत्नी जी ने १००) नगद दिया।

कानपुर में बाबू रामसनेही सेठ वकील तथा बाबू मंगलीप्रसाद वकील ने चार पांच हज़ार एकत्र कर देने का वादा दिया जिस में से ५००) रुपये उन्होंने गयाप्रसाद ट्रस्ट से दिला दिये हैं और हमें सूचना मिली है कि कुछ मासिक भी उसी ट्रस्ट से दिलाने का यत्न किया जा रहा है इतना सब कुछ होते हुये भी जितने धन की आवश्यक्ता है वह पूरा नहीं हो सकेगा यदि अन्य सज्जन और देवियां इधर ध्यान न देंगे। ज्योति के पाठक और पाठिकाओं से प्रार्थना की गई थी कि वह इस कार्य्य में योग दें परन्तु किसी का ध्यान अब तक इधर नहीं हुआ है। इस कार्य्य में योग देने की एक सरलविधि यह है कि जिन २ लोगों के पास ज्योति पहुँचती है वह जितनी जिसकी श्रद्धा तथा सामर्थ्य हो उसके अनुकूल अथवा कम से कम एक रुपया अवश्य इस कार्य्य के हेतु ज्योति कार्य्यालय लाहौर की मार्फ़त भेज देवें तो एक उत्तम राशि ज्योति के पाठकों की ओर से इस पुण्य के कार्य्य में भेंट दी जा सक्ती है। आशा है कि सब पाठक पाठिकायें इस नम्र निवेदन पर ध्यान देंगे और शीघ्र ही अपना कर्तव्य पालन करके इस कार्य्य को सिद्ध करने में योग देंगे।

जो लोग इस कार्य्य में अग्रगामी होंगे उन की नामावली अगले अंक में प्रकाशित की जावेगी।

आश्रम यथा सम्भव शीघ्र खुल जावेगा उस के नियम इत्यादि के विषय में अगले अंक में लिखा जायगा।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. L. 1240.

माघ १९७७
फरवरी १९२१

वर्ष १ संख्या १०

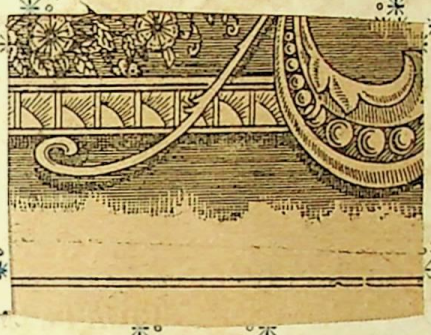

मासिक पत्रिका

सम्पादिका—

विद्यावती सेठ बी. ए.

वार्षिक मूल्य ४॥) स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४) प्रति संख्या ॥)

बाम्बे मैशीन प्रेस लाहौर में मैनेजर पंडित हरभगवान के प्रबन्ध से मुद्रित हुआ और बाबू मंदनलाल ने ज्योति कार्य्यालय लाहौर से प्रकाशित किया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय-सूची।

विषय	पृष्ठ
१ क्षीण ज्योति [कविता]—लेखक श्रीयुत् "कुसुम"	५७९
२ यमसूक्त की एक गाथा का निरूपण—(यम के कुत्तों का वर्णन) लेखक—पं० रामगोपाल जी शास्त्री रिसर्च स्कालर डी. ए. वी. कालेज लाहौर	५८०
३ पलाश प्रसून [कविता]—लेखक	को सूचना
४ भारत में शिल्प व्यवस्था—ले	सी देवियों
प्रो० प्राणनाथ विद्यालंका	लाया नहीं
५ मातृ वन्दना [कविता]—लेख	
ब्रह्मचारी वंशीधर गुरुकु	वू रामलाल
	र एकत्र हो
६ आधुनिक सामाजिक विप्लव और वादेक वर्णव्यवस्था	५९३
७ विजय स्वागत [कविता]—लेखक श्रीयुत् विनोद शंकर व्यास	५९८
८ गंगा-जमनी-नलनी—लेखक श्रीयुत् 'पागल'	५९८
९ प्रभु प्रार्थना—लेखक श्रीयुत् सुदर्शन	६०५
१० विलायती हुंडी की दर—लेखक श्रीयुत् प्रो० जगद्धर गुलेरी एम. ए. एल. एल. बी.	६०६
११ हमारी मंजूषा—	६१२
१२ कुसुमोद्यान—	६१३
१३ वैज्ञानिक संसार—	६१५
१४ विचार प्रवाह—	६१९
१५ वनिता विनोद—	६२१

ज्योति के नियम

ग्राहकों के लिये।

१. ज्योति प्रति अंग्रेजी मास की १५ को ग्राहकों के पास पहुंचा करेगी।

२. डाक व्यय सहित भारत के लिये इस का मूल्य ४॥) और छे मास के लिये २॥) वी. पी. का व्यय ≡) अलग है प्रति अंक का मूल्य ।।) है। भारत से बाहर विदेश के लिये इसका वार्षिक मूल्य ६) है। मूल्य मैनेजर ज्योति लाहौर के नाम आना चाहिये।

दय है और हम सातियां जो मिलसकेंगी उनका मूल्य प्रति भी उसी ट्रस्ट से न नहीं होगा।

रहा है इतना रुप परिवर्त्तन की सूचना पत्र के निकलने की आवश्यक्ता है मैनेजर को मिलनी चाहिये।

अन्य सज्जन औ ई संख्या किसी ग्राहक को न पहुंचे ज्योति के पाठक डाक घर से पूछना चाहिये। यदि पता की गई थी कि— न चले तो डाक घर से जो उत्तर आवे उसे प्रबन्ध कर्त्ता के पास भेज देना चाहिये। परन्तु यह सूचना अगले अंक के निकलने से १५ दिन पूर्व तक मिलनी चाहिये अन्यथा दूसरी प्रति बिना मूल्य नहीं दी जायगी।

लेखकों के लिये

६. लेख पढ़ने योग्य अक्षरों में हाशिया छोड़कर एक ओर ही लिखे जाने चाहियें। लेखों के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादिका को है। जो लेख प्रकाशित नहीं किये जासकेंगे वह टिकट और पता साथ होने पर लौटा दिये जावेंगे।

८. लेख कविता समालोचना के लिये पुस्तकें और परिवर्त्तन के पत्र सम्पादिका ज्योति लायलपुर के पते पर आने चाहियें:

मूल्य तथा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र प्रबन्धकर्त्ता ज्योति लाहौर के पते पर आने चाहियें।

विज्ञापन दर यह होगी।

प्रतिमास।

पूर्ण पृष्ठ या दो कालम १०) आधा पृष्ठ या एक कालम ६) चौथाई पृष्ठ या आधा कालम ३) चौथाई कालम २) टैटिल पेज का तीसरा पृष्ठ १२) टैटिल का अन्तिम पृष्ठ १५)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

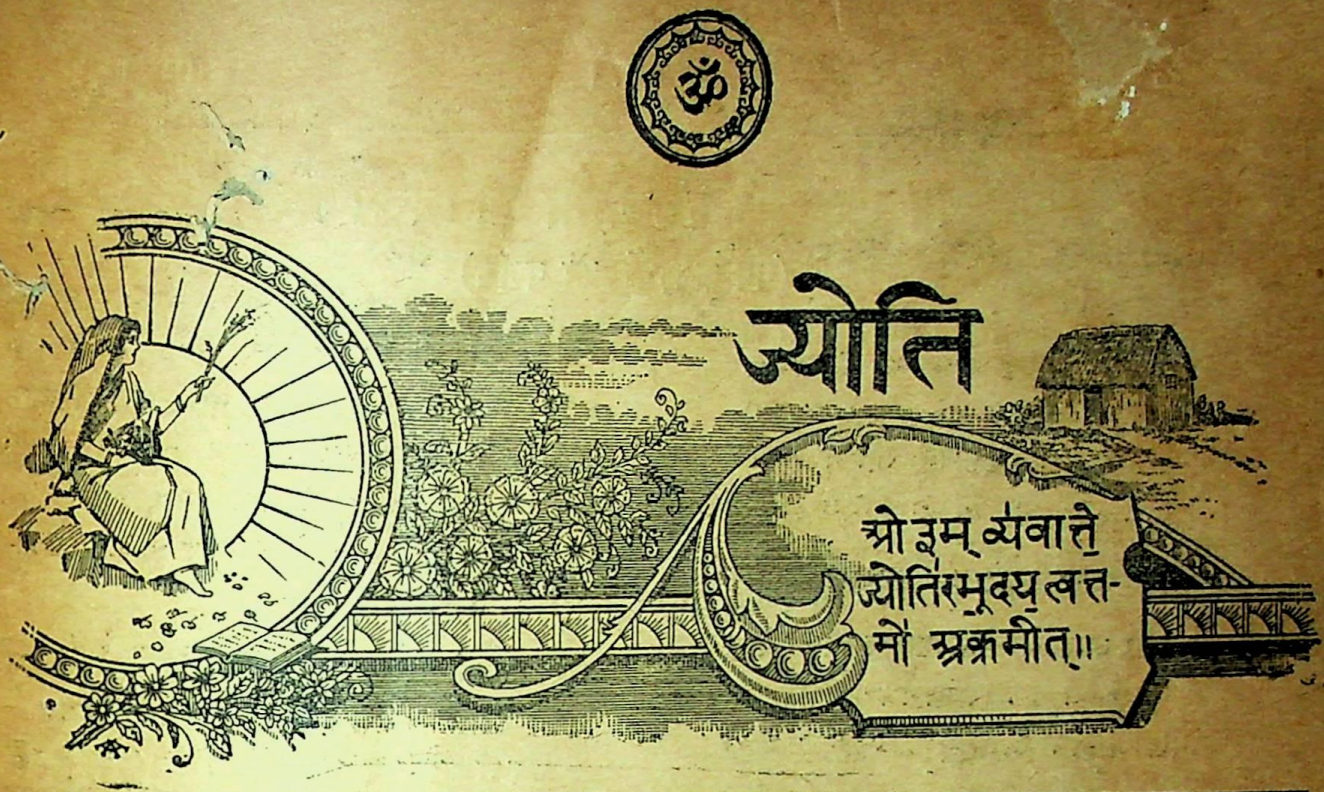

वर्ष १ | माघ १९७७—फरवरी १९२१ | संख्या १०

क्षीण ज्योति।

लेखक—श्रीयुत् "कुसुम"

[१]

वरुणा कल कल छल छल करती,
अति मन्द मचलती जाती थी।
थी पवन खेलती लहरों से,
मृदु मधुर मलार सुनाती थी॥

[२]

मुरझाई सांध्य दिवाकर की,
किरणें अस्ताचल जाती थीं।
दिन-नाथ बिना तरुणा नलिनी,
करुणामय अश्रु बहाती थी॥

[३]

मैं! थी अपना पथ भूल गई,
कर मल मल कर पछताती थी।
उस प्राणनाथ से मिलने के हित,
व्याकुल हो हो जाती थी॥

[४]

जीवन की छोटी नौका पर,
वर वीणा बैठ बजाती थी।
हा! कभी कभी रो देती थी,
औ, कभी कभी कुछ गाती थी॥

[५]

इतने में विभु की दया हुई,
एक क्षीण ज्योति का दान मिला।
जीवन की आशा पूर्ण हुई,
मेरा भूला भगवान मिला॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यम सूक्तों की एक गाथा का निरूपण।

(यम के कुत्तों का वर्णन)

लेखक—पं० रामगोपाल जी शास्त्री रिसर्च स्कालर डी. ए. वी. कालेज लाहौर।

[१]

यम का वर्णन वेदों में यद्यपि बहुत स्थलों में आता है, तथापि ऋग्वेद के १० मण्डल के १४, १५, १६, १७ तथा १८, के सूक्तों में; और अथर्ववेद के अष्टादश काण्ड के १ तथा २ सूक्तों में इसका वर्णन विशेष रूप से उपलब्ध होता है।

यम के विषय में कई प्रकार की कल्पनायें हैं, देशी तथा विदेशी शोधकों (Scholars) ने भी अपने २ ग्रन्थों में इसके विषय में कई प्रकार की अर्थ कल्पनायें की हैं, परन्तु उन लेखकों में एक दोष बड़ा भारी यह दिखाई दिया है, कि वे एक पद को देखकर सकल प्रकरणों में उस एक ही अर्थ के लगाने का प्रयत्न करते हैं, जिसका फल यह होता है, कि वेद के वे मर्मार्थ तक नहीं पहुंचते और ऐसी असफलता के पीछे, वे यह सम्मति स्थिर करते हैं, कि वेद के अर्थों की विस्पष्टता कहीं नहीं है। हालां कि यह उनकी अपनी गवेषणात्मक शैली का दोष है।

निरुक्तकार भगवान् यास्क ने निघ० अ० २ खण्ड ५ में जहां वास्तविक रूप से गौ आदि शब्दों को लेकर निर्वचन करना आरम्भ किया है, वहां पर साथ ही वेद में आये हुए गौ, पद के अनेकार्थ भी बतलाये हैं, कि यही गौः पद वेद में पृथिवी, धेनु, सूर्य्य किरणादि अर्थों में आता है। इस एक पद के निदर्शन मात्र से ही पाठकों को विदित होना चाहिये, कि वेद में यही नहीं कि एक पद का एक ही अर्थ है, किन्तु प्रकरण भेद से एक पद के भिन्न २ अर्थ भी हैं। सामायिक शोधकों Scholars में विशेष भूल यही रही है, कि वह यम के गुण कीर्त्तन में वेद में आये हुए सब स्थलों के यम कीर्त्तनों को इकट्ठा कर लेते हैं, और उस कीर्त्ति समूह से ही एक निर्णय करना चाहते हैं, जो कि वेदशैली के सर्वथा विरुद्ध है।

वेद में यम पद के परमेश्वर, (अग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः ऋ० १। १६४। १) आदित्य, (देवैः सम्पिबतेयमः ऋ० १०। १३५।१ निरु० १२। २९) वायु, (वाजिनं यमम् ऋ० ८। २४ २२) ऋतु (षडिद्यमा ऋषयो देवजाः। ऋ० १। १६४। १५) मृत्यु (काल) यमं राजानं हविषादुवस्य। ऋ० १०। १४। १) युगल (जोड़ा) यमो ह जात इन्द्रेण सह सङ्गतः। निरु० १०। २१॥ यमस्य मातापर्युह्यमाना ऋ० १०। १७। १ आदि २ कई एक अर्थ आते हैं। यम पद को शब्द शास्त्र कर्त्ताओं ने यम उपरमे [भ्वादि धातु से घञन्तरूप से बनाया है। निरुक्त में यमो यच्छतीति सतः। निरु० १०। १९ यम इस लिये इसे कहते हैं, क्योंकि नियम में रखता है। इसी निर्वचन से वेद में, राजा, न्यायाधीश, सेनापति तथा विद्वान् आदि अर्थ भी इसके होते हैं, परन्तु यह सब प्रकार के अर्थ अपने २ प्रकरण से ही होते हैं अन्यथा नहीं। कई एक लेखकों की भ्रान्ति इसी बात में रही, कि उन्हों ने परमे-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

श्वर, सूर्य्य, मृत्यु (काल) आदि वाचक यम को एक ही अर्थ में लेकर इस पद की व्याख्या की, जिसका फल यह हुआ कि रहस्य के समझने में वे वञ्चित रहे।

इस प्रकरण में क्योंकि हमें पूर्वोक्त ऋग्वेदीय मं० १०। १४–१८ सूक्तान्तर्गत तथा १८ काण्ड के यम सूक्तान्तर्गत, यम का वर्णन करना है, अतः हम यम के अन्य अर्थों का यहां परित्याग कर अब केवल मृत्यु (काल) वाची यम का ही वर्णन करेंगे। वर्णन से पूर्व, पाठकों को यह सुझा देना आवश्यक है, कि यहां मृत्यु (काल) का वर्णन आलंकारिक है, किसी अन्य रूप में नहीं।

इस यम (काल-मृत्यु) को वेद में विवस्वान् का पुत्र माना है, देखो ऋग्वेद, "वैवस्वतं सङ्गमनं जनानां यमं राजानं हविषादुवस्य" १०। १४। १। यत्ते यमं वैवस्वतं मनो जगाम दूरकम्। ऋ० १०। ५८। १। यमादहं वैवस्वतात्। १०। ६०। १०। भद्रं वैवस्वते चक्षुः १०। ६४। २। तथा देखो अथर्व ६। ११६। १, २।, १८। १३। १०, १८। १। ४९।, १८। ३। १३। आदि स्थलों में यम को वैवस्वत के नाम से स्मरण किया है। संस्कृत में विवस्वत अपत्यं वैवस्वतः, विवस्वान् का पुत्र वैवस्वत होता है। इन उपर्युक्त प्रमाणों से यम का विवस्वान् का पुत्र होना सिद्ध है, अब पाठकों को, पूर्व यह जान लेना अत्यन्त उचित होगा कि यम के पिता विवस्वान् का परिचय कर लें।

विवस्वान् का परिचय — यह तो सिद्ध कर ही दिया है, कि वेद में यौगिक और योगरूढ़ि शब्द हैं, रूढ़ि नहीं। ऐसे ही विवस्वान् पद के भी सूर्य्य, विवस्वन्नादित्यैषते। यजु० ८। ५। आदूतो अग्निमभरद्विवस्वतः ऋ० ६।८।४।, निरु० ७। २६) अग्नि, (अमूरः कविरदितिर्विवस्वान् ऋ० ७। ९। ३।) आदि २ कई एक अर्थ वेद में आते हैं, परन्तु प्रकरणश एवार्थ अभ्यूहितव्यः निरुक्त के अनुकूल इस प्रकरण में विवस्वान् पद अनेकार्थ वाचक होता हुआ भी, यहां सूर्य्यार्थ में ही गृहीत है। यम का अर्थ हम ने बता दिया है, कि काल है और काल पद ही समय Time तथा मृत्यु Death के अर्थों का भी देने वाला है, और वही काल पर्य्याय वाचक यम ही विवस्वान् सूर्य्य का पुत्र है। यह बात लोक सिद्ध ही है, कि सूर्य्य काल का उत्पादक है, यद्यपि काल नित्य है, तथापि उस का आविर्भाव सूर्य्य से ही हुआ है। सूर्य्य से ही काल की उत्पत्ति अर्थात् ज्ञान होता है। सूर्य्य न होता तो वर्ष, अयन, ऋतु, मास, पक्ष, दिन, मुहूर्त्त, क्षण, लव आदि किसी प्रकार के भी काल का ज्ञान सृष्टि में न होता। यह तो सर्व सम्मत है ही, कि इन पूर्वोक्त काल विभागों का निर्म्माता (उत्पादक) सूर्य्य ही है। इसी विचार से वेद में यम [काल] का जनक, पिता सूर्य्य माना गया है, किसी अन्य साधारण लौकिक जनकवत् नहीं।

यह यम यहां विवस्वान् का पुत्र मृत्यु ही ग्राह्य है अन्य कोई कल्पित मनुष्य नहीं, इस के लिये पूर्व लिखित मन्त्रों के प्रमाण सर्वथा युक्त

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और सुसंगत हैं; विशेष कर "भद्रं वैवस्वते चक्षुः" ऋ० १०।६४।२ तथा "यमादहं वैवस्वात्" १०। ६०।१० ये दो मन्त्र तो स्पष्ट रूप से ही इसी मृत्यु का वर्णन कर रहे "नयतामनू मृत्यु दता यम-दूता"। अथर्व ८।८।११ इस में यम मृत्यु का पर्याय सिद्ध है। तैत्तिरीय ब्राह्मण कां० ३ प्रपा० ११ अनु० ८ तथा कठोपनिषद् में जो यम नचिकेता संवाद आया है, वहां तो स्पष्ट रूप से ही सिद्ध कर दिया गया है, कि यम मृत्यु का पर्य्याय है और विवस्वान् का पुत्र है। कठोप-निषद् में किं स्विद्यमस्य कर्त्तव्यम्। अ० १ वल्ली० १ मं० ५ में इसे यम कहा गया है और यहीं आगे के मन्त्र ७ में तस्यैतां शान्तिं कुर्वन्ति हर वैवस्वतोदकम्। में उसी यम को वैवस्वत (विवस्वान् के पुत्र के नाम से स्मरण किया गया है) आगे के मं० १० में नचिकेता यम गुरू को गौतमो माभिमृत्यो। (मृत्यु पद से सम्बोधन करता है।

वल्ली १ अ० १ मं० २६ में शिष्य यम को अन्तक के नाम से सम्बोधित करता है, "श्वो भावा मर्त्यस्य यदन्तकैतत्" यह भी स्फुट ही है, कि अन्तक मृत्यु का ही पर्य्याय है। प्रथमाध्याय की १ वल्ली के मन्त्र १२ वें में तो यह सर्वथा ही बात स्फुट हो जाती है, कि यहां वैवस्वतयम से मृत्यु का ही ग्रहण है, अन्य का नहीं। "स्वर्गे लोके न भयं किंचनास्ति न तत्र त्वं न जरया बिभेति" शिष्य नचिकेता गुरू को कहता है, कि हे गुरो! स्वर्ग (सुख) लोक में तो कोई भी भय नहीं है, न वहां त्वं (तू अर्थात् मृत्यु) और ना ही वहां पर जरा वृद्धावस्था है।

जरा शब्द के साथ जो त्वं पद लिखकर उस का स्वर्ग में अभाव बताया है, वह मृत्यु नहीं तो और क्या हो सकता है। यम स्वयं भी कहता है कि अयं लोको नास्ति पर इतिमानी पुनः पुनर्वशमापद्यते मे" अ० १ व० २ मं० ६। यही लोक है, परलोक नहीं ऐसा मानता हुआ अविद्याग्रस्त (पुरुष) बार २ मेरे वश में (अर्थात् मृत्यु में) आता है। वेद मन्त्रों के साथ इन ब्राह्मण तथा उपनिषद् के प्रमाणों नें तो सर्वथा ही संशय का उच्छेद कर दिया है, कि यहां पर वैवस्वत यम से मृत्यु (काल) का ही ग्रहण करना चाहिये अन्य किसी मनुष्य वा देवता विशेष का नहीं।

यह भी सिद्ध कर दिया गया है, कि यह यम पद मृत्यु का वाचक होता हुआ यहां कालार्थ वाची भी है। भविष्यपुराण में जहां चौदह यम कल्पित किये हैं, वहां "यमाय धर्म्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च। वैवस्वताय कालाय" यह नाम भी लिखे हैं। इस श्लोक में यम, मृत्यु, वैवस्वत तथा काल पद विशेषतया ध्यान देने योग्य हैं, अतः मृत्यु पर्य्याय होता हुआ भी यम काल वाची है। काल के भी समय तथा मृत्यु दोनों ही अर्थ हैं, समय वाची काल तो विख्यात ही है; परन्तु मृत्यु अर्थ में भी लोक में ऐसा कहते हैं, कि अमुक का काल आगया है। इस से यम का मृत्यु तथा काल वाची होना सिद्ध है।

इन सूक्तों में यम की बहुत महिमा लिखी हुई है। इसे राजा और जनों का सङ्गमन (इकट्ठा) करने वाला लिखा है। (१०।१४।१) वास्तव में मृत्यु है भी राजा; क्यों कि ब्रह्म पद प्राप्ति से पूर्व २ सारी प्रजा इसी के अधीन है,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri

और जनों का सङ्गम भी करता है, हम प्रतिदिन देखते हैं, कि जन इस के मुख में जाते हैं।

वेद में अर्थवाद रूप से इस के मार्ग को बड़ा भयंकर लिखा है, मा पन्थामनु गा भीमएप। अथर्व ८।१।१० (हेजीव) मत इस यम (मृत्यु के मार्ग की ओर जाओ जो यह बड़ा भयंकर मार्ग है) इसी के अनेक दूत माने हैं, "वैवस्वतेन प्रहितान् यम दूतान्" अथ० ८। २।११ वैवस्वत यम द्वारा भेजे हुए इन दूतो को (दूर करते हैं) इस यम के मार्गरक्षक मुख्य दो दूत दो श्वान (१०।१४।१०,११,१२ तथा अथ० १८।२।११,१२,१३।) हैं। जिनका विशेष वर्णन हम आगे चल कर करेंगे। इनस्थलों में यम से पितरों का सम्बन्ध बहुत घना है। उन कर्म्मकाण्डी पितरों का भी राजा, स्वामी यही यम है, क्योंकि वे इतना कर्म्मकाण्ड करने पर भी इस यम से छूटते नहीं है। जैमिनि ब्राह्मण में तो इस अग्नि को भी मृत्यु (यम) ही माना है) "देवा वै मृत्युना समयतन्त, यो ह स मृत्युः अग्निरेव स। १।१२ (Jamini Brahaman in auswal by W. Caland P. 8 1919 देवों ने मृत्यु से युद्ध किया, जो वह अग्नि है वही मृत्यु है। जैमिनी ब्राह्मण के पाठ से तो यही सिद्ध होता है, कि यह अग्नि ही मृत्यु है। इस का वास्तविक अर्थ यह है, कि इस अग्नि द्वारा अग्निहोत्र करने वाले भी मृत्यु के ही वश में रहते हैं। यद्यपि उन कर्म्मकाण्डियों की गति साधारण मर्त्यों से बहुत उच्च होती है, तथापि वे अमृतत्व के भागी नहीं होते, क्योंकि अपने पुण्य फल उपभोग के अनन्तर पुनरपि उन्हें जन्म मरण के बन्धन में पड़ना ही पड़ता है। जो ज्ञाननिष्ठ कर्म्म में प्रवृत्त होता हुआ भी निष्कामरूप से कर्म्मों को करता है और ब्रह्मचर्य्य, श्रद्धा, तप तथा ज्ञान से आत्मचिंतन में रत रहता है, उस की गति उस अग्निहोत्र द्वारा कर्म्मकर्त्ता से भी उच्च है और वह अमृतत्व को भी प्राप्त करता है। यही आशय जान कर ऋषियों ने इस अग्नि को भी मृत्यु ही कहा है। उपनिषद्, वेदान्त दर्शन तथा गीता में तो इस आशय को और भी स्पष्ट किया है, कि केवल कर्म्मकाण्डी मृत्यु मुख से छुटते नहीं। वेदादि शास्त्रों में भी स्पष्ट कर दिया है, कि देवयान से भिन्न जो जो पितृयान है, वह मृत्यु के ही अन्तर्गत है "परं मृत्यो। अनुपरेहि पन्थां यस्ते स्व इतरो देवयानात्"। ऋ। १०।१८।१

संवत्सरो वै प्रजापतिः तस्यायने दक्षिणं चोत्तरं च यद्ये हवै तदिष्टा पूर्त्ते कृत मित्युपासतेते चान्द्रमसमेव लोकमभिजयन्ते। त एव पुनरावर्त्तन्ते तस्मादेते ऋषयः प्रजाकामा दक्षिणं प्रतिपद्यन्ते। एष ह वै रयिर्यः पितृयानः। प्रश्न० उ० १।९।

अर्थ—वर्ष प्रजापति है उस के दक्षिण और उत्तर दो अयन [मार्ग] हैं। जो [पुरुष] इष्टि (यज्ञादि) तथा पूर्त्त (वापि कूप तड़ाग निर्म्माणादि) इन कर्म्मों में लगे रहते हैं वे चन्द्र लोक को ही प्राप्त होते हैं। वे ही फिर (मृत्यु मुख की ओर) लौटते हैं। इस से सन्तान की कामना वाले ऋषि दक्षिण मार्ग को प्राप्त होते हैं। यही रयि है जो पितरों का मार्ग है। इस के अगले १।१० मंत्र में उत्तरायन का वर्णन किया है। उस मार्ग को जो तप, ब्रह्मचर्य्य, श्रद्धा और विद्या से प्राप्त करते हैं वे फिर मृत्यु मुख

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में वापिस नहीं आते*। यही आशय छान्दोग्यो पनिषद् के अ० ५ खं० १० में आया है; वहां पर देवयान से अर्चि, दिन, शुक्ल पक्षादि का और पितृयान से धूम, रात्रि और कृष्णपक्ष का सम्बन्ध विशेष लिखा है। वृहदा० उ० अ० ६ ब्रा० २ मं० २, १५, १६ में भी इन दोनों मार्गों का वर्णन आया है। वेदान्त दर्शन अ० ३ पा० १, अ० ४ पा० २, तथा अ० ४ पा० ३ में भी इन यानों का वर्णन सुस्पष्ट है। भगवद्गीता अ० ८ श्लो० २४-२६ में भी उपनिषदानुकूल दोनों गतियों का वर्णन है। मूल रूप से इन दोनों मार्गों का वर्णन स्वयमेव ही वेद मंत्र में मिलता है "द्वे सृती अशृणवं पितृणामहं देवानामुत मर्त्यानां। ताभ्यामिदं विश्वमेजत्समेति यदन्तरा पितरं मातरं च"।

ऋ० १०। ८८। १५।

इस संसार में दो मार्ग सुनेत हैं मनुष्यों के (उन दोनों में से एक) पितरों का और दूसरा देवों का। इन दोनों मार्गों के द्वारा ही सारा विश्व काम्पता हुआ चलता है।

इन पूर्वोक्त प्रमाणों में पाठकों ने दो यानों का वर्णन सप्रमाण पढ़ा है। सब प्रमाणों के पढ़ने से यही तात्पर्य्य निकला है, कि कर्म्मकाण्डियों का मार्ग पितृयान है और देवों का देवयान। यहां पर यह बात विशेष रूप से दर्शनीय है, कि पितरों का दक्षिणायन, कृष्णपक्ष, रात्रि तथा धूम से सम्बन्ध है और ज्ञानियों का उत्तरायण, शुक्लपक्ष, दिन तथा ज्योति से सम्बन्ध है। जब सूर्य्य की गति दक्षिण की ओर होती है तो उस दक्षिणायन कहते हैं यह †श्रावण से लेकर पौष पर्य्यन्त ६ मास का अयन है, दूसरा माघ से लेकर आषाढ़ पर्य्यन्त का है यह उत्तरायण है। कर्म्म काण्डियों को ही पितर कहा है, उन की गति दक्षिणायन है, ज्ञानीयों का नाम देव है उन की उत्तरायण है। यद्यपि इन अयनों में बाह्यसूर्य्यादि का भी सम्बन्ध है, तथापि आन्तरिक मर्म्म बहुत रोचक है। अन्दर भी इडा तथा पिङ्गला नाड़ियें हैं। इडा ही चन्द्र है और पिङ्गला सूर्य्य है। इन नाड़ियों की गतियों तक को पहुंचे हुए योगियों की ये गतिये हैं। जो चन्द्रद्वार, इडा को पहुंच कर प्राण निकालते हैं वे वार २ मरते और जन्मते हैं और जो सूर्य्यद्वार, पिङ्गला से प्राण निकालते हैं वे मोक्ष को प्राप्त होते हैं। इसी आशय को लक्ष्य में रख कर कर्म्मकाण्डी को भी गीता में योगी के नाम से लिखा है ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्त्तते। गी० ८। २५। वहां पर चन्द्रलोक की ज्योति को प्राप्त करके योगी लौट (भी) आता है। अन्यत्र उपनिषद में भी एक स्थल पर आया है, कि सूर्य्य द्वारेणते विरजाः प्रयान्ति मुण्डक० उ० १। २। १। सूर्य्यद्वार से अन्तकाल को अपनी प्राण वायु बाहिर निकाल कर वे राग रहित योगी जन मुक्ति को प्राप्त होते हैं। यदि ऐसा न माना जाय तो फिर यह भी दोष होगा, कि पापी जन की क्या गति होगी। क्योंकि इन दोनों अयनों, दोनों पक्षों तथा रात्रि दिन इन दोनों कालों में ही सब ने मरना है। यदि पापी दक्षिणायन,

*यहां वापिस न आने से महाकल्प पर्य्यन्त का तात्पर्य्य जानना चाहिये।

† इस में भी मत भेद है। देखो सुश्रुत सूत्र स्था० अ० ६। ५, ६, ७। परन्तु अब उत्तरायण पौष से आरम्भ होता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कृष्ण पक्ष वा रात्रि को मरे तो भी चन्द्र लोक की प्राप्ति होगी और यदि वह उत्तरायण, शुक्ल पक्ष तथा दिन में मरे तो उसे मुक्ति मिलेगी; परन्तु यह ठीक नहीं। अतः आन्तरिक अर्थ बहुत ठीक बैठता है, कि जो २ जीव उस गति को प्राप्त हुआ है, उसे वह फल मिलेगा बाह्य अर्थ भी हेय नहीं, क्योंकि ईश्वरीय सृष्टि में आध्यात्मिक, आधिदैविक तथा आधिभौतिक जगत् मिला हुआ है। अध्यात्मरूप में जिन दो लोकों का निरूपण किया है, बाह्य भी उन का सम्बन्ध है। परन्तु यहां पर इतना अधिक योजन करना होगा, कि कर्म्मकाण्डी जब भी मृत्यु को प्राप्त होगा तो उस की गति दक्षिणायन की होगी और योगी जन उत्तरायण शुक्ल पक्षादि में ही प्राण परित्याग करते हैं। इस में महाभारत में भीष्म पितामह और इस युग के प्रवर्त्तक स्वामी दयानन्दका जीवन प्रमाण है। अन्य साधारण जन जब भी मरें तो भी उन की गति ऐसी नहीं। इन अयनों का सम्बन्ध उन्हीं पितरों तथा देवों से है। इस इतने दीर्घलेख से हम इस निर्णय तक पहुंचे हैं, कि यह अग्नि जिसे मृत्यु कहा गया है, इस लिए क्योंकि इस के द्वारा कर्म्म करने वाले पितर (कर्म्म काण्डी) भी मृत्यु के ही अधीन रहते हैं अमृतत्व को प्राप्त नहीं होते। दक्षिणायन काल में कर्म्म काण्ड यज्ञादि विशेष होते हैं साथ ही उपनिषद् तथा गीता में दक्षिण मार्ग में कृष्णपक्ष तथा रात्रि का भी ग्रहण किया है। यही उद्देश रखकर ब्राह्मण ग्रन्थों में पितरों (कर्म्म काण्डियों) की दिशा यज्ञ में दक्षिण लिखी है। एषा वै दिक् पितॄणाम्। श० ब्रा ९। ३। ४। ११ दक्षिण प्रवणो वै पितृलोक स्तदेनँ पितृलोक आयजतीति। श० ब्रा० १३। ८। १। ६,७। यह दक्षिण दिशा है पितरों की, दक्षिण प्रवण ही पितृलोक है जिस से इसे पितृलोक में यजन करता है।

पितरों की गति कृष्ण पक्ष में होती है अतः ब्राह्मण ग्रन्थों में इन का पक्ष कृष्ण और देवों का शुक्ल लिखा है:— अपराह्णभाजो वै पितरः। गो० ब्रा० उ० भा० प्र० १ क० २४। पितरों का काल अपराह्ण है। अपक्षय भाजो वै पितरस्तस्मादपराह्णे पितृ यज्ञेन चरन्ति। कौ० ब्रा० ५। ६ अपक्षय भागी पितर हैं इस लिये पितृयज्ञ को अपराह्ण काल में करते हैं। तत्व यह है, कि प्रातः काल से लेकर दिन के १२ बजे पर्य्यन्त दिन का पूर्ण बल होता है तदनु दिन ढलना आरम्भ हो जाता है और रात्रि का पक्ष लगना आरम्भ होता है इस विचार में इन का काल दिन का उत्तर भाग माना है पूर्व भाग नहीं यद्यपि यम का राज्य जहां सब मर्त्यों पर है, तो भी यहां कहने का तात्पर्य्य इतना है, कि जब पितर (कर्म्म काण्ड) कर्त्ता भी उसके अधीन हैं, तो अस्मादृशों की क्या कथा, इन सब प्रमाणों से यम (मृत्यु)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का सम्बन्ध पितरों (कर्म काण्डियों) से तथा पितरों का दक्षिण दिशा, कृष्ण पक्ष और अपराह्न काल से सिद्ध होता है। अब स्फुट होगया कि यह अग्नि मृत्यु (यम) क्यों है। प्रतीत होता है कि इसी विचार को लक्ष्य में रख कर महर्षि दयानन्द सरस्वती ने जहां संस्कार विधि पृ० २६९ पर यम के अनेकार्थ बताये हैं वहां यमाय जुहता हविः। १०। १४। १३ मन्त्र में यम का अर्थ अग्नि भी किया है। यह तो पूर्व लिखा ही गया है, कि यम पद के अनेकार्थ हैं अतः यहां अग्नि अर्थ करने से भी कोई विरोध नहीं आता।

इस ऊपर के लेख से हम ने यह सिद्ध किया है, कि यम मृत्यु का नाम है, उस का सम्बन्ध जहां अन्य साधारण जनों से है वहां कर्म्म काण्डी पितरों से भी है, इन सब मनुष्यों पर यम का राज्य है और विवस्वान् (सूर्य्य) इस यम (काल) का पिता है और अनेक विध इस यम (मृत्यु) के दूत हैं। अभी तक तो यह प्रतीत हुआ है, कि वेदादि सच्छास्त्रों में यम कोई पुरुष नहीं, प्रत्युत इस का आलङ्कारिक वर्णन इन आर्ष ग्रन्थों में है।

पलाश प्रसून।

लाल लाल लोने लगत, लखि पलाश के फूल।
अन्तर परिमल हीन हो, जानि होत है शूल॥ १॥
निठुर विधाता ने कियो, तुम्हें गन्ध ते हीन।
योत लीला राम तजि, वास विपिन में लीन॥ २॥

(श्रीहरि)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भारत में शिल्प व्यवसाय।

लेखक—श्रीयुत् प्रो० प्राणनाथ विद्यालंकार।

शिल्प में धार्मिक भाव।

भारतीय तथा योरुपीय शिल्प में बड़ा भेद है। शिल्प की पूर्णता यथावस्थित वस्तु के दिखा देने में ही समझी जाती है। योरुपीय शिल्पी प्रकृति को शिल्प का आदर्श समझते हैं। प्रकृति से ही प्रत्येक प्रकार का ज्ञान वह शिल्प में प्राप्त करते हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य्य को शिल्प द्वारा प्रगट करना ही योरुपीय शिल्पियों का मुख्य उद्देश्य होता है। उसी उद्देश्य को प्राप्त करने में वह शिल्प के चातुर्य का अनुमान लगाते हैं।

भारतीय शिल्प का आदर्श योरुपीय शिल्प से कुछ विचित्र है। भारतीय विचारक प्रकृति को गौण समझते हैं। उन के लिये प्राकृतिक घटनायें क्षणिक तथा वास्तविकता से शून्य हैं। इस दशा में वह अपने शिल्प का आदर्श उस अनन्त शक्ति के ऐश्वर्य को यथानुरूप प्रगट करने में समझते हैं। परिणाम इस का विचित्र है। योरुपीय शिल्प में जहां कल्पना शक्ति गौण है वहां भारतीय शिल्प में यही मुख्य है।

योरुपीय शिल्प पर रहित हुआ २ जो कुछ संसार में होता है उसी को प्रगट करता है परन्तु भारतीय शिल्प इस सांसारिक तुच्छ सौन्दर्य्य का परित्याग करके किसी अपूर्व स्वर्गीय सौन्दर्य्य को दिखाने में यत्न करता है।

यूनानी शिल्पी प्राकृतिक वस्तुओं में से सुन्दर वस्तु को चुनते थे। और उसे ईश्वरीय सौन्दर्य्य का भाग समझते हुए उसी का शिल्प में अनुकरण करते थे। भारतीय शिल्पी अनुकरण में सौन्दर्य्य नहीं समझते हैं। उनके लिये बाह्य शरीर सौन्दर्य्य का दर्शक नहीं है। सौन्दर्य्य का वास्तविक स्वरूप किसी अन्य बात में है। इसी को दूसरे शब्दों में यों भी कहा जा सकता है कि भारतीय शिल्पी शिल्प में भोग विलास के स्थान पर धार्मिक भाव को मुख्य रखते हैं। बाह्य शरीर को दिखाने के स्थान पर अन्तरीय विचारों को प्रगट करने में ही उन का मुख्य उद्देश्य रहता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि भारतीय शिल्प में आध्यात्मिक भाव मुख्य है ऐसे विस्तृत विभेद के होते हुए भारतीय तथा योरुपीय शिल्प की तुलना किसी प्रकार भी शक्य नहीं है।

बुद्ध ने जनता को जीवन के उन्नत करने की शिक्षा दी। पृथ्वी पर ही कैसे स्वर्गमय जीवन व्यतीत किया जा सकता है इस का उसने सम्पूर्ण भारतीयों को उपदेश दिया। वह स्वयं भिक्षु था। आश्चर्य की बात है कि प्राचीन शिल्प में बुद्ध को एक योगी का रूप दिया हुआ है, जावा के बोरो बुदूर में ध्यानावस्थित बुद्ध की मूर्ति अत्यन्त प्रशस्य है।

योगी स्वरूप में बुद्ध की मूर्तियां स्थान स्थान पर खोदने से मिली हैं। योरुपीय विचारक भारतीय शिल्प को देखकर के भ्रम में पड़ जाते हैं। वह समझते हैं कि भारतीय शिल्पी भी उन के ही सदृश प्राकृतिक सौन्दर्य्य को दिखाने का यत्न करते थे परन्तु दिखा नहीं सके। अतः भारतीय योरुपियों की अपेक्षा शिल्प में बहुत पीछे हैं। इस प्रकार का विचार करने वाले योरुपीय विचारक बड़ी भारी ग़ल्ती पर हैं। प्राकृतिक सौन्दर्य्य को दिखाना तो भारतीय

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शिल्पियों के लिये चुटकी का खेल था। जिस कठिन मार्ग पर उन्होंने पग धरा और उस में सफलता प्राप्त की उस का योरुपीय विचारक अनुमान भी नहीं कर सके। वाह्य शरीर को शिल्प में प्रगट करना सहज काम है। परन्तु किसी मनुष्य की मानसिक वृत्तियों को शिल्प में दिखाना अत्यन्त कठिन है। भारतीय शिल्पियों ने इसी कठिन कार्य में पग धारा था और उस में पूर्णता प्राप्त की है।

तिब्बतन शिल्प में मदनपाणी तथा नैपाली शिल्प में वज्रपाणी की मूर्तियां आलेख्य कला की पूर्णता को प्रगट करती हैं। नैपाली बोद्धि सत्व तथा गैजेय की मूर्ति भी देखने के योग्य है। परन्तु इन सब मूर्तियों में एक ही भाव को दिखाने का यत्न किया गया है प्रत्येक मूर्ति में दैवीयभावों को सूचित किया है। पुरुषों की मूर्तियों के सदृश स्त्रियों की मूर्तियों में भी दैवीय भावों का लोप नहीं किया गया है। स्त्रियों में शक्ति को दिखाने का यत्न किया गया है। अनन्त दया शक्ति को दिखाने के लिये तारा की मूर्ति, बुद्धि शक्ति को प्रगट करने वाली सरस्वती तथा प्रज्ञा परिमिता की मूर्ति भारतीय शिल्प में स्थान स्थान पर दिखाई देंगी। परन्तु यदि हम भारतीय शिल्प में किसी साधारण मनुष्य या स्त्री की मूर्ति को देखना चाहें तो शायद ही कोई मिले। भारतीय शिल्प ने कब पूर्णता प्राप्त की इस का जानना अति दुष्कर है। महाशय हैवल्ट ने ताण्डव नृत्य करते हुए शिव का चित्र दिया है। यह चित्र अत्यन्त अद्भुत है। शिव के एक २ अंग को अपूर्व चातुर्य से शिल्पी ने बनाया है। भारतीय शिल्पियों ने अपने शिल्प को पांच प्रकार के कर्मों में प्रगट किया है जो कि इस प्रकार हैं—

(१) लाट वा पत्थर के स्तम्भ—उन पर शिला लेख खुदे हुए होते हैं।

(२) स्तूप—यह किसी पवित्र धारणा को प्रगट करने के लिये बनाये गये थे। इन में से कईयों में बुद्ध के मृत शरीर का कुछ भाग भी गड़ा हुआ था।

(३) जंगले—इन पर बहुत ही उत्तम नक़ाशी का काम किया होता था वह स्तूपों के घेरने के लिये बनाये जाते थे।

(४) चैत्य अर्थात् मन्दिर।

(५) विहार।

अशोक की बनवाई हुई लाटें ही भारत में सब से प्राचीन लाटें समझी जाती हैं। दिल्ली तथा इलाहाबाद की लाटें ऐतिहासिक दृष्टि से अति प्रसिद्ध हैं। सारनाथ का धर्मचक्र परिवर्तन को प्रगट करने वाला स्तम्भ देखने के योग्य है। उसके ऊपर चार सिंह की मूर्तियां शिल्पियों के अत्यद्भुत चातुर्य को प्रगट करती हैं। सांची तथा भिलसा के स्तूप अति प्रसिद्ध हैं सांची के छोटे से प्रदेश में ही लगभग ६० स्तूप हैं। स्तूपों के चारों ओर जङ्गले होते हैं इसका वर्णन पूर्व किया जा चुका है। इन जङ्गलों पर बहुत उत्तम कारीगरी की गई है। इन जङ्गलों से भारतवर्ष के पत्थर के काम की जो अवस्था प्रगट होती है उस के विषय में हम डाक्टर फर्ग्युसन साहब की सम्मति उद्धृत करते हैं।

"जब हम लोग हिन्दुओं के पत्थर के काम को पहिले पहिल बुद्धगया और भरहुत के जंगलों में २०० से लेकर २५० ई० पू० तक देखते हैं तो हम उसे पूर्णतया भारतवर्ष का पाते हैं जिस में कि विदेशियों के प्रभाव का कोई चिन्ह नहीं है। परन्तु उनमें से वह भाव प्रगट होते हैं और उनकी कथा इस स्पष्ट रूप

CC-0. Gurukul Kangri Vishwavidyalaya Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

से विदित होती है जिस की समानता कम से कम भारतवर्ष में कभी नहीं हुई। उस में कुछ जन्तु यथा हाथी, हिरन और बन्दर ऐसे बनाए हुए हैं जैसे कि संसार के किसी देश में बने हुए नहीं मिलते हैं। मनुष्यों की मूर्तियां भी यद्यपि वे हम लोगों की आज कल की सुन्दरता से बहुत भिन्न हैं परन्तु बड़ी स्वाभाविक हैं और जहां पर कई मूर्तियों का समूह है वहां पर उन का भाव अद्भुत सरलता के साथ प्रगट किया गया है। रैफ़ल की नाई एक सस्ते और कार्योपयोगी शिल्प की भांति कदाचित् इस से बढ़ करके और कोई काम नहीं पाया गया।"

जंगलों का वर्णन कर देने के अनन्तर अब मैं कुछ शब्द बौद्ध मन्दिरों के विषय में कह देना उचित समझता हूं। बौद्ध मन्दिरों की विशेषता यह है कि वह गृहों के सदृश नहीं बनाए जाते हैं। बड़ी २ चट्टानों को काट कर के ही उन का निर्माण किया गया है। ऐसे २० या तीस मन्दिर मिलते हैं। इन की सुन्दरता अन्दर होती है। बाहर तो एकमात्र मुंह ही मुंह दिखाई देता है। ऐसे बहुत से मन्दिर बम्बई प्रान्त में ही मिले हैं। इस का कारण यह है कि वहां पर्वत बहुत से हैं, वे पर्वत ऐसे हैं जिन में कि मन्दिर बनाना सहज है। निम्न लिखित स्थानों में प्रसिद्ध २ पर्वतीय मन्दिर मिलते हैं।

स्थान	गुफाओं की संख्या–
बंम्बई	—९
विहार	—१ सप्तपन्नि गुफा।
गया	—बहुत सी गुफायें। लोमश ऋषि की गुफा अति प्रसिद्ध है।
पश्चिमी घाट	—६। इन में मज की गुफा अति प्रसिद्ध है।
वेदसोर	—बहुत सी छोटी बड़ी गुफायें हैं।
नासिक	—१ गुफा।
पूना बम्बई के बीच में	—कार्ली त्र की गुफा।
अजन्टा	—४ मन्दिर।
एलोरा	—विश्वकर्मा की गुफा।
साल्सट का टापू	—कन्देरी की गुफा।
उदयगिरि तथा खण्डीगिरि	—गुफायें। गणेश गुफा राजरानी गुफा।

यह सब उपरि लिखित अद्भुत शिल्प के काम स्वयं न होगए थे इन को भारतीय शिल्पियों ने ही बनाया था। उन की आजीविका का तथा उन के परिवार का भरण पोषण इसी कार्य पर निर्भर करता था। उन के संघ बने हुए थे जो कि समयान्तर में जाति के रूप में परिवर्तित होगए। प्रस्तरा शिल्पियों का कार्य वंशज होने से शिल्प ने बहुत उन्नति प्राप्ति की डाक्टर फर्ग्युसन पर्वतीय मन्दिरों के अन्दर के भाग के विषय में कहते हैं कि—

"भीतर के भाग का हम पूरी तरह से विचार कर सकते हैं और वह निस्सन्देह ऐसा गम्भीर और उत्तम है जैसा कि कहीं भी होना संभव है। और उसके प्रकाश का ढंग बहुत पूर्ण है। एक पूरा प्रकाश ऊपर के एक छेद से आकर ठीक वेदी पर पड़ता है मन्दिर का शेषभाग अन्धकार में रहता है। यह अन्धकार तीनों भागों को और तीनों दालानों को जुदा करने वाले मोटे २ घने ८ स्तम्भों से और भी अधिक हो जाता है।

बौद्ध मन्दिरों के वर्णन कर देने के अनन्तर अब हम बौद्ध विहारों का संक्षेप से कुछ वर्णन कर देना आवश्यक समझते है। बौद्ध विहारों में (परमा के दक्षिण) सब से प्रथम नालिन्द का प्रसिद्ध विहार है। यह समय समय पर बनता रहा था। एक राजा ने नालिन्द के सब बिहारों को घेरकर एक ऊँची दीवार उठवाई थी जो कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

६०० फीट लम्बी और ४०० फीट चौड़ी थी। उस घेरे के बाहर स्तूप और गुम्बज़ बनवाए गए थे। कदाचित् भारतवर्ष में सब से अधिक मनोरंजक विहार अजंटा के १६वें और १७वें विहार हैं, वे बौद्ध बिहारों के बड़े सुन्दर नमूने हैं और वे बड़े ही काम के हैं क्योंकि उन में अब तक भी चित्र ऐसी स्पष्टता के साथ वर्त्तमान हैं कि जैसे और किसी विहार में नहीं पाये जाते।

नं० १६ का विहार ६५ फीट लम्बा और उतना ही चौड़ा है और उस में २० खम्भे हैं। उसके दोनों ओर सन्यासियों के रहने के लिए १६ कोठरियां है। बीच में एक बड़ा दालान, आगे की ओर एक बरामदा और पीछे की ओर देवस्थान है। उसकी दीवारें चित्रों से भरी हुई हैं। जिन में बुद्ध के जीवन वा मुनियों की कथाओं के दृश्य हैं और छत तथा खम्भे में बेलबूटों आदि के काम हैं और इन सब बातों से उसकी एक अद्भुत शोभा होजाती है। इन चित्रों के जो नमूने प्रकाशित हुए हैं उन को देखने से चित्रकारी किसी प्रकार की हलकी नहीं जान पड़ती है। मूर्तियां स्वाभाविक और सुन्दर हैं। मनुष्यों के मुख मनोहर और भाव प्रगट करनेवाले हैं और वे उन विचारों को प्रकट करते हैं जिनके लिए वे बनाये गए हैं और स्त्रियों की मूर्तियां लजीली हलकी और उत्तम हैं। और उन में वह मधुरता और शोभा है जिस से कि वह विशेषता भारतवर्ष की जान पड़ती है। सजावटें शुद्ध और ठीक तथा अद्भुत शोभा देनेवाली हैं। यह आशा की जाती है कि इस अद्भुत चित्रकारी का एक पूर्ण संग्रह शीघ्र ही कर दिया जावे। परन्तु इस कार्य में एक भय है कि अजन्टा की चित्रकारी की नकललेने के लिये उनके रंगको चटकीला करने के जो उपाय किये गए हैं उन से बृटिश यात्रियों की नाशकारी प्रकृति के कारण ये अमूल्यभण्डार नष्ट हो गए हैं।

(प्राचीन भारतवर्ष में सभ्यता का इतिहास)

रमेशचन्द्र दत्तकृत

मुसलमानों से पूर्व पूर्वतक भारत में शिल्प की किसी प्रकार उन्नति होती रही इसका तिब्बतनलामा ताकानाथ ने (१६०८ में यात्रा करने के लिये भारत में आयाथा) बहुत उत्तम तौर पर वर्णन किया है। वह कहता है कि प्राचीन काल में कुछ एक योग्य मनुष्यों ने अपनी अपूर्व शक्ति से शिल्प के कार्य को प्रारम्भ किया। विनय अगामा में लिखा है कि इन्होंने इस चातुर्य से भित्ति चित्रण किया था कि देखने वालों को भ्रम हो जाता था कि यह चित्र है या वास्तविक घटना है। उनयोग्य व्यक्तियों की मृत्यु के अनन्तर समय २ पर अन्य योग्य व्यक्ति उत्पन्न हुए जिन्होंने शिल्पकला को पर्याप्त उन्नति दी। इनके अनन्तर कुछ एक शिल्पी ऐसे चतुर उत्पन्न हुए कि उनको मनुष्य शरीर में देवता कहा जा सकता है। उन्होंने ही मगध के संसार प्रसिद्ध ८ चैत्यों का निर्माण किया। इतना लिख करके तारानाथ ने अशोक के समय के शिल्प के ऊपर कुछ शब्दलिखे हैं जो कि यह हैं।

अशोक के काल में यक्ष लोगों ने शिल्प का कार्य किया। गया में वज्रसेन नामी स्थान इन्हीं लोगों ने बनाया था। परन्तु नागार्जुन के काल में (१५० सन्) नाग नामा शिल्पी जाति ने बहुत से शिल्प के अद्भुत काम किये। इस प्रकार नाग तथा यक्षों ने भारतीय शिल्प को पूर्णता दी। इन जातियों के अधःपतन के समय में यह प्रतीत होता था कि भारत से शिल्प सदा के लिये नष्ट हो गया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

परन्तु कुछ काल तक शिल्प के अधः पतित दशा में होते हुए भी पुनः बहुत से चतुर शिल्पी इधर उधर उत्पन्न हुए जिन को किसी संप्रदाय का बताना कठिन है। बुद्ध पक्ष के ज़माने में शिल्प तथा चित्रण कला ने पुनः पूर्णता प्राप्त की और राजा हर्षवर्धन के काल में तो श्री रंगधर नामी चतुर मारवाड़ी शिल्पी ने शिल्प कला को पूर्णता दी और एक संप्रदाय को जन्म दिया जो कि प्राचीन पाश्चिमी संप्रदाय के नाम से इतिहास में प्रसिद्ध हो गया। मगध के शिल्पियों को मध्य देशीय संप्रदाय का कहा जाता था। देवपाल श्रीमन्त तथा शर्म्मापाल के काल बंगाल में वीरेन्द्र नामी चतुर शिल्पी ने शिल्प के नवीन संप्रदाय को जन्म दिया। बीरेन्द्र के प्रति वीतपाल भी अत्यन्त अधिक चतुर शिल्पी था इसने भी शिल्प के एक नवीन संप्रदाय को उत्पन्न किया। वीरेन्द्र के चित्रण कला संप्रदायियों को जहां पूर्वीय संप्रदाय कहा जाता है वहां वीतपाल के चित्रण कला संप्रदायियों को मध्य देशीय संप्रदाय के नाम से पुकारा जाता है। नैपाल का शिल्प पूर्वीय संप्रदाय से ही अधिकतर मिलता था।

राजा देवपाल ९वीं सदी में हुआ था इस प्रकार पाठकों को पता लग गया होगा कि भारत में ९ वीं सदी तक शिल्प ने किस प्रकार उन्नति की। काश्मीरी शिल्प के विषय में तारानाथ का कथन है कि आरम्भ २ में काश्मीरी शिल्प मध्य देशीय शिल्प से ही मिलता था परन्तु कुछ वर्षों के बाद प्रसिद्ध शिल्पी हासुर्या ने शिल्प में उन्नति की और शिल्प के काश्मीरी संप्रदाय का प्रवर्त्तक हुआ।

शिल्प की इन सब उन्नतियों का एक मात्र कारण जनता का अपने शिल्प में प्रेम तथा शिल्प की मांग को कहा जासकता है। भारतवर्ष के प्राचीन राजा विद्या के अतिशय प्रेमी होते थे। वे इस प्रकार के कार्यों में पूर्ण भाग लेते थे। भारत के प्रसिद्ध १४ महाविद्यालयों का आगे चल कर उल्लेख किया जावेगा। यहां पर कुछ शब्द हम नालिन्दा के महाविद्यालय के विषय में कह देते हैं। महाशय फर्युसन का कथन है कि नालिन्दा भारत में विद्या का केन्द्र था। यहीं से सम्पूर्ण प्रकार के नवीन २ आविष्कार निकाले जाते थे। दूर दूर देश के विद्यार्थी इस स्थान में पढ़ने के लिये आते थे।

नालिन्दा में वैद्यक, ज्योतिष, चित्रण कला, शिल्प कला, दर्शन तथा सहित्य आदि के भिन्न २ कालेज थे। धर्म तथा दर्शन के ही १०० से ऊपर प्रोफ़ेसर थे अन्य विषयों का तो कहना ही क्या है। ह्यून्त्सांग तो नालिन्दा के सौन्दर्य पर मुग्ध होगया था और वह इस स्थान को चिरकाल तक स्मरण करता रहा था। नालिन्दा को बनवाने में बहुत से भारतीय राजाओं का रुपया ख़र्च हुआ था। इस प्रकार के महाविद्यालयों ने ही भारत को भिन्न भिन्न विद्याओं की उन्नति दी थी। आज कल के कालेज तो भारत का सत्यानाश कर रहे हैं। आंगल राज्य की न सहायता से जहां भारतीय शिल्प को धक्का पहुंचा वहां इन कालिजों ने तो उस के जड़ पर ही कुल्हाड़ा मार दिया है। आर्थिक दृष्टि से मुग़ल काल भारत के लिये वैसा ही उत्तम था जैसा कि पौराणिक काल या बौद्ध काल। मुसलमान लोग भारत में बस गए थे भारत को ही उन्होंने अपनी मातृ भूमि बना लिया था भारतीय शिल्प तथा व्यवसाय से उन को प्रेम था उस की उन्नति में करोड़ों रुपए वह ख़र्च करते थे। परिणाम इस का यह था कि भारत के व्यवसायी लोग अपने पेशों में खुशी से काम करते थे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

क्योंकि उन को उसी में पर्याप्त नाम था।

परन्तु भारत की अब दशा बिलकुल विचित्र है। आंगल जनता भारतीय शिल्प के रहस्य को विना समझे ही कालिजों में शिक्षा देने के काम को पहिले ही अपने हाथ ले बैठी है। इस से शिक्षा हमारे लिये अत्यन्त हानिकी हो गयी हो इस पर आश्चर्य करना वृथा है। अस्तु, जो कुछ भी हो इस प्रकरण को यहीं पर छोड़ कर के अब मैं सविस्तर दिखाने का यत्न करूंगा कि आंगलकाल में भारतीय शिल्प का ह्रास कैसे हुआ।

—○:०:○—

मातृ वन्दना।

लेखक—श्रीयुत् ब्रह्मचारी वंशीधर गुरुकुल कांगड़ी।

ये माला नेह से गूंथी गले में तेरे डालूंगा।
तेरी इस पुण्य रज को मैं सदा सिर पर चढ़ाऊंगा ॥१॥

—○—

बहुत घूमा बहुत भटका मैं चक्करदार राहों में।
तुझे ही आज से अपनी हृदय देवी बनाऊंगा ॥२॥

—○—

वह वाणी ही नहीं जग में जो तेरे गुण को गा देवे।
मैं फूटी तान से कैसे तुम्हारे गीत गाऊंगा ॥३॥

—○—

नहीं आलोक वह जिससे कि यह मन्दिर प्रकाशित हो।
तुम्हारी ज्योति से इसका बुझा दीपक जगाऊंगा ॥४॥

—○—

ये प्यासा दिल बिना राहत के आकुल हो तड़फता है।
तुम्हारे प्रेम का प्याला इसे अब मैं पिलाऊंगा ॥५॥

—○—

वह दिन कब आयगा तेरी बजेगी जय की शहनाई।
तुम्हारी आरती मन्दिर में जब हंसते उतारूंगा ॥६॥

—○—

चढ़ा है रङ्ग अब ऐसा तुम्हारे प्रेम का माता!
कि तुम पर ही मैं अपने देह की बलियां चढ़ाऊंगा ॥७॥

—○—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

*आधुनिक सामाजिक विप्लव।

और

वैदिक वर्णव्यवस्था।

(१)

ले० ब्रह्मचारी विद्याभूषण गुरुकुल वृन्दावन।

'मुखं किमस्यासीत् किं बाहू किमूरू पादा उच्येते?'

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहू राजन्यः कृतः

ऊरू तदस्य यद् वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत।

यजुः।

जिन समस्याओं ने आज के दिन पश्चिम के दिमाग़ को हैरान कर रक्खा है, जिन प्रश्नों को हल करने के लिये पश्चिम के विद्वान् आज भी अंधेरे में टटोल रहे हैं, उन में एक महत्व पूर्ण प्रश्न—कदाचित् सब से महत्व पूर्ण प्रश्न समाज शास्त्र का अर्थात् मनुष्य समाज की आदर्श स्थिति का है। यह सच है कि जब तक मनुष्य समाज की स्थिति और सङ्गठन ठीक और आदर्श के अनुरूप न हो तब तक कभी सुख और कल्याण नहीं हो सकता। हर्बर्ट स्पेन्सर के शब्दों में आज के दिन मनुष्य समाज में 'माल एडजस्टमेण्ट' (Maladjustment) अर्थात् 'बिगड़ा हुआ सङ्गठन' है। यह किस तरह ठीक हो, इसका सन्तोष जनक उत्तर पाश्चात्य समाज शास्त्रियों के पास नहीं, वे कहते हैं कि विकास होते २ वह समय आजायगा जब कि समाज शास्त्र का आदर्श संगठन होगा, परन्तु वह कैसे और कब होगा इस विषय में उन्हें कुछ पता नहीं और निःसन्देह यदि पाश्चात्य सभ्यता अपने मार्ग पर चलती रही तो वह दिन प्रलय होने तक भी न आयेगा।

हम लोगों की धारणा है कि दार्शनिक, वैज्ञानिक किञ्च मानव जीवन के प्रत्येक विभाग सम्बन्धी जिन समस्याओं को यूरोप १९ वीं और २० वीं सदी में भी हल न कर सका है उन का उत्तर हमारे ऋषियों ने बहुत पहिले सोचा था, किञ्च वैदिक ग्रन्थ वेदों के प्रभु के द्वारा इन विषयों पर प्रकाश डाला गया था। आज भी इन समस्याओं को हल करने की सब से बड़ी कुञ्जी वैदिक साहित्य में है। गुरुदत्त जैसे विद्वानों ने कुछ गम्भीर समस्याओं को लेकर वैदिक साहित्य में उन का हल ढूंढने की कोशिश की है। आज के दिन मनुष्यजाति को सर आलिवर लाज के शब्दों में सब से बड़ी ज़रूरत यह है कि पूर्व और पश्चिम मिलें। पश्चिम की नई समस्याओं का हल पुराने पूर्वीय साहित्य में मिल सकता है। इसी विचार को सामने रखकर मैंने यत्न किया है कि अपनी स्वल्पमति के अनुसार इस बात की खोज करूं कि समाज शास्त्र की नई समस्याओं—जिन ने आज दिन यूरोप अमेरिका को भयभीत कर बड़े चक्कर में डाल दिया है—का हल कहां तक प्राचीन समाज के सङ्गठन वर्णव्यवस्था में पाया जासकता है। यदि मैं इस प्रयत्न में असफल हुआ तो भी मुझे इतना सन्तोष अवश्य होगा और निःसन्देह यह बड़ा सन्तोष होगा कि इस

*यह लेख गुरुकुल वृन्दावन के इस महोत्सव पर विद्या परिषद् सम्मेलन पर पढ़ा गया।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लेख के कारण इस विषय में नयी रुचि उत्पन्न होने पर विद्वान गहरी खोज में लगेंगे जिस से मनुष्य जाति का असीम कल्याण होगा। इतने शब्दों के पश्चात् मैं असली विषय पर आना चाहता हूं परन्तु आप मुझे क्षमा करें यदि मुझे प्रारम्भ में समाज शास्त्र सिद्धान्त सम्बन्धी कुछ बातों का विवेचन करना पड़।

मनुष्य समाज।

की

उत्पत्ति और उसका संगठन।

मनुष्य समाजिक प्राणी है अर्थात् मनुष्य समाज वा समूह में रहता है और उसका यह स्वाभाविक गुण है कि वह अपने सदृश दूसरे मनुष्यों के साथ मिलकर रहे। अर्थात् मनुष्य अपनी पूर्ण उन्नति समाज में रहते हुए ही कर सकता है, उसकी शारीरिक और मानसिक उन्नतियों का केन्द्र समाज ही है उसका जीवनोद्देश्य समाज द्वारा ही पूरा होना सम्भव है। इन बातों से सुस्पष्ट है कि मनुष्य को समाज में रहकर इस प्रकार व्यवहार करना चाहिये कि जिससे वह दूसरों की उन्नति में बाधक न हो। उसका विचार, वचन, कर्म इस प्रकार के होने चाहियें जिससे समाज के किसी भी व्यक्ति का किसी प्रकार का अहित न हो। उसके सम्पूर्ण कार्यों का केन्द्र समाज की उन्नति होना चाहिये अर्थात् व्यक्ति गत जीवन समाज के जीवन के अन्तर्गत होना चाहिये। इस प्रकार समाज का लाभ उसके प्रत्येक व्यक्ति का लाभ समाज की हानि प्रत्येक व्यक्ति की हानि हो जाती है और व्यक्ति का यह सबसे बड़ा कर्तव्य है कि वह अपने समाज को उन्नत दशा में रखने के लिये शक्ति भर यत्न करे क्योंकि जबतक ऐसा न होगा किसी व्यक्ति को अपनी उन्नति करने का सुअवसर न मिलसकेगा और कोई निर्भयता पूर्वक अपनी उन्नति करने में न लग सकेगा। अतः यह स्पष्ट है कि समाज और व्यक्तियों का सम्बन्ध बड़ा गहरा सम्बन्ध है। समाज व्यक्तियों का ऐसा समूह नहीं है जैसा पत्थरों का जिस में एक पत्थर का दूसरे पत्थरों से गाढ़ सम्बन्ध नहीं होता। हम एक पत्थर को उठाकर दूसरी जगह रख सकते हैं। परन्तु फिर भी वह पत्थरों का समूह ही रहता है। यदि हम उस में से १०–२० पत्थर निकालले वा अन्य स्थान से लाकर उस में रखदें तो भी उसके प्रस्तर समूह होने में बाधा नहीं पड़ती। परन्तु यह दशा घड़ी की नहीं है। घड़ी भी एक समूह है परन्तु उससे गहरे अर्थ में जिस में पत्थरों का ढेर समूह है। घड़ी के पुर्ज़े को हम उस के स्थान से हटा कर दूसरे पुर्ज़े के स्थान में नहीं रख सकते। न एक पुर्जा कम वा अधिक कर सकते हैं। अर्थात् घड़ी का हर एक पुर्ज़ा दूसरे पुर्ज़ों से अटूट सम्बन्ध रखता है जिस में अन्तर पड़ने से घड़ी का घड़ीत्व नष्ट हो जाता है। प्रत्येक पुर्जा अपना काम करता है और अपने काम से दूसरों के काम में सहायक होता है। जो सम्बन्ध घड़ी के पुर्ज़ों का परस्पर है वही सम्बन्ध समाज के भिन्न २ भागों का भी परस्पर होना चाहिये अर्थात् प्रत्येक अपने कार्य को करता हुआ दूसरों का सहायक बने। सामाजिक संगठन का आधार मुख्यतः Distribution of Labour कार्य विभाग है। प्रत्येक व्यक्ति के लिये यह असम्भव है कि वह अपनी सब प्रकार की आवश्यकताओं को स्वयं ही कार्य करके बिना दूसरों की सहायता के पूरा करसके। यह हो ही नहीं सकता कि एक ही मनुष्य कृषि के सारे साधनों को जुटा कर क्षेत्र में अन्न बोये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और सिंचाई के सब साधनों को स्वयं ही तैयार कर खेतको सींचकर फ़सल को काटे और स्वयं ही चक्की तयार कर आटा पीसे और रोटी पकाने के सब साधनों को स्वयं ही बनाकर रोटी बनाये और तब खाये। इस के साथ ही यदि उसे तन ढाकने के लिये स्वयं ही कपास बोने से लेकर वस्त्र तयार होने तक सब कार्य करने पड़ें। तो उसका जीवन ही एक भार हो जाय। जहां इतने कार्य्य करना उसके लिये सबतरह से असम्भव है वहां वह इन में से न तो किसी को अच्छी तरह ही कर सकेगा और न कुशलता ही प्राप्त कर सकेगा किन्तु समाज संगठन में कार्य विभाग (Distribution of Labours) हो जाने से तथा परस्पर के सहयोग से जहां सब की आवश्यकतायें पूरी हो जाती हैं, वहां प्रत्येक व्यक्ति उस कार्य में कुशल भी हो जाता है और इस तरह समाज को अच्छी से अच्छी योग्यता द्वारा उसकी आवश्यकतायें पूर्ण होने का सुयोग प्राप्त होता है। मनुष्य समाज की उत्पत्ति किस प्रकार हुई इस बारे में बहुत मत भेद है। हौब्स का मत है कि प्रारम्भ में मनुष्यसमाज का कोई संगठन न था किन्तु जब सबल दुर्बलों को दबाकर उनका स्वत्व हरण कर उन्हें पददलित करने लगे और इस प्रकार अशान्ति का सूत्रपात हुआ साथ ही मनुष्यों की बढ़ी हुई आवश्यक्ताओं की पूर्त्ति भी प्रत्येक के लिये स्वयं करना अत्यन्त कठिन दीखने लगा-तब इस उत्पन्न अशान्ति को मिटाने के लिये और बढ़ी हुई आवश्यक्ताओं की सुगमता पूर्वक पूर्ति के लिये मनुष्य चिन्तित हुए और उन्होंने इस प्रयोजन की सिद्धि के लिये परस्पर मिलकर आपस में समझौता कर कुछ नियम बना लिये जिनका पालना उन में से प्रत्येक के लिये आवश्यक था। ये परस्पर के व्यवहार सम्बन्धी नियम चूंकि आपस के समझौते का फल थे अतः समाज संगठन का सिद्धान्त अर्थात् इक़रार नामे का सिद्धान्त कहलाता है बहुत समय तक यही विचार प्रचलित रहा किन्तु "विकास वाद" की उन्नति के साथ २ यह सिद्धान्त बदलने लगा और लोग सोचने लगे कि केवल आपस के इकरार नामे पर ही सामाजिक संगठन निर्भर नहीं है किन्तु उसका संगठन ऐन्द्रियिक (Organic) है। जिस प्रकार शरीर में भिन्न २ इन्द्रियें अपना २ कार्य्य करती हुई परस्पर का सहयोग पूरा करती हैं उसी प्रकार में समाज में भिन्न वर्ग अपना २ कार्य्य करते हुए परस्पर का सहयोग करते हैं। साथ ही जिस प्रकार शरीर में शिर-बाहु-उदर और पाद के रूप में क्रमशः सञ्चालक, रक्षक, पोषक सेवक शक्तियां हैं जो परस्पर का विरोध छोड़ अपना कार्य्य कर शेष तीनों की सहायता करती है क्योंकि प्रत्येक का पृथक २ कोई मूल्य नहीं है शेष तीनों से मिलकर ही उसका महत्व है, उसी प्रकार समाज में भी ज्ञानवान् संचालक शक्ति, शक्तिमान् रक्षक शक्ति, धनवान पोषक वर्ग और सहनशील सेवक वर्ग का पर्य्याप्त संख्या में होने के अतिरिक्त इनका परस्पर सहयोग भी आवश्यक है। क्योंकि इनका असहयोग समाज को शीघ्र ही नष्ट कर देता है समाज संगठन का आदर्श यही है। इन चारों वर्गों में से किसी का भी अभाव, या एक का अनुचित रूप से बढ जाना और औरों का ह्रास हो जाना तथा इस प्रकार परस्पर सहयोग का अभाव तरह तरह के सामाजिक विप्लवों को जन्म देता है, यदि हम यूरोप के वर्तमान सामाजिक विप्लवों का सूक्ष्म

CC-0. Omkar Kanya University Faridkot Collection. Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan

निरीक्षण करें तो यह स्पष्ट दीखेगा कि उनका कारण उपर्युक्त चारों वर्गों का समान रूप में न होना तथा परस्पर सहयोग का अभाव ही है

समाजशास्त्र राजनीतिशास्त्र आचारशास्त्र का सम्बन्धः—

आगे बढ़ने से पूर्व समाजशास्त्र का राजनीतिशास्त्र और आचारशास्त्र से क्या सम्बन्ध है इसका थोड़ा सा विचार करलेना उचित है। समाज संगठन का आदर्श, जैसा कि हम कहचुके हैं यह है कि उसका प्रत्येक मनुष्य दूसरों को हानि पहुंचाये बिना अपनी अधिक से अधिक उन्नति कर सके। समाज का कोई भाग अन्य दूसरे भागों पर अनुचित दबाव डालकर उनकी उन्नति में रुकावट न डाल सके और प्रत्येक व्यक्ति और समूह के उन्नति का द्वार खुला रहे। समाज के एक भागको अनुचित रूप से बढ़ाकर दूसरे भागों की उन्नति में बाधा डालना सामाजिक अत्याचार है और आदर्श सामाजिक संगठन के विरुद्ध है। इसी प्रकार राजनीति शास्त्र या राज्यप्रणाली का उच्च से उच्च आदर्श प्रजातन्त्र, समानता या दूसरे शब्दों में (Democracy) अर्थात् राज्य के प्रत्येक व्यक्ति का यह जन्म सिद्ध अधिकार है कि वह उन नियमों के बनाने में पूरा भाग ले जो कि भविष्य में उसे पालने होंगे और इस प्रकार उसका राष्ट्र के संचालन में पूरा भाग हो जिसका वह एक अंग हैं। क्योंकि ईश्वर की ओर से कोई पुरुष या कुछ विशिष्ट व्यक्ति राज्य के शासनाधिकार को लेकर उत्पन्न नहीं हुए हैं। चूंकि सारी प्रजा शासन में प्रत्यक्ष भाग नहीं ले सकती है अतःएव प्रजा के चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा राजकार्य होना चाहिये जिससे वे समस्त व्यक्ति जिनसे मिलकर राष्ट्र बना है राजकार्य में भाग ले सकें। किसी व्यक्ति या समूह विशेष का इस अधिकार से बंचित किया जाना राजनैतिक अत्याचार है। इसी प्रकार यदि आचारशास्त्र के उच्च आदर्श को हम खोजें तो जर्मन दार्शनिक काण्ट के इन शब्दों में पायंगे कि "कोई भी व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के भोग का साधन न बनसके। अभिप्राय यह कि प्रत्येक व्यक्ति अपने परिश्रम या कर्म का फल स्वाधीनता पूर्वक भोग सके और अपने परिश्रम के फल भोगने से वंचित न किया जासके।

इसी कारण चोरी करना पाप है क्योंकि इस प्रकार हम दूसरे के परिश्रम से उपार्जित धन को भोग कर दूसरे को अपने भोग का साधन बनाते हैं। इस प्रकार समानता या "सब मनुष्यों का समानाधिकार" वह सिद्धान्त है जो इन तीनों शास्त्रों का आधार और आदर्श है। साथ ही जिस पर समाजशास्त्र Sociology राजनीति शास्त्र Politics और आचार शास्त्र Ethics तीनों एक होजाते हैं। वस्तुतः आचार शास्त्र और राजनीतिशास्त्र ये दोनों समाज शास्त्र के ही अंग हैं। क्योंकि दोनों शास्त्रों के नियम समाज के व्यक्तियों के ही परस्पर व्यवहार को निश्चित करते हैं॥

यूरोपकी राजनैतिक और सामाजिक हलचलः—

इस प्रकार समाज शास्त्र का थोड़ा सा विवेचन कर अब हम यूरोप के सामाजिक और राजनैतिक विकास का सिंहावलोकन करते हैं क्योंकि युरोप का वर्तमान सामाजिक विप्लव उस विकास का ही फल है।

मनुष्यों की प्रवृत्ति स्वभावतः प्रजातन्त्र की तरफ है वह अपने समानता सम्बन्धी जन्मसिद्ध अधिकारों को शक्ति रहते त्यागना नहीं चाहता। यूरोप का इतिहास भी क्रमशः प्रजातन्त्र

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

की प्राप्ति के प्रयत्नों से ही भरा हुआ है। यूरोप के लोग प्राचीन काल में ही ग्रीस और रोम में प्रजातन्त्र राज्यों की स्थापना करते हुये दीखते हैं। किन्तु शीघ्र ही ये राज्य समानता के सिद्धान्तों की हत्याकर राज्यतन्त्र में परिणत हुये। इन राज्यों के सम्राटों ने वे अत्याचार किये जिन्हें सुनकर लोग अब भी कांप उठते हैं नीरो भी रोम का सम्राट् ही था जिसने नगर में आग लगा दी और स्वयं वंशी बजाता हुआ मनोरञ्जन करने बैठ गया। पर्दा बदला और ईसामसीह ने यूरोप के लोगों को फिर समानता की याद दिलायी, किन्तु समानता प्राप्त होने के बदले रही सही स्वाधीनता भी गयी। रोम के सम्राट् ने तो केवल इस लोक से समानता को उठा दिया था पर रोम के ही धर्म सम्राट् पोप ने परलोक से भी समानता उठाने का ठेका लिया। राजाओं के हाथ से बची खुची समानता धर्म याजकोंने छीन ली। मध्य काल में यूरोप के लोग प्रजातन्त्र से बिल्कुल दूर जा पड़े किन्तु लोग फिर संभले और अपनी समानता की प्यास उन्होंने फ्रांस के १६वें लुई और इंग्लैण्ड के १म चार्ल्स के रक्त से बुझाने का यत्न किया। किन्तु प्रजातन्त्र न मिला और राजतन्त्र (Monarchy) के स्थान पर Aristocracy स्थापित हुई। राजा के साथ ही साथ धनिक जमींदार और पादरी भी गुलछर्रे उड़ाने लगे। प्रजातन्त्र के प्यासे लोगों ने फिर आगे कदम बढ़ाया और राज्यसभाओं को स्वयं चुनने का अधिकार प्राप्त किया, और उनकी चुनी हुई एसेम्ली और पार्लियामेण्टें राज्य करने लगीं—राजा के अधिकार इन सभाओं ने ग्रहण किये साथ ही थोड़ा और आगे बढ़ कर फ्रांस और अमेरिका के लोगों ने राजा को भी अलग कर राष्ट्रपति को उसकी जगह बैठाया इस तरह अपनी प्रजातन्त्रता की प्यास बुझाने का प्रयत्न किया किन्तु शान्ति न मिली और आन्दोलन जारी रहा, साथ ही उसका रूप भी बदल गया, क्योंकि राजा के साथ ही धनिक या पूंजी वाले भी असमानता के एक कारण थे। अतः यूरोप के लोगों ने "साम्यवाद" के नाम से सब की समानता की मांग शुरु की, पूंजी वालों के नाश का उद्योग प्रारम्भ किया। किन्तु फल कुछ न हुआ, क्योंकि अधिकारारूढ़ भी शक्ति सम्पन्न थे। दोनों तरफ से बराबर तनती ही गई। इसी समय पूंजी वालों की परस्पर की खैंचातानी से गतमहायुद्ध का जन्म हुआ। पूंजी वाले निर्बल हुये। साथ ही समानता के पिपासुओं ने युद्ध की गर्मी से साम्यवाद को और अधिक गरम कर उसे "बोलशेविज्म" का रूप देदिया। इसने जन्म लेते ही सारे पश्चिम को ग्रसने का उपक्रम किया। युद्ध समाप्त होने की देर थी कि सारा पश्चिम इसके प्रभाव से भर गया। अब समस्त पश्चिम जगत् बोलशेविज्म की तरफ बढ़ रहा है कोई कुछ आगे है कोई कुछ पीछे।

किन्तु इससे समानता मिलनी तो दूर रही रहे सहे सामाजिक संगठन की हत्या और होकर नये सामाजिक विप्लवों का बीज बोया गया। इस प्रकार प्रजातन्त्र की प्यासी जनता ने अपनी प्यास बुझाने का घोर प्रयत्न किया किन्तु सफलता न मिली। क्या अब भी पश्चिम में सबल मनुष्य निर्बलों को अपने ऐश आराम का साधन नहीं बना रहे हैं?

तात्पर्य यह है कि पश्चिम इतनी दौड़धूप के बाद भी सच्चे प्रजातन्त्र को न पासका और सामाजिक संगठन से हाथ धो बैठा वही मसल हुई "मर्ज़ बढ़ता ही गया ज्यों ज्यों दवा की"।

—:o:—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विजय-स्वागत।

लेखक--श्रीयुत् विनोद शंकर व्यास

(१)

इङ्गलैण्ड जर्मन युद्ध में सर्व्वस्व जो अर्पण किये,
निज पुत्र भार्या छोड़ कर संग्राम में जो थे गये।
हा! विजय करने के लिये रण-क्षेत्र में थे वे डटे,
थे प्राण अपना त्यागते, पर थे न वे पीछे हटे॥

(२)

था ध्यान उनको चित्त में "पावेंगे हम उपहार भी,
स्वाधीन बन कर हम करेंगे देश का उपकार भी।
अथवा करेंगे यदि स्वयं, स्वाधीन तो हो जायगा,
देश अपना जगत में फिर पूर्व गौरव पायगा"॥

(३)

उपहार जो हम को मिले क्या भूल सकते हैं कभी?
पञ्जाब की घटना हमें है याद आती आज भी।
जारी करा कर एक्ट-रौलेट हृदय का परिचय दिया,
है धन्य इङ्गलैण्ड वासियो! जो विजय का स्वागत किया॥

गंगा-जमनी।

नलनी।

लेखक—श्रीयुत् 'पागल'।

[९]

"नजर मोहे लागी रे बाले पन में—
दिल्ली शहर से बैद बुला दे।
नबज मोरी देखे रे बाले पन में॥"

नलनी को देखते ही मेरे दिल पर एक बिजली सी गिरी। और मैं तड़प उठा। मगर मेरे घर वाले उस पर बेहद बिगड़े। क्योंकि वे लोग उस से पहिले ही से ख़फ़ा थे। वह हाल ही में हमारे यहां तीन तस्वीरों के शीशे और एक बड़ा आइना तोड़ चुकी थी। वह जब आती थी तब अपनी चञ्चलता और लापरवाही के कारण कुछ न कुछ नुक़सान कर बैठती थी। इसी लिये वह मेरे घर से निकाली हुई थी। अब मुझे मालूम हुआ कि नलनी क्यों नहीं मेरे घर आती है। तभी तो वह चोरी से छिपकर मुझे यों देखने आई थी। उफ़! यह सोचते ही मैं पागल सा होगया।

उस वक्त से मेरी बेचैनी दम बदम बढ़ने लगी। यहां तक कि दो घण्टे बाद मेरी हालत ऐसी ख़राब होगई कि मेरा प्राण मरने जीने के तराजू पर डगमगाने लगा। मां बाप की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आंखों से आंसू जारी थे। डाक्टर साहब के हाथ में मेरा नब्ज़ थी। और मेरे ख्याल में था तो बस यही था कि अफ़सोस! नलनी मेरे ही कारण डांटी गई।

अपनी बदहवासी घर वालों की परेशानी, डाक्टर की सञ्जीदगी देखकर मैंने समझा कि शायद मेरा आख़िरी वक्त आगया है। उस वक्त ईश्वर से यह प्रार्थना की कि जिस समय मेरा दम निकले उस वक्त नलनी मेरे सामने हो। वरना बड़े सङ्कट से मरूंगा। यह सोच कर मैंने पक्का इरादा कर लिया कि जब वक्त नज़दीक आयेगा तब मैं नलनी को बुलवाऊंगा। लोग एक मरते हुए आदमी की आख़िरी बात ज़रूर मानेंगे।

मगर मेरा पापी प्राण न निकला। मुझे दुनिया में अभी मुसीबतें झेलना बाकी था। मरता कैसे? तौ भी ईश्वर ने मेरी आधी प्रार्थना सुनली। क्योंकि दूसरे दिन नलनी की मां बाप में लड़ाई हुई। उसकी मां रात को अपना दुखड़ा रोने मेरे घर आई नलनी भी साथ होली।

इस दफ़े अपनी मां के साथ आने से नलनी डांटी नहीं गई। मुझे खांसी बहुत परेशान किये हुए थी। मां लौंग भून २ कर मुझे दे रही थीं। नलनी ने मां के हाथ से लौंग ले लिए। और मेरे सिराहने बैठ कर खुद लौंग भून कर मुझे खिला रही थी। सब लोग मेरी हालत पर आंसू बहाते थे। मगर मैं दिल में हंसता था। मेरे ऐसा कौन भाग्यशाली होगा कि जिसको मैं प्यार करूं वही मेरे सिराहने बैठी हुई मेरी तीमारदारी करे। ईश्वर से प्रार्थना की मुझे सदैव बीमार रखे। उस दिन से नलनी अपनी नौकरनी के संग रात को रोज़ मेरे घर आने लगी। मगर अफ़सोस यह था कि वह मुझ से बोलती क्यों नहीं? नलनी की मौजूदगी का कुछ ऐसा असर पड़ा कि मैं थोड़े ही दिनों में अच्छा होगया।

[१०]

"मुहब्बत में नहीं है फ़र्क़ मरने और जीने का।
उसी को देखकर जीते हैं जिस काफ़िर पे दम निकले"

मेरा नतीजा आगया। बावजूद पर्चे ख़राब होने के मैं द्वितीय श्रेणी में पास हुआ। मेरे स्कूल के ३० लड़कों में से केवल ४ ही द्वितीय श्रेणी में निकले। प्रथम श्रेणी में कोई भी नहीं आया। इस से मुझे बड़ा सन्तोष हुआ। पिता ने उसी दिन अपनी प्रतिज्ञानुसार मुझे बाइसिकिल ख़रीद दी। नई साइकिल नई उमर और नया शौक़। मैं रातोदिन उस पर चढ़ा सड़क पर चक्कर लगाया करता था। क्योंकि 'साइकलिंग' का बहाना था और असलियत तो नलनी को देखा करने की इच्छा थी। नलनी भी मेरी घण्टी सुन्ती ही सौ काम छोड़ कर बाहर निकल पड़ती थी।

एक दिन शाम को मैं दूर निकल गया लौटते वक्त रास्ता भूल गया। इसलिये बड़ी देर में वापस आया। आठबज गये थे। आस्मान पर चान्दनी निकल आई थी।

नलनी अपने दरवाज़े पर न थी। मैं ने धीरे से घण्टी बजाई और चाल धीमी करदी। नलनी अब भी न निकली। मैंने फिर ज़ोर से घण्टी बजाई। मगर मैं डरा कि ऐसा न हो कि कोई कुछ कह बैठे। मैंने साइकिल तेज़ करदी। वैसेही नलनी बेतहाशा दौड़ती हुई अपने मकान से निकली और तेज़ी में ठीक मेरी साइकिल के सामने बीच सड़क पर आगई।

नलनी और साइकिल के बीच में सिर्फ़ दो बालिश्त का फ़र्क़ था। साइकिल रोकने का

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मौक़ा न था। मेरे हाथ पांव फूलगये। समझा कि नलनी चोट खा गई। क्या करूं? बाइसिकिल टूटजाए। मेरा सर फूट जाए। परवाह नहीं मगर नलनी को किस तरह बचाऊं? इसी उलझन में मैंने 'हैंडिल' एकदम घुमादिया और साइकिल छोड़कर कूद पड़ा। बाइसिकिल डगमगाती हुई कतराकर निकलगई और मेरे हाते के नीलकांटे में उलझ गई। और मैं झोके में नलनी के ऊपर आगिरा। मगर था मैं बड़ा लचीला और फुर्तीला। मेरा हाथ नलनी के कन्धे पर पड़ते ही मैं सहारा पागया और मैं सम्हल गया। उस वक्त घबड़ाहट में यकायक मेरी ज़बान खुल गई—

मैं० "अरी नलनी। बड़ा ग़ज़ब किया तू ने ऐसा भी कोई बेतहाशा दौड़ता है?

नलनी "तो तुम इतने जोर से घण्टी काहे बजाया?"।

जिस बात को मेरा दिल मुद्दतों से ढूंढता था वह उसके इस जुमले में पागया। मैं मारे आनन्द के बावला सा हो गया। मुझ से कुछ भी कहते न बन पड़ा। बस लड़खड़ाती हुई ज़बान में इतना ही कहा कि—

मैं० "बेशक कसूर मेरा ही था नलनी माफ़ करना।"

यह कह कर चाहा कि मैं उसका हाथ पकड़कर सर आंखों से लगालूं। मगर वह हाथ झट खींच कर बोली।

नलनी "हां हां हाथ न छूना। हमरा हाथ जूठा है।"

मैं० "क्या तू खाना खारही थी?'

नलनी "अभी तो खाने बैठा था कि तुमरा घण्टी बोला। बस भाग आया।"

उफ़! इस से बढ़कर प्रेम का सबूत क्या चाहता मैं। जी में आया। उसे गोद में उठा लूं और उसका मुंह चूमलूं। मगर उसीबीच में मैंने साइकिल उठाली थी। मेरे हाथ दोनों बन्धे थे। मैं सटपटा कर रह गया।

मैं० "अरे राम! राम! तू आज रातभर भूखोंमरी। बड़ी गल्ती हुई। नाहक घण्टी बजाई मैंने।"

नलनी "नहीं अब भूख नहीं बुझाता।"

इतने में नलनी की नौकरनी सुखिया लोटे में पानी लेकर मुस्कराती हुई बाहर निकली वह नलनी से दोही चार बरस बड़ी थी। वह उसके बाहर आने का कारण समझ गई।

मैं० "अब क्या करोगी तुम?"

नलनी "चलो हम तुमरा नल पर हाथ धोयगा।"

मैं० "चलो।"

नलनी (मुस्कराकर) मारेगा तो नहीं?"

मैं० "अरी नलनी मुझे कांटो में न घसीट अब मैं जंगली नहीं रहा। तूने मुझे पालतू बना लिया।"

सुखिया धीरे धीरे नज़दीक आगई। मैं बाइसिकिल लेकर वहां से खिसका।

नलनी (सुखिया) "जा धोती ले आ। बोल देना कै करने में कापड़ ख़राब हो गया। हम नल पर नहायेगा।

सुखिया ताने के लहज़े में बोली—"ऊपर राम राम और बगल में छुरी।"

नलनी—"चल दूर हो पराङ्गमुखी।"

झिड़कने को नलनी ने उसे झिड़क दिया। मगर बाद को बहुत शमाई। क्योंकि मैं घूम घूम कर देखता जाता था कि उसका सर नीचा होगया और नल की तरफ़ बढ़ता हुआ क़दम रुक गया।

मैं दूसरे रास्ते से मकान पर आया। और चुपचाप झाबे से छे सात लंगड़े आम और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लीचियां निकालीं और छोटी बाल्टी में रखकर नहाने का बहाना करके बाहर निकल आया। नल पर नलनी और सुखिया दोनों मौजूद थीं।

नलनी भूखी है अब घर पर खायेगी नहीं इसलिये उसको मैं आम खिलाना चाहता था। मगर शायद वह सुखिया की वजह से कुछ टालमटूल करे। इस ख्याल से सुखिया की पहले खातिर करना मुनासिब समझा और इसलिये उसे दो आम और लीचियां दीं। वह तिरहुत की रहने वाली थी। वह लगी अपनी बोली में पूछ पाछ करने। हम और नलनी दोनों इस बोली को अच्छी तरह से बोल लेते थे।

सुखिया—"ई की छई"।

मैं—"सुझई छेना"।

सुखिया—"ई अमिलीची हमरा कथिला देई छ ?"

नलनी—"पराङ्ग मुखी ! कथिला कथिला की करई छे। आज तोरा की भेलई हेगे। जनई छेना आमलीची की कइल जाई छे। जो ओन्ने बइस के खाले।"

सुखिया—"हां हां बुझई छी। हम हूं भले बुझई छी।"

नलनी मेरी चाल समझ गई थी। और इसलिये उसने मेरे दिये हुए फलों को सुखिया को लेने के लिये मजबूर किया। सुखिया ने फलों को ले तो लिया मगर वहां से हटी नहीं तब नलनी ने बड़ी मायूसी के लहज़े में मुझ से बंगला में कहा। और मैं भी उसका जवाब अपनी टूटी फूटी बंगला में देने लगा।

नलनी—"तुमि बांगला तो जाने ना सेई तो मुशकिल"।

मैं—"कैनो?"

नलनी—"तोमार संगे आमार बांगला ते कथा कहिते इच्छा करिते छे।

मैं—"तो बोलना किछु किछु आमि बूझेची किन्तु भालो प्रकारे बोलते पारीना।"

सुखिया हम लोगों की बातें ही सुनने के लिये नहीं हटी थी। मगर अब देखा कि नलनी चाल चल गई। सिर्फ़ हमारी न समझने की वजह से वह बंगला में बात चीत कर रही है। तब हार मान कर वह बरतन धोने के बहाने से वहां से चली गई। मगर मेरी तेज़ निगाहों ने देख लिया कि वह गई नहीं बल्कि दूर पेड़ों की आड़ में छिप गई।

नलनी—"बंगला बहुत सहल है। तुम सीखता क्यों नहीं ? देखो हम तुमरा बोली जानता है सुखिया का बोली जानता है और अपना बोली जानता है। और तुम अपना बोली छोड़कर कोई और बोली ठीक से नहीं जानता।"

मैं—"सीख लूंगा। मगर तुम आम तो खाओ।"

नलनी—"अच्छा तुमरा बात नहीं टालेगा। एक ठो लिये लेता है।"

मैं—"नहीं ये नहीं होने का। तुम भूखी हो। जितना मैं खिलाऊं तुम्हें खाना होगा।

नलनी—"अच्छा अच्छा हम खालेगा। तुम काहे को इतना कष्ट उठाता है ?"

मैं—"नहीं मैं तुम्हें अपने हाथसे खिलाऊंगा।"

नलनी—"तो तुम भी खाओ फिर।"

हम दोनों नल के पास बैठे बैठे आम खाने लगे। वह रह रह कर किसी का बार बार कसमें खाना और किसी का ज़बरदस्ती मिन्नत करके आम खिलाना। उस पर प्यारी प्यारी तकरार और मीठी मीठी झिड़कियां लाख भुलाने से भी नहीं भूलतीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नलनी—"तुम जायेगा कब ?"

मैं—"मैं तुम्हें क्या भारू होरहा हूं ? क्या तुम यही चाहती हो कि मैं यहां से जल्दी चला जाऊं ?"

नलनी—"सो बात नहीं। हम तो चाहता है तुम यहीं स्कूल में पढ़ो।"

मैं—"अब तो मैं पास होगया। कालिज में पढ़ूंगा। यहां कालिज कहां ?"

नलनी—"तो तुम पास होगया। तुमरा मां बोलता था कि जब तुम पास होगा तब तुमरा ब्याह होगा।"

मुझे कभी स्वप्न में भी अपनी शादी का ख्याल नहीं हुआ था। उसकी इस बात से यकायक दिल पर बिच्छू के डङ्क सा लगा। मैं तिलमिला उठा। गला भर आया बोलना चाहा मगर आवाज़ न निकली।

नलनी—"बोलो तुमरा ब्याह कब होगा ?"

मैं—"कभी नहीं।"

नलनी—"सो कैसे ?"

मैं—"देख लेना मैं शादी कभी करूंगा नहीं।"

नलनी चौंक पड़ी। उस की आंखों में एक अपूर्व्व ज्योति चमकने लगी। उस ने मेरे दोनों हाथ पकड़ लिये। उस का बदन कांप रहा था। थोड़ी देर तक मुझे अचरज में देखती रही। फिर भी उसे विश्वास न हुआ। तब बौखला कर पूछ बैठी। मगर जोश में अपनी ही बोली में बोल गई।

नलनी—माई री ? सच्चि बोलो।

मैं—"क़सम क्यों खिलाती है ? मेरी सच्चाई झुठाई खुद ही मालूम हो जायेगा।"

नलनी—तो फिर ईश्वर ने तुम को बङ्गाली क्यों नहीं बनाया ?"

मैं—"क्योंकि यह काम तुम्हारे मत्थे छोड़ दिया है।"

वह मुस्कुरा पड़ी। और जोश में मेरी उंगलियों को जो अब तक उसके हाथ में थीं दबा बैठी। और फिर झेप कर सर नीचा कर लिया। वैसे ही सुखिया आई। उस के साथ वह चली गई। और घबड़ाहट में नहाना या कपड़े बदलना भूल गई।

[११]

"लिखा उस बुत ने है नामा यकीं आता नहीं क़ासिद।
ज़रा हम हाथ की उनके भला तहरीर देखें तो॥"

ईश्वर यह क्या ! जिधर निकलता हूं। उधर बदनामी ही बदनामी। उस छोटे से नगर में चारों तरफ़ मेरा और नलनी का नाम एक साथ कहे जाने लगे। हरेक के ख्याल में मैं आवारा बदमाश और बदचलन था और नलनी पापिनी और कुलटा थी। हत् तेरे प्रेम की। न जाने किस कम्बख़्त का श्राप पड़ा है कि तेरा रास्ता कभी सीधा नहीं रहने पाता। कभी बेचैनी तड़पाती है, कभी रुखाई सताती है, कभी बेवफ़ाई रुलाती है, कभी डाह जलाती है, कभी बदनामी जानलेती और फिर विरह और वियोग तो सत्यानाश ही करके छोड़ते हैं।

जब नलनी से प्रेम नहीं था और वह रातो-दिन मेरे साथ खेला करती थी तब किसी कम्बख़्त ने हम दोनों की तरफ़ उंगली तक न उठाई मगर जब से आपस में प्रेम हुआ और जब हम लोग खुद एक दूसरे से मिलने में डरते थे बोलने में हिचकते थे तो सभी देखने वालों की आंखें फूट गईं और निगाहें बदल गईं, और इस बदनामी ने बिना वियोग के आपस में वियोग पैदा कर दिया। जो नलनी का दर्शन मिलना भी बन्द हो गया। क्योंकि दरवाज़े पर आने से अब वह घबड़ाने लगी और मैं भी सड़क पर निकलने से डरने लगा। मेरे ख्याल में वह वियोग बड़ा ही तीव्र और प्राणघातक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

होता है जिस में हम दोनों पास ही रहते हों फिर भी एक दूसरे को देखने के लिये तरसते हों। इस की व्यथा को किसी प्यासे के दिल से पूछो जिस को प्यास के मारे जान जाती हो और उस के सामने पानी रक्खा हो मगर उसे वह छूने तक भी न पाता हो।

मैं रातोदिन अपने ही कमरे में सड़ा करता था। बाहर निकलने की हिम्मत नहीं पड़ती थी। कभी कभी बङ्गला सीखने की कोशिश करता था। इसी बीच में मेरी शादी की हर तरफ़ बात होने लगी। जिन जिन लोगों को पिता ने पहिले यह कहकर टाल दिया था कि लड़का जब इन्ट्रेन्स पास होगा तब उस का ब्याह करूंगा वह सब अब आकर पिता की गर्दन दबाने लगे। मेरी शादी एक से एक ख़ूबसूरत लड़कियों के साथ जिन को मैं पहिले से जानता था और देखा भी था उसी नगर के बड़े बड़े घरानों में से होती थी। मगर नलनी के प्रेम में मैं ऐसा अन्धा था कि उस समय इन्द्रासन की परी भी उसके आगे बुरी मालूम होती थी। अन्त में जब एक जगह से फलदान आया तब मैं बहुत परेशान हुआ। मैंने दिल में ठान लिया कि पिता की आज्ञा मैंने कभी उलङ्घन नहीं की है मगर अब कुछ हो शादी के बारे में मैं अपनी ही ज़िद पर रहूंगा। बला से वह नाराज़ हो जाये। या घर से निकाल दे। सब मुसीबतें झेल लूंगा। मगर शादी न करूंगा।

अहमद ने जब सुना कि मेरी शादी तारा से तै हुई है दौड़ता हुआ मेरे पास आया और लगा मुबारक बादियां देने। क्योंकि तारा पढ़ने में अंग्रेज़ी लड़कियों के स्कूल में पढ़ती थी। मेरे मकान के पास ही एक साहब बहादुर का बंगला था। उनकी भी लड़कियां लिली और पर्ली वहीं पढ़ती थीं। उनके हाते में पेड़ों की वजह से बैडमिन्टन खेलने की जगह न थी। इसलिये उनके भाई बर्टी और जौन ने मेरे हाते को बैडमिन्टन फ़ील्ड बनाया। यहीं शाम को हम लोग खेला करते थे। इन लोगों की संगत से मैं स्कूल या कालिज के लड़कों की तरह नहीं बल्कि अंग्रेज़ों के लड़कों की तरह उन दिनों खूब ज़न्नाटे से अंग्रेज़ी बोलता था। और तारा भी मातृभाषा की नाईं अंग्रेज़ी बोलती थी। मैं पिता के साथ एक अपने रिश्तेदार की शादी में पटने गया हुआ था। और तारा के पिता तारा को लेने के लिये पटने गये हुए थे। लौटते वक्त हम लोग सब दूसरे दर्जे में एक साथ ही बैठे। तारा के पिता ने कभी मुझ को देखा नहीं था। मगर मेरे पिता से और उनसे अच्छी ख़ासी दोस्ती थी। वह अपनी लड़की से अंग्रेज़ी में बातें कर रहे थे। मगर उनकी ज़बान हिन्दुस्तानी अटक और लहज़े से ख़ाली न थी। मैं चुप बैठा था। इतने में पर्ली और लिली भी उसी गाड़ी में चढ़ीं। ये लोग आतीं ही मुझ से बातें करने लगीं। तारा के पिता मुझे ग़ौर से देखने लगे। फिर यकायक मेरे पिता से पूछ बैठे कि आपका लड़का क्या किसी अंग्रेज़ों के स्कूल में पढ़ता था। उन्होंने कहा नहीं। उसके बाद उन्होंने तारा की तरफ़ देखा फिर मुझे देखा और पिता से मेरे बारे में बात चीत करने लगे। जिसे मैं गाड़ी की घरघराहट में सुन न सका। तारा को प्यास लगी। उसकी सुराही में पानी न था। मैंने उसे अपनी सुराही से पानी दिया। उसने मुझे "थैंक्स" दिये। और हम दोनों में फिर बात चीत शुरू होगई। अहमद अगुवानी के लिये स्टेशन पर आया था। उसने वहीं तारा को देखा। तब से वह उसकी ख़ूबसूरती का बराबर दम भरता रहा। और इसीलिये वह इतना ख़ुश था।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तारा का भाई मोहन उसी साल कलकत्ते से इन्ट्रेन्स पास हुआ था। वह विलायत जाने वाला था। उसके पिता मेरी शादी के बाद मुझे भी उसके साथ विलायत भिजवाना चाहते थे। यहां एम. ए. बी. ल. तक पढ़ाने का ख़र्चा जोड़ा गया। विलायत में तीन वर्ष तक रहने का हिसाब लगाया गया। दोनों में कुछ थोड़ा सा अलबल निकला। पिता राज़ी होगये। और मेरे तीन बरस के ख़र्चे के लिये विलायत के बैंक में रुपये जमा करने की तय्यारी करने लगे। जहाज़ के लिये लिखा पढ़ी होने लगी। यहां के सब कालिज खुल गये। मगर इसीलिये मैं कहीं पढ़ने नहीं भेजा गया।

दूसरे महिने के प्रथम सप्ताह में मेरा विलायत जाना निश्चय होगया। और पन्द्रहवें दिन तिलक और पच्चीसवें दिन शादी की तारीख़ पड़ी। मैं बहुत घबराया कि ऐसी शादी तोड़ने की कौन चाल चलूं। कुछ समझ में न आया। अन्त में परेशान होकर पिता के दोस्तों को लिखा कि पिता को वे लोग लिखें कि मैं शादी नहीं करूंगा। अगर ज़बरदस्ती की जायेगी तो मैं ज़हर खालूंगा।

चौथे दिन मेरे ख़तों के जवाब पिता के पास आये। उन्होंने मुझे बुलाया। मैं डरते डरते सामने गया।

पिता--"यह तुमने इन लोगों को लिखा था।"

मैंने सर नीचा कर लिया। और चुप रहा उन्होंने फिर पूछा मैंने दबी ज़बान में कहा हां। वजह पूछी मैं भाग आया। शादी टूट गई। आया हुआ तिलक वापस कर दिया गया। तारा का पिता यह बेइज़्ज़ती सह न सका। वह मेरे पिता का दुश्मन होगया। और उन्हें बदनाम करना शुरू किया कि इनके ख़ानदान में ऐब है इसीलिये जब मुझे मालूम हुआ तब मैंने ख़ुद तिलक वापस ले लिया देखूं कौन अब इनके यहां शादी करता है। पिता का मन मुझ से कुछ मोटा होगया। और इसलिये उन्होंने मेरे विलायत भेजने की काररवाई सब बन्द कर दी। और दूसरे मोहन के साथ मेरा जाना ठीक भी नहीं समझा गया।

मैं पिता की नाराज़गी पर बहुत पछता रहा था। एकदिन रात को अपने हाते में अकेला परेशानी में बैठा हुआ था। कई दिन से मैंने नलनी को नहीं देखा था। इतने में नलनी के गाने की आवाज़ सुनाई दी। वह अकसर अपने कोठे पर हारमोनियम बजाया करती थी और मामूली गाने गाती थी। मगर आज उसके गाने का मतलब ही कुछ और था। वह गाती न थी बल्कि गाने के बहाने वह अपनी कोई खोई हुई चीज़ ढूंढ रही थी मैं ग़ौर से सुनने लगा।

"झांकी दिये प्रानेर पाखी उड़े गैलो आर एलोना।
बोलो सखी कोथा जाबो, कोथा गिये पाखीपाबो।
पूलिसे के खबर देबो, आर एलोना।
एमन धनी के सहेर, आमार पाखी राखे धेर?
धेर मेरे केड़े नेबो, आर देबो ना॥'

इतना सुनते ही मैं बेचैन हो गया और मैं परेशान होकर सड़क पर टहलने लगा। नलनी ने मुझे देखलिया। उसने गाना बन्द करलिया और सुखिया को पुकारा।

पांच मिनट बाद सुखिया मेरे पास आई। और मुस्कुरा कर अपनी बोली में बोली। जिसके मतलब यह थे।

सुखिया "कुछ दोतो तुम्हें एक चीज़ दूं।"

मैं० "कौन सी चीज?"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुखिया "नहीं पहिले देने का वादा करलो तब बताउंगी"।

मैं "अच्छा दूंगा"।

उसने आंचल से हाथ निकालकर एक कागज़ दिखाया। मैं खुशी से उछल पड़ा और दौड़कर घर से एक रुपया लाकर उसके हाथ पर रख दिया और कहा।

मैं० "अच्छा अबतो ख़त देदो"।

सुखिया "मैं रुपया न लूंगी। जो नलनी को तुमने दिया है वही लूंगी"।

मैं० "मैं ने नलनी को कुछ भी नहीं दिया है"

सुखिया "क्यों झूठ बोलते हो? दिल पर रखकर देखो"।

मैं० "बेशक दिल अलबत्ता दिया है। और इसके सिवाय कुछ नहीं"।

सुखिया "तो उसे और ज़रूरत ही क्या थी वह सब कुछ पाचुकी"।

मैं० "तो क्या तुझे भी दिल चाहिये"।

सुखिया "जो कहना था वह कहचुकी"।

मैं० "अच्छा रुपया लेलो दिल बहुत मिल जायेंगे"।

सुखिया "नहीं दिल बड़ी मुशकिल से मिलता है रुपया अलबत्ता हर जगह मिल-सकता है"।

उसकी यह बात सुनते ही मेरे कान खड़े हो गये। मैं अचरज में उसको देखने लगा। उसकी आंखें नीची थीं। सूरत से भोलापन टपक रहा था। आवाज़ में कपकपी थी। उसने मेरे हाथ में ख़त और रुपया देदिया। और बोली।

सुखिया "नलनी ने तुम से कुछ निशानी मांगी है"।

मैं "अच्छा कल लेजाना और मेरे लिये भी कुछ मांगलाना"।

सुखिया "अच्छा मगर तुम अपना वादा न भूलजाना"।

इतना कह कर वह लौट पड़ी और धीरे धीरे आगे चली और मैं ख़त लेकर उछलता हुआ अपने कमरे में चला गया।

—*—

प्रभु प्रार्थना।

लेखक-श्रीयुत सुदर्शन।

दया हो हमपर भी भगवान।
कृपा दृष्टि के भूखे हैं हम संकटमें हैं प्रान॥
ब्राह्मण पढ़ें वेदविद्या फिर क्षत्रिय हों बलवान।
वैश्य वणिज व्यवहारमें फिरसे होवें चतुरसुजान॥

—*—

कभी जहांके तारे थे जो।
दुनिया के उजियारे थे जो।
सभ्य जगतके प्यारे थे जो।
तीन लोक से न्यारे थे जो।
ठोकर पर ठोकर खाती है उनकी ही सन्तान॥

जो यह हमको बुरी लगन है।
दीन अवस्था बुरा चलन है।
तन मन व्यसनोंके अर्पन है।
हा हा कैसा अधःपतन है।
इसका यह परिणाम हुआ है बनगये दुखकीखान॥

—*—

अर्जुन जैसे वीर बनें हम।
रामचन्द्रसम धीर बनें हम।
योधा पुष्टशरीर बनें हम।
धनी बनें गम्भीर बनें हम।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

देशभक्ति की लगे गूंजनें घर २ सुमधुर तान ॥

—*—

विद्वत्ता आचार हो हम में।
दृढ़ता प्रेम उपकार हो हम में।
उत्तम कारोबार हो हम में।
सब कुछ नियम अनुसार हो हम में।
सब जग जावेजान हुआ है भारतका उत्थान॥
पहली पदवी प्राप्त करें फिर जगत करे सम्मान।
प्रभुवर! इस कंगाल देशका होजाये कल्यान॥
दया हो हमपर भी भगवान॥

—*—

विलायती हुण्डी की दर।

लेखक—श्रीयुत् प्रो० जगद्धर गुलेरी
एम. ए. एल. एल. बी.

(१)

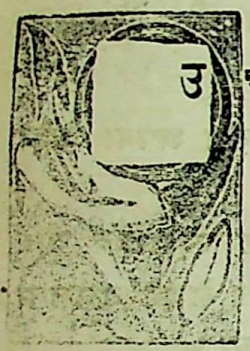

उन्नतिशील देशों में व्यापार और कारोबार में धातु के सिक्के के स्थान में हुण्डी वा नोट वा चेक का प्रचार अधिक हुआ करता है, और सच तो यह है कि जहां तक देश के अन्दर के व्यापार में धातु के सिक्कों की ज़रूरत कम की जाय और काग़ज़ वा हुण्डियों का चलन अधिक हो उतनी ही व्यापार में तेज़ी और आसानी होती है और कारोबार बढ़ता है। किन्तु और देशों में दूसरे तरह के सिक्कों और नोटों के प्रचार से एक देश का रुपया दूसरी जगह नहीं चल सकता इस लिये चीज़ों के दाम देने के लिये एक ऐसी चीज़ की ज़रूरत पड़ती है जिसे सब लोग सब जगह स्वीकार करलें। ऐसी चीज़ें अपने गुणों के कारण सोना या चांदी ही हो सकती हैं। पर माल ख़रीदने वा बेचने के हर मौक़े पर सोने चांदी की ईंटों वा पासों का एक देश से दूसरे देश में भेजना आसान नहीं है। इस लिए व्यापारी और देशों में चलने वाले सिक्कों का सोने चांदी का सम्बन्ध वज़न मिलान कर नियत कर लेते हैं जिस से यह पता चल जाता है कि एक देश के कितने सिक्के दूसरे देश में चलने वाले रुपये के बराबर होते हैं। यदि दो देशों में सोने के सिक्के चलते हों तो यह हिसाब लगाना बड़ा सहल काम है जैसे इङ्गलैण्ड और फ्रांस में* जहां एक पाउण्ड का सोना १.२६ नेपोलियन के सोने के बराबर अर्थात् १ पाउण्ड २५.२२ फ्रांक के समान है। जिस का अर्थ यह हुआ कि यदि एक देश से दूसरे देश में सोना चांदी भेजने का ख़र्च न गिना जाय और किसी उपाय से एक स्थान पर सिक्के देने से दूसरे स्थान पर वहां के सिक्के मिल जांय तो लण्डन में एक पाउण्ड देने से पेरिस में २५.२२ फ्रांक मिल सकते हैं। उसी तरह से दूसरी तरफ़ से फ्रांक देने से पाउण्ड मिल सकते हैं। पर इस दशा में भी यदि एक देश को दूसरे देश में

* पौण्ड जिस में $\frac{११}{१२}$ ख़ालिस सोना वज़न में ७.९८८०५ ग्राम और फ्रांस का नेपोलियन जो २० फ्रांक का होता है $\frac{९}{१०}$ ख़ालिस सोना वज़न ६.४५१६१ जिस से १ पौण्ड =

$$\frac{७.९८८ \times \frac{११}{१२}}{६.४५ \times \frac{९}{१०}} \times २० = २५.२२ \text{ फ्रांक के बराबर हुआ}$$

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अधिक वा कम रुपया भेजना हो तो यह दर बदलती रहेगी। जैसे मान लिया जाय कि पेरिस में व्यापारियों को लण्डन में बहुत रुपया भेजना है, उन्हें लण्डन में पौण्डों की बहुत जरूरत है, मांग के अधिक होने से उन्हें २५.२२ से कुछ अधिक फ्रांक देने पड़ेंगे। और यदि लण्डन में मांग कम हुई तो उन्हें पाउण्ड के ज़ियादा फ्रांक पेरिस में मिल सकेंगे। किन्तु वास्तव में सोना चांदी वा इन के सिक्के भेजने में ख़र्च बैठता है और यदि यह ख़र्च १० सेन्ट (एक फ्रांक में १०० सेन्ट होते हैं) मान लिया जाय तो यह भाव २५.३२ और २५.१२ फ्रांक के बीच में घटता बढ़ता रहेगा क्योंकि इस के ऊपर नीचे जाने से व्यापारियों को स्वयं सोना या चांदी भेजना सस्ता पड़ेगा।

पर जिन देशों में सोने के सिक्कों का चलन नहीं उनसे सोने के सिक्कों वाले देशों का व्यापार में उनके सिक्कों का आपस में एक स्थिर भाव नहीं हो सकता, यदि एक देश में चांदी का रुपया हो तो उसका सोने में भाव चांदी की कीमत पर घटता बढ़ता रहेगा।

जैसा कि भारत में सन् १८९३ के पहिले रुपये की दर घटती बढ़ती थी*

(२)

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है माल ख़रीदने या बेचने पर सदा ही छोटी बड़ी रक़म के लिये सोना या चांदी भेजना या मंगाना ख़र्च, दिक़्क़त और जोखिम का काम है, इसलिये व्यापार में यह लेन देन का काम हुण्डियों से ही होता है। यह हुण्डियां या तो माल भेजने वाले दूसरे देश के व्यापारियों पर करते हैं जिन से माल की क़ीमत लेनी हो या सिर्फ़ रुपया एक जगह से दूसरी जगह भेजने के लिए बड़े बंक वा बड़े व्यापारी अपने किसी बंक वा आढ़ती एजण्ट के नाम करते हैं। जैसे किसी कराची की बड़ी दुकान ने १००००) रु० की गेहूं लंडन भेजी और कीमत की १००००) की हुण्डी लंडन के व्यापारी पर करदी और अगर बंबई के किसी व्यापारी ने १००००) रु० की ही कपड़े की गांठें मैञ्चेस्टर से मंगाई हों तो लंडन से कराची रुपया भेजने और बंबई से मैञ्चेस्टर पौण्ड भेजने से तो इस बातमें सुबीता होगा कि बंबई का व्यापारी कराची वाले से हुण्डी खरीद कर उसे गेहूं की कीमत पहुंचादे, और उस हुण्डी को मैञ्चेस्टर में कपड़े के दाम में भेजदे, और मैञ्चेस्टर वाला व्यापारी लंडन में इस हुण्डी को सिकार कर अपने दाम वसूल करले। इस प्रकार लाखों का व्यापार बिना किसी रुपये के भेजने से चल सकता है और वास्तव में बाज़ार में दोनों ही देशों में व्यापारियों या बंकों की एक दूसरे पर की हुई हुण्डियां

*उसके बाद गवर्नमेण्ट ने बाहर के व्यापार के लिये रुपये की कीमत १६ पैंस (१ शिलिंग ४ पैंस वा १ पौण्ड १५ रुपये का) नियत करदी और रुपये की दर को बढ़ने घटने से बचाने के लिए यह काम अपने ऊपर लिया कि विलायत में जिन्हें भारत को रुपये भेजने हों उन्हें १६$\frac{3}{2}$ पैंस की दर से और जिन्हें यहां से विलायत पौण्ड भेजने हों उन्हें १५$\frac{29}{32}$ पैंस की दर से रुपये या पौण्ड मिल सकेंगे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हुआ करती हैं जिन के गाहक दूसरे देशों में रुपया भेजने वाले होते हैं, और जैसे कि हरएक चीज़ का दाम मांग और आमद पर निर्भर है उसी तरह इन हुण्डियों का दाम भी घटता बढ़ता रहता है, और यह रुपये या पौण्ड की दर के घटने बढ़ने से मालुम होता है । जैसे बाज़ार में हुण्डियां ज़रूरत से ज़ियादा हों और गाहक थोड़े हों तो इनकी कीमत घट जायगी और मांग ज़्यादा हुई तो कीमत बढ़ जायगी । इन हुण्डियों का बाज़ार में आना व्यापार पर निर्भर है। जिस देशने माल अधिक भेजा हो तो वहां दूसरे देश पर हुण्डियां अधिक होंगी । पर जब किसी भी कारण से दूसरे देश में रुपया भेजने की आवश्यकता होती है और लोग अपनी मांग के मुताबिक़ कीमत देने को तैयार हों तो बंक और व्यापारी बिना माल के भेजे ही हुण्डियां बना देते हैं और फिर जिन पर की हों उनको अपने खुर्चीते से रुपया या और दूसरी हुण्डियां भेज कर हिसाब पटा देते हैं ।

पर जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है दो देशों में एक दूसरे पर हुण्डियों की क़ीमत वहां के ख़ास चलने वाले सिक्कों के सोना या चांदी के सम्बन्ध से नियत होती है । और इनकी कीमत का घटना बढ़ना वहां के रुपये की दर के घटने बढ़ने से मालूम होता है । और इतनी ज़्यादा भी घट या बढ़ नहीं सकती कि बाहर से सोना मंगाना या बाहर सोना भेजना सस्ता पड़े । सन् १८९३ के पीछे जब सरकार ने रुपये की क़ीमत १६ पैंस नियत करदी और यह सूचना दी कि गवर्नमेण्ट इस दर को बाहर के व्यापार के लिये स्थिर रखेगी तो साधारण दशा में हुण्डियों की क़ीमत १६$\frac{1}{2}$ पैंस और १५$\frac{31}{32}$ पैंस से नहीं हट सकती थी क्योंकि इस दर पर जिन्हें रुपया या पाउण्ड भेजना हो उन्हें सरकारी हुण्डी मिल सकती थी । प्रायः कर रुपये की दर इन दोनों सीमाओं के अन्दर रहती थी क्योंकि $\frac{1}{2}$ पैंस की रुपया विलायत से यहां भेजने का खर्च है और $\frac{1}{32}$ यहां से विलायत भेजने का और इन दोनों सीमाओं के अन्दर घटना बढ़ना सरकारी हुण्डियों की मांग पर निर्भर था ।

रुपये की हुण्डी या Council बिल ।

जिन्हें विलायत से यहां रुपये भेजने होते वे सेक्रेटरी आफ़स्टेट को पाउण्ड या सोना देकर सरकारी हुण्डी ख़रीदकर अपने माल भेजने वाले के पास रवाना कर देते जो ख़ज़ाने में हुंडी देकर रुपये वसूल कर लेता । और जिसे पाउण्ड भेजने होते उसे यहां रुपये ख़ज़ाने में जमा करदेने से विलायत में सेक्रेटरी आफ़ स्टेट के नाम सरकारी हुण्डी (पाउण्ड की हुण्डी या स्टर्लिंग ड्राफ्ट Sterling draft or Reverse Council) मिलजाती जिसके वहां पाउण्ड मिलजाते थे । अब यह देखना चाहिये कि रुपये की दर के घटने बढ़ने का असर क्या होता है । यदि रुपया पूरे १६ पैंस का मान लिया जाय तो हुण्डी का भाव २० पैंस होने से पाउण्ड की दर बढ़ी और रुपये की दर घटी, अर्थात् पाण्ड १५ रु० की जगह १२ रुपये का ही रहगया । यद्यपि रुपये की कीमत में पाउण्ड कम और पौउण्ड में रुपया ज्यादा हो गया पर जिसप्रकार रुपये की दर शिलिंग पैंस में लिखी जाती है उसके अनुसार २० पैंस होने से पाउण्ड की दर बढ़ी और पाउण्ड के १२) रहजाने से रुपये की दर घटी । इसका मतलब यह हुआ कि इसदशा में जिन्हें इस देश से मालकी कीमत में पाउण्ड भेजने हों उन्हें पहिले से पाउण्ड सस्ते मिलेंगे और जिन्हें बाहर माल भेजकर रुपये लेने हैं उन्हें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan

पाउण्ड के रुपये कम मिलेंगे। इसलिये बाहरसे माल खरीदने में लाभ है और भेजने में हानि अर्थात् रूपये की दर घटने से, बाहर से ख़रीद बढ़ जाती है और बिक्री कम होजाती है। इससे ठीक उलटा फल विलायत में होगा। क्योंकि पाउण्ड की दर बढ़ जाने से जिन्हें रुपए भेजने हों उन्हें पाउण्ड अधिक खर्च करने पड़ेंगे। इसलिए भारतसे माल खरीदना कम होजायगा पर बेचना अधिक होजायगा क्योंकि उन्हें पहले रुपये के बर बैठे पाउण्ड ज़ियादा मिलेंगे। इसी प्रकार पाउण्ड की दर घटने से जैसे १६ पैंस से १२ पैंस होने से रुपये की दर बढ़ जायगी, और उसका फल यह होगा कि यहां से विलायत माल का जाना बढ़ जायगा और अन्दर आना घट जायगा, और विलायत में भारत से माल ख़रीदने में लाभ और बेचने में नुकसान होगा पर यह दशा बहुत देरतक नहीं बनी रहती है॥

लण्डन पर की हुई हुण्डियां।

जब रुपये की दर बढ़ने से (पाउण्ड की दर घट गई जैसे १६ पैंस १२ पैंस) भारत से माल बहुत जायगा तो लण्डन पर की गई हुण्डियां बाजार में अधिक हो जायँगी और यदि ग्राहक कम हुए तो इनकी कीमत गिरेगी और हुण्डी करने वालों को सस्ती बेचनी पड़ेगी। जैसे १२ पैंस की जगह १४ पैंस की दरसे अथवा २० रु० पाउण्ड की जगह उन्हें पाउण्ड के १७=)। ही मिलेंगे और इसप्रकार रुपये की दर घटना शुरु होगी और १६ पैंस की नियत स्थिति पर पहुंचने की चेष्टा करेगी। अथवा यह सोचलें कि जब यहां से विलायत माल बहुत जायगा और पाउण्ड की दर १६ से १२ पैंस गिर जायगी (१५ रुपए से २० रु०) तो माल के दाम घटाने के लिए विलायत से सोना या चान्दी अवश्य भेजनी होगी और सोना या चांदी के अधिक जाने से और रुपए पैसे के अधिक होने से चीज़ों का दाम बढ़ना शुरू होगा और यहां भी चीजें उतनी महंगी हो जायंगी जितनी बाहर के देशों में है और बाहर के व्यापारियों को यहां से खरीदने में कोई लाभ नहीं होगा इसलिये धीरे २ माल का बाहर जाना घटेगा और अन्दर आना बढ़ेगा जिससे फिर वही १६ पैंस (१५ रु० पाउण्ड) की स्थिति आजायगी। उदाहरण के लिए १६ पैंस से १२ पैंस पाउण्ड की दर गिरना बतलाया है पर एक दो पाई के फ़र्क होने से व्यापार का कांटा एक तरफ़ से दूसरी तरफ को झुकने लगता है। और रुपये की दर केवल माल के बाहर अन्दर जाने ही पर नहीं घटता बढ़ती है पर जिस किसी भी कारण से यहां से बाहर रुपया भेजना हो तो उसका रुपये की दर पर वैसाही असर होगा जैसा बाहर से माल मंगाकर उसका मूल्य भेजने से। और किसी भी कारण से रुपया लेना हो तो उसका असर वैसाही होगा जैसा कि यहां से माल भेजने का। यहां पर संक्षेप से इतना कहना ही काफ़ी होगा कि विदेशी रुपये की दर से एक देश का रुपया दूसरे देश में पलटा जाता है और यह रुपए का भेजना व्यापार की हुण्डियों से होता है और इन हुण्डियों का भाव देशों में चलने वाले सिक्कों और रूपयों की कीमत के घटने बढ़ने से बदलता रहता है। प्रायःकर देश में चलने वाले सिक्कों और रुपये के मूल्य के ऊंचे नीचे होने के कारण ये हैं:—

(१) व्यापार की विषमता याने देश से बाहरअधिक जाता है वा अधिक अन्दर आता है किन्तु इस विषमता में सिर्फ तिजारती माल की गिनती नहीं पर जिस किसी कारण

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

से एक देश दूसरे देश से लेन दार वा देनदार हो वे सब इसमें शामिल हैं॥

(२) देश की साख वा पत का गिरना।

(३) देश में चलने वाले सिक्के का कम दाम का हो जाना–खोट से या ज़रूरत से जियादा होजाने से जैसे कागज़ के रुपये में।

(४) दो देशों में व्याज या सूद की दरः—

(५) दो देशों की दूरी।

(६) व्यापार में जोखिम, खतरे और डर की हालत।

(७) लड़ाई या और कोई नई घटना॥

(८) और यदि दोनों देशों में रुपया भिन्न धातुका हो तो उन धातुओं की कीमत का एक दूसरे में घटना बढ़ना अपने देश के रुपये की दर पर सब से जियादह असर दो बातों का होता है–(१) व्यापार की विषमता और (२) सोने चान्दी के भाव का॥

(३)

युद्ध के दिनों में व्यापार की विषमता हमारे अनुकूल थी अर्थात् माल के बाहर अधिक जाने से हम विलायत के लेनदार हो गए थे और व्यापार का कांटा हमारी तरफ़ झुका हुआ था। इस के अलावा भारत ने बृटिश राज्य की तरफ़ से बहुत कुछ रुपया लड़ाई और लड़ाई के सामान पर ख़र्च किया था। जिस का फल यही होना था कि पौण्ड की दर इतनी बढ़ जाती कि विलायत को सोना चांदी भेजना पड़ता। पर लड़ाई के कारण इस देश में बाहर से सोना चांदी का आना बिलकुल बन्द था। विलायत में सरकारी रुपयों की हुण्डियों की मांग बढ़ गई और यह डर हुआ कि भारत के ख़ज़ाने में इन हुण्डियों के रुपये देते देते टोटा न पड़े और हुआ भी यही। सरकार को और रुपये बनाने के लिए दूनी चौगुनी क़ीमत पर चांदी खरीदनी पड़ी पर तिस पर भी रुपयों की मांग बनी रही। जब यहां ऐसी दशा थी तो चांदी के बाज़ार में कई कारणों से तेज़ी आरही थी और दिन पर दिन चांदी का मोल बढ़ने लगा। लड़ाई के पहिले चांदी का भाव २७ पैन्स फी आउन्स के लग भग हुआ करता था (जो १५ रु० पाउण्ड के हिसाब से प्रायः ग्यारह आने तोले के बराबर है जिस से एक रुपए की चांदी का मोल सवा दस आने ही होता था)। जब तक चांदी का भाव ४३ पैन्स फी आउन्स से नीचे रहे तब तक रुपया एक कम दाम का सिक्का बना रह सकता है और उस के गलाए जाने का या देश के बाहर चांदी के भाव भेजे जाने का डर नहीं हो सकता, क्योंकि ४३ पैन्स फी आउन्स के भाव से रुपये की चांदी का मोल सोलह आने से कुछ कम ही होता है (१ रुपया एक तोले का १८० ग्रेन वज़न में जिस में ख़ालिस चांदी $\frac{11}{12}$ हिस्से अर्थात् १६५ ग्रेन होती है और एक आउन्स ४८० ग्रेन में खालिस चांदी ·९२५ वा ४४४ ग्रेन होती है) और जब चांदी का भाव ४३ पैन्स से ऊपर हुआ तो रुपये को गलाये जाने और बाहर भेजे जाने से बचाने के लिए सरकार ने पौण्ड की दर बढ़ाना ज़रूरी समझा अर्थात् सोने के पौण्ड में रुपये की कीमत १६ पैन्स (१६ आने) से भी ज्यादा कर दी। २० दिसम्बर १९१६ को पहिली बार सरकारी तार की रुपये की हुण्डी की दर १६ पैन्स से १६$\frac{7}{32}$ पैंस थी (१ पौण्ड बराबर १४ रु० १२ आने ८ पाई के) फिर जैसा कि सब को मालूम है धीरे २ इस प्रकार बढ़ी :—

१० जनवरी १९१७ को १६$\frac{1}{2}$ पैंस अर्थात् पौंड १४॥)३
२९ अगस्त ,, ,, १७ पैंस ,, ,, १४-)११

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१२ अप्रैल १९१८ ,, १८ पैंस ,, ,, १३।-)४
१३ मई १९१९ ,, २० ,, ,, ,, १२)
१२ अगस्त ,, ,, २२ ,, ,, ,, १०॥=)६
१६ ,, ,, ,, २४ ,,(२शिलिङ्ग),, १०)
२५ नवम्बर ,, ,, २६ पैंस ९।)६
१६ दिसम्बर ,, ,, २८ ,, ,, ,, ८॥-)२

जब गवर्नमेण्ट को पौण्ड की दर १८ पैन्स से २० पैन्स बढ़ानी पड़ी अर्थात् रुपये की दर १३।-) ३ से १२) घटी, तो उन्हें विश्वास हो गया कि समय संकट का है और अनुभवी और विद्वान् लोगों की सम्मति लेनी चाहिये। इस लिए उन्होंने ३० मई १९१९ को सर० एच० वे विङ्गटन स्मिथ की अध्यक्षता में एक कमेटी नियुक्त की जो रुपये की दर और काग़ज़ के चलन इत्यादि प्रश्नों पर विचार कर अपनी राय दे—इस कमेटी ने अपनी रिपोर्ट २२ दिसम्बर १९१९ को पेश की जो २ फरवरी १९२० को प्रकाशित हुई।

यहां रुपये की दर के सम्बन्ध में उन्होंने जो प्रस्ताव किए हैं और जिन्हें सेक्रेटरी आफ़ स्टेट और भारत सरकार ने मान भी लिया है उन का संक्षेप से उल्लेख करना यथेष्ट होगा।

१. रुपये की दर पौण्ड में नियत करने से (१६ पैंस) जब पौण्ड का मूल्य सोने से गिर जाता है तो रुपया भी उसी प्रकार गिर जाता है क्योंकि चांदी का जैसा कि और सब चीज़ों का दाम पौण्ड में बढ़ जाता है इस लिए रुपये की दर सोने में नियत करनी चाहिये। रुपये को एक पौण्ड के सोने के दसवें हिस्से के बराबर कर देना चाहिये। पाउण्ड में ११३.००१६ ग्रेन सोना होता है। एक रुपया ११.३००१६ के बराबर होना चाहिये। जब पौण्ड का मूल्य ठीक ११३.००१६ ग्रेन सोने के बराबर हो जायगा तो पाउण्ड ठीक १० रुपए के बराबर अर्थात् २४ पैंस हो जायगा।

चांदी का भाव।

२. दूसरा कारण यह था कि १६ पैंस रुपए की दर से जब तक ४३ पैंस फ़ी आउन्स से नीचे रहे उस समय तक रुपया कम दाम का सिक्का बना रह सकता है और सरकार को रुपये गढ़ने में नुकसान नहीं है। लेकिन चांदी का भाव तेज़ ही बना रहेगा इस लिए रुपए की दर पौण्ड में इतनी ऊंची रखनी चाहिए कि सरकार चांदी खरीद सके और बिना नुकसान के रुपये गढ़सके। २४ पैंस रुपये की दर से यह हद चांदी के ६३ पैंस फ़ी आउन्स तक होती है।

३. रुपए में पहिले जितनी ख़ालिस चांदी और पहिले जितना वज़न रहे उस में कुछ भी परिवर्तन नहीं होना चाहिए। जिस प्रकार पहिले उसके चलने या लेन देन में कोई रुकावट नहीं थी उसी प्रकार उसे बना रखना चाहिए।

४. जब रुपये की नई दर व्यापार में नियत हो जाय तो सोने के देश के बाहर अन्दर जाने में सरकार की कोई रुकावट नहीं होनी चाहिए।

५. भारत में पौण्डों और आधे पौण्डों को बनाने के लिए बम्बई की सरकारी टकसाल को फिर खोल देना चाहिये जिस से लोगों को सोना साफ़ कराने और सोना देकर पौण्ड लेने में सुबीता हो। पौण्ड भी रुपए की तरह बिना रुकावट चलने लगे इस लिए सरकार को चाहिए कि वह अपनी यह सूचना हटाले कि पौण्डों के रुपए मांगने पर मिल सकेंगे।

६. चांदी के देश के बाहर अन्दर आने में जितनी जल्दी हो रुकावटें हटा लेनी चाहिएं और होसके तो चांदी के टेक्स (महसूल) को भी हटा देना चाहिए।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यहां यह भी कह देना चाहिए कि पौण्ड की दर को २४ पैंस नियत करते हुए उन्होंने रुपये की दर गिरी रखने के यह लाभ बतलाए हैं—

(१) पौण्ड की दर बढ़ने से भारत में महंगी नहीं बढ़ी और इस में देश का कल्याण ही हुआ है और इस लाभ को बनाए रखना चाहिए।

(२) पौण्ड की दर के इतनी ऊंची नियत करने से भारत के व्यापार को सदा के लिए किसी हानि की सम्भावना नहीं।

(३) ऊंची दर से भारत के व्यवसाय की उन्नति में कोई विशेष बाधा नहीं पड़ेगी।

(४) पौण्ड की दर के बढ़ने से भारत को विलायत में सरकारी ख़र्च के लिए कम रुपए भेजने पड़ेंगे इस लाभ को भी ध्यान में रखना चाहिए।

इस कमेटी में भारत के व्यापार के प्रतिनिधि रूप से केवल एक भारतीय सज्जन थे बम्बई के मिस्टर दादिना मेरवान जी दलाल। उन की राय और अंगरेज़ मेम्बरों से न मिली और उन्हें अपनी रिपोर्ट अलगही लिखनी पड़ी। उन की राय में पौण्ड की पहिली दर के (१६ पैंस) बाहर के व्यापार और देश में अन्दर चलने के लिए स्थिर रखने की चेष्टा करनी चाहिए। सोना चांदी के बाहर अन्दर आने जाने की रोक टोक बिलकुल न हो और लोग चाहें तो रुपये गला कर बाहर भेज दें। जब तक चांदी का भाव न गिरे सरकार नये रुपए न बनाए, यदि बहुत ज़रूरत पड़े तो कम चांदी का २ रुपए का एक नया सिक्का चला दे। भारत सरकार को विलायत पर हुण्डियां १५$\frac{२९}{३२}$ पैंस की दर से ही बेचनी चाहिएं।

हमारी मञ्जूषा

(१) कुमुदनी चन्द्र—लेखक श्रीयुत पण्डित मेधाव्रत कविरत्न और प्रकाशक श्रीयुत् सत्यव्रत मन्त्री आर्य्य समाज येवला ज़िला नासिक, पृष्ठ संख्या ३३४, मूल्य २) प्रकाशक से मिलती है। पुस्तक की छपाई और कागज़ अच्छा है। यह उपन्यास संस्कृत भाषा में है और भाषा की सरलता और लालित्य तथा अश्लील भावों के अभाव के कारण संस्कृत शिक्षा ग्रहण करते हुये बालक और बालिकाओं के लिये अति उपयोगी है। यही नहीं, संस्कृत भाषा का कुछ साधारण ज्ञान रखने वाले नर और नारी भी उस से मनो विनोद और शिक्षा ग्रहण कर सक्ते हैं।

(२) भारतीय जागृति—यह भारतीय ग्रन्थ-माला का छठा ग्रन्थ है, इसके लेखक तथा प्रकाशक महाशय भगवानदास केला (माहेश्वरी) सम्पादक 'प्रेम' वृन्दावन हैं। पृष्ठ २०२ और मूल्य १) है, आकार प्रकार अच्छा है और भारतजागृति का एक चित्र भी है। जैसा कि इस का नाम ही बतलाता है इस पुस्तक में केला जी ने वर्त्तमान भारत में जो धार्मिक सामाजिक तथा राजनैतिक जागृति हुई है उस का सजीव चित्र खींचा है; इतना ही नहीं बरन् गत शताब्दी की ऐतिहासिक संक्षिप्त किन्तु सर्वांग समालोचना करके पाठकों के सन्मुख आधुनिक परिस्थिति पर विचार करने के लिये पर्याप्त सामग्री भी प्रस्तुत की है। सब आर्य्य-भाषा प्रेमियों को इस पुस्तक का पाठ एक वार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अवश्य करना चाहिये।

(३) देश भक्त दामोदर—यह पुस्तक भी महाशय भगवानदास केला द्वारा रचित व प्रकाशित हुई है और भारतीय ग्रन्थ माला की ७वीं पुस्तक है। यह एक देशभक्त मारवाड़ी सेठ दामोदरदास जी राठी का जीवन चरित्र है। मारवाड़ी समाज की जो दशा वर्त्तमान समय में है उस के सन्मुख सेठ जी का जीवन बड़ा ही उच्च और परोपकारी था और जो २ देशोन्नति के कार्य्य उन्होंने किये तथा जिनमें सहायता दी सभी अनुकरणीय हैं। यह पुस्तक भी प्रत्येक देश हितैषी को अवश्य पढ़नी चाहिये पृष्ठ संख्या १२० मूल्य केवल ॥।) मिलने का पता सम्पादक 'प्रेम' वृन्दावन।

(४) गान्धी चरित्र और असहयोग की धूम—लेखक श्रीयुत् पं० ईश्वरीप्रसाद शर्मा पृष्ठ १८ मूल्य =) यह छोटी सी पुस्तक अपने नाम के अनुसार वर्त्तमान राष्ट्रीय युग में बड़ी रोचक और शिक्षाप्रद है।

(५) सीता—शिक्षाप्रद पौराणिक उपाख्यान, लेखक श्रीयुत् ईश्वरीप्रसाद शर्मा, पृष्ठ संख्या २३१ मूल्य २॥) सजिल्द २॥।) और रेशमी जिल्द ३) रमणी रत्नमाला का तीसरा रत्न है।

उपरोक्त दोनों पुस्तकों के प्रकाशक रामलाल वर्मा ३७१ अपर चितपुर रोड कलकत्ता हैं।

जैसा कि इस का नाम बतलाता है सीता महाराणी सती सीता का जीवन चरित्र है इस में प्रत्येक मुख्य २ घटनाओं के बहुत से रंगीन चित्र दिये हैं, और राम चरित मानस, बाल्मीकि रामायण तथा उत्तररामचरित्र में वर्णित कथा के आधार पर मनोरंजक और सरल भाषा में लिखा गया है। सुघर छपाई, चित्रों की सुन्दरता, और बहुलता बड़ी चिताकर्षक है अतः सब स्त्रियों और बालिकाओं के लिये यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है।

कुसुमोद्यान

४००० वर्ष पहिले स्त्रियों का कालेज

एशिया माइनर में नया आविष्कार।

प्रोफैसर ए० एच० सेस Observer आबजर्वर नामक अंग्रेज़ी के प्रसिद्ध पत्र में लिखते हैं कि प्राचीन पूर्वीय जगत् हमारे पाश्चात्य जगत से आश्चर्य्यमयी समानता रखता था। यद्यपि उसे बीसवीं सदी के कलायन्त्रों अर्थात् देनों, जहाज़ों, तारों और टेलीफोनों से परिचय न था किन्तु (Culture) शिक्षाके क्षेत्र में वह हमारी बराबरी पर था और कई अंशों में हम से बढ़ा हुआ भी था। कलायन्त्रों की सभ्यता के विपरीत (Culture) शिक्षा हमेशः थोड़े लोगों में ही रहा करती है और आज कल भी जो बातें थोड़े जनों के लिये भी बड़ा ऊंचा लक्ष्य हैं उन्हें चार हज़ार वर्ष पूर्व लोगों ने प्राप्त कर लिया था।

हमें पहिले ही पता था कि ग्रीस और रोम देशों ने साहित्य उन्नति के समय यह लक्ष्य प्राप्त कर लिया था, उसके पश्चात् प्राचीन ईजिप्ट की सभ्यता का प्रादुर्भाव हुआ, जिस के पीछे क्रीट (Krete) कला कौशल और शिक्षा का जन्म हुआ, तदनन्तर बैबीलोनिया की

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बारी आई। परन्तु एजिप्ट और क्रीट की भान्ति बैबीलोनिया की (Culture) शिक्षा में मुख्य स्थान कला कौशल्य को न था वरन साहित्य और व्यापार को।

बैबीलोनिया के शिलालेखों का सब से नया आविष्कार जो अब हुआ है उसमें वर्त्तमान सभ्यता की भी झलक मिलती है। कई शताब्दी पूर्व कैल्डीज़ वंश में अब्राहीम के उत्पन्न होने से पहिले उरदेश Ur में एक राज्य वंश राज करता था जिसकी राजधानी यही उर नगरी थी। उसका शासन अथवा राज्य (Susa) सूसा से मैडीटरेनियन तक और फ़ारस की खाड़ी से तारस पर्वतों तक माना जाता था। पूर्वीय एशिया माइनर में बर्त्तमान कैसरिया नगर से तीन मील की दूरी पर बैबीलोनिया का एक उपनिवेश था जो कि कुछ २ व्यापारिक था और धातुओं की बिक्री का केन्द्र समझा जाता था जहां से पश्चिमोत्तर प्रदेशों में जाने का मुख्य मार्ग था। बैबीलोनिया की कम्पनियां एशिया माइनर की चान्दी, तांबे और जस्ते की खानों में कार्य्य करती थीं और पश्चमी एशिया को यहां की बनी हुई चीजें पहुंचाती थीं।

उन्होंने मिट्टी के पट्टों पर (Cuneiform) भाषा में खुदे हुए अपने वृत्तान्त हमारे लिये छोड़े हैं। अभी ऐसे सैकड़ों पट्टों का पता लगा है जो एक ही समय अर्थात् २४०० वर्ष (ईसा से पूर्व) के हैं। कई पट्टे तो पत्र के रूप में हैं जो प्रायः लेन देन के सम्बन्ध में लिखे हुए हैं किन्तु कुछ थोड़े से वाणिज्य तथा कानून की बातों से भी सम्बन्ध रखते हैं। वह अपूर्ण ही समाप्त होते हैं। सम्भव है कि जब अन्तरीय विनाश के कारण बैबीलोनिया की सर्कार अपने दूर २ के प्रदेशों की रक्षा न कर सकी तो एशिया माइनर में जो बैबीलोनिया के उपनिवेश थे उन्हें उत्तर की जातियों ने नष्ट कर डाला। चाहे जो कुछ हुआ हो ज़मीन खोदने से जो पट्टे निकले हैं उन से यह अवश्य सिद्ध होता है कि वह ख़ास शहर जहां से वह निकले हैं अवश्यमेव अकस्मात् नष्ट भ्रष्ट किया गया था और पुनः वहां कोई नहीं बसा।

एसिरिया जो उस समय बैबिलोनिया का ही प्रान्त था वहां उपनिवेशों में बहुत लोग गये हुए थे। वहां का राज्य प्रजातन्त्र था राजतन्त्र नहीं। यद्यपि नाम मात्र के लिये वह बैबीलोनिया के राजों के आधीन समझे जाते थे किन्तु वास्तव में उनके शासक उन्हीं के राजकर्मचारी होते थे। एक प्रान्त या ज़िला एक राजकुमार (Prince) के अधीन होता था और नगर एक (Prefect) माण्डलिक शासक के। इनके अतिरिक्त वहां पर जज्ज होते थे और कुछ ऐसे अफ़सर होते थे जिन के नाम पर वर्ष भर के सप्ताहों के नाम होते थे पर यह सप्ताह पांच दिन के ही होते थे और इन्हीं द्वारा समय की गणना होती थी।

किन्तु 'राजकुमार' और 'माण्डलिक शासक' के साथ साथ राजकुमारी और माण्डलिक शासिका भी हुआ करती थीं और आश्चर्य्ययुक्त घटना जो कि इन पट्टों में निकलती है यह है कि राजकुमारी और माण्डलिक शासिका के स्वत्व और अधिकार राजकुमार और माण्डलिक शासक के बराबर ही होते थे। (Burus) बूरस नगर में 'स्त्रियों के अधिकार' प्राचीन समय में ही विजयी थे। स्त्रियां पुरुषों की भांति व्यापार कर सक्ती थीं, पुरुषों की भांति धन का उत्तराधिकारी नियत कर सक्ती थीं, तथा पुरुषों की भांति ही उन्हें अफ़सरी करने का अधिकार था। अस्तु, साहित्य की गाथा जो अमेज़ान्स

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

(Amazons) के विषय में है उस में कुछ सत्यता थी क्योंकि वे लोग उधर के ही निवासी थे। स्त्रियों के अधिकारों के साथ स्वाभाविकतया उनकी शिक्षा का सम्बन्ध है और सबसे नया जो आविष्कार हुआ है उस में वर्त्तमान समय की नई से नई सभ्यता की झलक है। एक नया पट्टा निकला है जिस में बूरस के पड़ोस में स्त्रियों के एक कालेज या यूनीवर्सिटी का वर्णन है, और जिस स्थान पर वह था उस भाग को 'स्त्रियों का नगर' कहते थे। इस विश्वविद्यालय में दो विभाग थे एक साहित्य और दूसरा कला, दोनों के प्रिंसिपल अलग २ होते थे लेकिन वह स्त्रियां न होकर पुरुष प्रोफेसर होते थे। सच मुच "इस संसार में कोई बात नहीं कही जा सक्ती"।

लेकिन इन बातों के अतिरिक्त उन पट्टों ने और भी कई बातों पर प्रकाश डाला है जिन की समानता आधुनिक संसार में है। हमें उन चिट्ठियों से पता लगता है कि समग्र देश में सड़कें बनी हुई थीं जिन पर डाकिये नियत समय पर जाया करते थे। यद्यपि जो पत्र, लिफ़ाफ़े जिन्हें वह ले जाते थे मिट्टी के बने हुए होते थे और उन पर मिट्टी की ही मोहर लगी हुई होती थी जिस पर यह छाप होती थी कि लेखक आशा करता है कि डाकिये को रात्रि के समय निर्मल आकाश और चमकता हुआ चन्द्रमा पथ दर्शक होगा। कई पत्रों में एक प्रकार की हुण्डियों का वर्णन है और दूत को यह कहा जाता था कि जिस के पास वह हुण्डी ले जायगा तो वह जन उसे जितना द्रव्य उस पट्टे पर लिखा है सिक्के के रूप में देदेगा।

योरोपीय विद्वानों को ४००० वर्ष की इन थोड़ी सी बातों पर ही आश्चर्य्य होता है परन्तु हमारे पाठकों को याद रहे कि यह ज़माना महाभारत के बाद का है और महाभारत का ज़माना ही गिरा हुआ ज़माना था। अतः जब हमारे गिरे हुये ज़माने की बातें यह हैरानगी देती हैं तो आर्य्य सभ्यता के मध्यान्ह के ताप को यदि किसी प्रकार पाश्चात्य विद्वान देख सकें तो क्या कहें।

वैज्ञानिक संसार

जीवन और मृत्यु की समस्या पर प्रसिद्ध वैज्ञानिक ऐडिसन के विचार।

आज कल समाचार पत्रों में अमरीका के प्रसिद्ध वैज्ञानिक आविष्कारक ऐडिसन के उस यन्त्र के विषय में लेख निकल रहे हैं जिस को कि वह बनाने में लगे हुए हैं और जिस के द्वारा वह उन आत्माओं से 'शारीरक' (physical) सम्बन्ध पैदा करना चाहते हैं जो कि इस संसार में अपने शरीर को छोड़ चुकी हैं। हमें शोक है कि भारत के कितने ही पत्रों में इस यन्त्र के विषय में (Sensational) सनसनी फैलाने वाला परन्तु अशुद्ध वृत्तान्त छपा है। आज हम 'ज्योति' के पाठकों के सन्मुख इस विषय में ऐडिसन महाशय के ठीक २ विचार रक्खेंगे।

यूरोप में आज कल मृत-शरीर-आत्माओं से बात चीत करते करने की बड़ी चर्चा हो रही है। कितने ही वैज्ञानिक भी इस ओर पूरा २ ध्यान दे रहे हैं। इन में से सर आलीवर लाज का नाम बड़ा प्रसिद्ध है। परन्तु इन वैज्ञानिकों के पास ऐसा कोई यन्त्र नहीं जिस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की सहायता द्वारा इन आत्माओं से बात चीत की जासके। प्लैन्चैट द्वारा या गोल मेज़ को घुमा कर उन से सम्बन्ध पैदा करना ऐडिसन के विचार में एक उपहास जनक भूल है। उन के यन्त्र को समझने से पहिले जीवन और मौत सम्बन्धी उन के विचारों को जानना बड़ा आवश्यक है। वह कहते हैं कि—

"जीवन प्रकृति के समान अविनाशी है। इस संसार में सदा से कुछ परिमाण में आत्मायें" रही हैं और रहेंगी यह परिमाण घट बढ़ नहीं सक्ता। तुम न तो जीवों को बना सक्ते हो, न मार सक्ते हो। और न बढ़ा सक्ते हो।

"मेरा विचार है कि हमारे शरीर में लखोखा जीवन-शक्तियां हैं। इन सब के मिलने से मनुष्य बनता है। अब तक हम समझते आये हैं कि हमारे शरीर में एक ही ऐसी शक्ति है परन्तु यह सर्वथा अशुद्ध है। हम एक कुत्ते या एक बिल्ली या एक घोड़े को 'एक' इसी लिए समझ लेते हैं कि यह जीवन शक्तियां इतनी छोटी है कि बड़ी तीक्षण से तीक्षण यन्त्र (ultra-microscope) द्वारा भी इन को नहीं देखा जासक्ता...

"इस के बहुत से लक्षण हैं कि हम मनुष्य एक "जीवन-शक्ति" की भान्ति काम न करके जीवन शक्ति-संघ या समूह की भांति कार्य्य करते हैं और हमारे विचार इस समूह का बहुपक्ष वोट हैं"।

"मैं ऐसा क्यों मानता हूं? यदि आप किसी काग़ज़ पर अपने अंगूठे का निशान बनावें (जिस तरह कि न्यायालय इत्यादि में अनपढ़ आदमियों से साक्षी लेते समय बनवाया जाता है)। उस के पश्चात् अपने अंगूठे को जला डालें जिस से कि चमड़ा भली प्रकार जल जावें फिर अच्छा होने पर पुनः काग़ज़ पर अंगूठा लगावें तो इन दोनों निशानों के देखने से पता लगेगा कि यह सर्वथा एक दूसरे से मिलते हैं। छोटी से छोटी लकीर में भी किञ्चित मात्र भेद नहीं। यह क्यों? मेरा विचार है कि "जीवन-शक्तियां" उसे अपनी स्मरण-शक्ति का सहारा ले कर पुनः ज्यों का त्यों बना देती हैं। यह हमारे मस्तिक का काम कदापि नहीं हो सक्ता क्योंकि उस को तो पता भी नहीं और न याद ही है कि यह लकीरों के निशान किस प्रकार के थे।

"यह 'जीवन-शक्तियां' ही जीवन हैं। यह अनथक कार्य्य करने वाली हैं। हमारे शरीर में यह सदा जले हुए या अन्य प्रकार से नाश हुए २ अङ्गों को पुनः बनाती रहती हैं। जब किसी रोग या दुर्घटना से शरीर निकम्मा हो जाता है (अपनी आज कल की परिभाषा में इस को हम 'मरण' कहते हैं) तब यह जीवन-शक्तियां किसी अन्य मनुष्य या प्राणी के शरीर में चली जाती हैं और वहां अपना कार्य्य करने लगती हैं। संसार में इन "जीवन-शक्तियों" की एक नियत संख्या है जो न कम होती है न अधिक"।

"यह शक्तियां सदैव जीवित रहती हैं। तुम उसी प्रकार इन का नाश नहीं कर सक्ते जिस प्रकार कि तुम प्रकृति का नाश नहीं कर सक्ते। यह सम्भव है कि इन जीवन-शक्तियों में से अधिक तो काम करने वाली हैं बहुत थोड़ी। समझ लीजिये कि सौ पीछे पांच काम करवाने वाली। इन काम करवाने वाली शक्तियों के समूह को ही मैं व्यक्तित्व (Personality) के नाम से कहता हूं। मैं ऐडिसन एक व्यक्ति हूं और आप लैस्कर बोरा एक और व्यक्ति हैं। इस का अभिप्राय यही है कि काम करने वाली जीवन-शक्तियों का एक समूह मुझ में है और एक आप में। जो समूह मुझ में है उस का संसारिक नाम ऐडिसन है और जो आप में है उस का लैस्कर बोरा। क्या यह काम करने वाली 'जीवन-शक्तियां' भी मरने पीछे निज समूह में से पृथक् २ हो जाती हैं या कि यह सर्वदा निज समूह में ही बांधी रहती हैं। यदि यह पृथक् हो जाती हैं तो मैं समझता हूं कि मरने पीछे हमारा व्यक्तित्व भी टूट जाता है अन्यथा मरने पीछे यह एक रस रहता है"?

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

"मुझे आशा है कि हमारा व्यक्तित्व अटूट रहता है। यदि यह ऐसा हो तो मेरा यन्त्र कुछ काम आ सकेगा"।

यह हैं जीवन और मरण पर महाशय ऐडिसन के विचार। इनको पढ़ कर यह तो स्पष्ट है कि प्रकृति के उपासक यूरोप और अमरीका में भी आत्मज्ञान की प्यास जग उठी है। परन्तु उधर पश्चिमीय सभ्यता सर्वदा प्रकृति की सभ्यता रही है और उसने मनुष्यों के मन पर इतना काबू पा लिया है कि वह आध्यात्मिक विषयों को भी प्राकृतिक यन्त्रों द्वारा ही सिद्ध करने का उद्योग करते हैं। परन्तु समय आरहा है जब कि यह लोग भी सीधे मार्ग पर आयेंगे।

हमें ऐडिसन महाशय के विचार से इस अंश में तो सहानुभूति करने में कोई आपत्ति नहीं कि संसार में अमर और अजेय जीवन शक्तियां हैं। काम लेने वाली जीवन-शक्तियां को वह एक शरीर में बहुत थोड़ी मानते हैं। इस में एक आपत्ति अवश्य आती है कि चाहे कितनी भी थोड़ी हों वह एक से अधिक है। तब क्या यह सर्वदा एक ही प्रकार से और सर्व सम्मति से कार्य्य करती हैं? क्या इन के विचारों में कभी भी भिन्नता नहीं होती? यदि होती है तो जलने पीछे अंगूठा एक बार एक प्रकार से तन्दुरस्त हो और किसी दूसरी बार दूसरी प्रकार से। चूंकि यह एक ही प्रकार से होता है अतः हमें मानना पड़ेगा कि यह सदा सर्व सम्मति से काम करती हैं। यदि ऐसा है तो इनका भिन्न २ अस्तित्व व्यर्थ है। उस अस्तित्व का लाभ क्या जिसको कभी भिन्न विचार रखने की आज्ञा नहीं? भिन्न अस्तित्व वाले व्यक्ति समूह में विचार भिन्नता अवश्य होगी। हम तो यह समझते हैं कि ऐडिसन के शब्दों में काम करवाने वाली जीवन शक्ति केवल एक ही है और उसका नाम आत्मा है यह अजेय अमर और अजन्मा है। शरीर के बिगड़े हुए अंगों को यही काम करने वाली जीवन शक्तियों द्वारा मान लीजिये-पुनः ठीक करती है। इसकी एकता के कारण ही कभी नियम नहीं टूटता, कभी गड़ बड़ी नहीं होती। समय आवेगा कि ऐडिसन सरीखे विद्वानों को सत्यता के आगे सिर झुकाना पड़ेगा।

शरीर रहित आत्मा प्राकृतिक यन्त्रों द्वारा खेल खेले यह समझ में नहीं आता। अपने मुक्ति के आनन्द को छोड़ कर शरीर रहित होते हुए भी वह पुनः प्रकृति के बन्धनों में चाहे वह कितने भी क्षणिक हों पड़े यह ठीक मालूम नहीं होता है।

अन्धकार के नेत्र।

आंखों बिना मनुष्य अन्धा है, परन्तु प्रकाश बिना आंखें अन्धी है। दीवाली की घोर अन्धकार मयी रात्रि में-घने जंगल में जहां न दिया है न बाती-आंखें रखते हुये भी मनुष्य चक्षुहीन है। दिन में हमारे चक्षु सूर्य्य का सहारा लेते हैं और रात्रि में कृत्रिम प्रकाश का। यदि यह दोनों हम से छीन लिये जावें तो समस्त संसार अन्धा हो जाय। मनुष्य को सब कुछ देकर भी परमात्मा ने कितना कुछ अपने आधीन रक्खा है। इन परमात्मा के आधीन वस्तुओं की प्राप्ति ही विज्ञान का ध्येय है, यही योग का लक्ष्य है। तो क्या किसी प्रकार मनुष्य अंधकार में वस्तुओं को देख सक्ता है। अथवा क्या छठी इन्द्रिय उसे प्राप्त हो सक्ती है? कहते हैं कि योगियों को यह प्राप्त हो जाती है। परन्तु आज हम अपने पाठकों को यह बतलाना चाहते हैं कि विज्ञान इस सम्बन्ध में क्या कहता है।

गत महा युद्ध में हवाई जहाज़ों द्वारा मनों गोला बारूद शत्रु के बड़े २ कारखानों, भवनों इत्यादि पर गिराया जाता था और इस प्रकार अनेक जीवों और बहुमूल्य पदार्थों का नाश किया जाता था। रात्रि के समय मकानों के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भीतर से चमकता हुआ प्रकाश उन्हें ठीक २ निशाना बना देता था, अतः इङ्गलैंड, फ्रान्स इत्यादि देशों में रात के समय एक भी दिया न जलता था। अन्धकार का पूरण राज्य रहता था। यदि दिन का समय हो तो सूर्य्य के प्रकाश में हवाई जहाज का सुगमता से पता लग सक्ता है और तोपों द्वारा उसको बेधा जा सक्ता है। परन्तु रात में क्या किया जाय। क्या इस अन्धकार में इस को किसी प्रकार देखा जा सक्ता है?

१९१८ का मार्च का महीना था, अग्र फ्रान्स के रण स्थल में फौज़ें डेरा लगाये पड़ी थीं एक दिन धुन्ध के बादल छाये हुये थे जिन्हों ने सूर्य्य को सर्वथा परास्त कर लिया था। सब कुछ अदृश्य था, यहां तक कि पास खड़े हुये मनुष्य को पहिचानना भी असम्भव था। इस अवस्था का सुअवसर पाकर जर्मनी की फ़ौजों ने अंग्रेज़ी फौज पर धावा बोल दिया और उसे बड़ी हानि पहुंचायी। यदि इस धुन्ध के अन्धकार में जर्मन सेना के आक्रमण करने के उद्योग को कुछ ही मिन्ट पहिले देख लिया जाता तो कितना नाश बच जाता!

हमारे पाठकों को पता होगा कि गत युद्ध में आमने सामने की बहुत कम लड़ाई हुई है। वरन् भूमि में ८ या १० फुट गहरी खन्दक खोद कर योधा उन में छिप कर बैठ जाते थे और दीवारों में बनायें हुये छिद्रों द्वारा गोली चलाते रहते थे। यदि दूसरे पक्ष की खन्दकें खाली पड़ीं हों तो उन का सारा परिश्रम व्यर्थ जाता था। कभी २ मौक़ा मिलने पर खन्दकों से एकाएक बाहर निकल कर धावा बोल देते थे। इस आक्रमण का पता उसी समय चलता था जब कि विपक्षी नितान्त खन्दक के ऊपर आ पहुंचते थे। यदि २०० फुट दूरी पर भी उन्हें देख लिया जाता तो कितना लाभ होता!

इस प्रकार की कितनी ही घटनायें थीं जिन्हों ने कि गत युद्ध में योद्धाओं को असमर्थ और असहाय बना दिया था। वैज्ञानिकों का बड़ा प्रयत्न था कि किसी प्रकार अंधकार में आंखों का सहारा छोड़ शत्रु को समय पर ही देख लिया जाय। इस ओर बड़े तजरुबे किये गये और अगस्त १९१८ में एक ऐसा यन्त्र ईजाद होगया जो कि मनुष्य को छठी इन्द्रिय का काम दे सके। परन्तु नवम्बर १९१८ में युद्ध समाप्त होगया और रण क्षेत्र में इस के प्रयोग का अवसर जाता रहा।

एक गोलाकार भीतर को झुके हुए चार इञ्च चौड़े शीशे के नीचे एक बड़ी २ मोटी दीवारों वाले छोटे से बक्स में चान्दी और बिसमथ Bismuth की बड़ी पतली दोहरी तार का कई गज़ का एक गुच्छा रक्खा जाता है। यह बक्स सब ओर से बन्द रहता है केवल ऊपर अथवा शीशे की ओर एक छिद्र होता है जिसका मुंह नमक के बड़े से कण से ढंपा रहता है। ज्यों ही कोई वस्तु शीशे के सामने से निकलती है। शीशा उस वस्तु से निकलने वाली गरमी की अदृश्य रश्मियों को अपने में सोख लेता है और नमक द्वारा-केवल नमक में से ही यह किरणें निकल सक्ती है—अन्य सब पदार्थ इन्हें राक लेते हैं नीचे रक्खे तार के गुच्छे में पहुंचा देता है। इससे गुच्छे में विद्युत का संचरण होने लगता है। और इस गुच्छे के साथ ही एक और यन्त्र का सम्बन्ध जुड़ा होता है जिसको गैलवेनो मीटर कहते हैं। ज्यों ही गुच्छे में विद्युत पैदा हुई कि गैल वेनोमीटर की सुई घूम जाती है। यह तजरुवा देखा गया है कि ६०० फुट की दूर पर से निकलते हुए आदमी के शरीर का ताप इस यन्त्र पर प्रभाव डालता है और इतनी या इस से कम दूरी पर कोई भी आदमी या वस्तु अन्धेरी से अन्धेरी रात में भी यन्त्र की सुई हिलाये बिना नहीं निकल सक्ती।

इस प्रकार बतलाई हुई समस्त असहायता को यह यन्त्र दूर करता है। परन्तु अब युद्ध समाप्त हो गया है। तो क्या अब यह यन्त्र निरर्थक है? ऐसा नहीं। वैज्ञानिक अब अन्य शान्तिमय कार्य्यों में इसका प्रयोग कर रहे हैं चोरों का पता बड़ी सुलभता से इससे लग सक्ता है। आग लगने का ज्ञान समय पर हो सक्ता है इत्यादि। —०—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार प्रवाह

विदेशी स्थिति।

१—आयरलैण्ड।

विलायती समाचार पत्र 'नेशन' के अनुसार आयरलैण्ड की स्थिति भयंकर ही है। यद्यपि शान्ति का प्रस्ताव किया जा रहा है तथापि वर्त्तमान अवस्था के रहते हुये शान्ति की कोई आशा नहीं। बृटिश सर्कार ने अपनी चाल तो कुछ बदली है पर उद्देश्य नहीं बदला। यतः जनरल टूडर को छुट्टी देने और जनरल मैकेडी की अपनी सेना को घुड़की देने कि अगर उन में से कोई भी आयरलैण्ड की प्रजा को लूटते या घात करते पकड़ा जायगा तो उसे गोली मार दी जावेगी—की खबर है किन्तु इस का लाभ कितना है यह तो इस एक बात से ही सिद्ध हो जाता है कि एक मिस्टर हार्ट ने एक लड़के को और एक व्यक्ति कैनन मैग्नर को सड़क पर मार डाला। जब मुक़दमा चला तो पहिले हार्ट को पागल कहा गया फिर उसे शराबी बतला कर ऐरिश ज्यूरी की बजाय अपने सैनिकों के द्वारा ही उस का फ़ैसला हुआ। फिर दूसरी बात यह कि दो ज़िलों के कप्तानों ने आज्ञादी है कि सिनफेन के नेताओं को फ़ौजी मोटरों में बैठा कर ले जाओ, और यदि ऐरिश लोग आक्रमण करें तो नेताओं को गोली मार दो। इतना ही नहीं डाब्लिन में पुलिसमैन को गोली मारी गई है और टिपरेरी तथा किलकेनी में छोटी २ लड़ाइयां हुई हैं जिन में दोनों पक्षों के बहुत लोग मरे हैं। मिस्टर लायड जार्ज जो सिनफेनों के साथ मेल का प्रबन्ध कर रहे थे वह निष्फल गया है, और रिपब्लिकन के दोनों विभागों में भेद डलाकर सिनफेनों को धर्म मन्दिरों की सहायता से पृथक करने का उद्योग भी कार्य्यकर्त्ता सैनिकों के अत्याचारों के कारण व्यर्थ हुआ है।

होमरूल बिल भी अल्स्टर यूनियनिस्ट की वृद्धि का हेतु बना है, क्योंकि अल्स्टर के छै शहरों को सारे आयरलैण्ड के बराबर के अधिकार दिये हैं। किन्तु अब जो इस बिल में संशोधन किया गया है वह और भी बुरा है; क्योंकि दक्षिणी आयरलैण्ड के लिये ६१ सभासदों की सेनेट बनाई गई है, जिस में १७ तो लार्ड लैफ्टिनैन्ट के चुने हुये हैं, १६ लार्ट सभा के पियर्स हैं, ८ प्रीवी कौंसल के सभासद हैं, ४ कैथोलिक और दो प्रोटेस्टेन्ट विशप हैं, और १४ कौन्टी कौंसिल के प्रतिनिधि हैं, इस प्रकार इस सिनेट में लार्ड और सर्कारी कर्मचारियों की ही भरमार है। अतः मिस्टर डेवलिनने इस का भारी विरोध किया है, क्योंकि दक्षिण आयरलैण्ड में जहां प्रोटेस्टेन्ट मतावलम्बियों की अल्प संख्या है उनके स्वार्थों की विशेष रक्षा का प्रबन्ध किया गया है, किन्तु उत्तरीय आयरलैण्ड में जहां कैथोलिक लोगों का अल्प पक्ष है वहां अल्प पक्ष के अधिकारों का कुछ ख़याल नहीं किया गया है।

गत सितम्बर में १० हज़ार कैथोलिक लोग नौकरी पेशे से हटा दिये गये थे और अपने घरों से दूर कर दिये गये थे, यद्यपि कोई

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नहीं कह सक्ता कि दक्षिणमें प्रोटेस्टेन्टों को कभी तंग किया गया था।

लेबर डेलीगेशन जो आयरलैण्ड की घटनाओं को दर्याफ्त करने के लिये बैठा था उसने अपनी आलोचना प्रकाशित कर दी है जिस से कार्क में आग लगाने का दोष जो सिनफेन को दिया गया था दूर होजाता है। क्रोक पार्क के हत्याकाण्ड में नौकरशाही का ही दोष प्रगट होता है और हत्या, पीड़ा चोरी, कठोरता और शाही फौज़ के दुर्व्यवहारों के दाहरण पर उदाहरण, और मदिरापान निर्दयता और फौजी लोगों के अपवित्र द्वन्द्व युद्धों के चित्र दृष्टिगोचर होते हैं। वर्त्तमान समय में किसी अन्य गवर्न्मेन्ट को इस प्रकार के दोषों से दूषित नहीं किया गया है। जनरल स्ट्रिकलैण्ड ने जो रिपोर्ट निकाली है उससे सिद्ध है कि कार्क में जो आग लगाई गई थी वह फौज का ही काम था।

इस के अतिरिक्त फ्रीमैन्स जर्नलके सम्पादक और मालिक को कोर्ट मार्शल लगा कर जो एक साल की सज़ा और ३५०० पौण्ड जुर्माना का दण्ड है वह बिल्कुल उद्दण्ड है। इन्हीं बातों को देखते हुये लेबर पार्टी की तरफ़ से शान्ति का प्रस्ताव तब तक सफली भूत न होगा जब तक गवर्न्मेन्ट इन अत्याचारों के रोकने के खास नियम नहीं बनाती अर्थात् झटपट फौज़ को निशस्त्र कर देवे। अत्याचारियों को वहां से दूर कर दे और मार्शल ला लगाने की हद बनादे। हमने मिस्टर लायड जार्ज की गवर्न्मेण्ट के विरोधियों का पक्ष दिखला दिया है। यह कहना कठिन है कि इस में कितनी सत्यता है और कितनी अत्युक्ति। किन्तु इतना अवश्य पता लगता है कि आयरलैण्ड शान्त होने में नहीं आता।

२—ग्रीस।

राजा कान्स्टैन्टाइन जिस को जर्मनी के साथ युक्त समझ कर हटा दिया गया था अब बड़े समारोह के साथ अपनी राजधानी में पधारा है और प्रजा की तरफ़ से उसे बड़ा स्वागत मिला है। उस ने राजनियम के पूरा पालन करने, मित्र राष्ट्रों से मित्रता रखने और वीर सरविया के साथ दृढ़ सम्बन्ध रखने की प्रतिज्ञा की है। और रुमैनिया के साथ सम्बन्ध दो राज-विवाहों के कारण निश्चित ही है। किन्तु मित्र राष्ट्रों ने अभी दर्बार को बहिष्कार करना ही सोचा है। जो जज, प्रोफ़ैसर और अफ़सर अपने अपने स्थान से हटा दिये गये थे उन्हें पुनः वापिस बुलाया जा रहा है और समय के प्रभाव से स्वतन्त्रप्रिय डिक्टेटर के अत्याचार से दुखित होकर व्यापारी संघ भी जनता के साथ स्वागत करने को तैयार हो गये हैं।

३—मिश्र।

मिश्र देश की जनता में सनसनी फैली हुई है वहां के बड़े २ लोगों ने अर्थात् व्यवस्थापक सभा के सदस्य, प्रान्तीय सभा के सदस्य, रईस, नेता, डाक्टर, नगराधीश, व्यापारी, विद्यार्थी, मज़दूर, किसान इत्यादिकों ने प्रोटेक्टोरेट अर्थात् बृटिश संरक्षा में मिश्र को रखने का विरोध किया है। वे कहते हैं कि मिश्र देश वासियों की इच्छा के विरुद्ध प्रोटेक्टोरेट को स्थापित करना आंगल-मिश्र-मित्रता को भंग करने वाला होगा, भविष्य में इन दोनों के बीच में जिस मेल की आशा है कि बृटिश अपने लाभों को सुरक्षित रखते हुये मिश्र की स्वाधीनता का आदर करेंगे—विघातक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

होगा। समग्र देश इस बात में सहमत है कि प्रोटेक्टोरेट को हटा दिया जावे।

४—जर्मनी।

विवैरिया की गवर्न्मेन्ट ने फौज को निशस्त्र कर देने से इन्कार किया है, उससे जर्मनी की फौज के निशस्त्र करने का प्रश्न बड़ा जटिल बन गया है। कहा जाता है कि जर्मनी, रूस, और हंगरी में पुनः राजाको राज्य पर स्थापित करने का षड़यन्त्र रचा गया था और ये तीनों मिल कर फ्रांस पर धावा करतीं। जर्मनी में यह षड़ यन्त्र विध्वंस हो चुका है, किन्तु विवैरिया में उसे कुछ सफलता हुई। उन्होंने हंगरी को अपनी तरफ मिला लिया। जर्मन सैनिकों को हंगरी में किसानों के वेश में लाना था कि उन्हें नई नीति के ढंग से परिचित किया जावे, पर यह बात रह गई। कहा जाता है कि इस में जर्मनी का दोष नहीं था वरन विवैरिया और हंगरी का, जिन से फ्रांस का विशेष प्रेम है। यदि सेना निशस्त्र करनी है तो इन दोनों देशों की ही करनी चाहिये बर्लिन तो केवल करुणा का पात्र है।

ड्यूक आफ़ कनाट का आगमन और उसका लाभ।

ड्यूक आफ़ कनाट के आगमन की बड़ी देरसे धूम मची हुई थी। क्या नौकरशाही क्या माडरेट पार्टी तथा जी हजूर गण सभी के हृदय में उद्वेग था। नौकरशाही उनका समारोह युक्त स्वागत करने की चेष्टा में थी। जी हुजूर गण और कई राय बहादुर, खां बहादुर इत्यादि ने केवल नौकरशाही की दृष्टि में सन्मानपात्र बनने के कारण जहांतक बना नौकरशाही के चरण चिन्हों पर चलने का प्रयत्न किया और हमारे माडरेट भाई भी इस आशा में भूल कर कि ड्यूक महाशय आकर बृटिश सर्कार की ओर से कोई ऐसी घोषणा करेंगे जो पीड़ित प्रजा के हृदय पर लेप का काम करेगी समारोह युक्त स्वागत के पक्षपाती हो रहे थे। किन्तु इन सब की आशाओं पर पानी पड़गया। जनता के साथ राजकर्मचारियों के व्यवहारों के कारण प्रजा की ओर से जो ड्यूक महाशय के आगमन के समारोहों का स्थान २ पर बहिष्कार किया गया है उसके छिपाने का उत्कट प्रयत्न होने पर भी ड्यूक महाशय ने ग़ौर कर लिया है यह उनकी दिल्ली में नई कौसिलों के उद्घाटन समय की वक्तृता में साफ़ कहा गया है। अतः ड्यूक महोदय को प्रजा के भावों का ज्ञान तो हो ही गया है और चूंकि वह बड़े उदार हृदय वाले हैं इस लिये वह महाराज तक भारत का संदेश पहुंचा ही देंगे। किन्तु ३०००००० रुपये का व्यय हो कर के हमारे देश वासियों को निश्चित रूप से क्या लाभ हुआ? कहीं से ध्वनि उठती थी कि ड्यूक आकर पंजाब के अत्याचारों के लिये प्रजा से बृटिश सर्कार की ओर से क्षमा मांगेंगे, कहीं से रौलट एक्ट के एक दम हटजाने की ध्वनि थी, कोई कहता था कि सब भांति की (Repressive Measures) दमन नीति का अन्त हो जायगा, राजनैतिक क़ैदी छूट जावेंगे इत्यादि २ पर कुछ भी न हुआ।

इतनी लम्बी तैयारी और इतने ढोल ढमके के बाद जो परिणाम निकला है उस से तो यही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कहा जाता है कि पहाड़ खोदा गया और निकला क्या चूहा! ——

गाज़ियाबाद में विरोध सभा।

दिल्ली से १५ मील की दूरी पर गाज़ियाबाद में डयूक महोदय के सम्राट जार्ज का सम्वाद सुना देने के पश्चात् सभा हुई जिस में १२ हज़ार की उपस्थिति थी। वहां पर हकीम अज़मल खां, डाक्टर अन्सारी तथा महाशय असफ़अलीने अपनी २ वक्तृताओं में डयूक महोदय की बातों की समालोचना की है। हकीम जी ने कहा कि यद्यपि डयूक महोदय ने दावा किया है कि एक सत्ता का भाव हटा दिया गया है और भारतीय शासन धमकी और कठोरता के नियमों पर निर्धारित नहीं है, तथापि भारतीयों को केवल इन प्रतिज्ञाओं से सन्तोष नहीं हो सक्ता। मीठे २ शब्द और मधुर प्रतिज्ञायें ही अब उन्हें सन्तुष्ट नहीं कर सक्तीं जिनका भूतकाल का अनुभव बड़ा कड़वा है। डाक्टर अन्सारी ने कहा कि भारत स्वराज्य ले लेने पर तुला हुआ है चाहे गवर्न्मेन्ट उस में कितनी ही बाधा डाले। किन्तु महाशय आसफ़ अली ने बड़ी युक्ति सङ्गत बात यह कही कि गाज़ियाबाद में इस सभा का होना ही इस बात का खण्डन कर देता है कि बृटिश शासन भय और कठोरता पर सर्वथा निर्धारित नहीं। डयूक महोदय की सबबातों में से अत्यन्त आश्चर्य युक्त बात सम्राट का सन्देश ही था जिस में कहा गया है कि भारतीय लोग कई पीढ़ियों से स्वराज्य का स्वप्न देखते थे, किन्तु आज उन के लिये स्वराज्य का प्रारम्भ हुआ है। इस पर वक्ता ने कहा कि शायद स्वराज्य का प्रारम्भ इस में होगा कि आंगल भाषा में 'स्वराज्य' शब्द ले लिया गया है, इस से अधिक तो कुछ दीख नहीं पड़ता। इन सब बातों से पता लगता है कि वायु का रुख़ किस तरफ़ है और "स्वराज्य" किन अपशगुनों के साथ शुरू हुआ है।

——

डायर का दान।

जनरल डायर ने यह सूचना निकाली है कि अमृतसर में हत्या-काण्ड से पीड़ित भारतीयों को सहायता के हेतु उन्हें अब जो कुछ लण्डन में ईरान के विषय में व्याख्यान देने से आय होगी वह देंगे। मालूम होता है कि अपने पाप का प्रायश्चित्त करने के लिए वह यह करना चाहते हैं। अस्तु जो कुछ हो, किन्तु वर्त्तमान देश की स्थिति के रहते हुए पापी डायर से धन लेना भारत को कलुषित करना है। शास्त्रों में कई घरों का अन्न लेना पाप कहा गया है जिन में नास्तिक, अधर्मी इत्यादि हैं। डायर ने जो पाप किया है उस का प्रायश्चित्त धन से नहीं हो सक्ता। उस के लिए तो अन्य ही कोई प्रायश्चित्त चाहिये।

इन पंक्तियों के लिखने के पश्चात् समाचार आया है कि डायर ने अपना विचार बदल लिया है। चलो छुट्टी हुई।

——

मन्त्रियों का वेतन।

नई कौंसिलों की स्थापना हो चुकी है किन्तु उनके अनुसार जो मन्त्री गण हुए हैं उनके वेतन के घटाने का निश्चय करना है। यदि सब मन्त्रियों के वेतन एकज़ैक्टिव कौंसल के सदस्यों के वेतन के अनुकूल ही रक्खे जावें तो निर्धन भारत कहांतक देसकेगा। और कांग्रेस तो प्रारम्भ से ही खर्च घटाने के पक्ष में है यह एक प्रश्न है। दूसरी तरफ़ नये मन्त्रिगण एक-ज़ैक्टिव कौंसिल के सदस्यों से योग्यता और प्रतिष्ठा में घटकर नहीं तो वह क्यों कम वेतन

CC-0. Gurukul Kangri University, Haridwar. Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

लेवें, यदि नये मन्त्रियों का वेतन घटाना है तो एक ज़ैक्टिव कौंसिल के मेम्बरों की तनखाह भी घटनी चाहिये। किन्तु मिस्टर मान्टेग्यू ने अभी कुछ ही महीने पहिले इम्पीरिल सर्विस के विविध विभागों में इस प्रकार निम्न लिखित सूची के अनुसार वेतन वृद्धि की सूचना हाउस आफ़ कामन्स में की है:—

आई० सी० यस	३६००००	पौण्ड
इण्डियन पुलीस सर्विस	१३००००	पौण्ड
इण्डियन शिक्षा विभाग	१०००००	,,
इण्डियन सेनाके अंग्रेज़ी अफ़सर और गोरी-भारतीय सेनाके अफ़सरों की तनख़ाह	१७०००००	,,
इण्डियन मेडिकल सर्विस	२५००००	,,
कुल	२,५४०,०००	,,

इस सूची के अनुकूल उच्च पदाधिकारी सर्कारी नौकरों की--जिन में बहुत से अंग्रेज़ हैं-तनखाह घटाने का तो प्रश्न ही दूर होजाता है। अब नेय मन्त्रियों का क्या कर्तव्य होना चाहिये? क्या वह लोग भी इतनी क़ीमती शासन प्रणाली का समर्थन करते हुए बड़ी २ तनख़ाहों को लेने का यत्न करें अथवा त्याग भाव दिखलाकर केवल गुज़ोर लायक तनखाहों को ही नियत करें? हमारी समय में जो ऊंचे शासन के कार्य्यों पर नियुक्त हैं वह अपने ब्राह्मणत्व के कर्म के अनुसार थोड़ी २ तनख़ाह रक्खें और उनका मूल्य धन द्वारा निश्चित न करके योग्यता पर करें। तो एक तो अयोग्य पुरुष जो धन के लोभ से ही मन्त्री बन ने को उद्यत हैं वह आगे न होंगे, दूसरे जो योग्य पुरुष कार्य्य क्षेत्र में आयेंगे उनकी योग्यता की परख भी हो सकेगी और शासन का भार भी कम क़ीमती हो जावेगा।

पंडित रामगोपालशास्त्री का लेख

ज्योति के पाठकों के सन्मुख इसी अंक में पण्डित रामगोपाल शास्त्री रिसर्च स्कालर का एक विद्वत्ता पूर्ण और बड़े परिश्रम और आलोचना के पश्चात् लिखागया लेख "यम सूक्तों की एक गाथा का निरुपण" नामक प्रकाशित किया गया है। लेख अभी सम्पूर्ण नहीं है अन्य अंकों में चलता रहेगा। किन्तु लेखक महाशय का अनुरोध है कि जो विद्वान् पण्डित इस पर वाद विवाद करना चाहें उन्हें स्वच्छन्दता है।

वैदिक सिद्धान्तों का स्पष्टी करण ज्योति का एक उद्देश्य है, अतः जो महाशय इस पर विद्वता पूर्ण आलोचना सभ्यता और विनय पूर्वक करना चाहें उन्हें ज्योति में प्रकाशित करने का अधिकार होगा।

पण्डित श्रीपाद दामोदर सातवलेकर जी पण्डित भगवद्दत्त जी बी० ए० तथा पण्डित रामगोपाल शास्त्री इत्यादि कई वैदिक सिद्धांत प्रेमी वैदिक सिद्धान्तों की व्याख्या करने में लगे हुए हैं उन्हें उत्तेजना देना आर्य्यसमाज का कर्तव्य है। आशा है कि वेद के विद्वान् इस पर अपनी २ सम्मति प्रदान करके कृतार्थ करेंगे।

वकीलों के लिये जीवित उदाहरण

महाशय चितरंजनदास का त्याग।

बड़े हर्ष का विषय है कि जब से महाशय दास नागपुर कांग्रेस से लौटकर आये हैं तब से दिलो जान से असहयोग अन्दोलन में लग गये हैं। और कांग्रेस प्रस्ताव की आज्ञा का अनुसरण करते हुये उन्होंने अपनी बड़ी समृद्ध-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शालिनी वकालत छोड़दी है। डुमरांव के मुक़दमें में जो कि चार पांच महीने तक रहा था उन्हें ४५ हज़ार रुपये प्रतिमास आय थी। इसी से हम उनकी आय का अनुमान कर सके हैं। अतः अपनी युवावस्था में उन्होंने जो त्याग दर्शाया है वह वकीलों के इतिहास में अनुपमेय है। परन्तु यह स्मर्ण रहे कि इतनी बड़ी आमदनी रखते हुए भी महाशय दास ने कोई सम्पत्ति नहीं बनाई है, जिससे अब अपना निर्वाह कर सकें। क्योंकि उनकी आयका बड़ा भाग दान में और जनता के हितैषी कार्य्यों में व्यय होता रहा है। "विभवे दान शक्तिश्च नाल्पस्य तपसः फलम्" धन होने पर भी त्याग का होना बड़े भारी तप का फल कहा गया है, अतः यह अत्युक्ति नहीं कि महाशय दास राजनैतिक सन्यासी बन गये हैं।

कलकत्ता कांग्रेस के बाद से बंगाल में असहयोगी योग्य तथा प्रभावशाली नेताकी परम आवश्यक्ता थी उसको महाशय दास ने पूरी करदी है। जब से नागपुर से लौटे हैं तब से दिन व रात वह कालेज और स्कूल के विद्यार्थियों पर असहयोग पर ओजस्विनी वक्तृताओं द्वारा बड़ा प्रभाव डाल रहे हैं, और आज देशमें जो चारों तरफ विद्यार्थियों में जोश भर रहा है यह उनके ही उत्कट परिश्रम का फल है।

परमात्मा करे प्रान्त २ के वकील महाशय दास बन कर जाति के उत्थान में शीघ्र भाग लेने वाले बनें। हम महाशय दास को उनके इस शुभ और पुण्यशाली जीवन के लिये हार्दिक बधाई देते हैं॥

पँजाब केशरी जाग उठे।

नागपुर कांग्रेस से पूर्व लाला लाजपतराय जी की असहयोग के-विशेषतया विद्यार्थियों के सर्कारी अथवा अर्ध सर्कारी कालेज स्कूलों के त्याग करने के विषय में-चाहे जो कुछ सम्मति थी किन्तु नागपुर से लौट कर आते ही उन में न जाने कहां का बल और पुरुषार्थ भर गया कि अहिंसात्मक असहयोग के सुदर्शन चक्र को हाथ में लेकर उन्हों ने असहयोग के कट्टर विरोधियों के भी छक्के छुड़ाये हैं, और पंजाब के सब कालेजों के गढ़ हिला दिये हैं। यहां तक कि उन की जय ध्वनि गवर्न्मेन्ट कालेज में भी निश्शंक होकर गूँज गई है।

परन्तु एक कालेज है जिस के साथ उनका विशेष सम्बन्ध रहा है और वह डी० ए० वी कालेज लाहौर है। उस के सम्बन्ध में उन्होंने यह निश्चय कर लिया है कि या तो उसे जातीय बना डालेंगे नहीं तो उसे जीती जागती संस्था न रहने देंगे। यद्यपि इस संस्था के साथ उन का बड़ा प्रेम है और उन्होंने इस के निर्माण में कभी बड़ा भारी भाग लिया था, किन्तु दुर्भाग्य वश उन्हें आज इस चिर पालित पोषित संस्था के विपरीत कार्य्य करना पड़ा है, यह उन्हें बड़ा दुःख है। अपने मोह को दमन करके देश रक्षा के हेतु इस कालेज के जीवन मरण का विचार न करते हुये आपने जो उदार भाव दिखलाये हैं वह सर्वथा उचित हैं। परन्तु यह स्मरण रहे कि लाला जी केवल असहयोग के नाशक-अंश पर ही बल नहीं दे रहे हैं, बरन निर्माणकारक अंशों की ओर भी यथाशक्ति उद्योग कर रहे हैं। कहा जाता है कि जब से आप प्रान्तिक कांग्रेस उपसभा के प्रधान बने हैं तब से प्रतिदिन उपसभा के अधिवेशन करते रहते हैं और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विद्यार्थियों तथा साधारण जनता में विचार परिवर्तन करते हैं। इतना ही नहीं वरन जो विद्यार्थी कालेज त्याग कर रहे हैं उन्हें रहने का स्थान, जीवन निर्वाह के विधान तथा कार्य्य विभाग बता कर उन की उपयोगिता को बढ़ाने का भी यत्न कर रहे हैं।

बड़े आल्हाद का विषय है कि म० दास के नेतृत्व में बंगाल के क्षात्रों ने पग बढ़ाया ही था कि पंजाब केसरी जाग उठे और पंजाब को भी साथ कर दिया। अब देखें अन्य प्रान्त-विशेषतया पिछड़ा हुआ संयुक्तप्रान्त-कब जागते हैं।

तिलक स्वराज्य फण्ड।

नागपुर कांग्रेस ने यह फैसला किया था कि स्वराज्य आन्दोलन में बहुत से लोगों को लगाने तथा स्वराज्य का प्रचार जनता में फैलाने के लिये एक जातीय फण्ड बनाया जावे जिसका नाम तिलक स्वराज्य फण्ड हो। पंजाब में लाला लाजपतराय के नेतृत्व में शहर २ में और ग्राम ग्राम में बल पूर्वक काम होरहा है और हज़ारों रुपये इकट्ठे हो चुके हैं हमें आशा है कि शीघ्र ही कम से एक लाख रुपये हो जावेंगे।

प्रत्येक देशभक्त नर व नारी को इस शुभ कार्य्य में दिल खोल कर सहायता देनी चाहिये।

करेंसी नोटों जैसी १), ५), और १०) की बड़ी सुन्दर रसीदें छपवाई गई हैं। इन रसीदों में केवल एक ही दोष है कि "तिलक स्वराज्य फण्ड" केवल उर्दूमें ही छपा हुवा है और प्रधान महाशय के हस्ताक्षर अंग्रेज़ी में हैं। यदि यही रसीदें आर्य्यभाषा और गुरुमुखी में छपवायी जावे तो स्त्रियों और रोहतक आदि प्रान्तों के जाटों में इनका अधिक प्रचार हो सक्ता है॥

भारत का विदेशी व्यापार।

पदार्थ	आयात या आमद।	निर्यात या रफ्तनी।
१. खाने पीने के पदार्थ।	रुपये	रुपये
मछलियां	१५,१६,५६७	४५,०९,६८७
फल, शाक	९३,१६,५०९	५९,७४,१९०
नाज, दाल तथा आटा	१,१२,३५,४४५	४०,०६,५५,७५१
मादक द्रव्य	२,८८,७०,०५६	४,८८३
तेल इत्यादि	१९३८११,११७	६१८०३९१
मसाला	२४०९२ ७२	१०९२४०८२
चीनी	१५६१३६४१५	४८४८६७३
चाय	८८९०९०५	१७७७४६०६२
अन्य पदार्थ	२४००९१३२	१२१३२२६४
तम्बाकू	२१४६१०४८	९६२७३७३
योग	३०४९०९३६६	६३२५१३३७३

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२. कच्चा माल।		
कोयला तथा पेटेन्ट इन्धय	२३५४०१३	१५६३१११४
गोंद, सेरस, चपड़ी आदि	२४६०३२०	३०७३८३६९
कच्चा चमड़ा	१२८९७८२	९३४२६४०२
अशुद्ध धातु	३१६२०४	२५५६७१९०
तेल	३७१८७५८८	३५१३२२२०
बीज	१२५४६८८९	११२१८३५४७
चर्बी मोम इत्यादि	१५४३५४२	७७९९४३
कपड़े बनाने का सामान	२६४१३९०८	५१२८९९८७१
लकड़ी तथा तख्ते	६९२१२५१	६५७२१७३
फुटकर	८३५७७५२	४६१६९५४९
योग	९९३९०६५३	८६५०३२३७८
३. तैयार माल।		
कपड़ा	२१५५३०५३	१६७९६८५
हथियार तथा फौजी सामान	३८५८९६४	१३३०
मोटर गाड़ी वाइसिकल	६८७८६४१	५७१५२
औषधि	४२१९१७२६	४५९७११४७
औज़ार कैंची चाकू आदि	५८६०६६१२	३२१६७६
रंग	२९०८०३२६	२०६०२१५२
लकड़ी का सामान	४४६२२७८	७८७६६४
कांच तथा चीनी का सामान	१८००८७६१	८७३१९
साफ किया हुआ चमड़ा	३९५५४४८	९६९९१३८७
मशीन कल पुर्जे आदि	५८५८४४८३	१२८८०२
लोहा तथा उसका सामान	२४२१९५८६	१३०९११८
अन्य धातु तथा उनका सामान	३६०२२७२७	४६८५८८४
कागज पुट्ठा कलम आदि	३४२०१२८१	३८५९०४
रेलका सामान	१०४३४८७९	२५५४३६
सूत धागा	६८२४२०५४०	६७०३६९१३४
फुटकर	९७८८७२६५	३९१७९८१२
योग	१२३२४८६५७०	८७४८१३६०२
४. अन्य विविध पदार्थ	५३५४४०२१	२०६०३३८२
योग	१६९०३३०६१०	२३९२९६२७१८

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारे पाठक इस तालिका को पढ़ और इस पर विचार करें।

वनिता विनोद

स्त्री उपयोगी स्त्रियों द्वारालिखित लेखों का संग्रह।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१—स्त्री जगत	६२८	४—धर्म्म-(ले० श्री० विद्यावती पत्नी बा०वद्रीप्रसाद वकील अम्बाला)	६३५
२—कला कौशल्य-(ले० श्रीमती ओ३म्वती देवी)	६२९	५—सुधार का मूल्य-पारिवारिक जीवन-(ले० श्रीमती मनोकामना देवी)	६३८
३—वर्तमान शिक्षा प्रणाली का देश तथा जाति पर प्रभाव-(ले० श्री करतार देवी जी)	६३३		

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री जगत् ।

कलकत्ता महिला समाज का दान महात्मा गांधी को ।

गत जनवरी २९ को महात्मा गान्धी ने कलकत्ते में कई हज़ार मारवाड़ी स्त्रियों को उपदेश देते हुए कहा कि मैं तुम से तीन बातें कहता हूं एक तो भारत-माता, दूसरी चर्खा और तीसरी ज़ेवर से सम्बन्ध रखती है। वर्त्तमान राज्य रावण का राज्य है, अतः मैं राम राज्य लाना चाहता हूं। और यह तभी हो सक्ता है जब कि तुम लोग विदेश की बनी हुई वस्तुओं को बर्तना छोड़ो, अपने मन को ज़ेवरों की ओर से हटा कर देश सेवा में लगाओ, और अपने बच्चों तथा सम्बन्धियों को सर्कारी संस्थाओं से सम्बन्ध न रखने दो तथा अपने देश के बने मोटे कपड़े पहिनो, सादा खाना खाओ, अपने देश बहिनों तथा भाइयों के दुःख में दुःखी होवो और भारत-माता के निरादर में अपना निरादर समझो। जब तक तुम पराधीन जाति रहोगी तुम्हारे दुःख कभी दूर न होंगे। तुम तभी सुखी होगी जब तुम्हारा देश स्वाधीन होगा। इस लिए अधिक चर्खे का प्रचार हो सकने के लिए अपने आभूषणों का दान दो।

इन शब्दों के बाद महात्मा जी ने अपनी झोली फैलाई तो देवियां अपने २ ज़ेवर उतारने लग पड़ीं, यहां तक कि थोड़ी सी देर में महात्मा जी की झोली सोने व चांदी के ज़ेवरों तथा रुपयों से भर गई। तीन हज़ार पांच सौ नगद तथा पन्द्रह हज़ार के ज़ेवर उसी स्थान पर इकट्ठा किये गये।

इस के अतिरिक्त महाशय निर्मल चन्द्र जी के घर पर एक स्त्रियों की सभा हुई जिस में महात्मा गान्धी ने उन्हें पञ्जाब की दुर्घटना के दिनों में पर्दानशीन स्त्रियों पर जो अत्याचार हुए थे उन की याद दिला कर कहा कि वर्त्तमान शिक्षा ने तुम्हारे मान तथा विवेक का नाश कर दिया है। तुम्हें मन वचन कर्म में पवित्रता रखनी चाहिये, और अपने देश के लिए उपयोगी बनना चाहिये। सब चीज़ें स्वदेशी वर्तो, स्वदेशी व्यवहार रक्खो और चर्खा कात कर चर्खे का प्रचार करो। इस के बाद उन्हों ने अपने कार्य्य में सहायता मांगी जिस के उत्तर में देवियों ने पांच हज़ार के ज़ेवर और ५ सौ नगद दान दिये।

अन्य प्रांतों की स्त्रियों को इस का अनुकरण करना चाहिए।

—:○:—

सावित्री भवन ।

माननीय लाला देवराज जी सूचना देते हैं कि स्वर्गवासिनी देवी सावित्री की यादगारी में महाविद्यालय जालन्धर में सावित्री भवन निर्माण हो रहा है, जिस के लिये लग भग तीस हज़ार रुपए की आवश्यक्ता है, और यह भवन विद्यालय की वार्षिकोत्सव (२६-२७ मार्च) तक समाप्त हो जाना चाहिये। इस द्रव्य के एकत्र करने के लिये महाविद्यालय से कई देवियां निकली हुई भी हैं, किन्तु विद्यालय की भूतपूर्व छात्रायें यदि ध्यान दें तो सफलता शीघ्र हो सक्ती है। देवी सावित्री के गुणों और शील स्वभाव से समस्त पञ्जाब प्रायः परिचित होगा अतः उस की स्मृति को स्थायी बनाने के लिए जनता को इस तरफ़ अवश्य ध्यान देना चाहिये।

—○*○—

वेथुन कालिज में हड़ताल ।

छात्रों के अपने स्कूल व कालिजों से असहयोग के विषय में हम नित्य नई ख़बरें सुनते रहते हैं किन्तु हमें यह जान कर प्रसन्नता हुई है कि वेथुन कालेज कलकत्ता की देवियों ने भी हड़ताल की है। कहा जाता है कि प्रिंसिपल ने महात्मा गांधी के लिये अनुचित शब्द प्रयोग किये और एक देवी को अन्दर ले जाकर धमकाया उस पर उस ने सब देवियों पर बात प्रगट कर दी और सब ने मिलकर हड़ताल कर दी।

—:○°○:—

अमृतसर में एक देवी ने सर्कारी स्कूल की अध्यापिका पद से त्याग पत्र दे दिया है।

——:०:——

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation, USA

कला कौशल्य

सूचना ।

ज्योति के गत अंक में प्रकाशित किया गया था कि कला कौशल्य के घोड़ा बग्घी जाल तक के नमूने बना कर जो भेजेंगी उनमें से जो प्रथम और द्वितीय होंगी उनको पारितोषिक दिया जायगा। इस सूचना पर जिन देवियों ने हमें चीज़ें भेजी हैं या जिन्होंने लिखा है कि उन्होंने अमुक २ वस्तुयें बनाई हैं उनके नाम हम नीचे प्रकाशित करते हैं।

१. श्रीमती लीलावतीदेवी स्यालकोट ने पांचों चीज़ें बना कर भेजी हैं अतः उन्हें ३) प्रथम पारितोषिक दिया गया है।

२. श्रीमती श्यामप्यारीदेवी कौंच (उरई) यू. पी. ने भी पांचों चीजें बना कर भेजी हैं उन्हें द्वितीय पारितोषिक दिया गया है २)

(चूंकि कई चीजों में सफ़ाई नहीं आई है अतः इनाम की मात्रा घटादी गई है)।

३. श्रीमती कुमारी रजिन्द्रा अम्बाला ने क्रोशिये की चीज़ें बना कर भेजी हैं जो बहुत साफ़ हैं अतः उन्हें भी १) पारितोषिक दिया गया है इनके अतिरिक्त हमें सूचना मिली है कि:—

श्रीमती कुमारी सुभद्रादेवी लायलपुर।
,, ,, सत्यवतीदेवी बडला।
,, ,, कृष्णदेवी बडला।
,, ,, लीलावती लाहौर ।
,, ,, सुमंगलीदेवी लाहौर।

इन देवियों नें भी कोई २ नमूने उतारने का कष्ट उठाया है।

हमें हर्ष है कि हमारा परिश्रम बिल्कुल निष्फल नहीं गया, यद्यपि हमारी आशा के अनुकूल देवियों की संख्या नहीं निकली जिन्हों ने इससे लाभ उठाया। हमने जो पारितोषिक

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

निकाला है वह इस लिये नहीं कि देवियों को दो चार रुपये का लोभ है, वरन उनके गुणों की परीक्षा के लिये और उन्हें उत्साहित करने के लिये। अतः हमें पूर्ण आशा है कि आगे को देवियां अधिक संख्या में यत्न करेंगी। नये वर्ष का पारितोषिक किसी वस्तु के रूप में दिया जायगा, और यह प्रयत्न किया जा रहा है कि बच्चों के लिये उपयोगी तथा अपने प्रति दिन के परिधान की वस्तुओं की सचित्र विधि दी जावे, जिससे बहुत देवियां लाभ उठा सकें। आशा है कि देवियां अब अधिक ध्यान से इस हिस्से को देखेंगी॥

सम्पादिका।

मक्खी के जाल का ब्लाउज़।

(जालदार ऊनी ब्लाज़)

आवश्यक वस्तुएं—यदि महीन ऊन हो तो पाव भर एक रंग का यदि मोटा हो तो आध सेर के क़रीब किसी रंग का ले लो एक जोड़ा हड्डी की सफ़ेद ९ नं० की सलाइयां और एक जोड़ा लोहे की १२ नं० की।

संकेत—सीधा बीनना "सी", उल्टा बिनना "उ", दो इकट्ठे बीनना "दो", सादा बिना बीने उतारना "सादा", बीच में से उठा कर बीन लेना "बनाना"

इसका नमूना जिस प्रकार शहद की मक्खी का जाल हो उसी भांति खानेदार जाल होता है अतः जहां कहीं बताना होगा जाल बनाना कह कर बतावेंगे। बड़ी चीज़ बनाने के पहिले छोटा सा बिनावट का नमूना बना कर देख लेना चाहिये जिससे ग़लती न हो और बिनावट समझ में आजाय। जाल ढीले हाथ से बनाना चाहिये कसने से ख़ूबसूरती एकसी नहीं रहती।

नमूना—कुछ फ़न्दे हड्डी की सलाई पर चढ़ालो।

१ पंक्ति—१ सादा *१ बनाना, १ सादा, दो इकट्ठे *इस चिन्ह से अन्त तक बीनो उसी प्रकार अन्तिम फ़न्दा १ सीधा।

२ पंक्ति—१ सादा *२ सी, बनाया हुवा फ़न्दा दूसरी सलाई पर उतार लो और इस* चिन्ह से अन्त तक इसी प्रकार करो।

३ पंक्ति—१ सादा, * दो इकट्ठे, १ बनना, १ सादा, इस* चिन्ह से अन्त तक बीनो उसी प्रकार अन्तिम १ सीधा।

४ पंक्ति—१ सादा, १ सी, * बनाये हुवे पहिली पंक्ति के फ़न्दे को दूसरी सलाई पर उतार लो, २ सी, इस* चिन्ह से अन्त तक बीनो।

यह नमूना सब कहीं होगा इसे पहिले मश्क करलो अब ब्लाउज़ को देखो।

आगा पीछा—१२ नं० की लोहे की सलाइयों से १९९ फ़न्दे चढ़ाओ और पहिली ३ पंक्ति सीधी बीनो। फिर मोटी सलाई लगाना।

४ पंक्ति—१ सादा, १ सी, ३ उल्टा, ४ सी, २ उल्टा, ७८ सी, २ उ, ४ सी, २ उ, ४ सी, २ उ, ४ सी, २ उ, ७८ सी, २ उ, ४ सी, २ उ, ४ सी।

५ पंक्ति—१ सादा, ३ उ, २ सी, ४ उ, २ सी, ७८ उल्टा, २ सी, ४ उ, २ सी, ४ उ, २ सी, ४ उ, २ सी, ७८ उ, २ सी, ४ उ, ३ सी, १ उ, १ सी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized By S3 Foundation USA

६ पंक्ति—जैसी ४ थी पंक्ति।

७ पंक्ति—१ सादा, ३ उ, २ सी, ४ उ, २ सी, * १ बनाना, १ सादा, दो इकट्ठे, इस* चिन्ह से २५ बार बनाओ, २ सी, ४ उ, २ सी, ४ उ, २ सी ४ उ, २ सी, * १ बनाना, १ सादा, २ इकट्ठे, इस* चिन्ह से २५ बार बनाओ, २ सी, ४ उ, ३ सी, १ उ, १ सी।

८ पंक्ति—२ सी, ३ उ, ४ सी, २ उ * २ सी बनाये हुए फ़न्दे को उतारलो इस * चिन्ह से २५ बार बनाओ, २ उ, ४ सी, २ उ, ४ सी, २ उ, ४ सी, २ उ, * २ सी, बनाये हुए फ़न्देको उतारलो, इस * चिन्ह से २५ बार बनाओ, २ उ, ४ सी, २ उ, ४ सी।

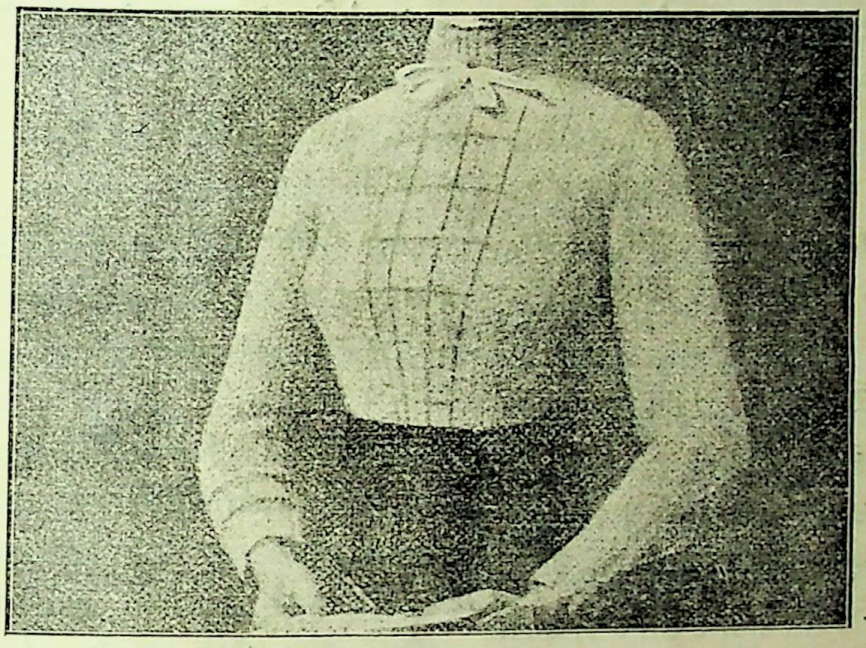

९ पंक्ति—१ सादा, ३ उ, २ सी, ४ उ, २ सी, * दो इकट्ठे, १ बनाना १ सादा, इस * चिन्ह से २५ बार बनाओ, २ सी, ४ उ, २ सी, ४ उ, २ सी, ४ उ, २ सी, * दो इकठे, १ बनाओ, १ सादा, इस * चिन्ह से २५ बार बनाओ, २सी, ४ उ, ३ सी, १ उ, १ सी।

१० पंक्ति—२ सी, ३ उ, ४ सी, २ उ, १ सी, * १ सादा, २ सी, इस * चिन्ह से २४ बार बनाओ, १ सादा, १ सी, २ उ, ४ सी, २ उ, ४ सी, २ उ, १ सी, * १ सादा, २ सी, इस * चिन्ह से २३ बार बनाओ, १ सादा, १ सी, २ उ, ४ सी, २ उ, ४ सी,।

इसी प्रकार ७ वीं, ८ वीं, ९ वीं और १० वीं पंक्तियों को सिलसिले वार तीन वार बनाओ, यानी १२ पंक्ति और बीनो सब २२ हो जांय। यही ममाखी के जाल की बिनावट विस्तृत रूप से है और आगे के बीच की धारियां भी साथ २ डल जाती हैं। जाल वाली बिनावट में कुछ घटाव बढ़ाव नहीं होता जब तक कि बांह का स्थान न आजाय। आगे से जहां जाल होगा वहां अलग गिन्ती न लिखकर "जाल बनाओ" लिखेगें।

२३ पंक्ति—७ वीं की तरह।

२४ पंक्ति—८ वीं की तरह।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

२५ पंक्ति–१२ सी, ७८ जालवीनो, २० सी ७८ जाल, ११ सी।

२६ पंक्ति–११ उ, ७८ जाल, २० उ, ७८ जाल, १२ उ।

२७ पंक्ति–२५ वीं की तरह।

२८ पंक्ति–११ सी, ७८ जाल, २० सी, ७८ जाल, १२ सी।

२९ पंक्ति–१ सादा, ३ उ, १ सी, १ बढ़ाओ, १ सी, ४ उ, १ सी, १ बढ़ाओ, १ सी, ७८ जाल, १ सी, १ बढ़ाओ, १ सी, ४ उ, १ सी, बढ़ाओ, १ सी, ४ उ, १ सी, १ बढ़ाओ, १ सी, ४ उ, १ सी, १ बढ़ाओ, १ सी, ७८ जाल, १ सी, १ बढ़ाओ, १ सी, ४ उ, १ सी, १ बढ़ाओ, २ सी, १ उ, १ सी।

३० पंक्ति–२ सी, ४ उ, ४ सी, ३ उ, ७८ जाल, ३ उ, ४ सी, ३ उ, ४ सी, ३ उ, ४ सी, ३ उ, ७८ जाल, ३ उ, ४ सी, ३ उ, ४ सी।

३१ पंक्ति–१ सादा, ३ उ, ३ सी, ४ उ, ३ सी, ७८ जाल, ३ सी, ४ उ, ३ सी, ४ उ, ३ सी ४ उ, ३ सी, ७८ जाल, ३ सी, ४ उ, ४ सी, १ उ, १ सी।

इसके बाद ३० वीं व ३१ वीं पंक्ति को ८ बार बनाओ तो ४८ पंक्ति हो जांयगी।

४८ पंक्ति–१३ सी, ७८ जाल, २४ सी, ७८ जाल, १४ सी।

४९ पंक्ति–१४ सी, ७८ जाल २४ सी, ७८ जाल, १३ सी।

५० पंक्ति–१३ उ, ७८ जाल, २४ उ, ७८ जाल, १४ उ।

५१ पंक्ति–१४ सी, ७८ जाल, २४ सी, ७८ जाल, १३ सी।

५२ पंक्ति–१३ सी, ७८ जाल, २४ सी, ७८ जाल, १४ सी।

५३ पंक्ति–१ सादा, ३ उ, ३ सी, २ उ, १ बढ़ाओ, २ उ, ३ सी, ७८ जाल, * ३ सी, २ उ, १ बढ़ाओ, २ उ, इस * चिन्ह से दो वार बनाओ, ३ सी, ७८ जाल, ३ सी २ उ, १ बढ़ाओ, २ उ, ४ सी, १ उ, १ सी।

५४ पंक्ति–१ सादा, १ सी, ४ उ, ५ सी, ३ उ, ७८ जाल, ३ उ, ५ सी, ३ उ, ५ सी, ३ उ, ५ सी, ३ उ, ७८ जाल, ३ उ, ५ सी, ३ उ, ४ सी।

५५ पंक्ति–१ सादा, ३ उ, ३ सी, ५ उ, ३ सी, ७८ जाल, ३ सी, ५ उ, ३ सी, ५ उ, ३ सी, ५ उ, ३ सी, ७८ जाल, ३ सी, ५ उ, ४ सी, १ उ, १ सी।

इसके बाद ५४ वीं, और ५५ वीं पंक्ति को आठ बार बनाओ यानी, ७१ पंक्ति तक बन जायगा।

७२ पंक्ति–१४ सी, ७८ जाल, २७ सी, ७८ जाल, १५ सी।

७३ पंक्ति–१५ सी, ७८ जाल, २७ सी, ७८ जाल, १४ सी।

७४ पंक्ति–१४ उ, ७८ जाल, २७ उ, ७८ जाल १५ उ।

७५ पंक्ति–१५ सी, ७८ जाल, २७ सी, ७८ जाल, १४ सी।

७६ पंक्ति–१४ सी, ७८ जाल, २७ सी, ७८ जाल, १५ सी।

७७ पंक्ति–१ सादा, ३ उ, २ सी, १ बढ़ाओ, १ सी, २ उ, १ बढ़ाओ, ३ उ, २ सी, १ बढ़ाओ, १ सी, ७८ जाल * २ सी, १ बढ़ाओ, १ सी, ३ उ,

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation, USA.

१ बढ़ाओ ३उ, इस * चिन्ह से दो बार बीनों, १ सी, १ बढ़ाओ, २ सी, ७८ जाल, २ सी, १ बढ़ाओ, १ सी, २ उ, १ बढ़ाओ, ३ उ, ४ सी, १ उ, १ सी।

७८ पंक्ति--१ सादा, १ सी, ४ उ, ६ सी, ४ उ, ७८ जाल, ४ उ, ६ सी, ४ उ, ६ सी, ४ उ, ६ सी, ४ उ, ७८ जाल, ४ उ, ४ सी।

७९ पंक्ति--१ सादा, ३ उ, ४ सी, ६ उ, ४ सी, ७८ जाल, ४ सी, ६ उ, ४ सी, ६ उ, ४ सी, ६ उ, ४ सी, ७८ जाल, ४ सी, ६ उ, ४ सी, १ उ, १ सी।

इसके बाद ७८ वीं और ७९ वीं पंक्ति आठ बार क्रम से बनाओ यानी ९५ पंक्ति हो जांय।

९६ पंक्ति--१६ सी, ७८ जाल, ३४ सी, ७८ जाल, १८ सी।

९७ पंक्ति--१८ सी, ७८ जाल, ३४ सी, ७८ जाल, १६ सी।

९८ पंक्ति--१६ उ, ७८ जाल, ३४ उ, ७८ जाल, १८ उ।

९९ पंक्ति--१८ सी, ७८ जाल, ३४ सी, ७८ जाल, १६ सी।

१०० पंक्ति--१६ सी, ७८ जाल, ३४ सी, ७८ जाल, १८ सी।

१०१ पंक्ति--१ सादा, ३ उ, ४ सी, ३ उ, १ बढ़ाओ, ३ उ, २ सी, १ बढ़ाओ, २ सी, ७८ जाल,* २ सी, १ बढ़ाओ, २ सी, ३ उ, १ बढ़ाओ, ३ उ, इस * चिन्ह से दो बार, २ सी, १ बढ़ाओ, २ सी, ७८ जाल, २ सी, १ बढ़ाओ, २ सी, ३ उ, १ बढ़ाओ, ३ उ, ४ सी, १ उ, १ सी।

१०२ पंक्ति--१ सादा, १ सी, ४ उ, ७ सी, ५ उ, ७८ जाल, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ७८ जाल, ५ उ, ७ सी, ४ उ, ४ सी।

१०३ पंक्ति--१ सादा, ३ उ, ४ सी, ७ उ, ५ सी, ७८ जाल, ५ सी, ७ उ, ५ सी, ७ उ, ५ सी, ७ उ, ५ सी, ७८ जाल, ५ सी, ७ उ, ४ सी, १ उ, १ सी।

१०२ और १०३ पंक्तियों को आठ बार बनाओ।

१२० पंक्ति--१८ सी, ३३ जाल, इसके बाद वाले ९ घरों को समाप्त कर उतार दो। फिर ३५ जाल, ४१ सी, ३६ जाल, इसके बाद ९ उतारदो, ३२ जाल, २० सी।

यह अभी बग़ल तक आया है इसके बाद ऊपर की पीठ तथा छाती बनेगी।

(असम्पूर्ण)

वर्तमान शिक्षा प्रणाली का देश तथा जाति पर प्रभाव।

(गतांक से आगे)

ले० श्री करतार देवी जी।

* * *

* * *इङ्गलैंड, अमेरिका, फ्रान्स इत्यादि देशों में * * *देखा जाता है कि लड़के तथा लड़कियों को सब से पहले अपने देश की भाषा सिखलाई जाती है और जो २ शिक्षाप्रदायक कलाकौशल सिखलाये जाते हैं सब स्वदेशी भाषा में ही। यहां तक कि देश जाति अथवा सोसाइटी के नियमों को कायम रखने के लिये वह सोसाइटी से विरुद्ध कभी नहीं होंगी। पतलून अथवा गौन पहर कर यद्यपि वह बैठ भी नहीं सकतीं तथापि हमारा पाजामा तथा धोती सद्गुण सम्पन्न होने पर भी कभी नहीं ग्रहण करेंगे, क्योंकि ऐसा करने से उन के देश

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तथा जाति और सोसाइटी की सीमा दृढ़ नहीं रह सकती। बीमार होने पर स्वदेशी डाक्टर की औषधि वर्ताव में लायेंगे। प्राण भले ही चले जायें कभी वैद्य की दवाई नहीं खायेंगे। धन्य हैं वे महापुरुष जिन के भाव ऐसे सद्गुणों से युक्त हैं। शोक, हम लोगों को तो उन के सामने मुख नीचा करना पड़ता है। यह भारत माता जो कभी गार्गी, सीता, तथा भीष्मपितामह अर्जुन, द्रोण, कर्ण जैसे पुत्रों तथा पुत्रियों से पुत्रवती थी आज किस अवस्था में है। हे माता, तेरा क्या वेश हो रहा है, शोकातुर हो केश बिखर रहे हैं, मूर्छित सी आप पड़ी हुई हो, पूर्व कालीन शक्ति का लेश मात्र भी दिखाई नहीं पड़ता, वह आप के मुख का सूर्यवत् तेज आज कहाँ गया! हाय आज यह पुत्रों के हृदय वृत्तियों से दुःखित अपने को निम्नलिखित वाक्यों द्वारा यह कर रही है:—

"गुणी गण गणनारम्भे न पतति कठिनी सुसंभ्रमाद्यस्य।

तेनाम्बा यदि सुतिनी वद वन्ध्या कीदृशी नाम॥"

गुणीगण की गणना के आरम्भ में जिस पुरुष की ओर गौरव से अङ्गुली नहीं पड़ती उस की माता यदि पुत्रवती है तो वन्ध्या किस का नाम होगा। बहिनो तथा भाइयों आज भारत माता के शोक दूर करने का समय आ पहुँचा है, अब हमें निज देश जाति तथा सोसाइटी के नियमों को दृढ़ रखने के लिये कृष्णमहाराज जी की उक्ति का पूर्ण रूप से पालन करना चाहिये।

स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः।

हमारे भारतीय महापुरुषों को निज देश जाति अथवा सोसाइटी के नियमों को पालन के लिये असह्य कठिनाइयों को झेलते हुये भी कर्तव्य पर दृढ़ रहना चाहिये।

भाई जितने अंश तुम अपना घर भूलोगे उतने ही अंश ठोकरें खाओगे, जैसे एक बादल का टुकड़ा निज परिवार समूह से खंडित हुआ उभयतः विभ्रष्ट हो जाता है वैसे निज देश जाति तथा सोसाइटी से फेंका हुआ मनुष्य उभयतः विभ्रष्ट बादल की तरह नष्ट हो जाता है। इस विदेशी शिक्षा का क्या प्रभाव पड़ा है? संस्कृत विद्या हमारे में से लोप होगई है। जो भारत अध्यात्म विद्या का भवन था क्या आज यह वही भारत है? शोक, इन फैशनों के वशीभूत हो अपना सर्वस्व खो चुका है। वे भारतीय महापुरुष जो विदेशी महापुरुषों से गौरवान्वित हो संस्कृत विद्या के प्रताप से पूजित किये जाते थे—जिस शिक्षा ने हमें ऐसा उच्च बनाया था, तथा जो शिक्षा हमारे प्राण सम थी, जिस के प्रताप से भारतीय मनुष्य नहीं बल्कि भारतवर्ष की मट्टी गुरूभाव से पूजित की जाती थी—आज उन की संतान अविद्या तथा दुर्गुणों की दास बनी हुई है। हमारे दांये बाँये अविचार, अन्धाचार अत्याचार व्यभिचार फैल रहा है।

मैं यह नहीं चाहती कि हमारे भारतीय सभ्य तथा शिक्षित पुरुष विदेशी भाषाओं तथा विदेश पर्य्यटन से वञ्चित रहें। नहि! नहि! वे समस्त संसार में घूमें तथा जहां २ उच्च शिक्षा मिले, जो २ हमें लाभदायक अन्य देशों से कला कौशल प्राप्त हों उन सब को सीखें तथा भारतवर्ष में प्रचार करें।

परन्तु विदेश में जाकर अपनी जाति तथा सोसाइटी के नियमों को ऐसा दृढ़ बनावें जैसा कि वर्तमान भारत में विदेशी हमें दिखला रहे हैं। हम किसी भी अँश में विदेशियों से नीची

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पदवी न पा सकें। बहिनो! हम नीची पदवी क्यों पायेंगी? जिस बुद्धि ज्योति की उन में चमक है उसी ज्योति की हमारे में भी दमक मारती है। परन्तु हम निद्रा में थे, अब हमें सुध आई, हम उसी अखिल कर्त्ता पिता के पुत्र और पुत्री हैं जिस के कि विदेशी। क्या पिता न्यायकर्त्ता नहीं, जिस ने हमें न्यून शिक्षा तथा उन्हें अधिक शिक्षा दी? नहि! नहि! वह तो दयालु न्यायकारी है. यह उन्नति तथा अवन्नति तो हमारा पुरुषार्थ है, हम भी पहले उद्योगी थे। यह अवन्नति हमारी उन्नति को जतला रही है तथा अवन्नति भावि उन्नति को जतला रही। जिस वृक्ष के पत्ते समस्त झड़ जाते हैं उस से ज्ञात हो जाता है कि नवीन पत्र इस में आने वाले हैं।

मेरी प्रिय बहिनो तथा भाइयो! अपने सङ्कल्पों को दृढ़ बनाओ, तथा वर्तमान भारत पर जो नवीन शिक्षा का प्रभाव उलटा पड़ रहा है उसको सीधा बनाओ, तथा विषमय जहरीले प्रभावों को मधुमय अमृतरस में परिवर्तन कर दो। नवशिक्षितो! नवयुवाओ! अब यह भारत माता का शोक दूर करने की बुद्धि तुम में जागृत हो गई है। अपने धर्म को ऐसा दृढ़ बनाओ कि प्राण भले ही चले जायें परन्तु निजदेश जाति तथा सोसाइटी के नियमों से बाहर पग धरने का कभी सङ्कल्प न करें।

—○—

धर्म्म।

लेखिका—श्रीमती विद्यावती पत्नी बा० बद्रीप्रसाद वकील अम्बाला।

संसार के सभी व्यक्ति धर्म्म के नाम को जानते हैं और जिस प्रकार उनकी इच्छा होती इस महान कार्य्य की पूर्ती का यत्न करते हैं, प्राचीन काल का तो कहना ही क्या परन्तु अब भी लोगो के हृदयों में धर्म्म का मान है। परन्तु फिर भी आज कल के कार्य्य जिन्हें धर्म्म कहा जाता है फलीभूत नहीं होते। वास्तवमें आजकल यह विचार ही नहीं रहा कि धर्म्म क्या वस्तु है तथा उसकी हमारे प्रति क्या आज्ञा है। अपने स्वार्थ के वशीभूत हो कर हम जो कार्य्य करते हैं उन्हे ही धर्म्म के नाम से पुकारते हैं किन्तु जहां वे कार्य्य धर्म्म युक्त कार्य्य नहीं कहलाते धर्म्म जिन्हें बुरी दृष्टि से देखता है वे कार्य्य हम बड़ी प्रसन्नता से करते हैं और हमारे हृदयों में यह विचारही नहीं होता कि यथार्थ में ये कार्य्य धर्म्म से सम्बन्ध भी रखते हैं या नहीं। राजा शिव दधीच तथा हरिश्चन्द्र का नाम हम बड़ी प्रतिष्ठा से लेते हैं, किन्तु यह नहीं विचारते कि उनके जीवनों में क्या शक्ति थी और हम उनकी सन्तान कैसी पतित हैं। राजा हरिश्चन्द्र राज तथा उसके त्याग से नहीं पूजे जाते, उनका मान लोग इसलिये नहीं करते कि उनसे लोगों के कार्य्य पूरे हो जाते थे, परन्तु वे अपने सत्य व्रत के ही कारण प्रतिष्ठित थे। राज पद को कई एक मनुष्य प्राप्त करते हैं और कई एक कष्ट पड़ने पर इसका त्याग भी कर देते हैं, परन्तु राजा हरिश्चन्द्र का त्याग अपने सत्य व्रत की रक्षा करना ही था। उन्होंने अपनी पवित्र वाणी से जो पवित्र कहा उस पवित्र कार्य्य को लाख कष्ट सहने पर भी अपनी वाणी का अपमान न करते हुए पूर्ण किया। राजा दधीच एक बार जब के वह अपने सिंहासन पर विराजमान थे एक कबूतर ने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आ उनका आश्रय लिया और उससे पीछे एक बाज़ने आकर राजा से कहा कि यह कबूतर मेरे आहार का है कृपा करके इसे छोड़ दीजिए। राजा ने उत्तर दिया कि यह मेरी शरण में आया है इस कारण मैं इसे दे नहीं सक्ता। बाज़ ने निवेदन किया कि यह मेरा अहार है यदि इसे आप मुझे ना देगें तो मैं भूखा मर जाऊंगा आपको यह नहीं चाहिए कि एक को भूखा मार एक की रक्षा करें। बहुत वाद विवाद के पश्चात् निश्चय यह हुआ कि राजा अपने शरीर में से कबूतर के तोल के बराबर मांस काट देवें। राजा ने प्रसन्नता से तराजू मंगाई और मांस काट के तोलना आरम्भ किया। पिञ्जर निकल आया परन्तु कबूतर का पलड़ा फिर भी भारी ही रहा। राजा हंसे और कबूतर के साथ आप बैठगए। यह भाव थे धर्म्मात्माओं के। किन्तु उसके बदले अब क्या २ अत्याचार हो रहे है, जीव रक्षा क्या करनी थी जब राजा तथा प्रजा की उदर पूर्ती के लिए सहस्रों प्राणियों का वध किया जाता है जिस प्रकार हो सके लोग अपने स्वार्थ के वशीभूत होकर दूसरे को कष्ट पहुंचाकर भी धर्म्म का ढोंग रचते हैं। कभी वह समय था जब ऋषि लोग राजगृह से विना जाने पानी न पीते थे। राजा से प्रश्न होता था कि तेरी प्रजा किस प्रकार अपना जीवन व्यतीत करती हैं। तेरे राज्यमें कोई हिंसक वा चोर तो नहीं और तुम्हारी प्रजा के महाजन लोग अधिक कर तो नहीं लेते राज्य प्रजा जब इन सब बातों से निर्दोष हो तो महात्मा उनके घर का पानी पीते थे। राजा लोग जब आप पूर्ण धर्म्मात्मा प्राणीमात्र की रक्षा करने वाले होते थे तब उनकी प्रजा में भी धर्म्म की ही व्यवस्था थी, सब मनुष्य प्राणी मात्र के साथ प्रेम करके हर्षित होते थे, मन बचन तथा कर्म से कभी किसी को न सताते थे, मन की शुद्धता के लिए भरपूर यत्न किए जाते थे क्योंकि जब मन बुरे विचारों से जुदा रहता है तब बचन और कर्मभी ऐसे ही होते हैं, जिनके द्वारा किसी को कष्ट न पहुंचे इस कारण मन बचन और कर्मों की पवित्रता ही मनुष्य को धर्म्म पर स्थिर रख सक्ती है, किन्तु मन बचन और कर्मों के श्रेष्ट करने के लिए आवश्यक है कि आहार विचार और व्यवहार ठीक हो। आहार में मद्य मांस खटाई मिरच आदि भी न होने चाहिएं विचार शुद्ध हों तब वाणी लोक प्रिय और पवित्र होगी सब से यथा योग्य व्यवहार ही हमारे कर्मों को यथार्थ में पवित्र कर सक्ता है। उपरोक्त ६ बातों की परिपक्वता के लिए मनु महाराज कहते है कि "धृति क्षमा दमोस्तेयम्"।

इन दश लक्षणों ने जिस मनुष्य के आत्मा को पवित्र किया उसे अपने आप ही अहिंसा परमो धर्म्मः का ज्ञान हो जाता है। ऋषि वाक्य तथा वेद मंत्रों द्वारा ऋषी दयानन्द ने बता दिया कि मनुष्य धर्म्म क्या है और उसे पालन करने के लिए मनुष्यों को किन उपायों की आवश्यक्ता है, ब्राह्मण क्षत्री वैश्य तथा शूद्रों के लिए अपने २ कर्तव्यों का पालना भी धर्म्म ही कहा गया है। जैसे ब्राह्मण का धर्म्म वैदिक विद्या का पढ़ना, क्षत्री का अपने बाहु बल द्वारा चारों वर्णों की रक्षा करना, वैश्य का धनोपार्जन कर इनके खर्चों का करना और शूद का धर्म्म स्वामी की सेवा और आज्ञा का पालन करना है। इसके इलावा स्त्री के पुरुष तथा पुरुष के स्त्री के प्रति, राजा प्रजा के प्रति पुत्र पिता के प्रति, भाई भाई के प्रति अनेकों कार्य्य बहुत विभागों में विभक्त हैं। कोई समय था जब प्राणी मात्र अपने कार्यों को यथा विधि करते और अपने यथार्थ धर्म्म

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को जान सुख से जीवन व्यतीत करते थे, धनवान् निर्धन सभी अपनी २ हस्ती पर प्रसन्न थे, भृत्य तथा पुरोहित अपने स्वामियों की झूठी प्रशंसा नहीं करते थे। जब कभी कोई बड़ा आदमी मर्यादा का उलंघन करने लगता तो पुरोहित लोग सचेत कर देते जैसे कि ऋषि विश्वामित्र के साथ राजकुमार न भेजते समय पुरोहित वशिष्ट जी ने राजा दशरथ को सावधान कर दिया था। उस समय धनी पुरुष अपनी प्रशंसा नहीं कराते थे जब कोई ऐसा होता भी तो करने तथा उस पर प्रसन्न होने वाले को लोग घृणा की दृष्टि से देखते थे। एक समय की बात है कि बून्दी नरेश की कन्या के साथ मेवाड़ के राज कुंवर का सम्बन्ध होना निश्चय हुआ। जब वर की तरफ़ से वधू के लिए शगुन आदि लेकर मेवाड़ से राज्य कर्मचारी आए और एक दिन जब कि दरबार लगा हुआ था एक आदमी ने पत्थर की मूर्ति राजा के सन्मुख रख निवेदन किया कि महाराज इस मूर्ति के ४ हाथ है जो कि आश्चर्य्य की बात नहीं, पर इसने एक हाथ ऊपर को उठाया हुआ है, और एक नीचे की ओर झुका रही है, एक आगेकी ओर बढ़ाया है, और एक गर्दन पर रखा हुआ है। मेरी समझ मे इसका रहस्य नहीं आया, आप विचारशील पुरुष हैं। कृपा कर मुझे यह समझा देवें। राजा के भी समझ में न आया कि यह क्या चारों ओर अपने हाथ बढ़ाए हुए है। सब कर्मचारिओं ने भी अपना २ बल दिखाया पर निराश होकर बैठ गए। राजसभा में एक कवि भट्ट बैठा हुआ था वह बोला कि: —

एक कर ऊपर उठाए एक नीचे को किए।
एक कर आगे बढ़ाए कह रही शोभा लिए।
स्वर्ग में पाताल में नृप आप सा दानी नहीं।
सीस मैं अपना कटाऊं जो मिले कोई कहीं॥

सभी ने तालियां पीट दी पर मेवाड़ राज्य के कर्मचारियों के दिलों के अन्दर कांटा सा जा लगा। विवाह का शुभ अवसर आया और धूम धाम से विवाह हो गया। दोनों ओर के राजा जब अपने २ कर्मचारियों सहित बैठे हुए थे तो मेवाड़ नरेश के कर्मचारी ने यह बात कही कि महाराज आप के दरबार में उस दिन एक ४ हाथ वाली पत्थर की मूर्ति लाई गई थी, उस पर विचार करते आप के एक कर्मचारी ने मूर्ति की ओर से कहा कि मैं अपना सीस कटाऊं यदि आप सा कोई और राजा स्वर्ग तथा पताल में भी मिले, महाराज यह पत्थर की मूर्ति बोलना क्या जाने, परन्तु जिस पुरुष ने चाटूकारी के कारण झूठी प्रशंसा की है उसे अपना सिर अब काट देना चाहिए, क्योंकि मेवाड़ाधिपति बून्दी नरेश से सर्व गुणों में बढ़ कर हैं। यदि यह पुरुष अपना सिर आप काटने को तय्यार न हो तो मैं इसे इस का दण्ड दूंगा, क्योंकि मेरा धर्म्म आज्ञा नहीं देता कि असत्यवादी को छोड़ूँ, इस का भी यही धर्म्म है कि जो इस ने कहा उसे पूरा करे। एवं ऐसा ही हुआ।

मनु महाराज के बताए हुए दश लक्षण हैं, जिन्हें पालना प्राणी मात्र का धर्म्म है। इन के पालन न करने से मनुष्य मनुष्यता से गिर जाता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहङ्कार की प्रबलता हो जाती है और उक्त गुणों वाले पुरुष को सज्जन पुरुष घृणा की दृष्टि से देखते हैं। पुरोहित यज्ञ शालाओं में उन्हें बैठने नहीं देते थे न ही उन के धन से कोई पवित्र कार्य्य पूरा किया जाता था। इस कारण मनुष्य को चाहिए कि वह यथावत् धर्म्म का पालन करें, इस से बढ़ कर कोई सच्चा सहायक नहीं, और इस के बिना कोई महान कार्य्य पूरा हो नहीं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation, USA

सक्ता। मनुष्य लाखों आड़म्बर क्यों न बनाए धर्म्म २ की पुकार क्यों न करें जब तक आप गुणहीन है। और धर्म्म लक्षणों का यथावत् पालन नहीं करता उस के सब कार्य्य फीके हैं। मट्टी के ढेले के समान मनुष्य को उस के साथी फेंक देते हैं कोई उस का संगी साथी नहीं होता। एक धर्म्म ही जीव की रक्षा करके उसे सुख धाम का अधिकारी बनाता है। मनु जी कहते हैं—

तस्माद्धर्मं सहायार्थं नित्यं सञ्चिनुयाच्छनैः।
धर्म्मेण हि सहायेन तमस्तरति दुस्तरम्॥
धर्म्म प्रधानं पुरुषं तपसा हत किल्विषम्।
परलोकं नयत्याशु भास्वंतं खशरीरिणम्॥

अर्थात् पर जन्म में सुख और जन्म के सहायार्थ नित्य धर्म्म सञ्चय धीरे २ करता जाए क्योंकि धर्म्म ही के सहाय से बड़े कठिन दुःख सागर को जीव तर सक्ता है। जिस का धर्म्म के अनुष्ठान से पाप दूर हो गया हो उस को परमात्मा के दर्शन शीघ्र हो जाते हैं, और सच्चे पिता की कृपा से पापों से बच कर सदा सुख उपभोग करता है। यही मनुष्य जीवन का उच्च उद्देश है। इस पर चलने वाला पुरुष सब विकारों से दूर रहता है इस लिए सब मनुष्यों को चाहिए कि वैदिक धर्म्म का पालन कर सच्चा सुख उठावें।

—o—

वेद का स्वयं शिक्षक।

इस पुस्तक को पढ़िए और आप स्वयं वेद मन्त्रों का अर्थ जानने की योग्यता प्राप्त कीजिए। यदि आप केवल भाषा के ग्रन्थ पढ़ सकते हैं, तो निःसन्देह इस पुस्तक के पढ़ने से आप वेद मन्त्रों का अर्थ जान सकते हैं। अनुभव लीजिए। मूल्य १॥) डेढ़ रु०। शीघ्र मंगवाइए।

मन्त्री—

स्वाध्याय मण्डल, औंध

(ज़िला सातारा)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Bhawani Prasada Gupta.
भवानी प्रसाद गुप्तः

Regd. No. L. 1240.

वर्ष १] फाल्गुण १९७७—मार्च १९२१ [खण्ड १, संख्या ११

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय-सूची।

विषय	पृष्ठ
१ चर-गीत [कविता]—लेखक श्रीयुत् कविवर श्रीधर पाठक।	६४३
२ यमसूक्तों की एक गाथा का निरूपण (२)—लेखक—पं० रामगोपाल जी शास्त्री रिसर्च स्कालर डी. ए. वी. कालेज लाहौर।	६४४
३ मन्दगामी [कविता]—लेखक श्रीयुत् 'एक राष्ट्रीय आत्मा'	६४९
४ आधुनिक सामाजिक विप्लव और वैदिक वर्णव्यवस्था—लेखक श्रीयुत् ब्रह्मचारी विद्याभूषण (गुरुकुल वृन्दावन)	६५०
५ आत्म-परिचय [कविता]—'नयन'	६५६
६ शहीदों का पत्र [कविता]—लेखक श्रीयुत् हरिशंकरभट्ट।	६५७
७ रुक्मिणी हरण नाटक—अनुवादक श्रीयुत् मेधावत जगजीवन।	६५८
८ विलायती हुण्डी की दर—लेखक श्रीयुत् प्रोफेसर जगद्धरगुलेरी एम.ए.एल.एल.बी.	६६२
९ मनःकामना [कविता]—लेखक श्रीयुत् सुरेन्द्रनाथ तिवारी।	६६६
१० गीता स्वाध्याय—लेखका—श्रीमती कौशल्यादेवी विशारदा।	६६७
११ कन्हैया! ब्रज रैया!! आओ!!!—लेखक श्रीयुत् "कुसुम"	६७१
१२ मारिशस द्वीप (३)—लेखक श्रीयुत् स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी।	६७२
१३ कृष्ण के प्रति कृष्णा [कविता]—लेखक श्रीयुत् 'बालेन्दु'	६७६
१४ हमारी मंजूषा—	६७७
१५ गौरवी के मन्दिर में एक लाल और एक चूहा—लेखक श्रीयुत् 'मराल'।	६७९
१६ कुसुमोद्यान—	६७९
१७ वैज्ञानिक संसार—	६८२
१८ विचार प्रवाह—	६८५
१९ वनिता विनोद—	६९१

ज्योति के नियम

ग्राहकों के लिये।

१. ज्योति प्रति अंग्रेजी मास की १५ को ग्राहकों के पास पहुंचा करेगी।

२. डाक व्यय सहित भारत के लिये इस का मूल्य ४॥) और छे मास के लिये २॥) वी. पी. का व्यय ≡) अलग है प्रति अंक का मूल्य ॥) है। भारत से बाहर विदेश के लिये इसका वार्षिक मूल्य ६) है। मूल्य मैनेजर ज्योति लाहौर के नाम आना चाहिये।

३. पुरानी प्रतियां जो मिलसकेंगी उनका मूल्य प्रति संख्या ॥) से कम नहीं होगा।

४. पते के परिवर्त्तन की सूचना पत्र के निकलने से १५ दिन पूर्व मैनेजर को मिलनी चाहिये।

५. यदि कोई संख्या किसी ग्राहक को न पहुंचे तो पहिले अपने डाक घर से पूछना चाहिये। यदि पता न चले तो डाक घर से जो उत्तर आवे उसे प्रबन्ध कर्त्ता के पास भेज देना चाहिये। परन्तु यह सूचना अगले अंक के निकलने से १५ दिन पूर्व तक मिलनी चाहिये अन्यथा दूसरी प्रति बिना मूल्य नहीं दी जायगी।

लेखकों के लिये

६. लेख पढने योग्य अक्षरों में हाशिया छोड़कर एक ओर ही लिखे जाने चाहियें। लेखों के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादिका को है। जो लेख प्रकाशित नहीं किये जासकेंगे वह टिकट और पता साथ होने पर लौटा दिये जावेंगे।

८. लेख कविता समालोचना के लिये पुस्तकें और परिवर्त्तन के पत्र सम्पादिका ज्योति लायलपुर के पते पर आने चाहियें।

मूल्य तथा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र प्रबन्धकर्त्री ज्योति लाहौर के पते पर आने चाहियें।

विज्ञापन दर यह होगी।

प्रतिमास।

पूर्ण पृष्ठ या दो कालम १०) आधा पृष्ठ या एक कालम ६) चौथाई पृष्ठ या आधा कालम ३) चौथाई कालम २) टैटिल पेज का तीसरा पृष्ठ १२) टैटिल का अन्तिम पृष्ठ १५)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

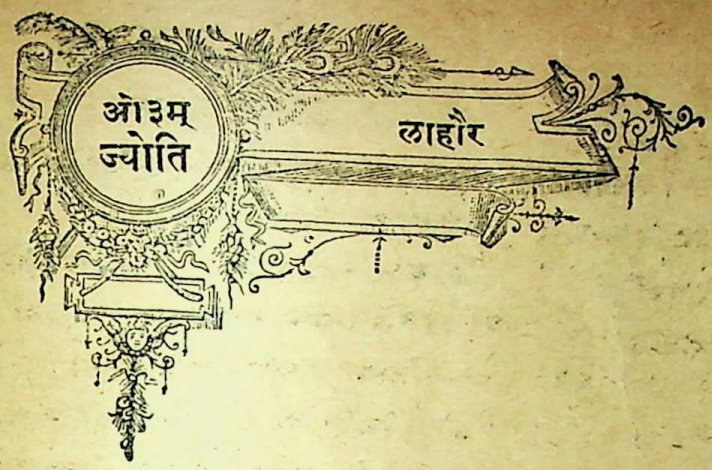

ओ३म् व्यंवात्ते-
ज्योतिरभूदय त्वत्त-
मो अक्रमीत् ॥

वर्ष १ | फाल्गुण १९७७—मार्च १९२१ | संख्या ११

चर-गीत ५ ।

लेखक—श्रीयुत् कविवर श्रीधर पाठक ।

देश की सेवा कर बन्दे ॥

जो तुझ से सेवा बन आवै,
जग से दुख-देवा मिट जावै ।
सुख से सब पृथिवी पट जावै,
कट जावैं फन्दे ।
क्लेश के कट जावैं फन्दे,
देश की सेवा कर बन्दे ॥

(२)

मन में अटल देश-व्रत धर ले,
तन में अतुल तेज-बल भर ले ।
शुभ संकल्प प्रेम-प्रण कर ले,
तज दे छल छन्दे ।
द्वेष के तज दे छल छन्दे,
देश की सेवा कर बन्दे ॥

(३)

होवै सफल तेरी शुभ सेवा,
देवैं योग स्वर्ग के देवा ।
सब जग चखै सुकृत की मेवा,
भोगै आनन्दे ।
सकल जग भोगै आनन्दे,
देश की सेवा कर बन्दे ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

यम सूक्तों की एक गाथा का निरूपण।

(यम के कुत्तों का वर्णन)।

इस लेख पर समालोचना का अधिकार सब विद्वानों को है।

लेखक—पँ० रामगोपाल जी शास्त्री रिसर्चस्कालर डी० ए० वी० कालेज लाहौर।

[गताङ्क से आगे]

(२)

प्रिय पाठक! गत लेख में आप ने वैदिक यम का स्वरूप पढ़ लिया है। उस में हम ने यह सिद्ध किया है, कि विवस्वान्, सूर्य्य का पुत्र यम, मृत्यु (काल) है। उसे ही वेदादि पुस्तकों में वैवस्वत यम कहा गया है। इस द्वितीय लेख में हम यह बताना चाहते हैं कि अन्य धर्म्मों में भी ऐसा ही यम आया है। और साथ ही हम यमश्वानों का वर्णन आरम्भ करेंगे।

ज़न्द अवस्त का यम } ज़न्द अवस्त पारसियों की धर्म्म पुस्तक है। वे इसे ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं। उन के मतानुसार ज़रथुष्ट्र को अहुरमज़्दा (परमेश्वर का नाम है) ने यह उपदेश दिया है। परञ्च ध्यान पूर्वक इस ग्रन्थ को पढ़ने से तो यह ग्रन्थ वेद की छाया से भरा हुआ प्रतीत होता है। इस पारसी ग्रन्थ की पहलवी भाषा भी संस्कृत की पुत्री प्रतीत होती है। अस्सी प्रतिशतक शब्द इस के संस्कृत से मिलते हैं। वेद तथा ज़न्द के देवता और उन के कर्म्म भी बहुत मिलते जुलते हैं।

इसी तुलना को देखकर युरोपियन शोधकों [Scholars] ने यह निर्णय किया है, कि वेद और ज़न्द के लेखकों के आदि पुरुष एक ही थे और एक ही स्थान में निवास होने से उन के विचार मिलते थे, जब आर्य्य पञ्जाब की ओर और दूसरे आर्य्य [Persia] फारस आदि देशों में गये तो उन्हों ने उन विचारों के साथ ही साथ उन्नति की। भारतियों ने वेद और पारसियों के आदि पुरुषों ने ज़न्द अवस्त का निर्म्माण किया।

युरोपियन लेखकों का यह लेख निराधार है; क्योंकि उन्होंने अभी तक कोई भी ऐसा ऐतिहासिक प्रमाण नहीं दिया, कि जिस से यह सिद्ध हो कि उन का लेख ठीक है। इस से तो यह भी सिद्ध हो सकता है, कि वेद का ज्ञान पहले सब को पहुंचा हुआ था, परन्तु शनैः २ उस ज्ञान के लोप होने से वहां पर कुछ वैदिक संस्कारों के साथ अपनी भी कल्पना लगाई गई और नये मतों का आविष्कार किया इस में हमारे पास तो मनु का भी प्रमाण है परन्तु विपक्षियों के पास कोई भी प्रमाण नहीं—

शनकैस्तु क्रिया लोपादिमाः क्षत्रिय जातयः।
वृषलत्वं गता लोके ब्राह्मणादर्शनेन च ॥४३॥
पौण्ड्रकाश्चौड्र द्रविडाः काम्बोजा यवनाःशकाः।
पारदाः पह्लवाश्चीनाःकिराता दरदाःखशाः ४४॥

मनुस्मृति अ० १०।

शनैः २ क्रिया (कर्म्म) के लोप से यह (नीचे लिखीं) क्षत्रिय जातियें शूद्रता को प्राप्त हुई इस लोक में, (क्योंकि) उन्हें ब्राह्मणों के दर्शन नहीं हुए। और वे जातियें यह हैं—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पौण्ड्र, चौड्र, द्रविड, काम्बोज (अफ़गानिस्तान), यवन (ग्रीस), शक, पारद, पह्लव, चीन, किरात, दरद (दरादिस्तान), खश। मनु के श्लोकों से तो पता मिलता है कि पहले सब देशों में ही आर्य्य (वैदिक) धर्म्म था। १९०७ में प्रो० ह्यूगो विंकलर Pro. Hugo Winkler नामक पुरुष ने जो BoghazKoi बोगाज़ कोई नामक स्थान में जो Asia minor ऐशिया माइनर में है खुदाई की थी उसमें खुदा हुआ एक किता (Inscription) निकला था जिस पर हिटेटाईट Hitites और मिटानी (Mitani) देश के दो राजाओं की परस्पर संधि लिखी हुई है। वे दोनों ही अपनी सन्धि में मित्र, वरुण इन्द्र और (नासत्य) अश्वि देवों की शपथ (कसम) खाते हैं। यह किता १४०० B. C. ख्री. पू. का लिखा हुआ सिद्ध हुआ है। इस किते से भी यह अनुमान होता है, कि लगभग ढाई हज़ार वर्ष हो चुके जब मित्र, वरुण, इन्द्र तथा नासत्यादि वैदिक देवों का महत्व एशिया माईनर जैसे प्रदेशों में विद्यमान था (इस का विशेष वर्णन हम अन्य स्थान पर करेंगे) इस से तो यही सिद्ध होता है कि इजिप्ट, काल्डिया, असीरिया तथा पर्शीया आदि में वेद का प्रभाव भी बहुत रहा है। काल्डिया वा मिसर (Egipt) आदि देशों के प्राचीन धर्म्म पुस्तक भी इस की पुष्टि में हैं वहां जन्द अवस्त की भी यही गति प्रतीत होती है।

उस जन्द अवस्त प्रोक्त यम का वर्णन ऐसा है।

अवस्त में vendad वैडीडड के Fargard II. द्वितीय फर्गर्ड में इस का वर्णन आता है। वहां पर यम का नाम यीम (yum) है और इसे वहां यीम विवन्हओ (yim vivanhoo) लिखा है जिस का अर्थ है विवंघवत् vivanghvat का पुत्र विवन्हओ यम, अर्थात् जिस को यदि हम अपने तात्पर्य्य से लिखें तो यह होगा, कि विवस्वान् का पुत्र वैवस्वत यम। अहुरमज़्दा ने उस यीम को एक सुनहरी तलवार और एक जड़ाउ goad दिया है, जो कि यीम का राजा होने का चिन्ह है। जब भूमि पर पशु बैल, मनुष्य कुत्ते तथा पक्षि आदि बहुत बढ़ गये तो वहां स्थान न रहा तो यीम सतारों की ओर गया सूर्य्य के मध्यान्ह के मार्ग द्वारा* तब उसने पृथिवी को अपनी सुनहरी तलवार से छुआ और गोड को पृथिवी पर चुभा कर उस ने कहा हे अरमैती (armaiti) फैला। तब पृथिवी फैली और बढ़ी। इसी प्रकार इस के अन्य कर्म्म भी वहां लिखे हैं और इसे यीम क्षयेता (yim khshaeta) लिखा है क्षयेता का अर्थ राजा है। अवस्त में यीम का स्थान ऐसा है जहां न गर्मी है और न सरदी है और यह यीम अपने चारों ओर मनुष्य और पशुओं के समूह इकट्ठे करता है (King. P. 277.)

ज़न्द अवस्त में कहे गये यम की वैदिक यम से बहुत कुछ तुलना है। दोनों के अपने नाम तथा पिता का नाम भी समान है। इसे वेद में राजा और जनों को इकट्ठा करने वाला लिखा है।

ज़न्द में भी यह पशु और मनुष्यों को अपने चारों ओर इकट्ठा करता है। परन्तु पीछे कई बातें यीम के विषय में और कल्पित की गयी हैं जिनका मूल वेद में कहीं नहीं। विशेष बात तो यह है कि यम, यीम, वैवस्वत विवंघंत समान हैं।

यम का सम्बन्ध दक्षिण दिशासे है, अब

*यह मार्ग दक्षिण का है। देखो Essay on Parsi religion by King. P. 232 note I.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

इस में यीम भी सतारों की ओर जाती वार दक्षिण दिशाको ही कहा गया है। वेद में यम सम्बन्धी पितरों का अपराह्णकाल है यहां यम मध्यान्ह काल में सितारों की ओर गया इत्यादि बातों को देखकर पता लगता है कि अभीतक भी अपभ्रंश रुप में भी वेद का अंश अन्य देशों तथा धर्म्म ग्रन्थों में विद्यमान् है।

पौराणिक यम } महाभारत के युद्ध के पीछे भारत में अविद्या का समय कहा जाता है। उस काल में वेद के तत्त्वभूले हुए थे। नित्य प्रति अनेक प्रकार के नवीन सम्प्रदायों का मूल आरम्भ भी उसी तमोमय काल में ही हुआ। अपने २ सम्प्रदाय की रक्षा निमित्त ही अनेक २ मतानुयायी संस्कृतज्ञों ने भागवत आदि पुराणों की रचना की। इनका काल कोई एक नहीं और नहीं इनका एक कर्त्ता है। इन पुराणों का भिन्न २ काल और भिन्न ही लेखक हैं।

इनके पढ़ने से जो परस्पर साम्प्रदायिक विरोध आता है, जिससे एक पुराण दूसरे की निन्दा करता है, इससे इनका अनेक पुरुषकर्तृत्व होना सिद्ध है। इस समय वेदका मार्मिक अर्थ बहुत अंश में भूल चुका था। वेदके आलंकारिक वर्णन भूलगये थे। जिसका परिणाम यह हुआ कि पुराणों में उन प्रकृतिक दृश्य वर्णक कथाओं को इन्होंने ऐतिहासिक बनाना आरम्भ किया। आज हम अन्य कथाओं को छोड़कर केवल वैदिक वैवस्वत यमका ही वर्णन करेंगे।

पुराण में यम का एक भिन्न नगर माना है और उसकी आकृति ऐसी लिखी है "ततो याम्यं नातिदूरे नगरं स हि गच्छति। चत्वारिंशद्योजनानि चतुर्युक्तानि विस्तृतम्। १४५। त्रयोदशप्रतीहाराः श्रवणा नाम तत्र वै। श्रवणा कर्म्मतस्तुष्यन्त्यन्यथा क्रोधमाप्नुयुः। १४६। ततस्तत्राशु रक्ताक्षं भिन्नाञ्जनचयोपमम्। मृत्युकालान्तकादीनां मध्ये पश्यति वै यमम्। १४७। दंष्ट्रा कराल वदनं भृकुटीदारुणाकृतिम्। विरूपैर्भीषणैर्वक्त्रैर्वृतं व्याधिशतैः प्रभुम्। १४८। दण्डासक्तमहाबाहुं पाशहस्तं सुभैरवम्। तान्निर्दिष्टां ततो जन्तुर्गतिं याँति शुभाशुभम्। १४९। गरुड़पुराण प्रेत ख० अ० ५॥ अर्थ–इसके अनन्तर वह जीव समीप वर्त्ती यम सम्बन्धी नगर को जाता है उस [यमपुरी] का विस्तार चवालीस ४४ योजन है। १४५। उस [यमपुरी] के श्रवणा नामक तेरह प्रतीहार [द्वारपाल] हैं। वे प्रतीहार कर्म्म से प्रसन्न होते हैं और इसके विरुद्ध करने से क्रुद्ध होते हैं। १४६। इसके अनन्तर [यमपुरी में प्रवेश करके जीव] शीघ्र ही वहां पर मृत्यु, काल और अन्तकादियों के बीच में [स्थित] रक्ताक्ष, कृष्णाञ्जनढेर के तुल्य अकृति वाले यमको देखता है। १४७। दाढ़ों से जिसका मुख भयंकर है, भृकुटियों से जिसकी आकृति भयंकर है, अनेक कुरूप तथा भयंकर मुखों से और अनेक व्याधियों से जो घिरा हुआ है ऐसे समर्थवान् [यम] को जीव वहां देखता है। १४८। दण्ड जिसके हाथ में हैं ऐसी लम्बी भुजावले, हाथ में फांसी लिये हुए भयंकर [यम देखते हैं] उस [यम] की बतायी हुई शुभाशुभ गति को ही जीव प्राप्त करता है। १४९।

इन पुराणश्लोकों से पाठक जान गये होंगे कि यहां किस प्रकार यम का वर्णन है। यह तो स्थिर निश्चय ही है कि यहां भी यम, विस्वान्

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का पुत्र ही लिखा है कोई अन्य नहीं देखो-

वैवस्वत गृहे यानं यथा तत्तु निबोध मे ।८१।
वैवस्वत पुरं याति क्रुश्यमाणो यमानुगैः ।८७।

गरु० पु० प्रे० खं० अ० ५। इन श्लोकों में इस यम को वैवस्वतयम ही माना है। परन्तु पुराणों के श्लोकों के पढ़ने से यह पता लगता है कि इन श्लोकों के कर्त्ता ने वेद को पढ़ कर इस यम का वर्णन नहीं किया क्योंकि यहां पर कई कल्पनाएं निराधार और असूलक की गयी हैं। पहले तो यमादि की पुरी का विस्तार जिसका वर्णन वेद में नहीं। दूसरी बड़ी भारी त्रुटि पुराण लेखक ने यह की है कि मृत्यु, अन्तक और यमको भिन्न २ लिखा है। अभी ऊपर के ग० पु० के १४७ श्लोक में आपने पढ़ा है,

मृत्यु कालान्तकादीनां मध्ये पश्यति वै यमम्।

अर्थात् जीव यमपुरी में मृत्यु, काल, और अन्तक आदियों के मध्य में यम को देखता है। पुराण के इस लेख से तो यही निश्चय होता है कि इस पुराण के लेख काल में वेद का पाठ लुप्त हो चुका था, किन्तु क्रमागत वेद की बातें अपभ्रंश रूप में विस्तृत थी। वेदाध्ययन से मृत्युकाल अन्तक और यम, ये सब पर्य्याय वाचक सिद्ध होते हैं। "अन्तकाय मृत्यवे नमः"। अथर्व ८। १। १। यहां पर अन्तक मृत्यु का पर्य्याय वाचक है और "नयतामून् मृत्युदूता यमदूता" अथर्व ८। ८। ११ इस मंत्र में मृत्यु यम का पर्याय वाचक है। इन मंत्रों का अध्ययन कर्त्ता गवेषक इस निर्णय पर तत्काल पहुंच सकता है कि पुराण लेख काल बहुत ही अर्वाचीन और वेदमर्म्म का भूला हुआ समय है। कुछ भी हो यह तो निश्चय ही है, कि इन पुराणादियों के चाहे लेख मूल से बहुत स्थलों में विरुद्ध है तथापि यमादि का विचार इन्हें वेद विचारों से ही मिला।

Greek यवन } संसार के अन्य प्राचीन देशों
देशीयम } की तरह यवन देश Greece

का भी नाम सुना जाता है। इनमें भी बहुत से वैदिक विचार अपभ्रंशरूप में मिलते हैं। इनमें भी मृत्यु का देवता Pluto स्वीकार किया गया हैं, जिसका राज्य (Hades) हेडीस नरक लोक पर है।

इस (Pluto) प्लूटो के भी वैदिक यम वत् दूतादि माने हैं, जिन का वर्णन हम आगे प्रसङ्ग में करेंगे।

मुसलमानी } यह बात तो निर्विवाद ही है
यम } कि मुहम्मदियों (मुसलमानों) का धर्म्म १४०० वर्ष पूर्व से नहीं। इनके धर्म्म ग्रन्थ कुरान को ध्यान पूर्वक पढ़ने से पता लगता है, कि वह ग्रन्थ भी अरब निवासी किसी एक व्यक्ति का बनाया हुआ है। सामयिक शोधकों ने अरबी साहित्य की भी खूब छान बीन की है, इस गवेषणा से वे इस निर्णय पर पहुंचे हैं, कि कुरान में इसाई, यहूदी तथा मागी (Zend अनुयायी) धर्म्मों का प्रभाव बहुत है। मुसलमानी मत संचालक को भी वैदिक विचार क्रम बद्ध नहीं मिले, हां प्रत्युत उन्हें कुछ न कुछ विचार भिन्न मतों द्वारा मिले अवश्य हैं।

उन मुसलमानों में भी यम विषय के विचार बहुत हैं। मृत्यु के फरिश्ते (Angel) का नाम अज़राईल है। इस का काम आत्माओं को शरीरों से भिन्न करने का है। प्राचीन फ़ारिस वालों ने मृत्यु देवता का नाम मुर्दाद लिखा है। यहूदियों ने मृत्यु के फरिश्ते का नाम डयूमा (Deuma) रखखा था। उस का काम अन्त समय में सब का नाम ले २ कर बुलाना

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है। मुसलमानों ने भी नरक को एक भिन्न लोक पौराणिकों की तरह कल्पित किया है। इन के विचार में वहां पापी के पावों में आग के जूते डाले जाते हैं, जिस से उन का सिर जलेगा। इस प्रकार की अन्य कई यातनाएं उन्हों-ने दी है। मुसलमानों का एक विचार बहुत अद्भुत यह है, कि प्रलय के अनन्तर जब न्याय होने का समय आयेगा तो तत्पश्चात् मृत्यु का फ़रिश्ता इज़राईल भी मृत्यु को प्राप्त हो जावेगा—कुछ भी हो इस से हम इस निश्चय तक तो अवश्य पहुंचते ही हैं, कि सब धर्म्म वालों ने यम के विषय में कुछ न कुछ वेद के अंश को लेकर ही अपनी २ कल्पनायें की हैं।

इस समग्र विचार से हम ने यही सिद्ध किया है कि वैदिक यम (मृत्यु तथा काल) का पर्य्याय है और विवस्वान् (सूर्य्य) से उत्पन्न होने के कारण वैवस्वत है। अब हम इस वैवस्वत यम के दो श्वान कुत्तों का वर्णन विशेष रूप से करेंगे—

वैवस्वत यम के दो कुत्ते

इस यम के यद्यपि बहुत से दूत वेद में आते हैं, तथापि मुख्य दूत इस के दो हैं; जो कि दो कुत्ते हैं। जिन के वर्णन ऋग् तथा अथर्व में स्पष्ट रूप से आता है—

अतिद्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ शबलौ साधुना पथा। अथा पितॄन् सुविदत्रां उपेहि यमेन ये सधमादं मदन्ति। ऋ० १०।१४।१०॥

*शबल वर्ण वाले, चार आंखों वाले, सरमा के पुत्र रूप (दो) कुत्तों को अतिक्रमण करके साधु मार्ग से जाओ और यम के साथ जो हर्ष को प्राप्त होते हैं उन ज्ञान युक्त पितरों को प्राप्त होवो॥१०॥

यौ ते श्वानौ यम रक्षितारौ चतुरक्षौ पथि-रक्षी नृचक्षसौ। ताभ्यामेनं परिदेहि राजन्त्स्व-स्ति चास्मा अनमीवञ्च धेहि॥ १७॥

अर्थ—हे यम, राजन्! जो तेरे रक्षा करने वाले, चार आंखों वाले, मार्गरक्षक और मनुष्य व्यापार द्रष्टा दो कुत्ते हैं; उन के लिये इसे दो।

हे राजन्! (यम!) कल्याण और नीरोगता इस के लिये सम्पादन करो॥११॥

"उरूणसावसुतृपा उदुम्बलौ यमस्य दूतौ चरतो जनाँ अनु। तावस्मभ्यं दृशये सूर्य्याय पुनर्दातामसुमद्येह भद्रम्" ॥१२॥

दीर्घनासिका वाले, असु (प्राणों) से तृप्त होने वाले, बहुत बलवाले, (ये दो कुत्ते जो) यम के दूत हैं और जनों के पश्चात् विचरने वाले हैं। वे दोनों इस संसार में सूर्य्य के देखने के लिये हमें कल्याणकारी प्राण को देवें। १२।

ऋ० १०। १४॥

यही मंत्र थोड़े से भेद से अथर्व वेद कां० १८ सू० २ मं० ११, १२ तथा १३ में आये हैं, और तैत्तिरीय आरण्यक में भी आते हैं। इन पूर्वोक्त मंत्रों को यमसूक्त में पढ़ा गया है, इन मंत्रों के सूक्ष्म विचार से भी यही सिद्ध होता है, कि ये दो कुत्ते साधारण कुत्तों की तरह नहीं, क्योंकि जगत् में इस प्रकार की आकृति और गुण युक्त कुत्तों का होना सर्वथा असम्भव है।

यम के इन कुत्तों का वर्णन अन्य धर्म्म ग्रन्थों में भी आता है और आश्चर्य्य तो यही है कि विचार तुला पर तोलने से यही पता लगता है कि सब धर्म्मों का परस्पर सम्बन्ध

* यहां पर शबलौ से श्याम और शबल दोनों ग्राह्य हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भी बहुत है–ज़न्द अवस्था में भी इस प्रकार के कुत्तों का वर्णन आता है 'जो चिनवत् नाम की पुल जो इस लोक से स्वर्ग तक है उसके द्वार पाल (Gate Keeper) हैं। उनकी आकृति भी लग भग ऐसी ही है उनका पीला रंग और चार २ ही आंखें हैं *। वे भी यमके फ़रिश्ते दूत ही है। उन दोनों का नाम मिहिर और सुरुश है। इन में से एक का काम धर्म्म वाले की परीक्षा करके स्वर्ग में भेजना है और दूसरे का काम पापियों को नरक में भेजने का है †।

वेद में भी दो ही कुत्ते और चार आंखों वाले आये हैं और ज़न्द में भी यही लिखा है। वेद में इन्हें "नृचक्षसौ और पथिरक्षी" मनुष्य व्यापार द्रष्टा तथा मार्ग रक्षक लिखा है, ज़न्द में वेद के आलङ्कारिक अर्थों को न समझकर ज़न्द अवस्थ लेखक ने एक वृथा ही पुल कल्पित करालिया है और मनुष्य व्यापार द्रष्टा की जगह ज़न्द में ऐसा बनालिया है, जैसे कोई तुला पर तौल कर कर्म्मों का निर्णय करता है। यह वैदिक अलंकार को ज़न्द वाले ने स्वयं अधिक कल्पित किया है।

मुसलमानों ने भी वेद में आये हुए तत्व को अपभ्रंशरूप से अपने ग्रन्थ में लिखा है। उनका सिद्धान्त है, कि जब शव [मुर्दा] कबर में रक्खा जाता है उसके पास एक फ़िरिश्ता आकर सूचना दो परीक्षकों के आने की देता है यह मुनकिर और नकीर नामी भयानक रूप धारी श्याम वर्ण के दो फ़िरिश्ते हैं (देखो कुरान आदर्श पृ० ८० तथा Encyclopaedia of Religion the word death) मुसलमानों ने यद्यपि वेद मूल को बहुत अपभ्रंश रूप में दिया है, तथापि दो श्याम वर्ण परीक्षक फिरिश्ते इन्हें भी मानने ही पड़े हैं। इसी प्रकार इन दो [कुत्तों] का वर्णन प्रायः अन्य भी कई धर्म्मों में आता है।

——:०:——

मन्दगामी।

लेखक—श्रीयुत् 'एक राष्ट्रीय आत्मा'।

पथिक मन्द गति से न चलो।
श्रम करलो, पथ-दुख सह लो॥
इन वृक्षों की शीतल छाया; है कुछ क्षण की मिथ्या माया।
किन्तु तुम्हें उस पर ललचाया, सखावृन्द का साथ छुड़ाया॥
देखो, बचो, न यों फिसलो।
पथिक मन्द गति से न चलो॥
सम्मुख अमित नवीन दृश्य हैं, अद्भुत आकर्षक अवश्य हैं।
पर वे निस्सन्देह नश्य हैं, दुर्गम अस्थायी अदृश्य हैं॥

* See Vedic mythology by Macdonell P. 173, and the Rigved by Keizi P.

† देखो कुरान आदर्श भाषा पं० रघुनाथ प्रसाद मिश्र पृ० ९८।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दृग भ्रम है सम्हलो, निकलो ।
पथिक मन्द गति से न चलो ॥
मान लिया तुम श्रमित भ्रमित हो, क्षुधित, तृषित हो, दुखित व्यथित हो।
भार सहित हो, शक्ति रहित हो; आश्रम इष्ट हेतु जीवित हो ॥
आगे-बढ़ो न यों टहलो ।
पथिक मन्दगति से न चलो ॥
स्वल्प-समय है कट जावेगा, दिन घाटी में घट जावेगा।
निरालम्ब तू छुट जावेगा, निर्जन वन में लुट जावेगा ॥
मत भूलो, सुनलो, गुनलो ।
पथिक मन्द-गति से न चलो ॥

—०—

आधुनिक सामाजिक विप्लव और वैदिक वर्ण व्यवस्था ।

लेखक—श्रीयुत ब्रह्मचारी विद्या भूषण (गुरुकुल वृन्दावन)

श्रम और पूंजी—

परिचय के सामाजिक विकास का सिंहावलोकन श्रम और पूंजी के सम्बन्ध में कुछ कहे बिना अपूर्ण ही रहेगा।

उन्नीसवीं शताब्दि के प्रारम्भ में ही यूरोप और अमेरीका में घोर ओद्योगिक क्रान्ति हुई जिस से संसार की सभी प्राचीन व्यवस्थायें बे काम होगईं और नये युग का संचार हुआ गृह शिल्प का प्रचार उठ गया हाथ की बनी वस्तुओं की कदर कम होगई बड़े २ यन्त्रों का प्रयोग होने लगा और चारों तरफ कारखाने खुलने लगे—उनमें काम करने के लिये मजदूरों का दल चारों तरफ से इकट्ठा होने लगा—धनियों के पूंजी के साथ श्रमियों के परिश्रम ने मिल कर सम्पत्ति को बेहद बढ़ा दिया किन्तु बेचारे मजदूरों के हाथ रूखी रोटी के सिवाय कुछ न लगा और सारा का सारा मुनाफा धनियों के पेट में समागया । आखिरकार को मजदूर बिगड़े और उन्होंने अपनी दशा सुधारने के उपाय ढूंढ़ने शुरू किये। जगह २ मजदूर संघ स्थापित होने लगे । उन्होंने मजदूरों का बल बढ़ाने के उपाय किये।

इधर धनी भी चुप न हुए उन्होंने प्राप्त अधिकारों का दुरुपयोग कर कानून बनाकर मजदूरों के संघों को नाजाइज प्रमाणित किया।

बस फिर क्या था आग में घी की आहुति पड़ी। दंगे और षड्यन्त्रों की भरमार हुई। कानून रद्द हुये किन्तु यह अशान्ति घटने की जगह और बढ़ती गई। और मजदूरों ने साम्यवाद की गाड़ी में अपना कंधा लगाकर उसे और भी तेज कर दिया होते २ बड़े २ हड़तालों और क्रान्तियों तक नौबत पहुंची।

दुर्भाग्यवश यूरोपीय महायुद्ध ने आर्थिक-जगत् को दिवालिया बना दिया। और मजदूरों को तो रोटी मिलना भी दुश्वार होगया । सहनशीलता की हद हुई उन्होंने कानून कायदे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by Siddhanta eGangotri Gyaan

सब ताक में रख रूस में राजा और पूंजी वाले दोनों का नाश कर सारा राजकार्य अपने हाथ में ले लिया। रूस के साथ ही यूरोप के अन्य देशों में भी मालिक और मजदूरों में खुलम खुला झगड़ा छिड़ गया। आये दिन कहीं न कहीं से हड़ताल और दंगों की खबर आ ही जाती है। एक तरफ से श्रमजीवी संसार क्रान्ति पर कटिबद्ध है साथ ही पूंजी वाले भी अपना पग हटाने को तय्यार नहीं हैं। पश्चिम की वर्तमान अशान्ति का बहुत कुछ श्रेय इसी झगड़े को प्राप्त है।

नयी समस्यायें।

पश्चिम की वर्तमान सामाजिक और राजनैतिक अशान्ति पर एक दृष्टि डालकर उसके कारणों को ढूंढ़ निकालना आवश्यक है। पश्चिम की सारी अशान्ति का रहस्य एक वाक्य में यह है कि वहां बलवान् दुर्बलों पर अत्याचार कर रहे हैं। सब देशों के मान चित्रों पर दृष्टि फैंकिये और आप देखेंगे कि क्या देश के भीतर और क्या पर राष्ट्रों में अशान्ति का एक मात्र कारण सबलों का अत्याचार और दुर्बलों का क्रन्दन है। व्यक्ति, व्यक्ति को दबा रहा है। समूह, समूह को खाजाने को तयार है और एक राष्ट्र दूसरे राष्ट्र को हड़प जाने पर है। समानता का राग आलापने वालों ने हेग की शान्ति परिषद् स्थापित की जिससे कि शक्तिमान् राष्ट्र शक्ति-हीन राष्ट्रों को न दबा सके किन्तु सब व्यर्थ हुआ दुर्बलों की रक्षा न होसकी, हेग की शान्ति परिषद् के लिये यूरोपियनों में अपार उत्साह होते हुये भी यूरोपियन राष्ट्र उसके सारे सिद्धान्तों को ताक में रख गत महायुद्ध में भिड़ गये और सारे के सारे अन्तर्जातीय नियमों का उल्लंघन कर जल थल और आकाश में निरीह प्रजा पर घोर अत्याचार किये और उदासीनों पर भी उसके छींटे फेंक दिये। इसके बाद युद्ध के मध्य में स्वभाग्य निर्णय, राष्ट्रपति विल्सन के १४ सिद्धान्त, और राष्ट्र संघ का राग आलापा जाने लगा। लोगों को आशा हो चली थी कि राष्ट्र संघ के स्थापित होते ही सब पराजितों के दुःख दूर हो जावेंगे। पराधीन स्वाधीनता को पावेंगे और अवनतों को उन्नत होने का मौका मिलेगा। किन्तु यह सब स्वप्न की तरह हवा होगया और राष्ट्रसंघ, चाण्डाल-चौकड़ी के रूप में परिवर्तित होगया। स्वाधीनता के सिद्धान्त हवा होगये और बलवान् लोग राष्ट्र संघ की ओट में निर्बलों का शिकार करने लगे। राष्ट्र संघ ने उन उलझनों को डाला जिनका सुलझाना १-२ शताब्दी तक असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है।

इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय अशान्ति के पश्चात् देशों की आन्तरिक अशान्ति और विप्लवों पर विचार करने से पता लगता है कि उनका भी कारण यही है कि निर्बलों को बलवान् सता रहे हैं और मजदूरों को साधन बनाकर धनी आनन्द कर रहे हैं प्रत्येक को उन्नति करने का समान अधिकार नहीं है। जहां प्रजातन्त्र है और प्रतिनिधि राजसभायें हैं वहां भी यही दशा है, अन्तर्राष्ट्रीय अशान्ति और भीतरी गड़बड़ ये दो समस्यायें हैं जो हल होती नहीं दीखतीं। पश्चिम वालों के इन्हें हल करने वाले राष्ट्रसंघ League of Nation के प्रवर्तकों ने पवित्र प्रतिज्ञाओं को भूल कर स्वभाग्य निर्णय के सिद्धान्तों की हत्या की और स्वयं कमज़ोर राष्ट्रों के रक्षक Mandatory बन उन्हें हड़पने लगे। इस प्रकार क्या हेग की शान्ति परिषद् और क्या राष्ट्रसंघ दोनों ही अन्तर्राष्ट्रीय अशान्ति न मिटा सके। इसी प्रकार आन्तरिक अशान्ति को मिटाने वाले प्रयत्न "साम्यवाद"

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और बोल्शेविज़्म Bolshavism भी विफल हुये। साम्यवाद (Socialism) के सिद्धान्त तो अवश्य आकर्षक हैं किन्तु वे अव्यवहार्य हैं और इसका नया रूप "रूसी बोल्शेविज़्म भी अव्यवहार्य होने के साथ ही साथ सामाजिक संगठन का घातक और राष्ट्र की उन्नति और विकास को रोकता है। प्रकृति से ही मनुष्य की योग्यताएं और शक्तियें असमान हैं। यदि जोर ज़बर्दस्ती से सब लोग समान कर भी दिये जावें तो कुछ काल पश्चात् वह समानता नष्ट होजाती है। अत एव अपेक्षा इसके कि मालिकों के स्थान पर मज़दूर अत्याचार करें यह अधिक अच्छा होता कि मजदूरों पर अत्याचार न होने दिया जाता। दूसरी बात यह कि जिस स्वाधीना के लिये राजाओं का रक्त बहा वह तो न मिली-गांठ की रही सही व्यक्तिगत स्वाधीनता भी शासक वर्ग के हाथ में और चली गई। इस प्रकार आधुनिक जगत् के सामने तीन समस्यायें हैं जिन्हें कि पश्चिम के समाजशास्त्री हल न कर सके, वे ये हैं:—

(१) समानता या प्रजातन्त्र(Democracy) के आदर्श कैसे पूरे हों।

(२) श्रम और पूंजी का झगड़ा दूर होकर आभ्यन्तरीय अशान्ति कैसे दूर हो।

(३) आन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को ठीक बनाये रखकर संसार को रक्तपात से बचाया जाय।

यहां पर मैंने उन भारतीय समस्याओं का विचार नहीं किया है जो कि आधुनिक समाजिक विप्लव का फल नहीं।

वर्णव्यवस्था।

प्राचीन सामाजिक सङ्गठन।

आधुनिक सामाजिक और राजनैतिक अशान्ति पर एक दृष्टि डाल कर अब हम प्राचीन सामाजिक सङ्गठन की परीक्षा करते हैं कि क्या वह सामाजिक सङ्गठन इन समस्याओं को हल कर सका था। प्राचीन समय का सामाजिक सङ्गठन वर्णव्यवस्था के नाम से प्रसिद्ध था और उसके चार विभाग थे। वर्ण शब्द संस्कृत में वृ धातु से बना है जिस का अर्थ स्वीकार करना, चुनना है, इसी लिये वर्णव्यवस्था उस सङ्गठन का नाम था जिस में कि समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यतानुसार पेशे को चुने। आदर्श समाज सङ्गठन के लिये यह आवश्यक है कि उस के प्रत्येक अङ्ग में सहयोग हो और दूसरे प्रत्येक अङ्ग को हानि पहुंचाये बिना वह अपना कर्तव्य पालन करता हुआ अन्य अवयवों को सहायता दे। जिस प्रकार व्यक्ति में प्रकृति ने ज्ञानवती सञ्चालिका शक्ति, बलवान् रक्षक शक्ति, धनवान् पोषक शक्ति और सहनशील पोषक शक्ति इन चार शक्तियों को क्रमशः सिर हस्त उदर और पाद के रूप में दिया है उसी प्रकार व्यक्ति से बने हुए समाज में भी इन शक्तियों का और इन में परस्पर के सहयोग का होना, स्वाभाविकता और आदर्श के लिये आवश्यक है। अस्तु। प्राचीन वर्णव्यवस्था में पहला अङ्ग ब्राह्मण था जिसके कर्तव्य ये थे—"अध्यापनमध्ययनं यजनं याजनं तथा दानं प्रतिग्रहश्चैव" इत्यादि पढ़ना पढ़ाना, यज्ञ करना कराना, दान देना और लेना ये छे कर्म ब्राह्मणों के हैं—इस प्रकार ब्राह्मण शिक्षक के रूप में समाज की सेवा करता है और समाज की अगली पीढ़ी को शिक्षा देकर तय्यार करता है—उस का दूसरा समूह न्यायाधीश के रूप में समाज की सेवा करता है जैसा कि मनुस्मृति अ० ८ श्लो० ९-१० से मालूम होता है। अर्थात् राजा एक ब्राह्मण को तीन अन्य ब्राह्मणों के साथ अभियोगों को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

देखने के लिए नियुक्त करे। यह सभा ब्रह्मा की सभा कहलाती थी जिसे हम हाई कोर्ट आव् जुडीकेचर Highcourt of Judicature कह सकते हैं।

ब्राह्मण के दूसरे समूह को हम राज्य के व्यवस्थापक के रूप में पाते हैं और इस तरह वह समाज की सेवा करता है। वसिष्ठ अ० १ में लिखा है कि "ब्राह्मण सब के कर्तव्य बतलाएंगे और राजा तदनुसार ही शासन करेगा"। इस के बाद हम ब्राह्मणों को राजसभाओं की उलझनों को सुलझाते पाते हैं और वह इस तरह जन साधारण को ठीक मार्ग दिखाकर समाज के पथ प्रदर्शक का काम करता है। जैसा गौतम सूत्र अध्याय ११ सूत्र १९, २५ से पता चलता है कि यदि राज सभा ठीक निर्णय पर न पहुंच सकें तो अन्त में ब्राह्मण सभा की सम्मति के अनुसार निर्णय दे किन्तु साथ ही ब्राह्मण के लिये यह भी आज्ञा है कि उसे पवित्र और साधारण जीवन व्यतीत करना चाहिये उसे धनी बनने का यत्न कभी नहीं करना चाहिये यथा—"प्रतिग्रह समर्थोऽपि प्रसङ्गं तत्र वर्जयेत्। प्रतिग्रहेणह्यस्याशु ब्राह्मं तेजःप्रशाम्यति।" और भी "सम्मानाद् ब्राह्मणो नित्य मुद्विजेत विषादिव"—इत्यादि इस प्रकार ब्राह्मण वित्तेषणा लोकेषणा दोनों से रहित होकर अपने प्राप्त ज्ञान को शिक्षा न्याय और राज्य व्यवस्था के रूप में समाज को प्रदान करता है और इस तरह यह वर्ण समाज शरीर में शिरः स्थानीय था।

दूसरा वर्ण क्षत्रिय है जिस का कर्तव्य "प्रजानां रक्षनं दान मिज्याध्ययन मेव च विषयेष्वप्रसक्तिश्च....." था जो सेना के रूप में समाज की बाहरी विप्लवों से और पुलिस और प्रबन्ध विभाग के रूप में समाज को आन्तरिक विप्लवों से बचा कर उस की रक्षा करता हुआ समाज शरीर में बाहु स्थानीय था।

तीसरा विभाग वैश्य थे जिनका कर्म "पशूनां रक्षणं दान मिज्याध्ययन मेव च वणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च।" अर्थात् यह वर्ण कृषक के रूप में भूमि से, पशु पालक के रूप में पशुओं से, वणिक् के रूप में वाणिज्य से सम्पत्ति को पैदा करें और—"दद्याच्च सर्व भूतानामन्न मेव प्रयत्नतः" अपने इस कर्तव्य के अनुसार उस एकत्रित सम्पत्ति को सारे समाज में बांट कर उसे पोषित करे इस प्रकार यह वर्ण धन सम्पन्न होकर समाज को पुष्ट करता हुआ समाज शरीर का उदर स्थानीय था।

चौथा वर्ण शूद्रों का था जो कि ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्रों के ही सन्तान होते हुये ज्ञान, बल और धन सम्बन्धी कोई भी गुण न प्राप्त कर सकने के कारण इन तीनों वर्णों की ही सेवा करते थे—इस तरह से प्राचीन काल के ऋषियों ने स्वाभाविक और आदर्श सामाजिक सङ्गठन की स्थापना की थी। इस स्थान पर जन्म या गुण कर्म स्वभाव से वर्णव्यवस्था के सम्बन्ध में कुछ कहना नहीं है किन्तु इतना ध्यान में अवश्य रखना चाहिये कि जो वर्णव्यवस्था कर्म और योग्यता पर सङ्गठित होकर आदर्श सामाजिक सङ्गठन है वही जन्म पर निर्भर होने पर भेद से भेदा और सब प्रकार की अशान्तियों को जन्म देने वाले सामाजिक सङ्गठन के रूप में बदल जाता है। जो पुष्प विकसित होते समय अधिक से अधिक सौरभ पूर्ण होता है वही सड़ने पर अधिक से अधिक दुर्गन्ध भी पैदा करता है। यह आवश्यक नहीं कि उत्तराधिकार में गुण और योग्यता भी प्राप्त होजावे अतः जन्म से वर्ण भेद मानने पर कार्य विभाग Distribution of Labour जिस पर कि सामाजिक सङ्गठन निर्भर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है और वर्णव्यवस्था का मूल सिद्धान्त जो कि योग्यतानुसार पेशे चुनने का है दोनों ही नष्ट हो जाते हैं।

नई समस्याओं का हल।

हम पश्चिम के सामाजिक संगठन के विकास का फल वर्त्तमान समस्याओं पर एक दृष्टि डालचुके और साथ ही प्राचीन सामाजिक संगठन वर्ण व्यवस्था की भी झांकी लेचुके अब हम अपने विषय के मुख्य भाग पर आते है और देखते हैं कि प्राचीन सामाजिक संगठन में किसप्रकार उच्च और नीचे तथा मालिक और मजदूर की समस्याओं को हलकर आन्तरिक सच्ची शान्ति के साथ २ समानता स्थापित की गई थी। वर्णव्यवस्था में इनका हल ढूंढ़ने से पूर्व वर्णव्यवस्था की आधार शिला और अंगों की पूर्व दशा पर एक दृष्टि डालना आवश्यक हैं। बिना किसी अच्छी आधारशिला के किसी भी संगठन का स्थिर रहना असम्भव है। बालू के ऊपर बालू से ही बना हुआ किला कैसा होगा इसके वर्णन की आवश्यकता नहीं। वर्णव्यवस्था की आधारशिला व्यक्तियों का प्रारम्भिक जीवन है। यदि प्रारम्भिक जीवन में व्यक्ति समाजसंगठन के आदर्श के अनुसार न बनसके तो उनसे यह आशा रखना कि वे कर्म क्षेत्र में आकर उस आदर्श को पूरा करेंगे निष्फल ही है। पश्चिम के लोग इतने प्रयत्नों के बाद भी क्यों प्रजातन्त्र पाने में असफल हुए? उनकी असफलता का मुख्य कारण यही था कि उनके संगठन का आधार ही ग़लत था। जैसा कि हम लिखचुके हैं समाजशास्त्र के समान आचारशास्त्र का भी मूल सिद्धान्त समानता या (Democrasy) है। चूंकि आचार शास्त्र का सम्बन्ध सीधे व्यक्तियों से है अतएव प्रजातंत्र या समानता व्यक्तियों का गुण पहिले है और समाज या राष्ट्र का पीछे। अतएव जिस प्रकार आचार सम्बन्धी अन्यगुणों का अभ्यास बालकपन से कराया जाता है उसी प्रकार समानता का अभ्यास भी बालकपन से ही होना चाहिये। जिससे व्यक्ति के नस नस में समानता का भाव भर जावे। पश्चिम के लोग प्रारम्भ से ही प्रजातन्त्र के भावों का गला घोटते हैं। एक अमीर का लड़का अपने बचपन और शिक्षाकाल से ही ऐश आराम उड़ाता है और इन्द्रियों की तृप्ति करता हुआ भोगविलास पसन्द करने वाला बन जाता है दूसरी तरफ़ उसके साथ ही पढ़ने और खेलने वाला दरिद्रसन्तान भोजन और कपड़ों के लिये तरसता है। एक साथ खेलने और पढ़ने वालों में यह असमानता प्रारम्भ से ही उनके अन्दर गरीब और अमीर के भाव भरकर भेद की खाई को और गहरा कर देती है। समानाधिकार के सिद्धान्त उनके अन्दर आ ही नहीं सकते और वे अपने भागों का साधन निर्बल को बनाकर उनके अधिकार कुचलने को सदा उद्यत रहते हैं किन्तु प्राचीन वर्णव्यवस्था की आधारशिला जहां कि समाज के अंग ढलते थे 'गुरुकुल शिक्षा प्रणाली थी जिसका कि सब से बड़ा सिद्धान्त और महत्वपूर्ण आदर्श सब विद्यार्थियों की समानता था। राजा और रङ्क, गरीब और अमीर, पूंजी वाले और मजदूर तथा निर्बल और सबल सब के लड़के एक से भाव और व्यवहार में पलते थे, उनका भोजन वसन और रहन सहन सब एकसा था, गुरु उनका पिता और वे परस्पर भाई थे। ऊंच और नीच का भाव उनके अन्दर आही नहीं सकता था। सब तपका जीवन बिताते हुए भोग विलास से

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दूर रहते थे। इस प्रकार शैशवस्था से ही उनके अन्दर समानता के भाव आते थे। ये वह समानता के भाव थे जो न तो अन्तर्राष्ट्रीय नियमों और राजसभाओं के कानूनों से पैदा हो सकते है और न पद और अधिकार के मद में मिट ही सकते हैं। शिक्षा समाप्त कर जब वे कर्मक्षेत्र में उतरते थे तब केवल उनमें योग्यता और पद का भेद होता था क्योंकि गुरुकुल में रहकर भ्रातृत्व का भाव उनके अन्दर एक दूसरे के लिये सहानुभूति और समानता के भाव को आमिटकर देता था। जो विद्यार्थी एक ही गोद में पले हैं एकसा जीवन और खान पान जिनका रहा है उनमें से भले ही एक राजाका पुत्र हो और एक रङ्क का किन्तु यह सम्भव न था कि राजा का पुत्र रङ्क को घृणित नीच या अपने से छोटा समझे जैसाकि भगवान कृष्ण और सुदामा के जीवन से प्रकट है ऐसे आधुनिक जगत् में उदाहरण दुर्लभ ही नहीं किन्तु अलभ्य हैं। तप का जीवन व्यतीत करने के कारण श्रीमान् पुत्र भी इतना भोग विलासी न हो सकता था कि उसे दरिद्र और निर्बलों का खून पीना पड़े साथ ही असमान योग्यता के कारण भिन्न २ कार्य करते हुए भी उनके रहन सहन में कोई बड़ा भेद न होने पाता था। अस्तु। इसके उपरान्त वर्णव्यवस्था का संगठन भी पूर्ण और वैज्ञानिक है-सब से पहला वर्ण ब्राह्मण है जो वित्तैषणा और लोकैषणा दोनों से रहित होता हुआ समाज की शिक्षा दीक्षा का प्रबन्ध करता है, राज्य का व्यवस्थापक है न्यायाधीश है किन्तु इतने उच्च अधिकारों और कर्तव्यों के होते हुए भी वह शक्ति और धन दोनों से शून्य है और जितना ही उच्च है उतना ही भोगमय जीवन से दूर है। दूसरा वर्ण क्षात्रिय था जो राज्य का प्रबन्धाधिकारी था जिसके पास शक्ति थी किन्तु उनका नियन्त्रण ब्राह्मण करते थे जैसा कि वसिष्ठ सूत्र में लिखा है कि ब्राह्मण सब के नियम बनायेंगे और राजा तदनुसार ही शासन करेगा। जब व्यवस्थापक (Legislative) और (Executive) कार्य्यकारिणी एक ही वर्ग के हाथ में होती है तो शासकवर्ग स्वयं मन माने नियम बनालेता है, शासितों के हिताहित का ध्यान नहीं रखते-प्रायः यही कारण है कि जिससे शासक और शासित वर्ग के बीच मनोमालिन्य हो जाता है अतः प्राचीन वर्णव्यवस्था में जहां शासकों के हाथ (Executive) प्रबन्ध सम्बन्धी पूरे अधिकार थे वहां न्याय और व्यवस्था सम्बन्धी अधिकारों से वे रहित थे। तीसरा वर्ण वैश्यों का था जो समाज की सम्पत्ति के कोषाध्यक्ष थे क्योंकि वैश्य का धन केवल उसका ही नहीं किन्तु समस्त समाज का था और उसका यह कर्तव्य था कि वह उस धन से समाज का पोषण करे जिस प्रकार कि उदरस्थ रस सारे शरीर के पोषण में व्यय होता है। इसी प्रकार उनकी सम्पत्ति भी जातीय ही थी और अयोग्यों से समाज को छीनने का अधिकार था जैसा कि सूत्र ग्रन्थों में वर्णित है।

यूरोप की वर्तमान अशान्ति मुख्यतः दो बातों के कारण है प्रथम समाज के व्यक्तियों में ऊंच नीच का भाव होना, द्वितीय धनिकों के हाथ में ही व्यवस्थापक तथा कार्यकारिणी और न्याय संबन्धी तीनों शक्तियों का होना, जिससे कि वे मन माने नियम बना कर भीतर गरीबों को अपने भोग्य का साधन बनाते हैं और प्रजा के रक्त को बहा कर परदेशों पर अधिकार कर अपना स्वार्थ साधते हैं। वर्ण व्यवस्था में न तो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राजा का इतना अधिकार है कि प्रजा का धन परराष्ट्रों की स्वाधीनता हरण करने में व्यय करे क्योंकि नियम बनाना उसका काम न था और न वैश्य ही जो धनी थे नियम बनाने और राज्य कार्य में भाग ले सकते थे। इस प्रकार न तो क्षत्रिय ही अन्तराष्ट्रीय अशान्ति के कारण थे और न वैश्य ही मजदूरों पर अत्याचार कर आभ्यन्तरिक अशान्ति को जन्म दे सकते थे। सारी अशान्ति का कारण धन-शक्ति-और व्यवस्था का एक ही हाथ में होना है, किन्तु प्राचीन संगठन इन त्रुटियों से रहित था और वह इस प्रकार सारी आधुनिक-सामाजिक उपद्रव से उत्पन्न समस्याओं को हल करती है। यद्यपि उस समय निर्वाचनों और शान्ति परिषदों की धूम न थी किन्तु सारा का सारा समाज सुखी और शान्त था इस प्रकार उस समय सच्चा प्रजातन्त्र था।

उपसंहार--भद्र पुरुषो! आज हम एक नये युग के द्वार पर खड़े हैं, चारों ओर 'परिवर्तन' की आवाज़ सुनाई दे रही है। यूरोप की सामाजिक अवस्था बिना बदले नहीं रह सकती, सब लोग उससे ऊब गये हैं। घर और घर तथा राष्ट्र और राष्ट्र के बीच लोहे की झंकार है। सारे यत्न व्यर्थ हो रहे हैं। सारे समाज शास्त्रियों के माथे ठनक गये हैं। पार्लियामेण्ट कानून पर कानून बदलती है परन्तु गरीबों की आहों से असमान गूंज रहा है। बलवान राष्ट्र कमजोरों को पेट में हड़पने के लिये अपने दांत पैना रहे हैं। हेग की अन्तर्राष्ट्रीय सभा पहले ही दफ़नाई जा चुकी थी। इस महायुद्ध के पश्चात् तो सामाजिक समस्या ने और भी भयानक रूप धारण किया है। लीग आफ़ नेशन्स का जनाज़ा तो उसके सूति गृह में तयार होगया था। राजनैतिक हलचल में लोगों का ध्यान सामाजिक संगठन की ओर नहीं जाता है परंतु जब तक सामाजिक समस्या का हल नहीं होता तब तक मनुष्य जाति का कल्याण नहीं। आदर्श समाज संगठन जिसके लिये योरुप तरस रहा है वर्ण व्यवस्था में है। और दुर्भाग्य से वर्ण-व्यवस्था के ठेकेदार हम हैं जो पृथ्वी की सतह पर सबसे घृणित हैं और क्या यह सम्भव है कि प्रकृतिवाद के मद में मस्त यूरोप अध्यात्मवाद के पुराने अभ्यासी बूढ़े भारत का दर्वाज़ा खटखटाये और महाराज मनु की इस आज्ञा को चरितार्थ करे—

'एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन् पृथिव्यां सर्व मानवा.'।

इसका उत्तर तो भविष्य ही देगा॥

आत्म-परिचय।

हमारा है बेले का फूल!
इसमें कोई रँग नहीं है दिखलावे का ढंग नहीं है।
तुम्हारे श्वेत रूप अनुकूल!
अवश चहकती गन्ध नहीं है तदपि महक भी मन्द नहीं है।
कृपाकर कीजे इसे कबूल! "नयन"।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शहीदों का पत्र।

लेखक--श्रीयुत् हरिशंकर भट्ट।

(१)

श्री सहित-मम-प्राण-सम-प्रिय-बंधुवर !
भूल मत जाना कहीं हमको इधर।
कर रहे हैं कार्य्य हम अपना यहाँ।
धर्म्म से तुम भी नहीं हटना वहाँ।

(२)

शोक है हमको, नहीं कुछ कर सके-
देश की सेवा, नहीं दुख हर सके।
है बनी यह लालसा मन में यहाँ।
जन्म होवे फिर हमारा भी वहाँ।

(३)

काम आवें हम पुनः निज देश के।
मर मिटें हम सब पुनः हित देश के।
चैन हमको है यहाँ मिलती नहीं।
तन यहाँ, पर, है हमारा मन वही।

(४)

पल हमारा कोटि-युग-सम कट रहा।
देश-भारत के लिये दिल फट रहा।
है नहीं हमको सुहाती सुर-पुरी।
हृदय कहता-शीघ्र हो इससे बरी।

(५)

ईश से मिलकर स्वयं हमने कहा।
कष्ट भारत-देश जो है सह रहा।
थे मुहम्मद बुद्ध ईशा सामने।
बात उनसे फिर कही सब ईशन।

(६)

लोक-मानित-तिलक भी सम्मुख खड़े।
हो रहे थे चित्त में व्याकुल बड़े।
आँख से थी अश्रु-धारा बह रही।
वेदना थी चित्त की सब कह रही।

(७)

ईश ने फिर बात उनसे सब सुनी।
देवने मिलकर परस्पर फिर गुनी।
फिर उन्होने अन्त में निश्चय किया।
कार्य्य इसका हाथ में अपने लिया।

(८)

शीघ्र पहुंचेंगे अतः अब वे स्वयम्।
देश-दर्शन भी करेंगे शीघ्र हम।
देश अब स्वाधीन झट हो जायगा।
दुःख सारा भूमि का खो जायगा।

(९)

देव ईशा भी गये पश्चिम-तरफ़।
धर्म्म का फिर अब वहां देंगे सबक़।
स्वार्थ-तरु की खोद कर जड़ को, वहीं।
प्रेम-कलिका को खिलावेंगे सही।

(१०)

बस, अधिक अब क्या लिखें हम आपको।
दूर करना देश के संताप को।
स्वप्न में भी कर्म्म से हटना नहीं।
धर्म्म से भी तनिक निज घटना नहीं।

(११)

हैं दिलाते याद हम फिर भी तुम्हें।
बन्धुवर ! बस भूल मत जाना हमें।
हो सके तो शीघ्र उत्तर दीजियो।
मातु की भी बंदना बहु कीजियो।

(१२)

अंत करते पत्र को बस हैं यहीं।
भेजते भी हैं इसे "बैरँग" वहीं।
है लगा यदि टिकट इस दरबार का
पर नहीं है टिकट तो सरकार का।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रुक्मिणी हरण नाटक।

अनुवादक—श्रीयुत मेधाव्रत जगजीवन

अंक १ला। प्रवेश ७वां।

[स्थान—कुण्डिनपुर में स्वयंवर मण्डप।]

(पात्रगण—रुक्मिणी, महाराणी लक्ष्मी, भीमक, रुक्मीदेव, जरासंध, शिशुपाल आदि।)

लक्ष्मी—तू तो मेरी बुद्धिमती पुत्री है। समझदार और स्यानी है। रुक्मी भैया कहे वैसा ही करना और महाराजा शिशुपाल को वरना।

रुक्मिणी—मेरी प्यारी माता! भैया के धमकाने से तुम सब डर गये हो और शिशुपाल के राज्याडम्बर में चौंधिया गये हो किन्तु विवाह कोई केवल शरीर का ही सगपन या संयोजन नहीं है अपितु परस्पर मन का मोक्षमधुर मिलन तथा आत्मा का अद्वैत एकी करण है।

लक्ष्मी—मेरी पुत्री ज्ञानी है रे ज्ञानी! पर बेटा! तेरा कथन स्वर्गसदन में देव देवियों को शोभा दे सकता है, मृत्यु लोक के मानव जीवन धारियों को नहीं।

रुक्मिणी—माजी? स्वर्ग कोई स्थान विशेष नहीं किन्तु स्वभाव का सुखमय विकास है। जहां हृदय की स्वतन्त्रता, चित्त की प्रसन्नता जीवन की सम्पूर्णता और निर्बाधित प्रेम की पराकाष्ठा है वहीं स्वर्ग की स्थिरता है, जीवन मुक्ति की अमरता है; किन्तु जहां जड़ता, पराधीनता और कलुषितता है वहां नरक की वीभत्सता है। मुनिमहात्माओं का कथन है कि जहां गृहजीवन, दाम्पत्यसम्बन्ध प्रेममय, आनंदमय और धर्ममय है वहां स्वर्ग सुहाता है, देव देवियों का दुर्लभ दर्शन होता है। मेरी यह भावना कला शिशुपाल राहु से कभी नहीं खिलेगी यह तो कृष्णचन्द्र से ही प्रफुल्लित हुई विकसेगी।

रुक्मैया—(सहसा प्रवेशकर।) यह तो तू देख लेगी!! रुक्मिणी! खबरदार! देख—अब यहां उस कृष्ण का मान और शिशुपाल का अपमान यदि किया तो? चक्रवर्ती जरासंध की सत्ता के साथ वह अभी पधारते हैं; तुझे उससे ही विवाह करना होगा।

लक्ष्मी—मेरी लड़की स्यानी है रे स्यानी? इसे सताना मत, यह समझ जायेगी।

रुक्मिणी—यह मेरा स्वयम्बर विवाह है कि जहां मैं जिसे चाहूं उसे वर लूं न कि बलात्कार यज्ञ कि जिस में तेरी मर्जी माफक मेरी जिन्दगी की आहुति दे डालूं। जब तक इस पुण्य भूमि में श्रुति और भगवान् मनु की स्मृति को मान दिया जाता है, स्त्री जीवन पूजा जाता है तथैव सावित्री, दमयन्ती और सीता जैसी प्रेम पूजारनी के विवाह स्वातन्त्र्य का अनुसरण किया जाता है तब तक हम जैसी कन्याओं के परिणय जीवन पर तुम जैसे भाई बुजुर्गों के बलात्कार तथा स्वमतलबी अत्याचार चल ही नहीं सकते। पर यदि स्त्री जीवन पर नीचता बर्तेगी, विवाह स्वतन्त्रता में बड़ों की स्वार्थता, अधम अज्ञानता और पशुपरायणता चलेगी तो फिर यहां दरिद्रता, वर्णसङ्करता, गुलामी और पायमाली की नींव पड़ेगी।

रुक्मैया—तब देखा जायगा उस में हमारे बापदादे की क्या हानि होगी?

भीष्मक—(प्रवेश कर) सत्यानाश! मनु के कौमी कानून के विरुद्ध जहां स्त्रियें पीड़ित होंगी, प्रेम ग्रन्थि की पवित्र स्वतन्त्रता में मूर्खता, विषय विलासिता और बलात्कारिता चलायी जायेगी वहां प्रजा निर्माल्य भीरु तथा गुलामी अन्धकार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के संस्कार वाली होंगी जिस से बापदादा के राज्यपाट, स्वातन्त्र्य गौरव आदि सब धूलि में मिल जायेंगे।

रुक्मैया—बुढ़ापे में पिता सारी गयी है बुद्धि यह मारी॥

"अतीवोद्दण्ड यह लड़की इसे तुम और न बहकाओ। उछलता पित्त यह मेरा"—[हाथ उठाने लगता है]।

प्रारब्ध—[अधनेपथ्य में से ताकता हुआ।] "सपूतर हो तो ऐसे हो"।

लक्ष्मी—मेरा लड़का बुद्धिशाली है रे बुद्धिशाली! बहिन के ऐसे मंगल प्रसंग पर क्लेश मत करो। (भीमक से।) आप अपने आसन पर बैठो। यह तो मेरी रुक्मिणी मेरे घर और कुल की प्रतिष्ठानुकूल उत्तम गृह कुल के शिशुपाल को ही वरेगी।

रुक्मैया—जीती रहो माता और तुम तो साढ़े चारसौ बरस की होवो (चरण छूता है।) शिशुपाल में उत्तम गृह तथा कुल आदि सब कुछ है।

रुक्मिणी—पर यह मेरा स्वयंवर है न कि स्वयंकुल या स्वयं घर तो फिर मुझे सुंदर वर तथा विवाहसुख का मूल प्राप्त करना है न कि घर या कुल।

लक्ष्मी—तो तू किसको वरना चाहती है।

गायन।

रुक्मिणी—कृष्ण प्रियतम के लिये मैं पागल बनी,
प्रिय मोहन के मोहक रसमें सनी०—कृष्ण०—
पति प्रीति का सौभाग्य बिन्दु भाल में मैंने किया,
पहिनी मनोहर कृष्ण की सुकृपामयी ये चूड़ियाँ॥
प्रियनाथ के ही नाम की नथ नाक में डाली अहा,
प्रियवर कराम्बुज का गले में हार डालूंगी महा॥
कृष्णनन्दन की मैं कल्पवल्ली बनी। कृष्ण०—

रुक्मैया—देखा जायगा। न मानेगी तो तेरा हरण होगा। ये सम्राट् जरासंध, शिशुपाल आदि राजा आ पहुँचे। आइये, पधारिये। [शिशुपाल, जरासंध, शाल्व आदि राजा प्रवेश करते हैं]।

शिशुपाल—(भीमक के पास जाकर) यह आपका भावी जामाता आपको प्रणाम करता है। [बैठता है]।

प्रारब्ध—(स्वगत) मेरा पट्ठा ज़बरदस्ती गले पड़ता है।

नृत्य।

रुक्मैया—(चोपदार से) उस धूर्त श्याम-सुन्दर जोशी को यहाँ बुलालाओ कि जिससे उसका कहा हुआ भविष्य उसके सामने ही झूठा पड़े और उसको सज़ा मिले।

चोपदार—जैसी आज्ञा।

रुक्मैया—क्यों प्रारब्ध महाराज़? अभी स्वयंवर का मुहूर्त्त तो अच्छा है न?

प्रारब्ध—यह बीच में नृत्य ज़रा अमृत पीगया तो भी शुरू करदो। (स्वगत) फिर भले ही उद्वेग की घड़ी अपना क्लेश का नगारा बजावे।

भीमक—मेरी पुत्री! आर्य विवाह के स्वयं नियमानुसार तेरी मर्जी में आवे उस वर को पसंद कर।

रुक्मैया—देख-बहिन? मेरे कथनानुकूल इस सम्राट् जरासंध के दहिने हाथ जैसे प्रतापी राजा शिशुपाल के गले में माला पहिना कर तू अपने कुल और कीर्ति का गौरव रख।

रुक्मिणी—पिताजी! यही बैठे हुए सब राजनक्षत्रों की तरफ मेरे हृदय सागर ने अनादर की ओहटी (ज्वार) धारण की है, श्रीकृष्णचन्द्र के विना मेरी प्रीति की लहरें उछलने की ही नहीं और इसी से मैं अन्य किसी को वरने की ही नहीं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राजगण—हम सबका ऐसा अपमान ?

प्रारब्ध—(स्वगत) उद्वेग घड़ीने दंगा शुरू कर दिया।

शिशुपाल—हम नक्षत्र और वह काले पानी में जाने वाला चन्द्र ! जंगलियों में रहनेवाला गाओं को चरानेहारा कहींका अहीर गोपाल।

कृष्ण—(प्रवेश कर) जी हां। सच्चा गोपाल ? द्वारका का राजा कहलाने की अपेक्षा गोपाल कहलाना कृष्ण को बहुत गौरवपूर्ण प्रतीत होता है। कंस जैसे अन्यायी हिंसक राजव्याघ्र के पंजे में से पृथ्वीरूप गौ को बचाने में तथा उसे न्याय और शान्ति के मार्ग पर चलाने में उसने गोपाल नाम ही सार्थक किया है। और तुझ जैसे नृशंस राजवृकों को सोलह २ बार भगा कर भारतीय प्रजारूप गौ का पालन करने में भी उसने गोपाल नाम ही मुबारक गिना है।

रुक्मिणी—(स्वगत) मधुर मेघ जैसे शान्त दिखते हुए श्यामसुन्दर इस समय ब्रह्महुताशनी की ज्वाला के समान जाज्वल्यमान दिखाई देते हैं। कोई दिव्य दर्शन होते हैं।

कृष्ण—किन्तु अब भी-अप् जरासंध आदि राजाओ ! तुम करादि से प्रजा को सताने के लिये नहीं अपितु न्याय दया से प्रसन्न करने के लिये, राक्षसी सत्ता चलाने के लिये नहीं किन्तु देवी महत्ता जतलाने के लिये, जुल्म तथा गुलामी फैलाने के लिये नहीं किन्तु उज्वल राजधर्म तथा लोगों में स्वातंत्र्य का चैतन्य डालने के लिये, प्रभु के प्रतिनिधि रूप होकर, ईश्वरीय नियम का अनुसरण कर, प्रजा की प्रसन्नता तथा शान्ति के मूर्तिमान् देवराज बन कर राज्यकार्य भार चलाना चाहते हो तो कृष्ण फिर क्रूर रणशंख के स्थान में मधुर मुरली को धारण कर तुम जैसे सैतान सहोदर सभ्य नामधारी राज्य कर्ताओं की अपेक्षा ब्रह्मबालक जैसे भोले जंगली ग्वालों के साथ रह कर, सुरसरिता समान यमुना तीर पर धरती भगवती की दुहिता, देशकी दुर्लभ दौलत समझी जाती गौ माताओं को चरा, बिलकुल शान्त, एकान्त प्रिय, गोपाल बनने तैयार है।

रुक्मिणी—(स्वगत) और मैं राजरानी की अपेक्षा उसकी ग्वालन बनने तैयार हूँ।

शिशुपाल—यहाँ हम क्या इस भाट चारन के मुख से उस ग्वाले के भजन कीर्तन सुनने आये हैं ?

प्रारब्ध—(स्वगत) तब क्या घोड़े पर चढ़ व्याहने आये हो ? राख या कोयले का तिलक होगा अच्छा काले ग्रहण जैसा।

रुक्मैया—(कृष्ण से) बस कर, बस कर। अब न बरसा इन हमारे महमानों पर पुष्प के बदले अपने बकवाद के पत्थर नहीं तो इस तलवार से ख़तम हो जायगा। (तलवार खींचने लगता है)।

भीमक—दूत पर हाथ उठाते हुए खबरदार!

प्रारब्ध—(स्वगत) दूत है या न जाने इन सब को कपाने हारा कोई जीता जागता भूत है यह अभी विदित हो जायगा।

कृष्ण—मुझे ख़तम करते हुए कहीं तुम सब न ख़तम हो जाओ इसका ख्याल रखना। तुम कहते हो वैसा ही कृष्ण का गोपालपन साबित करता हूं यह भी नहीं अच्छा लगता ?

रुक्मैया—रुक्मिणी ? मैंने कहा वैसा करने को तैयार हो जा। कहाँ यह पर्वत समान उच्च राज खानदान शिशुपाल और कहाँ वह नीच अहीर गोपाल ?

रुक्मिणी—भैया ? ऊंचे पर्वत पर पत्थर पकते हैं तो नीचे खान में रत्न पैदा होते हैं। पर्वत पर स्वातीय बिन्दु निष्फल होते हैं तब समुद्रतलस्थित सीप में ही मोती मिलते हैं।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कीचड़ में से कमल, जङ्गल में से शहद, कीड़े में से रेशम और मिट्टी में से हीरे इसी प्रकार हलकी चीजों में से ही अमूल्य दुर्लभ पदार्थ प्रकट होते हैं। इस लिए यह कल्पलता शिशुपाल जैसे कटीले बबूर वृक्ष की अपेक्षा कृष्ण कल्प तरु को ही लिपटेगी।

रुक्मैया—चुप चुप। हठीली खराब लड़की? कुछ नहीं कहता हूं इस लिए बकती चली जाती है? उस ग्वाले के नाम रूपी धग धगता सीसा हम कितनी देर तक अपने कानों में डालने देंगे? वह तो अपने जैसी उस राधा ग्वालन से ही व्याह चुका है। वह ग्वालन उसे छोड़ ही देगी और तूं उसे वर ही लेगी?

राधा—(सहसा प्रवेशकर) नहीं नहीं यह हूँ मैं श्री कृष्ण की भक्ति कामधेनु की ग्वालन राधा। रुक्मिणी—बहिन और श्री कृष्ण जी के बीच में आने की ही नहीं।

रुक्मिणी—ए मेरी सन्यासिनी भगिनी! (आलिङ्गन करती है)।

रुक्मैया—भक्ति, भक्ति! अरे वह कहां गया भक्ति और यह कहां से आ निकली?

प्रारब्ध—पाताल में से जैसी गङ्गोत्री।

राधा—राधा-कृष्ण पर कलङ्क लगाने वालो! राधा, श्री कृष्ण की पवित्र मित्र है, सखी है, भक्त है उपासक है। श्री कृष्ण सदाचारी, ब्रह्मचारी, और राम तुल्य एक पत्नी व्रतधारी है। राधा, श्री कृष्ण के इन्द्रिय-विषय को नहीं किन्तु हृदय चैतन्य को, प्राकृत मोह को नहीं किन्तु स्वर्गीय स्नेह को, अनित्य वासना को नहीं किन्तु ज्ञान भावना को वर चुकी है। कृष्ण गुरु की शिष्या बन चुकी है। और वैसे होने का सब ज्ञान पिपासुओं को अधिकार है। पर श्री कृष्ण की गृह पत्नी तो रुक्मिणी ही कहलायगी।

रुक्मैया—देर है देर। लाखों का लश्कर द्वारका को घेर कर पड़ा है। फिर इस की मजाल क्या है मजाल कि वह कृष्ण यहां आ सके अरे, मेरे सामने भी फड़क सके? रुक्मिणी! देख, अब न मानेगी तो ज़बरदस्ती से हरण करा व्याह देनी पड़ेगी। बतला-श्यामसुन्दर! तेरा कृष्ण बतला। आओ आओ शिशुपाल! [रुक्मिणी का हाथ पकड़ता है और शिशुपाल के हाथ में ज़बरदस्ती रखने लगता है।]

रुक्मिणी—हे प्रभु उद्धारनहार!

श्यामसुन्दर—ख़बरदार। [रुक्मिणी का हाथ छुड़ाकर।] कृष्ण को देखना है? इस श्यामसुन्दर के ही शरीर में कृष्ण का अवतरण होगा और वही रुक्मिणी से विवाह करेगा।

शिशुपाल आदि—घोर अपमान। भयंकर वाग्बाण।

रुक्मैया—मैं इसका सिर उड़ाता हूँ।

कृष्ण—सावधान। भले आ। मैं कृष्ण स्वरूप बतलाता हूँ। [प्रकट होता है।]

रुक्मिणी—हे नाथ? [कहकर वरमाला डालने जाती है कि त्यूंही कोलाहल मचता है।]

रुक्मैया—शिशुपाल-मारो, मारो। तत्काल।

बलदेव—कर्मयोग-(प्रवेशकर।) ख़बरदार होशियार! [टॅबलो] ड्राप।

पहिला अङ्क समाप्त।

—○:०:○—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विलायती हुण्डी की दर।

लेखक-श्रयुत् प्रोफेसर जगद्धर गुलेरी एम० ए० एल०एल० बी०

(४)

भारत के मन्त्री और भारत सरकार को इस रिपोर्ट की राय पसन्द आई और मिस्टर दलाल की दलीलों पर विशेष ध्यान न देकर गवर्नमेण्ट ने २४ पैंस की दर को स्थिर रखने की २३ जून १९२० की सूचना में प्रतिज्ञा की। जैसाकि ऊपर कहा जाचुका है २४ पैंस कीदर नियत करने का मुख्य कारण चान्दी की कीमत का बढ़जाना और पौण्ड का सोने में गिरजाना था क्योंकि ४३ पैंस फ़ी आउन्स की क़ीमत के ऊपर चांदी खरीद कर रुपये गढ़ना और उनको १६ पैंस का मानना अपना दिवाला निकलवाना था। इसलिए रुपये कीदर पौण्ड में इतनी करदी गई कि ऊंचे दाम पर चांदी खरीद ली जासके और इसके रुपये गढ़े जानेपर उनके गलाए जाने काभी डर न रहे। चांदी का उनदिनों का भाव देखते हुए कमेटी ने १३ पैंस फ़ी आउन्स के भाव को अवधि मान कर उसके अनुसार २४ पैंस की दर (सोने में जो ११·३ ग्रेन अर्थात् पौण्ड के दसवें हिस्से के बराबर होती है) नियत करने का उपदेश दिया था। कमेटी को चांदी के भाव गिरने की संभावना न थी। १९१९ और १९२० के पहिले ४ महीने तक निस्सन्देह चांदी बड़ी तेज़ रही और आशा भी यही थी कि यह दशा बनी रहेगी क्योंकि कार्पेन्टर और कुलिस नामक दो प्रसिद्ध विद्वानों ने अपनी 'संसार की खानों से चांदी का प्रतिवर्ष निकलना" इस विषय की रिपोर्ट में यही मत प्रकाशित किया था कि चांदी का भाव चढ़ा ही रहेगा

अमेरिका में चांदी सब से ज़्यादा निकलती है। वहां (Pittman n's act) (पिटमैन्स एक्ट) नामक कानून से एक प्रकार से अमेरिका के संयुक्तराज्य ने चांदी की कीमत ही नियत करदी क्योंकि इस कानून से संयुक्तराज्य को अपने यहां से निकली हुई कुल चांदी १ डालर फ़ी आउन्स की दर पर ख़रीदना पड़ गया इसदर से अमेरिका की चांदी का भाव ६० पैंस फ़ी आउन्स से नीचे नहीं गिर सकता क्योंकि एक डालर ३·९७ फ्रासरेट से ५ शीलिंग के बराबर होता है। और प्रतिनिधि पिटमेन के कहने के अनुसार तो २० सालतक चांदी का भाव ६० और ७५ पैंस फ़ी आउन्स के बीच में ही बना रहेगा। किन्तु कई कारणों से चांदी का भाव ८९½ पैंस (१२ फरवरी १९२०) तक चढ़कर गिरने लगा और १६ जून को ४४⅞ पैंस और २३ दिसम्बर को ४० पैंस ही रहगया और चांदी के इस प्रकार गिरने से पौण्ड की दर घटने लगी:—

	औसत चांदी की दर।	औसत पौण्ड कीदर।	
जनवरी	२७ पैंस	२· ३	यह महीने की दर की औसत है जिस में छोटे छोटे भिन्नों को अलग कर दिया है।
फरवरी	३२½	२· ८½	
मार्च	२९¼	२· ५	
अप्रैल	२७¾	२· ३¾	
मई	२४¼	२· ०¼	
जून	२३⅓	१· ११½	
जुलाई	२१⅜	१· ९¾	
अगस्त	२२	१· १०	
सितम्बर	२१¾	१· १¼	
अक्टूबर	१९½	१· ७½	
नवम्बर	१९	१· ७०	
दिसम्बर	१७	१· ५	
२८ दिसंबर	१७	१· ५	

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

चांदी का भाव और पौण्ड की दर।

	पौण्ड की दर	चांदी का भाव
१२ फरवरी	३३$\frac{3}{8}$ (३४) पैं.	८९$\frac{1}{2}$ पैं.
२३ जुलाई	२२$\frac{1}{2}$,,	५५$\frac{1}{8}$,,
२८ अक्टूबर	११ ,,	५२ ,,
२८ दिसंबर	१७ ,,	४२ ,,

चांदी की कीमत को यदि $\frac{165}{488}$ से गुणा किया जाय तो रुपये की दर का कुछ अन्दाज़ा हो सकता है।

ऊपर दिए हुए चांदी के भाव और पौण्ड की दर को मिलाने करने से दोनों में कितना लगाव है यह साफ़ मालूम हो जायगा और यह भी मालूम हो जायगा कि चांदी के चढ़े हुए भाव को साधारण दशा समझ कर झट पट पौण्ड की दर को बदलना एक जल्द बाज़ी का काम हुआ है। और गिरती हुई दरको सरकार किसी प्रकार सम्हाल भी न सकी। २४ पैंस की दर को सरकार ने मान तो लिया पर उसे व्यापार में क़ायम कैसे किया जाय। इस लिए यह निश्चय किया गया कि विलायत पर तार की हुण्डियां १०) रु० पौंण्ड की नई दरसे बेची जांय और उसमें पौंण्ड के सोने में कम होने से कुछ बट्टा * भी शामिल किया जाये।

इसका फल यह हुआ कि सरकारी हुण्डियों की क़ीमत में और बाज़ार की तार की हुण्डियों में फर्क़ रहने लगा। विलायत रुपया भेजने की मांग इतनी बढ़ी कि बाज़ार की दर और भी गिर गई किन्तु सरकार की दर में पौंण्ड के बट्टे के कारण अन्तर रहता ही गया और मार्च में ३$\frac{3}{8}$ पैंस तक फर्क़ हो गया। सट्टे वाले ऐसे मौक़ों से भला कब चूकते हैं उन्हों ने खूबही हाथ मारे और जितना फर्क़ ज्यादा हुआ उतनी ही उनकी मांग बढ़ती गई—अन्त में जब जून में पौण्ड की दर २४ पैंस से भी नीचे गिरने लगी तो सरकार को हार कर २४ जून को सरकारी हुण्डियों की कीमत २९ पैंस जैसा कि कमेटी का उपदेश था न रख कर २३$\frac{19}{32}$ ही पैंस रखनी पड़ी और २८ सितंबर को तो हुण्डी बेचना ही बन्द करना पड़ा। सरकार को १ फरवरी से लेकर २८ सितम्बर तक ५$\frac{1}{2}$ करोड़ पौण्ड या १६ पैंस के हिसाब से ८२$\frac{1}{2}$ करोड़ रुपए की हुण्डियां बेच कर भी २४ पैंस की दर को स्थिर रखना अपनी शक्ति के बाहर समझना पड़ा।

पर साथ ही लोगों को यह आक्षेप करने का स्थान भी मिल गया कि भारत सरकार ने लड़ाई के दिनों में लंडन में संचय किया हुआ

(*) १ पौण्ड में ११३·००१६ ग्रेन सोना होता है। लंडन में २३ जुलाई १९२० को सोने का भाव ५ पौ. ८ शि. ९ पैंस फी आउन्स था अर्थात् ४८० ग्रेन खालिस सोने का इस हिसाब से १ पौण्ड में केवल $\frac{480}{5.8.9}$=८८·२ ग्रेन सोना हुआ, यह वास्तव में पौण्ड के ११३·००१६ ग्रेन का मूल्य हुआ इस लिए पौण्ड पहिले से $\frac{88.2}{113}$=·७८० ही रह गया अब यदि पौण्ड की दर २२$\frac{1}{2}$ पैंस हो तो सोने में उसका मूल्य २२$\frac{1}{2}$×·७८०=१७ पैंस ही समझना चाहिए या पौ. के सोने में गिरने का अन्दाजा अमेरिका और लंडन की दर से भी चल सकता है जैसे यदि आज अमेरिका की (Cross rate) क्रास रेट $\frac{3.97}{3.97}$ है तो इसका मतलब हुआ कि १ पौण्ड ३ डालर ९७ सेन्ट ही रह गया और वास्तव मे डालर और पौण्ड का सोने का सम्बन्ध ४·८६६ डालर बराबर एक पौण्ड के है, इससे पौण्ड $\frac{3.97}{4.866}$=·८१५ रह गया और यदि पौण्ड की दर २१ पैंस हो तो वास्तव में २१×·८१५=१७ पैंस ही सोने में है॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सोने का कोष यों ही नष्ट कर दिया।

पर इस का फल जो होना था वही हुआ इतने दिनों तक पौण्ड की दर के चढ़े रहने से [रुपए की दर के गिरे रहने से] माल का बाहर जाना रुक गया और अन्दर आना बढ़ गया जिससे व्यापार की विषमता हमारे विरुद्ध होगई। जैसा कि भारत मंत्री ने पार्लीमेण्ट के एक प्रश्न के उत्तर में कहा कि जनवरी से अगस्त तक ७ महीनों में यह देश ३६ करोड़ रुपए का देनदार होगया। इस विपरीत विषमता के कारण सरकार ने यह बतलाए हैं—

[१] अमेरिका और योरुप के बाज़ारों में हमारा पहिले का माल भरा पड़ा है और यूरोप के देशों की आर्थिक दशा ख़राब होने से और उनके रुपए पैसे की कीमत चढ़ जाने से उन्हें बाहर के माल के दाम देने में बड़ी कठिनाइयां होती हैं।

[२] जापान में व्यापार की हालत बड़े संकट की हो गई थी और यहां से रुईका खरीदना और दूसरा व्यापार भी बन्द होगया था।

[३] देशमें अन्न की उपज के कम होने से सरकार को बाहर अनाज भेजने में रोक टोक रखने की ज़रूरत बनी रही। पर इन सब कारणों को मानते हुए भी यह स्वीकार करना ही पड़ेगा कि पौण्ड की दर के ऊंचे रहने से बाहर को माल का जाना घट गया। और जिन्हें बाजार से जानकारी है उन्हें तो यही मुख्य कारण जंचेगा। और चांदी के गिरने और माल के अन्दर बहुत आने से पौण्ड की दर का घटना स्वभाविक ही था और दिन पर दिन दर गिररही है और यह नहीं कहा जा सकता कि यह गिरता २ कहां रुकेगा। पर गवर्नमेण्ट को अभी तक यही आशा बनी हुई है कि करेंसी कमेटी की बतलाई हुई २४ पैंस की दर साधारण दशा के आते ही अपने आप स्थिर हो जायगी और लार्ड मेस्टन ने भी मैंचेस्टर में वक्तृता देते हुए इसी विचार को प्रगट किया है कि यदि एक दो वर्ष में नहीं पर कुछ काल के अनन्तर यह दर अवश्य पहुंच जायेगी।

पर सोने चांदी के बाज़ार को देखते हुए तो सरकार की आशा पूरी होने की सम्भावना कम ही दिखाई देती है।

लण्डन में सोने चांदी की दर।

	सोना खालिस	चांदी
२३ जुलाई १९२०	पौ. ५. ८ शि. ९ पैं०	५५½ पैं० फी आउन्स
२६ अगस्त ,,	५. १५. ०	५८½ ,,
३० सितम्बर ,,	५. १८. ४	५९½ ,,
२८ अक्टूबर ,,	५. १७. ११	५२ ,,
२५ नवम्बर ,,	५. १७. ७	४७½ ,,
२३ दिसम्बर ,,	५. १७. ८	४०½ ,,

आज से ६ महीने पहिले २३ जुलाई को सोने का भाव ५ पौ० ८ शि० ९ पैं० और चांदी का ५५½ पैं० अर्थात् सोना चांदी से रूप में $\frac{५.८.९}{५५½ \text{ पैं०}}$ = २३. ६ गुणा था और २३ दिसम्बर को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

५. १५. ८
———=३४. ८ गुणा हो गया। इस से मालूम
४०⅝

होता है कि चांदी का दाम सोने में कितना गिर रहा है। और यदि सोने में रुपए का भाव देखा जाय तो पता लगेगा कि रुपया जो जुलाई में १७ पैंस (पौण्ड की दर तो २२½ पैंस थी) सोने का था दिसम्बर में १३ पैंस (पौण्ड की दर १७⅔) ही रह गया और सरकार इस १३ पैंस सोने के रुपए को २४ पैंस का करना चाहती है!

ग्रेन सोना ही होता है। इस का मतलब यह हुआ कि रुपया पौण्ड में तो ६.१ ग्रेन सोने के बराबर समझा जाता था पर उस की असली कीमत सिर्फ ५.२ ग्रेन ही थी।

हमारी राय में भारत में चांदी की जरूरत से जियादा भरती होने से और चीन के दुर्भिक्ष के कारण ग्राहकों के न रहने से चांदी का बाज़ार और भी मन्दा होगा और साथ ही साथ पौण्ड की दर भी गिरेगी यह समझ में नहीं आता कि केवल सरकार की घोषणा से रुपये की दर कैसे स्थिर हो सकती है। अब यदि २, ३ साल में चांदी का भाव गिर कर लड़ाई शुरू होने के पहिले के भाव पर पहुंच जाय [१९०७ से लेकर १९१५ तक औसत भाव २७½ पैंस ही था] मान लिया जाय, कि ३० पैंस हो जाय तो रुपए की असली कीमत १० पैंस या ६⅔ आने और सरकारी कीमत २४ पैंस की दर से १६ आने होगी। इतने फ़र्क से न केवल नक़ली रूपये बनने लगेंगे पर लोगों का रुपये पर से विश्वास ही उठ जायगा यदि सरकार रुपये की कीमत को बाहर के लिए सोने में भले ही सम्भाल सके पर देश के अंदर रुपये की कीमत के इतने गिर जाने से चीज़ों के दाम इतने बढ़ जायेंगे कि जिस का अन्दाज़ा लगाना कठिन है।

[५]

हमारी राय में पौण्ड की दर को जल्दी से

[क] २३ जुलाई को एक आउन्स ख़ालिस सोने का दाम ५. ८. ९=अर्थात् १३.५ पेंस हुए
२४०×४८०
इस लिए १ पौण्ड की केवल———=८८.२ ग्रेन ही खरीदने की शक्ति थी पर पौण्ड में
१३.५
८८. २
११३. ००१६ ग्रेन होते हैं इस लिए पहिले से पौण्ड की कीमत——=.७८० रह गई और इस
११३.
लिए २३ जुलाई पौण्ड की दर जो २२½ पैंस थी वास्तव में २२½×.७८=१७ पैंस के बराबर है।
४८०
उसी प्रकार २३ दिसम्बर को एक पौण्ड ———=८३ ग्रेन खरीद सकता था पौण्ड
५. १५८
इस लिए ८३/९६०=.७३४ ही रहगया और पौण्ड की दर जो १७⅔ पैंस थी वास्तव में १७⅔×.७३४
१७⅔×८३
अर्थात् १३ पैंस सोने में रह गई। उस दिन लण्डन में १ रुपया पौण्ड की दर से———
२४०
=६.१ ग्रेन सोना खरीद सकता था पर रुपये की चांदी का वास्तविक मूल्य १६५ ग्रेन चांदी
४०⅝×१६५ ४८०
है उस की कीमत———×———=५.२
४४४ ५.१८.८

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बदलना बड़ी भूल हुई है। युद्ध के पीछे व्यापार की गड़बड़ी होना आवश्यक था पर इस असाधारण दशा को साधारण समझना रोग के निदान में भूल करना है। इस अवस्था में वर्तमान दशा को परिवर्तन करना रोग को और भी पेचीला करना है। जैसा कि सरडेविड वार्वर का कहना है कि रुपये को जिस की असली कीमत बाहर की कीमत से कम है उस को बनाये रखना ही कठिन है।

पौण्ड की दर का बढ़ जाना स्वाभाविक था क्योंकि युद्ध के कारण व्यापार की विषमता हमारे अनुकूल थी और यदि हिसाब को घटाने के लिए सोने चांदी के आने में रुकावट न होती तो पौण्ड की दर अपने आप ही बैठ जाती बाहर के देशों के महंगेपन का असर तो अवश्य ही होता पर देश में रुपये की जगह सोने का सिक्का चलाने का एक अच्छा अवसर मिल जाता। सरडेविड वार्वर और ईस्टर्न बैंकस एसोसिएशन Eastern Bank's association के प्रतिनिधि [ईस्टर प्रेस्टन की सम्मति में इस का उपाय सरकार को यही करना था कि चांदी की मांग को घटाते और विलायत को जो रुपया भारत को देना था उसे देने में सुबीता कर देते। और इस देश में सोने के सिक्के का प्रचार करने से बहुत सी कठिनाइयां आगे के लिए दूर हो जातीं। विलायत के लोगों का यह डर कि भारत में सोना चांदी जाकर खप ही जाता है दिसम्बर मास की घटनाओं से दूर हो सकता है क्योंकि व्यापार की देनदारी को हटाने के लिए इस देश से सोना चांदी बाहर बहुत ही भेजा गया है। एक बार सोने का सिक्का अच्छी तरह चलन में आजाय तो व्यापार में सोने चांदी का अन्दर बाहर आना जाना अपने आप ही होने लगेगा जैसा कि इंगलैण्ड फ्रांस और आस्ट्रेलिया में होता है।

मनः कामना।

लेखक—श्रीयुत सुरेन्द्रनाथ तिवारी।

मन-मन्दिर में सदा भावनायें उठती हैं;
जल-तरंग सम यही कामनायें उठती हैं;
हृदय-देव, आराध्य-देवि श्रीसरस्वती का;
पा आशिष हो मुदित चन्द्र से कुमुद्वती का।
सीख कला-कौशल कलित, देश वन्धु उपकार हित।
सुखद-स्वदेशी-साज का, विविध करूं उपचार नित ॥१॥

बन्धु हमारे सभी उच्च-उद्देशी जन हों;
शिक्षा-प्राप्त, स्वतन्त्र, आत्म-गौरव युत मनहों;
देशोचित नित कार्य्य करें आत्मोन्नति करके;
न्याय-पक्ष में भीरु बने बैठें मत डरके;

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दीन-देश-दुखियान पै, दया-दृष्टि धारे रहैं।
सदा-सुखद-शुचि-सत्य पै, तन, मन, धन वारे रहैं ॥२॥
धर्म-पक्ष भी सबल हमारा सदा रहा है;
श्रुति सन्तों ने 'सुदृढ़ धर्म पर रहो' कहा है;
सच्चा-सेवक बनूं धर्म का तज आडम्बर;
कृति पुनीत हो नहीं चाहिये फिर वाघम्बर।
काम, क्रोध, मद, लोभ तजि, विमल-बुद्धि युत मैं बनूं।
प्रिय-देश-बन्धु सेवार्थ फिर, मत अपने को मैं गनूं ॥३॥
सुखद-स्वदेश सदैव रहा है पूज्य हमारा,
देता हमको त्राण इसी का हमें सहारा;
किन्तु काल बन गया दुःखका इसके कारण,
मैं सोचूँ किस भाँति होय दुख-देश निवारण।
सोच समझ कर हीन मैं, इसके हित बैठा रहूँ।
या, कर सभा सुसायटी, लम्बे लेक्चर मैं कहूँ ॥४॥
कर्म-वीर बन किन्तु दलित दुख देश करूँ मैं;
अन्याई को न्याय चक्र में डाल दरुँ मैं;
देश-त्राण में प्राण हमारा यदि खो जावे;
मनः कामना पूर्ण हमारी सब हो जावे।
यदि एक अंश भी हे हरे! यह पूरा हो पायगा।
तो 'सुरेश' सुख शान्तिपा, तुझ पर बलि २ जायगा ॥५॥

गीता स्वाध्याय।

लेखिका—श्रीमती कौशल्यादेवी विशारदा।

वर्तमान समय में जब हम भारतीय जन समुदाय के नित्य कर्मों पर दृष्टि डालते हैं तो विदित होता है कि स्त्री जगत ने सन्ध्या अग्निहोत्रादि विधान के अतिरिक्त स्वाध्याय काल में गीता को प्रायः सर्वोच्च स्थान दिया हुआ है। यद्यपि यह वेदों का स्थान नहीं लेती तथापि गीता को भारतीय नर नारियों ने अन्य सब ग्रन्थों की अपेक्षा अधिक अपनाया हुआ है इसका स्वाध्याय भारतवर्ष के सब प्रान्तों में प्रचलित हिन्दु धर्म्म का अङ्ग स्वीकार किया गया है। हिन्दुओं के अतिरिक्त मुसलमान ईसाई तथा अन्य मतावलम्बियों ने भी इस ग्रन्थ को आदर की दृष्टि से देखा है यही कारण है कि इस ग्रन्थ की विविध भाषाओं में अनेक टीकाएं हो चुकी है। हम अपनी बहिनों व भाइयों के मनो-विनोदार्थ तथा उन के विचारार्थ "ज्योति" द्वारा गीता के स्वाध्याय का सार क्रमशः उनके सन्मुख पहुंचाने का प्रयत्न करेंगे। गीता में अनेक ऐसी शिक्षाएं हैं जिनका सम्बन्ध हमारे व्यवहारिक जीवन के साथ है उनको हम अपने

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जीवन में चरितार्थ करके बहुत लाभ उठा सकती हैं॥

गीता का महत्व और उसकी उपयोगिता।

वस्तुतः वेदों से उतर कर बाकी सब धार्मिक साहित्य में गीता को बहुत ऊंचा स्थान दिया गया है वेदों का साररूप होने के कारण इसमें भी कर्म उपासना ज्ञान इन तीनों काण्डों की स्पष्ट व्याख्या मिलती है मोक्ष-पद प्राप्ति की इच्छा करने वालों के लिये इन तीनों काण्डों में वर्णित विधान का अनुकरण करना परमावश्यक समझा जाता है। भगवान कृष्ण ने सर्व साधारण जनों के हितार्थ इस के गूढ़ तत्वों का ऐसी सुगम और सरल भाषा में गायन किया है कि जिसकी तुलना अन्य कोई ग्रन्थ नहीं कर सकता। लोकमान्य तिलक महाराज ने अपने अपूर्व "गीता रहस्य" ग्रन्थ में इस पुस्तक का महत्व इन शब्दों में वर्णन किया है "श्री मद्भगवत गीता हमारे धर्म्म ग्रन्थों में एक अत्यन्त तेजस्वी और निर्मल हीरा है। पिण्डब्रह्माण्ड-ज्ञान सहित आत्मविद्या के गूढ़ और पवित्र तत्वों को थोड़े में और स्पष्ट रीति से समझा देने वाला, उन्हीं तत्वों के आधार पर मनुष्य मात्र के पुरुषार्थ की अर्थात् आध्यात्मिक पूर्णावस्था की पहिचान करा देने वाला, भक्ति और ज्ञान का मेल करके इन दोनों का शास्त्रोक्त व्यवहार के साथ संयोग करा देने वाला, और इस द्वारा संसार से दुःखित मनुष्य को शान्ति देकर उसे निष्काम कर्तव्य के आचरण में लगाने वाला, गीता के समान बाल बोध ग्रन्थ संस्कृत की कौन कहे समस्त संसार के साहित्य में नहीं मिल सकता"।

गीता में ब्राह्मण से लेकर चाण्डाल पर्यन्त सब मनुष्यों के लिये बिना पक्षपात के यथाधिकार उपदेश दिया गया है। चार वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, इन सबके कर्तव्य इसी अनुपम पुस्तक में दर्शाये गए हैं। वर्ण व्यवस्था के अतिरिक्त चतुराश्रम की व्यवस्था भी इसने प्रतिपादन की है। इससे परिणाम यह निकलता है कि गीता सार्वजनिक उद्देश्यों का प्रतिपादन करती है।

गीता-स्वाध्याय का फल।

गीता के स्वाध्याय से मनुष्य अपने कर्तव्यों को पहिचानने लग जाता है विशेषतया उसमें निष्काम कार्य करने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है और सब प्राणियों में आत्मा की झलक देखता हुआ प्रेम पूर्वक व्यवहार करने में प्रस्तुत हो जाता है कर्तव्य परायणता तथा परोपकार भाव उसके हृदय में कूट २ के भर जाते हैं जिससे हर समय श्रेयस्कर कार्यों के करने में उत्सुक रहता है। और आत्म-ज्ञान होने से उस के हृदय के अज्ञानान्धकार का क्रमशः निराकरण होता चला जाता है। आत्म-बल को प्राप्त करके शारीरिक कष्टों का सामना परम शान्ति और धैर्य्य पूर्वक करता हुआ संसार के रणक्षेत्र में विजय प्राप्त कर लेता है॥

गीता की शिक्षा का आधार।

ऊपर कहा जा चुका है कि गीता को वेदों से उतर कर अन्य सर्व धार्मिक ग्रन्थों से उच्च स्थान दिया गया है। यहां पर यह न भूल जाना चाहिये कि उपनिषद जो आध्यात्मिक ज्ञान का कोष हैं वह अपनी उपयोगिता की दृष्टि से कुछ कम मूल्यवान हैं। उपनिषदों में प्रधान विषय ज्ञान काण्ड है परन्तु गीता में कर्म, उपासना, ज्ञान इन तीनों काण्डों का प्रतिपादन है। ज्ञान काण्ड की दृष्टि से गीता उपनिषदों की ऋणी मानी जाये तो अत्युक्ति न होगी। और तीनों काण्डों का विवरण करने से वेदों की ऋणी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मानी जानी चाहिये। अतः हमें यह स्वीकार करना अभीष्ट है कि गीता वेदों और उपनिषदों के आधार पर कीर्तन की गई है। इस विचार के पोषण में हम उस श्लोक का उद्धरण करते है जिसका उल्लेख प्रायः सब टीकाकारों ने अपने ग्रन्थों में किया है॥

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालनन्दनः।
पार्थो वत्सः सुधी र्भोक्ता दुग्धं गीतामृतं महत्॥

अर्थात् जितने उपनिषद हैं वे मानो गौ हैं श्रीकृष्ण दूध दुहने वाले (ग्वाल) हैं। बुद्धिमान अर्जुन भोक्ता बछड़ा है और जो दूध दुहा गया है वही मधुर गीतामृत है॥

भगवान कृष्ण का यथोचित स्थान।

गीता के गायक भगवान श्रीकृष्ण जी के सम्बन्ध में अपठित लोगों में अनेक भ्रम फैले हुए हैं उनका निराकरण हम स्वयं भगवान कृष्ण और अर्जुन के परस्पर वार्तालाप द्वारा करते हैं जिस का उल्लेख पाठक वर्ग अनुगीता के आरम्भ में (म० भा० अश्वमेध अ० १६ श्लो० १०-१३) में पढ़ सकते हैं उस का सारांश यह है कि एक वार महाभारत के युद्ध के बाद श्री कृष्ण और अर्जुन परस्पर प्रेम-पूर्वक वार्तालाप कर रहे थे। अर्जुन ने श्रीकृष्ण जी से प्रार्थना की कि कृपया जो गीता का उपदेश युद्ध के समय आप ने मुझे किया था वही अब कीजिये। तब श्रीकृष्ण भगवान ने उत्तर दिया कि उस समय मैंने अत्यन्त योग युक्त अन्तःकरण से उपदेश किया था अब सम्भव नहीं कि वैसे फिर कर सकूं इस बात से स्पष्ट प्रकट होता है कि भगवान कृष्ण योगी महापुरुष थे और योगबल द्वारा एकाग्र चित्त होकर उन्होंने गीता का गायन किया था। मनुष्य की एकाग्रता हर समय एक समान नहीं रहती इसी लिये भगवान कृष्ण जी ने गीता के पुनः गायन में अरुचि प्रकट की।

यदि हम भगवान कृष्ण को योगी ही स्वीकार करेंगे तो उनके गुणों को पूज्य दृष्टि से देखते हुए अनुकरण करने का प्रयत्न करेंगे। और उनकी परम प्रतिष्ठा हमारे हृदय में स्थान प्राप्त कर लेगी। जो लोग परमात्मा मान कर उनकी पूजा करते हैं उन्हें उन की शक्ति तथा गुणों का अपने में सन्निवेश करना असम्भव प्रतीत होता है कारण यह है कि उन के हृदय में यह स्थिति बनी रहती है कि परमात्मा सर्वज्ञ सर्व सृष्टि कर्ता और अनन्त सामर्थ्य युक्त है हम अल्प जीव कैसे उस के गुणों की प्राप्ति कर सकते हैं अतः परमात्मा के कार्यों तथा गुणों को अपनी ग्रहण शक्ति से बाहिर मानते हुए श्रीकृष्ण भगवान को परमात्मा मानने वाले उन को ध्येय निश्चित कर के उन के कार्यों तथा गुणों के ग्रहण करने से पृथक् ही रहते हैं। वैदिक धर्मावलम्बियों और पौराणिक मतावलम्बियों में यह भेद देखने में आता है कि वैदिक धर्मी श्रीकृष्ण को परम पूज्य स्वीकार करते हैं तथा उन्हें श्रद्धेय समझकर उनके चरित्र को अपने चरित्र में चित्रित करने के लिये सर्वदा तत्पर रहते हैं परन्तु विपरीत इस के हमारे सनातन धर्मी भाई उनको लीलामय समझ कर उन की लीला खेलने में ही अपने जीवन लीला की समाप्ति समझते हैं।

अब हम अपनी प्रिय बहिनों व भाइयों से निवेदन करते हैं कि वे गीता पढ़ते समय श्रीकृष्ण के योगी चरित्र को हृदय में धारण करते हुए प्रतिदिन गीता के किसी न किसी श्लोक का यथार्थ चिन्तन किया करें। हम आगे चल कर ऐसे अनेक श्लोकों को टीका टिप्पणी सहित अपनी बहिनों के विचारार्थ लिखेंगे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

साथ ही यह भी दर्शायेंगे कि उनकी शिक्षा पारिवारिक जीवन के किस पहलू में हमें उपयोगी हो सकती है। हम इस बात को स्वीकार नहीं करते कि गीता के अध्ययन से मनुष्य सांसारिक कार्यों के सर्वथा अयोग्य हो जाता है। हमारा तो यही विश्वास है कि गीता का पाठ मनुष्य को कर्मयोगी बना देता है और मनुष्य का व्यवहारिक जीवन यदि गीता की शिक्षा के अनुसार चलाया जावे तो गृहस्थियों को अपने जीवन में परम आनन्द लाभ होगा।

गीता के प्रथमाध्याय की मुख्य समस्या।

गीता का प्रथम अध्याय हमारे सन्मुख एक रणक्षेत्र का दृश्य उपस्थित करता है यह रणक्षेत्र प्राचीन कुरुक्षेत्र है इस पर दो बड़ी सेनाएँ अपने शूरवीर, अस्त्र शस्त्रों से सुसज्जित नेताओं सहित घोर संग्राम में प्रविष्ट होने के लिये उद्यत खड़ी हैं एक ओर पाण्डव और दूसरी ओर कौरव दोनों सजातीय बान्धवगण परस्पर लड़ने मरने को तैय्यार खड़े हैं। युद्ध का मूल कारण उनका घरेलु झगड़ा है कौरवों की स्वार्थ परता, पाण्डवों को अपनी पैतृक सम्पत्ति से वञ्चित करना चाहती है पाण्डव इस हानि को सहन नहीं करना चाहते। अतः वे अपने भाग्य का निर्णय रणक्षेत्र में करने के लिये तैय्यार हैं वे इसे धर्म्मयुद्ध समझते हैं। अर्जुन भगवान कृष्ण के नेतृत्व में रणक्षेत्र में पहुंचते हैं। वहां पहुंच कर चारों ओर नज़र उठा कर जब वह देखते हैं तो अकस्मात् उनके हृदय में एक संशय उत्पन्न हो जाता है और वह यह कहने लगजाते हैं कि यह क्यों? और किस लिये? वह अपने सामने इस होने वाले युद्ध को कुलक्षय का स्वरूप समझते हैं और अपने आप को महापातक का भागी समझने लग जाते हैं। किं कर्तव्य विमूढ़ होकर भगवान कृष्ण को कहते हैं—

दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण! युयुत्सुं समुपस्थितम्।
सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति ॥२८॥
वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते।
गाण्डीवं स्रंसते हस्तात् त्वक् चैव परिदह्यते ॥२९॥
न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः।
निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव ॥३०॥
न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे।
न कांक्षे विजयं कृष्ण! न च राज्यं सुखानि च ३१॥
किनो राज्येन गोविंद! किं भोगै र्जीवितेन वा।
येषामर्थे काङ्क्षितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च३२॥
यद्यप्येते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसा।
कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकम् ॥३७॥
कथं न ज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्तितुम्।
कुलक्षय कृतं दोषं प्रपश्यद्भि र्जनार्दन ॥३८॥
कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुल धर्माः सनातनाः।
धर्मे नष्टे कुलं कृत्समभिभवत्युत ॥३९॥
अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयम्।
यद्राज्य सुखलोभेन हन्तु स्वजन मुद्यताः ॥४४॥
यदि मामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः।
धार्तराष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत् ॥४५॥
एवमुक्त्वार्जुनः संख्ये रथोपस्थ उपाविशत्।
विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः ॥४६॥

अन्तिम श्लोक में हम यह पढ़ते हैं कि रणभूमि में उपरोक्त भाषण करके शोक से दबाया हुआ अर्जुन धनुष बाण छोड़ कर रथ में अपने स्थान पर बैठ गया। यह एक पूर्ण निराशा का चित्र है। हम में से अनेक बहिनें और भाई अपने २ जीवन के घोरसंग्राम क्षेत्र में अपने दिलों को छोड़कर बैठ गए हैं उन्हें जीवन यात्रा एक अत्यन्त दुष्कर यात्रा नज़र आती है उनमें आत्म विश्वास की वही कमी दीखती है जिसका अनुभव वीर अर्जुन कर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रहा था। हमें पूर्ण आशा है कि जिस प्रकार श्रीकृष्ण भगवान की उत्तेजना देने वाली शिक्षा ने अर्जुन के शिथिल हृदय को सबल कर दिया और उसे अपनी गुप्त शक्तियों को प्रकाशित करने का साहस प्रदान कर दिया वैसे ही हमारे निराशायुक्त बहिनों और भाईयों को गीता का स्वाध्याय आशा का पाठ पढ़ायेगा और वे अपने कर्तव्य मार्ग पर चलने के लिये आरूढ हो जांएगी।

कन्हैया ! ब्रज रैया !! आओ !!!

लेखक—श्रीयुत "कुसुम"

[१]

तम के कारागार में भक्त भ्रमर हैं बंद।
काट विकट बेड़ी करो हे नटवर ! स्वच्छंद ॥
शृँखला कटवैया, आओ ॥ क० ॥

[२]

लक्ष्मी और स्वतंत्रता हरी जा चुकीं हाय !
धर्म चला पाताल को छाय रहा अन्याय ॥
धर्म-ध्रुव-धरवैया, आओ ॥ क० ॥

[३]

टूट पड़ी है शीस पर आज अचानक गाज।
अब मेरी लज्जा तुम्हीं रखना हे ब्रजराज !
लाज के रखवैया, आओ ॥ क० ॥

[४]

श्याम ! सोरही देखलो तीस कोटि संतान।
सत्वर आकर फूँक दो मृत मुरली में जान ॥
मुरलिका बजवैया आओ ॥ क० ॥

[५]

जिसकी प्यारी गोद में खेले हे नँदलाल।
आकर देखो तो हुआ कैसा उसका हाल ॥
टेरती है मैया, आओ ॥ क० ॥

——:०:——

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मारिशस द्वीप।

[३]

लेखक—श्रीयुत् स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी।

वैदिक धर्म प्रचार।

यह थी मारिशस की धर्मावस्था इस समय मैं इस विषय को विशेष विस्तार नहीं देना चाहता इस लिए छोड़कर आगे चलता हूँ। जिस समय इस भांति अधर्म धर्म के नाम पर आसन जमाए बैठा था और रोम के पोपों की तरह बहकाकर लोगों से धन लिया जाता था चारों ओर धर्म विषय में अंधकार फैल रहा था उस तम में उल्लूक अपना पेट भर रहे थे, धर्म की पिपासी आत्माएँ व्याकुल हो रही थीं। जिस भांति मृग मृगतृष्णा के जल को देखकर बलपूर्वक दौड़ता है परन्तु फल कुछ नहीं मिलता है उसी भांति उन भटकती हुई आत्माओं को भी ईश्वर की दया से एक पथ प्रदर्शक मिल गया उस वीर को भी वहां लेजाने वाला हमारा पहला वीर डा० मणि लाल एम० ए० ही था उन्हीं के प्रेरणा से हमारा धर्म योद्धा मारिशस में पहुंचा था।

यह वीर स्वर्गवासी डा० चिरंजीव भारद्वाज था जैसे डा० मणिलाल जी ने लोगों के विचारों को बदला और उन का भ्रम दूर किया वैसे ही इन्हों ने धर्म के विषय में जो अन्धाधुन्ध काम हो रहा था उस के स्थान पर धर्म की स्थापना की। मारिशस की जनता में इनका नाम भारद्वाज के स्थान पर वारहवजा प्रसिद्ध है, साधारणतया लोग कहा करते हैं कि डा० वारहवजा ने धर्म के बारह बजा दिये।

डा० मणि लाल जी के विरुद्ध फरांसीसी तथा कुछ भारतवासी थे यह मैं ऊपर लिख चुका हूँ किन्तु इन के विरुद्ध फरांसीसी तो नहीं थे केवल भारतवासी थे। भारत वासियों में भी मुख्य भाग उन्हीं का था जो अपने आप को ब्राह्मण कहते थे जो व्यक्ति उपरोक्त रीति से लोगों को भयादि बतला कर उनका धन हरने में रोम के पूर्व पोपों से भी बढ़ गए थे भला वह कब यह सह सकते थे कि उन के चक्र में आए हुए व्यक्तियों को धर्म का पथ दिखा कर उस भ्रम जाल से निकाल दिया जावे।

इन की आय जहां प्रथम १५००) मासिक थी वहां इस प्रचार के कारण उस आय की इति श्री होगई और इस वीर ने भी उस अवस्था में अपना सर्व समय प्रचार में लगा दिया अपने स्थान पर स्वाध्याय के पश्चात् मनुष्यों को बालकों को पढ़ाना आरम्भ किया इन का गृह एक पाठशाला बन गई थी।

जिस तरह इन्होंने धैर्य से काम किया उसी तरह इन की धर्म पत्नी ने भी इन का साथ दिया। जहां गृह में पूर्व अनेक नौकर थे और सर्व कार्य उन्हीं द्वारा होता था वहां इस समय एक भी नौकर नहीं है। आटा पीसना, भोजन बनाना, वस्त्र साफ करनादि सर्व कार्य यह देवी स्वयम् किया करती थी। इन गृह कार्य्यों से निवृत्त होकर कन्यायों को पढ़ाना भी इनका कर्तव्य था इन कार्यों के अतिरिक्त प्रचारार्थ कभी गृह छोड़ कर बाहर भी जाना पड़ता था इत्यादि सर्व कार्य यह धर्मी जोड़ा प्रसन्नता से करता हुआ ईश्वरेच्छा पर सन्तुष्ट था।

तीसरा भारतीय जो वहां पंहुचा वह लाला

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जयगोपाल पुरी था। जो सरकारी कर्मचारी था जो कृषकों की बैंकें थीं वह उनके राजिस्ट्रार थे बैंकों की सफलता में यह कृतकार्य नहीं हो सके इनके मार्ग में जो प्रतिबंधक थे वह निम्न लिखित है। प्रथम तो फरांसीसी धनी यह नहीं चाहते थे कि इस तरह का भारतीयों का कोई संगठन होजाय जो उनके मार्ग में कठिनाइएं उपस्थित करें दूसरे वही मारिशस वासियों का विरोध था जो हमारे प्रथम वीर डा० मणिलाल के समय में था इन्हीं कारणों से यह उस कार्य को अधूरा छोड़ कर लौट आए।

एक जिज्ञासू के लिये श्रवण, मनन, निदिध्यासन का कर्तव्य है कि जब तक कोई अधिकारी इन तीनों को न करे उस समय तक वह अपने संदेह दूर नहीं कर सकता। इसी तरह भारत के विषय में जो भ्रम फैला हुआ था कि वहां केवल कुली, वा सिपाही ही रहते हैं यह भ्रम इन तीनों महानुभावों के जाते निवृत्त होगया जो लेशाविद्या शेष थी उस में पूर्व जगत् व्यापि युद्ध की भी सहायता थी जिस समय युद्ध आरंभ हुआ उस समय भारत में भी युद्ध के लिये धन संग्रह किया जाता था और वह सूचीयें कुछ मारिशस में भी पहुंचती थीं उन सूचीयों में राजों, महाराजाओं के नाम लाखों रुपए और धनीयों के नाम से भी अनेक राशिएं अंकित थीं उन्हें पढ़ कर मारिशस वासीयों का भ्रम का भूत भाग गया और उन्होंने यह मान लिया कि भारतवर्ष में केवल कुली ही नहीं और भी रहते हैं इस लिये कितने मनुष्यों के मन में यह संकल्प हुए कि भारतवर्ष को जाकर अपनी आंखों से भी देखना चाहिये सो अब अनेक महानुभाव वहां से भारत की यात्रा के लिये प्रति वर्ष आते हैं। उदाहरणार्थ में लिख सकता हूं गत वर्ष जो अमृतसर में कांग्रस थी उसमें भी मारिशस वासी सम्मिलित थे।

मैं पूर्व लिख चुका हूं कि मारिशस की स्त्रीएं प्रतिशतक तीस ही भेजी जाती थीं देवीयों को उस अवस्था पर कई मनुष्यों के साथ रहना पड़ता था। इस प्रथा ने भारत के उस गौरव को जो पत्नीव्रत वा पतिव्रत के नाम से कहा जाता है ध्वंसप्रायः कर दिया है। भारत में विधवा विवाह का प्रचुर प्रचार नहीं है विधवा विवाह के प्रचारार्थ अनेक सुधारक दल भारत में काम कर रहे हैं। यह एक भिन्न प्रश्न है कि विधवा विवाह धर्म संगत भी है वा नहीं किंतु जितना बल भारत वासीयों को विधवा विवाह प्रचार में लगाना पड़ा है इस से कहीं अधिक शक्ति मारिशस में स्त्री पुरुषों के विवाह रोकने में व्यय होगी, जो प्रथा इस समय मारिशस में प्रत्येक वर्ण तथा पंथ में प्रचलित है वह भारत के किसी प्रांत में भी प्रतीत नहीं होती। टुक सावधान होकर वहां की दशा का इन पृष्ठों में अवलोकन करें यथा एक ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र व मुसलमान, ईसाई की कन्या प्रथम अपने सदृश वर्ण वा पंथ में विवाह करेगी वहां उसके एक दो संतान भी हो जावेगी यदि वहां कुछ खटपट हो तो उस ब्राह्मण वर को छोड़ कर वह देवी एक चमार के गृह में प्रवेश कर लेगी एक आधी संतान वहां उत्पन्न होने के पश्चात् वह एक वैश्य के आ जावेगी वर्ष दो वर्ष वहां व्यतीत करके किसी मुसलमान से विवाह कर लेगी यदि वहां कोई झगड़ा हुआ तो झट उसे छोड़ कर एक क्षत्रिय से नाता बना लेगी यदि दुर्भाग्य से वहां भी चैन न मिला तो कोई ईसाई पाणि ग्रहण के लिये तय्यार है। ईश्वरेच्छा से वहां भी यदि मन न लगे तो ब्राह्मण वरगृह

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में प्रवेश कर सकती है क्योंकि भूमि गोल है। इस भांति प्रत्येक वर्ण वा पंथ की स्त्री वा पुरुष स्वछन्दता से घूम सकते हैं। न कोई जाति बंधन काम करता है न राज बंधन। उस प्रथा ने भारत के सतित्व धर्म को उस रसातल में पहुंचा दिया है जिससे निकल कर फिर ऊपर आना असंभव नहीं तो दुःसाध्य में किसी प्रकार का संदेह प्रतीत नहीं होता। हां जिस विवाह की रजिस्टरी होगई हो उसको तोड़ते कुछ विलंब लगता है जब तक कोई न्यायाधीश फैसला न दे उस समय तक दूसरी स्थान पर नहीं जा सकती है।

जिन विवाहों की रजिस्टरी न हुई उनकी अवस्था ऐसी भी दृष्टि गोचर होती है। एक स्त्री कई वर्ष पर्यन्त एक मनुष्य के साथ माता पिता द्वारा विवाहित होकर रही है यदि उस पर किसी कारण से पति रुष्ट हो तो आज्ञा मिलती है कि मेरे गृह से निकल जाओ मैं तुम्हें अपने गृह में रखना नहीं चाहता यदि वह उस समय आग्रह करे और गृह को न छोड़े तो पति देवता पोलीस में जाकर एक सिपाही बुला लाते हैं और सिपाही गृह में प्रवेश करके सरकारी बल से उस अबला को बाहर निकाल देता है उसका कोई अधिकार नहीं कि उस गृह से कोई वस्तु ले सके जिस गृह में उसने कई वर्ष परिश्रम करके वस्तुओं को संपादन किया था।

इसी भांति यदि पक्ष इससे विपरीत हो अर्थात् रजिस्टरी शून्य विवाह में पति पत्नी को रखना चाहता है परंतु वह किसी कारण से वह शक्ति साथ रहना नहीं चाहती और गृह से निकल किसी अन्य स्थान को जाने के लिये मार्ग पर आजाती है पतिबेचारा उसे मनाने के लिये पीछे आता है पूर्व बात चीत द्वारा समझाता है यदि इससे काम न चले तो इच्छा करता है कि इस शक्ति का हाथ पकड़ कर इसे लौटाले जाय उस समय यदि क्रुद्ध होकर वह शक्ति न्यायालय में जाकर अभियोग करदे कि अमुक मनुष्य ने अमुक मार्ग पर बुरे विचारों से मेरा हाथ पकड़ा और कोई गुण्डा साक्षी भी बन जावे क्योंकि ऐसी अवस्था में साक्षी प्राप्त करना कोई असंभव काम नहीं है उस समय उस पति को दण्ड होगा। यह सुना ही नहीं जाता कि यह स्त्री कितने साल इसके गृह में वास कर चुकी है ऐसी घटनाएं जहां हो पतिव्रता धर्म तथा पत्नीव्रत नियम कैसे रह सकते हैं। प्रत्येक स्वतंत्र है। पुत्रवत् पुत्री का भाग माता पिता की संपत्ति में है कई स्थलों में स्त्री की संपत्ति के लोभ में फंस कर कई धूर्त व्यक्ति उनका धर्म तथा धन भ्रष्ट करके पश्चात् पृथक होजाते हैं और उन अबलाओं को दुःख सागर में धकेल जाते हैं यह तो हुई सतीत्व की दशा, अब टुक 'शिक्षा' को लीजिये। शिक्षा विषय में भारत वासियों के साथ इतना अत्याचार है जिसका उदाहण संसार भर में कहीं नहीं मिलता भारत वासी मारिशस में दो तिहाई से अधिक हैं, शिक्षा का माध्यम आंगल भाषा है और साथ २ फ्रेंच भाषा भी प्रथम श्रेणी से ही पढ़नी पड़ती है इतना लाभ अवश्य है जो विद्यालय में कोई शुल्क नहीं है, बालक बालिका इकट्ठे पढ़ते हैं। विद्यालय छः श्रेणि के होते हैं। फिर भी जिन स्थानों पर वे मनुष्य वास करते हैं। जो नियम बद्ध कुली प्रथा से मुक्त हैं वहां तो विद्यालय हैं जहां नियम बद्ध कुली रहते हैं वहां के भूमि के स्वामीयों ने वहां इस समय तक पाठशालायें नहीं बनने दी हैं और साधारण रीति से पढ़ने की रुचि बालकों में उत्पन्न नहीं होने देते।

मारिशस में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय की पद्धति प्रचलित है। भला कोई विचार करे कि

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जिस स्थान में अँग्रेज और फरांसीसी एक तिहाई भी न हों उस स्थान पर वह पद्धति चलाना धींगाधींगी नहीं तो क्या है? डा० मणि लाल जी के समय में जो कमीशन बैठी थी उस ने लिखा था कि भारतीय बालकों के साथ सर्वथा अत्याचार होता है क्योंकि भारतीय बालक घर में भारतीय भाषा बोलते हैं जब बाहर आकर खेलते हैं तो उन्हें क्रियोली भी बोलनी पड़ती है और जिस समय पाठशाला में जाते हैं उस समय आंगल भाषा और फ्रेंच पढ़नी पड़ती है। एक बालक पर चार भाषाओं का बोझ पड़ता है इस लिए इस रिपोर्ट में सम्मति दी गई थी कि भारतीय बालकों के लिए पाठशाला में भारतीय भाषा पढ़ाई जावे और उस के साथ दूसरी भाषा अंग्रेजी वा फ्रेंच जो वह पढ़ना चाहें पढ़ें किन्तु यह सम्मति अद्य पत्र पृष्ठों पर ही अंकित है मारिशस के किसी भाग में भी प्रचलित नहीं की गई।

जिस भांति शिक्षा के विषय में सम्मति थी उस भांति यह भी सम्मति थी कि जो न्यायाधीश हो वह भारतीय भाषा जानने वाला हो यह भी पूर्ववत् लेख मात्र में समाप्त होगई।

इत्यादि अनेक बातें मारिशस के विषय में लिखी जा सकती हैं किन्तु लेख पूर्व ही लम्बा हो गया है और भय है कहीं पाठक गण लम्बा होने के कारण पाठ करने का कष्ट सहन न करें इस लिए इन विषयों को छोड़ कर उपसंहार में इस विषय पर लिखना आवश्यक है कि भारतियों को मारिशस में लाभ क्या २ हैं।

अफ़रीका में इतना युद्ध होकर भी जो फल नहीं मिला मारिशस में वह प्राप्त है। मारिशस में म्यूनसप्लिटी में सम्मति देने का अधिकार प्राप्त है, यही नहीं इस से आगे व्यवस्थापक सभा के चुनाव में उन का उतना ही अधिकार है जितना अन्य देशियों को। भारतीय व्यवस्थापक सभा के सभ्य हो सकते हैं। कई वार वह सभासद बनने में यत्न कर चुके हैं किन्तु व्यवस्थापक सभा के सभासद बनने में उन्हें सफलता प्राप्त नहीं हुई जो न्यूनताएं थी वह भी अब दूर हो रही है आशा है कुछ समय पश्चात् भारतियों की प्रधानता हो जावे।

रेल में बैठने तथा किसी मार्ग पर चलने की कोई रुकावट नहीं है अपनी इच्छानुसार यत्र तत्र भ्रमण कर सकते हैं।

मारिशस में भूमि पर कोई कर नहीं है भारत में जहां कर की मात्रा पूर्व बीस तीस वर्ष पश्चात् वृद्धि को प्राप्त होती थी अब तो उस से भी शीघ्र बढ़ जाती है [बंगाल को छोड़ कर] जहां बेचारे कृषिकार इसी कर ने विपत्ति में डाल रखे हैं अहर्निश परिश्रम करने पर भी पेट भरना दुःसाध्य सा हो रहा है। वहां भूमि पर कर न होने से यह अवस्था नहीं है। यह सत्य है प्रथम भूमि के स्वामी फरांसीसी थे परन्तु इस समय लगभग तीन चौथाई भारतियों के स्वामित्व में है और आशा है शीघ्र ही भूमि के मालिक भारतीय होजावेंगे, क्योंकि फरांसीसी भूमि छोड़ रहे हैं इस का मुख्य कारण यह है कि जब से भारत से श्रमी भेजनेका निषेध होगया है उस समय से अवस्था सर्वथा ही परिवर्तन होगई है क्योंकि वहां रहने वाले वहां के दाव पेंच से विज्ञ हैं वह अपना कार्य साध ही लेते हैं।

योरोपीय जातियें श्रमियों को नियम में बांध कर परास्त कर सकती हैं, इस में कोई सन्देह नहीं किन्तु स्वतन्त्र कार्य में भारतीय उन से पराजित नहीं होते यही कारण है जो अफरीका से भारतीय निकाले जाते हैं, इसी हेतु से फिजी में गड़बड़ है।

भारत के साथ जो मारिशस का व्योपार

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है वह प्रथम मद्रास प्रांतके मनुष्यों के हाथमें था मद्यादि दोषों के कारण इस समय उन के हाथ से निकल कर मुम्बई प्रांत वालों के हाथ में आ गया है।

इस में सन्देह नहीं कि भारतीय जिस समय भारत से सिधारे थे उस समय केवल श्रमी ही थे इस समय वे केवल श्रमी नहीं हैं बैरिस्टर भीहैं अटोरनी,नोटरी,लेखक (Clerk)अध्यापक तथा अन्य प्रतिष्ठित कार्य भी इनके हाथ में हैं।

अन्त में मैं एक बात और भी लिख देनी उचित समझता हूँ मारिशस में सम्पूर्ण खाद्य पदार्थ भारत से जाते हैं कुछ वस्त्र तथा भूषण भी इधर से भेजे जाते हैं, क्योंकि मारिशस में विशेष रूप से ईख की खेती की जाती है और कुछ शाकादि भी होते हैं इस लिए मारिशस से खांड विशेषरूप से भारत को आती है। इस का एक यह भी कारण है कि जैसी उत्तम खांड जावादि द्वीप में होती है मारिशस में वैसी नहीं होती इसी कारण जावा की प्रथम नम्बर की खांड योरोप को जाती है दूसरी भारत को आती है। मारिशस में श्रमी भारतीय, भूमि के स्वामी भारतीय, खांड बनाने की मशीनों में कुछ भाग भारतियों का। इन कारणों से लाल इमली तथा धारीवाल के कारखानों से कहीं अधिक स्वदेशीपन मारिशस की खांड में है इस लिए भारत के नेता गणों को यह विचार करके कुछ निश्चय कर लेना चाहिये जिस ढंग से भारत तथा मारिशस का घनिष्ठ सम्बन्ध बन जावे मारिशस हमें एक बसी बसाई बस्ती मिल सकती है।

कृष्ण के प्रति कृष्णा।

लेखक—श्रीयुत् 'बालेन्दु'

हे देव दुखदाहक दयालो दनुज उद्वासन किये।
पायन परस पाया जिन्हें ते परपतित पावन किये।
मुझ दीन हीन अधीन की अब वेर देर कहाँ करी।
क्षणभक्ति से था ना उभारा आप ने ही क्या करी॥१॥
बहुवार वार अवार बीती आप को टेरत मुझे।
हाय! हिय में वेदना अब होय है हेरत मुझे।
द्रुपदात्मजा का दुष्ट दुःशासन दुकूल द्विहाथ से।
प्रस्तुत प्रसह्य प्रभो! हुआ है तारने को माथ से॥२॥
गांगेय, कुरुकुल राज, द्रोणाचार्य प्रभृति से भी बड़े।
हा! कुछ न करसकते ह! शस्त्र विहीन पांडव भी खड़े।
मम लाज आज समाज में यदुराज! यदि जो आपने।
रक्खी न तो दूंगी अभी तज प्राण सबके सामने॥३॥
सर्वेश! स्मरण रहे सती संताप-श्राप समान है।
जनपद विपदपद अवशि वह जहँ पर न प्रमदामान है।
अद्भुत दया की ईश ने यह वचन सुन करुणा पगे।
सारी न सारी सर सकी सब घोर अघ कहने लगे॥४॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हमारी मञ्जूषा।

वेदका स्वयंशिक्षक—लेखक श्रीपाद दामोदर सातवलेकर पृष्ठ १७६, मूल्य १॥) स्वाध्याय मण्डल, औंध जि० सतारा से प्राप्य-श्रीयुत सातवलेकर जी का नाम ज्योति के पाठकों से छिपा नहीं। आपका वेद के लिये प्रेम और श्रद्धा प्रसिद्ध है। अपने सारे कार्य्य छोड़कर वेद के स्वाध्याय में तन मन से लगे हुए हैं। उनकी यह हार्दिक अभिलाषा है कि वेद के पठन पाठन में जनता की रुचि बढ़े। अतः वेद के स्वाध्याय को सहल से सहल बनाने के लिये जो भी उपाय हो सके हैं वह आप उपस्थित करते रहते हैं। यह पुस्तक भी इसी उद्योग का फल है। इस में सब मिलाकर ३० पाठ हैं। प्रत्येक पाठ में वेद मन्त्रोंके, पद, अन्वय, अर्थ और भावार्थ सहित दिये हैं। साथ ही सुगम रीति से व्याकरण भी समझाई गई है। शब्दों के भिन्न भिन्न रूप और अर्थ भली प्रकार दिये हैं। पण्डित जी ने वेद के स्वाध्याय को सरल बनाने के लिये भर सक यत्न किया है। पुस्तक सब वेदानुयायियों और विशेष कर आर्य समाजियों के बड़े काम की है और हम अनुरोध करेंगे कि वे इसे अवश्य खरीदें।

वैदिक सभ्यता—लेखक श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, उपरोक्त स्वाध्याय मण्डल से ≡) में मिलसक्ती है।

यह २५ पृष्ठ का एक छोटा सा निबन्ध है तिसमें वेदों के शब्दों द्वारा यह दिखलाया गया है कि आधुनिक विकासवाद के अनुयायियों के कथन के विपरीत वैदिक सभ्यता एक आरम्भ की जंगली सभ्यता न थी वरन वह एक प्रशस्त दैदीप्यमान सभ्यता थी। वेद में बड़े नगर, नगरों में उच्च मकान, बड़े मकानों में भिन्न भिन्न भोजन शाला, अग्न्यागार, स्त्रियों के लिये स्थान, मेहमानों के लिये स्थान, मिलने जुलने के लिये बड़े २ हाल हैं पान्थस्थों के लिये धर्मशालायें हैं, बड़े बाज़ार हैं, दुकाने हैं, बड़े २ मार्ग हैं, नदियों पर पुल हैं, उत्तमोत्तम गाड़ी घोड़े हैं, शस्त्रास्त्र हैं, बहु विध कपड़े हैं, सोने हीरे आदि के आभूषण हैं। घुड़ दौड़ है, न्यायालय है, पोलिस है, विविध प्रकार के राज्य हैं। इन चीज़ों के देखते हुए किस प्रकार वैदिक सभ्यता एक साधारण जंगली सभ्यता कही जासक्ती है, पुस्तक जहां शिक्षाप्रद है वहां मनोरञ्जक भी है॥

प्रताप कार्य्यालय—कानपुरने हमें समालोचनार्थ प्रतापपुस्तकमाला की पुस्तकें भेजने की कृपा की है जिसके लिये धन्यवाद है उन में से कुछ की समालोचना इस अंक में प्रकाशित है।

(१) मेरे जेल के अनुभव—लेखक महात्मा गान्धी, पृष्ठ ८१, मूल्य ।=] अफ्रीका में जिस समय सत्याग्रह आन्दोलन हो रहा था तब महात्मा गान्धी को भी उसके सम्बन्ध में तीन बार जेल में जाना पड़ा था। इन जेलख़ानों में खान, पान, रहन, सहन, पोशाक, रोगियों की अवस्था और उनका इलाज इत्यादि अनेक जेल सम्बन्धी विषयों का ब्योरा तथा महात्मा जी के अपने विचार दिये गये हैं। गान्धी जी जेल को भारतीय मुक्ति का द्वारा समझे हैं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अतः जेल में रहते हुए भी अपनी पवित्रता और देशहित के साधनों पर अमल करते रहने का आदेश करते हैं। पुस्तक शिक्षाप्रद तथा उपदेश पूर्ण है।

(२) देवी जोन—अर्थात् स्वतन्त्रता की मूर्ति पृष्ठ ८०, मूल्य ।=] मूल पुस्तक बंगला में लिखी गयी थी, यह उसका हिन्दी अनुवाद है। पंद्रहवीं शताब्दि में फ्रान्स के राजा नाम मात्र को स्वतन्त्र थे वास्तव में वे अंग्रेजों के आधीन थे। अपने देश तथा जाति की हीन, दीन तथा सर्वथा पराधीन अवस्था देख इस देवबाला के हृदय को बड़ा आघात पहुंचा अतः उसने अपने तेज और ओज के प्रताप से फ्रान्स के राजकुमार से कुछ सेना मांग देश उद्धार की ठानी। इसके नेतृत्व में सेना ने आर्लिन्स नगर को अंग्रेजी सेना से खाली करवा उसका उद्धार किया और चार्लर्स को वास्तविक राजा बनाया। अपनी अनिच्छा होते हुए भी राजा की आज्ञा से इसने पैरिस पर आक्रमण किया। परन्तु वहां इसकी पराजय हुई और शत्रु के हाथ में पकड़ी गयी। देवी जोन की कारावास कहानी, उसके विचार का ढोंग तथा प्राण-दण्ड की आज्ञा, जीवित का अग्नि में जलाया जाना, बड़ी मार्मिक घटनायें हैं। पुस्तक रोचक तथा शिक्षाप्रद है।

(३) राष्ट्रीय-वीणा—प्रताप में १९-४-१५ में छपी हुई देश-भक्ति पूर्ण ९२ कविताओंका संग्रह है। कवितायें भावपूर्ण तथा ओजस्विनी हैं। पृष्ठ १०२ मूल्य ॥)

(४) भीष्म नाटक—लेखक विश्वम्भरनाथ शर्मा कौशिक मूल्य ॥)—स्टेज पर खेलने योग्य नाटक। महाभारत में भीष्म सम्बन्धी जो पौराणिक गाथा है उसी के आधार पर इसकी रचना हुई है। भाषा तथा छपाई साधारण है।

(५) उद्योगी पुरुष—अनुवादक रामेश्वर-प्रसाद शर्मा, मूल्य ।=) गुजराती भाषामें उद्योगी पुरुषो नामक पुस्तक रूप में म० नारायण हेमचन्द्रजी ने कतिपय देशी तथा विदेशी महानुभावों के जीवन चरित्रों को संग्रह किया है वस्तुतः पुस्तक उसी गुजराती पुस्तक के आधार पर लिखी गई है।

प्रतिज्ञाबद्ध कुलीप्रथा—लेखक "एक भारतीय हृदय" सुन्दर जिल्दबन्धी हुई २४० पृष्ठ की पुस्तक मूल्य १), कुछ वर्ष हुए प्रसिद्ध सुहृदय अंग्रेज़ श्रीयुत एण्ड्रयूज़ और म० पीयरसन फिज़ी में भारतियों की अवस्था की जांच करने के लिये गये थे। वहां से लौटकर उन्होंने अपने अनुभव एक रिपोर्ट के रूप में लिखे थे। यह लेखमाला के रूप में मार्डन रिव्यू में भी निकले थे। यह पुस्तक उसी रिपोर्ट का अनुवाद है लेखक ने कितने ही समय तक श्रीयुत एण्ड्रयूज़ के साथ भी रहकर बहुत सी अन्य बातों की भी जांच की है। हमारे भारतीय भाई और बहिनों के साथ जो अन्याय इस द्वीप में किया जाता है, हमारी सुशीला सती ललनाओं पर जो क्रूर, अमानुषिक तथा पैशाचिक अत्याचार किये जाते हैं तथा हमारे आत्म सन्मान, गौरव तथा आचार को पांव तले रौंदाजाता है इन सब का ज्वलन्त वर्णन बड़ी मार्मिक और हृदय बेधने वाली भाषा में इस पुस्तक में मिलता है। कौन ऐसा भारतीय हृदय होगा जो इस पुस्तक को पढ़े और अपने आंसुओं को थाम सके। इन अत्याचारों का विवरण पढ़कर एक वार तो हृदय कांप उठता है और चित्त दुःख, क्षोभ, अश्रद्धा ग्लानी से भर जाता है। अपनी बहिनों के

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शरीर, मन, आत्मा पर किये हुए आक्रमणों को पढ़कर मन नाना प्रकार के भावों से उद्वेजित हो उठता है। अपनी अकर्मण्यता से घृणा होने लगती है और आत्मसन्मान को चोट पहुंचती है। यह पुस्तक प्रत्येक स्वराज्य प्राप्ति की इच्छा रखने वाले भारतीय को पढ़नी चाहिये। किञ्चित इस के पाठ से उनका मन पसीजे और कर्मपथ दीख पड़े॥

मोरवी के मन्दिर में एक लाल और एक चूहा।

लेखक—श्रीयुत 'मराल'।

अंधियारी तोरी मत बौरानी।
भोर भई पंछी उठ बैठे, अजहूं कहे मैं जग की रानी।
करत अर्चना सब कर जोड़े, ना भूले न फिरे मस्तानी,
बुरा रतजगा भया आजको, तोरि बुरी विधना ने ठानी।
'इक बालक इक चूहा मोरा क्या करलें' न रहे भरमानी
ले समेट अपना अब डेरा, जग बाजेगी बड़ी सयानी।
पल में माया मूषक काटी, प्रगटी धार मधुर रस सानी
जो अजहूँ नहिं देख सकत हैं, तिन नैनन की जोत गंवानी।
शिव मन्दिर में दुन्दुभि बाजी सांचे शिवकी, महि थर्रानी,
मोहि मराल छवि और न दीखे, पुलकित तन लोचन जुगपानी॥

कुसुमोद्यान

महर्षि दयानन्द महाशय एन्ड्रूज़ की दृष्टि में।

महाशय सी. ऐफ़. ऐन्ड्रूज़ ने अभी जो महर्षि दयानन्द जी के विषय में अपने विचार प्रगट किये हैं वे बहुत से आंगलभाषा जानने वाले लोगों को 'वैदिक मैगज़ीन' के पढ़ने पर विदित हो सके हैं किन्तु मातृभाषा प्रेमी ज्योति के पाठकों के लिये आज हम यहां उसमें से कुछ सार देते हैं जिस से जन साधारण को विदित हो जावे कि आर्य्य समाज के प्रवर्तक ऋषि के विषय में एक बाहर से विदेशी किन्तु अन्दर से भारतीय महानुभाव के क्या भाव हैं। वे कहते हैं :—

"स्वामी दयानन्द जी ने उस वैदिक शिक्षा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

को—जिसके द्वारा भारत कभी आध्यात्मिक विकास और अनुभव के उच्चतम शिखर पर हो चुका है—अपने यौवन में केवल अध्ययन ही नहीं किया, वरन अपने जीवन में ढाला था। अपने विचित्र व्यक्तित्व में वह मानों वैदिक जीवन के साथ मैत्री करके स्वयं उसकी प्रति-मूर्ति बन गये और दूसरों के लिये भी उस जीवन को अवश्यकीय और क्रियात्मक बना गये। उस ज़माने में जब कि भारत अपने भूत ऐश्वर्य्य इत्यादि से मुख मोड़ कर योरप की ओर आदर्श के लिये भटकता था, उन्होंने अपने जीवित जागृत उदाहरण से यह दर्शाया कि इस प्रकार पाश्चात्य शिक्षा व सभ्यता में बिल्कुल डूब जाना अपने जन्माधिकार को तिरस्कृत करना, अपनी वास्तविक प्रकृति को त्यागना, मनुष्यत्व से गिरना है उठना नहीं॥

स्वामी दयानन्द का दृढ़ विश्वास था कि वह वैदिक समय हमारे आज कल के युग से वस्तुतः उन्नत था और उन्होंने अपने इस दृढ़ विश्वास को कार्य्य में परिणत किया। उनको देखो—उनकी आध्यात्मिक पिपासा, उनका वीर आचार, उनका सात्विक जीवन, उनके उच्च आदर्श पर ध्यान दो तो तुम्हें ज्ञात होगा कि वैदिक युग पुनः स्थापित हो गया है। उनके पूर्व किसी ने भी इस प्रकार यह सब कुछ नहीं किया था। पण्डितों ने पुस्तकें लिखीं थीं, वैदिक युग के सम्बन्ध में पुस्तकें अनुशीलन करके रचना हुई थी किन्तु कुछ काल के बाद भुलादी गईं। किन्तु आज एक सन्यासी अपनी ऐसी अद्भुत प्रतिभा और आत्मिक शक्ति को लेकर जनता में प्रवेश करता है जिसने केवल अपनी विद्यमानता द्वारा ही भूत को शीघ्रता से पुनर्जीवित कर दिया है।

महा ऋषि के विषय में हजारों वाद विवाद हुए हैं। उनकी एक २ बात को सिद्ध करने के सहस्रों वर्णन उपस्थित किये जासक्ते हैं किन्तु मेरा विश्वास है कि वैदिक आदर्शों की जीवित मूर्ति मान कर उनका ध्यान करना ही सब बातों का केन्द्र है। उन के आचार के इस पक्ष के ग्रहण करने से चित्र का सारा दृश्य सम्मुख आजाता है और यह दृश्य झूठा नहीं, सच्चा है।

यदि स्वामी जी केवल एक बड़े पण्डित और तार्किक ही होते तो उनकी मृत्यु के बाद उनके अनुयायियों में कोई उन्नतिशील जीवन का संचार न होता। अथवा यदि उनका सन्देश केवल प्राचीन और परम्परागत ही होता तो उनकी स्थापित की हुई आर्य समाज में जो उन्नति तथा शक्ति दृष्टि गोचर है उसका कारण क्या है? मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि उनके सन्देश में प्राचीनता से कहीं बढ़ कर तत्त्व था और वे स्वयं एक महान पण्डित से कहीं बढ़ कर थे। महर्षि के व्यक्तित्व में—जैसाकि उन्होंने अपने आत्मिक बल से प्रकाशमान वैभवशाली वास्तविक जीवन में प्राचीन वैदिक जीवन ढाल कर बनाया—इतनी आकर्षण शक्ति थी, इतनी सफलता, इतनी दृढ़ता और स्निग्ध सौहार्दता थी कि उनकी मृत्यु के पूर्व ही अन्यों ने उनकी उत्तेजना को ग्रहण कर उनके सन्देश के भाव को जनता में फैलाया। यही कारण है कि आर्य्य समाज जीवित रही और आज भी जीवित है। उनका व्यक्तित्व आग के समान था, उसने अन्यों को भी प्रदीप्त कर दिया और उन्होंने उस अग्नि ज्वाला को बारीबारी से आगे बढ़ाया।

मैंने अभी जब कि विदेश में था एक अनुभव प्राप्त किया जिसे मैं जल्दी नहीं भूल सक्ता। मैंने पूर्वी अफ्रीका में विदेशी और प्रतिकूल अवस्थाओं में भी आर्य्य समाज को बढ़ती और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पुष्ट होती हुई देखा है। जबकि वहां पर अन्य धर्म और भक्ति विश्वास जीवनरक्षा के हेतु प्राणपन से यत्न कर रहे थे और बहुधा रक्षा में असमर्थ हुए आर्य्य समाज लता ने भूमि में जड़ पकड़ ली और अब नये पत्ते निकाल रही है।

मैं बड़े मनोवेगसे एक बड़ी करुणा मूर्ति का ध्यान अब भी करता हूं—वहां एक अधवयस् आदमी था जिसका सारा शरीर सिर से पैर तक पक्षाघात से मग्न और पीड़ित था, किन्तु उसे केवल एक वस्तु से प्रेम था जिससे उसका जीवन अब भी आनन्दमय था वह वस्तु स्वामी दयानन्द के प्रतिभक्ति और उनकी स्थापित की हुई आर्य्य समाज से प्रेम था। मैं इस आदमी की असहाय अवस्था में उससे वार २ मिला। उसको बोलना तथा शरीर के अंगों को हिलाना भी दूभर था किन्तु जो कुछ भी शक्ति उसमें अबभी रह गई थी उससे उसने स्वामी दयानन्द के प्रति श्रद्धा प्रगट की। इस प्रकार की घटनायें आर्य्य समाज की ह्रास और मृत्यु की सूचक नहीं वरन् जागृत शक्ति का प्रमाण हैं।

\+ \+ \+ \+ \+ \+

वैदिक युग की सर्वोत्तम शिक्षादर्श और उसका भारत की पैतृक सम्पत्ति होने की सत्यता ही भारत का सब से श्रेष्ठ अधिकार है। इसी पैतृक सम्पत्ति की ओर भारतीय जन आज बहुत दिनों तक घूमघाम कर वापस आगये हैं। स्वामी दयानन्द द्वारा ही एक वार पुनः उनको यह प्राचीन सभ्यता निजकी सम्पत्ति और स्थायी धर्म बना दी गई है। यह इस प्रकार की भक्ति केवल देश भक्ति नहीं वरन उससे कहीं बढ़ कर है। यह धर्म है।

योरप का अधःपतन।

अमरीका का एक मासिक पत्र Independent इन्डीपेन्डेन्ट योरप का अधःपतन वर्णन करते हुये इस प्रकार लिखता है:—

"रोमन साम्राज्य का ह्रास और अधःपतन लिखने का साहस इतिहास वेत्ता जिबन को रोमन साम्राज्य के नाश होने के १५०० वर्ष पीछे हुआ था किन्तु वर्तमान इतिहास वेत्ताओं को बड़ी जल्दी हो रहा है और योरप के बड़े २ लेखक अपनी सभ्यता का अधःपतन अभी से वर्णन करने लग पड़े हैं। पेरिस विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डिमैन्जिओन, यूरोप के भूगोल वेत्ताओं में से प्रसिद्ध पण्डित अपनी पुस्तक 'योरोप का अधःपतन' में जो कि गत वसन्त ऋतु में प्रकाशित हुई थी लिखते हैं कि सभ्यता का ध्रुव केन्द्र योरप से हट चुका है और संसार की नेतृत्व शक्ति जिसको वह शताब्दियों से भोग कर रहा था अब अमरीका और एशिया के लोगों के हाथ में चली गई है।

एक जर्मन दार्शनिक इससे भी बढ़ कर वाणी बोलते हैं वह पांच सौ वर्षों के भीतर ही भीतर जिन २ क्रमों से योरप की सभ्यता का नाश होगा उनका वर्णन करते हैं। उनका कथन है कि योरप [Culture] शिक्षा की सीढ़ी से उतर कर सभ्यता की सीढ़ी पर १४०० में आया और अब उस के सामने सीज़र का समय है जो कि २००० से २२०० ईस्वी तक रहेगा। योरोप के माण्डलिक राज्यों का छोटे २ भागों में विभक्त होना सूचित करता है कि अब राष्ट्रों को विनष्ट कर जनता के संघों की प्रभुता का समय प्रारम्भ हो गया है। धीरे २ इन का एक साम्राज्य बन कर प्राचीन काल में एशिया के लोगों की एकसत्ता स्थिति की भांति बन जायगा और २२०० के पश्चात् क्रम से असभ्य प्राचीन स्थिति के पहुंच जायगा। जर्मन दार्शनिक का यह कथन परास्त होने की उदासीनता के कारण नहीं कहा जा सकता क्योंकि हमें अन्य यूरोप देशीय दार्शनिकों के विचार भी ज्ञात हैं

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जो कि चाहे जैसा देशों के निवासी हैं परन्तु इसी भांति निराशा जनक भविष्य का उल्लेख करते हैं।

फ्रांस के महाशय अनाटोल फ्रेंक कहते हैं– "योरोप बीमार है, मर रहा है, अब तो योरप ही संसार का रोगी मनुष्य बन गया है और सन्धि ने शान्तिदायक लेप का काम नहीं किया है"।

इटली की पार्लियामेन्ट के एक सभासद का विश्वास है कि यह सभ्यता अपने (Psychology) मनो विज्ञान में इतनी भोगप्रिय, और राजनैतिक तथा आर्थिक प्रबन्ध में इतनी असहिष्णु कि मनुष्य मात्र के लिए इस का समाप्त होजाना ही श्रेय है।

रूस का दार्शनिक चेस्टाफ़ (Chestoff) योरोप के पतन का कारण कहता है कि परमात्मा ने जैसे बेबल (Babel) बनाते समय शाप दिया था उसी भांति पुनः बहुत सी भाषायें उत्पन्न करके शाप दिया है। इन भाषाओं के कारण समझ में भेद होता है जिस से एक जाति दूसरी के विरुद्ध और एक वर्ण दूसरे वर्ण के विरुद्ध खड़े होते हैं। "राजाओं ने राजसत्ता हनन की, जन संघ ने प्रजासत्ता हनन की, और सोशलिस्टों और विप्लवकारियों ने समाजसत्ता और विप्लव का नाश किया"।

इस प्रकार निराशापूर्ण रुदन एक देश से दूसरे देश को जाता हुआ दर्शनों, गल्प, नाटक और साहित्य कला में दिखलाई पड़ता है यहां तक कि घुड़दौड़ और होटलों तथा उत्तेजनाजनक कार्य्यों में भी दृष्टि गोचर होता है योरोपीय सहित्य की इसी लहर को हम एक सात सौ वर्ष पूर्व लिखे इतिहास में भी पाते हैं 'संसार बहुत बुरा है और देर होरही है' न्याय का दिवस आगया है जर्मन लोगों ने जिस विजय दिन की आशा की थी वह नहीं अथवा फ्रांस वालों ने जिसका बदला लेने की आशा की थी वह भी नहीं किन्तु सब के लिये एक अंधकार का दिन जिस में सब टक्करें खाकर गिरेंगे क्योंकि किसी को लक्ष्य का ज्ञान नहीं है और प्रत्येक दूसरे के साथ मुठभेड़ करेगा क्योंकि मित्र और शत्रु की पहिचान नहीं कर सकते"।

वर्त्तमान संसार की गति देखते हुये यह बातें बिल्कुल यथार्थ प्रतीत होती हैं॥

वैज्ञानिक संसार

(१) अभी और भी।

हम ज्योति के किसी गत अंक में बतला चुके हैं कि किस प्रकार योरोप की महान जातियां आगामी युद्ध के लिये वैज्ञानिक तय्यारियां कर रही हैं और किस प्रकार निष्पक्ष न्याय शील आत्माओं पर यह क्रिया आघात पहुंचा रही है। लन्डन का प्रसिद्ध पत्र Inquirer इस विषय में लिखता है कि जातियों की युद्ध सामग्री के कम करने के लिये जो कुछ भी किया गया है या नहीं किया गया किन्तु इस से इन्कार नहीं किया जाता कि हमारी अपनी सरकार [इङ्गलैण्ड] ने विषैली गैस सम्बन्धी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

खोज करनेके लिये बड़ी भारी गवेषणा आरम्भ की हुई है, उसका अभिप्राय यही है कि जाति को इस प्रकार सब से अधिक नाशकारी अस्त्र जो कि सम्भव हो दिया जा सके। उधर अमरीका भी इसी कार्य्य में लगा हुआ है, और समाचार आया है कि प्रत्येक सिपाही की युद्ध सामग्री में एक छोटे से विषैली ठोस गैस का टीन सम्मिलित किया गया है कि जिस से कि वह इस हत्याकारी अस्त्र द्वारा अपना कार्य्य शूरवीरता से कर सके। इस ज्ञान से हमें कोई आनन्द नहीं मिलता कि इस विषैली गैस को रोकने के लिये मुँह और नाक पर चढ़ाने वाला चेहरा भी बना लिया गया है। ऐसा समझ पड़ता है कि नार्वे के प्रतिनिधि म० लैन्गीस ने अन्तर जातीय सभा [League of Nations] के सन्मुख ठीक ही कहा था कि "युद्ध को सभ्य बनाने का विचार" व्यर्थ है। या तो हमें युद्ध का सफ़ाया करना होगा नहीं तो यह हमारा सफ़ाया कर देगा।

ये घटनायें स्पष्ट बतलाती हैं कि अभी हम सच्ची शान्ति से कितनी दूर हैं। जब हमारे मनों से दूसरों की हत्या के विचार ही दूर नहीं होते तो शान्ति कहां। इन देशों की नीति है "मुंह में राम राम बग़ल में छुरी"। हिंसक पशुओं को अहिंसा का पाठ पढ़ाना कितना दुस्तर है।

(२) तार द्वारा फोटो भेजना।

अमरीका में एक बड़ी घटना हो जाती है। सहस्रों मील की दूरी पर भारत में दूसरे दिन समाचार पत्रों में उस का वृत्तान्त पढ़ने को मिल जाता है। घटना के समाचार तुरन्त मिल जाते हैं और कुछ समय पीछे उसके सम्बन्धी चित्र भी छप जाते हैं। यदि चित्र भी समाचारों के साथ ही साथ छप सकें तो क्या ही अच्छा होता। यह निर्विवाद है कि चित्रों द्वारा जिस उत्तमता से कोई घटना बतलायी जा सकी है वह शब्दों से कभी अंकित नहीं हो सकी।

पैरिस के महाशय बैलिन १९०७ से इसी प्रकार का यन्त्र बनाने के पीछे लगे हुये हैं जिस के द्वारा फोटोग्राफ़्स भी तार द्वारा भेजे जा सकें। आप ने अपने यन्त्र में इतनी सफलता प्राप्त कर ली है कि लण्डन और पैरिस, पैरिस और एन्टवर्प इत्यादि के बीच तार से फोटो भेज सकें। इस से अधिक दूरी पर चित्र भेजने के लिये अमरीका के भिन्न २ नगरों में तजरुबे करने के लिये म० बैलिन अपने यन्त्रों को ले गये और उन्हें सफलता भी प्राप्त हुई है। उनके यन्त्र का विवरण किंचित ज्योति के पाठकों के लिये मनोरञ्जक न हो अतः हम उसे यहां नहीं देते।

इस यन्त्र का मुख्य लाभ तो समाचारपत्रों को ही होगा। परन्तु किसी भी भागे हुये अपराधी को पहचानने और पकड़ने में भी यह यन्त्र लाभदायक सिद्ध होगा। कचहरीयों में गवाही के लिये हस्ताक्षर इत्यादि के चित्र भेजने में भी काम आ सकेगा।

(३) विषैली गैस की पिस्तौल।

"फ्रान्स की राजधानी पैरिस में एक नवीन आविष्कार हुआ है। गत महायुद्ध में विषैली गैस द्वारा शत्रु पर आक्रमण किया जाता था। इसी के आधार पर आविष्कारक ने एक पिस्तौल बनायी है जिस की नली में जलरूप विषैली गैस भरी रहती है जो कि घोड़ा दबाने से एक छोटे से छिद्र द्वारा बाहर निकल पड़ती है और बाहर निकलते ही गैस के रूप में बदल जाती है। आविष्कारक का दावा है कि यह चोरों और डाकुओं के दमन के लिये एक बड़ा उपयुक्त अस्त्र है। जहां कहीं डाकू आक्रमण करते दिखलाई दें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उस की ओर निशाना करके यह पिस्तौल चला दी जाय। इसका परिणाम यह होगा कि बिना मृत्यु को प्राप्त हुये वह तत्क्षण बेहोश हो जायगा। यदि आंखों की ओर निशाना करके यह पिस्तौल चलायी गयी तो वह कुछ दिन के लिये अन्धा हो जायगा। इस प्रकार शान्तिप्रिय नागरिकों के हाथ में दुष्टों से बचने का सुगम अस्त्र आ जायगा।

परन्तु आविष्कारक महाशय एक बात भूल गये। यदि चोर और डाकू स्वयं इस अस्त्र का प्रयोग करें तो क्या नागरिक ही बेहोश और अन्धे न हो जायेंगे? आत्मा के पाप बाह्य अस्त्रों द्वारा दमन नहीं किये जा सक्ते। जब तक सभ्यता का केन्द्र शरीर को छोड़ कर आत्मा नहीं बनता अन्याय का राज्यसिंहासन हिल नहीं सक्ता। आधुनिक सभ्यता एक रोग उत्पन्न करती है और एक अन्य रोग द्वारा उसको दबाना चाहती है। यह किस प्रकार सम्भव हो सक्ता है!

—:o:—

विचार प्रवाह

ऋषि दयानन्द की दिव्य दृष्टि।

अन्यत्र हमारे पाठकगण एक कविता पढ़ेंगे, जिसमें एक ऐसी घटना का वर्णन है जिसने भगवान् दयानन्द के जीवन को एक विशेष जीवन बना दिया, और आंखें रखने वाले लोगों को सूचना देदी कि एक महति शक्ति का प्रादुर्भाव होने वाला है। महा पुरुषों की जीवनियों के पढ़ने से पता चलता है कि उनमें और साधारण पुरुषों में भेद करने वाला एक ही गुण होता है और उसे मनोविज्ञान शास्त्र के पण्डित दिव्यदृष्टि कहते हैं। जिस मनुष्य में दिव्यदृष्टि न हो वह बड़ा शास्त्रज्ञ, बड़ा गणितज्ञ और धुरन्धर लेखक वा वक्ता तो हो सकता है किन्तु बड़ा आदमी उसे नहीं कह सकते। न्यूटन से पूर्व लाखों मनुष्यों ने सेब को भूमि पर गिरते देखा किन्तु उसके अतिरिक्त और किसी को यह ज्ञान नहीं हुआ कि इसका कारण भूमि की आकर्षण शक्ति है। दयानन्द के पूर्व सैंकड़ों शिवरात्रि की रात्रियें आईं, सहस्रों भक्तों ने जाग कर काटीं और लाखों चूहों ने मूर्ति के चढ़ाने का आनन्द लूटा किन्तु इतिहास ने केवल एक मन्दिर, मूर्ति और एक चूहे को अमर बनाया। इसलिये नहीं कि इस एक मन्दिर, एक मूर्ति और एक चूहे में विशेषता थी किन्तु इस लिये कि ये तीनों एक सुसंस्कृत आत्मा की जाग्रति और दिव्य नेत्रों के प्रकाश का बाह्य कारण बने। शिवरात्रि को जिस दिव्य दृष्टि का दयानन्द ने पता दिया वो ही दिव्य दृष्टि ऋषि के जीवन की सफलता की रहस्य थी। उसी दिव्य दृष्टि ने दयानन्द को दर्शाया कि आर्यजाति संसार के क्षेत्र में अपने स्वत्व और व्यक्तत्व की रक्षा नहीं कर सकती यदि वह केवल रक्षात्मक युद्ध ही करे, हवा के झोंकों से गुफा में छुप कर या ज़मीन में लेट कर मनुष्य अपनी रक्षा कर सकता है किन्तु जिस जंगल में शेर और भगले रहते हों वहां उसका गुजारा नहीं हो सकता जब तक कि वह उन दरिन्दों पर आक्रमण करके उनके दिलों पर अपनी वीरता का सिक्का नहीं बिठला देता। मुसलमानों के समय में आर्य

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जाति ने बहिष्कार वा पृथकता की नीति का अवलम्बन करके अपने आपको बचा लिया किन्तु इस समय जब कि संसारक्षेत्र में कई सभ्यताओं का परस्पर युद्ध हो रहा है कोई सभ्यता जीवित जाग्रित नहीं रह सकती जब तक कि वह अपनी विजय पताका शत्रु की सीमा में जाकर नहीं गाड़ती। ऋषि दयानन्द के आन्तरिक नेत्रों ने इस सत्यता को देखा और ढाई हज़ार वर्षों के पीछे उन्होंने वैदिक धर्म को पुनः एक सार्व भौमिक धर्म बना दिया, बौद्ध धर्म एक देशीय नहीं रहा क्योंकि बुद्ध ने अपना सन्देसा मनुष्य मात्र तक पहुंचाया और अपनी संघ का विस्तार देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में किया। सिक्ख गुरुओं ने मुसलमानों को अपनी सङ्गत में नहीं लिया इस लिये उनका धर्म एक देशीय और एक प्रान्तीय रहा और अब भी पञ्जाब के बाहर उसका फैलना असम्भव है। ऋषि दयानन्द ने देखा प्राचीन आर्य सभ्यता और सनातन वैदिक धर्म की रक्षा का एक मात्र उपाय यह है कि उसको सारे संसार की सम्पत्ति बना दिया जावे और उसकी रक्षाका भार मनुष्य मात्र पर बांट दिया जावे। ऋषि दयानन्द की आर्य समाज, बुद्ध भगवान् के भिक्षु संघ के पीछे पहली आर्य संस्था थी जिसने डण्के की चोट से घोषणा की कि उसका मुख्य उद्देश्य एक देश विशेष का नहीं किन्तु संसार का उपकार करना है। अपने स्वीकार पत्र में ऋषि दयानन्द ने स्पष्टतया लिखा है कि उनकी सम्पत्ति का व्यय देश देशान्तर और द्वीप द्वीपान्तर में वैदिक धर्म का प्रचार करने में किया जावे। अपने स्वमन्तव्यामन्तव्य प्रकाश के अन्त में ऋषिदयानन्द लिखते हैं "इस बातको काट सर्व सत्यका प्रचार कर सबको एक मत में करा द्वेष छुड़ा, परस्पर में दृढ़ प्रीतियुक्त कराके, सबसे सब को सुख लाभ पहुंचाने के लिये मेरा प्रयत्न और अभिप्राय है। सर्वशक्तिमान् परमात्मा की सहाय और आप्त जनों की सहानुभूति से ये सिद्धान्त सर्वत्र भूगोल में शीघ्र प्रवृत्त हो जावें, जिससे सब लोग सहज से धर्मार्थ काम मोक्ष की सिद्धि करके सदा उन्नत और आनन्दित होते रहें यही मेरा मुख्य प्रयोजन है"॥ ——

ननकाना साहिब की दुर्घटना

पारस्परिक हिन्दू और सिक्खों के झगड़े के कारण ननकाना साहिब में जो दुर्घटना हो गई है उस को सुन कर किस भारतवासी को शोक न होगा? एक सौ तीस मनुष्यों की मृत्यु गिनी जाती है। इस घटना का सविस्तार वर्णन हिन्दी और अंग्रेजी दोनों के ही दैनिक व साप्ताहिक पत्रों में आ चुका है और ज्योति के पाठकों ने भी भली भांति पढ़ा होगा अतः उसे हम यहां पर वर्णन करके व्यर्थ समय नष्ट नहीं करना चाहते। हमें केवल दो चार शब्द इस सम्बन्ध में वक्तव्य हैं। जहां अकाली जत्थे के साथ इस भीषण हत्या काण्ड के कारण हमारी पूर्ण सहानुभूति है और सर्दार लक्ष्मणसिंह और उनके साथियों की वीरता और बलिदान पर सारे भारतवासियों को उचित अभिमान है वहां इस समय जो कई कार्रवाइयां हो रही हैं वह वर्त्तमान भारतीय राजनैतिक स्थिति के समय दो कारणोंसे प्रशस्त नहीं हैं। सरकारी न्यायालयों की शरण लेना असहयोगी भारतीयों को शोभा नहीं देता और सिक्खों में अधिकांश असहयोगी हैं तथा सिक्ख लीग ने पंचायती न्यायालयों को स्वीकार भी किया है इस अवस्थामें सिक्खों को जाति के लिये त्याग करना भी सीखना चाहिये यद्यपि हम अनुभव करते हैं कि उनके साथ, एक आसुरी अत्याचार हुआ

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है और उनके हृदय इस समय दुखित और पीड़ित हैं, तथापि हम यही कहेंगे कि गुरुद्वारों का फैसला अपने हाथ में न लेकर या तो सामाजिक सुधार की संस्थायें बना कर लोगों के दिलों को प्रभावित करके करना चाहिये अथवा पंच नियत करके–जिन में सिक्ख और हिन्दू प्रतिनिधि बराबर हों और एक व्यक्ति कोई देश भक्त नेता हो जो हिन्दू या सिक्ख का पक्षपाती न हो जैसे महात्मा गांधी–अपना फैसला करावें और उस फैसले पर कायम रहें अथवा स्वराज्य प्राप्ति तक ठहरें क्योंकि यह धर्म का संकट तो है नहीं केवल मालकियत प्राप्त करने की बात है। हिन्दुओं को भी चाहिये कि शान्तिपूर्वक काम करें और अपने भाइयों से द्वेष करके इस देशोत्थान के समय अपने बंधनों को और जकड़ कर देश भक्तों के कामों में बाधक न सिद्ध हों। वरन जहां तक हो स्वराज्य की शीघ्र प्राप्ति के लिये उद्योग करें क्योंकि वर्त्तमान शासन प्रणाली प्रजा की हितकारिणी कभी सिद्ध नहीं हुई है और ननकाना साहिब की इस दुर्घटना ने इस बात की पुष्टि ही की है। अकाली जत्थे अपने आगमन की घोषणा पहिले से ही प्रकाशित कर रहे थे और कहा जाता है कि महन्त भी उनके विरुद्ध मन्दिर को हर प्रकार से मोरचाबन्द क़िला बना रहा था और प्रत्येक प्रकार की तैय्यारी जो कि वह अपनी स्थिति के अनुकूल कर सक्ता था कर रहा था। अब प्रश्न यह है कि हमारी सर्कार का बड़ा भारी दावा यह है कि वह (Law and Order) शान्ति और न्याय को स्थित रखने के लिये आवश्यक है तो उस ने इस मामले को पहिले ही क्यों न सम्भाल लिया? इसका उत्तर यही हो सकता है कि पुलीस अफ़सरों और अन्य कर्मचारियों को महन्त की तय्यारी का पता न लगा इस से तो वर्त्तमान शासन प्रणाली की अयोग्यता सिद्ध होती है। कुछ भी हो ननकाना साहिब की दुर्घटना भी वर्त्तमान शासन प्राणाली के यश को बढ़ाने वाली नहीं है। निःसन्देह स्वराज्य प्राप्ति ही कल्याण का एक मात्र मार्ग है इस अवस्था में सिक्खों को उचित नहीं कि वे कांग्रेस के असहयोग प्रस्ताव के प्रतिकूल सर्कारी अदालतों में जावें। अथवा हिन्दू-मुसल्मान-मित्रता के समय हिन्दू-सिक्ख प्रश्न उपस्थित करके जाति भेद बढ़ा कर स्वराज्य प्राप्ति के बाधक हों। आशा है दोनों दल जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है हिन्दू-सिक्ख पंचायत द्वारा अब फैसला कर लेंगे आगे को पारस्परिक द्वेष भाव को दूर कर मित्र भाव से वर्त्तेंगे।

भारत की नई 'पार्लियामेन्ट'

प्रत्येक संस्था की सफलता उस की कार्य्य क्षमता द्वारा ही हुआ करती है इस नियम के अनुकूल हमारी भारतीय नई 'पार्लियामेण्ट' नितान्त ही बेफायदा सिद्ध हुई है। जहां वह भारतीय प्रजा की प्रतिनिधि नहीं है, क्योंकि उसके निर्वाचित सदस्य भारत की शिक्षित प्रजा के विचार प्रगट नहीं करते हैं वहां वह सर्कार से नियुक्त लोगों की सभा भी नहीं कही जा सक्ती क्योंकि उसके सदस्य सर्कार से नियुक्त नहीं किये गये हैं। इस अवस्था में वह एक विचित्र सभा है, जैसे काठ का हाथी जैसे चमड़े का मृग उसी तरह यह नाममात्र ही है। भारतीय प्रजा तो इस से असन्तुष्ट थी ही किन्तु सिविल मिलिटरी जैसे नौकरशाही के पक्षपाती भी इस के सम्बन्ध में इतना कहे बिना न रह सके कि ये कौन्सिलें अशिक्षित लोगों की सभा हैं जिन को बोलना, व्यवहार करना सभा चातुरी आदि गुण भी नहीं आते। माडरेटों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

का प्रतिनिधि (Leader) पत्र लीडर भी इसी प्रकार की सम्मति देता है। ये कौंसलें प्रजा के विचारों की प्रतिनिधि नहीं हैं इस के अनेकानेक प्रमाण हैं किन्तु उदाहरणार्थ हम यहां पर दो मुख्य बातों का उल्लेख ही करते हैं। मिस्टर शास्त्री की योग्यता और देश भक्ति को समस्त भारतवासी मानते हैं, और आप का सर्कार भी मान करती है, और नर्म दल के नेता तो आप हैं ही अतः आप के विचारों के लिये प्रजा और राज कर्मचारी दोनों को मान्य है। शास्त्री जी ने अभी प्रस्ताव किया कि शान्ति भंग के समय गोली चलाने के सम्बन्ध में जो नियम भारत में है वह इंग्लैन्ड के नियम के अनुकूल ही बनाया जावे अर्थात् (Military) पल्टन विभाग को (Civil) सिविल विभाग के शासक की लिखित आज्ञा प्राप्त किये बिना गोली नहीं चलानी चाहिये और दूसरे जो गोली चलाने वाला अफ़सर हो उस के ऊपर वग़ैर आज्ञा प्राप्त करने के मुक़दमा चलाया जासके इत्यादि २। इस प्रस्ताव को नर्म और गर्म दल तथा सहयोगी और असयोगी सभी पास करवाने के पक्षपाती थे परन्तु यह पास न हुआ। दूसरा प्रमाण लीजिये सर्दार योगेन्द्र सिंह जी का। सर्दार जी बड़े योग्य पुरुष हैं और ईस्ट ऐंड वेस्ट के सम्पादक हैं आप का मान्य सर्कारी जगत में भी है आप ने कौन्सल में मार्शल ला के क़ैदियों के छोड़े देने के विषय में प्रस्ताव उपस्थित किया तो सही परन्तु न जाने क्यों वापस ले लिया। विन्सेन्ट महाशय की मुख की मुस्कराहट और मीठी बातें तो सर्दार जी को क्या वश में कर सक्ती होंगी हम तो यही समझते हैं कि महाशयशास्त्री जी के प्रस्ताव के साथ जो सलूक हुआ उसे देख कर सर्दार जी ने इन नये सदस्यों से निराश होकर अपने प्रस्ताव को वापस ले लेना ही उचित समझा।

इस प्रकार यह भारत की नई 'पार्लिया-मैण्ट' कितनी निकम्मी है यह सिद्ध हो चुका है। अतः स्वराज्य विना भारत का कल्याण नहीं। भारतीयों और सर्कार को भी अधिक काल तक अब इस दिखावटी तमाशे को रखना उचित नहीं हैं। क्या ही अच्छा हो यदि लार्ड रेडिंग और महात्मा गान्धी मिलकर आने वाले स्वराज्य के रूप का निश्चय अप्रेल में करलें और अक्टूबर में भारतवर्ष की सच्ची पार्लियामेण्ट अपना कार्य्य आरम्भ करदे। इससे वृटिश सम्बन्ध भी कायम रहेगा और महात्मा गान्धी की भविष्य वाणी भी पूर्ण हो जावेगी।

नया वजट

नये वजट में जो २ परिवर्त्तन हुए हैं उन्हें देखते हुए हम को यही कहना पड़ता है कि यह वजट दिवाले या घाटे का वजट है। एक समाचार पत्र ने बड़ी सुन्दरता से अंग्रेज़ी में यह लिखा है:-"Hail! Mr. Hailey finance member without finance" अर्थात् मिस्टर हेली धन विहीन धन पति तुम्हारा स्वागत हो। सर्कार ने इस घाटे को पूरा करने के हेतु कई टेक्स बढ़ा लिये हैं अर्थात् डाकव्यय दुगना करदिया है और वाइसिकलें, दियासलाई, मिट्टी का तेल, तम्बाकू, शराब, विदेशी खांड, विदेशी कपड़े, चीजें, रेल से भेजने का किराया। इसके अतिरिक्त (Supertax) भी लगाया है अर्थात् अधिक आमदनी वालों से आयकर बढ़ाया है।

इन में से कई टैक्स तो हमारी दृष्टि में उचित ही हैं शराब और तम्बाकू महंगी छोड़ अगर बन्द भी होजावे तब भी हानि की अपेक्षा लाभ ही है और विदेशी खांड और कपड़ों पर

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

टैक्स लगजाना भी हमारे लिये लाभ कारी है यदि हमारे देश के व्यापारी लोग भी विदेशी वस्तु के महंगे होने के कारण धन के लोभ से अपनी देशी चीज़े भी महंगी न करलेवें। हमारी समझ में देश के नेताओं विशेष कर महात्मा गान्धी जी को व्यापारी मण्डल को उपदेश देकर ऐसा उद्योग करना चाहिये कि जिससे देशी व्यापारी संघ बना कर चीज़ों के दाम उचित रखने का प्रण लेवें और देशी व्यापार की उन्नति हो अन्यथा यदि देशी वस्तुयें भी महंगी होती गईं और देशी व्यापारियों ने भी लूट मचाई तो साधारण जनता तो और भी भूखीमर जावेगी।

इसके अतिरिक्त जन साधारण पर असर डालने वाले और कई टैक्स हैं पोस्टेज, दियासलाई, रेल का भाड़ा। यदि लिफ़ाफ़ों से लेकर ऊपर २ ही डाक व्यय बढ़ता तब तो गरीब जन कार्ड ही बर्त लेते परन्तु कार्ड भी दो पैसे को मिला करेंगे। अतः प्रत्येक जन पर इस महंगी का असर होगा, और रेल किराया अधिक होने के कारण चीज़ें एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में कम जावेंगीं अतः मंहगी होजावेंगीं जिससे विचारे ग़रीब लोग और पीड़ित होंगे।

दियासलाई के विषय में तो यह कहा जा सक्ता है कि दियासलाई के देशी कारखाने खोल दिये जावें जहां से वह सस्ती मिलसके परन्तु इधर कुछ उद्योग पहिले किया गया था उस में तो सफलता मिली नहीं थी।

अस्तु, जो कुछ हो इस दिवाले का कारण क्या है? अन्य वर्षों में तो व्यय के बाद कुछ बचत ही रहती थी, अतः मालूम होता है कि कारण (exchange rate) सिक्कों की कीमत का घटना बढ़ना ही है। मिस्टर हेली से जब विलायती हुण्डी की दरके सम्बन्ध में प्रश्न किये गए तो वह मौन साध कर। विषय टाल गए। परन्तु इतने गहरे प्रश्न पर जो कि अमीर गरीब सभी पर प्रभाव डालता है—चुप रहना कब तक उचित होगा। इस समय गवर्नमेण्ट का प्रथम और मुख्य कर्त्तव्य है कि रुपये की कीमत नियत कर देवे, इस से खज़ाना भी खाली न होगा और प्रजा को भी सन्तोष हो जायगा।

महाराजा काश्मीर को पूर्ण अधिकार

बड़े हर्ष का विषय है कि सर्कार ने महाराजा काश्मीर को पूरे अधिकार प्रदान कर दिये हैं और हमें पूर्ण विश्वास है कि ये अधिकार केवल काग़ज़ को ही सुशोभित नहीं करेंगे वरन सच्चे अंश में अधिकार होंगे और अब सर्कार महाराजा को कोई ऐसा 'मशवरा' न दिया करेगी जो कि 'मशवरे' की शकल में हुक्म हुआ करते हैं। किन्तु महाराजा साहब से भी हमारी प्रार्थना है कि वह भी प्रजा को पूरे अधिकार देकर अपनी रियासत में पूर्ण स्वराज्य को आदर्श बनाकर दिखलावें और लोगों के इन आक्षेपों को हटा देवें कि देशी राज्यों में प्रजा को कितने कम अधिकार हैं।

इस के अतिरिक्त एक और बात भी ध्यान देने योग्य है वह यह कि बड़े २ शिक्षित विद्वान और वैज्ञानिक काश्मीरी अपना देश छोड़ २ कर प्रान्त प्रान्त में जाकर बसे हैं और वहां पर अपनी उच्च स्थिति बनाई है, परन्तु काश्मीर में इस प्रकार के भारतीय नहीं हैं, यद्यपि काश्मीर खनिज पदार्थों से भरपूर है और वहां पर बड़े २ वैज्ञानिकों के लिये क्षेत्र है। महाराजा साहब को चाहिये कि वह इधर भी ध्यान देवें और ऐसी २ संस्थायें बनाकर जहां बड़े २ लायक पुरुष अपनी विद्वत्ता का परिचय देकर अपनी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्थिति बनायें और देश को भी लाभ हो योग्य पुरुषों को नियत करें। ——

असहयोग की विजय

भारत सर्कार और इंग्लैण्ड का प्रधान सचिव दोनों ही पहिले कह चुके थे कि सेवरीज़ की सन्धि [Treaty of Seneres] अन्तिम है और तुर्कों के लिए कुछ नहीं हो सक्ता। किन्तु प्रसन्नता की बात है कि अब इस सन्धि पर पुनः विचार होने लगा है और एक कान्फ्रेंस बुलाई जा रही है जिस में दो भारतीय प्रतिनिधि-एक तो सेन्ट्रल खिलाफ़त कमेटी के प्रधान सेठ छुटानी महाशय, दूसरे असहयोग आन्दोलन के प्रसिद्ध नेता डा० अन्सारी महोदय हैं। आशा की जाती हैकि कुस्तुन्तुनियां, खुर्दस्तान, वान और टिफ्लिस तुर्कों को वापिस मिल जावेंगे और सुमिर्ना तथा थ्रेस के विषय में मित्र दल की एक कमीशन फैसला करेगी। कहा तो यह जाता है कि असहयोग आन्दोलन फेल हो गया है किन्तु जब सर्कार भारततीय प्रजा के प्रतिनिधि असहयोग वादियों को चुनती है और उन्हें ही भारत के प्रतिनिधि मानती है तो असहयोग आन्दोलन असफल कैसे? यदि असफलता का लक्षण यही है तो परमात्मा करे ऐसी असफलता सब हितकर आन्दोलनों को मिले।

परन्तु अब मुसलमानों के लिये परीक्षा का समय उपस्थित है। कहीं ऐसा न हो कि सर्कार की इस न्याय युक्त प्रशस्त नीति से अति प्रसन्न होकर हमारे मुसलमान नेता अपने राष्ट्रीय लक्ष्य को भूल जावें और असहयोग आन्दोलन को ढीला पड़नेदें। क्योंकि असहयोग को त्यागना स्वराज्य से मुख मोड़ना है। पता नहीं किस समय पुनः इसी प्रकार का संकट समय उपस्थित हो तो इस समय स्वराज्य से मुख मोड़कर मुसलमानों को फिर पश्चाताप होगा। अतः अभी से सावधान होना चाहिये और टर्की का चाहे कुछ फैसला हो उस से फूल कर स्वराज्य प्राप्ति के कामों से प्रथक् नहीं होना चाहिये। —०—

इम्पीरियल कान्फ्रेन्स

वृटिश साम्राज्य की आन्तरीय समस्याओं को तय करने के लिए इम्पीरियल कान्फ्रेंस हुआ करती है। इस वार उसका अधिवेशन अप्रेल में होना निश्चय हुआ है। उस में भारत की ओर से प्रतिनिधि बनाकर सर्कार मिस्टर शास्त्री को भेज रही है। यद्यपि शास्त्री जी के लायक होने में किसी भारतीय को शक नहीं है तथापि वह वर्तमान भारत के प्रतिनिधि नहीं हैं। वास्तव में यदि कोई प्रतिनिधि हो सक्ता है तो वो महात्मा गान्धी या कांग्रेस कमेटी से नियुक्त ही कोई सज्जन हो सक्ता है। ——

दमन की नीति

किसी आन्दोलन के सफल होने के लक्षण चार प्रकार के व्यवहारों द्वारा प्रगट होते हैं पहले तो उसकी अवहेलना की जाती है, फिर उस पर हास्य किया जाता, तत्पश्चात उसे दमन किया जाता है और अन्त में उसका आदर होता है। हमारी सर्कार ने असहयोग आन्दोलन में ये चारों क्रम वर्त्ते हैं। पहिले तो अवहेलना करने का यत्न किया और इस आन्दोलन को (Most foolish) अत्यन्त मूर्खता इत्यादि कहकर टाला गया। उसके वाद डूयक महोदय के सन्मान में मद्रास में एक नाटक खेला गया जिसमें इस की हंसी उड़ाई गई तथा बंगाल के गवर्नर ने भी अपनी वक्तृता में हास्य किया। अब तीसरी और चौथी सीढ़ी दमन और सन्मान की साथ २

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ती जा रही है। चौथी सीढ़ी के प्रमाण पहिले 'असहयोग की विजय' शीर्षक में कहचुके हैं अब तीसरे दमन के विषय में कुछ कहना है

मालूम होता है कि भारत सर्कार की आज्ञा आचुकी है कि असहयोग आन्दोलन को दमन किया जावे। तभी तो क्रम पूर्वक दमन नीति का अनुसरण किया जा रहा है। पंजाब में पण्डित रामभजदत्त चौधरी, डा० किचलू तथा कवीश्वर सर्दार सर्दूलसिंह जी पर यह नीति अब लगी है। यद्यपि इसका प्रारम्भ माननीय लाल लाजपतराय जी को सीमा प्रान्त में जाने से रोकने के समय से ही है। पण्डित दीनानाथ जी को जलयांवाला बाग़ में महाभारत की कथा कहने से भी रोक दिया गया है।

संयुक्तप्रान्त में भी इसका शुरू हो चुका है यहां तक कि एक देवी को सीतापुर आर्य्य समाज के जल्से में मुँह बन्दी का हुक्म आया। बंगाल में महाशय चितरंजनदास जी को मैमनसिंह में जाने से रोका गया यद्यपि पीछे से यह आज्ञा हटानी पड़ी। मद्रास में महाशय याकूब हुसेन को मुँह बन्दी की आज्ञा हुई। मध्यप्रदेश में डा० परांजपे इत्यादि को शराब के विरुद्ध प्रचार से रोका गया।

किन्तु सब से ज्यादः दमन विहार प्रान्त में हुआ है जहां हमारे भारतीय सिन्हा जी गवर्नर हैं। विहार सर्कार ने डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेटों को हुक्म भेजा है कि हर प्रकार से आन्दोलन को रोका जावे। वहां पर महाशय राजेन्द्र प्रसाद का मुँह बन्द किया गया है।

विहार में दमन नीति का कारण एक हिन्दुस्तानी गवर्नर होने से यह सिद्ध हो गया है कि कोई भारतीय वर्त्तमान शासन पद्धति की मशीनरी का पुरजा बना नहीं रह सक्ता जब तक कि वह और पुरजों से बढ़ कर कार्यक्षमता न दिखलावे। इस से नर्म दल के उन नेताओं की आखें खुलनी चाहिये जो यह समझते हैं कि यदि उच्च पदों पर भारतीय नेताओं को नियुक्त किया जावे तो शासन नीति बदल जावेगी। वास्तविक बात यह है कि शासन नीति का सम्बन्ध शासन प्रणाली के साथ है। प्रत्येक शासन प्रणाली के साथ एक विशेष प्रकार की शासन नीति लगी होती है इस लिए जो लोग भारतीय सर्कार की शासन नीति से असन्तुष्ट हैं उन को यही उचित है कि वे स्वराज्य की प्राप्ति के लिये प्रयत्न करें न कि वर्तमान शासन प्रणाली का भाग बन कर उस से संलग्न शासन प्रणाली की क्षमता को बढ़ाने का प्रयत्न करें।

क्या जर्मनी के साथ युद्ध छिड़ेगा ?

समाचार आया है कि मित्र राष्ट्र पुनः युद्ध की घोषणा दे रहे हैं और जैसी की वर्त्तमान यूरोप की स्थिति है उस से युद्ध हुए बिना रह भी नहीं सक्ता। क्योंकि जब तक सब के हृदय शुद्ध न हो जावें और स्वार्थ छोड़ कर न्याय पूर्ण व्यवहार न हो तब तक शान्ति नहीं रह सक्ती। तथापि जर्मनी की हीन दशा जो वर्तमान में है उसे देखते विश्वास नहीं आता कि वह इतने शीघ्र युद्ध के लिए तय्यार हो सकेगी। पर काल बड़ा बली है, यदि योरोपीय सभ्यता का शीघ्र अधः पतन ही भाग्य में है तो युद्ध होगा ही चाहे आज हुआ या कल।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वनिता विनोद

स्त्री उपयोगी स्त्रियों द्वारालिखित लेखों का संग्रह।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ
१—स्त्री जगत	६९२
२—कला कौशल्य—(ले० श्रीमती ओ३मवती देवी)	६९३
३—बसन्ती शृंगार में मां की मूर्त्ति—(ले० श्री० कुमारी श्यामप्यारी देवी)	६९७
४—सुधार का मूल-पारिवारिक जीवन—(ले० श्रीमती० मनोकामना देवी	६९८

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

स्त्री जगत् ।

आदर्श सर्कारी कन्या विद्यालयों का प्रस्ताव ।

अभी गत् फर्वरी २४ को भारतीय व्यवस्थापक सभा में सर्दार गुलाब सिंह जी ने यह प्रस्ताव किया कि "भारतीय कन्याओं के लिए सर्कार की ओर से प्रत्येक प्रान्त में आदर्श विद्यालय खोले जावें जिनके साथ २ आश्रम भी हों, और शिक्षा विभाग के लेखे का जो द्रव्य है उस का चौथा हिस्सा लड़कियों की शिक्षा के लिये पृथक् रक्खा जावे और उसी में ख़र्च हो तथा इस कार्य्य के लिये एक विशेष इम्पीरियल ग्रान्ट-इन-एड की आज्ञा हो" ।

यह प्रस्ताव कई देशी व विदेशी सदस्यों के बहस करने पर रह गया यह अच्छा ही हुआ क्योंकि लड़कों की शिक्षा तो सर्कार के हाथों में रहे कर हानिकारक सिद्ध ही हुई अब लड़कियों की शिक्षा का प्रश्न उठा कर उनके लिए भी कांटे बोने इस नव युग में बड़ा ही अनुचित कार्य्य है । जातीय संस्थाओं में विविध मतावलम्बियों द्वारा जो शिक्षा कन्याओं को दी जारही है उसी को उन्नत और पुष्ट करके अधिक उपयोगी बनाना चाहिये और भारतीय महिलाओं को सेवा के लिये तैय्यार करना चाहिये । कौंसलों व सभाओं में प्रस्ताव करने से यह काम न होगा ।

आर्य्य कन्या विद्यालय आश्रम विसवां ।

पिछली ज्योति में उपरोक्त विद्यालय व आश्रम के लिये ज्योति के पाठक पाठिकाओं से प्रार्थना की गई थी कि वह जहां अपने नित्य के जीवन में इतना कुछ ख़र्च करती रहती हैं वहां पर कम से कम एक २ रुपेया भी यदि भेंट इस आश्रम को दे देवें तो एक अच्छी रकम बन जायगी । परन्तु हमें खेद है कि हमारी बहिनों को यह प्रस्ताव अच्छा न लगा, क्योंकि किसी ने इस पर विशेष रूप से ध्यान न दिया नहीं तो एक रुपेया क्या वस्तु है ।

केवल एक देवी रामदेवी जी पेशीन बिलोचिस्तान ने ज्योति की ग्राहिका के रूप में ५) इस विद्यालय व आश्रम को भेजें हैं जिनके हम बड़े कृतज्ञ हैं । आशा है कि अन्य देवियां भी इनका अनुकरण करती हुई अवश्य कुछ भेंट भेजेंगी ।

आर्य्य नारी सेवक सभा ।

आज लगभग चार वर्षों से यह सभा अप्रसिद्ध रूप से कार्य्य करती रही है किन्तु इस बीच में उस का उत्सव केवल एक वार ही हुआ है और वार्षिक अधिवेशन के लिये भी कई वार यत्न किया गया पर सभासदायें उपस्थित न हुईं । सभासदाओं की इस शिथिलता के कारण सभा के कई कार्य्यों में बाधा होरही है । अतः अंतरंग सभा ने यह निश्चय किया है कि २६ मार्च १९२१ को ज्योति कार्य्यालय में सभासदाओं की साधारण सभा की जाय जिस में नीचे लिखे विषयों पर विचार होगाः—

१. पिछले वर्षों की रिपोर्ट ।

२. सभा के नये हिसाब किताब की जांच ।

३. अगले वर्ष का लेखा ।

४. सभा के कार्य्य का प्रबन्ध ।

५. कई सभासदाओंके पत्रों में किये आक्षेपों पर विचार ।

६. सभा की रजिष्ट्री कराने का प्रश्न ।

७. नई अधिकारिणियों का चुनाव ।

८ विसवां कन्या आश्रम को सभा द्वारा खोलने का प्रश्न । कई सभा सदाओं के चन्दे दो २ वर्षों के बाक़ी रहते हैं उन से प्रार्थना है कि वह उन्हें भेज कर सम्मति देने का अधिकार प्राप्त करें तथा सभा के कार्य्य में भाग लेकर कृतार्थ करें ।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

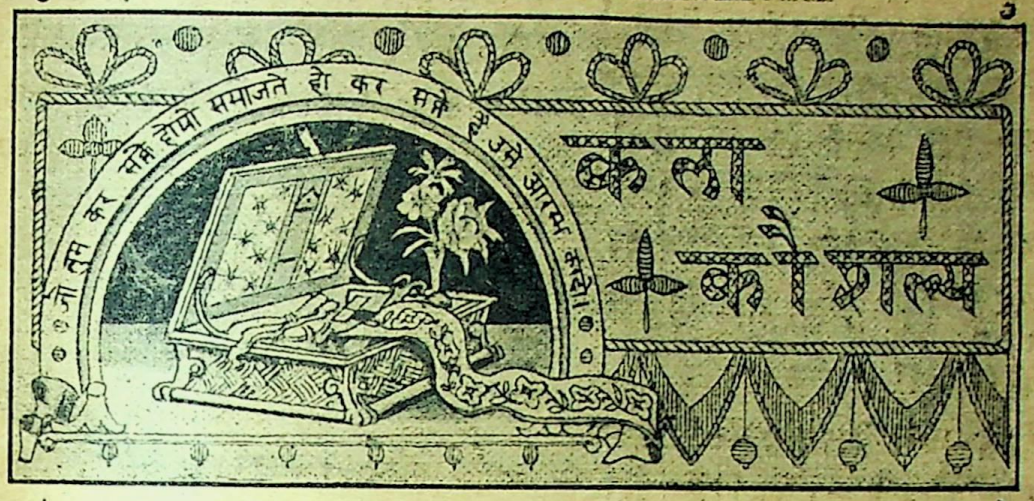

मक्खी के जाल का ब्लाउज़।

जालदार ऊनी ब्लाउज़।

(गतांक से आगे)

दाहिनी ओर की पीठ का हिस्सा—

१ पंक्ति–२० सी, जाल बनाओ जहां तक ३ फ़न्दे बाक़ी रहें, २ इकट्ठे, १ सी।

२ पंक्ति–३२ जाल, २० उ।

३ पंक्ति–२० सी, सारे जाल केवल अंतिम दो इकट्ठे।

४ पंक्ति–३१ जाल, २० सी।

५ पंक्ति–१ सादा, ३ उ, ४ सी, ७ उ, ५सी, जाल अन्त तक।

६ पंक्ति–३१ जाल, ५ उ, ७ सी, ४ उ, ४ सी।

५वीं और ६ठी पंक्तियों को आठ बार क्रम से बनाओ।

अब २२ पंक्ति हो जांयगी।

२३ पंक्ति–५वीं की तरह।

२४ पंक्ति–जाल, २० सी।

२५ पंक्ति–२० सी, जाल।

२६ पंक्ति–जाल, २० उ।

२७ पंक्ति–२५ की तरह।

२८ पंक्ति–२४ की तरह।

२९वीं से ४७वीं पंक्ति तक–१९ पंक्तियां क्रम से ५वीं और ६ठी पंक्ति की भांति बनाओ।

बायीं ओर की पीठ का हिस्सा—

ऊन तोड़ कर बग़ल की तरफ़ को जोड़ लो।

१ पंक्ति–२ सी, जाल, १८ सी।

२ पंक्ति–१८ उ, जाल अन्तिम दो इकट्ठे।

३ पंक्ति–३ सी, जाल, १८ सी।

४ पंक्ति–१८ सी, जाल अन्तिम दो इकट्ठे।

५ पंक्ति–२ सी, जाल, ५ सी, ७ उ, ४ सी, १ उ, १ सी।

६ पंक्ति–२ सी, ४ उ, ७ सी, ५ उ, जाल अन्तिम दो इकट्ठे।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

७ पंक्ति–१ सादा, जाल, ५ सी, ७ उ, ४ सी, १ उ, १ सी।

८ पंक्ति–२ सी, ४ उ, ७ सी, ५ उ, जाल।

७वीं और ८वीं पंक्तियों की क्रम से १५ पंक्तियां और बीनो जिससे २३ पंक्ति बन जांय।

२४वीं और १८वीं पंक्ति–१८ सी, जाल।

२५वीं और १७वीं पंक्ति–जाल, १८ सी।

२६वीं पंक्ति–११ उ, जाल।

२९वीं से ४७वीं पंक्ति तक–१९ पंक्तियां ७वीं और ८वीं की तरह क्रम से बनाओ।

४८ पंक्ति–सीधी बीनो अन्तिम ५ फ़न्दे उतार कर समाप्त कर दो।

ऊन तोड़कर दाहिनी सीधी बग़ल की ओर जोड़ दो।

अब सामने बनेगा।

१ पंक्ति–३ सी, जाल, ४१ सी, जाल अन्त में १ बनाना, १ सादा, ३ सी।

२ पंक्ति–२ इकट्ठे, ३४ जाल, ४१ उ, ३४ जाल, २ इकट्ठे।

३ पंक्ति–२ सी, जाल, ४१ सी, जाल अन्त में २ सी।

४ पंक्ति–२ इकट्ठे, ३३ जाल, ४१ सी, ३३ जाल, २ इकट्ठे।

५ पंक्ति–१ सादा, जाल, * ५ सी, ७ उ, इस * चिन्ह से २ बार बनाओ। ५ सी, जाल, १ सी।

६ पंक्ति–२ इकट्ठे, जाल ३२, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ३२ जाल, २ इकट्ठे।

७ पंक्ति–१ सादा, २ सी, ३० जाल, ५ सी, ७ उ, ५ सी, ७ उ, ५ सी, ७ उ, ५ सी, ३० जाल, ३ सी।

८ पंक्ति–२ इकट्ठे, जाल, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ७ सी, ५ उ, जाल, २ इकट्ठे।

९ पंक्ति–१ सादा, १ सी, जाल, ५ सी, ७ उ, ५ सी, ७ उ, ५ सी, ७ उ, ५ सी, जाल, अन्त में ३ सी।

१० पंक्ति–२ इकट्ठे, जाल ३०, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ३० जाल, २ इकट्ठे।

११ पंक्ति–१ सादा, ३० जाल, ५ सी, ७ उ, ५ सी, ७ उ, ५ सी, ७ उ, ५ सी, ३० जाल, १ सी अन्त में।

१२ पंक्ति–१ सादा, ३० जाल, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ७ सी, ५ उ, ३० जाल, १ सी अन्त में।

११वीं और १२वीं पंक्तियों को क्रम से ५ बार बनाओ यानी सब २२ पंक्ति बन जांय।

२१ पंक्ति–११वीं की तरह।

२४ पंक्ति–जाल, ४१ सी, जाल।

२५, २७, २८ पंक्तियां–सीधी बीनो।

केवल बीच की २६ पंक्ति–सारी उल्टी बीनो।

२९ पंक्ति–७ उ, ५ सी यही अन्त तक दोहराओ अन्त में ७ उ हों।

३० पंक्ति–७ सी, ५ उ, बार २ अन्त तक ७ सी, हों।

१७ पंक्तियां क्रमानुसार और बनाओ २९वीं और ३०वीं पंक्ति की तरह।

अब दायीं पीठ की सलाई उठाओ और सामना उसी सलाई पर बीनो। सीधा।

५ फ़न्दे और डालो तब फिर दाहिनी पीठ भी उसी सलाई पर सीधी बीनो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१ पंक्ति–सीधी बीनो।

२ पंक्ति–उल्टी बीनो।

३ पंक्ति–सीधी बीनो।

४ पंक्ति–९ सी, * २ इकट्ठे, ४ सी, इस * चिन्ह से बार २ बनाओ। अन्त में १० सी।

५ पंक्ति–१ सादा, ३ उ, * ४ सी, ६ उ, इस * चिन्ह से दोहराओ अन्त में ४ सी, १ उ, १ सी।

६ पंक्ति–१ सादा, १ सी, * ४ उ, ६ सी, इस * चिन्ह से बार २ बनाओ अन्त में ४ सी।

७ पंक्ति–१ सादा, ३ उ, * ४ सी, ६ उ, इस * चिन्ह से तीन बार बनाओ ४ सी, ५ उ, २ इकट्ठे, २ सी, २ इकट्ठे, ५ उ, * ४ सी, ६ उ, इस * चिन्ह से ७ बार बनाओ, ४ सी, ५ उ, २ इकट्ठे, २ सी २ इकट्ठे, ५ उ, * ४ सी ६ उ, इस * चिन्ह से तीन बार बनाओ, ४ सी, १ उ, १ सी।

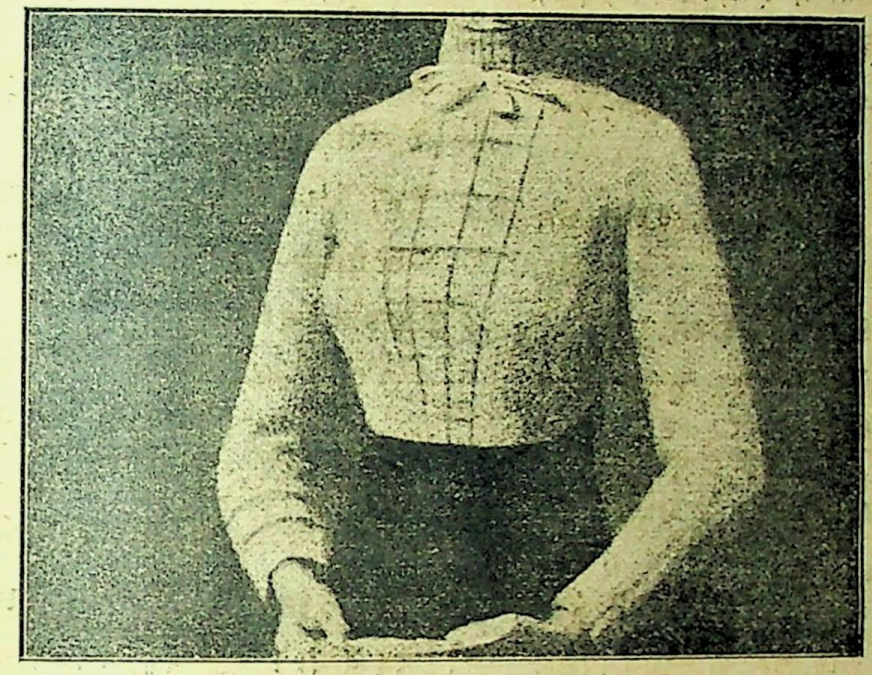

८ पंक्ति–२ सी * ४ उ, ६ सी, इस * चिन्ह से तीनबार, ४ उ, ४ सी, २ इकट्ठे, २ उ २ इकट्ठे, ४ सी, * ४ उ, ६ सी, इस * चिन्ह से सात बार, ४ सी, २ इकट्ठे, २ उ, २ इकट्ठे ४ सी, * ४ उ, ६ सी, इस * चिन्ह से तीन बार, ४ उ, ४ सी।

९ पंक्ति–७ वीं की तरह है किन्तु कंधों पर ३ उ, दो इकट्ठे उल्टे, २ सी २ उल्टे इकट्ठे, ३ उ।

१० पंक्ति–८ वीं की तरह है किन्तु कंधों पर २ सी, २ इकट्ठे, २ उ, २ इकट्ठे २ सी।

११ पंक्ति–७ वीं की तरह कंधों पर १ उ, २ इकट्ठे उल्टे, २ सी, २ इकट्ठे उल्टे, १ उ।

१२ पंक्ति–८ वीं की तरह कंधे २ इकट्ठे २ उ, २ इकट्ठे।

१३ पंक्ति–१ सादा, ३ उ, * ४ सी, ६ उ, इस * चिन्ह दो बार, ३ सी, २ इकट्ठे, २ सी, २ इकट्ठे, ३ सी, * ६ उ, ४ सी इस * चिन्ह से ६ बार बनाओ ६ उ, ३ सी, २ इकट्ठे, २ सी २ इकट्ठे, ३ सी, * ६ उ, ४ सी, इस * चिन्ह से दो बार, १ उ, सी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

१४ पंक्ति–१ सादा, १ सी, * ४ उ, ६ सी इस * चिन्ह से दो बार, २ उ, इकट्ठे उल्टे, २ उ, २ उल्टे इकट्ठे, २ उ, * ६ सी, ४ उ, इस चिन्ह से १ बार और ६ सी, इसके बाद १४ फन्दे उतार कर समाप्त कर दो [यह बिचले फन्दे होंगे गले के वास्ते] ५ सी, ४ उ, ६ सी, ४ उ, ६ सी, २ उ, २ उल्टे इकट्ठे, २ उ, २ उल्टे इकट्ठे, * ६ सी, ४ उ, इस * चिन्ह से दो बार, ४ सी।

१५ पंक्ति–१ सादा, ३ उ, * ४ सी, ६ उ, इस * चिन्ह से दोबार, १ सी, २ इकट्ठे, २ सी, २ इकट्ठे, १ सी, ६ उ, ४ सी, ६ उ, ४ सी, ४ उ, २ इकट्ठे, २ इकट्ठे।

१६ पंक्ति–१ सादा, ५ सी, ४ उ, ६ सी, ४ उ, ६ सी, २ उल्टे इकट्ठे, २ उ, २ उल्टे इकट्ठे, * ६ सी, ४ उ, इस चिन्ह से दोबार, ४ सी।

१७ पंक्ति–१ सादा, ३ उ, ४ सी, ६ उ, ४ सी, ६ उ, ४ सी, ५ उ, २ उल्टे इकट्ठे, २ सी, २ उल्टे इकट्ठे, ५ उ, ४ सी, ६ उ, ४ सी, ४ उ, २ इकट्ठे।

इसी प्रकार लौट २ कर बनाना है कंधों पर घटाते जाना और गले के सामने पिछले दो फ़न्दे इकट्ठे बीनना। २१ वीं पंक्ति में १२ फन्दे समाप्त करके और अन्त में २ इकट्ठे प्रत्येक पंक्ति में लेते जाओ जब तक सब फन्दे न समाप्त हो जांय।

उनको बांये हाथ के गले की तरफ़ जोड़ कर ऊपर की विधि अनुसार पहिले कंधे की की तरह इसे भी बीन डालो।

गले की पट्टी—१२ नं सलाइयों से ११२ फ़न्दे गले के चारों ओर से उठाओ और २ सीधी पंक्ति, १ उल्टी, २ सीधी पंक्ति और ऐसे ५ पंक्ति बीनो। यदि नीचा गला रखना है तो इतना ही काफ़ी है यहीं समाप्त करदो यदि ऊंचा करना है तो ३६ पंक्तियां धारीदार। एक पंक्ति–४ सी, २ उ। २ पंक्ति २ सी, ४ उ। की बीन कर तब समाप्त करो।

बांहे–दोनों एक ही तरह बीनी जाती है।

६० फ़न्दे १२ नं० सिलाई पर चढ़ाओ।

१ पंक्ति–४ सी, २ उ, बार २।

१ पंक्ति–२ सी, ४ उ, बार २।

इन दो पंक्तियों को नौ बार दोहराओ क्रमसे।

२१ वीं और २२ वीं पंक्ति–सीधी बीनो।

२३ पंक्ति–उल्टी बीनो।

२४, २५ पंक्ति–सीधी।

२६ पंक्ति–* १ सी, १ बढ़ाओ, १ सी, ४ उ, इस * चिन्ह से बार २।

२७ पंक्ति–४ सी, ३ उ, बार २।

२८ पंक्ति–३ सी, ४ उ, बार २।

इन दोनों पंक्तियों को ९ बार बनाओ क्रमसे।

४७ से ५१ पंक्ति तक—२१ पंक्ति से २५ तक की तरह बीनो।

५२ पंक्ति–* १ सी, २ उ, १ बढ़ाओ, २ उ, इसी प्रकार बनाओ।

५३ पंक्ति–३ सी, ३ उ, बार २।

५४ पंक्ति–३ सी, ५ उ, बार २।

इन दोनों पंक्तियों को क्रम से नौ बार बनाओ।

७३ पंक्ति से ७७ तक–जैसा २१ पंक्ति से २५ तक थी।

७८ पंक्ति–९ नं० की सलाई से यानी मोरी से १ पंक्ति उल्टी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

७९ पंक्ति–सधिा केवल २ फ़न्दे बढ़ाने हैं।

८० पंक्ति–यहां से जाल वाली बिनावट फिर आरम्भ होगी और बढ़ाना सदैव पंक्ति के शुरु और अन्त में करना।

आगे दी हुई विधि से जाल बीनो। सातवें, ग्यारहवें, पन्द्रहवें, उन्नीसवें, और तेइसवें जाल की आरम्भ की पंक्तियों में सिरों पर एक २ फ़न्दा बढ़ाओ जब तक ४२वां जाल न आजाय [यहां ११० फ़न्दे हों] यदि किसी ने कम लम्बी रखनी हो तो कम बीने। अब बांह के ऊपर की बिनावट के लिये २० फ़न्दे समाप्त कर उतार दो और अन्त तक जाल बीनो। दूसरी पंक्ति में दूसरी ओर २० फ़न्दे समाप्त करदो अन्त तक जाल बीनो।

अब लौट फेर कर उसी तरह बीनते जाओ प्रत्येक पंक्ति के अन्त में २ फ़न्दे घटादो जब २३ फ़न्दे रह जांय समाप्त करदो।

बीच २ में होशियारी से फंदे इत्यादि गिनते रहना चाहिये जिसमें गलती न पड़े।

अन्त में–बाहों को सीं दो फिर आगे पीछे में जोड़ दो ज़रा सिलाई आगे को उभरी हो जिससे बाहें फूली २ रहें।

ब्लाउज़ का निचला सिरा एक कमर बराबर पट्टी में टांक दो तो एकसा रहेगा। और पीछे किसी पट्टी पर बटन टांक लो या हुक इत्यादि जैसा सुबीता हो टांक लो। बनने के बाद सबको चारों ओर से खींच खांच कर बराबर कर डालना चाहिये क्योंकि जाल और अन्य बिनावट बराबर रहनी चाहिये।

——:o:——

बसन्ती शृंगार में मां की मूर्त्ति।

लेखिका—श्रीमती कुमारी श्यामप्यारी देवी।

दिन को नींद आने से सो रही। मुझे ऐसा जान पड़ा कि एक पेड़ के नीचे खड़ी हूं। प्रातःकाल का समय है। बसन्त ऋतु है। नव बसन्त की हवा चल रही है। चारों ओर बसन्त ही के फूल फूले हैं। सरसों के खेत बसन्ती रंग से भेर पड़े हैं। जिस ओर दृष्टि उठाओ बसन्त का ही राज देख पड़ता है। बसन्त के आगमन को पक्षी गा रहे हैं, मधुर स्वर से बसन्त के शोभा का वर्णन कर रहे हैं। प्रातःकाल का सूर्य्य लालिमा लिये ऊपर चढ़ने की तैयारी कर रहा है। उसकी चमक फूलों पर पड़ कर उन्हें हंसा रही है। चारों ओर पर्वत ही पर्वत हैं एक विशाल पर्वत के ऊपर 'मां' की मूर्त्ति है। कैसी ज्योति निकल रही है। सैकड़ों नर नारी चरणों के पास खड़े हैं। बसन्ती फूलों की 'मां' के ऊपर वर्षा हो रही। 'मां' का कैसा प्रसन्न मुख है। 'मां' का वह राजेश्वरी वेष देख के मोहित हो मैं भी उसी ओर चली किन्तु यह क्या?

आंख खुल गई। मेरा सुख स्वप्न भंग हो गया। वही बसन्त ऋतु है। वही बसन्त की हवा चल रही है। वही बसन्त के फूल फूले हैं। तब भी आकाश पाताल का अन्तर। वह "मां" की ज्योति मयी मूर्त्ति कहां? बसन्ती शृंगार किये। यह तो पीली जान पड़ती है। वह नारी नरों का कोलाहल कहां? यहां तो माता से सभी उदासीन हैं, वह रानी सी मूर्त्ति कहां? [मेरी "मां" तो भिखारिणी जान पड़ती हैं] प्रातःकाल का चढ़ता हुआ सूर्य्य कहां! इस

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समय सूर्य्य डूब रहा था। हाय एक दिन ऐसे ही उगते हुये सूर्य्य के समान मेरी मां सबके सामने गर्व से सिर उठाये थी किन्तु अब तो डूबते हुये सूर्य्य के समान उसका समस्त तेज क्षीण है, जो क्षुद्र तारे उसके तेज के सामने छिपे थे वे ही उसके तेज के अस्त होते ही ठीक वैसे ही चमकने लगे जैसे सूर्य्य के अस्त होते ही कृष्ण पक्ष के तारे चमकने लगते हैं। क्या आशा की जा सक्ती है। भारत मां। कभी फिर वसन्त के उगते हुये सूर्य्य के समान ज्योति मयी सदा वसन्ती शृंगार में दीख पड़े। इति

——:०:——

सुधार का मूल-पारिवारिक जीवन।

ले० श्रीमती मनोकामना देवी।

(गतांक से आगे)

(ख) साफ़ कपड़े—यह विषय भी कम आवश्यक नहीं है। मनुष्य को अपना शरीर तथा घर हमेशा साफ़ रखना चाहिये। क्योंकि यदि शरीर मैला रहता है तो शरीर में जो छिद्र हैं वे बन्द हो जाते हैं जिस से कि पसीना तथा गन्दी गैस शरीर के बाहर नहीं निकलने पाती और जब पसीना तथा गन्दी गैस शरीर के बाहर नहीं निकल पाती तो यह मनुष्य के लिए बड़ा अस्वस्थकर होता है। साफ़ घर की इस लिये आवश्यकता है कि यदि घर साफ़ रहेगा तो हवा भी साफ़ रहेगी जो कि मनुष्य के लिए आवश्यक है।

यह तो मैंने स्वास्थ्य के लिए आवश्यक थोड़ी सी मुख्य २ बातें बता दीं हैं। पर इन के सिवा और थोड़ी सी ऐसी बातें हैं जिन्हें कि क़रीब २ सब लोग जानते हैं चाहें बर्तें न। जैसे तड़के उठना और शारीरिक परिश्रम। अब आज कल के नये ज़माने में बहुतेरे यह जानते हुए भी कि तड़के उठना लाभकारी है आठ २ नौ २ बजे तक पलंग पर पड़े २ ऐंड़ियां लेते रहते हैं। यदि मनुष्य तड़के उठे तो वह बहुत कुछ कर सकता है। क्योंकि प्रातःकाल का समय ऐसा होता है कि उस समय मनुष्य की सब तरह की शक्ति अधिक होती है और जितना काम वह इस समय कर सकता है उतना फिर वह सारे दिन के और किसी भाग में भी नहीं कर सकता।

शारीरिक परिश्रम करना भी मनुष्य के लिये बहुत आवश्यक है। क्योंकि परिश्रम किये बिना पाचन ठीक नहीं होता जिससे कि सारे शरीर का क्रम बिगड़ जाता है। मुख्यतः जब कि मनुष्य मानसिक काम बहुत करे उसके लिये साथ ही साथ शारीरिक परिश्रम भी बहुत आवश्यक है। वैसे तो मनुष्य के लिये प्रतिदिन थोड़ी सी कसरत और टहलना ठीक है पर यदि यह न करसके तो यदि अपना सारा काम अपने आप से करे तो थोड़ा बहुत परिश्रम हो जाता है। इस विषय में तो हमारे बहुत अमीर घरानों के स्त्री पुरुषों की दशा बड़ी शोचनीय होती है। प्रायः देखा जाता है कि धनी लोगों के यहां सैकड़ों नौकर रहते हैं और घर के लोग तो अपने आप से लेकर पानी पीना भी नहीं जानते। नहीं ऐसा कदापि नहीं करना चाहिये। कम से कम यदि मनुष्य अपना सारा काम अपने आप से करें

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तो उनकी मानसिक तथा शारीरिक शक्ति बहुत बढ़ सकती है और तभी वह कुछ काम भी कर सकती है।

यह तो मैं पहिले ही बता चुकी हूं कि अपने घर वालों का असर बालकों पर बहुत पड़ता है। शुरू से वे जैसा अपने घर में होते देखते हैं बड़े होकर वे भी वैसा ही करते हैं। इस लिये तात्पर्य्य यह है कि ये सब अच्छी बातें यदि आप अपने बालकों को सिखाना चाहते हैं तो वैसा ही स्वयं सब परिवार के बड़े लोग भी करने का प्रयत्न करिये। जैसा बड़े करेंगे वैसा छोटे सीखेंगे और जैसा वे सीखेंगे वैसे वह बनेंगे।

(२) आत्मिक उन्नतिः—इसी प्रकार यदि आप यह चाहते हैं कि आपके बालक आदर्श निकलें, यदि आप को तनिक भी देश प्रेम है तो पहिले अपनी आत्मा की उन्नति करिये। पहिले अपने स्वभाव तथा आचरण निर्मल तथा पवित्र बनाइए तभी आप के बालक भी आप से शिक्षा ग्रहण कर के वैसे ही हो सकेंगे और तभी उनसे देश का उपकार हो सकेगा। क्योंकि येही बालक तो देश के भावी सभासद हैं। देश की सारी उन्नति तथा वृद्धि इन्ही पर निर्भर है। जिस प्रकार की इनकी अवस्था होगी वैसी ही देश की भी। इन सब बातों के लिये आप को स्वयं आदर्श बनना चाहिये यदि आप ऐसा नहीं करते तो आप की सारी इच्छायें जो कि आप की अपनी सन्तान के प्रति हैं बिलकुल निरथर्क हैं। इसलिये परिवार में सब लोगों को चाहिये कि कोई झूठ न बोले, कोई किसी को गाली इत्यादि न दे, कोई किसी की बुराई न करे, किसी का बुरा न चाहे, अपना सारा काम नियम पूर्वक करे, अपने धर्म का पालन करे इत्यादि। आज कल प्रायः यह देखने में आता है कि बहुतेरी स्त्रियां अपने बच्चों के सामने बुरीबातें कह लेती हैं। गालियां दे लेती हैं और कोई रोके तो कहती हैं कि वह तो अभी बच्चा है वह क्या समझे। पर वे यह नहीं जानतीं कि इस समय वह एक बात को एक बार ही में ऐसी अच्छी तरह सीख लेगा कि कि उसे आयु भर भी नहीं भूलेगा। यह भी अविद्या ही का कारण है कि सब को ग़लत बात भी ठीक लगती है। इसी प्रकार से परिवार में प्रातः तथा सायंकाल ईश्वरोपासना तथा प्रार्थना होनी चाहिये जिससे सब के मन तथा आत्मा नित्य शुद्ध होते रहें।

(३) सामाजिक उन्नतिः—इस विषय पर मुझे बहुत नहीं कहना है क्योंकि जब देश की शारीरिक तथा आत्मिक दशा अच्छी होगी तो फिर उसकी सामाजिक अवस्था भी अपने आप सुधर जाती है। लोगों में अपने आप सबके साथ उचित व्यवहार करना तथा अपने कर्तव्यों का पालन करना आजाता है जिससे दिन प्रति दिन समाज की उन्नति होती जाती है। इसका भी मुख्य उपाय यही है कि पारिवारिक जीवन में जितनी कुरीतियां तथा कुप्रथायें हैं वे सब बड़ों को दूर करनी चाहिये।

अन्त में परिणाम यह निकला कि यदि हम चाहते हैं कि हमारा देश फ़िर से सभ्य देशों में गिना जाने लगे, फिर से इसके सुदिन आ जावें। तो सब से पहिले हम अपने परिवारों की दशा को सुधारें और अपने आप आदर्श बनें। क्योंकि यही सुधार सारे देश के सुधार का मूल है। अन्यथा आपके सारे प्रयत्न निरर्थक जायेंगे। खाली सभा सोसाइटियें खोलने और उनमें जाकर बोल आने या केवल दूसरों को

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

शिक्षा दे आने से देश का उद्धार होना असम्भव है। आवश्यकता है वास्तविक काम करके दिखाने की इस लिये आइये हम कार्य्य क्षेत्र में उतरें और अपने परिवारों को आदर्श बनाने का प्रयत्न करें और दूसरों को भी वैसी ही सलाह दें। परिवारिक जीवन ठीक होने से हमारे बच्चे सुशिक्षित तथा समर्थ बनेंगे और वही भविष्य में सुदृढ़ पत्थर के समान लग कर जातीय भवन का निर्माण करेंगे॥

मुफ्त ! मुफ्त !! मुफ्त !!!

"अमृत बन्धु"

कफ़, खांसी, हैज़ा, दमा, शूल, संग्रहणी बच्चों के हरे पीले दस्त इन्फ्लुएंज़ा आदि रोगों की अचूक दवा है—

मू० ॥) फी शीशी दर्जन का ४) जादूभरी कहानी इनाम।

बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मिलेगा—

अमृत औषधालय,

सिपट बाज़ार- मेरठ।

वेद का स्वयं शिक्षक।

इस पुस्तक को पढ़िए और आप स्वयं वेद मन्त्रों का अर्थ जानने की योग्यता प्राप्त कीजिए। यदि आप केवल भाषा के ग्रन्थ पढ़ सकते हैं, तो निःसन्देह इस पुस्तक के पढ़ने से आप वेद मन्त्रों का अर्थ जान सकते हैं। अनुभव लीजिए। मूल्य १॥) डेढ़ रु०। शीघ्र मंगवाइए।

मन्त्री—

स्वाध्याय मण्डल, औंध

(ज़िला सातारा)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Regd. No. L. 1240.

वर्ष १] चैत्र १९७७—अप्रैल १९२१ [खण्ड १, संख्या १२

वार्षिक मूल्य ४॥)
प्रति संख्या ॥)

सम्पादिका—विद्यावती सेठ बी. ए.

स्त्रियों और विद्यार्थियों से ४)
विदेश का मूल्य ६)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विषय-सूची ।

	विषय	पृष्ठ
१	प्यारा भारत [कविता] लेखक—श्रीयुत् गया प्रसाद 'श्री हरि'	७०३
२	राज कर्मचारियों का वेतन और सरकारी हिसाब किताब [शुक्रनीति के आधार पर] लेखक-श्रीयुत् प्रोफैसर रामदेवजी सम्पादक "वैदिक मैगज़ीन"	७०४
३	विनय [कविता] लेखक-श्रीयुत् "गुलाब"	७०९
४	राष्ट्र के उद्देश्य—लेखक श्रीयुत् व्रज मोहन लाल साहनी	७१०
५	भारत-वासियों का पत्र [कविता] लेखक-श्रीयुत् हरिशंकर भट्ट	७१५
६	हृदय—लेखक श्री राजा राधिका रमण प्रसाद सिंह एम० ए०	७१६
७	माता का पुत्र को सम्बोधन [कविता] लेखक—श्रीयुत् सत्यव्रत जगजीवन	७१८
८	रुक्मिणी हरण नाटक—अनुवादक श्रीयुत् मेघाव्रत जगजीवन	७१९
९	प्रेम-तत्व ? [कविता] लेखक—ब्रह्मचारी वंशीधर	७२४
१०	पृथ्वी—लेखक श्रीयुत् रघुनाथ दत्त बन्धु	७२५
११	गंङ्गा-जमनी-नलनी—लेखक श्रीयुत 'पागल'।	७२८
१२	हमारी मंजूषा—	७३५
१३	कुसुमोद्यान—	७३७
१४	वैज्ञानिक संसार—	७४०
१५	उद्बोधन [कविता] लेखिका—श्रीमती कुमारी विद्यावती जी [बरेली]	७४२
१६	विचार प्रवाह—	७४३
१७	वनिता विनोद	७५१

ज्योति के नियम

ग्राहकों के लिये ।

१. ज्योति प्रति अंग्रेजी मास की १५ को ग्राहकों के पास पहुंचा करेगी ।

२. डाक व्यय सहित भारत के लिये इस का मूल्य ४॥) और छे मास के लिये २॥) वी. पी. का व्यय ≡) अलग है प्रति अंक का मूल्य ॥) है । भारत से बाहर विदेश के लिये इसका वार्षिक मूल्य ६) है। मूल्य मैनेजर ज्योति लाहौर के नाम आना चाहिये ।

३. पुरानी प्रतियां जो मिलसकेंगी उनका मूल्य प्रति संख्या ॥) से कम नहीं होगा ।

४. पते के परिवर्त्तन की सूचना पत्र के निकलने से १५ दिन पूर्व मैनेजर को मिलनी चाहिये ।

५. यदि कोई संख्या किसी ग्राहक को न पहुंचे तो पहिले अपने डाक घर से पूछना चाहिये। यदि पता न चले तो डाक घर से जो उत्तर आवे उसे प्रबन्ध कर्त्ता के पास भेज देना चाहिये । परन्तु यह सूचना अगले अंक के निकलने से १५ दिन पूर्व तक मिलनी चाहिये अन्यथा दूसरी प्रति बिना मूल्य नहीं दी जायगी।

लेखकों के लिये

६. लेख पढ़ने योग्य अक्षरों में हाशिया छोड़कर एक ओर ही लिखे जाने चाहियें । लेखों के घटाने बढ़ाने, छापने न छापने का अधिकार सम्पादिका को है । जो लेख प्रकाशित नहीं किये जासकेंगे वह टिकट और पता साथ होने पर लौटा दिये जावेंगे ।

८. लेख कविता समालोचना के लिये पुस्तकें और परिवर्त्तन के पत्र सम्पादिका ज्योति लायलपुर के पते पर आने चाहियें ।

मूल्य तथा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र प्रबन्धकर्त्ता ज्योति लाहौर के पते पर आने चाहियें ।

विज्ञापन दर यह होगी ।

प्रतिमास ।

पूर्ण पृष्ठ या दो कालम १०) आधा पृष्ठ या एक कालम ६) चौथाई पृष्ठ या आधा कालम ३) चौथाई कालम २) टैटिल पेज का तीसरा पृष्ठ १२) टैटिल का अन्तिम पृष्ठ १५)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

वर्ष १ | चैत्र १९७८—अप्रैल १९२१ | संख्या १२

❀ प्यारा भारत ❀

लेखक—श्रीयुत् गयाप्रसाद 'श्रीहरि'

त्रिभुवन न्यारे, भारत प्यारे, तुझ पर वारना रे (ध्रुव)

* *

तन, मन, धन सब तुझ पर वारूं, साहस, धर्म न कभी विसारूं।
योगी बन कर असहयोग का, गांधी व्रत को धारना रे॥ १॥

* *

शम, दम, सत्य, धैर्य्य को धारूं, शत्रु अहिंसा व्रत से मारूं।
विपति विपति पर विपति पड़े पर, कभी न हिम्मत हारना रे॥ २॥

* *

अन्यायी नृप से नाता तोड़ूं, देख दुःख नहिं मुख को मोड़ूं।
ले स्वराज्य, दे भगा विदेशी, निज सम्पत्ति संवारना रे॥ ३॥

* *

शङ्का शोक न चित में लाऊं, तेरे प्रेम नीर में न्हाऊं।
परवशता की तटी में तेरी, परी तरणि को तारना रे॥ ४॥

* *

जीवन सुमन सुमाल पिन्हाऊं, स्वाधीनता सुचन्दन लाऊं।
"श्रीहरि" पुण्य देश पूजा हित, सुख, सर्वस्व विसारना रे॥ ५॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राजकर्मचारियों का वेतन और सरकारी हिसाब किताब।

[शुक्रनीति के आधार पर]

लेखक—श्रीयुत् प्रोफेसर रामदेव जी सम्पादक "वैदिक मैगज़ीन"

वेतन तीन प्रकार का होता है कार्य के परिमाण से, एक काल के परिमाण से, एक कार्य और काल दोनों के परिमाण से। इस गट्ठे का भार तू वहां रखे तो तुझे इतना वेतन [भृति] मिलेगा यह कार्य के के मान से वेतन कहाता है। एक २ वर्ष में या दिन २ में या मास २ में इतना २ वेतन मिलेगा यह काल के परिमाण से वेतन हुआ। इतने काल में इतना कार्य यदि करोगे तो इतनी भृति [वेतन] तुम्हें दी जायगी यह कार्य और काल के परिमाण से है*।

वेतन के प्रकार

वेतन देने में राजा न तो किसी का वेतन मारे न वेतन देने में कभी विलम्ब करे†।

जिस वेतन से भृत्य के,‡ अपना और अपने माता पिता आदि आवश्यक पोषणीय व्यक्तियों का पालन होसके ऐसा वेतन मध्यम कहाता है। इनके अतिरिक्तों को भी पालने में वेतन श्रेष्ठ कहाता है। अन्न वस्त्र देने वाला वेतन समा कहाता है।

वेतनों के नाम

---

* कार्य्यमाना कालमाना, कार्य्यकालमितिस्त्रिधा।
भृतिरुक्ता तु तद्विज्ञैः सा देया भाषिता यथा॥ ३९२॥
अयं भारस्त्वया तत्र स्थाप्यस्त्वैतावतीं भृतिम्।
दास्यामि कार्य्यमाना सा कीर्त्तिता तन्निदेशकैः॥ ३९३॥
वत्सरे २ वापि मासि २ दिने २।
एतावतीं भृतिं तेऽहं दास्यामीति च कालिका॥ ३९४॥
एतावता कार्य्यमिदं कालेनापि त्वया कृतम्।
भृतिमेतावतीं दास्ये कार्य्यकालमिता च सा॥ ३९५॥

† न कुर्यात् भृतिलोपं तु तथा भृतिविलम्बनम्।

‡ अवश्यपोष्यभरणा भृतिर्मध्या प्रकीर्त्तिता॥ ३९६॥
परिपोष्या भृतिः श्रेष्ठा समान्नाच्छादनार्थिका।
भवेदेकस्य भरणं यया सा हीनसंज्ञिका॥ ३९७॥
यथा २ तु गुणवान् भृतकस्तद्भृतिस्तथा।
संयोज्या तु प्रयत्नेन नृपेणात्महिताय वै॥ ३९८॥
अवश्यपोष्यवर्गस्य भरणं भृतकाद्भवेत्।
तथा भृतिस्तु संयोज्या तद्योग्य भूतमाय वै॥ ३९९॥
ये भृत्या हीनभृतिकाः शत्रवस्ते स्वयं कृताः।
परस्य साधकास्ते तु छिद्रकोशप्रजाहराः॥ ४००॥ [शुक्र० अ० २]

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जिससे एक ही व्यक्ति का पालन हो वह हीन वेतन कहाता है। व्यक्ति जैसा गुणवाला होता है भृति भी उसी के सदृश कल्याण चाहने वाले राजा को देनी चाहिये। योग्य नौकर को इतना वेतन देना चाहिये जिससे उसका और उसके माता पिता आदि सम्बन्धियों का भी पालन हो सके। जो भृत्य हीन वेतन पर हैं वे राजा के स्वयं बनाये हुये शत्रु हैं। ये ही भृत्य राजा के मर्म, धन और प्रजा के नाश करने वाले हैं। शूद्रों को अन्न वस्त्र तथा योग्य वेतन देना चाहिये नहीं तो मांस मद्यादि भोजन करने वालों को अधिक देने से राजा को ही पाप होता है। भृत्य भी मन्द, मध्य और शीघ्र तीन प्रकार का होता है। तदनुसार वेतन भी सम, मध्य और श्रेष्ठ क्रम से तीन प्रकार का होता है।

भृत्यों को घर के कार्य के लिये एक दिन में एक याम और रात्रि में तीन याम का अवकाश मिलना चाहिये। दिनभर मात्र भृत्य के लिये आधा-याम अवकाश मिले। उत्सवादिकों को छोड़ कर राजा भृत्यों से कार्य्य लिया करे। आवश्यकता पड़ने पर उत्सवादिकों में श्राद्धादिक के दिनों को छोड़कर कार्य लेवे *।

भृत्यों को अवकाश

रोगी होने पर चौथाई वेतन काटकर वेतन दिया जावे। लम्बी बीमारी होने पर ५ मास के भृत्य को ३ मास का वेतन दिया जावे। इस से भी अधिक काल के रोगी को १२ मास के वेतन में से ६ मास का वेतन दिया जावे। १५ दिन के रोगी का कुछ भी वेतन नहीं काटना चाहिये। यदि एक वर्ष भर तक भी भृत्य बीमार हो जावे तो उस का प्रतिनिधि उस के स्थान पर कार्य करे।

रोगावकाश तथा वेतन

बहुत गुणी कर्मचारी के रोगावस्था में बिना सेवा के भी आधा वेतन देवे। राजा की जिस ने ४० वर्ष सेवा की हो उस के अनन्तर बिना सेवा के भी उसे आधी भृति [पेन्शन के रूप में] उस के जीवन काल तक मिले और यदि उस के मरने पर भी उस का बालक असमर्थ या नाबालिग हो तो आधे का भी आधा उस के पुत्र को, स्त्री को या उस की कन्याओं को दिया करे।

पेन्शन

एक वर्ष के पश्चात भृत्य को उस की वेतन का आठवां भाग पारितोषिक रूप में बढ़ा देवे या किये कार्य के आठवें भाग का वेतन विना सेवा के ही देवे।

पारितोषिक तथा कृपा

स्वामी की सेवा में जिस का प्राणान्त हो जावे उस का वेतन उस के पुत्र के पास पहुंच जावे और जब तक उस का पुत्र बालक रहे तब तक पहुंचता रहे। बाद को पुत्र के गुणों को देखकर उस को भृति देवे। भृत्य के वेतन का चौथाई या छठा भाग राजा अपने पास रखे

---

* अन्नाच्छादनमात्रा हि भृतिः शूद्रादिषु स्मृता।
तत्पापभागन्यथा स्यात् पोषको मांसभोजिषु ॥४०१॥
यद् ब्राह्मणे नापहृतं धनं तत् परलोकदम्।
शूद्राय दत्तमपि यन्नरकायैव केवलम् ॥ ४०२ ॥
मन्दो मध्यस्तथा शीघ्रस्त्रिविधो भृत्य उच्यते।
समा मध्या च श्रेष्ठा च भृतिस्तेषां क्रमात् स्मृताः ॥४०३॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और दो तीन वर्षों में उस को आधा या पूरा ही दे देवे *।

कठोर वाणी का प्रयोग, वेतन की न्यूनता, अपमान या प्रबल दण्ड से भी स्वामी भृत्य को दण्ड देता हुआ अपने कर्मचारियों के हृदय में शत्रुता का बीज बोता है। प्रत्युत इस के सम्पत्ति के दान देने से, मान से, सन्तुष्ट करने से और सान्त्वनादिक प्रयोगों से भृत्य अपने स्वामी का त्याग नहीं करते †।

कर्मचारियों पर दण्ड का प्रभाव

अधम धन चाहते हैं, मध्यम लोग धन और मान और उत्तम पुरुष केवल मान ही आकांक्षा करते हैं क्योंकि मान ही महापुरुषों का धन है। इसी प्रकार राजा अपने भृत्यों का सुविचार पूर्वक प्रबन्ध करे।

---

* भृत्यानां गृहकृत्यार्थं दिवा यामं समुत्सृजेत् ।
निशि यामत्रयं नित्यं दिनभृत्येऽर्द्धयामकम् ॥४०४॥
तेभ्यः कार्यं कारयीत ह्युत्सवाद्यैर्विनानृपः ।
अत्यावश्यं तूत्सवेऽपि हित्वा श्राद्धदिनं सदा ॥४०५॥
पादहीनां भृतिं त्वार्त्ते दद्यात् त्रैमासिकीं ततः ।
पञ्चवत्सरभृत्ये तु न्यूनाधिक्यं यथा तथा ॥४०६॥
षाण्मासिकीं तु दीर्घार्त्ते तदूर्द्धे न च कल्पयेत् ।
नैव पक्षार्द्धमार्त्तस्य हातव्यालपापि वै भृतिः ॥४०७॥
संवत्सरोषितस्यापि ग्राह्यः प्रतिनिधिस्ततः ।
सुमहद्गुणिनं त्वार्त्तं भृत्यर्धं कल्पयेत्सदा ॥४०८॥
सेवां विना नृपः पक्षं दद्याद् भृत्याय वत्सरे ॥४०९॥
चत्वारिंशत्समानीताः सेवया येन वै नृपः ।
ततः सेवां विना तस्मै भृत्यर्द्धं कल्पयेत्सदा ॥४१०॥
यावज्जीवं तु तत्पुत्रेऽक्षमे बाले तदर्द्धकम् ।
भार्य्यायां व सुशीलायां कन्यायां वा स्वश्रेयसे ॥४११॥

† अष्टमांशं पारितोष्यं दद्याद् भृत्याय वत्सरे ।
कार्य्याष्टमांशं वा दद्यात् कार्य्यं द्रागधिकं कृतम् ॥४१२॥
स्वामिकार्य्ये विनष्टो यस्तत्पुत्रे तद्भृतिं वहेत् ।
यावद् बालोऽन्यथा पुत्रगुणान्दृष्ट्वा भृतिं वहेत् ॥ ४१३ ॥
सष्ठांशं वा चतुर्थांशं भृतेर्भृत्यस्य पालयेत् ।
दद्यात्तदर्द्धं भृत्याय द्वित्रिवर्षेऽखिलं तु वा ॥४१४॥

‡ वाक्पारुष्यान्न्यूनं भृत्या स्वामी प्रबलदण्डतः ।
भृत्यं प्रशिक्षयेन्नित्यं शत्रुत्वं त्वपमानतः ॥४१५॥
भृतिदानेन सन्तुष्टा मानेन परिवर्द्धिताः ।
सान्त्वता मृदुवाचा ये न त्यजन्त्वधिपं हि ते ॥४१६॥
अधमा धनमिच्छन्ति धनमानौ तु मध्यमाः ।
उत्तमा मानमिच्छन्ति मानो हि महतां धनम् ॥४१७॥ [शुक्र० अ० २]

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दूसरे लेख आय व्यय के हैं। इसी में द्रव्य के लेनदेन का व्यवहार उत्तमर्ण धममर्ण का व्यवहार भी शामिल है। इस प्रकार इसका यहां उल्लेखन करके व्यवहार तथा वाणिज्य व्यापार में किया जायगा।

लेखपत्रों की स्वीकृति तथा अनुमति का प्रकार—राजा अपनी इच्छानुसार अपने हस्ताक्षरों को लेख का क्रमादि सोच विचार करे। मन्त्री प्राड्विवाक और दूत, पण्डित उस पत्र पर लिखें कि "यह लेख अपने विरुद्ध नहीं है," फिर अमात्य इसके ऊपर लिखे कि "यह लेख ठीक लिखा है"। इसके पश्चात् सुमन्त लिखे कि "ठीक तरह से विचार किया गया है"। इसके अनन्तर प्रधान स्वयं लिखे कि "यह लेख सत्य और यथार्थ है"। फिर प्रतिनिधि लिखे कि "स्वीकार करने योग्य है"। फिर युवराज लिखे कि "स्वीकार कर लिया जावे" फिर पुरोहित लिखे कि "यह लेख हमें अभिमत है" ये सब अपनी २ सम्मति लिखकर अपनी २ मोहर लगादें। पीछे से राजा "स्वीकार कर लिया है" यह लिखकर अपनी मुद्रा से छाप दे। *

लेखपत्रों का स्वीकार

यदि युवराजादि अपने कार्य्य में अधिक व्यग्र होने से स्वयं न देख सकें तो लिख दें

---

* राजा स्वलेख्यचिन्हं तु यथाभिलषितं तथा।
लेखानुपूर्वं कुर्याद्धि दृष्ट्वा लेख्यं विचार्य्य च ॥ ३६२ ॥
मन्त्री च प्राड्विवाकश्च पण्डितो दूतसंज्ञकः।
स्वाविरुद्धं लेख्यमिदं लिखेयुः प्रथमं त्विमे ॥ ३६३ ॥
अमात्यः साधु लिखनमस्त्येतत् प्राग्लिखेदयम्।
सम्यग्विचारितमिति सुमन्त्रो विलिखेत् ततः ॥ ३६४ ॥
सत्यं यथार्थमिति च प्रधानश्च लिखेत्स्वयम्।
अङ्गीकर्त्तुयोग्यमिति ततः प्रतिनिधिर्लिखेत् ॥ ३६५ ॥
अङ्गीकर्त्तव्यमिति च युवराजो लिखेत्स्वयम्।
लेख्यं स्वाभिमतं चैतत् विलिखेच्च पुरोहितः ॥३६६॥
स्वस्वमुद्राचिन्हितं च लेख्यान्ते कुर्युरेव हि।
अङ्गीकृतमिति लिखेन्मुद्रयेच्च ततो नृपः ॥३६७॥
कार्य्यान्तरस्याकुलत्वात् सम्यग्द्रष्टुं न शक्यते।
युवाराजादिभिर्लेख्यं तदनेन च दर्शितम् ॥३६८॥
समुद्रं विलिखेयुर्वै सर्वे मन्त्रिगणास्ततः।
राजा दृष्टमिति लिखेत् द्राक्सम्यग्दर्शनाक्षमः ॥३६९॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कि इस अमुक व्यक्ति से ठीक तरह से दिखा लिया है"। फिर मोहर आदि लगा रकम मन्त्री आदि ठीक २ देख भाल लें। और राजा ठीक दर्शन न कर सके तो शीघ्रता से "देख लिया" ऐसा ही लिख देवे।

आयव्यय का लेखा

आदि में आप लिखे और पीछे यथाक्रम व्यय लिखे या पत्र के बाँये आधे में आप लिखे और दाँये भाग में व्यय लिखे। जहां दोनों तरफ़ थोड़ा और अधिक एक दूसरे के नीचे या बाँयी और दाँयी तरफ़ लिखे गये हैं वे सब नीचे गिनकर जोड़ दिये जाते हैं।

अधिक राशियों को बाँयी और एक दूसरे के नीचे लिखे और छोटी राशियों को उसी पंक्ति में लिखे। एक दूसरे पर लिखी राशियों का जोड़ नीचे की पंक्तियों में कर लिया जाता है। *

एक निदर्शन सुगमता के लिये नीचे दिया जाता है:—

८ चैत्र शुक्ले २०७० विक्रमाब्दे।

राजकोषस्य आय व्यय लेखम्।

३००००) भौमः करः दशार्ण देशीयः	२०००) गजानां मासिकं भोजनम्।
४००००) सौ वीराणां सुपायनीकृतम्	२००००००) कर्मचारिभ्यो वेतनम्।
५०००००००) सामुद्रिक व्यापारिण शुल्कम्	गजसेवकानां, अश्वसेविनां, राजधानी सेवकानां
कालिकातातः, मद्रासतः, मुम्बापुरीतः	२०००) ८०००) १९००००)
१००००००), २०००००००) ३०००००००)	१०००००००) युद्ध सामग्री प्रेषणार्थम्।
	५०००) दुःखित दीने भोजनार्थम्।
५०७०००००) सर्वयोगः	१३०७०००) सर्वयोगः
हः— प्रधानः— प्रतिनिधिः—	युवराजः—
मन्त्रीः— पुरोहितः—	राजाः—

* आयमादौ लिखेत् सम्मग् व्ययं पश्चात् तथागतम्।
वामे वायं व्ययं दक्षे पत्रभागे च लेखयेत्॥ ३७०॥
यत्रोभौ व्यापकव्याप्यौ वामोर्द्ध भागगौ क्रमात्।
आधाराधेयरूपौ वा कालार्थं गणितं हि तत्॥ ३७१॥
अधोऽधश्च क्रमात् तत्र व्यापकं वामतो लिखेत्।
व्याप्यानां मूल्यमानादि तत्पङ्क्त्यां विनिवेशयेत्॥३७२॥ इत्यादि। (शुक्र०अ०२)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विनय।

लेखक—श्रीयुत "गुलाब"

सांवले!

छेड़ दो नन्हीं सी वह तान—
जिसे श्रवण कर भूल पड़ें हम प्रणय-प्रेम उद्यान॥
छेड़दो नन्हीं सी वह तान॥
ब्रज में बजे, बजे मधुवन में, बजे कलिन्दी कूल।
बजे नये भावों की वंशी, फूल पड़ें सुख-फूल॥
छेड़दो नन्हीं सी वह तान॥
भँवरे भी रसलेने धावें, नृत्य कर उठें-मोर।
कलियों पर तितलियाँ दिखावें, हे बाँके चित चोर॥
छेड़दो नन्हीं सी वह तान॥
मस्त वायु के झोंके देदो, बदल पड़े-आकाश।
नये चन्द्र-सूरज तारे नव, देने लगें प्रकाश॥
छेड़दो नन्हीं सी-वह तान॥
दुखका उथल पुथल हो सागर, चले न छल की चाल॥
शोभित हो कण्ठों में सब के, प्रणय प्रेम की माल॥
छेड़दो नन्हीं सी वह तान॥
दीनों की नव ज्योति जगादो, गादो सुन्दर गीत।
सत्युग यहाँ दिखादो, यह युग करदो नाथ! व्यतीत॥
छेड़दो नन्हीं सी वह तान॥
गरुण छोड़ बस, दौड़ पड़ो झट ले वंशी अभिराम।
भाग्य जगें फिर से भारत के-विश्रुत लोक ललाम॥
छेड़दो नन्हीं सी वह तान॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

राष्ट्र के उद्देश्य।

लेखक—श्रीयुत व्रजमोहन लाल साहनी।

इस निबन्ध के लिखने से मेरा अभिप्राय इस प्रश्न पर विचार करना है कि आया राज्य स्वयं साध्य है अथवा वह किसी विशेष अभीष्ट-सिद्धि के निमित केवल एक साधन मात्र है; और यदि वह साधन है तो उस के क्या क्या उद्देश्य हैं।

पहले हम संक्षेप में यह बता देना उचित समझते हैं कि राज्य क्या है, उस के कौन कौन से विशेष गुण हैं और वह किन किन अंशों से संगठित है। अनेक व्यक्तियों के राजनैतिक समुदाय का नाम राज्य है। राज्य के लिये सब से पहली आवश्यकता यह है कि उस का किसी विशेष भूमि पर स्वामित्व हो, अरब की ख़ानाबदोश जातियों को राष्ट्र कहना अखिल निरर्थक है। राज्य में एकत्व का होना परमावश्यक है; जिस एकता का प्रादुर्भाव रुधिर, भाषा, धर्म्म, एवं ऐतिहासिक उपाख्यानों की समता से होता है उसे वास्तविक अथवा प्राकृतिक ऐक्य कहते हैं, अन्यथा कल्पित तथा कृत्रिम। राज्य के लिये सर्व-प्रयोजनीय शासन है; शासन के बिना राज्य क्षण भर के लिये भी जीवित नहीं रह सकता। शासन द्वारा ही राज्य के सम्पूर्ण कार्य्य सम्पादित होते हैं। इन सब के अतिरिक्त राज्य में पुरुषत्व का होना भी अतीव आवश्यक है। क़ानूनी भाषा में "पुरुष" उसी को कहते हैं जिस को कोई विशेष अधिकार प्राप्त हो और जो उत्तरदायित्व-सम्पन्न हो। इस कारण कि राज्य के अनेक स्वत्व होते हैं और उसे किसी निश्चित धर्म्म एवं नीति का अनुसरण करना होता है राज्य में पुरुषत्व का अस्तित्व माना जाता है। पुरुषत्व राज्य का सब से महत्व-पूर्ण गुण है। इस का उदाहरण हम अन्तर्राष्ट्रीय क़ानून में देखते हैं जिस के अनुसार अनेक राष्ट्र व्यक्तियों के समान परस्पर व्यवहार करते हैं। यदि किसी राष्ट्र का अपमान होता है तो वह अपमानी से बदला लेने के लिये यथाशक्ति चेष्टा करता है; इसी कारण राज्यों में परस्पर युद्ध आरम्भ हो जाता है। फलतः राज्य के पांच प्रधान गुण हैं; यथा-[१] जनसमूह [२] भूमि [३] एकत्व [४] शासन [५] पुरुषत्व। इन्हीं पांच लक्षणों के प्रसंग का राज्यनीति में राष्ट्र एवं राज्य कहते हैं। होलैंड साहब ने राज्य की परिभाषा इस प्रकार की है:—

"A state is a numerous assemblage of human beings, generally occupying a certain territory, amongst whom the will of the majority, or of an ascertainable class of persons, is by the strength of such a majority, or class, made to prevail against any of their number who oppose it."

अर्थात् राज्य अनेक व्यक्तियों का एक बड़ा विशाल समूह है जो साधारणतः किसी नियत भूदेश में वसित हो और जिस में बहुपक्ष की इच्छा ही अपने आधिक्यबल के कारण मान्य हो, यद्यपि कतिपय जन-संख्या उस का विरोध भी करे। ब्लंटस्चली साहब ने राज्य की व्याख्या यों की है:—

"The state is the politically organised

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

impersonation of the people of a given country."

अर्थात् किसी देश के मनुष्यों के राजनैतिकतः संगाठित स्वरूप को ही राज्य कहते हैं।

इन दोनों उद्धृत वाक्यों से राज्य के साधारण तथा प्रधान लक्षण भली भांति विदित हैं। राज्य की व्याख्या इतनी ही पर्याप्त समझ कर अब हम अपने मूल-प्रश्न पर विचार करना उचित समझते हैं।

प्राचीन काल में जब कि योरुप में युनानी तथा रूमी सभ्यता दीप्तिमान थी राज्य को एक प्रकार का साध्य समझते थे। राज्य से पृथक व्यक्तियों को कोई स्वतन्त्र अधिकार प्राप्त न थे। वैयक्तिक जीवन केवल राज्य के हितानुसार व्यतीत करना प्रत्येक मनुष्य का प्रधान धर्म्म समझा जाता था। प्रत्येक वस्तु राज्य ही की सेवा में प्रवृत्त होती थी। सब प्रकार के मानवी प्रयत्न और चेष्टायें भी राष्ट्र-कल्याण ही को लक्ष्य करके किये जाते थे। राजनैतिक हित के हेतु प्राण तक निछावर कर देना आवश्यकीय समझा जाता था। राज्य से पृथक व्यक्ति का कोई विभिन्न जीवन नहीं माना जाता था। प्रत्येक मनुष्य राज्य का केवल एक अन्श था, जिस के स्वार्थ के लिये वह अपना अमूल्य जीवन तक उत्सर्ग कर देने पर बद्धित था। इस प्रकार की प्राचीन अवस्था का वर्णन करते हुए मकाले साहब ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक "Days of Ancient Rome" में लिखा है:—

Then none was for a party;
Then all were for the state.

अर्थात् उस समय कोई मनुष्य भी दल-बन्दी को पसन्द नहीं करता था, प्रत्येक मनुष्य का लक्ष्य केवल राज्य का कल्याण ही हुआ करता था।

आधुनिक काल में इन विचारों के विरुद्ध एक बड़ी प्रबल प्रतिक्रिया हुई है। इस प्रतिक्रिया का अनुष्ठान फ्रांस के सुप्रसिद्ध दार्शनिक रूसो के समय से हुआ। उसी ने सब से पहले व्यक्तिगत स्वत्वों की नीव स्थापित की। उसने अपने भावों को प्रदर्शित करते हुए एक स्थान पर यों लिखा है:—

"The public safety is nothing unless the individuals enjoy security."

अर्थात् सार्वजनिक अमनो अमान् व्यर्थ है यदि व्यक्तिगण संरक्षण के भोगी न हों।

अर्वाचीन मतानुसार राज्य व्यक्तिगत कल्याण की प्राप्ति के लिये केवल एक प्रकार का साधन है। मकाले साहब के शब्दों में "societies and laws exist only for the object of increasing the sum of private happiness." "अर्थात् समितियों तथा नियमों के अस्तित्व का उद्देश्य एकमात्र वैयक्तिक कल्याण की वृद्धि है"।

थोरो साहब इस प्रकार लिखते हैं:—

"There will never be a free and enlightened state until the state comes to recognise the individual as a higher and independent power from which its own power and authority are derived, and treats him accordingly." *'The Duty of Civil Disobedience."*

अर्थात् राज्य उस समय तक कदापि स्वतन्त्र और उद्बुद्ध नहीं हो सकता जब तक कि वह व्यक्ति को एक उच्चतर और स्वाधीन शक्ति न माने, जिससे कि उसकी स्वयं शक्ति और शासन उद्भूत हुए हैं, और जब तक कि राज्य व्यक्ति के साथ तदानुकूलतः व्यवहार न करे।

सन्क्षेप में, राज्य के उद्देश्य के विषय में दो

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भिन्न २ और परस्पर विपरीत मत हैं। एक तो यह कहता है कि राज्य स्वतः साध्य है और व्यक्तिगत जीवन सर्वथा उस के आधीन है; किन्तु दूसरे मतानुसार राज्य केवल एक साधन मात्र है जिस का अन्तिम लक्ष्य वैयक्तिक कुशलता है। ये दोनों सिद्धान्त संकुचित तथा दोष युक्त हैं।

सर्वसन्तोषजनक सिद्धान्त इन दोनों मतों की सङ्गति से उपलब्ध होता है। जिस प्रकार चित्र चित्रकार के लिये साध्य भी है और जीविका-साधक भी है, उसी प्रकार राज्य साध्य भी है और व्यक्तियों की कल्याण-सिद्धि के लिए साधन भी है। वैयक्तिकता की मात्रा इतनी न बढ़नी चाहिये कि राज्य का उस में लोप ही हो जाय और न राजकीयता ही को इतना प्रधान हो जाना उचित है कि व्यक्तिगण उस पर पतङ्गों के समान निशावर किये जाँय। दोनों के परस्पर संगति-युक्त सम्बन्ध का होना अतीव आवश्यक है।

राज्य के उद्देश्यों के विषय में अनेक मिथ्या-पूर्ण तथा अपर्याप्त सिद्धान्त प्रचलित हैं :—

राज्य का अस्तित्व केवल शासन करने के लिये ही है। इस मत से स्वेच्छाचार तथा अत्याचार को अधिक उत्तेजना मिलती है। राज्य का उद्देश्य ईश्वरीय इच्छा को कार्य्य में परिणत करना है। यद्यपि प्रत्येक राज्य ईश्वरीय अभिप्राय की परिपूर्ति के लिये प्रयोजनीय है तथापि किसी एक निर्वाचित शासन के विषय में यह नहीं कहा जा सकता कि वह दैनिक आकाङ्क्षा का आविर्भाव है। यदि ऐसा होता तो प्रत्येक देश अपनी ही राज्य-प्रणाली में अन्ध-विश्वास करता और उसे सर्वोत्तम समझता। कदाचित ऐसा भी कहा जाता है कि साधारण सौख्य ही राज्य का उद्देश्य है। किन्तु सत्य सुख एकमात्र राजकीय क्रियायों पर ही आश्रित नहीं है, वह अधिकांश आध्यात्मिक कारणों का परिणाम है। क्या एक पार्लियामेण्ट द्वारा स्थापित नियम मनुष्यमात्र को सुखमय तथा शांति-पूर्ण बनाने में समर्थ है?

ब्लण्ट्स्चली साहब के मतानुसार राज्य का प्रयोजन जातीय शक्तियों की पूर्ण उन्नति तथा राष्ट्रीय जीवन का परिपूर्ण विकास है *।

वोन हाल्टेज़ेंडौर्फ की अनुमति में राज्य के तीन उद्देश्य हैं †। प्रथम शक्ति जिस के द्वारा वह अपने अस्तित्व को अन्य राष्ट्रों के आक्रमणों से सुरक्षित रखने में समर्थ हो और जिस से वह जनता पर यथेष्ट स्वामित्व जमा सके। द्वितीय व्यक्ति-गत स्वतन्त्रता जो राज्य की ओर से प्रत्येक नागरिक को नियमानुसार मिलती है और जिस की राज्य अधिकारी-वर्ग के आघातों से रक्षा करता है। तृतीय साधारण अभ्युदय जिस की सिद्धि के निमित्त शांति तथा सुख की स्थापना करना, सर्वजन की उचित सहायता करना, एवं जनता के शिक्षण का पर्याप्त प्रबन्ध करना राज्य के लिये परमावश्यक है।

बरगस साहब राष्ट्रीय उद्देश्यों को तीन प्रकारों में विभाजित करते हैं‡। यथा प्राथमिक [Primary] द्वितीय [Secondary] तथा अन्तिम; [Ultimate] और प्रत्येक उद्देश्य अन्य उद्देश्य

*The Theory of the state, P. 320.

† Uon Holtzendorff's Principien der Politik, pp. 219 ff.

‡ Burgess' Political science and Constitutional Law, Vol. I, PP. 85-89.

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

की सिद्धि के लिये साधन का भी कार्य्य देता है। इस आधार एवं भित्ति के अनुसार राज्य का प्राथमिक प्रयोजन शासन तथा स्वतन्त्रता है। सब से पहले राज्य को शांति तथा नियम वा क्रम की स्थापना करना आवश्यक है, चाहे इस कार्य्य सिद्धि में उसे व्यक्तिगत स्वतन्त्रता तथा जातीय प्रतिभा दोनों ही का शमन करना पड़े। किन्तु ज्यों ही सुख चैन अधिष्ठित हो जाय और जनता राज्य-नियमों के पालन की ओर प्रवृत्त हो जाय, त्यों ही राज्य को उचित है कि स्वतन्त्रता की सीमा को शनैः २ विस्तीर्ण करना आरम्भ कर दे। द्वितीय उद्देश्य जिस का प्रादुर्भाव प्रथम लक्ष्य ही से होता है जातीयता का विकास है। राष्ट्रीय प्रतिभा की जाग्रति कर के उसे परिपूर्णता तक पहुंचाना राज्य के लिये अतीव आवश्यक है। राज्य का अन्तिम लक्ष्य मनुष्यमात्र का कल्याण तथा समस्त संसार को सभ्य बनाना है। संक्षेप में राज्य के प्रमुख तीन उद्देश्य हैं—व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की वृद्धि, जातीयता का विकास, एवं मनुष्यमात्र की कुशलता।

बहुत से राज्य अपने उद्देश्यों को समझते हुए भी कुपन्थों में फंस जाते हैं और बड़े विशाल तथा धनाढ्य होते हुए भी दुःख एवं अशांति के समुद्र में डूब जाते हैं। ऐसी दुर्दशा विशेषतः उन राज्यों की होती है जो केवल धन-पूजक ही होते हैं। उदाहरणार्थ वर्तमान योरुप की अवस्था को विचारिये। देखने में तो वह बड़ा शक्तिशाली तथा सर्वसुखसम्पन्न प्रतीत होता है किन्तु उस की आन्तरिक स्थिति अत्यन्त शोचनीय है। कोई तो उच्च हवादार तथा रङ्ग बिरङ्ग सामग्री से सुसज्जित महलों में वास करता है; और कोई क्षुधा से दुःखित हो कर अपने ही हाथों अपमृत्यु का शिकार होता है। कोई तो अतिशय धनिक है; और कोई अत्यन्त दरिद्र। इसी आर्थिक अनैक्य एवं आत्यंतिकता के कारण योरुप में कार्ल मार्क्स सदृश सम्पत्ति-त्व-विरोधी और लेनन समान कठोर साम्यवादियों का उत्थान हुआ। आर्थिक व्यथा के अतिरिक्त अन्य अनेक व्याधियों का विलायत में निवास है। सदाचार तो प्रायः सर्वनष्ट ही हो गया है। समर्थनार्थ मैं "Socialist Review" में से Mr. J. R. Macdonald के वाक्यों को उद्धृत करता हूं :—

"The plentiful murders of crude, primitive sexual passion, the decline of honour and honesty in public life, and the abandonment of those sober influences of puritan rectitude in forming public opinion and taste, are preludes, hardly observable at the moment, of the tragedy of which the life and gaiety of to-day are, if they are to be pursued, but the opening scenes. People seem to have ceased to be aware of the sober pleasures of life, of its great duties, of its strengthening discipline; never was honest service and labour held in lower esteem or more grudgingly accepted; never was there such an anxiety to live unto one's self."

अर्थात् असभ्य तथा आदिम सम्भोग-कामना-जनित अनेक हत्यायें, सार्वजनिक जीवन में सम्मान तथा ईमानदारी का पतन, और सर्वसाधारण की अनुमति एवं अनुरुचि को एक निश्चित आकृति देने वाली कट्टर सत्यनिष्ठा के नम्र प्रभावों का अभाव, यह सब उस दुःखांत

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नाटक के दुर्लक्ष्य उपोद्घात हैं जिस के वर्तमान आमोद-प्रमोद एवं भोग विलास प्रारम्भिक दृश्य मात्र हैं। ऐसा उद्भासित होता है कि लोग जीवन के विनीत सुखों से, उस के महत्त्व पूर्ण कर्तव्यों से, एवं उस के शक्ति वर्धक क्रम से नितान्त अनिभिज्ञ हो गए हैं; सत्य सेवा तथा उद्योग का कदाचित इतना तिरस्कार नहीं हुआ था; निज स्वार्थ हित जीवन व्यतीत करने की उत्सुकता का कभी इतना बाहुल्य नहीं हुआ था।

यह सब बुराइयां केवल एक पदार्थ, एवं सम्पत्ति-वाद ही के कुपरिणाम हैं। प्रत्येक राज्य को स्मरण रखना चाहिये कि राज्य का प्रमुख्य लक्ष्य साम्पत्तिक उन्नति नहीं, प्रत्युत मानुषिक। धन वहीं तक प्रयोजनीय है जहां तक कि वह मनुज के उन्नति-मार्ग में सहायक प्रमाणित हो, अन्यथा वह व्यर्थ है। अंगरेजी के सुविख्यात कवि "गोल्डस्मिथ" साहब ने अपनी सुप्रसिद्ध पुस्तक Deserted Village में बहुत ठीक लिखा है:—

'Ill fares the land to hastening ills a prey,
Where wealth accumulates and men decay'

अर्थात् जिस देश में धन की तो उन्नति होती हो और मनुष्य प्रति दिन पतित होते जाते हों वह देश शीघ्र ही अनेक व्याधियों का शिकार हो जाता है।

राज्य को जनता के सदाचार का अवश्य ध्यान रखना चाहिये। सदाचार-वर्द्धक संस्थाओं की स्थापना करना राज्य का प्रथम धर्म है। शिक्षा-प्रणाली में धर्म एवं सदाचार विषयक पुस्तकों को उचित स्थान देना परम प्रयोजनीय है। कुछ लोगों के विचारानुसार राज्यनीति तथा सदाचार परस्पर पृथक हैं; परन्तु उनका ऐसा समझना एक बड़ी भारी भूल है। राज-नैतिक उन्नति के लिये सदाचार का आश्रय लेना अतीव आवश्यक है। भोलें साहब ने बहुत ठीक लिखा है:—

"Those who would treat politics and morality apart will never understand the one or the other.'

जो सदाचार तथा राज्यनीति को परस्पर विभिन्न समझते हैं वे न तो सदाचार ही के तत्व को समझते हैं न राज्यनीति ही के सात्विक अर्थ को।

हम पहले कह चुके हैं कि राष्ट्रीयता का विकास राज्य का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य है; किन्तु प्रत्येक राष्ट्र को सदैव स्मरण रखना चाहिये कि जातीयता का इस प्रकार उन्नत होना इष्ट नहीं कि वह संसार की अन्य जातियों को द्वेषभाव से देखने लगे, क्योंकि प्रत्येक संस्था का अंन्तिम आदर्श—चाहे वह कोई छोटासा परिवार हो अथवा "राष्ट्र-सम्मेलन" सदृश कोई बहुविशाल संगठन हो। समस्त संसार में सुख का प्रसार करना ही है। यदि एक जाति अन्य जाति को वैमनस्य-भाव से देखने लगे तो जगत में सुख की स्थापना होना अत्यन्त दुष्कर प्रत्युत असम्भव हो जाय। अतः जातीयता का विकास अवश्य हो, किन्तु प्रेम-भाव का लोप न हो; क्योंकि सर्वव्यापी सुख की उत्पत्ति केवल उसी समय हो सकेगी जब कि सम्पूर्ण जगत् भ्रातृत्व-भाव, मैत्री-भाव, एवं ऐक्य-भाव के प्रेम-पुष्प-बन्धन में संगठित हो जायगा। और जबः—

"Nation with nation, land with land,
Unarmed shall live as comrades free;
In every heart and brain shall throb,
The pulse of one fraternity."

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

भारत-वासियों का पत्र।

(शहीदों के पत्र का उत्तर)

लेखक—श्रीयुत हरिशंकर भट्ट।

[१]

वीरवर! तव पत्र हमको है मिला।
चित्त पढ़कर मोद से अति ही खिला।
भूल सकते हैं भला क्या हम तुम्हें।
जब कि तुमने कष्ट हैं इतने सहे।

[२]

धिक हमें जो हम नहीं कुछ कर सके।
मर गये तुम, पर, नहीं हम मर सके।
जो गढ़े थे रक्त से तुम ने भरे।
नेत्र जल से भी नहीं हम भर सके।

[३]

धन्य थी जो आपने की साधना।
देश की निज श्रेष्ठ की आराधना।
धन्य है तव चित्त की भी भावना।
जन्म लेने की यहाँ फिर कामना।

[४]

नीच हैं हम, स्वार्थ-वश सब भोग्य हैं।
तव नहीं भ्राता कहाने योग्य हैं।
"स्वर्ग को भी अब नहीं हम चाहते।
देश को ही स्वर्ग अपना मानते।"

[५]

जब बनी है धारणा यह आपकी।
शीघ्र ही ज्वाला बुझेगी ताप की।
आप ही तो देश के आधार हैं।
यदि लगावें पार तो सब पार हैं।

[६]

मर गये पर पा लिया अमरत्व को।
जी रहे हैं ले यहाँ अधमत्व को।
हाय! अब सहयोग भी छुटता नहीं।
शीश भी ऐसा झुका उठता नहीं।

[७]

है नहीं फटता हृदय भी लाज से।
देश है होता कलंकित काज से।
देश हित जब स्वार्थ ही छुटता नहीं।
देश-सेवा क्या भला होती कहीं?

[८]

देश से मम ओर से कहना कभी।
थे गये क्या वे हमें अब भूल भी।
था पतन तो देश का कर ही दिया।
आत्म-बल को भी भला क्यों हर लिया।

[९]

कर्म्म का फल अब बहुत हम पा चुके।
गम बहुत भी हाय! अब तो खा चुके।
दुख अधिक अब तो सहा जाता नहीं।
पशु सदृश जीवन रहा जाता नहीं।

[१०]

क्या लिखें? सब विदित है अब आपही।
है दशा जैसी हमारी हो रही।
हो रहा, लिखते उसे, अति खेद है।
इस समय जो देश में मत-भेद है।

[११]

मुक्ति-बंधन हेतु ही मत-भेद है।
मुक्ति हो सकती भला कैसे कहो?
एक घर में सैकड़ों जब राय हैं।
मुक्ति-साधन कुछ नहीं तब, हाय!, है।

[१२]

आश है अब आप ही की लग रही।
मुक्ति की इच्छा हृदय में जग रही।
दासता का शीघ्र ही बंधन कटे।
देश से अब करुण-क्रंदन भी हटे।

[१२]

कीजिये जिस भाँति मम कल्याण हो।
मान ही जग में हमारा मान हो।
सुर-सहित अब आप सत्वर आइये।
आइये अपनाइये अपनाइये।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हृदय।

लेखक—श्री राजा राधिकारमणप्रसादसिंह एम.ए.

कहते हैं कि "विश्व रचयिता, किसी महा महिमामय अलोक सुन्दरलोक में रहते हैं। कल्पना वहां पहुँच नहीं सकती, मनुष्य इस देह से जा नहीं सकता। ये क्षीर-समुद्र में शेष-नाग पर सोये हैं या हिमाचल की हिमाच्छन्न चोटी पर बैठे हैं" इन बातों की ख़बर हमारे फरिश्तों को भी नहीं। लोग उन्हें स्वर्ग में कहें पाताल में कहें, या इसी दुनिया में कहें, किसी को कुछ पता नहीं। तथापि, शत २ लोग उन्हें शत २ स्थान पर ढूंढ़ते हैं।

कितने नंगे बदन सर के बाल बढ़ाकर ख़ाक लपेटे टुकड़े मांगते फिरते हैं। यहां तक कि कोई २ एक पैर पर खड़े होकर हवा ही पीने पर तत्पर रहते हैं। लेकिन कंधे पर राम-नामे की चादर रखने से कोई वैष्णव नहीं बनता, तुलसी की माला गले में डालकर कोई भक्त नहीं होता और बम्बई की फूलदार छींट की तरह सारे शरीर में उजला पीला-छापा देने से किसी पर रंग नहीं चढ़ता। तुम जिस से मिलने दौड़ते हो वह इन करामातों को नहीं चाहता वह हम को चाहता है।

नारायण के लिये आकाश-पाताल एक करने की ज़रूरत नहीं। उसे कोई पहाड़ की ऊंची चोटी पर बैठकर धूनी रमाने से नहीं देख पाता—रम्भा, मैनका की चोटों से आंखें बचाकर नहीं देख पाता या घने जंगल की कुटी में रामराम पढ़ने से नहीं देख पाता, तुम्हें देखने की इच्छा हो, तो तुम्हें हम दिखादें तुम्हें ढूंढ़ना है तो हमारे यहां ढूंढ़ो—पैरों पर पड़ना है तो हमारे यहां पड़ो। तुम्हें तीर्थों में जाकर गली २ ख़ाक छानने की ज़रूरत नहीं चमक दमक वाले मन्दिरों में बैठकर जपमालिका में हाथ दिये गुन २ पढ़ने की ज़रूरत नहीं और हट्टे कट्टे पुजारी पण्डों से शिफ़ारसी चिट्ठी लेने की ज़रूरत नहीं। तुम्हें मुलाकात करना हो, तब हमारे यहां आओ, यहीं उनका मुलाक़ाती कमरा है। चपरासियों के यहां खुशामद कैसी, समय का ठीक ठाक कैसा? तुम जभी चाहोगे, वे स्वयं आकर तुम्हें यहीं दर्शन देंगे, तुम्हारे छाले पड़े पैरों से कांटे निकाल देंगे, गालों पर सूखते आंसूको आंचल से पोंछ देंगे। मगर अफ़सोस अब समय पलटा जाता है, तुम्हें सच २ देखने की इच्छा नहीं—हम सब भी क्यों दिखाने लगें।

लोग कहते हैं कि इस मानव जाति का संचालक कोई निराकार अदृश्य विराट शक्ति है। हम कुछ नास्तिक नहीं, इस पर वाद-विवाद नहीं करते। हम भी कभी उनके गुण गान से छल छल आंसू अवश्य बहाते हैं, यद्यपि वह स्तुति-संगीत सदा हमारे यहां स्थान नहीं पाता। कितने बड़े २ कर-पाश-केश हमारा एक २ तत्व, रहस्य या गुणावली लिखते २ अपनी क़लम तोड़ गये हैं, लेकिन किसी ने आजतक नहीं लिखा कि इस विश्व संचालन में हमारा कितना अंश है। कोई आंखें खोलकर देखले मालूम होगा मेरे ही बल पर यह लौकिक-लीला चल रही है। इसी सोहाग-सेज पर जीवन और माया की विलास क्रीड़ा है। जब यहां बसन्त है, तब तुम्हारे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

बाग़ के फूलों पर बसन्त है, नहीं तो नहीं। प्रेमी जन यहीं अपना प्रेम धन सौंप देते हैं। यहीं बैठकर दुःखी जन अपने एक २ फूल से कांटे चुनते हैं। तुम्हारे अरमान का ख़ज़ाना यहीं उमड़ा है। तुम्हारे भावों की लहर यहीं उछलती है। काम, यहीं बैठकर अपने तरकश से बाण खैंचता है। ईर्षा, यहीं बैठकर अपना षड़यन्त्र रचती है। यहीं से मोह की घुंघरू पहन कर तुम दुनियां में अपने नाच को नाचते हो, प्रेम की मीठी २ 'खेमटा' गाते हो, और आशा तालियां दे २ कर तुम्हें लगाये रहती है। लेकिन जिस इनाम के लालच से तुम नाचते गाते हो वह परम सुख तुम्हें मिलता नहीं।

हमारे प्रताप की किरण कहाँ नहीं पड़ती, किस कोने को उजेला नहीं करती। किस ठिठुर प्राण में गरमी नहीं देती ? हमारे ही द्वार पर ग़रीब बिचारा उस धन को पाता है जिस के लिये लक्ष्मी के लाड़ले बच्चे भूखों मरते हैं। घने झाड़ जंगल में बैठ कर दिन काटता मनुष्य हमारे ही भाव-लोक की ऐसी २ चीज़ों से बहला रहता है कि फिर उसे इस सुदूर माया-मोहन जगत में लौटने की इच्छा नहीं रहती। विधवा हमारे ही कमरे में अपने स्वर्ग-वासी स्वामी की अमर-तस्वीर टाँग कर उसे प्रेम के आँसू से निशिदिन धोती रहती है। प्रेमी जन शत २ कोश की दूरी पर रहकर भी हमारी शान्ति छाया में निर्विघ्न मिलते रहते हैं। जब मधु-सूदन मधुवन को चले गये, तब क्या राधिका बरसाने या व्रज में रह सकी ? नहीं नहीं,—उसे घर भी नहीं था वन भी नहीं था। वह चुपके से हमारे यहाँ चली आयी, वहीं कदम्ब के छाँह सी छाँह थी, यमुना की धारा सी धारा थी। वहीं मरते दम तक मुरली की टेर सुनती रही,—मोहन के गले में हाथ देकर चुप चाप नाचती रही।

हम सब तुम्हारे शरीर के अन्दर अवश्य रहते हैं, लेकिन घूँघट खींचकर बैठे नहीं रहते—झरोखे पर झाँकने से सज़ा नहीं पाते। मुँह चाहे लाख टाँय टाँय करे उसे कोई सुनता नहीं। मस्तिष्क चाहे बड़ी २ पुस्तकों की टाल लगा दे उन्हें कोई पढ़ता नहीं, लेकिन जब तुम्हारी एक २ चेष्टा में हम अपना प्रतिबिम्ब फैंकते हैं, और तुम्हारी आंखों के प्लेटफार्म पर खड़े होकर अपनी भावपूर्ण नीरव स्पीच देते हैं, तब पाषाण में भी आँसू भर आता है, वज्र भी टुकड़ों में बँट जाता है। अतएव, जब तक तुम हमारे मुख से अपनी कहानी कहोगे, अपने एक २ काम काज में हमारा सहारा लेते रहोगे, तब तक विजय तुम्हारे करतल में है, मनुष्य क्या ईश्वर भी तुम्हारी बातों को सुनेगा—तुम्हें अपने गले से लगालेगा।

हम सब करुणा के आधार समझे जाते हैं। मस्तिष्क बलिष्ठ ही होकर क्या होगा। जहां हम नहीं, वहां श्मशान है, प्रेत-भूमि है। जब राजनीति-परायण रामचन्द्र ने जानकी को निकालने पर कमर बाँधी, मस्तिष्क और हृदय में खैंचातानी चलने लगी। बुद्धि कहती "इसे छोड़ दो", हमारी वाणी थी, "नहीं, यह विराधा है।" लेकिन बुद्धि का पांसा पड़ा। नीति समय या देश की आज्ञा लह गई। हमारे मुख पर पत्थर रख कर जानकी निकाली गई। जब राजा पञ्चवटी में गये, वासन्ती ने रुकते २ पूछा—"नाथ, कहीं तुम में भी "हृदय" रहता ?" मतलब—यदि तुम्हारे भीतर 'हृदय' रहता तो वह, तुम्हें इस भीषण अत्याचार से रोक देता। सच है, जब तुम निष्ठुरता करने पर पैर रखते हो, हम सब भीतर से ठोकरें देकर मना करने से बाज नहीं आते। तुम हमें पर पत्थर भले

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ही रख दो, हमें जो कुछ कहना है, अवश्य ही कह देते हैं। लेकिन जब तुम एक पर एक पत्थर रखकर पहाड़ ही उठा दोगे, तब तो आवाज़ भी सुनी नहीं जा सकती; दब ही जायगी। जो, एक वाणी भी इस खुशामदी जगत् में तुम्हारे हितकी कहता है उसके मुँह में भी पत्थर ठूस दोगे, तब तुम्हें पशु होने से कौन बचा सकता है?

भक्त-जन ईश्वर को सहृदय करुणा कर मानते हैं। इस सहृदय कहने से अर्थ क्या? यही कि हमारी ही स्थिति से उनकी दया, धर्म सब कुछ है। सचमुच हमारी दिली प्रवणता करुणा ही पर है। इसी से हमारी प्रकृति मिलती है। किन्तु मिलन का सुख, वियोग ही से बढ़ता है—हम दोनों भी कभी क्षण भर उलझ पड़ते हैं। जो हो—करुणा ही हमारी सहचरी है, प्राण-प्रिया है।

चले आओ, मोह के पुतले, चले आओ! इस विराट लोकातीत लोक में चले आओ—इस स्वर्ग सहोदर शान्ति निकुञ्ज में चले आओ! जो शान्त अदृश्य धारा हमारे हृदय से टूट कर आंखों तक दौड़ती है उसी स्रोत से मिल कर तुम निर्वाद अनन्त के साथ से जा मिलो; और इस माया-विह्वल जर्जर जगत् को एक नये भाव, नये चाव से देख लो। दुनियां में रहना है—तब यहीं रह कर निर्लिप्त रह सकते हो; स्वर्ग चाहते हो—तब यहीं तुम्हारा सर्व-सुन्दर स्वर्ग है; राक्षस से मनुष्य बनना है-तब हमारे यहां आकर शरण लो; देवता होना है-तब हमारी प्राण-धारा में डूब कर दिव्य हो। और यदि ईश्वर बनने की श्रद्धा है-तब यहीं से तेज, तरुण ब्रह्म-ज्योति को लेकर अनन्त महिमा से बोल उठो, देव-दुर्लभ ईश्वरत्व पर जा पहुंचो। हृदय ही सब है। हृदय में ही सब है।

—:o:—

माता का पुत्र को सम्बोधन।

लेखक—श्रीयुत् सत्यव्रत जगजीवन

दीन दुःखी आह भर के ग्रास बनते काल का।
देख भारत दुर्दशा तू ध्यान कर कर्त्तव्य का॥
सर्वस्व अर्पण कर अभी तू दास बनता अन्य का।
छोड़ निद्रा जागजा अब वक्त है सुप्रभात का॥ १॥
उत्कर्ष जिसमें देश का ऐसा समुन्नतमार्ग हो।
भूल जा सब भेद को प्रिय देश हितु सब एक हो॥
प्राधीन गौरव याद कर कर्म्मण्य में कटिबद्ध हो।
स्वावलम्बी बन सदा उस ईश में विश्वास हो॥ २॥

—:o:—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रुक्मिणी हरण नाटक।

अनुवादक—श्रीयुत् मेधावत जगजीवन।

द्वितीय अङ्क। प्रवेश पहिला।

[स्थान—कुण्डिनपुर में राज-अतिथि-भवन]

गायन।

कर्मयोग—नाट्यभूमिका यह संसार,
पात्र जन हैं प्राणिमात्र।
धर्म फर्ज मिले पाठ,
नटवर ईश सूत्रधार-नाट्य०
जन्म मरण निगड हाथ,
यदि हो कर्म ऋण सनाथ।
ऋण चुकाने हेतु साथ,
होवो तुम सभी तय्यार-नाट्य०
संसार की रंगभूमि पर,
जनपात्र वर्ग प्रविष्ट हों।
जब लों न गिरती जवनिका,
निज कर्म पाठ निविष्ट हों।
जन कर्म पाठ विलोकता,
प्रभु सूत्रधार सदा अहा।
निज भूल पर देता सज़ा,
नेपथ्य में रहता हुआ ॥ नाट्य० ॥

भीमक—[प्रवेश कर] नमस्ते। कहो कर्मयोग? कैसे आगमन हुआ? कृष्ण महाराज तो खुशी आनंद में?

कर्मयोग—जी हाँ राजन्! मुझे श्री कृष्ण ने ही संदेश देकर आपकी सेवा में भेजा है कि रुक्मिणी जी के साथ स्वयंवर समय उनका गान्धर्वलग्न होचुका है सो अब उसको मेरे साथ द्वारका पठाओ।

भीमक—मैं भी यही चिन्ता कर रहा था। अब भेजने की व्यवस्था करता हूं तत्काल!

रुक्मैया—[सहसा प्रवेश कर] तुम्हारी मज़ाल क्या है मज़ाल? मुझे युवराज पद मिलने पर अब ऐसा कोई बिलकुल पोपाबाई का राज्य नहीं कि वह ग्वाला हमारा जमाई हो जाय!

कर्मयोग—टूटी हुई दाढ़ वाले सर्प के व्यर्थ फूत्कार के समान अब यह तुम्हारा झूँठा अहंकार! स्वयंवर समय जब तुम जैसे राजताराओं में धूमकेतु की तरह चमकता हुआ, कांच के टुकड़ों में तेजस्वी हीरे की तरह जगमगाता हुआ, शुष्क बांसों में दावानल की तरह देदीप्यमान हुआ, सूक्ष्म पतंगों में ब्रह्मचर्य ज्वाला से जाज्वल्यमान मशाल की माफिक प्रकट होता हुआ, अधर्म तथा जुल्मों के विषैले वृक्षों के तोड़ने के लिये क्रुद्ध हुए हाथी के सूंड जैसा, तथा पापपर्वतों को मूलसहित विनष्ट करने के लिये उत्पन्न हुए ज्वालामुखी के शिखर जैसा वह कृष्ण प्रसिद्ध हुआ और रुक्मिणी के सौभाग्य सिन्धु के पूर्णिमा चन्द्र समान साबित हुआ तब उस ग्वाले को तुम सब भेड़ें 'में' भी क्यों न कर सकीं?

रुक्मैया—कर्मयोग? तेरी बकवाद की कैंची हमारे कलेजों के कपड़ों को फाड़ने लग गयी है लेकिन तुझे खबर नहीं कि तू दुश्मन के भवन में है न कि द्वारिका के निर्जन द्वीप में?

भीमक—उज्वल दीपक जैसी बात पर दंभ का ढक्कन ढकने से क्या? दूत का काम है अपने राजा का योग्य गौरव रखना, उसमें उस पर अयोग्य बर्ताव उचित नहीं।

रुक्मैया—पिता जी? तुम्हारे मस्तिष्क में तो मुझे प्रतीत होता है कि वह कृष्ण कान-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

खजूरा बनकर घुसा है और तुम्हारी अकल को नोंचकर खा रहा है। तुमको उसके बिना और कोई दीखता ही नहीं।

भीमक—सचमुच। मैं तो कृष्ण को पृथ्वीपर से पापियों का भार हरने के लिये धर्म का मूर्तिमान् अवतार मानता हूँ। लक्ष्मी के अवतार रूप मेरी रुक्मिणी उससे ही व्याह ने योग्य थी और वैसा ही हुआ है।

रुक्मैया—देर है देर, पिता जी! अवतार तो हमारा है हमारा, शिशुपाल और इस रुक्मैया का नर और नारायण रूप। तुम अब तुरन्त देखोगे कि नौकायुद्ध से द्वारिका को दरिया में रसातल को पहुंचा हम पृथ्वी पर से उस कृष्ण का भार कैसे हलका करते हैं? उसने हमारा ऐसा वैसा अपमान किया है? मैंने महाराजा शिशुपाल के पक्ष में कृष्ण विरुद्ध युद्ध जाहिर किया है। घर घर के हर एक व्यक्ति को लड़ने के लिये आने तथा लड़ाई के खर्च को पूरा निभाने के लिये पचास २ रुपयों का कर भरने का ढिंढोरा[पटह]पिटवाया है अब देखा जायगा कि वह काले कामों को करनेहारा कृष्ण……।

सैनिक—[प्रवेश कर] महाराज की जय।

कर्मयोग—फतेह।

भीमक—तेरा वाक्य पूरा नहीं होता त्योंही कुदरत ही कृष्ण की जय बुलवाती है।

रुक्मैया—बस बस। ऐसी शंका या कुदरत को मैं मानता ही नहीं। [सैनिक से] कह कह क्या कहना है?

सैनिक—आपकी पटहघोषणानुसार अमल करने से प्रजा क्रुद्ध होगई है।

रुक्मैया—क्या कारण बतला कर क्रुद्ध होगई है?

सैनिक—वह कहती है कि "कृष्ण विरुद्ध युद्ध करने से हमें क्या लाभ है? हम कृष्ण के सामने कभी हथियार नहीं पकड़ेंगे तथा उसके विरुद्ध अधर्म युद्ध में एक दमड़ी भी नहीं देंगे"। तो भी हमने उस पर दबाव डाला जिससे बलवा हो उठा।

रुक्मैया—जाओ उन पर फौरन लश्करी कानून का अमल करो, उनके हथियार छिनवालो।

कर्मयोग—बिन हथियारवाली प्रजा का राजा हमारे सामने लड़ाई जाहिर कर यश पाने चला है।

रुक्मैया—हथियार बन्दी का कायदा जारी करदो और गुनेहगारों को तोप के गोले से उड़ादो।

भीमक—खबरदार। रुक्मैया? तुझे युवराज तथा प्रधान बनाने का यह फल? क्रोधित प्रजा के सामने छोड़े हुए तोपों के गोले तुम्हारे ऊपर ही आ गिरेंगे। प्रजा के बलवे रूप ज्वालाओं में कितने ही बद्धमूल राजवृक्ष भी जल कर खाक हो गये हैं। प्रजा की सम्मति और लाभ की आशा बिना ही लड़ाई में प्रजा कैसे सहयोग कर सकती है?

रुक्मैया—प्रजा हमारा हुकुम मानने के लिये बंधी हुई ही है। राज्यकर्ताओं की मर्ज़ी तथा लाभ में प्रजा को जाने बेजाने भी सहयोग करनी ही चाहिये और उसमें ही उसकी वफादारी है नहीं तो बरबादी।

भीमक—कृष्ण जैसे आदर्श राजाओं ने जब तक अपने धर्म राज्य की उन्नतिरूप कैलाश शिखर दूसरी प्रजा के सामने नहीं बताया था तब तक तुम्हारी प्रजा राजकीय अज्ञान के नरक में पड़ी हुई थी। लेकिन अब जरासन्ध, शिशुपाल और तुझ जैसों के जुल्म तथा अधर्म युद्ध से उद्विग्न होकर सारी प्रजा का बड़ा भाग उस लक्ष्मीदेवी के महल तथा शक्तिदेवी के किले समान द्वारिका में चला गया। बाकी रही

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हुई प्रजा पर भी यह तुम्हारी अनार्यता जारी ही है सो अब तुम सुख से राज्य चला सकोगे और उस धर्मात्मा प्रजाप्रिय कृष्ण को जीत ही लोगे यह गुलामों की दीनता तथा निराशा की नज़र से ही अनुभव करने योग्य है।

रुक्मैया—मुझे ऐसी प्रजा की परवाह नहीं मैं अनामत लश्कर से ही काम चला लूंगा।

भीमक—लश्कर प्रजा के ही बल का फल है। वर्तमान परिस्थिति को सुरक्षित रखने में ही राजनीति नहीं कि अनुक लश्कर से निभालें किन्तु भावी प्रबल परिस्थिति को सुरक्षित रखने के लिए तो राजा का प्रजाकीय हाथ ही बलवान् होना चाहिये। अतः लश्करी तथा हथियार बन्दी के कायदे से कमज़ोर बनी हुई प्रजारूप हाथवाला तू राजा अन्त में अपनी तथा अपनी भविष्य की सन्तति के लिए क्या सिद्धि पावेगा?

रुक्मैया—मुझे सम्राट्, जरासन्ध, और शिशुपाल जैसों की सहायता है। मैं उन के बल द्वारा एक बार तो इस बेवफा प्रजा पर अपना पूरा अमल जमा लूंगा।

भीमक—ऐ राजनीति में अन्धे? नज़र कर उस कृष्ण की छोटी सी प्रतापी द्वारिका नगरी पर! कृष्ण, बलदेव ने अपने न्याय धर्म तथा राजकुनेह से उस को थोड़े समय में कैसी खिला दी है और इसी से अभी अजित बनी हुई है। जो राजारूप मस्तक अपने प्रजारूप शरीर को जुल्म तथा त्रास से कमजोर बना दूसरों के शरीर के बल पर जीना तथा लड़ना चाहता है उस मस्तक का कुशल मङ्गल कहां? शत्रुओं के आक्रमण समय उसे सदैव दूसरे सहायकों की ओर दीन दृष्टि से देखना पड़ता है तथा अपना स्वाश्रयी एवं विश्वासी जीवन खो देना पड़ता है।

कर्मयोग—पर ये कहलाते हुए स्वार्थी सहायक ही जब शत्रु हो जाँय तब?

भीमक—स्वतः को तथा अपनी समस्त प्रजा को सदा के लिए गुलामी की जञ्जीर में जकड़ा डालना।

रुक्मैया—नहीं नहीं उस समय भविष्य की प्रजा को फिर योग्य बनाया जाय।

भीमक—राजनीति का यह मूर्खता पूर्ण पाठ! वर्षों बीतने पर गुलामी और कमज़ोरी का स्वभाव प्रजा को राष्ट्रीय-जीवन जीने के लिए डरपोक कायर तथा नालायक बना देता है पराधीनता तथा भीमकता से निर्बल हो गया हुआ प्रजाकीय स्वभाव पिञ्जरे में रखे हुए पक्षी के पङ्ख जैसा जकड़ जाता है जिस से फिर उसे स्वतन्त्रता के वायु मण्डल में उड़ना अच्छा नहीं लगता—उड़ ही नहीं सकता। सो अपनी स्वार्थता तथा अज्ञानता से प्रजा को कमज़ोर बनाने वाला राजा आखिर गिरे हुए शरीर के मस्तक की तरह आत्मघातक ही बनता है। चलो कर्मयोग? मेरे जीते जी मैं इस अपने राजधर्म रूप कल्पवृक्ष पर मूर्खता का कुठारा घात नहीं होने दूंगा। (जाता है)

रुक्मैया—यह राजधर्म का बकवाद मेरी बुद्धि में उतरने का ही नहीं। ज्यादा करेगा तो मैं इस की सारी सत्ता छीन लूंगा पर इस प्रजा को तो इस की मर्ज़ी माफक नहीं बहकाने दूंगा। अभी तो अपनी अनामत लश्कर लेकर मैं जरासन्ध तथा शिशुपाल को मिलूं और कल ही द्वारिका में कृष्ण को था न था कर दूं। ओह! मेरे सामने कृष्ण? मेरी नज़र में कृष्ण? मेरी बहिन से व्याहे? इस की मज़ाल क्या है मज़ाल। (प्रस्थान)

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अंक २रा। प्रवेश दूसरा।

[स्थान—द्वारिका का समुद्र प्रदेश। दरियाई का फला।]

प्रजाजन—(नेपथ्य में से गाड़ी में कृष्ण का पुतला तथा राधा को रखकर खींचलाते हुए) श्री द्वारकाधीश की जय।

नगरसेठ—भगवती राधादेवी जी, आज द्वारिका स्थापित होने का वार्षिक मंगलोत्सव है। इसलिए धर्मात्मा महाराजा कृष्ण चन्द्र का यह पुतला साक्षात् भक्तिस्वरूप आप के पवित्र मुबारक हाथ से स्थापित हो ऐसी हम प्रजा की प्रार्थना है।

प्रजाजन—जरूर माता जी!

राधा—राजभक्तो! श्री कृष्ण राज्यधर्म का मूर्त्तिमान् अवतार है, देश को तारने हारा तथा प्रजाकीय जीवन में नवीन चेतन को डालने हारा है। हम लोग राजा को देव मानते हैं क्योंकि राजा शब्द दीप्ति—प्रकाशमान वाचक है। श्री कृष्ण ने अपने दिव्य गुण कर्म से एक राजा—देव तुल्य अपने को सिद्ध किया है, इस लिये ऐसे प्रजापूज्य लोकनायक धर्मराज के सत्कारार्थ उस के पुतले की स्थापना करना मानो अपनी ही कृतज्ञता की भावना को साकार स्वरूप में रखना है।

प्रजाजन—सत्य है देवि!

राधा—अतः ऐसे अपने आदर्श धर्मराज के पुतले को मैं तुम सब के मान और सत्कार के लिये स्थापन करती हूँ। (स्थापन करती है।)

प्रजाजन—श्रीद्वारिकाधीश की जय। (पुष्प-वृष्टि करते हैं)।

कंचुकी—(नेपथ्य में से) महाराजाधिराज द्वारिकाधीश श्रीकृष्णचन्द्र की जय। [कृष्ण प्रवेश करता है]।

कृष्ण—मेरे प्यारे प्रजाजनो! जो भाव भगवान् रामचन्द्र की ओर प्रजा रखती थी वैसा भाव मेरी ओर दिखलाकर तुम सब ने मुझे भाग्यशाली बनाया है इस लिए धन्यवाद! प्रजा के कल्याण के लिए रामचन्द्र ने अपना सुख, आराम, स्नेह अहा! प्रियतमा जानकी को भी त्याग दिया है वैसा रामचरित्र मुझ में आवे यही प्रभु से प्रार्थना।

प्रजाजन—आप श्री राम के अवतार ही हैं।

कृष्ण—भारत प्रजा के अन्तरात्मा में राम समान सम्मान प्राप्त करना यह एक राजा की पवित्र महत्वाकांक्षा होनी चाहिये। अखण्ड ब्रह्मचारिणी तपस्विनी राधा के हाथ से मेरा यह जो पुतला तुम ने स्थापन किया है उस में मेरे ऊपर के स्थूल स्वरूप को ही नहीं किन्तु जीवन के सूक्ष्म तत्व को अधिक जानना, मिट्टी के पिण्ड की अपेक्षा मेरी ज़िन्दगी की भावना को अधिक पहिचानना, जड़ की अपेक्षा मेरे चेतन को अधिक देखना। मूर्ति की अपेक्षा मेरी बुद्धि को अधिक पूजना और भावी प्रजा को वैसा करने के लिये समझाना नहीं तो अर्थ का अनर्थ हो जावेगा और हम राम कृष्ण के चरित्र पूजन तथा जीवन ग्रहण करने के स्थान में ऊपरी आडम्बर ही रह जायगा।

राधा—सत्य है। ज्ञान के प्रकाश बिना भक्ति श्रद्धा के कर्म पद उलटे रस्ते पड़ जाते हैं और फिर अन्ध परम्परा प्रारम्भ हो जाती है।

कृष्ण—मेरी प्रजा के विद्वान् ब्राह्मणो! तुम संसार के मुख रूप हो, ज्ञान के प्रतिनिधि हो। मनु के कथनानुसार ज्ञानी विज्ञानी बनकर इस देश के साथ पृथ्वी पर के दूसरे सारे मनुष्यों को धर्म, कर्म तथा जीवन चरित्र सिखाने के लिए समुद्र पार की भी संसार-यात्रा करो और भारत के जगद् गुरु कहलाओ। हराम की भिक्षा पर थूँकते रहो और निष्काम शिक्षा को बढ़ाते रहो।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ब्राह्मण—अज्ञान जगत को ज्ञान का दान देने में हम अपना ब्राह्मण नाम सार्थक करेंगे।

कृष्ण—वीर यदुवंशी क्षत्रियो! जुल्मियों के जुल्म और अधर्मों को जड़ मूल से उखाड़ने के लिये तुम धर्मयुद्ध में हमेशा प्राण देना सीखो।

क्षत्रियजन—यदुवंशीय क्षत्रिय लोग! हम अपने देश तथा श्रीकृष्ण के उद्देश्य पर हमेशा मरने के लिये तय्यार हैं।

कृष्ण—मेरे साहसिक व्यापारी वैश्यो? गो अर्थात् गौओं का पालन और खेती का रक्षक ठीक करोगे तो ही तुम अपने राजा कृष्ण गोपाल के सच्चे भक्त कहलाओगे। दूसरा तुम्हारा व्यापार। देखो यह सागर अपने उछलते हुई लहरों रूपी हाथों से तुम को आलिंगन तथा बधाई देने के लिये तय्यार हो रहा है। मिश्र, यूनान, ग्रीक, चीन, आदि देशों के किनारों पर से उछल कर आता हुवा ऊंचे हाथ से तुम को वहां का समाचार पहुंचा रहा है।

सागरदेव—(अन्दर से प्रगट होकर) कृष्ण देव के भारतभक्तो! संसार की अन्य प्रजा अभी जंगली अवस्था में हैं। कपड़ा पहिनने का भी उनको भान नहीं। अतः मुझ सागर को तैर भिन्न २ तटों पर उतर कर अपने भारतीय कारीगरी, कला-कौशल और विज्ञान से उनको सभ्यता तथा विद्या हुनर सिखाओ। मेरी पुत्री लक्ष्मी को अगर प्राप्त करना हो तो मुझ रत्नाकर को खूब भजो और जितने प्रामाण में मेरी भक्ति करोगे उतनी समृद्धि का मजा चखोगे। मेरे प्यारे बालको! किसी प्रकार के संकोच या भय के बिना अपनी नौकाओं द्वारा मेरी छाती पर क्रीड़ा करो और प्रभु के पैदा किये हुये अपने अन्य मानव बन्धुओं के साथ हिलमिल कर अपने जीवन को आबाद करो। द्वारिकाधीश के राजभक्तो! तुम मेरे पर बसे हो सो मेरी बात को मानना नहीं तो घर के कोने में पड़े २ सुख से भूखे मरना।

वैश्य लोग—सागरदेव! हम आपकी आज्ञा सिरपर चढ़ा संसार के व्यापार को बेधड़क उन्नत करेंगे और आपकी कृपालक्ष्मी प्राप्त करेंगे। (सागर अन्तर्धान होता है)।

प्रजाजन—(दूरसे देखते हुये) किनारे पर कौन उतरता है?

[रुक्मैय्या नौका पर से तट पर उतरता है।]

कृष्ण—कुण्डिनपुर के युवराज। पधारो २ रुक्मीदेव! आज मुझ पर आपकी बड़ी कृपादृष्टि हुई!

रुक्मैया—कृपादृष्टि नहीं किन्तु कोपदृष्टि समझो। गई बीती को भुलाकर मैं महाराजा जरासंध तथा शिशुपाल के दूत की हैसियत से तुम को समझाने आया हूं कि तुम उनकी तांबेदारी कबूल करो नहीं तो उनके दरियाई बेड़े से द्वारिका समेत डूब मरो।

कृष्ण—यह कृष्ण केवल प्रभु हुकुम का नित्य तांबेदार है। सद्धर्म स्थापने को यह लिया अवतार है। मम देश अरु स्वातन्त्र पर किसका भला अधिकार है। यदुवंश मेरे नाम पर मरने को यह तय्यार है।

यादवगण—देश हमारा द्वारका स्वतंत्रता का स्थान।
देश स्वराज्य की भक्ति पै तज देंगे हम प्रान॥

रुक्मैया—बलवान् से हाथ मिलाने में भयंकर नुकसान है।

कृष्ण—कई वक्त उसको हराने का मुझे बहु मान है।

रुक्मैया—पर इस वक्त न मानोगे तो उतरने का गुमान है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कृष्ण—स्वातंत्र्य खातिर जो लड़ें उस पक्ष में भगवान् है।

रुक्मैया—ऐसे बड़े शहनशाह से मेल रखने में कल्याण है।

कृष्ण—अधिक राज्यतृष्णा तथा मदान्धता को तज, अपने ही प्रदेश में संतोष मान, दूसरी प्रजाओं की स्वतंत्रता को भी मान देकर उनके राज्य में दखल न देने में ही ऐसे समय २ पर हारते हुए शहनशाह का मान है।

रुक्मैया—जरासंध जैसे समर्थ राजा के रक्षण में रहने से तुम को अपना देश व्यवस्थित रखने, तथा दुश्मनों के आक्रमण से बचाने, लश्कर रखने आदि जो फिक्र चिन्ताएं हैं उन से सुख शान्ति मिलेगी।

कृष्ण—मुबारक हो ऐसी सुख शान्ति तुम गुलामों को! जिस देश के राजा-प्रजाजन अपने रक्षण के लिये भी पराये आश्रय पर निर्भर रहना चाहते हैं, तथा स्वावलंबन के कार्य भी दूसरों पर सौंपकर अपने हाथ पैर बांध बेफिकर बन बैठना चाहते हैं उनको जग में मनुष्य कहलाने का तो क्या पर जीते रहने का भी हक़ नहीं।

कृष्ण तथा प्रजाजन—

मुबारक हो फिकर चिन्ता, हमारे देशके वास्ते॥
मुबारक हो सख़्त जहेमत हमारे स्वत्वके वास्ते॥
मिलें अनमोल मौतें भी व्यक्ति स्वातंत्र्य के वास्ते॥
जन्मजन्मांतरों जावें स्वराज्य की भक्ति के वास्ते॥

रुक्मैया—ऐसा है तो देखा जायगा। भले ही तब हो जाओ इस दरियाई लड़ाई के आहार [जाता है।]

कृष्ण—द्वारका का जहाजी लश्कर हमेशा तय्यार है। कृष्ण का विज्ञान बल एक पल में तुम्हारे दरियाई बेड़े को डुबाने के लिये होशियार है। [रणशंख बजाते हैं]

राधा—अपने देव के पुतले का रक्षण मैं ढाल बनकर करूंगी [पुतले की एक ओर खड़ी रहती है।]

[लड़ाई। दुश्मन के जहाजों का एकदम उलट जाना तथा डूबना।]

शत्रुगण—शरण—जीवनदान।

कृष्ण—जाओ। शरणागत शत्रुओं का कल्याण।

टेबलो।

प्रेम-तत्व ?

लेखक—श्रीयुत ब्रह्मचारी वंशीधर।

धीरे धीरे स्रोत सिसक कर नदियों से हैं मिल जाते।
सरिता सागर से, नभ वायु मधुरभाव में रम जाते॥
जग में कोई नहीं अकेला दिव्यशक्ति से सभी मिलें।
एक दूसरे से आपस में तब हम दोनों क्यों न मिलें?

देखो चूमें गगन उच्चगिरि, जलधि-वीचियां लिपटावें।
बहिन कुसुम अपने भैया से घृणा करें तो फल पावें॥
रवि किरणें वसुधा को शशि की सुन्दर जलनिधि को चूमें।
इन सब की गरिमा क्या होगी जो नहिं तू हम को चूमें॥

१ यह कविता P. B. shelley की love's Philosophy नामक कविता का अनुवाद है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पृथ्वी।

लेखक—श्रीयुत् रघुनाथ दत्त बन्धु।

"तद्यदयां सार आसीत्तत्समहन्यत सा-पृथिव्यभवत्" इसी वेद वाक्य को पञ्चमहाभूतों के उत्पत्तिक्रम को बताती हुई एक श्रुति ने और भी स्पष्ट किया है। "तस्माद् एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः, आकाशाद्वायुः, वायोरग्निरग्नेरापः, अद्भ्यःपृथ्वी।" इस श्रुति के अनुसार उस परमात्मा की अपार शक्ति से आकाश उत्पन्न हुआ, उत्पन्न होते ही उसमें आन्दोलन प्रारम्भ हो गया उसके तीव्र वेग से वायवीय परमाणुओं के परस्पर संघर्षण के कारण जल उठने से अग्नि उत्पन्न हो गई, और उस अग्नि की उष्णता बढ़ जाने से परमाणु पिघल कर जल रूप हो गये इसी प्रकार कालक्रम से परमाणुओं के शीतल हो कर क्रमशः घनीभूत हो जाने पर इस हमारी पृथ्वी की उत्पत्ति हुई थी। इसके तीन भाग तो जल में निमग्न हैं और एक भाग केवल स्थल है वह एशिया, यूरोप, आस्ट्रेलिया, अफरीका, और अमरीका, इन पांच विभागों में विभक्त है। इस सारी पृथ्वी पर एक अरब ४६ करोड़ और ५० लाख मनुष्य रहते हैं इस के चारों ओर जो समुद्र है वह कितना गहरा है अभीतक इस बात का तो ठीक २ निश्चय नहीं हुआ। किन्तु यह तो निश्चित होचुका है कि समुद्र की गहराई किसी स्थान पर भी ३५०० हाथ से कम नहीं है।

एक वैज्ञानिक का अनुमान है कि-यदि सारा समुद्र सूख जाय तो प्रतिदिन जितना जल जिस वेग से आजकल उसमें जाता है, उतना ही बराबर यदि २० हजार वर्ष उसी वेग से उसमें फिर भी जाता रहे तो वह फिर कहीं भर सकता है।

अमेरीका में "नायोगेरा" नाम नदी के एक झरने का किसी एक वैज्ञानिक ने हिसाब लगाया है-कि इस झरने से हर एक पलमें २,१४४८००० मन पानी गिरता है।

यह केवल एक झरने की बात हुई, इससे आप ही विचार करें कि प्रतिदिन समुद्र में कितना पानी जाता होगा॥

सेघलन, और डेकानाक, दो जहाज़ी जहाज़ द्वारा पश्चिम से चलकर चलते २ कुछ काल के अनन्तर पृथ्वी की प्रदक्षिणा करके जहां से चले थे फिर वहीं आ पहुंचे थे॥

इसी से पृथ्वी गोल है।

इस सिद्धान्त पर लोग यह प्रश्न करते थे कि यदि पृथ्वी गोल है तो हमें चिपटी क्यों दीखती है?

इसका उत्तर भास्कराचार्य ने इस प्रकार दिया है॥

समोयतः स्यात्परिधेः शतांशः,
पृथ्वी च पृथ्वी नितरां तनीयान्।
नरस्य तत्पृष्ठ गतस्य कृत्स्ना,
समैवतस्य प्रति भात्यतः सा॥
(सिद्धान्त शिरोमणि)

अर्थात्-प्रत्येक गोल वस्तु की गोलाईका सौवां हिस्सा चपटा होता है, क्योंकि पृथ्वी का गोला बड़ा विस्तृत है, और मनुष्य उसकी अपेक्षा अत्यन्त लघु है। इसलिये उसे पृथ्वी चपटीजान पड़ती।

'पृथ्वी गोल है' जो इस वैदिक सिद्धान्त को नहीं मानते थे, उनपर लल्लाचार्य ने यह प्रश्न किया है कि—

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

समता यदि विद्यते,
भुवस्तरवस्तालनिभा बहूच्छ्याः ।
कथमेव न दृष्टि गोचरं नुरहो,
यान्ति सुदूर संस्थिताः ॥

अर्थात्-यदि पृथ्वी चपटी है तो बहुत दूर स्थित ताड़ के सामने ऊंचे २ वृक्ष पूरे २ दृष्टि गोचर क्यों नहीं होते ?

पृथ्वी गोल है, उसमें आकर्षण शक्ति है, वह घूमती भी है यह सभी वैदिक सिद्धान्त हैं।

पाठकगण ! कई लोग कहेंगे कि जो बात पश्चमी वैज्ञानिक बड़ी कठिनता से निकालते हैं, आर्य लोग उसी के लिए झट कह दिया करते हैं कि यह हमारे पूर्वजों को भी ज्ञात थी। इसी आक्षेप के भय से हम उचित समझते हैं कि इस विषय के दो श्लोक यहां लिखदें। भास्कराचार्य लिखते हैं कि पृथ्वी में एक आकर्षण शक्ति है।

आकृष्टि शक्तिश्च महीतयायत् ।
स्वस्थंगुरुस्वाभिमुखं स्वशक्तया ॥
आकृष्यते तत्पतीव भाति ।
(सिद्धान्तशिरोमणि)

अर्थात्-पृथ्वी अपनी आकर्षण शक्ति से अपने सब पदार्थों को अपनी ओर खींचती है। इसलिये वे पदार्थ भूमि पर गिरते हुए दिखाई देते हैं ॥

आर्यभट्ट युक्ति से सिद्ध करते हैं कि पृथ्वी चलती है। वे लिखते हैं।

अनुलोम गति र्नौस्थः ।
पश्यत्यचलं विलोमगं यद्वत् ॥
अचलानि भानि तद्वत् ।
सपश्चिम गानि लङ्कायाम् ॥
(आर्यसिद्धान्त)

अर्थात्-जिस प्रकार नौका में बैठा हुआ मनुष्य किनारे की स्थिर चीज़ों को दूसरी ओर को चलते हुए देखता है, वैसे ही मनुष्यों को सूर्यादि नक्षत्र जो स्थिर हैं वे पश्चिम की ओर चलते हुए दीखते हैं और पृथ्वी स्थिर मालूम होती है ॥ उन प्रमाणों से यह स्पष्ट है कि आर्यभट्ट, भास्कराचार्य, और लल्लाचार्य आदि कई एक भारतीय विद्वानों को कापर निकस, गिलीलियों और न्यूटन आदि से कई सौ वर्ष पूर्व ही इन वैदिक सिद्धान्तों का और अपने २ समय पर उन्होंने इनका प्रचार भी किया था। पर "यशःपुण्यैरवाप्यते" की उक्ति के अनुसार आज वे सारे के सारे सिद्धान्त ही पश्चिमीय विद्वानों के आविष्कृतमाने माने जाते हैं। जो भी हो फिर कभी हम वेद मन्त्रों द्वारा सिद्ध करेंगे कि ये सिद्धान्त वैदिक हैं। यहां हमें यही बताना था, कि पृथ्वी घूमती है और इसमें एक प्रकार की आकर्षण शक्ति भी है। और यह नारङ्गी की भान्ति गोल और दक्षिण और उत्तर से कुछ दबी हुई सी है। जैसे नारीयल के बीच पानी भरा रहता है, ठीक वैसे ही पृथ्वी के ३६ मील नीचे से १०० मील तक के सारे पदार्थ उष्णता के कारण पिघले हैं, और १०० मील से आगे तो केन्द्र तक सभी पदार्थ गैस की अवस्था में हैं। सच पूछो तो ईश्वरीय सत्ताने ही उन्हें रोक रक्खा है यदि वे बाहर निकलने लगजायं तो संसार की क्या दशाहो ? यह विचार मन में आतेही एक भयानक दृश्य उपस्थित हो जाता है। ऐतिहासिज्ञ जानते हैं कि १८७५ ई० के दिसम्बर मास में "सुवियस" पर्वत में अग्नि का उत्पात हुआ था, कहते हैं कि उस समय बड़े बड़े पत्थर पृथ्वी से निकल २ कर तीन २ हज़ार हाथ ऊंचे जाते थे, और उनका शब्द तो इतना भयङ्कर था कि सौ २ कोस तक सुनाई देता था। एक २ घण्टे में कोई १२०० बार उस समय ऐसी घटना होती थी

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

और चारों ओर १५ कोस धातुओं का प्रवाह बह निकला था जिससे कि कई नगर वन उपवनादि संसार से सदा के लिये अदृश्य होगये थे।

और १७१३ ई० में जो "एटला" पर्वत का अग्नि उत्पात था उससे तो ५० कोस से भी अधिक दूर तक नगरों को राख के ढरों ने ही ग्रस लिया था॥

परन्तु उस सर्वशक्तिमान् ने अपनी अलौकिक शक्ति से सब को नियमित बना रक्खा है, जिस से कि हमें ज़रा सा भी इस विषय में भय प्रतीत नहीं होता।

इस पर बड़े २ पर्वत हैं पर पृथ्वी पिण्ड के आगे उसको कुछ भी गणना नहीं है। एक पर्वत ७२५० हाथ ऊंचा और २५ कोस नीचे से और चार कोस ऊपर से घेरे का है, और ऐसे २ तीस करोड़ पर्वतों की यदि एक पंक्ति इकट्ठी बनाई जाय तो उनकी लम्बाई ५३,४००००० कोस की होगी और यदि प्रत्येक घण्टे में १० कोस चले तो उस पर्वत श्रेणी के एक ओर से दूसरी ओर जाने के लिये साठ हज़ार छप्पन सौ वर्ष लगते हैं। परन्तु हमारी पृथ्वी इतनी बड़ी है कि वह पर्वत श्रेणी भी उसके बराबर नहीं।

और यदि हम एक पर्वत पर खड़े होकर चारों ओर देखें तो हमारी दृष्टि २५ कोस तक जाती है पर यदि हम नित्य १० घण्टे शीघ्र चलते हुए प्रत्येक घण्टे में ज़मीन के ऐसे चौड़े टुकड़े को एक के बाद दूसरे को देखते जायें तो २६८ वर्ष निरन्तर घूमें बिना पृथ्वी के सारे ऊपरी भाग को भी नहीं देख सकते।

यह पृथ्वी बड़ा भारी ग्रह है। इसका व्यास ७९२६ मील एक हज़ार और ४१ गज है और परिधि प्रायः ११००० कोस है।

और ऊपरी भाग प्रायः ६८०००० गुणा है। और पृथ्वीतल के वर्ग मील १८,७३,३६,५६५ हैं।

और घन फल द्वारा इसका परिमाण दो अरब कोस होता है।

और पृथ्वी का वज़न ५८५२०००००००००००००००० टन वैज्ञानिकों ने सिद्ध किया है। यह बताने की अवश्यक्ता न होगी कि २७ मन का एक टन होता है। परन्तु सूर्य पृथ्वी से तौल में तीन लाख गुणा अधिक है।

और उसका प्रकाश आठ लाख पूर्णचन्द्र के बराबर है।

और सूर्य पृथ्वी से नौ करोड़ सताईस लाख मील दूर है। अर्थात् हम सूर्य से इतनी दूर हैं कि यदि तोपका गोला प्रति घण्टे में बीस २ कोस चले तो भी ११ वर्ष तक तो सूर्य तक नहीं पहुंच सकता। और डाकगाड़ी चाहे कितनी क्यों न शीघ्र चलाई जाय तो भी २२००० वर्ष दिन रात चलती रहने पर भी वहां नहीं पहुंच सकती। परन्तु उस परमात्मा की विचित्र लीला देखिये कि पृथ्वी पर सूर्य का प्रकाश आने के लिये केवल ८-९ मिनट लगते हैं। अभी तक पाश्चात्य वैज्ञानिकों को यह तो मालूम नहीं हुआ कि ग्रह कितने हैं परन्तु आजतक ८५ ग्रह जो उन्होंने देखे हैं, उनमें से बुध ग्रह सूर्य के सब से निकट और उससे दूसरा शुक्र और तीसरे दर्जे पर हमारी यह पृथ्वी है। पृथ्वी से सूर्य तीनलाख चौअन हज़ार नौ सौ छत्तीस गुणा बड़ा है।

केवल पृथ्वी से ही क्या सब ग्रहों को मिलाने पर भी सूर्य उन इकट्ठे सब ग्रहों से ६००० गुणा बड़ा है।

गाड़ी चलते समय जैसे उसके चक्र घूमते २ आगे बढ़ते हैं इसी प्रकार पृथ्वी भी ६० दण्ड में अपना पूरा चक्र लगालेती है (इसीलिये

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

ही दिन रात ६० घड़ी का होता है) और पश्चिम से पूर्व को चक्कर लगाती हुई सूर्य भगवान् की प्रदक्षिणा भी करती है। पृथ्वी के घूमते समय उसका जो भाग सूर्य के सामने पड़ता है उसमें दिन और शेष भागों में रात रहती है।

पृथ्वी सूर्य के चारों ओर ३६५ दिन १५ घड़ी ३० पल में चक्कर समाप्त करती है इसी का नाम वर्ष है। जिससे पृथ्वी सूर्य की प्रदक्षिणा करती है उसको "वृत्ताभ" कहते हैं। वृत्तों की गोलाई उनके व्यास से २½ गुणा अधिक होती है और पृथ्वी से सूर्य ९२७०००० मील है। इसलिये पृथ्वी के क्रान्ति वृत्त की गोलाई ५८३००००० होती है। अर्थात् पृथ्वी को प्रदक्षिणा के लिये ३६५ दिन में ५८३००००० मील मार्ग क्रमण करना पड़ता है। इस प्रकार एक सैकण्ड में १८ मील पृथ्वी की गति है और एक मिनट में १०८० और एक घण्टे में ६४८०० मील पृथ्वी दौड़ती है। तब कभी हमारा वर्ष बनता है।

इस पृथ्वी को बने कितना समय हुआ इस बात पर पाश्चात्य लोगों का बड़ा मतभेद है।

उनके धर्माचार्यों के मत से तो ६९८४ वर्ष हुए हैं।

और पदार्थ वैज्ञानिक उष्णता और प्रकाश के तारतम्य से चालीस लक्ष वर्ष पृथ्वी को उत्पन्न हुए बताते हैं।

भूगर्भशास्त्र वेत्ता प्रो० "जोली" का अनुमान है कि नदियों द्वारा सोडियम से समुद्र का जल खारी होगया है और इतना खारा जल होने के लिये दश करोड़ वर्ष लगते हैं। इसलिये पृथ्वी की आयु अधिक दस करोड़ वर्ष की हुई है।

और स्मिथ उडवर्ड तीस करोड़ वर्ष पृथ्वी को बने मानता है। एक और वैज्ञानिक ने "रेडियम" के द्वारा पृथ्वी की आयु का निश्चय करना चाहा था उसके कथनानुसार सात अरब पचास करोड़ वर्ष होते हैं।

परन्तु हमारे शास्त्रानुसार तो पृथ्वी को बने १९७७ तक १९६०८५३०२० वर्ष हुए हैं। यह तो पृथ्वी की गत आयु है और पृथ्वी की बाकी आयु २३३३२२३९७० है। इसके बाद प्रलय होगा और सब का अपने २ कारण में लय हो जायगा। इस सृष्टि से पहले कई बार परमात्माने ऐसी पृथ्वियें बनाई हैं और आगे भी कई बार "धाता यथा पूर्वमकल्पत्" के अनुसार उन्हें बनायेगा।

—:०:—

गंगा-जमनी।

नलनी।

लेखक—श्रीयुत 'पागल'।

[१२]

"प्रेम तरङ्गे नाना रङ्गे।
कखने[1] हांसाय कखन कांदाय[2]" (बङ्गला)

कागज़ पर बड़े बड़ छापे के अक्षरों में सिर्फ इतना ही लिखा हुआ था कि—

"भाई तूमि केमन आछ्ओ।
आमि भाल वाशी।
आपनार हाल लिखओ। इति
तोमार
नलनी"

१ कभी। २ रुलाता है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

अब मालूम हुआ कि नलनी ने मुझे बंगला सीखने के लिए क्यों ज़ोर दिया था। मैं उसी वक़्त उस का जवाब लिखने बैठा और आधी रात तक दस बारह सफ़े लिख डाले। मगर जब ख़्याल हुआ कि अगर नलनी की लापरवाही से कहीं यह ख़त किसी दूसरे के हाथ में पड़ जाय तब तो ग़ज़ब ही हो जायगा। उस की भी जान जायेगी और मैं भी मुसीबत में पड़ूंगा। बस मैंने उस को फाड़ दिया।

सुबह को बाज़ार से एक अंगूठी ख़रीद लाया। और जब सुखिया आई तो मैंने नलनी के पास उसे भिजवा दिया। उस ने मुझे नलनी के हाथ का काढ़ा हुआ गुड़िया का एक तकिया, एक चूड़ी और एक ख़त दिये। इस में वही बात लिखी हुई थी जो पहिले ख़त में थी। फिर मैं जवाब लिखने बैठा। और सोचा कि इस तरह लिखूं कि अगर ख़त पकड़ भी जाये तो यह मालूम हो किसी लड़की ने अपनी सहेली को लिखा है जिस में दोनों की बचत रहे। इसलिये ऐसा पहिले लिखना बहुत मुश्किल मालूम हुआ क्योंकि मैं ठीक तरह बङ्गला जानता न था तो भी छः सफ़े लिख डाले। अब ख़्याल आया कि इसे नलनी के पास भेजूं किस तरह। सुखिया के हाथ में इतना बड़ा प्राणघातक हथियार देना ठीक नहीं। मुमकिन है कहीं वह लापरवाही से, पाजीपन से, लालच से या डाह से कोई आफ़त न खड़ी कर दे। इस लिये शाम को बड़ी हिम्मत कर के टेनिस, रैकेट और गेन्द लेकर नलनी के मकान के पास एक सरकारी इमारत की दीवाल से खेलने लगा। नलनी धीरे धीरे अपने दरवाज़े पर आई। मैंने खेलते खेलते एक दफ़े गेन्द उस के पास फेंक दी। उस को उठाने के लिये मैं दौड़ा। उस ने गेन्द उठा कर मेरे हाथ में दी और मैंने चुपके से उस के हाथ में ख़त दे दिया और भाग आया।

आध घण्टे के बाद सुखिया एक बड़ा लम्बा चौड़ा ख़त लेकर मेरे पास आई। मगर अफ़सोस वह बहुत जल्दी में लिखावट के हर्फ़ों में लिखा हुआ था। इसलिए सिवाय एक जुमले के, जिस का मतलब यह था कि मेरी आखों के तारे तुम्हारे ख़त ने मेरे धधकते हुए कलेजे को शीतल कर दिया, मैं और कुछ पढ़ न सका।

मुझे मारे ख़ुशी के पागल बनाने के लिए यही एक जुमला काफ़ी था। तौभी मैं पूरा ख़त पढ़ने के लिये बेचैन था। मैंने बंगालियों के नासमझ लड़कों से उसे पढ़ाने की कोशिश की मगर कोई पढ़ न पाया। तब हार कर मैंने नलनी का नाम उस में से फाड़ दिया और एक बिहारी बाबू के पास उसे ले गया। वह बङ्गला जानते थे। मैंने उन से कहा कि देखो तो इस में क्या लिखा है। यह काग़ज़ इसी सड़क पर पड़ा हुआ मुझे मिला है।

वह हज़रत बड़ी देर तक मन ही मन ख़त पढ़ते रहे। लिखने वाली को भांप लिया। मैं दुनियाँ की चालें उस वक़्त समझता न था। वह ख़त पढ़ने का बहाना कर रहे थे मगर असलियत में इस ख़त के ज़रिये से अपना मतलब पूरा करने की तरकीब सोच रहे थे। आख़िर में उस ने उस काग़ज़ को अपने कब्ज़े में करने के इरादे से मुझ से कहा कि इस ख़त को छोड़ जाओ। रात को इतमिनान से पढ़ कर सुबह बतलाऊंगा। इस वक़्त यह पढ़ा नहीं जाता। यह सुनते ही मैं घबराया। जीते जी उस ख़त को किसी दूसरे के हाथ में नहीं छोड़ सकता था। मैंने इतना कहकर कि "वाह! कैसे नहीं पढ़ा जाता। देखो मैं तो यहां तक पढ़ लेता हूं" झट उस के हाथ से काग़ज़ छीन

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लिया और इधर उधर की बातें कर भाग आया।

शाम को मैं सड़क पर आया। देखा तो बाबू साहब वहीं टहल रहे थे। धीरे धीरे मेरी गर्दन में उन्होंने हाथ डाल दिया और अपने साथ मुझे लिये हुए नलनी के मकान की तरफ़ बढ़े। बातें करते करते दो एक दफ़े उन्होंने मेरा नाम ज़ोर से लिया। इतने में नलनी ने खिड़की खोलदी और उसी जगह कुछ ढूंढने के बहाने खड़ी रही। अब बाबू साहब ने नलनी को दिखा कर मुझे लिपटा लिया और उसे सुनाकर 'आमार ने मनतारा' 'जीवन नाथ' इत्यादि उन्हीं प्रेम सूचक शब्दों में मुझे सम्बोधन करने लगे जिन शब्दों में नलनी ने मुझे अपने पत्र में सम्बोधन किया था। मैं सन्नाटे में आगया। शर्म और डर के मारे थर थर कांपने लगा। निगाह नीची होगई। पैर वहीं गड़ गये। खिड़की ज़ोर से बन्द हो गई। समझा कि नलनी यह जान कर कि उस का भेद मैंने दूसरे को बता दिया मुझ से ख़फ़ा होगई।

तब से मैं चोर की तरह अपने कमरे में मुंह छिपाये रहा। नलनी के सामने फिर सड़क पर निकलने की हिम्मत न हुई। तीसरे दिन कालिज में पढ़ने के लिये इलाहाबाद जाने की मेरी तय्यारी होने लगी। स्टेशन जाने के वक़्त मैं नलनी को एक नज़र देखने के लिये डरते डरते सड़क पर गया। सुखया मुझे देखते ही भीतर दौड़ गई। वैसे ही खिड़की खुली। मगर तुरन्त ही फिर बन्द होगई। उफ़! बेशक मुझ से नलनी बहुत ख़फ़ा है। उसे मेरी सूरत तक देखना नागवार है। मैं सर लटकाये हुए स्टेशन चला आया।

गाड़ी छूट गई। नलनी से अब न रहा गया। ख़फ़ा होने पर भी उसका बस अपने दिल पर न चला। वह मकान से बाहर दूर चली आई। और आकर रेल के तार के पास खड़ी हुई गाड़ी का इन्तज़ार करने लगी। ज्यों ही मेरी उसकी चार आंखें हुईं उसने मुझे बाल सम्भालते हुए सलाम किया और मैंने रुमाल से पेशानी का पसीना पोंछ कर जवाब दिया। गाड़ी निकल गई नलनी आंखों से ओट हो गई और मैं खिड़की पर हाथ रख कर मुंह छिपाये हुए रोने लगा।

[१३]

"ढाई अक्षर प्रेम का पढ़े सो पण्डित होय।"

मेरे कालिज में प्रथम और द्वितीय श्रेणी के सिवाय तीसरे श्रेणी के लड़के लिये नहीं जाते थे। युक्तप्रदेश और अवध के सभी होनहार और तेज लड़के इसी कालिज में आते थे। हमारे स्कूल के और तीन लड़के जो द्वितीय श्रेणी में निकले थे वे भी यहीं आए। उस साल मेरे दर्जे में अस्सी लड़के थे जिनमें साठ प्रथम श्रेणी के और बीस द्वितीय श्रेणी के थे। प्रथम श्रेणी वालों का दिमाग़ आस्मान पर चढ़ा रहता था। हम लोगों से सीधे मुंह बात नहीं करते थे। और मैं तो सब से आख़ीर में भरती हुआ था। इसलिये उस वक़्त सब से नीचा समझा जाता था।

मगर स्त्री के प्रेम से उत्साहित होकर पुरुष दुनियां में जो न कर डाले वही थोड़ा है। सिर्फ़ इतना ही ख़्याल कि जिस बालिका को हम प्यार करते हैं वह भी हम को चाहती है हमारे कलेजे को आनन्द से बासों उछाल देता है। हमारी हिम्मत को चौगुनी बढ़ा देता है और तब हम दुनियां में ऐसे ऐसे मुश्किल काम कर डालते हैं कि दुनिया चकित होकर हमें पराक्रमी साहसी और तेजस्वी कहने लगती है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

तभी तो फ़रहाद ने शीरीं के प्रेम से उत्साहित होकर पहाड़ का पहाड़ खोद डाला।

इसी तरह से नलनी के प्रेम ने मेरे जीवन में एक नया परिवर्तन कर दिया। इसने मेरी साहसिक दृष्टि खोल दी। हृदय अनुभवी और विचार तीक्ष्ण कर दिये। मेरा जीवन काव्यमय होगया। दिन रात मेरा दिमाग़ विचारसमुद्र में गोते लगाया करता था। आंखें प्रकृति की छटाओं को निहारा करती थीं। जो बातें, जो भाव, जो विचार एम. ए. के लड़कों को पढ़ाये और सुझाए जाने पर भी बहुतों को उनका पूरा ज्ञान नहीं होता वे सब मुझे आइने की तरह साफ़ दिखाई पड़ने लगे।

मैं कवि औपन्यासिक और नाटककारों के ग्रन्थों में भावों की असलियत और थाह ढूंढने लगा। मुझे प्रधान लेखकों की पुस्तकों में शान्ति मिलने लगी क्योंकि उन्हीं में अपने हृदय की व्यथा और नलनी के हृदय का वर्णन पाता था। जिसमें नायक नायका का प्रेम विरह, बेचैनी, मिलन, बातचीत मेरी और नलनी की तरह नहीं होती थी उनको मैं फेंक दिया करता था और कभी कभी अस्वाभाविक कहकर फाड़ दिया करता था। मेरी बातों पर मेरे साथी हँसते थे। मगर जब मैं अपने प्रोफ़ेसर मिष्टर शेली से इन बातों पर तर्क करता था तो वह मेरा ख़्याल सही बताते थे और शाबाशी देकर कहते थे कि ये लेखक अज्ञानी और नीचे दर्जे के हैं। इनके पढ़ने में वक्त मत ख़राब करो। इनमें तुम्हें सच्चा और खरा भाव कहीं नहीं मिलेगा।

इन बातों से मिष्टर शेली की श्रद्धा मुझ पर दिनों दिन बढ़ती गई। एक दिन वह पूछ बैठे कि तुम कुछ लिखते भी हो। मैंने दबी ज़बान में कहा, हां। क्योंकि उन दिनों हिन्दी में अय्यारी की धूम थी और मुझे भी अय्यारी ग्रन्थ लिखने का चस्का पड़ा था। मैंने जब अय्यारी का विषय उनको समझाया वह मेज़ पर हाथ पटक कर बोले कि यह क्या करते हो, क्यों अपनी दिमाग़ी शक्ति ख़राब करते हो? ऐसी किताबें मामूली पाठकों के लिये होती हैं। तुम प्रकृति, भाव, घटना, और चरित्रों की सत्यता लिये हुए रोचकता पैदा करने की कोशिश करो। ज़मीन पर चलो। बालू पर मकान न बनाओ। और प्रधान लेखकों की चुनी हुई किताबों को पढ़ो।

तब से मैं नलनी के वियोग में अपनी ही व्यथा लिख लिख कर पत्रों में भेजने लगा। क्योंकि इसी में मेरी बेचैनी को कुछ ठंढक पहुंचती थी। मगर वे सब एक एक करके वापस आगये इसलिये कि बालकों और स्त्रियों के पढ़ने योग्य नहीं हैं। मैं उनको लेकर मिष्टर शैली के पास गया और उन्हें पढ़ कर सुनाया। वह बहुत खुश हुए और बोले कि बालक अगर तू विलायत में होता तो तू बड़ा नाम और धन कमाता। तब मैंने कहा कि यहां तो कोई इन्हें छापता भी नहीं है। उन्होंने जवाब दिया कि अभी यहां के लोग भाव की सच्चाई की क़दर करना नहीं जानते। कुछ परवाह नहीं तुम हिम्मत मत हारो। प्रधान लेखक होने के सब लक्षण मैं तुम में पाता हूं। मैंने दिल में कहा कि ऐसा कोई लक्षण मुझ में पैदा भी होगया हो तो उसकी जन्मदाता नलनी है।

इसी तरह मेरा साहित्यिक ज्ञान दिनों दिन बढ़ने लगा। लड़के सब मुझको पागल और ख़ब्ती समझते थे। मगर पहिले ही साल के इम्तहान में अपने ऊपर के सब द्वितीय श्रेणी वालों और छप्पन प्रथम श्रेणी वालों को नीचे गिरा दिया और मैं प्रथम बेंच पर आगया। ऊपर के चार लड़के जो युनिवरसिटी में

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नामी थे और वज़ीफ़े पाते थे अब वे भी अपनी अपनी जगह पर मुझ से घबराने लगे। यह सब आशापूर्ण प्रेम की करामात थी।

इस बीच में युक्तप्रदेश में मेरी शादी की बातचीत होने लगी। मैंने पिता को लिखा कि जब तक मैं बी० ए० पास न कर लूंगा तब तक मैं शादी कदापि न करूंगा। ताकि इसी बहाने यह बला टले आगे देखा जायगा। फिर डर के मारे पिता के पास न दसहरे और न बड़े दिन में गया। पूरे साल भर के बाद नलनी से मिलने के लिये दिल में हज़ारों उमंगें लिये हुए पिता के पास रात के वक्त पहुंचा।

खाना खाने के बाद जब मैं चारपाई पर लेटा वैसे ही किसी ने कहा कि नलनी की शादी होगई। यह सुनते ही मेरे कलेजे में गोली सी लगी। मैं तड़प उठा और हाय! कह कर पट्टी पर सर पटक दिया—

[१४]

"इश्क़ ने ग़ालिब निकम्मा कर दिया।
वरना हम भी आदमी थे काम के॥"

मैं अन्धेरे में था। इस लिये मेरे चेहरे की हालत कोई देख न सका। दिल टुकड़ा टुकड़ा होरहा था। मुद्दतों के अरमान चूर चूर होगये थे। मैं पागलों की तरह चारपाई से उठ उठ पड़ता था। आंगन में टहलने लगता था। ऐसा मालूम होता था कि कोई मेरा दम घोंट रहा है। लोगों ने पूछा क्यों इतने परेशान हो? मैंने कहा मैं बाहर लेटूंगा। यहां गर्मी के मारे बेचैन हूं।

बाहर अकेली मेरी चारपाई पड़ी थी। दो घन्टे होगये मगर मेरी बेचैनी दम व दम बढ़ती ही गई। अन्त में घबरा कर उठ खड़ा हुआ और बिना कुछ सोचे समझे एक तरफ़ चल दिया।

बारह का घण्टा बज रहा था। मैं नदी के किनारे सोच में डूबा हुआ खड़ा था। चारों तरफ़ सन्नाटा छाया हुया था। मगर मेरे दिल में खलबली मची हुई थी। चांदनी खूब साफ़ छिटकी हुई थी। मगर मेरे लिये रात अन्धेरी थी। दुनियां अन्धेरी थी। उम्मीदें अन्धेरी थीं। ज़िन्दगी अन्धेरी थी। सब चीज़ें अन्धेरी थीं। जिस पर इतना भरोसा, इतना एतबार, इतना गुमान था जिस को हर तरह से अपनी समझे हुए थे वह पराई निकल गई। अफ़सोस! अब जीउं तो क्योंकर जीऊं। नलनी अब मेरी नलनी नहीं रही। यह ख्याल रह रह कर मेरे दिल में बरछियां चलने लगीं। मैं अन्धा होगया। दीन दुनियां सब का ख्याल जाता रहा। कलेजे में आग धधकने लगी। ईश्वर यह कैसे शान्त हो। गंगा की लहरें बोलीं कि आओ मेरी गोद में आओ तुम्हें थपकियां देकर हमेशा के लिये आराम से सुलादूंगी। आती हुई रेल की घरघराहट दूर ही से चिल्लाई कि तुम कहीं न जाओ बस मेरे रास्ते में खड़े हो जाओ मैं तुम्हारे तड़पते हुए दिल को एक दम पीस कर तुम्हारी बेचैनी अभी दूर किये देती हूं। मैं घबरा कर जल्दी जल्दी रेल के पुल पर चढ़ गया। और बीच धारे की तरफ़ बढ़ा ताकि दोनों ग्राहकों में जिसका जल्दी दाव चल जाय वही मुझे ले ले।

गाड़ी की घरघराहट सुनकर पुल का रखवाला हरी बत्ती लिये हुए ज्योंही गुम्टी से निकला वैसेही वह चिल्लाया कि बीच पुल पर कौन जाता है। हटो गाड़ी आती है। मैं ठिठुक गया उसने फिर घुड़की बताई। मैं सटपटा कर लाइन से हट गया। गाड़ी निकल गई उसने आकर मेरा हाथ पकड़ा और कहा कि नशे में हो क्या? देखा नहीं कि गाड़ी आती थी।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

मुझ से कुछ भी करते धरते न बन पड़ा। सिर्फ़ रुक रुक कर इतना ही कहा कि—

मैं० "नदी में न कहीं गिरपड़ूं, इसीलिये बीच में चल रहा था और दूसरे मैंने समझा कि गाड़ी आती नहीं बल्कि जाती है। इसीलिये बेफ़िक्र था।"

मेरी आवाज़ सुनते ही उसने मुझे पहचान लिया क्योंकि पहले वह मेरे यहां कुछ दिनों तक नौकर रहा था। वह बोल उठा।

"भइया तुम यहां कहां?"

मैं० "गया था एक जगह दावत खाने वहीं से आरहा हूं। मगर मकान का रास्ता भूल गया। इसीलिये इधर चला आया।"

वह० "तो चलो मैं तुम्हें पहुंचा दूं।"

इससे जान छुड़ाने की सैकड़ों तरकीबें कीं मगर उसने एक न मानी और मुझे मेरे मकान तक पहुंचा गया। और मैं चुपके से अपनी चारपाई पर लेट गया। मेरा उस दिन का पागलपन किसी की नहीं मालूम हुआ।

जो काम जोश के प्रथम उबाल में हो जाता है वह फिर बाद को सैकड़ों उपाय करने पर भी नहीं होता। इसलिये कोशिश करने पर भी फिर उस दिन की तरह से मेरे दिल की आग में वैसी लपट नहीं उठी मगर आग भीतर ही भीतर सुलगती रही। नलनी अब भी वहीं थी। उसकी मौजूदगी मेरी जलन को और भी तीव्र बनाए हुए थी।

एक बार मैं नलनी से ज़रूर मिलना चाहता था। प्रेम की ख़ातिर नहीं बल्कि उसकी निशानी और उसके ख़तों को लौटाने के लिये। उसको जी भर के फटकारने के बाद उसे आख़िरी सलाम करने के लिये मगर मिलना कैसे होवे सुखिया तो हैज़े में चल बसी। और मुझ से नलनी की तरफ़ देखा भी नहीं जाता था।

मेरी उम्मीदें टूट गईं। मेरी तेज़ी जाती रही। मेरे उत्साह भङ्ग होगये। और मैं निर्जीव सा होगया। मुझे कुछ ख़बर नहीं कि कब नलनी की खिड़की खुलती है कब नहीं। कभी कभी मैं दूर मैदानों में निकल जाता था। कभी अपने हाते में अकेला बैठा हुआ अपनी फूटी किस्मत पर आंसू बहाया करता था।

इसी तरह मेरी छुट्टी ख़तम होने पर आई। इधर कई दिन से बराबर मैं देखता था कि आठ बजे रात को एक लड़की अकेली मेरे नल पर रोज़ आती है और हाथ मुंह धोकर चुपचाप चली जाती है। मुझे कभी शक भी न हुआ कि यह नलनी है क्योंकि इसका पहनावा बंगाली लड़कियों की तरह न था बल्कि हमलोगों के यहां की औरतों की तरह था। मुझे स्त्री जाति से बेहद घृणा होगई थी। इसलिये मैंने कभी उसे देखने या जानने की कोशिश भी न की। एक दिन योंहीं रात को अपने हाते में अकेला बैठा हुआ था। नलनी की निशानी और ख़त मेरे पाकेट में पड़े हुए थे कि वह लड़की फिर नल पर आई। इस दफ़े वह धीरे धीरे मेरी तरफ़ बढ़ी। मैं उठ खड़ा हुआ और अचरज में कुछ आगे बढ़ा। वह बिलकुल पास आकर खड़ी हो गई। मैंने पूछा तू कौन है? उसने मेरी छाती पर सर रख दिया और रोने लगी॥

बस मेरी दबी हुई आग यकायक भड़क उठी। दिल धड़कने लगा। मेरी सुधि बुद्धि जाती रही। मैं भूल गया कि नलनी पराई स्त्री है। मैं भूल गया कि चान्दनी रात है। मैं भूल गया कि मेरे मकान की सब खिड़कियां खुली हैं। मैं भूल गया कि कोई मुझे देख रहा है या नहीं। प्रेम के आवेश में मैंने उसे गोद में उठा लिया और पागलों की तरह उसका मुंह चूमते

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लगा। उस ने मेरी गर्दन में अपने दोनों हाथ डाल दिये और फूट फूट रोने लगी और मैं भी रोने लगा।

यकायक मेरी नज़र उसकी मांग पर पड़ी। उस में सेन्दुर देखते ही मेरे कलेजे पर सांप लोट गया। मैंने झट से अपनी गर्दन से उस के हाथ हटाये और कहा।

मैं—"नलनी, मैं कौन हूँ तेरा? तू यहां क्या करने आई? तू जा यहां से।"

वह और रोने लगी। रोते रोते उस की हिचकियां बन्ध गईं। उस ने फिर मेरी गर्दन में हाथ डालना चाहा। मैंने उस के हाथ पकड़ लिये।

मैं—"नलनी, नलनी, क्षमा कर, दया कर मुझ पर। मुझे अब मोह जाल में मत फंसा। ईश्वर के लिये तू जा यहां से। मुझे भूल जा। समझ ले मैं दुनिया में नहीं हूं।"

उस ने सर हिलाया। मैंने उस की उङ्गली में अपनी अंगूठी देखी। उस को मैंने निकालना चाहा। उसने झट से हाथ खींच लिया। तब मैंने अपने पाकेट से तकिया, चूड़ी और तीनों ख़त निकाल कर उस के हाथ पर रख दिये।

मैं—"ले तू अपनी चीज़ें ले ले। और तू उस अंगूठी को फेंक दे।"

उस ने मुझे चूड़ी लौटा दी और कहा कि यह मेरी नहीं है। उस वक़ मुझे सुखिया का ख्याल आया कि अरे! क्या एक मामूली नौकरनी भी दिल रखती थी?

मैं—"नलनी क्यों खड़ी है? तू लौट जा।"

नलनी—"नहींअब घर लौट कर नहीं जाऊंगी"।

मैं—"तब कहां जाओगी?"

नलनी—"जहां तुम जाओगी।"

मैं—"हाय! जब यही ख्याल था तो क्या तू पराई होजाती?"

वह फिर रोने लगी।

इतने में पिता ने मुझे मकान के भीतर से गुस्से में पुकारा। ग़ज़ब हो गया। अब मेरे हवास ठिकाने हुए। देखा कि मेरे मकान की सब खिड़कियां खुली हुई हैं। मैं वहां से खिसका नलनी ने मेरा हाथ पकड़ लिया।

नलनी—"ठहरो एक बात सुन लो।"

मैं—नहीं, बस आखिरी सलाम लो।

मैं हाथ छुड़ा कर उसे वहीं रोती हुई छोड़ कर घर के भीतर भागा। यों तो नलनी से पहिले बराबर मिलता ही रहा मगर मेरा और उसका यही प्रथम प्रेम-मिलन था और यही अन्तिम। और हाय! अफ़सोस!! वह मिलन और बिछुड़न इस तरह से?

पिता मुझे देखते ही आग होगए। मालूम होता है कि उन्होंने मुझे नलनी से एकान्त में और कुसमय में बातें करते हुए देख लिया था। किसी ने उन से मेरी शिकायत कर दी। दिन भर खेलने कूदने का दोष लगाकर उन्होंने मुझे बेहद डांटा। उसी वक़्त मेरे असबाब बांधे गये और रात ही की गाड़ी से मैं घर भेज दिया गया।

वही प्रेम जब आशाओं से हरा भरा था मैं लाख होनहारों में होनहार था तेज़ों में तेज़ था। मेरे प्रोफ़ेसर और साथी मेरे लिये बाज़ी लगा कर कहते थे कि यह युनिवर्सिटी के इम्तहान में नाम करेगा वही प्रेम जब निराशा की लू में झुलस गया तब मैं लद्दुओं में लद्दू और निकम्मों में निकम्मा हो गया। सब लोग मेरी हालत पर दिनों दिन ताज्जुब करने लगे। यहां तक कि मैं एफ़० ए० के इम्तहान में फ़ेल होगया। फिर जब पिता के पास गया तब मालूम हुआ कि नलनी के मां बाप प्लेग में मर गए। वह ससुराल चली गई और उस का नाता उस नगर से सदैव के लिये टूट गया। और मैंने भी नलनी को फिर कभी नहीं देखा।

॥ समाप्त ॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

[सर्वाधिकार सुरक्षित]

हमारी मञ्जूषा।

चारुचरितावली—सचित्र, लेखक श्रीयुत सिद्ध गोपाल काव्यतीर्थ, पृष्ठ सं० १६३ मूल्य १) लेखक से मिल सक्ती है।

यह पुस्तक संस्कृत भाषा में है। इस में सरल सुन्दर भाषा में महात्मा बुद्ध, शङ्कराचार्य ईसामसीह, मोहम्मद, कबीर, गुरु नानक और दयानन्द सात महापुरुषों के जीवन चरित्र दिये गये हैं। हमें यह देखकर बड़ी प्रसन्नता है कि आज भी जब कि कितने ही विदेशी विद्वान और उनके स्वदेशी चेले संस्कृत को प्रायः मातृभाषा के नाम से पुकारते हैं इस भाषा में उत्तम २ ग्रन्थ निकल रहे हैं। उक्त पुस्तक उसी श्रेणी की है। इसमें सरल संस्कृत में इन महानुभावों के जीवन की मुख्य २ घटनाओं, उनके उपदेश तथा धार्मिक विचारों का वर्णन है। संस्कृत भाषा सीखने के लिये भी इसका पाठ हितकर होगा। हम ग्रन्थकर्ता को उनके साहस और सफलता पर बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि संस्कृत भाषा प्रेमी पुस्तक को खरीद कर अवश्य पढ़ेंगे।

गत अंक में प्रताप पुस्तकमाला की कुछ पुस्तकों की समीक्षा कर चुके हैं। कुछ अन्यों की समालोचना नीचे दी जाती है:—

(२) भारत के देशी राष्ट्र—लेखक श्रीयुत सम्पूर्णानन्द जी, पृष्ठ २३४, मूल्य ।॥)

हमारे देश में अनेक देशी रजवाड़े हैं जो प्रायः भारत के प्रत्येक प्रान्त में विद्यमान हैं। नीपाल को छोड़कर ये सब अंग्रेज़ी राज्य के आधीन हैं। अंग्रेज़ों के भारत में आने से पहिले मुग़ल, मरहट्टे, सिक्ख इत्यादि अनेक कितनी ही जातियां भारत के भिन्न २ प्रदेशों पर राज्य करती थीं। इन्हीं के आश्रय और सहायता से अंग्रेज़ लोग यहां पर व्यापार करते थे, परन्तु हमारी आपस की फूट ने इस वणिक जाति को हमारे घरेलू मामलों में हस्तक्षेप करने का अवसर दिया जिससे कि शनैः शनैः हमारी शक्ति का ह्रास होता गया और ईस्ट इण्डिया कम्पनी का बल, सत्ता और प्रभाव बढ़ता गया। हमारे देशी राष्ट्रों के अनेक छोटे २ टुकड़े होते गये जिन में बहुत से तो ईस्ट इन्डिया कम्पनी के आधीन हो गये और फिर महारानी विक्टोरिया के समय से इङ्गलैण्ड के राजाओं के आधीन हो गये। प्रस्तुत पुस्तक में भारत के इस समय के इतिहास का बड़ा रोचक और शिक्षाप्रद वर्णन है। हमारे स्कूलों में जो भारत का इतिहास पढ़ाया जाता है वह एक प्रकार से तोते की रटन्त विद्या ही है। उन घटनाओं का हमारे देश जाति और इनके भविष्य पर क्या प्रभाव पड़ता है इस ज्ञान से हमारे बालक प्रायः कोरे ही रह जाते हैं। इस पुस्तक में बड़ी मनोरञ्जक रीति से हमारे अधःपतन के इस इतिहास का वर्णन है। किस प्रकार शनैः २ अपनी नीति को बदल कर वलय नीति से लेकर आश्रित पार्थक्य द्वारा आश्रित सहकारता तक ब्रिटिश सरकार इन रियासतों पर अपना अधिकार बढ़ाती गई और अब उनकी क्या स्थिति है; देशी राष्ट्रों के अधिकार और कर्तव्य; उनकी बाह्य और अन्तरंग परिस्थिति; इस से लाभ और हानि; सैनिक प्रबन्ध, इनका भविष्य इत्यादि कितने ही महत्व पूर्ण और गम्भीर विषयों पर बड़ी योग्यता

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

से आलोचना की गयी है। अपने देश का हित चाहने वालों और विशेष कर राजनैतिक क्षेत्र में कार्य्य करने वाले भारतीयों को पुस्तक अवश्य पढ़नी चाहिये।

(३) जर्मन जासूस की राम कहानी-पृष्ठ ७८, मूल्य ।-)

अंग्रेज़ी में Secrets of German war Office नाम की एक पुस्तक है यह हिन्दी पुस्तक उसी के आधार पर लिखी गई है। जर्मन सम्राट किस प्रकार अपने गुप्तचरों द्वारा अन्य देशों के समाचार प्राप्त करता था, किस प्रकार उन के द्वारा पोलिटिकल चालें चली जाती थीं और किस प्रकार इस गुप्तचर डिपार्टमैन्ट का प्रबन्ध होता था संक्षेप में इन्हीं बातों का इस में विशेष वर्णन है।

(४) युद्ध की कहानियां-लेखक शिवनारायण मिश्र, मूल्य ।)

इस पुस्तक में युद्ध सम्बन्धी ७ कहानियों का संग्रह है। इस महायुद्ध के समय में मानव हृदय में क्या २ तरंगे उठती थीं, किन २ भावों से प्रेरित होकर भिन्न २ पदस्थ व्यक्ति युद्ध में भाग लेते अथवा युद्ध की घटनाओं का अवलोकन कर उन से प्रभावित होते थे यही इस पुस्तक में रोचक कहानियों के रूप में दिखलाया है।

(५) रूस का राहु--अनुवादक विश्वम्भर नाथ शर्म्मा, कौशिक पृष्ठ १०० मूल्य ।=)

रासपुटिन साईबेरिया के एक ज़िले में एक प्रसिद्ध चोर और लुटेरों के घर में पैदा हुआ था और आप भी इन क्रियाओं में पूरा दक्ष था। अपनी धूर्तता और चालबाज़ी से इस ने इतना बल पकड़ लिया था कि रूस के राजा और महारानी पर भी पूरा अधिकार जमा लिया। इस पुस्तक में उस की ऐयारी का पूरा २ चोटो खींचा गया है और प्रसङ्गवश यौरोप की कूटनीति, कैसर की चालाकी, ज़ार की निरंकुशता, ज़ारीना का गुप्त प्रेम और देश-द्रोह का भी वर्णन है। रूसी जनता कितनी भोली होती है यह इस के पाठ से पता लगता है। पुस्तक रोचक है।

(६) श्री कृष्ण चरित--अनुवादक ठाकुर सूर्य्य कुमार वर्मा पृष्ठ ८६, मूल्य ।=)

बाबू नवीन चन्द्र सेन बङ्गला भाषा के प्रसिद्ध कवि हुए हैं। रैवतक, कुरुक्षेत्र और प्रभास उन की तीन प्रसिद्ध कवितायें हैं। इस पुस्तक की रचना इन काव्यों से चुने हुए सर्गों के आधार पर हुई है। कवि ने अपने समय की पतित और आदर्श हीन हिन्दू समाज के हित श्री कृष्ण और महाभारत काल की घटनाओं को लेकर उस समय के व्यक्तियों के मुख और आचरण द्वारा आज कल के प्रश्नों पर अपने विचार कवित्त बद्ध किये हैं। अतः कहीं २ आधुनिक विचारों का उस समय के विचार और इतिहास में ठीक २ गढ़न न होना स्वाभाविक है। एक उदाहरण लीजिये। आज कल के पश्चिमीय विद्वानों का मत है कि आर्य हिन्दूकुश पार से भारत में आये और यहां के निवासियों को मार जङ्गल में भगा दिया। इस आधुनिक भाव का वर्णन महाभारत इत्यादि पुराने ग्रन्थों में कहीं नहीं मिलता तो भी उस समय के ऐतिहासिक व्यक्तयों के मुख से इस की पुष्टी करवाई गई है। पुस्तक शुद्ध विचारों और धार्मिक उपदेशों से भरी हुई है।

(७) कृष्णार्जुन-युद्ध (नाटक) लेखक श्रीयुत माखन लाल चतुर्वेदी, "सम्पादक" कर्मवीर पृष्ठ १०२, मूल्य ॥)

श्रीयुत माखन लाल जी के शुभ नाम से हिन्दी संसार भली प्रकार परिचित है। उनकी

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri Foundation 2014

ओजस्विनी लेखनी के रस पान का जिस ने एक बार भी स्वादन किया है उस के लिये इन की पुस्तक के विषय में अधिक कहने की आवश्यक्ता नहीं। इस नाटक में भाव तथा भाषा का ऐसा मृदु और मनोहर सामश्रण है कि निःसन्देह यह नाटक हिन्दी संसार का एक रत्न है। जब लपुर में सप्तम हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अवसर पर यह बड़ी सफलता पूर्वक खेला गया था।

(८) The Encyclopaedic Indian Directory, Lahore–पृष्ठ सं० २४० मूल्य २॥), प्रकाशक ऐन्साक्लोपैडिक डायरैक्टरी कम्पनी, लाहौर।

यह डायरैक्टरी आङ्गल भाषा में है। इस में लाहौर सम्बन्धी ऐतिहासिक, सामाजिक, शिक्षा सम्बन्धी, धर्म सम्बन्धी इत्यादि अनेक बातों का पूरा २ ब्योरा दिया हुआ है। लाहौर के सम्बन्ध में जिस किसी को किसी बात के जानने की आवश्यक्ता हो वह इस पुस्तक से जान सक्ता है। पुस्तक को छपे हुए कुछ ही वर्ष हुए अतः कई स्थानों पर Upto date नहीं हो सकी। यह लाहौर सम्बन्धी ज्ञान का कोश है और लाहौर से सम्बन्ध रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लाभ की वस्तु है। विशेष कर व्यापारियों के लिये तो इस को पास रखना परमावश्यक है।

कुसुमोद्यान

यह भी ग़नीमत है।

पश्चिमीय लोग सत्य प्रेमी कहलाते हैं कमसे कम वे स्वयं तो अवश्यही। इसका ढोल कई अवस्थाओं में पीटते हैं किन्तु भारतवासियों का अनुभव तो इससे उलटा है। जातीय जीवन के अन्य भागों में सम्भवतः इसमें कुछ सचाई भी हो किन्तु राजनैतिक जीवन में तो हमने पाश्चात्य लोगों को कई बार ऐसी भूल करते नहीं देखा। हमारा तो विश्वास है कि यदि कतिपय पाश्चात्य राजनैतिकों को किसी राजनैतिक स्वार्थ के लिये दो और दो पांच भी सिद्ध करना पड़े तो इस के पक्ष में प्रमाणों की भीड़ का ठिकाना न होगा। राजनैतिक लोगों की तो कथा ही क्या कई योरोपियन धर्म्म सञ्चालकों तक से किसी राजनैतिक मामले में ऐसी आशा करना अपनी मूर्खता का ही प्रकाश करना है। योरोप की अवस्था सदा से ऐसी न थी परन्तु ज्यों लक्ष्मी और ऐश्वर्य्य की मदिरा अपना प्रभाव जमाती जा रही है त्यों त्यों न्याय और सत्य प्रेम के रहे सहे कण भी योरोप से विदा मांगते जाते हैं इसी का परिणाम वह अवस्था है जिसका हमने ऊपर वर्णन किया है। ऐसे समय में किसी योरोपियन लेख की लेखनी से सत्य का प्रकाश होते देखकर मुख से हठात् यही निकल पड़ता है कि "वृष्टिर्दिवो वीतबलाहकायाः"। हाल ही में अंग्रेज़ी के "चैलेञ्ज" नामक पत्र में एक पादरी महोदय का भारत की वर्तमान दशा पर एक लेख निकला है उसे देख कर हमारे मुख से निकल पड़ा कि एक पादरी साहब ने कुछ सच बोला यह भी ग़नीमत है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

लेखक महोदय का नाम है रेवरेण्ड ए. जी. फ्रेज़र। हम उक्त लेख का छायानुवाद यहां उद्धृत करते हैं।

आपने मुझ को भारत की वर्तमान दशा पर अपने विचार लिखने का भार डाला है। उलझनें इतनी टेढ़ी और मामले इतने बेढब हैं कि भविष्यत् के विषय में सम्मति स्थिर करना तो दूर रहा वर्तमान अवस्थाओं के भी पूर्णतया समझने का अभिमान करना विडम्बना मात्र है। दशा दिनों दिन बदल रही है और आज कल उसके परिवर्तन की गति पश्चिम से भी अधिक तेज़ है।

आन्दोलन का सबसे भयानक अवयव हमारे शासन और हमारी बात का विश्वास उठ जाना है। निस्सन्देह इस अवस्था के उत्पन्न करने में राष्ट्रीय और ख़िलाफ़त नेताओं का बहुत बड़ा हाथ है किन्तु इसके वास्तविक कारण भी हैं। कम से कम इसकी भयानकता वास्तविक कारणों पर ही अवलम्बित है। १९१४ में जब युद्ध घोषणा हुई तो जब मुझ से पूछा जाता था कि भारत किस करवट बैठेगा, मैं निस्सङ्कोच उत्तर दे देता था कि भारत हमारे साथ होगा। आज मैं नहीं कह सकता कि वह हमारा साथ देगा। तब मैं और अब में बड़ा अन्तर होगया है। तब पञ्जाब घटनाएं और उन के साथ के दूसरे बखेड़े नहीं खड़े हुए थे। प्रत्येक भारतीय के लिये पञ्जाब के साथ हमारा व्यवहार इस बात की प्रत्यक्ष घोषणा थी कि भारत में हमारा राज्य केवल दण्डशक्ति पर आश्रित है जो यथेच्छ प्रयोग की जा सकती है। अस्तु फिर भी भारत के वर्तमान दिनों में जो रोषाग्नि दहक रही है उसके लिये कोई डायर को दोषी नहीं ठहरा सकता। वह भिन्न अवस्थाओं में था। बहुधा गोली चलाना ही लोक रक्षा और शान्ति स्थापन का एक मात्र उपाय रह जाता है। गोली चलाना उचित और युक्ति सङ्गत भी हो सकता है। जितने मरें उतने मारने के लिये अंधाधुंध गोली चलाना घबराहट से और होश ठीक न रहने से हो सकता है। होश उड़ना कुछ डायर की विशेष बात नहीं। प्रत्येक देश और जाति के मनुष्यों की समय २ पर ऐसी अवस्था हो सकती है, परन्तु रोषाग्नि के इतने भड़कने का कारण इतनी डायर की चेष्टा नहीं जितना उस का छिपाए रखना—जांच में देरी लगाना, हलका दण्ड देना हाउस आफ लौर्ड्ज़ का अनुमोदन करना और २०००० की थैली अर्पण करना है। फिर रेंगने की आज्ञा पर भी भारत किसी उग्रदण्ड की आशा रखता था। ये और कर्म्मचारियों के दूसरे इस प्रकार के दुर्व्यवहार देश के लिये घोर अपमान जनक थे। अब तो मैं समझता हूं कि खुली जातीय क्षमा प्रार्थना और पीड़ित लोगों की सान्त्वना के सिवाय कोई काम इस रोष को हलका नहीं कर सकता। परन्तु अभी तक तो इस नृशंसत की नीति पर इङ्गलैण्ड और अंग्रेज़ जाति की स्वीकृति की मोहर लगी हुई है। जनरल डायर और उसके व्यवहार ने यही प्रभाव उत्पन्न किया है। और कोई प्रभाव उत्पन्न हो ही कैसे सकता था। मार्शल लौ के अन्य कर्म्मचारियों की करतूतों ने भी यही काम किया। यह सब कुछ होने पर भी इतना उपद्रव न होने पाता यदि अपराधियों की खुल्लमखुल्ला पीठ न ठोंकी जाती और उन्हें अपनाने से इनकार कर दिया जाता। किन्तु सब से प्रधान अपराधी डायर को ही मि० विन्स्टन चर्चिल के शब्दों में सब से नरम दण्ड दिया गया है फिर इस पर हाउस अव लौर्ड्ज़ ने उसके कार्य्यों को अनुमोदन किया। इतना ही नहीं ब्रिटिश जनता ने जिन में अधिकतर भारत

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

में रहनेवाले वा रहचुकने वाले लोगों का भाग अधिक था उन्होंने इस वीर कर्म्म के लिये उसे २०००७ पाउण्ड की थैली भेंट की भला फिर भारतवासी सिवाय इसके क्या परिणाम निकालें कि हम पाशविक बल और नृशंसता के पक्षपाती हैं। परिणाम बड़ा भयङ्कर और देश व्यापी हुआ है। अभी उस दिन मुझ से एक पुराने अनुभव सिविलियन कहते थे कि लोग कहते हैं जनरल डायर ने पञ्जाब को बचा लिया। मैं कहता हूं कि सरमाइकल ओड्वायर के शासन ने सारे भारत में शासन का काम लगभग असम्भव कर दिया है।

और भी लीजिये। मिश्र देश के साथ की हुई प्रतिज्ञाओं को हमारा रद्दी काग़ज़ समझना भी ओझल नहीं हो सकता। हमारी बात पर खुल्लम खुल्ला अविश्वास प्रकट किया जाता है। हम कहते हैं कि हमारा उद्देश्य भारत को स्वराज्य तक पहुंचाना है और हम उसे इस के लिये शिक्षित कर रहे हैं। मैं समझता हूं कि हमारे अग्रगण्य लोगों का और राष्ट्र का उद्देश्य है भी यही। पर जब तक मिश्र देश का दृश्य सामने है तब तक भारतीय वा अन्य किसी देश के लोग भी हमारा विश्वास क्यों करने लगे हैं? वे समझते हैं कि हम उतने ही स्वार्थ साधन के लिये निकले हैं जितना और कोई भी देश निकल सकता है। और बहुत अंशों तक यह सच भी है। हम समझते हैं कि ब्रिटिश भाव का फैलाना उतना ही ठीक है जितना जर्म्मन अपने "कल्चर" का फैलाना ठीक समझते थे। हमें भी बिश्वास है कि इस के विस्तार के लिये हम ईश्वर की ओर से भेजे गये हैं। यह पुण्य भावना है परन्तु परम पुण्य भावना नहीं है।

सर टामस मोनरो ने, जो १८२७ तक मद्रास के गवर्नर थे, एक बार कहा है कि ब्रिटिश राज्य का बल उसे प्रत्येक विद्रोह को दमन करने और आक्रमण को हटाने की सामर्थ्य देता है और ब्रिटिश राज्य में लोग जो सुरक्षितता अनुभव करते हैं वे किसी देशी राज्य में नहीं करते परन्तु फिर भी यह सौदा बहुत महंगा है। इस सुरक्षा के बदले में प्रजा को जातीय स्वाधीनता, जातीय आचार और उन सब स्वत्वों को बेचना पड़ा है जो किसी जाति के आत्म-गौरव को स्थिर रखते हैं। जाति उन्हीं लोगों का अनुकरण कर के अपना आचार संगठन करती है उस के जातीय जीवन में भाग लेती है किन्तु जहां आदमी इस प्रकार के न हों वहां जाति निर्जीवन हो जाती है। मैं समझता हूं कि यह अवस्था का ठीक वर्णन है और भारत स्वराज्य लेने पर कटिबद्ध है और लेकर रहेगा।

अब प्रश्न तो केवल इतना है कि यह अवस्था उथलपुथल से ब्रिटिश राज्य से अलग होकर घोर हत्याकाण्ड मचा कर होगी वा शान्ति से धीरे २ विकास होकर होगी। अभी कुछ बिगड़ा नहीं है, अभी शान्ति से काम हो सकता है। यही नहीं भविष्य बड़ा आशा जनक है। भारत अब हीन दरिद्र भूखा नहीं है, अब उसे अपने पुण्य कोष का ज्ञान है। वह उसे प्रयोग में लाना चाहता है और साम्राज्य के शेष भागों के साथ मिलकर आगे बढ़ना चाहता है। किन्तु यदि ऐसा शान्तिमय विकास होता है तो हमें अपना व्यवहार सर्वथा बदलना होगा। हमें इस समय दण्ड शक्ति का बड़ा भरोसा है, कम से कम हमें उसकी डींग १९१४ की अपेक्षा अधिक अकड़ के साथ हो सकती है। रङ्गभेद भी अब सदा से अधिक प्रबल

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

है और अधिक खुले रूपमें प्रोत्साहित किया जाता है। अगर हमारे साम्राज्य को स्थिर रहना है तो फिर इस जङ्गली वा जर्म्मन सांचा छोड़ कर किसी नये सांचे में ढालना होगा। कोई भी स्थायी साम्राज्य स्थापित नहीं हो सकता जो सेवाभाव पर आश्रित है। अन्तिम और सच्चा बल प्रेम का है दण्ड का नहीं। राजनीतिज्ञों के राजनीति मसीह ने कहा है कि जो तलवार चलाता है वह तलवार ही के धार मरता है। अपने किये पर पश्चाताप और प्रायश्चित द्वारा ही और भारत की अनवरत प्रेमयम निष्काम सेवा द्वारा ही हम उसे रूस, चीन, और टर्की बनने से बचा सकते हैं। जो जीवन अर्पण करता है वही जीवन की रक्षा करता है। यह नियम जैसा व्यक्तियों पर लगता है वैसा ही साम्राज्यों पर भी लगता है। यदि डीन आर्मिरज रोबिन्सन की पुस्तक उन लोगों के लिये पाठ्य पुस्तक बना दी जाय जो भारत और अफ्रिका में हमारे साम्राज्य के प्रतिनिधि हैं तो बड़ा कल्याण हो। सैंटपाल एक चतुर शिल्पी था। वह एक आत्म साम्राज्य की नीव डाल रहा था और यदि संसारी लोग भी उसका अनुकरण करें तो उनके लिये शुभदायक ही होगा।

वैज्ञानिक संसार

(१) इंग्लैण्ड में झूट बोलने वालों की संख्या।

हमें पता लगा है कि किसी जनता में झूट बोलने वाले व्यक्तियों का परिमाण जानने के लिये एक बड़ा उत्तम उपाय है। आज कल गत महायुद्ध से ग्रहण किये हुए एक रोग विशेष का बहुत से पुरुष इलाज करवा रहे हैं। इसमें उन्हें प्रति दिन दवा खानी पड़ती है और डाक्टर विशेष रूप से इसके लिये आदेश कर देते हैं। जब रोगी पुनः डाक्टर के पास आते हैं तब बड़े गर्व से कहते हैं कि उन्हों की बतलाई हुई दवाई की पूरी २ मात्रा का सेवन कर लिया है। परन्तु उनको यह नहीं पता कि एक बड़े सरल रसायनिक तरीके द्वारा उनके कथन की सत्यता परखी जा सक्ती है। हमें पता लगा है कि लगभग ७५ प्रति शतक व्यक्ति इस परीक्षण द्वारा झूटे सिद्ध किये गये हैं। अतः यह जाति के झूटों की ठीक२ संख्या का बोधक नहीं क्योंकि इस से उन्हीं की परीक्षा होती है जिन से झूट बोलने की अधिक सम्भावना होती है; तो भी वैज्ञानिक रूप से यह अवश्य सिद्ध होता है कि हमारे बहु मूल्यवान शिक्षा के होते हुये भी झूटे बहुतेरे मिलते हैं। सायंन्स प्राग्रैस।

---

(२) आकाश नीला क्यों है?

हम प्रति दिन आकाश की ओर देखते हैं और इसकी महानता को देख कर चकित हो जाते हैं। यदि इसका रंग नीला न होता तो भी क्यों हम इसी प्रकार प्रभावित होते इस में सन्देह है। इस नीले रंग के विषय में भिन्न २ वैज्ञानिकों ने अपनी सम्मति प्रकट की है परन्तु प्रोफैसर ब्रैग ने इस नीलेपन का जो कारण बतलाया है वह बड़ा ही सरल है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

सुर्य्य की सुफ़ेद रोशनी को त्रिपार्श्व शीशे द्वारा सात रंगों में विश्लेशन कर सक्ते हैं अर्थात् इस त्रिपार्श्व शीशे के एक ओर सूर्य्य की एक किरण डाली जाय तो इस के दूसरी ओर से निकली हुई किरण बैजनी, नीली, आसमानी, हरी, पीली, नारंजी और लाल इन सात रंगों में विभाजित हो जायगी और ये सब रंग हमें भली भान्ति दिखलाई देंगे। स्थूल वस्तुओं में यह शक्ति है कि इन सात रंगों की रश्मियों में से कितनों ही रश्मियों को वह अपने में से पार निकल जाने देती हैं और कई एक रश्मियों को रोक लेती हैं। भिन्न २ पदार्थ भिन्न २ रंगों को इस प्रकार रोकते हैं। जो पदार्थ हमें लाल दिखलाई देते हैं उनके परमाणुओं के संगठन इस प्रकार का हुआ है कि लाल के अतिरिक्त बाकी के छः रंगों को वह अपने में से निकल जाने देंगे, परन्तु लाल को रोक लेंगे। इसी कारण वे हमें लाल दिखलायी पड़ते हैं। इसी प्रकार अन्य रंग वाले पदार्थों की अवस्था है।

प्रोफेसर ब्रैग का कथन है कि वायुमण्डल में छोटे २ अणु तैर रहे हैं। वे सुर्य्य के सुफ़ेद प्रकाश की आसमानी नीली रश्मियों को रोक लेते हैं अतः आकाश आसमानी दिखलाई पड़ते हैं। इन अनेक अणुओं के समूह को हम आसमानी आकाश समझ लेते हैं। सूर्य्य के प्रकाश का वह भाग जो अधिक लम्बी लाल और पीली रश्मियों द्वारा हमारे तक पहुंचत है वह वायुमंडल के इन अणु समूह को फान्द आता है अतः प्रातः और सन्ध्या समय हमें सूर्य्य का रंग उस प्रकार का दिखलाई पड़ता है।

प्रोफेसर ने अपने कथन की पुष्टि में एक परीक्षण करके दिखलाया कि पर्दे पर उन्हों ने सुपैद रोशनी की एक गोलाकार थाली डाली, जिसका कि प्रकाश पानी के एक प्याले में से छेदता हुआ निकलता था। ज्यों २ पानी धुन्धला होता गया प्रकाश की थाली लाल पड़ती गई। जब पानी इतना गहरा होगया जितना कि नवम्बर मास में इंग्लैण्ड में धुन्धलापन होता है तब प्रकाश की थाली उसी प्रकार आंखों से ओझल होगयी जिस प्रकार कि धुन्ध के दिनों में सूर्य्य हो जाता है।

---

(३) आलू बोने की एक नई विधि।

अमरीका में आलू बोने का एक आधुनिक तरीका है जो हमें भारत में भी काम में लाकर देखना चाहिये। आलू का 'बीज' भूमि में नहीं बोया जाता। पहले भूमि को खोद लिया जाता है और फिर उस पर कई इन्च मोटी सूखी घास की एक परत जमा दी जाती है। 'बीज' को इस घास पर रख दिया जाता है और इसके ऊपर एक और परत घास का रख देते हैं। घास के ऊपर से पानी छिड़क कर कुछ थोड़ा सा गीला रखते हैं। थोड़े दिनों में आलू बढ़ने आरम्भ हो जाते हैं। उनकी जड़ें घास को भेद कर नीचे ज़मीन में जा पहुंचती है और आलू घास के ऊपर बढ़ता रहता है। यह कहा जाता है कि इस तरीके से खूब बड़े २ आलू पैदा होते हैं और पुराने तरीके से लगाये हुये आलुओं से तीन सप्ताह या एक मास पहिले खाने को मिल जाते हैं। सारे पौदों को खराब किये बिना ही यह आलू एकत्र किये जा सक्ते हैं। घास में हाथ घुसेड़ कर देखा जा सक्ता है कि वह कितने बड़े होगये हैं। इस प्रकार हमें कोई दुगने के लगभग माल मिल सक्ता है॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

उद्बोधन।

लेखिका—श्रीमती कुमारी विद्यावती जी (बरेली)

क्यों! सब मुर्दा बने पड़े भारत के भाई।
मन मलीन तन छीन हीन से सभ प्रभुताई॥
अवगुण धरे अनेक द्वेष-ईर्षा फैलाई।
गाढ़ी निद्रा लिप्त भये सुधि नेक न आई॥
सब देश समुन्नति हो रहे, तुम क्यों अस्थिर हो अभी।
क्या आर्य्य वंश के नामको, और डुबोना है अभी॥ १॥

आओ! बीरो उठो प्रेम सद्भाव बढ़ाओ।
हो करके निर्भीक देश उन्नति मन लाओ॥
अनधिकार को मिटा शान्ति चहुँ दिशि फैलाओ।
दृढ़ प्रतिज्ञ बन आर्य्य-ध्वजा चहुँ दिशि फहराओ॥
संसार बीच में न्याय को, अमर अटल करदो अभी।
जिससे पापका नाश हो, कर धर्म मिल कर सभी॥ २॥

भीष्मार्जुन के सदृश तुम्हीं में अतुलित बल था।
व्यास जैमिनी सदृश सदा विज्ञान प्रबल था॥
कृष्णचन्द्र के सदृश हुये गीता के शिक्षक।
रामचन्द्र के सदृश हुये तुम में जग रक्षक॥
क्या प्रबल प्रतापी वीर तुम, अब बन सक्ते हो नहीं।
यदि साहस बाकी हो रहा, फिर अवनति रोको यहीं॥३॥

आओ वीरो! उठो स्वावलम्बन को धारो।
पढ़ो ज्ञान-विज्ञान द्वेष-ईर्षा तजडारो॥
उन्नति-विधान सोच लो जग में आई।
कौशल कला प्रसार बनो सबके सुखदाई॥
संसार फेर यह जान ले, हिन्द निवासी वीर हैं।
वे कर्मवीर हैं देशके, वृती अतुलमति धीर हैं॥ ४॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

विचार प्रवाह

हमारा गत वर्ष।

इस अङ्क के साथ 'ज्योति' का एक वर्ष कुशल पूर्वक समाप्त होता है मई मास से दूसरा वर्ष प्रारम्भ होगा। इस वर्ष के बीच में ज्योति को जो २ कठिनाइयां झेलनी पड़ी हैं और जो २ कष्ट उठाने पड़े हैं उन को दृष्टि में रख कर हमें इस बात का सन्तोष है कि वह बच गई है और कदाचित चिरकाल तक जीवित रहेगी। किन्तु गत अङ्क में हम ने ज्योति के पाठक पाठिकाओं के आग एक विशेष याचना की थी कि प्रत्येक एक २ दो २ ग्राहक बनाकर इस की आर्थिक स्थिति को उन्नत करें परन्तु खेद है कि उस पर बहुत कम ध्यान दिया गया है और इस कारण जहां अगले वर्ष में हम कोई और मनोरञ्जकता का साधन उपस्थित नहीं कर सकेंगे वहां हमें आर्थिक कष्ट भी रहेगा।

अतः हम पाठकों का ध्यान एक बार फिर इस बात पर दिलाते हैं कि वे ग्राहक संख्या बढ़ाने की ओर ध्यान दे कर अपने कर्तव्य का पालन करें और ज्योति को आर्थिक सङ्कट से बचावें।

दूसरी बात यह है कि जिन २ ग्राहकों का साल पूरा होगया है वे मनीआर्डर से अपना चन्दा आगामी वर्ष के लिये भेज दें ताकि हमें वी० पी० द्वारा भेजने का व्यय न उठाना पड़े और यदि मनीआर्डर से न भेजें तो वी० पी० पहुंचने पर उसे अवश्य स्वीकार कर लेवें। सूचना के हेतु कार्ड भेज दिये जाते हैं यदि किसी को ग्राहक न रहना हो तो उस की सूचना मैनेजर, ज्योति, लाहौर को शीघ्र भेज देवें वरना मई का अङ्क वी० पी० द्वारा भेजा जायगा। पुराने ग्राहकों का कर्तव्य है कि उसे अवश्य स्वीकार कर के पञ्जाब में हिन्दी प्रचार के काम में हाथ बटावें।

मई का अङ्क।

यों तो ज्योति में प्रारम्भ से ही बड़े २ प्रसिद्ध लोगों के उत्तमोत्तम लेख व कवितायें रही हैं परन्तु आगामी वर्ष के लिये हिन्दी के प्रसिद्ध २ लेखक और कवियों ने विशेष रूप से इस पर कृपा की है और देश के कई नेताओं के शिक्षा-प्रद चित्तरञ्जक निबन्ध भी रहेंगे। मई के अङ्क में जिन लोगों के लेख व कवितायें होंगी उन के कुछ नाम ये हैं:—

श्रीमान् लाला लाजपतराय जी, श्री ठाकुर छेदी लाल जी एम० ए० (आक्सन), प्रो० राम देव जी सम्पादक वैदिक मेगज़ीन, महाशय कृष्ण जी सम्पादक 'प्रताप' व 'प्रकाश', श्री पण्डित सातवलकर जी, डाक्टर रामजी नरायण जी, श्रीमान् कविवर श्रीधर पाठक, श्री पण्डित रूप-नारायण पाण्डेय, श्री पण्डित जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदी, श्री 'कुसुम' 'श्री हरि' श्री हरिशङ्कर भट्ट इत्यादि इत्यादि।

वनिता विनोद में भी जैसा कि गत अङ्क में लिख चुके हैं उत्तमोत्तम लेख रहेंगे। आशा है कि सब हिन्दी प्रेमी मई का अङ्क अवश्य पढ़ कर लाभ उठावेंगे।

नये वाइसराय का आगमन।

लार्ड रीडिंग सपत्नीक २ अप्रेल की प्रातः को बम्बई पधारे थे। वहां उनका बम्बई कार्पो-

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

रेशन की ओर से बड़े समारोह से स्वागत हुआ। उनका जो नाम और यश है और उनकी न्याय प्रियता और निष्पक्षपातता का जो अन्यत्र परिचय मिला है उससे भारतवासियों का हृदय उनके लिये पसीजता हुआ प्रतीत होता है। अतः नये वाइसराय महोदय का प्रजा आन्तरिक हृदय से स्वागत करती है। हम समझते हैं कि भारतवर्ष के इतिहास के इस परिवर्तन काल में विलायत के सब से बड़े न्यायकर्ता का समान दृष्टि से न्याय करने के लिये आगमन बड़े सौभाग्य का चिन्ह है। समग्र भारत की आंखें खुली हुई हैं और वह एक टक लार्ड रेडिंग के वचनों की पूर्ति के समय की प्रतीक्षा में बैठे हैं। इस समय लाट महोदय को दूसरों की आंखों से भारत की अवस्था नहीं देखनी चाहिये वरन् जैसा कि वह स्वयं मानते हैं अपने आप भारतीय दशा पर विचार करके अपने मिशन को पूरा करना चाहिये। हम लाट महोदय का हार्दिक स्वागत करते हैं और परमेश्वर से यही प्रार्थना करते हैं कि लाट महोदय अपने मिशन में सफलीभूत हों और भारत का भी शीघ्र अभ्युदय हो॥

लार्ड रेडिंग का भाषण।

बम्बई कारपोरेशन की तरफ से जो अभिनन्दन पत्र नये लाट को मिला है उसके उत्तर में जो कुछ उन्होंने भाषण किया है उसके कई शब्द हमारे कान में गूंज रहे हैं। उनका कथन है कि चूंकि मैं यहूदी वंश का हूं अतः मेरा पूर्व से पहिले ही से सम्बन्ध रहा है और कोई आश्चर्य्य नहीं कि यह सम्बन्ध सौभाग्य वश किसी अनिर्वचनीय सूक्ष्म आन्तरिक संस्कार की प्रेरणा से मुझे भारतीयों के उद्देश्यों, इच्छाओं, कठिनाइयों और तकलीफों, आनन्दों और दुःखों को समझने में सहायता दे और उन दुःखी लोगों की, जिन के लिये बहुधा अत्यन्त संकट में होने पर भी अपनी आवश्यकताओं को वर्णन करना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य ही होता है, छूटी हुई आहों [Marticulate Cries] और धीमी२ कानाफूसी [Mandible whispers] को समझने की शक्ति देवे। दूसरी बात जो न्याय और सहानुभूति के सम्बन्ध में वे कहते हैं वह यह है कि मैं जानता हूं कि मेरे लिये बड़ा कठिन कार्य्य सामने है और यद्यपि पद उच्च है तथापि प्रशान्त नहीं, तो भी मेरे हृदय में आशा का संचार है क्योंकि मनुष्यों और मनुष्यों के कानों का जो मुझे अनुभव है उससे मुझे पूरा निश्चय है कि मनुष्य चाहे जिस किसी जाति, मत या वर्ग के हों यदि उनके प्रति न्याय और सहानुभूति दिखाई जावे तो उनके हृदय में अवश्य उनका प्रभाव पड़ता है। यह दोनों ताज में सब से अधिक चमकीले रत्न हैं इन के बिना ताज में कोई प्रताप नहीं रहता परन्तु इनकी उपस्थिति में उससे वह प्रतिभा होती है जो राजभक्ति और प्रेम की ओर खैंचती है। आगे चल कर वह कहते हैं कि वाइसराय बन कर मैं न्याय को न्यायालयों से अधिक विस्तृत रूप में फैला सकूंगा लेकिन वह न्याय जो अब मेरे हाथ में होगा वह किताबी न्याय न होगा। वह (unfettred) अप्रतिबन्धक न्याय होगा, उस में सब दशाओं और शर्तों का ख्याल रखना होगा और उसे समझ और सहानुभूति द्वारा प्रकाश करना होगा। सब से अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि इस में किसी प्रकार का भेद भाव न वर्ता जावेगा और वह अत्यन्त निष्पक्षपात होगा। मेरे शासन समय में बृटिश राज्य की न्याय प्रियता को धक्का नहीं पहुंचना

CC-0.GSGurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

चाहिये और मुझे पूर्ण विश्वास है कि सब राजकर्मचारी जो भारतीय शासन में सम्मिलित हैं इस यश को ऊंचा रखने का दृढ़ प्रयत्न करेंगे।

भारतीय अशान्ति का वर्णन करते हुए लाट महोदय कहते हैं कि मैं शोक के साथ स्वीकार करता हूं कि भारत में अशान्ति है और मैं भी इस बात की प्रार्थना करता हूं कि मैं इसे दूर कर सकूं। परन्तु इस समय मैं इस की अधिक आलोचना न करूंगा जब तक कि मैं स्वयं इस की देखभाल और सूचना न ले लूं। मुझे पूरा विश्वास है कि यदि मैं सूचनायें एकत्र करने में, सम्मति लेने में और फिर परिणाम निकालने में समय लगाऊं तो मैं सम्राट के प्रति अपने कर्तव्य तथा भारत के लाभ दोनों को पूर्ण कर सकूंगा। जब तक ये न हों मैं कोई असावधान शब्द न बोलूंगा और न जल्दबाज़ी ही करूंगा।

हम लाट महोदय को उनकी सहानुभूति-युक्त वक्तृता के लिये बधाई देते हैं और आशा करते हैं कि जैसा कि उन्होंने भाषण किया है उसी के अनुसार अब शीघ्र भारतीय जटिल प्रश्नों का अध्ययन करके अपनी न्याय प्रियता और स्वातन्त्र्य प्रेम का परिचय देंगे। यहूदी वंशज होकर पूर्वीय देशों के साथ अपने प्राचीन गौरव का उन्हें बड़ा अभिमान है और सच्चा ओभमान है। परन्तु इसके साथ ही उन्हें अपनी जाति तिरस्कार का दुःख याद करके भारतीय जाति के इस घोर अपमान और तिरस्कार के प्रतीकार का शीघ्र उपाय करना चाहिये। लाट महोदय ने कहा है कि हम अभी कोई परिणाम पर नहीं पहुँच सके जब तक कि हम स्वयं अपनी आँखों से सब कुछ देख न लें और कानों से सब कुछ सुन न लें। हमें भी कोरे वचनों की अब आवश्यक्ता नहीं है। कोरी प्रतिज्ञायें बहुत हो चुकीं अब तो केवल कार्य्य कर दिखलाना ही अभीष्ट है और अब वह समय बहुत पास ही है जब कि हमें लाट महोदय की करनी देखने का अवसर मिलेगा। देखें न्याय और स्वतन्त्रता का उनका भाव भारत भूमि में चरण रखते ही क्या रूप लेता है। कहीं राज कर्मचारियों के माया जाल में पड़कर उन्हें सब कुछ हराभरा ही न दीखने लगपड़े। अब उन्हें चाहिये कि प्रत्येक प्रश्न को राजा तथा प्रजा के प्रतिनिधि काँग्रेस लीडर्स दोनों की दृष्टि के अनुसार अध्ययन करके परिणाम निकालें। अपने आप को एक भारतीय के स्थान में रखकर भारतीयों के दुःख दर्दों का अनुभव करने की चेष्टा करें तभी वे अपने शासन में सफलता प्राप्त कर सके हैं अन्यथा उनकी सहानुभूति और न्याय-प्रियता भारत के लिये निष्फल है।

पंजाब केसरी और नर्मदल।

अभी थोड़े ही दिन हुये पंजाब केसरी लाला लाजपत राय जी ने बम्बई में श्रीमती सरोजिनी नायडू की अध्यक्षता में एक व्याख्यान दिया, जिस में उन्होंने हमारे माडरेट भाइयों की तीव्र आलोचना करते हुये कहा कि समय अब बड़े संकट का है लेकिन फिर भी आशा जनक है। अब तक तो यहां पर तीन पार्टियां थीं एक नरमदल, दूसरे नौकरशाही तीसरे नेशनलिस्ट। लेकिन आज शोक से कहना पड़ता है कि नर्मदल वालों ने अपने राजनैतिक जीवन को आत्म हत्या द्वारा समाप्त कर डाला है। मित्र आलोचक की स्थिति में तो वे लाभकारी कार्य्यकर्ता थे। वे हमारे

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

दोषों को बता देते थे, वे हम में से थे, चाहे भिन्न विचार वाले थे किन्तु जिस क्षण से वे वर्तमान शासन-प्रणाली के अंग बन गये हैं उन की स्वातन्त्र्य स्थिति लोप हो गई है। सर्कारी ओहदों को ग्रहण करके और अपने आप को नौकरशाही में शामिल करके आज वे उन्हीं की भांति बन गये हैं और अब हमारी जातीय स्वतन्त्रता के बाधक बन रहे हैं और भारतीय जनता की विचार सभा में तीव्र देश द्रोही सिद्ध हुये हैं। जातीय आन्दोलनों का गला घोटने में वे सर्कार को केवल (Moral support) दिल से ही नहीं बल्कि (Legal support) प्रत्यक्ष रूप से भी सहायक हैं। नौकरशाही और नरमदल दोनों ने असहयोग आन्दोलन तथा असहयोगियों के नाश करने के हेतु मित्रता की हुई है। और इस से उल्टा हो भी नहीं सकता था, विदेशी शासन-प्रणाली का हाथ बटाने के हेतु यह आवश्यक ही था।

इस के बाद लाला जी पूछते हैं कि असहयोग वादियों का दोष क्या है जिस के कारण नौकरशाही, नरमदल तथा तालुकदार व रईसों ने मिलकर युद्ध करना शुरू किया है? क्या शराब खोरी बन्द करना पाप है? क्या पंचायत बनाना, जातीय पाठशालायें बनाना तथा शराब को, मुकद्दमे बाज़ी को, जातीयता का नाश करने वाली शिक्षा को बुरा बताना पाप है? क्या स्वदेशी का प्रचार करना पाप है? यदि नहीं तो हमारे नरमदल के भाई इतने नाराज़ क्यों होते हैं?

आगे चल कर वे कहते हैं कि कहीं पर भी देखो यू. पी. में, सी. पी. में, बिहार में, बंगाल में तथा पंजाब में सभी जगह सर्कार ने नरमदल के नेताओं को नेशनलिस्ट के विरोध करने के लिये खरीद लिया है क्योंकि दोनों ही नेशनलिस्टों के निकालने पर तुले हुये हैं। बड़े दुःख की बात है कि नरमदल के एक भी नेता, उदार चित्त मिस्टर शास्त्री भी, नहीं बचे जिन्हें कोई पारितोषिक न दिया गया हो। जब २ नरमदल वाले असहयोग के विपक्ष में बोलते रहे तब तक सर्कार उन की पीठ ठोंकती रही। भारतीयों के लिये यह बड़े अपमान की बात है, अपने उद्देश्यों के वैरियों की प्रशंसा को निगलना हमारी जातीयता और हमारे मनुष्यत्व को तिरस्कार करना है। नरमदल वाले देश के लाभ की रक्षा करने में असफल हुये हैं। सर्कार को अमित व्ययी कहते हुये भी जब वे ओहदों पर आये तो जिन्हें ५००) मिलते थे वह ५०००) प्रति मास मांगने लगे।

लाला जी के इस कथन में बहुत सार है। हमें शोक से मानना पड़ता है कि हमारे माडरेट भाई इस अभ्युत्थान के समय देश हित के नाशक बन रहे हैं। किन्तु हम यह समझते हैं कि उन का यह व्यवहार, यह आत्म-सन्मानघात जान बूझ कर नहीं है। उन को अभी तक अपनी शक्तियों का ज्ञान नहीं है, अपने आत्म निर्णय पर विश्वास नहीं है और मृग तृष्णा की भांति दूर से बालू को चमकती देख कर पानी की लालसा से दौड़ पड़ते हैं और परिणाम वही होता है जो कि जान बूझ कर देश हित का घातक हो। भाग्य की प्रबलता क्या २ न रंग दिखलाती है। वही मिस्टर चिन्तामणी जी हैं वही पण्डित जगतनरायण हैं जिन्हों ने अपना अब तक का सारा जीवन सर्कार से इस बात में लड़ लड़ कर बिताया था कि वह अपनी दमन नीति को कम करे लेकिन उन्हीं लोगों के मिनिस्टर बनते ही संयुक्त प्रान्त में आज सिडीशस मीटिंग एक्ट का केन्द्र बढ़ाया जा रहा है और लोगों के गले

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

घुट रहे हैं और यह होना आवश्यक ही था क्योंकि अन्य कोई चारा ही न था। इस समय देश में दो दल हैं एक स्वराज्य दल दूसरा सर्कारी दल, बीच में कोई रास्ता नहीं। देश भक्त माडरेटों के लिये एक ही रास्ता खुला था और वह यह कि कई बातों में मत भेद होने पर भी वे अपने को स्वराज्य दल के साथ रखते तो एक समय आता जब कि भाई भाई का भेद भाव दूर हो जाता और दोनों की शक्तियां मिल कर देश में काम करतीं किन्तु उन्होंने तो अपना रास्ता ही ऐसा चुना है जहां जाकर कभी मिलने की आशा ही नहीं रही।

किन्तु जहां लाला जी ने माडरेटों के दोष दर्शाये हैं वहां उन्होंने अपने पक्ष के भी दोषों को सामने लाने में संकोच नहीं किया। स्वराज्य आन्दोलन के पक्षपातियों के लिये यह बड़ी लज्जा जनक बात है कि वे महात्मा गांधी के रोकने पर भी जब २ माडरेट नेताओं ने उनके पक्ष के प्रतिकूल भाषण किया तो उन्हें लानत दे २ कर बोलना ही दूभर कर दिया और भी कई प्रकार से उनका अपमान करते रहे हैं। यह व्यवहार सर्वथा असभ्य और हिंसात्मक है। अतः अहिंसात्मक असहयोग वादियों के लिये सर्वथा त्याज्य था। यदि यह व्यवहार न होता तो शायद कई उदारचित्त माडरेटों को असहयोग आन्दोलन से इतनी घृणा भी न होती। तथापि भाई भाई से जुदा होकर विदेशियों से मेल कर देश हित का घात करें यह बड़ा दारूण कष्ट है। इसी ने तो हमारा नाश किया इसका साक्षी सारा भारतीय इतिहास है।

अतः कइयों की दृष्टि में चाहे यह दुराशा मात्र ही क्यों न हो हम तो अब भी यही आशा रखते हैं कि हमारे बुद्धिमान माडरेट भाई इस उल्टे मार्ग को छोड़ कर शीघ्र स्वराज्य दल के साथ आ मिलेंगे और देश हित के घातक न होकर साधक बन कर अपने कर्तव्य का पालन करेंगे।

अखिल भारतवर्षीय महासभा की कमेटी मीटिङ्ग।

३१ मार्च को मद्रास के बज़वाड़ा नगर में अखिल भारतवर्षीय कांग्रेस कमेटी की मीटिङ्ग हुई जिस में नीचे लिखित चार प्रस्ताव पास किये गये:—

[१] कांग्रेस की सब शाखाएं और कार्यकर्ता ३० जून तक तिलक स्मारक फण्ड की रकम १ करोड़ तक कर देवें, कांग्रेस में सदस्य संख्या १ करोड़ तक बनावें, गांवों में २० लाख चर्खे चलाने की पूरी चेष्टा करें। प्रत्येक प्रान्त को अपनी जन-संख्या के हिसाब से ये काम करने चाहिये।

[२] कमेटी की राय में असहयोग-वादियों पर दमन नीति का जो वार हो रहा है वह अवैध है। जनता ने सरकार के भड़काने पर भी बड़ी शान्ति से काम लिया है। सिविल डिसओबीडियेंस [Civil disobedience] करने योग्य अभी देश सङ्गठित नहीं हुआ है। यदि किसी असहयोगी पर कोई आज्ञा दी जाय तो वह उसे यह समझ कर मान ले कि और कोई उस का स्थान ग्रहण कर लेगा, उत्साह कभी न हारे निर्भीक होकर कांग्रेस प्रस्तावानुसार कार्य करे।

[३] देशवासियों ने जिस शीघ्रता से पञ्चायत की स्थापना की है उस के लिये कमेटी उन्हें धन्यवाद देती है।

[४] देशवासियों ने मादक वस्तु त्याग या आत्मसुधार के लिये जो काम किये हैं और

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

कर रहे हैं उन के लिये कमेटी धन्यवाद देती है और आशा करती है कि निःस्वार्थ स्वदेश सेवियों के उद्योग से सब प्रकार के मादक पदार्थों का व्यवहार दूर हो जावेगा।

प्रत्येक देश वासी चाहे स्त्री हो या पुरुष, बालक युवा वा वृद्ध, शिक्षित वा अशिक्षित, धनवान वा निर्धन, कुलीन वा अकुलीन चाहे कोई हो और चाहे कैसी भी स्थिति में क्यों न हो सब को इन निश्चयों पर विचार कर के यथोचित योग देना चाहिये ताकि ३० जून से पहिले ही काम बन जावे। जहां तक चर्खों का सम्बन्ध है उस में तो स्त्रियां यदि चाहें तो बहुत शीघ्र इसे पूर्ण कर सक्ती हैं क्योंकि प्रत्येक स्त्री को कुछ समय खाली अवश्य मिलता है और अधिकांश स्त्रियें बहुधा निकम्मी बैठी रहती हैं या सो कर समय बिताती हैं। यदि यही देवियां इधर लगजावें तो चर्खे का प्रचार सहज में सिद्ध हो जाता है। केवल एक बात ध्यान देने योग्य है और वह यह कि प्रत्येक शहर या ग्राम में जो २ इस के प्रचारक हों वे केवल अपने मेल जोल के मशहूर २ घरों में चर्खे दे २ कर अपने को कृतकार्य्य न समझें वरन अधिक परिश्रम से खोज कर के जो २ खाली स्त्रियां हों उन के पास भी पहुंचें और उन्हें उत्तेजना देकर चर्खे की ओर लगावें। और हम देवियों से प्रार्थना करते हैं कि वे अपने सब घरेलू कार्य्यों के साथ चर्खे को भी मिला लेवें जैसा कि पञ्जाबी स्त्रियां करती हैं और प्रति-दिन यदि दो चार घण्टे चर्खा न कात लेवें तो उस दिन को व्यर्थ बीता समझें। इस प्रकार कांग्रेस के प्रस्ताव का एक भाग अवश्य पूरा हो सकता है।

अब रहा एक करोड़ रुपया और एक करोड़ सभासद बनने का प्रश्न सो ३२ करोड़ आबादी में १ करोड़ सभासद बनना क्या कठिन है। केवल चार आना सालाना चन्दा देना है जो बड़ी रकम नहीं है। अतः प्रत्येक भारतीय नर व नारी को सभासद बनना चाहिये जिससे एक करोड़ क्या कई करोड़ सभासद हो जावें। स्त्रियों को भी बहु संख्या में इस में सम्मिलित होकर काम करना चाहिये न कि प्रत्येक कार्य्य में पुरुषों के मुँह की ओर ही ताकती रहजावें जैसा कि वे अब तक अपने सब कामों में करती रही हैं। इसी से उनमें स्वावलम्बन की शक्ति भी अब तक नहीं आई। आशा है कि अब स्वराज्य प्राप्ति के काम में तो वे चर्खे कातकर और सभासद बन कर अवश्य योग देंगी। एक करोड़ चन्दे का बड़ा फिकर है परन्तु महात्मा तिलक की यादगार में एक करोड़ रुपया चन्दा हो जाना भी क्या बात है। ३२ करोड़ की आबादी में यदि प्रत्येक कुछ न कुछ अवश्य अपनी सामर्थ्य के अनुसार देवे तो गरीब का एक पैसा और अमीर के सहस्रों रुपयों का दान मिलकर एक करोड़ अवश्य हो सकता है और प्रत्येक पुरुष यह भी अनुभव करेगा कि मैं भी स्वराज्य में योग दे रहा हूं। इस लिये उचित है कि वालन्टियर लोग हर एक से जो कुछ भी मिले चन्दा ले लेकर इकट्ठा करें और तिलक स्मारक फण्ड को शीघ्र एक करोड़ बना कर कृत्य कृत्य हों। आशा है सब नर नारी इन देश के ऋणों को चुका कर अपने मातृ ऋण से शीघ्र अऋण बनने का उद्योग करेंगे।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन।

हिन्दी साहित्य सम्मेलन का अधिवेशन इस वर्ष ईस्टर की छुट्टियों में कलकत्ते में बड़ी सफलता से समाप्त हुआ और हर्ष का विषय है कि माननीय लाला लाजपतराय जी तथा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

पण्डित दीनदयाल शर्म्मा जी के निमंत्रण पर आगामी अधिवेशन लाहौर में होगा। पंजाब, जैसा कि सब को विदित है, उर्दू तथा गुरुमुखी का प्रधान देश है। हिन्दी का प्रचार यहां बहुत कम है और हिन्दी साहित्य का तो यहां अभाव ही है। वर्तमान समय में "ज्योति" और "भारती" दोनों मासिक पत्रिकाओं को छोड़कर यहां हिन्दी का कोई पत्र भी नहीं है। अभी थोड़े ही दिन हुए यहां पर एक हिन्दी प्रचारिणी सभा खोली गई थी जिसके प्रधान पण्डित गिरधर शर्म्मा जी हैं परन्तु उस सभा ने कोई काम किया है या क्या कर रही है इसका भी कोई प्रत्यक्ष रूप से प्रमाण नहीं मिलता। यह सभा भी जन्मते ही मृत्यु का ग्रास हो गई है ऐसी अवस्था में पंजाब में हिन्दी साहित्य-सम्मेलन बुलाकर क्या लाभ होगा? कई वर्ष पूर्व भी एक बार इस सम्मेलन के अधिवेशन के यहां होने का प्रश्न था परन्तु वह होते होते रह गया। उस समय से अब तक कोई विचित्र परिवर्तन नहीं हो गया है जिसके आधार पर आगामी अधिवेशन की सफलता की आशा की जाय। अतः लाला जी तथा पण्डित दीनदयाल जी को कटिबद्ध होकर इधर लगना चाहिये और पंजाब में हिन्दी की उन्नति के साधनों पर परामर्श करके उनको उपयोग में भी लाना चाहिये। पंजाब में हमारे सनातनी भाइयों ने जिस २ काम में हाथ डाला है उसमें पूरा नहीं पड़ा यह लाँछन है और हिन्दी प्रचारिणी सभा भी सनातनी भाइयों के हाथ में होने से कुछ उपयोगिता न लाभ कर सकी है। आर्य्य समाजियों और सिक्खों के अनेकानेक काम उन्नतिशील हो रहे हैं। अतः समीर सनातनी भाइयों को भी उचित है कि वे अपने ऊपर से इस दोष को हटाने का शीघ्र उद्योग करें और हिन्दी प्रचारिणी सभा को जीवित जागृत संस्था बना कर हिन्दी साहित्य की वृद्धि करने में दत्तचित्त होजावें और लाला जी को भी चुप नहीं रहना चाहिये। यदि हिन्दी साहित्य-सम्मेलन को सफल बनाना है, यदि पंजाब का नाम हिन्दी साहित्य सेवियों की श्रेणी में लिखवाना अभीष्ट है तो इसी समय से हिन्दी के प्रचार में हिन्दी साहित्य की वृद्धि और हिन्दी प्रचारिणी सभा को जीवित जागृत बनाने में जो कुछ आवश्यक हो तन, मन, और धन सभी न्योछावर करना चाहिये तभी वे अपने निमंत्रित हिन्दी साहित्य सम्मेलन का यथोचित आतिथ्य कर सकेंगे अन्यथा नहीं।

किधर विपिन बाबू।

इस फाल्गुण मास में बङ्गाल की प्रान्तीय राजनैतिक परिषद् की बैठक हुई। सभापति थे न केवल बङ्गाल के किन्तु समस्त भारत के विख्यात वाग्मी बाबू विपिन चन्द्र पाल। सभापति के पद से उन्होंने जो भाषण पढ़ा है उसे देख कर देश के सभी लोग चकित हैं। यदि हम उस भाषण की एक वाक्य में आलोचना करना चाहें तो कह सकते हैं कि भाषण का देश भी अयुक्त था, काल भी अयुक्त, और विषय भी अयुक्त। सब से पहिले भाषण का देश अयुक्त था। उस स्थान में जनता विपिन बाबू के मुख से स्वराज्य की फक्किकाएं सुनने के लिए इकट्ठी न हुई थी किन्तु सीधे साधे साफ़ शब्दों में अपने नेताओं का सन्देशा सुनने के लिए इकट्ठी हुई थी। हमारा यह तात्पर्य्य नहीं कि सभापति महोदय को तर्क की तिलाञ्जलि देकर केवल आवेगमय धूआंधार वक्तृता झाड़नी चाहिये थी किन्तु हां इसमें सन्देह नहीं कि यह स्वराज्य

CC-0. Gurukul Kangri Uniersity Haridwar Collection. Digitized by eGangotri

रूप कामधेनु के घर बुलाने के उपाय सोचने का समय था सींग और दांत गिनने का नहीं।

वह काल अयुक्त था क्योंकि सभापति महोदय ने अपने भाषण में समझौते की बात उठाई है इस का वहां कोई अवसर न था। समझौता तभी हो सकता है जब दोनों दल उस के लिये तय्यार हों। अभी सरकार की ओर से समझौते का कोई लक्षण नहीं। जब सरकार के झण्डे पर हथकड़ी और बेड़ियां लटकी हों, और जब कि अभी रायबरेली की गोलियां की याद ताज़ी हो ऐसे समय में समझौते की बात उठाना अपने दुर्ग पर श्वेत झण्डा उड़ाने के समान ही है। क्या हम ने पूर्ण विजय प्राप्त कर ली है जो अभी से सन्धि चर्चा में लग जाएं?

इसके अतिरिक्त विषय की दृष्टि से भी सभापति महोदय ने गोलमाल उत्पन्न किया है। स्वाराज्य आन्दोलन की आलोचना में उन्हों ने बहुत सा भाग पुराने बङ्गाल आन्दोलन और नए आन्दोलन की समानता बतलाने में लगाया है, इसमें हमें विशेष वक्तव्य नहीं है। विपिन बाबू कहते हैं वर्तमान आन्दोलन लगभग पुराने आन्दोलन का पुनर्जात रूप है। होगा, हमें विवेचना तो इस आन्दोलन की करनी है। इसकी आलोचना में विपिन बाबू ने अपने विषय के दो भाग किये हैं, पहिले भाग में यह बताया गया है कि हमें किस प्रकार का स्वराज्य चाहिये; दूसरे भाग में उसके साधनों पर विचार किया है, जिसमें प्रसङ्ग वश महात्मा गान्धी उनके कुटिल कटाक्ष, और वृटिश शासन कृपा कटाक्ष के पात्र हुये हैं।

वर्ग शासन।

पहिले स्वराज्य के रूप को ही लीजिये। यद्यपि हम कह चुके हैं कि यह गांव बसने से पहिले दीवारें गिनने की सी बात है और स्वयं विपिन बाबू ने भी इस बात को अनुभव किया है परन्तु जब विषय छिड़ गया तो लगे हाथ इस पर भी थोड़ा विचार कर लेना चाहिये। विपिन बाबू साम्राज्य की शक्ति के नाभि-सञ्चय के विरोधी हैं। आप का कहना है कि राज्य की एक केन्द्रस्थ शक्ति होने से वर्गशासन [Class rule] की स्थापना हो जाती है। प्रथम तो हम यही पूछना चाहते हैं कि वर्ग शासन क्यों बुरा है? जब तक किसी वर्ग में जड़ता नहीं आगई, जब तक उस वर्ग में निकम्मे अवयवों को निकालने और नया योग्य अवयवों को लेने की शक्ति बनी है तब तक उस वर्ग ने क्या अपराध किया है कि उससे उपयोग न लिया जाय? यही नहीं हम तो यह पूछना चाहते हैं कि क्या संसार में तीनों कालों में कोई वर्ग रहित शासन सम्भव भी है? विपिन बाबू का क्या मतलब है? क्या भारत के समस्त ३२ करोड़ आदमी एक दूसरे पर शासन करेंगे? यदि नहीं, तो अवश्य वह शासनाधिकार कुछ मनुष्यों को दिया जायगा। तब वह एक वर्ग बन ही जायगा। विपिन बाबू का उत्तर सम्भवतः यह है कि ग्राम्य जीवन की रक्षा द्वारा अनेक छोटे २ वर्ग बन जाएंगे; तब यदि एक विशाल वर्ग बुरा है तो अनेक छोटे २ वर्ग अच्छे क्यों होंगे?

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri and Sarayu Foundation USA

११०५७३

वनिता विनोद

स्त्री उपयोगी स्त्रियों द्वारालिखित लेखों का संग्रह।

विषय सूची।

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
१—स्त्री जगत्—	७५२	३-रामायण काल में स्त्रियों की उच्च स्थिति तथा कर्तव्य-निष्ठा—(ले० "गौतमी")	७५७
२—सितारा लैस-(ले० श्रीमती ओ३म्वती देवी)	७५३		

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आर्य्य नारी सेवक सभा का साधारण अधिवेशन।

आज २६ मार्च १९२१ शनिवार को ४॥ बजे 'ज्योति' कार्य्यालय, लाहौर में आर्य्य नारी सेवक सभा का साधारण अधिवेशन हुआ जिस में श्रीमती भाग्यवती जी ने सामयिक सभा-धिष्ठात्री का आसन ग्रहण किया और सभा का कार्य्य प्रारम्भ किया गया।

पहिले मंत्रिणी ने पिछले वर्षों की रिपोर्ट सुनाई उसके बाद आग से जल कर नष्ट हुये पुराने हिसाब किताब की जांच की गई और फिर से भराये हुये प्रवेशपत्रों की फाइल की भी पड़ताल की गई और सब ठीक पाया गया।

इसके बाद कई सभासदाओं के आये हुये पत्रों पर विचार हुआ और सभा के अगले वर्ष के कार्य्य का निश्चय होकर ये प्रस्ताव सर्व सम्मति से पास हुये:—

१. मार्च १९२१ से फर्वरी १९२२ के बीच में लाहौर, अमृत्सर, अम्बाला और दिल्ली इन चारों स्थानों में प्रचार किया जावे और स्थानिक सभासदायें इसका प्रबन्ध करें तथा प्रचार के साथ २ द्रव्य भी इकट्ठा किया जावे।

२. सभा की रजिष्ट्री अवश्य करा ली जावे।

३. मार्च १९२१-१९२२ में रजिष्ट्री कराने पर जो व्यय हो वह, मैजिक लैन्टर्न के वास्ते १०५) लगभग तथा यदि प्रचार में द्रव्य इकट्ठा न हो तो उसका भी व्यय सभा देगी। इसके अतिरिक्त साधारण व्यय के लिये पूर्व नियत द्रव्य व्यय हो सकेगा।

४. बिसवां कन्या पाठशाला व आश्रम सभा ले लेगी और उसका सारा प्रबन्ध देखेगी किन्तु शिक्षा सम्बन्धी सब प्रश्नों की सिद्धि के लिये अन्तरंग सभा द्वारा एक विद्यासभा बनाई जावे जिस में चार अन्तरंग सभा की निर्वाचित सभासदायें होंगी और तीन योग्य प्राप्त पुरुष होंगे जिन्हें अन्तरंग सभा नियत करेगी।

५. सभा के उपनियम धारा ४. (क) में इस प्रकार परिवर्तन किया गया—किसी विशेष अवस्था में—जिसका निश्चय अन्तरंग सभा करेगी—मासिक चन्दा न देने वाली स्त्री भी सभा में प्रवेश कर सकेंगी और १) से कम चन्दा देने वाली स्त्री प्रधाना वा मंत्रिणी की आज्ञा से सभासदा बन सकेंगी।

उपनियम धारा १९ में इस प्रकार परिवर्तन हुआ:—

यदि एक बार विज्ञापन देने पर अन्तरंग नैमित्तिक या वार्षिक सभा की सभासदाओं की नियत संख्या उपस्थित न हो तो मंत्रिणी व प्रधाना की आज्ञा से निर्दिष्ट विषयों पर सभासदाओं की लिखित सम्मति ले सक्ती है और जो बहुपक्ष से निश्चित होगा वह सभा की सम्मति समझी जायगी।

अगले वर्ष के लिये निम्न लिखित अधिकारणीं निर्वाचित की गईं:—

प्रधाना—श्री० विद्यावती जी धर्मपत्नी बा० माधोदास जी।

उप प्राधान—(१) श्री० विद्यावती जी धर्मपत्नी डा० चुन्नीलाल जी।

„ (२) श्रीमती सुशीलवती देवी।

„ (३) श्री० विद्यावती जी धर्मपत्नी ला० गंगाराम जी।

मंत्रिणी—विद्यावती सेठ।

उपमंत्रिणी—श्रीमती भाग्यवती जी।

कोषाध्यक्षा—श्रीमती ओ३म् वती जी।

पुस्तकाध्यक्षा—विद्यावती जी धर्मपत्नी बा० बद्रीप्रसाद जी।

अन्तरंग सभा की प्रतिप्रुत सभासदायें ये हैं:—

श्रीमती राधारानी देवी जी

श्रीमती कौशल्या देवी, विशारदा।

अन्य कुछ कार्य्य न होने के कारण सभा विसर्जित हुई।

ह० विद्यावती सेठ
मंत्रिणी
२६—३—२१

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

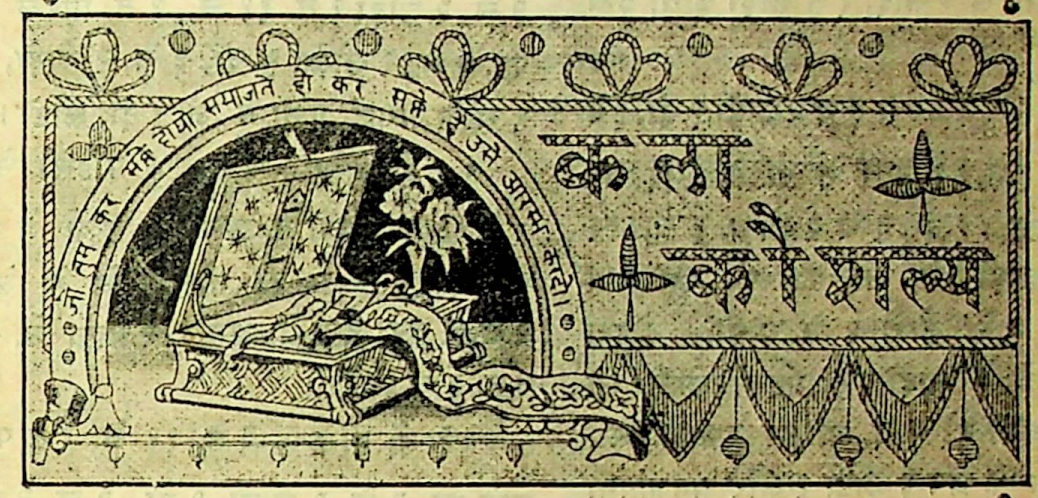

सितारा लैस।

यह लैस कोने सहित है। यदि ३० नं के धागे और ५½ नं के क्रोशिये से इसे बनावें तो बहुत अच्छी २¾ इंच चौड़ी लैस बन जाती है।

संकेत—चेन के लिये "चे", दोहरे क्रोशिये के लिये "दो", तेहरे क्रोशिये के लिये "ते", सादे फन्दे के लिये "सा"।

"बटा हुवा तेहरा" दो चेन के छल्लों के ऊपर आधा २ बनता है। इसकी बनावट बीच में जहां पर आती है वहां लिखी है।

इसमें प्रत्येक फूल में एक २ आठ पत्तियों का सितारा जैसा फूल है सो साथ ही बनता है पीछे चेनों की गोलाई से जोड़ दिया जाता है।

अरम्भ में ४४ चेन करो।

१ पंक्ति—३ चे छोड़ो, १ ते अगली प्रत्येक ३ चे में, ३ चे, २ चे छोड़ो। १ दोहरा अगली चे में ३ चे, २ छोड़ो १ ते, ११ चे ५ छोड़ो, १ ते, ३ चे, २ छोड़ो, १ दो, ३ चे, २ छोड़ो, १ ते, ११ चे, ५ छोड़ो, १३ ते, ३ चे, लौटो।

२ पंक्ति—पहिला ते छोड़ो, ११ ते, अन्तिम ते और ११ चे में की पहिली २ चे छोड़कर अगली सात चे. में सादे बीनो। अगली २ चे छोड़ो फिर २ चे, और एक बटा हुआ तेहरा बनाओ इस प्रकार—क्रोशिये पर धागा चढ़ाओ फिर उसे पहिले ३ चे के छल्ले में डालो, धागे को दो फन्दों में से निकालो फिर धागा चढ़ाओ और क्रोशिये को दूसरे ३ चे. के छल्ले में डालो और धागे को दो फन्दों में से निकालो फिर और फन्दों को भी बीन दो—२ चे, ११ चे, ते की २ चे छोड़ो, ७ सादे अगली ७ में २ चे, १ बटा हुवा तेहरा अगले दो ३ चे के छल्लों में, २ चे, ४ ते ते पर ३ चे, लौटो।

३ पंक्ति—३ ते. ते. पर, ११ चे, १ ते. पहिले सादे पर, ३ चे, २ छोड़ो १ दो, ३ चे, २ छोड़ो, १ ते, ११ चे ७ ते सादों पर, ९ ते ते. पर, ५ चे, लौटो।

४ पंक्ति—४ ते छोड़ो, १२ ते, २ चे. छोड़ो ११ चे की तीसरी से ७ सादे, २ चे, १ बटा

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

हवा तेहरा अगले २ चे के छल्लों में, २ चे, ११ चे के तीसरे से ७ सादे, १ ते छोड़ो ३ ते, ३ चे लौटो।

५, ६ पंक्ति—३ ते, ३ चे, २ छोड़ो, १ दो, ३ चे २ छोड़ो, १ ते, ११ चे १ ते पहिले सादे पर ३ चे, २ छोड़ो १ दो, ३ चे २ छोड़ो, १ ते, ११ चे, ५ ते छोड़ो ७ ते, अब फूल को इस तरह बनाओ:-९ चे, लौटो-२ चे छोड़ो, १ दोहरा ५ ते, १ दो, १ सादा यह पहिली छोटी सी पत्ती है, बची हुई ९ चे. अन्तिम पत्ती के लिये रहेंगी, जो कि जब ६ छोटी २ और बनजांयगी तब बनेगी। दूसरी पत्ती के लिये, ९ चे बनाओ, २ छोड़ा, १ दोहरा, ५ ते, १ दो १ सादा बीच में पहिले सादे के साथ। इसी प्रकार ५ पत्तियां और बनाओ तब १ दोहरा सब पत्तियों के बीच में बनाओ। इस प्रकार कि एक ओर ४ पत्ती हों दूसरी ओर ३ पत्ती ९ चे हों इस को खूब मिला दो। पहिली पत्ती के पास की ९ चे में बनाओ १ दोहरा, ५ ते, १ दो, २ पिछली चे. छोड़ो, और ७ ते में का पहिला ते छोड़कर ५ ते ते पर बीनो ११ चे में की दो चे छोड़ो, ७ सादे, २ चे, १ बटा हुवा तेहरा दो छल्लों में २ चे, ११ चे में की २ चे छोड़ो, ७ सादे, २ चे, १ बटा हुआ ते दो छल्लों में, २ चे, ४ ते ते पर, ३ चे, लौटो।

७ वीं पंक्ति—३ ते, ११ चे, १ ते पहिले सादे पर, ३ चे २ छोड़ो, १ दो, ३ चे, २ छोड़ो, १ ते, ११ चे, १ ते पहिले सादे पर ३ चे, २ छोड़ो, १ दो, ३ चे, २ छोड़ो १ ते, २ चे, फिर एक सादे फन्दे से न जुड़ी हुई पत्ती को जोड़ लो, २ चे लौटो।

८ वीं पंक्ति—१ बटा हुवा तेहरा २ चे, ११ चे में से २ छोड़ो, ७ सादे, २ चे, १ बटा हुवा तेहरा २ चे २ चे छोड़ो, १ सादे, ३ ते, ३ चे, लौटो।

९ वीं पंक्ति—३ ते, ३ चे, २ छोड़ो, १ दो, ३ चे, २ छोड़ो १ ते, ११ चे, १ ते पहिले सादे पर, ३ चे, २ छोड़ो, १ दो, ३ चे, २ छोड़ो, १ ते ९ च से अगली पत्ती में जोड़ दो, लौटो।

१० वीं पंक्ति—७ सादे ७ पहिली चे पर २ चे, १ बटा हुवा ते, अगले २ छल्लों में २ चे, ७ सादे ११ चे में की तीसरी चे से लेकर, २ चे, १ बटा हुवा ते अगले २ छल्लों में, २ चे, ४ ते, ३ चे लौटो।

११ वीं पंक्ति—३ ते, ११ चे, १ ते पहिले सादे पर, ३ चे, २ छोड़ो, १ दो, ३ चे, २ छोड़ो १ ते, ११ चे, १ ते पहिले सादे पर, ३ चे, २ छोड़ो १ दो, ३ चे, २ छोड़ो. १ ते, ९ चे से अगली पत्ती में जोड़ दो, लौटो।

१२ वीं पंक्ति—७ सादे ७ चे. पर २ चे, १ बटा हुवा ते, २ चे, ७ सादे ११ चे में की तीसरी चे से, २ चे, १ बटा हुवा ते, २ चे, ७ सादे ११ चे में की तीसरी चे से, ३ ते, ३ चे, लौटो।

१३ वीं पंक्ति—३ ते, ३ चे, १ दो, ३ चे १ ते, ११ चे, १ ते पहिले सादे पर, ३ चे, १ दो ३ चे, १ ते, ११ चे, ७ ते ७ सादे पर, अब फूल के चारों और इस प्रकार बनाओ। ७ चे, १ दो पहिली बिना जुड़ी पत्ती पर, ७ चे, १ दो दूसरी बिना जुड़ी पत्ती पर ८ चे, १ दो दूसरी पत्ती पर ७ चे, १ दो ४ थी पत्ती पर ७ चे, १ सादा तेहरों की कोशिये के पास की दो लाइनों के बीच में २ चे, १ सादा ७ तेहरों की दूसरी पंक्ति के तले में, लौटो।

१४ वीं पंक्ति—७ ते, ७ चे पर, १ ते. ते. पर, ७ ते अगली ७ चे पर, १ ते. ते पर, ४ ते ४ चे पर, ३ ते अगली चे में, ४ ते बची हुई ४ चे पर, १ ते ते पर, ७ ते ७ चे. पर, १ ते. ते. पर, ७ ते. ७ चे. पर, ६ ते. ते. पर, ११ चे में की ते तेहरों

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

७ सादे, २ चे, १ बटाहुवा ते., २ चे, ७ सादे ११ चे में की तीसरी चे. से, २ चे १ बटा हुवा ते, २ चे., ४ ते. ते. पर, ३ चे., लौटो।

१५वीं पंक्ति–३ ते., ११ चे., १ ते पहिले सादे पर, ३ चे., १ दो., ३ चे., १ ते., ११ चे., १३ ते. सादों और तेहरों पर तब–२ चे, १ ते छोड़ो १ ते अगले ते पर इस प्रकार फूलकी गोलाई के चारों ओर बीनो अन्तमें १ सादा ५ चे की तीसरी सामने चे. में तब ३ सादे चे के साथ कोने तक लौटो।

१६वीं पंक्ति–२ चे, और १ ते. घुमाव के चारों ओर पिछले खाने में २ ते., तब १२ ते. ते पर, ७ सादे ११ चे में की तीसरी चे. से. २ चे., १ बटा हुवा ते., २ चे., ७ सादे, ३ ते., ३ चे. लौटो।

१७वीं पंक्ति–४ ते., ३ चे, १ दो., ३ चे, १ ते., ११ चे., १ ते पहिले सादे फन्दे पर ३ चे., १ दो, ३ चे, १ ते., ११ चे, ५ ते छोड़ो, १० ते ते पर, ३ ते पहिले खाने में, फिर ३ चे और १ ते, फूल की सारी गोलाई में बनाते जाओ और अन्त में १ सादा और ३ सादे चे के साथ २ लौटो।

१८वीं पंक्ति–३ चे., १ दो पहिले ते पर, फिर ७ चे, १ दो २ सरी चे पर घुन्डी बनाने के लिये, २ चे, १ दो अगले ते पर इस प्रकार सारी गोलाई में घुन्डियें बना कर अन्त में ३ चे, १३ ते में से पहिले पर १ सादा फिर ३ चे., १ ते सादे के साथ उसी ते. में, १२ ते. ते. पर, ७ सादे ११ चे. की ३सरी से, २ चे., १ बटा हुवा ते २ छल्लों में, २ चे, ७ सादे ११ चे के ३सरी से, २ चे., १ बटा हुवा ते., २ चे., ४ ते. ते. पर, ३ चे, लौटो।

अब तीसरी पंक्तिसे लेकर जितनी लेस अवश्यक हो बराबर बनाती जाओ।

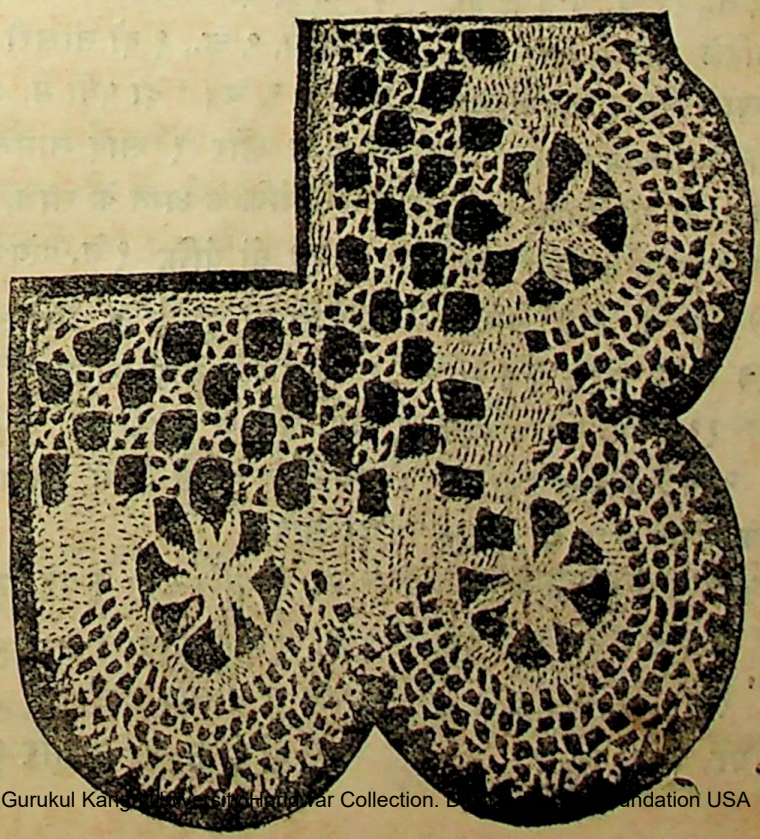

CC-0. Gurukul Kangri Vishwavidyalaya Siddhanta Gurukul Collection. Digitized by eGangotri Foundation USA

कोने के लिये–लेस की १४ वीं पंक्ति से जो कि घुमाव की तीसरी लकीर है कोना बनाना आरम्भ करो। इसमें सब उसी तरह बनता है केवल अन्त में ३ ते छोड़ कर अर्थात् १ ते ४ ते के पहिले नोक फिर १४ चे. लौटो।

१५वीं पंक्ति–१ ते पहिले सादे पर, ३ चे., १ दो ३ चे., १ ते., ११ चे., ७ ते. ७ सादों पर, ६ ते. ते. पर, फिर २ चे., १ छोड़ो., १ ते इस * चिन्ह से घुमाव के चारों ओर बार २ समाप्ति पर ३ सादे ५ चे के तीसरे से लौटो।

१६वीं पंक्ति–२ चे और १ ते ते पर घुमाव के चारों ओर, २ ते अन्तिम ख़ाने में १२ ते. ते पर ७ सादे ११ चे के तीसरे से, २ चे., १ बटा हुवा ते., २ चे., ७ सादे १४ चे के तीसरे से, लौटो।

१७वीं पंक्ति–५ चे., २ छोड़ो, १ दो, ३ चे., २ छोड़ा., १ ते., ११ चे., १ ते पहिले सादे पर, ३ चे., १ दो, ३ चे., १ ते., ११ चे., ५ ते छोड़ो, १० ते ते पर, ३ ते पहिले ख़ाने में फिर ३ चे. १ ते ते पर घुमाव के चारों ओर ३ सादे पहिली पंक्ति के अन्त से तेहरों के साथ, लौटो।

१८वीं पंक्ति–३चे., १ दो ते. पर. फिर (७ चे. १ दो दूसरी चे में घुन्डी बनाने के लिये २ चे., १ दो. अगले ते पर) घेरे के गिर्द समाप्ति पर. ३ चे. १ सादा १३ ते. के पहिले में ३ चे., १ ते उसी ते में., और ११ ते. ते. पर, ७ सादे ११ चे. के तीसरे से, २ चे., १ बटा हुवा ते., २ चे., ७ सादे ११ चे के तीसरे से, २ चे., १बटा हुवा ते, २ चे, १ ते. ५ चे के तीसरे में, लौटो।

१९वीं पंक्ति–१४ चे, १ ते पहिले सादे पर, ३ चे., १ दो, ३ चे., १ ते., ११ चे., ७ ते, ७ सादों पर, १० ते. ते. पर, ५ चे., लौटो।

२०वीं पंक्ति–४ ते छोड़ो, १३ ते., ७ सादे ११ चे के तीसरे से, २ चे., १ बटा हुवा ते, २ चे., ७ सादे १४ चे के तीसरे से, ३ चे., लौटो।

२१वीं पंक्ति–६ ते. सादों पर; ११ चे., ७ ते., ७ सादों पर, ११ चे., ५ ते छोड़ो, ७ ते।

अब फूल से आगे—१९ चे., २ छोड़ो १ दो., ५ ते., १ दो., १ सादा। अगले ६ पत्तों के लिये ९ चे. बनाओ, २ छोड़ो १ दो., ५ ते., १ दो, १ सादा बीच में और सादों के साथ। जब ७ पत्तियां बन जांय तब-बीचों बीच में दोहरा क्रोशिया बनाओ जैसा आगे कहा गया है, ८ वीं पत्ती पहिले के ९ चे पर बनाओ; फिर ७ ते. ते. पर, १ सादा बायीं ओर चेनके छल्ले की तीसरी में, ७ चे, १ सादा पहिली पत्ती में, लौटो।

२२ वीं पंक्ति–सादे ७ चे पर लौट कर, ३ चे., अगले छल्ले की २ चे छोड़ो, १ सादा तीसरी चे. में, लौटो और ६ ते. सादों पर बनाओ। अब ६ पत्तियों के किनारे इस प्रकार बीनो—७ चे., १ दो पहिली पत्ती में, ७ चे., १ दो दूसरी में, ९ चे., १ दो तीसरी में, ७ चे., १ दो ४थी में, ९ चे., १ दो ५वीं में, ७ चे., १ दो ६ठी में, ७ चे और १ सादे सामने वाले ७ ते. की दूसरी पंक्ति के अन्त के साथ, लौटो।

२३ वीं पंक्ति–१ ते. प्रत्येक चे. और दोहरे क्रोशिये पर घुमाव के चारों ओर, ७ ते. ते पर, १ सादा बायें छल्ले की तीसरी चे. में। अब बायीं ओर के तेहरों पर ६ ते बनाओ, १ दो अगली चे के तीसरे में, लौटो और पहिले ४ ते पर सादे।

२४ वीं पंक्ति–१० ते पर फिर २ चे., १ छोड़ो १ ते., घुमाव के चारों ओर अन्त में ५ चे के तीसरे से ४ सादे लौटो।

२५ वीं पंक्ति–२ चे. और १ ते ते पर घुमाव

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

के गिर्द २ ते. पिछले खाने में, १० ते. ते. पर., १ सादा बायें तेहरों के अन्तिम तेहर में फिर ऊपर को, २ चे।

२६ वीं पंक्ति–१२ ते. ते पर, ३ ते पहिले खा के नीचे–३ चे, १ ते. ते. पर घुमाव के गिर्द, अन्त में ३ सादे बायीं ओर के अगले तेहरों के अन्त पर, लौटो।

२७ वीं पंक्ति–३ चे., १ दो. ते. पर फिर (७ चे., १ दो दूसरी चे. पर घुन्डी के लिये, २ चे., १ दो ते पर) घुमाव के गिर्द अन्त में ३ चे. १ सादा १३ ते के पहिले पर, फिर ३ चे., १ ते. उसी घर में, १५ और ते. ते. पर, अगले छल्ले की ३सरी चे. में सादा, ४ ते बांयी ओर के पहिले ४ ते. पर, लौटो।

२८ वीं पंक्ति–१० ते. ते. पर, ५ चे., लौटो।

२९ वीं पंक्ति–३ ते. छोड़ो, ७ ते. ते पर, ३ ते ४ ते के एक ओर, १ सादा सामने वाले कोने के ते. पर, धागा समाप्त कर तोड़ दो।

३० वीं पंक्ति–धागे की लेस के अन्दर की ३ लौटने वाली चनों के साथ जोड़ो, और ३ ते. पहिले खाने में बनाओ, १ ते. ते. पर, ३ चे., २ छोड़ो, १ दो, ३ चे., २ छोड़ो, १ ते., ११ चे., २ छोटे खाने छोड़ो, १ ते. ते. पर, ३ चे., २ छोड़ो, १ दो, ३ चे., २ छोड़ो, १ ते., ११ चे., सीधा खड़ा हुआ ते., और अन्तिम पंक्ति के ३ ते. छोड़ो, ७ ते. ते. पर, १९ चे., आगे फूल के लिये जिस प्रकार १५ पंक्ति से बताया है बनाते जाओ।

—:o:—

रामायण काल में स्त्रियों की उच्च स्थिति तथा कर्तव्य निष्ठा।

लेखिका—"गौतमी"

प्रायः सभी ऐतिहासिक इस बात में सहमत हैं कि किसी ज़माने की उन्नति या अवनति देखना हो तो उस ज़माने की महिला समाज की स्थिति का वर्णन पढ़ना चाहिये। स्त्रियों की स्थिति ही कसौटी है जिस पर घसने से किसी सभ्यता का खरा खोटा होना निश्चित होता है। जब हम इस कसौटी पर प्राचीन रामायण काल की सभ्यता को कसते हैं तो हमें पता लगता है कि उस समय की सभ्यता कितनी उच्च थी। रामायण काल में स्त्रियों में धार्मिक भाव, कर्तव्य निष्ठा, ईश्वर पर विश्वास, वेद स्मृतियों के अनुकूल व्यवहार इत्यादि कूट २ कर भरे हुए थे। उस समय की रानियें महारानियें भोग विलास में मस्त होकर अपने नित्य दैनिक कर्मों को नहीं त्यागती थीं और न विपत्ति में डूबी हुई अपने नैत्यिक कर्मों से विमुख हो जाती थीं किन्तु महर्षि वाल्मीक जी की रामायण उठाकर देखो तो स्थान २ पर स्त्रियों की कर्तव्य परायणता के दृश्य मिलते हैं और जगह २ पर उन की पूजा सत्कार का वर्णन है। रामायण किसी आधुनिक मत की पुस्तक नहीं जिस का मत आर्य्य समाजियों के लिये हो सनातन धर्म्मावलम्बियों या अन्य भारतीय मतवालों के लिये हो बल्कि इसके विपरीत वह एक ऐतिहासिक पुस्तक है भारत की प्राचीन स्त्री दशा का निष्पक्ष ज्वलन्त चित्र उस में पाया जाता है

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

जो कि समग्र भारतीय स्त्रियों के लिये अनुकरणीय और गौरव का स्थान है। अपनी पूर्वजाओं की स्थिति का स्मर्ण कर के उन की कर्तव्य परायणता का अनुकरण करना चाहिये। देखिये स्त्रियों का कैसा मान है? कैसी कर्तव्य परायणता है? महाराज दशरथ ने एक पत्नीव्रत का भंग किया किन्तु महाराणी कौसल्या में बदले का भाव नहीं, वह उसी प्रकार पति भक्ता है। महाराज दशरथ जब कैकयी के अन्तःपुर में जाते हैं और उन्हें पता लगता है कि वह रुष्ट हुई है तो वे उसे मनाते हैं, वर देने की प्रतिज्ञा करते हैं किन्तु जब वर के रूप में महाराणी कैकेयी रामचन्द्र जी का बनवास मांगती है तब महाराज दशरथ जी को कौसल्या के गुण याद आते हैं उस समय हठात् उन के मुख से ये शब्द निकल पड़ते हैं :—*"रामचन्द्र के बन चले जाने पर कौसल्या मुझे क्या कहेगी? और इस तरह का घोर अप्रिय काम कर के मैं भी उसे क्या उत्तर दूंगा? आगे भी जब २ प्रिय पुत्र वाली प्रिय भाषिणी कौसल्या दासी की भांति या सखी की भांति पत्नी की तरह, भगिनी की तरह अथवा माता की तरह हमेशा मेरे कल्याण की इच्छा से मेरी सेवा करती रही है तब भी मैंने तुम्हारे लिये उस सत्कार के योग्य देवी का सत्कार नहीं किया यह बात आज मुझे दुःखित कर रही है"।

देवी कौसल्या की कर्तव्यपरायणता आज दशरथ के आंखों के आगे नाच रही है, उन का अन्तःकरण उसे याद कर व्यथित हो रहा है यद्यपि कौसल्या देवी को अभी उस का ज्ञान भी नहीं है। यह तो एक साध्वी देवी का उदाहरण है किन्तु उस काल में स्त्री जातिमात्र के लिये ही बड़ा मान था जिस का प्रत्यक्ष प्रमाण भरत तथा शत्रुघ्न की बातचीत में पता लगता है। उस दृश्य को याद कीजिये जब कि राम के बनवास चले जाने पर भरत शत्रुघ्न मामा के घर से लौट कर आते हैं और राम लक्ष्मण का बनवास देख कर माता पर कोप करते हैं। शत्रुघ्न को ज्ञात होता है कि दासी मन्थरा ही इस सारे झगड़े की जड़ है तो विवश होकर उस के केश पकड़ कर सहसा घसीटने लगते हैं। उस की यह आर्त दशा देख कर भरत जी इस प्रकार कहते हैं—†" शत्रुघ्न! स्त्रियें सब प्राणी मात्र में अवाध्य

---

* किं मां वक्ष्यति कौसल्या राघवे बनमास्थित ॥६७॥
किं चैनां प्रति वक्ष्यामि कृत्वा विप्र मीदृशं।
यदा यदा च कौसल्या दासीव च सखीव च ॥६८॥
भार्या बद्भगिनीवच्च मातृवच्चोपतिष्ठति ।
सततं प्रिय कामा मे प्रिय पुत्र प्रियंवदा ॥६९॥
न मया सत्कृता छेवी सत्कारा ही कृत तव।
इदानी तत्तपति मां यन्मया सुकृतं त्वयि ॥७०॥

† तं प्रेक्ष्य भरतः क्रुद्धं शत्रुघ्नमिदमब्रवीत् [अयोध्या० ७९ सं०]
अवध्यः सर्व भूतानां प्रमदाः क्षम्यता मिति ॥२१॥
हन्या मह किमां पापां कैकेयीं दुष्ट चारिणीम्।
यदि मां धार्मिको रामो ना सूयेन्मातृ घातकम् ॥२२॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

होती है अतः क्षमा करो। मैं इस मन्थरा दुराचारी कैकेयी को मार देता यदि मुझे यह भय न होता कि धर्म पथ पर चलने वाला राम माता का घात करने वाले मुझ को निरादर की दृष्टि से देखेगा। यदि राघव इस कुबड़ी को पीटा हुई भी सुन लेगा तो धर्मात्मा राम मुझ से और तुझ से निश्चय कर के बोलेगा भी नहीं"।

भरत के इस वचन को सुन कर शत्रुघ्न इस अकार्य्य से हट गया।

और आगे चलिये तो स्त्री समाज के आदर का एक और ज्वलन्त प्रमाण किष्किन्धा काण्ड में मिलता है।

वर्षा ऋतु के समाप्त होने पर भी जब सुग्रीव अपनी प्रतिज्ञानुसार रामचन्द्र जी की सहायता के लिये नहीं पहुँचा तब रामचन्द्र जी को फिकर हुआ कि कहीं भोग-विलास में लग कर सुग्रीव अपनी प्रतिज्ञा को भूल न गया हो और कृतघ्न बन कर हमें छोड़ देवे अतः वह लक्ष्मण जी को किष्किन्धा भेजते हैं कि जाकर खबर लावे कि वास्तव में क्या होरहा है। लक्ष्मण जब उस नगरी में पधारते हैं उन्हें सुग्रीव की भोगतृष्णा का पता चलता है तो उन्हें बड़ा क्रोध चढ़ता है, उन्हें रूष्ट देख कर सम्पूर्ण नगर निवासी चिन्तित होजाते हैं। क्रुद्ध लक्ष्मण के आगमन की चर्चा सुग्रीव तक पहुँचती है। सुग्रीव अपने बचाव तथा लक्ष्मण की शान्ति का कोई अन्य उपाय न देख कर उनका स्वागत करने के लिये तारा को भेजते हैं। उस समय सुग्रीव तारा से सलाह करता और कहता है:—हे अनिन्दिते! कोमल स्वभाव वाले कुमार लक्ष्मण के कोप का क्या कारण है? अकारण क्रोध तो इनको हो नहीं सक्ता। यदि हमारे किसी अप्रिय काम से उन्हें क्रोध हो तो जो तुम्हें उचित प्रतीत हो उपाय करो अथवा तुम स्वयं उनसे मिलो और अपने शान्तिदायक वचनों से उन्हें शान्त करो। तुम्हारे * देखने मात्र से शुद्धात्मा लक्ष्मण कोप छोड़ देंगे क्योंकि महात्मा लोग स्त्रियों के प्रति कठोरता धारण नहीं करते ऋषि वाल्मीकि जी कहते हैं कि महात्मा † लक्ष्मण वनराज की पत्नी को आयी देख कर उदासीन भाव से नीचे मुख किये सब कोपादि दूर करके खड़े रहे क्योंकि स्त्री के समीप होने मात्र से ही उनका क्रोध दूर होगया। देखिये स्त्रियों के प्रति कैसे उदार भाव तथा आदर और विनय नम्रता होती थी। स्त्रियों की प्रतिष्ठा का दिग्दर्शन हो चुका है अब केवल संक्षेप से उनकी नैतिक कर्मनिष्ठा तथा परमेश्वर पर विश्वास का वर्णन करना है जिन के कारण महिला समाज की इतनी प्रतिष्ठा थी। देवी कौसल्या की पति भक्ति का ऊपर उल्लेख हो चुका है अब उसकी

इमामपि हतां कुब्जां यदि जानाति राघवः।
त्वां चैव मां च धर्मात्मा नाभिभाविष्यते ध्रुवम॥२३॥
भरतस्य वचः श्रुत्वा शत्रुघ्नो लक्ष्मणानुजः।
व्यवर्तत ततो दोषात्तां मुमोच समूर्छिताम्॥२४॥

* त्वद्दर्शने विशुद्धात्मानास्य कोपं करिष्यति [किष्किन्धा० ३३ सं०]
नहि स्त्रीषु महात्मानो कचित् कुर्वन्ति दारुणम्॥३६॥

† अवांमुखो भूत्वमनुजेन्द्र पुत्रः स्त्री संनिकर्षाद्विनिवृत्त कोपः॥३९॥

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

नित्य कर्मों में श्रद्धा देखिये राम के युवराज बनने का दिन है देवी कौसल्या को पता नहीं है कि उसके प्रिय पुत्र को बन का राज्य चौदह वर्ष के लिये मिल चुका है वह राम की शुभ कांक्षा से प्रभु की उपासना में लगी है। वाल्मीकि जी लिखते हैं कि "वह * नित्य ही शुद्ध वस्त्र पहिन कर प्रफुल्लित चित्त से व्रत का पालन करती थी और मंत्रों का पाठ करके अग्निहोत्र करती थी अतः जब रामचन्द्र जी ने कैकेयी के महल से निकल कर अपनी माता के घर में पैर रक्खा तो उन्हें अग्निहोत्र करते हुये पाया"। यही नहीं स्थान २ पर स्त्रियों की कर्तव्यनिष्ठा इस पुस्तक में दर्शायी गई है। महाराणी कौसल्या कैकेयी आदि जब अपनी बहुओं को जनकपुर से अयोध्या में लाती हैं तो शान्ति-पाठ मंगलाचरण होम इत्यादि करके घर में प्रवेश करती हैं। देवी तारा बाली को सुग्रीव के साथ युद्ध करने के लिये एकदम तैय्यार हो जाने पर पहिले बहुत समझाती है पुनः उसके हठात् चले जाने पर उसकी शुभाभिलाषा से घर में प्रवेश करते हुये शान्ति पाठ करने में लग जाती है।

और देखिये-हनूमान रामचन्द्र लक्ष्मण और सुग्रीव की आज्ञा से सीता की खोज करने के लिये लंका में पधारते हैं वहां पर रावण के बड़े २ विशाल महलों और अटारियों में विमान पर चढ़ कर खोज करते हैं पर कहीं सीता का पता नहीं लगता, निराश होकर लौटने का विचार करते हैं परन्तु फिर सोचते हैं कि यदि रामचन्द्र जी को पता लगा कि सीता देवी नहीं मिली तो वह प्राण त्याग देंगे इस समय से वह पुनः खोज करते हैं। खोजते २ एक ऐसे स्थान पर आते हैं जहां अशोक बनके मध्य में फूलों से भरा हुआ पर्वत है और बहुत से तालाब हैं। एक सरोवर के किनारे जिसका शीतल जल है, स्वच्छ मणियों की सीढ़ियां हैं और नकली बाग़ बगीचे हैं और विविध पक्षी विचरते हैं जहां पर प्राकृतिक दृश्य की नकल पूरी तरह की हुई है वहां पर वह पहुँचते ही आशावादी बन जाते हैं और कहने लगते हैं कि जानकी अवश्य यहां होगी। कारण वह बतलाते हैं कि एक तो यह दृश्य सुहावना है दूसरे सीता को बन में विचरने का स्वभाव है, अथवा पक्षी

---

* सा क्षौम वसना हृष्टा नित्यं व्रत परायणा।
आग्निं जुहोतिस्म तदा मन्त्रवत्कृत मंगला ॥१५॥ [अयो० स० २०]

प्रविश्य तु तदा रामो मातुरन्त पुरं शुभं।
ददर्श मातरं तत्र हाव पन्तीं हुताशनम् ॥१६॥

कुशध्वज सुते चोभे जगृहुर्नृपयोषितः।
मङ्गलालापनैः हेमैः शोभिताः क्षौमवाससः ॥१२॥ [बाल० स० ७७]

ततः स्वस्त्ययनं कृत्वा मन्त्र विद्विजयैषिणी।
अन्तःपुरं सह स्त्रीभिः प्रविष्टा शोक मोहिता ॥१२॥ [किष्किन्धा० स० १६]

सन्ध्याकाल मनाः श्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी।
सरीं चेमां शुभजलां सन्ध्यार्थे वरवर्णिनी ॥४९॥ [सुन्दर० स० १५]

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

आदिकों से उसे प्रेम है इस से भी बढ़ कर कारण यह है कि अब संन्ध्या समय है सन्ध्या करने की इच्छा से इस शुभ जलवाली नदी के किनारे वह अवश्य आवेगी। अगर सीता जीती है तो यहां इस समय अवश्य आवेगी यह देखिये कर्म निष्ठा। सन्ध्या नियमपूर्वक करने के लिये दुस्सह बन्धनों में भी पड़ी हुई सीता अवश्य एकान्त स्थान में होगी यह दृढ़ विश्वास ही उस समय की कर्तव्यनिष्ठा का ज्वलन्त उदाहरण है।

कहां तक वर्णन करें। स्त्रियों की कर्तव्य निष्ठा, धार्मिक भाव, ईश्वर प्रेम तथा उदा चरितों के उदाहरणों से सारा ग्रन्थ भरा पड़ है और यही कारण है कि हम उस ज़माने स्त्रियों की उच्चस्थिति का प्रमाण पाते हैं औ उच्च सभ्यता उच्च शिक्षा जिस के लिये प्रत्ये भारतीय को गौरव है और होना चाहि क्रियात्मकरूप में रामायण के कई चरित्र नायकों के जीवन में पाया जाता है।

हां! कहां है वह मन्दोदरी दुराचारी रावण की सती साध्वी पतिपरायणा पत्नी जिसके विषय में यह कहा जाता है कि "स्त्री थी शिक्षा पति को और बचाती पाप से" कहां वे देवियां जो सुख में दुःख में, आनंद में शोक में, महलों में व जंगलों में स्वाधीनता में व पराधीनता में सत्कृत या असत्कृतहो कर भी अपने कर्तव्यों से कभी विमुख नहीं हुई और जब २ विषम समय उपस्थित हुआ तो उन्होंने ईश्वर पर ही भरोसा रखकर अपने कर्तव्यों का ध्यान किया।

परमात्मा करे इस प्रकार की छटा पुनः हमारी देवियों में स्थापित हो जावे और पुनः उनका पूर्व की भांति आदर और सत्कार हो।

बिसवां कन्या विद्यालय व आश्रम को और दान।

निम्नलिखित देवियों ने बिसवां कन्या विद्यालय व आश्रम को इस प्रकार दान दिया है:—

१००) श्रीमती भाग्यवती देवी, धर्मपत्नी श्री० ठाकुरदत्त जी वैद्य गुमटी बज़ार, लाहौर।

१००) श्रीमती राजकुमारी देवी, धर्मपत्नी राय दौलतराम जी अनारकली, लाहौर।

१०) कुमारी विद्यावती जी पुत्री ला० ज्ञान चन्द जी ठेकेदार, दिल्ली।

१००) श्रीमती विद्यावती जी धर्मपत्नी राय माधोदास मेहरा, अमृतसर।

हम इन देवियों का धन्यवाद करते हैं और आशा करते हैं कि अन्य देवियां भी इनका अनुकरण करके शीघ्र आश्रम खोलने में सहायक होंगी।

स्त्री जाति का एक और हितैषी चल बसा।

हाय! काल की गति बड़ी विकराल है। भले बुरे का कुछ भी विचार न कर के यह अपने पञ्जे से किसी को नहीं छोड़ता। आज स्त्री जगत् के हितकर्ता, स्त्रियों के हितार्थ तन मन धन से सहायता देने वाला, हमारा स्वार्थ त्यागी एक नवयुवक कुँवर देवेन्द्र प्रसाद जैन, इस संसार से चल बसा।

आप एक उत्साही पुरुष थे और एक अभी हाल ही में आप का एक जैन महिलाश्रम खोलने का विचार था। हम उन की इस असामयिक मृत्यु पर शोक प्रकट करते हैं। आप की इस मृत्यु से स्त्री-जगत को जो भारी क्षति पहुंची है, हम समझते हैं, उस की पूर्ति करने वाले बहुत ही थोड़े सज्जन मिलेंगे। ईश्वर उन की आत्मा को शान्ति दे यही हमारी प्रार्थना है।

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by eGangotri

कन्या महाविद्यालय जालन्धर का वार्षिकोत्सव।

कन्या महा विद्यालय, जालन्धर का वार्षिकोत्सव धूमधाम से समाप्त हो गया। सभापति का आसन मेजर गनपत राय की धर्मपत्नी श्रीमती वसन्तीदेवी ने ग्रहण किया था। श्रीमती लज्जावती और वसन्तीदेवी के व्याख्यान विद्वत्ता पूर्ण हुए। विद्यालय को ३५०००) रु० का चन्दा मिला और श्रीमान गनपत राय और सेठ वृन्दावन जी ने आयुर्वेदिक कालेज [Medical College] खोलने के लिये ज़मीन देने का वचन दिया है।

हम उक्त महाशयों को धन्यवाद देते हैं और आशा करते हैं कि अन्य महाशय भी उन का अनुकरण कर के विद्यालय की उन्नति करेंगे।

मुफ्त! मुफ्त!! मुफ्त!!!

"अमृत बन्दु"

कफ़, खांसी, हैज़ा, दमा, शूल, ग्रहणी बच्चों के हरे पीले दस्त इन्फ्लुएंज़ा आदि रोगों की अबूक़दवा है—

मू० ॥) फी शीशी दर्जन का ४) जादूरी कहानी इनाम।

बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मिलेगा—

अमृत औषधालय,

सिपटबाज़ार-मेरठ।

वेद का स्वयं शिक्षक।

इस पुस्तक को पढ़िए और आप स्वयं वेद मन्त्रों के अर्थ जानने की योग्यता प्राप्त कीजिए। यदि आप केवल भाषा के ग्रन्थ पढ़ सके हैं, तो निःसन्देह इस पुस्तक के पढ़ने से आप वेद मन्त्रों का अर्थ जान सकते हैं। अनुभव लीजिए। मूल्य १॥) डेढ़ रु०। शीघ्र मंगवाइए।

मी—

स्वाध्याय मण्डल, औंध

(ज़िला सातारा)

CC-0. Mumukshu Bhawan Varanasi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

Compiled
1999-2000

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA

CC-0. Gurukul Kangri University Haridwar Collection. Digitized by S3 Foundation USA